भट्टारक श्री मतिसागर विरचित

विद्यानुशासन

व्याख्याकार

युवाचार्य १०८ मुनिश्री गुणधरनंदीजी

प्रकाशक
श्री दि. जैन दिव्यध्वनि प्रकाशन, जयपुर

अनुक्रमणिका

प्रथम अध्याय

ग्रन्थ के २४ विषय	३
मंत्र साधक के लक्षण	४
शिष्य के लक्षण	५
गुरू का महत्व	७

द्वितीय अध्याय

मंत्रों के भेद और लक्षण	८
अक्षरों की शक्तिकी तालिका	२९
बीजाक्षर सामर्थ्य	३५
पंचवर्ग (बीजकोशः)	३७

तृतीय अध्याय

अवशिष्ट परिभाषा प्रारंभ	४३
राशिपरीक्षा	४५
अंशक परीक्षा	४७
मंत्र विधि	४९ से प्रारंभ
मंत्र साधना विधान	६४
जपमें दिशा-कालादि विचार	९९
षटकर्म कथन	१०२

चतुर्थ अध्याय

मंत्र फल वर्णन	१०८ से प्रारंभ
श्री पार्श्वनाथ स्तोत्र	११५
स्तोत्र वृहत टीका	१२१
श्री पार्श्वनाथ द्वितीय स्तोत्र	१३४
सरस्वती देवी का स्तोत्र	१४७
काम चांडाली विधानं	१५१
लक्ष्मी विधानं	१५८
ज्वाला मालिनी विधानं	१६१
सुखदायक यंत्र	१६८
कुष्माडिनी साधक विधानं	१८१
दूसरी विधि	१८८

पद्मावती साधन विधानं	१९२
दश दिक्पाल स्थापनमंत्र	१९५
पद्मावती स्तोत्र	२०२
गणेश विधान	२१३
जमलविद्या	२१८
दर्पण निमित्त विधि	२२२
दीपक निमित्त	२२५
गौरी विधानं	२२८

पंचम अध्याय

फल उत्पन्न करने वाले मंत्रों की विधि प्रारंभ	
सिद्ध चक्र विधानं	२३३
पूजामंत्र	२४०
श्री पार्श्वनाथ आराधना विधानं	२४३
श्री कलिकुंड कल्प	२६५
रक्षामंत्र	२८३
श्री गणधरवलय विधानं	२९४
विषापहार	२९८
स्वप्नसिद्धि	३१८
भृत्यमंत्र अंगन्यास	३३१
श्रयादिपूजा	३३३
षोडश दल पूजा	३३८
चतुर्विंशति दलपूजा	३४०
पार्श्वनाथाष्टक यंत्रोद्धार	३५१
ऋषि मंडल स्तोत्र	३५४
घोणा यंत्र विधानं	३७४

षष्टम समुदेश (अध्याय)

गर्भोत्पत्ति विधान	३९०
कल्याण घृत	४०८
सूतिका ग्रह रक्षा विधान	४२६
घंटादि विद्या	४३०
प्रसूता योनिकष्ट निवारण उपाय	४३६

सप्तम समुदेश (अध्याय)

बालग्रह चिकित्सा ४३९
दांतो से होनेवाले अनिष्ट-शांति उपाय ४४२
बुद्धि वर्धक दवायें ४४३
कष्ट देनेवाली देवियों का वर्णन ४४६
प्रथम दिन से इकतीस दिन तक की रक्षा प्रारंभ विधि ४४८
द्वितीय मास से बारह मास तक की रक्षा विधि ४६८
बालग्रह चिकित्सा कथन ४९१
(पहले दिन से १० दिन तक) ५०५
(प्रथम मास से १० मास तक) ५१८
(प्रथम वर्ष से १६ वर्ष तक)

अष्टम समुदेश (अध्याय)

ग्रहों के भेद-लक्षण यंत्र-मंडल आदि उपाय ५५४
ग्रहों को जगाने का मंत्र ५६३
ग्रहो का बाधने का ब्रह्मायंथ मंत्र ५६४
शिखा -बंधन मंत्र ५६४
दिग्- बंधन मंत्र ५६४
पद्मावती मालामंत्र ५६७
आप्यायन मंत्र ५७५
सर्वतो भद्र मंडल ५८४
समय मंडलं मंत्र ५८८
समवशरण मंडलं ५९०
अपस्मारक नाशक योग ६०१
उन्माद लक्षणं ६०३

नवम समुदेश (अध्याय)

गारूडी विद्या प्रारंभ ६०५
शुभदूत ६१०
नाग के स्थान ६१३
शकुन ६१६
पृथ्वी विष के लक्षण ६१७
संग्रह तथा त्याग के मंत्र ६२६

दशम समुदेश (अध्याय)

विषवेग रक्षण मंत्र प्रारंभ	६२९
गरूड़ हस्त विधानं	६३५
रक्षा विधानं	६५६
विषनाशन विधानं	६५८

ग्यारवा समुदेश (अध्याय)

सर्प चिकित्सा वर्णन	६७८

बारहवा समुदेश (अध्याय)

विविध विष चिकित्सा वर्णन	६९२
भ्रमर विसर्ग चिकित्सा	६९६
बिच्छु मंत्र चिकित्सा	६९७
मूसक विषमंत्र चिकित्सा	७०२
लूता विषस्य	७१४
गधा विष मंत्र चिकित्सा	७१७
गृह गोधा विषस्य	७१९
जल्का विषस्य	७२०
कृत्रिम विषस्य	७२२
गायत्री मंत्र	७३६
विविध मंत्र एवं उपचार	७३८
पापरूप बनावटी रोगों की चिकित्सा	७६१
यम विद्या	७८४

तेरहवाँ समुदेश (अध्याय)

मारणकर्म नाम उपाय	७९९
शत्रुनिग्रह उपाय	८०९
गौरीमंत्र	८१८
निबर्धन मंत्र	८२०
यंत्र देने की विधि	८२१
अमृत मंत्र	८२२
मारण प्रतिकार की सामान्य विधि	८३८
विद्वेषण	८४४
व्याधि ग्रह स्तमन औषधि मंत्र-यंत्र	८५०

पार्श्व यक्षाराधन विधान	८५१
प्रतिष्ठापन मंत्र	८५८
शुद्धि मंत्र	८६०
स्नानमंत्र	८६०
गजमंत्र	८६३
दुर्गा मंत्र	८७२
उक्षेस मंत्रोयं	८९५
शांतिविधान (रोग-शत्रु-ग्रह शांति हेतु)	९०८
मृत्युंजय मंत्र	९२९
वसुधारा स्नानविधि	९३१
उद्वर्तन मंत्र	९३४
सिद्ध मिट्टी की परिभाषा	९३४
मलचरू निवर्द्धन मंत्र	९३५
नव ग्रह चरू निवर्द्धन मंत्र	९३७
पुष्प वृष्टि स्नान मंत्र	९३८
मृत्युंजय मंत्र का फल	९३९
नवग्रह की शांति का विधान	९४८
नवग्रहों के मंत्र	९४९
नवग्रहों का विशेष वर्णन	९५६
दानविधि	९५८
रोग शांत विधि	९५८
सर्वसिद्धि मंत्र (उपाय)	९७०
ग्रन्थातंर नक्षत्र वृक्षा	९९५
स्त्री सौभाग्यवृद्धि कारक मंत्र	१००१
नवतत्व	१००४
द्रावण मंत्र	१०१६
गौरीमंत्र	१०१७
पूजामंत्र	१०३१
नयनांजन मंत्र	१०४९
आकर्षण विधान	१०६१
नर्मन कर्म विधान	१०७९

॥ ॐ ॥

श्री जिनाय नमः

श्री पार्श्वनाथाय नमः

श्री सरस्वत्यै नमः

श्री पद्मावत्यै नमः

श्री मति सागर गुरवे नमः

॥ अथः विद्यानुशासन शास्त्रं लिख्यते ॥

मंत्रस्य इदमाहु राद्यवद्यवं, विस्तीर्ण विद्यार्णवाः
प्रोक्तंयेन शुभं च, कर्म निखिलं कर्माच्छभं चाखिलं ॥

विद्या के बड़े भारी समुद्र विद्वान लोगों ने जिनको इस लोक में मंत्र का आदि अवयव कहा है। जिन्होंने सम्पूर्ण शुभ और अशुभ कर्मो का वर्णन किया है।

शक्तिर्यस्य सुविस्मयेकं निलया सं प्राप्तं सौख्योदयो।
विद्यानाम धि देवता सभवतान्नः सिद्धये सन्मतिः ॥ १ ॥

जिनकी शक्ति बड़े भारी आश्चर्य को उत्पन्न करती है और जिनको उत्तम सुख का उदय प्राप्त हो गया है वह सब विद्याओं के आधि देवता भगवान सन्मति महावीर स्वामी हमारे कार्यों को सिद्ध करें।

सर्वेयान्मति सागरस्य महतो मध्ये गभीराशये।
मांति स्मागम सागर स्य पुरतो विद्यानुवादादयः
यद्वाग्मं पदानि लोक मखिलं रक्षंति पूतान्यलं।
तं बंदे गणानायकं गुणनिधिं श्री गौतम स्वामिनं ॥ २ ॥

जिनकी बड़ी भारी बुद्धि रूपी समुद्र के गंभीर आशय वाले मध्य में आगम रूपी समुद्रों के प्राधन विद्यानुवाद पूर्व आदि समाये हुवे हैं, और जिनकी वाणी के पवित्र मंत्र पद सम्पूर्ण लोक की रक्षा करते हैं। उन गुणों के निधि गण के स्वामी भगवान गौतम स्वामी को मैं (मतिसागर) नमस्कार करता हूँ।

जयति श्रुत भगवतो मुखांबुजा
दुदितं जिनस्य सकलार्थवेदिनः
गणनाथकै स्त्रिभुवनानि रक्षितु
करुणाधने विरचितं महात्तम मिः ॥ ३ ॥

सम्पूर्ण पदार्थ के जानने वाले श्री जिनेन्द्र भगवान के मुख रूपी कमल से प्रकट हुआ तथा तीनों लोक की रक्षा करने के लिए करुणानिधि महात्मा गणधर भगवान के द्वारा रचना किया हुआ वाणी रूपी श्रुत जयवंत हो ।

एकदाऽति महावीरं दैवं वैभार पर्वते ।
अपाक्षी त्तं मुनि मान्यः सभायां गौत्तमो गणी ॥ ४ ॥

एक बार विपुलाचल (वैभार राजगॉह) पर्वत के ऊपर माननीय मुनि गौतम गणधर ने सत्ता में सर्वज्ञ देव भगवान महावीर से प्रश्न किया।

आत्त प्रश्ने गणाधीशैः पश्चिम तीर्थ नायकः ।
व्यावहारार्थ रूपेण समस्तागम विस्तरं ॥ ५ ॥

गणधरों के द्वारा प्रश्न किये जाने पर उन अंतिम तीर्थंकर ने समस्त आगम के विस्तार का अर्थ रूप से वर्णन किया।

सार्वः सर्वज्ञदेशीयः परम श्रुत केवली।
इंद्र भूतिः स चं ग्रन्थान निखिलानं परमागमान् ॥ ६ ॥

उन सब परमागम रूप ग्रन्थों की सर्वज्ञ के समान सब लोक में प्रसिद्ध परम श्रुत केवली इन्द्र भूति गणधर ने

व्याचख्यो च मुनीद्रेभ्यः सन्मतिभ्यः सतां मतान्।
हितोपदेशयुक्तेभ्यो रक्षितुं सकलं जगत् ॥ ७ ॥

अच्छी बुद्धि वाले सज्जनों के द्वारा अति मित हित के उपदेश से युक्त होकर उत्तम मुनियों के समस्त जगत की रक्षा करने के लिए विस्तार से व्याख्या पूर्वक पढ़ाया ।

ततः प्रभृत्य विछिन्न संप्रदाय परंपरा।
हितोपदेशावर्तते सर्वे परमागमाः ॥ ८ ॥

तब से ही लगातार यह हितोपदेश रूप सब परमागम अविछिन्न रूप से संप्रदाय की परंपरा से चला आ रहा है।

तेषु विद्यानुवादाख्यो यः पूर्वो दशमो महान्
मंत्र यंत्रादि विषयः प्रथते विदुषां मतः ॥ ९ ॥

उनमें से जो विद्वानों से सन्मान किया हुआ विद्यानुवाद नाम से दसवाँ महान पूर्व प्रसिद्ध है उसमें मंत्र और यंत्रादि का विषय है।

ग्रन्थ की रचना

तस्यांशा एव कतिचित्पूर्वाचार्यैरनेक धा
स्वां स्वां कृतिं समालंब्य कृताः परहितैषिभिः ॥ १० ॥

दूसरों का हित चाहने वाले आचार्यों ने उसी के कई अंशों का अनेक प्रकार से अपने अपने ग्रन्थों में वर्णन किया है।

उद्धृत्य धि प्रकीर्णेभ्यः स्तेभ्यः सारं विरच्यते।
ऐदं युगीनानुद्दिश्य मंत्रान् विद्यानुशासनं ॥ ११ ॥

उन अनेक प्रकार के बिखरे हुये ग्रन्थों का सार लेकर आज कल के युग के मंत्रों को प्रकट करने के उद्देश्य से विद्यानुशासन की रचना की जाती है।

अथ मंत्री लक्षण विधिर्मंत्राणां लक्ष्म सर्वपरिभाषाः
सामान्यमंत्र साधन मुक्तिः सामान्य यंत्राणां ॥ १२ ॥

गर्भोत्पत्ति विधानं बाल चिकित्सा ग्रहोपसंग्रहणं
विषहरणं फणितंत्रं मंडल्याद्यपनयोरूजां शमनं ॥ १३ ॥

कृत रूग्वधो बधः प्रति विधानमुच्चाटनं विद्वेषः
स्तंभन शांतिः पुंष्टि र्वश्यं स्याकर्षणं नर्म ॥ १४ ॥

अधिकाराः शास्त्रे स्मिन्नमी संख्यानं चतु र्विंशति :
क्रमात्कथिताः पंच सहस्त्राण्यस्य ग्रंथानां भवति संख्यानं ॥ १५ ॥

इसमें

(१) मंत्री के लक्षण	(२) मंत्रो के लक्षण विधि
(३) सर्व परिभाषाओं के लक्षण	(४) सामान्य मंत्र साधन
(५) सामान्य मुक्ति यंत्र साधन विधान	(६) गर्भोत्पित्ति विधान
(७) बालचिकित्सा	(८) ग्रहाधिकार
(९) विष हरण	(१०) सर्प तंत्र
(११) मंडल आदि की चिकित्सा	(१२) दोषज रोग शांति
(१३) कृतरूग्वधो	(१४) कृत्रमरोग शांति
(१५) मारण	(१६) मारण प्रतिकार
(१७) उच्चाटनं	(१८) विद्वेषण
(१९) स्तंभन	(२०) शांति
(२१) पुष्टि	(२२) वशिकरण
(२३) स्त्री आकर्षण	(२४) नर्मधिकार

क्रम से इस शास्त्र में २४ अधिकार कहे गये हैं। और इस ग्रन्थ की श्लोक संख्या ५००० है।

॥ मंत्र साधक के लक्षण ॥

अथातः संप्रवक्ष्यामि मंत्रि लक्षणमुत्तमं।
यो मंत्रादि विधौ प्रोक्तः स्सजातीय स्त्रिवर्णभृत ॥ १ ॥

अब मंत्री के लक्षण जो मंत्रादि के विधि में कहे गये हैं अब कह रहे हैं। मंत्री अच्छी जाति वाला और तीन वर्णो को धारण करने वाला हो।

रत्न त्रय धनः शूरः कुशलो धार्मिकः प्रभुः।
प्रबुद्धारिवल शास्त्रार्थः परार्थ निरतः कृती ॥ २ ॥

वह सम्यकदर्शन-सम्यकज्ञान और सम्यकचारित्र इन तीन रत्नत्रयी रूपी धनवाला, शूरवीर, धार्मिक, प्रभु, सब शास्त्रों के अर्थ को जानने वालों दूसरों का उपकार करने वाला और कृतज्ञ हो।

शांतः कृपालु निर्द्विषः प्रसन्नः शिष्य वत्सलः
षट्कर्म वित्साधुः सिद्धविद्यो महायशाः ॥ ३ ॥

वह अत्यंत शांत कृपालु,द्वेषरहित, कुशल शिष्यों से प्रेम करने वाला, छहों कर्मों के कृत्य को जानने वाला,भली प्रकार विद्या सिद्ध किये हुआ और बड़ा यशस्वी हो।

सत्यवादी जितासूयो निराशो निरहंकृतिः
लोकज्ञः सर्वशास्त्रज्ञो तत्वज्ञो भावसंयुतः ॥ ४ ॥

वह सत्यवादी , ईर्ष्या रहित, अहसान करने वाला, अतिमान रहित, लोक को पहचानने वाला, सब शास्त्रों के तत्त्वों को जानने वाला और भावुक हो।

भवेतमंत्रोपदेशेषु गुरूमंत्रं फलार्थिनां।
इहोपदिश्यमानानां मंत्राणमुपदेशने ॥ ५ ॥

यह यहाँ आगे उपदेश किये जाने वाला मंत्रों के मंत्र के फल की इच्छा करने वालों को उपदेश देने से गुरु का काम कर सकता है।

॥ शिष्य के लक्षण ॥

लक्षणेन गुरूः प्रोक्तः शिष्य श्चास्याभि धीयते
दक्षो जितेन्द्रियो मौनी देवताराधनोद्यतः ॥ ६ ॥

गुरु के लक्षण कहे गये हैं। अब शिष्य के लक्षण कहे जाते हैं। शिष्य चतुर, जितेन्द्रिय, मौन रखनेवाला और देवता की आराधना करने को तैयार हो।

निर्भयो निर्मदो मंत्र जप होम रतः सदा।
धीरः परिमिताहारः कषाय रहितः सुधीः ॥ ७ ॥

यह अभय, और मद रहित च सदा जप और होम में लीन रहने वाला, धीर, अल्प भोजन करने वाला, कषाय रहित और विद्वान हो।

सुदृष्टि र्विगतालस्यः पापभीरू र्दृढव्रतः
शीलोपवास संयुक्तोधर्मदानादि तत्परः ॥ ८ ॥

वह अच्छी दृष्टि वाला, पाप से डरने वाला, दृढ़ व्रत वाला, शील और उपवास से युक्त और धर्म तथा दान आदि में तत्पर हो ।

मंत्राराधन शूराधर्मदया स्वगुरू विनयशीलयुतः।
मेधावी गत निद्रः प्रशस्त चित्तोभिमानरतः ॥ ९ ॥

यह मंत्र की आराधना में शूरवीर, धार्मिक, दयालु, अपने गुरु की विनय करने वाला, शीलवान, बुद्धिमान, निद्रारहित, प्रशस्त चित्त वाला और अभिमानी हो। अर्थात कार्य करके सफलता प्राप्त करने का पूर्ण विश्वास रखने वाला हो।

देवजिन समयभक्तः सविकल्पः सत्य वाग्विदग्धश्च
वाक्यचतुरपगत शंकः शुचिराद्रमनाविगतकामः ॥ १० ॥

यह जिनेन्द्र देव और जैन शास्त्र का भक्त, सविकल्प ,सत्य भाषी, विदग्ध, बोलने में चतुर, निशंक, पवित्र और आर्द्र मन वाला तथा काम रहित हो।

गुरुकथित मार्गवर्ती प्राग्भाग्यस्यांतदर्शनोद्युक्तः
बीजाक्षरावधारी शिष्यस्यात सद्गुणोपेतः ॥ ११ ॥

वह गुरु के कहे हुवे मार्ग पर चलने वाला, भाग्य के परिणाम को भोगने के लिए उद्यत्त और बीजाक्षरों का निश्चय करने वाला हो, ऐसे उत्तम गुणों से युक्त शिष्य होता है।

॥ मंत्र साधक के अयोग्य पुरूष लक्षण ॥.

सम्यकदर्शन दूरो वाक्कूठस्यांद सो भय समेतः
शून्य हृदयोपलज्जो मंत्र श्रद्धा विहीन श्च ॥ १२ ॥

जो सम्यकदर्शन से दूर, कुंठित वाणी वाला , वेदपाठी, भय करने वाला, शून्य हृदय वाला, निर्लज्ज और मंत्र की श्रद्धा से रहित हो।

आलस्यो मंद बुद्रिश्च मायावी क्रोध नोवितः
गर्वी कामी मदोद्रिक्तो गुरुद्वेषी च हिंसकः ॥ १३ ॥

जो आलसी मंद बुद्धि वाला, मायावी, क्रोधी, पर स्त्री, भोगी, इन्द्रिय लोलुपी, कामी, अभिमानी, गुरु से द्वेष करने वाला और हिंसक हो।

अकुलीनोति बालश्च यद्रोऽशीलोऽदय श्चलः
चर्मादिश्रृंग केशादिधारी चाधर्मवत्सलः ॥ १४ ॥

जो नीच कुलोत्पन्न अत्यंत बालक, वृद्ध, शील रहित, कुत्ता, मृग के चर्म आदि सींग अथवा केशजटाधारी अधर्म और पाप से प्रेम करने वाला हो।

ब्रह्म हत्यादि दोषाढ्यो विरूपो व्याधि पीडितः
ईदृशोन भवेद् योग्यो मंत्र वादेषु सर्वदा ॥ १५ ॥

अथवा जो ब्रह्मा हत्या आदि दोषों से युक्त हो, बिगड़े हुवे रूप वाला अथवा रोगी हो ऐसा व्यक्ति मंत्र वादी कभी नहीं हो सकता अर्थात् मंत्र आराधना के योग्य नहीं हो सकता।

॥ गुरू का महत्व ॥

गुरूरेव भवेद्देवो गुरूरेव भवेत्पिता
गुरूरेवभवेन्माता गूरूरेवभवेदहितं।
गुरूःस्वामी गुरूर्भर्तागुरू विंधा गुरूःगुरि
गुरूस्वर्गो गुरूर्मोक्षो गुरूर्बंधु र्गुरूःसखा ॥ १७ ॥

गुरू ही देव है, गुरू ही पिता है गुरू ही माता और गुरू ही हितकारी होता है। गुरू ही स्वामी, गुरू ही भाई और विद्या है गुरू ही बड़ा होता है, गुरू ही स्वर्ग और मोक्ष है, गुरू ही बंधु और गुरू ही मित्र होता है।

गुरूपदेशादिह मंत्र बोधः प्रजायते शिष्य जनस्य सम्यक्।
तस्माद् गुरूपासनमेव कार्यंमंत्रां न्बुभुत्सोर्विनयेन नित्यं ॥ १९ ॥

गुरू के उपदेश से ही शिष्यों को भली प्रकार मंत्र का ज्ञान होता है। अतएव ज्ञान की इच्छा रखने वाले शिष्य को सदा ही नियम पूर्वक गुरू की उपासन करनी चाहिये।

इत्यार्षे विद्यानुशासने मंत्रि लक्षणं नाम प्रथमः परिच्छेद समाप्तः
इस प्रकार विद्यानुशासन में मंत्री का लक्षण नामक प्रथम अध्याय समाप्त हुआ।

दूसरा अध्याय

अथातः सर्वमंत्राणां भेदा अंगानि च क्रमात्
पूर्वशास्त्रानुसारेण व्यावर्ण्यंते मयाधुना ॥ १ ॥

अब पूर्व शास्त्रों के अनुसार क्रम से सब मंत्रों के भेद और अंगों का वर्णन किया जाता है।

स्युर्मंत्र्यंते गुप्तं भाष्यंते मंत्र विद्भिरिति मंत्राः
अन्वर्थ मंत्र संज्ञास्ते ज्ञातव्याः विबुधैः सदा ॥ २ ॥

जो सलाह किये जावे अथवा मंत्र के जानने वाले से गुप्त रूप से कहा जावे वह मंत्र कहलाता है। यह सदा ही मंत्र का इस शब्द की व्युत्पत्ति के अनुसार अर्थ है।

अकारादि हकारंतावर्णामंत्राः प्रकीर्तिताः
सर्वज्ञैरसहाया वा संयुक्ता वा परस्परं ॥ ३ ॥

अकार से हकार तक के स्वतंत्र असहाय अथवा परस्पर मिले हुवे वर्ण (अक्षर) मंत्र कहलाते हैं।

स्वरोष्माणो द्विजाः श्वेता अंबुमंडल संस्थिताः
अंतस्था भूभुजो रक्ता स्तेजोमंडलसंस्थिता ॥ ४ ॥

स्वर अकारादि १६ स्वर और ऊष्म (श ष स ह) द्विज, ब्राह्मण और श्वेत (सफेद) कहलाते हैं। यह अंबु (जल) मंडल में स्थित हैं। और अंतस्थ (य र ल व) भूभुज(क्षत्रिय) और रक्त कहलाते हैं यह अग्नि मंडल में स्थित है।

अवर्ग शवर्गौ कवर्ग पवर्गौ शुभ्रवैश्यान्वयौ पीतौ
पृथ्वीमंडल भागिनौ दुतूकृष्णत्विषौ शुद्रौवायुमंडल संस्थितौ ॥ ५ ॥

अवर्ग शवर्ग कवर्ग पवर्ग शुभ्र वैश्य पीतवर्ण के हैं। और पृथ्वी मंडल में स्थित हैं टवर्ग और तवर्ग कृष्ण कांति वाले और शूद्र वंश वाले तथा वायु मंडल में स्थित हैं। अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ ए ऐ ओ औ अं अः, श ष स ह, क ख ग घ ङ, प फ ब भ म शुभ्र वैश्य वंश वाले पीले रंग के हैं। और पृथ्वी मंडल में रहते हैं। ट ठ ड ढ ण, त थ द ध न कृष्ण रंग के शुद्र और वायुमंडल में रहते हैं।

	अक्षर	वर्ण	रंग	मण्डल
अर्थ -	स्वर	ब्राह्मणवर्ण	श्वेत	जलमण्डली
	कवर्ग	क्षत्रिय	रक्त	अग्नि
	चवर्ग	वैश्य	पीत	क्षिति
	टवर्ग	शूद्र	कृष्ण	वायु
	तवर्ग	शूद्र	कृष्ण	वायु
	पवर्ग	वैश्य	पीत	क्षिति
	यवर्ग	क्षत्रिय	रक्त	अग्नि
	शवर्ग	ब्राह्मण	श्वेत	जल

नोट :- मंत्र व्याकरण के अनुसार ई ऊ लृ ॡ का रंग पीत व जलमण्डली है। 'ष' का पीत रंग व आकाशमण्डली कहा है।

चवर्ग पवर्गौ टवर्ग तवर्गौ प्रतिपन्त
वमी रविशनिवारे द्विज सिद्धिरथ चतुथ्यांच
च द्वादशैकादश्योः सितवारे भूपसिद्धिः स्यात् ॥ ६ ॥

चवर्ग (च छ ज झ ञ) और पवर्ग (प फ ब भ म) वैश्य वंश वाले और पीत कहलाते हैं। वह पृथ्वीमंडल में स्थित हैं टवर्ग (ट ठ ड ढ ण) और तवर्ग (त थ द ध न) शुद्र और कृष्ण कांति वाले होते हैं। और वायु मंडल में स्थित द्विज मंत्र की सिद्धि प्रतिपदा नवमी रविवार और शनिवार को होती है। क्षत्रिय मंत्र की सिद्ध एकादशी द्वादशी चतुर्थी और सोमवार को होती है।

कुज वारे पंचम्यां षष्ट्यां च चतुर्दशी त्रियोदश्योः
वैश्याक्षर संसिद्धिः स्तंभन कर्मात्र कर्तव्यं ॥ ७ ॥

वैश्य मंत्रों की सिद्धि कुजवार (बुधवार) मंगलवार पंचमी षष्टी चतुर्दशी त्रयोदशी की होती है। और इसमें स्थंभन कर्म करना चाहिये।

गुरुवारे पर्वयुगे सप्तम्यां शुद्र जाति संसिद्धिः
वह्नि स्तंभन शांतिक पौष्टिक कर्माणि कृत्यानि ॥ ८ ॥

गुरुवार पर्व अष्टमी का दिन और सप्तमी को शुद्र बीज की सिद्धि होती है इसमें अग्नि का स्तंभन शांति और पौष्टिक कर्म करने चाहिए।

लक्ष योजनगा विप्रा स्तद्धंगतयो नृपाः
तदर्द्ध गामिनो वैश्याः शूद्रा स्तद्धंदलयायिनः ॥ ९ ॥

विप्र (ब्राह्मण) मंत्र एक लाख योजन तक जाने वाले, क्षत्रिय पचास हजार योजन तक जाने वाले और , वैश्य २५ हजार योजन तक जाने वाले और शूद्र बारह हजार पांच सो योजन तक जाने वाले होते हैं।

अर्थ - विशिष्ट ब्राह्मणादि वर्ण की सिद्धि की तिथि, वार व उसकी गति की तालिका-

अक्षर	तिथि	वार	गति
ब्राह्मण	प्रतिपदा,नवमी(९)	रवि, शनि	एकलाख योजन
क्षत्रिय	११,१२,४	सोमवार	पचास हजार योजन
वैश्य	५,६,१३,१४	मंगल	पच्चीस हजार योजन कार्य स्तम्भन
शूद्र	पर्व के दिन १४ आदि तथा ७ को	गुरूवार	१२.५ हजार योजन कार्य पौष्टिक

आप्याक्षरमग्न्यक्षरमरयोमरुदग्नि बीजमपि मित्रं
भूम्यक्षरमाप्याक्षर सुभवे च मित्रं रव बीजं च ॥ १० ॥

जल अक्षर और अग्नि अक्षर एक दूसरे के शत्रु होते हैं। वायु अक्षर और अग्नि अक्षर एक दूसरे के मित्र होते हैं। पृथ्वी अक्षर और जल, अक्षर और रव बीज वायु अक्षर भी मित्र होते हैं।

धरा निलज वर्णा नाम न्यान्यमिह
सर्वदा न मित्रतत्वं न वैरत्वं मौदासीन्य तु केवलं ॥ ११ ॥

पृथ्वी और वायु अक्षर की परस्पर न मित्रता ही है और न ही शत्रुता ही है किन्तु उदासीन हैं।

एकः शूद्रस्त्रिभिर्विप्रैर्मित्रत्वं प्रतिपद्यते
त्रिभिः शूद्रैर्द्विजौप्येक स्तथाक्षत्रिय वैश्ययोः ॥ १२ ॥

एक शूद्र की तीन ब्राह्मणों के साथ तीन शुद्रो की एक ब्राह्मण के साथ और क्षत्रिय तथा वैश्यों की मित्रता नहीं होती है।

एक भागो भवेद्विप्रस्त्रैक: क्षत्रिय वैश्ययो:
शुद्रस्त्यांप्येक भागश्चत्संयुक्तो मित्रतां व्रजेत ॥ १३ ॥

यदि ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य और शुद्र प्रत्येक का एक एक भाग हो तो एक वर्ग के यह मिलकर मित्रता रूप में परिणत हो जाते हैं।

सर्वे मंत्रान् चैकस्मिन् वर्गेऽभिष्ट फलप्रदा:
विभुच्याक्षर संधातमिति सर्वज्ञ भाषितं ॥ १४ ॥

एक ही वर्ग में सब मंत्र अभिष्ट फल को नहीं देते किन्तु अक्षरों के संधात को बचाकर ही (अक्षर संधात वाले मंत्र) फल देते हैं। ऐसा श्री सर्वज्ञ देव ने कहा है।

पुल्लिंगाक्षर मित्रत्वं रामाक्षर समं सदा।
नपुंसकमुदासीनमक्षरं तद्द्वयोरपि ॥ १५ ॥

पुल्लिंग अक्षरों के साथ स्त्रीलिंग अक्षरों की तरह ही मित्रता रहती है किन्तु नपुंसक अक्षर उन दोनों में ही उदासीन रहते हैं।

सप्तकला: पुल्लिंगा नपुंसका स्तत्र संति सप्तकला:
द्वेच कले स्त्री ज्ञेये कलासु मध्येतु षोडशेषु ॥ १६ ॥

सोलह कलाओं में से सात अक्षर पुल्लिंग और सात नपुसंक लिंग एवं दो स्त्रीलिंग वाले हैं। (अ उ ऊ ए ऐ ओ औ अं) पुल्लिंग है। (आ ई) स्त्री लिंग है। (इ ऋ ॠ ऌ ॡ ए अः) नपुंसक हैं।

आदिम पंचम षष्ट द्वादश मुख पंच दशक पर्यंता:
पुल्लिंगा: स्त्री लिंगो द्वितीय तुर्यं स्वरौ स्यातां ॥ १७ ॥

शुरू का पहिला अ पांचवाँ उ, छठ्याँ ऊ बारहवाँ ऐ और पंद्रह तक अर्थात तेरहवी चौदहवीं और पन्द्रहवीं ओ औ अं पुल्लिंग हैं। दूसरी और चोथी कला आ ई स्त्रिलिंग की है।

अ उ ऊ ऐ ओ औ अं पुल्लिंग आ ई स्त्रिलिंगौ
सप्तं कलादि रूद्र प्रमाण पर्यंत सकलांतकला:
त्रिकलापि सप्तषंढा इत्युदिता मंत्र वादेऽत्र ॥ १८ ॥

अ उ ऊ ऐ ओ औ अं पुल्लिंग आ ई स्त्री लिंग और तीसरी कला से ग्यारह कला तक और अंत की कला अः यह सात स्वर नपुंसक लिंगी है। ऐसा मंत्रवादियों ने कहा है।

ऋ ॠ ऌ ॡ ए ई अः कवर्गा त्र्यत्रयोवर्णा वर्गाद्य चतुर्थकाः
तवर्गाद्य द्विवर्णा च पवर्गाद्य त्रयोपिच ॥ १९ ॥

(क ख ग ट ठ ड ढ त थ प फ ब) अर्थात कवर्ग के आदि तीन वर्ण ट वर्ग के आदि के चार वर्ण तवर्ग के आदि के दो वर्ण और पवर्ग के आदि के तीन वर्ण यह बारह व्यंजन और

त्रिचतुर्थो चवर्गस्य तवर्गस्य चतुर्थकः
पवर्गस्यांति मोत्य स्य शवर्गस्य द्विक त्रिको ॥ २० ॥

च वर्ग के तीसरा और चौथावर्ग ज झ तवर्ग का चौथा वर्ग ध पवर्ग का अंत का वर्ण म और शवर्ग का दूसरा और तीसरा वर्ण ष स (ज झ ध म ष स)

कूटाक्षरेण ते सर्वे मिलितैकोन विशंतिः
पुलिंग संज्ञिनो वर्णा मंत्र व्याकरणे मताः ॥२१ ॥

(क ख ग ट ठ ड ढ त थ प फ ब ज झ घ म ष स क्ष) २१ और क्ष वर्ण इन १९ वर्णों का मंत्र व्याकरण में पुल्लिंग संज्ञा वाले वर्ण माने जाने गये हैं।

उष्मणा शादिनो वर्णाश्चवर्गाद्यक्षर द्वयं
यवर्गांत्यं द्विवर्णं च स्त्रीणां पंचाक्षराणिवै ॥ २२ ॥

उष्मणा शवर्ग के आदि का वर्ण श चवर्ग के आदि के दो वर्ण च छ और यवर्ग के अंत के दो वर्ण ल व अर्थात् श च छ ल व इन पांचों को स्त्री लिंग माना है। श च छ ल वा : स्त्री लिंगाः।

क प वर्ग तुर्य वर्णाविंतस्थाद्यक्षरद्वयं
सांत पंचम वर्ग तृतीयो ज ञ वांस्तषंढाः स्युः ॥ २३ ॥

कवर्ग का का चौथा वर्ण घ पवर्ग का चौथा वर्ण भ और अंतस्थ वर्ग के आदि के दो वर्ण (य र) और हकार और पांचवें वर्ण का तीसरा वर्ण ट और ञ ण ङ यह नो वर्ण नपुंसक लिंग के माने गये हैं। घ म य र ह य ञ ण ङ न अर्थात अ उ ऊ ऐ ओ औ अं क ख ग ट ठ ड ढ त थ प फ भ ज झ घ म ष स क्ष इस तरह सात स्वर और १९ व्यंजन कुल २६ अक्षर पुलिंग हैं। अ इ और श च छ व ल न कुल दो स्वर पांच व्यंजन कुल ७ अक्षर अक्षर स्त्री लिंग है। ऊ ऊ ऋ ऋ ऌ ॡ ए अः और घ भ य र ह ब न ञ ण ङ नपुंसक लिंग अक्षर है।

जाति सामर्थ्य मित्रारि लिंग मित्थं प्रकीर्तितं
वर्णानामथ मंत्राणां लक्षणं च प्रवक्ष्यते ॥ २४ ॥

इस प्रकार वर्णों का जाति सामर्थ्य मित्र शत्रु और लिंग का वर्णन किया गया है। अब मंत्रों के लक्षण कहे जाते हैं।

बीज मंत्राश्च मंत्राश्च माला मंत्रा श्चते त्रिधा
आरभ्यै का क्षरं मंत्रास्तु बीजान्यान वाक्षरात् ॥ २५ ॥

मंत्रों के तीन भेद हैं। बीज मंत्र १ मंत्र २ मंत्र और माला मंत्र ३ एक अक्षर से लगा कर नौ अक्षर तक के मंत्रों को बीज मंत्र कहते हैं।

आ विंशत्यक्षरान् मंत्राः समारभ्य दशाक्षरात्
ये विंशत्यक्षराद् ऊर्ध्वमंत्रा माला इति स्मृताः ॥ २६ ॥

दस अक्षर से बीस अक्षर तक को मंत्र एवं बीस अक्षर से अधिक अक्षर वाले को माला मंत्र कहते हैं।

इतराणितु बीजानि तस्य सिद्धति सर्वदा
मंत्राख्या मंत्राणो मंत्राफलंददति यौवने ॥ २७ ॥

बीज मंत्र सदा ही सिद्ध हो जाते हैं। मंत्र नाम वाले मंत्र, मंत्रों की यौवनावस्था में ही फल देते हैं।

॥ अंत मेव वसि प्राहु र्माला मंत्राफल प्रदाः ॥
आषोऽशाक्षरात्स्युमालाम्मंत्राः कल्पा स्ततः परे
अत्रामुत्र च कल्पा फलाया मालाः स्युर त्रैव ॥ २८ ॥

माला मंत्र वृद्धावस्था में फल देते हैं। सोलह अक्षरों तक माला और उससे आगे कल्प कहलाते हैं। कल्प इस लोक और परलोक दोनों स्थल में ही फल देते हैं।

इति व्यावक्षते मंत्र विकल्पं गुरवः परे
स्वज्ञान नौसमुत्तीर्ण मंत्रवाद महार्णवाः ॥ २९ ॥

इस प्रकार उत्तम गुरूओं ने मंत्र वाद रूपी समुद्र को अपनी ज्ञान रूपी नौका (नाव) से पार करके मंत्र के भेद कहे हैं।

स्त्री पुं नपुंसकत्वेन मंत्रा स्ते त्रिविधामताः
स्वाहा शब्दावसानाः स्युर्ये मंत्रास्तान् विदुः स्त्रियः ॥ ३० ॥

मंत्रों के भी तीन भेद हैं। स्त्री, पुरूष और नपुंसक। जिन मंत्रों केअंत में स्वाहा शब्द होता है वह स्त्री मंत्र होते हैं।

पुमांसो हुं वषट फट्धे स्वधाप्रभृति पल्लवाः
ते नपुसंक लिंगाः स्युर्येषांमंते नमः पदं ॥ ३१ ॥

हुं वषट फट धे धे और स्वाहा आदि पल्लव जिन मंत्रों के अंत में होते हैं यह पुल्लिंग मंत्र होते हैं। और नमः अंत वाले मंत्र नपुंसक मंत्र होते है।

स्त्री मंत्रान्नाम पध्वंसे पुं शुभेषु च कर्म्मसु
मारणो च्चाटनाधेषु प्रयुंजीत प्रयोगयित् ॥ ३२ ॥

स्त्री मंत्रों को पाप नष्ट करने में प्रयोग करे पुरुष मंत्रों का प्रयोग शुभ कर्म मारण उद्याटन निविर्षीकरण और वशीकरण में करे।

विषापहारिषु मंत्रान् वश्योच्चाटनयोरपि।
स्यान्नपुसंक मंत्राणां प्रयोगः शेष कर्मसु ॥ ३३ ॥

निर्विषीकरण वशीकरण और उद्याटन कर्म में पुरुष मंत्रों का प्रयोग करे और शेष कर्मो में नपुंसक मंत्रों का प्रयोग करे।

आग्नेयाः सौम्याद्वांत मन्यंते ते पुन द्विविधा मंत्राः
प्रणवात्याग्नि वियत्प्राया: अपि तेस्युराग्नेयाः ॥ ३४ ॥

उन मंत्रो के फिर दो भेद हैं। आग्नेय और सौम्य प्रणव ॐ और अग्नि और आकाश स्वाहा बीज वाले अग्नि मंत्र कहलाते हैं।

अन्ये सौर्यं सौम्यानेव फट् अंता च वदंति चाग्नेयात्
आग्नेयानामेव स्यात् सौम्यत्वं नमो अंतत्वे ॥ ३५ ॥

दूसरे आचार्य सौर्य बीजों को सौम्य और फट् अंत वालों को आग्नेय कहते हैं। आग्नेयों के ही अंत में नमः लगा देने से वह मंत्र सौम्य हो जाता है।

मारणोच्चाटना दोषु मंत्र माग्नेय मादिशेत
सौम्यं शांती व शीकृत्यै पौष्टिकादिक कर्मणि ॥ ३६ ॥

मारण उद्याटन आदि में आग्नेय मंत्र बतलावे शांति वशीकरण और पौष्टिक आदि कर्मो में सौम्य मंत्र बतलाये।

तेषा मुभे अवस्थे स्वापो बोध इति तैज सस्य स्वापौ
वामवहनं प्रबोधोदक्षिण वहनं परस्परतौ विपरीतौ ॥ ३७ ॥

उनकी दो अवस्थायें होती हैं। स्वाप (सोया हुवा) और बोध (जागृत) तेजस आग्नेय अर्थात स्वाप में वाम वायु बहे और प्रबोध या बोध अर्थात जागृत अवस्था में दाहिने स्वर से वायु बहती है यह एक दूसरे के विपरीत अवस्था होती है।

मंत्रस्योभय वाहे बोधः स्यादुभय मंत्र भेदानां मंत्रः
प्रबुद्ध मात्रः सिद्धैयैन भवेत्प्रसुप्तश्च ॥ २८ ॥

यदि मंत्र दोनों में बह रहा हो तो दोनों ही भेदों को समझना चाहिये केवल प्रबुद्ध जागृत और केवल प्रसुप्त सोयी हुवी अवस्था में अर्थात केवल दाहिना स्वर या केवल बायाँ स्वर बहे तब मंत्र सिद्ध नहीं होता है।

हृन्मस्तक शिखा वर्ष्म नेत्रास्त्रिषु क्रमाद्बुधः.
नमः स्वाहा वषट हुं संवौषट फट् इति योजयेत् ॥ ३९ ॥

पंडित हृदय में नमः मस्तक में स्वाहा चोटी अर्थात् शिखा में वषट् कवच में हुं और नेत्रों में संवोषट् और फट् लगावे।

अंग मंत्रान् विद्यंते यस्य मंत्रस्य वितस्योपदेश
भिन्न स्यात् कल्पेयेदात्मनैवतान् ॥ ४० ॥

जिस मंत्र में पृथक अंग भेदों का वर्णन नहीं होवे बुद्धिमान उनमें अपनी बुद्धि से ही उनकी कल्पना कर लें।

एक स्य मंत्रस्य षडंग मंत्रा ते न्यस्य पंचोपि दिशं तितज्ञाः
पंचागं मंत्रस्य तु पंचमेन मंत्रेण नेत्रंसहितं विलिपेत् ॥ ४१ ॥

जिस मंत्र का षंडंगन्यास होता है उस न्यास में पांच अंगों का उपदेश भी किया जाता है। पंचाग मंत्र का नेत्र सहित न्यास करके अनुष्ठान करे।

अरहंता अशरीरा आईरिया उवज्झाया तहा मुणिणो
पढमक्षराणिप्पणो ॐकारो पंच परमेट्ठी।

ॐकार पंच परमेष्ठी का द्योतक है यह अरहंत का अ, सिद्ध अशरीर का, आचार्य का आ, उपाध्याय का उ और सर्व साधु अर्थात् मुनि का अनुस्वार प्रथम अक्षर अ अ आ उ अं को सम्मिलित करके बताया गया है।

मकारादि हकार पर्यंतं में कैकाक्षरलक्षण मुदाहरिष्यामः।

अब अकार से लेकर हकार तक के एक एक अक्षर के लक्षण का वर्णन करेंगे।

अः वृत्तासनं गज वाहनं हेमवर्णं कुकुम गंधं लवण स्वादजंबद्वीप विस्तीर्णं चतुर्म्मुखं अष्टबाहुं कृष्णालोचनं जटा मुकुट धारिणं सित वर्णं मौलिक आभरणं अतिव बलि गंभीरं पुल्लिंग मकारस्य लताणं ॥ १ ॥

अंकार गोल आसन गजवाहन सुनहरी रंग वाला कुंकुम गंध नमक का स्वाद जंबुद्वीप में विस्तीर्ण चतुर्मुख अष्ट भुजायें काले नेत्र जटा और मुकुट धारी श्वेतवर्ण के मोतियों के आभूषण वाला अत्यंत बली गंभीर और पुल्लिंग यह अकार का लक्षण है।

आ : - पद्मासनं गजव्याल वाहनं सितवर्णं शंख चक्र पद्म अंकुश धारिणं द्विमुखं अष्टहस्तं अहि भूषणं शोभानदि महाद्युतिं त्रिंशत सहस्रयोजन विस्तीर्णं स्त्रीलिंग आकारस्य माहात्म्यं ॥ २ ॥

आ. पद्मासन गज व्याल (सर्प) वाहन श्वेत वर्ण शंख चक्र पद्म अंकुश धारण करने वाला दो मुख आठ भुजायें सर्प का आभूषण वाला अत्यंत शोभित बहुत कांति वाला तीस सहस्र योजन तक विस्तीर्ण स्त्रीलिंग यह आकार का स्वरूप है।

इ :- कूर्म वाहनं चतुरश्रासनं हेमवर्णं वज्रायुधं एक योजन विस्तीर्णं द्विगुणायाम मुत्सेधं कषाय स्वादं वज्र वैडूर्य वर्णलंकृतं मदं स्वरं नपुंसकं क्षत्रियं इकारस्य माहात्म्यं ॥ ३ ॥

कछवा वाहन चौकोर आसन, हेम वर्ण वज्र आयुध, एक योजन लंबा दुगुना चौड़ा और ऊंचा कषायला स्वाद वज्र और वैडुर्य के वर्ण से अलंकृत, मंदस्वरं, नपुंसक और क्षत्रिय यह इकार का स्वरूप है।

ई :- कुवलयमासनं वराह वाहनं मंद गमनं अमृत रसं सुगंधंद्विभुजं फल पद्म धारिणं श्वेतवर्णं शत योजनविस्तीर्णं द्विगुणोत्सेधं दिव्य शक्तिधारिणं स्त्रीं लिंगं ईकारस्य माहात्म्यं ॥ ४ ॥

कमल का आसन वराहवाहन, मंदगमन अमृतरस, सुगंधवाला, दो भुजायें फल कमल को धारण करने वाला, श्वेतवर्ण सौ योजन चौड़ा, दो सौ योजन ऊँचा, दिव्यशक्ति धारी और स्त्रीलिंग ईकार का माहात्मय है।

उ :- त्रिकोन आसनं कोक वाहनं द्विभुजं मुशल गदाआयुधं धूम्रवर्णं कठोर कटुं स्वादं शत योजन विस्तीर्णं द्विगुणोत्सेधं कठोर गंधं वश्या कर्षणं उकारस्य माहात्म्यं ॥ ५ ॥

त्रिकोण आसन कोक (भेडिया, चकवा, मेढ़क) वाहन दो भुजायें मूशल और गदा आयुध को धारण करने वाला, धूम्रवर्ण कठोर और कटु स्वादा वाला, सौ योजन चौड़ा और दो सौ योजन ऊँचा कठोर गंध वशीकरण और आकर्षण करने वाला उकार का माहात्म्य है।

ऊ :- त्रिकोणसनं उष्टवाहनं रक्तवर्णं कषाय रसं निष्टर गंधं द्विभुजं फलशूलधरं नपुंसकं शत योजनं विस्तीर्णं ऊंकारस्य माहात्म्य ॥६ ॥

त्रिकोण आसनं ऊंट वाहन रक्त वर्ण कषाय रस निष्ठुर (कठिन) गंध फल और शूल के लिए हुवे दो भुजायें नपुंसक और सौ योजन विस्तीर्ण ऊंकार का माहात्मय है।

ऋ :- लम्बा उष्ट्र स्वभावं उंष्ट्र स्वरं शत योजन विस्तीर्णं द्विगुणायामं उष्ट्रं रसं नागआभरणं सर्वविघ्नं कारिणं ऊकारस्य माहात्म्यं ॥ ७ ॥

ऊंट का स्वभाव ऊंट के जैसा स्वर, सौ योजन चौडा दुगना, ऊंट के मुख की सुगंध जैसा रस, नाग, आभरण और सबके विघ्न करने वाला ऋकार का माहात्म्य है।

ऋः- पद्मासन मयुर वाहनं कपिलवर्णं चतुर्भुजं शत योजन विस्तीर्णं द्विगुणायाम मल्लिका गंधं मधुर स्वादं हेम आभरणं नपुसंकं ऋकारस्य माहात्म्यं ॥ ८ ॥

पद्मासन, मोर वाहन, कपिल वर्ण, भुजायें, सौ योजन चौड़ा, दो सौ योजन लंबा, चमेली की सी गंध मधुर स्वाद, हेम आभरण और नपुंसक ऋकार का माहात्म्य है।

ऌकार :- हय स्वभावं हय स्वरं हय रसं शत योजनं विस्तीर्णं द्विगुणायामं शूरवाहनं चतुर्भुजं मूशल कुंत पद्म को दंड हस्तं कुवलयासनं नागाभरणं सर्व विघ्नकारिणं नपुंसकं ऌकारस्य माहात्म्यं ॥ ९ ॥

घोड़े जैसा स्वभाव, घोड़े का सा स्वर, घोड़े का सा रस सौ योजन चौड़ा दुगुना लम्बा, शूरवीर, वाहन, मूशल-भाला-कमल और धनुष लिए हुवे, चार भुजायें, कमल आसन, नाग आभरण सब विघ्नों का करना नपुंसक ऌकार का माहात्म्य है।

ऌकार: मौलि मौक्तिक यज्ञोपवीत कुंडलाभरणं द्विभुजं मल्लिका गंधंपंचासयोजन विस्तीर्णं द्विगुणयामं नपुंसकं क्षत्रियं उच्चाटनं कुंत पद्महस्तं ऌकारस्य माहात्म्यं ॥१० ॥

मुकुट मोतियों का यज्ञोपवीत और कुंडल आभूषण, भाला और कमल लिये हुवे, दो भुजायें चमेली की गंध, पचास योजन चौडा, दुगुना लम्बा नपुंसक, क्षत्रिय और उद्घाटन रूप लृकार का स्वरूप है।

एकार जटा मुकुट धारिणं मोक्तिकाभरणं यज्ञोपवीतोपेतं चतुर्भुजंशंख चक्रपरशु पद्म हस्तं दिव्य स्वादं सुगंधि सर्वप्रियं शुभ लक्षणं वृतासनं नपुंसकं एकारस्य माहात्म्य ॥ ११ ॥

जटा मुकुट धारी, मोती का आभूषण, यज्ञोपवीत सहित, शंख चक्र कमल और परशु लिए हुवे, चार भुजायें, दिव्य स्वाद, सर्वप्रिय सुगंधि, सब का प्यारा, शुभ लक्षण गोल, आसन और नपुंसक एकार का माहात्म्य है।

ऐकार त्रिकोणासनं गरडवाहनं द्विभुजं त्रिशूल गदाआयुधं अग्नि वर्ण निष्ठुर गंधं क्षीर स्वादं घर्घर स्वरं दश योजनं विस्तीर्णं द्वि गुणायामं वश्याकर्षण शक्तिः ऐकारस्य माहात्म्यं ॥ १२ ॥

त्रिकोण आसन, गरुडवाहन, त्रिशूल और गदा के लिए हुवे, दो भुजायें, अग्नि वर्ण निष्ठुर गंध, दूध का स्वाद, घर्घर स्वर, दस योजन चौड़ा, दुगुना लंबा, वशीकरण और आकर्षण शक्ति रखना ऐकार का माहात्म्य है।

ओ :- वृषभ वाहनं तप्तं कांचन वर्ण सर्वायुध संपन्नं लोकालोक व्याप्त महाशक्तिं त्रिनेत्रं द्वादश सहस्त्र बाहुं पद्मासनं महाप्रभु सर्वदेवता पूज्यं सर्वमंत्र संसाधकं सर्वलोक पूजितं सर्वशांति करं सर्वानुग्रहं विग्रहं क्षिति जल पवन हुताशनं यजमाना काश सूर्य चंद्रादि कार्य करिण कर्त्तारं सर्वाभरणं भूषितं दिव्य स्वादं सुगंधं सर्वरक्षं शुभ देहं स्थावर जंगमाश्रमं सर्वजीवदयापरं परमं अव्ययं पंचाक्षरगर्भितं ओकारस्य माहात्म्य ॥ १३ ॥

बैल बाहन, तपे हुवे सोने के समान वर्ण, सर्व शस्त्रों सहित लोक और अलोक में व्याप्त महाशक्ति, तीन नेत्र बारह हजार भुजा, पद्मासन महाप्रभु सब देवताओं से पूज्य सब मंत्रों को सिद्धि करने वाला, सब लोक से पूजित, सर्वशांति करने वाला, सबके अनुग्रह रूप शरीर वाला, पृथ्वी, जल, पवन, अग्नि यजमान, आकाश, सूर्य और चन्द्र आदि के कार्य को करने वाला कर्ता, सब आभूषणों से युक्त दिव्य स्वाद सुंगध वाला, स्थावर और जंगम का आश्रय सब जीवों पर दया करने वाला, परम अव्यय और पांच अक्षर वाला ओंकार का माहात्म्य है।

औ वृत्तासनं कोकवाहनं कुंकम गंध पीत वर्ण चतुर्बाहुं वज्र पाशधारिणं कषाय स्वादं श्वेत माल्यादि लेपनं स्थंभन शक्तिं शत योजन विस्तीर्णं द्विगुणायामं औकारस्य माहात्म्य ॥ १४ ॥

गोल आसन, चकवा वाहन, कुंकुम गंध, पीतवर्ण, वज्र और नाग पाश धारण किये हुवे, चार भुजायें कषायेला स्वाद श्वेतमाला आदि पहिने स्तंभन शक्ति सो योजन विस्तीर्ण और दुगुनी लम्बाई वाला औंकार का महात्म्य है।

अं :- पद्मासनं सितवर्णं नीलोत्पल गंधं कौस्तुभ आभरणं द्विभुजं पद्मापाशायुधं शुभगं यज्ञोपवीतधारिणं प्रसन्न मति मधुर स्वादं शत योजन विस्तीर्णं द्विगुणायामं अंकारस्य माहात्म्य ॥ १५ ॥

पद्मासन, श्वेतवर्ण नीलकमल के समान गंध वाला, कौस्तुभ मणि का आभरण, पद्म और पाश लिए हुए दो भुजायें, यज्ञोपवीतधारी, प्रसन्नमति, मधुर स्वाद सो योजन चौड़ा और दुगुना लंबा अंकार का माहात्म्य है।

अ :-त्रिकोणासनं पीताबरं कुकुमं गंधं धूम्रवर्णं कठोर स्वरं निष्ठुर दृष्टि क्षार स्वादं द्विभुजं शूलायुधं निष्ठुर गतिं शोभनांकृतिं नपुंसकंशुभकर्म्म शासनं अः कारस्य माहात्म्यं ॥ १६ ॥

त्रिकोण आसन, पीतवर्ण के वस्त्र वाला, कुकुम गंधवाला, धूम्र वर्ण कठोर स्वर निष्ठुर दृष्टि, नमकीन स्वाद, दो भुजायें, शूल आयुध, निष्ठुर गति, अशुभ आकृति, नपुंसक और शुभकर्म्म बतलाना अः का माहात्म्य है।

प्रथम वर्ग :

क :- चतुरस्रनं चतुर्दंतेन वाहनं पीतवर्णं सुगंध माल्यानुलेपनं स्थिरगति प्रसन्न दृष्टिः द्विभुजं वज्र मूशलायुधं जटामुकुंट धारिणं सर्वाभरण भूषितं सहस्रयोजनः विस्तीर्णः दशसहश्र योजनोत्सेधः पुल्लिंगं क्षत्रियं इन्द्रादि देवता स्तंभन शांतिक पौष्टिक वश्याकर्षण कर्म कार्यकारी ककारस्य शक्ति ॥: १ ॥

चौखूंटा आसन, चार दांत वाले हाथी की सवारी करने वाला, पीत वर्ण सुगंधीत मालाओं और सुगंधित लेप सहित स्थिर गति प्रसन्न दृष्टि दो भुजायें, वज्र और मूशल के आयुध, जटा और मुकुट धारी सब आभूषणों से भूषित सहस्र योजन चौड़ा, दसहजार योजन ऊंचा, पुल्लिंग, क्षत्रिय इंद्रादि देवताओं वाला स्तंभन शांति पुष्टि वशीकरण और आकर्षण कर्म के काम करने वाला ककार की शक्ति है।

ख : - पिंगल वाहनं मयूर ग्रीव वर्ण द्विभुजं तोमर शक्ति हस्तं व्याल यज्ञोपवीत सुस्वंर त्रिशंद्योन विस्तीर्णं आकाश गामिनंक्रियां क्षत्रियं सुगंध माल्यानुलेपनं आग्नेय पुरां कमतं चिंतित मनोरथ सिद्धिं करं अणिं मादि दैवतं पुलिलिंग खकारस्य शक्ति :- ॥ २ ॥

खकार:- पिंगल वाहन, मोर की गर्दन के समान रंग, तोमर मोर शक्ति के लिए हुवे दो भुजायें, सर्प का यज्ञोपवीत, अच्छा स्वर तीस योजन चौड़ा आकाश गामी क्रिया क्षत्रिय सुगंधित माला और अनुलेप युक्त अग्नि के भी नगर को कंपाने वाला, सोचे हुवे मनोरथ को सिद्ध करने वाला, अनिमा आदि देवताओं की सिद्धि वाला और पुल्लिंग खकार का माहात्म्य है।

गकार :- हसं वाहनं पद्मासनं माणिक्य भरणं इंगलिंक वर्ण हर्ष श्वेतवस्त्रं सुगंध माल्यानुं लेपनं कुकुंम चंदन प्रियं क्षत्रियं पुल्लिंग सर्वशांति करं शत योजनं विस्तीर्णं सर्वाभरण भूषितं द्विभुजं फलपाश धारिणं यज्ञादि देवता अमृत स्वादं प्रसन्न दृष्टि गकारस्य शक्ति : ॥ ३ ॥

हंस वाहन, पद्मासन, माणिक्य का आभूषण (आभरण) इंगलिक वर्ण, हृदय को प्रसन्न करने वाला श्वेत वस्त्र वाला, सुगंधिक्त मालाओं और अनुलेप से युक्त, कुंकुम और चंदन को पसंद करने वाला क्षत्रिय, पुल्लिंग, सब शांति करने वाला, सो योजन विस्तीर्ण, सब आचरणों से भूषित, फल और नागपाश के लिए हुवे, दो भुजायें यक्ष आदि देवताओं वाला अमृत का स्वाद वाला और प्रसन्न दृष्टि गकार का माहात्म्य है।

घ कार :- उष्ट्र वाहनं उलूकासनं द्विभुजं वज्र गदायुधं धूम्र वर्ण सहस्रयोजन विस्तीर्णहंस स्वरं कठोर गंधी क्षार स्वादु महाबलम उच्चाटनं छेदन मोहन स्तंभन कारि पंचाशद्यो योजन विस्तीर्ण नपुंसकं रौद्र शक्ति क्षत्रियं सर्व शांति करं महावीर्यादि दैवतं धकारस्य शक्ति॥ ४ ॥

ऊंट वाहन, उलूकासन (उल्लू) वज्र और गधा धारण करने वाला दो भुजायें, धूम्र वर्ण सहस्र योजन विस्तीर्ण, हंस का स्वर, कठोर गंध वाला, नमकीन स्वाद वाला, महाबली उच्चाटन-छेदन-मोहन और स्तंभन करने वाला, पांच सो योजन विस्तीर्ण नपुंसक रौद्रशक्ति क्षत्रिय सबकी शांति करने वाल महाबलवान देवता रूप धकार का माहात्म्य है।

ङकार :- सर्पाशनं दुष्ट स्वरं दुर्दृष्टि : दुर्गंधं दुराचारि कोटि योजन विस्तीर्णं सहस्र योजनोत्सेधं कापांशासनं रात्रि प्रियं षड्भुंज मूशल गदा शक्ति मुष्टि भुसंडी परशु हस्तं नपुसकंयमादि दैवतं ङकारस्य शक्ति : ॥ ५ ॥

सर्प को खाने वाला, दुष्ट स्वरवाला, बुरी दृष्टि दुर्गंध दुराचारी, करोड़ योजन चौड़ा, सहस्र योजन ऊंचा कार्पास (कपास) आसन वाला, रात्रि तो पसन्द करने वाला, मूशल गदाशक्ति मुष्टि भुशुंडी और परशु लिए हुवे, छः भुजायें वाला नपुंसक यम आदि देवता रूप हकार का माहात्म्य है।

चकार :- शोभनं हंस वाहनं श्वेत वर्णं शतकोटि सहश्र योजन विस्तीर्णं वज्र वैडूर्यमुक्ताभरण भूषितं चतुर्भुजं शुभ चक्र फल पद्म धरं जटामुकुट धारिणं सुस्वरं सुमनः प्रियं ब्राह्मणी यक्षादि देवतं चकारस्य शक्ति ॥ ६ ॥

सुंदर हंस का वाहन, श्वेतवर्ण, एक सो करोड़ सहश्र योजन (दसलाख) चौड़ा, वज्र, वैडूर्य और मोतियों के आभूषणों से भूषित, शुभ चक्र, फल और कमल से युक्त, चार भुजायें वाला, जटामुकुटधारी, अच्छे स्वर वाला, सुमन पुष्प से प्रेम करने वाला, ब्राह्मणी और यक्ष आदि देवताओं वाला चकार का माहात्म्य है।

छकार :-मकर वाहनं पद्मासनं महाघंटास्वरं उदयार्क प्रभं सहस्रयोजन विस्तीर्णं आकर्षणादि रौद्रकर्म करं सुमनः सुगंधं श्याम वर्णं दिव्याभरण भूषितं चतुर्भुजं चक्रं वज्र शक्ति गदायुधं सर्व कार्य सिद्ध करं गरूड दैवतं छकारस्य शक्तिः ॥ ७ ॥

मकर वाहन, कमल आसन बड़े घंटे का जैसा स्वर उदय हुवे सूर्य के समान कांतिवाला, सहस्र योजन विस्तीर्ण, आकर्षण आदि रोद्र कर्म करने वाला, अच्छा मनवाला, सुंगधित श्याम वर्ण दिव्य आभूषणों से भूषित चार भुजाओं वाला, चक्र-वज्र-शक्ति-गदा आयुध को धारण करने वाला सब कार्यों को सिद्ध करने वाला गरुड़ देवता रूप छकार की शक्ति है।

जकार :- शुद्रं पुलिंगं चतुर्भुजं परशु पाश पद्म वज्र धरं अमृत स्वादं जटा मुकुट धारिणं मौक्तिक वज्राभरण भूषितं वश्याकर्षणं सत्यवादि सुगंधप्रियं शतपद्म सन्निभं वरुणादि दैवतं जकारस्य शक्ति ॥ ८ ॥

शूद्र पुलिंग, परशु नाग, पाश कमल और वज्र लिए हुवे चार भुजाओं वाला, अमृत का स्वाद जटा और मुकुट धारण करने वाला, मोती और हीरे के आभूषणों से सुसज्जति, वशीकरण और आकर्षण करने वाला सत्यवादी, सुगंध को पसन्द करने वाला, सौ कमलों के समान कांति और वरुण आदि देवता रूप जकार की शक्ति है।

झकारः पुरूषं वैश्यं धर्मार्थं काम मोक्ष वश्याकर्षण कुबेरादि देवतं द्विभुजं शंख चक्रं हस्तं मौक्तिकं वज्रा भरणं भूषितं सत्य वादि पीतवर्णं पद्मासनं सुगंधि अमृत स्वादुं झकारस्य शक्ति ॥ ९ ॥

पुरुष, वैश्य धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष को आकर्षण और वशीकरण करने वाला कुबेर आदि देवता रूप शंख और चक्र को लिये हुवे, दो हाथों वाला, मोती और हीरे के आभूषणों से सुसज्जित, सत्यवादी पीतवर्ण, पद्मासन, सुगंधि और अमृत स्वाद झकार की शक्ति है।

ञकार :- काक वाहनं गंधकाष्ट आसनं कृष्ण वर्णदूत कर्मानपुंसकं शतयोजन विस्तीर्णं चतुर्भुजं त्रिशूल परशु निष्ठु र गदायुधं महाक्रूर स्वरं सर्व जीव भयंकरं शीघ्रगति व्यभिचार कर्मण युक्तं क्षार स्वादं शिघ्रगमनं रौद्र दृष्टि यम दैवतं ञकारस्य शक्ति ॥ १० ॥

काक वाहन, गंध वाली काष्ट का आसन वाला, कृष्ण वर्ण, दूत कर्म करने वाला, नपुंसक, सो योजन विस्तीर्ण त्रिशूल, परशु, निष्ठुर और गदा लिए हुवे चार भुजायें वाला, महाक्रूर स्वर, सब जीवों को भयभीत करने वाला, शीघ्र चलने वाला, व्यभिचार कर्म से युक्त, नमकीन स्वाद, शीघ्रगामी रौद्रदृष्टि और यम देवतारूप ञकार की शक्ति है।

टकार :- वृतासनं कपोत वाहनं कपिल वर्णं द्विभुजं वज्र गदायुधं शतयोजन विस्तीर्णं पुलिंगं मृदु स्वरं मंद गंधी लवण स्वादं शीतलस्वभावं व्यालयज्ञोपवीतं चन्द्रं दैवतं टकारस्यशक्ति ॥ ११ ॥

गोल आसन, कबूतर का वाहन वाला, कपिल वर्ण, वज्र और गदा लिए हुवे दो भुजाये वाला, सो योजन विस्तीर्ण पुलिंग मृदुस्वरवाला, मंद गंधवाला, नमकीन स्वाद, शीतल स्वभाव, सर्प की यज्ञोपवीतधारी और चन्द्र देवता रूप टकार की शक्ति है।

ठकार :- चतुस्रासनं गजवाहनं शंख संन्निभं द्विभुजं वज्र गदायुधं जंबू द्वीप प्रमाणं अमृत स्वादं पुलिंगं रक्षा स्तंभन मोहन कार्य सिद्ध करं सर्वाभरण भूषितं क्षत्रिय दैवतं ठकारस्य शक्ति ॥ १२ ॥

चौखूंटा आसन, गजवाहन, शंख की जैसी प्रभा, वज्र और गदा लिए हुवे दो भुजाओं वाला, जंबू द्वीप के बराबर विस्तीर्ण, अमृत स्वाद, पुलिंग, रक्षा स्तंभन और मोहन कार्य को सिद्ध करने वाला, सब आभूषणों से भूषित, क्षत्रिय देवता रूप ठकार का स्वरूप है।

डकार :- चतुरस्रासनं शंख सन्निभंजंबुद्वीप प्रमाणं क्षीरं अमृत स्वादं पुलिंगं द्विभुजं वज्र पद्म धरं रक्षा स्तंभन मोहन कारि कर्पूर गधं सर्वाभरण भूषितं कदलि स्वादं शुभ स्वरं कुबैर दैवतं डकारस्य शक्ति ॥ १३ ॥

चौखूटा आसन, शंख के समान कांति, जंबू द्वीप के बराबर विस्तीर्ण, दूध और अमृत के समान स्वाद वाला, पुलिंग, वज्र और पद्म लिए हुवे दो भुजायें रक्षा स्तंभन और मोहन कर्म करने वाला कपूर जैसी गंध वाला, सब आभूषणों से भूषित केले के स्वाद वाला, अच्छे स्वरवाला, कुबेर देवता रूप डकार की शक्ति है।

ढकार : चतुरस्रासनं मोहन सन्निभं जंबू द्वीप प्रमाणं पुलिंगं अष्ट भुजं परशु पाश वज्र मूशल भिंडपाल मुग्दर चाप हल नाराच आयुधं सुस्वादं सुस्वरं महाध्वनि सिंहनादं रक्तवर्णं उर्ध्व मुखं दुष्ट निग्रह शिष्ट प्रतिपालकं शत योजन विस्तीर्णं सहस्र योजनावृत्तंतद अर्द्धपरिणाहं जटामुकुट धारिणं सुगंधिनिश्वासं किन्नर ज्योतिष्क पूजितं महासत्वं युतं कालाग्नि रूद्र शक्ति वश्याकर्षणं निमिषार्द्धसाधन विकल भाग्नि दैवतं ढकारस्य शक्ति ॥ १४ ॥

चौखूंटा आसन, मोहन करने की आभा वाला, जंबू द्वीप के बराबर विस्तृत, पुलिंग, पाशुनागपाश, वज्र मूशल-भिंडपाल-मुद्गर-धनुष-हल बाण लिए हुवे आठ भुजाओं वाला अच्छा स्वाद अच्छा स्वर सिंह के शब्द जैसी महाध्वनि करने वाला, रक्त वर्ण, ऊपर की तरफ मुख वाला, दुष्टों का निग्रह और शिष्टों का पालन करने वाला, सो योजन विस्तीर्ण, सहस्र योजन का गोल घेरे वाला, उसके आधे प्रमाण ऊंचा, जटा और मुकुट धारण वाला, अच्छी गंध की निश्वास युक्त और किन्नर और ज्योतिष देवों से पूज्य, महान वीरता युक्त, प्रलय काल की अग्नि के समान भयंकर शक्ति वाला, वशीकरण और आकर्षण करने वाला और आधे क्षणमात्र में प्रसिद्ध होने वाला अग्निदेवता रूप ढकार की शक्ति है।

एकार :- त्रिकोणासनं व्याघ्र वाहनं शतसहस्र योजनायामं तदर्द्धविस्तारं षड्भुजं शशि तोमर भुशंडि भिंडपाल परशु त्रिशूल धरं कठोर गंधं शापानुग्रहं कृष्ण वर्ण रौद्रदृष्टिः क्षार स्वादुं नपुंसकं वायुदैवतं एकारस्य शक्ति ॥ १५ ॥

त्रिकोण आसन, व्याघ्र वाहन, सो योजन लंबा, उसका आधा चौड़ा, छ भुजायें, चन्द्रमा, तोमर, भुशंडि भिंडपाल, परशु और त्रिशूल शास्त्रों वाला, कठोर गंध शाप और अनुग्रह दोनों में समर्थ रौद्र दृष्टि वाला, नमकीन, स्वाद नपुंसक और वायु देवता रूपएकार की शक्ति है।

तकार : पद्मासनं गजवाहनं शौर्यांत्तभरणं शतयोजनं विस्तीर्णं तदर्द्धायामं चंपक गंधं चतुर्भुजं परशु पाश पद्म शंक हस्तं पुलिंगं चन्द्रादि देवता पूजितं मधुरस्वादं सुगंध प्रियं तकारस्य शक्तिः ॥ १६ ॥

पद्मासन, गजवाहन, चमकते हुए आभूषणधारी, सो योजन लंबा उसके आधा चौड़ा, चंपे की गंध वाला परशु नाग पाश पद्म और शंक लिये हुवे चार भुजाओं वाला पुलिंग चंद्रादि देवताओं से पूजित, मधुर स्वाद वाला, सुगंधित प्रिय तकार की शक्ति है।

थकार : वृषभ वाहनं अष्टभुजं शक्ति तोमर परशु धनुर्दंडं पाश गदा चक्र धरं कृष्ण वर्णं कृष्णं वर्णं जटा मुकुट धारिणं कोटि योजना यामं तदर्द्ध विस्तारं क्रूर दृष्टि कठोर गंधं धतूर रस प्रियं सर्वकामार्थं साधनं अग्नि दैवतंथकारस्य शक्ति ॥ १७ ॥

बैल वाहन, आठ भुजायें, शक्ति-तोमर- परशु-धनुष-दंड- नागपाश गदा और चक्रा का धारक कृष्ण वर्ण कृष्ण वस्त्र, जटा और मुकुटधारी , करोड़ योजन लम्बा उसके आधा चौड़ा क्रूर दृष्टि कठोर गंध धतूरे के रस को पसंद करने वाला सब काम अर्थ को सिद्ध करने वाला अग्नि देवता रूप थकार की शक्ति है।

दकार: महिष वाहनं कृष्ण वर्णं त्रिमुखं षडभुजं गदा मूशल त्रिशूल भुसंडि वज्र तोमरधरं कोटि योजनयामं तदर्द्ध विस्तारं दिगंबरं लोहाभरणं उर्ध्वदृष्टि: सर्प यज्ञोपवीतं निष्ठुर ध्वनि मकरंद मुन्मोक्षणं मंत्र साधनं याम दैवतं कृष्ण वर्णं नपुंसकं दकारस्य शक्ति ॥ १८ ॥

महिष वाहन, कृष्ण वर्ण, तीन मुख, छः भुजायें गदा-मूशल-त्रिशू-भुशंडि-वज्र-तोमर धारण करने वाला, योजन का विस्तीर्ण उसका आधा चौडा दिगम्बर लौह का आभूषण वाला, उर्ध्वदृष्टि वाला, सर्प यज्ञोपवीत वाला निष्ठुर ध्वनि कमल को छुड़ाने वाला मंत्र को सिद्ध करने वाला यम देवता रूप कृष्ण वर्ण, नपुंसक दकार की शक्ति है।

धकार :- पुलिंगं कषाय वर्ण त्रिनेत्रं चतुरायुत योजन विस्तीर्णं रौद्रकार्यं कारणं षटभुजं चक्र पाश गदाभुशुंडि मूशल वज्र सराशऽनायुधं कृष्णवर्णं कृष्ण सर्प यज्ञोपवीतं जटामुकुट धारिणं हुंकार महानिनादं महाशूरं कठोरं धूम्र रौद्र दृष्टिः नैऋति दैवतं धकारस्य शक्तिः ॥१९॥

पुलिंग, कषाय वर्ण, तीन नेत्र और चार अयुत अर्थात ४० हजार योजन लम्बा चौडा रौद्र कार्य को करने वाला, छः भुजाओं चक्र-पाश-गदा-भुशंडि-मूशल-वज्र-धनुष-बाण अस्त्रों के धारक, कृष्ण वर्ण वाला काले सर्प की यज्ञोपवीत पहिने हुवे जटाऔर मुकुट धारण करने वाला हुंकार रूप महान शब्द वाला महान शूरवीर कठोर धुँए को पसन्द करने वाला रौद्र दृष्टि नैऋति देवता रूप धकार की शक्ति है।

नकार :- कृष्ण वर्णं नपुंसकं त्रिशूल मुग्दलाशस्त्रं ऊर्ध्व केशं व्याप्त चर्म धारिणं रौद्र दृष्टि : कठोर स्वादं कृष्ण सर्पप्रियं काक स्वरं शत योजनोत्सेधं तद् अर्धायामं निर्यास गुग्गुल तिल तैल धूपप्रियं दुर्जन प्रियं रौद्रकर्म धरं यमादि दैवतं नकारस्य शक्ति ॥ २० ॥

कृष्ण वर्ण, नपुंसक, त्रिशूल और मुद्गल के शस्त्र वाला, ऊँचे उठे हुवे बालों वाला, सारे शरीर में व्याप्त है। चर्म को धारण करने वाला, रौद्रदृष्टि कठोर स्वाद काले सर्प से प्रेम करने वाला, कौवे जैसा स्वर वाला, सौ योजन ऊंचा उसके आधा चौडा बिनौले गूगन तिल का तैल और धूप को परन्द करने वाला, दुर्जन प्रिय रौद्रकर्म को धारण करने वाला यम आदि देवता रूप नकार की शक्ति है।

पकार : असित वर्णं पुलिंगं जाति कुसुम गंधं दश सिरं विंशति भुजं अनेक आयुधं मुद्रा परं कोटि योजन विस्तीर्णं द्विगुणयामं त्रिकोटि योजन शक्तिं गरुड वाहनं पद्मासनं सर्वाभरण भूषितं सर्प यज्ञोपवीतं सर्व देवता पूजितं सर्वदैवात्मकं सर्वदुष्ट विनाशामलयानिलं चंद्रादि दैवतं पकारस्य शक्ति : ॥ २१ ॥

कृष्णवर्ण, पुलिंग चमेली के फूल के समान, गंध दस सिर और बीस भुजायें अनेक आयुध मुद्रा में लीन, कोटि योजन चौड़ा, दुगुना लम्बा तीन करोड योजन तक जाने की शक्ति वाला, गरुड वाहन पद्मासन सब आभरणों से भूषित सर्प की यज्ञोपवीत पहिने हुवे, सब देवताओं से पूजित, सब देवों में दुष्टों के नाश करने में समर्थ चंदन की अग्नि के समान चन्द्र आदि देवता रूप पकार की शक्ति है।

फकार : विद्युत तेजं पुल्लिंगं पद्मासनं सिंह वाहनं दश कोटि योजनायामंतदर्द्ध विस्तारं द्विभुजं परशु चक्रधर केतकी गंध सिद्ध विद्याधर पूजितं मधुरं स्वादं व्याधि विष दुष्ट ग्रह विनाशनं सर्व महारति महादिव्य शक्ति शांति करं ऐशान्यं दैवतं फकारस्य शक्ति ॥ २२ ॥

बिजली के समान तेज वाला, पुलिंग, पद्मासन-सिंहवाहन, दश कोटि योजन लंबा उसके आधा चौड़ा दो भुजा परशु और चक्र लिए हुवे, केतकी पुष्प की गंध वाला सिद्ध विद्याधरों से पूजित मधुर स्वाद व्याधि विष और दुष्ट ग्रहों को नष्ट करने वाला, सबको अत्यन्त आनन्द देने वाला, महादिव्य शक्ति युक्त शांति कारक ईशान देवतारूप फकार की शक्ति है।

बकार इंगलिकामं दश कोटि योजनोत्सेधं तदर्द्धविस्तारं मौक्तिकं आभरणं यज्ञोपवीतं धरं दिव्याभरण भूषितं अष्टभुजं शंख चक्र गदा मूशल कांड कण शरासान तोमरायुधं हंस वाहनं कुवलायसनं बदरीफल स्वादं धन स्वरं चंपक गंधंवश्या कृष्टि प्रसंग प्रियं कुबैर दैवतं बकारस्य शक्ति ॥ २३ ॥

ईंगली के समान प्रभा वाला, दस कोटि योजन ऊंचा उसके आधा चौड़ा लंबा, मोतियों के आभूषण और यज्ञोपवीत को धारण करने वाला, दिव्य आभरणों से भूषित शंख चक्र गदामूसल कांड धनुष बाण और तोमर को लिये हुवे, अष्ट भुजा हंस वाहन, कमलासन, बोर के जैसा स्वाद वाला, बादल की गरजना के जैसा गंभीर स्वर, चम्पे की गंध वशीकरण और आकर्षण कर्म प्रिय और कुबेर देवता रूप बकार की शक्ति है।

भकार:- नपुंसकं दशसहस्र योजनोत्सेधं तद्वर्द्धपरिवृतं निष्ठुरं मनसं रत्नकठोर स्वादं शीघ्रगति गमन कारि ऊर्ध्व मुखं त्रिनेत्रं चतुर्भुजं चक्रं शूल गदाशक्तिं धरं त्रिकोणसनं व्याघ्र वाहनं लोहिताक्षं तीक्ष्णं उर्ध्वकेशं विकृत रूपं रौद्र कांति निमिषार्द्धं सरणं सिद्धिं करं नैऋति दैवतं भकारस्य शक्ति: ॥ २४ ॥

ऋ नपुसंक दश सहस्र योजन ऊंचा, उसके आधा गोला घेरा वाला, निष्ठुर मन वाला, रूखे और कठोर शब्द वाला (स्वाद वाला) शीघ्रगति से चलने वाला ऊर्द्ध मुख तीन नेत्र चार भुजायें चक्रशूल गदा और शक्ति लिए हुवे त्रिकोण आसन व्याघ्र वाहन वाला लाल नेत्र वाला तीक्ष्ण ऊंचे उठे हुवे केश वाला विकृत रूप वाला रोद्रा कांति आधे क्षण में शरण देने वाला सिद्ध करने वाला नैऋत देवता रूप भकार की शक्ति ॥

मकार : उदियादित्यप्रभंअनंत योजन प्रभाशक्ति सर्वव्यापि अनंत मुखं अनंत बाहुभूम्याकाश सागर पर्यंत दृष्टि सर्व कार्य साधक अमरी करणं दीपनं सर्वगंध माल्यानुपनं धूप चरुं काक्षतप्रियं सर्वदेवता रहस्य सर्वकरणं प्रलयाग्नि शिखि द्योति सर्वनायकं पद्मासन अग्नि देवतं मकारस्य शक्ति ॥ २५ ॥

उदय होते हुवे सूर्य के समान कांति, अनंत योजन तक प्रभाव, सर्व व्यापी अनंत मुख, अनंत बाहु भूमि, आकाश और समुद्र तक दृष्टि वाला, सर्व कार्य का साधक और दीपन करने वाला, सब गंध मालाओं और अनुलेप युक्त धूप तरु अक्षत को पसंद करने वाला अभट करने वाला सब देवताओं में रहस्य रूप काम करने वाला , सबका स्वामी पद्मासन अग्निदेवता रूप मकार की शक्ति है।

यकार : नपुंसकं भूम्याकाशदिशा विशेष सर्वव्यापी अरूपी शीघ्र मंद गति: युक्तं प्रमोदं व्यभिचार कर्मप्रियं सर्वदेवताग्नि प्रलयाग्नि तीव्र ज्योति सर्वविकल्पं अनंत मुखं अनंत बाहु सर्वगर्भ कर्तारं सर्वलोकप्रियं हरिणं वाहनं वृतासनं अंजनवर्णं महामधुरध्वनिं वायव्यं दैवतं यकारस्य शक्ति ॥ २६ ॥

नंपुसंक भूमि आकाश और सब दिशाओं में व्याप्त अरूपी शीघ्र और मंद दोनों प्रकार की गति

वाला. प्रसन्नता युक्त व्यभिचार कर्मप्रिय सब देवताओं की अग्नि तथा प्रलय काल की अग्नि रूप तीव्र ज्योति वाला, अनंत मुख, अनंत बाहु वाला, सब गर्भों का कर्ता, सर्व लोकप्रिय हरिन वाहन, गोल आसन, अंजन वर्ण महामधुर ध्वनि युक्त वायव्य देवता रूप यकार की शक्ति है।

रकार :- नपुंसकं सर्वव्यापी द्वादशा दित्य प्रभंज्वाला मालं कोटि योजन द्युतिं सर्व लोक कर्तारं सर्वहोम प्रियं रौद्रं शक्तिं स्त्रीणं पंच सायकं पर विद्याछेदनं आत्म कर्म साधनं स्तंभन मोहनकर्तारं जंबुद्वीपविस्तारं मेषवाहनं त्रिकोणासनं अग्निदैवतंरकारस्य शक्ति ॥ २७ ॥

नपुंसक, सर्वव्यापी, बारह सूर्यों के समान प्रभा युक्त अग्नि स्वरूप, कोटि योजन तक कांति वाला सब लोकों का कर्ता, सर्व होम प्रिय, रौद्र शक्ति स्त्रियों के लिए पांच बाण, दूसरे की विद्या का नाशक अपने कर्म का साधक, स्तंभन और मोहन करने वाला, जंबू द्वीप प्रमाण विस्तृत, मेंढे के वाहन वाला त्रिकोण आसन, अग्नि देवता रूप रकार की शक्ति है।

लकार:- पीतवर्णं चतुर्भजं वज्र चक्रं शूल गदा युधं गजवाहनं स्तंभन मोहन कर्तारं जंबूद्वीप विस्तारं मंदगतिप्रियं महात्मानं लोकालोक पूजितं सर्वजीव धारिणं चतुरस्त्रासनं पृथ्वी जयं इन्द्र दैवतं लकारस्य शक्ति ॥ २८ ॥

पीत वर्ण, वज्र शूल, चक्र और गदा के लिए हुवे चार भुजायें हस्ती वाहन स्तंभन और मोहन करने वाला, जबूंद्वीप प्रमाण विस्तृत मंदगति को पसन्द करने वाला, महात्माओं लोक और अलोक से पूजित सब जीवधारी रूप चोखटा आसन पृथ्वी को जीतने वाला इन्द्र देवता रूप लकार की शक्ति है।

वकार :- श्वेतवर्णं बिन्दु सहितं मधुर क्षारं रसं विकल्पे न नपुंसकं मकरवाहनं पद्मासनं वश्याकर्षण निर्विषं शांतिकरं वरूणादि दैवतं वकारस्य शक्ति ॥ २९ ॥

श्वेतवर्ण बिन्दु अनुस्वार सहितं मधुर और खारा स्वादा वाला , विकल्प से कर्म का नपुंसक मकर वाहन वाला, पद्मासन वश्य आकर्षण निर्विष और शांति कर्मो का करने वाला, वरूणादि देवता रूप वकार की शक्ति है।

शकार :- रक्त वर्णं दश सहस्र योजन विस्तीर्णं तद् अर्द्ध परिणाहं चंदन गंधं मधुरस्वादं मधुर रसं चक्रवा का रूढं कुवलयासनं चतुर्भुजं शंख चक्र फल पद्म हस्तं प्रसन्न दृष्टि सुमनसं सुगंध धूप प्रियं रक्त हारं शोभना भरणं जटामुकुटधारिणं वश्याकर्षण शौंतिक पौष्टिक कर्तारं उदितोदित विद्याधरं चन्द्रादि दैवतं शकारस्य शक्ति ॥ ३० ॥

श: रक्त वर्ण दस सहस्र योजन लम्बा उसके आधा चौड़ा. चंदन की गंध, मधुर स्वाद, मधुर रस, चकवे पर चढे हुवे कमल सम शंख, चक्रं-फल और पद्म लिये हुवे चार भुजाये, प्रसन्न दृष्टि, अच्छे मनवाला सुंगधित धूप को पसन्द करने वाला, लाल हार, सुन्दर आभरण तथा जटाधारी मुकुट पहिने हुवे वश्य आकर्षण शक्ति और पौष्टिककर्मो का कर्ता, अत्यंत प्रकाशित विद्या को धारण करने वाला, चन्द्र आदि देवता रूप शकार की शक्ति है।

यकार :- पुलिंगं मयुर शिख वर्णं द्विभुजं फण चक्र धारिणं प्रसन्न दृष्टि: शत सहस्र योजना यामं तद् अर्द्ध परिणाहं आम्लरसं शील गंधं कूर्मासनं कूर्म वाहनं दृष्टि प्रियं सर्वाभरण भूषितं स्तंभन मोहन कारिणं इन्द्रादि देवतं षकारस्य शक्ति: ॥ ३१ ॥

पुल्लिंग, मोर की शिखा के समान वर्ण फल और चक्र लिए हुवे दो भुजायें, प्रसन्न दृष्टि एक लाख योजन लंबा इसका आधा चौड़ा, खट्टा रस, सुन्दर गंध कूर्म्मासन, कूर्मवाहन प्रसन्न दृष्टि सब आचरणों से भूषित स्तंभन और मोहन कारक इन्द्र आदि देवता रूप षकार की शक्ति है।

सकार :- पुलिंगं श्वेत वर्णं चतुर्भुजं वज्र चक्र शंख गदा आयुधं शत सहस्र योजन प्रमाणं मधुर स्वरं मौक्तिक वज्र वैडूर्य भूषणं सुगंध माल्यानुलेपनं शितांबर प्रियं सर्वकर्म कर्त्तारं सर्वमंत्रगण पूजितं महा मुकुट धारिणं वश्याकर्षण कर्तारं प्रसन्न दृष्टि हंसवाहनं कुबैर दैवतं सकारस्य शक्ति: ॥ ३२ ॥

सकार :- पुल्लिंग श्वेत वर्ण वज्र चक्र शंख गदा लिये हुवे चार भुजायें एक लाख योजन प्रमाण मधुर स्वर हीरे मोती और वैडूर्य के आभूषण पहिने हुवे सुंगधित माला और अनुलेप युक्त श्वेत वस्त्र प्रिय सब कर्मो का कर्ता सब मंत्र से पूजित महामकुटधारी वश्य और आकर्षण के कर्ता प्रसन्न दृष्टि हंस वाहन कुबेर देवता रूप सकार की शक्ति है।

हकार :- नपुंसकं सर्वव्यापि सित वर्णं सित गंध प्रियं सितमाल्यानुलेपनं सितांबर प्रियं सर्वकर्म कर्तारं सर्वमंत्राग्र सर्वदेवता पूजितं महाद्युतिं अनेक मुद्रा आयुध युक्ति सपन्नं अचिन्त्य गति मनस्थापि विजयं चिंतित मनोरथं विकल्पं सर्वदेव महा कृष्टित्वं अतीतानागत वर्तमान त्रैलोक्य काल दर्शन सर्वश्र्यादिदैवतं हकारस्य शक्ति ॥ ३३ ॥

हकार :- नपंसुक, सर्वव्यापी, श्वेतवर्ण, श्वेत गंध, प्रिय श्वेतमाला और अनुलेप युक्त श्वेत वस्त्र प्रिय सर्वकर्मो के कर्ता, सर्व मंत्रो में प्रधान सर्व देवताओं से पूजित महान कांति वाले अनेक मुद्राओं शस्त्र तथा युक्तियों से युक्त अचिंत्य गति वाले स्थायी न रहने वाले, विजय करने वाले चिंतित

मनोरथ रूप सब महान देवों काआकर्षण करने वाले भूत, भविष्य और वर्तमान तीन काल और तीनों लोकों को देखने वाले सब लक्ष्मी आदि देवता रूप हकार की शक्ति है।

क्षकार :- पुल्लिंगं, पीत वर्णं, जंबूद्वीपो ध्यातं ध्येयम संख्यात द्वीप समुद्र व्याप्येक मुखं मरुद्गांभीर्यांष्ट बाहुं वज्र पाश मूशल भुसंडि भिंडपाल गदाशंक चक्र हस्तं गजबाहनं चतुरस्रासनं सर्वाभरण भूषितं जटामुकुटधारिणं सर्व लोकपूजितं स्तंभनं सुगंध माल्य प्रियं सर्वरक्षा करं सर्वप्रियं काल ज्ञान महेश्वरं सकल मंत्र प्रियं रुद्राग्नि देवपूजितं क्षकारस्य शक्ति ॥ ३४ ॥

क्षकार :- पुलिंग, पीत वर्ण, जंबू द्वीप के समान ध्यान करने योग्य असंख्यात द्वीप और समुद्रों से व्यापी एक मुख वाला, वायु के समान गंभीर वज्र पाश-मूशल, भुसुंड, भिंडपाल, गदाशंख-चक्र लिए आठ भुजायें गज वाहन चोखूंटा आसन, सब आभरणों से भूषित जटा और मुकुट के धारक सब लोकों से पूजित, स्तंभन रूप सुगंधमालाओं को पसंद करने वाले, सबकी रक्षा करने वाले, सर्वप्रिय सबकाल के ज्ञान वाले, माहेश्वर सब मंत्रों को पसंद करने वाले, इन्द्र और अग्नि देवता से पूजित क्षकार की शक्ति है।

अक्षरों की शक्ति की तालिका

अकार से लेकर हकार पर्यन्त एक एक अक्षर का लक्षण स्वरूप आदि

क्रं	अक्षर	अक्षरों की शक्ति व कार्य	लिंग	वर्ण
१.	अकारस्य	अतीव बली, गंभीर	पु.	हेमवर्ण
२.	आकारस्य	महाद्युति कारक	स्त्री	श्वेत
३.	इकारस्य	मन्द स्वर, क्षत्रिय	नपुं.	हेम
४.	ईकारस्य	दिव्य शक्ति कारक	स्त्री	श्वेत
५.	उकारस्य	वश्याकर्षणकारक	स्त्री	धूम्र
६.	ऊकारस्य	फल शूलधर	-	रक्त
७.	ऋकारस्य	सर्वविघ्न विनाशक	नपुं.	?
८.	ॠकार	व्यभिचार, मोहन	नपुं.	कपिल
९.	ऌकार	सर्वविघ्नकारी	नपुं.	पीत
१०.	ॡकार	उच्चाटन कारक क्षत्रिय	नपुं.	पीत
११.	एकार	शुभकारक	नपुं.	?
१२.	ऐकार	वश्याकर्षण शक्ति	नपुं.	अग्नि

१३.	ओकार	सर्वमंत्र, संसाधन, पंचाक्षर गर्भित	तप्तकांचन	
१४.	औकार	स्तंभन शक्ति	पीत	
१५.	अंकार	प्रसन्न, अतिमधुर	श्वेत	
१६.	अःकार	शुभ कर्म शासन	नपुं.	धूम्र
१७.	ककार	स्तंभन, शांतिक, पौष्टिक, वश्याकर्षणाकारी		पीत
१८.	खकार	चिंतित मनोरथकारी	नपुं.	
१९.	गकार	सर्वशान्तिकर क्षत्रिय	पुं.	
२०.	घकार	उच्चाटन, छेदन, मोहन, स्तंभनकारी, सर्वशान्ति कर महाशक्ति क्षत्रिय	नपुं.	धूम्र
२१.	ङकार	दुष्ट स्वर, दुर्दृष्टि	नपुं.	?
२२.	चकार	सुस्वर, सुमनप्रिय ब्राह्मण		श्वेत
२३.	छकार	आकर्षणादि रौद्रकर्म कारक सर्वकार्य सिद्धिकारक		श्याम
२४.	जकार	वश्याकर्षण सत्यावादी		
२५.	झकार	धर्म-अर्थ-काम-मोक्षकारी, सत्यवादी, वश्याकर्षणकारी	पुं.	पीत
२६.	ञकार	महाक्रूरस्वर, सर्वजीव भयंकर		कृष्ण
२७.	टकार	मृदुस्वर	पुं.	कपिल
२८.	ठकार	रक्षा, स्तम्भन, मोहन, कार्यसिद्धिकर क्षत्रिय		
२९.	डकार	रक्षा स्तम्भन, मोहनकारी, शुभस्वर		शंख
३०.	ढकार	दुष्ट निग्रह, शिष्ट प्रतिपालन, रूद्रशक्ति, वश्याकर्षण		रक्त
३१.	णकार	शापानुग्रहकारी	नपुं.	कृष्ण
३२.	तकार	चन्द्रादि देवता पूजित	पुं.	
३३.	थकार	सर्व कामादि		
३४.	दकार	निष्ठुरध्वनि, मरकरन्दुन्मोक्षण, मंत्रसाधन	नपुं.	कृष्ण
३५.	धकार	रौद्रकार्यकारक, रौद्रदृष्टि		कषाय
३६.	नकार	रौद्रदृष्टि, रौद्रकर्म		कृष्ण
३७.	पकार	सर्वदुष्ट विनाशक	पुं.	

३८.	फकार	व्याधि,विष, दुष्टग्रह विनाशक, महादिव्यशक्ति, शान्तिकर	पुं.	
३९.	बकार	वश्याकृष्टि प्रसंगप्रिय		इगुंल
४०.	भकार	विकृतरूप,रौद्रकान्ति, सिद्धिकर		
४१.	मकार	अनन्त योजन प्रभाशक्ति, सर्वव्यापि, सर्वसाधक		उदयार्क
४२.	यकार	व्यभिचार कर्मप्रिय, सर्वगर्भकर्तार, सर्वलोक प्रिय	नपुं.	अरूपी
४३.	रकार	सर्वहोमप्रिय, रौद्रशक्ति, परविद्याछेदक, आत्मकर्मसाधक, स्तंभनादिक कर्मकर	नपुं.	आदित्य
४४.	लकार	स्तम्भन, मोहनकारक, सर्वजीव धारक,		पीत
४५.	वकार	वश्याकर्षण, निर्विष, शान्तिकारक		श्वेत
४६.	शकार	वश्याकर्षण, शान्तिक, पौष्टिक कर्ता		रक्त
४७.	षकार	स्तम्भन, मोहनकारी	पुं.	नील, मतांतरसे पीत
४८.	सकार	सर्वकर्म कर्ता वश्याकर्षण कर्ता	पुं.	श्वेत
४९.	हकार	सर्वव्यापि, सर्वकर्मकर्ता, सर्वमंत्राग्रणी मन:स्थायी विजय, चिन्तित मनोरथ साधक, त्रिकाल, त्रिलोक दर्शक	नपुं.	
५०.	क्षकार	सर्वरक्षाकर, सर्वप्रिय, सर्वकाल ज्ञान महीश्वर, सकल मंत्रप्रिय	पुं.	पीत

द्वितीय वर्ग

श्वेताक्षरं धनार्थं :- पीताक्षरमाकृष्टि स्तंभन मोहनार्थं हरिताक्षरं कृष्णांक्षरं च व्यभिचार करं तत स्तत त्कर्म करोति ॥

श्वेत अक्षय धन के लिए, पीत अक्षर आकर्षण स्तंभन और मोहन के लिए हरा और काला अक्षर व्यभिचार करने वाला होता है। यह अपने अपने कार्यों को करते हैं।

ई ऊ वरुणं स्त्री ऋ ॠ ऌ ॡ ङ ञ ण न म पदा ए ऐ उ ऊ विकल्पेन स्त्री नाम करोति जयमा विल्पेनषंढा:शेषाक्षराणि पुमांस:

इ ऊ वर्ण स्त्रिलिंग हे ऋ ॠ ऌ ॡ ङ ञ ण न म पद ए ऐ उ ऊ यह विकल्प से स्त्रिलिंग है जय और म विकल्प से नपुसंक अक्षर कहे जाते गये हैं। शेष अक्षर पुल्लिंग है।

गण नाम इते त्रिधा ताप्रक्षरं विकल्पेन प्रयोजनमिति

इस प्रकार अक्षरों के तीन प्रकार के गण कहे नाम का विकल्प से प्रयोग करना चाहिए। इसप्रकार नपुंसक अक्षर कहे गये हैं।

इ ष ल् ल् ऊ ऐ वं पीताक्षरं = इ ष ल् ल् औ ऊ नपुंसक और पीत अक्षर हैऋऋ ष ण य द क्ष रा संभाविकं कृच्छं विकल्प स्वभेदानि

कार्यकारण संबंध स्याच्या सर्वाक्षरास्तिल तंदुल मिश्रवत्तिष्ठंति ऋ ॠ ष ण य द क्ष और र कठिन भेद और कार्य कारण संबंधवाले कार्यों को करते हैं। शेष अक्षर मिले हुवे तिल और चावलों के समान रहते हैं।

बुद्धि मनुष्यता मात्रा मंत्र वत् कार्यं।

मंत्र को जानने वाला मनुष्यता की विशेषता बुद्धि से सब काम ले ।

अकारो आकारस्य प्रतिषेधका:बिन्दु सर्वसंहिता:शांतिकं पौष्टिकं वश्या कर्षणानि करोति॥

अकार आकार का प्रतिषेधक है अकार बिन्दु सहित होने पर शांतिक पौष्टिक वश्य और आकर्षण कर्मों को करता है। उ ऋ ॠ ए ऐ आं निर्विष व्यभिचारं करोति अंकार: सर्वोद्घाटनं करोति उ ऊ ऋ ॠ ए ऐ और आं निर्विष कर्म तथा व्यभिचार करते हैं अंकार सब का उद्घाटन करता है।

खकारो निर्विषं विकल्पेन वश्यं करोति।
घकारों वश्यं करोति विकल्पेन/ स्तंभन/ भेदन व्यभिचार कर्माणि करोति।

खकार निर्विष कर्म को व विकल्प से वशीकरण करता है। घकार वशीकरण किन्तु विकल्प से स्तंभन भेदन और व्यभिचार कर्म को भी करता है।

चछकार :- शांतिकं पौष्टिकं करोति विकल्पेन भेदनं व्यभिचारं करोति

चकार और छकार शांतिक पौष्टिक को करता है और विकल्प से भेदन और व्यभिचार को भी करता है॥ प्रकर्ण ॥

ज झ कारो निर्विषं करोति विकल्पेन व्यभिचारो करोति

ज झ कारो निर्विष करता है और विकल्प से व्यभिचार को भी करता है।

ञकारे आकृष्टिं विकल्पेन व्यभिचारं करोति।

टकारः- वश्यं व्यभिचारं करोति

ञकार आकर्षण को किन्तु विकल्प से व्यभिचार को भी करता है । टकार वश्य और व्यभिचार को करता है।

णकारो व्यभिचारं करोति - तथकार : शांतिकं पौष्टिकं करोति

एकार व्यभिचार करता है। तथा शांति और पुष्टि करता है।

द ध कारों व्यभिचारं करोति नकारो व्यभिचारं करोति

द ध व्यभिचार करता है, न व्यभिचार करता है।

प फ कार: शांतिकं पौष्टिकं करोति ब भकार: स्तोभ स्तंभनं करोति

प और फ शांतिक और पौष्टिक करता है। ब म स्तोभ और स्तंभन करता है ।

मकार : सर्वकर्म विकल्पेन सर्व सिद्धि करोति।

यकारः- सर्वभिचार कर्म विकल्पेन आकृष्टिं करोति।

लकारः स्तंभन मोहन वशीकरणं विकल्पेन निर्विषों करणं वकारो निर्विषं करोति॥

म सब कर्मो को और विकल्प से सब सिद्धि को करता है ।

य सब व्यभिचार के कर्म और विकल्प से आकर्षण करता है ।

ल स्तंभन वशीकरण मोहन तथा विकल्प से निर्विष करता है व निर्विष करता है।

शकार : शांतिं पौष्टिक वश्या कृष्टिं षकारः स्तंभन मोहनं सकारो वाचा सिद्धिं करोति

श शांतिक पौष्टिक वश्य और आकर्षण करता है ष स्तंभन और मोहन करता है स वाणी को सिद्ध करता है।

हकारः सर्वकर्म करोति क्षकारः सर्वयोगाक्षरं मंत्रिणा अक्षरं प्रति प्रयत्नं सर्व कर्तव्यं ।

ह सब कार्य करता है। क्ष सब योगों को करने वाला अक्षर है। मंत्री को अक्षर के प्रति सभी प्रयत्न करना चाहिए।

इति तृतीय प्रकरणं

अ हं हा हि ही हु हू हृ हॄ हॢ हॣ हे है हो हौ हं हः इति षोडशाक्षरै बीजैः परस्परं सहितं एषामक्षर बंध सहितं कर्म।

अहं ह हा हि ही हु हू हृ हॄ हॢ हॣ हे है हो हौ हं हः इन सोलह बीजों से अक्षरों को बांधने का कर्म होता है।

अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ ए ऐ ओ औ अं अः एषाक्षरै विकल्पैनान्योन्य स्य निरोधं।

अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ ए ऐ ओ औ अं अः इन अक्षरों से विकल्प से एक दूसरें का निरोध होता है।

(स्वा) वाय व्याक्षर माग्नेयाक्षरं मित्रं

(स्वा) वायव्याक्षरमा काशाक्षरं हः परस्पर शत्रु

स्वा (वायव्य)और रं (अग्नि) अक्षर परस्पर मित्र होते है। (स्वा) वायव्य और हं (आकाश) परस्पर शत्रु है।

पृथिव्य क्षर (क्षि) म प क्ष रं मित्रं पीताक्षर रक्ताक्षरं परस्परं संबद्धं

क्षि (पृथ्वी) प (जल) मित्र होते है। पीताक्षर और लाल अक्षर एक दूसरे के संबंधी है।

कृष्णाक्षर हरिता अक्षर संबधं स्वेताक्षरमात्म संबधं

काले अक्षर और हरे अक्षर एक दूसरे के संबंधी हैं श्वेत, अक्षर का अपनी ही संबंध होता है।

स्व्याक्षर पुलिंगाक्षरं मित्रं नपुंसकाक्षरमुदासीनं

स्त्री अक्षर और पुलिंग अक्षर मित्र होते हैं और नपुंसक अक्षर उदासीन होते है।

ज क ग ऌ ॡ ए ऐ अभक्ष संबधं च उ एकार संबधं चशकार संबधं

ज क ग ऌ ॡ ए ऐ अभक्ष संबंध होता है। और उ ए का संबंध है और श का संबंध है।

ऋ ॠ य र ङ ण म अतत्संबंध विकल्पेन संयोगसंबंध

ख ध छ झ ठ थ फ व प्रसंबंध शेषअक्षर मुदासीनं

ऋ ॠ य र ङ ण और म का संबंध नहीं होता है विकल्प से संयोग संबंध हो जाता है ख ध छ झ ठ थ फ व का और प्रकार संबंध होता है। शेष अक्षर उदासीन रहते है।

आधाराक्षरै उजालवान् आधाराक्षर संयुक्तं चयोक्षरै बंलीयान्

आधार अक्षरों से आधार अक्षरों को मिलाकर जल बनावे उनमें जो अक्षर बलवान हो उसी से मिलावे।

कृष्णाक्षरं सर्व शकरं न कार्यं विनाशयंति संबंधि
विकल्पनोर्द्धाधोक्षर भाषाक्षरैराकर्षण मुच्चाटनं करोति ॥

कृष्णाक्षर सब से सुख देते है। वह मिलाये जाने से कार्य को नष्ट नहीं करते उर्द्ध अक्षर और अधः अक्षर भाषा अक्षरों के साथ विकल्प से आकर्षण और उच्चाटन करते हैं।

अव्याक्षरं स्तंभन प्रतिषेधं अधोरक्षर विकल्पेन सर्वकर्म करोति।
प्रतिषेध कार्य रहित निर्विषाक्षरं विसर्गरहितं वश्यम मे वच ॥

अव्यय अक्षर स्तंभन और प्रतिषेध करते है। अधः अक्षर विकल्प से सब काम करते हैं, निर्विष अक्षर प्रतिषेध कार्य को नहीं करता विसर्ग रहित वशीकरण को ही करताहै।

तच्चतु स्त्रिंशधोरक्षरैः षोडशाक्षरः सर्वकर्म करोति ।
एकैकाक्षरं षोडशा मंत्रयंत्राणि भवंति ॥

चौबीस योगाक्षर और सोलह स्वर अक्षर सभी कर्म कर लेते हैं। एक एक अक्षर के सोलह मंत्र और यंत्र होते हैं।

क्रिया कारक संबंधि पंचाशत चतुरोत्तर
चत्वारिशन्मत्रं यंत्राणि भवंति मंत्र व्याकर्णे चतुर्थ प्रकर्ण

क्रियाकारक से संबंध से पचास तथा ४४ चौवालीस मंत्र और यंत्र बनते हैं।

बीजाक्षर सामर्थ्य

ह्रीं अं ह्रीं मृत्यु नाशनं
ह्रीं आं ह्रीं आकर्षणं
ह्रीं इं ह्रीं पुष्टि करं
ह्रीं ईं ह्रीं आकर्षणं
ह्रीं उं ह्रीं बलकरं
ह्रीं ऊं ह्रीं उच्चाटनं -
ऋं क्षोभनं ॠं मोहनं लृं विद्वेषणं ॡ उच्चाटनं एं वश्यं ऐं पुरूष वश्यं ओ लोक वश्यं
औं राज्य वश्यं अंगज वश्यं अः मृत्यु नाशनं ॥

ह्रीं अं ह्रीं मृत्यु नाशक है। ह्रीं आं ह्रीं आकर्षण, ह्रीं इ ह्रीं पुष्टि कर्षण, ह्रीं ई ह्रीं आकर्षणं, ह्रीं ॐ ह्रीं बल करने वाला, ह्रीं उं ह्रीं उच्चाटन, ऋ क्षोभनं, ऋॄ ऊॄ मोहनं, लृं विद्वेषण, लृं उच्चाटनं, एं वश्य ऐं पुरूष वश्य ऐ लोक वश्य औं राज्य वश्य अं हस्ति वश्य अः मृत्यु नाशन है।

कं विषबीजं खं स्तोभनं गं गणपति घं स्तभनं ङं असुरं चं सुर बीजं छं लाभं मृत्युनाशनं च जं ब्रह्म राक्षस जं मृत्युनाशनं झ चन्द्र बीजं काम्यादय: धर्मार्थकाम मोक्षराज वश्याकर्षणं चं -ञ मोहनं -टं क्षोभणं चित्र करलंक कारि- ठं तन्द्र बीजं विष मृत्यु नाशनं डं गरूड बीजं-विषनाशनं च ढं कुबेर बीजं उत्तारभिमुखं स्थित्वा चतुर्लक्ष जपात्सिद्ध धन धान्य समृद्धि शंख निधि पद्म निधिं च करोति।

कं विष बीज- खं स्तोभन- गं गणपति - घं स्तंभन- ङं असुर बीज चं सुर बीज- छं लाभ और मृत्यु नाशन है- जं ब्रह्म राक्षस जं मृत्यु नाशन - झं चन्द्र बीज है यह काम्य आदि धर्म अर्थ काम मोक्ष को देते है और राज्य को वश्य और आकर्षण करता है। ञं मोहन -टं क्षोभण और चित्त को कलंक कारी है। ठं चन्द्र बीज है विष बीज है और मृत्यु नाशन है। - डं गरूडबीज है और विष नाशन है- ढं कुबेर बीज है इसको उत्तर की तरफ मुख करके चार लाख जपने से सिद्ध होती है। यह धन धान्य की समृद्धि शंख और पद्म निधि को देता है।

णं असुरं बीजं त्रिलक्ष जपात्सिद्धिं तं अष्ट वसुधा बीजं जपात् धन धान्य समृद्धि: थ यमराज बीजं मृत्यु भय नाशनं -दं दुर्गाबीजं वश्यपुष्टि करं धं सूर्यबीजं जय सुख करं न ज्वर बीजं ज्वर देवता बीजदं पं वीर भद्र बीजं सर्वविघ्न विनाशनं- फं विष्णु बीजं धन धान्य वर्द्धनं बं ब्रह्म बीजं वातपित्त श्लेष्म रोग नाशनं-भं भद्रकाली बीजं भूतप्रेत पिशाच भयोच्चटानं- मं मालाग्नि रूद्रबीजं स्तोभनं मोहन विद्वेषण करं: भूतप्रेत पिशाचाद्या ह्राननं अष्ट महासिद्धि करं-यं वायु बीजं उच्चाटनं - रं आग्नेय बीजं अग्र बीजं उग्र कर्म कार्य कर्तु-

णं असुर बीज है यह तीन लाख जपने से सिद्ध होता है। -तं अष्ट वसुधा पृथ्वी बीज है- इसको जपने से धन धान्य की समृद्धि होती है। थं यमराज बीज है- यह मृत्यु भय नाशक है। दं दुर्गा बीज है यह वश्य पुष्टि कर ते है। धं सूर्य बीजं है- जय सुख कर रहे है। नं ज्वर बीज ज्वर देवता का है। पं वीर भद्र बीजं सर्व विघ्न विनाश कहे है फं विष्णु बीज है। धन धान्य वर्द्धक है। बं ब्रह्म राक्षस बीजं है। वातपित्त कफ रोग का नाशक है। भं भद्रकाली बीज भूत प्रेत और पिशाच के भय कर्ता उच्चाटन करता है। मं मालाग्नि रूद्र बीज है। स्तोभन मोहन विद्वेषण करने वाला भूतप्रेत और पिशाच आदि का आवह्न करता है और अष्ट महासिद्धि को देता है। यं वायू बीज है उच्चाटन करता है रं अग्नि बीज उग्र आदि कर्मो को करता है।

लं इन्द्र बीजं धनधान्य सपंत्करं वंरूण बीजं विष मृत्यु नाशनं : शंलक्ष्मी बीजं लक्षजपात श्री करं षं सूर्यबीजं धर्मार्थ काम मोक्ष करं - सं वागीशं ज्ञानं करं वाचां सिद्ध करं- हं शिव बीजं दश सहस्रजपात्कार्या सिद्धि:

लं इन्द्र बीज है धनधान्य संपत्ति का कर्ता है वं वरूण बीज है विष मृत्यु नाशन है: शं लक्ष्मी बीज है इसको एक लाख जपने से लक्ष्मी मिलती है। षं सूर्यबीज है यह धर्म अर्थ काम और मोक्ष को भी देता है। सं बागीश बीज है ज्ञान करता है और वाणी सिद्ध करता है। हं शिव बीज है इसको दस हजार जपने से कार्य सिद्ध होता है।

लं भू बीजं भू लाभं- क्षं नृसिंह बीजं दश सहस्र जपात्मृत्यु नाशनं एतानि अक्षरानि पृथक-पृथक साध्यंते ह्रीं कार मध्ये आकारमादिं कृत्वा क्षकर पर्यंतं लिखित्वा अक्षरमणिं स्थापयित्वा जपेत् क्रियमाणे सर्वकार्यं सिद्धि भवति॥

लं भू बीज है भू लाभ कराने वाला है। क्षं नृसिंह बीज है। इसको दसहजार जपने से मृत्यु का नाश करता है। इन अक्षरों को सिद्धि पृथक पृथक की जाती है। ह्रींकार के बीच में अकार आदि में लेकर क्षकार तक अक्षरों की मणि माला की स्थापना करके जप करने से सब कार्यों की सिद्धि होती है।

॥ पंचम वर्ग ॥

अथ बांज कोश:

तेजो भक्ति: विनय: प्रणव ब्रह्म प्रदीप वामाश्च वेदो
अब्ज दहन ध्रुव मादि र्धुभि रोमिति ख्यात: ॥ १ ॥

तेज भक्ति विनय प्रणव ब्रह्म प्रदीप वामा वेद अब्ज दहन ध्रुव आदि और द्यु: ॐ के नाम हैं।

माया तत्वं शक्ति र्लोकेशो ह्रीं त्रिमूर्तिं बीजैशौ
कूटाक्षरं क्षकारं मलवर्यूपिंड मष्ट मूर्तिवा ॥ २ ॥

माया, तत्व, शक्ति, लोकेश त्रिमूर्ति (त्रयडङ्गधर) बीजैश ह्रीं के नाम है। क्ष कूट म्ल्वर्यूं पिंट अष्ट मूर्ति है।

बाणा: पंच द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सं: इति ठ वर्ण
मरिवलेन्दु: सकलचन्द्र बीज संज्ञा ठ: वर्णा:
इ्वीं क्ष्वीं हंस: सुरभि मुद्राक्षर मथवा वागभवैश्चैव: ॥ ३ ॥

द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः काम के पांच बाण है-ठ अखिलेन्दु पूर्ण चन्द्र इ्वीं क्ष्वीं हंस सुरभि मुद्रा अक्षर और वाग्भव ऐं बीज है।

क्षि प ॐ स्वाहा बीज क्षिति जल दहना निलांबरं क्रमश:
खगपति पंचाक्षर मिति आपाशं तक्षशां चस्यात् ॥ ४ ॥

क्षि पृथ्वी- प जल उं अग्नि-वायू हा आकाश -क्षिप उं स्वाहा खगपति पंक्षाक्षर आं पाशं दिसा लक्ष शां होता है।

खगपति गरूडस्य पंच अक्षरानि पाश बीजमामर्यादिकृत्य
आँ पंचतत्व दिशां च स्युक्षिपात वः ॥

ईकारः श्री श्च लक्ष्मी स्यात् इ्वीं मिंदु क्ष्वीं सुधाक्षरं
क्रों मंकुशं क्लीं मनंग बीजं क्ष्मं पीठमक्षरं ॥ ५ ॥

ई श्री लक्ष्मीं इ्वीं इन्दु क्ष्वीं सुधाअक्षर -क्रों अंकुश क्लीं अनंग बीजक्ष्मं पीठ अक्षर होता है।

स्वाहेति होम संज्ञं स्यात् इ्वीं मिंदु क्ष्वीं सुधक्षरं
वं सुधां संज्ञकं हंसः निर्विषीकरणं स्मृतं ॥ ६ ॥

स्वाहा होम संज्ञक है। ब्लें क्लीं रत्न युग्मक, वं सुधा, हंसाः निर्विष बीज है।

खः खादं चाक्षरं प्रोक्तं ह्सौं महाशक्ति बीजकं
हाः निरोधनं बीजं च ठः स्तंभाद्वय मक्षरं ॥ ७ ॥

खः खाद बीजः ह्सौं महाशक्ति बीज हा निरोधन बीज ठः ठः स्तंभन बीज दोनों अक्षर हैं।

हूँ जैनं सकलाख्यं च ब्लें विमल पिंडकं
आकर्षणाक्षरं ज्ञेयं ग्लौं च स्तंभनं स्मृतं ॥ ८ ॥

हूँ जैन बीज सकलाख्य का बीज है ब्लें विमल पिंड है आकर्षण करने वाले बीज हैं। ग्लौं स्तंभन बीज है

सृष्टि विसर्जनं जं अं विद्वेषं जूं च हूं मपि
ब्लूं द्रावण मिति प्रोक्तं चलनं य स्तथा चलः ॥ ९ ॥

जं अं सृष्टि विसर्जन बीज-जूं हूं विद्वेष बीज-ब्लूं द्रावण यः चलनं और अचल बीज भी-

हामादि पंचकं शून्यं लं इन्द्राक्षर संज्ञकं
घे युगं वधबीजं स्यात् द्रां द्रीं च द्रावण ख्यकं ॥ १० ॥

हां हीं हूं हौं हः पंच शून्य बीज है। लं एन्द्र बीज है घे घे वध बीज है द्रां द्रीं द्रावण बीज है।

हकारं शब्दकं शून्य नमः शोधनमर्चनं
जपं च कुर्यादऽकलं परं सिद्ध समाकृतं ॥ ११ ॥

ह शब्द शून्य नमः शोधन अर्चन अपर सिद्ध इनका जप करना चाहिए।

पंचम प्रकरण (बीजाक्षरों की सामर्थ्य की तालिका)

बीजाक्षर	बीजाक्षरों के कार्य
ह्रीं अं ह्रीं	मृत्युनाशन
ह्रीं आं ह्रीं	आकर्षण
ह्रीं इं ह्रीं	पुष्टिकर
ह्रीं ईं ह्रीं	आकर्षण
ह्रीं उं ह्रीं	बलकारक
ह्रीं ऊं ह्रीं	उच्चाटन
ऋं	क्षोभणं
ॠं	मोहनं
ऌं	विद्वेषण
ॡं	उच्चाटन
एं	वश्य
ऐं	पुरूष वश्य
ओं	लोकवश्य
औं	राजा वश्य
अं	हस्ति वश्य
अः	मृत्यु नाशन
कं	विष बीज
खं	स्तोभन
गं	गणपति
घं	स्तम्भन
ङं	असुर
चं	सुरबीज
छं	लोभ और मृत्युनाशन
जं	ब्रह्मराक्षस और मृत्युनाशन
झं	चन्द्र बीज, काम्य और धर्म-अर्थ-काम- मोक्ष को देता है राज्य वश और आकर्षण कारक
ञं	मोहन
टं	क्षोभन और चित्र कलंककारि

ठं चन्द्र बीज विष मृत्यु
डं गरूड बीज, विषनाशक
ढं कुबेर बीज, उत्तराभिमुख होकर चार लाख जप से सिद्ध होता है। धन धान्य समृद्धि, शंख और पद्मनिधि को करने वाला
णं असुर बीज और तीन लाख जप से सिद्ध होता है।
तं अष्ट वसुधा बीज, जपात् धन धान्य समृद्धि कारक
थं यमराज बीजं, मृत्युनाशनम्
दं दुर्गा बीज, सत्य पुष्टिकारक
धं सूर्य बीजं, जय-सुखकरं
नं ज्वर बीजं, ज्वर देवतां
पं वीरभद्र बीज, सूर्य विघ्न विनाशनं
फं विष्णु बीज, धन-धान्य वर्द्धक
बं ब्रह्म बीज, वात-पित्त-कफ-श्लेष्म नाशक
भं भद्रकाली बीज, भूत-प्रेत-पिशाचभयोच्चाटनं
मं मालाग्नि रूद्र बीज, स्तोभन, मोहन, विद्वेषण करं भूत-प्रेत पिशाचाद्याह्वाननं अष्ट महासिद्धिंकरं
यं वायु बीजं, उच्चाटनं
रं आग्नेय बीजं, उग्रकर्म कार्यकारक
लं इन्द्रबीजं धनधान्य सम्पत्करं
वं ऋणबीजं, विष-मृत्यु नाशनं
शं लक्ष्मी बीजं, एक लाख जप से श्री कारक
ष सूर्यबीजं, धर्मार्थकाम-मोक्ष कारक
स वागीशं ज्ञानकारक-वचन सिद्धि कारक
ह शिवबीज, दस हजार जप से कार्य सिद्ध
क्ष भूबीज-भूलाभकर
ज्ञ नृसिंह बीज, दस हजार जप से मृत्युनाश होता है।

नोट: इन अक्षरों की सिद्धि पृथक पृथक की जाती है। ह्रींकार को मध्य में और अकारादि 'क्ष' पर्यन्त अक्षरों को लिखकर उनमें अक्षरों की मणिरूप स्थापन कर उनमें जप करने पर सह कार्य सिद्ध होते हैं।

षष्ठ प्रकरण तालिका

१. बीजकोश

बीज	पर्यायवाची नाम
ॐ	तेज, भक्ति, विनय, प्रणव, ब्रह्म, प्रदीप, वेद, वाम, अब्ज, दहन, ध्रुव आदि, और द्यु ये ॐ के वाचक हैं।
ह्रीं	माया सत्त्व, शक्ति, लोकेश, त्रिमूर्ति और बीजेश-ये ह्रीं के वाचक हैं।
क्ष्वीं	कूट और कूटाक्षर
म्ल्वयूं	पिण्ड, अमृत मूर्ति (म्-ल्-व्-र्-यूं) इनका संयुक्त वर्ण म्ल्व्यूं है।
द्रां द्रीं, क्लीं ब्लूं सः	ये पाँच बाण के वाचक हैं।
ठ	अखिलेन्दु (पूर्णचन्द्र)
ह्वीं-क्ष्वीं	मुद्राक्षर और वाग्भव सुरभि
ह्रः	सुरभि
क्षिं	पृथ्वी
प	जल
ॐ	अग्नि
स्वा	वायु
हा	आकाश
क्षिप ॐ स्वाहा	खगपति, पंचाक्षर, आयास, दिशा
ईं	श्री, लक्ष्मी
इवीं	इन्दू
क्ष्वीं	सुधा अक्षर
क्रों	अंकुश
क्लीं	अनंगबीज
क्ष्मं	पीठअक्षर
स्वाहा	होम संज्ञक
क्ष्मं-क्लीं	रत्न युग्मक
वं	सुधा
हंसः	निर्विष बीज
ह्रीं च	ख खल्वाट बीज, महाशक्ति बीज
हा	निरोध बीज

ठ ठ	स्तम्भन बीज
हैं	सकल, जैन
ब्लें क्ष्में	विमल पिण्ड, आकर्षण
ग्लौं ग्लौं	स्तम्भन
जं अं	सृष्टि विसर्जन
जूं हूं	विद्वेषण
ब्लूं	द्रावण
यः	चलन और चल
ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः	शून्य
लं	ऐन्द्र बीज
घे घे	वध बीज
द्रां द्रीं	द्रावणबीज
ह	शब्द शून्य
नमः	शोधन, अर्चन
अ	पर, सिद्ध

इनका का जाप करन चाहिये।

आं ह्रां ह्रीं क्ष्रीं क्रों,
क्लीं द्रां द्रीं ब्लूं , नौतत्व
व्हः क्ष्वीं यः वः स्वाहा सुधाक्षर
क्षां क्षीं क्षं क्षौ क्षः
वां क्षे क्षै क्षो क्षं कूट पांच

वज्र आठ हैं - वम्ल्व्यूं, खम्ल्व्यूं, झम्ल्व्यूं, भम्ल्व्यूं, म्म्ल्व्यूं ह्म्ल्व्यूं (घम्ल्व्यूं)
पिंडाक्षर १४ हैं - वम्ल्व्यूं, खम्ल्व्यूं, घम्ल्व्यूं, छम्ल्व्यूं, झम्ल्व्यूं, ञम्ल्व्यूं, तम्ल्व्यूं, भम्ल्व्यूं, म्म्ल्व्यूं, यम्ल्व्यूं, स्म्ल्व्यूं ह्म्ल्व्यूं, क्षम्ल्व्यूं।

इत्यार्षे विद्यानुशासने मंत्र लक्षण विधि र्नाम

इसप्रकार विद्यानुशासन ग्रंथ में मंत्र लक्षण नामक द्वितीय परिच्छेद पूर्ण हुआ।

द्वितीय परिच्छेदः

तीसरा अध्याय प्रारम्भ

अथ शेषाः प्रभाष्यंते परिभाषा विशेषतः
कृत्स्नोपि मंत्र यंत्राताया र्थांतया अपेक्ष्यैव वर्तते ॥ १ ॥

अब उन अवशिष्ट परिभाषाओं का विशेष रूप से वर्णन किया जाता है। जिनकी उपेक्षा से कोई भी मंत्र यंत्र नहीं कर सकता।

योगोपदेश दैवत सकली करणोपचार जपहोमात्
दिक्कालादीन मंडल मक्षर संज्ञांश्चवक्ष्येत्र ॥ २ ॥

योगोपदेश देवता सकली करण उपचार जप होम दिशा और काल आदि तथा पृथ्वी आदि मंडल और शांति आदि संज्ञायें इस तीसरे परिच्छेद में कही जावेंगी।

साधकारव्यादि मंत्रादि वर्णौ तत्तारयोरपि
तद्राश्योश्च क्षयोनुकूल्यं योगइति स्मृतः ॥ ३ ॥

प्रथम साधक के नाम और मंत्र के अक्षरों को नक्षत्र तारे और राशी को मिलाना चाहिये विरोध न होने पर समझ लेना चाहिये कि मंत्र सिद्ध हो जायेगा।

द्वयैक त्रि चतुरेकैक द्वि संख्याःक्रमतः स्वराः
अश्वाद्यास्तारकाः स्मृताः रेवती स्या त्स्वरांतिमौ ॥ ४ ॥

एक द्वि द्वेक द्वि द्वि त्येक द्वि त्र्येकैकैकै क त्रैक
द्वि त्रि प्रमिताः स्यु वर्णाः पुष्याद तारा स्युः ॥ ५ ॥

अब प्रथम नक्षत्र क्रम से अक्षर गिनने का उपाय बतलाय जाता है। अश्विनि आदि नक्षत्रों में स्वर दो, एक, तीन, चार, एक-एक दो-एक और दो -दो के क्रम से हैं। अंत के दोनों स्वर रेवती में होते हैं। व्यंजनों का क्रम पुष्य आदि नक्षत्रों में दो-दो एक-दो एक दो तीन एक तीन एक एक एक दो एक दो और तीन है।

अश्विन	भ	कि	की	म	आ	मो	मा	प्र	प्रथा	पू.फा	उ.फा	हस्त	चित्रा	स्वाति	विशाखा	अनुराधा	ज्येष्ठा	मूल	पू.षा	उ.षा.	श्रवण	धनिष्ठा	शत	पू.भा	उ.भा	रेवती
२	१	३	४	१	१	२	१	२	२	१	२	२	३	१	२	३	१	३	१	१	१	२	१	२	३	२
देव	नर	राक्षस	नर	देव	नर	देव	देव	राक्षस	राक्षस	नर	नर	देव	राक्षस	देव	राक्षस	देव	राक्षस	राक्षस	नर	नर	देव	राक्षस	राक्षस	नर	नर	देव
अ आ	इ	ई उ ऊ	ऋ ॠ ऌ ॡ	ए	ऐ	ओ औ	क	ख ग	घ ङ	च	छ ज	झ ञ	ट ठ	ड	ढ ण	त थ द	ध	न प फ	ब	भ	म	य र	ल	व श	ष स ह	अं अः

मंत्री के नाम से नक्षत्र से यदि मंत्र का नक्षत्र १-१० -१९ हो तो जन्म दूसरा, ११ -२० होतो संपत, ३-१२-२१ हो तो विपत्त, ४-१३-२२ हो तो क्षेम, ५- १४- २३ प्रत्यरि, ६-१५-५४ साधक, ७-१६-२५ वध ९-१७-२६ मंत्री ९-१९-२७ परम मैत्रिक होता है। यदि मंत्र विपत्त प्रत्यरि वध होतो छोड दो मंत्र शत्रु अक्षर से आरंभ होतो शत्रू कहलाते हैं । मित्र अक्षर से आरंभ वाले मित्र कहलाते हैं। देव गण व मनुष्य गण मंत्र शुभ होते हैं। तथा राक्षस गण मंत्र अशुभ फलदाता होते हैं।

॥ मतांतरेणापि ॥

राज्य लोभोपकारस्य प्रारभ्यारि स्वरः,
कुरूगोपाल कुक्कुटी प्रायात्कुल्लवित्युदितालिपि ॥ ६ ॥

दूसरे मत से यदि मंत्र शत्रु स्वर से आरंभ हो तो शत्रु होता है। अन्यथा राज्य लाभ व उपकार का करने वाला होता है। लिखने में कुरूगोपाल कुट्टी प्रायात् कुल्लो आदि के अक्षरों को इस प्रकार लगा लेना चाहिये।

नक्षत्रेषु क्रमाद्योज्यां स्वरांत्यौ रेवती युजौ
जन्म संपद्विपत्क्षेमं प्रत्यरिः साधको वधः ॥ ७ ॥
मैत्रं परं च जन्मा दीन्येतानि च पुनः पुनः
मंत्री नाम नक्षेणमंत्राक्षरं पर्यंतं योज्यं ॥ ८ ॥

उपरोक्त यंत्र के लिए नक्षत्रों में क्रम से रेवती तक स्वर तथा व्यंजनों को लगाने से मंत्र में जन्म संपत्ति विपत्ति कुशलता शत्रु की सिद्धि और वध मित्रता शत्रुता और जन्म आदि बार बार भली प्रकार जाने जा सकते हैं। मंत्री का नाम और मंत्र के अक्षरों को इसी यंत्र से देखना चाहिये।

अथः राशि परीक्षा

चतु स्त्रि त्रि द्वि द्वि द्विर्गिषु वर्णो ष्वि शरां ष्वयः
एते राशि षु वर्णः स्यु नार्यामूष्माक्षराण्यापि
यत्र नराक्षरमादि :स्यात् तस्मादारभ्यराशय श्चत्वारः ॥ ९ ॥

रक्षक सेवक पोषक द्योतक तुल्याः पुनस्त स्ततो न्ये द्वेग
वर्णैश्चतुष्पदेस्थै र्नाख्यादिर्येषु भवंतिते वर्णाः
सिद्धास्तेभ्यः साध्यास्ततः सिद्धा स्ततो रिपवः ॥ १० ॥

जिस राशि में पुरूष का अक्षर हो तो उससे आरंभ करके चार से पहले पहली राशि या रक्षक सेवक पोषक होती है इसके अतिरिक्त घातक उद्वेगी होती है।
इन तीनों केभीतर यदि मंत्र के पद आवे तो वह सिद्ध होते हैं।उनको अवश्य सिद्ध कर लेना चाहिये। इसके अतिरिक्त अन्य शत्रु होते हैं।

मतांतरेणापि

वेला गुरू स्वार शोण शर्म्मणवेतिभदिताः
लिपि वर्ण राशिषु ज्ञेया षष्टे शादीं न्युयोजयेत् ॥ ११ ॥

बेला गुरू स्वार शोण और शर्म्मा आदि के अक्षरों को भी इसी प्रकार राशी चक्र में देखकर जान लेना चाहिए।

एक पंच नव वंदु रक्षकाः द्वे च षष्ट दशमः सुसेवकाः
त्रीणि रूद्र सप्त गण पोषकाः द्वादशाष्ट चतुरस्तु घातकाः ॥ १२ ॥

नाम राशि से प्रथम, पंचम, नवम मित्र और रक्षक होते हैं। दूसरी, छटी और दसवीं सेवक होते हैं तीसरी, सातवीं और ग्यारहवीं पोषक होती है- और चौथी, आठवीं, बारहवीं घातक होती है।

मंत्रिणं रक्षंते रक्षसे सेवते च्च मसेवकः
मंत्रः स पोषको ज्ञेयो घातये त्स च घातकः ॥ १३ ॥

जो मंत्री की रक्षा करे वह रक्षक जो सेवा करे वह सेवक, जो उसको पुष्टि करे वह पोषक और जो घात करे उसको घातक कहते हैं।

अथ मंत्रः सुसिद्धादिः सिद्धादि र्वाम तः शुभः
मंत्रं विद्वेषि वर्णाद्यं साध्यादि वात् साधयेत् ॥ १४ ॥

जिन मंत्रों के आरंभ में अथ हो उसको सिद्धादि जिसके आरंभ में ॐ ह्रीं हो उसको सुसिद्धादि कहते हैं। वह शुभ होते हैं उनको सिद्ध कर लेये, तथा जिनके आदि में विद्वेषि पद हो उनको साध्यादि कहते हैं उनको सिद्ध न करे।

मंत्र सिद्ध सुसिद्धादि पाठत्सिद्धादि कोजपात्
साध्यादि जंपि होमाद्यैरप्यादिहंति साधकं ॥ १५ ॥

सुसिद्धादि मंत्र पाठ मात्र से सिद्धादि जप से और साध्यादि जप और होम आदि से साधक को फल देते हैं। अरिमंत्र साधक का वध करते हैं।

सिद्धादि नाममध्ये यो मंत्राद्यक्षरान्विता वर्णाः
सिद्धादीन पुनरपि कृत्वैवं योगमुपगच्छेत ॥ १६ ॥

सिद्धादि नाम के अन्दर जो मंत्र के आदि के वर्ण होते हैं सिद्ध किये जाने वाले मंत्र में उनको लगाने से सिद्धि शीघ्र होती है।

न दुष्ट वर्ण प्राद्यश्चेन मंत्रः सिद्धिं प्रयच्छति।
इत्युक्तो वर्णयोगोऽन्न परेषां वर्ण्यते मतं ॥ १७ ॥

यदि मंत्र में दुष्ट वर्ण अधिक होतो सिद्ध नहीं देते वह वर्ण योग वर्णन किया गया अब दूसरा वर्णन आरंभ करते हैं।

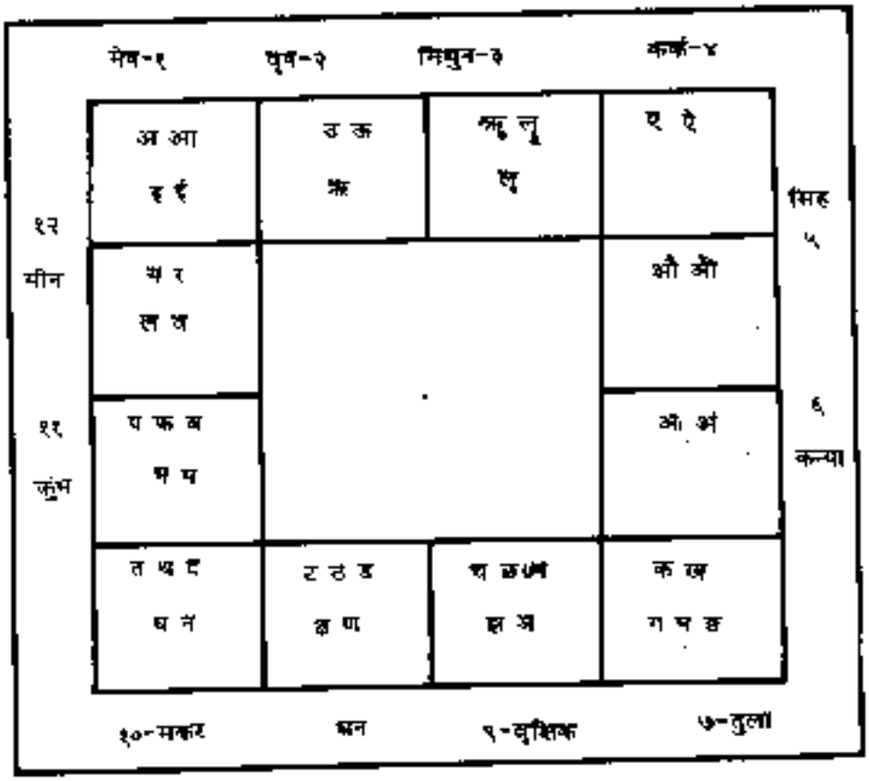

ल	कन्या	१२	घातक
अ	कुंभ	५	वधक
ल	मेष	७	घातक
न	मकर	४	घातक
ल	मेष	७	वधक
य	मीन	८	वधक
अ	मेष	७	घातक
व	मीन	८	वधक
ल	मेष	७	वधक
ल	कन्या	१२	घातक
मंत्र	राशि	योग	अंक

अथः अंशक परीक्षा

परिज्ञायांशकं पूर्वं साध्य साधक योरपि
मंत्रं निवेदयेत प्राज्ञोव्यर्थं तत्फल मन्यथा ॥ १८ ॥

बुद्धिमान साध्य-साधक के अंशों को भली प्रकार जानकर ही मंत्र को आरंभ करे अन्यथा इसका फल व्यर्थ जाता है।

साध्य साधकयो र्नामानुस्वारं व्यंजनं स्वरं
पृथक कृत्वा क्रमात्स्थाप्य मूर्द्धाधः परिभागतः ॥ १९ ॥

साध्य और साधक के नाम के अनुसार व्यंजनों और स्वरों को पृथक पृथक करके क्रम से ऊपर नीचे के विभाग से रखो।

साध्य नामाक्षरं गण्यं साधकाह्वय वर्णतः
ऋ ॠ ऌ ॡ परित्यज्य कुर्यात् तेद वेदभाजितं ॥ २० ॥

ऋ ॠ ऌ ॡ को छोड़कर साध्य के नाम के अक्षरों को साधक नाम के अक्षरों से जोड़े फिर उसको चार से भाग दे।

लब्ध आद्यो गण नाशेषा स्तंचाद्यं स्थापयेत क्रमाद्धीमान्
एकद्वि त्रि चतुर्णं सिद्धं साध्यं सुसिद्धमरिं ॥ २१ ॥

बुद्धिमान उस भागफल को क्रम से एक स्थान पर रख लेवे उनमें से शेष १ बचे तो सिद्ध दो साध्य तीन सुसिद्ध और ४ बचे तो शत्रु कहलाते हैं॥

सिद्ध सुसिद्धं ग्राह्यं शत्रुं साध्यं च वर्ज्जयेत् प्राज्ञः
सिद्ध सुसिद्धे सफलं विफलं साध्योपरिनाशाय ॥ २२ ॥

सिद्ध और सुसिद्ध को ग्रहण कर लेना चाहिये किन्तु शत्रु और साध्य को छोड़ देना चाहिये, क्योंकि सिद्ध और सुसिद्ध सफल होते हैं और साध्य निष्फल होते हैं और शत्रु नाश करते हैं।

फलदं कतिपयदिवसैः सिद्धं चे त्साध्य मपि दिनैर्बहुभिः
झटिति फलदं सुसिद्धं प्राणार्थं विनाशनः शत्रुः ॥ २३ ॥

सिद्ध थोड़े दिन में फल देता है साध्य अधिक दिनों में फल देता है। सुसिद्ध शीघ्र फल देता है और शत्रु प्राण और अर्थ का घात करता है।

आदांवंते शत्रुर्यदि भवति तदा परि त्यजेन्मंत्रं
स्थान त्रितये शत्रु र्मृत्युः स्यात् कार्य हानिर्वा ॥ २४ ॥

यदि आरंभ में और अंत में शत्रु हो तो मंत्र को छोड़ दे यदि अंत और मध्य और आदि में अर्थात् तीनों स्थानों में शत्रु वर्ण होतो या तो मृत्यु या कार्य हानि होती है।

शत्रु र्भवति यदादौ मध्ये सिद्धं तदंतगं साध्यं
कष्टेन भवति महता स्वल्पफलं चेति कथनीयं ॥ २५ ॥

यदि मंत्र के आदि में शत्रु वर्ण मध्य में सिद्ध वर्ण और अंत में साध्य हो तो वह मंत्र अत्यंत कष्ट से तो सिद्ध होता है और फल बहुत थोड़ा होता है।

अंते यदि भवति रिपुः प्रथमे मध्ये च सिद्धि युग पतनं
कार्यं यदादि जातं तन्नश्यति सर्वमेवांते ॥ २६ ॥

यदि आदि और मध्यमें सिद्ध वर्ण और अंत में शत्रु हो तो बनता बनता काम बिगड़ जाता है।

सिद्ध सुसिद्धम थवा रिपुणांतरितं निरीक्ष्यते यत्र
दुःखापाय प्रबलं भवतीति विसर्जयेत् कार्यं ॥ २७ ॥

अतएव बुद्धिमान सिद्ध औक सुसिद्ध के बीच में शत्रु वर्ण भी देखे तो उस मंत्र को अनेक दुख और हानियों वाला समझकर छोड़ देवे।

वैरि निपातेन बिना यदायाः संभवंति सर्वत्रं
तत्रै हिक फल सिद्धिः स्याद चिरेणेति वक्तव्यं ॥ २८ ॥

यदि सभी पद शत्रु पदों से पूर्णतः रहित हो तो तुरंत ही सब सांसारिक फलों की सिद्धि हो जाती है।

५. अथकह चक्र - (मंत्र। सा. सा. वि.)

पाँच रेखायें खड़ी तथा पाँच पड़ी बनाकर सोलह कोष्ठक का यंत्र बनाया जावे। उसमें 'अ' से लेकर 'ह' तक के वर्णों ल, क्ष, और ज्ञ सहित निम्नलिखित कोठों के क्रम से रखें। एक, तीन, ग्यारह, नौ, दो, चार, बारह, दस, छः, आठ, सोलह, चौदह, पाँच, सात, पन्द्रह और तेरह। इसमें जिस चौकड़ी में नाम का प्रथम अक्षर हो वह चारों कोष्ठक सिद्ध, उससे अगले चार साध्य, उससे अगले चार सुसिद्ध और उससे भी अगले चार सुसिद्ध कहलाते हैं। यदि उस कोष्ठक में अपने नाम का तथा मंत्र का दोनों

के वर्ण हों तो उसको सिद्ध कहते हैं। यदि मंत्र के वर्ण उससे अगले कोष्ठक में हो तो उसको सिद्ध-साध्य कहा जाता है। यदि मंत्र के वर्ण उससे तीसरे कोष्ठक में हों तो उसको सिद्ध-सुसिद्ध कहा जाता है। अथवा यदि मंत्र के वर्ण उससे चौथे कोष्टक में हों तो सिद्ध शत्रु कहलाता है। यदि मंत्र के अक्षर नाम वाले चारों कोठों में न हों तो नाम वाले कोठे से आरम्भ करके उन चारों कोठों को क्रम से साध्य सिद्ध, साध्य-साध्य, साध्य-सुसिद्ध, और साध्य शत्रु समझना चाहिये। इसीप्रकार उससे आगे के कोठों को सुसिद्ध-सिद्ध, सुसिद्ध-साध्य, सुसिद्ध-सुसिद्ध, सुसिद्ध-शत्रु, शत्रु-सिद्ध, शत्रु-साध्य, शत्रु-सुसिद्ध- और शत्रु-शत्रु जानकर सोलह भेद बना लेने चाहिये। सिद्ध-सिद्ध विधि में लिखे हुए जप आदि से सिद्ध होता है। सिद्ध-साध्य, द्विगुणित क्रिया से सिद्ध होता है। सिद्ध सुसिद्ध आधी क्रिया से सिद्ध होता है। और सिद्ध-शत्रु बन्धुओं का नाश करता है। साध्य-सिद्ध दुगुनी विधि से सिद्ध होता है। साध्य-साध्य का अनुष्ठान का व्यर्थ जाता है। साध्य-सुसिद्ध दुगुनी विधि से सिद्ध होता है। और साध्य-शत्रु अपने गोत्र वालों को नष्ट करता है। सुसिद्ध-सिद्ध आधे जप से सिद्ध होता है। सुसिद्ध-साध्य दुगुने जप से सिद्ध होता है। सुसिद्ध-सुसिद्ध आरम्भ करते ही सिद्ध होता है। और सिद्ध शत्रु कुटुम्ब को नष्ट करता है। शत्रु-सिद्ध पुत्र को मारता है। शत्रु-साध्य कन्या को मारता है। शत्रु-सुसिद्ध पत्नी को मारता है और शत्रु-शत्रु साथ मंत्री को ही मार डालता है। नाम और मंत्र के स्वर-व्यंजनों को पृथक्-पृथक् लिख कर प्रत्येक अक्षर का हिसाब तब तक लगाना चाहिये जब तक मंत्र समाप्त न हो। यदि नाम समाप्त हो जावे तो फिर नाम को ही लिख लेना चाहिये। इसप्रकार विचार करने पर सिद्ध और सुसिद्धों की अधिकता और साध्य तथा शत्रुओं की न्यूनता में मंत्र को शुभ समझना चाहिये।

उक्त मंत्र निम्न है-

अ क १ एक थ ह	उ ङ २ पांच प	आ ख ३ दो द ल	ऊ च ४ छै फ
औ ड ५ तेरह व	ल, ञ ६ नौ भ	औ ढ ७ चौदह श	ल, भ ८ दस य
ई ध ९ चार न श	ऋ ज १० आठ भ	इ ग ११तीन ध ष	ऋ छ १२ सात ब
अः त	ए ठ	अ	

६. अकडम चक्र - (मंत्र. सा. सा. वि.)

एक द्वादश दल कमल बनाकर उसमें नपुंसक वर्णों को (ऋ ॠ ऌ ॡ) को छोड़कर पूर्वोक्त वर्णों को लिखें जो इसप्रकार है। चक्र में भी नाम को प्रथम अक्षर से आरंभ करके मंत्र के प्रथम अक्षर तक क्रमशः सिद्ध, साध्य, सुसिद्ध और शत्रु को गिने। सिद्ध समय पाकर सिद्ध होता है, साध्य जप और होम से सिद्ध होता है। सुसिद्ध आरम्भ करते ही सिद्ध हो जाता है। और शत्रु साधक को खा जाता है। नाम से एक पाँच और नौवें कोष्ठक के वर्ण सिद्ध, दो-छः और दसवें कोष्ठकों के साध्य, तीन-सात और ग्यारहवें कोष्ठकों के सुसिद्ध, और चार-आठ तथा बारहवें कोष्ठकों के वर्ण शत्रु होते हैं। इसी क्रम से इसमें बारह भेद बनाकर इसका फल भी अकथह चक्र के अनुसार जानना चाहिये।

अकडम चक्र

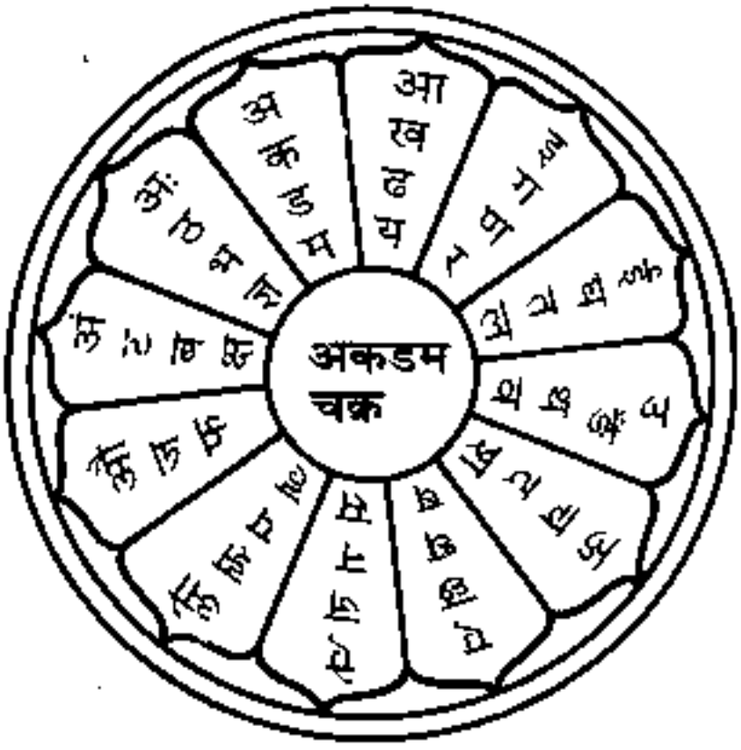

अ उ ऌ चक्र

क ङ झ ड थ प म व ह	ख च ञ ढ द फ य श ल
ई ऋ ऐ अः घ ज ठ त ि भ ल स ज्ञ	इ ॠ ए अ ग छ ट ण ध ब र ष क्ष

षटकोण चक्र

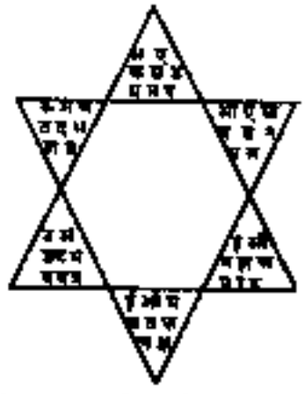

७. अ उ ऌ चक्र - (मंत्र. सा. सा. वि.)

पूर्वोक्त सभी वर्णों को चार कोठों में इसप्रकार लिखें। इस यंत्र के नाम के अक्षर के कोष्ठक से पूर्वोक्त क्रम के अनुसार सिद्ध, साध्य, सुसिद्ध और शत्रु जानना चाहिये।

८. षट्कोण चक्र (मंत्र. सा. सा. वि.)

एक षट्कोण चक्र बनाकर उसके कोनों में अ से लगाकर ह तक के नपुंसक वर्ण (ऋ ॠ ऌ ॡ) रहित वर्णों को लिखें। संलग्न यंत्र में नाम के अक्षर के कोनों से लगाकर यंत्र के अक्षरों का निम्न प्रकार से शोधन करें। यदि नाम वाले कोष्टक में ही मंत्र का अक्षर होतो सम्पत्ति की प्राप्ति हो। उससे

दूसरे कोनों में होने पर धन का नाश हो, तीसरे में धन की प्राप्ति हो, चौथे में भाई-भाई में विद्रोह हो, पांचवें में मन में चिन्ता हो और छठे कोने में होने से सह कुछ नष्ट हो। मंत्री इसप्रकार इन उपायों से विचार किया हुआ मंत्र ही शिष्य को सिद्ध करने के लिये देवें।

९. ऋणधन शोधन चक्र - (मंत्र सा. सा. वि.)

१४	२०	२	१२	१५	६	४	३	५	८	९
अ	इ	उ	ऋ	ऌ	ए	ऐ	ओ	औ	अं	अः
क	ख	ग	घ	ङ	च	छ	ज	झ	ञ	ट
ठ	ड	ढ	ण	त	थ	द	ध	न	प	फ
ब	भ	म	य	र	ल	व	श	ष	स	ह
१०	१	७	४	८	३	७	५	४	६	३

प्रथम विधि - सात तिरक्षी और बारह सीधी रेखायें लिखकर एक छयासठ कोठों का यंत्र बनावे। इसको ऊपर की पंक्ति में क्रम से चौदह सत्ताईस, दो, बारह, पन्द्रह, चार, तीन, पांच, आठ और नौ के अंक लिखें। दूसरी पंक्ति में आदि के पांच दीर्घ स्वर छोड़कर शेष स्वर लिखें। तीसरी पंक्ति में 'क' से लगाकर 'ट' तक के अक्षर, चौथी में 'ठ' से लगाकर 'फ' तक के अक्षर और पांचवीं पंक्ति में य से लगाकर 'ह' तक के अक्षर लिखें। इसके पश्चात् अंतिम अर्थात् छट्ठी पंक्ति में दश, सात, चार, आठ, तीन, सात, पांच, चार, छ और तीन के अंकों को लिखकर जोड़ लेवें। दीर्घ स्वरों के स्थान में ह्रस्व स्वरों के ही अंक लेवें। फिर इस जोड़ को आठ से भाग देकर शेष अंक को पृथक् रख लेवें। यह मंत्र राशि है। नाम के वर्णों में भी यही विधि करें, किन्तु नाम में नीचे के अंक लेना चाहिये। इसका शेष नाम राशि कहलाता है। इनमें से अधिक राशि ऋणी और न्यून राशि धनी कहलाती है। मंत्र ऋणी अर्थात् अधिक शेषवाला हो तो ग्रहण कर लेना चाहिये। अन्यथा छोड़ देना चाहिये।

द्वितीय विधि:- नाम के आदि अक्षर से लगाकर मंत्र के आदि अक्षर तक के अंक जरादि मातृका वर्णों को गिनकर उनको तीन से गुणा और सात से भाग दे, इसका शेष नाम राशि कहलाता है। इसीप्रकार मंत्र के आदि अक्षर से लगाकर नाम के आदि अक्षर तक के अकारादि मातृका वर्णों को गिनकर उनको तीन से गुणा और सात से भाग दे। इसका शेष मंत्र राशि कहलाता है। इसमें भी ऊपर के अनुसार अधिक वाले को ऋणी और कम शेष वाले को धनी समझना चाहिये।

तृतीय विधि - मंत्र के स्वर और व्यञ्जनों को पृथक् पृथक् गिनकर उनको दो से गुणा दें। फिर उनमें पृथक् पृथक् गिने हुए साधक के नाम के स्वर और व्यञ्जनों की संख्या को जोड़ दें। इसको आठ भाग देने पर शेष अंक मंत्र राशि कहलाता है। इसीप्रकार साधक के नाम के स्वर और व्यंजनों को

पृथक् पृथक् गिनकर उनको दो से गुणा दें, फिर उनमें पृथक्-पृथक् गिने हुए मंत्र में नाम के अक्षरों की संख्या जोड़ दें। इसको आठ का भाग पर शेष अंक वा राशि कहलाता है। इसमें भी ऊपर के अनुसार अधिक शेष वाले को ऋणी और कम शेष वाले को धनी समझना चाहिये।

१०. मंत्रों के ऋणी होने के कारण – (मंत्र – । सा. सा. वि.)

एक नियम की बात है कि हमारे वर्तमान जन्म की सब प्रेरणाएं हमारे पिछले जन्मों के संस्कारों के कारण हुआ करती हैं। मंत्र सिद्धि में भी यही नियम काम करता है। हमारे इस जन्म में मंत्र शास्त्र में प्रबल प्रेम का कारण भी अवश्य ही हमारे पूर्व जन्म के प्रबल संस्कार हैं। पूर्व जन्म का संस्कार इतना प्रबल होता है कि इस जन्म में भी प्रायः उन्हीं या उन्हीं विषयों से सम्बन्ध रखने वाली मंत्रों या विधा आदि अन्य विषयों को देखते हैं, जिनका हमसे पिछले जन्म में संबंध था। मंत्र सिद्ध करने वालों को प्राय असफलताओं का भी सामना करना पड़ता है। किन्तु उस असफलता का कारण उस जन्म के पाप की अधिकता होने से मंत्र की शक्ति पाप के दूर करने में ही लग जाती है। पूर्व जन्म में भी साधकों को ऐसा अनेक बार हुआ है। अतएव जो मंत्र पूर्व जन्म में उपासना के समय पाप की अधिकता से पाप का क्षय करते हुए अन्य फल न दे सके और पाप का क्षय होने के पश्चात् फल का समय आने पर साधक की मृत्यु हो जाने के कारण उसको फल न दे सके वह मंत्र पिछले जन्म में फल न देने से दूसरे जन्म में ऋणी होते हैं। अतएव ऋणी मंत्र साधक को प्राप्त होते ही सिद्धि होते हैं। बराबर अंकवाले मंत्र भली प्रकार साधन करने से सिद्ध होते हैं। और धनी मंत्र बहुत अधिक सेवा से फल देते हैं।

न मंत्रं साधयेत् यत्र दृष्ट मा कर्णिन बलात्
यदृच्छया वाचनेन यतो सोनर्थ कृद्भवेत् ॥ २९ ॥

मंत्रों को कभी देखकर या सुनकर ही अपनी इच्छा से कभी आरंभ नहीं करे अन्यथा उससे अनर्थ हो सकता है।

अतो गुरु मुखादेव मंत्र मादाय साधक:
साधयेद् विनयानम्रोभूत्वा अभिमत सिद्धये ॥ ३० ॥

अतएव साधक गुरु के मुख से ही मंत्र लेकर सिद्धि के लिए विनयपूर्वक नम्र होकर जाप प्रारंभ करे।

कलिंग फल वृतांक मत्स्याक्षी लसुनादिकं
नाद्यात् शिष्यो भवे जीर्णान्नमपि क्षीर घृतादिकं ॥ ३१ ॥

शिष्य कलिंग फल मछली लहसन पुराना अनाज दूध और घृत कभी न खायें।

गुरू र्ददानो विगुणाय मंत्रं शिष्याय शिष्यश्च स आददान:
अनर्थ माप्नोत्यधिदेवताया: फलं च मंत्रस्य न किंचन स्यात् ॥ ३२ ॥

मंत्र गुरू के द्वारा दिये जाने और शिष्य के द्वारा लिया जाने पर विशेष गुणकारी होता है। अन्यथा मंत्र के अधिष्ठता देवता से अनर्थ की प्राप्ति होती है। और मंत्र का फल भी कुछ नहीं होता।

षटकर्णे भिंद्यते मंत्रोयेन तेन रहस्य सौ
शिष्याय गुरूणा दे यो न चान्य संन्निधौ ॥ ३३ ॥

मंत्र छ कानों में जाने से छिन्न भिन्न हो जाता है इसलिये गुरू एकान्त में ही शिष्य को मंत्र प्रदान करे।

उपदिशतु यथा तत्वं परोपदेश प्रवीण गुरू मुख्य:
शिष्येण तथा देयं नहिं कर्तव्यो विचारोत्र ॥ ३४ ॥

जिस प्रकार परोपदेश में चुतर गुरू उपदेश देते हैं। उसी प्रकार योग्य शिष्य भी उपदेश देवे। और कुछ विचार नही करे।

मंत्रो गुरूपदिष्ट: स्यात सफल स्तदिह पुस्तके
प्रकटं लिखितोपि गुरोरेव ग्राह्यं नैवस्वयं मंत्र: ॥ ३५ ॥

इस ग्रन्थ में लिखे हुये सभी मंत्रो को गुरू से ही ग्रहण करे यद्यपि वह प्रकट रूप में लिखें है। किन्तु उनको स्वयं न लेवें।

शिष्याय यमुपादीक्षम् मंत्रं साधितमात्मनां
सूरि: सहस्रं भयोपि तं जपेत् स्वस्य सिद्धये ॥ ३६ ॥

मुनि जिस मंत्र को शिष्य को बतला देवें उसको अपनी सिद्धि के लिए एक हजार फिर जपे।

अथापवाद:

अब इस नियम के अपवाद बतलाये जाते हैं।

प्रणवस्तु हरिर्माया व्योमव्यापी षडक्ष्य:
प्रासादोबहुरूपी च सप्त साधारण: स्मृता: ॥ १ ॥

हरिमाया व्योमव्यापी षडक्षम प्रासाद बहुरूपी और साधारण यह सात प्रणव होते हैं।

सौरि मंत्राश्चेयेरि स्युर्जिन मंत्रा स्तथैव च
सिद्ध साध्य सुसिद्धारि विचार परिवर्जिता ॥ २ ॥

जो सौरि मंत्र है और जो जिनमंत्र है उनमें सिद्ध साध्य और सुसिद्ध व शत्रु के विचार की कोई आवश्यकता नहीं है।

आम्ना य गत मंत्राणां प्रसादं प्रणव स्य च
स पिंडाक्षर मंत्राणां सिद्धारिनैव शोधयेत् ॥ ३ ॥

आम्नाय के अनुसार मंत्री प्रसाद नामक प्रणव के जो सपिंड अक्षर वाले मंत्र है उनमें ऐसा विचार नहीं करे कि यह सिद्ध मंत्र है और यह अरिमंत्र है।

एकाक्षरस्य मंत्रस्य मूलमंत्रस्य भो मुने
सैद्धांतिकस्य मंत्रस्य सिद्धारिनैव शोधयेत् ॥ ४ ॥

हे मुनि एकाक्षर का मूल मंत्र और सैद्धांतिक मंत्र में सिद्ध और शत्रु का विचार नहीं करे।

स्वप्न दत्तस्य मंत्रस्य स्त्रिया दत्तस्य चैवहि
नपुंसक स्य मंत्रस्य सिद्धारिं नैव शोधयेत् ॥ ५ ॥

स्वप्न में दिये हुवे स्त्रिय से दिये हुवे और नपुंसक मंत्रो में सिद्ध और शत्रु को न विचारे।

हंसस्याष्टक्षरस्यापि तथा पंचाक्षरस्य च
एकद्वि आदि बीजस्य सिद्धारिं नैव शोधयेत् ॥ ६ ॥

हंस के अष्टाक्षर मंत्र है तथा पंचाक्षर मंत्र तथा एक दो और तीन आदि बीजों के मंत्रों में सिद्ध और शत्रु नहीं विचारे।

अकारादि क्षकारांतैः बिंदुवन्मात्रकाक्षरैः
अनुलोम विलोमस्थैर्ह्रस्या वर्णमालया ॥ ७ ॥

अकार से लगाकर क्षकार तक के अनुस्वार सहित मातृका अक्षरों से चाहे वह सीधे क्रम से हो चाहे उलटे क्रम से हो अथवा वर्णमाला से पृथक हो।

प्रत्येक वर्णयुग्मंत्रा जप्ताः स्युः क्षिप्र सिद्धिदाः
वेरि मंत्राश्च ते नृणां मन्त्रे मंत्राश्च किं पुनः ॥ ८ ॥

प्रत्येक वर्ण को साथ लगाकर जप करने से शीघ्र ही सिद्धि होती है। उसके अतिरिक्त अन्य मंत्र मनुष्यों के शत्रु है।

मंत्रादिषुत सर्वेषु हल्लेखा काम बीजकं
श्री बीजं चापि निक्षिप्तंजपे न्मंत्रं विशुद्धये ॥ ९ ॥

सब मंत्रो के आदि में ह्र लेखा अर्थात् हीं काम बीज क्लां और श्री बीज को लगा कर मंत्र की शुद्धि के लिए जप करे।

भार संपुटितो वाथ दुष्ट मंत्रोऽपि सिद्धयति
यस्य यस्मिन् भवेद् भक्तिः सोपि मंत्रोपि सिद्धयति ॥ १० ॥

भार नाम के मंत्राक्षर से संपुट किया जाने से दुष्ट मंत्र भी सिद्ध हो जाता है, और जिसकी जिसमें भक्ति होती वह मंत्र भी सिद्ध हो जाता है।

१३. गृहीत शत्रु मंत्र को त्याग करने की विधि - मंत्र. सा. सा. वि.)

यदि भूल से शत्रु मंत्र का अनुष्ठान आरम्भ कर दिया हो तो उसके त्याग करने की विधि भी है। किसी भी उत्तम दिन में सर्वतोभद्र मण्डल (दे. ज्वालामालिनी भाषा टीका) में कलश की स्थापना करके मंत्र को उल्टा बोलते हुए कलश को जल से भरें। उस पर वस्त्र ढ़ककर उसमें देवता का आह्वानन करें। फिर उसके सामने अग्निकुण्ड बनाकर उसमें अग्नि की प्रतिष्ठा करके ग्रहण किये हुए मूल मंत्र को उल्टा करके घी की दो आहुतियां देवें। फिर खीर और घी की दिक्पालों को बलि देवें। इसके अनन्तर देवों के देव भगवान ऋषभदेव से निम्नलिखित शब्दों से प्रार्थना करें 'हे भगवान्! मुझ चंचल बुद्धिवाले ने मंत्र की अनुकूलता बिना विचार किये ही जो इस मंत्र को ग्रहण करके इसका पूजन किया है, इससे मेरे मन में क्षोभ हो रहा है। हे भगवान्! आप कृपा करके मेरे मन के क्षोभ को दूर कीजिये। और मेरा उत्तम कल्याण करके मुझे अपनी निर्मल भक्ति दीजिये।' इसप्रकार प्रार्थना करके उस मंत्र को ताड़पत्र कपूर-अगर और चन्दन से उल्टा लिखकर पहले उसका पूजन करें और फिर उसको अपने सिर से बाँधकर उस घड़े के जल से स्नान करें। उस कलश में फिर जल से भर कर उसके मुख में उस पत्र को डाल दें। फिर उस घड़े का पूजन करके उसको किसी नदी या तालाब में डालकर श्रावक भोजन करावे। इस प्रकार उस मंत्र के कष्ट से छूट जाता है।

१४. दुष्ट मंत्र को जपने की विधि - (मंत्र. सा. सा. वि.)

यदि मंत्र उपरोक्त प्रकार से अनेक बार शोधन किया जाने पर भी शुद्ध न हो तो उसके दोष दूर करने के वास्ते उसकी आदि में 'ह्रीं क्लीं' श्री, बीजों को लगाकर जपें। अथवा 'ॐ' के सम्पुट में जपा जाने से दुष्ट मंत्र भी सिद्ध जाता है ।

१५. पुरूष का ऋणी धनी विचार - (मंत्र. सी. सा. वि.)

किसी पुरूष या स्त्री से कोई कार्य लेने के लिये मंत्र जपना हो तो निम्नलिखित उपाय से विचार करें कि काम देने वाला व्यक्ति साधक का ऋणी है या नहीं। यदि साधक का ऋणी होगा तो कार्य निश्चय रूप से पूर्ण होगा। नीचे लिखे कोष्ठक में वर्णों और उनकी शत्रु-मित्रता का ज्ञान हो जावेगा। । इस

कोष्ठक में ऋणी-धनी इस रीति से देखा जा सकता है कि दोनों पुरूषों के वर्ग की संख्या को पृथक्-पृथक् दो-दो से गुणा करके इसकी वर्ग संख्या उसमें और उसका इसमें जोड़ दें। तथा दोनों को आठ का भाग दें। जिसका अंक शेष में अधिक हो तो वह ऋणी जिसका न्यून हो वह धनी। अर्थात् अधिक अंक वाला न्यून अंक वाले को धन देगा। जैसे सेठ भगवान दास के पास नन्दकिशोर नौकरी चाहता है तो उसको मिलेगी या नहीं। अब देखो भगवान दास की संख्या छै है और नन्दकिशोर की पाँच है। दोनों को दो से गुणा किया तो ६x२= १२ और ५x२= १०। अब इसमें एक दूसरे की वर्ग संख्या जोड़ दो और आठ का भाग दो। १२+५= १७/८=१ शेष। १०+६= १६/२=० यहाँ पर शून्य के शेष से भगवान दास का शेष १ अधिक है। अतएव भगवान दास नन्दकिशोर को नौकर रख लेगा।

संख्या	वर्ग का	वर्ग के अक्षर	शत्रु	मित्र	उदासीन
	स्वामी				
१	गरूण	अ इ उ ए	सर्प	श्वान	सिंह
२	बिलाव	क ख ग घ ङ	मूषक	सर्प	श्वान
३	सिंह	च छ ज झ ञ	मृग	मूषक	सर्प
४	श्वान	ट ठ ड ढ ण	मेष	मृग	मूषक
५	सर्प	त थ द ध न	गरूड़	मेष	मृग
६	मूषक	प फ ब भ म	बिलाव	गरूड़	मेष
७	मृग	य र ल व	सिंह	बिलाव	गरूड़
८	मेष	श ष स ह	श्वान	सिंह	बिलाव

१६. कलियुग के सिद्धिप्रद मंत्र - (मत्र. सा. सा. वि.)

एकाक्षर के मंत्र, दो व तीन अक्षर वाले मंत्र, अनुष्टुप छन्द के मंत्र, तीन प्रकार के नृसिंह मंत्र, एकाक्षर अर्जुन मंत्र, दो प्रकार के हयग्रीव मंत्र, चिन्ता-मणि मंत्र, क्षेत्रपाल मंत्र, यक्षाधिपति भैरव के मंत्र, गोपाल मंत्र, गणेश मंत्र, चेटका मंत्र, यक्षिणी मंत्र, मातंगी मंत्र, सुन्दरी मंत्र, श्यामा मंत्र, तारा मंत्र, कर्ण पिशाची मंत्र, शबरी मंत्र, एकजटा मंत्र, वामा मंत्र, काली मंत्र, नील सरस्वती मंत्र, त्रिपुरा मंत्र और काल रात्रि मंत्र कलियुग में सिद्ध होते हैं।

१७. मंत्र के अधिकारी द्विजवर्णी के योग्यमंत्र - (मंत्र. सा. सा. वि.)

अघोर मंत्र, दक्षिणामूर्त्ति मंत्र, उमा मंत्र, माहेश्वर मंत्र, हयग्रीव मंत्र, वाराह मंत्र, लक्ष्मी मंत्र, नारायण मंत्र, प्रणव से आरम्भ होने वाले मंत्र, चार अक्षरों के मंत्र, अग्नि के मंत्र, सूर्य के मंत्र, प्रणव से आरम्भ होने वाला गणेश मंत्र, हरिद्रा गणेश षडाक्षर राम मंत्र को और वैदिक मंत्रों को ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्यों को ही देने चाहिये। निंद्य कार्य वालों को नहीं।

१८. ब्राह्मण और क्षत्रियों के योग्य मंत्र - (मंत्र. सा. सा. वि.)
सुदर्शन मंत्र, पाशुपत मंत्र, आग्नेयास्त्र, और नृसिंह मंत्र, को ब्राह्मण और क्षत्रिय को ही देना चाहिये अन्य को नहीं।

१९. चारों वर्णों के योग्य मंत्र (मंत्र. सा. सा. वि.)
छिन्नमस्ता, मातंगी, त्रिपुरा, कालिका, शिव, लघु, श्यामा, काल रात्रि, गोपाल, राम, उग्रतारा , और भैरव के मंत्र चारों वर्णों को देने चाहिये। यह मंत्र स्त्रियों को विशेष रूप से सरलता से सिद्ध होते हैं। इसकी अधिकारी चारों वर्णों की स्त्रियाँ ही होती हैं।

२०. वर्ण क्रम से बीजों के अधिकारी - (मंत्र- सा. सा. वि.) ह्रीं-क्लीं श्री और ऐं बीज ब्राह्मण को देवें। क्लीं, श्रीं और ऐं क्षत्रिय को देवें। श्रीं और ऐं वैश्य को देवें। तथा 'ऐं' शुद्र को देवें। अन्यों को फट् बीज देवें।

२१. मंत्रों के जप में गूंथने के भेद -
मंत्रों को जपने से निम्नलिखित तेरह प्रकार हैं। जिनकों विन्यास कहते हैं- ग्रंथित, सम्पुट, ग्रस्त, समस्तव्यायोग, विदर्भित, आक्रान्त, आद्यन्त, अगर्भित या गर्भस्थ, सर्वतो मुख, विदर्भ, विदर्भ ग्रसित, रोधन और पल्लव।

साध्य के नाम के एक एक अक्षर के साथ मंत्र के एक एक अक्षर को एक बार प्रयोग करने को ग्रथित कहते हैं। यह वश्य और आकर्षण कर्मों में फल दायक होता है।

जिसमें आदि और अन्य में आधा-आधा मंत्र और बीच में साध्य का नाम हो ग्रस्त कहते हैं। इसकी मारणादि सभी अशुभ कर्मों में प्रयोग किया जाता है।

जिसमें पहले नाम और फिर मंत्र बोला जावे उसे समस्तव्यायोग कहते हैं। यह उच्चाटन में प्रयोग किया जाता है।

जिसमें मंत्र के दो-दो अक्षर और एक-एक साध्य के नाम का अक्षर आवे उसे विदर्भित कहते हैं। यह वशीकरण करता है।

यदि साध्य का नाम चारों ओर मंत्र के अक्षरों से घिरा हुआ हो तो उसे आक्रान्त कहते हैं। यह सब कार्यों की सिद्धि, स्तम्भन, आवेशन, वश्य और उच्चाटन कर्मों को करता है।

जिसमें आदि में एक बार पूरा मंत्र, मध्य में साध्य का नाम और अन्त में फिर पूरा मन्त्र लगाया जावे उसे आद्यन्त कहते हैं, यह विद्वेषण करता है। आदि और अन्त में दो-दो बार मंत्र का प्रयोग करके बीच में एक बार साध्य का नाम रखने को गर्भस्थ या गर्भित कहते हैं। यह मारण, उच्चाटन, वश्य, नदी स्तम्भन, नौका भंजन और गर्भ स्तम्भन में प्रयोग किया जाता है।

जिसमें आदि और अंत में तीन-तीन बार मंत्र जपा जावे और नाम-बीच में एक ही बार उसे सर्वतोमुख कहते हैं।

सब उपसर्गों को शांत करने वाला, सब सौभाग्यों को करने वाला तथा देवताओं को भी अमृत देने वाला है। जिसमें आदि में मंत्र और फिर नाम और फिर मंत्र इसप्रकार तीन-तीन बार किया गया हो उसे विदर्भ कहते हैं। यह सब व्याधियों को नष्ट करने वाला तथा भूत, और मृगी के रोग को दूर करता है।

जिसमें साध्य के नाम एक-एक अक्षर को विदर्भ रूप में करके पहले के समान आदि और अन्त में प्रयोग किया जावे उसे विदर्भ ग्रसित कहते हैं। यह सब कार्यों को करने वाला और सभी ऐश्वर्यों के फलों को देनेवाला है।

नाम के आदि, मध्य और अन्त में मंत्र रखने को रोधन कहते हैं। मंत्र के अन्त में नाम रखने को पल्लव कहते हैं।

मंत्रों के ४९ दोष व उनके फल - (मंत्र. सा. सा. वि.)

छिन्नता आदि दोषों से युक्त मंत्र साधक की रक्षा नहीं कर सकते । वे दोष निम्न प्रकार हैं। - १ छिन्न, २ रूद्ध, ३ शक्तिहीन, ४ पराङ्मुख, ५ कर्णहीन, ६ नेत्रहीन, ७ कीलित, ८ स्तम्भित, ९ दग्ध, १० त्रस्त, ११ भीत, १२ मलिन, १३ तिरस्कृत, १४ भेदित, १५ सुषुप्त, १६ मदोन्मत्त, १७ मूर्छित, १८ हतवीर्य्य, १९ भ्रान्त, २० प्रध्वस्त, २१, तालक, २२ कुमार, २३ युवा, २४ प्रौढ़, २५ वृद्ध, २६ निस्त्रिंशक, २७ निर्बीज, २८ सिद्धिहीन, २९ मन्द, ३० कूट, ३१ निरंशक, ३२ सत्त्वहीन, ३३ केकर, ३४ बीजहीन, ३५ धूमित, ३६ अलिंगित, ३७ मोहित, ३८ क्षुधार्त्त, ३९ अदिदीप्त, ४० अंगहीन, ४१ अधिकुद्ध, ४२ अतिक्रूर, ४३ व्रीड़ित (लज्जित), ४४ प्रशान्त मानस, ४५ स्थान भ्रष्ट, ४६ विकल, ४७ अतिवृद्ध, ४८ अति निःस्नेह, ४९ पीड़ित।

ये मंत्रों के ४९ दोष बताये गए हैं। अब इनका भिन्न भिन्न स्वरूप व फल बताते हैं।

१. जिस मंत्र के आदि, मध्य, और अन्त में संयुक्त वियुक्त या स्वर रहित तीन, चार या पांच बार अग्निबीज (रं) का प्रयोग हो वह मंत्र छिन्न कहलाता है।

फल-

२. जिस मंत्र के आदि, मध्य और अन्त में दो बार भूमि बीज (लं) का उच्चारण होता है उसको रूद्ध जानना चाहिये। फल- बड़े क्लेश से सिद्धि दायक होता है।

३. प्रणत और कवच (हुँ) ये तीन बार जिस मंत्र में आये हों वह लक्ष्मी युक्त होता है। ऐसी लक्ष्मी से हीन मंत्र को शक्तिहीन जानना चाहिए

फल- यह दीर्घकाल के बाद फल देता है।

४. जहाँ आदि में काम बीज (क्लीं) मध्य में मायाबीज (ह्रीं) और अन्त में अंकुश बीज (क्रौं) वह मंत्र पराङ्मुख जानना चाहिये।

फल- यह साधकों को चिरकाल से सिद्ध देने वाला होता है।

५. कर्ण हीन मंत्र को बधिर कहते हैं।

फल - यह बहुत कष्ट उठाने पर थोड़ा फल देने वाला होता है।

६. यदि पंचाक्षर मंत्र हो किन्तु उसमें रेफ, मकार और अनुस्वार न हों तो उसे नेत्रहीन जानना चाहिये।

फल- यह क्लेश उठाने पर भी सिद्धि दायक नहीं होता।

७. आदि, मध्य और अन्त में हंस (सं) प्रासाद तथा वाग बीज (ऐं) हों अथवा हंस और चन्द्रबिन्दु वा सकार, फकार अथवा (हुँ) हों तथा जिसमें मा, प्रा और नमामि पद हों वह मंत्र कीलित माना गया है।

फल- X

८. इसीप्रकार मध्य में और अन्त में भी ये दोनों पद न हों तथा जिसमें फट् और लकार न हो वह मंत्र स्तम्भित माना गया है।

फल - जो सिद्धि में रूकावट डालने वाला है।

९. जिस मंत्र के अन्त में अग्निबीज (रं) वायु बीज (यं) के साथ हो तथा जो सात अक्षरों से युक्त (स) दिखाई देता हो वह दग्ध संज्ञक मंत्र है।

फल - X

१०. जिसमें तीन, छः या आठ अक्षरों के साथ अस्त्र (फट्) बीज दिखाई दे उस मंत्र को त्रस्त जानना चाहिये।

फल - X

११. जिसके मुख भाग में प्रणव रहित हकार अथवा शक्ति हो वही मंत्र भीत कहा जाता है।

फल - X

१२. जिसके आदि, मध्य और अन्त में चार (म) हों वह मलिन माना जाता है।

फल- वह अत्यन्त क्लेश से सिद्धिदायक होता है।

१३. जिस मंत्र के मध्य भाग में 'द' अक्षर और अन्त में क्रोध बीज (हुं हुं) हो और साथ अस्त्र बीज (फट्) हो तो वह मंत्र तिरस्कृत कहा जाता है।

फल - X

१४. जिसके अन्त में म तथा य तथा हृदय हो और मध्य में वषट् ऐं वौषट् हो वह मंत्र भेदित कहा जाता है।

फल- उसे त्याग देना चाहिये क्योंकि वह बड़े क्लेश से फल देने वाला होता है।

१५. जो तीन अक्षर से युक्त तथा हंसहीन हो उस मंत्र में सुषुप्त कहा गया है।

फल - X

१६. जो विद्या अथवा मंत्र १७ अक्षरों से युक्त हो तथा जिसके आदि में पाँच बार फट् का प्रयोग हुआ हो तो उसे मदोन्मत माना गया है।

फल - X

१७. जिसके मध्य भाग में फट् का प्रयोग हो उसे मूर्च्छित कहते हैं।

फल- X

१८. जिसके विराम स्थान में अस्त्र (फट्) का प्रयोग हो वह हतवीर्य कहा गया है।

फल- X

१९. जिस मंत्र के आदि मध्य और अन्त में अस्त्र (फट्) का प्रयोग हो तो उसे भ्रान्त जानना चाहिये।

फल- X

२०. जो मंत्र अट्ठारह अथवा बीस अक्षर वाला होकर काम बीज क्लीं से युक्त होकर साथ ही उसमें हृदय, लेख और अंकुश के भी बीज हों तो उसे प्रध्वस्त कहा गया है।

फल- X

२१. सात अक्षर वाला मंत्र बालक कहलाता है।

फल- X

२२. आठ अक्षर वाला मंत्र कुमार कहलाता है।

फल- X

२३. सोलह अक्षर वाला मंत्र युवा कहलाता है।

फल - X

२४. चौबीस अक्षरों वाला मंत्र प्रौढ़ कहलाता है।

फल - X

२५. बीस, चौसठ, सौ चार सौ अक्षरों वाला मंत्र वृद्ध कहलाता है।

फल - X

२६. प्रणव सहित नवार्ण मंत्र को निस्त्रिंश कहते हैं।

फल - X

२७. जिसके अन्त में हृदय (नमः) कहा गया हो, मध्य में शिरो ... (स्वाहा) का उच्चारण होता हो, और अन्त में शिखा वषट् का वर्म (हुं) नेत्र (वौषट्) और अस्त्र (फट्) देखे जाते हों, शिव एवं शक्ति से हीन हों, उस मंत्र को निर्जीव कहते हैं।

फल- X

२८. जिस मंत्र के आदि, मध्य और अन्त में छः बार फट् का प्रयोग देखा जाता हो, वह मंत्र सिद्ध हीन होता है।

फल- X

२९. पाँच अक्षर के मंत्र को मन्द कहते हैं।

फल - X

३०. एकाक्षर मंत्र को कूट कहते हैं।

फल- X

३१. एकाक्षर मंत्र को निरशंक भी कहते हैं।

फल - X

३२. दो अक्षर का मंत्र सत्त्वहीन कहा गया है।

फल- X

३३. चार अक्षर का मंत्र केकर कहलाता है।

फल -X

३४. छः या साढ़े सात अक्षर का मंत्र बीज हीन कहलाता है।

फल -X

३५. साढ़े बारह अक्षर के मंत्र को धूमित माना गया है।

फल- वह निन्दित है।

३६. साढ़े तीन बीज से युक्त बीस-तीस तथा इक्कीस अक्षर का मंत्र आलिंगत कहा गया है।

फल- X

३७. जिस मंत्र में दन्त स्थानीय अक्षर हों, वह मंत्र मोहित बताया गया है।

फल - X

३८. चौबीस या सत्ताईश अक्षर के मंत्र को क्षुधार्त्त जानना चाहिये।

फल- X

३९. ग्यारह, पच्चीस अथवा तेईस अक्षर का मंत्र दृप्त (अतिदीप्त) कहलाता है।

फल- X

४०. छब्बीस, छत्तीस तथा उनतीस अक्षर के मंत्र को हीनांग कहते हैं।

फल - X

४१. अट्ठाईस और इकत्तीस अक्षर का मंत्र अत्यन्त क्रुद्ध (अत्यन्त क्रूर) कहा जाता है।

फल - यह सम्पूर्ण कामों में निन्दित माना गया है।

४२. यह बत्तीस अक्षर से लेकर तिरेसठ अक्षर तक का जो मंत्र है उसे व्रीडित (लज्जित) समझना चाहिये।

फल- यह समस्त कार्यों की सिद्धि में समर्थ नहीं होता।

४३. पैंसठ अक्षर के मंत्र को शान्त मानस जानना चाहिये।

फल - X

४४. पैंसठ अक्षरों से लेकर निन्यानबें अक्षरों तक के जो मंत्र हैं उन्हें स्थान भ्रष्ट जानना।

फल- X

४५. तेरह और पन्द्रह अक्षरों के जो मंत्र है उन्हें सर्वतंत्र विशारद विद्वानों ने विकल कहा है।

फल- X

४६. सौ, डेढ़ सौ, इक्यानबे, अथवा तीन सौ अक्षरों के जो मंत्र होते हैं, वे निःस्नेह कहे गये हैं।

फल- X

४७. चार सौ से लेकर एक हजार अक्षर तक के मंत्र प्रयोग में अत्यन्त वृद्ध माने गये हैं। उन्हें शिथिल कहा गया है।

फल- X

४८. जिन मंत्र में एक हजार से भी अधिक अक्षर हों, उन मंत्र को पीड़ित बताया गया है।

फल- X

नोट- उनके अधिक अक्षर वाले मंत्र को स्तोत्र रूप माना गया है। इस प्रकार के मंत्र दोष युक्त कहे गये हैं।

२३. दूषित मंत्र साधन विधि

छिन्नादि दोषों से दूषित मंत्र का साधन बताता हूँ । मनुष्य योनि मुद्रासन से बैठकर एकाग्रचित्त हो जिस किसी भी मंत्र का जाप करता है, उसे सब प्रकार की सिद्धियां प्राप्त होती हैं।

बायें पैर की एड़ी को गुदा के सहारे रखकर दायें पैर की एड़ी को ध्वज (लिंग) के ऊपर रखे तो इसप्रकार योनिमुद्रा बंध नामक उत्तम आसन होता है।

२४. मंत्र दोष शान्त्यर्थ संस्कार -

प्राचीन मंत्र शास्त्रों में मंत्रों के छिन्न, कच्छादि ४९ दोष कहे हैं। किन्तु सात कोटि मंत्रों से कोई भी ऐसा दोष नहीं है , जो उन मंत्रों में न हो। अतएव उन दोषों की शान्ति के लिये निम्नलिखित दश संस्कार करने चाहिये। ये हैं-

१. जनन, २. दीपन, ३. बोधन, ४. ताड़न, ५. अभिषेक, ६. विमलीकरण, ७. जीवन, ८. तर्पण, ९. गोपन और १० आयायन । अब इनका स्वरूप कहते हैं।

१. एक भोजपत्र पर गोरोचन (केशर) से एक त्रिकोण यंत्र बनावे। उसको पश्चिम के कोने से आरम्भ करके सात बराबर भागों में बांटकर दक्षिण और पूर्व की ओर से भी सात बराबर भागों में बांट दें। इसप्रकार उसमें ४९ कोठे बन जायेंगे। उनमें अ से ह तक ४९ मातृकाओं को लिखे। यह मंत्र निम्न है।

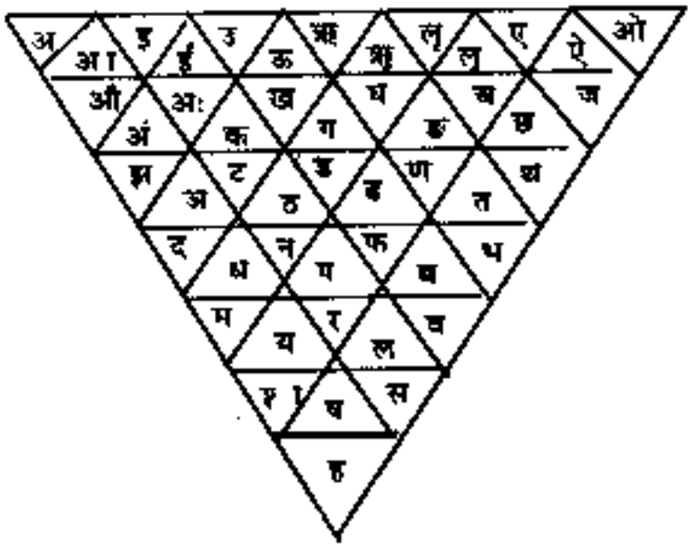

इस यंत्र के ऊपर देवी का पूजन चन्दन आदि से करके फिर इसप्रकार का दूसरा यंत्र बनाकर उसमें प्रथम मंत्र में से मंत्र के अक्षरों को लेकर लिखे। इसको जनन कहते हैं।

२. मंत्र को 'हंस' मंत्र के सम्पुट में एक सहस्त्र जपने को दीपन कहते हैं।

जैसै : हंसः रामाय नम सोऽहं।

३. मंत्र को 'हूँ' के सम्पुट में पाँच सहस्त्र जपने को बोधन कहते हैं।

जैसे :- हूँ रामाय नमः हूँ।

४. मंत्र को फट् के सम्पुट में एक सहस्त्र जपने को ताड़न कहते हैं।

जैसै- फट् रामाय नमः फट्.

५. ताड़पत्र पर लिखे हुए मंत्र को 'ऐं' हंसः ॐ मंत्र से एक सहस्त्रबार अभिमंत्रित जल के द्वारा अभिषेक कराने को अभिषेक कहते हैं।

६. मंत्र को "ॐ" त्रों वषट् के सम्पुट में एक सहस्त्र जपने को विमलीकरण कहते हैं।

जैसै- ॐ त्रों वषट् रामाय् नमः वषट् त्रों ॐ ।

७. स्वधा वशट् के सम्पुट में एक सहस्त्र जपने को जीवन कहते हैं।

जैसै: स्वधा वषट् रामाय नमः स्वधा"।

८. दूध, घी और जल के द्वारा उसी मंत्र से एक सहस्त्र और तर्पण करने को तर्पण कहते हैं।

९. "ह्रीं" के सम्पुट में एक सहस्त्र जपने को गोपन कहते हैं। जैसै - "ह्रीं रामाय नमः ह्रीं "।

१०. "ह्मौः" के सम्पुट में सहस्त्र जपने को आप्यायन कहते हैं। जैसै - ह्मौः रामाय नमः ह्मौः ।

॥ अथ मंत्र साधन विधानं ॥

शिष्यो मंत्र क्रियारंभे स्नानः शुद्धा वरं दधत्
समाहित मना मौनी प्रयुक्त गुरू वंदनः ॥ १ ॥

शिष्य मंत्र क्रिया से आरंभ में स्नान करके शुद्ध धुले हुवे वस्त्र पहन कर एकान्त चित्त होकर मौन व्रत धारण करते हुवे गुरू की वंदना करे।

जिनालय सरित्तीरे पुलिने पर्वते वने
भवनेऽन्यत्रवा देशं शुभंजंतु विवर्जिते ॥ २ ॥

जिनालय नदी के तट या पुलिन पर्वत वन घर अथवा किसी अन्य जन्तु रहित स्थान में ।

यथार्हमासनासीनः सामग्री मानुदग्मुखः
प्राङ् मुखोवाभवेत पूजा जप होमान् कोरन्विति ॥ ३ ॥

जिनेन्द्र भगवान के सामने यथा योग्य पहासन पर बैठकर अनुष्ठान की सामग्री उत्तर अथवा पूर्व की तरफ मुख करके पूजा जप और हवन करे।

विद्यादि देवतानां च विद्यानामपिनाम धेयानि
कथ्यंतेऽत्रतु कति चित् कः कथयेत्तानि का त्सन्यॅन ॥ ४ ॥

अब विद्यादि देवताओं और विद्याओं के कुछ नाम कहे जाते हैं। पूर्ण तो भला कौन कह सकता है।

वृषभायजितश्चव संभव श्चाभिनंदनः
सुमतिः पद्म प्रभश्चव सुपार्श्व चन्द्रमाः प्रभुः ॥ ५ ॥

सुविधिः शीतलः श्रेयान वासुपूज्यो जिनोत्तमः
विमलो नंत जिद्धर्मः शांति कुन्थुः त्वर प्रभुः ॥ ६ ॥

मलिश्च सुव्रतश्चैव नमि र्नेमि जिनेश्वरः
पार्श्वोवीर तीर्थेशाश्चतु र्विंशतिरर्च्चिताः ॥ ७ ॥

वृषभ अजित संभव अभिनंदन सुमति पद्म प्रभु सुपार्श्व चन्द्र प्रभु सुविधि (पुष्पदंत) शीतल नाथ श्रेयांस वासु पूज्य विमल अनंत धर्म शांति कुंथु अर मल्लि मुनि सुव्रत नमि नेमि पार्श्व और महावीर यह चौबीस तीर्थंकर हैं।

वृषवदन महायक्ष स्त्रि मुखो यक्षेश्वर श्च तुंबुरु कुसुमौ
वरनादि मातंग यक्ष विजयाव जितो ब्रह्मादिश्वर कुमारास्व्यो ॥ ८ ॥

षट्वदनः पातालः किन्नर गरुडोतथैक गांधर्वाख्यः
रवेन्द्रा कुबेर वरूणो भृकुटि गोर्भेद पार्श्व मातंगाख्याः ॥ ९ ॥

वृषवदन (गोमुख) महायक्षाय त्रिमुखाय यक्षेश्वराय तुंबर पुष्प (कुसुम) मातंग- वरनादि विजय (श्याम) अजित-ब्रह्म-ईश्वर -कुमार-षडवदन (षन्मुख) पाताल -किन्नर गरूड़-गंधर्व-चन्द्र कुबेर-वरूण-भृकुडी-गोमेद-पार्श्व (धरण) मातंग नाम वाले

तीर्थेषु महायक्षाः क्रमाचतुर्विंशति जिनानां कथिताः
यक्षाः कुबेर शास्त्र प्रमुखाश्चान्येतु बहुविधा ज्ञेयाः ॥ १० ॥

चौबीस तीर्थंकरों के क्रमशः २४ यक्ष कहे हैं। कुबेर और शास्त्र प्रमुख वृहस्पति अन्य भी बहुत प्रकार के देव होते हैं।

चक्रेश्वरी रोहिणी च प्रज्ञप्ती वज्रश्रृंखला तथा पुरूषदत्ता स्वमनो वेगा च कालिका ज्वालामालिन्या भिधाना महाकाली च मानवी गौरी तथैव गांधारी वैरोटी जन संस्तुता अन्यानंतमती नाम्ना मानसी च जया तथा विजया पराजिता देवी बहुरूपिण्यापि स्तुता चामुंडान्या च कुष्मांडी पद्मा सिद्धायिनी त्यः मूस्युचतुर्विंशतिर्यक्ष्या सेवंते जिन शासनं।

चक्रेश्वरी१ रोहिणी २ प्रज्ञप्ति ३ वज्र श्रृंखला ४ पुरूषदत्ता ५ मनोवेगा ६ कालिका ७ ज्वालामालिनी ८ महाकालि ९ मानवी १० गौरी ११ गांधारी १२ वेरोति १३ अनन्त मति १४ मानसी १५ महामानसी १६ जया १७ विजया १८ अपराजिता १९ बहुरूपिणी २० चामुंडा २१ कुष्माडिनी २२ पद्मावती २३ सिद्धायिनी२४ यह २४ तीर्थंकरों की देवियां है। और जैन शासन की सेवा करती है।

श्री देवी वसुधारा सरस्वती काम चांडाली
दुर्गात्याद्याश्चान्याश्चदेवता स्सन्त्यनेक विद्याः।
प्रोक्तानांयक्षाणं यक्षीनां चाद्भुत प्रभातनां
परिवार देवता अपि संति सततं विविध महा शक्ति युक्ताः ॥ १६ ॥

लक्ष्मी वसुधरा सरस्वती सिद्धायिका दुर्गा इत्यादि अन्य देवता तथा देवियां है उपरोक्त अद्भुत प्रभाव वाले यक्ष और यक्षियों के परिवार की अन्य देवियाँ भी विविध प्रकार की महान शक्ति वाली होती हैं।

इत्येवं कथिताः काश्चिन् मुख्य विद्यादि देवताः
विद्यानाम थ मुख्यानां नामान्यत्र निगद्यते ॥ १७ ॥

यह मुख्य विद्यादि देवता कहे गये हैं। आगे कुछ मुख्य विद्याओं के नाम कहे जाते हैं।

रोहिण्या द्यामहाविद्या विद्यंतेऽचिन्त्य शक्तयः
समस्त फलदात्रिण्यः पंचभिः पंचभिः शतैः ॥ १८ ॥

रोहिणी आदि अचिन्त्य शक्तिवाली और समस्त फल के देनेवाली पांच सो महाविद्याहैं।

संत्यं गुष्ठ प्रसन्नाद्याय विद्याः क्षुल्लक संज्ञकाः
श्लाघ्य प्रभाव प्रभवाः सप्तभि प्रमिताः शतिः ॥ १९ ॥

सत्य अंगुष्ट प्रश्न आदि प्रशंसनीय प्रभाव को देने वाली सातसो क्षुल्लक विद्यायें हैं।

आसां द्विधोदितानां विद्यानां भेदा तद्विदाश्चैव
अंतर्भवंति मंत्राः सर्वेपि प्रथित सामर्थ्याः ॥ २० ॥

यह दोनों प्रकार की विद्याएं और उनके भेद ही प्रसिद्ध सामर्थ्य वाले मंत्र कहलाते हैं।

विद्यास्वेतासु सर्वासु सं सिद्धयंति विशेषतः
विद्या विद्याधरणां याः कथ्यंतेता श्च काश्चना ॥ २१ ॥

इन सब विद्याओं में जो विद्यायें विद्याधरों को विशेष रूप से सिद्ध होती है। उनमें से कुछ के भेद यहां कहे जाते हैं।

प्रज्ञप्ति शांतिवेताली भ्रमरी बंध मोचनी
आभोगिन्युष्ण वेताली मातंगी शत संकुला ॥ २२ ॥

मनो वेगा महावेगा दुर्गिणी चंडवेगिका
पर्णलब्धी महाज्वाला चंडाल्याकाश गामिनी ॥ २३ ॥

१ प्रज्ञप्ति शीत २ वेताली ३भ्रमरी ४बंध मोचिनी ५ अभोगिनी ६ उष्णवेताली ७ मातंगी ८शत संकुला ९ मनोवेगा १० दुर्गिणी ११ चंडवेगिनी १२ पण लब्धी १३महाकाली १४ चांडाली १५आकाश गामिनी

विश्व प्रवेशिन्या वर्तिन्य प्रतिघात गामिनी
उत्पाटिनी लघुकरि कामिनी काम रूपिणी ॥ २४ ॥

विपाटनी प्ररोधिनी प्रवर्त्तनी प्रलापिनी
प्रमोहनी प्रभाफणी प्रभावती प्रभांजणी ॥ २५ ॥

उदक स्तंभिन्यग्नि स्तंभिन्या वेशनी वशीकरणी
प्रस्थापनी प्रहारिणी संग्रहाणी प्रहरणी च ॥ २६ ॥

कुंभांडी खड्वागीं शबरी विक्षेपणी विरल वेगा
वेगावती रण वीर्या वेषा संत्रासि कार्याची ॥ २७ ॥

१५ विश्व प्रवेशनी १६ आवर्तनी-१७ अप्रति घात गामिनी- १८उत्पादिनी- १९ लघुंकारि - २० कामिनी- २१ काम रूपिणी- २२ विपाटिनी- २३ प्ररोधिनी २४ प्रवर्तनी २५ प्रलापिनी- २६ - प्रमोहिनी-२७प्रभाफणी-२८ प्रभावती-२९ प्रभेजनी- ३० उदक स्तंभिनी-३१ अग्नि स्तंभिनी- ३२ आवेशिनी- ३३ वशीकारणी ३४ प्रस्थापिनी ३५ प्रहारिनी- ३६ संग्रहनी- ३७ प्रहरणावणी ३८ कुभांडी ३९खड्वांगी शबरी-४० विक्षेपणी-४१ विरलवेगा -४२ वेगवती -४३ रणवीर्या- ४४ वेषा- ४५ संत्रासि-४६ कार्याची तामसीका -सूर्य प्रभा सूर्यपातिनी चंद्र पातिनी च आकास पातिनी पुनः राहु वुधका जल पातिनी ॥

मनोजास्त्रधरा चैव तामसा स्त्रधरा पुनः
जलस्थाना नदीधारा चक्रधारा तपस्विणी ॥ २९ ॥
उदयानंद का हंसी सूर्य कांति मणिधरा
इंद्रनील मणिधरा महास्फटिकभासिनी ॥ ३० ॥
चामरी पांडुरा पत्री भद्राकात्यायनी महा
प्रेयसी महिला गौरी नायकी रंजनातरी ॥ ३१ ॥

४७ तामसिका- ४८ सूर्यप्रभा- ४९ सूर्य पातिनी ५० चन्द्रपातिनी- ५१ आकाशपातिनी-५२ राहुबुध जलपातनी ५३ मनोजा-५४ अस्त्रधरा तामस ५५ अस्त्रधरा -५६ जल स्थाना नदी धारा-५७ चक्रधारा ५८ तप स्त्रणी ५९ उदयानंद का ६० हंसी सूर्य कांति मणीधरा ६१ इन्द्रनील मणिधरा ६२ महास्फटिक भासिनी ६३ चामरी पाडुंरा ६४ पत्री भद्रा ६५ कात्यायनी ६६ महाप्रेयसी ६७ महिला गौरी-नायकी- ६८रंजना तरी-

प्रतीप दर्शिनी दुर्ग्गा हेम वंती यशस्विनी
कीर्तिमती महामति श्च विश्वमति मतिवती ॥ ३२ ॥

६९ प्रतीपदर्शनी - ७० दुर्ग्गा हेमवती- ७१ यशस्वनि - ७२ कीर्तिमति महामति- ७३विश्वभारती मतिवती -७४ साधनी देवी- महती- ७५महाभक्ति वती

ख्याता वैमलि शिखंडिनी च
महानदी सिंधु धारिंणी ख्याता ॥ ३३ ॥

विशेषा भाम का सैनी भवानि सर्वशकुंला
अपर्णाचंडिका पौलोमी अभया पथ्य का पुनः ॥ ३४ ॥

कायस्था-निर्जरा सुरा अमरा स्वर्गधारिनी
रूद्राणी सर्वाणी देवी तामसा स्त्री महामहा ॥ ३५ ॥

महापूज्या महामाता महादेवी महासुरा
अमराधा महानागी महामाटी महोत्तमा ॥ ३६ ॥

७६ साध्वी देवी-७७ महती-७८ महाभरा भक्ति वती- ७९ वैमालि-८० शिखंडनी -८१महानदी- ८२ सिंधु धारिणी- ८३ विशेषा ८४ भामकासैनी- ८५ भवानी- ८६ सर्वशंकुला- ८७ अर्पणा -८८-चंडिका -८९ पौलोमी- ९० अभया- ९१पथ्यका- ९२कायस्था निर्जरा सुरा ९३ अमरा स्वर्ग धारिणी- ९४ रूद्रानी -९५ सर्वाणी- ९६तामसा अस्त्री- ९७ महामहा- ९८ महापूज्य ९९ महामाता - १०० महादेवी -१०१-महासुरी अमराधा -१०२ महानाग -१०३महामायी- १०४महोत्तमा

आयुधा नाम्ना ख्याता तामुहा इति ख्याति
मृग मत्यानाम्ना परा सुविधा परविधा छेदिनी चपलवेगा ॥ ३७ ॥

१०५ आयुधा- १०९ परायुधा- ११०सुविधा- १११परविधा छेदिनी - ११२चपलवेगा १०६ तामहा इति नाम वाली १०७ मृग और १०८ मत्सा नाम वाली यह विद्यायें हैं।

आसां प्रसांदात्संप्राप्त खेचरत्वादि वैभवाः
विद्याधरां विराजंते मर्त्याअपि सुराईव ॥ ३८ ॥

इन विद्याओं के प्रसाद से विद्याधर लोग आकाशगामी आदि ऐश्वर्य से मनुष्य होते हुये भी देवों के समान शोभित होते हैं।

विद्यानां हि प्रकाराणि मंत्रसाधनसंविधिः
विद्यानुवादे सर्वासामाम्ना यादि गणेशिना ॥ ३९ ॥

इन दोनों प्रकार की विद्याओं की साधन विधि को श्री गणधर भगवान ने विद्यानुवाद पूर्व में वर्णन किया है।

अस्मिं स्तु कति चित् शास्त्रे विद्याः सु कर साधनाः
अम्य स्माभि रूप दिश्यंते मंदानुग्रह काम्यया ॥ ४० ॥

इस शास्त्र में मंद बुद्धियों पर अनुग्रह की इच्छा से सरल विधि वाली थोड़ी सी ही विद्याओं का वर्णन किया जावेगा।

ध्यात्वैवं परया भक्त्या प्रोक्ता विद्याधि देवताः
तत्र विधा सु कर्तव्याः सकली करणादयः ॥ ४१ ॥

इस प्रकार उपरोक्त विद्याधि देवियों का अत्यन्त भक्ति पूर्वक ध्यान करके उन विद्याओं की साधन विधि में सकली करण आदि करे।

सकली करेणन बिना मंत्री स्तंभादि निग्रह विधाने
असमर्थस्तेन आदौ सकलीकरणं प्रवक्ष्यामि ॥ ४२ ॥

मंत्र स्तंभन आदि निग्रह के विधान से सकली करण के बिना मंत्री समर्थ नहीं हो सकता अतएव शुरू में सकली करण को कहेंगें।

सि साधयिषुणा विद्या म विघ्नेनेष्ट सिद्धये
यत्स्वस्य क्रियते रक्षा साभवेत्सकली क्रिया ॥ ४३ ॥

विद्या साधने की इच्छा वाले को निर्विघ्न इषु कार्य की सिद्धि लिये अपनी रक्षा वह सकली करण क्रिया है।

झं ठं स्वरा वृतं तोय मंडल द्वय संवृत्तं
तोयेन्यस्य ततस्तेन स्नाप्यान्मंत्रमिमं पठेत् ॥ ४४ ॥
सं बिंदुकं चवर्गस्य मध्ये कृत चतुष्टयं
चतुर्थं टांत संवोष्टयं कलाभोमंडल द्वयं ॥ ४५ ॥

एक पत्र पर झं वं को पृथक सोलह स्वरों से वेष्टन घेरकर उसके बाहर दो जल मंडलों से घेरकर स्नान के जल से इसे रखकर यह मंत्र पढ़े। अथवा

अर्ह के चारों तरफ चवर्ग के चौथे अक्षर झ को अनुस्वार सहित करके अर्थात् झं को टके अंत में आने वाले ठः अक्षर से वेष्टन करके स्वर लिखकर दो जल मंडल बनावे।

शुद्धेना मृतमंत्रेण वेष्टयं तत् शुद्धि यंत्रकं
न्यस्यं शुद्धजले स्नायात् तेनो मृत पदं स्मरेत ॥ ४६ ॥

इन उपरोक्त शुद्धि मंत्रों को इस नीचे लिखे हुवे वेष्टन मंत्र से वेष्टित करके उसको शुद्ध जल में न्यास करें और अमृत मंत्र का ध्यान करता हुआ स्नान करे अर्थात अपनी हथेली में पानी से यंत्र लिखकर स्नान के जलने अपनी हथेली को जिस पर यंत्र लिखा है धो लेवें। और स्नान के जव को अमृत से अभिमंत्रित करे। झं ठं को १६ स्वरों से अभिवेष्टन करे। जिसके बाहर दो जल मंडल लिखे।

च वर्ग का चोथा अक्षर झ को अनुस्वार सहित लिख कर अर्थात झं लिखकर ठकार से वेष्टित कर चौथी कलाई से वेष्टित करके दो जल मंडल से घिरे अथवा हं के बाहर चार वर्ग और ठकार के चारों तरफ सोलह स्वर लगाकर दो यंत्र बनावे और उसको जल मंडल में न्यास करे। फिर अमृत मंत्र से अभिमंत्रित करके स्नान करें।

ॐ कार: प्रथम स्तत्र अमृते अमृताद्भवे अमृत वर्षिणी अमृतं श्रावय
श्रावयेस्यत: सं सं क्लीं क्लीं क्लीं तथा ब्लूं ब्लूं द्रां द्रां द्रीं द्रीं द्रावय द्रावय स्वाहेति
स्नान मंत्रोयं विद्वद्भि प्रकीर्तित: ॥
ॐ अमृते अमृतोद्भवे वृषिणी अमृतं श्रावय श्रावय सं सं क्लीं क्लीं ब्लूं ब्लूं द्रां द्रां
द्रीं द्रीं द्रावय द्रावय स्वाहा।

इसको विद्वानों ने अमृत मंत्र कहा है।

ॐ पक्षि हंस: झ्वीं ह्रूं: प: क्ष: हर हंस: प प क्षीं स्वाहा
ॐ क्ष: सरसुंस: हर हुं ह: स्वाहा ॥

इति वेष्टन मंत्र

यह वेष्टन मंत्र है।

ॐ नमो भगवते विश्वजन हिताय त्रैल्योक्य शिखराय विशुद्ध
चतुरगुण शुद्धाय शुद्धिं कराय ॐ ॐ ॐ ॐ रं रं रं रं ह्म्ल्व्यूं स्वाहा ॥

शुद्धि मंत्र:

ॐ अमृते अमृतोद्भवे अमृतवर्षिणी अमृतं श्रावय श्रावय
सं सं क्लीं क्लीं ब्लूं ब्लूं द्रां द्रां द्रीं द्रीं द्रावय द्राव्य स्वाहा ॥

अमृत मंत्र

स्नान के पश्चात इस आगे कहे हुवे मंत्र को पढकर सब अंगों की शुद्धि करनी चाहिये।

ॐ अमृत अमृतोद्भवं अमृत वर्षिणी ह्रीं क्ष्वीं पं पं
वं वं मं मं सर्वांगंशुद्धिं कुरू स्वाहा

स्नान मंत्र :

एवं स्नान पवित्रांगो धौत वस्त्र परिग्रह
स्थित्वा सन्माजित एकांत प्रदेशे देश संयमी।

इस प्रकार स्नान से अपने अंगो को शुद्ध करके धुले हुवे वस्त्र पहन करके व्रतों का धारण करने वाला शुद्ध और एकांत स्थान में बैठे।

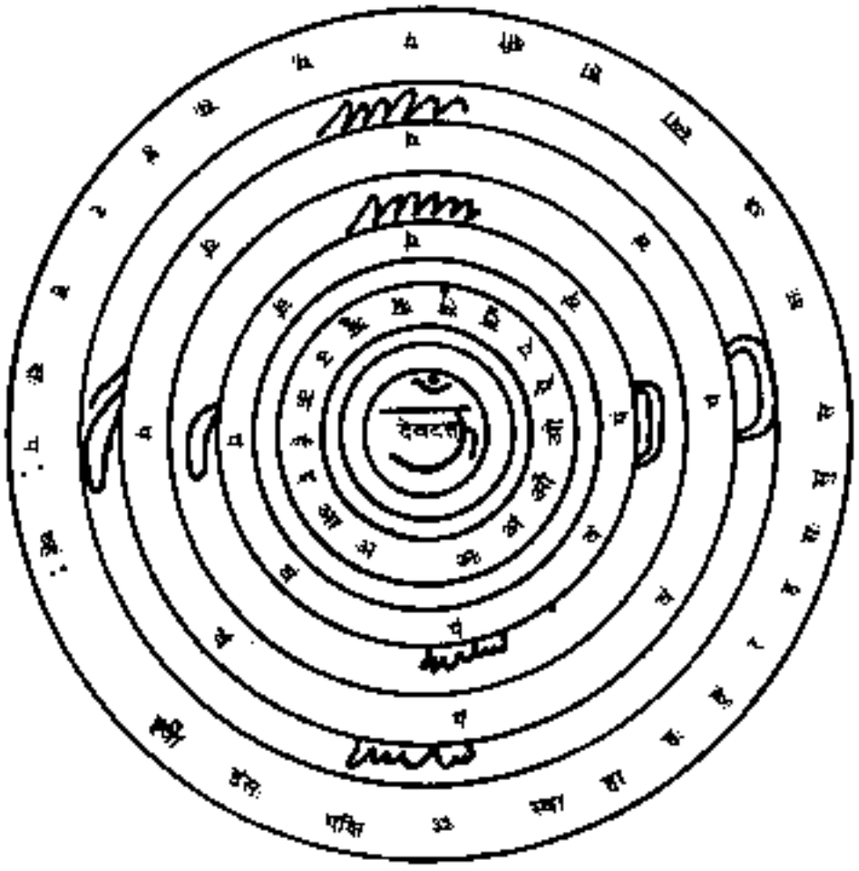

कृते ईर्या पथ संशुद्धि : पर्यंकासन संस्थितः
समीप स्थार्चाना द्रव्यः कुर्याद् विधि मिमं पुरा ॥ १ ॥

वह ईर्यापथ के द्वारा शुद्धि करता हुवा पर्यंक आसन से बैठ जावे और अपने पास पूजन के द्रव्यों को रखता हुआ नीचे लिखी विधि को करे।

अग्नि मंडल मध्यस्थोरेफै ज्वाला शताकुलैः
सर्वांग देशगै ध्यात्वात्मानं दग्ध वपुर्मलं ॥ २ ॥

फिर अपने को सैंकड़ो ज्वाला निकलते रेफ स्वरूप अग्निमंडल के बीच में बैठा हुवा ध्यान करके विचार करे कि मेरे सब अंगो कमल उस अग्नि जे जला जा रहा है। अथवा

वन्हि मंडल मध्यस्थो वायुना पूरकेनच
प्रणवेणामलं देहे शोषयित्वांमुना दहेत् ॥ ३ ॥

अथवा ऐसा ध्यान करे कि अग्नि मंडल के बीच में बैठा हुआ पूरक प्राणायाम के द्वारा वायु को खींचकर ॐकार के ध्यान से देह के मल को जलावें।

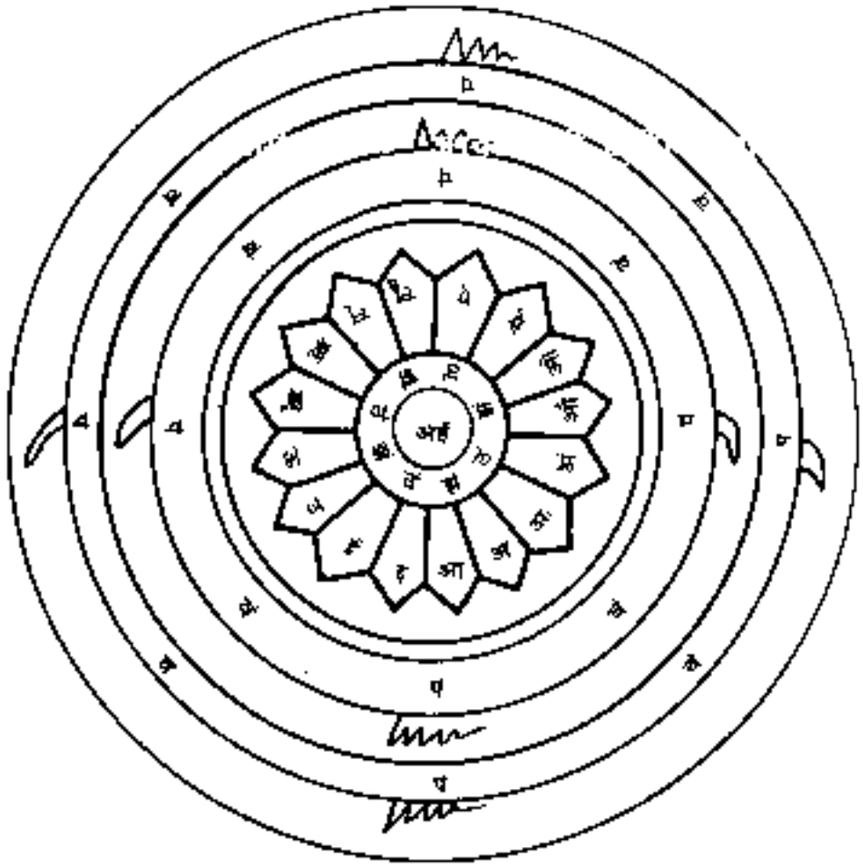

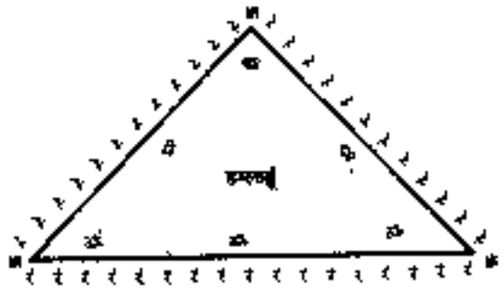

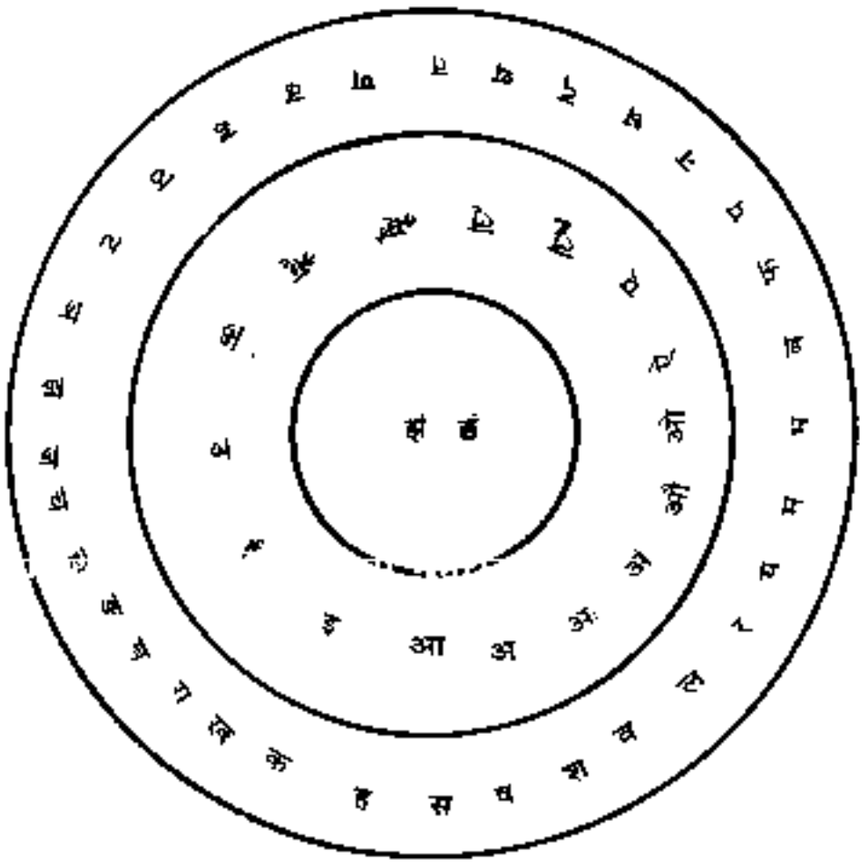
अं
आं
इं
ईं
उं
ऊं
ऋं
ॠं
ऌं
ॡं
एं
ऐं
ओं
औं
अः
क
ख
ग
घ
ङ
च
छ
ज
झ
ञ
ट
ठ
ड
ढ
ण
त
थ
द
ध
न
प
फ
ब
भ
म
य
र
ल
व
श
ष
स
ह
क्ष

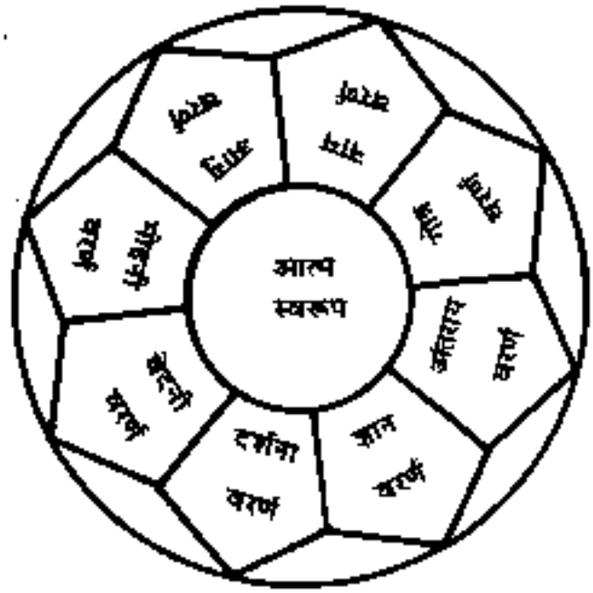
आत्म स्वरूप
ज्ञानावरण कर्म
दर्शनावरण कर्म
वेदनीय कर्म
मोहनीय कर्म
आयु कर्म
नाम कर्म
गोत्र कर्म
अन्तराय कर्म

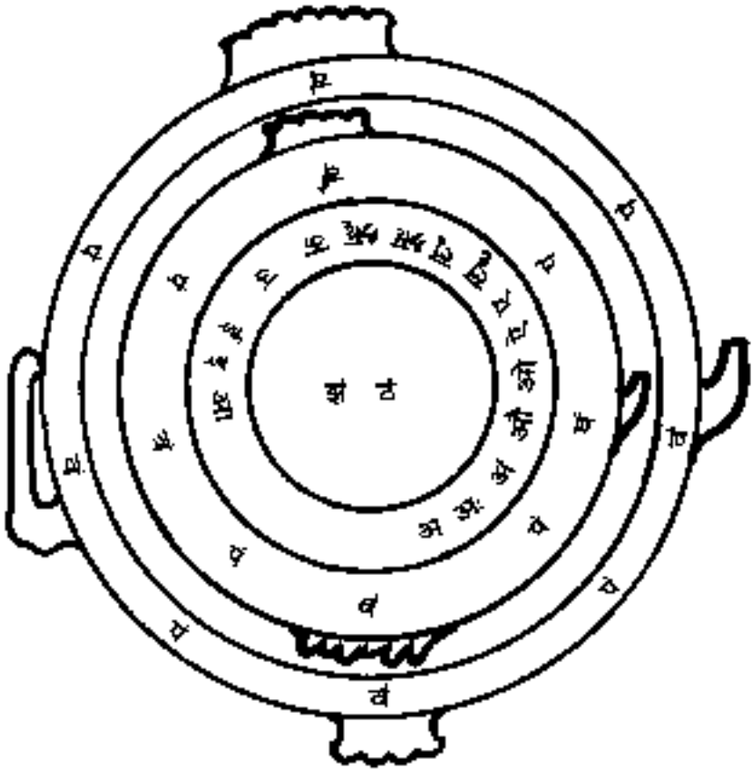

दहनं कुभं केन स्याद् भस्मोत्सर्गश्च रैचकैः
शोष दा होज्झनं कुर्यात् प्रणवैरेव मंत्रवित् ॥ ४ ॥

पुरुष मंत्र को कुंभक प्राणायाम से मल को जलावे दाह करे और रेचक से भस्म को फेंके। इस प्रकार गावों के निमित्त कर शोषण सुखाना दाह जलाना और उसका त्याग करे इस प्रकार कर्ममल का जलाना सुखाना और त्याग करना ॐ मंत्र के साथ करे।

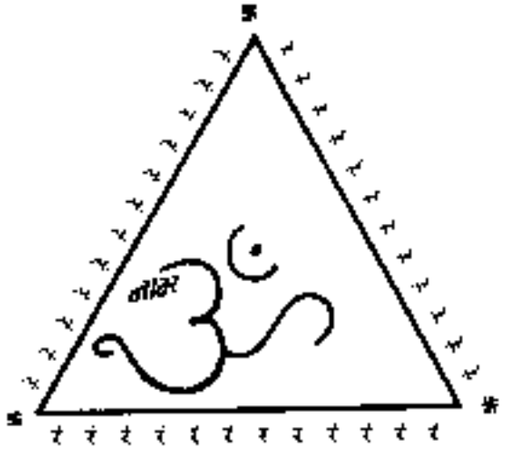

सं विसर्ग एकारांते झं वं व्हः पः सुधाक्षरैः
सत्यं च गुरू मुद्राग्रे न्यस्तै र मृत वर्णिर्षिः ॥ ५ ॥

अथवा गुरू मुद्रा के आगे अमृत मंत्र को वर्षाने वाले सत्य स्वरूप सुधा अक्षर झ वं व्ह पः हः इन सुधा अक्षरों से व्यास करे।

ललाट नल निक्षिप्त सुधा बीच चतु विंधात
प्रस्रवद्वारि धाराभिरात्मानां स्नापयेत्क्रमात ॥ ६ ॥

अथवा ललाट (मस्तक) के तटों पर स्थापित किये हुवे सुधा बीजा क्षरों को चारों तरफ से झरती हुई जल धारा से आत्मा को स्नान करावे ऐसा ध्यान करे।

गुरू मुद्राग्र निक्षिप्तं पंच ब्रह्माक्षरा मृतैः
स्नाप्यादमृत मंत्रेण ध्यायेत् शुद्ध वपुः स्थितं ॥ ७ ॥

असि आउसा पंच ब्रह्म अक्षरानि वा पंच गुरू मुद्राग्र निक्षिप्त
पंच ब्रह्म अक्षरानि ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः तान्यो वा मृतानि तैः

गुरू मुद्रा करके अग्रभाग में न्यास किये हुवे उन पांच ब्रह्माक्षरों से स्नान करे, और अमृत मंत्र से अभिमंत्रित करके अपने शरीर को शुद्ध जानकर अपनी शुद्ध आत्मा को ध्यावे।

अभिषंच्य स्वमात्मानं ध्यायेत् उज्वलतेजसं
एवं त्रिधा विशुद्धः सन् विदध्याते सकली क्रियां ॥ ८ ॥

इस प्रकार स्नान कराते हुए अपने आपको बड़ा भारी उज्वल तेज वाला हूं ऐसा ध्यान करे इस प्रकार तीन बार विशुद्ध होकर सकली करण क्रिया करे।

केश मूले ललाटे क्ष्णोः श्रुत्यो र्नासा पुटद्वये
युग्मे गंडोष्ट दंतस्य मूर्द्धर्व न्यासे न्यसेत् स्वरान् ॥ ९ ॥

विन्यस्य विशंतौ हस्त पाद संधिषु पार्श्वयोः
पृष्टे नाभौ हृदि स्पर्शानित्यांदीन् धातषु हं हादि ॥ १० ॥

सिर में ॐ केशों के मूल में अ ललाट में आ आंखों में इ ई कानों उ ऊ नाक में ऋ ॠ वाणी समेत गालों में लृ लॄ दांतों में ए ऐ होठों में ओ औ जिव्हा में अं कंठ में अः की स्थापना करे भुजाओं में कं खं गं घं ङं दोनों कोखो में टं ठं डं ढं ण पीठ में तं थं दं धं नं नाभि में पं फं बं भं मं हृदय में चं छं जं झं ञं और सातों धातुओं में यं रं लं वं शं षं सं

हस्त द्वय कनीय स्थायं गुलीनां यथा कमो
मूले रेखा त्रय स्योर्द्ध पर्वाग्रेषु च युगपत् सुधी ॥ १ ॥
न्यास्य पंच नमस्कारं ततः कुर्यात् द्वयं
संपुटयां गुप्तं युग्मेन स्वांग न्यास करोत्विति ॥ २ ॥

दोनों हाथों की उगुलिंयों के तीनों रेखाओं से ऊपर के पोखों में और दोनों हथेलियों में एक साथ पंच नमस्कार मंत्र के अक्षरों का न्यास करे । फिर दोनों हाथों के दोनों अगूठों से निम्नलिखित प्रकार से अपने अंगो में न्यास करे। १०(एवं यस्त्रिशत्स्थानेषु त्रय स्त्रिशद्वर्णान् स्थापयित्वा) (कादयों क आदि शब्देन श ष स ह ऊ ष्मा ण) कादयो मावं साना स्पर्श य र ल वा अंतस्था) (केशमूलमें उँ ललाट में अ आ आंखों मे इ ई कानों में उ ऊंनाक में ऋ ॠ गाल में ऌ ॡ होठ में ए ऐ दांत में ओ औ मुँह में अं आः हाथ में क ख ग घ ङ पैर में च छ ज झ ञ संधि में ट ठ ड ढ ण पार्श्व में त थ द ध न पीठ प फ ब भ म नाभि य र ल व स्पर्शन में श र य ष हृदय में ह लगावें)

उँ ह्रीं अर्हं वं मं हं सं तं पं असि आउसा हस्तसंपुटं करोमि स्वाहा ॥
इति हस्तं संपुटं हाथ जोडना चाहिये।
ॐ ह्रां णमो अरहंताण स्वाहाहृदि- हाथों को दोनों अंगूठों के हृदय को छूवे
ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं स्वाहा- ललाटे
ॐ ह्रूं णमो आयरियाणं स्वाहा - दाहिने काने
ॐ ह्रौं णमो उवज्झायाणं स्वाहा- पश्चिमे पिछले भाग को छूवे
ॐ ह्रः णमो लोए सव्वासाहणं- बाम करणे
ॐ ह्रां णमो अरहंताणं स्वाहा - शिरो मध्ये
ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं स्वाहा - शिरो आग्नेय भागे
ॐ ह्रीं णमो आयरियाणं स्वाहा - शिरो नैऋत्य भागे
ॐ ह्रूं णमो उज्झायाणं स्वाहा - शिरो वायव्याम भागे
ॐ ह्रां णमो लोए सव्व साहूणं - शिरो ईशान भागे
ॐ ह्रः णमो अरहंताणं स्वाहा - दक्षिण भुजे
ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं - वाम भुजे
ॐ ह्रूं णमो आयरियाणं स्वाहा - नाभौ
ॐ ह्रौं णमो उवज्झायाणं स्वाहा - दक्षिण कुक्षौ
ॐ ह्रीं णमो लोए सव्व साहूणं माम कुक्षौ स्पर्शति॥

हृदि न्यसेन्नमस्कारमो ह्रीं पूर्वक महंतां
पूर्वे सिरसि सिद्धानाभों ह्रीं पूर्वास्तुतिन्यसेत् ॥ ३ ॥

गुरु मुद्रा हाथ की अंगुलियां मिलाकर की जाती है।

१- ॐ ह्रां णमो अरहंताणं- हृदय
२ -ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं - पूर्व शिरसि कहकर वामे सिर को छूवे
३- ॐ ह्रूं णमो आइरियाणं - दक्षिण कहि दाहिने भाग सिर में
४ -ॐ ह्रौं णमो उवज्झायाणं- दक्षिण पार्श्व कहकर दाहिनी पार्श्व में
५- ॐ ह्रः णमो लोए सव्व साहूणं वाम पार्श्व बायें पार्श्व में

फिर कह कर दाहिनी पार्श्व में इन्हीं पांचो मंत्रों को सिर के आगे ऊपर दाहिने पिछले और बायें भाग में न्यास करे यह दूसरी बार का विन्यास क्रम है।

ॐ ह्रां पूर्वक मार्य स्तोत्रं शीर्षस्य दक्षिणे
ॐ ह्रीं पूर्वमुपाध्याय स्तवं पश्चिम तो न्यसेत ॥ ४ ॥

वामे पार्श्वन्यसेद्रोंहः पूर्वासाधु नमस्कृतिं
ततः पंचाप्य मून्मंत्रान् सिरस्येव पुनर्न्यसेत् ॥ ५ ॥

प्राग्भागे शिर सो मूर्द्धि दक्षिणे पश्चिमे
तथा वामे चेत्येष विन्यास क्रमो वारे द्वितीय के

फिर पांचो मंत्रो की क्रम पूर्वक सिर पर सिर के पूर्व भाग पर मुँह के दाहिनी तरफ तथा पश्चिम की तरफ तथा बाईं तरफ न्यास करे। दूसरी बार का विन्यास है।

वामायामथ तर्ज्जन्यां न्यस्येत्पंच नमस्कृतिः
पूर्वादि दिक्षु रक्षार्थं दश स्वपि निवेशयेत् ॥ ६ ॥

अब पाँचो नमस्कारों का बाईं तर्जनी अंगुली में पंच नमस्कार मंत्र का न्यास करे और पूर्वादि दशों दिशाओं में अपनी रक्षा के लिए न्यास का ध्यान करे। अर्थात् दशों दिशाओं में उस अंगुली को क्रम से फिरावे।

हस्त द्वयांगुली बंधैः पंचानां परमेविष्टनां
मुद्रां धृत्वा तनुत्सर्गं तिष्टेत्पर्यंक योगतः ॥ ७ ॥

फिर हाथ को दो दो अंगुलियों के बंध से पंच परमेष्टि मुद्रा को बना कर शरीर से ममत्व को छोड़कर पर्यंकासन से बैठे।

नाभौषोडश दिधा सदलाब्जं दल मध्यगं
हकारं बिंदु संयुक्तं रेफा क्रांतं प्रचिंतयेत ॥ ८ ॥

नाभि में एक सोलह दल कमल का ध्यान करे और उसकी कर्णिका में हँ का ध्यान करे उस कमल की प्रत्येक दल पंखडी पर एक एक स्वर (मात्रा) हो-

हृद्यष्ट कर्म निर्मूलं द्विचतुः पत्रमंबुजं
मुकुली भूत मात्मानं मावृत्यावस्थितं स्मरेत ॥ ९ ॥

फिर हृदय में एक अष्टदल कमल का ध्यान करे और उसकी कर्णिका में आत्म स्वरूप का ध्यान करे इस कमल के प्रत्येक दल पर आठों कर्म हो यह कमल आधा खुला हो।

कुंभकेन तदंभोज पत्राणि विकचप्य च
निर्दहेन्नाभि पंकज बीज रकार: विन्दु शिखाग्निना ॥ १० ॥

फिर कुंभक स्वर से नाभि कमल के पत्रो को फैलाकर हँ बीज के रेफ की अग्नि से उन कर्मो को जलाये।

रेचको ध्वर्द तत्तद्भस्मानि षिंचेभिज मादरात्
इवीं श्रीं हंसोलिका र्द्धेन्दु श्रवद्धारा मृतैस्त्रिभिः ॥ ११ ॥

फिर रेचक के द्वारा उस कर्मो की भस्म को बाहर फेंक कर उस हँ के अर्द्ध चन्द्र से निकलने वाले तीन प्रकार के अमृत इवीं श्री हंसः से अपने को आदर पूर्वक सींचे।

ततः पूरक योगेन व्याप्ताशेष जगत् त्रयं
परमात्मानमात्मानं प्रातिहार्यैरलं कृतं ॥ १२ ॥

फिर पूरक प्राणायाम के योग से अपने आपको अष्ट प्राति हार्यो से अलंकृत तीनों लोकों में व्याप्त परमात्मा स्वरूप है ऐसा समझकर ध्यान करें।

शुद्ध स्फटिकसं काशं स्फुरंतं ज्ञान तेज सा
ध्यायेत स्वपाद युग्माव नम्र मूर्द्ध चराचरं ॥ १३ ॥

उस समय अपने आपको शुद्ध स्फटिक मणि के समान और ज्ञान के तेज से देदीप्यमाण सब चरा अचर को अपने दोनों चरणों में झुंक रहे हैं ऐसा ध्यान करे।

ॐ ह्रीं सकल शते पूजिताष्ट महाप्राति हार्य्य विभवैरलंकृत द्वादश गण परिवेष्टित सर्वानंत चतुष्टये सर्वज्ञ भट्टारक तव पाद युगलं मम मानस वंसति स्थितं करोमि स्वाहा।

ध्यान मंत्रः

ॐ ह्रीं सभी एक सो इंद्रों से पूजित अष्ट महाप्राति हार्य के ऐश्वर्य से अलंकृत बारह गणों से परिवेष्टित अनंत चतुष्टय युक्त भट्टारक में आपके दोनों चरणों को अपने मन में स्थापित करता हूँ। इस ध्यान मंत्र का अर्थ है।

इत्येवं परमात्मत्वेनात्मानं ध्यायतः सतः
प्रतिक्षणं स्यात्प्राग्बद्ध कर्मणं निर्जरा परा ॥ १४ ॥

इस प्रकार अपने को परमात्मा रूप में ध्यान करने वाले सज्जन के पिछले बंधे हुये कर्मों की निर्जरा प्रत्येक क्षण में होती रहती है।

विघ्नौघाः प्रलयं यांति व्याधयो नाशमाप्नुयुः
विषं निर्विषतां याति स्थावरं जंगमं तथा ॥ १५ ॥
दूरादेव प्रणश्यंति शाकिनी भूत पन्नगाः
लोक द्वय हितं ध्याना देत स्मात्नां परं परं ॥ १६ ॥

उसके विघ्न के समूह नष्ट हो जाते व्याधियाँ नष्ट हो जाती है। स्थावर जंगम दोनों प्रकार के विष निर्विषता को प्राप्त होते हैं। उससे शाकिनी भूत और पन्नग दूर से ही भाग जाते हैं। इस ध्यान से अधिक हित कारी ध्यान तीन लोक में कोई भी नहीं है।

इत्थं संकीर्तितामेनां विद्याद्य सकली क्रियां
पंचोपचार विधिनायजेन् मंत्राधिदेवताः ॥ १७ ॥

इस प्रकार वर्णन की हुई इस सकली करण की क्रिया को करके पंचोपचार विधि से मंत्राधि देवियों की पूजन करे।

सकली करणं येषु मंत्रष्वाहत्य नोधितं
तेष्वेषां संविधातव्यामंत्रिभिः सकली कृतिः ॥ १८ ॥

जिन मंत्रों में सकली करण की विधि न हो उनमें इन मंत्रों सकली करण की क्रिया कर लेनी चाहिये।

पंचा ह्वान स्थापन साक्षात् करणार्चना विसर्गाः स्युः
मंत्राधि देवतानामुपचाराः कीर्तिता स्तज्ञैः ॥ १ ॥

मंत्राधि देवता के पांच उपचार निम्नलिखित कहे गये हैं। आह्वानन स्थापन साक्षात्करण पूजन विसर्जन

मंत्रादि देवतानां देशे न्यत्र प्रतिष्ठितांयतः ना
आह्वानं तत्प्रोक्तं मंत्रि भिरावाहनं नाम्नां ॥ २ ॥

किसी दूसरे स्थान में ठहरे हुवे मंत्र के अधि देवताओं को मंत्र द्वारा बुलाने को आह्वाहन कहते हैं।

उचिताभिमते देशे यत्तासां स्थापनं मुदा क्रियते
तत्प्रतिबिवानां वा भवेत्प्रतिष्ठापनं तदिदं ॥ ३ ॥

उन देवताओं या उनके प्रतिबिंम्ब को उचित स्थान में स्थापित करने को स्थापन कहते हैं।

साक्षात्करणं ता सां यन्मत्रैं र्मंत्र शक्ति रूपाणां
विहितं पूजा समये प्राहु स्तत सन्निधीकरणं ॥ ४ ॥

उन मंत्र की शक्ति वाले देवताओं का पूजन के समय में जो मंत्रों द्वारा साक्षात्करण किया जाता है। उसे साक्षात्करण या सन्निधिकरण कहते हैं।

गंधोदक प्रभृतिभिःक्रियामाणं वस्तुभिर्व्यथा शास्त्रं
अभिषेचनादि ता सांयतत्स्यादर्चनं नामः ॥ ५ ॥

जो उनकी शास्त्रों के अनुसार अभिषेक पूर्वक जल चंदन आदि द्रव्यों से पूजा की जाती है उसे अर्चना या पूजन कहते हैं।

आहूतानां तासां स्वस्थान प्रापणादरा द्विहिता
यातां बुधा विसर्जन मुपचारं पंचमं प्राहुः ॥ ६ ॥

उन बुलाये हुवे देवों को आदर पूर्वक अपने स्थान पर भेजने को पंडितों ने पाँचवाँ उपचार विसर्जन कहा है।

अह्वान्ने मंत्राणां मंते स्यादेहि एहि संवौषट्
तिष्ट द्वितीयंठः द्वयं संयुक्तं स्थापने योज्यं ॥ ७ ॥

अंत में मंत्रो के आह्वाहन में एहि एहि संवोषट् और स्थापन में तिष्ट तिष्ट ठः ठः लगाने चाहिये।

मम सन्निहिता भव भव वषट् एतद् सन्निधीकृतौ क्रियतां
अभ्यर्च्चनाविधाने गंधादीन गृन्ह गृन्ह नमः ॥ ८ ॥

सन्निधिकरण में मम सन्निहितो भव भव वषट ऐसा कहे पूजन में गंधादीन गृह्ण गृह्ण नमः बोले।

अंते भवे ट्ठि स्टष्टौ स्व स्थानं गच्छ गच्छ जस्त्रि तयं
इत्युपचारात् जानन विद्या फल भाक् भवेत् पुरुषः ॥ ९ ॥

विसर्जन में स्वस्थानं गच्छ गच्छ जः जः जः लगाने चाहिये पुरुष उपचारों को जानता हुवा ही विद्याओं के फल का बागी हो सकता है।

यंत्रोपचार मंत्रानोक्ता मंत्रेषु तत्र कर्तव्याः
उपचाराः स्वैरेव प्रोक्तैः स्तद् वाक्य संयुतेर्विधिभिः ॥ १० ॥

जिन मंत्रों की विधि में उपचार मंत्र न दिये हो वहां उपरोक्त प्रकार से अपने वाक्य बनाकर विधि में प्रयोग करने चाहिये।

आह्वानं पूरकेण स्यात् रेचकेन विसर्जनं
शेष कर्माणि योज्यानि कुंभकेन प्रयत्नतः ॥ ११ ॥

पूरक प्राणायाम से आह्वाहन करे रेचक से विसर्जन और शेष कर्मो की विधि कुभंक प्राणायाम से करें।

संख्यानुक्ताज्ञेया दशलक्षण्येक वर्ण मंत्राणां
विद्या जपेत् ट्ठि वर्णादीनामपि वृद्धि हानिं च ॥ १२ ॥

इन मंत्रो के जपने की संख्या यह है एक अक्षर वाले मंत्र की संख्या दस लाख है और दो वर्ण वालों की फिर कम और अधिक है। अथवा

सर्वेषा मपि मंत्रणाम वचने जपादिषु
संख्या शत मष्टेतरं संख्या सहस्रमष्टौत्तरं वदंति मुनीन्द्राः ॥ १३ ॥

आचार्यो ने सभी मंत्रो के जपने बोलने की संख्या एकसो आठ अथवा १००८ रखी है।

होमादिषु संख्या स्याद् दश भागा मूल मंत्र संख्यायाः
अंगा देरपि संख्या मंत्रस्य तथैव बोद्धव्या ॥ १४ ॥

होम आदि की संख्या मूल मंत्र के जप का दसवाँ भाग है और मंत्र के अंगों की जप की संख्या भी दसवाँ भाग जाननी चाहिये।

सर्वेषामपि मंत्राणं मनसा जिव्हया शनैः
उच्चैरपि जपेद् भक्त्या विहितोमन्यते क्रमात् ॥ १५ ॥

सभी मंत्रो को धीरे धीरे मनोयोग पूर्वक जिव्हा से जप अथवा अत्यंत भक्ति युक्त होने पर जोर से भी जपे।

एकैकाक्षर मंत्राणा भेदं ज्ञात्वा पृथक् पृथक्
पूर्वमेव प्रकर्त्तव्या पुष्पैश्चाष्ट सहस्रकैः ॥ १६ ॥

एक एक अक्षर मंत्र के भेदों को पृथक पृथक जान कर पहले ही आठ हजार पुष्पों से बिखेरे।

सवृंतकं समादाय प्रसूनं ज्ञानमुद्रया
मंत्रमुच्चार्य तन्मंत्री मुंचेदुच्छ्वासा रेचनात् ॥ १७ ॥

मंत्री डंठल सहित पुष्पों को लाकर ज्ञानमुद्रा धारण करके एक एक मंत्र पढ़कर श्वास के रेचक के साथ छोड़ देवे चढ़ा दें।

जपाद विकलो मंत्रः स्व शक्तिः लभते परां
होमार्चनादिभि स्तस्य तृप्तास्यादधिदेवता ॥ १८ ॥

मंत्र जपा जाने से अपनी शक्ति को प्राप्त होता है और होम पूजन आदि से उस मंत्र के स्वामी देवता तृप्त होते हैं।

एकस्तावत्खड्गः पुनरपि निशि तो यथेष्ट सिद्धि करः
एकस्तावद्योद्धा सन्नद्धोन्यत् किमा पृच्छां ॥ १९ ॥

जिस प्रकार तेज शस्त्र अकेला होने पर भी चलाने से कार्य की सिद्धि करता है तो उसको यदि एक योद्धा भी तैयार होकर लेकर जुट जावे तो क्या पूछना।

एकस्तावद्वन्हिः पुनरपि पवनाहतोन कुर्य्यात् किं
एको मंत्रः पुनरपि जप होम युतोऽस्य किम साध्यं ॥ २० ॥

और जिसप्रकार अकेली ही अग्नि पवन से झपकी जाने पर क्या करती है उसी प्रकार अकेला मंत्र भी जप और होम से युक्त होने उसके लिए पर क्या असाध्य है।

जपकाले नमः शब्दं मंत्र स्यातै प्रयोजयेत्
होम काले पुनः स्वाहा मंत्र स्यायं सदा क्रमः ॥ २१ ॥

जप के समय मंत्र के अंत में नमः शब्द और होम के समय में मंत्र के अंत में स्वाहा शब्द लगाएं यह मंत्र का सदा क्रम है।

चतुरस्रं त्रिकोणं च वृत्तं चेति त्रिधा विधुः
कुंडानि गार्हपत्याद्याः पूज्यंते यत्र पावका ॥ १ ॥

अब उन कुंडों का वर्णन किया जाता है जिनमें गार्हपत्य आदि अग्नियों की पूजा की जाती है वह कुंड तीन प्रकार के होते हैं चौकोर-त्रिकोण और गोल होते हैं।

तेषां हस्तोव गाढे विस्तारे च प्रमामता
पृथक् पृथक् स्मृतास्त्रि स्ति स्त्रिमेखला स्त्रिषु मंत्रिभिः ॥ २ ॥

उनकी लम्बाई चौड़ाई गहराई एक हाथ होनी चाहिये और वह चारों तरफ मेखला के समान तीन कटिनियों से घिरी हुई हो।

आरभ्यतांसामा धायविस्तृतावुस्थितावपि
अंगुलानि प्रमा पंच चत्वारि त्रीणि च क्रमात् ॥ ३ ॥

उनमें से पहले कटिनी की ऊँचाई पाँच अंगुल दूसरी की चार अंगुल और तीसरी की तीन अंगुल है।

कुंडेनां तरितां मंत्री स्तस्याभि मुखमर्पयेत्
वेदीमरलि प्रमितं विस्तारोस्त्रय संयुतां ॥ ४ ॥

मंत्री कुंड से कुछ दूर उसके पास एक अरलि (हाथ) लम्बाई वाली ऊंची वेदी बनावे।

हस्त त्रयेण प्रमित स्तस्था आयाम इष्यते
हस्तपादेन संयुक्तो वेद्याः कुंडस्य चांतरं ॥ ५ ॥

उसकी लम्बाई तीन हाथ और उसकी कुंडों से छ अगुंल अंतर हो।

ततः कुंडं च वेदीं च परितः परिकल्पयेत्
सर्वेषां लोक पालानामिज्यायै दशपीठिका ॥ ६ ॥

तब कुंड और वेदी के चारों तरफ सब लोक पालों के पूजन के लिए दस आसन बनावे। अथवा

मेरू पीठे च नवकुंडानि पठिका अथवा कुर्यात्
शास्त्रोक्त मार्गेण मंत्रिणां मंत्र सिद्धये ॥ ७ ॥

अथवा मंत्री मंत्र सिद्धि से लिए एक मेरू पीठ को शास्त्रोक्त विधि से बनावे।

सकली किया विशुद्धः परिधाय क्षोम मक्षतं नूनं
क्षौम मथ मुत्तरीयं विभ्राणो ब्रह्म सूत्रधरः ॥ ८ ॥

सकली करण से शुद्ध हुवा मंत्री होम की सामग्री रखकर यज्ञोपवीत और (रेशमी या सण) की धोति और दुपट्टा पहलन कर ।

रचयन् पल्यंकासन मुपानंतर वर्त्तमान होमार्थः
होमक्रियां विदध्या दासं सुः कर्म संसिद्धं ॥ ९ ॥

पल्यंकानस से होम कुंड के समीप बैठकर कार्य की सिद्धि को चाहता हुवा होम करें। हवन करने वाला निम्न लिखित मंत्रों को बोलकर हवन कुंड के आगे बैठे।

ॐ ब्रह्मासने अहमुप विशामि स्वाहा।

होम कुंडाग्रे होतु रूप वेशनं होम कुंड के आगे होम करने वाला बैठे वेदी में

सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्राय कर्म दहनायेति।
अमुना मंत्रेण शुधी समर्चयेद् भक्ति युक्त मनाः ॥ १० ॥
तस्या वेद्यां प्रतिष्ठाप्य मंत्री मंत्राधि देवतां
यथाविधि तथां पूजां विदधीत जलादिभिः ॥ ११ ॥

मंत्री फिर उस वेदी में मंत्रके अधिष्ठाता देवता का स्थापन करके फिर उसकी जलचन्दनादि से पूजन करे।

संमृष्टं पंचभि गव्यैस कुंड देशिके क्रमात्
अचयेज्जल गंधाद्यैः पूजामंत्रं समुच्चरन् ॥ १२ ॥

उस कुंड के समीप बैठा हुवा वह मंत्री उस समय पंच गव्य और जल चंदन आदि से मंत्र बोलता हुआ पूजन करे।

समाभ्यां क्षीर सर्पिभ्यां मन्यद्रव्य त्रयं समं
गव्यानि पंच गृह्णीयाद न्योन्य सदृशानिवा ॥ १३ ॥

घी और दूध को तथा तीन द्रव्यों को बराबर मिलाकर पंच गव्य बनावे यह सब एक दूसरे के समान हो।

ॐ ह्रीं कुंड मभ्यर्च्चयामि स्वाहा पूजा मंत्रः

यह कुंड पूजने का मंत्र है।

ॐ ह्रीं स्वस्तये श्री मत्पवित्र तर मग्नीन्द्रं स्थापयामि स्वाहा।

इस मंत्र को जप कर अग्नि स्थापना करे

मंत्रस्यै तस्यै जाप्य द्वन्हि संस्थापये त्तत:
कुंडं सं धुक्षये त्पश्चात् मंत्रेण पिंगलादिना ॥ १४ ॥

फिर निम्न मंत्र से कुंड को झपके पहले मंत्र को जप कर के अग्निदेव के स्थापना करे।

ॐ पिंगल दह दह पच पच सर्व आज्ञापयति स्वाहा। पिंगलादि मंत्र:

फिर निम्नलिखित मंत्र को पढ़कर अग्निकुंड में एक समिधाहवन करने से अग्नि सन्निहित होता है।

ॐ वैश्वनर जाति बेदस इहाव रोहिताश्व सर्वकर्माणि साधयामि स्वाहा
एतेन जाति वेदाधि देवते अग्नि कुंड संस्थेग्नौ
एकां समिधंजुहुयात्तत्राग्नि भंवति सं निहित: ॥ १५ ॥

यह अग्नि देव का मंत्र है अग्नि देव होम कुंड की अग्नि में स्थान ग्रहण करे। एक समिधा लकडी घीमे गीली करके अग्नि कुंड में आदरपूर्वक रखने से अग्नि सन्निहित होती है।

ॐ ह्रीं क्रों सुवर्ण वर्ण सर्व लक्षण संपूर्ण स्वायुध वाहन वधु चिन्ह सपरिवार हे इन्द्र एहि एहि संवोषट् (इत्याह्वाननं)

ॐ ह्रीं क्रों सुवर्ण वर्ण सर्व लक्षण संपूर्ण स्वायुध वाहन वधु चिन्ह सपरिवार हे इन्द्र अत्र तिष्ठ तिष्ट ठ: ठ: स्थापनं॥

ॐ ह्रीं क्रों सुवर्ण वर्ण सर्व लक्षण संपूर्ण स्वायुध वाहन वधु चिन्ह सपरिवार हे इन्द्र अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधापनं ।

ॐ ह्रीं क्रों सुवर्ण वर्ण सर्व लक्षण संपूर्ण स्वायुध वाहन वधु चिन्ह सपरिवार हे इन्द्र जल गंधादिन् गृह्ण गृह्ण स्वाहा॥

ॐ ह्रीं क्रों सुवर्ण वर्ण सर्व लक्षण संपूर्ण स्वायुध वाहन वधु चिन्ह सपरिवार हे इन्द्र स्वस्थानं गच्छ गच्छ ज ज ज ज विसर्जनं ।

तत्त शरीर वर्णाभिधान योगादागतेन दश भाव:
मनुनाऽने न दिगीशान्यजेत पंचोपचारज्ञा: ॥ १६ ॥

दशो दिग्पालों के शरीर के रंग के अनुसार उनके मंत्रो से पंचोपचार पूजन करे।

ॐ ह्रीं क्रों रक्त वर्ण सर्व लक्षण सम्पूर्ण स्वायुध वाहन वधु चिन्ह परिवार हे अग्नि....पूर्ववत्।
ॐ ह्रीं क्रों कृष्ण वर्ण सर्व लक्षण सम्पूर्ण स्वायुध वाहन वधु चिन्ह परिवार हे यम...पूर्ववत्
ॐ ह्रीं क्रों श्याम वर्ण सर्व लक्षण सम्पूर्ण स्वायुध वाहन वधु स चिन्ह परिवार हे नैऋत्य...पूर्ववत्
ॐ ह्रीं क्रों धवल वर्ण सर्व लक्षण सम्पूर्ण स्वायुध वाहन वधु चिन्ह सपरिवार हे वरूण..पूर्ववत् ॥
ॐ ह्रीं क्रों कृष्णा वर्ण सर्व लक्षण सम्पूर्ण स्वायुध वाहन वधु चिन्ह सपरिवार हे वायु...पूर्ववत् ॥
ॐ ह्रीं क्रों पीतवर्ण सर्व लक्षण सम्पूर्ण स्वायुध वाहन वधु चिन्ह सपरिवार हे कुबेर...पूर्ववत्॥
ॐ ह्रीं क्रों धवल वर्ण सर्व लक्षण सम्पूर्ण स्वायुध वाहन वधु चिन्ह सपरिवार हे ईशान...पूर्ववत्॥
ॐ ह्रीं क्रों निशाकर किरण प्रभ सर्व लक्षण सम्पूर्ण स्वायुध वाहन वधु चिन्ह सपरिवार हे धरेणन्द्र...पूर्ववत्
अधरस्यांदिशि इन्द्रेशानयोर्मध्येभागे:
ॐ ह्रीं क्रों धवल वर्ण सर्व लक्षण सम्पूर्ण स्वायुध वाहन वधु चिन्ह सपरिवार हे सोम...पूर्ववत्
ऊर्द्धायांदिशि नैऋत्य वरूणयो मध्ये

इन्द्राय स्वाहा, इन्द्र परिजनाय स्वाहा, इन्द्रानुचराय स्वाहा, इन्द्रमहत्तराय स्वाहा, आग्नेय स्वाहा, अनिलाय स्वाहा, वारूण्य स्वाहा, सोमाय स्वाहा, प्रजापतेय स्वाहा, ॐ स्वाहा, भू स्वाहा, भुव: स्वाहा , स्व स्वाहा, ॐ भूर्भुव: स्वाहा, ॐ इन्द्र देवाय स्वगण परिवृताय इदं अर्घ्यं पाद्यं गद्यं पुष्पं धूपं दीपं फलं बलिं अक्षतं स्वस्तिकं यज्ञ भागं च यजामेह प्रति ग्रह्यतां प्रतिग्रह्यतामिति स्वाहा॥

ॐ ह्रीं क्रों प्रशस्त वर्ण सर्वलक्षण सम्पूर्ण स्वायुध वाहन वधु चिन्ह सपरिवारा सर्वे देवा आगच्छता आगच्छत संवोषट तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः मम सन्निहिता भवत भवत वषट इंद जलादिकमर्चनं गृह्णीध्वं गृह्णीत्वं ॐ भूर्भव स्वः स्वधा स्वाहा ॥ पूर्णाहूति ॥

वार्गंधाक्षत पुष्पाद्यै र्दीपधूप फलै क्रमात्
स्वं स्वं मंत्रं जपेन्मत्रीं सप्तार्च्चिषमथा र्चयेत् ॥ १७ ॥

इसके पश्चात मंत्री क्रम से जल चंदन अक्षत पुष्पनैवेद्य दीप धूप और फल से क्रम से अपने अपने निम्नलिखित मंत्र सहित उपरोक्त देवताओं का और अग्नि का पूजन करे।

ॐ दर्प्पमथनाय नमः दर्भस्य: - इस मंत्र से दर्भों को चढ़ाना
ॐ नीरजष्टेनमः जलस्य: इस मंत्र से जल चढ़ाना
ॐ शीलगधाय नमः गंधस्य इस मंत्र से गंध चढ़ाना
ॐ अक्षता नमः अक्षतस्य इस मंत्र से अक्षत चढ़ाना
ॐ विमलाय नमः पुष्पस्य इस मंत्र से पुष्प चढ़ाना
ॐ परम सिद्धाय नमः चरौं इस मंत्र से नैवेद्य चढ़ाना
ॐ ज्ञानोद्योताय्नमः दीपस्य इस मंत्र से दीपक से आरती उतारे
ॐ श्रुत धूपाय नमः धूपस्य इस मंत्र से अग्नि में धूप रखे।
ॐ अभिष्ट फलप्रदाय नमः फलस्य इस मंत्र से फल चढ़ावे।

सद्गार्हपत्यश्चतुरस्र कुंडेन्यस्ते महीनाहवनीय वह्निः
वृत्ते पुनर्द्दक्षिण कृष्ण वर्त्माप्रपूज्यान्मंत्रिभि रेवमेव ॥ १८ ॥

चौकोर कुंड में नित्य हवन करने योग्य गार्हपत्य अग्नि की स्थापना करे और त्रिकोण कुंड में आहवनीय अग्नि की स्थापना करे और गोलकुंड में केवली में दक्षिण अग्नि स्थापना करे।

अभ्यर्च्चितेनेन यथा कृशानौ समीहितं होम विधिं करोतु
स सद्य एवाखिल वांछितार्थं संसिद्धिमापादयितुं समर्थः ॥ १९ ॥

इस प्रकार अग्नि का पूजन करने के पश्चात जो नियम पूर्वक होम की विधि को करता है वह शीघ्र ही सब इच्छित पदार्थो की सिद्धि को प्राप्त होता है।

तस्मिन् प्रथमं त्रिमधुर युक्तामेकां समिधं स्वहस्तेन
मंत्री जुहुयादाज्यैश्चा हुतिमेकां स्तवेन ततः ॥ २० ॥

फिर मंत्री उस कुंड में एक समिधा त्रिमधुर (दूध घी गुड़) की एक घी के साथ मंत्र पढ़ता हुआ अपने खुद हाथ से डाले।

व्या मिश्रित शेष द्रव्याहुति में कांततः सृचा कुर्यात्
प्रतिं समिध मेव विधिः समिधस्त्वष्टोत्तर शतं तस्य ॥ २१ ॥

इसके पश्चात सब हवन के द्रव्यों को मिलावे और अपने पास १०८ समिधाये रख लेवे क्योंकि यह द्रव्य प्रत्येक समिधा के साथ डालना होगा।

अविकल्यासामग्ह्याध्येनैकः साधु साधितो मंत्रः
तस्यात्पयापिच तया परे पिमंत्राः प्रसिद्धंति ॥ २२ ॥

जो मंत्री एक मंत्र को पूर्ण विधि पूर्वक अच्छी तरह सिद्ध कर लेता है। उसको थोड़ी सामग्री से ही दूसरे मंत्र भी सिद्ध हो जाते हैं।

मारणा कृष्टि वश्येषु त्र्यस्तं कुंडं प्रशस्यते
विद्वेषोच्चाटयो वृतमन्येषु चतुरश्रकं ॥ २३ ॥

मारण आकर्षण और वश्य कर्मों में त्रिकोण कुंड प्रशंसनीय होता है। विद्वेषण और उच्चाटन में गोल कुंड और शेष शांतिक और स्तंभन कर्मों में चौकोर कुंड प्रशंसनीय कहा है।

पलाशस्यसमिन्मुख्या स्याद मुख्यापय स्तरोः
विधान मेतत् संग्राह्यं विशेष वचनादते ॥ २४ ॥

हवन के लिए मुख्य रूप से पलाश की और उसके अभाव में दूध वाले वृक्षों की समिधा लेना चाहिये यह सामान्य नियम है। विशेष विधान में उसके कहे अनुसार ही लेना।

वध विद्वेषो च्चाटे ष्वष्टौ पुष्टौ मतानव शांतौ
आकृष्टि वशीकृत्यो र्द्वादश समिधं प्रमांगुलयः ॥ २५ ॥

मारण विद्वेषण और उच्चाटन में आठ अंगुल की तथा पौष्टिक और शांति कर्म में नौ अंगुल की, आकर्षण वश्य कर्म में बारह अंगुल की समिधायें लेनी चाहिये।

यांईधनानि पूतानि श्रुष्काण क्षीर भु रूहां
भवंति तानि काष्ठानि सर्वस्मिन होम कर्मणि ॥ २६ ॥

दूध वाले वृक्षों का जो काष्ट पवित्र और सूखा हो वह सभी होम कर्मों में लिया जा सकता है।

सत्व गोंपुच्छ समाग्रास्यादि तरो नाशिका सदृशग्रः
उच्छिति रिक्तो हस्त स्थौल्पंतुखंडगुलानि तयोः ॥ २७ ॥

यह गाय की पूँछ की तरह अथवा नाशिका तरह हो लकडी हो तथा होम करने वाला खाली हाथ या कम उंगुली वाला खंड उगुंली वाला न हो ।

स्रुक स्रुवौ चांदनौ मुख्यो पैपलौदल संभवे
तद्भावे पलाशस्य दलं वापिष्पलस्य वा ॥ २८ ॥

स्रुक स्रुवा चंदन का श्रेष्ठ होता है उसके अभाव में पीपल की लकडी का हो समिधायें भी सफेद य लाल चंदन की मुख्य होती हैं, उसके मिलने पर शमी की और लकडी के न मिलने पर ढाक या पीपल के पत्तों से ही होम करें।

प्रस्थः क्षीरस्य मानं स्याद् घृतस्य चतथा भवेत्
होम द्रव्य विमिश्रस्य मानं प्रस्थ द्वयं मतं ॥ २९ ॥

होम करने में एक सेर घृत और अष्टांग धूप आदि से मिला हुवा द्रव्य दो सेर लेना चाहिये।

शशि शद के लवंग दुर्वाहोमेन शांतिकं पुष्टिं
करवीर पुष्प हवनात् कुर्यात् स्त्रीणां वशीकरणं ॥ ३० ॥

कृष्ण अष्टमी से अमावस तक लौंग और दूब के होम से शांति और पौष्टिक कर्मो को तथा कनेर के पुष्पों के हवन से स्त्रीयों का वशीकरण होता है।

महिषा रव्याब्ज होमात् प्रतिदिवसं भवति पुर जन क्षोभः
कमुक फल पत्र हवना द्राजानो वश्य मायांति ॥ ३१ ॥

महिषा गूगल कमल गट्टे के होम से प्रतिदिन नगर निवासियों को क्षोभ होता रहता है। सुपारी के फल तथा नागवल्ली पत्ता के हवन से राजा लोग वश में हो जाते हैं।

मल्लि प्रसून होमात् स घृताद् वश्यं भवे न्नियोगी जनः
तिलधान्यानां होमैराज्ययुतै र्भवति द्रांन्य धन वृद्धिः ॥ ३२ ॥

मल्लिका (चमेली) के फूलों को घृत सहित होम करने से योगि लोग वश में होते हैं, तिल धान्य और घी के होम से धन धान्य की वृद्धि होती है।

कं गु प्रियंगु तिलातसिशालि कुलत्थाढकी शण श्यामाका:
यव माष द्वय राजि वैष्ण गोधूम शिंवकौद्रवमुद्रा:॥ ३३ ॥

कंगु (कांगनी) प्रियंगु (सुपारी) तिल आलसी, शालि (चावल) कुलत्थी आठ की (अरहर) शण के बीच श्यामक (सामाधन) जौं उड़द ,मूंग सफेद सरसों पीली सरसों (वैणव) बांस के चावल (गेहूं) शिंबे) राजाशिंबो) कौद्रव (कोदों) और मूंग।

अष्टा दशधान्यानीत्थे एत्तद्वेदिभि: प्रभाष्यते
क्षीरं घृतं गुडं च प्रोच्यंते त्रिमधुराणिति ॥ ३४ ॥

यह अठारह तरह के धान्य कहलाते हैं और दूध, घी, और गुड़ त्रिमधुर कहलाता है।

श्री राज्याप्ति: कर्पूर करवीर कुसुम् होमात्
स्यात् भूमिकंदबक होमान्नाग कुमारी भवेद्वश्या ॥ ३५ ॥

नारियल, कपूर, करवीर, पुष्प, भूमि, पुष्प और कंदब पुष्प के होम से नाग कुमारी वश में होती है।

घृत मिश्र चूतफल निकर होमेन भवति खेचरी
वश्या वट यक्षिणी च होमाद भवति वशा ब्रह्म पुष्पाणां ॥ ३६ ॥

आम तो घी में मिलाकर होम करने से विद्याधरी वश में होती है और ब्रह्म पुष्पो (पलाश के फूलों) के होम से वट यक्षिणी वश में होती है।

गृह धूम निंब राजी लवणान्वित काक पक्षकृत होमै:
एकोदर जातानामपि भवति परस्पर द्वेषं ॥ ३७ ॥

गृह धूम नीम के पुष्प राई नमक और कौवे की पांख के होम से एक पेट से पैदा हुवे सगे भाइयों में भी विरोध हो जाता है।

प्रेतवन शाल्य मिश्रित विभितकांगारि सदन धूमानां
होमेन भवति मरणं सप्ताहाद्वैरि लोकस्य ॥ ३८ ॥

प्रेतवन (श्मशान) के चावलों की विभितक (बहेडा) के अंगारों में होम करने से बैरी एक सप्ताह मे मरण को प्राप्त होता है।

अशुभै र्होमं कुर्यात् कुद्धमणा, क्षुद्रकर्म सर्वमपि
कर्म शुभं विदधीत: प्रसन्न चित: शुभैर्द्रव्यै: ॥ ३९ ॥

मारण आदि अशुभ कार्यों में क्रोध सहित होकर अशुभ द्रव्यों से होम करें। और शांति आदि शुभ कार्यों में उत्तम द्रव्यों से प्रसन्न चित्त होकर होम करे।

मारणोच्चाट विद्वेषः स्तंभनान्य शुभानिः च
क्षुद्राणि च वदंत्याशु शुभान्यन्यानि कर्म सुः ॥ ४० ॥

मारण उच्चाटन विद्वेषण और स्तंभन कर्मो के अशुभ और क्षुद्र कर्म कहा जाता है। तथा कर्मों को शुभ कर्म कहा है।

इति होम विधिः प्रोक्तः सकर्तव्यो मनीषिभिः

इसप्रकार यह ऊपर कही हुई होम की विधि मनीषि (इच्छुक) पुरूषों को करनी चाहिये।

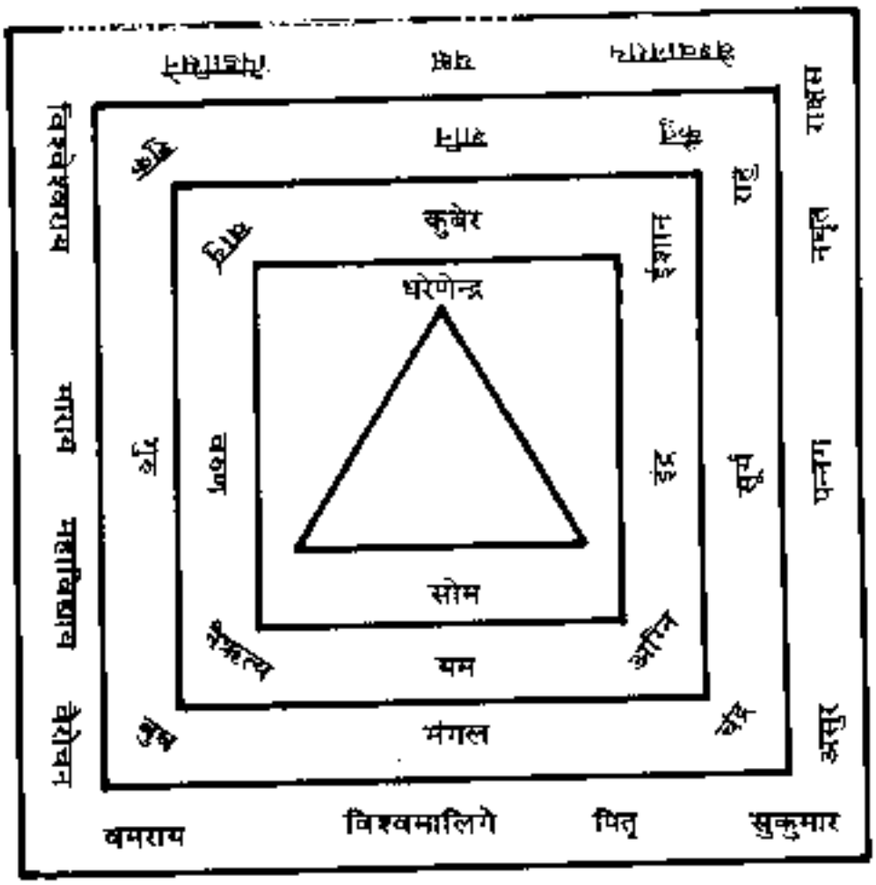

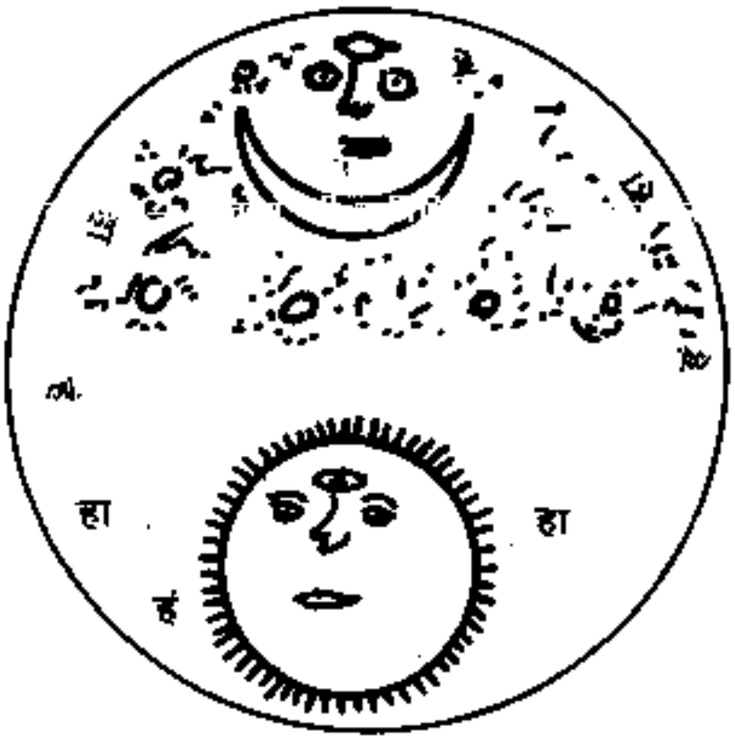

दिक्काल मुद्रासन पल्लवानांभेदं परिज्ञाय जपेत समंत्री
न चान्यथा सिद्धयति तस्यमंत्रः कुर्वन् सदा तिष्टतु जा प होमं ॥ १ ॥

दिशा काल मुद्रा आसन और पल्लवों के भेदों को जानकर ही मंत्री को मंत्र का जाप करना चाहिये अन्यथा निरन्तर जप और होम करने से भी उसका मंत्र सिद्ध नहीं होता।

स्तंभं विद्वेषमात्कृष्टिं पुष्टिं शांति प्रचालनं
वश्यं वधं च कुर्यात् पूर्वाभिमुखः क्रमात् ॥ २ ॥

मंत्र में आठ प्रकार के कार्य होते हैं स्तंभन विद्वेषण आकर्षण पौष्टिक शांति प्रचालन अर्थात् उच्चाटन वश्य और मारण कर्म इनकी सिद्धि में क्रम से पूर्व आदि दिशाओं में मुख करके बैठे।

उच्चाटं शांतिकंपुष्टिं वश्यमाकृष्टिम प्रियं
ऋतुषु प्रावृडाटयेषु षटसु कुर्वीत कालयित् ॥ ३ ॥

काल को जानने वाला उच्चाटन शांतिक पौष्टिक वश्य और आकर्षण के अप्रिय कर्मों को प्रविट आदि ऋतुओं में करे।

वश्य विद्वेषणोच्चाटं पूर्वमध्या पराह्निके
संध्यार्द्ध रात्रि रात्र्यंते वध शांतिक पौष्टिकं ॥ ४ ॥

वश्य कर्म को प्रातःकाल, विद्वेषण, मध्यकाल, उच्चाटन को अपराह्न काल, वध को संध्या काल, शांति को मध्य रात्रि और पौष्टिक कर्म को रात्रि के अंत में करे।

कृष्णाष्टम्यांमथ तद्भूत तिथौ वा कुजांशकाभ्युदये
दुष्टग्रह शुभग्रह लग्ने प्रविशे जटे ॥ ५ ॥

कृष्णा अष्टमी अथवा उसी भूत की तिथि अथवा मंगल के अंशो के निकलने पर दुष्टग्रह के लग्न में दुष्ट कार्य को और शुभ ग्रह के लग्न में शुभ कार्य को करे।

पितृपौस्न वरणविधि हरि गुरूत्तरा त्रय कर त्रयादि तपः तारा:
शांतिक पौष्टिक कर्मणि सिद्धि प्रदा: कथिता: ॥ ६ ॥

शांतिक और पौष्टिक कर्म में विशेष करके कृष्ण पक्ष का पुष्य नक्षत्र और सामान्य रूप से कृष्ण पक्ष सिंह लग्न (राशि) वृहस्पति वार उत्तरा, फाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा और उत्तरा भाद्रपद नक्षत्र तथा वव वासव और कोलवकर्ण सिद्धि प्रद कहे हैं। ☛

रिक्ताष्टमी पर्व सु कृष्ण पक्षे कुजार्कि भास्वद ग्रह वासरश्च
शांतिश्च पुष्टि श्च विधि: फलाय नस्यादिति ज्योतिष विद्भिरुक्तं ॥ ७ ॥

कृष्ण पद की रिक्ता चोथ, नवमी, चर्तुदशी अथवा अष्टमी तिथि मंगल, शनि अथवा सूर्यग्रह और दिन का समय शांति और पौष्टिक कर्म के लिये विद्वानों ने कहा है।

अष्टम राशि: कुलिकौ वैनाशिक तारकास्थ चिरयोग:
अंगारस्य तु वारो भवत्परं क्षुद्रकर्म संसिद्धयै ॥ ८ ॥

क्षुद्र कर्म की सिद्धि के लिये वृश्चिक राशि अश्विणी अश्लेषा मघा ज्येष्टा मूल और रेवती यह वैनाशिक नक्षत्र विष्कुंभ सोभाग्य सुकर्मागंड ध्रुव वज्र वर्याण सिद्ध द्वितीय सिद्ध शुक्ल और वैधृति यह चिर योग तथा मंगल वार को लाभप्रद बतलाया है।

साध्य सानु गुणेषु ग्रहेषु सिद्धयति तरां
शुभं कर्म अननु गुणे श्चशुभानिक्षणेन सिद्धंयति कर्माणि ॥ ९ ॥

शुभ कर्म को उसके अनुकूल शुभ गुणवाले ग्रहों में अशुभ कर्म को उसके अनुकूल अशुभ गुणवाले ग्रहों में सिद्ध करने में तुरंत ही सफलता मिलती है।

अंकुश सरोज बोध प्रवाल शंख वज्र मुद्राः स्युः
आकृष्टि वश्य शांतिक विद्वेषण रोध वध समये ॥ १० ॥

आकर्षण में अंकुश, वशीकरण में सरोज, शांति पौष्टिक में बोध, विद्वेषण तथा उच्चाटन में प्रवाल स्तंभन में शंख और मारण में वज्र मुद्रा होती है।

दंड स्वस्तिक पंकज कुर्कुट कुलिशोधभद्र पीठानि
आसन विधौ प्रयोज्यान्युक्ते ष्वाकर्षणादिषु ॥ ११ ॥

फिर उन आकर्षण आदि में क्रम से दंड स्वस्तिक पंकज कुर्कुट वज्र और भद्र आसनों का प्रयोग करना चाहिये।

वषट वश्ये फट् उच्चाटे हुं द्वेषे पौष्टिके स्वधा
वौषट आकर्षणे स्वाहा शांतौ घे घे थ मारणे ॥ १२ ॥

फिर वशीकरण में वषट् पल्लव, उच्चाटन में फट, विद्वेषण में हुं, पौष्टिक में स्वधा, आकर्षण में वौषट, शांति में स्वाहा और मारण में घे घे पल्लव का प्रयोग करें।

आकृष्टौ संवश्ये शांतौद्वेषेचरोधने वधेक्रमशः
उदयार्क रक्त शशधर धूम्र हरिद्रासिता वर्णाः ॥ १३ ॥

फिर आकर्षण में उदय होते हुए सूर्य के समान वर्ण, वश्य में लाल, शांति में श्वेत, विद्वेषण में धूम्र, वर्ण, स्तंभन में हल्दी के समान पीला और मारण में कृष्ण वर्ण का उपयोग करें।

पीता रूण सितैः पुष्पै स्तंभनाकृष्टि मारणे
शांति पौष्टिकयोः श्वेतैर्द्धूम्र वर्णैः प्रचालने ॥ १४ ॥

फिर स्तंभन में पीत वर्ण पुष्प, आकर्षण में रक्त, मारण में कृष्ण, शांति में श्वेत, पौष्टिक में श्वेतवर्ण के पुष्पों का प्रयोग करें।

लोहित वर्णैभि वश्ये विद्वेषेऽजन सन्निभैः
जप होमार्चनान्य त्र तत्त कुर्याणि मंत्र वित् ॥ १५ ॥

मंत्र शास्त्र के ज्ञाता वशीकरण के जप होम और पूजन में लाल वर्ण के सब द्रव्य लेवे। विद्वेषण में अन्जन के समान वर्ण वाले द्रव्यों का प्रयोग करे। जप होम और पूजन के कर्म मंत्र की तरह द्रव्य काम में लावे।

कुंभकं स्तंभननाद्येषु रेचकं चालनादिषु कपूरकं
चांगनाकृष्टि प्रमुखे च प्रयोजयेत ॥ १६ ॥

स्तंभन आदि कर्मों में कुभंक, प्राणायाम चालन आदि में रेचक, और स्त्री आकर्षण आदि में पूरक प्राणायाम का प्रयोग करें।

दीपन पल्लव संपुट रोध ग्रंथना विदर्भनं कुर्यात्
शांति द्वेष वशीकृति वधन स्त्र्या कृष्टि स्तंभनं कुर्यात् ॥ १७ ॥

शांति पौष्टिक में दीपन, विद्वेषण, उच्चाटन में पल्लव, वश्य में संपुट, मारण में रोध, स्त्र्याकर्षण में ग्रन्थ तथा स्तभंन में विदर्भ न की रीति से जप करे।

आदौ नाम निवेशो दीपनमंते च पल्लवो ज्ञेयः
तन्मध्य गतं संपुट मथादि मध्यांत गोरोधः ॥ १८ ॥
ग्रंथितं वर्णांतरीतं द्व्यक्षर मध्यस्थितो विदर्भः स्यात्
षट्कर्मकरण मेत त ज्ञात्वानुष्ठानमा चरेत्मंत्री ॥ १९ ॥

नाम को मंत्र के आदि में रखना, दीपन नाम को मंत्र के अंत में रखना, पल्लव मंत्र के बीच में रखना संपुट और आदि मध्य तथा अंत में रखना रोध कहलाता है।

नाम के एक एक अक्षर के पश्चात मंत्र रखने को ग्रन्थ तथा नाम के दो दो अक्षर अक्षर के पश्चात मंत्र रखने को विदर्भन कहते हैं। यह छहों कर्मों को करने की क्रिया है मंत्री इसको जानकर ही अनुष्ठान करें।

देवदत्त ह्रीं दीपनं	शांति व पौष्टिक कर्म
ह्रीं देवदत्त पल्लव	विद्वेषण उच्चाटन कर्म
ह्रीं देवदत्त ह्रीं संपुट	वश्य कर्म
दे ह्रीं व ह्रीं दह्रीं दह्रीं त ग्रन्थन	स्त्री आकर्षण कर्म
ह्रीं तह्रीं दह्रीं वह्रींद विदर्भन	स्तंभन कर्म

अमुकपदोप पदेषु मंत्रेश्वोपक्रमो न संग्राह्यः
अभिधानं तदूंप विन्यस्योक्तत्यद स्थाने ॥ १९ ॥

अमुक अमुक पद उपपदों में इस उपरोक्त विधि का प्रयोग न करे यह जान कर ही उस मंत्र का उस स्थान में प्रयोग करें।

स्फटिक प्रवाल मुक्ता चामीकर पुत्रजीव कृत मणिभिः
अष्टोत्तर शत जाप्यं शांत्याद्यर्थं करोतु बुधः ॥ २० ॥

शांति कर्म में स्फटिक मणि से वश्य तथा आकर्षण में प्रवास (मूंगे) से, पौष्टिक में मुक्ता से, स्तंभन से सुवर्णकी माला से, मारण विद्वेषण तथा उच्चाटन कर्म में पुत्र जीव (जीया पोता) कृत मणी की माला से पंडित १०८ जप करें।

मोक्षाभिचार शांतिक वश्या कर्षेषु योजयो क्रमशः
अगुंष्ठाद्यं गुलिका मणियोगुष्टेन चाल्यंते ॥ २१ ॥

मोक्ष की इच्छा में अंगुठे, से मारण विद्वेषण तथा उच्चाटन में तर्जनी से, शांति तथा पौष्टिक कर्म में मध्यम, वश्य कर्म में अनामिका और आकर्षण तथा स्तंभन कर्म में कनिष्ठा उंगुली से जप करे मणिया अंगुठे से ही चलाई जाती है।

कुर्याद् वाम हस्तेन वश्या कर्षण मोहनं
दक्षिणेनाखिलं होमं शिष्टाः सर्वे क्रिया अपि ॥ २२ ॥

बायें हाथ से वशीकरण, आकर्षण और मोहन कर्म, कर्म को करे, शेष क्रियायें और सभी होम दाहिने हाथ से ही किये जाते हैं।

वाम वायौ प्रवृत्ति स्याद्वश्यं शकादि साधनं,
दक्षिणे कृष्टि नाशादिरुभयो मोक्षि साधनं ॥ २३ ॥

बायें स्वर के चलने पर वशीकरण और इन्द्र आदि (शत्रु आदि) का साधन करना चाहिये दाहिने स्वर के चलने पर स्तंभन और मारण आदि धर्म करने चाहिये तथा बायें और दाहिने दोनों स्वरों के चलते वक्त मोक्ष का साधन करना चाहिये।

वसंतं ग्रीष्मं प्रावृट शिशिरं शरदं तथा
हेमंतश्चेति विज्ञेयाऋतवोत्रदिनेदिन ॥ २४ ॥

वसंत ग्रीष्म प्रावृत (वर्षा) शिशिर शरद और हेमंत ऋतुयें प्रतिदिन आती रहती है।

वसंत विद्धि पूर्वान्हं ग्रीष्मं मध्यादिनं विदुः
प्रावृत अपरान्हं प्राहुः संध्यां शिशिर मादिशेत् ॥ २५ ॥

पूर्वान्ह को वसंत, मध्यान्ह को ग्रीष्म, अपरान्ह प्रावृट या वर्षा और संध्या को शिशिर कहते हैं। (वर्षाऋतु अषाढ़ शुक्ल १ से भादौ शुदि अमावस्या तक जाने)

मध्य रात्रं शरत्कालं प्रत्यूषं च हिमं विदुः
घटिका दशभुंजंति प्रत्येकं ते दिनोदयात् ॥ २६ ॥

मध्यरात्री को शरद ऋतु और प्रातःकाल को हिम या हेमन्तऋतु कहते हैं। यह सभी ऋतुएं दिन के उदय होने से दस दस घड़ी तक रहती है।

आकर्षणं वसंतेस्या ग्रीष्मे विद्वेषणं कुरू
प्रावृटयुच्चाटनं कर्म शिशिरे मारणं तथा ॥ २७ ॥

शरत्सु शांतिकं कुर्याद्हेमंते पौष्टिकं क्रिया
ज्ञात्वा स्वकाल बेलायां सर्वकर्माणि कारयेत् ॥ २८ ॥

आकर्षण को वसंत ऋतु में, विद्वेषण ग्रीष्म में, उच्चाटन वर्षा में, और मारण कर्म शिशिर ऋतु में करे।

शांति कर्म को शरद ऋतु में और पौष्टिक कर्म को हेमन्त ऋतु में करे। सब कर्मो का समय जानकर अपने अपने ही काल में करे।

अथ मंडलोद्धारः

अन्योन्य वज्र विद्धं पीतं चतुर स्रमवनि बीजयुतं
कोणेषु रातं युक्तं भूमंडल संज्ञकं ज्ञेयं ॥ २९ ॥

पीतवर्ण और चौकोर दो वज्रों से बिंधा हुवा चारों कोणों में लं बीज सहित पृथ्वी मंडल कहलाता है।

नीरज भूषित वदनं कलशाकारं चतुर्वकारंयुतं
श्वेतजल बीजं युतं मंडल माहुराचार्याः ॥ ३० ॥

कमल से शोभित मुख वाला कलश के आकार वाला और चार वकार युक्त श्वेत वर्णवाला तथा मध्य में प (जलबीज) लिये हुवे यंत्र को आचार्यो ने जल मंडल कहा है।

मुख मूल वपोपेतं पत्राकितः सितः
पंच वर्णात्तद्दिक्कोणः कलशस्तोय मंडलं ॥ ३० ॥

मुख की जड़ में वं और प से युक्त कमल के चिन्ह सहित पं और वं वर्णों से दिशाओं में भरा हुवा कलशा कार श्वेत यंत्र को जल मंडल कहा है।

अर्द्धेनु मंडलाकारं प्राहु वरुणमंडलं
केचित्त त्रापिनान्यस्य भेदो भवति लक्षणाः ॥ ३१ ॥

अर्द्धेन्दु चन्द्राकार यंत्र को वरुण मंडल कहते हैं। किन्तु उसमें कोई ऐसा चिन्ह नहीं होता जिसमें उसका अन्य यंत्रों से भेद किया जा सके।

त्रि स्वस्तिकं त्रिकोणं यांत्तं कोणेषु वह्नि बीज युतं
ज्वाल युत्त मरुणामं तेन मंडल माहुराग्नेयां ॥ ३२ ॥

तीन स्वस्तिक वाले त्रिकोण कोणों में अग्नि बीज रं युक्त ज्वाला सहित अरुणज्योति वाले यंत्र को अग्निमंडल कहते हैं।

बहु विंदु वक्रं रेखं वृत्ताकारं चतुर्यकार युतं
कृष्णं मारुत बीजं वायव्यं मंडलं प्राहुः ॥ ३३ ॥

बहुत से बिन्दु और टेढ़ी रेखाओं वाले गोलाकार चार मारुत बीज यः सहित कृष्ण पत्र को वायुमंडल कहते हैं।

चत्वारि मंडलानि च लवरय वर्णैः क्रमेण युक्तानि
पृथ्वी सलिल हुताशन मारुत बीजैः समेतानि ॥ ३४ ॥

क्षिं पं रं यं बीज सहित ल व र य से पृथ्वी जल अग्नि वायु से चारो मंडल बने हैं।

विन्दुं पंचक संयुक्त मुत्तमाकार मंडलं
दिग विदिगात हाकार हंकारं पंच वर्णकं ॥ ३५ ॥

इस प्रकार ल सहित पृथ्वी मंडल व सहित जलमंडल रसहित अग्निमंडल और य सहित वायुमंडल को बनावे। पांच विन्दु सहित उत्तम आकार वाला दिशा तथा विदिशाओं में हा बीज वाला हंकार रूप पंचवर्ण आकाश मंडल होता है।

मंडलानां यदा मध्ये नामादि न्यास उच्यते
तदा मध्य स्थितं बीजं महादिक्षुनिवेशयेत ॥ ३६ ॥

जब इन मंडलों के बीच में नाम आदि का रखना बतलाया जावे तो मध्य के बीज को महादिशाओं में रखें।

मंडल लक्षण मेतन्निरूपितं प्रथमेव सर्वेषां
एतत्सं बंधतया यंत्राणां वक्ष्य माणेन ॥ ३७ ॥

पीछे मंडलों के वर्णन में लिखा गया था कि इनके यंत्रो का वर्णन आगे लिखा जावेगा अस्तु यह वर्णन यहाँ कर दिया गया।

जप में दिशा- कालादि का विचार -

१. अष्ट कर्मों के जप में दिशादि का चार्ट -

नं.	कर्म	स्तंभन	विद्वेषण	आकर्षण	पौष्टिक	शांतिक	उच्चाटन	वश्य	मारण
१.	दिशा	पूर्व	आग्नेय	दक्षिण	नैऋत्य	पश्चिम	वायव्य	उत्तर	ईशान
२.	समय	पूर्वाह्न	मध्यान्ह	पूर्वाह्न	अंतरात्रि	मध्यरात्रि	अपराह्न	पूर्वान्ह	संध्या
३.	मुद्रा	गदा	मूशल	पाश	कमल	-	वज्र	पाश	खड्ग
४.	आसन	विकटासन	कुर्कटासन	दंडाशन	पद्मासन	पद्मासन	वज्रासन	स्वस्तिकासन	भद्रासन
५.	पल्लव	ठः ठः	हुं हुं	वौषट्	स्वधा	स्वाहा	वषट्	नमः	त्रे मे
६.	वस्त्र	पीत	-	-	-	-	-	-	-
७	पुष्प	पीत	-	-	-	-	-	-	-
८.	वर्ण	पीत	धूम्र	बाल रवि	श्वेत	श्वेत	गूढ़ धूम्र	रक्त	कृष्ण
९.	विन्यास	आक्रांत गर्भित	पाद्यांत रोधन	ग्रंथित	संपुट सर्वतो मुख विदर्भ ग्रसित	श्वेत	समस्त आद्यंत गर्भित विदर्भित	मन्थन आद्यन्त गर्भित	सस्त गर्भित पल्लव
१०.	प्राणायाम	कुंभक	रेचक	पूरक	-	-	-		रेचक
११.	माला	नीम के फल	रीठे के फल	कमल केबीज	-	-	-	कमल के बीज	-
१२.	मणियें पुत्रजीवि	स्वर्ण	पुत्रजीवि	मूंगा	मोती	स्फटिक	पुत्रजीवि	मूँगा	
१३.	अंगुली	कनिष्ठा अंगुष्ठा	तर्जनी	कनिष्ठा	मध्यमा		तर्जनी	अनामिका	तर्जनी
१४.	हाथ	दक्षिण	-	वाम	-	-	दक्षिण	वाम	दक्षिण
१५.	स्वर	दक्षिण	-	वाम	-	-	दक्षिण	वाम	दक्षिण
१६.	ऋतु	वसंत	ग्रीष्म	वसंत	हेमन्त	शरद्	वर्षा	वसन्त	शिशिर
१७.	मण्डल	पृथ्वी	वायु	अग्नि	जल	जल	वायु	जल	अग्नि
१८.	योग	चर	चर	स्थिर	-		चर	स्थिर	चर
१९.	करण				वव, बालव कौलव				
२०.	दानों की संख्या	१५	१५	१०८	१०८	१०८	१५	१०८	१५
२१.	दिवस	रवि,शनि मंगल	शुक्र, शनि	-	रवि, शनि मंगल	बुध, शनि,	शनि	गुरू,सोम,	रवि शनि, मंगल
२२.	पक्ष	कृष्ण	-	-	कृष्ण	शुक्ल	कृष्ण	शुक्ल	कृष्ण
२३.	तिथि	अष्टमी,	८,९,		४,८	२,३	८, १४	४,६	

	पूर्णा, अमावस्या	१०, ११		९, १४	५, ७		९, १३	
२४.	नक्षत्र अश्विनी, मघा-ज्येष्ठा मूला, रेवती	वैवाहिक	पुष्य,उत्तरा त्रय		-	वैनाशिक	पुष्य,उत्तरा	वैनाशिक
२५.	लग्न वृश्चिक	-	-	सिंह	-	वृश्चिक	-	वृश्चिक
२६.	तत्वोदय पृथ्वी	आकाश	अग्नि	जल	जल	वायु	अग्नि	-
२७.	अक्षर पृथ्वीबीज	आकाशबीज	जलबीज	चन्द्रबीज	-	वायुबीज	जलबीज	अग्निबीज
	ल	ह	व	स	स	य	व	र

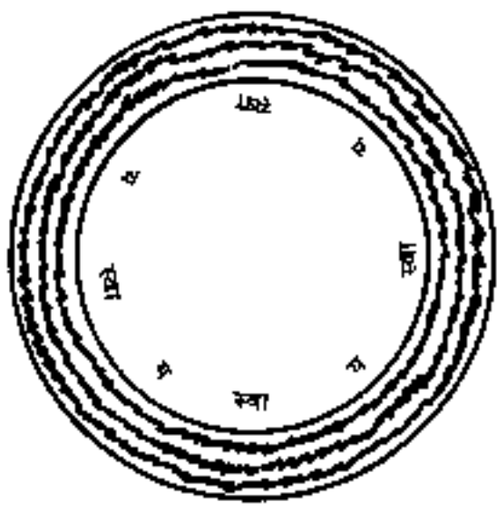

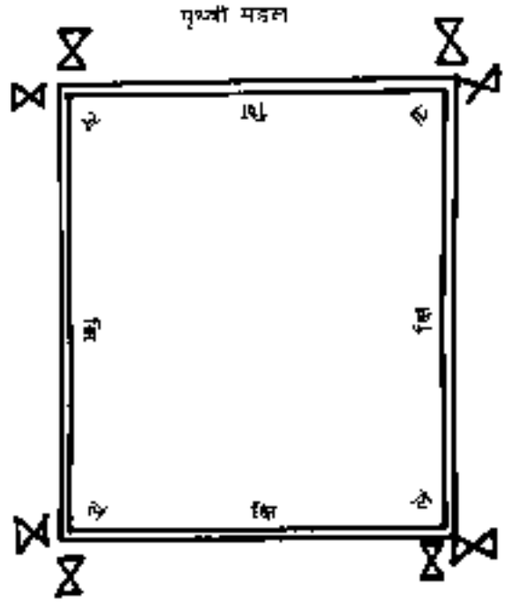

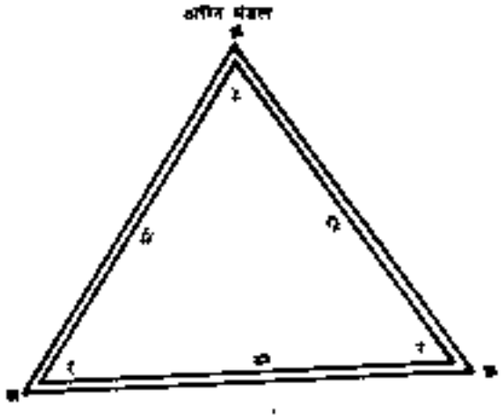

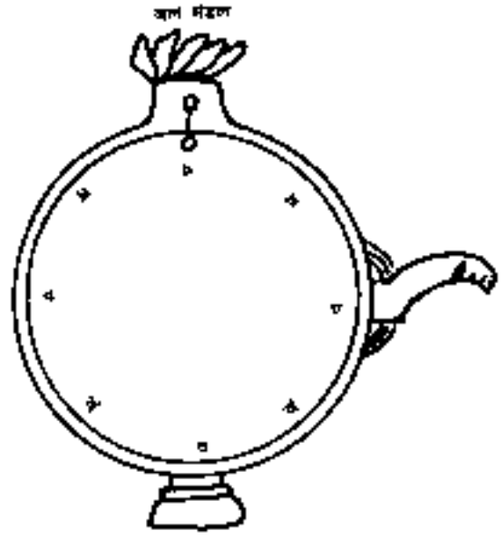

मन्दिर मंडल

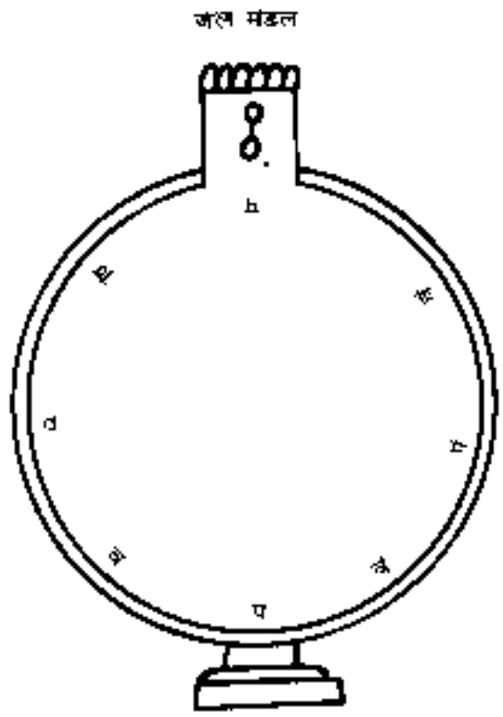
जल मंडल

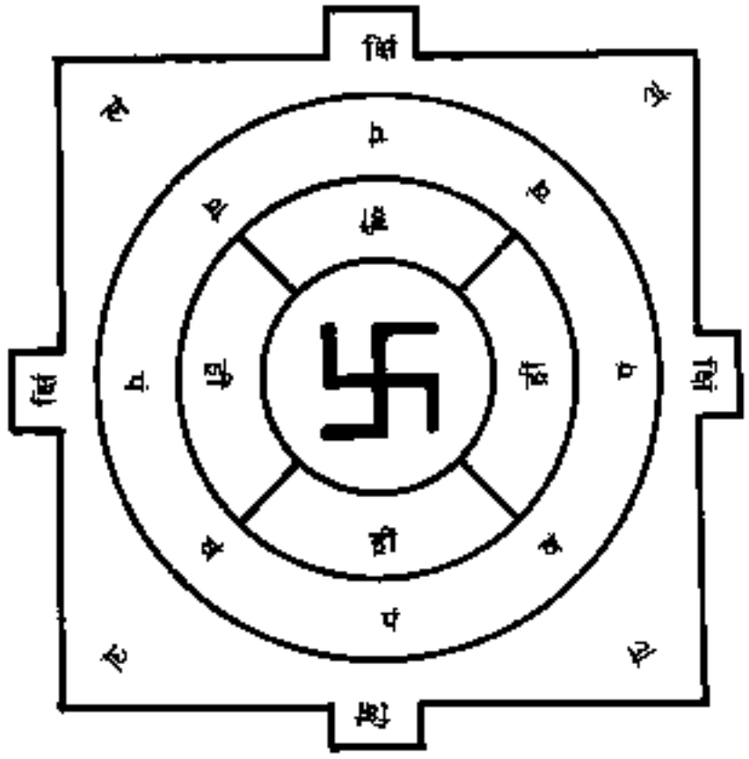

अनुक्तमपि सर्वेषां यंत्राणां क्षितिमंडलं
बाह्यदेशे विलेख्यं स्यान्नरेन्द्रैर्यंत्र कोविदै : ॥ ३८ ॥

यंत्र शास्त्र के पंडित बिना कहे भी यह सब यंत्रों के बाहर पृथ्वी मंडल बनावे ।

एषां भूमंडलादीनाविद्या प्रायः प्रयोगवित्
स्थभेन च तथा शांतौरामाकृष्टौ प्रचालने ॥ ३९ ॥

स्तंभन कर्म में पृथ्वी मंडल शांति पौष्टिक और वश्य कर्म में जल मंडल स्त्री आकर्षण में अग्नि मंडल तथा मारण विद्वेषण और उच्चाटन में वायु मंडल बनावे यह इन मंडलों का प्रयोग है।

चतुर्भिर्मंडलै कुर्यात्: पृथ्वी तोयाग्नि मारुतैः
क्ष्वेडस्य स्तंभन नाशस्तोभ संक्रमणानि च ॥ ४० ॥

किसी के स्तंभन मारण स्तोभ और संक्रमण रूप मिश्र कर्म में उपरोक्त चारों ही मंडलों का प्रयोग करे अब दूसरे प्रकार से छहों कर्मों का कथन किया जाता है।

प्रकारांतरेणापि षट्कर्म कथनं

स्त्री पुं नपुसंकत्वेन त्रिधा स्युर्मंत्र जातयः
श्री स्त्री मंत्रा वह्नि जायांता (स्वाहांता) नमोतांश्च नपुंसका ॥ १ ॥

मंत्र के फिर भी तीन भेद होते हैं स्त्री पुरुष नपुंसक इनमें से श्री तथा स्वाहा अंत वाले मंत्र स्त्री और नमः अंत वाले नपुंसक होते हैं।

शेषाः पुमांस स्ते शस्तावश्येषू
च्चाटनेषु च क्षुद्र क्रियामयध्वंसे स्त्रियोन्यत्र नपुसंकाः ॥ २ ॥

और शेष मंत्र पुरुष मंत्र होते हैं। वश्य कर्म उच्चाटन कर्म तथा क्षुद्र कर्म और पाप नष्ट करने में स्त्री मंत्रो का और शेष कर्मो में पुरुष मंत्रो का प्रयोग करे।
(स्वाहांता-ऊंकारस्तार अंत, अग्निः रं ह ह प्रायो बाहुल्येन यस्मिन्)

तारांतांग्नि वियत् प्रायोमंत्र आग्नेय इष्यते
इष्टौ शोम्य प्रशस्तो तौ कर्मणोः क्रूर सौम्ययोः ॥ ३ ॥

अंत के ऊंचे बीज अग्नि बीज और वियत आकाश बीज वाला मंत्र आग्नेय कहलाता है। इसका प्रयोग क्रूर कर्म में करना चाहिये और सौम्य मंत्र का प्रयोग प्रशस्त कर्म में करने योग्य है।

आग्नेय मंत्र सौम्यः स्यात् प्रापसोन्तेन नमोत्वितः,
सौम्य मंत्र स्तु विज्ञेयः फट् कारेणान्वितोंततः ॥ ४ ॥

आग्नेय कर्म के मंत्र में नमः लगा देने से वह सौम्य मंत्र हो जाता है। और सौम्य मंत्र के अंत में फट लगा देने से वह आग्नेय मंत्र हो जाता है।

स्वापंकालो याम वहो जागरो दक्षिणे वहः
आग्नेयस्य मतः सौम्यमंत्र स्यै तद्विपर्ययः ॥ ५ ॥

बायाँ स्वर चले तो स्वापकाल सूता हुवा काल, दाहिना स्वर चले तो जाग्रतकाल अग्नि तत्व हो तब सौम्य मंत्र जपे तो उल्टा होता है।

प्रबोध कालं जानीया दुभयोरूभयो रपि
स्वापकालेतु मंत्रस्य जपौनैव फलावहः ॥ ६ ॥

स्वापकाल में सोता हुवा चन्द्रस्वर में कार्य धीरे हो। सौम्य अथवा आग्नेय (उभय) दोनों ही के लिये प्रबोध(जाग्रत) काल जानना चाहिये। किन्तु जपने के समय स्वापंकाल होने से विशेष फल मिलता है।

वश्याकर्षण सं तापे होमे स्वाहा प्रयोजयेत
क्रोधोपशमने शांतौ पूजने च नमोभवेत् ॥ ७ ॥

वश्या आकर्षण और संताप के होम में स्वाहा शब्द का प्रयोग करें और क्रोध शांत करने में शांत कर्म में पूजन में नमः पद को लें।

सं वषट् मोहन उद्दीपन पुष्टि मृत्युंजयेषु वा
हुकारं प्रीति नाशौ च छेदने मारणे तथा ॥ ८ ॥

संमोहन, उद्दीपन, पुष्टि अथवा मृत्युंजय में वषट तथा प्रीति नाशछेदन और मारण में हुं का प्रयोग करें।

उच्चाटने च विद्वेषे तथा चात्मकृते वषट
विघ्न ग्रह विनाशे च हुं फट्कारं प्रयोजयेत् ॥ ९ ॥

उच्चाटन विद्वेषन और दूसरों को अपना बनाने में वषट तथा ग्रह का विघ्न नष्ट करने में हुं फट का प्रयोग करें।

मंत्रोद्दीपन कार्ये च लाभालाभे वषटस्मृतः
एवं कर्मानुरूपेण तत्तन्मंत्रं प्रयोजयेत् ॥ १० ॥

मंत्र का उद्दीपन करने लाभ और अलाभ में वषट का प्रयोग करें इस प्रकार हर एक कर्मो के अनुसार उस मंत्र का प्रयोग करें।

ह्रीं देवदत्त पल्लव
ह्रीं दे ह्रीं व ह्रीं द ह्रीं त ह्रीं ग्रन्थनं
दे ह्रीं व ह्रीं द ह्रीं त ह्रीं रोधनं
देवदत्त ह्रीं देवदत्त दीपनं
ह्रीं त ह्रीं द ह्रीं व ह्रीं दे विदर्भनं
ह्रीं देवदत्त ह्रीं संपुट

ग्रंथितानां प्रभेदेन मंत्राण वक्ष्यतेऽधुना
ग्रंथितं संपुटं ग्रस्तं समस्तं च विदर्भितं ॥ ११ ॥

तथा चाक्रांत माद्यंत गर्भितं सर्वतोमुखं
तथा युक्ति विदर्भ्भं च विदर्भ ग्रंथितं तथा ॥ १२ ॥

इत्येकादशधामंत्रा: प्रयुक्ता: कार्यसिद्धि दा:
साध्य नामार्णमें कैकं मंत्रान्नैकं प्रयोजयेत् ॥ १३ ॥
ग्रंथितं तत्समा ख्यातं वश्या कृष्टि फल प्रदं

अब सब मंत्रों को गूंथने के विशेष भेद कहे जाते हैं। ग्रंथित संपुट ग्रस्त समस्त विदर्भित आक्रांत आद्यंत गर्भित सर्वतोमुख विदर्भ-विदर्भ ग्रंथित इस प्रकार यह ग्यारह प्रकार के मंत्र कार्य की सिद्धि देने वाले प्रयोग करने चाहिये। साध्य के नाम के एक एक अक्षर के साथ एक एक बार मंत्र का प्रयोग करने को ग्रंथित कहते हैं। यह वश्य और आकर्षण में फल दायक होता है।

मंत्र मादौ वदेत्सर्वं साध्य संज्ञामनंतरं
विपरीतं पुनश्चांते मंत्रं तत्संपुटं मतं ॥ १४ ॥

जिसमें आदि में मंत्र फिर साध्य का नाम और अंत में फिर मंत्र बोला जावे उसे संपुट कहते हैं।

शांति पुष्टिं करं ज्ञेयं त्रैलोक्यैश्वर्यदायकं
अर्द्धमर्द्धं तथादौंते मंत्रं कुर्याद्विचक्षण: ॥ १५ ॥

यह शांति और पुष्टि करने वाला तथा तीन लोक के ऐश्वर्य को देने वाला है जिनके आदि और अंत में आधा मंत्र और बीच में साध्य का नाम हो

मध्ये चाख्या भवेत्साध्यांग्रस्त मित्य भिधीयते
अभिचारेषु सर्वेषु योजयेन्मारणेषुच ॥ १६ ॥

उसे ग्रस्त कहते है इसका मारण आदि सभी व्यभिचारों में प्रयोग करे।

अभिधानं वदेत्पूर्व पश्चात्मंत्रं तथा वदेत
एतत समस्त मित्युक्तं शत्रूच्चाटन कारकं ॥ १७ ॥

जिसमें पहले नाम और मंत्र बोला जावे वह उच्चाटन करने वाला समस्त कहलाता है।

द्वौ द्वौ मंत्राक्षरौयत्र एकैकं साध्य वर्णकं
विद्वभिर्वतं तु तत्प्रोक्तं दुष्टुमु र्वश्य लक्षणं ॥१८ ॥

जिसमें दो दो मंत्र के अक्षर और एक एक साध्य को नाम का अक्षर आवे उसे वश्य कर्म का करने वाला विदर्भित कहते हैं।

मंत्राणांरितं साध्यं समंता तिष्टते यदि
आक्रांतं तद्विजानीयत्सर्वं सर्वार्थ सिद्धिदं ॥ १९ ॥

यदि साध्य का नाम चारों तरफ मंत्र से घिरा हुवा हो तो उसे सब अर्थों को सिद्धि करने वाला आक्रांत कहते हैं।

स्तोभ स्तंभ समावेश वश्योच्चाटन कर्मसु
सकृत्य सर्व वदेन्मंत्र मंते चैव तथा पुनः ॥ २० ॥

वह स्तोभन स्तंभन आवेशन वश्य और उच्चाटन कर्मो में काम में आते हैं , जिससे जिसमें आदि में एक बार पूरा मंत्र और अंत में भी पूरा मंत्र कहें ।

मध्ये चास्य भवेत्साध्य मायतं मितित द्विदुः
अन्योन्य प्रीति युक्तानां विद्वेषण करं परं ॥ २१ ॥

तथा मध्य में साध्य का नाम हो तो उसे आद्यंत कहते हैं। यह दो व्यक्तियों में विद्वेषण करते हैं।

आदौ चांते तथा मंत्रं द्विधातं सं प्रयोजयेत्
साध्य नाम स कृन्मध्ये गर्भस्थंतु तदुच्येत् ॥ २२ ॥

आदि और अन्त में दो बार मंत्र का प्रयोग करके बीच में एक बार साध्य का नाम रखने को गर्भस्थ कहते हैं।

मारणोच्चाटनं वश्यं प्रयुक्तकारटेन्नृणां
हंतिनौ सो नदीगर्भ स्तंभनं च गतिं तथा ॥ २३ ॥

मनुष्यों के मारण उच्चाटन वश्य में तथा नदी स्तभंन नौकाभंजन और गर्भ स्तंभन में प्रयोग किया जाता है।

त्रिधां मंत्रं जपेत्सर्वं तथैवांतेपुनस्त्रिधा
स कृत्साध्यं भवेन्मध्येत द्विंयांतेसर्वतो मुखं ॥ २४ ॥

जिसमें आदि और अन्त में तीन तीन बार मंत्र जपा जावे और नाम बीच में एक ही बार है। उसे सर्वतोमुख कहते हैं।

सर्वोपसर्ग शमनं महामृत्यु विनाशनं
सर्वसौभाग्य जननं मृतानामऽमृत प्रदं ॥ २५ ॥

यह सब उपसर्गो को शांत करने वाला, महामृत्यु को नष्ट करने वाला, सर्वसौभाग्य को उत्पन्न करने वाला और देवताओं को भी अमृत देने वाला है।

आदौ मंत्रं ततो नाम पुनर्मंत्रं समादिशेत
एवमेव त्रिधा कृत्वा भवेद्विदिं विदर्भितं ॥ २६ ॥

जिसमें आदि में मंत्र फिर नाम और फिर मंत्र इस प्रकार तीन तीन बार किया गया हो उसे विदर्भ कहते हैं।

सर्व व्याधि हरं प्रोक्तं भूतापस्मार मर्दनं
एकैक साध्य वर्णंतु कृत्वा मंत्रं विदर्भितं ॥ २७ ॥

यह सब व्याधियों को नष्ट करने वाला, भूत और (मृगी) रोग को दूर करने वाला है। जिसमें साध्य के नाम के एक एक अक्षर को मंत्र के साथ विदर्भित किया जाये।

पूर्व वत्कथितं वश्याधंते च ते प्रकल्पयेत्
विदर्भग्रंथितं नाम मंत्र लक्षण मत्तमं ॥ २८ ॥

सर्व कर्मकरं प्रोक्तं सर्वैश्वर्य फल प्रदं
एवमेते प्रयोगांस्युः सिद्धा मंत्रस्य सिद्धिदां ॥ २९ ॥

अथ अक्षर नामानि

पहिले के समान आदि और अंत में प्रयोग किया जावे उसे विदर्भ ग्रंथित कहते हैं। यह सब कार्यों को करने वाला और सभी ऐश्वर्य के फल को देने वाला है यह मंत्र की सिद्धि देने वाला सिद्ध प्रयोग है। अब अक्षरों के नाम कहे जाते हैं।

महान् वामेऽजितो ज्योति रितो जिष्णुः कवि र्मुनिः
शंभु र्विश्वो विभुर्योगी वरदो विदितः शुभः
सत्योच्चल स्थाष्णुर वारीरांठ्यः देवो गुरूशांति।
र भी र पाद्यः श्रेयान् सुधी र्नेमिर धैंण आद्यैः ॥

पूज्यः पुमानभुष्ण रमोघ आप्तौ नित्यः पुराणो विमलो विविक्तः पार्श्वो गणेशः परमः
स्वयंभूः (क्रमेण संज्ञाश्च महाक्षराणां) विश्वो महात्मा प्रणिधिश्च्युतेशः

महान(अ) वाम (आ) अजित (इ) ज्योति(ई) इति (उ) जिष्णु (ऊ) कवि(ऋ) मुनि (ॠ) शंभु (ऌ) विश्व (ॡ) विभु (ए) योगी (ऐ) वरद (ओ) विदित (औ) शुभ (अं) सत्यः (अः) चल (क) स्थाष्णु (ख) अव (ग) अरि (घ) आढ्य (ङ) देव (च) गुर (छ) शांति (ज) अभि (झ) पाद्य (ञ) श्रेयान (ट) सुधी (ठ) नेमि (ड) अघ (ढ) अवार्य्य (ण) पूज्य (त) पुमान(थ) भूष्णु (द) अमोघ (ध) आप्त (न) नित्य (प) पुराण (फ) विमल (ब) विविक्त (भ) पार्श्व (म) गणेश (य) परम (र) स्वयंभू (ल) विश्व(व) महा (श) आत्मा (ष) प्राणिधि (स) अच्युतेष (ह)

यह क्रमशः महाअक्षरों की संज्ञायें हैं।

इत्यार्ष्ये विद्यानुशासने अशेष परिभाषा विद्यानामः तृतीयः समुद्देश्यः

इसप्रकार विद्यानुशासन में अशेष परिभाषा विद्या नामक तृतीय अध्याय पूर्ण हुआ।

चतुर्थ अध्याय

अथ सामान्य मंत्राणां वक्ष्येत साधन क्रम:
गदीयंतेऽद्भुतया शक्त्या सुबहूनि फलानिय: ॥ १ ॥

अब सामान्य मंत्रो का साधन क्रम उनकी अद्भूत शक्ति से प्राप्त होने वाले बहुत से फलों सहित वर्णन किया जावेगा।

प्रतिमंत्रं सकली कृति रूपचारा: पंच साधन विधानां
फलमप्युप दिश्यंते प्रायेना स्मिन समुद्देशे ॥ २ ॥

इस समुद्देश में प्रत्येक मंत्र का सकली करण उपचार मंत्र साधन विधान और फल का वर्णन किया जावेगा।

कथितं परिभाषायां लक्षणं सकलीकृते:
पंचानामुपचाराणां शेषयोर्लक्षणं ब्रूवे ॥ ३ ॥

सकली करण की परिभाषा का लक्षण पीछे तीसरे समुदेश में कह आये हैं अब बाकी पाँचो उपचारों का लक्षण कहा जाता है।

साधनं जप होमादि तत्र तत्रोपदर्शिता:
सिद्धया विद्यया मंत्री पदवाप्नोति तत्फलं ॥ ४ ॥

प्रत्येक मंत्र का जाप और होम आदि का वर्णन उस उस मंत्र के वर्णन के साथ साथ कर दिया गया है। उन मंत्रों के सिद्ध होने से मंत्री निश्चय से उनके फल को पाता है।

ॐ नमो भगवते चन्द्र प्रभ जिनेंद्राय चंन्द्रेद्र महिताय चंद्रकीर्तिमुख रंजिनी स्वाहा॥

चन्द्रप्रभ जिनस्यास्य सरच्चंद्र समुद्यते:
मंत्रोऽनेक फल: सिद्धि मायात्यऽयुत जापत: ॥ १ ॥
तमग्रे दक्षिणे वामे पृष्टे च सं जपेत क्रमात्
यंत्रमानं जिनं ध्यायेत् शक्रार्क श्री दुंचक्रिभि: ॥ २ ॥

शरदकालीन चन्द्रमा के समान कांतिवाले श्री चन्द्रप्रभु भगवान का यह मंत्र दसहजार जप से सिद्ध होकर अनेक फल देता है।

इस मंत्र का क्रम से भगवान के आगे दाहिने बायें और पीछे जप करे फिर उन भगवान का ध्यान इंद्र सूर्यलक्ष्मी चन्द्रमा और चक्रवर्ती रूप से ही करें।

जपोऽस्य सर्वमप्यर्थं साधयेदभि वांछितं
विनिहंति च नि :शेष मभिचारोद्भवंभयं ॥ ३ ॥

अभिषे को गव्यै र्वाक्षीरतुर त्वक्कषाय सलिलैर्वा
तोयैर्वासंजपैः क्षुद्रग्रह हृद्भवेद मुना ॥ ४ ॥

इस मंत्र का जप सब इच्छा किये हुवे प्रयोजनों को सिद्ध करता है और सब मारण आदि अनुष्ठानों से पैदा हुये भयों का नष्ट करता है। उनका भगवान का गाय का दूध अथवा दूधवाले वृक्षों कीछाल के बनाये हुवे जल अथवा केवल जल से अभिषेक करके जप करने से सब क्षुद्र ग्रह नष्ट हो जातेहैं।

अज शक्ति लाह्मापल बीजानि क्ष्मीं ततश्च सोमसुधे
कुरू स्वाहे त्योषः स्यान्मंत्रः श्री पार्श्वनाथस्य ॥ १ ॥

मंत्रोद्धार:

ॐ ह्रीं ला व्हः पः लक्ष्मीं ड्वीं क्ष्वीं कुरूस्वाहा

मंत्रोयं वेष्टितोऽजेन शक्त्या षोडश भिःस्वरैः
स मंत्राष्टाब्ज पत्रैश्च मूलयंत्र मह स्मृतं ॥ २ ॥

श्री पार्श्वनाथ स्वामी का मंत्र है अज (ॐ) शक्ति (ह्रीं) ला ह्रः प लक्ष्मी बीज सोम (ड्वीं) सुधा (क्ष्वीं) खु और स्वाहा इस मंत्र को अज (ॐ) और फिर शक्ति (ह्रीं) से वेष्टित करके फिर सोलह स्वरों से वेष्टित करे इसके पश्चात बाहर आठ दल कमल बनाकर उसके प्रत्येक दल में मूल मंत्र को लिखे।

कवचत्रितयोपेतं ध्येयं मंडल पंच ,
हृत्फणामणिसंयुक्त तत्तन्नागाभिवेष्टितं ॥ ३ ॥

फिर आगे लिखे तीन कवचों सहित पृथ्वी आदि पांचो मंडलों का ध्यान करे जिसमे आगे लिखी हुई हृदय मणि और फणामणि लगी हुई हो और दो नाग उनके ऊपर हैं।

आजानुनाभि हृकंठ मस्तकं कृं व्यन्स्त्क्रमात्
स्यादारोहावरोहाभ्यां पंच कृत्यः क्रमोत्क्रमात् ॥ ४ ॥

इन यंत्रो का क्रम से घुटनों से लेकर नाभि हृदय कंठ और मस्तक में चढ़ावे और उतारे इससे क्रमशः पांच बार न्यास करें।

कनिष्टाद्यंगुली ष्वेवंतादम्मंडलपंचकं
कनिष्ट काद्याआरभ्य ज्येष्टांतवार पंचकं ॥ ५ ॥

इस प्रकार उन पाँचों मंडलों का कनिष्टा आदि अंगुलियों में कनिष्टा से आरंभ करके अंगुठे तक पांच बार न्यास करे किसी अंग में किसी बीज या मंत्र के ध्यान करने को न्यास कहते हैं।

एक बारं स्मरेद्बीजं हृत्फणिमणि पन्नगान
कवच त्रितयं पंच सून्यान्यंगलिषु क्रमात् ॥ ६ ॥

उंगुलियों में क्रम से एक बार हृदय मणि बीज फण मणि बीज नाग तीनों कवच और पांचो शून्यों का ध्यान करे।

स्वां लां ह्रीं प्रथमं वर्म्म सरसुंसः द्वितीयकं,
हरहुंहः तृतीयं स्यादेतानि कवच त्रयं ॥ ७ ॥

स्वां लां ह्रीं प्रथम कवच हे सरसुंसः दूसरे कवच है और हरहुंहः तीसरा कवच है इसप्रकार यह तीनो कवच है।

ईं वां यां क्षां आं लां मां रां ॐ ह्रीं च हृणमणीयः स्युः
गं धं जीं झीं कां खां चों छों छीं हूं क्षूं च फ ण मणयः

ईं वां यां क्षां आं लां मां रां ॐ ह्रीं यह हृदय मणिया है।
गं धं जीं झीं कां खां चो छों हूं क्षूं यह फण माणिया है।

स्युः शंखपाल वासुकि सरोज ककोंटिकाख्य कुलिकानंताः
तक्षक महातक्षक तथा जय विजयाश्च द्वं द्व मुर्वादि भुजंगाः॥ ९ ॥

शंखपाल तथा वासुकि सरोज और ककेटिक कुलिक तथा अनंत तक्षक महातक्षक तथा जय और विजय यह पृथ्वी आदि के दो दो के क्रम से जोड़े हैं।

अयमेवं विध्य हस्तः समस्तविष निग्रहं
सं स्पर्श नादिभिः कुर्यात्सर्व भूतं ग्रहापहः ॥ १० ॥

इन मंत्रों को इसप्रकार हाथों आदि में लगाकर विष वाले पुरुष को छूने आदि से सब विष तथा सभी भूत और ग्रह नष्ट हो जाते हैं।

पश्चाद्विहित दिग्बंधः सकलीकियद्यानया
शुद्धोस्यमूलमंत्र स्य कुर्यादाराधन त्रयं ॥ ११ ॥

इसके पश्चात सकली करण से दिशा बंधन करके शुद्ध होकर उपरोक्त मूल मंत्र तीन बार पढ़े।

विविध माणिक्यकिरण कवलित दशदिग्वलयै: सुवर्ण निर्माणै:
गमणा गमणे प्रभुतिर्भिभागै: सप्तभि: क्रमात्तुंगै ॥ १२ ॥

इसके पश्चात अनेक प्रकार के माणिक्य आदि रत्नों का किरणों से युक्त ऊँचे ऊँचे सात परकोटो से शोभित समवशरण मंडल की कल्पना करे । उन पर कोटों की दिवालों के वलय दशो दिशाओं में सोने के बने हुवे हो और उनमें जाने तथा आने आदि के मार्ग बने हैं।

उप शोभितस्य निखिल त्रिभवन शरासन स्य
समवशरणस्य अध्यासीनो मध्ये गंध कुटी मंडपं जगद्वंद्य: ॥ १३ ॥

श्री मान जिन: स्वयंभूरष्ट महाप्राति हार्य्य परिवार:
गणनाथकै: सुरेन्द्रै: सर्वै संस्तूय माणगुणा: ॥ १४ ॥

ऐसे तीन लोकों के धनुष बाण के समान समवशरण के बीच में गंध कुटी के मंडप के अन्दर विराजमान [illegible] ध्यान करने योग्य आठों प्रातिहार्य्य से युक्त गणधरों और सब देवताओं के इन्द्रों से स्तुति किये जाते हुये श्री मान स्वंयभू (ब्रह्मा) जिनेन्द्र भगवान का ध्यान करे।

भास्वन् मरकत हरितं व पुद्दधद्दोष धातु मल रहितं,
श्री वृक्षा द्यष्टोतर सहस्र शुभ लक्षणक्षुणं ॥ १५ ॥

उन भगवान की चमकती हुई मरकत मणि के समान हरा शरीर धारण किये हुवे अष्टादश दोष सातों धातुओं और सबप्रकार के मल रहित श्री वृक्ष इत्यादि एक सो आठ हजार उत्तम उत्तम लक्षणों से युक्त ।

चरमांते च चतुर्मुख परमेष्ठी नष्ट धाति कर्म मल:
रक्षतु दुःखा पापात् सर्वानपि करूण्या शरीर भृत: ॥ १६ ॥

उत्तम चरम शरीर को धारण किये हुवे चार मुख युक्त परमेष्ठि स्वरूप चारों घातिया कर्मो के मल को नष्ट किये हुवे ध्यान करेगा और उनसे मन ही मन में प्रार्थना करे कि "हे भगवान आप कृपा करके सब शरीर धारियों को दुःख रूप हानि से रक्षा कीजिये।"

धरेणन्द्रेण च देव्यापद्मावत्या च वंद्य मानाङ्घ्रि:
श्री पार्श्वनाथ देवोध्यातव्यो मूल मंत्रै स्वे ॥ १७ ॥

फिर धरणेन्द्र और देवी पद्मावती से सेवित चरणवाले श्री भगवान पार्श्वनाथ के मूल मंत्र यंत्र में ध्यान करें।

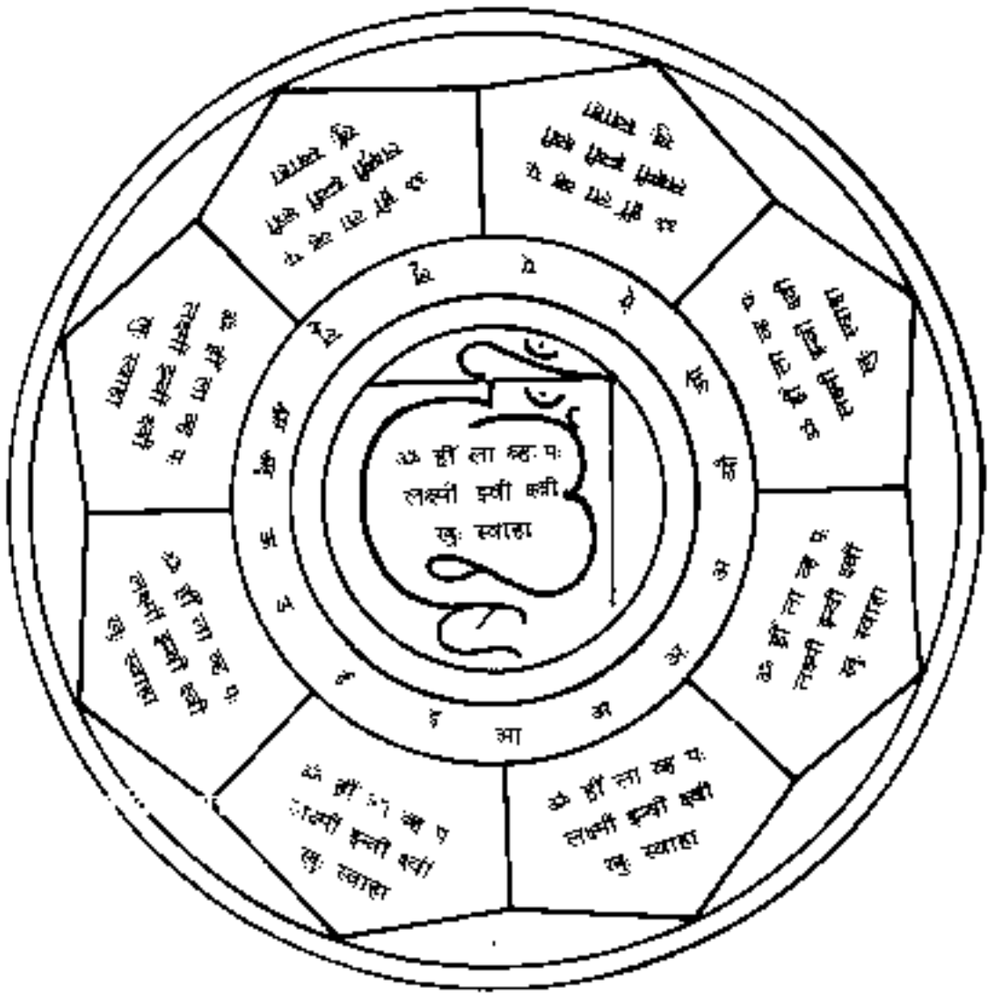

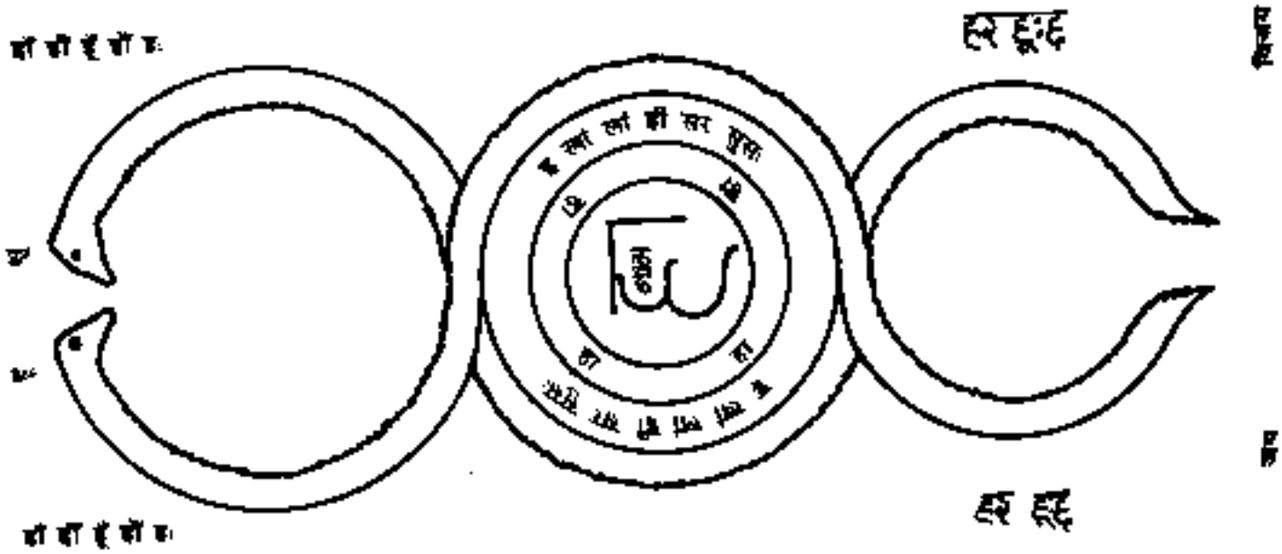

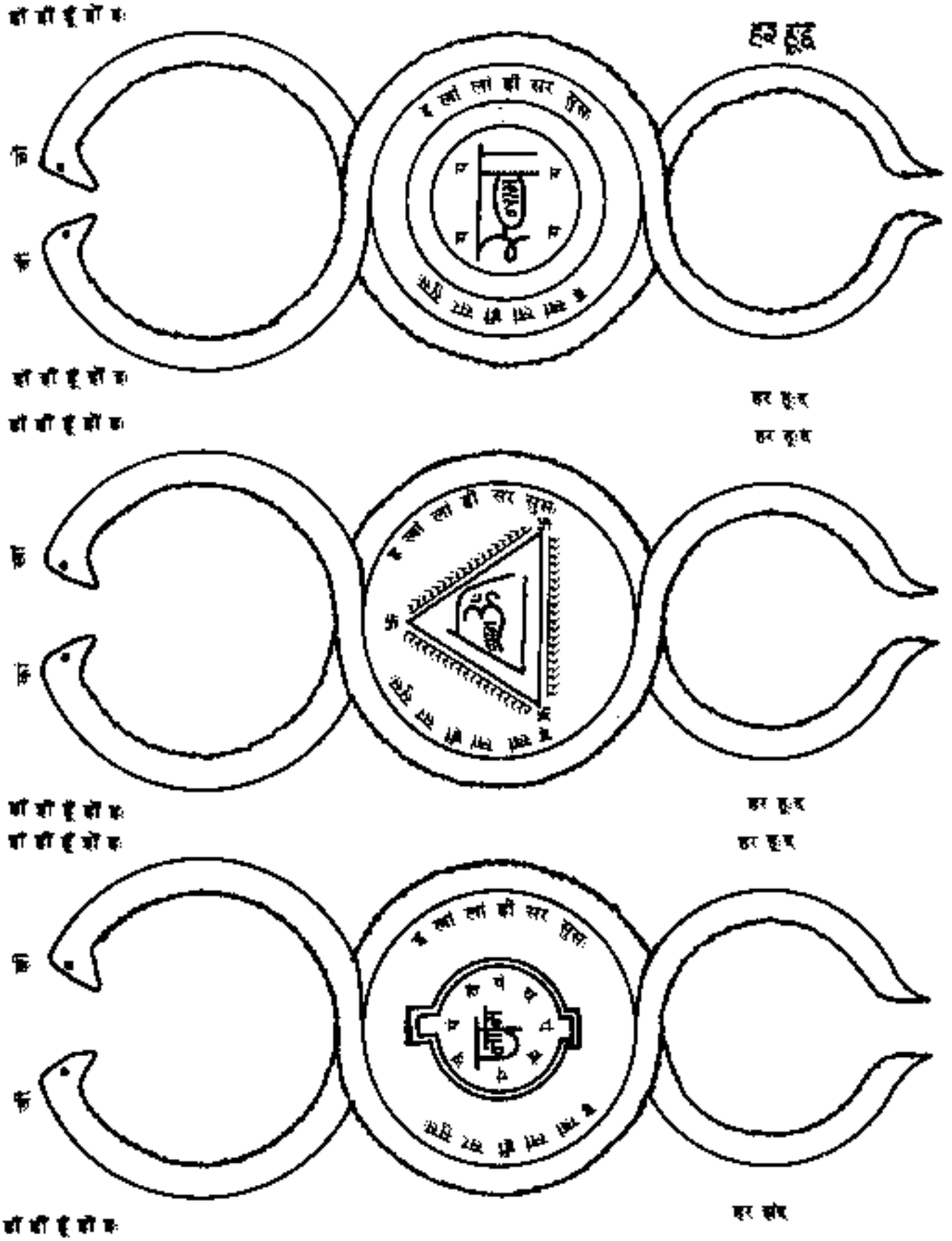

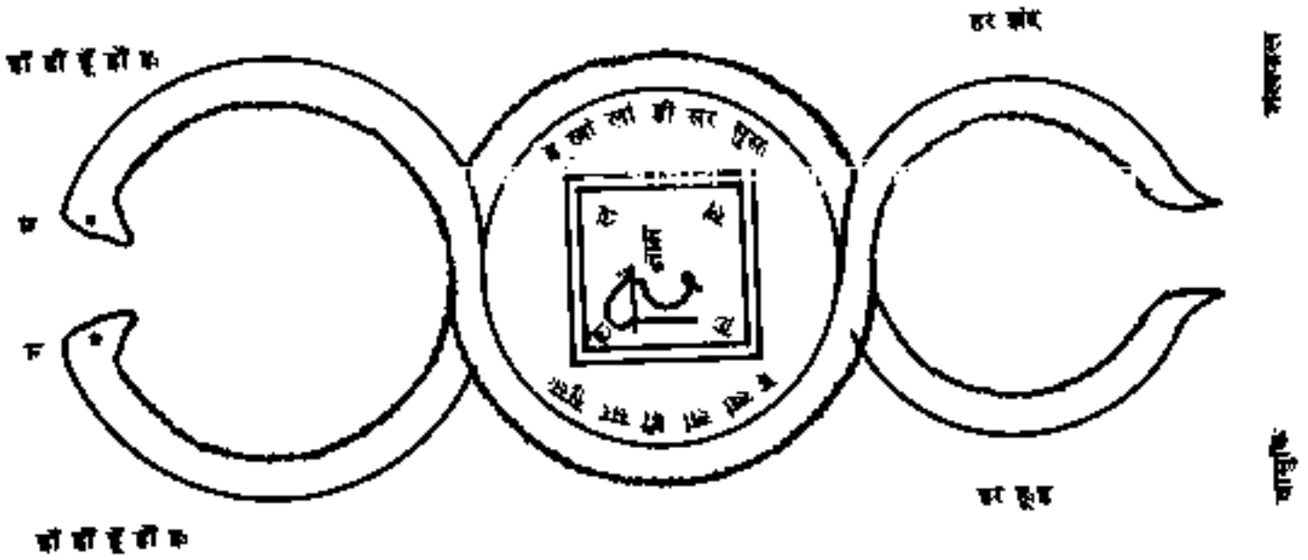

संग्रह सकली रक्षा स्तोभं सं स्तंभ निर्विषा वेसो,
परकृत विद्या छेदं शाकिन्युरु निग्रहं वक्ष्ये ॥१८॥

अब संग्रह सकली करण रक्षा स्तोभन स्तंभन निर्विषकरण आवेशन(देवता को जगाना) पर विद्या छेदन और शाकिनी निग्रह कर्म का वर्णन किया जावेगा।

श्री मन्नाग निकाय नायक फण माणिक्य बाला तप
श्रेणी पल्ल वितांग गारूड मणि श्याम प्रभा भासुरे
ध्याते पार्श्वजिनेश्वरभगवति त्रैलोक्य रक्षा मणौ,
सद्यः कल्मषु कालकूट गरलं ज्वालावली शम्यति
श्री पार्श्वनाथमानम्य धरणेन्द्र नमस्कृतं
पार्श्वाष्टकस्य संबंद्धा सद्मसद्वृत्तिं विदधाम्यहं ॥१॥

श्री मद्विद्यानंदाचार्यो मंत्र स्तुति रूपेण श्री पार्श्वनाथ भट्टारकं स्तोतु काम इदमाह
अत्रनवभि र्वृतैर्यथा क्रमं।

संग्रह, सकलीकरण, रक्षा, स्तोभ, स्तंभन, निर्विष , आवेश , परविद्या छेदन, शाकिनि, निग्रह कर्म्म, गर्भा: स्तुतयो विधीयते तत्र प्रथमं संग्रह गर्भास्तुति माह॥

टीका :- नागों के समूह के अधिपति बाल सूर्य की श्रेणियों अर्थात् पंक्तियों के समान फैले हुवे शरीर वाले , गारुड़ियों में उत्तम नागराज से शोभित, श्याम प्रभा के चमकते हुए तीन लोक की रक्षा करने वाले-भगवान पार्श्वनाथ का ध्यान करने पर पाप रूप काल कूट विष की ज्वाला का समूह शांत हो जाता है।

अब धरणेन्द्र से नमस्कार किये हुए श्री पार्श्वनाथ को नमस्कार करके पार्श्वष्टक नाम से उत्तम छंदो का वर्णन किया जावेगा।

श्री मान इन्द्र नन्दि आचार्य श्री पार्श्वनाथ भट्टारक की मंत्र स्तुति रूप से स्तुति करते हुए कहते हैं।

अबनो छंदो से क्रम से १ संग्रह २ सकलीकरण ३ रक्षा ४ स्तोभन ५ स्तंभन ६ निर्विष कर्म ७ आवेषण ८ परविद्या छेदन ९ और शाकिनी निग्रह कर्म का वर्णन किया जाएगा।

श्री पार्श्वनाथजी स्तोत्र

श्री मन्नागेन्द्र स्फुरित फणमणि द्योतिताशामुखश्री :
ॐ ह्रीं ला ह्वा प लक्ष्मी पवन गगन सन्मंत्रदूता परागं (रो ह्रीं)
क्ष्मा वाक्वह्नि प्रतीत त्रिपुर विचिति दृष्टात्म वक्षस्थ हंसः
ग्रीवा स्पदांदि संदर्शिति विद्युदुदयः पातुमां पार्श्वनाथः

टीका :- पातु रक्षतु कौ सौ पार्श्वनाथः कं मां स्तुति कर्त्तारं किं विशिष्टो सौ भगवान् श्री मन्नागेन्द्रं रूढं स्फुरित फणमणि द्योतिता शामुख श्रीः नागानामिंद्रो नागेन्द्रो धरणेन्द्रः श्री सर्वनागधिपत्य लक्षण शंखपाल वासुकि पद्म कर्कोट अनंत कुलिक महापद्म तक्षक जय विजयादयः तेषामाधिपत्य लक्षणा सा विद्यते यस्या सौ श्री मान स चासौ नागेन्द्रश्च श्री मन्नागेन्द्र तस्य रुद्रा : स्फीताः स्फुरिताः सा टोपाः संतः स्फुरिताश्च ते फणाश्च तेषु मणय स्तैर्द्योतिता कांति नीता आशा मुखानां दिग्मुखानां श्री योनि स भगवान तथा भूतः अत्र नागेन्द्र शब्दोपोदानात् तत्संबंधिनो अनंतादि नागा भगवत स्तदाधिपत्य च दर्शितं पुनरपि कथं भूतं ॐ ह्रीं ला व्हा प लक्ष्मी पवन गगन सन्मंत्र दूता परागं क्ष्मा वाक्वह्नि प्रतीत त्रिपुर विचिति दृष्टात्म वक्षस्थ हंसः ग्रीवा स्पंदादि संदर्शित विद्युदयः पवनः स्वा शब्दः गगनं हा शब्दः ॐ च ह्रीं च ला श्च ह्वा श्च पश्च लक्ष्मीं श्च गगनं श्च एतै वर्णैः मिलितं सन शोभनो मंत्रः दूतस्य अपरांगं दूतापरागं दूत पृष्टभागः तत्रक्ष्मा च वायुश्च अग्निश्च क्ष्माग्न वाक्वाः पृथ्वीवाताग्नि मंडलानि प्रतीतिनि मंत्रवाद प्रख्यातानि तानि च तानि त्रिपुराणि च तेषां विचिति न्यासः दृष्टस्यात्मा दृष्टात्मा तस्य वक्षो हृदयं तत्र तिष्ठति यो सौ हंसः हंस शब्दः स दृष्टात्म वक्षस्थ हंसः ग्रीवायाः गलस्य स्पंदः किं चि त्स्फुरणं ग्रीवा स्पंदः स आदि र्येषां दृष्टि दंत नख छाया दीनां ते ग्रीवा स्पंदादयः विद्युत् असंग्रह उदयः संग्रहः-

ॐ ह्रीं ला ह्वा प लक्ष्मीं चल्ल गगण सञ्चरंश्च दूतांऽपरांगंक्ष्मा वाय्वग्नि प्रतीत त्रिपुर विचिति श्च दुष्टात्म वक्षस्थ हंसः ग्रीवा स्पंदादयश्च तैः संदर्शितौ सम्यग्विदितौ विद्युदयौ येन भगवता स तथोक्तः

तथाहिः

श्री पार्श्वनाथ भट्टारकाग्रे शुचि प्रदेशे स्थित्वाऽष्टदल कमल कर्णिकायां प्रणवादिकं पार्श्वनाथाय नमः इति पदं सुगंधं द्रव्यै र्लिखित्वा प्रवणेवना वेष्टयित्वा पूर्वादि दलेषु ह्रीं कारायऽष्टाक्षर मंत्र च लिखित्वा त्रिगुणित मायया वेष्टयित्वा तस्य वहिः प्रणवादिके स्वाहांते जयाय विजायाय इति पदे वलय रूपेण दत्वा तद्वाह्ये लिखित हुंकारादीनि स्वाहांतानि अनंताय तक्षकाय पद्माय ककोटिकाय महापद्माय शंखपालाय वासुक्ये कुलिकाय इति पदानि दत्वा पश्चाद् विधि पूर्वं ॐ ह्रीं ला ह्वा प लक्ष्मीं ह्वीं क्ष्वीं ख्वुः स्वाहेति मंत्रेण द्वादशो सहस्रं सित करवीर पुष्पैजपो दशांश होमश्च क्रियते एवमेवासौमंत्र सिद्धो भवति ॥

ॐ ह्री ला ह्वा प लक्ष्मीं चल चल चालय चालय स्वाहा

शाकिनी निग्रहः ततः सिद्धं कृत्वा नित्याभ्यासं कुर्वतेः स्वप्न दृष्टागमनं कथयति तथा दूते समायते तत्काल नाडी प्रवेश निर्गमन पूर्णरिक्त शीतोष्णाद्यात्म सद्भावं नष्ट चंद्रोपयोग कुलिकोपकुलिया उपग्रहो दयादिकं दूतस्य प्रशस्ताऽप्रशस्त तारकं ज्ञात्वा तस्य गच्छतः पथि प्टष्टतश्च पूर्वोक्त मंडल त्रय न्यासे कृते मंत्रेऽवधारिते च यदा मंडल पथमाक्रमति पश्चा न्नावलोकयति श्च तदा संग्रह अन्यथा त्व संग्रहः तस्य दुष्टात्म वक्षस्थहंस शब्द श्रवणं ग्रीवा स्पंददृष्टिः

ॐ वंक्ष मंत्रः दंत नख छाया वं हंसः मंत्र दशस्थानादि समस्तावयवादि परीक्षण द्वारेण संग्रहासंग्रहौ ज्ञातव्यौ। ।इति।

टीकाः लक्ष्मीवान नागेन्द्रों के बड़े तथा उठे हुवे फणों की मणियों से दिशाओं के मुख की कांति को प्रकाशित करने वाले, ॐ ह्रीं ला ह्वा पः लक्ष्मी स्वाहा इस मंत्र का ध्यान करते हुए दूत के पीछे के भाग में पृथ्वी, वायु और अग्नि मंडल के न्यास को करें। डँसे हुए के हृदय में हंसः पद लगाकरके गर्दन के फड़कने आदि के लक्षणों को संग्रह तथा न फड़कने रूप लक्षण को असंग्रह कहने वाले भगवान पार्श्वनाथ मेरी रक्षा करे।

बृहत टीकाः-

यह भगवान नागेन्द्र, शंखपाल, वासुकि, पद्म कर्कोटक अनंत कुलिक महापद्म तक्षक और जयविजय आदि नागों के स्वामी होते है। इनमें इन सब नागों का ऐश्वर्य एकत्रित रहता है। इन नागों के बड़े बड़े उठे हुए फनों में ऐसी प्रकाशमान मणियां लगी होती हैं जिनमें चारों दिशायें

प्रकाशित हो जाती हैं। यह सब अनंतादि महानाग भगवान पार्श्वनाथ को अपना स्वामी मानते हुये उनके अनुचर होते हैं। इनमें से अथवा किसी भी नाग से डँसे जाने पर जो दूत नाग डसे जाने का समाचार लाता हो उसकी पीठ में ॐ हीं ला ह्वः पः लक्ष्मी स्वाहा इस मंत्र का ध्यान करके क्रम से पृथ्वी मंडल, वायु, अग्नि मंडल का ध्यान करके क्रम से पृथ्वी मंडल ,अग्नि मंडल, का ध्यान करें। अर्थात् वह ध्यान इस प्रकार हो और फिर डँसे हुए हृदय में हंसःपद का ध्यान करे यदि इस क्रिया से डँसे हुए पुरुष की गर्दन आदि अंग फडकने लगे तो संग्रह अर्थात् उसको बचने वाला जानना चाहिये , और यदि हंसः का ध्यान जो हृदय में डँसे हुए के किया गया है, इस क्रिया से उसका कोई भी अंग न फड़के तो उसको असंग्रह अर्थात् अवश्य मरने वाला समझना चाहिये। साथ ही साथ श्री पार्श्वनाथ भट्टारक के सामने पवित्र स्थान में बैठकर एक अष्टदल कमल की कर्णिका में "ॐ पार्श्वनाथाय नमः" इस पद को सुगंधित द्रव्यों से लिखकर तथा उस कर्णिका में लिखे हुए इस पद में ॐ से वेष्टित करके पूर्व आदि के पत्रों में हीं कार आदि आठ अक्षरों में मंत्र को लिखकर तीन बार हीं से वेष्टित करके उसे बाहर आदि में ॐ तथा अंत में स्वाहा लगाकर जयाय विजयाय पदों को लिखे, इसके बाहर आदि में ॐ और अंत में स्वाहा लगाकरअनंताय तक्षकाय पद्माय कर्कोटकाय महापद्माय शंखपालाय वासुकाय और कुलिकाय पदों को लिखे। इसके पश्चात विधिपूर्वक 'ॐ ह्री ला ह्वः पः लक्ष्मीं ह्रीं क्ष्वीं ख्वुः स्वाहा' इस मंत्र का कनेर के फूलों से बारह हजार जप और बारह सौ बार हवन में आहुति दें। इस विधि से यह मंत्र सिद्ध होता है।

'ॐ हीं ला : ह्व पः लक्ष्मीं चल चल चालय चालय स्वाहा' यह शाकिनी निग्रह मंत्र है। उपरोक्त मंत्र को सिद्ध करके प्रतिदिन अभ्यास करते रहने से डँसे हुए पुरुष के आने का समाचार स्वप्न में विदित हो जाता है तथा दूत के आने पर उस समय नाड़ी का रहना या जाना पूर्णरिक्त शीतोष्ण आदि अपने सद्भाव नष्ट चन्द्रयोग कुलिक योग उपकुलिक योग पापग्रहों के उदय आदि स्वयं ही विदित हो जाते हैं। फिर दूत के अच्छे या बुरेपने तथा नक्षत्र आदि को जानकर जाते हुवे मार्ग में ही उस दूत की पीठ में पूर्वोक्त तीनों मंडलों का न्यास करने और मंत्र का ध्यान करने पर जिस समय वह दूत मंडल के मार्ग में आगे बैठे और पीछे न देखें उस समय संग्रह अर्थात् डँसे हुवे के बचने की पूरी आशा जाने। अन्यथा असंग्रह जाने उस डँसे हुवे पुरुष के हृदय में हंसः शब्द कान गर्दन और दृष्टि में ॐ वं क्षः मंत्र दांत और नाखूनों की छाया में वं हंसः मंत्र लगावे इस प्रकार दसोस्थानों के सब अवयवों के सब अवयवों की परीक्षा से संग्रह और असंग्रह जाने ।

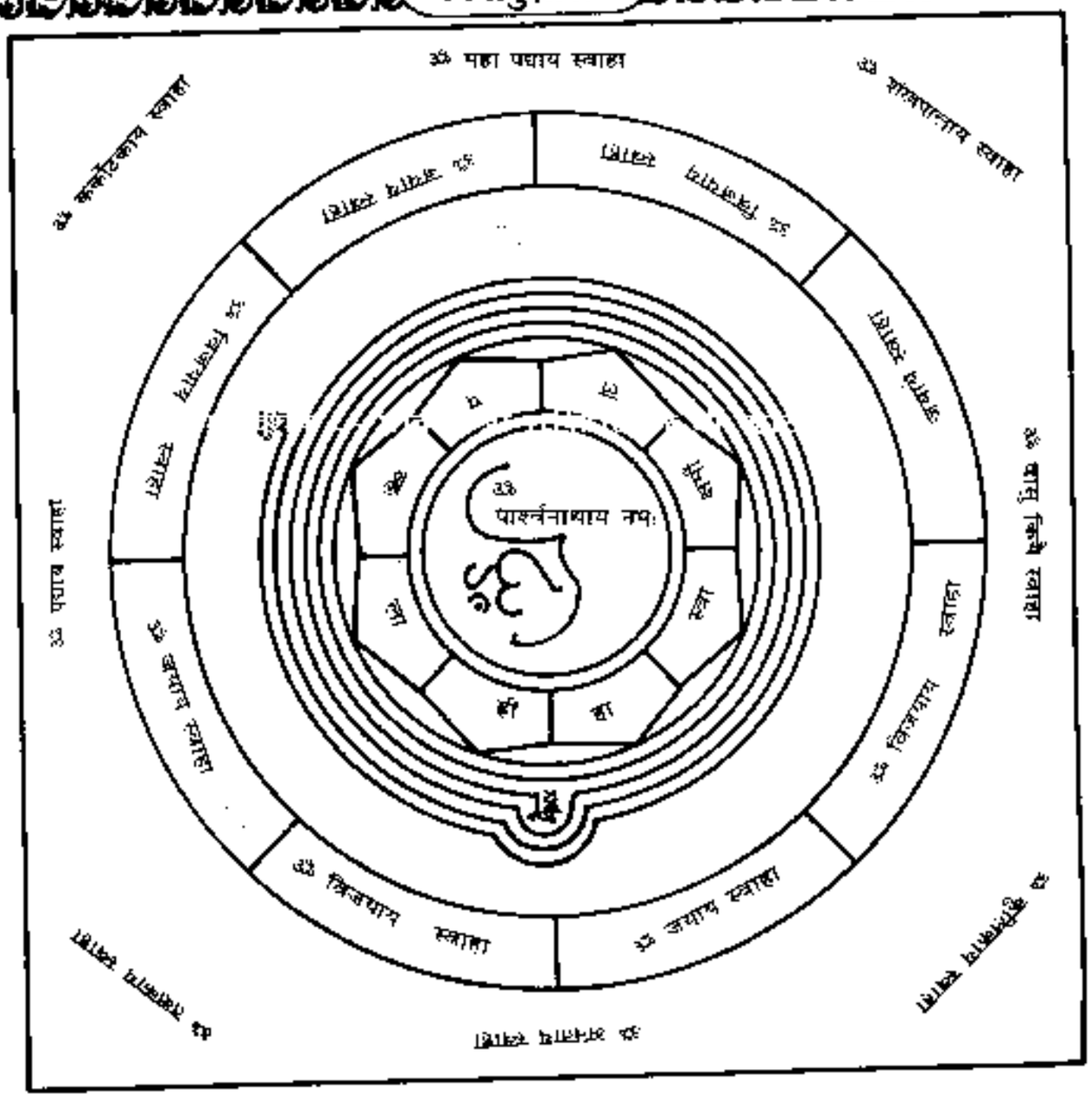
ॐ पद्मा पद्माय स्वाहा
ॐ पद्मावत्यै स्वाहा
ॐ पद्मकोटिकाय स्वाहा
ॐ पद्मपाशाय स्वाहा
ॐ पद्मांकुशाय स्वाहा
ॐ पद्मवज्राय स्वाहा
ॐ पद्मचक्राय स्वाहा
ॐ पद्मखड्गाय स्वाहा
ॐ पद्मत्रिशूलाय स्वाहा
ॐ पद्मजयाय स्वाहा
ॐ पद्मविजयाय स्वाहा
ॐ पद्मसिद्धाय स्वाहा
ॐ पार्श्वनाथाय नमः

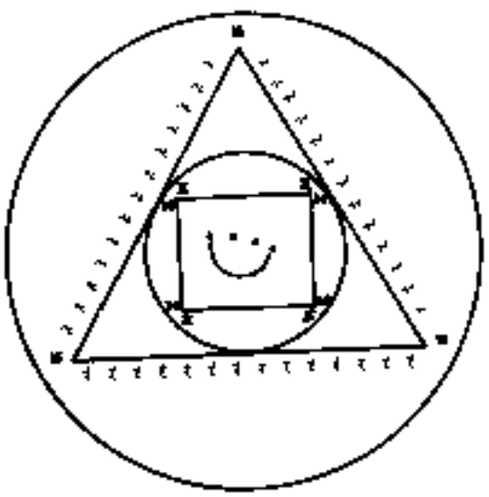

अं यं पाशधरं खरोष्ट्र महिषा रूठं च दंडांकितं
पंका लिप्त विमुक्त केशमसितं कृष्णाम्बरा धारिणं
तैलाभ्यंगमभिन्न लिंग विकटं भूति स्वनिं भीरूकं
दुर्वारिं च निवार हस्त विमुखं दूतं यमोदूतकं
सित वासाश्च प्रशान्त: पुरूषोभय वर्जितश्च सुमनस्क:
जीवधर जातिवानपि दूतो गदिते शुभो मुनिभि:

अंधा पाश धारण किये हुए, ऊँट या भैंसें पर चढ़े हुए, दंड धारण किये हुवे, कीचड़ में सने अर्थात् लिपटे हुए खुले बाल वाले, काले वस्त्र वाले, तेल आदि उबटन युक्त नपुसंक चिन्ह वाले, विकट भस्मवाले डरावने शब्द वाले, कठिन और हाथ में निवार वाले, दूत विमुख दूत या यमराज के जैसे अशुभ दूत होते हैं। सफेद कपड़ो वाले शांत निर्भय अच्छे मन वाले और डँसे हुवे पुरूष जाति वाले दूत अच्छे दूत कहे गये हैं।

इदानीं सर्वकर्म्म प्रधानभूत सकली गर्भा स्तुति माह,

अब सब कर्मो में प्रधान सकली करण युक्त स्तुति को कहते है।

भूम्यंऽभोजात वेदोऽनिल पवन पथै: स्वोचितांऽस्थ कोणै
र्भा स्वद्भोग्रींदं तन्मस्तक हृदय मणि प्रांचितै: पंचशून्यै:
स्वां लां ह्रीं कार सारै र्विधि धृत सरसुंस: परै कल्पितोद्
यद्गात्र त्राऽत्रातपादा न त भुवनजन: पातु मां पार्श्वनाथ:

मां पातु पार्श्वनाथ: किं विशिष्ट: कल्पितोयद्गात्र त्राऽत्रात पादानत भुवनजन त्राणंत्रा मात्र स्य शरीरस्य त्रा गात्र सकली कल्पिता रचिता उद्यता अव्यागता सा चासौ गात्र त्रा च कल्पितोद् यद्गात्र त्रा तया त्रातो रक्षित: पादानत पाद प्रणतो भुवन जनो येन स तथोक्त: कै: कल्पिता या गात्र त्रा भूम्यंऽभोजात वेदो निल पवन पथै:भूमिश्च अंभश्च जात वेदाश्च अनिलश्च पवन पथश्च तै: पृथ्वे तेजोवाता काश मंडलैरित्यर्थ: कथं भूतैस्तै स्वोचितांतस्थ कोणै: अंत र्मध्ये तिष्ठांतीत्य भ्यंतरस्था वर्ण: कोणा: कोण वर्तिन: कोण वर्णा: स्वस्य स्वस्य मंडलस्य उचितां योग्या: अंतस्था कोणादेषु ते स्वोचितांत स्थ कोणा स्तै: तत्र चतुरस्राकार स्य वहि: कोणेषु द्वि द्वि वज्रांकितस्य पृथ्वी मंडलस्य मध्ये उचितोनाम गर्वित: क्षि वर्णा: कोणेषु लकारा: कलशाकारस्य मुख तलयो स्यर्थाकमं वकारा पकारान्वित पद्म पत्राकितस्य श्वेत वर्णस्य मंडलस्य मध्ये चितोनाम गर्भित: पकार: कोणेषु वकरा: त्रिकोण कारस्य वहि: कोणेषु स्वस्तिकांकित स्य ज्वालायमान कृष्णस्याग्नेय मंडलस्य मध्ये उचितो नाम गर्भित: ॐ कार: कोणेषु रेफ: वर्तुल गोमुत्रिका: कारस्य वहि

विंद्वांकतस्य कृष्ण वर्णस्य वायुमंडलस्य मध्ये उचितो वाम गर्भित: स्वाकार: कोणेषु रकार: आकाश कारस्य आकाश वर्णस्यं आकाशमंडल वर्णस्ये इत्यर्थं मीत नित कांचनासित सुर चाप निभानि परिपाटीति गारूडाध्याये वक्ष्यमाणत्वात तस्य मध्ये उचितोनाम गर्भित: हाकरा: कोणेपि स एव पुन: कथं भूतै: भास्वद भोगिन्द्र तन्मस्तक हृदय मणि प्रांचितै: भोगिनो नागां इन्द्रा: स्वस्व मंडलास्य स्वामिन: तद्यथा पृथ्वी मंडलस्य स्वामिनौ क्षत्रियो रक्त वर्णौ शालिगंधी सिरो वज्र लांछनौ पार्थिव विषौ वासुकि शंखपालौ अब्मंडलस्य शुद्रौ कृष्णमत्स्य गंधी सिर: झष लांछनौवारुण विषौ कर्कोक पद्मौ आग्नेय मंडलस्यौद्रौ ब्राह्मणौश्वेत वर्णो पुष्पगंधी शिर: स्वस्तिक लांछनौ अग्नेय विषो अनंत कुलिकौ वायुमंडल स्य स्वामिनौ वैश्यौ पीतवर्णौघृत गंधीशिरोबिन्दु लांछनौ वायव्य विषौ तक्षक महापद्मयो आकाश मंडलस्य दैव कुलौ आकाश वर्णौ मणि लांछनौ अदृष्ट विषौजय विजयाविति भोगिनश्च ते इन्द्राश्च भोगीन्द्रा स्तेषां मस्तकं च हृदयं च तन्मस्तक हृदयो तन्मस्तक हृदययो र्मणय स्तन मस्तक हृदय मणय: वासुकि शंखपालयो र्मस्तकै मणी गंध: कर्कोटक पद्मयो: झां झीं अनंत कुलिकयो: कां खां तक्षक महापद्मयो: चौठौं जय विजयो: हूं क्ष मिति हृदय मणय: ईं वां यां क्षां आं लां मां रां उं ह्रीं मिति तथैव भोगींद्राश्च तन्मस्तक हृदय मणय: भा स्वंतश्चते भोगीन्द्र तन्मस्तक हृदय मणय श्च भश्च द्भोगीन्द्रं तन्मस्तक हृदय मणय स्तै प्रकर्षणेन मंडलाद्बहि: द्वि द्विनागा:अन्योन्य: संशेष रूपेणां चिंतै: पूजितै रित्यर्थ: पुन: किं भूतैस्तै: स्वां लां ह्रीं कार सारै स्वां लां ह्रीं कारै: सारा: श्रेष्ठास्तै: किंविशिष्टश्च विधि धृत सरसुंस: परै: परे हरहुंह: इत्येति वर्णा: सरसुंस श्च परे च सरसुंस: परे विधिना धृता न्यस्ता: सरसुंस: परेधुषुते विधिधृत सुरसुंस: परास्ते विधिधृत सरसुंस परै: भूम्यं भोजात वेदोनिल पवन पद्यै रिति संबंध: यद्यपि यं सकली सामान्येन प्रोक्ता तथापिव्याख्यानतो विशेष्यते तथान्हि वामकर स्यांऽगुष्टाद्यऽगुंलीषु क्षिप उं स्वाहा हा स्वा उं पक्षिं इति पंच भूत क्रमोक्रमाभ्यां नागांकित पूर्वोक्त मंडलानि पुनऽरंगुल्यग्रेषु पंचशून्यानि प्रत्येकं त्रिषु पर्वसु स्वां लां ह्रीं मिति सत्व रज स्तमांसि सरसुंस: हरहुंह: अष्टाक्षर करतल मंत्रं करतले च विन्यस्य पुनरष्ट वारं क्षिकार मुच्चार्यता पादादि जानु पर्यंतं भूमंडलं न्यस्य तत्र स्थित नागद्वय स्य नूपूराभरणं संकल्पांऽगुष्टेन स्पर्श: त्रयोदशवारं पकार मुच्चार्यता जानुनोपरि नाभि पर्यंतं अब्मंडलं न्यस्य तत्र स्थित नाग द्वयस्य कटि सूत्रं संकल्प तर्ज्जन्यां स्पर्श: पुनरष्ट वारमांकार मुच्चार्यता नाभ्यादि ग्रीवा पर्यंतं अग्निमंडलं न्यस्यतत्र स्थित नागद्वयस्य

बाहू भूषणं संकल्प मध्यमया स्पर्शः चतुर्वारं स्वाकारं मुच्चार्यता ग्रीवादि ललाटपर्यंत वायुमंडलं न्यस्य तत्र स्थित नागद्वस्य कर्णपुरं परिकल्पानामिकया स्पर्शः चतुर्वारं हाकारं मुच्चार्यता ललाटादि मस्तका पर्यंतं मंडलं न्यस्य तत्र स्थित नाग द्वस्य तत्र मुकुटाभरकणं परिकल्प कनिष्टया स्पर्शः करणीयः पश्चात ॐ हुं सिर सि ॐ क्षूं हृदि ॐकारं स्तनयो पुनः क्षिकारं हृदये पकारं मुखे ॐकारं शिरसि ॐवं नेत्रयो श्च सं चित्यं स्वाकार त्रयेणसन्नाह ॐ कारेण शीर्षके स विसर्ग हकारेण स्त्र्य च कृते कृते गरूड मुद्रा पूर्वकं जगद्व्यापकं पंचवर्ण गरूडात्मकमात्म स्वरूपं ध्यातव्यं एवं परिपूर्ण सकलीभवतिः-

स्तोत्र टीका

पृथ्वी मंडल जल मंडल अग्नि मंडल वायु और आकाश मंडल के योग के अंदर के कोनों को चमकाते हुवे नागेन्द्र तथा उनके मस्तक और हृदय की मणियों पंच शून्य 'स्वा लां ह्रीं सुरसंसः' और हर हुंहः से पूज्य तथा उदय होने वाले शरीर की रक्षा करने वाले तथा समस्त लोक से वंदनीय चरणयुक्त भगवान पार्श्वनाथ मेरी रक्षा करे।

बृहत टीका

उपरोक्त पांचो मंडल इस प्रकार के हैं उनके अन्दर के कोनों में योग्य बीज लगे हुए हो। अब उन पांचों मंडलों का वर्णन किया जाता है। पृथ्वी मंडल चौकोर तथा दो वज्रों से बना हुआ होता है। उसके बीच में रहने योग्य बीज क्षि तथा कोणों में रहने योग्य बीज लकार हैं। जल मंडल कलशाकार होता है उसके मुखपर कमल पत्र का चिन्ह होता है । मुख में वं और तली में पं बीज से युक्त होता है। इसके बीच में पं और कोणों वं लगाना चाहिये। अग्निमंडल त्रिकोण होता है। इसके बाहर के कोणों में स्वस्तिक का चिन्ह होता है। इस अग्नि के समान जलते हुवे अग्निमंडल के बीच में ॐ और कोणों में रं बीज लगाना चाहिये।

वायुमंडल गोमूत्र के समान गोलआकार वाला बाहर से बिंधे काले रंग का होता है। उसके बीच में उचित बीज स्या होता है। तथा उसके कोणों में यं बीज लगता है।

आकाश मंडल आकाश के आकार वाला आकाश के वर्ण वाला पीले श्वेत सुनहरे और नीले इन्द्र धनुष के समान होता है। जैसा कि गरूड़ अध्याय में वर्णन किया जायेगा इसके बीच तथा कोण का ह बीज है।

फिर यह मंडल उस मंडल के स्वामी नागेन्द्रो से युक्त हो, जो यह है। पृथ्वी मंडल के स्वामी वासुकि और शंखपाल होते हैं यह क्षत्रिय लाल रंगवाले चावलों की सी गंध वाले सिर पर वज्र (सरलरेखा) के चिन्हवाले और पृथ्वी विषसे युक्त होते हैं।

जल मंडल के स्वामी कर्कोटक और पद्मानाग होते हैं। यह क्षुद्रकाले रंगवाले मछली की सी गंध वाले सिर पर मछली के चिन्हवाले और जल विष युक्त होते हैं।

अग्निमंडल के स्वामी इन्द्र अनंत और कुलिक नाग होते हैं। यह ब्राह्मण, सफेद रंग वाले फूलों की सी गंध वाले, सिर पर स्वस्तिक के चिन्ह वाले और अग्नि विष युक्त होते हैं।
वायुमंडल के स्वामी तक्षक और महापद्मनाग होते हैं। यह वैश्य पीले रंग के घी की गंध वाले, सिर पर बिन्दु के चिन्ह वाले और वायु विष युक्त होते हैं।
आकाश मंडल के स्वामी जय और विजय नाग होते हैं। यह देव कुल के आकाश वर्णवाले मणियों के चिन्ह वाले तथा अदृष्ट विष से युक्त होते हैं।
अब इन नागों की मस्तक मणियों का वर्णन किया जाता है। वासुकि की फणमणि गं शंखपाल की घं कर्कोटक की जी पद्म की ह्रीं अनंत की कों कुलिक की खों तक्षक की चों महा पद्म की छों जय की हूं और विजय की फण मणि क्षुं होती है।
'ईं चां यां क्षां आं लां मां रां ईं" और ह्रीं यह दस बीज इन नागों के हृदय की मणिया हैं। इसके अतिरिक्त 'स्वां लां ह्रीं सरसुंसः' और हरहुंहः' तीनों कवच हैं। इन सब बातों से युक्त यंत्र ह्रीं नाग विद्या में कार्यकारी होते हैं यद्यपि यह सकलीकरण की विधि सामान्य रूप से कही गई है तथापि विशेष रूप से भी व्याख्यान किया जाता है।
बायें हाथ के अंगूठे आदि उंगिलयों में 'क्षिप ईं स्वाहा और हा ॐ स्वा पक्षि इन पांचों बीजों को भूतों के सीधे और उलटे क्रम से नाग से चिंतित पूर्वोक्त मंडलों सहित लगावे। फिर उंगलियों के अग्रभाग में पांचों शून्य बीज लगावे उंगलियों के पोरबों में स्वां लां ह्रीं इन सब रज और तम बीजों को तथा सरसुंसः और हरहुंहः आठो अक्षरों के करतल मंत्र को करतल अर्थात् हथेली से स्थापित करके फिर आठबार क्षि बीज का उच्चारण करे। पैरों से घुटनों तक पृथ्वी मंडल को स्थापित करके उसके दोनों नागों को पैरों के नूपूर बनाकर अंगूठे से स्पर्श करे। फिर तेरह बार पं बीज का उच्चारण करके घुटनों से नाभि तक जल मंडल को स्थापित करके उसके दोनों नागों को कटिसूत्र कमर की कनगती (तगड़ी) मान कर उनके अंगूठे के पास की तर्जनी उंगुली से छूये। फिर आठ बार ईं को बोलकर नाभि से गर्दन तक अग्निमंडल को स्थापित करके उसके दोनों नागों को हाथों का आभूषण मानकर उनको मध्यम उंगुली से छूवे। अर्थात् स्पर्श करे। फिर चार बार स्वा बीज को बोलकर गर्दन से मस्तक तक वायु मंडल को स्थापित करके उसके दोनों नागों को काटने का आभूषण मानकर उनको अनामिका अंगुली से स्पर्श कर फिर चार बार हा बीज को बोलकर मस्तक से कपाल तक आकाश मंडल को स्थापित करके उसके दोनों नागों को मुकुट रूप आभूषण मानकर उनको कनिष्ठा उंगुली से स्पर्श करें। फिर ईं हूं बीज को सिर में ईं क्षूं बीज को हृदय में ईं रं बीज को दोनों स्तनों ईं क्षिं बीज को हृदय में ईं प बीज को मुख में ईं बीज को सिर में ईं वं बीज को दोनों नेत्रों में ईं स्वा बीज को बुद्धि सहित तीनों नेत्रों में फिर ईं का सिर में और विसर्ग सहित हकार अर्थात् हः का अस्त्र में ध्यान करके गरुड मुद्रापूर्वक जग व्यापक क्षिप स्वाहा रूप गरुड़ के पांचो वर्णों के भये आत्म स्वरूप का ध्यान करे। इसप्रकार पूर्ण सकली करण की क्रिया होतीहै।
इदानीं रक्षा गर्भा स्तुति माह । अब रक्षा स्तुति का वर्णन करते हैं।

हूं क्षुं पूर्णेन्दु बीज स्वर कुलितस्या भिधानस्य बाह्ये
दत्तैर्द्वय ष्टाब्ज पत्रैः स्वदि गुचित शिरोहन्मणि द्वं द्व भाग्भिः

रामोंकारां तरालै स्त्रिगुण परिवृतै मायया सं प्रयुक्तेनैः
तद्यंत्रेण सं रक्षित सकल जगत्पातु मां पार्श्वनाथः

हूं क्षूं पूर्णेन्दु (ठ) और बीज (ह्रीं) से वेष्टित नाम के बाहर सोलह दल का कमल बनाकर उनमे अपनी अपनी दिशा के योग्य फणमणियों तथा हृदय मणियों के युगलों को लिखे । उसके चारों तरफ रां ई का मंडल बनाकर उसको तीनबार माया बीज ह्रीं से वेष्टित कर दे। इस बनाये हुवे यंत्र के द्वारा समस्त संसार की रक्षा करने वाले श्री पार्श्वनाथजी भगवान मेरी रक्षा करे।

टीका:

पा तु मां पार्श्वनाथ, किंविशिष्टः संरक्षित सकल जगत सं रक्षितं सकलं जगद्येन स तथा केन एतदयंत्रेण एतदधृतोक्त यंत्रं एतदयंत्र तेन कथं भूतेन सं प्रयुक्तेन संपादितेन कैः द्वयऽष्टाब्ज पत्रैः अब्जे पत्राणि कमल दलानि द्वाभ्यां प्रगुणितानिऽष्टौद्वष्टौषोडशे इत्यर्थः द्वयष्टौ च तानि अब्ज पत्राणि द्वयअष्टाब्ज पत्राणि तैः किं विशिष्टैः दत्तैः संयोजितैः द्वः बाह्ये वहिः प्रदेशे कस्य अभिधानस्य अभिधान मंत्रं वलयस्य ॐ नमो भगवते पार्श्वचन्द्राय हूं क्षुं ठः नमः स्वाहा एवं भूत मंत्र वेष्टितस्य कथं भूतस्य हूं क्षूं पूर्णेन्दु बीज स्वर परि कलितस्य पूर्णेन्दुश्चाकारः बीजं ह्रीं कारः स्वरा षोडशअकारादयः हूं च क्षूं च पूर्णेन्दुश्च बीजं च स्वराश्च तै परिकलितस्य वेष्टितस्य इत्यर्थः पुनः कथं भूतै स्तैः स्वदिगुचित शिरोहन्मणि द्वं द्व भाग्भिः शिरोमण्यश्च हन्मणयश्च तेषां द्वं द्वानि युगलानि स्वस्याः दिशाः उचितानि स्व दि गुचितानि तानि च तानि शिरो हन्मणि द्वं द्वानि च तानि भंजन्ते युंजंति स्व दिगुचित शिरो हन्मणि द्वं द्वभाजितैः तत्र पूर्वदिक् चतुर्दलेषु ईन्द्र मंडल सं बधिनो वासुकि शंखपालयोः शिरोमणि हन्मणि अंतरितौ उचितौ दक्षिण दिक चतुर्दलेषु अग्निमंडल संबंधिनोरनंत कुलिकयाः शिरोमणि हन्मणि तया पश्चिम दिक चतुर्दलेषु वायु मंडल संबंधिनो स्तक्षक महापद्मयोः शिरोमणी हन्मणि एवमुत्तर दिक चतुर्दलेषु वरुणमंडल संबंधिनोः कर्कोटक पद्मयो शिरोमणी हन्मणि एवमेव पुनरपि किं भूतैश्च रामोंकारांतरालै रां च ऊंकार श्च ताऽवंतराले शेषांतैः एतेनाकाशमंडल संबंधिनो जंय विजयायोः हन्मणि व्याख्यातौ शिरोमणि च पूर्वमेव मध्ये निवेशितौ पुनरपि कीदृशैः त्रिगुण परिवृतौ त्रिवार परिवेष्टितौ कया मायया ह्रीं

कारेणेति एव मिदं सर्वरक्षा यंत्रं कुकुंम कपूरादि शुभद्रव्यैर्लिखितं नित्यं पूजनीयं तथा दष्टेन स्वस्थेन च विद्या हन्मणि कृत्य बाहौ धरणीयमिति॥

टीका :

बीच में साधक का नाम लिखकर उसके चारों तरफ इस मंत्र का वलय बनावे ॐ नमो भगवते पार्श्वचंद्राय ह्रूं क्ष्रूं ठः नमः स्वाहा । इस वलय मंत्र के पश्चात सोलह दल का कमल बनाकर उसमें सोलह स्वर लिखें। इसके पश्चात अपना अपनी दिशाओं के योग्य फन मणियां और हृदय मणियां को लिखे दक्षिण दिशा के चारों दलों में अग्नि मंडल संबंधी अनंत और कुलिक की फणमणि और हृदय मणियों को लिखे पश्चिम दिशा के चारों दलों में वायुमंडल संबंधी तक्षक और महापद्म की फणामणि और हृदयमणि को लिखे। उत्तरदिशा के चारों दलों में वरुण मंडल संबंधी कर्कोटक और पद्मनाग की फण मणि और हृदयमणियों को लिखे । इसके पश्चात वलय को ॐ रां ॐ रां से भर देवें इसके आकाश मंडल संबंधी जय विजय नागों की हृदय मणियों का भी व्याख्यायन किया गया क्योंकि इनकी फण मणियों का समावेश पहले ही अंदर के मंत्र में कर लिया गया है। इसके पश्चात तीन बार माया बीज ह्रीं से वेष्टित करके क्रौं का निरोध करे। इस सर्वरक्षा यंत्र को कुंकुम कपूर आदि शुभ द्रव्यों से लिखकर इसकी नित्य पूजा करें। डँसे हुवे और स्वस्थ दोनों प्रकार के ही मनुष्यों को फणमणियां और हृदय मणियों के इस यंत्र को हाथ में पहनना चाहिए।

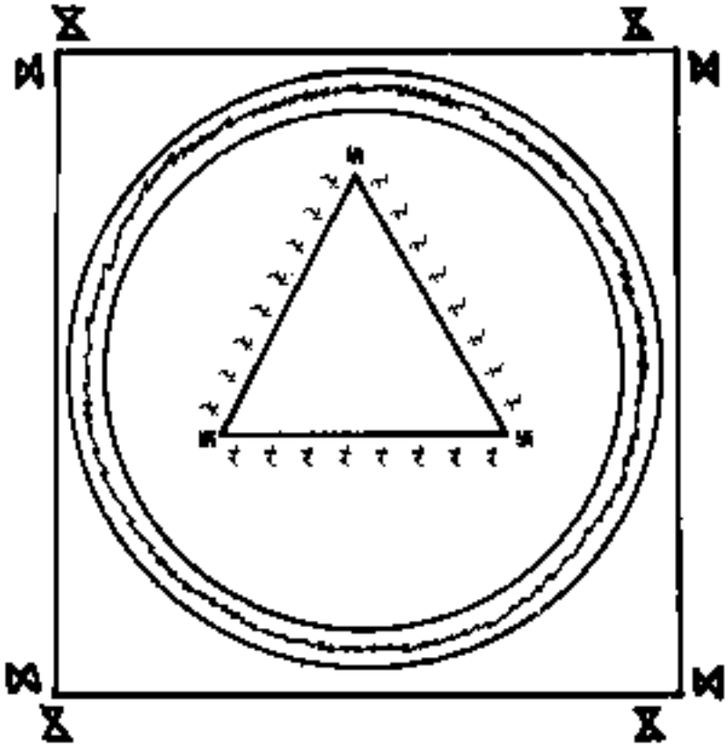

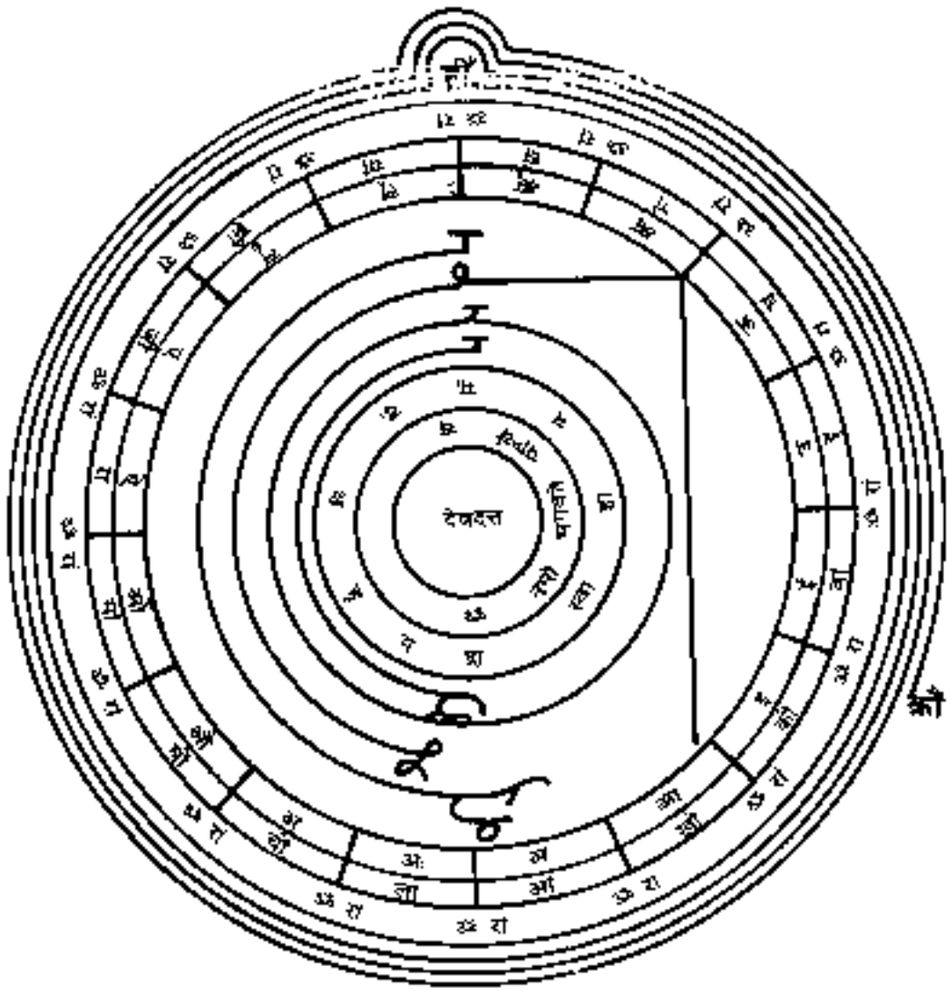

इदानीं गारूड सिद्धि प्रतीत निमित्तं स्तोत्र गर्भिता स्तुतिमाहः

अब गारूडी सिद्धि के विश्वास के कारण स्तोभ गर्भवाली स्तुति को कहते हैं।

वायव्याशा मुखस्य त्रिपुर वलय मध्य स्थितस्योद्ध्वंजानौ
ज्वालामाला कुलस्य ज्वलनयुत ललाटस्य दष्टस्य पुंसः

रेफा क्रांतांगयष्टे र्यंयुत शरदंडेन हृद्याहतस्य
स्तोभं सद्यो विद्ध्यात्पदमिनुतिर सौ पातुमां पार्श्वनाथः ॥ ४ ॥

वायु कोण (पश्चिम उत्तर दिशा के कोणे) की और मुख वाले तीन मंडलों के बीच मे ठहरे हुवे ऊपर को घुटने किये हुवे अग्नि के समूह से व्याप्त ज्वलन अर्थात ॐ बीज युक्त मस्तक वाले र वर्ण से व्याप्त शरीर वाले डँसे हुवे पुरूष को य य से युक्त शरीर अर्थात् हू बीज दंड से हृदय में चोट किये हुए पुरूष को शीघ्र ही स्तोभन करने वाली स्तुति स्वरूप भगवान पार्श्वनाथ में ही रक्षा करे।

टीका

कीदृशो सौ भगवान मां पातु यस्याभिनुति स्तुतिर्यदभिनुतिः विदध्यात कुर्यात् कं स्तोभं पूर्वदष्टस्य मंत्र वशात्पालनं स्तोभः तं कथं सद्यः शीघ्रं कस्य पुंसः पुरुषस्य कथं भूतस्य दष्टस्य पुनः कीदृशस्य वायव्याशा मुखस्य पवन दिक् अभि मुखस्य पुनः किं विशिष्टस्य त्रिपुर वलय मध्य स्थितस्य स्व स्व वर्ण समन्वितोऽग्नि पवन भूमंडलांऽतर गतस्य पुनः किं विशिष्टस्य ऊर्द्ध जानोः ऊर्ध्व स्त्येत्यर्थ पुनरपि कीदृशस्य ज्वाला माला कुलस्य अग्नि शिखा कलाप व्याप्तस्य ज्वलन युत ललाटस्य ललाटन्यस्त प्रणवस्य रेफा क्रांतांग यष्टेः र वर्ण व्याप्त शरीरस्य कीदृशस्य आहंस्तस्य ताडितस्य केन वायुयुत शरदंडेन हूंकारगृ कांडेन हूं यः उं कों उं खो उं चो उं अथवानेन मंत्रेण ह्रक्ष हृदि हृदये इति पवित्रित भूमौ स्वोचित द्रव्यैः स्व बीजान्वितोऽग्नि मंडलं तद् वाह्ये चतुर्दिशा दत्त स्वाकार कोण न्यस्त यकारं पवन मंडलं तद्वाह्ये चतुदिशां दत्तक्षीकारं कोणन्यस्त लकारं भूमिमंडलं चे विलिख्यंपुष्प धूप अक्षतादिभिः पूजयित्वा च स्नान सुगंधद्रव्यानुलेपन पुष्पधूप धौत वस्त्र पवित्रितागे पुराण दष्ट स्तन मंडल त्रयस्य मध्ये पूर्वादिगाभि मुखेन उंध्वीकृतः स्तोभः ग्राहयितव्यः ततोऽस्यापि पूर्वोक्त रक्षायंत्रं कर्णाद्य मिति।

टीका:

भगवान पार्श्वनाथ जी की स्तुति डँसे हुवे पुरुष का स्तोभन करती है। मंत्र के द्वारा रक्षा करने को स्तोभन कहते हैं। अब डँसे हुवे पुरुष के स्तोभन करने का उपाय लिखा जाता है।

डँसे हुवे पुरुष को तीन मंडलों के बीच में पश्चिम उत्तर के कोण की तरफ मुख करके बिठा दिया जावे । वह तीनों मंडलों अग्निमंडल-वायुमंडल तथा पृथ्वीमंडल में हो और अपने अपने बीजों से युक्त हो डँसा हुआ पुरुष उसके अन्दर पश्चिमोत्तर कोण की और ऊपर को घूँटने किये हुए अर्थात् उकडू बैठा हुआ हो । अग्निमंडल के बीच बैठने के कारण यह डंसा हुआ पुरुष अग्नि से पूर्ण रूप से भरा हुआ तो होगा ही किन्तु उसके मस्तक में भी ॐ कार को ध्यान पूर्वक स्थापित करे और उसके सारे शरीर में रं बीज स्थापित करे। इतनी क्रिया करने के पश्चात उस डँसे हुए के हृदय में 'हूं य य' इस मंत्र से या "ॐ कों ॐ खो ॐ चों ॐ छों" इस मंत्र से ताड़न करे। मंडलों को पवित्र की हुई पृथ्वी पर अपने योग्य द्रव्यों से इसप्रकार बनावे कि बीच में अपने बीजों सहित अग्नि मंडल हो उसके बाहर चारों दिशाओं में स्वा बीज तथा कोणेभिं यं बीज लगाकर वायुमंडल बनावे। उसके बाहर चारों दिशाओं में क्षि बीज तथा कोणों में लं बीज को लगाकर पृथ्वी मंडल बनावे इन मंडलों को बनाकर उनकी धूप पुष्प अक्षत आदि से पूजा करें। फिर स्नान करके सुगंधित द्रव्य लगाकर तथा शरीर में लेप करके पुष्प धूप और धुले हुए वस्त्र पहनकर अपने शरीर को पवित्र

करके उन तीनों मंडलों के बीच में डँसे हुवे पुरुष को घुटने ऊपर को करके बिठा देवें ,और स्वयं पूर्वदिशा की तरफ मुख करके स्तोभन करे। फिर इसकी भी पहिले कहे हुवे रक्षा यंत्र से रक्षा करे।

इदानी विपक्ष मंत्र वादि प्रति गृहीत दष्टस्य गरल
स्थंभनाय स्तभंन गर्भितं स्तुति माह ॥५॥

अब विरोधी मंत्रवादी से रोके हुए डँसे हुए पुरुष के विष को स्तभंन करने के लिए स्तभंन गर्भित स्तुति कहते हैं।

नाम ह्ल्व्र्यूंकार सत्संपुट गतमवनी संपुटस्थं प्रदीपैः
कूटैर्वज्रांतरालस्थिति भिरूपचितं पूर्णचंद्रा वृतागैः

पीतं भूमंडलांतः स्थितमुरुकुलिशैः पीडितं स्तभं मिष्टं
यन्नाम स्तोत्र मंत्रतैर्जनयति सततं पातुमां पार्श्वनाथ ॥५॥

नाम ह्ल्व्र्यूं के संपुट के बीच में रखकर उसके चारों तरफ पृथ्वी मंडल का सम्पुट बनावे। वह वज्रों के अंतराल में प्रदीप (ॐ) और कूट (क्ष) से व्याप्त हो नाम पूर्णचन्द्र बीज ठ से घिरा हुआ हो पीला पृथ्वी मंडल चार वज्रों से भी बिंधा हुआ हो जिनके नाम का मंत्रो से इसप्रकार स्तंभन होता है वह पार्श्वनाथ भगवान मेरी रक्षा करे।

समां पातु पार्श्वनाथः यस्य नाम यन्नाम जनयति संपादयति कं स्तंभनं किं विशिष्टं इष्टं गतिः गर्भादिकां कै कल्पितं यन्नाम स्तोत्र मंत्रैः किं विशिष्टं सत् नाम ह्ल्व्र्यूं कार संत्संपुटगतं नाम समिन्वितौ ह्ल्व्र्यूंकारौ नाम ह्ल्व्र्यूंकारौ तयोः संपुट गत नामानुविद्ध ह्ल्व्र्यूंकार संपुटत्व रूपेण गत मित्यर्थः किं विशिष्टं अवनि संपुटस्थं भूमंडलसंपुट स्थितं पुनः कीदृशं उपचितं व्याप्तंकै कूटै क्षकारैः कीदृशैः प्रदीपै प्रकृष्ट आदि तेज स्थितो दीपः ॐकारो योषांतेः कीदृशैः श्चतै वज्रांतराल स्थिति भिः वज्रांतरालेषु स्थितिर्येषांतैः किं विशिष्टं नाम पूर्ण चंद्रावृतांगं ठकार वेष्टितं मित्यर्थः पुनः कीदृशं पीतं तालकादि पीत द्रव्यलिखितं पुनः किं विशिष्टं भूमंडली स्थितं कीदृशं च पीडितं विद्धं कै उरू कुलिशैचतुर्भि महा वज्रै रित्यर्थः इदं स्तंभन यंत्रं लूतादि दुष्ट व्रणे ष्वपि योजनीयं तथा मुख मति गति गर्भ दिव्य क्रोधादि कांश्च स्तंभयतु कामेन पटयोः फलकयो भूर्जयो र्विलिखित्वा सपुटितं भूमौ निक्षिपं उपरि शिलामायाय प्रणादि स्वाहांत यत्रांतर्गत मंत्रेण ॐ ह्ल्व्र्यूं क्षः क्षः क्षः ठः ठ : ठः स्वाहा । इति मंत्र

भगवान पार्श्वनाथ के नाम के स्तोत्र मंत्र इच्छानुसार गति गर्भ आदि सभी प्रकार का स्तंभन करते हैं। उपाय यह है नाम को ह्ल्र्व्यूं के संपुट में लिखे उसके चारों तरफ दो पृथ्वी मंडलों का संपुट बनावें। वह पृथ्वी मंडल वज्रों के अंतराल में उँ क्षं बीजों से व्याप्त हो नाम भी पूर्ण चन्द्र बीज ठकार के बीच में हो यह पृथ्वीमंडल हरताल आदि पीले द्रव्यों से लिखना चाहिये। फिर यह मंडल चारों वज्रों से से घिरे हुए हों। इस यंत्र की चींटी या मकड़ी आदि दुष्ट जन्तुओं के जख्मों में भी लगा सकते हैं इसको मुख बुद्धि गति गर्भ और दिव्य क्रोध आदि का स्तंभन करने की इच्छा से दो वस्त्र दो तख्ती अथवा दो भोजपत्रों पर लिखकर एक दूसरे की और मुँह किये हुवे पृथ्वी पर रखकर ऊपर से शिला रख दे इस यंत्र को यंत्र के अन्दर के मंत्र

उँ क्ष्ल्र्व्यूं क्षः क्ष : क्षः ठः ठः ठः स्वाहा

इस मंत्र से लिखें।

ॐ स्वाहा पक्षि बीजैरध उपरिसुधा सोमवद्धि
द्विपार्श्वावकाशैः सध्यान नासामृत विभव युतैर्दिव्यमंत्रैश्च हं झं
ह्वीं क्ष्वीं हंसः पयोभूम्यपगत स विसर्गोलसद्य त्रयाद्यैः
पूतात्माऽपासित स्थावर चर गरलः पातु मां पार्श्वनाथः

ॐ स्वाहा पक्षी बीजों से नीचे और ऊपर सुधा क्ष्वीं तथा सोम ह्वीं बीजों से दोनों करवटों की और आकाश (ह) बीजों से अच्छे ध्यान के द्वारा नाशिका में उत्पन्न किये हुए अमृत के ऐश्वर्य से युक्त हं झं ह्वीं क्ष्वीं हंसः पयः (प) भूमि (क्षि) विसर्ग सहित प आदि बीजों के द्वारा पवित्र आत्मा वाले स्थावर तथा जंगम विष को नष्ट करने वाले भगवान पार्श्वनाथ जी मेरी रक्षा करें।

मां पातु पार्श्वनाथः किं विशिष्टः पूतात्माऽपासित स्थावर चर गरलः स्थावर गरलानि स्थावर विषाणि श्रृंगीक वत्सनामा दीनि चर गरलानि जंगम विषाणि सर्प वृश्चकादि जानितानि पूतः पवित्रित आत्मा यस्यः सः पूतात्मा दष्टः तस्मात् दष्टात् अपासितानि नोदितानि स्थावर चर गरलानि येनसः कैः कृत्वा पूतात्मा ॐ स्वाहा पक्षि बीजैः मस्तकादि न्यस्त प्रणवादि बीजैः कीदृशैः अधः उपरिसुधा सोम वद्धि सुधा क्ष्वींकारः सोमो ह्वींकारः अधः उपरि च तौ विद्यते येषांतैः पाद तले क्ष्वींकार उपरि मस्तके ह्वींकार सहितै रित्यर्थः पुनः किं विशिष्टैः द्वि पार्श्वकाशै द्वि पार्श्वयोर्हकार पंचकान्वितैः कैः कैः कृत्वा अपासित स्थावर चर गरलः दिव्य मंत्रै कै स्तैः हं झं ह्वीं क्ष्वीं हंसः पयोभूम्युपगत स विसर्गोल्लसद्य त्रयाद्यैः पः यः पकारः भूमिः क्षिकारः उपगतं समीपगतं सह विसर्गेण वर्ततेइति स विसर्गौल्लि सद्य त्रयं च तैः पदे आद्ये येषां हः हः प्लावय प्लावय विषं हर हर स्वाहेति उपदेश वर्णातैः कीदृशैः सध्यान नासामृतं विभव युतैः नायायानिर्गतं अमृतं नासामृतं स ध्यानेन कल्पितं नासामृत स ध्यानासामृतं तस्य विभवो माहात्म्यं तेन युतैः रीति हं झं ह्वीं क्ष्वीं हंसः पक्षि य य य हा हा हा प्लावय प्लावय प्लावय विषं हर हर स्वाहेति

ॐ नमो भगवते पार्श्व चंद्राय उं स्वाहा पक्षि हंसः पक्षियः पक्षियः पक्षियः
हः हः प्लावय प्लावय विषं हर हर स्वाहेत्युपदेश मंत्राक्षरैरित्यर्थः॥

भगवान पार्श्वनाथजी स्थावर तथा जंगम (अर्थात् दोनों प्रकार के विष को नष्ट करते हैं। (शृंगीक) (मगरमच्छ) और वत्सनाभ (मीठा तेलिया) आदि के विषों को स्थावर विष तथा सांप बिच्छू आदि के विषों को जंगम या चर विष कहते हैं। पहिले उं स्वाहा पक्षी बीजों का मस्तक आदि कर न्यास करे। फिर नीचे पक्षी में सुधा बीज क्ष्वींकार और ऊपर गरुडाय में सोम बीज इवींकार का न्यास करे। दोनों पार्श्वों में पाँचो ह बीजों का न्यास करें। फिर हं झं इवीं क्ष्वीं हंसः जलः (प) पृथ्वी (क्षि) विसर्ग सहित पांच पद यः यः यः हः हः प्लावय प्लावय विषं हर हर स्वाहा।

इस दिव्य मंत्र से नाशिका में ध्यान करता हुआ अमृत टपकाये नाशिका में ध्यान करने का अमृत मंत्र यह है।

हं झं इवीं क्ष्वीं हंसः पक्षिय पक्षियः पक्षियः पक्षियः हः हः प्लावय प्लावय विषं हर हर स्वाहा

उपदेश मंत्र यह है।

ॐ नमो भगवते पार्श्वचंद्राय ॐ स्वाहा पक्षिः हंसः पक्षिय पक्षिय पक्षिय ह ह प्लावय प्लावय विष हर हर स्वाहा।

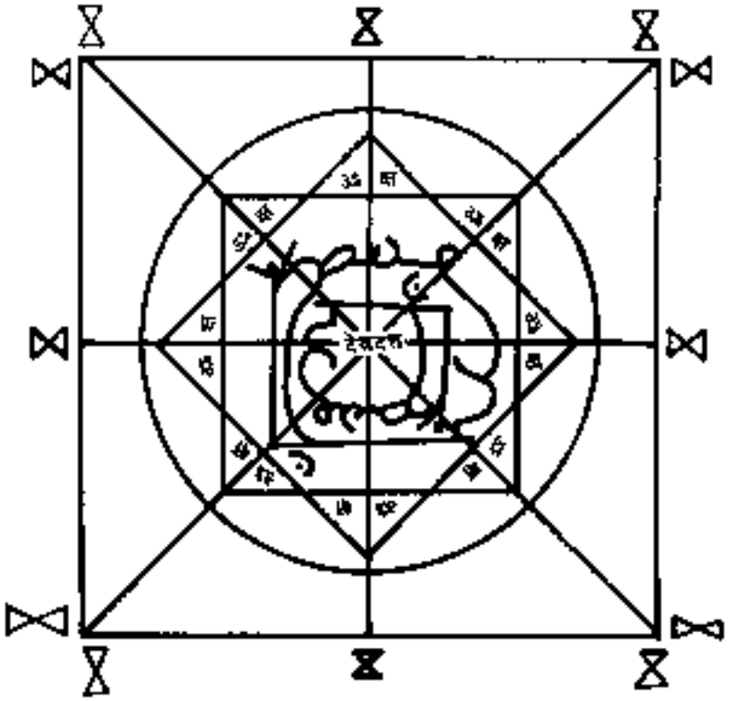

इदानीं मंत्रवाद प्रभाव स्थापनार्थं वाद्य कर्म गर्भितां स्तुति माहः

अब मंत्र के प्रभाव को स्थापन करने के वास्ते बाजे के कर्म आवेशन कर्म के गर्भवाली स्तुति को कहते हैं।

हूंकार व्याप्त संधिं मरुदवनि पुरांतर्गत धूमंधूमं हां
स्वाहा मंत्रिता मोहत मुख हृदयं वायुना धूयमानं
पद्मामूर्द्ध स्फटाकारित वर कर सन्मुद्रयाविशं मुच्चै
र्दष्टं यस्य स्तुति ग्रहियति स भगवान पातु मां पार्श्वनाथ ॥ ६ ॥

डँसे हुए पुरुष के शरीर के जोड़ो में हूँकार को भरकर फिर उसको वायुमंडल और पृथ्वीमंडल के बीच में बिठलाकर धुएँ के समान धूम्रवर्ण के जल को हा स्वाहा आदि मंत्र से मंत्रित करके उसके मुख और हृदय पर डाले, फिर उसके शरीर को वायु से कंपावे। इस प्रकार पद्मावती देवी के सिर के फण के समान आकार वाली दाहिने हाथ की मुद्रा से आवेशन करने वाले भगवान पार्श्वनाथजी मेरी रक्षा करें।

मां पातु भगवान पार्श्वनाथः कीदृशो भगवान यस्य स्तुति ग्रहियति कं आवेशं कं ग्राह्यति दष्टं कथं भूतं हूकारं व्याप्त संधिं हूंकारेण व्याप्ताः संधयो यस्य तं पुनः कथं भूतं मरु दवनि पुरांतरगतं पवन भूमंडलं मध्यगतं धूम धूमं धूम वद्धूम्रं धूमलं किं विशिष्टं हां स्वाहा मंत्रितां भो हत मुख हृदयं हां स्वाहा मंत्रः क्षिप स्वाहा अयं मंत्र अनेन मंत्रितं यदं भः पानीयं तेन हते मुख हृदय यस्य तां आधूयमान कप्यमानं केन वायुना कया कृत्वा आवेशं ग्रहयति पद्मा मूर्द्धस्फुटाकारित वर कर सन्मुद्रया वर कर सन्मुद्रा दक्षिण हस्त शोभन मुद्रा पद्मा पद्मावती तस्या मूर्द्धि मस्तके स्फुटाः फणाः तासामां कारः संजातो यस्यां वरकर सन्मुद्रायां सा तथा सआत्मानः *पद्मावती सद्धयानेन त्यर्थः एवं सद्यो दष्टंवा कृत्वा आवेशनानां विद्य कथा कथनादि चो द्य कर्म्मकारयित्वा देवि पद्मावति स्व स्थानं गच्छं गच्छ जः जः जः इति मंत्रेण विसर्जन करणियमिति ॥*

उससमय से डँसा हुवा पुरुष चैतन्य सा होकर बैठ जाता है और इसप्रकार से बात करती है मानो वह उस पुरुष को डँसने वाला नाग हो भूतप्रेत आदि के विषय में भी जगाना या आवेशन इसी को कहते हैं। जगाने के वास्ते डँसे हुँये सब अंगों के जोडों में हुं बीज का न्यास करे फिर उसको वायुमंडल-पृथ्वी मंडल के बीच में बैठाएं। फिर धुएँ के सामान धूम्रवर्ण जल को क्षिप ॐ स्वाहा मंत्र से मंत्रित करके उसके छींटे उसके मुख और हृदय पर मारे और उसको वायु से कंपावे। फिर पद्मावती का ध्यान करे फिर अनेक प्रकार की कथायें कहकर अपने योग्य कर्म करके विसर्जन करे।

विसर्जन मंत्र :

देवी पद्मावती स्व स्थानं गच्छ गच्छ जः जः जः
इदानीं परेण स्तंभे कृते तद्विधा छेदनेनानुविद्धां स्तुतिमाह

यदि दूसरे ने स्तंभन करा दिया हो तो दूसरे की विद्या का छेदन करके वास्ते स्तुति का वर्णन करते हैं।

वह्नि ऊर्वी व्योम वारि स्व सन युत यकारैः स्त्रिभिः पंच टांत प्रांतैः
हुं फट समेतैर्जप्त्वा खटिकया नाम्नि टांता वृतांते
वज्रै र्विद्धश्चतुर्भिः कुलिशविवर दत्तानले सप्त कृत्वः
छिन्ने य त्प्रभावात नश्यति विकृति रसौ पातुमां पार्श्वनाथ ॥७॥

वह्नि (उं)ऊर्वि (क्षि) व्योम (हा) वारि (प) श्वसन (स्वा) तीन प पांच ठ प्रान्त (स्फ्रां स्फ्रीं स्फ्रूं स्फ्रौं स्फ्रः) हुं और फट सहित मंत्र को खड़िया से सात बार जप कर और मंत्री के नाम को टांत (ठ) से घेरकर उसको चार वज्रों से बांध देवें तथा वज्रों के अंतराल में अनल (उं) लिखकर अपने प्रभाव से विकार का नाश करने वाले भगवान पार्श्वनाथ जी मेरी रक्षा करें।

असौ पार्श्वनाथौ मां पातु यस्य प्राभवं प्रभुत्वंयत्प्रभावं तस्मात यत्प्राभावात् नश्यति का विकृतिः मंत्र शक्तेरन्यथा भाव लक्षणा क्वसाति नाम्नि पर मंत्रिणोभिधाने कथं भूते टांता वृतांतै टांतः ठकारः तेना वृत्तं अंतं समीपे देशो यस्य तत टांता वृतांतं तस्मिन् पुनः कथं भूते विद्धे कैः वज्रैः कतिभिः चतुर्भिः पुनः कीदृशैः कुलिश विवर दत्तानले कुलिश विवरेषु वज्रांतरालेषुदत्तःअनले उंकारो यस्य तत तस्मिन कथं भूतोछिन्नो कथं सप्त कृत्वः सप्तवारान् जपति खटिकया कैः वह्नि वीं व्योम वारि श्वसन युतः यकारैः वह्निःउंकारः उर्वी क्षिकारः व्योम हाकारः वारि पकारः श्वसन स्वाकारः तैर्युंता श्वते यकारा श्वतैः कतिभि त्रिभिः पुनः कथं भूतैः पंच टांत प्रांतैं ठकार पंच कान्वितै पुनरपि कीदृशै हुं फट समैतैः उं क्षिश प स्वाय ठ ठ ठ स्फ्रां स्फ्रीं स्फ्रूं स्फ्रौं स्फ्रूः हुं फट॥ अनेन मंत्रेण सप्तवार जपति खटिकया सप्तवारं विलिख्यते गंधाक्षत पुष्प दीप धूप पूजिते सप्तवार छिन्ने च नाम्नी त्यर्थः एवम श्यं विद्यापि गति गर्भादि स्तंभे खोंजनीयेति (इदानिं दष्टस्य शाकिनी संक्राति निग्रह गर्भास्तुति माहः)

अब डँसे हुवे को शाकिनी की संक्राति के निग्रह स्वरूप की स्तुति को कहते हैं। भगवान पार्श्वनाथ के प्रभाव से मंत्र शक्ति से किसी दूसरे प्रकार का प्राप्त हुवा विकार तुरन्त ही नष्ट हो जाता है। अब इसका उपाय लिखा जाता है।

पहिले विकार पहचानने वाले दूसरे मंत्री के नाम को 'ह' बीज के बीच में लिखकर फिर उसको चार वज्रों से बांध दे। उन वज्रों केअंतराल में 'ॐ' बीज लिखकर मंत्र को पूर्ण करे फिर खड़िया से यह मंत्र सात बार जपे।

उं क्षि हा प स्वाय स्वाय स्वाय स्वाय ठः ठः ठः ठः ठः स्फ्रां स्फ्रीं स्फ्रूं स्फ्रौं स्फ्रः हुं फट इस मंत्र को जपकर सात बार खड़िया से उस नाम वाले मंत्र को लिखे सातों बार पूर्ण होने पर उसका गंध अक्षत पुष्पदीप और धूप से पूजन करें। इसप्रकार यह विद्याकी गति गर्भ आदि स्तंभन में लगाई जाती है।

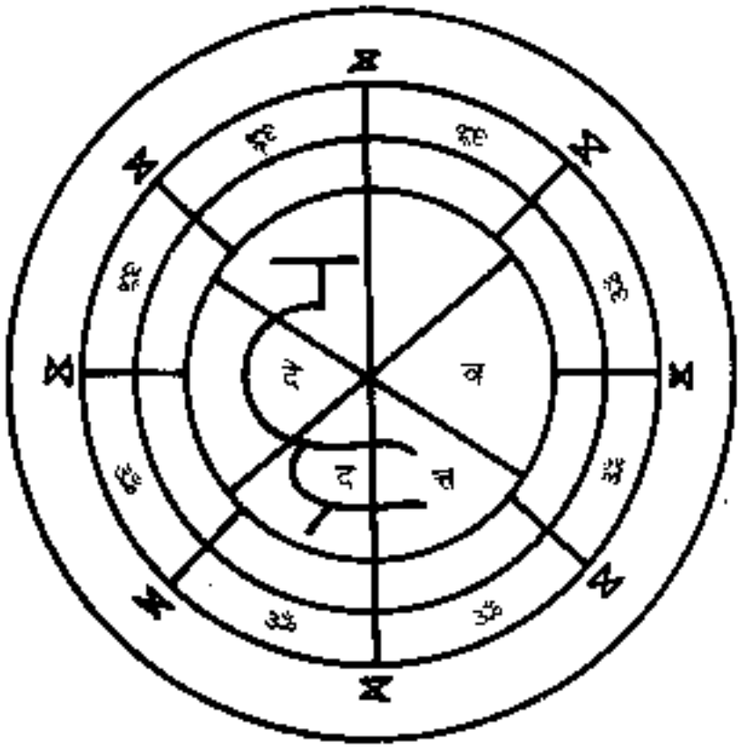
ह्रीं
ॐ
ॐ
ॐ

झौंकारं रांत युक्तं शिखि पवन पुर स्थापितं नाम गर्भं पश्यंतं य त्प्रभावाद्विजहति पुरूषं योगिनी मुद्रया द्राग। ॐ हां ग्रां हुं फट ग्राक्षर जपित यवैस्ताडितं सास्व गंधं शाकिन्याः श्री द्रं नंदि प्रथित गति रसौ पातुमां पार्श्वनाथः ८॥

रांत (ल) से युक्त झौं को अग्निमंडल और वायुमंडल के बीच में स्थापित करके सबके बीच में नाम लिखे। उसको दिखलाने और योगिनी मुद्रा से ॐ हां ग्रां हुं फट मंत्र को जौ और अश्वगंध पर पढ़कर मारने से जिसके प्रभाव से शाकिन्या पुरुष को छोड़ देती हैं। वह इन्द्रों के आनंद से समवशरण आदि रूप प्रसिद्ध गति वाले अथवा इन्द्रनंदि आचार्य से की हुई प्रसिद्ध ज्ञान रूपी स्तुति वाले भगवान पार्श्वनाथ मेरी रक्षा करें।

कीदृशो सौ मां पातु पाश्वंनाथः इन्द्र नंदि प्रथित गतिः इंद्राणं नंदो महोत्सवो विद्यते -ास्यां सा इन्द्रनंदिनी प्रथिता प्रख्याता गतिः समवशरणा दियात्रा यस्य सः अत्र भगवतः स्तुति रूपेण कर्त्या इन्द्र नदिं ति आत्म नाम प्रकाशितं कीदृश वत्प्रभाव द्विजहति स्तुति कर्ता रम्यजंति काः शाकिन्यः कं पुरुषं कया योगिनी मुद्रया कथं द्राक शीघं किंविशिष्ट ताडितं कैः ॐ हंसः वक्षः क्ष्म्ल्व्यूं झौं ह्रौं यां हुं फट मंत्रः ॐ झौं झौं झौं शाकिनी नां निग्रहं कुरू हुं फट ग्राक्षर जपित यवै कथं यथा भवति साऽश्वगंधं यथा भवति अश्वगंधा समिन्वितै यंवै रित्यर्थः किं कुंर्वतं पुरुषं पश्यं अवलोक्यंतं कं झौंकारं ऊद्धाधोरेफ युत जकारावं स्थिता ॐ क्त्रंः कथं भूतंरातं युक्तं रस्थातों रांतो लकारः तेन युक्तं समिन्वितं पुनः कीदृशं शिखि पवन पुरः स्थापितं अग्नि वायु मंडल मध्य न्यस्तं कथं भूतं च नाम गर्भं दृष्टस्य नाम गर्भंयस्य तत नाम गर्भ इति इदं यंत्रं कुठ्ये फलके वा खटिकया लिखित्वा पूजयित्वा दर्शनीय भित्यैव मधि गतार्थं पंच भूतादि यंत्राणां संग्रहमंत्रवत् पूर्वसेवा कृत्वा कृत मंत्रानुष्ठानं सिद्ध मंत्र रत्न करंडी जगद् विशद कीर्तिर्भवतीति॥

भगवान पार्श्वनाथ के प्रभाव से शाकिनी पुरुष को छोड़ देती है। इब उनको छोड़ने का प्रकार बतलाते हैं। योगिनी मुद्रा से जो अश्वगंध के ऊपर निम्नलिखित मंत्र को पढ़कर इनसे शाकिनी से ग्रहीत पुरुष को मारे मंत्र यह है।

ॐ हंसः वक्ष क्ष्म्ल्व्यूं झौं ह्रौं यां हुं फुट
ॐ झौं झौं झौं शाकिनी नाम निग्रहे कुरू कुरू हुं फट्॥

फिर उसको यह मंत्र दिखलावे ल तथा ऊपर और नीचे रेफ युक्त झौं के चारों तरफ अग्नि मंडल बनावे, उसके चारों तरफ वायुमंडल बनावे और यंत्र के ठीक बीच में डँसे हुए का नाम लिखे। इस यंत्र को खाड़िया से दीवार पर या तख्ती पर लिखकर पूजन करके दिखलावे। इसप्रकार जाने हुए

अर्थ वाले पंच भूतादि यंत्र के संग्रह और मंत्रों केद्वारा पुरुष पहिले की हुई सेवा से मंत्रो के अनुष्ठानों से सिद्ध करके अपने पास मंत्रों का पिटारा बनाकर समस्त संसार में निर्मल कीर्ति को प्राप्त करताहै।

पार्श्वनाथ जी का दूसरा स्तोत्र

श्री मद्देवेन्द्र वंदारक मुकुट मणि ज्योतिषां चक्रवालै
र्व्यालिढिं पाद पीठं शठ कमठ कृतोपद्रवा वाधितस्य
लोकालोकावभासि स्फुरदुरु विमलज्ञान सद्दीप्रदीपः
प्रध्वस्त ध्वांत जालः स दिशतु सुखं पार्श्वनाथोजिनेंद्रः ॥ १ ॥

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः विभास्वन्मरकतमणि भाक्रांत मूर्त्तेहि
वं मं हं सं तं बीज मंत्रैः कृत सकल जगत क्षेम रक्षोरुवक्षः
क्षीं क्षीं क्षूं क्षैं समस्त क्षिति तल महित ज्योति क्षौं क्षां क्षीं क्षं क्षः क्षिप्त
बीजात्मक सकल तनोनः सदा पार्श्वनाथः ॥ २ ॥

ह्रीं कारं रेफ युक्तं र र र र र रां देव सं सं प्रयुक्तं
ह्रीं क्लीं ब्लूं द्रां द्रीं सरेफं वियदमल कलापंचकोद्भासि
हूं हूं यूं यूं धूम्र वर्णैं रखिलमिह जगन्मेवि देह्यां मुवश्यं
मंत्रं पठंतं त्रिजगदधिपते पातु मां पार्श्व नित्यं (पार्श्वमां रक्षःरक्षः) ॥३ ॥

ॐ ह्रीं क्रों सर्व वश्यं कुरु कुरु सरसं कामणं तिष्ट तिष्ट
हूं हूं हूं रक्ष रक्षं प्रबल बल महाभैरवासाति भीतं
द्रां द्रीं द्रूं द्रावय हन हन फट फट वषट बंध बंधः
स्वाहा मंत्रं पठंतं त्रि जगदधि पते पार्श्वमां रक्ष नित्यं ॥ ४ ॥

हंसः ह्वीं क्ष्वीं स हंसः कुवलय कलि तैरं कितांग प्रसूनै
उं वं वहः प क्षि हं हं हर हर हर हु पक्षि पः पक्षि कोपं
वं झं हं संभवं सः सर सर सर सुंसः सुदा बीज मंत्रैः
स्त्राय स्वस्थावरादि प्रवल विष मुखं हारिभिः पार्श्वनाथैः ॥ ५ ॥

क्ष्मां क्ष्मीं क्ष्मूं क्ष्मौं क्ष्मः एतैरहि पति विनुते मंत्र बीजेश नित्यं,
हा हा करोग्र नादैर्ज्वल दनल शिखाकल्प दीर्घोर्द्धकेशैः
पिंगाक्षैं ल्लोंल जिव्है र्विषम विषधरा लं कृतैं स्तीक्ष्ण दंष्ट्रैः
भूतै प्रेतै पिशाचैरनघ कृत महो पद्मवाद्ररक्षः ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं ह्रं किंनिनां सपादिहरमदंभिंदि सुद्धेर्द्धबुद्धे
ग्लौं क्ष्मं ठं दिव्य जिव्हा गति मतिं कुंपितं स्तंभनं सं विधेहि
फट फट फट सर्वरोग ग्रहमरणभयोच्चाटनं चैवं
पार्श्वत्राद्य स्वाशेषदोषाद मरनर वरैर्नूत पादारविंदः ॥ ७ ॥

स्फ्रां स्फ्रीं स्फ्रूं स्फ्रौं स्फ्रः प्रवल वल फलं मंत्र बीजं जि
नेन्द्र रां रीं रूं रौं रः एभि परम तरहितं पार्श्व देवादि देवं
क्रां क्रीं क्रूं क्रौं क्रः मेति ज ज ज ज ज जराज जंरि कृत्य देवं
धूं धूं धूं धूम्र वर्ण दुरित विहारितं पार्श्वमां रक्ष नित्यं ॥ ८ ॥

इत्थं मंत्राक्षरोत्थं वचन मनुपमं पार्श्वनाथस्य नित्यं
विद्वेषोच्चोटन स्तंभन जनवश कृत पापरोगापनोदि
प्रोत्सर्पज्जंगम स्थावर विषमविषध्वसनं चायु दीर्घं
मारोग्यैश्वर्य्यादि भक्त्या स्मरति पठति यः स्तोति तस्येष्ट सिद्धि ॥ ९ ॥

पर नित्यं मंत्राक्षरों से निकला हुवा उपमा रहित वचन श्री पार्श्वनाथ जी का स्तोत्र है। यह विद्वेषण उच्चाटन, स्तंभन और वशीकरण करता है। रोगों को नष्ट करता है। बैठे हुवे जंगम और स्थावर कठिन विषों को नष्ट करता है। बड़ी आयु आरोग्य और ऐश्वर्य देता है। यहां तक कि जो इसको भक्ति पूर्वक पढ़ते हैं स्मरण करते हैं अथवा इससे स्तुति करते हैं उसकी इच्छा किये हुवे सब कार्य सिद्ध होते हैं।

संप्रदाय क्रमं ज्ञेयं यंत्र मंत्रार्थ गर्भयोः
द्वयेन स्तोत्रयोः पार्श्वः स्तूत्यश्चजिनोमतः ॥ १ ॥

उपरोक्त दोनों स्तोत्रों में संप्रदाय के क्रम से आये हुवे मंत्र-यंत्रों को स्वंय ही जानते हुवे इन दोनों स्तोत्रों से भगवान की स्तुति करनी चाहिये।

अथ श्री पार्श्वनाथ स्य पाद पद्मौ प्रपूज्येत
पंचोपचार विधिनामूलं यत्रं ततोर्च्चयेत् ॥ २ ॥

श्री पार्श्वनाथ भगवान के चरण कमलों को पहले पंच उपचारों से पूजे और इसके पश्चात मूल यंत्र का पूजन करें।

सन्निधो पार्श्वनाथ स्य मूलंमंत्रं ततो जपेत
लक्षं तद्दशमांशं च होमं कुर्यात् स सिद्धयति ॥ ३ ॥

इसके पश्चात श्री पार्श्वनाथ भगवान के समीप बैठकर मूलमंत्र का एक लाख जप करके उसका दसवाँ भाग अर्थात दस हजार होम करने से मंत्र सिद्ध होता है।

प्रजप्तः सप्त कृत्वोयं प्रयुक्तः सर्वमां मयं विघ्न
विषं भयं दुष्टं ग्रहादींश्च विनाशेयत् ॥ ४ ॥

इसके पश्चात इसको सात बार जपने से ही सब रोग, विघ्न, विष , भय और दुष्ट ग्रहों को नष्ट करता है।

वशयेत पुरूषान् राज्ञः स्त्रीश्च सं स्तंभयेदरीन
आत्मनश्च सदापदभ्यो विदधीता भिरक्षणं ॥ ५ ॥

यह राजा पुरुष स्त्रियों को वश में करता है। शत्रुओं का स्तंभन करता है. और निरंतर अपनी रक्षा करता है।

ज्वर हरण मंत्रः

नामो नमो भगवते बीजस्याधो विलिख्य तस्याथः
न्यस्योच्च पार्श्वनाथयो त्यों उं ह्रीं बीज वेष्टांततः ॥ १ ॥

ॐ नमो भगवते बीज के नीचे नाम लिखकर उसके नीचे श्री पार्श्वनाथाय लिखे और उसको क्रम से ॐ ह्रीं से वेष्टन करें।

वहि रष्टं दलं कमलं दलेषु शेषाक्षरापि मंत्रस्य,
रक्षोहर दलयोस्तु द्वे द्वे मंत्राक्षरे दद्यात् ॥ २ ॥

उसके बाहर आठ दल का कमल बनाकर उनमें मंत्र के शेष अक्षरों को लिखे रक्ष हर एक दलों में दो दो अक्षर दे देवें।

नामोध्वर्ता विलिखित बीजावेना मुना बहिस्तेषां
मंत्रेणवेष्टयित्वा विलेखिद्भूमंडलं बाह्ये ॥ ३ ॥

नाम के ऊपर और नीचे लिखे हुवे इस बीज आदि के बाहर यंत्र को इस मंत्र से वेष्टित करके बाहर पृथ्वी मंडल बनावे

यंत्र मिदं नव कमलं योद्धावन शुभंकं सभाजने लिखितं
मंत्रेणापित्तमंभः पीतं शमयेत् ज्वरान् सर्वान् ॥ ४ ॥

इस नवीन कमल वाले उत्तम यंत्रको उत्तम बरतन में (अथवा ताम्रपत्र) लिख कर उसमें इस मंत्र से मंत्रित किये हुए जल को पीता हैं। उसके सब प्रकार के ज्वर शांत हो जाते हैं।

ॐ नमो भगवते पार्श्वनाथाय ऐहि ऐहि ह्रीं ह्रीं भगवती दह दह हन हन चूर्णय चूर्णय भंजय भंजय कडु मर्दय मर्दय ह्मल्व्र्यूं आवेशय आवेशय हुं फंट् स्वाहा

मार्तंड संख्यया जापं सह च कुसुमैः
पुरात्तद्दशांसेन होमेनाप्येष मंत्रः प्रसिद्धयति ॥ ५ ॥

पहले इस मंत्र की फूलों के साथ बारह हजार जपे और बारहसौ होमसे सिद्ध करके तब काम में लेना चाहिए।

ज्वर ग्रह पिशा चाद्या स्तोभं कृत्वा शिरो व्यथां
नश्यतिं पार्श्वनाथस्य मंत्रेण नेन तत्क्षणात् ॥ ६ ॥

पार्श्वनाथ स्वामी के इस मंत्र से ज्वर ग्रह पिशाच आदि रुक जाते है सिर का दर्द उसी क्षण नष्ट हो जाता है।

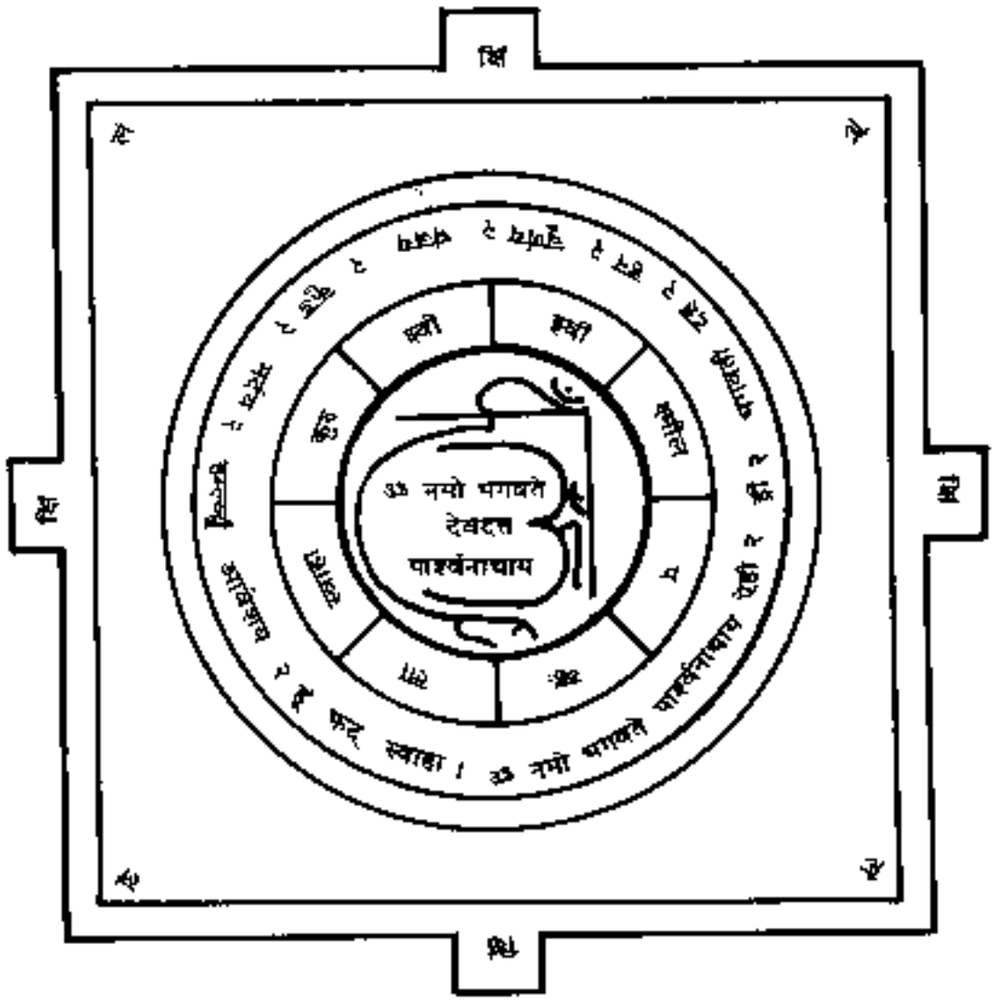

ॐ नमो भगवते पार्श्वं तीर्थंकराय नीलकंठी नीलकंठी निर्मलाक्षि निर्मलाक्षी अमृत वर्षिणी वर्षिणी शीघ्रं शीघ्रं अविशय एहि पर ॐ क्षीं फट स्वाहा॥

ॐ नमो भगवते पार्श्वे तीर्थंकराय नीलकंठी नीलकंठी निर्मलाक्षि निर्मलाक्षि नागदूती नागदूती अमृतवर्षिणी शीघ्रं-शीघ्रं आवेशय आवेशय एहि एहि पर पर ॐ फट् स्वाहा।

श्री पार्श्वनाथ जिनवर पादांबुज पार्श्वसंस्थितं पद्मैः
संजप्य नील कंठीमंत्रमिमं द्वादश सहस्रं साधयतु तत्राक्षिप्तं
रुग्विष जिदस्य सं स्पर्शाः स्वस्थावेशकृदशोत्तर शतंतन्मंल संजप्तिः ॥ २ ॥

इस नील कंठ मंत्र का श्री पार्श्वनाथ भगवान के चरण कमलों के समीप बैठकर १२ हजार बार जपे

इस मंत्र को १०८ बार जप कर शीघ्र ही सिद्ध करलेना चाहिये

इस मंत्र के द्वारा छूने से यह रोग और विष को जीतकर निरोग कर देता है और आवेशन करता है ।

ॐ नमो भगवतो पार्श्व तीर्थंकराय काली मुखीरवीनां वासुकिनां कर्कोटकानांकपिलानां
काल दंतानां काल दंष्टाणां काल दृष्ट्रं कराल कानां अष्टादश वृश्चिकानां एकादशदेवतानां पणरसविष सर्पाणां षोडशमूषिकाणां षोडश मर्कटानां व्यतरं विषं वा सर्प विषं वा सर्वरोग विनाशिनी सर्व विद्या छेदिनी आत्म विद्यां रक्ष रक्ष हितंकारी हितंकारी यशंकरि यंशकरि अत्रयंकरि र मनोहरि सर्व रोग शमं करिभीम करिभीम भीष्ण दंष्ट्रा करालाय सर्वजन वंश कराय सर्वराज वशमानय वशमानय सर्वलोक मृगभूत पिशाचादीनवशमानय र हन हन दह दह पंच पंच शीघ्र शीघं आवेशय आवेशय मुंच मुंच गाह मुंच नमो भगवते पार्श्वतीर्थंकरे भ्यो नमो नमः स्वाहा ॥

पार्श्वंप्रज्ञप्ति मंत्रोयं विषक्षुद्र निषदनः
वंध्यानां गर्भ जननः सर्वभूत ग्रहापहः ॥ १ ॥

स्तनोद्गमन कृत स्त्रीण मार्तवोत्पत्ति कृच्यसः
अपमृत्युहरो मार्गभयेभ्यश्चापि रक्षाति ॥ २ ॥

यह पार्श्व प्रज्ञप्ति मंत्र छोटे छोटे विषों को नष्ट करता है वंध्या के गर्भ उत्पन्न करता है रज उत्पत्ति करता है, कुच उद्गम (बड़ा करे) तथा सब भूत ग्रहों को नष्ट करता है। स्त्रियों के बंद हुए ऋतुधर्म को फिर पैदा करता है , शांतिरूप हैं, अपमृत्यु का नाश करता है और मार्ग के भय से रक्षा करता है।

ॐ णमो अरहंताणं ॐ णमो भगवते त्रैलोक्यनाथाय नमोस्तु परमेश्वराय क्षी नमो भगवते केवलि तीर्थंकराय देवकरे देवकरे देवकरे रक्षकरे रक्षकरे राक्षसकरे राक्षसकरे देव कटाक्ष करे देव कटाक्ष करे गरूडाक्ष करे गरूडाक्ष करे गंधर्वाक्ष करे

गंधर्वा करे भूताक्ष करे भूताक्ष करे, पिशाचक्ष करे-पिशाचक्ष करे, राक्षसकरे-राक्षस करे, साधू राक्षस करे, साधु राक्षस करे, सर्वाक्ष करे ,सर्वाक्ष करे गवाक्ष करे, पिंगलाक्षकरे पिंगलाक्ष करे,, कनाताक्ष करे कनाताक्ष करे गुंजाक्षकरे गुंजाक्षकरे मंडलाक्ष करे मंडलाक्ष करे, युद्राक्ष करे युद्राक्ष करे, दक्ष करे दक्षकरे, धरयु धरयु, धर-धर तव-तव हुत-हुत सुच-सुच भूत-भूत, पुष्प-पुष्प दुष्ट-दुष्ट, महादुष्ट-महादुष्ट ग्रहदुष्ट-ग्रहदुष्ट, पर-पर, हर-हर, भर-भर गरुडावाहिनी हुरू हुरू वशनि फट फट हुं फट ह्रीं हुं फट चारण तीर्थंकरेभ्य स्वाहा ॥

द्वादश सहस्र जापात् होमाचार्यं प्रसाधितः कुर्यात,
केवलि तीर्थंकरव्यो मंत्रः सर्वाणि कार्याणि ॥ १ ॥

अष्टोत्तर शत जपतः स्वकर तलान्योन्य ताडनं
ग्रह शांति शत्रु क्षयं च कुरुते मसुरिकां हरति भस्म जंतु कृज्जप्तं ॥ २ ॥

तन्मंत्रितः मुष्टिकादि दत्तानि सर्वाणि रोगाशरोत्पीनं
तज्जप्तः सं स्पृष्टः पुष्पंति फलांति च द्रुम लताद्याः ॥ ३ ॥

तन्मंत्रितः सिकता कृत परिवृत्ति सं रक्षिते
भागः मूषक मूषिक विषधर शार्दूलाद्यै परिहियंते ॥ ४ ॥

यह केवली तीर्थंकर मंत्र बारह हजार जाप और होम से सिद्ध होता है। और सब कार्यों को करताहै।
यह मंत्र १०८ बार जपकर हथेली बजाने से ग्रहों की शांति तथा शत्रु का नाश करता है। इस मंत्र से जपी हुई भस्म को देने से मसूरिका (शीतला) दूर होती है।
इस मंत्र से मंत्रित जल को पीने से सर्वरोग नष्ट होते हैं इस मंत्र को जपकर छूने से वृक्ष लता आदि पर फल फूल आने लगते हैं।
इस मंत्र से जपी हुई बालू को मार्ग में अपने चारों तरफ डालकर मार्ग की रक्षा करने से चूहे, सर्प और सिंह आदि मार्ग से भाग जाते हैं।

ॐ नमो भगवते अरहंत सिद्ध आईरिय उवज्झाया साधु रक्षा चतुर्विंशति तीर्थंकर रक्षा ब्रह्मा रक्षा विष्णु रक्षा क्षेत्र शत कोटि पिशाच रक्षा त्रिय त्रिंश दिव्रं रक्षा ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः क्षां क्षीं क्षूं क्षौं क्षः स्वाहा॥

सं सिद्ध सर्व रक्षाख्यो मंत्रोयं सार्वकार्मिकैः
अनेन विहितं स्नानं शांत्यादिशुभकर्मकृत

यह सर्व रक्षा मंत्र सब कार्यों को सिद्ध करता है। इस मंत्र से स्नान करने से शांति आदि उत्तम कार्य होते हैं।

ॐ नमो भगवते पार्श्वचंद्राय अष्ट महासिद्धि कराय भूति ज्वाला गहन सर्वशूल मूल व्याधि दुष्ट व्रण विनाशाय अनेक विधि विष संहाराय छिंद छिंद भिंद भिंद ज्वाला ग्रह संतापं हन हन रण रण रूण रूण कुण कुण सिलि सिलि चिलि चिलि मिलि मिलि कलि कलि ॐ ह्रां हंसः उँ ह्रीं हंसः ॐ ह्रूं हंसः ॐ ह्रौं हंसः ॐ ह्रूः हंस ग्लौं क्ष्मं ठः ठः स्वाहा॥

सर्वव्याधि हरो मंत्र : श्री पार्श्वस्य जिनेशिनः
जपे होमादिनानित्यं सर्वकर्म करो भवेत् ॥ १ ॥

यह श्री पार्श्वनाथ स्वामी का सर्वव्याधि हरण मंत्र जप होम इत्यादि से सदा ही सब कार्यों को करता है।

ॐ नमो भगवते पार्श्वनाथाय धरणेन्द्र पद्मावती सहिताय फणामणि मंडिताय कमठ विध्वंसनाय सर्व ग्रहोच्चाटनाय सर्वविष हराय सर्वशांति कांति च कुरु कुरु ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आउसा मम सर्व शांति कुरु कुरु स्वधा स्वाहा॥

श्रीमतः पार्श्वनाथस्य मंत्रः सर्वार्थसाधनः
शांति पुष्टि करोत्येव मंत्राराधन योगतः

यह श्री पार्श्वनाथ स्वामी का मंत्र सब प्रयोजनों को सिद्ध करने वाला है मंत्र सिद्ध होने से शांति और पुष्टि करता है।

ॐ ह्रीं पद्मावती नालिकरं भ्रामय भ्रामय शीघ्रं शीघ्रं हुं फट् स्वाहा॥
अयं पद्मावती देव्या मंत्रः कुंभस्य भ्रामकः
नालिकेरो भ्रमत्याशुमंत्र स्यास्य प्रभावतः

यह कुंभ (घड़े) को घुमाने वाला पद्मावती देवी का मंत्र अपने प्रभाव से शीघ्र ही नारियल को घुमाता है।

॥ सरस्वती विधान ॥

विनयं माया हरि वल्लभाक्षरं तत्पुरो वद द्वितीयं,
वाग्वादिनी च होमं वागीशा मूल मंत्रोयं

ॐ ह्रीं श्री वद वाग्वादिनी स्वाहा यह सरस्वती का मूल मंत्र है।

विनयं बीजं हरि प्रिया तत्पुरो वद द्वितीयं
वाग्वादिनी च होमं वागीशा मूल मंत्रोऽयं ॥ १ ॥

मंत्रोद्धारः

ॐ ह्रीं श्रीं वद वद वाग्वादिनी स्वाहा ।

विनयं (ॐ) माया बीज (ह्रीं) प्रिया (श्रीं) दो बार वद वाग्वादिनी और होम (स्वाहा) यह वागीशादेवी का मूलमंत्र है।

तेजोवद द्युगवादिनी त्यतः शून्यमेकैकं
क्रमतोंग मंत्र पंच कमापि पंचागेषु विन्यसेत्

तेज(ॐ) दो वद वाग्वादिनी के पश्चात क्रम से एक एक शून्य बीजों के पांचो अंगों को लगाकर पंचांग न्यास करे।

मंत्रोद्धार :-

ॐ वद वद वाग्वादिनी हां हृदयाय नमः
ॐ वद वद वाग्वादिनी ह्रीं शिर सेस्वाहा
ॐ वद वद वाग्वादिनी हूं शिखायै वषट्
ॐ वद वद वाग्वादिनी ह्रौं कवचाय वषट्
ॐ वद वद वाग्वादिनी ह्रः अस्त्राय फट् ॥

रेफै र्ज्वलद्विरात्मानं दग्धं मग्नि पुरः स्थितं
ध्यायेदमृत मंत्रेण कृत स्नान स्ततः सुधीः ॥ ३ ॥

इसके पश्चात विद्वान मंत्री अपने को अग्निमंडल के बीच में बैठा हुआ तथा अपने मल को जल जलते हुवे रं बीज से जला हुवा ध्यान करके अमृत मंत्र से स्नान किया हुआ ध्यान करे।

सर्वशरीरे प्रणवः शीर्षे वानयनयो ह्रीं कारश्च
धीणा यां च वकारसर्वत्र मुखे दकारः स्यात ॥ ४ ॥

वाग्वदेन वा कंठे दि हृदये नींच योजयेन्नाभौ
पाद द्वितये स्वाहा शब्दं कुंदेन्दु सम वर्णं ॥ ५ ॥

महा पद्म यसो योग पीठा ग्रेति नमोतकः
पीठ स्थापन मंत्रः स्योतजो हीं कार पूर्वकः ॥ ६ ॥

फिर सर्व शरीर में प्रणव (ॐ) सिर में और दोनों आंखों में हीं नाक में व और मुख में सर्वत्र द का ध्यान करे।

कंठ से लगाकर हृदय तक में वाग्वदने नाभि में नीं और दोनों पावों में कुंद पुष्प तथा चन्द्रमा के समान वर्ण वाला स्वाहा शब्द लगावे। तेज (ॐ) और हींकार पूर्वक महापद्मा यशोयोग पीठाग्रे के अंत में नमः लगाकर पीठ स्थापन मंत्र बनता है।

ॐ हीं महा पद्मा यशो योग पीठाय नमः॥
दिक्षपत्रे (पटके) ष्ट दलांभोजं श्री खंडेन सुंगधिना।
जाति का स्वर्ण लेखिनीन्या दुर्वा दर्भेण वा लिखेत ॥ १ ॥

दिशाओं के पत्रो में आठ दल युक्त कमल को सुगंधित चंदन चमेली सोने या डाम का कलम द्वारा लिखे।

ॐ कार पूर्वाणि मोतं कानि शरीर विन्यास
कृताक्षराणि प्रत्येकतोऽथैवयथा क्रमेण देवानि ॥

तान्यष्टषु पत्र के षु ब्रह्म होम नमशब्दयांमध्ये कर्णिकमा लिखेत,
कंक प्रभुति भि स्तंच कैशरै र्वेष्टये नमः

उन आठों पत्रों के प्रत्येक पत्र के आदि में ॐ और अंत में नमः लगाकर शरीर में न्याय करके अक्षरों को पृथक पृथक पत्रों में विखे।

उसकी कर्णिका के बीच में ब्रह्म (ॐ) होम (स्वाहा) और नमः शब्द को लिखे और कंकः आदि को उसके पराग के स्थान में रखे।

कादीनां प्रथमाद्युद्य अष्टौ काद्याः परस्परः
स्वरांताभ्यां क्रमाद्युक्ता विज्ञेया स्तत्र केशरा ॥ २ ॥

क आदि वर्ग के प्रथम आदि अक्षरों तथा प आदि आठो अक्षरों के अंत के दो स्वर अं अः से युक्त करके पराग या केशर के स्थान में रखे।

कंकः चंचः टंटः तंतः पंपः यंयः रंरः लंलः वंवः शंशः षंषः संसः हंहः खंखः ठंठः ठंठः थंथः फंफः गंगः जंजः डंडः दंदः बंबः घं यः ज्ञः ज्ञः ढंढः धंधः भंभः ढंढः मं मं णंणः नंनः मंमः

एतानि केसराक्षराणि बाह्ये त्रिमाययां वेष्टयं
कुंभकेनांऽबुजोपरि प्रतिष्टापन मंत्रेण स्थापयेतां सरस्वतीं ॥ ३ ॥

फिर इस यंत्र को बाहर से हीं से तीन बार वेष्टन करके उस कमल के ऊपर कुंभक प्राणायाम से प्रतिष्ठापन के द्वारा सरस्वती देवी की स्थापना करें।

ॐ अमले विमले सर्वज्ञे देवी भारती वागीश्वरी ज्वल द्वपुषिणे स्वाहा

ॐ प्रतिष्ठापन मंत्रः

पाठांतरः

ॐ अमले विमले सर्वज्ञे ह्रीं हंसः ॐ ह्रीं वद वद वाग्वादिनी भगवती सरस्वती श्री देवी भारती वागीश्वरी ज्वल वज्र मणि प्रभवे ॐ नमः स्वाहा।

प्रतिष्ठापन मंत्र

अर्चयन्परया भक्त्या गंध पुष्पाक्षतादिभिः
विनयादि नमोंतेन ह्रीं मंत्रेण सरस्वती ॥ ४ ॥

इसके पश्चात उस सरस्वती देवी का आदि में विनय (ॐ) तथा अंत में नमः वाले ह्रीं मंत्र से अत्यंत भक्ति पूर्वक गंध पुष्प अक्षत आदि के द्वारा पूजन करे।

ॐ ह्रीं श्री वद वद वाग्वादिनी नमः

पूजा मंत्र

सांख्य भौतिक चार्वाक मीमांसक दिगंबराः
योगकास्ते पिदेवि त्वां ध्यायंति ज्ञान हेतवे ॥ ५ ॥

गमकत्वं कत्वं कवित्वं च वादित्वं वागमिता तथा
हे भारती त्वत्प्रसादेन जायते भुवनै नृणां ॥ ६ ॥

भानुदये तिमिर मेति यथा विनाशं क्ष्वेडं विनस्यति यथा गरूडागमन
तद्व त्समस्त दुरितं चिरं संचितं मे देवी त्वदीय मुख दर्पण दर्शनेन ॥ ७ ॥

हे सरस्वती आप की सांख्य भौतिक चार्वाक मीमांसक दिगम्बर और योगमति ज्ञान की वृद्धि के वास्ते ध्यान करते हैं।

आपका ध्यान करने से कविता करने को वाचन सिद्धि होती है। जिस तरह सूर्य के उदय होने से अंधेरा नष्ट होता है, तथा गरूड़ के आगमन पर विष नष्ट होता है, उसी तरह से चिरकाल से इकट्ठा किया हुआ पाप हे सरस्वती देवी आप के दर्शन से नष्ट होता है।

सिंताबरां चतुर्भुजा सरोज विष्टर स्थितां
सरस्वतीं वर प्रदा महन्निशं नमाम्यहं
अभयज्ञान मुद्राक्ष माला पुस्तक धारिणी
त्रिनेत्रा पातु मां वाणी जटा बालेन्दु मंडिता
इत्थं स्तुत्या मंत्री रवि संख्य सहस्र जातिका कुसुमैः
भक्त्या जपेत् शुद्या भारत्या मूल मंत्रं तं ॥

श्वेत कपड़े पहने हुए चार हाथों वाली कमल के आसन पर बैठी हुई वर देने वाली सरस्वती देवी को मैं नमस्कार करता हूँ। उसका एक हाथ अभय वर देने वाला है, दूसरे हाथ से ज्ञान मुद्रा, तीसरे हाथ में रुद्राक्ष की माला तथा चोथे हाथ में पुस्तक धारण किये हुवे हैं। तीन नेत्रवाली है उस सरस्वती वाणी देवी की जटा बाल सूर्य की तरह मंडित है- वह मेरी रक्षा करे।

मंत्री इसप्रकार स्तवन करके सरस्वती देवी के पूर्वोक्त मूलमंत्र का चमेली के फूलों से भक्ति पूर्वक शुद्ध होकर आठ हजार जप करे।

महिषाक्ष गुगल रजःप्रवि निर्मितचणक मान वटिकानां,
मधुर त्रय युक्तानां होमै वागेश्वरी वरदा ॥ १० ॥

भेंसा गुगल के चूर्ण की चने के बराबर बनाई हुई गोलियाँ तथा घी दूध बूरा के होम से सरस्वती देवी वरदान देती है।

नैवेद्य दीपादिभि रिंदु संख्यैः सुवर्ण पादावमि पूज्य देव्याः
स्ववाम देश स्थित शिष्य मेव मंत्र प्रदद्या त्स हिरण्य मंत्रः ॥ ११ ॥

नैवेद्य दीपक तथा चतुर्थांस सोने के भाग आदि से देवी का पूजन करके अपने बांई ओर बैठे हुये शिष्य को सुवर्ण सहित जल देकर कहे।

विद्या मयेयं भवते प्रदद्यात त्वान्देयान्यद्दशेजनाय
तं श्रावयित्वा गुरू देवताना मग्रे सु विद्यां विधिना प्रदद्यात ॥ १२ ॥

मैं तुमको यह विद्या दे रहा हूँ । तुम भी इसको मिथ्यादृष्टि पुरुष को नहीं देना। गुरू देवताओं के सामने यह वचन सुनाकर विधिपूर्वक विद्या दें।

मंत्री सुर मंत्री समः स्या द्बुद्धया स्या च्चस्य वैदग्ध्यं
कवितायां गमकत्वे वादित्वे वाग्मितायां च ॥ १३ ॥

इस मंत्र की सिद्धि में मंत्री देवताओं के मंत्री वृहस्पति के समान बुद्धिमान, चतुर हो जाता है। व कविता बनाने में और व्याख्यान देने में और शास्त्रार्थ करने में अद्वितीय हो जाता है।

उष्मा मादिमं बीजं ब्रह्म बीज समन्वितं
लांते रांतेन संयुक्तं माया वाग्भव संयुतं ॥ १४ ॥

उष्मा के आदि बीज श ब्रह्म बीज उं लांत (व) रांत (ल) को माया ह्रीं और वाग्भव (ऐं) से युक्त करें।

श्ल्यौं ह्रीं एं मंत्रं जपति यो नित्यं जाति का कुसुमैवरैः
रवि संख्या सहस्त्राणि स स्याद्बाचस्पते समः ॥ १५ ॥

श्ल्यौं ह्रीं ऐं मंत्र का जो नित्य उत्तम चमेली के फूलों से आठ हजार जप करता है वह वृहस्पति के बराबर हो जाता है।

वाग्भवं काम राजं च सांत षांतेन संयुतं
ॐकार संयुतो मंत्रः सः स्या त्त्रिपुर संज्ञकं ॥ १६ ॥

वाग्भव (ऐं) कामराज (क्लीं) सांत (हकार) में मिला हुआ षात (स) औरऊँकार सहित मंत्र अर्थात् ऐ क्लीं ह्सौं त्रिपुर नाम वाला मंत्र कहलाता है।

श्वेतैः पुष्पैः भवेद्बाचा सोणितैर्वस्य मोहनं
लक्ष्यजापेन सं सिद्धिं यांति मंत्रः सहोमतः ॥ १७ ॥

सफेद फूलों से बाणी की सिद्धी और लाल फूलों से वश्य और मोहन होता है। यह मंत्र एक लाख जप और होम से सिद्ध होता है।

सप्त लक्षाणियोविद्यां मायामेकाक्षरीं जपेत
तस्य सिद्धयति वागीशा पुष्पैरिंदु समप्रभैः ॥ १८ ॥

जो पुरुष चन्द्रमा के समान कांतिवाले पुष्पों से एकाक्षरी माया बीज ह्रीं का सात लाख जप करता है उसको सरस्वती सिद्ध हो जाती है।

पीतं स्तंभादि कार्यं सितमति सुभगे शांतिके वाग्विधाने
आकृष्टो वश्य कामे जप कुसुम निभं जाति सिंदुर वर्णं,
उच्चाटे धूम्र वर्णं स्फटिक मणि निभं खेचरत्वं ददाति
व्योमाभं मोक्ष हेतुः परम परमयं पातुनो जैनशक्ति ॥१९॥

पीला फूल स्तंभन आदि कार्यों में, अत्यंत श्वेत उत्तम कार्यों में, सरस्वती विधान में जाति (चमेली) से सिंदूर के समान वर्ण वाला पुष्प आकर्षण तथा वशी करण में , धूम्रवर्ण का पुष्प उच्चाटन में प्रयोग किया जाता है स्फटिक मणि के समान वर्णवाली आकाशगमन की सिद्धि देता है और आकाश के समान वर्णवाला मोक्ष का कारण है। यह जिनेन्द्र भगवान की शक्ति जयवंत होवे।

सरस्वती देवी का स्तोत्र

बोधेन स्फुरताचिताप चलया सूक्ष्मा विकल्पात्मना
पश्यंती श्रुति गम्य तज्जंवपुषा या वैखरी मध्यमा
तां चित्रात्मा समस्त वस्तु विशदोन्मेषोन्मुख ज्योतिषे
शब्द ब्रह्म लसत्परापर कलां ब्राह्मी स्तुम स्ता वं जसा ॥१॥

सरस्वती का दूसरा नाम ज्ञान है ऐसा कोई जीव नहीं हो जो ज्ञान रहित हो। इसलिये सदा मोजूद रहकर प्रकाशित होने वाली चिररूप सरस्वती देवी तुम्हारा अति सूक्ष्म रूप हो जाता है लब्धि प्रथासक निगोदिया जीव में तुम्हारा अति सूक्ष्म रूप हो जाता है और वह ज्ञानावरणी कर्म से आवृत नहीं होता तुम जब कंठ, तालू, होंठ, मूर्धा आदि के द्वारा उत्पन्न होकर श्रोतेन्द्रिय द्वारा गम्य होती है। तब कानों से सुनाई पड़ने लगती है। तब तुम्हारा रूप मध्यम हो जाता है संसारी जीवों के ज्ञानावरणी कर्म के क्षयोपशम के अनुसार भिन्न भिन्न प्रकार का होने लगता है इसलिये हे श्रुतज्ञान रूपे ब्राह्मि तुम्हारी स्तुति हम विभिन्न प्रकार की समस्त वस्तुओं के स्वरूप को भली प्रकार जान कर शक्ति प्राप्त करने के लिए अर्थात सर्वज्ञ बनजाने के लिये करते हैं।

त्वं लब्ध्यक्षर बोधनेन भविनो नि त्युद्यताणी यशो
स्तत च्चित्कलया परा स्त्रिभुवनानु ग्राहिगीः स्तुत्या
चिच्चक त्यां रिवल वेदिनः परमया संजीवयस्या तया
मुक्त्यानघुते गृहंती भगवती ध्येयासि कस्य हेन ॥२॥

हे भगवती सरस्वती ! तुम संसार में किसका उपकार नहीं करती। इसलिए तुम किसके ज्ञान करने योग्य नहीं हो ? जीव की सबसे हीन अवस्था निगोद है। उसमें तुम लब्ध्य अक्षर ज्ञान देकर जीवों को उपकृत करती हो। इसके बाद जीव की अवस्था निगोद से निकल कर जैसे जैसे पृथ्वी जल आदि स्थावर दो इंद्रिय आदि त्रस मनुष्य आदि संज्ञी पंचेन्द्रिय रूप से बदलती जाती है, वैसे वैसे बढ़ती बढ़ती श्रुतज्ञान प्रदान कर महा-उपकार करती है। जब यह जीव ज्ञानावरणी आदि चार घातिया कर्मों को क्षयकर लोक-अलोक के समस्त चर-अचर पदार्थों का ज्ञाता हो जाता है तो उस अवस्था में भी पूर्ण चिदशक्ति का विकास कर उसको उपस्कृत करती है, और जब आठों कर्मों का नाश कर जीव सिद्ध मुक्त हो जाता है तो उससमय भी तुम उन पर अनुग्रह कर अनंत सुखों का भोक्ता बनाती हो। इसप्रकार जीव की हर अवस्था में तुम अनुग्रह करती है।

क्षेत्रेज्ञेषु सहोपयुक्त वचन ज्योति र्विकल्पात्मया
क्लेषा वर्तिषु वाच्य वाचक विकल्पानुक्रमानुग्रहात
छेदाच्चानुपयुक्त वाग्मय विकल्प स्याक्षरादि च्छिदा
स्यादांत क्रम निर्विभाग वपुषः श्री शारदऽध्येमिते ॥ ३ ॥

हे शारदे ! तुम्हारा शरीर स्यात् पद के ग्रहण करने से क्रम और अक्रम रूप है। एक साथ प्रयोग किये हुवे वचन ज्योति के विकल्पात्मक होने से क्लेश पाते हुए क्षेत्रज्ञों पर वाच्य-वाचक विकल्पों का अनुक्रम बनाकर तुम अनुग्रह करती हो। जो प्रयोग नहीं आ रहे हैं। ऐसे वचन विकल्पों में अक्षरादि का अभाव होने से, उसको गौण बना देती है।

लोकेन्यान्य मनु प्रविश्य परितोयाः संति वाग्वर्गणः
श्रव्यात्म क्रम वृति वर्ण परता ता लोक यात्रा कृते
नेतुं सं विभजत्युर प्रभृतिषु स्थानेषु यन्मारुतं
तत्रायुष्मति जृंभित तव ततो दीर्घायुरानौमितत ॥ ४ ॥

हे आयुष्मति दीर्घजीवन वाली सरस्वती देवी इस लोक में भाषा वर्गणा सब जगह भरी पड़ी है और वे इतनी सघन हैं कि एक दूसरे में प्रविष्ट हैं। वे भाषा वर्गणायें लौकिक जनों के हितार्थ हृदय कंठ तालु आदि स्थानों में हवा की प्रेरणा होने से कर्ण गोचर क्रमशः शब्द रूप बनती हैं उसमें आपका ही प्रभाव स्पष्ट मालूम पड़ता है।
अर्थात आत्मा के ज्ञान द्वारा ही भाषावर्गणायें शब्द रूप बनती हैं जिनको सुनकर लोग अपना सांसारिक व्यवहार चलाते हैं।

सर्वज्ञ ध्वनि जन्य मत्यतिशयोद्रोक श्रुतैः सूरिभिः
साध्वाचार पुरस्सरं विरचितं य त्कालिकाद्यं चयत्
सांख्य शाक्य वचस्त्रयी गुरुवच श्चान्य च्चय लौकिकं
सोयं भारति मुक्ति भुक्ति फलदः सर्वोनुभाव स्तव ॥ ५ ॥

हे भारती ! सर्वज्ञ अर्हंत भगवान की दिव्य ध्वनि सुनकर मतिज्ञान और श्रुतिज्ञान के अतिशय को धारण करने वाले आचार्यों ने आचारांग आदि बारह अंग और कालिक और उत्कालिकादि प्रकीर्णक शास्त्रों की रचनाकी। तथा पचीस तत्वों की प्रकृति के सांख्य और त्रि पटक रूप शाक्य बोध चार्वाक आदि ने लौकिक ग्रंथों को बनाया। यह सब मोक्ष और भोग दोनों को प्रदण करने वाला आपका ही प्रताप है , अर्थात् सम्यकज्ञान और मिथ्याज्ञान दो रूप आपके है उनसे मोक्ष और संसार दो फल प्राणियों को मिलते हैं।

प्राहु: सां व्यवहारिकार्थ मृषयो यन्नैगमाद्यैर्नयै:
भूतार्थ: प्रथते भवत्पद युषां तस्मात्किं मत्राद्भुतं
चित्रं त्वेतदीय यत्पशु नृणां यादृच्छिकी रे वगा:
श्रुत्वा शासति भूतभावि भवत: श्री वाणि युक्ता स्तत्वयी ॥ ६ ॥

हे श्री वाणी ! ऋषि लोगों ने नैगमादि नयों को बताकर संसार का व्यवहार सुचारू रूप से प्रवर्तित करने का उपाय बताया और उसके अनुसार सत्य तत्व ज्ञान प्राप्त हुआ इसमें कोई आश्चर्य नहीं है। आश्चर्य तो इस बात का है कि मनुष्य और पशुपक्षियों की अपनी इच्छा से बोले गये वचनों को सुनकर आपके प्रताप से लोग भूत भविष्यत और वर्तमान तीनों कालों की बातों को स्पष्ट बतलातेहैं।

ह्रीं हंस: पर मंत्र वर्ण परिधि: व्यु: कर्णिकं स्वा भिधा:
पूर्वांतो नमसंश्चत्सूउपर्योत्पत्रेषु नंदादिका:
अष्टौ षोडश रोहिणी प्रभृतीका: सेन्द्रा बहि र्ब्रह्मधी
र्म्मायो वीवृतमां स्थिता सरसिजं श्री देवी नंद्यात्सदा ॥ ७ ॥

हे सरस्वती देवी ! आप ऐसे कमल पर विराजती हैं जिसको कर्णिका में' ह्रीं हंस:' तीन बीजाक्षर हैं पूर्व अंत में चार नमः है आठ दलों में नंदा आदि सोलह दलों में रोहिणी आदि देवियाँ है जो दस दिकपाल माया बीज पृथ्वी मंडल से घिरा हुआ है। अर्थात् वरूणाद दिक्पाल ऊपर ॐ ॐ ब्रह्म बाह्यगे नमः पूर्व और इन्सान होकर क्रों से निरोधित है उसके बार पृथ्वी मंडल हैं।

वाग्दवादिन्यधिको वदौस भगवत्युक्तं सरस्वत्यपि
श्री माद्यावभितं स्व मूर्त्ति मुखतं स्तेजो नम: श्चातंत:
मंत्रोयं प्रवर: शशि द्युति मितो: नुस्थत बीजो ज्वलं
स्वास्यं हृत्कमल स्थिते तव मुखाद् ध्येयो विशदवर्णिभि: ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं श्रीं वद वद वाग्वादिनी भवगती सरस्वती ह्रीं नमः॥

इस मंत्र का हृदय कमल में स्थापना करके जाप करें

चंच चंद्र रूचं कलापि गमनां यः पुंडरीकासनां
सज्ञानाभय पुस्तकाक्ष वलय प्रावार राज्युज्ज्वलां
त्वामध्येति सरस्वति त्रिनयनां ब्राह्मे मुहूर्ते मुद्रा
व्याप्ताशाधर कीर्तिरस्तु महाविद्यः संवद्यः सतां ॥ ९ ॥

जिसकी कांति प्रकाशमान चन्द्रमा के समान है, मयूर पर जिसकी सवारी है कमल जिसका आसन है, जिसके हाथ में ज्ञान मुद्रा है, एक हाथ में शास्त्र है, एक हाथ में अक्ष माला है, एक हाथ प्राणियों को अभयदान दे रहा है, जो उत्तरांग (दुपट्टा चादर) पहने हुए है। ऐसी सरस्वती का जो ध्यान स्मरण करता उसकी कीर्ति दशों दिशाओं में फैलती है। वह महान विद्वान हो जाता है सज्जन लोग उसका अभिनंदन करते हैं।

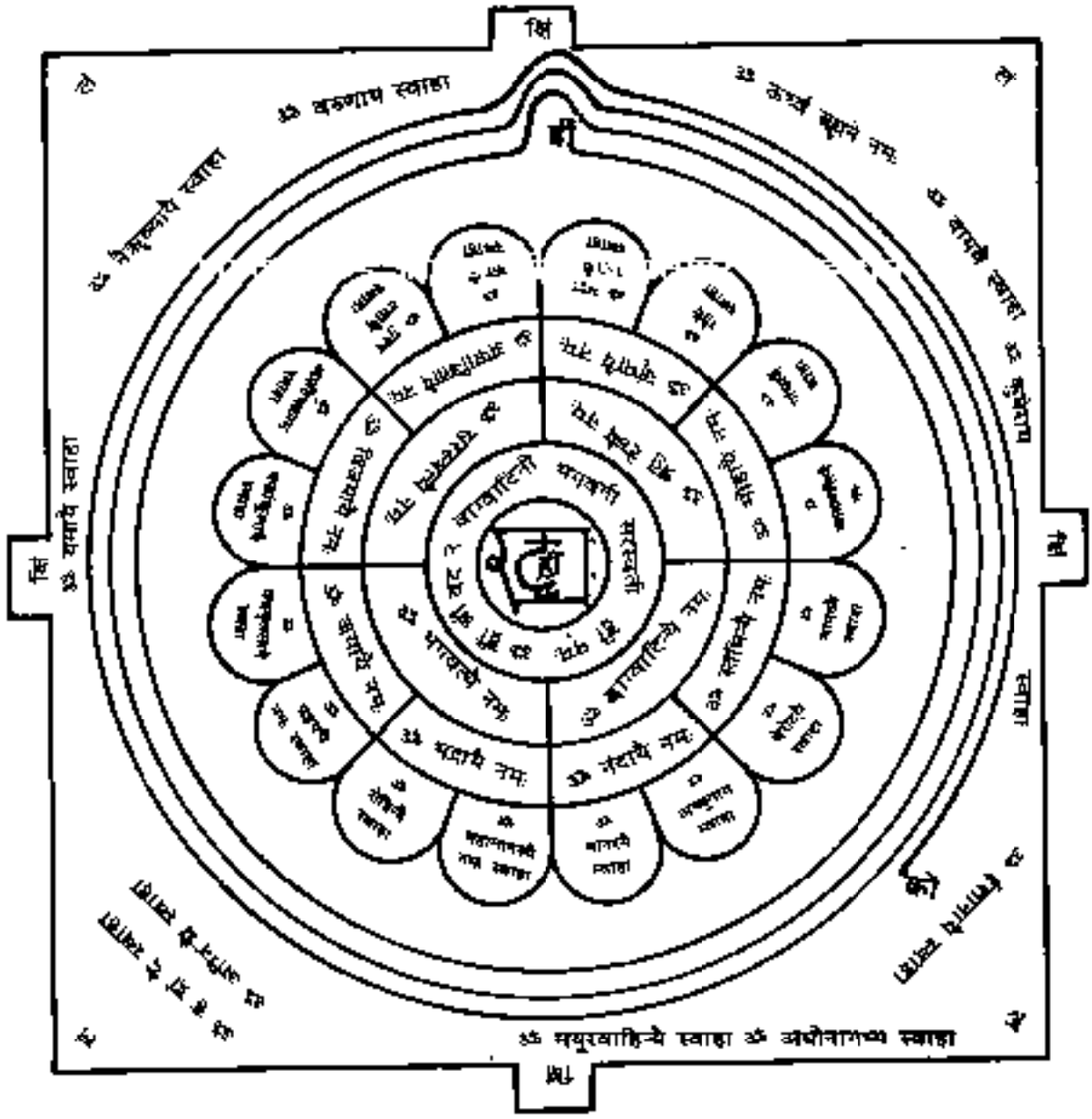

काम चांडाली विधान

वर्द्धमान जिनेन्द्रस्य यक्षी सिद्धायका मता
तद्देय पर नाम्ना च काम चांडालि संज्ञका ॥ १ ॥

श्री वर्द्धमान जिनेन्द्र देव की यक्षी सिद्धाय का जो सब इच्छाओं को पूर्ण करती है। उसका दूसरा नाम काम चांडाली भी है।

अथः मूल मंत्रोद्धारः

ॐकारं लोकनाथं गजवशं करणं पाश शून्यानि
पंच रां रीं रूं रौं रः च युग्मं मधु श्री मथ नमनः ॥ २ ॥

स्थाक्षरं कामं राजं ब्लूं कारं यूं च हां हुं तदनुं
लिख महारौद्र कर्मोक्त बीजं ज्ञातव्यो मूल मंत्रोयं ॥ ३ ॥

विनय विष नमोंतान्वितः सोपदेशः

ॐकारं लोकनाथ (ह्रीं) गजवशकरणं (क्रौं) पाश (आं) शून्यानि पंच युग्मं (हां हीं हूं हौं हः) रां रीं रूं रौं रः) मधु मथ नमन (श्रीं) स्थाक्षरं (स्वाहा सहितं) कामरजं (क्लीं) ब्लकारं (ब्लूं) यूं (यूं) हां हुं बीजं महारौद्र कर्मोक्त बीजं (घे घे)

विनय (ॐ) विष नमः वाला उपदेश सहित मूलमंत्र है।

ॐ विष नमः ॐ ह्रीं क्रौं आं हां हीं हूं हौं हः रां रीं रौं रः श्री क्लीं ब्लूं यूं हां हु घे घे स्वाहा

इति मंत्रोद्धारः

ब्रह्मादि नमो भगवति देवी नामाग्रपंच शून्यानि
हृत शीर्ष शिखा कवचं चास्त्रं रक्ष द्वयं होमं ॥ ४ ॥

कुर्यादे तै मंत्र क्रमेण पचांग रक्षणं मंत्रीः
दिव्याराधन काले प्रतिदिवेसं पीत सत्पुष्पै ॥ ५ ॥

ब्रह्म (ॐ) को आदि में लगाकर नमः भगवति काम चांडाली देवी के आगे पंच शून्य बीज हां हीं हूँ हौं हः शीर्ष शिखा कवच और अस्त्र में लगाकर दो बार रक्ष रक्ष और स्वाहा लगाकर अंग न्यास करे। मंत्री देवी की प्रतिदिन पीले पुष्पों से आराधना करते समय इन मंत्री से अपने पांचों अंगो की रक्षा करे।

मध्ये देव्यभिधानंमष्ट दल भृत्पद्म ततस्तेषु च
माया पाश गजेन्द्र रोधनकरं बीजं हरेर्वल्लभं ॥ ६ ॥

कामेदैर्वल पिंडकं मदनुंगं द्रूं ब्लेकमेण
लिखेत द्वाह्ये वर मूल मंत्र वलयं यंत्रं लिखित्वार्चयेत् ॥ ७ ॥

बीच में देवी का नाम लिखकर उसके चारों तरफ अष्टदल कमल बनावे । इनके पत्रों में माया (ह्रीं) पाश (आं) गजेन्द्र रोधन बीज (क्रों) हरि वल्लभाक्षर (श्रीं) कामेन (क्लीं) ऐवल पिंड (ब्लें) द्रूं और ब्लूं को क्रम से लिखे इसके चारो तरफ मूल मंत्र का वलय सहित यंत्र को लिखकर उसका पूजन करें।

ॐ नमो भगवत्यै त्रिभि मंत्रै क्रमादिमै:
कर्तव्याकाम चांडाल्या आह्वानेज्या विसृष्टय: ॥

इसके पश्चात क्रम से आदि तीनों मंत्रो से काम चांडाली देवी का आह्वान पूजन और विसर्जन करे।

आह्वनादि मंत्र

ॐ नमो भगवते काम चांडालि ऐहि ऐहि आगच्छ आगच्छ संवौष्ट आह्वाननं
ॐ नमो भगवते काम चांडालि अत्र तिष्ट तिष्ट ठ: ठ: स्थापनं
ॐ नमो भगवते काम चांडालि अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट सन्निधिकरणं

पूजामंत्र

ॐ नमो भगवते काम चांडालि जल गंधाक्षत कुसुमादीन गृह-गृह नम:
ॐ नमो भगवते काम चांडालि मदोन्मत्त गामिनी स्वस्थानं गच्छ गच्छ ज: ज: ज:
पुनरागमनाय स्वाहा ॥

विसर्जन मंत्र:

इसके पश्चात इस तरह ध्यान करे।

भूषिताभरणै: सर्वैमुक्ते केशादि गंबरी पातुमां
काम चांडाली कृष्ण वर्ण चतुर्भुजा ॥ ७ ॥

फल कांचन कलश करा शाल्मनि दंडोच्च डमरू युग्मोद्यता
जयता त्रिभुवन वंद्या वश्या जगति श्री काम चांडाली ॥ ८ ॥

आभूषणों से भूषित, खुले हुवे केशों वाली, दिगम्बरी, कृष्ण वर्णवाली, चार भुजाओं वाली मेरी रक्षा करे। हाथों में फल सुवर्ण के कलश वाली, दो डमरू लिये हुवे सेभंल के दंड के समान दोनों जंघाओं वाली तीन लोक से वंदनीय, काम चांडाली देवी जपने वालों के वश में हो जाती है।

इत्यमुना स्तोत्रेण स्तुत्वा स्वेष्ट प्रसिद्धये मंत्री
ध्यायेच्चैवं रूपां देवीं तां काम चांडाली ॥ ९ ॥

मंत्री काम चांडाली देवी की स्तुति करता हुआ उपरोक्त रूप से अपने कार्य सिद्धि के वास्ते उसका ध्यान करे।

पट्टे स्वरूपं प्रविलिरव्यं देव्याः वनावृतं तद्वरकेतकानां
द्विकाधिकाशिति वलार्द्धमानं जपं च्च साष्टशत मेव पुष्पैः॥ १० ॥

देवी के स्वरूप को एक पट्ट पर या वस्त्र पर लिखकर उसके सामने बैठकर केतकी के फूलों से बयालीस का आधा और आठसौ अर्थात आठ सो इक्कीस जप करें।

ततो दशांस प्रकरोतु होमं घृतादि मिश्रित गुग्गुलेन
ददाति देवी वरमात्म चित्ते यच्चिंतितं तद्धवि साधकाय ॥ ११ ॥

इसके पश्चात गूगल में घी आदि मिलाकर दसवाँ अंश अर्थात बयासी आहूतियां देकर होम करने से देवी साधक को उसके मन में सोंचे हुए सब पदार्थो को देती है।

भूम्यामपतित गोमयी लिप्ते धरणी तले सु चतुर स्त्रे
स्थापयितव्यो देव्याकांचन मय पादुके तत्रा ॥ १२ ॥

पृथ्वी पर न गिरे हुए गाय के गोबर से लिपी हुई चौकोर भूमि पर देवी की स्वर्ण रूप पादुकाओं की (खडाऊँ) की स्थापना करनी चाहिए।

द्विक द्युत च त्वारिंशत्पूपान्वित पूगपत्र दीपाद्यैः
वस्त्र फल कांचानाद्यै गुरूचरणं पूजयेत तत्रः ॥ १३ ॥

फिर बयालीस पूर्वो सुपारी पत्र वस्त्र फल और सुवर्ण आदि से गुरू के चरणों की पूजा करें।

जिन समय गुरूपदांबुज भक्ति मते देय एष मंत्रोयं
दास्यसि कुदृष्टये चेत्मुनि वय पापं भविष्यति ते ॥ १४ ॥

एवं निवेद्य पूर्वं शिष्याय जिनेंद्र गुरूजन स्याग्रे
आत्मायागत विद्या दातव्या शाठ्यमपहाय ॥ १५ ॥

यह मंत्र जैनशास्त्र और जैन गुरू के चरण कमलों में भक्ति रखने वाले ही को देना चाहिये। मंत्र देकर शिष्य को बतलादे कि यदि तू यह मंत्र कुदृष्टि (मिथ्यादृष्टि) को देगा तो तुझको मुनि की हत्या करने का पाप लगेगा । शिष्य से जिनेन्द्र भगवान और गुरूजनों के सामने पहले यह बात कहकर अपनी विद्या निष्कपट होकर देवें।

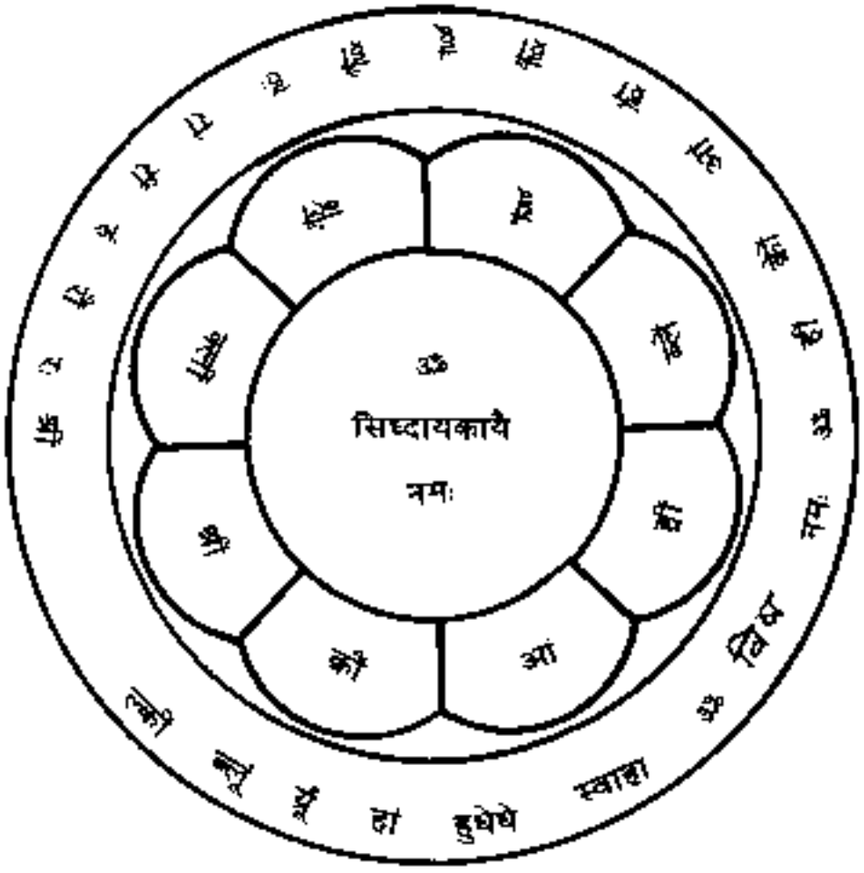

निशेषागम मंत्रवाद कुशलान वाग्देवता वल्लभान्
नत्वा तान विशेषरा न्यति पतिनाचार्य वर्यान गुरून्,
दयात् स्वर्ण समन्वितोन्नत घटाधारा जलं तत्करे
साक्षी कृत्य हुतासना निल अनंता पृथ्वी कुरिति विद,
भमाका शमनं तमं बर मिति सोम प्रभाचार्य
कोशात् कुवि चदार्क तारा गणान् ॥ १६ ॥

फिर सम्पूर्ण शास्त्रों और मंत्र वाद में चतुर सरस्वती के प्रिय नग्न मुनियों, यतियों , आचार्यों और गुरुओं को नमस्कार करके तथा अग्नि, जल, शुक्र आदि ग्रहों चन्द्र, सूर्य और तारों को साक्षी करके सोने के बने हुये घड़े से उसके हाथ में जल की धारा दे।

द्रवंति वनिताः सर्वाद्दृष्टावा सन्मंत्र वादिनं,
क्षोमं गत्वा ग मिष्यांति पुरग्राम वर स्त्रिय
धनाभिलाषस्य धनं महत्ता द्विषाद्य हारं च विनासनेच्छा
यदीप्सितं चेत सि साधकेन तदेव तस्मै भुवि सा ददाति ॥ १७ ॥

इस मंत्र वाले उत्तम मंत्री को देखकर सब स्त्रियां द्रवित हो जाती हैं तथा नगर और ग्राम की उत्तम स्त्रियां क्षोभ को प्राप्त होती हैं। धन की इच्छा करने वाले को बड़े भारी धन की राशि प्राप्त होती है। विष को नष्ट करने की इच्छा वाला विष को दूर करता है। यहां तक कि साधक पृथ्वी पर जो इच्छा करता है देवी उसको वही देती है।

आकृष्टि विद्वेषण वश्य शांति संमोहनोच्चाटन रोधनानि,
सएव मंत्रः कुरुतेद्य मुख्यौ जानाति चेन्मंत्रं विधिं समस्तं ॥ १८ ॥

यदि कोई पूर्ण विधि मंत्र को जानता हो तो यही मंत्र आकर्षण विद्वेषण, वशीकरण, शांति , मोहन, उच्चाटन और स्तंभन भी करता है।

वज्रासनः पूर्व मुखोपविष्टः स्तालादि भिः संविलिखेत्सत्रमंत्रं
मत्रांतरे नाम पदं वितन्व न्विरोध यत्यायु पथः समंतात् ॥ १९ ॥

वज्रासन से पूर्व की तरफ मुख करके बैठा हुआ हरताल आदि से मंत्र को लिखकर तथा दूसरे मंत्र में नाम के पद को रखने से जन्मभर के लिये विरोध हो जाता है।

पट्टं च पट्टांबर भूर्ज पत्रे पीत प्रसूनैरभि पूज्य पूर्व,
पीतेन सूत्रेण च वेष्टियित्वा धरातलस्थं कुरुते निरोधं ॥ २० ॥

पट्ट वस्त्र या भोजपत्र पर लिखकर पहले पीले पुष्पों से पूजन करे तथा पीले धागे से लपेटकर पृथ्वी में गाड़ने से स्तंभन करता है।

रक्त करवीर दंडं दग्धं सवेगौ निधाय चांगारं
रुधिरेण वामजंघो दद्भवेन तं सिंचयेत् प्राज्ञः ॥ २१ ॥

पश्चात् भूतलेतं निक्षिप्तव्यं प्रयत्नतोन्य पत्रतेन च सूत्रेण च
भूर्ये वले कार्योत्पत्र मालिखव्य ॥ २२ ॥

लाल कनेर के दंड को जलाकर उसके अंगारों की अग्नि में रखकर पंडित पुरुष अपनी बाई जंघा के रक्त से उसको सींचे। फिर भोजपत्र पर अपने कार्य को लिखकर उस धागे से लपेटकर उसक ो किसी दूसरी जगह यत्न पूर्वक पृथ्वी में रख दें।

आरक्त सूत्र वेष्टितमधकृत्वा मदन पुत्रिका हृदये,
निक्षिप्याधः शीर्षं भवति यथा सा तथा लभ्या ॥ २३ ॥

इसके पश्चात उस काम देव की पुतली स्त्री के हृदय पर लाल धागा लपेटकर उसका सिर नीचे की तरफ करके रख दें। तो उसको किसी तरह प्राप्त कर लें।

पश्चात त्रिकोण कुंडं निखन्य संध्या सुधोमेह तस्मिन
तिल शर्षप लवण घृतैरे कादृदानयेन्नारी ॥ २४ ॥

फिर इसके पश्चात सायंकाल के समय त्रिकोण कुंड खोदकर उसमें तिल सरसों लवण और घृत का होम करें तो स्त्री को एक दिन में प्राप्त करे स्त्री एक दिन में हो आ जावे ।

ॐ ह्रीं क्रों हृदि कर्णयोरऽपि तथा हस्त द्वये श्री न्यसे,
न्नाभौ ब्लूं स्मरबीजकं स्मर पदे तस्याधरे यूं पुनः
घेघे हस्त तलाग्रयोर्मणिपदे बाहौ च हामां क्रमालिखवेत्
बाह्ये ह्रीं वलयं ततोऽग्नि पुटके शब्दादि मंत्रं लिखवेत्

हृदय में ॐ दोनों कानों में ह्रीं क्रौं दोनों हाथों में श्री नाभि में ब्लूं योनि में क्लीं नीचे होठ में यूं दोनों हथेलियों में घे घे कलाइयों में हां दोनों भुजाओं में आं लिखें। उसके बाहर ह्रीं का वलय देकर फिर अग्नि मंडल से शब्दादि मंत्र लिखे ।

ॐ ह्रां आं क्रों ह्रीं यूं श्री क्लीं ब्लूं द्रां द्रीं अंबे अंबिनी जंभे जंभिनि मोहे मोहिनी स्तंभे स्तंभिनी र र र र र घे घे स्वाहा॥

शब्दादि मंत्र :

पूर्वादितैं स्तदा लिख्य प्रेत वासीत्य खपरे
तप्तं खदिरजागिरै: रिष्टा कृष्टि: सतां मतां ॥ २६ ॥

इसको श्मसान के खप्पर पर पूर्वादि की तरफ लिखने से और खेर के अंगारों पर तपाने से इच्छित स्त्री का आकर्षण होता है।

लोकपतिं टांत स्वर परिवृत मालिख्य नाम संयुक्तं
अष्ट दल तस्य वहि स्तेषु च मायाग्नि पुरमेव ॥ २७ ॥

लोकपति ह्रीं को टांत (ठ) और स्वरों से घेरकर नाम सहित लिखे उसके बाहर आठ दल कमल बनावे माया ह्रीं लिखकर बाहर अग्नि मंडल बनावे।

निंब रस रोचना विष तन्मूत्रित मूर्तिका मलै विलिखेत्
चित्रक पुत्तलिकाया हृदये तन्निक्षद्भूर्जे ॥ २८ ॥

इस यंत्र को नीम के रस गोरोचन विष उस मूर्ति के मूत्र और अन्य मलो से भोज पत्र पर लिखकर उस पुतली के हृदय में रख दें।

खदिरांगारस्यो परि बद्धांतां तापयेच्च पुत्तलिकां
ध्यायन्न भीष्टं वनितां क्षिप्रतामानयेद देवं।

फिर उस पुतली को बाँधकर खेर के अंगारों पर तपावे तो शीघ्र ही इच्छा की हुई स्त्री आ जाती है।

लक्ष्मी विधानं

पद्म हस्ता विशालाक्षी सप्तवार्द्धि भिरावृता।
पल्लवांकुर संकीर्णा पुष्प मंडप मध्यगा
शुभ्राभ स्फुट वर्णाभ्यां सौधांत र्देवतावृत्तां
हस्तिभ्यां हेमकुभाभ्यां क्षीर वार्यऽभिषेचितां

अर्थः- हाथ में कमलवाली, बड़े बड़े नेत्रों वाली, सप्त समुद्रों से घिरी हुई, पत्तों और अंकुरों से व्याप्त, फूलों के मंडप में स्थित, अत्यंत शुभ बादलों के समान प्रकाशित वर्ण वाली, राजमहलों और उनकी देवियों से घिरी हुई, दो हाथियों के द्वारा सोने के कलशों से दूध रूपी जल से स्नान कराई जाती हुई महालक्ष्मी देवी का ध्यान है ।

इत्थंभूता महालक्ष्मी र्यस्यचित्ते व्यवस्थिता।
तस्य प्रयच्छति नित्यं [illegible] संपदा ॥

अर्थ : ऐसी महालक्ष्मी जिसके चित्त में बस जाती है उसको सदा ही ज्ञान अर्थ और काम के ऐश्वर्य को देती है।

इति मूर्तिध्यानं

कर्णिकायांतु विनस्यदेवीं पत्र चतुष्टये।
मति ज्ञानादि दातव्यं भक्ति स्वाहा प्रताडितं ॥ १ ॥

अर्थ : कर्णिका में उपरोक्त प्रकार से देवी को लिखकर फिर चारों पत्रों में भक्ति (ॐ) और स्वाहा सहित मति ज्ञानादि लिखे।

ततोष्ट पद्म पत्रेषु श्री ह्री धृति कीर्ति बुधयः।
लक्ष्मी शांति प्रभावत्या प्रणव स्वाहान्वित मतः ॥ २ ॥

अर्थ : फिर आठ पत्र बनाकर उनमें ॐ तथा स्वाहा सहित श्री ह्री धृति कीर्ति बुद्धि लक्ष्मी शांति और प्रभावती को लिखे।

पश्चात् प्रवेष्टये लक्ष्मीं ततो षोडश पत्रकं।
तत्र देव्यः प्रयोक्तव्याः भक्ति स्वाहा प्रभाजिताः ॥ ३ ॥

अर्थ : इसके पश्चात लक्ष्मी को सोलह पत्रों से घेर देवें जिनमें भक्ति (ॐ) और स्वाहा सहित निम्नलिखित देवियाँ लिखी हैं।

जया च सर्व शास्त्री च विजया यक्ष देवता।
जिता पद्मावती चान्या सिद्धा यन्य पराजिता ॥ ४ ॥

अर्थ :- जया सर्वशास्त्री विजययक्ष देवता अजिता पद्मावती सिद्धायिनी अपराजिता

सुंदरी सुभगा प्रीति सन्मोहनि मनोहरी
सुतारा कामरूपीच वाहि रूपी तथा परा ॥ ५ ॥

तस्यांते च लिखेत् पद्म द्वात्रिंशद्दल शोभितं
तत्र कादीन प्रयोक्तव्यं तेजो भक्ति विंनय
इति बीजं स्वाहांतरात्मकान ॥ ६ ॥

अर्थ :- सुंदरी, सुभगा, प्रीति सन्मोहिनी, मनोहरी, सुतारा, कामरूपी और वह्नि रूपी और अपरा इसके पश्चात बतीस दलों वाला कमल बनावे उनमें ॐ और स्वाहा सहित कन्यादिकों को लिखे।

दलोपांते लिखे त्सम्यक् देवी चक्रं सनातनं।
भक्त्यादि होम पर्यंतं चक्राकार व्यवस्थितं ॥ ७ ॥

अर्थ :- इन दलों के पश्चात भक्ति (ॐ) से आदि करके अंत में स्वाहा लगाकर गोलाकार में प्राचीन देवी चक्र को लिखे।

भौमार्किवारिणी चादौ विद्युन्माला च जृंभिणी।
कात्यायनी च विद्येशा भृकुटी ध्रुवशाश्वती ॥ ८ ॥

अर्थ : आदि में भोमार्की वारिणी विद्युन्माला जृंभिणी कात्यायनी विद्येशा भृकुटी ध्रुव शास्वती

मंगला त्वरिता नित्या कौमारी चैव किन्नरी।
असुरा धनदादेवी गायत्री च सरस्वती ॥ ९ ॥

सु सावित्री च गांधर्वा राक्षसी भैरवी तथा
भूत केशी पिशाचेशी शंखा पद्मनिधि परं ॥ १० ॥

अर्थ :- मंगला त्वरिता नित्या कौमारी किन्नरी असुरा धनदादेवी गायत्री सरस्वती

सावित्री गांधर्वा राक्षसी भैरवी भूतकेशी पिशाचेषी शंख पद्मनिधि

अक्षयादि निधि शांते कामधेनु स्तथा मृती
सौपर्णा चन्द्रमाला च वृणरोपिणी शंकरी ॥ ११ ॥

काली च पापहारी च श्रेयस्करी यशस्करी
कल्यानी मदनोन्मादी मातंगी च पुलिंदिनी ॥ १२ ॥

अर्थ :- अक्षया आदि निधि शांता, कामधेनु, अमृती सौपर्ण चन्द्रमाला, वृणरोपिणी, शंकरी काली पापहारी, श्रेयस्करी, यशस्करी, कल्यानी, मदनोन्मादी, मातंगी, पुलिंदिनी

मोहा कर्ण पिशाची स्यान्मोहिनी शंबरी परा चंडाली
नागदत्ता च स्तंभा च स्तंभिनीनुता ॥ १३ ॥

जंभा च जंभिनी चैव पादधा रूंधिनी
तथा ब्रह्माणी सूर्यपुत्री च महैश्वर्या ततः पराः ॥ १४ ॥

अर्थ : मोहा कर्ण पिशाची मोहिनी शंबरी चंडाली नागदत्ता स्तंभा

स्तंभिनी जंभा जंभिणी पादधा रूंधिनी ब्रह्माणी सूर्यपुत्री महेश्वरी
कौमारी वैश्रवी देवी वाराही वडवा मुखी
इन्द्राणी नुत चामुंडी लक्ष्मी श्री घोण नामका ॥

कौमारी वैश्रवी देवी वाराही वडवामुखी इंद्राणी नुत चामुंडी लक्ष्मी श्री घोण
ततोभूमंडलं दद्यात ष्ट नाग स मन्वितं
देवी यंत्र मिदं श्रेष्ट सर्व कार्येषु पूजितं ॥
इति

अर्थ : इसके पश्चात आठों नाग युक्त पृथ्वी मंडल बनाये या श्रेष्ठ देवी यंत्र सब कार्यो में पूजा जाता है।

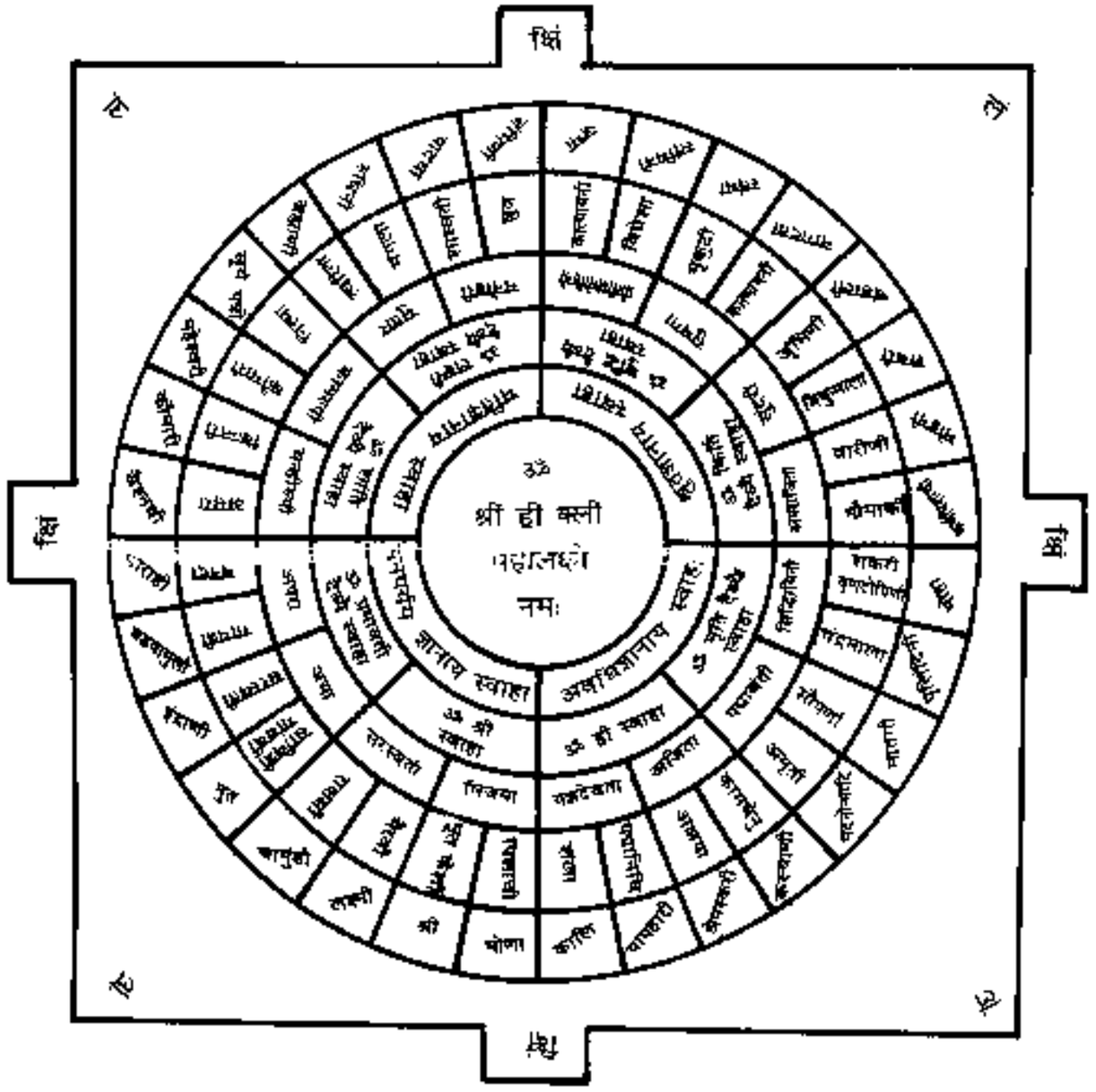

ज्वालामालिनी विधान

तस्य प्रयोग कालेपंच नमस्कार मंत्र कृत रक्षः
दिग्बंधनं विधानं मंत्रैण वाम्र कुष्मांड्या ॥ १ ॥

अर्थ :- इसके प्रयोग काल में पंच नमस्कार मंत्र से रक्षा करके आम्र कुष्मांडी के मंत्र से दिशा बंधन करे।

आम्र कुभाड्या वत् ज्वालामालिनी मंत्र संति उपचाराणं पचाना

अर्थः- आम्र कुष्मांडी के मंत्रों के समान ही ज्वाला मालिनी देवी के पांचो उपचारों के मंत्र है।

विनयोज्वाला मालिन्युद्योतन वतत्व नमस्कारः
एषा प्रधान विद्याज्ञातव्या ज्वालिनी देव्या ॥ २ ॥

अर्थ :- ज्वालामालिनी की विनय (ॐ) और नव तत्व सहित नमस्कार मंत्र ही देने की विद्या है वह ज्वालामालिनी कल्प से जानना चाहिये।

त्रिमूर्ति मूर्ति द्वय भेद्र युक्तं पयोधिमेन्द्र स्थित मां समेतं
स्त्री रेत सो द्रावण मुत्तमं द्रां मु मां हृद्भेदिविदु स्तथा द्रीं ॥ ३ ॥

शून्यं द्वितीय स्वर मिदं युक्तं स्वरो द्वितीय श्च स बिन्दु रन्य :
मृगेन्द्र विद्धि द्रू शक्र च्च कट् स विसु विंदु र्नवभेद तत्वं ॥ ४ ॥

अर्थ :- त्रि मूर्तिवाला क्लीं दो मूर्तिवाला ल इन्द्र युक्त लं समुद्र रूप हं ऐन्द्र लं और लं सहित यंत्र स्त्री के रज को द्रवित करता है और चन्द्ररूप द्रां द्रीं लक्ष्मी के हृदय को भी भेदन करने वाला है। दूसरा स्वर विंदु से युक्त होने पर शून्य कहलाता है। आं सहित अर्थात् उसी को दुबारा कूट विष्णु और विन्दु सहित लेने से अर्थात् आं आं क्षः हं और अं यह मंत्र सिंह के मार्ग को भी वश में करता है।
(ह्रीं क्लीं ब्लूं द्रां द्रीं हां आं क्रों क्ष्वीं) नवतत्व मंत्र है।

उभय करांगुलि पर्व सु वं मं हं सं तथैव तं बीजं
न्यस्य कराभ्यां मुकुली कुर्यात् सर्वांग संसुद्धि ॥ ५ ॥

दोनों हाथों की उंगुलियों के जोड़ो में वं मं हं सं तं बीजक्षरों को रखकर फिर सब अंगो की शुद्धि करें।

वामां करांगुलि पर्व स रां रीं रू रौं रः न्यस्ये च्च रं बीजं
हां हीं हूं हौं हः पुनरेतानपि विन्यसेतद्वत ॥ ६ ॥

बायें हाथ की उंगुलियों के जोड़ो में रां रीं रं रौं रः बीजों को रखकर फिर उसी प्रकार हां हीं हूं हौं हः बीजो को रखें।

वामांदीन्येतान्येव देवि पादौ च जघनमुदरं
वदनं शीर्ष रक्ष युगं स्वाहांतानि स्वांग पंचके न्यसेत् ॥ ७ ॥

अर्थ :- इन्हीं को वामांग में आरंभ करके दोनों पैर जाँघ, पेट, मुख और सिर में लगाकर रक्ष रक्ष स्वाहा के साथ पांचो बीजों को लगावे।

ॐ वं रां हां ज्वालामालिनी मम पादौ रक्ष रक्ष स्वाहा।
ॐ मं रीं हीं ज्वालामालिनी मम जघनं रक्ष रक्ष स्वाहा
ॐ हं रूं हूं ज्वालामालिनी मम उदरं रक्ष रक्ष स्वाहा
ॐ सं रौं हौं ज्वालामालिनी मम वदनं रक्ष रक्ष स्वाहा
ॐ तं रः हः ज्वालामालिनी मम शीर्षं रक्ष रक्ष स्वाहा

आपाद मस्तकां तं ध्यायेत जाज्वल्यमान मात्मानं
भूतोरगशाकिन्योभी त्वानश्यंती दुष्ट मृगाः ॥ ८ ॥

अर्थ :- अपने को घरस से मस्तक तक अत्यंत प्रज्वलित ध्यान करे इस प्रकार भूत सर्प शाकिनी और दुष्ट पशु दूर होकर नष्ट हो जाते हैं।

क्षां क्षीं क्षूं क्षें क्षैं क्षों क्षः खे खे प्राच्यादि दिक्षु विन्यस्तं
मूलावा पर्यंतां दिशा वंद्यं करोतिदं।

अर्थ :- फिर मूल से चारों तरफ पूर्वादि दिशाओं में क्षां क्षीं क्षूं क्षे क्षै क्षों क्षौं क्षः को रखकर दिशा बंधन करें।

पाठांतरं

आत्मानपि समंत्रः क्षतुर स्तं वज्र पजंरम खंडं
ध्यायेत् पीतं मति मान भेद्य मन्यैरिदं दुर्गं ॥ १० ॥

अर्थ :- फिर यह बुद्धिमान अपने चारों तरफ चौकोर वज्र मय अखंड पिंजरे के समान दूसरों से अभेद पीतवर्ण के दुर्ग का ध्यान करें।

मंत्र जप होम कालेनोपद्रवति सु मंत्रिणं कश्चित्
दुष्टग्रहो जिघांश्रु नंलंघयो दुर्गं मध्यगतं ॥ ११ ॥

अर्थः उस दुर्ग के बीच में बैठे हुये मंत्री के पास मंत्र जाप तथा होम के समय में कोई दुष्ट ग्रह भी लांघकर नहीं आ सकता है।

भू त्रीषु सप्त भीषु त्रि भू कोष्ठा सर्व दिग्मुखाः
लेख्या विद्या नव श्लोक चत्वारिंशत्पदप्रभा ॥ १२ ॥

अर्थ : सातों प्रकार के भयों से पृथ्वी की रक्षा करने वाले उस वज्र मय पिंजरे में सब दिशाओं की तरफ पृथ्वी पर तीन कोठे बनावे और उनमें विधि पूर्वक इकतालीस पद लिखे।

नव तत्वान्ये कैकं नव पदं विंद्यो लिखेद्विधि कमशः
तत कोण त्रिपद चतुष्कै द्वादश पिंडान्प्रदक्षण तः ॥१३॥

अर्थ :- नव तत्वों में से एक को लिखे हुवे वह यह है - द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः हां आं क्रों क्षीं फिर क्रम से विद्य के नौ पदों को लिखे । उसके पश्चात तीसरे कोठे में तीन गुण चार अर्थात बारह पिंडों को लिखे जो यह है।

क्ष्म्ल्व्यूं ह्म्ल्व्यूं भ्म्ल्व्यूं म्म्ल्व्यूं स्म्ल्व्यूं र्म्ल्व्यूं ध्म्ल्व्यूं झ्म्ल्व्यूं ख्म्ल्व्यूं ठ्म्ल्व्यूं क्म्ल्व्यूं

अत्राष्टमे समुद्देशे द्वादश पिंड पिंडाक्षाकार पिडाधाः
स्तंभादिषु ग्रहाणां निग्रहणं चापि वक्ष्यंते ॥१४॥

अर्थः- इन पिंडों को आगे आठवें समुदेश में ग्रहों के स्तंभन तथा निग्रह आदि के साथ साथ लिखेंगे।

विलिखेच्च जयां विजयामऽजितामं पराजितां स जंभां।
मोहां गोरीं गांधारी चं क्रों ब्लूं पार्श्वे ष्व ॐ जादिका ॥१५॥

अर्थः- जय विजया अजिता अपराजिता जृंभा मोहा गोरी गांधारी क्रों ब्लूं को श्रीं और क्लीं को आदि में (ॐ) अंत में स्वाहा लगाकर बारह बिन्द पदों के स्थान में लिखे।

ॐ जयायै नमः ॐ विजयायै नमः ॐ अपराजितायै नमः ॐ जृंभायै नमः ॐ मोहायैनमः
ॐ गोर्यैनमः ॐ गाधार्यै नमः ॐ क्रों नमः ॐ ब्लूं नमः ॐ क्षीं नमः ॐ क्लीं नमः॥

स्वाहांताः क्षीं क्लीं पार्श्वस्थेषु हां हीं हूं हौं हः श्चतुः कोष्टेषु विलिखेत्।
रेखाग्रेषु विलिखेषुच वज्राण्यथ वज्र पंजरं प्रोक्तं ॥१६॥

अर्थः चारों कोठों में हां हीं हूं हौं हः इन पाँचों शून्यों बीजों को लिखे और सब रेखाओं के अग्रभाग में वज्रों को लिखे यह वज्र मय पंजर का वर्णन किया गया है।

पिंडेषु ष्वहभानां देव्यभिधानं पृथक पृथक लिख्यंतान्।
स्त्रीनेके नैव प्रवेष्टयेन मध्य पिंडेन् ॥१७॥

अर्थ :- पिंडों को लिखने में हम आदि अक्षरों को पृथक पृथक रूप से लिखकर पिंडों के अंदर सावधानी से लगावें फिर मध्यपिंड के द्वारा देवी को वेष्टित करें।

रक्षक यंत्र:

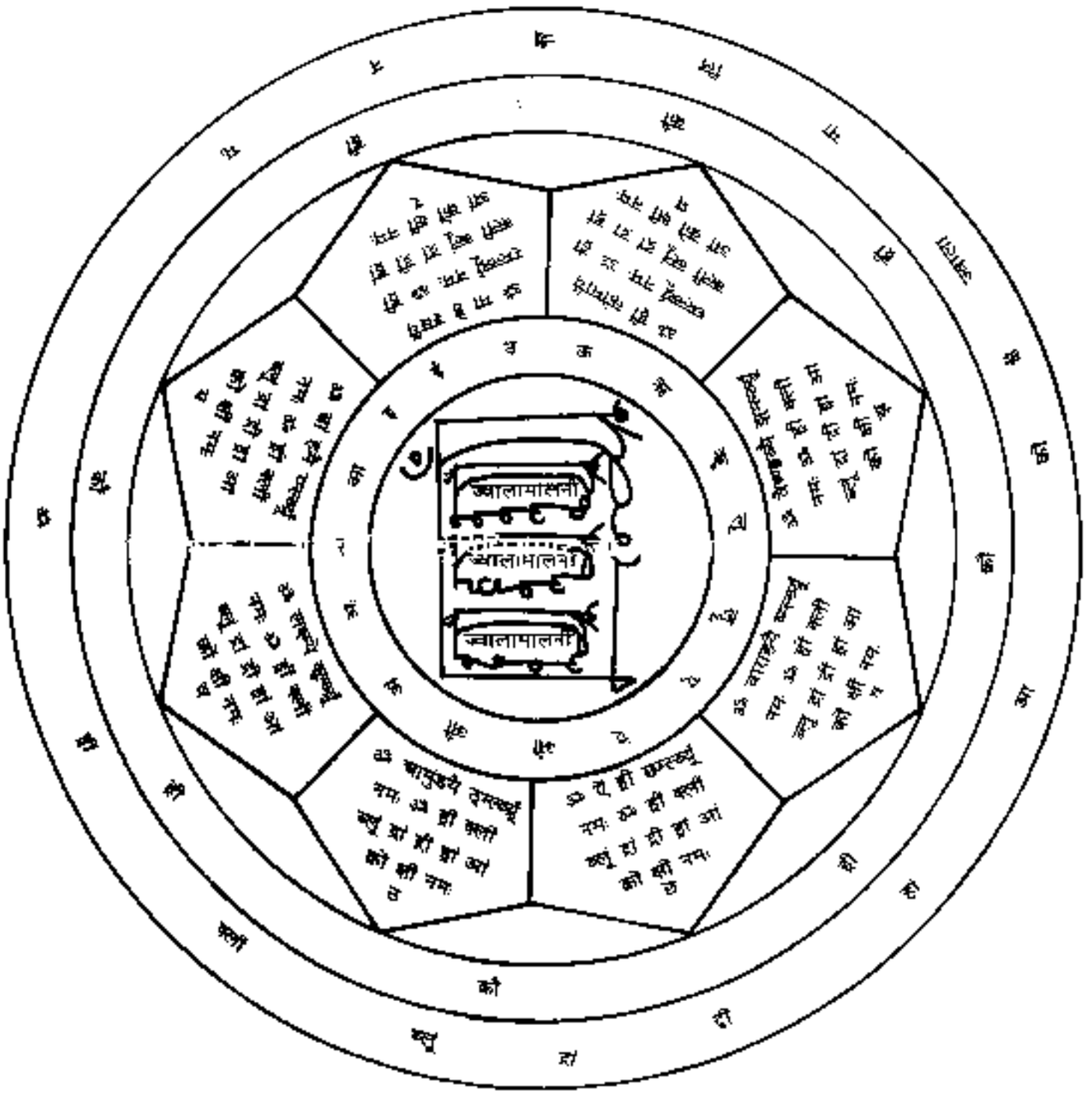

स्वर केशरमष्टदलं कमलं बाह्ये क्रमाद्दलेषु लिखेत्।
अष्टौ ब्रह्मणद्या ब्रह्मादि नमोंति मार्गात् ॥१८॥

अर्थ :-पराग में ज्वालामालिनी देवी को लिखकर उसके चारोंतरफ अष्टदल कमल बनावे जिनमें क्रम से आठों ब्रह्माणी आदि माताओं को आदि में ॐऔर अंत में नमः लगाकर लिखें।

य र घ झ ष छ ठ व चाष्टौ शेषान ।
पृथक क्रमाद् विलिखेत् तथैव प्रणावाद्यान्नव तत्व नमोंतिमान्मंत्री ॥ १९ ॥

अर्थ :- इसके पश्चात दूसरे क्रम से य र घ झ ष छ ठ व पिंडों को आदि में ॐ और अंत में नमः लगाकर लिखे।

क्रों सर्व दलाग्रेषु ह्रीं सर्व दलांतरेषु लिखेत।
ॐ नव तत्वं ज्वालिनी नमः इत्यावेष्टयेत् बाह्ये ॥ २० ॥

अर्थः- सर्व दलों के अग्रभाग में क्रों और बीच में ह्रीं लिखकर बाहर ॐ नव तत्व ज्वालिनी नमः मंत्र से वेष्टित करें।

इत्थं कथितस्या स्य ज्वालिन्या परम मूल मंत्रस्य
मध्ये ध्यायेन् मात् भिरष्टां भिः परिवृतां देवी ॥ २१ ॥

अर्थ :- इस कहे हुये ज्वालामालिनी के मूल मंत्र के बीचों में अष्ट मातृका देवियों से घिरी हुई ज्वाला मालिनी देवी का ध्यान करें।

ज्वालामालिनी का ध्यान

चन्द्रप्रभ जिननाथं चंद्रप्रभमिन्द्र णंदि महिमानं
भक्त्या किरीट मध्ये विभ्राणं स्वोत्त मांगेन ॥ २२ ॥

कुमुददल धवल गात्रां महिषा रूढां समुज्वलाभरणं,
श्री ज्वालिनीं त्रिनेत्रां ज्वामाला करालांगीं ॥ २३ ॥

अर्थ :- अब ज्वालामालिनी देवी के स्वरूप का ध्यान के वास्ते वर्णन करते हैं। ज्वालामालिनी देवी इन्द्रों को प्रसन्न करने वाली, (इन्द्रनंदी आचार्य से वंदनीय) महिमा वाली चन्द्रमा के समान कांतियाले भगवान चन्द्र प्रभु की मूर्ति को भक्ति से अपने सिर पर मुकुट के धारण करती है। वह देवी कुमुद के पुष्प के समान श्वेत शरीर वाली भैंसे वाहन वाली , उज्ज्वल आभूषणों वाली, तीन नेत्र वाली, और अग्नि की शिखा के समूह से भयंकर अंगवाली है।

पाश त्रिशूल कार्मुक रोपण झ ष चक्र फल वर प्रदानानि
दधतीं स्व करैरष्टम यक्षेश्वरीं पुण्यां ॥ २४ ॥

नागपाश-त्रिशूल-धनुष-बाण-मछली-चक्र-फल और वरदान देने को अपने हाथों में धारण करने वाली पुण्य स्वरूप आठवीं यक्षेश्वरी है।

अथ ज्वालिन्या विधान परं स्तोत्रं

श्री मद्दैत्यों रुगेंद्रामर मुकुट तटा लीढ पादार विंदे।
माद्यन्मातंग कुंभ स्थल दलन पटु श्री मृगेन्द्राधि रूढे
ज्वालामाला कराले शशि कर धवले पद्म पत्राय ताक्षी।
ज्वालामालिन्यंऽभीष्टे प्रहसित वदने रक्ष मां देवी नित्यं ॥ १ ॥

हां हीं हूं हौं महे चे क्षण रुचि रुचिरांगां गदै देव मं हं
वं सं तं बीज मंत्रै कृत सकल जगत क्षेम रक्षा भिधाने
क्षां क्षीं क्षूं क्षैं समस्त क्षिति तल महिते ज्वालिनि रौद्र मूर्त्ते
क्षै क्षों क्षौं क्षं क्षः बीजैं रहित दश दिशा बंधने रक्ष देवि ॥ २ ॥

हूंकार राव घोर भ्रकुटि पुट हट दृक्क लोलेक्षणाऽग्नि राघवोर
ज्वालाविक्षेप लक्ष क्षपित निज विपक्षो दया क्षूण रक्षे
भास्वत्कांची कलापे मणि मुकुट हट ज्योतिषां चक्रवालै
श्चं चं डांश्रु मन्मंडल समर जया पाल्दिके रक्ष देवी ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं कारोप युक्तं र र र र र गं ज्वालिनी संप्रयुक्तं
ह्रीं क्लीं ब्लूं द्रां द्रीं सरेफं विपद मल कलापं च कोद्रासि हूं हूं
घूं घूं घूंमांध कारिण्य खिल मिह जगद्देवि दैत्याशुवश्यम
षोमें मंत्रं स्मरंत प्रतिभय मथने ज्वालिनी मामवत्वं ॥ ४ ॥

ॐह्रीं क्रौं सर्ववश्यं कुरु कुरु सर संक्रामणी तिष्ठ तिष्ठ
हूं हूं हूं रक्ष रक्ष प्रबल बल महाभैरवा रातिं भीते
द्रां द्रीं द्रू द्रावय द्रावय हन फट फट वषट बंध बंध
स्वाहा मंत्रं पठंतं त्रि जगदभि तुते देवि मां रक्ष रक्ष ॥ ५ ॥

हं झं ह्स्त्रीं क्ष्त्रीं सहंसः कुवलय वकुले भूरसंभूतधात्रि
ह्स्त्रीं झूं हूं पक्षि हं हं हर हर हर हुं पक्षि पः पक्षि कोपं
वं झं हंसः परं झं सर सर सर सूं सत्सुधा बीज मंत्रै
मां ज्वालामालिनी स्थावर विष संहारिणी रक्ष रक्षः ॥ ६ ॥

एहि एहिहींकारं नादै ज्वल दनल शिखा कल्प दीर्घो ध्वर्द केशैः
झ्रां मा स्त्रैस्त्रीव नेत्रै विषम विषधरा लंकृतै स्तीक्ष्ण दष्टैः ॥
भूतैः प्रैतैः पिशाचै स्फुट घटित रूषा बांधतां ग्रांप सग्गान्
धूली कृत्य स्वधाम्ना पन कुच युगले देवी मां रक्ष रक्ष ॥७॥

झ्रौं झ्रौं झ्रौं शाकिनी नां समुपगत मत ध्वसिनी नीर जास्थ
ग्लौं क्ष्मं ठं दिव्यं जिव्हागति मति कुपित स्तंभिनी दिव्य देहे
फट फट फट सर्व रोग ग्रह मरण भयो च्चाटिनी घोर रूपे
आं क्रों क्षीं मंत्र पूते मद गज गमने देवि मां पालय त्वं ॥८॥

इत्थं मंत्रोक्षरोत्थं स्तवनममनुपमं वह्नि देव्याः प्रतीतं
विद्वेषो च्चाटन स्तंभन जन वश कृत पाप रोगाद्य नोदि
प्रोत्सर्प्पजंगमं स्थावर विषम विष ध्वसनं स्वायुरारोग्यै
श्वर्य्यादीनि नित्यं स्मरति पठति यः स्मो श्नुते भीष्ट सिद्धिं ॥९॥

विधि :- इसप्रकार यह मंत्राक्षरों से निकला हुआ ज्वालामालिनी देवी का अनुपम स्तोत्र है जो इसका नित्य स्मरण करता है और पढ़ता है वह अपनी इच्छित सिद्धि को पाता है। इसी स्तोत्र से विद्वेषण उच्चाटन स्तोभन और वशीकरण होते है। यह पाप तथा स्थावर और जंगम विष भी नष्ट करता है तथा आयु आरोग्य और ऐश्वर्य आदि को देता है।

सुखदायक यंत्र :-

पाश त्रिशूल झषचक्र धनुः सरा च सन्मातुलिंग वरदान कराष्ट हस्ता
मातंग तुगं महिषा धिपयान वाहा सा पातुमां सिखि मती शरदिंदु वर्णा ॥ १ ॥

अर्थः- नाग पाश त्रिशूल मछली चक्र धनुष बाण बिजोरा और वरदान सहित आठ हाथों वाली हाथी के समान ऊँचे भैंसे पर चढ़कर चलने वाली और शरद्काल के चन्द्रमा के समान वर्ण वाली ज्वालामालिनी मेरी रक्षाकरे।

ह्रां ह्रीं सु बीज सुख होम पदांत मंत्रै रा ज्वालिनी प्रमुख गैर्मम पाद नाभिं
वक्षः स्थलाननं शिरांसि च रक्ष रक्ष त्वं देव्यं मीमिऽरिति पंच विद्यैः सुमंत्रै

उत्तम बीज द्रां द्रीं की आदि में सुख (ॐ) लगाकर ज्वालामालिनी मम पादौ नाभि वक्षः स्थले आननं शीर्ष रक्ष रक्ष पदों के पश्चात् अंत में स्वाहा पद सहित पांच सुंदर मंत्रों से शरीर की रक्षा करे।

ॐ ह्रं रां ह्रीं ज्वालामालिनी मम पादौ रक्ष रक्ष स्वाहा
ॐ मं रीं ह्रीं ज्वालामालिनी मम नाभिं रक्ष रक्ष स्वाहा
ॐ हं रूं ह्रूं ज्वालामालिनी मम वक्षःस्थलं रक्ष रक्ष स्वाहा
ॐ सं रौं ह्रौं ज्वालामालिनी आननं रक्ष रक्ष स्वाहा
ॐ तं रः ह्रः ज्वालामालिनी मम शीर्षं रक्ष रक्ष स्वाहा

कूटाक्ष पिंडमथ शून्य भपिंड युग्मं तद्वेष्टितं मपरपिंड कलात्रि देहैः।
बाह्येऽष्ट पत्र कमलं यरधादि पिंडान विन्यस्य तेषु पर तो नवतत्ववेष्टां ॥ ३ ॥

अर्थः- कूटाक्षरपिंड क्षमल्व्र्यूं शून्य पिंड ह्लव्र्यूं दो भपिंड म्मल्व्र्यूं को भपर म्मल्व्र्यूं से वेष्टित करके इस त्रिदेह पिंड को स्वरों से वेष्टित करे उसके पश्चात आठ पत्रों में यर ध झ ष छ ठ व आदि पिंडों से वेष्टित करके नव तत्व लिखे।

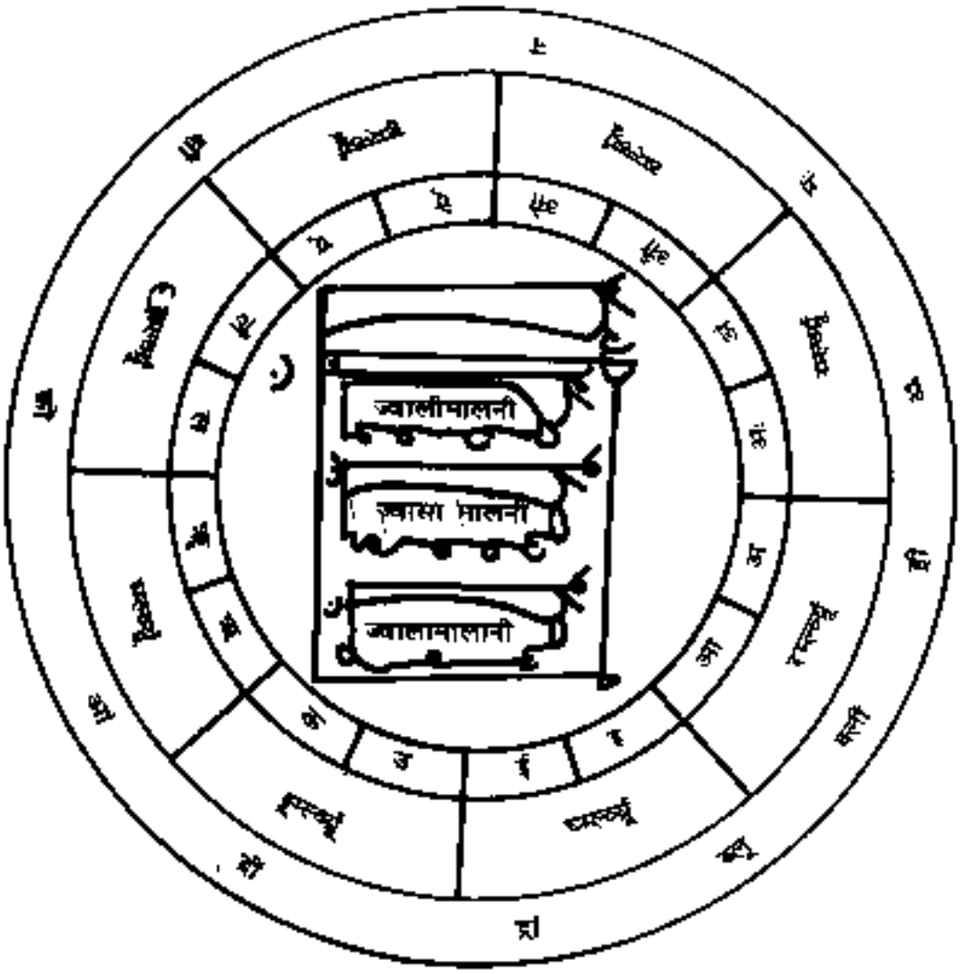

हा मां पुरोद्विप वशीकरणं तदेंग्र क्षीं बीजकं शिखिमती वर पंचबाणैः
मंत्रा नमोंत विनयादिक लक्ष जापं होमेन देवी वरदा जपतां नराणां ॥ ४ ॥

अर्थ :- हां आं द्विप वशकरणं क्रों क्षीं के पश्चात देवी का नाम और पांच बाण सहित मंत्र के आदि में विनय (ॐ) करने से देवी जप करने वाले पुरूष को वर देती हैं।

ॐ ज्वालामालिनी ह्रीं क्लीं ब्लूं द्रां द्रीं हां आं क्रों क्षीं नमः
तांबूल कुंकुम सुगंधि विलेपनादीन्
यः सप्त वार मभिमंत्र्य ददाति यस्यै
सातस्य वश्य मुपयाति निजानुलेपात्
स्त्रीणां भवेदभि नवः स च कामदेवः ॥ ५ ॥

अर्थः इस मंत्र को सिद्ध करनेवाला पुरूष तांबूल, कुकुंम और सुंगधित लेप आदि को इस मंत्र से सात बार मंत्रित करके जिसको देता है, वह स्त्री या पुरूष सेवन करते ही साधक के वश में हो जाते हैं। यह साधक स्त्रियों के लिए नया कामदेव बन जाता है।

माद्याक्षरं प्रणव संपुटमाविलिख्य
बाह्येऽग्नि संपुट पुरं र र कोण देशे
त द्वेष्टितं शिखि मती वर मूलमंत्रऽदाद्याति
देय वनितापि खदिराग्नि तापात् ॥ ६ ॥

अर्थः- माया अक्षर ह्रीं प्रणव (ॐ) के सम्पुट में लिखकर बाहर अग्निमंडलों का सम्पुट बनाकर उनके कोणों में रं बीज लिखे । सबसे बाहर ज्वालामालिनी देवी के मूलमंत्र से वेष्टित करके खैर के कोयलो की तेज अग्नि की आंच देकर , ताम्र पत्र पर लिखकर, खेर कोयले की अग्नि में तपाने से देवताओं की स्त्री आ जाती है ।

वेष्टेन मंत्रोद्धार –

ॐ ज्वालामालिनी ह्रीं क्लीं ब्लूं द्रां द्रीं हां आं क्रों क्षीं शीघ्रं अमुकं आकर्षय आवय संवोषट्

पत्राष्टकां बूरुह मध्यगत त्रिमूर्तिं
शेषाक्षराणि च विलिख्य दलेषु देव्याः
माद्यावृतं मधु समन्वित भांड मध्ये
निक्षिप्य पूजयति तद्वशमेति साध्य

अर्थ:- अष्टदल कमल की कर्णिका में त्रिमूर्ति ह्रीं लिखकर देवी के शेष अक्षरों को आठ दलों में लिखे और ह्रीं से वेष्टित करे दें। इस यंत्र को मधुयुक्त बर्तन में रखकर जो इसका पूजन करता है उसके वश में इच्छित स्त्री पुरुष हो जाते हैं।

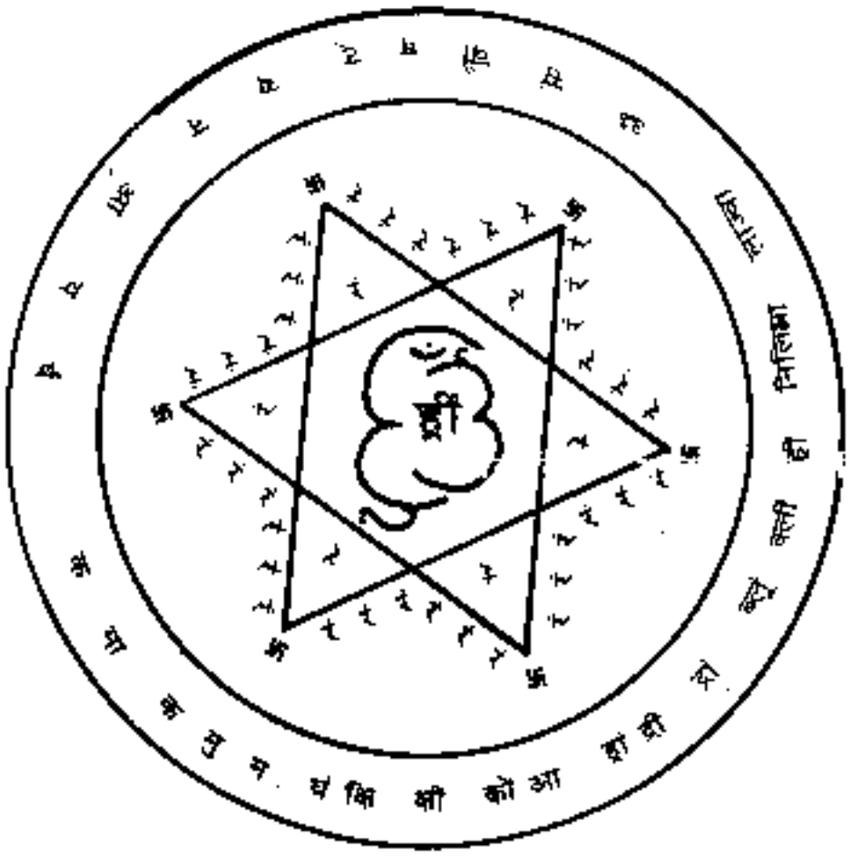

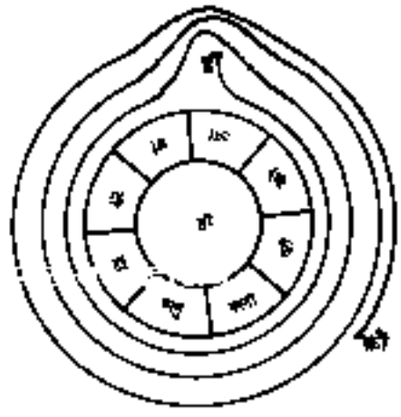

रामा वरांग वदने स्मर बीजकं
तत्तस्योर्द्धभाग तल भागगतं त्रिमूर्तिं
पार्श्व द्वय च पुनरेवल पिंड मेकं
ध्यायेत अदभुतं द्रवमुपैति नदी व नारी ॥७॥

अर्थ :- स्त्री के योनि प्रदेश में स्मरबीज क्ली शिर और पैर में ह्रीं दोनों करवटों में एवलपिंड में ब्लें का ध्यान करने से स्त्री तुरंत द्रवित हो जाती है।

ह्रीं
ब्लें क्लीं ब्लें
ह्रीं

इत्थं पंडित मल्लिषेण रचितं श्री ज्वालामालिनी देवीका
स्तोत्रं शांतिकरं भयापहरणं सौभाग्य सपंत्करं
प्रातर्म्मस्तक सन्निवेशित करोनित्यं पठेद्यः पुमान्
श्री सौभाग्य मनोभि वांछित फलं प्राप्नोत्यऽसौ लीलया ॥ ८ ॥

अर्थ : यह पंडित मल्लिषेण का बनाया हुआ ज्वालामालिनी देवी का स्तोत्र शांति करता है भय को दूर करता है सौभाग्य और सम्पत्ति को उस पुरुष के लिये करता है जो इसका प्रातःकाल के समय सिर पर हाथ जोड़कर पाठ करते हैं।

पाश त्रिशूल कार्मुक रोपण ङ्ग ष च क फल वर प्रदान करा
महिषा रूढाऽष्ट भुजा शिखि देवी पातुमां श्रुचः ॥ १ ॥

अर्थ :- नागपाश त्रिशूल धनुष बाण मछली चक्रफल और वर प्रदाण युक्त आठ हाथों वाली में भेंसे पर चढ़ी हुई वह देवी ज्वालामालिनी मेरी रक्षा करे।

यत्रेच्छ मुक्त रूपां तां मुखांतां ज्वालिनी तथा
आचरंतु उपचाराणां पंचकं साधकोर्चयेत् ॥ २ ॥

अर्थ :- साधक पुरुष उस देवी ज्वालामालिनी की एक पत्र के ऊपर कहे हुवे रूप वाली लिखकर उसका पांचो उपचारों से पूजन करें।

ब्रह्मावशिष्ट पिंड ज्वालिनी नव तत्व पूर्वमें हि युगं।
स्वाहा संवोषडिति ज्वालिन्याऽह्वान मंत्रोयं ॥ ३ ॥

अर्थः- ब्रह्म (ॐ) शेष पिंड ज्वालामालिनी नव तत्व तथा दो बार ऐहि ऐहि के पश्चात स्वाहा और संवोष्ट युक्त मंत्र ज्वालामालिनी देवी का आह्वानन मंत्र है।

क्ष ह भ म पिंड ज्वालिनी नवतत्वान्यौष मंत्र मुचार्य
स्वनिधन पद समुपेत स्त्रितयो संस्थापनादिनां ॥ ४ ॥

अर्थ :- क्ष ह भ और म अक्षरों के पिंड ज्वालामालिनी देवी और नवतत्वों का उच्चारण करके अपने अंत के पदो सहित स्थापना आदि के मंत्र बनते हैं।

ॐ ख्ल्व्यूं रम्ल्व्यूं ल्म्ल्व्यूं झ्म्ल्व्यूं भ्म्ल्व्यूं व्व्यूं सम्पूर्णेन्दु स्वायुध वाहन समेते सपिवारे हे ज्वालामालिनी ह्रीं क्लीं ब्लूं द्रां द्रीं आं क्रों क्षीं ऐहि ऐहि स्वाहा संवोषट्

ॐ क्ष्ल्च्व्यूं ह्ल्च्यूं भ्ल्च्यूं म्ल्च्यूं धवल वर्ण सर्व लक्षण सम्पूर्ण स्वायुध वाहन चिन्ह समेते सपरिवारे ज्वालामालिनी ह्रीं क्लूं ब्लूं द्रां द्रीं हां आं क्रों क्षीं अत्र अवतरावतर संवोषट् ॥ आवाहनन मंत्रः

पूर्वका ग्रहन करें।

अत्र तिष्ट तिष्ट ठः ठः स्थापन मंत्र अत्र मम सन्निहिंताभव भव वषट (सन्निधिकरणंमंत्र)

पूर्व का ग्रहन करें।

इदं मर्ध्यं पाद्यं गंध अक्षतं पुष्पं दीपं धूपं चरुं फलं वलिं गृह्न गृह्न नमः अर्चना मंत्रः ॐ क्ष्ल्च्व्यूं ह्ल्च्व्यूं भ्ल्च्व्यूं म्ल्च्व्यूं धवल वर्णे सर्व लक्षण संपूर्णे स्वायुधवाहन चिन्ह समेते सपरिवारे हे ज्वालामालिनी ह्रीं क्लीं ब्लूं द्रां द्रीं हां आं क्रों क्षी स्व स्थानं गच्छ गच्छ जः जः जः (विर्सजन मंत्र)

इति ज्वालामालिनी पूजा

उक्त्वामुमंत्र मंत्रं नश्यतु संदर्शयेत् संदर्श योनि मुद्रां च
ब्रूयाद् विशिष्ट समटे महामहिष वाहने ह्रत्यं ॥५॥

इन उपरोक्त मंत्रों को बोलता हुआ विघ्नों को नाश करता हुआ योनि मुद्रा को बार बार दिखलाकर अंत में महामहिष वाहने यह भी कहें

अथ ब्राह्म्याद्यष्ट देवतानां पूजा

ब्राह्मम्यादि देवतानां तु पूजा पिंडैः समंर्चयेत्
ब्राह्मादिद्यादिभिः सम्यक् कुर्यात्तन्नामतः सुधीः

ब्राह्मी आदि आठ देवियों का पूजन भी उनके नाम से पिंड लगाकर पंडित पुरूष करे।

ॐ ह्रीं क्रों क्ष्ल्च्व्यूं पद्म राग वर्णे सर्व लक्षण संपूर्णे स्वायुध वाहन समेते सपरिवारे हे ब्राह्माणि ऐहि ऐहि संवोषट् आह्वननं

ॐ ह्रीं तिष्ट तिष्ट ठः ठः स्थापनं

ॐ ह्रीं मम सन्निहिताभव भव वषट सन्निधिकरणं

ॐ ह्रीं इदं मर्ध्यं पाद्यं गंधमक्षतं पुष्पं धूपं दीपं चरुं फलं बलि गृह्न गृह्न स्वाहा ॥ (पूजा मंत्र)

ॐ ह्रीं क्रों स्वस्थानं गच्छ गच्छ जः जः जः (विसर्जन मंत्र)

इति ब्राह्म्या पूजा

ॐ ह्रो क्रों म्ल्व्यूं राशि धर वर्णे सर्व लक्षण संपूर्ण स्वायुध वाहन समेते सपरिवारे माहेश्वरी ऐहि ऐहि संवोषट आह्वानन मंत्र
ॐ ह्रीं क्रों म्ल्व्यूं राशि धर वर्णे सर्वलक्षण संपूर्ण स्वायुध वाहन समेते सपरिवारे माहेश्वरी तिष्ट तिष्ट ठः ठः स्थापनं
ॐ ह्रीं क्रों राशि धर वर्णे सर्वलक्षण संपूर्ण स्वायुध वाहन समेते सपरिवारे माहेश्वरी मम सन्निहिता भव [illegible] (सन्निधिकरण मंत्र)
ॐ ह्रीं क्रों राशि धर वर्णे सर्वलक्षण संपूर्ण स्वायुध वाहन समेते सपरिवारे इद मर्घ्यं पाद्यं गृन्ह गृह्ण स्वाहा (पूजा मंत्र)
ॐ ह्रीं क्रों राशि धर वर्णे सर्वलक्षण संपूर्ण स्वायुध वाहन समेते सपरिवारे स्वस्थानं गच्छ गच्छ ज ज ज विसर्जनमंत्रः
ॐ ह्रीं क्रों ल्म्ल्व्यूं प्रवाल वर्णे सर्वलक्षण राशि धर वर्णे सर्वलक्षण संपूर्ण स्वायुध वाहन समेते सपरिवारे कौमारी ऐहि ऐहि इत्यादि ज ज ज
ॐ ह्रीं स्म्ल्व्यूं नीलोत्पल वर्णे सर्व लक्षण संपूर्ण स्वायुध वाहन समेते सपरिवारे वैष्णवी एहि एहि इत्यादि
ॐ ह्रीं स्त्म्ल्व्यूं इंद्रनील वर्णे राशि धर वर्णे सर्वलक्षण संपूर्ण स्वायुध वाहन समेते सपरिवारे वाराही ऐहि ऐहि इत्यादि जः जः जः
ॐ ह्रीं ह्म्ल्व्यूं महामेरु वर्णे राशि धर वर्णे सर्वलक्षण संपूर्ण स्वायुध वाहन समेते सपरिवारे माहेश्वरी इदि ऐहि ऐहि ज ज ज
ॐ ह्रीं क्रों ह्ल्व्यूं बालार्क राशि धर वर्णे सर्वलक्षण संपूर्ण स्वायुध वाहन समेते सपरिवारे वर्णे चामुंडे ऐहि ऐहि ज ज ज
ॐ ह्रीं क्लीं वम्ल्व्यूं हंस वर्णे राशि धर वर्णे सर्वलक्षण संपूर्ण स्वायुध वाहन समेते सपरिवारे महालक्ष्मी ज ज ज

निज पिंड देह वर्णख्या योगादि अष्ट भावमापन्ना
पंचोपचार मंत्रै मांत् संपार्चयें दिभिः ॥ १ ॥

इति अष्ट मातृकाणां पंचोपचार क्रम

अपने देह पिंड के वर्णनाम योग और आठों माताओं सहित पंचोपचार मंत्रों से उन माताओं का पूजन करें।

ज्वालिन्या सन्निधौदेव्या मूलविद्याई मिमां सुधीः
लक्षमेकं जपेत् पुष्पै सं: वृतैरण प्रभाः ॥ १ ॥

अर्थ :- बुद्धिमान पुरुष ज्वालामालिनी देवी के संमुख मूलमंत्र का लाल पुष्पों से एक लाख जाप करें।

तन्निष्टामण निशायां हिम कुंकुम लघुपराद्दिभि द्रव्यैः
रचिताभि गुंडलिकाभिः जुं हुयाद युतं यथा भिहितं ॥ २ ॥

अर्थः- फिर रात्रि के समय चंदन कुंकुम लघुपरा (शुद्ध गुग्गल) आदि द्रव्यों की गोली बनाकर उससे दसहजार होम करें।

अंबादेवी सन्निहिता शुभमशुभ यथा फलं निरिवलं।
संपादयेदऽभिमतं साधन विधि संग्रहित विद्यस्य ॥ ३ ॥

अर्थ :- इसप्रकार इस साधन विधि से विद्या सिद्ध करने वाले को वह माला ज्वालामालिनी देवी पास आकर संपूर्ण शुभ और अशुभ फल को कहती है।

मंत्र जप होम नियम ध्यान विधिं मा करोतु सन्मंत्री
यद्यपत्र समुक्तं तथापि सन्मंत्र साधनं न जहातु ॥ ४ ॥

अर्थः- यद्यपि अग्नि एक होती है तथापि उसको हवा से क्यों नहीं झपका जावे, उसी प्रकार यद्यपि मंत्र एक ही होता है तब भी जप हवन से युक्त होने पर उसको लिये क्या असाध्य है?

शाल्य क्षते मंडल मालिलिख्य द्विहस्तमानं चतुरस्त वंतत
जिनेन्द्र बिंब शिखि देवताया: सुवर्ण पादौ च निवेश्य तत्र ॥ ५ ॥

अर्थ : साठी चांवलों से दो हाथ लम्बा-चौडा चौकोर मंडल बनाकर उसमें जिनेन्द्र भगवान की प्रतिमा और ज्वालमालिनी देवी के चरणों की स्थापना करें।

अष्टोत्तर शतपूगै रष्टोतर शतक भक्ष दीपाद्यैः
जिन शिखि देवी पदयोः पूजा गुरु भक्तितः कार्याः

अर्थः फिर उन भगवान और देवी के चरणों की एक सौ आठ सुपारी और एक सौ आठ नैवेद्य दीप आदि से गुरु में भक्ति लगाकर पूजन करे।

चन्द्रादयः साक्षिण इत्यथोत्का हिरण्य निक्षिप्त घटस्य तोयैः
दद्यात्ततः साधक सव्य हस्ते विद्या प्रदत्ता भवते मयेति ॥ ५ ॥

अर्थः- चन्द्र सूर्य आदि की साक्षी करके मैं तुमको यह विद्या देता हूँ- यह कहकर शिष्य के बायें हाथ में सोने के कलशों में से जल की धारा डालें

श्री जैन धर्मानुरक्तया विद्या त्वया प्रदेयेति च भाषणीयं
मिथ्यादृशे दास्यसि लाभ तश्चेत् प्राप्नोति गौ ब्राह्मण घात पापं ॥ ६ ॥

अर्थः- फिर से उससे कहे तुम यह विद्या जैन धर्म में अनुरक्त पुरुष को ही देना। यदि मिथ्यादृष्टि को दोगे तो तुमको गाय-ब्राह्मण की हत्या का पाप तथा सर्व वस्तु का अलाभ मिलेगा। (श्री जैन धर्मानुरक्तया विद्यात्वया प्रदेये। ऐसा कहें।

इति साधन विधिऐषा ज्वालिन्या: कथित एष संक्षेपात्।
साधन विधि मिमम परं स विस्तरं संप्रवक्ष्यामि

अर्थ :- यह ज्वालामालिनी देवी की साधन विधि संक्षेप से कही गई है अब इस दूसरी विधि को विस्तार से कहेगें।

ईशान दिगभि मुख जल निपात युत शून्य जिन गृहोद्दिशे स्वंस्थापित
अपतित गोमय गोमूत्र विहित संमार्जितै रम्यं चूर्णेन पंच वर्णेन

शून्य जिनमंदिर के एक स्थान में ईशान कोण की तरफ द्वारा बनाकर, पहले जल छिड़क कर फिर उसे पृथ्वी पर न गिरे हुये गोबर और गोमूत्र से लीप पोत कर शुद्ध करे फिर वहां पर पंचवर्ण के चूर्ण से -

सप्त हस्तायुतं चतुः कोणं रेखा
त्रयेण विधिनासत्याख्यं मंडलं विलिखेत्।

अर्थ : सात हाथ लम्बे- चौडे, चौकोर इस सत्यनाम वाले मंडल को तीन रेखाओं से विधि पूर्वकबनावे।

तस्य वहि वारि निधिं भ्रांता वर्तो मिंजल धरा कीर्णं
पश्चिम दिशि जल मध्ये रूपं वणस्य लिखितव्यं

अर्थ :- उसके बाहर पश्चिम दिशा में समुद्र बनावे जिसमें नदियों का जल आ रहा हो लहरे उठ रही हो और जलचर भरे हुवे हो। फिर समुद्र में वरूण का रूप बनावें।

मलयज कुसुमाक्षत चर्चितान् सितान्
बीजपुर पिहित मुखान पूर्ण घटान् सहिरण्यान्

अर्थ :- उस मंडल के चारों कोणों में चंदन पुष्प और अक्षत से पूजे हुए बिजौरे से मुख ढ़के हुए पानी से भरे हुये सुवर्ण सहित घड़े रखे चार सफेद पुष्पमाला पहने हुवे घड़े रखे।

तत्कोण चतुष्टये न्यसेत सौवर्ण रोपंत्रवां
पदयुगलं कारये द्गुरोर्देव्याः अभिषिंच्य पंच
गव्यैर्दधिघृत सत्क्षीर गंध जलैः

अर्थः- फिर वहाँ पर देवी के चरण कमल सुनहरे या चांदी के बना कर और गुरू के चरण बनाकर पंच गव्य दही घृत गंध जल से दूध से अभिषेक करें ।

मंडल दक्षिण देशे पद युगलं पूजितं निधाय तयोः
नैऋत्यादिषु दिक्ष्वप्यन्वः चरण द्वयानि चूर्णेन लिखेत्।

अर्थः- इन चरणों को मंडल की दक्षिण दिशा में बनाकर पूजा करें और दूसरे चरण नैऋत्यादि दिशाओं में चूर्ण से बनावे

अर्हंत पद युग कमलं मंडल मध्ये विलिखव्य चूर्णेन
कोणेषु सिद्ध सूरी पाठक मुनि पदयुगानि लिखेत्
गधांक्षत पुष्प समर्चयेत्सर्वं ॥

अर्थ :- मंडल के मध्य में चूर्ण से भगवान अरहंत देव के चरण बनावे और कोणों में सिद्ध आचार्य उपाध्याय और मुनियों के चरण बनावें। इन सबकी गंध अक्षत पुष्प दीप धूप और चरू से पूजा करें।

तस्योपरिपुष्पाणां मनोहरं मंडलं रचयेत सत्यं मंडलमेवं
विलिखव्य पश्चात सुगंधि कुसुम सलिलास्थैः॥

अर्थ :- इनके ऊपर अनेकप्रकार के पुष्पों से शोभित मंडप बनावें । इसप्रकार सत्यमंडल को बनाकर पीछे सुगंधित पुष्प जलादि रखे।

कंकण चरणा सपर्णां परा विकैर चंटे द्गुरोश्चरणौ।
मणि कनक रजत सूत्रैः पुस्तकमावेष्टय दिव्य वस्त्रैश्च ॥ ११ ॥
शिरि देवि पद युगले निधाय गंधादिभिश्च राजेत

अर्थ :- सोने और चाँदी के तारों पिरोई हुयी मणियों की माला और दिव्य वस्त्र से पुस्तक को लपेटकर उसे ज्वालामालिनी देवी के चरणों में रखकर उसका गंध आदि से पूजा करें।

कुसुमाक्षातांजलि पुटं ललाट हस्तंकृत प्रदक्षिणकं
मंडल मध्यनिविष्टं घटोदकै स्नापयेत् शिष्यं

अर्थः- फिर पुष्प और अक्षतों को हाथों में लेकर हाथ जोड़े हुये प्रदक्षिणा करने वाले मंडल के बीच में बैठे हुये शिष्य को घड़ो के जल से स्नान करावे।

स्नानांबर भूषादिक मुचितं नान्यस्य तदुरो रूचितं
परिधातुमस्य पश्चादन्यं वस्त्रादिकं दद्यात्॥

अर्थ :- उस समय के वस्त्राभूषण आदि गुरु को ही देने उचित है। शिष्य को दूसरे वस्त्र आदि देवें।

देवी मुनि गुरूचरण प्रणताय सुधर्म भक्ति युक्ताय।
धृत पुस्तकाय तस्मै विद्या साध्या विना देया ॥

अर्थ :- फिर देवी मुनि और गुरू के चरणों में झुके हुये धर्म तथा भक्ति युक्त पुस्तक धारण किये हुवे उस शिष्य को विद्या जो कष्ट साध्य रहित हो देवे।

पर समयिने ने देयात्वतया प्रदेयाश्च स्वकीय भक्तियुताय
गुरू विनय युताय दयाद्रचेत से धार्मिक नराय॥

अर्थ :- तुम यह विद्या अन्य मतावलम्बी को न देना किन्तु अपने शास्त्र के भक्त गुरू की विनय करने वाले दयालु धार्मिक पुरूष को ही देना।

ऋषि गौस्त्री हत्यादिषु यत्पापं तद्भविष्यति तवापि
यदि दास्यसि पर समया यै त्युत्कातः प्रदातव्या

क्षिति जल पवन हुतासन यजमाने व्योम सोम सूर्यादीन्
ग्रह तारा गण सहितान् साक्षी कृत्य स्फुटं दद्यात्

अर्थः- यदि तुम यह विद्या अन्य मतावलम्बी को दोगे तो तुमको ऋषि- गाय- स्त्री की हत्याका पाप लगेगा। यह कहकर उसको विद्या देवें। उस समय पृथ्वी, जल, पवन, अग्नि, यजमान, आकाश, सूर्य, चन्द्र और तारागण आदि की साक्षी से उसको विद्या दें।

त्वां मां शिखि देवी पूर्वाचार्यांश्च लोकपालाश्च
साक्षी कृत्य मयेयं तुभ्यं दत्तेति खलु वाच्यं

अर्थः तुमको मैंने ज्वालामालिनी देवी हेलाचार्य और लोकपालो की साक्षी से यह विद्या दी है उस समय यह कहे।

साधन विधिना देया शिष्येण न साधनाद्विना देया।
विधिना गृहीत विद्या शिष्यो सौ सिद्ध विद्यः स्यात् ॥

अर्थ :- यह विद्या शिष्य को साधन और उसकी विधि सहित देनी चाहिये यह शिष्य पूर्वक विद्या पाकर तुरंत ही विद्या को सिद्ध कर लेगा।

अयमेव विधिः शेषजयः स्यादन्येषां च मूल मंत्राणां ॥
उपदेशेऽष्वरिवलेषु विधि द्वैवंत मात्र कृत स्तत्रतु विशेषः

अर्थ :- अन्य मूलमंत्रों का उपदेश देने में भी इसी विधि से काम लेना चाहिये किन्तु उन सभी में केवल दो मात्राओं का विशेष है।

या विद्या ते विद्या ज्वालिन्या स्त्र्य क्षरी तिविदितान्या
सान लिखितात्र गुरूभि स्तां विद्यांत्तन्मुखा देवि ॥ २१ ॥

अर्थः वह विशेष यह है कि ज्वालामालिनी का असली मंत्र तो यही है। किन्तु उस देवी का अक्षरी मंत्र है वह यहां नहीं लिखा गया है वह केवल गुरु मुख से ही जाना जा सकता है। इति

ज्वालामालिनी माला मंत्र

ॐ नमो भगवते श्री चन्द्रप्रभ जिनेन्द्राय शशांक शंख गोक्षीर हारनीहार धवल गात्राय घाति कर्म निर्मूलनो छेदन कराय जाति जरामरण शोक विनाश नाय संसार कांतारोन्मूलन कराय अचित्यं बल पराक्रमाय अप्रति हत शासनाय त्रैलोक्य वशंकराय सर्वसत्व हितं कराय सुरासुरो रगेन्द्र मणि मुकुट कोटि घृष्ट पाद पीठाय त्रैलोक्य नाथाय देवाधि देवाय अष्टदश दोष रहिताय धर्म चक्राधीश्वराय सर्वविद्या परमेश्वराय कुविद्याछेनाय तत्पाद पंकजाश्रय निषेवणि देवि जिन शासन देवते त्रिभुवन जन संक्षोभिणी त्रैलोक्य शिवाय हारिणि स्थावर जंगम कृत्रम विषम विष संहारिणी सर्वाभिचार कर्माप हारणि परविद्या छेदिनीं परमंत्र तंत्र तंत्र प्रणशिनी अष्टमहानाग कुलोच्चाटिनी काल दष्टमृतको च्छापिनी सर्वरोगापनोदिनी ब्रह्मविष्णु रूद्रेंद्र चंद्रादित्य ग्रह नक्षत्र तारा लोकोत्पात मरणभय पीडा प्रमर्दिनी त्रिलोक्य महिते भव्य लोक हितंकारी विश्वलोक वशंकरि महाविद्ये महाभैरवे भैरव रूप धारिणी भीमे भीमरूप धारिनी सिद्धे सिद्ध रूप धारिणी महारौद्रे रौद्ररूप धारिणि प्रसिद्धे प्रसिद्ध सिद्ध विद्याधर यक्ष राक्षस गरूड गांधर्व किन्नर किं पुरूष देत्यो रंगेद्रामर पूजिते ज्वाल माला करालित दिगंतराले महामहिष वाहिने त्रिशूल चक्र इष पाश कृपाण शर वरासन फल वर प्रदान (खड्ग कृपाण त्रिशुल शक्ति चक्र

पाश) शराशन शंख) विराजमाने षोडशार्द्धभुजे (खेटक कृपाण हस्ते) देवी ज्वालामालिनी ऐहि ऐहि उँ ह्रल्व्यूं ज्वालामालिनी ह्रीं क्लीं ब्लूं द्रां द्रीं हां हीं हूं हौं ह: हा: देव ग्रहान कर्षय आकर्षय नाग ग्रहानाकर्षय यक्ष यक्ष ग्रहानाकर्षय ग्रहानाकर्षय गांधर्व ग्रहानाकर्षय ग्रहानाकर्षय ब्रह्मराक्षस ग्रहानाकर्षय ग्रहनाकर्षय भूत ग्रहानाकर्षय ग्रहानाकर्षय व्यंतर ग्रहानाकर्षय ग्रहानाकर्षय सर्वदुष्ट ग्रहानाकर्षय ग्रहानाकर्षय सर्वदुष्ट ग्रहानाकर्षय ग्रहानाकर्षय शतकोटि देवताकर्षय सहस्रकोटि पिशाच राजानाकर्षय कट्ट कट्ट कंपय कंपय कंपावय कंपावय शीर्ष चालय चालय नेत्रं चालय चालय बाहुं चालय चालय गात्रं चालय चालय पादौ चालय चालय सर्वांगं चालय लोलय लोलय धुनु धुनु कंपय कंपय कंपावय कंपावय शीघ्रमवतर शीघ्रमवतर गृहण गृहण ग्राह्य ग्राह्य आवेशय आवेशय हूं संवोषट ॐ ह्रल्व्यूं ज्वालामालिनी ह्रीं क्लीं ब्लूं द्रां द्रीं क्षां क्षीं क्षूं क्षौं क्ष: हा: सर्वदुष्ट ग्रहाना स्तंभय स्तंभय ठ ठ फट फट घे घे ॐ ह्रल्व्यूं ज्वालामालिनी देवी ह्रीं क्लीं ब्लूं द्रां द्रीं हूं ज्वल ज्वल र र र र र रां रां प्रज्वल प्रज्वल धग धग यूं यूं धूमांध कारिणी ज्वलन शिखे प्रलय धग द्रगित वदने देवग्रहान दह दह नाग ग्रहान दह दह सर्व दुष्ट ग्रहान दह दह यक्ष ग्रहान दह दह गंधर्व ग्रहान दह दह, ब्रह्म राक्षस ग्रहान दह दह भूत ग्रहान् दह दह, शत कोटि देवतां दह दह सहश्र कोटि पिशाच राजान दह दह घे घे स्फोटय स्फोटय मारय मारय दहनाक्षिप्रलय द्रगद्रचित मुखि ज्वालामालिनी हां ह्रीं हूं हौं ह: हा: सर्वदुष्ट ग्रहान ह्रदयं हूं दह दह पच पच छिंद छिंद भिंद भिंद ह ह ह हा: फट फट घे घे ।

ॐ भ्रल्व्यूं ज्वालामालिनी ह्रीं क्लीं ब्लूं द्रां द्रीं भ्रां भ्रीं भ्रूं भ्रौं भ्र: हा: सर्वदुष्ट ग्रहान् ताडय ताडय हुं फट घे घे

ॐ म्रल्व्यूं ज्वालामालिनी ह्रीं क्लीं ब्लूं द्रां द्रीं म्रां म्रीं म्र म्रौं म्र: हा: सर्वदुष्ट ग्रहान हुं फट घे घे सर्वदुष्ट ग्रहाणं वज्रमय शूल्यां अक्षिणी स्फोटय स्फोटय न दर्शय न दर्शय हुं फट घे घे

ॐ स्रल्व्यूं ज्वालामालिनी ह्रीं क्लीं ब्लूं द्रां द्रीं हां आं क्रों क्षीं द्यां द्यीं द्यूं द्यौं द्य: हा: सर्वदुष्ट ग्रहाण प्रेषय प्रेषय घे घे हूं ज: ज: ज:॥

ॐ ह्रल्व्यूं ज्वालामालिनी ह्रीं क्लीं ब्लूं द्रां द्रीं हां आं क्रों क्षीं द्यां द्यीं द्यूं द्यौं द्य: हा यं यं स्वं स्वं स्वहे रावण स द्वियया घातय घातय स च्चन्द्रहास शस्त्रेण छेदय छेदय भेद भेदय ग्रं ग्रं ठं ठं हं हं फट फट घे घे।

ॐ झ्रल्व्यूं ज्वालामालिनी ह्रीं क्लीं ब्लूं द्रां द्रीं हां आं क्लों क्षीं झ्रं झ्रीं झ्रौं झ्रा: हा सर्वदुष्ट

ग्रहाणं वज्र पाशेन बंध बंध फट फट ये ये।
ॐ ख्म्ल्व्यूं ज्वालामालिनी ह्रीं क्लीं ब्लूं द्रां द्रीं हां आं क्रों क्षीं खां खीं खूं खौं खः हाः सर्वदुष्ट ग्रहाणं गल भंगं कुरू कुरू फट फट ये ये॥
ॐ छ्म्ल्व्यूं ज्वालामालिनी ह्रीं क्लीं ब्लूं द्रां द्रीं आं क्रों क्षी छां छीं छूं छौं छः हः सर्व दुष्ट ग्रहाणां मंत्राणि छिंद छिंद भिंद भिंद फट फट ये ये
ॐ व्म्ल्व्यूं ज्वालामालिनी ह्रीं क्लीं ब्लूं द्रां द्रीं हां आं क्रों क्षीं वां वीं वूं वौं वः हां सर्वदुष्ट ग्रहाण विद्युतपाषाणस्त्रेण ताडय ताडय भूम्यां पातय पातय हुं फट् ये ये॥
ॐ ठ्म्ल्व्यूं ज्वालामालिनी ह्रीं क्लीं ब्लूं द्रां द्रीं हां आं क्रों क्षीं ठ्रां ठ्रीं ठूं ठौं ठः हा सर्वदुष्ट ग्रहाण समुद्रे मर्जय मर्जय हुं फट ये ये।
ॐ ह्म्ल्व्यूं ज्वालामालिनी ह्रीं क्लीं ब्लूं द्रां द्रीं हां आं क्रों क्षीं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः हा सर्वडाकिनी स्तर्जय स्तर्जय सर्वशत्रून ग्रासय ग्रासय खा खा खा खा खा खादय खादय सर्व दैत्यान् विध्वंशय विध्वंशय दह दह पच पच पाचय पाचय धम धम धर धर पुरु पुरु खुरु खुरु घुरु घुरु सर्वोपिद्रव महाभयं विनाशय विनाशय झम झम हम हम धप धर फर फर खर खर खड्गै रावण विद्या घातय घातय पातय पातय चंद्रहास शस्त्रेण छेदय छेदय भेदय भेदय झं झं छं छं हं हं खं खं छिंद छिंद भिंद भिंद फट फट ये ये हां आं क्रों क्षीं ह्रीं क्लीं ब्लूं द्रां द्रीं ज्वालामालिन्याज्ञापयति स्वाहा॥

अयं पठित सं सिद्धः श्री ज्वालिन्यधि देवता
माला मंत्र : प्रजापादै ग्रह रोगविषादि हत :

यह श्री ज्वालामालिनी देवी का माला मंत्र केवल पढ़ने से ही सिद्ध होता है। इसका जप इत्यादि करने से ग्रह रोग और विष आदि नष्ट हो जाते हैं।

इति ज्वालामालिनी विधि

पंचमोचारसे जपे

अथः कुष्माडिनी साधन विधानं

हूं ह्रौं मों मध्ये हैं ह्रौं मों रूपांत्यादि स्थितं है ह्रौं स्वाहांतं प्रणवादिकं मंत्र स्याद्वरश्रुदर्याः फलदः शून्य पंचकं ॐ ह्रीं क्ष्मं ठः नमः

हूं ह्रौं मों के सहित मध्य में है ह्रौ मों लगाकर अंत के स्वाहा बीज से पहले है ह्रौं आदि में प्रणव अर्थात् ॐकार सहित लगावे।

ॐ हूं ह्रौं भों हैं ह्रौं मों है ह्रौं स्वाहा ॥

यह फल को देनेवाली वर सुंदरी का मूलमंत्र है इसके पश्चात पांचो शून्यों ।

ॐ ह्रीं क्ष्मः ठः नमः नमः ॥

मंत्रोद्धार

ॐ ह्रूं ह्रौं ह्रैं उं ह्रैं ह्रौं स्वाहा उं ह्रीं क्ष्मं ठः नमः स्फां आम्र कुष्माडिनी नमः
इत्यसौ ह्रीं माम् कुष्मांडीनि इति पंचापचारकं
सुयोज्यो मंत्राविभौयक्षाः मूलविद्यामिया मुक्तं
ब्रह्मचारी नरोजपेत यद्वास्नान विशुद्धः सननित्यब्रह्म चार्यपि

इत्यादि स्फ्रों आम्र कुष्माडिनी सहित पांच उपचारों का मंत्र है। यक्षणी के इन दोनों स्तोत्रों को भली प्रकार योग्य स्थल पर लगाना चाहिये।

इस मूलमंत्र को ब्रह्मचारी पुरुष जपे अथवा बिना ब्रह्मचारी भी प्रतिदिन स्नान से शुद्ध होकर जपे।

जपेन्मंत्रंम मुं मंत्री लक्षं यक्ष्या पुरः स्थितः
अशोके फलके तस्य लिखिताया पुरोथवा

मंत्री यक्षिणी की मूर्ति को निम्नलिखित लक्षणों से युक्त अशोक वृक्ष की तख्ती पर या पत्र पर लिखकर और उसके सामने बैठकर एक लाख जप करें।

मंत्रोद्धारः

यक्षेश्वरी मंगल भूरूहाणामंगैर शेषं रूप शोभितस्य
आम्रस्य कुष्मांड फल प्रसूते रध्यासिता कांचन पादवेदीं ॥ १ ॥

आरूढ़ जांबूनद सिंह पीठा हरिन्मणि श्यामल देहः कांतिः
नात्यु ष्ठिते हेम निपादपीढे विन्यसत सव्यो तरपाद पद्मा ॥ २ ॥

डिंडीर पिंडादीक पाडंरेण छत्रेण मुक्त मणि भूषितेन
मुखेन्दु मे वा पज्जितेन संस्थे व्यमाना रजनी श्वराणां ॥ ३ ॥

सविभ्रमं यक्ष विलासिनीभिर्मंहु मंहुश्चामर मारूतेन
मंदेन पार्श्वद्वय वर्तनीभि रमंद मांदोलित कुंतला लिः ॥ ४ ॥

देव्याः पदांभोरूहयोर्द्वयस्य लाक्षा रसादिः पुनरक्ति मेलि
निरंतरं भक्तजनानु राग रसेन साक्षाद्धनुरंजितस्य ॥ ५ ॥

जयंति देव्याश्चरणागुलीनां नखेदवः कुंद लतांत गौराः
मुखेदंकांत्या विजितायचैव पाद्मानलग्न भवोपि चन्द्रा ॥ ६ ॥

पादद्वयं यक्षकुलोद्भवायाः पदेपदे नूपुर संजितेन
नैवोपमानौ जगतीह दृष्टा वन्योन्य सक्षापमिवातनोति ॥ ७ ॥

कुरु द्वयेना प्रतिमेन देव्याः श्यामाय मानेन जितात्मशोभौ
रंभा च नागेन्द्र करं च नूनं वैलक्ष्य पाडुंत्व मिवोपयातौ ॥ ८ ॥

आगुल्फलं वं कलधौतवासं सहेम कांची वलयावशानां
विभाति देवी नवमेघ लेखा तडिल्लता वंध परिस्कृतेवा ॥ ९ ॥

विलासवत्याः कृत देहयष्टि स्त्रि स्त्रोपितस्या वलयो विभांति
मध्यस्य पीन स्तनयो र्भरेण भुग्नस्य जातादव निर्भरेखाः ॥ १० ॥

प्रतिष्टितौ जैन जनाभि रक्षा विधान हेतो र्विधिवाद्विधात्रा
कृतोपचारौ हरि चंदनेन भानु स्तनो मंगल पूर्ण कुंभौ ॥ ११ ॥

यक्षेन्द्र लोक प्रथमोत्तमायां पराजितं बाहुलता द्वयेन
निलीयते वाल मृनाल नालं निमज्य दूरं सरसी जलेषु ॥ १२ ॥

वाम प्रकोष्ट प्रण्यांश्रु कोस्या लीलर विंदोदर दत्त तुंडः
पठत्य जस्तं परमेष्टिनामां प्यायं नमस्कार पदानि पंच ॥ १३ ॥

सवर्ण वर्ण वर वीजपुरमा मोदिता शेष दिगंतरालं
हस्तांबजं दक्षिण मांबिकापादधाति पुत्राय पुर स्थिताय ॥ १४ ॥

आस्थापिकाया मवसाय मानो लीलार विंदग्रणेपि देव्याः
रणांगणे शत्रु भयं कराया शंखं च चक्रं च भुजौ दधानौ ॥ १५ ॥

कंठश्रितं अक्ष कलोद्भवाया: नूनं दिदक्षु: स कुत् हलात्मा
उपेत्य पश्चात्सहकार शाखा स्कंधं समागच्छति वोलपूंग ॥ १६ ॥

मंदेनमंद स्मित चंद्रिकाया: बिवाधरेण प्रविभक्त कांति:
मुखेन्दुरस्या उपमामुपैति सध्यानुपक्तेन निशा करेण ॥ १७ ॥

देव्या कनत्कांचन कर्णपुर रक्ता प्रभामंडल मध्यवर्ती
मुखेंदु रिदो: परिवेष चक्र मध्यं गतास्यनुकरोति लक्ष्मीं ॥ १८ ॥

पर्याप्तयत: पद्म समान गंध निश्वास गंधं निज मर्पयंती
नासा तदीया वदनार विंदं गंधं समाघातु मिव प्रवृत्ता ॥ १९ ॥

स्वभाव कात्यां निमिषं मृगाक्ष्याश्चक्ष्या दृशोर्द्वंद्वमनिंदिताया:
निर्व्याजमेवा निमिष द्वयस्य विवर्तभ्रम मातनोति ॥ २० ॥

अपांग सीमांत मतीत्पयाता महेन्द्र नील द्युति चोर कांति
भ्रूचाप रेखा विदधाति मातु: कर्णावतं सोत्पल शोभनीय ॥ २१ ॥

देव्या ललाटे इंदु कला विलासं विलोक्य वैलक्ष्य विसंस्तुलात्या
इंदो: कला धूर्जटि मौलि वंधजटाटवी गह्वरमभ्युपैति ॥ २२ ॥

विभर्ति भक्त्या सुचिरं स्वमूर्द्धा: यक्षेश्वरी हेम किरीट मध्ये
अरिष्टनेमिं भगवंत मुच्चै र्महेन्द्र नीलोत्पल रत्न मूर्ति ॥ २३ ॥

देव्या पुरो रत्न विनिर्मितांगौ प्रभावतो जंगमतां प्रयातौ
आ क्रीडत: कृत्रिम पुत्र कौतौ प्रियंकर श्चाथ शुभैकरश्च ॥ २४ ॥

भक्त्यात्मनापि प्रिय सं विधानां प्रोक्तं पुरोभागितया ममेरं
जिनेन्द्र वंदै रूप लाभ नीयो साक्षात सुतौ तौननुं यक्ष देव्या ॥ २५ ॥

आ स्थान सिंहासन पार्श्ववर्तिदेव्या मृगेन्द्रः सुर वाहनेन्द्र
क्षणेन निविश्य गति दंशापि दिशोयशो राशि रिवाभ्युपैति ॥ २६ ॥

विडंबयन् कोपि विदूषकोपि स्वयं परिहास रसेन युक्तः
देव्या पुर स्तादुय नृत्य तीह चेष्टि जनेन तृहतोपवीतः ॥ २७ ॥

काचित्प्रतिहार पदेन युक्ता: विसर्जना वंध नितंब बिंबा (चंडातकं)
यक्ष स्त्रियः खड्ग लातभि युक्ता:कुर्वत्यं शून्यां प्रतिहार भूमिं ॥ २८ ॥

कुब्जा च कांचीत्पटवास चूर्ण मंजूषिकां पार्श्वगतां विमूर्ति
काचित्त्च तांबूल करांक हस्त सं सेवते संसादिवां मनागी ॥ २९ ॥

काचित्सरवी कल्पतरू प्रसूनै रम्लान मालां रचयत्पनल्पां
पर्यंत भूमौमणि वेदिकाया: पिनष्टि गंधान वनोनिषिणां ॥ ३० ॥

नृत्यंतिकाश्चि ल्ललितांग हारा गायंति काश्चित्कल कंठ कंठा
वीणादि काश्चित्च न्मधुवादयंति काश्चिन्निषी दंति समंत तोपि ॥ ३१ ॥

अनन्य साधारण भक्ति भाजाम स्माद्दशामीप्सित सिद्धि हेतो।
नामानि पूर्वैः रवलु कीर्तितानि सकीर्तियामो वयमंबिकाया: ॥ ३२ ॥

कलन्नुपूर निर्घोषि कल हंसेन्द्र गामिनी
करभो रूव्वराहौहानिम्र नाभिस्तनूदरी ॥ ३३ ॥

चक्रवाक स्तनी पद्म हस्ता रूचिर कंदरा:
बिंबोष्टि कुंद दशाना कनत्कन कुंडला ॥ ३४ ॥

तुंगनासा सरोजाक्षी नतभ्रू र्नीलि कुंतला।
संपूर्ण चंद्र वदना सौवर्ण मुकुटांगदा ॥ ३५ ॥

कलधौत मया वासा कलधौत मयांबुरा।
कलधौत मया कल्पा कलधौत विशोषिका ॥ ३६ ॥

आम्र कुष्मांड फल यक्षी हरिणेशा यक्ष देवता
अरिष्ट नेमि भट्टारक प्रतिमा रत्नधारिणी ॥ ३७ ॥

कुष्मांड यक्षी कुष्मांडी चंडी शत्रु भयंकरा
तीर्थयक्षी महायक्षी स्वर्ण यक्षी सुरोत्तमा ॥ ३८ ॥

भद्रा भगवती कांता व्यंतरा वास वासिनी
विद्यानुवाद कुशला पर विद्या प्रभंजनी ॥ ३९ ॥

आम्र छाया तल स्थानासुवर्ण आम्र देवता
तीर्थाधिदेवता देवी श्यामा मरकत प्रभाव ॥ ४० ॥

मांगल्या मंगल वती मंगलाकार धारिणी
सती साध्वी महाभाग पुण्या पुण्य प्रवर्तिनी ॥ ४१ ॥

कल्याणभागिनी जैन पंच कल्याण सेविनी
कल्याणकारिणी कल्पा कल्याणभिनिवेशिनी ॥ ४२ ॥

मृगेन्द्रवाहना दुर्गा गुह्या गुह्यक देवता
संसार दुःख शमनी सर्वसत्वानुकंपिनी ॥ ४३ ॥

सर्वशक्ति मति सर्वा सर्वाभरण भूषिता
सर्वरोग प्रशमनि सर्वदुःख प्रमाथिनी ॥ ४४ ॥

जिनपादाबुजोत्तमा जिनाराधन तत्परा
जिन शासन संतुष्टा जिनालय निवासिनी ॥ ४५ ॥

अभिष्ट फलदा सौम्या वरदा वरदायिनी
यक्षेन्द्र सुन्दरी रामा सुंदरी वरसुंदरी ॥ ४६ ॥

सम्यग्दर्शन संपन्ना सम्यक्ज्ञान परायण
सम्यक् चारित्र सहिता रत्नत्रय महानिधि ॥ ४७ ॥

पुत्रावलालिनी पुत्र वत्सला गुणवत्सला
पुत्ररत्नवती पुत्रवर्द्धनो पु त्ररक्षणो ॥ ४८ ॥

जैनाधि देवता जैन महाशासन
जननी मातृका मातामात पर्याय नामिका ॥ ४९ ॥

यक्षि देवी शरणं संप्रपधे हमंजसा मंजुहा
मंजुका मयतामा ममां वालमंबिका अंब ॥ ५० ॥

जिनेन्द्र माराध्य यथा वदंबा देवीं समाराधयति क्रमाधः
तस्यास्य जैनस्यदिनं दिनेपि सिद्धयंति सर्वाणि समीहितानि ॥ ५१ ॥

यक्ष्या स्तोत्र मिदं पठेदनु दिनं तन्मूल विद्याजपेन्नित्यं
यो विकलोप्पुदीरित जपे सा तस्य सिद्धोद्भवं ॥ ५२ ॥

तस्यास्यात्कविता गुणोद्भूत रसः सस्यात्कुशा ग्रीय धी स्तद्विधा
प्रजपेन तस्य जगती स्याद् वाछितार्थ पदा ॥ ५३ ॥

इत्यंबिका स्तोत्रं

जो पुरुष श्री जिनेन्द्र भगवान की आराधना करके क्रम से विधिपूर्वक देवी की आराधना करता है उसको जिनेन्द्र भगवान की भक्ति के कारण सभी अभिलिखित वस्तुयें दिन प्रतिदिन सिद्ध होती जाती हैं। जो पुरुष यक्षिणी के हंस स्तोत्र को प्रतिदिन पढ़ता हुआ इसके मूल मंत्र का जप करता है, देवी उसके जप में विकलता (अधूरापन) होने पर भी उसको निश्चय से सिद्ध हो जाती है। इस मंत्र के जपने से उस पुरुष में कविता करने की बड़ी भारी शक्ति, अद्भुत रस और अत्यंत तीव्र बुद्धि हो जाती है। यहां तक कि जगत में उसके इच्छा किये हुये सब कार्य सिद्ध होते हैं।

दूसरी विधि

सोने के सिंहासन पर विराजमान सुवर्ण चरणवेदी हरितमणी श्याम देहि की कांति हे हेम सिंहासन पर बैठी हुयी ध्यान करें।

अन्य प्रकारेणाप्यबिंकाराधन क्रम

अष्ट महाप्राति हार्य्य समन्वितां द्वादशा गण परिवृतां
अरिष्ट नेमि भट्टारकस्य प्रतिमा मालिखव्य तस्य पादमूले
आम्र कुष्मांडी अष्टभुजां शंख चक्र धनुः परशु तोमर
खड्ग पारा को द्वयराष्टकै· देवीं चतुभजां शंख चक्र वरद
पाशान्या स्वरूपेण सिंहासन स्थिता शांति द्विभुजा स्थिता
पार्श्वदेव कन्या वाम हस्त स्थित विमुकादिश्रमतां

अष्ट महाप्रातिहार्यों से युक्त बारह गणों से घिरी हुई श्री अरिष्टनेमि भट्टारक की प्रतिमा को लिखकर उसके चरणों के मूल में आम्र कुष्मांडी देवी को शंख धनुषबाण परशुतोमर खड्ग नाग पाश वरद सहित चार भुजाओं वाली तथा शंख चक्र वरद और पाश सहित चार भुजाओं वाली लिखे वह दूसरे स्वरूप से सिंहासन पर बैठी हुई है। उसके पास दो भुजाओं वाली देवकन्या खड़ी हुई दो जिसके बायें हाथ के ऊपर विमुपकादि श्रमतां ?

एवं क्रमेण देवीं पटे लिखित्वा श्यामरूपेन
अतः पंर प्रवक्ष्यामि अर्हद रिष्ट नेमि भट्टारकस्यार्चनं क्रियते
पश्चाद आम्रकुष्मांडया देव्या अर्चना विधिं प्रवक्ष्यामि

इसप्रकार क्रम से वस्त्र के ऊपर श्याम रूप देवी को लिखकर इसके पश्चात पहिले अर्हंत देवी श्री अरिष्ट नेमि भट्टारक का पूजन किया जाता है। उसके पश्चात आम्र कुष्मांडी देवी की पूजन विधि कही जाती है। पूर्वोक्त मंत्रों से भगवीत आम्र कुष्मांजी का आव्हानन स्थापन तथा सन्निधिकरण करके नीचे नीले मंत्रों से द्रव्यों को चढ़ावे।

ॐ नमो आम्र कुष्मांडी सर्व्वपाप नाशके स्वाहा स्नानं
ॐ नमो भगवती आम्र कुष्मांडी सुगंध महाभगवती महासुगधिनी स्वाहा गंधं
ॐ नमो भगवति आम्र कुष्मांडी कुसुमें भगवती महाकुसुम स्वाहा पुष्पं
ॐ नमो भगवती आम्र कुष्मांडी सुगंध वर सुंगधिनी स्वाहा चरुं
ॐ नमो भगवति आम्र कुष्मांडी महाज्वल महादीप्ते प्रयच्छकतुलः स्वाहा दीपं
ॐ नमो भगवती आम्र कुष्मांडी महादेवी सर्व्वभूत वशंकरि महादेवी सर्वभूतानां वलिं प्रयच्छतु स्वाहा ॥ बलिः काची तयारी ॥

ॐ नमो भगवते अरिष्ट नेमि भट्टारकाय तीर्थनाथाय त्रैलोक्य प्रकंपनाय ह्रीं शिखां रक्षिकाय हुं फट स्वाहा

ॐ नमो भगवते अरिष्ट नेमि भट्टारकाय तीर्थनाथाय त्रैलोक्य पूजनाय द्रावय द्रावय वज्रे वज्र कवचाय हन हन दह दह कवचाय हुं फट स्वाहा

ॐ नमो भगवते अरिष्ट नेमि भट्टारकाय सर्व तीर्थ कराय सर्व्व दुष्टग्रह छेदनाय सर्वग्रहान हन हन दह दह हुं फट स्वाहा अस्त्र

ॐ नमो भगवती आम्र कुष्मांडी हृदयं रक्षरक्ष हुं फट स्वाहा हृदयं

ॐ नमो भगवती आम्र कुष्मांडी शिरो रक्षं रक्षं हुं फट् स्वाहा शिर

ॐ नमो भगवती आम्र कुष्माडी ह्रीं शिखां रक्ष रक्ष हुं फट स्वाहा शिखा

ॐ नमो भगवती आम्र कुष्मांडी हर हर ह्रीं वज्र कवचाय हुं फट स्वाहा कवचं

ॐ नमो भगवती आम्र कुष्मांडी सर्व दुष्ट ग्रह निग्राहनिति तय खट्कां हुं फट स्वाहा अस्त्रं

ॐ नमो भगवती आम्र कुष्मांडी ॐ ज्यंत गिरि शिखर निवासिनी सर्व्वांग सुंदरी वामरूपधारिणी पूर्वद्वारं बंधामि अग्निद्वारं बंधामि वायव्य द्वारं बधामि उत्तर द्वारं बधामि ईशान द्वारं बंधामि ऊर्द्धर्वद्वारं बंधामि अधोद्वारं बंधामि शिरः द्वारं बंधामि कुक्षि बंधामि सर्वप्रदेशं बंधामि आत्म रक्षे भूत रक्षे पिशाच रक्षे चोर रक्षे सर्व्व रक्षे काम रक्षे स्वाहा वज्र प्रकार अग्निप्रकारः प्राकारं भूमि बंध आकाश बंध दिगबंध चोर बंध आत्म रक्षा सर्व रक्षानाम विद्या।

इसप्रकार आम्र कुष्मांडी देवी का पूजन करके अंग न्यास करने में प्रत्येक अंग के नाम के साथ अंग को छूना चाहिये।

कवच में मंत्र को बोलकर हाथों को अस्त्र के आकार का बनावे हृदय बोलकर हृदय को छूवे शिखा को छूवे चोटी को छूवे कवच का आकार बनावे आदि।

मंत्र बोलकर रक्षा के लिये दिशाओं को बांधकर अपने चारों तरफ वज्रमय कोट का ध्यान करे।

इत्यादि मंत्रः

ॐ नमो भगवति आम्र कुष्मांडी अंबा अंबोल अंबिके स्वाहा।

अथमूल विद्या

ॐ नमो भगवति सर्व पाप भक्षके स्वाहा (आह्वानन मंत्रः)

ॐ नमो भगवति आम्र कुष्मांडी विसर्ज्जनाहि स्वाहा (विसर्जन मंत्रः)

ॐ नमो भगवति आम्र कुष्मांडी महायक्षिणी ईश्वरी सर्वजन मनोहरी सर्वमुख रंजिनी सर्वराजवंश करिवशमानय वशमानय स्वाहा सर्ववश्य मंत्रः

ॐ नमो भगवति आम्र कुष्मांडी ईश्वरी सर्व्व स्त्र्याकर्षणी हुं फट स्वाह आकर्षणमंत्रः

ॐनमो भगवति आम्र कुष्मांडी सर्वमुख रंजिनी सर्व मुख स्तंभिनी हुं फट स्वाहा। मुख वश्या

ॐ नमो भगवति अनंत वासुकि तक्षक कर्कोट पद्म महापद्म शंखपाल कुलिक अष्टौ महा नागराज कामनी अनंत काले किलि स्वाहा वासुकि काले किलि स्वाहा तक्षक काले किलि स्वाहा कर्क्कोटक काले किलि स्वाहा पद्म काले किलि स्वाहा महापद्मा काले किलि स्वाहा शंखपाल काले किलि स्वाहा कुलिक काले किलि स्वाहा क्षिप ॐ स्वाहा जयाय स्वाहा विजया स्वाहा।

सर्वनिर्विष मंत्र :

अथोर्द्ध त्रिविधि प्रवक्ष्यामि पूर्व मे लक्षंजपेत्
पश्चात त्रि संध्यवा विशंतिवारं जपेत अपरिमितं कुर्यात्
आचाम्लशनः एक भुक्तोवा पक्षीतप फलं भवति।

इस मंत्र को प्रातः दोपहर और और सायंकाल के समय बीस। बीस बार अपरिमित दिनों तक जपे उस समय केवल पीने योग्य द्रव्यों का ही भोजन करता रहे। इसप्रकार के भोजन को दिन में एक बार करने से पन्द्रह दिन के तप का फल होता है।

आचाम्ल वृद्धि रत्न त्रयोपयुक्तः यमनियम परायण अभिनव वृत ब्रह्मचारी भूवोश्च (श्रय) विना क्षीर नीराश्रपेण चैत्यालये वा नदी तीरेवा समुद्र तीरेवा पर्वताग्रे वा विविक्त देशे आम्र कुष्मांडी सुरी देवी सर्व्वालंकार भूषिता तस्य पुत्रो एकैक द्वितीय पार्श्व स्थितः शीर्षे श्रुक्ल पक्ष प्रति पद मारभ्य आचाम्लासन एकभुक्तोपेतः अर्हत शौर्यो पूजां कृत्वा त्रिसंध्यं गंध पुष्प धूपादि पंच बलिं दद्यात उतरत्र त्रिरात्रोपेतं पौर्ण मास्य महद्भगवतो उत्तर पूजां कृत्वा अष्टोत्तर सहस्रं जपेत् पश्चात जाति पुष्प सहस्रं सं गृहय अर्हत प्रतिमा पाद मूले प्रत्येकं निक्षिपेत् अष्ट सहस्रा जपेत् ततः सिद्धि भवति दिनं प्रति पूजां कृत्वा अर्घ दद्यात् अतः पश्चात भगवत्याः पूजां करोति च साधु भोजनं दद्यात् पश्चात् आचार्य पूजयेत्॥

साधक इसप्रकार सम्यकदर्शन-सम्यकज्ञान् और सम्यकचारित्र से युक्त होकर अहिंसा आदि नियमो तथा शौच सन्तोष आदि नियमों से जगा हुआ नवीन व्रत लेकर ब्रह्मचारी होकर आश्रय के बिना ही दूध और जल के सहारे से चैत्यालय , नदी के किनारे समुद्र के किनारे, पर्वत के आगे भाग में या किसी एकान्त प्रदेश में इस मंत्र का साधन करे। सब आभूषणों से भूषित आम्र कुष्मांडी देवी की ऐसी मूर्ति बनावे कि उसमें दोनों तरफ एक-एक पुत्र खड़ा हुआ हो। इस अनुष्ठान को शुक्ल पक्ष की प्रति पदा से आरंभ करे, दूध और जल का भोजन केवल एक समय करे। भगवान अर्हत

देव और देवी का पूजन करे । प्रातः- दोपहर और सांयकाल के समय गंध पुष्प धूप आदि की पांच बलि दें। इसके पश्चात अंत की तीन रात्रियों में त्रयोदशी-चतुर्दशी और पूर्णमासी को भगवान अरहंत की पूर्ण पूजा करके पूर्णमासी को इसका १००८ जप करे। इसके पश्चात ९००० चमेली के फूल इकट्ठे करके भगवान अर्हंत की प्रतिमा के चरणों के मूल में एक एक फूल रखते हुए १००० जाप करे तब सिद्धि होती है। इस विधि में प्रतिदिन पूजन करके अर्ध देवें। इसके पश्चात भगवति का पूजन करके साधुओं को भोजन दें। इसके पश्चात आचार्य का पूजन करें।

॥ पद्मावती साधन विद्यानम् ॥

तोतलात्वारिता नित्या त्रिपुरा कामसाधिनी
देव्या नामानि पद्माया स्तथा त्रिपुर भैरवी ॥ १ ॥

तोतला, त्वारिता, नित्या, त्रिपुरा, काम साधिनी और त्रिपुर भैरवी पद्मावती देवी के नाम है।

पाशवज्र फलांभोज भृत्करे तोतला ह्वया
शंख पद्मऽभयवर त्वारितारव्याऽरूण प्रभाव ॥ २ ॥

पाशांकुशं प्रद्योजात साक्षमाला करा बरा
हंस वाहाणा नित्या जपा वलिवि मंडिता ॥ ३ ॥

शूल चक्राकुंशां भोज चाप बाण फलांकुशै
राजिताऽष्ट भुजा देवि त्रिपुरा कुंकुम प्रभाव ॥ ४ ॥

शंख पद्म फलांभोज भृतकरा काम साधिनी
बंधुक पुष्प संकाशा कुर्कटोरग वाहना ॥ ५ ॥

शंख चक्र धनुर्बाण खेटखड्ग फलांबुजैः
लसद्भुजेन्द्र गोपा भाव्यंक्षी त्रिपुर भैरवी ॥ ६ ॥

हाथों में नागपाश, वज्र फल और कमल धारण करने वाली तोतला नाम की देवी कहलाती है। शंख, कमल, अभय तथा वरदान युक्त और रक्त कांति वाली त्वरिता नाम की देवी कहलाती है। नागपाश , अंकुश, कमल और मोतियों की माला युक्त चार भुजाओं वाली जप की पंक्तियों से शोभित रक्त प्रभावाली और हंस के वाहन वाली देवी नित्या कहलाती है।

त्रिशूल ,चक्र, अंवश, कमल, धनुष, बाण, फल और अंकुश युक्त आठ भुजाओं वाली कुंकुम के वर्ण वाली देवी त्रिपुरा कहलाती है।

काम साधनी देवी के चारों हाथों में शंख ,पद्मफल, और कमल होता है उसकी कांति बंधूक (दोपहतिया) के पुष्प के समान होती है। और कुर्कुट नाग उसका वाहन होता है।

त्रिपर भैरवी देवी के आठों हाथों में शंख, चक्र, धनुष, बाँण, आखेट , तलवार, फल और कमल होता है। वह प्रकाशित भुजाओं और इन्द्रगोप (वीरबहुटी के समान रक्त कांतिवाली और तीन नेत्रवाली होती है।

॥ अथ पद्मावती साधन विधानम् ॥

ब्रह्मादि ह्रीं लोकनाथं हैंकारं व्योम षांत मदनोपेतं
पद्मे च पद्म कटिनी नमो तगोमूल विधेयं

ॐ ह्रीं हैं ह्स्क्लीं पद्मे पद्म कटिनी नमः
ब्रह्मा माया च हैंकारं व्योम क्लीं कार मूर्द्धगं

श्री च पद्म हैं नमोमंत्रं प्राहु विंधां षडक्षरी
ॐ ह्रीं है ह्स्क्लीं श्री पद्मे नमः
वाग्भवं चित्तनाथं च हौकारं सांत मूर्द्धगं
विंदु द्वय युतं प्राहुर्विबुधा स्त्र्यक्षरी मिमां

ॐ ऐं क्ली ह्सौं नमः
वर्णांत पार्श्व जिनो योरेफ स्तलगतः सधरऐन्द्र
तुर्य स्वर स विंदुः सभवेत पद्मावती संज्ञः

वर्ण का अंतिम अक्षर ह पार्श्वनाथ भगवान का है नीचे लगने वाला र धरणेन्द्र का है और चौथा स्वर ई पद्मावती देवी का है।

त्रिभुवन मोहकरी विधेयं प्रणव पूर्वनमनांता
एकाक्षरीति संज्ञा जपतः फलदायिनी नित्यं

ॐ ह्रीं नमः एकाक्षरी मंत्र तीन लोक को मोहित करने वाली और तुरन्त फल देने वाली है।

प्रणव पूर्व हो मांता इति पाठांतरं

ॐ ह्रीं स्वाहा होम मंत्र है।

स्नात्वा पूर्व मंत्री प्रक्षालित रक्त वस्त्र परिधानः
सन्मार्जित प्रदेशे स्थित्वा सकली क्रियां कुर्यात्

मंत्री पहले स्नान करके धुले हुए लाल वस्त्र पहन कर लिये हुए शुद्ध स्थान में स्थित होकर सकलीकरण की क्रिया करे।

पर्यंकासन संस्थः समीपतर वर्ति पूजनद्रव्यः
दिग्वानितानां तिलकं स्वस्य च कुर्यात् सु चंदनतः

फिर पर्यंकासन से बैठा हुआ अपने समीप पूजन के आठों द्रव्यों को रखे। चंदन से दिशारूपी बहुओं के अपने तिलक करे।

ह्रां वामकरां गुष्टे तर्जन्यां ह्रीं च मध्य मायां ह्रूं
ह्रौं पुनरऽनाभिकायां कनिष्टकायां च ह्रः श्चस्यात्॥

बायें हाथ के अंगूठे में ह्रां तर्जनी में ह्रीं मध्यमा में ह्रूं अनामिका में ह्रौं और कनिष्ठा में ह्रः बीजों को स्थापित करें।

पंच नमस्कार पदैः प्रत्येक प्रणव श्र्व होमांतै।
पूर्वोक्त शून्य परमेष्ठी पदाग्रे विन्यस्ते ॥

पंच नमस्कार मंत्र के पदों से प्रत्येक के आदि में ॐ और अंत में स्वाहा लगाकर पूर्वोक्त पांच शून्य बीजों से पंच परमेष्टि के पदों को लगावे।

शीर्ष वदनं हृदयं नाभिं पादौ च रक्ष रक्षेति
कुर्यात् ऐतै मंत्रः प्रति दिवसं स्वांग विन्यासं

शिर मुख हृद नाभि और पैर वाचक पदों में रक्ष रक्ष लगाकर प्रतिदिन अंग न्यास करें।

ॐ णमो अरहंताणं ह्रां पद्मावती मम शीर्ष रक्ष रक्ष स्वाहा
ॐणमो सिद्धाणं ह्रीं पद्मावती मम वदनं रक्ष रक्ष स्वाहा
ॐ णमो आहरियाणं ह्रूं पद्मावती मम हृदयं रक्ष रक्ष स्वाहा
ॐ णमो उवज्झायाणं ह्रौं पद्मावती मम नाभिं रक्ष रक्ष स्वाहा
ॐ णमो लोएं साहुणं ह्रः पद्मावती मम पादौ रक्ष रक्ष स्वाहा

द्विचतुः षष्टचतुर्दश कलाभिरंत्य स्वरेण बिंदुयुतैः
कूटै र्दिग्वन्ध स्तैर्द्दिशासु दिग्बंधनं कुर्यात् ॥

क्ष अक्षर को दूसरा कला आ सहित क्षा के बिन्दु अर्थात अनुस्वार सहित क्षां बीज फिर चौथी कला ई सहित अर्थात् क्षीं छटी कला सहित क्षूं चौदहवीं कला क्षौं और अंत के स्वर सहित अर्थात् क्षः इन सबसे क्षां क्षीं क्षूं क्षौं क्षः से पांच दिशाओं का दिग्बंधन करें।

हेम मयं प्राकारं चतुरस्तं चिंतये त्सुमुतंगं
विशंति हस्तं मंत्री सर्व स्वर संयुतै शून्यै

सकल स्वर संपूर्ण कुटैरपि खातिका कृति ध्यातेत्
निर्मलजल परिपूर्णः मति भीषण जलचरा कीर्णं

ज्वलदोंकार रकारैः ज्वालादग्धं स्वमग्निपुर संस्थं
ध्यात्वा मृत मंत्रेण स्नानं पश्चात्करोत्यमुना

फिर सोने का बना हुआ चौकोर बीस हाथ ऊँचा परकोटे का चिंतवन करे। इस परकोटे की सब स्वरों सहित हुंकार का चिंतवन करे। अर्थात ह हा हि ही हु हू ह्र ह्र ह्ल ह्ल हे है हो हौ हं हः बीज रूपी देव परकोटे की रक्षा कर रहे हैं।

फिर सब स्वरों सहित क्ष बीज का निर्मल जल से भरी हुई जिसमें भयानक जलचरों से भरी हुई खाई का चिंतवन करें।

उस खाई में स्थित क्षां क्षीं क्षुं क्षूं क्षृ क्षॄ क्ष्लृ क्ष्लॄ क्षे क्षैं क्षों क्षौं क्षं क्षः बीज रूपी देव वहां रक्षा कर रहे हैं, और अपने आप को अग्नि पुर में बैठे हुये और रकार रूपी अग्नि तो ज्वाला की शिखा से जलता हुआ ध्यान करे फिर अमृत मंत्र से अभिमंत्रित जल के छींटे देकर स्नान करें।

ॐ अमृते अमृतोद्भवे अमृत वर्षिणी अमृतं श्रावय श्रावय सं सं क्लीं क्लीं हूं हूं ब्लूं ब्लूं द्रां द्रां द्रीं द्रीं द्रावयद्रावय ठं ठं ह्रीं स्वाहा ॥

निजोत्तमामरे भूधराग्रे संस्नापितः पार्श्व जिनेन्द्र चंद्रः
क्षीराब्धिदुग्धेन सुरेन्द्र वृंदैः स्वं चिंतये तज्जल पूतजातं

अपने मस्तक रूपी सुमेरु पर्वत पर श्री पार्श्वनाथ स्वामी को विराजमान ख्याल करें। जिनके देवेन्द्रों द्वारा क्षीर समुद्र जल से अभिषेक हो रहा है। और उस अभिषेक का जल अपने शरीर पर गिर रहा है। यह ध्यान करे कि मेरा शरीर शुद्ध हो गया है।

भूतोरग शाकिन्यो ध्यानेनानेन नोपसर्पति
अपहरति पूर्व संचित मपि दुरितं त्वरित मेवेह ।

भूत सर्प शाकिनी वगैरह इस ध्यान करने वाले के पास आकर कोई प्रकार का उपसर्ग नही कर सकती और पूर्व संचित पाप भी सब शीघ्र नष्ट हो जाते हैं।

इति सकली करणं

चतुरस्रं विस्तीर्णं रेखा त्रय संयुतं चतुर्द्वारि
विलिखेत् सुरभि द्रव्यैर्यंत्रमिन्द हेम लेखिन्या ॥ १ ॥

इस यंत्र को सोने की कलम से सुगंधित द्रव्यों से चौकोर विस्तीर्ण तीन रेखा सहित तथा द्वार वाला बनावे।

धारणेद्रायनमोऽध: छदनाय नमस्तथोर्द्धछदनाय
पद्म छदनाय नमो मंत्रान् वेदादि मायायान् ॥ २ ॥

प्रविलिखव्यैतान क्रमश: पूर्वादिद्वार पीठ रक्षार्थं
दश दिक्पाल लिखेदिंद्रादीन प्रथम रेखांते ॥ ३ ॥

ॐ लं इद्राय नम: ॐ रं आग्नेय नम: ॐ शं यमाय नम: ॐ षं नैऋत्यनम:
ॐ वं वरूणाय नम: ॐ पं पवनाय नम: ॐ यं वायवे नम: ॐ सं कुबेराय नम:
ॐ हं ईशानाय नम: ॐ ह्रीं अधछदनाय नम: ॐ ह्रीं ऊर्ध्वछदनाय नम:

दशादिक्पाल स्थापन मंत्र:

इसको आसन की रक्षा के लिए पूर्व आदि द्वारों पर क्रमश: लिखकर प्रथम रेखावाला के अंत में निम्नप्रकार से दशदिक्पालों को लिखे। उन मंत्रों के पश्चात उससे अगले कोठे में दशों दिशाओं में निम्न मंत्र लिखे।

लं रं शं षं वं पं सं हं वर्णान स.विंदु कानऽष्ट दिक्पति समेतान्
प्रणवादि नमोंतगतानो ह्री मध्य ऊर्ध्व वदन संज्ञे च ॥ ४ ॥

पूर्व में इन्द्र के वास्ते लं आग्नेय दिशा में अग्निद्रं के लिये रं दक्षिण दिशा में (यम के लिये शं) नैऋत्य कोण के लिए षं और वं वरुण कोण के लिए पश्चिम के लिये पं वायू कोण के लिये सं उत्तर दिसा के लिये और हं ईशान के लिये है उँ पहले नम: अंत में लगावे तथा पाताल व आकाश के लिये ह्री लगावे।

दिक्षु विदिक्षु क्रमशो जयादि जृंभादि देवता विलिखेत
प्रणव त्रिमूर्ति पूर्वा नमोतंगा मध्य रेखांते ॥५॥

आद्या अपराजिता तथा जिताचा ऽपराजिता देव्य:
जृंभा मोहा स्तंभा स्तंभिन्यो देवता ह्यता: ॥६॥

फिर उसके अगले कोष्टक की दिशाओं में आदि में ॐ ह्रीं तथा अंत में नमः लगाकर जया आदि और विदिशाओं में जृंभा आदि देवियों को लिखे तथा विजया अजिता अपराजिता जृंभा मोहा स्तंभा स्तंभिन्यै देवियों को लिखे।

तन्मध्येऽष्ट दलांभोज मनंग कमला भिधां विलिखे च
च पद्म गंधा पद्मास्यां पद्ममालिकां ॥७॥

मदनोन्मादिनीं पश्चात कामोद्दीपन संज्ञिकां
आलिखेत् पद्म वर्णाख्यां त्रैलोक्य क्षोभिनी तत: ॥८॥

ततो ह्रींकार पूर्वोक्ता नम: शब्दावसानगा
अकारादि हकारांतान केशरेषु नियोजयेत् ॥९॥

ॐ ह्रीं क्षां प नम: प्राच्यामों ह्रीं क्षीं द्मा नम: क्रमात
ॐ ह्रीं क्षुं व नम: पश्चादों ह्रीं क्षौं ती नमो लिखेत् ॥१०॥

इसके बीच में एक आठ दल का कमल बनावे जिसकी पखडियों में पूर्वादिक्रम से ॐ ह्रीं अनंग कमलायै नमः ॐ ह्रीं पद्म गंधायै नमः

ॐ ह्रीं पद्मास्यायै नमः ॐ ह्रीं पद्ममालायै नमः ॐ ह्रीं मदनोन्मादिन्यै नमः
ॐ ह्रीं कामोद्दीपनायै नमः ॐ ह्रीं पद्म वर्णायै नमः ॐ ह्रीं त्रैलोक्य क्षोभिण्यै नमः

और उस कमल की कर्णिका में अ कार से हकार तक सब अक्षर लिखे फिर उस कमल की चारों दिशाओं में क्रम से

ॐ ह्रीं क्षां प नमः ॐ ह्रीं क्षीं द्मा नमः ॐ ह्रीं क्षूं व नमः ॐ ह्रीं क्षौं तीनमः

एतत्य पद्मावती देव्या भवेद्वक चतुष्टयं
पंचोपराचारत: पूजां नित्यमस्या करोत्विति ॥११॥

यह चारों पद्मावती देवी के मुख है। उसका पूजन पाँचो उपचार से नित्य करना चाहिये।

ॐ ह्रीं नमोस्तु भगवति पद्मावति च त्यनेन मंत्रेण कुर्य्याद्।
ह्वानादीनु पचारान्यं च पद्माया ॥ १२ ॥

आह्वानन स्थापन सन्निधिकरण पूजन और विसर्जन को पंडितों ने पंचोपचार पूजन कहा हैं।

आह्वाननं स्थापनं देव्या सन्निधिकरणं तथा
पूजां विसर्जनं प्राहुः बुंधाः पंचोपचारकं ॥ १३ ॥

पूजन के समय इस मंत्र से आह्वानन करे।

ॐ ह्रीं नमोस्तु भगवति पद्मावति ऐहि ऐहि अवतरावतर संवोष्ट आह्वाननं

तिष्ट द्वितयं टांत द्वितयं संयोजयेत् स्थितिकरणे
सन्निहिता भव शब्दं मम वषट संन्निधिकरणे ॥ १४ ॥

ॐ ह्रीं नमोस्तु भगवति पद्मावति ऐहि ऐहि तिष्ट तिष्ठ ठः ठः स्थापनं
ॐ ह्रीं नमोस्तु भगवति पद्मावति ऐहि ऐहि मम सन्निहितो भव भव वषट
ॐ ह्रीं नमोस्तु पद्मावति गंधादीन गृह्ण - गृह्ण
ॐ ह्रीं नमोस्तु भगवति पद्मावती स्वस्थानं गच्छ गच्छ जः जः जः विसर्जनं॥

गंधादीन गृह्ण गृह्णेति नम पूजा विधान के
स्वस्थानं गच्छ गच्छेति जः स्त्रिः स्यात्तद्विसर्जनं ॥ १५ ॥

पूजन के समय गंधादीन् गृह्ण गृह्ण नम कहे तथा विसर्जन के समय स्वस्थानं गच्छ गच्छ तीन बार जः कहे।

पन्नगाधिप शेखरां विपुलाऽरुणां बुज विष्टरां
कुर्कुटोरग वाहनामरुम पभां कमलाननां ॥ १६ ॥

मस्तक पर नागराज वाली अत्यंत लाल कमल के आसन वाली कुर्कुटनाग के वाहन वाली रक्त कांतिवाली कमल के समान मुखवाली ।

अंबकां वरदां कुशायत पाश दिव्य फलांकितां
चिंतयेत् कमलावतीं जपतां सतां फल दायिनीं ॥ १७ ॥

वरद अंकुश बंधेहुए नागपाश और दिव्यफल सहित हाथों वाली जपने वालो को सदा फल देने वाली माता पद्मावती का ध्यान करे।

तोतलात्वरिता नित्या त्रिपुरा काम साधनीं
देव्यानामानि पद्मावा स्तथा त्रिपुर भैरवी ॥ १८ ॥

तोतला त्वरिता नित्या त्रिपुरा काम साधिनी पद्मा पद्मावती और त्रिपुर भैरवी यह देवी का नाम है।

चतुर्भुजा पाश फल प्रदानैं द्विपेद्र वश्यां कित चारु हस्ता
त्रिलोचना रक्त सरोज पीठा पद्मावती माम वतान्नमंतं ॥ १९ ॥

पाशफल वरद और अंकुश सहित चार भुजा वाली तीन नेत्रवाली लाल कमल के आसन वाली पद्मावती देवी मेरी रक्षा करे।

ह्रां ह्रींसु बीज प्रमुखै श्च शून्यै रों ह्रीं नमो देव्यं भिधान पूर्वैं
शीर्ष च चक्रं हृदयं च नाभिं पादौ च रक्ष द्वयतोथ पद्मे ॥ २० ॥

ॐ ह्रीं के पश्चात ह्रां ह्रीं आदि शून्य बीजों का लगाकर देवी का नाम लिखकर सिर मुँह हृदय नाभि पादौ पद लगाकर रक्ष रक्ष पद लगाये।

ब्लें पिंडं माया क ष वर्ण टांतान विलिख्यं वाह्येऽष्टदलाब्ज यंत्रं
दशाक्षरी तेषु च वौषट् इंदु खर्हेंदु वेष्टयं तब पद्म पद्मे ॥ २१ ॥

ब्लें पिंड (झ पिंड च्ल्व्र्यूं माया ह्रीं कष (आं) टांत (ठ) को लिखकर उसके बाहर आठ दल का कमल बनावे उसमे दशाक्षरी क ख ग घ न च छ ज झः ञ वोषट और इंदु ह्रयीं लिखकर पद्मावती के मूलमंत्र से वेष्टित करें।

नमोंते तेजो मुख लोकनाथं हैं व्योम षांत स्थित काम राजं ।
पद्मे पदं कटिन्य थैति देवि त्वदाराधनमूलमंत्र ॥ २२ ॥

अंत में नमः आदि में तेज (ऊँ) लोकनाथ ह्रीं) है व्योम (ह) षात (स) और कामराज (क्लीं) का मिला हुआ रूप पद्मे पद्म कटिनी सहित देवी का मूलमंत्र है।

ऊँ ह्रीं हैं ह्सक्लीं पद्मे पद्म कटिनी नमः
यंत्रं लिखित्वागुरू चंदनाद्यै प्रपूज्योदुत्तर दिग्मुख स्थ
दशा क्षरं मंत्र पद जपन्यः किं पश्यते तस्य फलंतु पद्मे ॥ २३ ॥

इस यंत्र को अगुरू चंदन आदि से लिखकर उत्तर की ओर मुख करके पूजन करता हुआ पुरूष दशाक्षर मंत्र का जा जाप करता है। उसकी हे पद्मे कोई फल अविशिष्ट नही रहता है।

नित्यादि मंत्रेण सुजाप यस्यै ददातियो गंध फलं प्रसूनं
सा तस्या वशगा भवतीह पद्मे सौभाग्य वल्ली प्रसवं विचित्रं ॥ २४ ॥

उपरोक्त मंत्र से गंध फल पुष्प आदि जिस किसी को देता है वह उसके वश में हो जाते हैं। हे पद्मे इस सौभाग्य लता की उत्पत्ति बड़े विचित्र ढंग की होती है।

शीर्षास्य हृन्नभि पदेषु यस्यान्यसेदनं गोद्भव पंच बाणान्
सं मोहनं द्रावण मेति वस्य पद्मावती त्वंयदि तोषमेति ॥ २५ ॥

हे पद्मावती ! यदि कोई पुरुष आप में संतोष करके किसी स्त्री के सिर मुख नाभि और पैरों में काम के पांचो बाण लगावे तो उसका संमोहन और द्रावण होता है।

यः काम राजस्य तलोर्द्धभागे मायाक्षरं पार्श्व युगे।
तथा ब्लें यौनौभ्रमंतं पदयोः पतंति ध्यायन सदा भावयतीह पद्म ॥ २६ ॥

हे पद्मे ! जो पुरुष स्त्री की योनि के ऊपर और नीचे के भाग में माया अक्षर (ह्रीं) और दोनों पार्श्व में ब्लें का ध्यान करके उसको घूमती है और पैरों में पड़ती हुई ध्यान करता है वह सदा ही उस स्त्री की भावना करता अर्थात् प्राप्त करता है।

नेत्रादि मध्ये परियोज्यनाद्या ब्लें कामराजं हविलोकयंति
ध्यायेत् स सिंदूर समान वर्णं क्षि सं च्युतिं कारयती ह पद्मे ॥ २७ ॥

हे पद्मे ! जो मंत्री स्त्री के नेत्री की आदि मध्य और अंत में क्रमशः क्रमशः ब्लें कामराज क्लीं और द्विपलोक (क्रों) का सिंदूर के समान लालवर्ण युक्त ध्यान करता है। वह शीघ्र ही स्त्री को द्रवित करता है।

पद्मावती स्तोत्र मिदं त्रि संध्यं सन्मंत्रि मुखै र्गदितं पठयः
स सिद्ध वाक् सर्वजनानुरागी सर्वार्थ कामांश्च सदालंभते ॥ २८ ॥

जो पुरुष पद्मावती के स्तोत्र को प्रातः दोपहर और सायंकाल के समय उत्तम मंत्रो के सहित पढ़ता है उसकी वाणी सिद्ध हो जाती है। सब पुरुष उससे प्रेम करते हैं। उसका सब अर्थ और काम प्राप्त होते हैं।

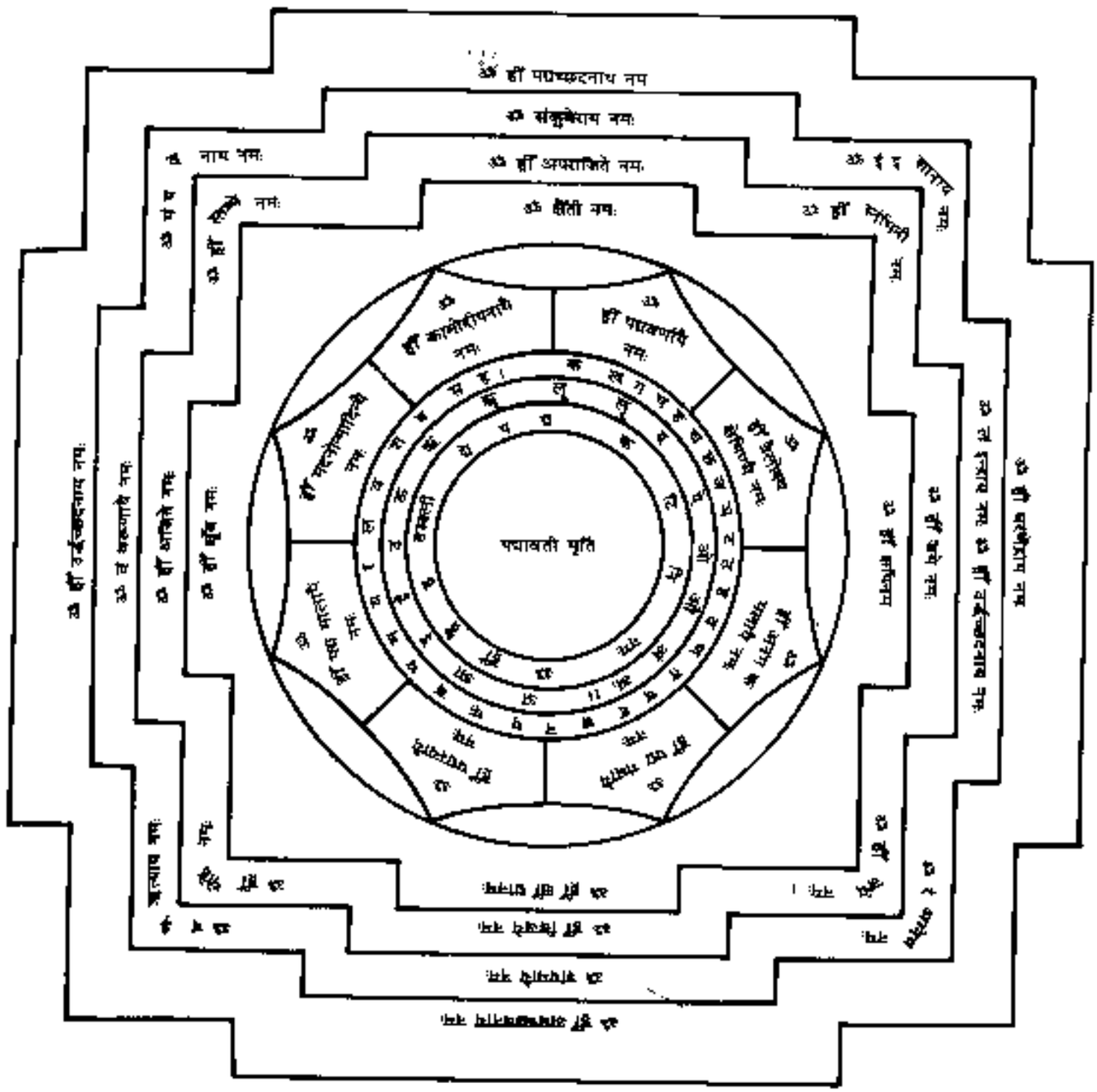
ॐ ह्रीं पद्मप्रभनाथ नमः
ॐ संकुसेवाय नमः
ॐ ह्रीं अपराजिते नमः
ॐ क्षितौ नमः
ॐ ह्रीं पद्मावत्यै नमः
ॐ ह्रीं कालीदेवीपत्न्यै नमः
ॐ ह्रीं महाकाल्यै नमः
ॐ ह्रीं गौरीदेव्यै नमः
ॐ ह्रीं ज्वालामालिन्यै नमः
ॐ ह्रीं मानवीदेव्यै नमः
पद्मावती यक्षि
ॐ ह्रीं वैरोट्यै नमः
ॐ ह्रीं अच्युतायै नमः
ॐ ह्रीं मानसीदेव्यै नमः
ॐ ह्रीं महामानसीदेव्यै नमः

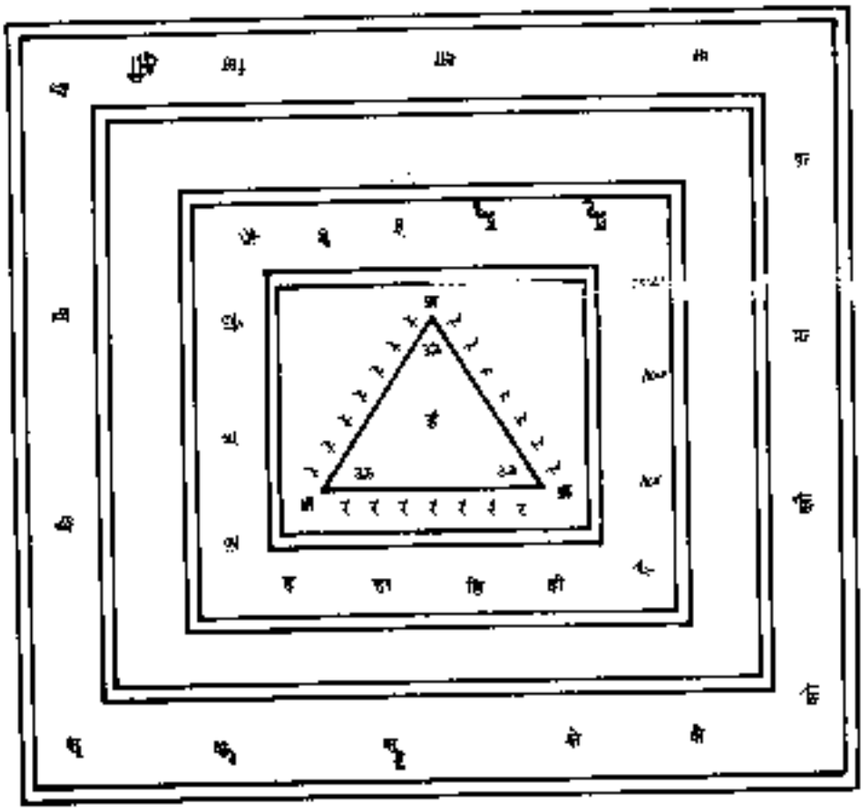

इत्थं मंत्रार्थ गर्भेण स्तु स्तोत्रेण भक्तितः
तां पद्मां साधयेन् मंत्री समस्तै साधन क्रमैः॥

इस प्रकार मंत्री इस मंत्रार्थ गर्भित स्तोत्र से पद्मावती देवी की भक्ति पूर्वक स्तुत करके उसको पूर्णतया साधन विधि से करे।

सिद्धयति पद्मादेवी त्रिलक्ष जापेन पद्मपुष्पाणां
अथवाऽरूणं करवीरक वृत्तेक पुष्प जापेन

पद्मावती देवी लाल कमल के फूलों अथवा लाल कनेर के फूलों पर तीन लाख जप करने से सिद्ध होती हैं।

तत्या वृतं नाम विलिख्य पत्रे तन्होम कुंडे निखने त्रिकोणे।
स्मरेषुभिः पंच भिः रभि वेष्टयं वाह्ये पुनर्लोक पति प्रवेष्टयं ॥ ३१ ॥

एक ताम्रपत्र पर नाम को ह्रीं से वेष्टित करके उसके चारों तरफ ह्रां ह्रीं क्लीं ब्लूं सः को लिखकर बाहर फिर ह्रीं लिखकर उसको त्रिकोण कुंड (होमकुंड) में गाड़ दें।

॥ पद्मावती स्तोत्र ॥

श्री मद्गीर्वाण चक्र स्फुट मुकुट तटी दिव्य माणिक्य माला
ज्योति र्ज्वाला कराल स्फुरित मकरिका यृष्ट पादार विन्दे
व्याघ्रो रूल्का सहस्र ज्वलदनल शिखा लोलपाशां कुशाढ्ये
आं क्रों ह्रीं मंत्र रूपे क्षपित कलि मलं रक्ष मां देवि पद्मे ॥ १ ॥

हे व्याघ्र वाहिणी ! आं क्रों ह्रीं मंत्र रूपिणी पद्मावती आप मेरी रक्षा कीजिए। भावनासुर नागकुमार आदि देवों के समूह जिनके वश में अणिमा, महिमा, गरिमा, लघिमा प्राप्ति प्राकाम्य इशत्व वशित्व ऋद्धियाँ है, वे आपके चरणों पर अपना सिर रखकर नमस्कार करते हैं। उसके मुकुटों का अग्रभाग जिनपर लाल माणिक्य की मकरा कृती बनी हुये ये आपके चरणों में देते देते घिस गये हैं। आपके हाथ में नागपाश अंकुश हजार उल्कापात के समय में होने वाले प्रकाश से चमक रहे है और आपने सम्पूर्ण कलियुग का पाप नष्ट कर दिया है।

भित्वा पाताल मूलं चल चल चलिते व्याल लीला कराले।
विधुद्दंड प्रचंड प्रहरण सहितै सदुभुजै स्तजटांती
दैत्येन्द्र क्रूर दष्ट्रा कट कट घटिते स्पष्ट भीमाट्टहासे
मायाजी मूत माला कुहरित गगने रक्षमां देवि पद्मे ॥ २ ॥

पाताल को फोड़कर बहुत फूर्ति से ऊपर निकलने वाली, अपने चारों तरफ सर्पों की क्रीड़ा से भंयकर मालूम देने वाली बिजली, के समान भयंकर शस्त्र सहित अपनी भुजाओं से कमठ नामक दैत्य को डराती हुई, जिसके मुँह से दाँत पीसने की भयंकर आवाज निकल रही है, जिसके भयंकर हास्य की आवाज बहुत दूर तक स्पष्ट सुनाई दी जा रही है, अपनी माया से निर्मित मेघों का घटा से जिसने सारा आसमान छालिया है ऐसी हे पद्मावती देवी आप मेरी रक्षा कीजिये।

कूजोत्को दंड कांडोद्दमरू विद्युरिता क्रूर धोरोप सर्गे
दिव्यं वज्रात पत्रं प्रगुण मणि रणत किंकिणी क्वान रम्यं
भास्वद्वैडूर्य दंडं मदन विजयिनो विभ्रती पार्श्व भर्तुः
सा देवी पद्महस्ता विघटयतु महा डामरं माम कीनम् ॥ ३ ॥

इस श्लोक में चतुर्भुजादेवी का वर्णन है। एक हाथ में ऐसा धनुष लिया है जिसकी डोरी टंकार कर रही है। दूसरे हाथ में बाण है। एक हाथ ऊँचा किया हुआ है और उसमें डमरू लिया हुआ है इन तीनों भयंकर दिखने वाली (कामदेव को जीतने वाले श्री पार्श्वनाथ भगवान को) जय सिंह व्याघ्र इत्यादि भयंकर प्राणियों के आक्रमण से और वज्रपात अग्नि वर्षा इत्यादि नैसर्गिक उत्पातों से

बचाने के लिये उनपर स्वर्गीय और दे दीप्यमान वेडूर्य नामक रत्न से जिसका डंडा बना हुआ है। झालर में लगी हुई मणियों की मधुर संगीत ध्वनि जिसमें सुनाई दे रही है। ऐसे वज्र नाम के हीरे के बने हुए छत्र लेकरखड़ी हुई कमल हस्ता लक्ष्मी देवी हमारे डर को दूर करें।

भृंगी काली कराली परिजन सहिते चंडि चामुंडि नित्ये
क्षां क्षीं क्षूं क्षें क्षणद्धे क्षत्त रिपु निवहे ह्रीं महामंत्र वश्ये
भ्रां भ्रीं भ्रूं भ्रें भ्रसंगे भृकुटि पुट तटी त्रासितोद्दाम दैत्ये
झं झीं झूं झें झः चंडे स्तुति शत मुखरे रक्षमां देवि पद्मे ॥४॥

भृंगी काली कराली इत्यादि नाम की सहेलियों से युक्त चंड़ी अर्थात् सिर पर बैठी हुई चतुर्भजा क्रोध से लाल और चामुंडा अर्थात् सिंह पर विराजमान आठ भुजा वाली पीले रंगवाली क्षां क्षीं क्षूं क्षे क्षः इन बीजों से बंधी हुई शत्रु समुदाय को जिसने घायल कर दिया है ह्रीं मंत्र से साधक के वंश में होने वाले क्षोभां भ्रीं भ्रूं भ्रें भ्रः इस मंत्र को अपनी त्योरी (भृकुटी) से कमठ नाम के दैत्य को डरानेवाली और झां झीं झूं झैं झः इन पांच बीजाक्षरों से बहुत भयंकर दिखने वाली भगवान श्री पार्श्वनाथजी की स्तुति हे पद्मे देवी आप मेरी रक्षा कीजिये।

चं चत्कांची कलापे स्तन तट विलुठत्तार हारावली के
प्रोत्फुल्लत्पारिजात द्रुम कुसुम महामंजरी पूज्य पादे
द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं समेते भुवन वशकरी क्षोभिणी द्राविणी
त्वं आं ऐं ॐ पद्मे हस्ते कुरु कुरु रक्षा मां देवी पद्मे ॥५॥

जिसकी करधनी (कनगती) खूब चमक रही है छाती पर अनेक प्रकार के हार शोभा दे रहे हैं, विकसित कल्प वृक्ष के फूलों की मंजरी से जिसके चरण कमल पूजा योग्य हैं और द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः इन बीजों से युक्त सम्पूर्ण जगत को वश करा देने वाली शत्रुओं में अशान्ति फैलानी वाली, उनको भगाने वाली, आं ऐं ॐ रूपी कमल हाथ में लिये हुवे जिसके मंत्र में कुरु कुरु यह दो पद है ऐसी है पद्मे देवी आप मेरी रक्षा करें।

लीला व्यालोल नीलोत्पल दुलनयनं प्रज्वलद्वाडवाऽग्नि
ज्वाज्वाला स्फुलिंग स्फुर दर निकरोदग्र चकाग्र हस्ते
हां हीं हूं हः हसंती हर हरह हर ह ह हूंकार भीमैक नादे
पद्मे पद्मासनं स्थे व्यपनय दुरितं देवि देवेन्द्र वंद्ये ॥६॥

अपने आप कुछ कुछ हिलने वाले नीलकमल के पत्ते के समान जिसकी आँखे हैं, वडवानल से निकलने वाली ज्वालाओं की चिनगारियों से जिसके अस्त्र चमक रहे हैं और जिसके हाथ में भयंकर

वज्र है, कमलासन पर बैठी हुयी है। भावनासुर और कल्पवासी सुरेन्द्रों द्वारा पूजनीक है तथा तीर्थंकरों के नैसर्गिक उत्पातों को नाश करने के कारण कल्प वासी देवेन्द्रों की पूज्य है। भयंकर हूंकार शब्द करने वाली और(कार) एक नाद अर्द्ध चन्द्र बिन्दु) हां हीं हूं हौ हः इस मंत्र भय रूप को धारण करने वाली हे पद्मे देवी आप मेरे पापों को नष्ट करें।

वं पं झं वं स हंसः कुवलय कलितोद्दाम लीला अबंधे
झां झीं झूं झः पवित्रे शशि कर दवले पक्ष रत् क्षीर गौरे
वालव्या वद्ध जूटे प्रबल बल महाकाल कूटं हरंती
हाहा हूंकार नादे कृत कर कमले रक्ष मां देवी पद्मे ॥७॥

वं पं झं वं स हंसः इन सात अक्षरों से सारे भूखंड में अपनी लीला फैलानी वाली अथवा नीलकमल के वास होने के कारण वहाँ अपनी लीला फैलाने वाले झां झीं झूं झः इन चार अक्षरों से पवित्र चन्द्रमा की किरणों जैसी सफेद , बहुते हुये दूध के समान गोरी और जिसके जटा जूट में सांप बंधे हुये हैं, शत्रु में जिसके कमल है (क+आ+रँ=क्राँ) हा हा हूं और क्राँ इस मंत्रमय स्वरूप वाली हे पद्मादेवी आप मेरी रक्षा करें।

प्रातर्बालार्क रश्मि छुरित घन महा सांद्र सिंदूर धूलीः
संध्या रागरूणांगी त्रिदशवर वधू वंध पादार विंदे।
चं च च्चंडा सि धारा प्रहत रिपुकुले कुंडलोद घृष्ट गंडे
श्रां श्रीं श्रूं श्रः स्मरंती मद गज गमने रक्षमां देवी पद्मे ॥८॥

प्रातःकाल में उदयमान सूर्य की किरणें जिसपर पड़ रही हैं ऐसी घनी सिंदूर की दूल की तरह और उस वल्क के आसमान के समान लाल रंग वाली देवेन्द्रों की इन्द्रायणिया जिसके चरण कमल की पूजा करती है। चमकने वाली भयंकर तलवार की धार से सारे शत्रु दल को मार डालने वाली, जिसके कान के कुंडल गाल पर घिस रहे है, मस्त हाथीके समान चलने वाली श्रां श्रीं श्रूं श्रः इसको स्मरण करने वाली अर्थात् भावनासुर नागदेवादि अपने शत्रु असुरों को मारने के लिये जिसका स्मरण करते हैं- ऐसी पद्मावती देवी मेरी रक्षा कीजिये।

गर्ज्जन्नीरद गर्भ निर्गत तडिज्वाला सहस्र स्फुरत्
सद्वज्रांकुशपाश पंकज कराभक्त्यांडमरै रर्चिता
सद्यः पुष्पित पारिजात रुचिरं दिव्यं वपुर्विभ्रता
स मां पातु सदा प्रसन्न वदना पद्मावती देवता ॥९॥

जिसके हाथों में क्रम से वज्र, अंकुश, पाश और नागपाश व कमल हैं जो सजल मेघ के भीतर

से चमकने वाली बिजली की ज्वाला से सहश्र गुण अधिक प्रकाश रखने वाली है। देवलोग जिसकी बहुत भक्ति से पूजन करते हैं। तत्काल लिखे हुवे पारिजात पुष्प के सामन जिसका शरीर सुन्दर है और सदा प्रसन्न मुखवाली पद्मावती देवी मेरी रक्षा करे।

विस्तीर्णे पद्म पीठे कमल दल निवासोचिते काम गुप्ते
लां तां ग्रां श्री समेते प्रहसित वदने नित्य हस्ते प्रहस्ते
रक्ते रक्तो ज्वलांगि प्रति वहसि सदा वाग्भवेकाम राजे
हंसा रूढ़े सुनेत्रे भगवति वरदे रक्षमां देवी पद्मे ॥ १० ॥

लाल और उज्वल अंगवाली कमल के फूलों में रहने वाली मुस्कराती हुई मुँहवाली हे पद्मे देवी आप मेरी रक्षा करें। एक विशाल चुतष्कोण पीठ पर दस दल कमल बनाया जावे। इसके पहिले दल में कामगुप्ते दूसरे में लां प्रहसित वदने प्रहस्ते आठवें में श्री नवमे में रक्ते १० व में रक्तोज्वालंगी लिखे और हरे एक दो पत्तों के बीज में ऐं नीचे और क्लीं ऊपर ऐसी हे पद्मा देवी आप मेरी रक्षा करें।

षटकोणे चक्र मध्ये प्रणव वरयुतं वाग्भवे काम राजे
हंसा रूढे स बिन्दे विकसित कमले कर्णिकाग्रे निधाय
नित्ये क्लिन्ने मदार्द्रे द्रवइति सततं सां कुशे पाश हस्ते
ध्यानात्संक्षोभकारि त्रिभुवन वशकृत रक्षमां देवी पद्मे ॥ ११ ॥

हंस वाहिनी, बिन्दु सहित अंकुश और नागपाश लिये हुये, ध्यान से शत्रुओं में क्षोभ पैदा करने वाली, त्रिभुवन को वश करा देने वाली, नित्ये क्लिन्ने मदार्द्रे मद स गीली स्त्री को द्रवित कराती है। ऐसी हे पद्मावती देवी मेरी रक्षा करो। छ कोण चक्र में ॐ ऐं क्लीं हंस वाहनी खिले हुवे कमल पर बैठी हुई कर्णिका में ध्यान करें।

जिव्हाग्रे नासिकांते हृदि मनसि दृशोः कर्णयोर्नाभि पद्मे
स्कंधे कंठे ललाटे शिरसि च भुजयो पृष्ट पार्श्व प्रदेशे।
सर्वांगो पांग शुद्धा अतिशयभुवने दिव्य रूपं स्वरूपं
ध्यायामः सर्वकाले प्रणवलय युतं पार्श्वनाथैक शब्दं ॥ १२ ॥

सम्पूर्ण अंग और उपांगो में शुद्ध होकर अर्थात अंग न्यास, करन्यास करके शुद्ध होकर जीभ की नोंक पर, नाक की अणी पर, अपने हृदय में मन में, आंखो में, कानों में ,नाभि में ,दोनों कंधों में, कंठ में ललाट में, सर पर भुजाओं, में पीठ पर दोनों बगलों में , और सर्वदा दिव्य स्वरूपी समभवशरण में विराजे हुवे पार्श्वनाथ स्वामी का अपने उपरोक्त शरीर के अंगों में ॐ पार्श्वनाथाय नमः का ध्यान करना चाहिये।

आं क्रों ह्रीं पंच वर्णैः लिखित षटदले चक्रमध्ये ह्स्कलीं
क्रों क्रां पत्रांतराले स्वपरि कलिते वायुनावेष्टितांगी
ह्रीं वेष्टेत रक्त पुष्पै र्जपित दल महाक्षोभिणी द्राविणी त्वं
त्रैलोक्य चालयंती सपदिजन हिते रक्षमां देवी पद्मे ॥ १३ ॥

पांच वर्ण (रंगो) से लिखित षटदल चक्र में जिसके दलोंच में आं क्रों ह्री हस्कलीं क्रम से विद्यमान है। और पत्रों के बीच में ऊपर और नीचे क्रों क्रां बीच में विद्यमान है। अ आ इ ई इत्यादि स्वरों से घिरे हुवे और वायु मंडल से घिरे हुये औ ह्रीं से वेष्टित ऐसे कमल में स्थित, संसार का हित करने वाली, त्रैलोक्य को चलाने वाली, और लाल फूलों से जप करने पर क्षोभ पैदा करने वाली और द्रवित करने वाली हे पद्मावती देवी मेरी रक्षा करो।

ब्रह्माणी काल रात्री भगवति वरदे चंडि चामुंडिनित्ये।
मातर्गांधारि गौरि धृति मति विजये कीर्तिही स्तुत्य पद्मे
संग्रामे शत्रु मध्ये जय ज्वलन जले वेष्टिते स्वरा स्त्रैः
क्षां क्षीं क्षूं क्षः क्षणार्द्धे क्षत्तरिपु निवहे रक्षमां देवि पद्मे ॥ १४ ॥

ब्रह्माणि काल रात्रि भगवती वरदे चंडी चामुंडी नित्ये माता गांधारी गौरी धृती मती विजये कीर्ति ह्रीं स्तुत्य पद्मे इन १६ मातृका स्वरूपिनी स्वर रूपी जो अस्त्र है उनसे घिरी हुई युद्ध में शत्रुओं के बीच में अग्नि में जल में जिसने सब रिपु लोगों को आधे क्षण में नष्ट कर दिया है। ऐसी हे पद्मावति देवी क्षां क्षीं क्षूं क्षः इस मंत्र से हमारी रक्षा करें।

खड्गैः कोदंडकांडैर्मुशल हल किणैः वंन्य नाराच चक्रैः
शक्त्या शल्य त्रिशूलै वरफण सफलै र्मुद्गरै र्मुष्टिदंडै,
पाशैः पाषाण वृक्षै र्वर गिरि सहितै र्दिव्य शस्त्रै रुदस्त्रै
र्दुष्टानाम् दारयंती वर भुज ललितै रक्ष मां देवि पद्मे ॥ १५ ॥

तलवार, धनुषबाण, मूशल, हल, खुरपा, लोहे का बाण, चक्र, शक्ति शल्य (लघुबाण) त्रिशूल गोफण (गोपिया) लकड़ी की मूठमाला, छोटा हत्यार (मुद्गाल मूठ दंड नागपाश पहाड़ों से पत्थर बरसाना इन शस्त्रों से दुष्टों के हृदय को चीरती हुई अनेक भुजाओं से युक्त है। पद्मादेवी आप मेरी रक्षा करो।

भू विश्वेक्षण चन्द्र बिंब पृथिवी युग्मेक संख्या क्रमात्
चंद्राभो निधि बाण रूप वसु दिक्द्वक खेचरे शादिषु
ऐश्वर्य रिपु मारि विश्वभय हृत क्षोभांतरायान् विषान्
लक्ष्मी लक्षण भारती गुरु मुखान्मंत्रानि मान् देविते ॥

शुरु के १ से८ काव्यों को यदि गुरु मुख से उपदेश लेकर ८ दिन में १ लाख जाप करे तो ऐश्वर्य की प्राप्ति होती है। ५ दिन में ४ लाख जप करे तो शत्रु का पराभव हो २ दिन में ५ लाख जप करे तो दुनिया से अपने को डर रहता हो तो वह नष्ट होता है। १ दिन में ५ लाख जाप करे तो मारण करने वाली का मारण प्रयोग नहीं हो सकता है। १दिन में ९ लाख जप करने से क्षोभन नष्ट होता है। ८ दिन में १० लाख करने से विघ्न नष्ट होते हैं। २ दिन में २ लाख जप करने से विष का असर नहीं होता है। १ दिन में १२ लाख जप हो तो लक्ष्मी मिलती है। भू= ८ दिन चन्द्र= १ लाख विश्व= ५ अंभिनिधि = ४ इक्षण =२ बाण= ५ चन्द्र =१ रुप =५ बिंब =१ वसु =८ पृथ्वी= ९ दिक = १० युग्म हक एक खेचरेषु

यस्या देवैर्नरेन्द्रमर पति गणैः किन्नरे दानवेंद्रैः
सिद्धैर्नागेषुयक्षैर्नर मुकुट तटी घृष्ट पादार विंदै
सौम्ये सौभाग्य लक्ष्मी दलित कलि मले पद्म कल्याण माले
अंते काले समाधिं प्रकटय परमं रक्ष मां देवि पद्मे ॥ १७ ॥

देवता लोग राजा लोग, देवताओं के स्वामी इन्द्र आदि किन्नर दैत्यों के स्वामी इन्द्र सिद्ध विद्याधर यक्ष, नाग , मनुष्य आदि मुकुटों अग्रभाग से पद्मावतीजी चरण कमलों में ढोक देते देते घिस गये हैं। ऐसी हे पद्मावती देवी अपने सौभाग्य की महिमा से कलिमल को नष्ट कर देने वाली, और शुभकर्म की माला पहिनी हुये हे पद्मावती देवी मेरी रक्षा करें। और अंत काल में संसार के प्रति मेरे मन में वैराग्य उत्पन्न करो अर्थात् मेरी अंत में समाधि मरण होवे उसके लिये मेरी रक्षा करो।

धूपैश्चचंदन तंदुलैः शुभ महागंधैः सुभंत्रालिकै
र्ज्ञानावर्ण फलै विंचित्र भरितै दिव्यै र्मनोहरिभिः
दीपैर्नैवेंध वस्त्रै रनु भवन करैर्भक्ति युक्तं प्रदत्ताः
राज्ये हेतुः गृहाण भगवति वरदे रक्षमां देवि पद्मे ॥ १८ ॥

भक्ति के साथ झगट देवी की धूप, चंदन, अक्षत, सुगंधित द्रव्य, अनेक प्रकार के फल और पकाये हुये बहुत सारे नैवैद्य और अच्छे वस्त्र दीप आदि से पूजन की जावे तथा भक्ति पूर्वक अर्पण की जाए तो राज्य लक्ष्मी प्राप्त हो तथा रक्षा के निमित्त गृहण करो। ऐसा प्रार्थना की जाए-

तारात्वं सुगतागमे भगवति गौरीति शैवागमे
वज्रा कौलिक शासने जिनमते पद्मावति विश्रुता
गायत्री श्रुति शालिनी प्रकृति रित्युक्तासि सांख्यायने
मात र्भारति किं प्रभूत भणितः व्याप्तं समस्तं त्वयाः ॥ १९ ॥

हे सरस्वती बोधमत में तुम तारा नाम के प्रसिद्ध हो। शैवमत में गौरी नाम से प्रसिद्ध हो। कौल मत में वज्रानाम से, जैनमत में पद्मावती के नाम से, वैदिक मत में गायत्री के नाम से और सांख्य मत में प्रकृति के नाम से प्रसिद्ध हो । ज्यादा क्या कहा जाए। तुमने सम्पूर्ण जगत को व्याप्त कर रखा है।

संजप्ता कणवीर रक्त कुसुमैः पुष्पै श्चिरं संचितैः
संमिश्रै र्घृत गुग्लोध मधु भिः कुंडै त्रिकोण कृते
होमार्थं कृत षोडशांगुलि समे वन्हौ दशांशं जपेत्
तां वाचं वद सिंह वाहि सहसा पद्मावती विश्रुता ॥ २० ॥

लाल कनेर के जपकर इकट्ठे किये हुवे सूखे फूलों में घी , गुग्गल और बूरा मिलाकर जाप की हुई संख्या का दशांस सोलह उंगुल वाले त्रिकोण कुंड में होम करे, तब हे सिंहवाहिनी पद्मावती देवी उसको वर देने वाली वाणी बोलो।

पाताले व्यूषिता विषं विषगा धूर्णंति ब्रह्माइंजाः
स्वर्भूमी पति देवदानव गणाः सूर्येंदुज्योति र्गणाः
कल्पेन्द्रा स्तुति पाद पंकज नता मुक्ता मणि चुंबिताः
सा त्रैलोक्य नता नति स्त्रिभुवने स्तुत्या सर्वदा ॥ २१ ॥

पाताल में रहने वाले विष से भरे हुवे नाग तुम्हारे प्रभाव से विष रहित हो जाते हैं। ब्रह्मांड में पैदा होने वाले स्वर्गपति कल्पवासी और भूमि पति दानव और उनके नन्दादि देवगण सूर्य, चन्द्र, ग्रह, नक्षत्र इत्यादि तुम्हारी स्तुति करके तुम्हारे चरणों में नमस्कार करते हैं। कल्पवासी देवों के इन्द्र तुम्हारी स्तुति करके नमस्कार करते हैं। और उनके मुकुटों के रत्न तुम्हारे चरणों को छूते हैं। और सारे त्रिलोकी तुम्हारी स्तुति करते हैं और तुम्हारे आगे अपना सर झुकाते हैं।

ह्रींकारे चन्द्र मध्ये पुनरपि वलये षोडशावर्त्त पूर्णे
बाह्ये कंठेर वेष्टेत कमल दल युते मूलमंत्र प्रयुक्ते
साक्षात्तत्रैलोक्य वश्यं पुरुष वशकृतं मंत्र राजेन्द्र राजं
मेतत्तत्व स्वरूपं प्रथम पद मिदं पातु मां पार्श्वनाथः ॥ २२ ॥

ह्रींकार केअर्द्धचन्द्र में सोलह आवर्त्त से भरे हुए मंडल में जिसके बाहर रकार का वेष्टन है उन कमल दलों में पद्मावति देवी का मूलमंत्र एवं श्री पार्श्वनाथजी का ध्यान त्रैलोक्य को वशीकरण करता है। पुरुष को वश करता है यह यंत्र सब मेरी और यंत्रों का राजा है ऐसे यंत्र में विराजमान श्री पार्श्वनाथजी मेरी रक्षा करें।

भक्तानां देहि सिद्धिं मम सकल मलं देवि दूरी कुरूत्वं
सर्वेषां धार्मिकानां सतत निज मितं वांछितं पूर यस्वं ॥ २३ ॥

संसाराऽब्धौ निमग्नं प्रगुण गुणयुतं जीव राशिं च रक्ष
श्री मज्जैनेन्द्र धर्मं प्रकटय विमलं देवि पद्मावति ॥ २४ ॥

हे देवी ! भक्तों को सिद्धि दो मेरे सम्पूर्ण मेले पन को दूर करो स्वधार्मिक लोगों की इच्छा को पूरी करो। संसार रूपी समुद्र में डूबे हुए गुणगान करने वाले प्राणियों की रक्षा करो। और हे पद्मावती देवी निर्मल जिन धर्म को प्रकट करो।

क्षुद्रोपद्रवरोग शोकहरिणी दारिद्रय विद्राविणी
व्याल व्याघ्र हरा कणि ग्रध धरा देहप्रभा भासुरा
पातालाधिपति प्रिय प्रणयनी चिंता मणि प्राणिनां
श्री मत्पार्श्व जिनेश शासन सुरी पद्मावती देवता

अनिष्टकारी देवताओं से पैदा किये गये रोग और शोक को हरने वाली, दारिद्र को हटाने वाली, दुष्ट हाथी व्याघ्र शेर से बचाने वाली , तीन सर्प हाथ में लिये हुए जिसके देह की कांति बहुत दे दीप्यमान है, पाताल के राजा धरणेन्द्र की प्रेम पात्र और प्राणियों के मनोरथ पूरा करने वाली चिंतामणी पार्श्वनाथजी की आज्ञा में रहने वाली हे पद्मावती देवी हमारी रक्षा करो।

मातः पद्मिनी पद्म राग रूचिरे पद्मप्रसूनने
पद्मे पद्म वन स्थिते पारिल सत्पद्मिक्षि पद्मासने
पद्मा मोदिनी पद्म राग रूचिरे पद्म प्रसूनार्चिते
पद्मो ल्लासिनी पद्मनाभि निलये पद्मालये पाहिमां ॥ २५ ॥

माणिक्य जैसी कांतिवाली कमल पर विराजमान होने वाली, कमल वन में रहने वाली, कमल समान नेत्रवाली , कमल की सुगंध रखने वाली, कमल से पूजित कमल की कर्णिका में रहने वाली पद्म नामक पीठ पर बसने वाली कमल में रहने वाली हे पद्मावती देवी मेरी रक्षा करो।

दिव्य स्तोत्रं पवित्र पटुतर पठितं भक्ति पूर्वं त्रिसंध्यं
लक्ष्मी सौभाग्य रूपं दलित कलि मलं मंगलं मंगलानां
पूज्यं कल्याण मालां जनयतु सततं पार्श्वनाथ प्रसादात्
देवी पद्मावतीनः प्रहसित वदनाया स्तुता दानवेन्द्रैः ॥ २६ ॥

यह पद्मावती देवी का स्तोत्र दिव्य पवित्र स्वर्ग के देवों को मनोरंजक, पंडित लोगों से पठित, लक्ष्मी का सौभाग्यकरण, दुरित कर्म को नाश करने वाला, मंगलों में मंगल है। तीनों संध्याओं में पवित्र होकर पाठ करने से पाठक कल्याण परम्परा से युक्त होता है और पार्श्वनाथ भगवान की कृपा से और दानवेन्द्रों से हास्य मुखी देवी पद्मावती हमारी रक्षा करे।

पठितं भणितं गुणितं जय विजय रमानि वर्धनं परमां
सर्वाधि व्याधि हरं त्रिजगति पद्मावती स्तोत्रं ॥ २७ ॥

यह पद्मावती स्तोत्र १०८ बार ५४ बार पाठ करे ५००-१०००-१००००० मध्यम स्वर व्यंजनों के अर्थ को समझकर शुद्ध पढ़े। सम्यग्दृष्टि पुरुष जो मिथ्या दृष्टि से भिन्न हो एक लाख, सवा लाख कलियुग में चतुर्गुण जाप करने कहा है। न्याय से तीन लाख जाप करे। तीनों संध्याओं में दशांश हवन करे। उसका दशांश तर्पण आदि करे तो- स्वदेश में जप, परदेश में विजय अर्थात एक देशव्यापी सर्व देश व्यापी विजयलक्ष्मी निबंधन आदि होता है। सब काम करने वाला उत्कृष्ट है सर्वआधि व्याधि हरने वाला शारीरिक पीड़ा हरण होती है।

मधुर त्रिक संमिश्रित गुग्गुलकृत चणकमान वटिकानां
त्रिंश त्सहस्र होमात् सिद्धयति पद्मावती देवी ॥ २८ ॥

घी, दूध, शक्कर और गुग्गुल की चने के बराबर गोलियाँ का तीस हजार होम करने से पद्मावती देवी सिद्ध होती है।

होमेप्यस्मिन्कर्मणि साधन विधिनैव लब्ध विधस्य
स्युर्मंत्रिणः समस्त प्रेप्सित फल सिद्धयो नियतं ॥ २९ ॥

इस साधन विधि में कुछ कमी रह जाने पर भी यदि मंत्री को मंत्र सिद्ध न हो तो तब भी उसके सब कार्य निश्चय से ही सिद्ध हो जाते हैं।

चतुरस्रं मंडलमति रमणीयं पंच वर्ण चूर्णेन प्रविलिख्य
चतुःकोणे तोय भृतान स्थापयेत कुंभान् ॥ ३० ॥

एक चौकर मंडल को सफेद, लाल ,पीला, हरा और काला इन पांचो प्रकार के रंगों के चूर्ण से बनाकर उसके चारों कोणों में जल से भरे हुवे कलश रखे।

तस्योपरि विपुल तर मंडप मति सुरभि पुष्पमाला कीर्णं
चन्द्रोपद्विज तोरण घंटा वर दर्पणोपेतं ॥ ३१ ॥

उसके ऊपर अत्यंत बड़ा मंडल बनाए जो सुगंधित पुष्प से भरा हुआ हो और चन्द्रमा के समान उज्वल ध्वजा घंटा और सुंदर दर्पणों से युक्त हो।

पंच परमेष्टी मंत्रं प्रत्येकं प्रणव पूर्वं होमांतं
अष्टदल कमल मध्ये हिम कुंकुम मलयजै र्विलिखेत ॥ ३२ ॥

यह बीच का मंडल आठ दल कमल के आकार का हो। उसकी कर्णिका में कपूर चंदन और केशर से ॐ अर्हद्भ्य स्वाहा आदि को लिखे।

पूर्वाशादिषु दद्यात् जयाति जंभादि का दलेषु
ततः तद्दक्षिण दिग्भागे हेममयं पादुकं देव्या: ॥ ३३ ॥

उसके पूर्व आदि आठों दलों में ॐ जयायै स्वाहा आदि मंत्र लिखकर उसकी दक्षिण दिशा में देवी की स्वर्णमयी पादुका बनावे।

अभ्यर्च्य गंध तंदुल कुसुमनिवेद्य प्रदीप धूप फलै:
परमेष्टिनां मंत्रं भैरव पद्मावती पादौ ॥ ३४ ॥

उस यंत्र की पंच परमेष्ठी के मंत्र से और देवी के चरणों की चंदन, अक्षत, पुष्प, नैवेद्य, दीप ,धूप, और फल से पूजा करें।

देवगुरू शास्त्र भक्तं शुद्धंधीरं महाज्ञानं
कृत वस्त्रालंकारं स्नानं तन्मंडलाभि मुखं ॥ ३५ ॥

संस्थाप्य चतु: कलशै: सहिरण्यैस्तं ततोऽन्य वस्त्रादीन्
दत्वा तस्मै मंत्रं निवेदयेद्गुरु कुलाऽयातं ॥ ३६ ॥

फिर एक अन्य शास्त्रों से विमुख जिनेन्द्र देव और जैन गुरु में भक्ति रखने वाले शिष्य को स्नान कराके वस्त्र और अलंकार पहनाकर मंडल के सामने लायें। और पूर्व से ही यंत्र के चारो तरफ कोणों में रखे हुये चारों कलशों से उसको स्नान करावे और उसे अन्य वस्त्र आभूषण आदि पहनाकर गुरु क्रम से चला हुआ मंत्र दे और कहे।

भवेतऽस्माभि र्दत्तो मंत्रोयं गुरू परंपरायात:
साक्षी कृत्य हुतासन रविराशि तारां वरादि गणान् ॥ ३७ ॥

तुमको मैंने यह गुरु परम्परा से चला आया हुआ मंत्र अग्नि सूर्य चंद्र नक्षत्र आकाश की साक्षी पूर्वक दिया है।

किंतु भवतापि न दातव्यं सम्यग्दृष्टि वर्जिताय
पुरुषाय किंतु गुरु देव समये भक्ति मते गुण समेताय ॥ ३८ ॥

लाभादथवा स्नेहाद्दास्यसि चन्दन्य समयभक्ताय
बाल स्त्री गो मुनि वध पापंय तद्भविष्यतिते ॥ ३९ ॥

तुम भी इसको सम्यक्त रहित पुरुष को न देना किन्तु देव गुरु और शास्त्र में भक्ति रखने वाले और गुण वाण को ही देना
यदि तुम इसको लोभ या प्रेम से अन्य मतावलम्बीयों को दोगे तो तुमको बालक, स्त्री मुनि और गाय की हत्या का पाप लगेगा।

इत्येवं श्रावयित्वा तं सन्निधौ गुरु देवयोः
मंत्री समर्पयन्मत्रं मंत्र साधन योगतः ॥ ४४ ॥

इसप्रकार मंत्री उसको गुरु और देवता के सामने शपथ देकर मंत्र साधन के विधान के अनुसार मंत्र दो। इति

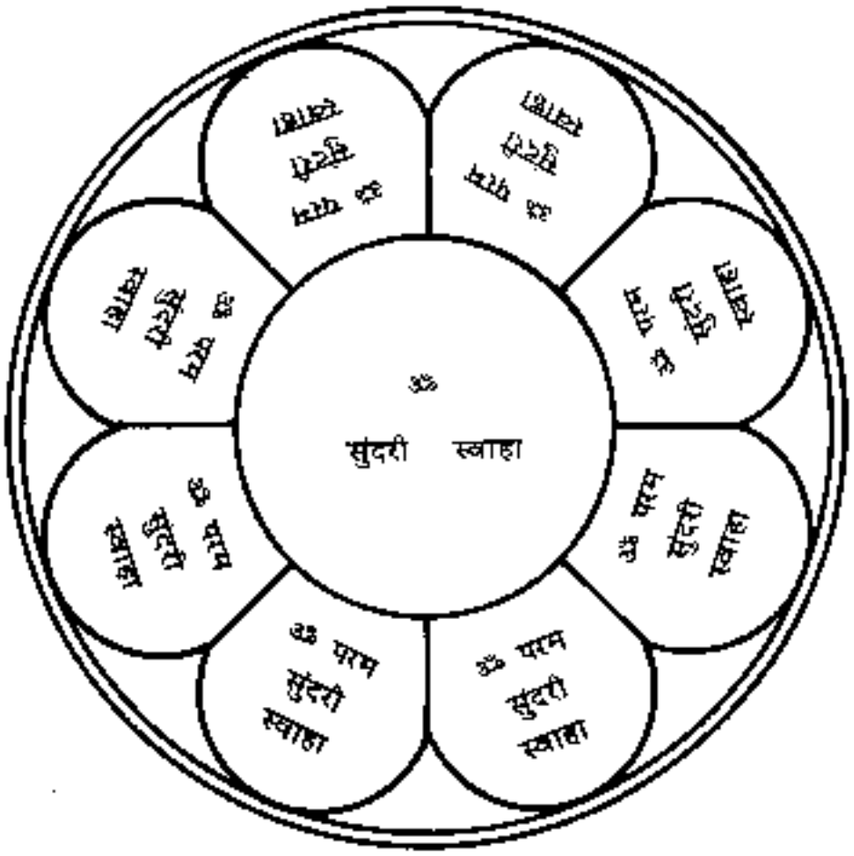

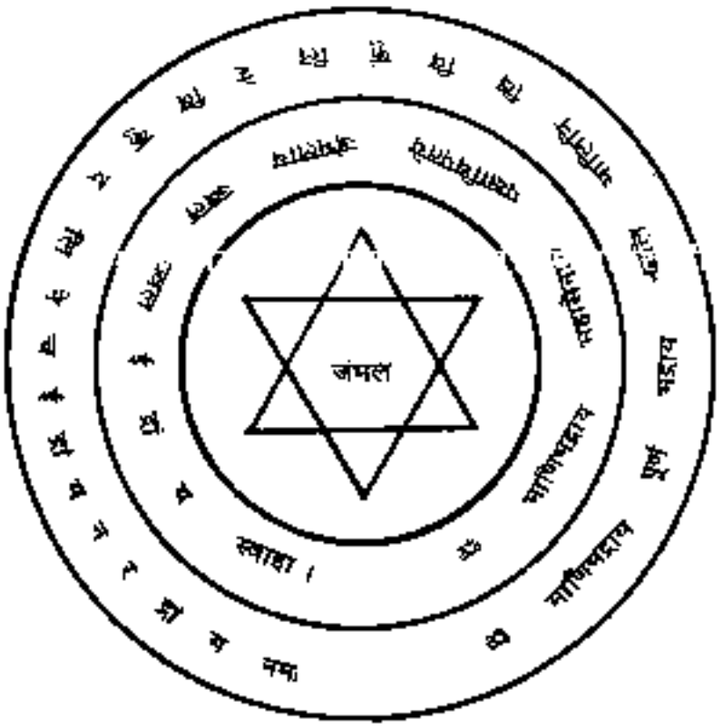

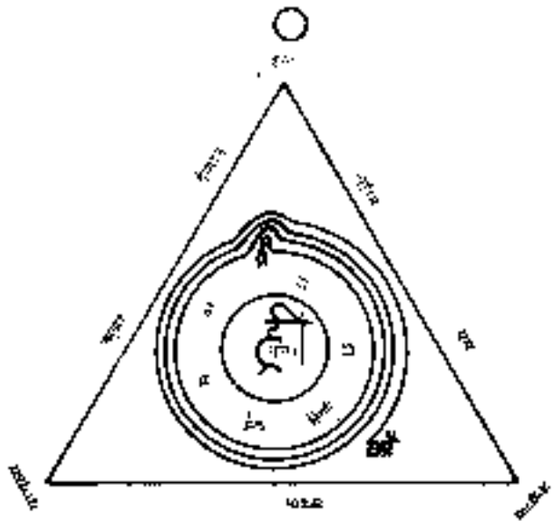

॥ गणेश विधान ॥

अंत्ययो पांत्ययावथ पूर्वांतः कलयायुतः
भक्ति पूर्वोनमोंतोयं मंत्रो गणपते स्मृतः ॥ १ ॥

अंत के दो बीज और उसके पहले के दो बीज पहिली हीं और अंत की कला से युक्त हो तथा आदि में भक्ति (उं) और अंत में नमः होतो यह गणपति का मंत्र कहा जाता है।

ॐ ओं औं अं अः नमः

आदावाऽवाहनं कार्यं गंधाद्यैरऽर्चनं ततः
विसर्जनं ततः स्वै स्वै मंत्रैर्गणपतये मुदा ॥ २ ॥

ॐ अविघ्न काय एहि एहि भगवते त्रैलोक्य पूजिताय एहि एहि
सर्व कामार्थ साधकाय एहि एहि विघ्न विनाशकाय स्वाहा ॥ आह्वानन मंत्र

पहिले आह्वानन करके गंध आदि से अपने अपने मंत्रों से पूजन करें और अंत में प्रसन्नता पूर्वक मंत्र से ही विसर्जन करें।

ॐ गंधोल्काय स्वाहा गंधं
ॐ गंधे कथितोक्लाप स्वाहा धूपं
ॐ गुणोक्लाय स्वाहा दीपं
ॐ मोपोक्लाय स्वाहा नैवेद्यं
ॐ कचोक्लाय स्वाहा विसर्जनं

वृहदुदरमरुण वर्णं गज वदनं गज मुखं
महायक्षं युक्तं भुजैश्चतुर्भिः पाशांकुश दंत भक्ष धरै ॥ ३ ॥

बड़े पेट वाले, रक्तवर्ण वाले हाथी की सूंड सहित हाथी के से मुखवाले, पाश-अंकुश- दंत और भोजन धारण करने वाले चार भुजाओं से युक्त महायक्षं का

आत्मकैन ध्यायन षडलक्षं जपतु तस्य मंत्रमऽमुं
होमंचास्य दशांशं करोतु सिद्धो ततो मंत्रं ॥ ४ ॥
साध्यस्थो परिपाशांकुशापनीतस्य संस्थितं ध्यायन्
नात्मानं मंत्र ममुं जपेत्स सद्योभवं द्वश्यः ॥ ५ ॥

ध्यान करता हुआ उसके मूल मंत्र का छ लाख जप करे और दसवाँ अंश होम करे तो मंत्र सिद्ध होता है। साध्य के ऊपर पाश अंकुश से युक्त मूर्ति का ध्यान करता हुआ यदि मंत्र जपे तो वह तुरंत ही वश में हो जाता है।

दंत श्वेतार्क शिफा कुचंदन द्विपविभाग्न निवांनां
अन्यतमेन कृतं गजवदनं स्पष्टा शशि ग्रहणे ॥ ६ ॥

मंत्री कृतोपवाशोपजपेऽयुतं तदनु शिरसि
गजवदनः सघृतः कुरुते विजयं वाद व्यवहार स्मरादौ ॥ ७ ॥

दंत सफेद आक की जटा, कुचंदन (लाल चंदन) हाथी से तोड़े हुये नीम उनमें से किसी से भी चन्द्रग्रहण में गणेशजी का अनुष्ठान करे।
मंत्री उपवास करके इस मंत्र को घी सहित जपे तो गणेशजी शास्त्रार्थ व्यवहार और युद्ध में विजय करते हैं।

तज्जाक्षमऽमर्क तूलाऽलक्तक वर्तिं घृताक्तायां
कज्जलम क्षणी वश्यं सरसी रूह सूर वर्तेवां ॥ ८ ॥

उस मंत्र का जप कर लाल की रुई और अलक्तक (लाख का रस) की अथवा आक की रुई और कमल के धागे की बत्ती को घी में भिगोकर काजल पाड़कर आँखों में लगाने से वश्य काजल बनता है।

वश्यो भवेदमात्यो होमाज्जप्तैरनेक कृष्ण तिलैः
तंदुल लवणै र्वश्यो मातुल कुसुमै स्तथा कन्या ॥ ९ ॥

मंत्र को जप कर अनेक काले तिलों का होम करने से राजमंत्री वश में होता है। चावल नमक और धतुरे के फूल के हवन से कन्या वश में होती है।

दधि मधुकृत सिक्ताभि होमिदिभि मंत्रिताभिरेतेन
धा मार्गव समिद्भि र्वश्यं स्यान्निखिल मपि भुवनं ॥ १० ॥

दही, मधु, और घी में भिगोकर धामरी (घिरचिट्टा) की समिधाओं से मंत्र पूर्वक होम करने से समस्त लोक वश में ही होता है।

(धा मार्ग वोधोषकःस्यादित्यभर धीयातरोई)

गोरोचनया ष्टोतर शत मेकेनाऽभिमंत्र्य कल्कितया
न्यस्त स्तिलक स्तिलक स्त्रितभुवन संवनन तिलकानां ॥ ११ ॥

गोरोचनं के कल्क पर एक सौ आठ बार मंत्र पढ़कर उसका तिलक मस्तक पर करने से तीन लोक वश में हो जाते हैं। यह तिलकों में अच्छा तिलक है।

स्थित्वा मध्ये सलिलं जपेदऽमुं सप्तरात्रं मथ मंत्रं
यस्मिन देशे तस्मिन् काले वृष्टिर्भवे न्महती ॥ १२ ॥

जिस देश में बारिश नहीं होती हो वहाँ जल के अंदर खड़ा होकर सात रात्रि तक मंत्र जपने से बड़ी भारी वृष्टि होती है।

ॐ अजादिर्वन्हि जायांतो मेघोल्काख्येत्य सावपि
मंत्रो लक्ष जपात्सिद्ध स्तस्यौ वश्या तथा फल ॥ १३ ॥

आदि में अज (ॐ) अंत में वह्नि जाया (स्वाहा) लगाकर में घोल्काय पद सहित मंत्र एक लाख जपने से सिद्ध होता है इसका फल वर्षा करना होता है।

ॐ मेघोल्काय स्वाहा

आदितः प्रणवो हस्ती पिशाचीति ततः परं
तस्या परेलिखेत् शब्दः स्यादंते द्वितयं ठयो ॥ १४ ॥

आदि में प्रणव (ॐ) और फिर हस्त पिशाची पद लगाकर अंत मे लं शब्द सहित ठयोः (ठं) पद को दो बार लगाये।

ॐ हस्ति पिशाची लं ठं ठं

अयं मुच्छिष्ट गजानन मंत्रः पूर्वेण भवति मंत्रेण
तुल्योऽस्मिं स्तुजपादीनकुर्याद्ऽशुचि र्भवेन्मंत्री ॥ १५ ॥

होमो वशयेद हृद्गत स मंत्र स्याऽउद्वर्यभिखान यंत्राया:
कुटिषा ताया: मोम सित्येकप्रति प्रतिमा कृत्या उपरितेन खदिराग्नौ ॥ १६ ॥

यह उच्छिष्ट गजानन मंत्र है इस मंत्र में पूवोक्त गणेश मंत्र के समान ही जप आदि को पवित्र होकर करे साध्य के आकार की प्रतिमा बनाकर उसके हृदय में आधे नाम को मंत्र सहित लिखकर डाल दें। फिर मूर्ति को खेर की अग्नि में डालकर हवन करने से वशीकरण होता है।

(सित्येक=क्य=मोम प्रतिमाया)

साध्याऽख्यान विदर्भित एष धृतोभूदलै समालिखतः
अथवा तथैव जपो वश्यं विदधाति तं साध्यं ॥ १७ ॥

अथवा इस मंत्र के साथ साध्य के नाम को विदर्भित (दो दो मंत्र) के अक्षरों और एक एक नाम के अक्षरों को (गूंथकर करके) लिखकर पृथ्वी पर रखे और वे से ही विदर्भित मंत्र का जाप करने से तथा होम करने से साध्य वश में हो जाता है।

ऊँकार स्फार रूपं इत्यस्य नित्यपाठं प्रकर्तव्यं

इस स्तोत्र का नित्य ही जाप करना चाहिये।

ॐ त्रिजट वामन दुलंबोदर कटु कटु कथय कथय हुं फट ठः ठः ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः

अंगानि मंत्र जपे त्रिलक्षं वामनऽमत्यर्थं विविध भक्ष्याद्यैः
सुप्तस्थं तं जपित्वा कर्णेशं सेत्स इष्टार्थं ॥ १८ ॥

इस वामन मंत्र का अनेक प्रकार के भोजन आदि से युक्त होकर तीन लाख जपे तो जप करके सोने से इसके कान में इच्छित अभिप्राय को कहता है।

ॐ नमो उमापतये सर्वसिद्धि देहाय देवानु चराय महायक्ष सेनाधि पतेय इदं मे कार्य
कथय कथय कथापय कथापय तथा कथापय कथापय तिष्ठ तिष्ठ

लक्ष जप सिद्ध मेतं रौद्रं मंत्रं प्रजप्य धूपदेशे
स्वन्योनि स्मृत मर्थं तत्र कोपि कथेयद्देवः ॥ २० ॥

इस रौद्र मंत्र को एक लाख जप से सिद्ध करने पर देवता धूप इत्यादि से शुद्ध किये हुए स्थान में इच्छित अर्थ को कहता है।

प्रणवोथ वद द्वं द्वं माशु शुक्षणि वल्लभा अग्नि वल्लभा स्वाहेति
अयं कर्ण पिशाचस्य मंत्रो मंत्र विदांमतः

ॐ वद वद स्वाहा

लक्ष प्रजप सिद्धं गुड मिश्रित पायसेन तरूमुले
रव्युदय एक मासं वैश्रवण स्याचिंतस्य पुरतो मंत्रः ॥ २२ ॥

प्रणव (ॐ) दो बार वद आशु शुक्षिणी वल्लभा (स्वाहा) सहित मंत्र को मंत्र शास्त्रियों ने कर्ण पिशाची मंत्र कहा है।

इस मंत्र को सूर्य उदय के समय वृक्ष के नीचे कुबेर के सामने गुड़ मिली हुई खीर से एक मास तक एक लाख जप करके सिद्ध करें।

अष्टोत्तर सहस्रं प्रजपे घृते न होमं
कुर्वित पक्ष मेकं ततोऽवसाने निशा मध्ये ॥ २३ ॥

और मालकांगनी के घृत से एक पक्ष तक रात्रि के समय होम करता हुआ एक सो आठ बार जपे।

जुहुयाद अंकोल वृत्तै सहस्रमथकोपि कर्ण मूले यक्षः
सिद्धस्तै जपात भूत भवद्भावि वस्तु सं सिद्धत्य खिलं ॥ २४ ॥

इसके पश्चात अंकोल (ठे रे) की टहनी के अग्र भाग से एक हजार हवन करने पर यक्ष सिद्ध होकर साधक के कान में भूत भविष्यत और वर्तमान की सब बाते कहती हैं।

॥ जभल विधान ॥

माणिभद्र महासेन यक्षाधिपतये ततः
जंभलाय ज्वल ज्वं ह्रं इंद्र मिंद्रानल कामिनी
माणि भद्राय पूर्ण भद्राय चेलि मालिने
विविध कुंडलिने विकुदलिने नरिंद्राय चरेन्द्राय नमः ॥ १ ॥

ॐ माणिभद्र महासेन यक्षाधिपतये जंभलाय ज्वल ज्वर इंद्राय उनल कामिनी मणि भद्राय पूर्ण भद्राय चेलि मालिने विविध कुंडालिने विकुदलिने नरेन्द्राय चरेद्राय नमः

अंगानि कथितो मूल मंत्रोयंषडभिरंगैः समन्वितः
विज्ञातव्यो विपश्चिद्भिरस्मिन जंभल देवता ॥ २ ॥

अंगों का वर्णन पहले ही किया जा चुका है उस मूल मंत्र को छहों अंगों से युक्त पंडितों को जानना चाहिये इसमें जंभल देवता मुख्य है।

न्यस्य कनिष्ठां गुष्ठांतं वर्णान प्रभां मंत्रस्य
न्यस्योत्तर्ज्जन्यं ते जेष्ठां गानि लोचनां चलयो ॥ ३ ॥

फिर इस मंत्र के मूल पदों को क्रम से सिर मुख हृदय गुह्य दोनों पैर और दोनों नेत्रों में क्रम से न्यास करे।

विन्यस्य शिरसे वक्रे हृदि गुह्येपादयोश्च मंत्रस्य
मूल मंत्रस्य पदांन्यागान्य थ नेत्रांतं क्रमात्न्यसेत् ॥ ४ ॥

फिर इस मंत्र के मूल पदों को क्रम से सिर मुख हृदय गुह्य दोनों पैर और दोनों नेत्रों में क्रम से न्यास करे।

विन्यस्य त्रिमुख वरणे सितं पकंज रूढ़े न
पिंगल वर्णेन शुभपट्टाहार कुंडल केयूराभरण रामेण ॥ ५ ॥

फिर तीन मुख वाले श्वेत वर्ण युक्त श्वेत वर्ण युक्त कमल पर चढ़े हुये पीले वर्ण वाले अच्छे अच्छे हार कुंडल और बाजूबन्द के आभूषणों से सुंदर

प्रिय रक्त भूषणेन स्वंध्याये जंभलेन
देवेन सं प्राप्तैकी भावं तदीय मंत्र प्रयोग विधौ ॥ ६ ॥

प्रिय तथा लाल वस्त्रों से युक्त जंभल देव का ध्यान करके मंत्र रूपी समुद्र में अनन्य रूप से निमग्न हो जावे।

अयुतानां त्रयमेत जंभल मंत्रं जपेत्प्रसन्नमना:
जुहुयाच्चात्र तदर्द्धं विल्वस्य दलै: समिद्भिर्वा ॥ ७ ॥

इस जंभल मंत्र को प्रसन्न मन से तीस हजार जपे और उसका आधा १५ हजार बेल के पत्तों की समिधाओं से होम करें।

अमुना सादन विधिना सिद्धे स्मिन् जंभलस्य
मंत्रेस्मिन तन्मूर्द्धनितेना ङ्गि: सी काभि स्तर्पणं दधात् ॥ ८ ॥

इस जंभल मंत्र का इस विधि से सिद्ध हो जाने पर फिर उसके मस्तक पर जल से तर्पण करें।

इत्थं समंत्रममुना तर्प्पण विधिना कृतेन परितुष्ट:
विश्राणयेत्स देवो महद्धनं मंत्रिणे तस्मै ॥ ९ ॥

इसप्रकार मंत्र सहित तर्पण विधि के हो चुकने पर वह देव संतुष्ट होकर उस मंत्री को बड़ा भारी धन देता है।

दूसरी विधि

षट्कोण मंडले तंदेवं संस्थाप्य माणि भद्राद्यै:।
परिवृतमभ्यर्च्यांऽयु तऽममुंजपेन्मंत्रम स्याग्रे ॥ १० ॥

फिर उस देव को छह कोण वाले मंडल के अन्दर स्थापित करे मणिभद्र इत्यादि मंत्र से वेष्टित करके पूजन कर उसके आगे इस मंत्र का दसहजार बार जपे।

बिल्वस्य समिद्भिर्वा पत्रैर्वा तत्र होम मपि कुर्यात्
पर्ण पंचकं प्रतिदिनं दद्याद्देव स्तत स्तस्मै ॥ ११ ॥

फिर बेल की समिधा से या पत्तों से होम करें और देव पर प्रतिदिन पांच पत्ते चढ़ाता रहे तथा "ॐ जंभले जंभलेंद्राय जंभलाय" इस मंत्र का जप करता रहे यह मंत्र साधारण साधन आदि में पहले के ही समान है।

ॐ जंभले जंभलेंद्राय जंभलाय पठेत्यऽसौ
मंत्र स्तदीय पूर्वेण सदृश: साधनादिषु ॥ १२ ॥

भक्ति वांचस्पतिः पश्चादऽमृते तदनंतरं
स बृहस्पति मंत्रोयं परं मेध्य करोमतः ॥ १ ॥

ॐ वाचस्पति अमृते नमः ॐ वास्वपत्यमृते नमः । भक्ति (ॐ)

और वाचस्पति के पश्चात अमृत लगाने से यह विद्या मंत्र बन जाता है इसके जाप से बुद्धि अत्यंत बढ़ती है।

अक्षार लवण भोजी वत्सर मेकं जपन्नमंमंत्रं
एतज्जप्तं च विशेत्सलिलं लभते महामेधां ॥ २ ॥

इस मंत्र का बिना नमक के भोजन करता हुआ एक वर्ष तक जपे। इस मंत्र को जपकर जल में प्रवेश करने से बड़ी भारी बुद्धि की प्राप्ति होती है।

ब्राह्मी स्व रसं चुलुकं कपिला घृत संयुतं प्रगेऽयेष्टं
अभिमंत्र्यानेन पिबेत कथितं त्रि द्वारंतु त्सततं ॥ ३ ॥

ब्राह्मी के चुल्लूभर स्वरस को काली गाय के घी में मिलाकर प्रातःकाल के समय में २४ बार इस मंत्र से मंत्रित करके पीएं तो तीन बार कहने से ही निरंतर याद हो जाया करे।

एतज्जप्तान खादन मेधावी पल्लवान भवेद्।
ब्राह्म्याः सौवीरतं ज्जप्तं तत्र रुजं प्रशमयैदत्र ॥ ४ ॥

उस मंत्र को ब्राह्मी के पत्रों पर जपकर खाता हुआ बुद्धिमान हो जाता है

अंतः प्रपूर्ण कुंभो मंत्रेणनेन मंत्रितो गमीतः
दैशं निधान सहितं प्रकंप मानः स्तवेत्सलिलं ॥ ५ ॥

सौवीर बेर के ऊपर उसको जपकर भी खाने से रोग शांत हो जाता है। कमल गट्टा की माला से जपे तो रोग व्याधि तुरंत दूर होय इससे मंत्रित जल के घड़े के स्नान करे तो निधि लाभ होता है। एक वर्ष में जल वर्षा होता है।

ॐ नमो भगवते रुद्राय उमा चेटक मावि भविष्याय चेटक निहतोश्चिष्ट भक्षण विषय लाला प्रिये किलिकिलित मातंग मैशान वासिनि हरहसित उमा लब्ध वर प्रसाद स्वङ्गांग कर सिरोज्वलित नेत्र सर्प्प कृत कुंडलाभरणभूषित विकटोत्कटं दंष्ट्रा कराल वदन ल ल ल भूत विद्रावण यक्ष राक्षस कृत भूत पिशाच डाकिनीनां भयंकर वज्र हस्त ऐ रावत पराक्रम पाशांकुश गदा मुद्गर प्रहरण भो भो चेटक गगनांनंत चारणाय दिगगता ग्रहा पश्चिमायां उत्तर पूर्वा दक्षिणाग्नेया नैऋत्य वायव्यां एशान्यां उर्द्ध मध्य स्तादस्मिन भारत वर्षे यदि तिष्ठति शून्य गृहे चतुष्पथे गोष्टे जीर्ण

कूपेष्वायतने नगरे पुरे ग्रामे आराम विहारे नदी कूले प्रेतोल्पद्दातेषु तत्रा स्थानामंगानि भंजय भंजय कड कड वज्रेण शक्तिना गृन्ह गृन्ह दंडेन ताडय ताडय खड्गेन छेदय छेदय पाशेन बंधय बंधय गदया चूर्णय चूर्णय मंडल मध्ये प्रवेशय प्रवेशय यदि गंतो च क्षुधं ईक्षु रसे प्रविष्टो वा पुरां काश मुंडक मुंडिके (मुंड= कमल कर्णिके) मूत्र पुरीषो (मूत्र = हरिद्रा जलं च पुरिषं गोमय भवेत) वा गृह गृह रूधि मांस भोजनेन भोजनं कुरू कुरू (लाक्षा रसोपि रूधिरः क्षया रसो गुड विमिश्रतो मांसः इतिजैनाम्राय) हुड हुड विदारय विदारय नृत्य नृत्य कह कह वेतालं दुष्टम दुष्टं वागृहीत म गृहीतं वा ज्वरित मज्वरितं वा आनय आनय पूरय पूरय मारय मारय आरडंतं आरडंतं मूलंतं मुरुलंतं त्रिविधि कारहंत वाम पादमुमानहं गृहत्वा भूत्वा लूता गर्दभ करि सर्प्प उर्द्ध वधय वधय पातालं बंधय बंधय दिशां बंधय बंधय अक्षि बंध बंध कुक्षि कुक्षि बंध बंध रूपं पच पच चालय चालय कक काडय काडय ह ह ह ह ह ह ख ख ख ख ख ख खाहि खाहि आत्म मंत्रं रक्ष रक्ष परमंत्रं छेदय छेदय ॐ रोद्रन ट्टौ चेटक व व व वंस वंस वंस वंस वंस वंस शंहः शंहः कुरू कुरू फट् रुद्राज्ञातयति स्वाहा

अमुना उच्छिष्ट मंत्रेण प्रजप्तेन स चेटक सिद्धिं दं वांछितौ स्वैरं मंत्री कर्म नियोजयेत् उच्छिष्ट मंत्र कैणा मुना प्रजप्तेन चेटक सिद्धयेत् वांछितं पुरतः मापुवोद्यजयोत्साधकः स्वैरं तस्य प्रयोगकाले पंच नमस्कार मंत्र कृत रक्षः दिग्वंधनं विदध्यात् ॥

मंत्रै ऐवाम्र कुष्मांडा

इति चेटकमंत्र

इस उच्छिष्ट मंत्र का जप करने से वह चेटक सिद्ध होकर इच्छित वस्तु को देता है और मंत्री की इच्छानुसार काम करता है।

इस उच्छिष्ट मंत्र का जाप करने से वह चेटक सिद्ध हो जाता है तब साधक उसको अपने इच्छा किये हुवे कार्यों में लगा सकता है।

इस मंत्र के प्रयोग के समय पंच नमस्कार मंत्र से रक्षा करके आम्र कुष्मांडी के ही मंत्र से दिशा बंधन करना चाहिये।

मृत विधवा ब्राह्मण्याः पाद तलालक्तकेन सं लिखितं तद्वक्त पिहित वस्त्रे विधवा रूपं निराभरणं प्रणवं विच्चे मोहे स्वाहांतं सप्त लक्ष जाप्पेन एकाकिनी निशायां सिद्धयति सा यक्षिणी रंडा रंडा

मृतक या विधवा ब्राह्मणी के पैर के अलक्तक से उसके मुख के ढकने के वस्त्र पर बिना आभरण वाली विधवा का रूप बनायें।

ॐ विच्चे मोहे स्वाहा

यत्साधका भिलषितं तत्तस्मै वस्तु सा ददात्येव
क्षोभं प्रयांति रंडा: सर्वा अपि भुवन वर्तिन्य :

इस मंत्र को रात्रि में अकेले सात लाख जप करने से यह रंडा यक्षिणी सिद्ध होती है यह साधक की इच्छा की हुई सभी वस्तु देती है और उससे लोक में रहने वाली सभी विधावा क्षोभ को प्राप्त होती है।

दर्पण निमित्त की विधि

सिद्धयति सहस्र जाप्यै र्दश गुणितै: प्रणव पूर्व होमांतै:
दर्पण निमित्त मंत्र श्चले चुले प्रभृतिनो षार्ट:

मंत्रोद्धार:

ॐ चले चुलेचंडे कुमारिकयोरगं प्रविश्य यथा भूतं यथा भव्यं यथा भवति सत्यं दर्शय दर्शय भगवति मा विलंबय विलंबय ममाशां पूरय पूरय स्वाहा

यह मंत्र दस हजार जाप से सिद्ध होता है।

यत्सप्त बारं मंत्रित: दुग्धं तत्पाययेत् कुमारिकयो:
ब्राह्मण कुल प्रसूत्यो स्तद्योद्यो स्सप्तवत्सरयो

इस मंत्र से गो दुग्ध को सात बार अभिमंत्रित करके उस ब्राह्मण कुलोत्पन्न सात सात वर्ष से चौदह वर्ष की दो कन्याओं को पिलाएँ।

संस्नाप्य तत: प्रातर्दत्वा ताभ्यामथ प्रसूनादीन्
भूम्यामऽपतित गौमय सन्मार्जित भूतलो स्थित्वा

तब प्रात:काल स्नान कराके पृथ्वी पर न गिरे हुवे गोबर से पुते हुये स्थान में खड़ा होकर उन दोनों कुमारियों को पुष्प आदि देकर पुष्पादि से शुद्ध की हुयी पृथ्वी पर बैठे।

चतुरस्र मंडल स्थं कलशं गंधोदकेन परिपूर्ण
तस्योपरि आदर्शं निवेश्यैत पश्चिमाऽभि मुखं

तदाभि मुखं प्राकथित कुमारिका युगलमथ निवेशयत ततः।
तद् हृदये ब्लूंकारं विचिंत्योत्पणव संपुटितं

चौकोर मंडल में रखे हुए सुगंधित द्रव्य और जल से भरे हुए कलश के ऊपर एक दर्पण पश्चिम की ओर मुख करके दोनों कुमारियों के मध्य में रख दें। उस दर्पण के सामने पहिले कही हुई दोनों कन्याओं को स्थापित करके उनके हृदय में ॐ ब्लूं ॐ इस मंत्र का ध्यान करें।

शशि मंडल वत्सौम्यं तन्मंत्रमनुस्मरत् स्वयं तिष्ठेत्
आदर्शं मीक्ष माणं कुमारिका युगलकं पृच्छेत्

चंद्र मंडल के समान सौम्यरूप वाले वक्ष्य माण मंत्र का ध्यान करता हुआ दर्पण में देखती हुई दोनों कुमारियों से पूछे।

यद्दृष्टं यत् श्रुतं ताभ्यां तत्र तस्य रूपं वचो यथा यत्तत्र दृष्टं
आदर्शं मंडल स्थां तस्य तत्सत्यंताभ्यथा भवेत्॥

अंगुष्टे सलिले खड्गे दीपे च विधिनाऽमुना
दृष्टं रूपं श्रुतं चापि न मिथ्या जातु चिद्भवेत्

वह दोनों उस दर्पण में देखे हुए जिस रूप को या सुने हुए जिस वचन को कहेगी वह अन्यथा नहीं हो सकता। इस विधि से अंगूठे जल तलवार और दीपक में भी देख या सुना हुआ रूप कभी भी मिथ्या नहीं हो सकता।

दूसरी विधि

ॐ णमो मेरू महा मेरू ॐ णमो धरणि महा धराणि ॐ णमो गौरी महा गौरी ॐ णमो कालि महाकालि ॐ णमो इंदे महाइंदे ॐ णमो जये महाजये ॐ णमो विजये महा विजये ॐ णमो पण समणि महापण समाणि पद्म धरेदेवि अवतर अवतर मम चिंतित कार्यं सत्यं ब्रूहि सत्यं ब्रूहि स्वाहा ॥

आदर्शं दौ पश्यं न्निमित्तमेतेन पूर्ववन्मंत्री
अष्टम सहस्रप्रजपन विधान सिद्धेत मंत्रेण ॥ १ ॥

यह मंत्र आठ हजार जाप से पहिले के समान आदर्श (दर्पण) आदि में निमित्त देखने के लिए सिद्ध होता है।

दत्वा दर्भास्तरणं दुग्धाहारं पुरा कुमारिकयोः
सं स्नाप्याथ ततः प्रात र्धवलांबर भूषणादीनि ॥ २ ॥

रात्रि के पहले पहर में उन दोनों कुमारियों को दर्भ की शय्या और दुग्ध का आहार देकर प्रातः काल उनको स्नान कराकर सफेद वस्त्र आभूषण आदि दें।

कलशादर्शं कुमारी स्थानेष्वथ विन्यसेत्
अमू मंत्रं विनयं गज वश करणं क्षां क्षीं क्षूंकार होमांतं ॥ ३ ॥

प्रणवादि पंच शून्यैरभि मंत्र्य कुमारिका कुचस्थानं
अभितं तयोश्च दद्यात्त घृतेन सं मिश्रितान पूपान् ॥ ४ ॥

फिर ॐ क्रों क्षां क्षीं क्षूं क्षौं क्षः स्वाहा इस मंत्र से कलश दर्पण को कुमारियों के स्थानों में रखे उन कुमारियों के कुछ स्थान में ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः इस मंत्र से अभिमंत्रित करके उन्हें भोजन के लिये घी के पूवे दें।

आलक्तकाभि रंजित हस्तांगुष्टे निरीक्षयेत् रूपं
कर निर्वर्तित तैलेना गुंष्टं स्नान कारणेन ॥ ५ ॥

हाथ से तिलका तेल लगाये हुवे अर्थात् तेल से स्नान कराये हुए अलक्तक से रंगे हुए मंत्री अपने अपने अंगूठे में अपने अपने रूप को दिखायें।

प्रणवं पिंगल युगलं पणत्ति द्वितयकं महाविधेयं।
टांत द्वयं च होमं दर्प्पण मंत्रो जिनोद्दिष्ट : ॥ ६ ॥

ॐ पिंगल पिंगल पणात्ति पणात्ति महाविधे ठः ठः स्वाहा

जिन भगवान ने इस मंत्र को दर्पण मंत्र कहा है।

जाप्यं भानु सहस्रैः सति कुसुमैरिंदु किरण संकाशैः
सिद्धयति दशांस होमोनादर्शं निमित्त मंत्रोयं ॥ ७ ॥

यह मंत्र १२ हजार बार चंद्रमा की किरण के समान श्वेत पुष्पों से जप करने तथा दशांश होम से आदर्श (दर्पण) निमित्तज्ञान के लिये सिद्ध होता है।

क्षित भस्मानैक विशंति बारानभिमंत्र्य दर्प्पणं पूर्वं ।
शाल्य क्षतोपरिस्थितः नवाम्बु परिपूर्ण नव कुंभे ॥ ८ ॥

तं प्रतिनिधाय तस्मिन्नेक कुलोद्भूत कन्या कायुगलं
त्रिषुवर्णे ष्वन्यतम स्नातं धवलां बरोपेतं ॥ ९ ॥

पूर्वोक्त थाली अक्षत के ऊपर स्थित जल के कलश पर रखे हुये दर्पण को श्मसान की भस्म से इक्कीस बार अभिमंत्रित करके उसे उस कलश के ऊपर रखे, और ब्राह्मण, क्षत्रिय अथवा वैश्य तीनों वर्ण में से किसी एक वर्ण की दो कन्याओं को स्नान कराकर तथा श्वेत वस्त्र पहनाकर

अभ्यर्च्य गंध तंदुल कुसुम निवेद्यादिभिः स्ततः
कलशं दत्वा तांबूलादीन्नदर्शंदर्शंये ताभ्यां ॥ १० ॥

मंत्री मंत्रं पपटंस्तिष्टेत पृच्छेत कुमारिका युगलं
दृष्टं श्रुतं च कथयेत् रूपं वचनं च मुकुरुंदे ॥ ११ ॥

कलश को चंदन, अक्षत, नैवेद्य तथा पुष्प आदि से पूज कर उन कन्याओं को तांबूल, पुष्प, अक्षत आदि देकर दर्पण दिखायें। उससमय मंत्री मंत्र को पढ़ता हुआ उन दोनों कुमारियों से प्रश्न करे वह उस दर्पण में देखे हुए रूप और सुने हुए वचन को ठीक ठीक कहेगी।

॥ दीपक निमित्त ॥

ब्रह्म प्रथमतः पश्चात्सुंदरी ध्वनिरन्वितः
परमादि वातंःस्यात्प्रथा कृष्ण वर्त्मनः ॥ १ ॥

पहले ब्रह्म (ॐ) सुंदरी शब्द से जुड़ा हुआ फिर परम के साथ भी वही पद (सुंदरी) अंत में लगा हुआ हो तो काले मार्ग को पसंत करने वाली का मंत्र बनता है।

अष्ट सहस्रै र्जाति पुष्पै श्री वीरनाथ जिनपुरतः
जप्तैः सुंदरी देवी सिद्धयति मंत्रेण सद्भक्त्या ॥ २ ॥

ॐ सुंदरी परम सुंदरी स्वाहा

श्री महावीर भगवान के सामने आठ हजार मालती के फूलों से भक्तिपूर्वक जप करने से सुंदरी नाम की देवी सिद्ध होती है।

ब्रह्मादि सुंदरी शब्दं होमांतं कर्णिकांतरे
अष्ट पत्रेषु सर्वेषु लिखेत् परमसुंदरी ॥ ३ ॥

एक अष्ट दल कमल की कर्णिका में ॐ सुंदरी स्वाहा लिखकर आठोदलों में ॐ परम सुंदरी स्वाहा लिखे।

कृष्ण तिल तेल पूर्ण कुंभे: कृतो कुलाल करज
मृत्तिका पात्रे आलक्तक वार्तितकृते दीपेन्यग्रोध वह्निभवे ॥ ४ ॥

प्राग विहितैत विधिना सायक्षी सन्निधि समासाद्य
भूतं भव च्च भावि च निवेदयदपि तथं पृष्टार्थं ॥ ५ ॥

कुम्हार के हाथ की मिट्टी के बनाये हुये दीपक में काले तिल का तेल भरकर, आलक्तक से लपेटे हुई बत्ती डालकर, वट वृक्ष की लकड़ी की आग से दीपक को जलावे- शेषक्रिया पूर्ववत् है। पूर्वोक्त विधि से ही वह यक्षिणी पास आकर सभी भूत भविष्यत वर्तमान कार्यों को बतलाती है।

श्रवण पिशाचिनी चामुंडे स्वांहात: प्रणव पूर्व उचार्य: ।
सिद्धयति च लक्ष जापा कर्ण पिशाचिन्यं मंत्र: ॥ १ ॥

मंत्र परिजप्त कुष्टं हृन्मुख कर्णांघ्रि युगल मालिप्य
सुप्तस्य कर्ण मूले कथयतिया चिंतितं कार्यं ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं श्रवण पिशाचिनी चामुण्डे स्वाहा ॥

यह कर्ण पिशाचिनी मंत्र एक लाख जाप से सिद्ध होता है। कुठ को २१ बार इस मंत्र से अभिमंत्रित करके अपने हृदय मुख दोनों कान और दोनों पैरों को इससे पोते तो कर्ण पिशाचिनी सोते हुए में सोचे हुए कार्य को कान में कहती है।

विनय: प्रथमं पश्चात शुलभे सुप्रभे तत:
होम कर्ण पिशाचीति मंत्रोयं मंत्रिभि: स्मृत: ॥ ३ ॥

ॐ शुलभे सुप्रभे स्वाहा

पहले विनय (ॐ) लगाकर फिर सुलभ शुप्रभे लगाने से और अंत में होम (स्वाहा) लगाने से कर्ण पिशाचिनी का मंत्र का कहा जाता है।

वदरी कदंब पुष्पै: स्तिल पिष्ट युतेने माष चरूणां च
वट मूलस्थं धन पति मभ्य र्च्याष्टाक्षरी मिमां विद्यां ॥ ४ ॥

बदरी (बेर) कदंब (कदम) के पुष्पों से भुने हुये तिलों के चूर्ण उड़द और नैवेद्य से वड़ की जड़ में कुबेर का पूजन करके इस आठ अक्षरी मंत्र का।

लक्ष त्रितयं प्रजपे जुहुयां चां कोलजेन तैलेन
द्वि सहस्रं सन्निहिताक्षी पृष्टं वदेत्कर्ण ॥ ४ ॥

कर्माणि या नियानि प्रेप्सित मंत्री नियोजयेदेनां
तां तेषु तेषु देवीं सा सधस्तानि तानि साधयति ॥ ५ ॥

ॐ णमो कर्ण पिशाचिनी वद वद कनक पिशाची वज्र वैडर्य मुक्ता भरण निर्मलालंकृतं शरीरे ऐहि ऐहि आगच्छ आगच्छ त्रैलोक्य दर्शिनी मम कर्णे प्रविश्यातीतां नागत वर्तमानं कथय कथय रुद्राज्ञापयति ठः ठः ॥

तीन लाख जप कर और अंकोल (ढ़ेरा) के तेल से दो हजार होम करे। उस समय यक्षिणी पास आकर कान में कहती है, मंत्री उस समय जिस जिस कार्य की इच्छा से यक्षिणी को कार्य में लगाता है वह देवी तुरन्त ही उन कार्यों को सिद्ध करती है।

मंत्रं रुद्रस्य पुरतो जपेत् त्रिलक्षं चतेन जुहुया च
मंत्राधि देवतार्थं पृष्टं कर्णे वदेत्सत्यं ॥ ६ ॥

ॐ शुभे भगवति कर्ण पिशाचिनो सत्यं कथय कथय ठः ठः

पहले इस रूद्र कर्ण पिशाचिनी मंत्र के तीन लाख जप कर होम करें। सिद्ध होने पर इस मंत्र की देवी पूछने पर कान में सत्य सत्य कहती है।

कुष्ट निशो द्वर्तित कर चरणं सुधादऽमुं जपन्मंत्रं
निश्यांते यामेऽस्या शुभा शुभे प्रेक्षते मंत्री ॥ ७ ॥

कूठ हल्दी से अपने हाथों-पैरों को पोतकर इस मंत्र को जपता हुआ सो जाए रात्रि के अंत के पहर में मंत्री शुभ और अशुभ को देखता है।

इति कर्ण पिशाचनि मंत्राणां साधनं

॥ गौरी विधानं ॥

अनल स्त्रि य पुज्यांलाक्षसेना साधितः पुरः
साक्षी च भवे देवी मंत्रस्या स्याधि देवता ॥ १ ॥

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अस्त्राय नमः

अग्नि के समान स्त्री शरीर की धारक तथा सब ओर अग्नि का प्रयक्षी देवी इस मंत्र की अधि देवता होती है पहले अंग न्यास पूर्वोक्त क्रम से करे उनमें से अस्त्र का चिन्ह बनाने का यह उपरोक्त मंत्र है।

अभ्यक्ताऽङ्घ्रिपतैलेन मंत्रं लक्षं यक्ष्याः संजपेत्सन्निधाने
रात्री स्ति स्त्री विशांतिश्च प्रसिद्ध नित्यं षट्कं सा प्रयच्छेन्मणिनां ॥ २ ॥
एष मंत्रोयं गौर्याः ॐ प्रांजिलि अजिते महाऽदिते स्वाहेति
पंच शत संयुक्ताऽयुत द्वय जपात्सिद्धयेत् ॥ १ ॥

अपने पैरों को दीपक के तेल से पोतकर आधी रात्रि के बाद तेईस रात्रि तक यक्षिणी के मंत्र का एक लाख जपे क्षेत्रपाल की मूर्ति के सामने यह यक्षिणी सिद्ध होने पर प्रसन्न होकर प्रतिदिन छह मणियाँ देती है गौरी देवी का मंत्र है।

ॐ प्रांजिलि अजिते महाजिते स्वाहा।

यह मंत्र बीज हजार पांच सौ जपने से सिद्ध होता है।

अमुना ऽधिक त्रिंशत संजप्ता रक्त सूत्र कृत रज्जुःवद्धा
ज्वरं निहन्यात्सर्वा अपापदः शमयेत् ॥ २ ॥

इस मंत्र को लाल धागे की बनी हुई रस्सी पर जपे तीन सौ तीन बार फिर बांधने से ज्वर नष्ट हो जाता है और सभी आपदायें शांत हो जाती है।

अभ्यर्चितो धृतोवांभूर्ज्जे गोरोचना समालिखितः
स्मर च्च व्यवहारादिष्वेष विद्यते परं विजयं ॥ ३ ॥

इस मंत्र को गोरोचन से भोजपत्र लिखकर पूजन करके दोनों भुजा में धारण करने से युद्ध और व्यवहार आदि में अत्यंत विजय करता है और वायु का असर नहीं होता है। वायू का असर नही है।

सेनः द्विकरजित युक्तौ प्रभं
जनि सुकेशिनि ठः ठेत्य ष मंत्रोयक्ष्याधिदेवतः
लक्ष जापे त्सिद्धं साध्यः स प्रैक्षीज्जपेदमुं मंत्रं संस्पृश्य

मानकेशस्तथा वृष्टिर्भवेदाशु ॥ ४ ॥
ॐ सेने द्विकरजित युक्तो प्रभंजिनी सुकेशिनि ठः ठः ॥

यह यक्षिणी देवी का मंत्र एक लाख जप से सिद्ध होता है। इस मंत्र को जपकर अपने केशों को छूने से तुरंत वर्षा हो जाती है।

साध्य सांख्यात ममुं गोरोचनया विलिख्य भूर्ज्जदले
स्वेतेन वेष्टियित्वा सूत्रेण स्थापयेदेतत ॥ ५ ॥

अश्वत्थ द्रुम कोटर मध्ये तत्राव तिष्ठते यावत्
तत्तावत्साध्य स्यान्महती वृष्टि रपविघ्ना ॥ ६ ॥

मंत्री इस मंत्र को नाम सहित भोजपत्र पर गोरोचन से लिखकर तागे से लपेटकर पीपल के वृक्ष की खोखल में रखें। यह मंत्र जब तक यहाँ रखा रहता है तब तक साध्य के यहाँ बिना विघ्न के बड़ी भारी वर्षा होती है।

मंत्रो ऽमेव तादृक रोहिणी तरु कोटरो दरे यावत
निहित स्तिष्ठति तावत साध्यं वश्यं विदध्यात्तं ॥ ७ ॥

यह मंत्र उसी प्रकार से जब तक रोहिणी वृक्ष की खोखल में रखा रहता है तब तक साध्य भी उसके वश में रहता है।

त्रिभुवनसार मंत्रः

क्ष ज भ म ह रेफ पिंडैः पाशांकुश वाण रंजिका युक्तैः
प्रणवाद्यैः कुसुमं त्रिन षट्कर्मा युदयम वगम्य ॥ १ ॥

ॐ क्ष्म्ल्र्यूं ज्म्ल्र्यूं भ्म्ल्र्यूं म्म्ल्र्यूं ह्म्ल्र्यूं र्म्ल्र्यूं आं क्रों ह्रीं क्लीं ब्लूं द्रां द्रीं संवौषट्

क्ष ज भ म ह और रेफ के पिंडों के पश्चात पाश (आं) अंकुश (क्रों) वाण ह्रीं क्लीं ब्लूं द्रां द्रीं (कामदेव के पाँच बाण और रंजिका (संवोषट) पल्लव सहित आदि में प्रणव (ॐ) लगाकर जपने से यह फूल रूपी मंत्र छहो कर्मों का उदय करता है।

द्वादश सहस्र जापें दंशांश होमेन सिद्धिमुपयाति
मंत्रं त्रि भुवन सारो गुरू प्रसादात्स विज्ञेयः ॥ २ ॥

यह मंत्र बारह हजार जप और दशांस होम से सिद्ध होता है। यह तीन भुवन में सार मंत्र गुरू की कृपा से जानना चाहिये।

स्थाष्णे वारि पुरणौ रौं युक्तः पिंडः प्रकल्पितः
सांगो लक्षं जपात्सिद्ध सर्वाभिमत सिद्धिदः ॥ ३ ॥

मंत्रोद्धारः

ॐ झां झीं झूं झें झैं झौं झः अस्त्राय फट्।

चंद्रेन्द्राग्नि गृहस्थोयं कुलि शाकार मुज्वलत्पीतः
रिपूसेना तुरंगादौ ध्यातस्तं स्थंभनं कुरूते ॥ ४ ॥

चन्द्रेदाग्नि गृहस्थतं स तथा विध एव मूर्द्धानि ध्यातः
रिपूं सर्व गंध वारणामभिलाषा दीनां निषेधाय ॥ ५ ॥

स्थाष्णु (ख) अव (ग) अरि (घ) पुराण (फ) के साथ रौं मिलाकर बना हुआ बीज अंग सहित एक लाख जपने से सिद्ध होता है। यह सब इच्छाओं की सिद्धि देता है। इस मंत्र को चन्द्रमा इंद्र और अग्नि अर्थात् चंद्र सूर्य और अग्नि के घरों में रहने वाला वज्राकार उज्वल और पीला ध्यान करने से शत्रुओं के सम्पूर्ण घोड़े आदि सेना का स्थंभन करता है। यह मंत्र फिर उसीप्रकार से चंद्रमा इन्द्र और अग्नि के घरों में ठहरा हुआ मस्तक में ध्यान किया जाये तो सब शत्रुओं को उनका गंध और उनके हाथियों और इच्छाओं तक को रोकता है।

सोग्न्याभो रिपु सेन्यैर्ध्यातः सन स्तत्पराम्मुखी कुरुते
सतथा भूतो ध्यातो भेदयति परैः कृतं स्तंभं ॥ ६ ॥

उसी का अग्नि के समान शत्रु की सेनाओं में ध्यान किया जाने पर उनको भगा देता है।

अनिलाऽनल पुर युक्तः साध्यं तत स्तोभयेत गृहादीनां
अपयांति तथा विद्यतद्ध्यानानादार्त्त नाद्यास्ते धरोचनया ॥ ७ ॥

अयं भूर्यादिषु लिखितः पूज्येत गृहेयत्र
विष तस्करभूत ग्रह कृत्याद्यः परिहरं तेतत्

पिंडात्मकं समंनो मध्ये भूमंडलन यः स्यातेः
स शत्रं समुधतं सः स्तं भयति तथा भुजंगाश्च ॥ ८ ॥

मंत्री यदि इसी का वायुमंडल और अग्निमंडल सहित ध्यान करे तो उसप्रकार के ध्यान से ग्रहों को स्तोभन होता है। और वह दुःखी होकर वह दब जाते हैं।
इसी ऊपर के श्लोक में लिखे हुये भोजपत्र पर गोरोचन लिखकर जिस घर में पूजा जाता है वहां से विष और भूत ग्रह और कृत्या (डाकिनी) आदि ग्रह सब ही भाग जाते हैं। यदि इसको पिंडाक्षरों सहित पृथ्वीमंडल के मध्य में रखा जावे तो शस्त्र उठाने वालों व नागों का तुरन्त स्तंभन हो जाता है।

पुराणो ज गणे शाप्त पुराण रस जिष्णु भिः
सूक्ष्म बिंदु युतैः कृत्य कृतः सर्वफल प्रदः ॥ ९ ॥

पुराण (फ) अज (ॐ) गणेशा (य) आप्त (न) पुराण (फ) रस () जिष्णु (ई) सूक्ष्म बिन्दु वाले मंत्र से पुरुष कृत कृत्य हो जाता है।

क्ष्यां क्ष्यीं क्ष्यूं क्ष्यौं क्ष्यः अस्त्राय फट्
चिंतामण्यभिधानः सांगोयं लक्ष जाप्प सं सिद्धः
रक्त त्रि कोण गोयं मूर्द्धनि साध्यस्य सिद्धि कृद् ध्यातः

इस चिंता मणि नाम के मंत्र को अंगो सहित सिद्ध करने से इसका साध्य के मस्त में त्रिकोण मंत्र के अंदर रक्त वर्ण का ध्यान करने से कार्य सिद्ध हो जाता है।

आविष्टस्याध्यातो मूर्द्धनिग्रह निग्रहं तथा कुरुते
ध्यातोयमधो नाभेः कुरुते जठरांनलं दीप्तं
चिंतितं श्रवणयोः कृष्णेः यः मरैः करोति वाधार्यं
अक्षणांधन नील गेह स्थितस्तु शूल रिपोदरे।

ग्रह से पीड़ित पुरुष के मस्तक में इसका ध्यान करने से यह ग्रहों का निग्रह करता है ।
यदि इसका नाभि से नीचा ध्यान किया जावे तो यह जठराग्नि को प्रदीप्त करता है। यदि इसका शत्रु के दोनों कानोंभि काला ध्यान किया जावे तो यह उसको बहेरा बना देता है। आँखो में ध्यान किया जाने से अंधा करता हो और इसका पेट में नीला ध्यान किया जाने से यह शत्रु के पेट में दरद करता है।

भू बीजं विन्दु युक्तं गणधर निधनं स्तादृशो लांत बीजं
तादृग्व्याधे श्चमंत्रा भुवि समधिगता येन चत्वार एंत

जातंते तेन सद्यः सकल मपि विषं तेन रोगाश्च सर्वे
विश्वे शूलाश्य कृत्साधिक विष विकृतिं कंटकेभ्य श्च जातां

भू बीजं (लं) बिन्दु सहित गणधर बीज () निधन मृत्यु बीज और लांत बीज (व) यह चारों बीज पृथ्वी भर में सब रोगों के मंत्र कहे गये हैं। इनसे सभी विष सभी रोग और सभी प्रकार के कृत्रिम विष के विकार और कांटों से पैदा हुए कष्ट भी दूर हो जाते हैं।

इत्थं मंत्राराधन विद्य मिह विधिपूर्वकं करोतु बुधः
नित्यमनालस्य मनाद्य दिष्टस्य मना सिद्धि समीहेत

पंडित पुरुष यदि अपने इच्छित कार्य की तुरंत सिद्धि करना चाहे तो इसप्रकार की आराधना करने की विधि को नित्य ही आलस्य को छोड़कर क्रिया करे।

एते मंत्रार्द्धोक्ता दयित्त विधिगताः साधिता येन सम्यक्
तस्यानुक्तान्यपि प्राक सत्तत जपा वशात् संतिदिशुः फलानि।
तस्मोदेतेषु मंत्री क्रम रचित महामंत्र मेकं जपार्थैः
नित्यं सं सेव्यमानः सकलमपि फलं प्राप्नुयाल्लोक पूज्यः

जो पुरुष इन प्रायः विधि वाले मंत्रों को भली प्रकार सिद्ध करता है उसको यंत्र मंत्र उसके जप के वश से फल देते हैं। इस वास्ते मंत्री इनमें से एक क्रम से बने हुये महामंत्र को नित्य जपता हुआ संसार भर में पूज्य होकर सम्पूर्ण फल को प्राप्त करता है।

इति

इति आर्षे विद्यानुशासने सामान्य मंत्र साधन विधानं नाम चतुर्थः समुद्देशे :

पंचम अध्याय प्रारम्भ

अथातः सं प्रवक्ष्यामि टेभ्योनेक फलोद्भव
तेषां सामान्य यंत्राणां यथा शास्त्राभिमं विधि ॥ १ ॥

अब अनेक प्रकार के फलों को उत्पन्न करने वाले सामान्य यंत्रों की विधि का वर्णन पूर्व शास्त्रों के अनुसार किया जावेगा ।

सिद्ध चक्र विधानं

व्योमोद्भवांघोरं युक्तं सिरसि विलसितं नाद बिंदुद्वचंद्रैः
स्वाहांतोकार पूर्वैः गुरू भिरभियुतं पंच भिस्तु स्वरैश्च ॥ २ ॥
वाह्येष्ट स्वब्ज पत्रेषु क च ट त पयोष्मादि वर्गान जादीन्
स्वाहांतानांतरालै प्रथम गुरू पदं मायया त्रिः परीतं ॥ ३ ॥

ऊपर रेफ नीचे रेफ सहित आकाश बीज ह के ऊपर अर्द्ध चन्द्रकार का नाद बिन्दु लगाया जावे फिर पहले ॐकार को आदि में तथा स्वाहा को अंत में लगाकर पांचो गुरु बीजों का "असि आउसा" स्वरों सहित लिखें । उसके बाहर के आठो दलों में क्रमशः कयर्ग, चवर्ग, टयर्ग, तवर्ग, पवर्ग, यवर्ग, उष्म और अवर्गों को लिखे। उनके आदि में अज (ॐ) अन्त में स्वाहा लगाकर अंतराल में प्रथम गुरुपद णमो अरहंताणं लिखकर मायाबीज ह्रीं का तीन बार वेष्टन करे।

मध्ये पि कर्णिकायाः पत्राग्रे श्वप्पनाहतं समाख्यातं
वर्गस्यातंस्यातं मरूतं स्वैनोतमांगेन् ॥ ४ ॥

कर्णिका के मध्य में और पत्तों के अग्रभाग में अनाहत नाम का बीज ॐ ह्रीं और वर्गो के हकार को अपने उत्तम अंग अर्थात् सिर रहित लिखे।

पाठांतरं

उद्भावंघोरयुतं सबिन्दु सपरं ब्रह्म स्वरा वेष्टितं
वर्गपूरित दिगांतां बुजदलं तत्संधि तत्यान्वितं ॥ १ ॥

अंभ्रः पत्र तटेष्वबनाहत युतं ह्रींकार संवेष्टितं
देवं ध्यायति य स्य मुक्ति सुभगो वेरिभ कंठीर वः ॥ २ ॥

सपरं (स से आगे वाला ह अक्षर में अनुस्वार लगे हुवे अर्थात् हं बीज के ऊपर और नीचे रेफ (र) बीज सहित अर्थात् (हँ) को ब्रह्म (ॐ) और सोलह स्वरों से वेष्टित करे। उसके बाहर आठ दल के कमल में वर्ग सहित अनाहत बीज लिखे तथा पत्रों के अंतराल में तत्व (णमो अरहंताणं) लिखकर ह्रीं कार से वेष्टित कर क्रों से निरोध करें। जो इसका ध्यान करता है। वह कर्म रूपी शत्रुओं रूपी हाथी को जीतने के लिये सिंह के समान है।

चामीकर लेखिन्या हिम मलयज गोरोचनादिभिर्विलिखेत
श्वेतवर भूर्ज्जपत्रे फलके वा ताम्र पत्रेवा ॥ ३ ॥

गंधाक्षत पसूनैश्चरुके दीपश्च धूप फलामिश्रैः
निवहैरभ्यर्च्च जपे न्नित्यं पुष्पैरष्टोत्तर च शतं ॥ ४ ॥

इस यंत्र को अत्यंत सफेद भोजपत्र पर या फलक (तख्ती) या ताम्रपत्र के ऊपर चामीकर (सोने) की कलम से कपूर चंदन गोरोचन आदि से लिखे।

इस यंत्र को गंध अक्षत पुष्प नैवेद्य दीप धूप और फूलों के समूह से प्रतिदिन पूजन करके फूलों से एक सो आठ प्रमाण यह मंत्र जपें।

विनयादि नमोंत पदं भुवनाधिप मूलबीज पंच गुरून
उद्धार्य ततोऽनाहत विद्यायै मूल विद्यायै योयं ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं हँ असि आउसा अनाहत विद्यायै नमः

आदि में विनय (ॐ) और अंत में नमः पद लगाकर भुवनाधिप मूलबीज (हँ) और पांचो गुरू (असि आउसा) को बोलकर अनाहत विद्यायै लगावे यह मूलमंत्र है।

पूज्यतो नित्यमिदं भक्त्या श्री सिद्धचक्रमुतमं यंत्रं
दुष्टग्रह शाकिन्योयां त्युप शांतिं क्षणात्तस्य ॥ ६ ॥

कुष्ट गल गंडमाला नश्यंति भगंदरादयोरोगाः
अन्ये प्यराति वर्गाः क्रूरा अपि शांतिमुपयांति ॥ ७ ॥

इस उत्तम सिद्ध चक्र यंत्र का भक्ति पूर्वक प्रतिदिन पूजन करने से दुष्ट ग्रह और शाकिनीया तुरंत ही शांति को प्राप्त हो जाती है। इस मंत्र से कोठ गले की गंड माला और भगंदर आदि रोग नष्ट हो जाते हैं। इससे दूसरे क्रूर शत्रु वर्ग भी शांति को प्राप्त हो जाती है।

प्रेतवन वस्त्र खर्पर मध्यगतं
तालाकादिभि लिखतं यंत्रं यः पूजये प्सितं
स्थंभयती प्सित कार्यं चक्रं भूमंडलांस्थं ॥८॥

यह यंत्र पृथ्वी मंडल के अंदर श्मशान के वस्त्र के ऊपर खर्प्पर के मध्य में हड़ताल आदि से लिखा जाने पर अपने इच्छित कार्य का स्तंभन करता है।

जल मंडल मध्यगतं यंत्रं यः पूजयेत्सितैः
कुसुमैः हिम चंदनं स लिखितं शांति पुष्टिं वशं करोत्येवं ॥९॥

यदि इस यंत्र को जल मंडल के बीच में कपूर और चंदन से लिख कर श्वेत पुष्पों से पूजन किया जाये तो यह शांति पुष्टि और वशीकरण को करता है।

तिल तुष सर्षप लवणैः होमं कृत्वात्रिकोण कुंडतले।
सप्त दिनानं मध्ये रामा कृष्टिं करोत्येवं ॥१०॥

यदि इस यंत्र को त्रिकोणकुंड के नीचे रखकर उनमें तिलों के छिलको सरसों और लवण से होम किया जावे तो यह सात दिन के अन्दर स्त्री आकर्षण करता है।

पवन पुरस्थं यंत्रं वायसपिच्छेन कनक गरलाद्यैः
भूर्ज्जे विलिख्य निहितं भूमौ विद्वेषणो उच्चाटं ॥११॥

यदि इस यंत्र को वायु मंडल के बीच में कौवे की पूँछ की कलम से तथा कनक (धतूरे) गरल (वत्सनाभ विष) आदि से भोजपत्र पर लिखकर भूमि से रखे तो यह विद्वेषण और उच्चाटन करता है।

आग्नेय पवन मंडल मध्यगतं प्रार्च्चयेत् मिदं यंत्रं
आरक्त कुसुम जाप्यै र्वशयाति वनितां पुमांसं वा ॥१२॥

यदि इस यंत्र को अग्निमंडल और वायुमंडल के बीच में लिखकर पूजा जाये और लाल फूलों के ऊपर जाप किया जाये तो यह स्त्री या पुरूष दोनों को ही वश में करता है।

वर्षाणि पंच नित्यं यो ध्यायति शुद्ध चेतसा यंत्रं
रहितो जप होमाद्यै र्दुर्द्धर तुर्य्य व्रतो पेतः ॥१३॥

जो पुरूष इस यंत्र का शुद्ध चित्त से पाँच वर्ष तक ध्यान करता है उसको जप तथा होम आदि से रहित होने पर भी अत्यंत कठिन तुर्यव्रत (चौथा व्रत ब्रह्म चर्य) से युक्त होने के कारण से

निष्पन्न सिद्ध चक्रः पलं मेकं प्रत्य हं सवर्णस्यलभ्यते
सौ कर्तव्यः स च व्ययो दान पूजा सु ॥१४॥

यदि दधति लोभतोऽर्द्धं दिवसे तस्मिन् व्ययं च नः करोति
सिद्धि स्तस्य विनश्यति निश्चितो नात्र संदेहः॥ १५॥

यह सिद्ध चक्र यंत्र प्रतिदिन एक पल (४तोला) सोना देता है। किन्तु उसको उस सब द्रव्य को दान और पूजा आदि में खरच कर देना चाहिये।

यदि साधक उस द्रव्य में से आधे को लोभ से रख लेगा उस दिन खर्च न करेगा तो उसकी सिद्धि निश्चय से नष्ट हो जाती है। इसमें कुछ भी संदेह नहीं है।

इति लघु सिद्ध चक्र यंत्रोद्धारः

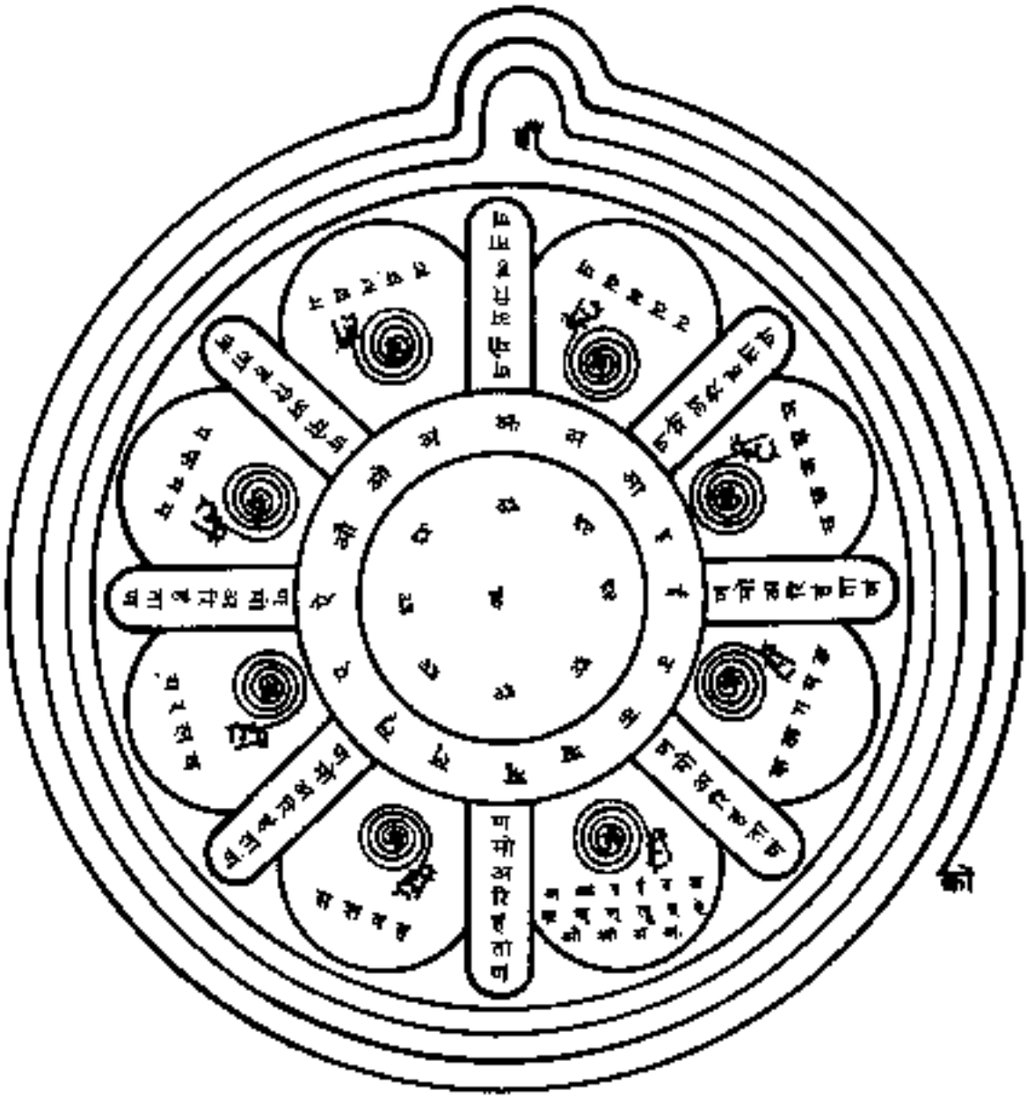

पद्मस्य तस्याष्ट दलस्य मध्ये ह्रींकार वेष्टयं
प्रणवावृतो ह्रं दिग्दल मंत्रादिक सप्त वर्णा माया नमोंतं सदा जपंतु

ॐ ह्रीं ह्रं णमो अरिहंताणं ह्रीं स्वाहा विदिग्धमंत्र :
ॐ ह्रीं ह्रं णमो अरिहंताणं णमो अर्हन् स्वाहा दिग्मंत्र :
ॐ ह्रीं ह्रं णमो अरिहंताणं ह्रीं नमः जपमंत्रः

एक अष्टदल कमल के बीच में ह्रं को ॐ और ह्रीं से वेष्टित करके उसके आठों पत्तों में दिशाओं में और विदिशाओं में विशा और विदिशा के मंत्र लिखे । इनमें से दिशाओं के मंत्र में के सप्तवर्ण पद (णमो अरहंताणं) के पश्चात माया (ह्रीं) और नमः लगाकर सदा जप करना चाहिये।

समस्त फलद नाम चक्रमें तत्समर्चितं
नष्टादि ज्ञानमारोग्यं मेधां मुक्तिं च यच्छति

इस समस्त फलद नाम के चक्र का पूजन करने से खोई हुई वस्तु आदि का ज्ञान तथा आरोग्य होता है यह बुद्धि मुक्ति को देता है।

प्रणवा वृतं अर्हं ह्रीं कार वेष्टितं मध्ये वहि ॐ ह्रीं ह्रं णमो अरहंताण ह्रीं नमः अष्टसु पत्रेषु प्रत्येकांलिखेत्

अर्हं ॐ से वेष्टित करके बाहर ॐ ह्रीं ह्रं णमो अरहंताणं ह्रीं नमः हर एक आठों पत्रों में लिखे।

समस्त फलद् चक्रं

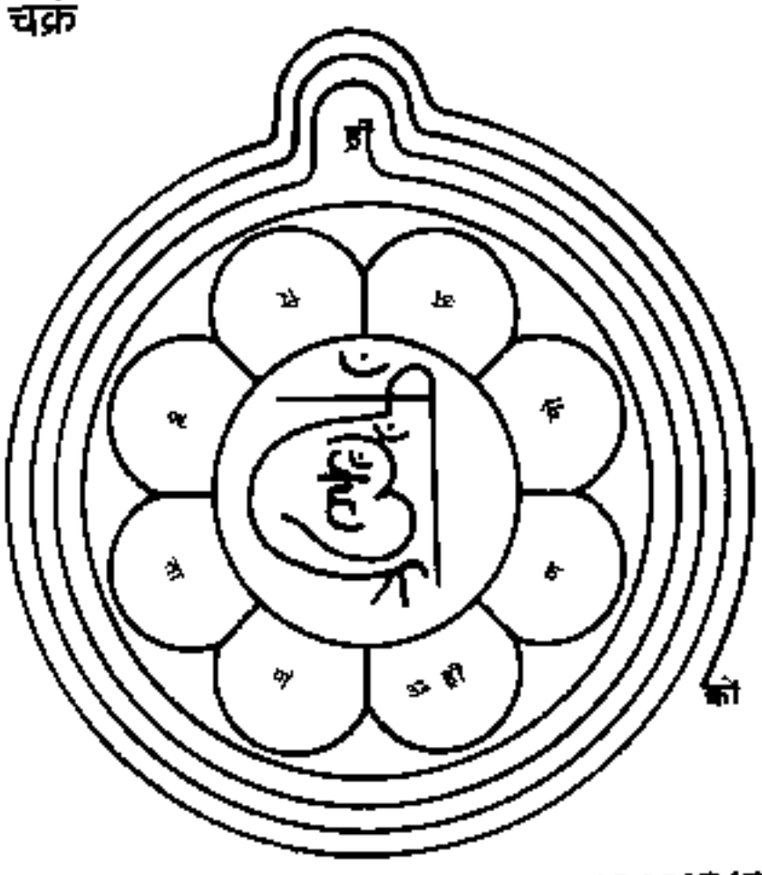

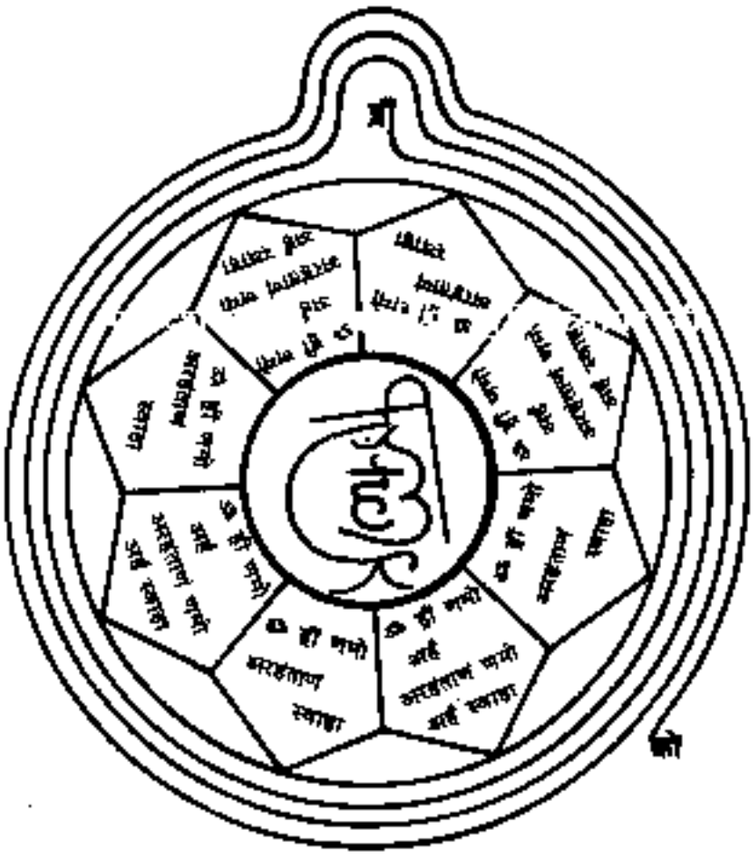

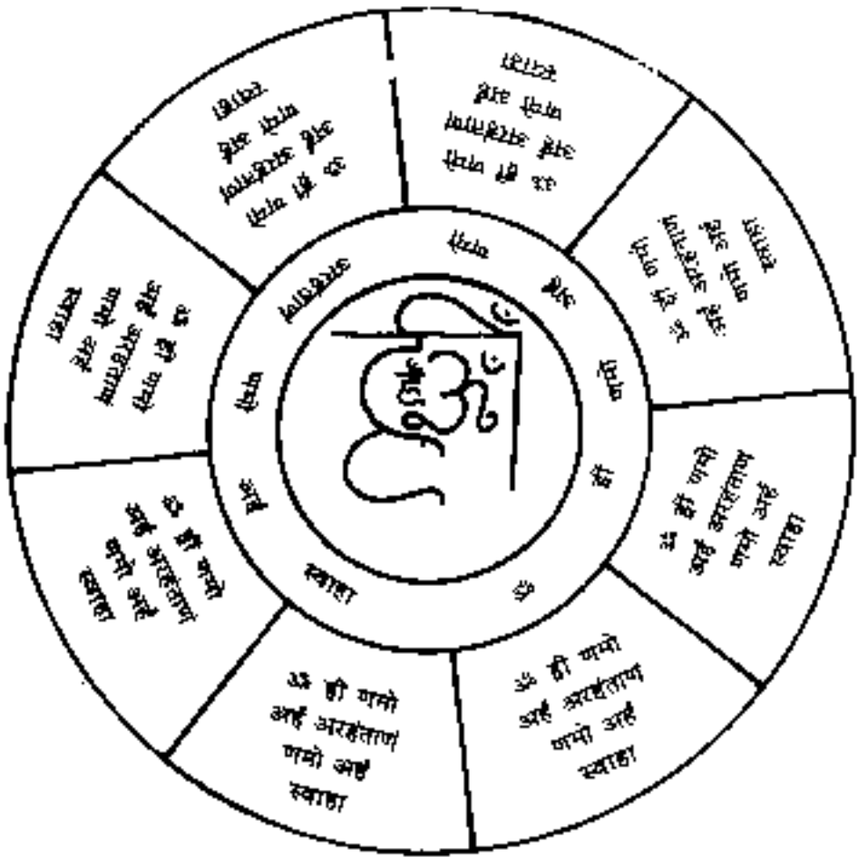

ॐ ह्रीं णमो ऽर्हं णमो अरहंताणं णमो अर्हं स्वाहा

कर्णिका को इस मंत्र से वेष्टित करके बाहर आठों पत्रों में भी यही मंत्र लिखकर ह्रीं से वेष्टित करके क्रों से निरोध करे

पूर्वादि दिक्षु च त सृष्वपि वाग्भव श्रीं माया स्मरा
स्तदऽपरा श्च ऽनलादिवाश्रु क्रों ह्रीं च ब्लें रयर बीजं

पूर्वादि दिक्षु च सृष्वपि वाग्भवं श्री माया स्मरा स्तद परा स्वनलादि कार्सु क्रों ह्रीं च ब्लें रयर बीज चतुष्कमहं मध्येष्ट पत्र (कमलस्य) सहितां बुरूहस्य लेख्यं (विभाव यंतु) पृथ्वी वहि जिनपतिः

कमला च शुभ्रा शेषाक्षराणि तु जपा कुसुमछवीनि
ह्रीं सर्व कर्म्माणि निरोध क्रदंडकुशः स्यात्
श्रीं श्री करि श्रुत करि च ऐ भवत्य वश्यं
आकृष्टि कर्मणि वशीकरणे चे शेषः पिंडा भवंति

वत्तना नि स वाग्भवेन अभ्यर्चय न्निति विधित्
क्रमतो जिनेन्द्र प्राप्नोति भव्य तिलको भुवि भुक्ति मुक्ति

पूर्व आदि चारों दिशाओं में वाग्भव (ऐं) श्रीं माया (ह्रीं) और स्मर (क्लीं) लिखकर दूसरी वायु इत्यादि कोणों में क्रों झ्रों ब्लें और रयर बीज र्य्रूं इन चारों बीजों को लिखे फिर इस अष्ट दल कमल की कर्णिका में अर्हं लिखे।

उसके बाहर पृथ्वी मंडल बनावे। जिन पति (हं) और कमला (श्रीं) बीजों को अत्यंत श्वेत लिखकर शेष बीजों को जपा कुसुम गुडहल के फूल के समान लाल लिखे। इनको ह्रीं और सब कर्मों से रोकने में अंकुश के समान क्रों से निरोध करे। श्रीं लक्ष्मी को करता है। ऐं शास्त्र की बुद्धि देता है और क्लीं वशीकरण करता है शेष बीज आकर्षण और वशीकरण करते हैं। तथा ऐं उत्तम बोलने की शक्ति देता है। भव्य पुरुष इस उत्तम चक्र को प्रतिदिन विधि पूर्वक पूजता हुआ मोक्ष के आनन्द को भोग लेता है।

ॐ नमो ऽर्हं ऐं श्रीं ह्रीं क्लीं क्रों झ्रौं ब्लें र्य्रूं असि आउसा हं नमः

पूजा मंत्र

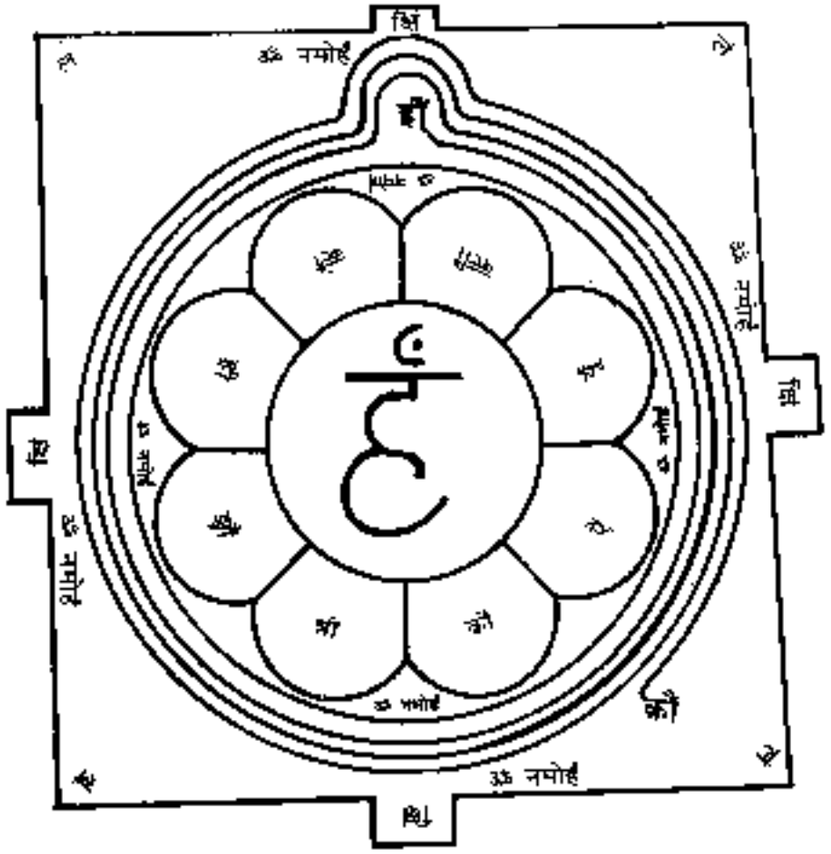

सांतं बिंदुर्ध्वं रेफं वहिरऽपि विलिखेदायताशाब्जपत्रं
दिक्ष्वै श्रीं ह्रीं स्मरोन्यास्त्रिभ वशकरणं शो गज वशकरणं झ्रौं
ब्लें पुनर्यू वाह्ये ह्रीं ॐ नमो ह्रं दिशि लिखित चतुबीजकं
होमयुक्तं मुक्ति श्री वल्लभो सौ भुवन मपि वशं जायते पूजयत्य:

सांत (ह) के ऊपर विंदु और रेफ लगाकर उसके बाहर अष्टदल कमल बनावे उसकी दिशाओं में ऐं श्रीं ह्रीं और स्मर बीज (क्लीं) को लिखें शेष विदिशाओं में भ इ वशकरण क्रों झ्रौं ब्लें और र्य्यूं को लिखे, बाहर दिशाओं में ॐ नमो बीज ह्रं बीज को क्रों ह्रीं और सहित लिखे- जो पुरुष इस यंत्र का पूजन करता है वह मुक्ति रूपी स्त्री का पति होता है, और तीनों लोक उसके वश में होताहै।

ॐ नमो ह्रं ऐं श्रीं ह्रीं क्लीं स्वाहा

॥ पूजा मंत्र ॥

चिंतामण्याद्वये चक्रे ते इमे संप्रकीर्तिते

यह दोनों चिंतामणी यंत्रो का वर्णन किया गया।

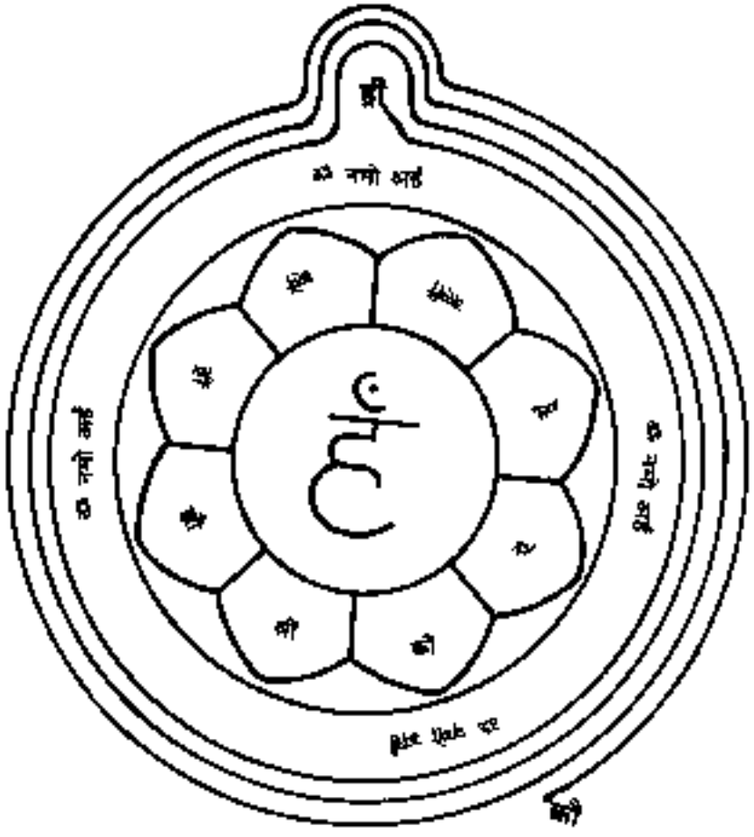

झ्रौं कार सर्व कर्म निरोध रोकने का बीज है और आं अंकुश बीज अंकुश हाथी कोरो के श्री जो लक्ष्मी श्री करीजो शोभायमान करने वाली है। श्रुतकारी सर्वशास्त्र का ज्ञान देनेवाली है। और ऐं वशीकरण कर्ता हे क्लीं आकर्षण करता है। इससे उत्तम दूसरा वशीकरण नहीं है। पिंड रूप जंत्र

की पूजन करने वाला भव्य जीवभव्यों में शिरोमणि भुक्ति और मुक्ति दोनों पावें। पूर्व में वाग्भव ऐंकार, दक्षिण दिशा में श्री बीज, पश्चिम में ह्रींकार, उत्तर दिशा में काम बीज क्लीं लिखे। अग्नि कोणों में क्रां, नैऋतकोण मे ह्रीं, वायूकोण में ब्लें ईशान कोण में सूकार लिखें। अर्ह सहित अष्ट पत्रों में लिखो। भगवान और लक्ष्मी को उज्वल वर्ण ध्यावे।

अथ त्रैलोक्य सारारव्य चक्रम पुप दिश्यते

अब त्रैलोक सार चक्र का वर्णन किया जाता है।

सांतं रेफयुतं लिखे द्युति (हं) परं (ॐ) मंत्राधिप (ह्रीं) क्लीं
ततो वामांशेन परत्रयो वहिरतो दिग्दत्त पत्रेष्वऽथ
एक स्मिन प्रणव स्त्रि मूर्ति र परे स्वर्हत्पदं
तत्व तोयो भक्त्या भुवि पूजयंति सततं ते यांति मुक्ति ध्रुवं

ॐ ह्रीं णमो अरहंताणं ह्रीं क्लीं नमः ॥ पूजामंत्रः॥

सांत (ह) को रेफ सहित लिखकर फिर द्युति (ॐ) और मंत्राधिप (ह्रीं) को लिखे। उसके ऊपर क्लीं लिखकर बायें हाथ पर न और दूसरे स्थान अर्थात् दाहिने हाथ पर मों लिखे। उसके पश्चात बाहर आठपत्रों में एक पर प्रणव ॐ दूसरे पर त्रिमूर्ति ह्रीं शेष दलों में अर्हं बीज (हं) लिखे। जो पुरुष इस यंत्र का भक्ति पूर्वक पूजन करता है वह निश्चय से मोक्ष को प्राप्त होता है।

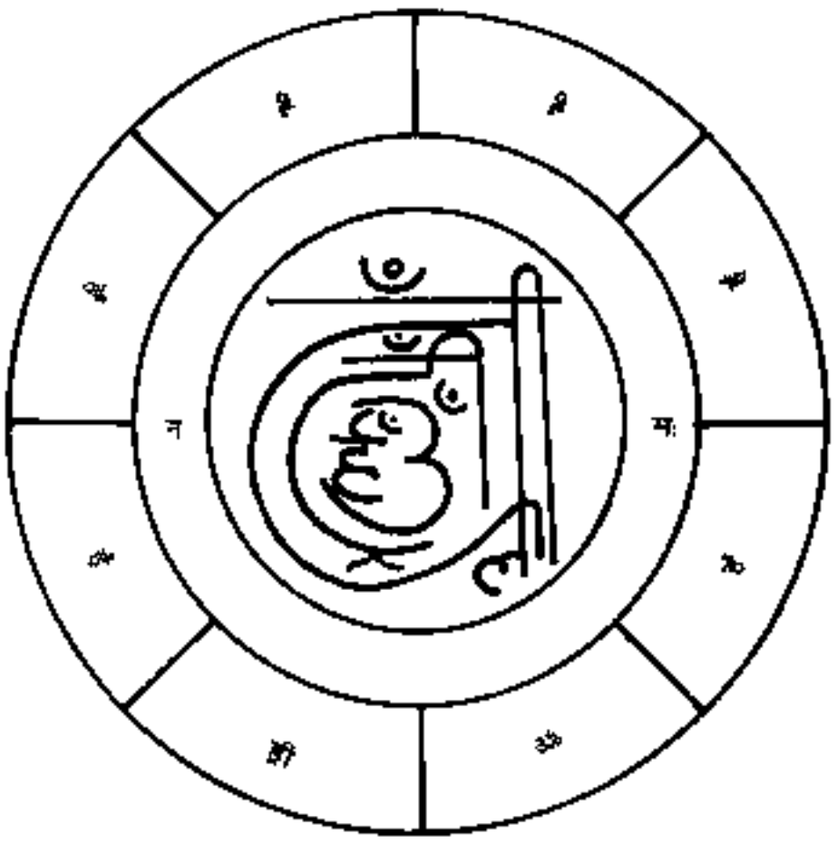

श्री भट्टारक राजकीर्तिजी विरचित
॥ श्री पार्श्वनाथ आराधना विधान॥

श्री पार्श्वनाथमानम्य वांछितार्थ प्रदायकं,
गुरूपदेशतस्तस्य वक्ष्याम्याराधनाक्रमं ॥ १ ॥

अर्थः- इच्छित वस्तुओं को प्रदान करने वाले श्री पार्श्वनाथ भगवान को वंदन करके गुरू उपदेश से उनकी आराधना का क्रम कहूँगा।

साधक लक्षणमादौ पूजा जाप्य विधिस्ततः।
ध्यान मनुक्रमा देवमाधिकार स्त्रयं भवेत् ॥ २ ॥

अर्थ :- आराधना विधान के अंदर तीन अधिकार हैं प्रथम अधिकार में साधक के लक्षण का कथन द्वितीय अधिकार में पूजन एवं जाप विधि तृतीय अधिकार में ध्यान का वर्णन किया जायेगा॥

कुलीनः सुमतो धीरो विदूरी कृत मानसः।
सम्यग दृष्टिः कृपा भाज स्वराधक इतीष्यते ॥ ३ ॥

अर्थ :- उच्च कुल में उत्पन्न, यशस्वी, धीरमना, विकारों से मुक्त सम्यग्दृष्टि, कृपा करने वाला आराधक (साधक) कहा जाता है।

शूरः संसार भीरू स्वगतः तंद्रो जितेन्द्रियः
गंभीर्योदार संपन्नार्या आराधक इति स्मृतः ॥ ४ ॥

अर्थ :- शूरवीर, संसार से भीरू, निंद्रा विजयी, जितेन्द्रिय, गंभीर और उदार से युक्त आराधक होता है।

स्वल्प भुक् स्वल्प कोपश्च स्वल्प निद्रो महोद्यमी,
निर्भयो निर्मदो रक्ष प्रभु मारूद्ध महंति ॥ ५ ॥

अर्थः- अल्प भोजन करने वाला, अल्पक्रोधी, अल्पनिद्राधारी, उद्योगी, आर्जवी, निराकारी चतुर पुरूष आराधक (साधक) हो सकता है।

॥ इति साधक लक्षणाधिकार प्रथमः ॥

अर्थः- इसप्रकार साधक लक्षण नामक प्रथम अधिकार पूर्ण हुआ।

पवित्रे निर्जने रम्ये पर्वता राम वेश्मनि,
प्रासादे वासरे सिंधु वाल्मीकोण तटेपिवा ॥ २ ॥

अर्थः- पवित्र, जनशून्य और सुन्दर, पर्वत, बाग, घर, महल, तालाब के किनारे या वापी (कुवें)या (सर्प की बांबी) के किनारे।

स्नातो धौत क्षतश्च तकसाः पुजांगसन्निधिः।
आराधयो प्रभुं मतया त्रिकालं स्थिर मानसः ॥३ ॥

अर्थः- स्नान कर धुले हुये वस्त्र पहनकर श्वेत अक्षत आदि पूजा के अंगों को पास रखकर भगवान की भक्तिपूर्वक स्थिर चित्त से तीनों समय आराधना करे।

नित्यं प्रभोः प्रकुर्वीतिं स्नपनं च विलेपनां।
अथवा पूजन स्तोत्रं मंत्र जाप्यं समाहितः ॥ ४ ॥

अर्थः- इस विधि में नित्य ही भगवान का अभिषेक करते हैं उनके लेप करते हैं अथवा एकाग्र चित्त होकर पूजन स्तोत्र यंत्र के मंत्र का जाप करते हैं।

श्री मत्पार्श्व स्तुतेः पाश्चात जिनेन्द्र स्नपनादि तः।
तत्परोन्यस्त चक्रस्य कुर्वतुं स्नपनादिकम् ॥ ५ ॥

अर्थः- श्री पार्श्वनाथ भगवान की स्तुति के पश्चात भगवान के अभिषेक आदि के लिए उनके सामने चक्र (यंत्र) रखकर स्नान आदि करना चाहिये।

अग्निमंडल मध्यस्थोरेफै र्ज्वाला शताकुलैः।
सर्वांग देशगै ध्यात्वात्मानं दग्ध वपुर्मलं ॥ ६ ॥

अर्थः- अग्निमंडल के बीच में बैठा हुआ उसके रेफ की सेंकडों लपटों को अपने अंग के सब जोड़ो में गई हुयी ध्यान करके उनसे अपने शरीर के मल को जला हुआ ध्यान करें।

स्वशीर्षे मेरू श्रृंगे च स्नाप्यमानं सुरासरैः।
श्रीमत्पार्श्वजिनं ध्यायेत् तज्जलै स्व पवित्रितं ॥ ७ ॥

अर्थः- इसके पश्चात अपने सिर को सुमेरु पर्वत की चोटी (पाड़शिला) की कल्पना करके उस पर देवता और असुरों से स्नान कराये जाते हुए भगवान श्री पार्श्वनाथजी का ध्यान करे और फिर उनके स्नान के बहकर आये हुए जल से अपने को पवित्र किया हुआ ध्यान करें।

मंत्र स्नानं ततः कुर्यात् त्रिवारकुंभ मुद्रया।
आत्मरक्षां ततः शंख मुद्रया सकलींकिया ॥ ८ ॥

फिर कुंभ मुद्रा से तीन बार मंत्र स्नान करे और इसके पश्चात शंख मुद्रा से अपनी रक्षा करके सकलीकरण करें।

स्नानादि मंत्राश्च

ॐ अमृते, अमृतोद्भवे, अमृत वर्षिणी अमृतं, स्रावय सं सं क्लीं क्लीं ब्लूं ब्लूं द्रां द्रीं द्रीं द्रीं द्रावय द्रावय हं हं इव्रों क्ष्वीं हंसः स्वाहा॥

स्नान मत्रोयं

क्षिप स्वाहा हा स्वाहा पक्षि पंच भूतात्मिकोऽय रक्षा मंत्र।
वामकरांगुष्टादिषु विन्यस्यैकैकम क्षंर अनुलोभ प्रतिलोभ
निवम् भूत बार्वविद् ॥ ८ ॥

अर्थ :- इन अक्षरों में से एक एक को बायें हाथ की अगूँठी आदिअंगुलियों के अनुलोम (सीधे) और प्रतिलोम (उलटे) क्रम से भूत और वर्तमान का जानने वाला तीनबार रखे।

भूम्य भोऽग्नि मरूद्योम महाभूतात्मका अमीवर्णाः
पीतः सितो रक्त कृष्णो नील रूचि कमात् ॥ ९ ॥

अर्थ :- यह अक्षर क्रम से पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश इन पांच भूतों के हैं ह्रस्वक और क्रम से पीले, सफेद, लाल काले और नीली कांति वाले हैं।

पादांतन्नाभि हृद्वक मस्तका गेषु पूर्ववत्
हत्वाक्षि प्रभृतीन् वर्णान् वाम हस्ते नियोजयेत् ॥ १० ॥

अर्थः- फिर इन अक्षरों को पहिले के समान क्रम से पैरों नाभि हृदय, मुख और मस्तक के अग्रभाग में लगाकर बाये हाथ में लगावे।

अंगुष्टादिषु सून्यानि विन्यसेत् पंच पूर्वयतः।
अर्हदादिस नातादि शिरः पादौ नियोजयेत् ॥ ११ ॥

अर्थः- फिर पहले के समान अंगूठे आदि से पाँच शून्यों और अर्हत् आदि को सीधे और उल्टे क्रम से लगाकर शिर से लगाकर पैरों तक में भी लगावे।

तानि चामूलानि हां हीं हूं हौं हं ह: ह्रौं हूं हीं हां (हाथों में लगावे)
ॐ हां णमो अरिहंताणं मम शीर्षं रक्ष रक्ष स्वाहा (अंगों में लगावे)
ॐ हीं णमो सिद्धाणं मम वदनं रक्ष रक्ष स्वाहा॥
ॐ हूं णमो आयरियाणं मम हृदयं रक्ष रक्ष स्वाहा
ॐ हौं णमो उव ज्झसायाणं मम नाभिं रक्ष रक्ष स्वाहा
ॐ ह: णमो लोए सव्व साहूणं मम पादौ रक्ष रक्ष स्वाहा

अष्ट प्रहर की रक्षा क्षुद्रोपद्रव नाशनी पंच
भूतात्मिको त्पंच देहस्य सकलीक्रियां कुर्यात् ॥ १२ ॥

अर्थः- यह अष्ट प्रहर की रक्षा और पंच भूतात्मिका पाँचों अंगो की रक्षा सब छोटे छोटे उपद्रवों को नष्ट करती है इसके पश्चात सकलीकरण करें।

ॐ णमो भगवते पार्श्वनाथाय धरणेंन्द्र पद्मावती सहिताय क्षुद्रोपद्रव विनाशनाय शिखाबंधेन सर्व्वापद्भ्यो मां रक्ष रक्ष स्वाहा ॥

शिखा बंधन मंत्र:

ॐ हीं इन्द्र पूर्वदिशां रक्ष रक्ष बंध बंध स्वाहा
ॐ हीं अग्ने आग्नेय दिशां रक्ष रक्ष बंध बंध स्वाहा
ॐ हीं यम दक्षिण दिशां रक्ष रक्ष बंध बंध स्वाहा
ॐ हीं नैऋते नैऋति दिशां रक्ष रक्ष बंध बंध स्वाहा
ॐ हीं वरूण अपाचि दिशां रक्ष रक्ष बंध बंध स्वाहा
ॐ हीं वायो वायव्य दिशां रक्ष रक्ष बंध बंध स्वाहा
ॐ हीं कुबेर उत्तर दिशां रक्ष रक्ष बंध बंध स्वाहा
ॐ हीं ईशान ईशान दिशां रक्ष रक्ष बंध बंध स्वाहा
ॐ हीं धरणेंद्र पाताल दिशां रक्ष रक्ष बंध बंध स्वाहा
ॐ हीं सोम उर्ध्व दिशां रक्ष रक्ष बंध बंध स्वाहा

ॐ श्री पार्श्वनाथाय नमः इतिदिग्बंधनं

ॐ स्थिरे सुस्थिरे सर्व्वं सहेमू भूमि देवते महापवित्रते सर्वापद्भ्योमां रक्ष रक्ष स्वाहा॥

॥ दिक्पाल पूजा ॥

(१) ॐ हीं पूर्व दिग्वासिन् स्वायुध वाहन वधु चिन्ह परिवार सहितं भो इन्द्रं आगच्छ आगच्छ दिव्यासने तिष्ठ तिष्ठ इदं जलाद्यर्चनं गृह्ण-गृह्ण मम सन्निहितो भव भव संवोषट्॥

(२) ॐ ह्रीं पूर्व दक्षिण दिग्वासिन स्वायुध वाहन वधु चिन्ह परिवार सहित भो अग्ने आगच्छ-आगच्छ दिव्यासने तिष्ठ तिष्ठ इदं जलाद्यर्चनं गृह्ण-गृह्ण मम सन्निहितो भव भव संवोषट्॥
(३) ॐ ह्रीं दक्षिण दिग्वासिन स्वायुध वाहन वधु चिन्ह परिवार सहित भो यम आगच्छ आगच्छ दिव्यासने तिष्ट तिष्ट इदं जलार्च्चनं गृह्ण-गृह्ण मम सन्निहितो भव भव संवौषट ॥
(४) ॐ ह्रीं दक्षिण,पश्चिम दिग्वासिन स्वायुध वाहन वधु चिन्ह परिवार सहित भो नैऋते आगच्छ आगच्छ दिव्यासने तिष्ठ तिष्ठ इदं जलाद्यर्चनं गृह्ण गृह्ण मम सन्निहितो भव भव संवौषट् ॥
(५) ॐ ह्रीं उत्तर दिग्वासिन् स्वायुध वाहन वधु चिन्ह परिवार सहित भो ईशान आगच्छ-आगच्छ दिव्यासने तिष्ठ-तिष्ठ इदं जलाद्यर्चनं गृह्ण-गृह्ण मम सन्निहितो भव भव संवोषट् ॥
(६) ॐ ह्रीं उत्तर पूर्व दिग्वासिन् स्वायुध वाहन वधु चिन्ह परिवार सहित भो ईशान आगच्छ-आगच्छ दिव्यासने तिष्ठ-तिष्ठ इदं जलाद्यर्च्चनं गृह्ण-गृह्ण मम सन्निहितो भव भव संवोषट्
(७) ॐ ह्रीं आकाश दिग्वासिन् स्वायुध वाहन वधु चिन्ह परिवार सहित भो सोम आगच्छ-आगच्छ दिव्यासने तिष्ठ-तिष्ठ इदं जलाद्यर्च्चनं गृह्ण-गृह्ण मम सन्निहितो भव भव संवौषट्
(८) ॐ ह्रीं पाताल दिग्वासिन स्वायुध वाहन वधु चिन्ह परिवार सहित भो धरणेन्द्र आगच्छ आगच्छ दिव्यासने तिष्ठ तिष्ठ इदं जलाद्यर्च्चनं गृह्ण गृह्ण मम सन्निहितो भव भव संवोषट्॥

इति दिक्पाल पूजा मंत्र

हस्त द्वये कनिष्ठादे रंगुलिष्वपि चपंच सु
मंत्राक्षराणि सन्मंत्री सप्त बारं निवेशयेत् ॥ १३ ॥

तानि चामूलानि स्यां लां ह्रीं सरसुंसः हर हूं हः।
चक्रोपरि महामंत्रं जपमष्टोत्तरं शतं।
श्री खंड कुंकुमै चारू पुष्पैकुर्यात्सुवासिते ॥ १४ ॥

अर्थः- अच्छा मंत्री दोनों हाथों को कनिष्ठा उंगली आदि पाँचो उंगुलियों में कवच मंत्रों के अक्षरों को सात बार स्थापित करे।

यह यह है स्वां लां ह्रीं सरसुंसः हर हूं हः
फिर चक्र के ऊपर श्री खंड और उत्तम गंध वाले पुष्पों से महामंत्र १०८ बार जाप करें।
चक्रोद्धार विधिश्चाय॥
चक्रोद्धार की विधि यह है

अर्हत्संख्या दलावृतं केशराढ्यं सुकर्णिकं,
स्वर्णं रोप्य ताम्रादौ यी मान्यं कज मालिखेत् ॥ १५॥।

अर्थः- बुद्धिमान पुरुष सोने चांदी या तांबे के ऊपर अर्हत्संख्या चौबीस दलों से घिरे हुये अच्छी केशर और कर्णिका युक्त कमल बनावें।

देवस्य विश्व नाथ स्य वाचकं परमेष्ठिन
कर्णिकायां लिखे दऽर्हन् मंत्र राजं महोदयः ॥ १६ ॥

अर्थः- कर्णिका के अंदर जगत के स्वामी परमेष्टि का वाचक महान उदय वाले बीजराज अर्हन बीज (ह्रं) लिखे।

अर्हन् तद्वहि पार्श्वनाथस्य मंत्र सप्त दशाक्षरं,
लिखेदऽचित्यं माहात्म्यं भुक्ति मुक्ति प्रदायकं ॥ १७॥

उं ह्रीं ला व्हः पः लक्ष्मीं ह्वीं क्ष्वीं ख्वुः पार्श्वनाथाय नमः

(नोट) मूलग्रन्थों में इस मंत्र में ह्वीं क्ष्वीं के आगे ख्वुः के स्थान पर ह्वुः लिखा हुआ है और पंच नमस्कार कल्प में क्वुः लिखा हुआ है परन्तु पूजा सार समुच्चय ग्रंथ में तथा तेरह पंथी बड़े मंदिर में बाबा दुलीचंदजी के ग्रंथ भंडार पार्श्वनाथ चक्रोद्धार में तथा यंत्र में कांत बीज (ख्र) पांचवी कला सहित अर्थात् उ सहित (ख्वुः) लिखा हुआ है इसलिये यहां पर ह्वुः के स्थान पर ख्वु लिखा है। उस अर्हं बीज के बाहर आचिन्तय महात्म्यवाले सांसारिक भोग और मोक्ष के देने वाले भगवान पार्श्वनाथ के इस सत्रह अक्षरी मंत्र को लिखे।

मूल मंत्रोयमाख्यातः सर्व कार्य प्रसाधकः
जाप्यं होनादिकं सर्वं कुर्यादेतेन सिद्धयो ॥ १८ ॥
मंत्रस्साधयते कार्यं पूर्वं साध्यः सप्वहि।
सिद्धि भंवे जाप्य जपात्सजपोराशि गोचरः ॥ १९ ॥

अर्थः- इसे सब कार्यों के सिद्ध करने वाला मूलमंत्र कहा है। इसकी सिद्ध के वास्ते जप, होम आदि सभी कुछ करना चाहिए

अर्थः- यह मंत्र कार्य को सिद्ध करता है अतएव पहले इस ही को सिद्ध करना चाहिये। इसकी सिद्धि कार्यराशि के अनुसार जप करने से होती है।

द्विषट सहस्त्रे मंत्रोयं शुभाशुभ निवेदकः
अर्हत्संख्या सहस्त्रैस्तु सर्वसारस्वताव हं ॥ २० ॥

लक्षैकन च मंत्रोयं चिंतितार्थ प्रसाधकः
लक्ष त्रयेण पूर्णेन प्राज्य श्री कारणं भवेत् ॥ २१ ॥

सप्त लक्ष महा मंत्र पूर्णयो राज्य दायकः
आ संसार विमुक्तस्तुविश्व लक्ष्मी प्रदो भवेत् ॥ २२ ॥

अर्थः- उपर्युक्त मंत्र का बारह हजार जप करने से यह शुभ और अशुभ फल को बतलाता है। चौबीस हजार जप करने से यह सब सरस्वती संबंधी कार्यो को करता है ॥ २० ॥
इस मंत्र को एक लाख जप करने से सोचे हुए सब कार्य सिद्ध होते हैं।
और तीन लाख के पूर्ण होने से यह बड़ी भारी लक्ष्मी का कारण होता है। ॥ २१ ॥
इस महामंत्र का सात लाख जाप होने पर यह राज्य पद देता है और अंत में मंत्री के इस संसार से छूटने पर समस्त जगत की लक्ष्मी मोक्ष को देना है।

वलये केसर स्थाने चतुर्विर्भस्तं प्रवेष्टयेत् मंत्राक्षरैः।
प्रभावाढयैरेकै कंच समालिखेत् तेचामि ॥ २३ ॥
ॐ ह्रीं लां ह्रीं आं द्रां श्री कलिकुण्ड स्वामिने नमः

पार्श्वनाथ स्वामी के मंत्र वाले वलय के पश्चात चार और वलय बनाकरउनमें एक-एक करके बड़े प्रभाव वाले चार मंत्र लिखें

द्विषट सहस्र जाप्यो न जातिका कुसुमैर्वरः
मंत्रेणानेन लूतादि वर्ण सर्व विजश्यति ॥२४॥

अर्थः- इस मंत्र का उत्तम चमेली के फूलों से बारह हजार जाप करने से मकड़ी आदि का सब वर्ण नष्ट हो जाता है।

शाकिन्यादि महा दोषा स्तृतीयादि महाज्वराः
एतस्य स्मरणात्सर्वे पलायंती दिशो दिशः ॥ २५ ॥

एतन्मंत्र मयीं रक्षा कटि बाहुशिर: स्थितां
धारयेत्पुरूषो नित्यं सर्वापद्भो विमुच्यति ॥ २६ ॥

अर्थः- शाकिनी आदि बड़े बड़े दोष इकातरा आदि बड़े बड़े ज्वर इसको स्मरण करने से दसों दिशावों में भाग जाते हैं। इस मंत्र की बनाई हुई राखी को कमर भुजा और सिर पर धारण करने से पुरूष सदा ही सब आपत्तियों से छूट जाता है।

एतन्मंत्रस्य चक्रादि भिन्न मस्ति सविस्तरं,
कलिकुंडस्य माहात्म्यं संक्षेपाद प्रकीर्तितं ॥ २७ ॥

अर्थ :- इस मंत्र के चक्र आदि का विस्तार से कलिकुंड के माहात्म्य में पृथक वर्णन किया जाने से यहाँ संक्षेप में ही कहा गया है।

अथ द्वितीय मंत्रः

ॐ नमो भगवते श्री पार्श्वनाथाय धरणेन्द्र पद्मावती सहिताय ज्वल ज्वल प्रज्वल प्रज्वल महा अग्नि स्तंभय स्तंभय ठः ठः॥

त्रि सप्ताऽनेन मंत्रेण पानीय अभिमंत्रित् प्रदीप,
नादौ समये देयं सौवीर मिश्रितं ॥ २८ ॥

अर्थः- इस मंत्र से जल को इक्कीस बार मंत्रित करके सौवीर में मिलाकर उद्दीपन आदि के समय देना चाहिये।

अथ तृतीय

ॐ नमो भगवते पार्श्वनाथाय धरणेन्द्र पद्मावती सहिताय हंसः हंसः महाहंसः महा हंसः परम हंसः परम हंसः को हंसः को हंसः शिव हंसः झरे झां हंसः पक्षि महा विषं भक्षि हु फुट् स्वाहा।

स्थावर जंगम कृत्रिम विषम विष स्थापि
संहार सप्तामि मंत्रिम तोयं मंत्रेणानेन नाशयेत् ॥ २९ ॥

अर्थः- इस मंत्र से सात बार जपा हुआ जल स्थावर जंगम कृत्रम अथवा कठिन से कठिन विष नष्ट करता है।

अथ चतुर्थ मंत्र :

ऐं क्लीं पद्मावती नमः

आराधितो महाभक्त्या मूल मंत्रोदि वानिशं
मंत्र पद्मावती देव्यो स्तवादेवै प्रसिद्धयति ॥ ३० ॥

अर्थः- यह पद्मावती देवी का मूल मंत्र अत्यंत भक्ति से रात दिन आराधना किये जाने पर फल देता है।

मूल मंत्रादि मंत्राणां शामनस्य प्रभोज्ज्वत,
अधिष्ठात्री महाशक्ति देवी पद्मावती सदा ॥ ३१ ॥

अर्थः- इस मंत्र की अधिष्ठात्री पद्मावती देवी अन्य सब मूलमंत्रों को शांत कर देती है।

विशेष स्तव मंत्रे स्मिन् भिन्न पूर्व क्रमात्फिल,
रक्त कणवीर कुसुमै र्जपेत्कार्यस्य सिद्धये ॥ ३२ ॥

अर्थः- इस मंत्र में अयं मंत्रो से यह विशेषता है कि इसका लाल कनेर के फूलों पर जप करने से कार्य सिद्ध हो जाता है।

तेजः शक्ति महालक्ष्मी रर्हन्पूर्वा नमों तगाः
मंत्रा वृषभादि जिनानां च लिखेत्पत्रेष्वनु क्रमात् ॥ ३३ ॥

अर्थः- इन मंत्रो के पश्चात चौबीस पत्रों में क्रम से तेज (ऊँ) शक्ति (ह्रीं) महालक्ष्मी (श्रीं) और अर्हन (हं) को पहले लगाकर तथा अंत में नमः लगाकर २४ तीर्थंकरों के नामों से मंत्र बनाकर लिखें। वह यह है।

ॐ ह्रीं श्रीं हं वृषभाय नमः -	ॐ ह्रीं श्रीं हं अजितनाथाय नमः
ॐ ह्रीं श्रीं हं संभवाय नमः -	ॐ ह्रीं श्रीं हं अभिनंदनाय नमः
ॐ ह्रीं श्रीं हं सुमतये नमः -	ॐ ह्रीं श्रीं हं पद्मप्रभाय नमः
ॐ ह्रीं श्रीं हं सुपार्श्वाय नमः -	ॐ ह्रीं श्रीं हं चंद्रप्रभाय नमः
ॐ ह्रीं श्रीं हं पुष्पदंताय नमः -	ॐ ह्रीं श्रीं हं शीतलाय नमः
ॐ ह्रीं श्रीं हं श्रेयांसाय नमः -	ॐ ह्रीं श्रीं हं वासु पूज्याय नमः
ॐ ह्रीं श्रीं हं विमलाय नमः -	ॐ ह्रीं श्रीं हं अनंताय नमः
ॐ ह्रीं श्रीं हं धर्मनाथाय नमः -	ॐ ह्रीं श्रीं हं शांतिनाथाय नमः
ॐ ह्रीं श्रीं हं कुंथुनाथाय नमः -	ॐ ह्रीं श्रीं हं अरनाथाय नमः
ॐ ह्रीं श्रीं हं मल्लिनाथाय नमः -	ॐ ह्रीं श्रीं हं मुनिसुव्रताय नमः

ॐ ह्रीं श्रीं ह नेमिनाथाय नमः - ॐ ह्रीं श्रीं ह नेमीनाथाय नमः
ॐ ह्रीं श्रीं ह पार्श्वनाथाय नमः - ॐ ह्रीं श्रीं ह महावीर वर्द्धमान स्वामिनेनमः

प्रणव त्रिमूर्तिं पूर्वा होमांताश्चदलागतः
चक्रेश्वरी प्रभृतयो लिखेत् शासन देवताः ॥ ३४ ॥

अर्थः- उससे आगे के चौबीस दलों में प्रणव (ॐ) त्रिमूर्ति (ह्रीं) को पहिले लगाकर तथा अंत में होम (स्वाहा) लगाकर चक्रेश्वरी आदि शासन देवियो को लिखे ।

॥ तद्यथा ॥

वह इस प्रकार है ।

ॐ ह्रीं चक्रेश्वर्यै स्वाहा - ॐ ह्रीं अजितायै स्वाहा
ॐ ह्रीं दुरितायै स्वाहा - ॐ ह्रीं काल्यै स्वाहा
ॐ ह्रीं महाकाल्यै स्वाहा - ॐ ह्रीं श्यामायै स्वाहा
ॐ ह्रीं शांतायै स्वाहा - ॐ ह्रीं ज्वालामालिन्यै स्वाहा
ॐ ह्रीं सुतारकायै स्वाहा - ॐ ह्रीं अशोकायै स्वाहा
ॐ ह्रीं मानव्यै स्वाहा - ॐ ह्रीं चंडायै स्वाहा
ॐ ह्रीं विदितायै स्वाहा - ॐ ह्रीं अंकुशायै स्वाहा
ॐ ह्री कंदर्पायै स्वाहा - ॐ ह्रीं निर्वाणायै स्वाहा
ॐ ह्रीं बलायै स्वाहा - ॐ ह्रीं धारिण्यै स्वाहा
ॐ ह्रीं वैरोटै स्वाहा - ॐ ह्रीं नर दत्रायै स्वाहा
ॐ ह्रीं गांधार्यै स्वाहा - ॐ ह्रीं अंबिकायै स्वाहा
ॐ ह्रीं पक्षावत्यै स्वाहा - ॐ ह्रीं सिद्धार्थकायै स्वाहा

त्रिमूर्त्या वेष्टयेत् लिप्या निरूद्धयाद्दडकुशिन
वारिभूमि पुरांतस्थं सुधी कुर्यांतदंबुजं (३५)

अर्थः- फिर इस कमल को त्रिमूर्ति (ह्रीं) से तीन बार वेष्टित करके क्रों से निरोध करे उसके बाहर जल मंडल और पृथ्वी मंडल बनावे।

आत्मनो वाम भागे च विलिखेत्पादुकाद्वयं
दक्षिणे भूपुरां तस्या वकावस्था गुरोरपि (३६)

अर्थः- फिर अपने बांये भाग में दो पादुकायें भगवान को बनावे और दाहिने भाग में गुरु को भी बनावे ये पादुकायें पृथ्वी मंडल के अंदर बनी हुई हों

ततोपदेशित सम्यक्‌नि र्निमितोपकारिण:
त्रि संध्या पूजनं कुर्यात् देवस्येव गुरोरपि (३७)

अर्थ:- फिर प्रात: दोपहर और सांयकाल के समय भगवान पार्श्वनाथजी का बिना किसी कारण उपदेश देकर उपकार करने वाले गुरू का भी पूजन करे

एवं चक्रविधि: प्रोक्तो मंत्रगर्भो गुरोडदितं
अथ जाप्यविधिं वक्ष्ये वांछितार्थ प्रकाशकं (३८)

अर्थ:- इस प्रकार गुरु की कही हुई मंत्र गर्भ वाली चक्र की विधि कही गई है अब इच्छा किये हुए अर्थ को देने वाली जाप की विधि कहूँगा।

दंश शार्दूल सिंहादि बिडालादि विभीषणे
नि: प्रकंपो भवेन्मंत्री जाप्य ध्यानादि कर्मणि (३९)

अर्थ:- मंत्री जाप तथा ध्यान आदि कर्म में डांस व्याघ्र सिंह और बिलाव आदि के भय से कभी भी कंपायमान नहीं होवे

सद्योविकसितै: पुष्पै: संवृतैरण्यतै: शुभै:
ज्ञान मुद्रा वृतं जाप्य सर्वत्र कर्मणि (४०)

अर्थ:- सभी कार्यों में तुरंत के खिले हुए तथा ढक कर लाये हुवे फूलों से ज्ञान मुद्रा से घिरा हुवा जाप करे ।

गृहीत्वा त्पूरकेणापि कुंभकेन जपेततः ।
रेचकेन विमुंचेत पुष्प जाप्य विद्यौ सदा (४१)

अर्थ :- फूलों से जाप की विधि सदा ही पूरक प्राणायाम से फूल लेवे, कुंभक से जपे और रेचक से फूल को रख देवे

नाद बिंदु कला कांतं बीजाक्षर विदर्भितं
आश्रत्य वदनांतस्थं जपेन्मंत्र मति स्फुटं (४२)

अर्थ:- बिन्दु और स्वरों से युक्त बीजाक्षरों में मंत्र के एक अक्षर को अपने नाम के एक-एक अक्षर के साथ गूंथ कर मंत्र को इस प्रकार जपे कि इसका उच्चारण मुख में ही रहे और कानों में सुनाई नहीं देवे ।

पूर्वाशाभि मुखो विद्वान उत्तराभि मुखोथवा
पूजांश्रेयोथवा जाप्यं सुधी कुर्य्यादिह निंशं (४३)

अर्थः- पंडित पुरूष पूजन कल्याण के कार्य अथवा जाप को सदा ही पूर्व या उत्तर दिशा की ओर मुख करके करे।

रजन्यां मंत्र सिद्धार्थं जाप्यं कुर्यात् यथोडचितं
पंच पंच शतं नित्यं यद्वायावन्मन स्थिरं (४४)

अर्थः- मंत्र को सिद्धि के वास्ते रात्री के समय में प्रतिदिन पांच-पांच सो या जब तक मन स्थिर रह सके जाप करे ।

नाम जाप्य विधौ होमं कुर्याज्जाप्य दशांशत :
जापे कृतेपि होमेन बिना मंत्रो न सिद्धयति (४५)

अर्थः- मंत्र के नाम की जाप की विधि में उसका दसवां भाग होम अवश्य करे, क्योंकि जाप्य करने पर भी मंत्र होम के बिना सिद्ध नहीं होता है ।

होम विधि शचा । होम की विधि यह है
महिषाक्ष गुगुलस्य विनिर्म्मितं चणक मात्र वहिकाभिः
होमं त्रिमधुर युक्तं कर्तव्यं सिद्धि मिच्छद्भिः (४६)
मधु दुग्धं घृतं चैव कीर्तितं मधुर त्रयं
एतत् त्रयं विमिश्रास्ता होम यो दुलिका कृति (४७)

अर्थः- सिद्धि के चाहने वालों को भेसा गूगल की चने के बराबर गोलियां बनाकर उनके साथ त्रिमधुर को मिलाकर होम करे ।

दीर्घं विस्तार मे तस्य कुंडस्य कर मात्रतः
त्रिकोणं भूमि कुंडस्याधो मार्ग वह्नि संभृतं (४८)
सराव संपुटे लेख्यं षट् त्रापावक मंडलं
कुंडातः स्थापयेत चतस्त्रो ऊर्द्ध खदिशनलं (४९)

अर्थः- इस एक हाथ लम्बे चौडे त्रिकोण कुंड को पृथ्वी के अन्दर इस प्रकार खोदे कि नीचे का भाग अग्नि से ढका रहे ।

अर्थः- दो शराबों का मूह से मूह मिलाकर उनमें छह बार अग्नि मंडल लिखकर रखे फिर उन शराबों को कुंड के अन्दर रख कर उसके उपर खेर की अग्नि रखे।

कलि काल प्रभावेन पाप प्राग्भार तोपिवा
एक स्मिन्मंत्र सं सिद्धि र्दश्यते नैवयद्यपि (५०)

अर्थः- कलि काल के प्रभाव से अथवा पूर्व संचित पाप के बड़े भारी भार के कारण यद्यपि किसी एक मंत्र में सिद्धि दिखलाई नहीं देती ।

तथापि जाप्य होमाद्यै र्नौमनः क्षोभमाप्नुयात्
पापं प्रलीयते जाप्या दात्मनः पुण्यमक्षयं (५१)

अर्थः- तो भी जाप और होम आदि के द्वारा मन को क्षोभ की प्राप्ति होने के कारण जाप से पाप नष्ट होता है और अक्षय पुण्य प्राप्त होता है ।

तपो दानं श्रुतं तीर्थ मित्यादौ धर्म संचयः
सं सिद्ध मंत्र जाप्यस्य कालो ना क्रमतेनतु (५२)
यथा जलद संघातः क्षीयते पवनाहतः
पुण्य मंत्र जपोद्भत स्तथां पाप समुच्चयः (५३)

अर्थः- तप दान शास्त्र और तीर्थ आदि से धर्म संचय किया जाता है किन्तु मंत्र को सिद्ध करके इकट्ठे किये हुए धर्म पर काल भी आक्रमण नहीं कर सकता है

अर्थः- जिस प्रकार हवा की टक्करों से बादलों का समूह नष्ट हो जाता है उसी प्रकार पुण्य मंत्र के जाप से पाप का समूह भी नष्ट हो जाता है ।

अनन्त भव लग्नस्य पाप पंकस्य देहिनां
मंत्र जाप्याद्विनान्य द्धरणं विद्यते क्वचित् (५४)
देवे धर्मे गुरौ मंत्रे तस्मादास्ति क्यमुद्वहन्
पुण्य मंत्र जपं कुर्यादात्मनः सिद्धि वांछया (५५)

अर्थः- प्राणियों के अनन्त जन्मों से लगी हुई पाप रूपी कीचड़ को मंत्र के जाप के बिना और कोई भी धोने में समर्थ नहीं है ।

अर्थः- अतएव अपनी सिद्धि की इच्छा करनेवाला देव धर्म गुरु मंत्र में श्रद्धा रखता हुआ पुण्य मंत्र का जाप करे ।

तस्मिन् सिद्धे महामंत्रे ततः कार्यैच्छाया बुधः
अष्टोतर शतं पंच सहस्त्रं वा जपेन्निशि (५६)

धम्मार्थमोक्ष विद्या सुकुदेंदु द्युति सादरं
पीतं स्तंनेरूणं वश्ये कृष्ण मुच्चाटने तथा (५७)

अर्थः- उस महा मंत्र की सिद्धि हो जाने पर पंडित पुरूष उपस्थित कार्य की सिद्धि पर उस मंत्र का रात्रि में १०८ या पांच हजार जप करे

अर्थः- मंत्री धर्म के वास्ते मोक्ष केविधानो में मंत्र का कंद पुष्प तथा चंद्रमा की कांति के समान श्वेत ध्यान करे स्तंभन में पीला वशीकरण में लाल और उच्चाटन में काला ध्यान करे ।

ॐ ह्रीं अक्षरं वेदं विद्युदंड प्रभासुरं
ध्यायेन्मंत्री सितं शांतौ दीप्तये कार्ये यथादितं (५८)

मंडलांतर्गत चक्रं चक्रांतं मंडलाक्षरं
अक्षरांतर्गतं बीजं बीजातः साध्यनायकं (५९)

अर्थः- मंत्री उस मंत्र यंत्र के अक्षरों और देवता को शांति और दीप्ति के कार्यो में बिजली के दंड के समान चमकने वाला श्वेत का ध्यान करे ।

अर्थः- मंडल के बीच में चक्र चक्र के बीच में मंडल के अक्षर और अक्षरों के बीच में बीजाक्षर और बीजाक्षर के बीच में साध्य और साधक का नाम होता है

चतुरस्तं पार्श्व कोणभ्यंतरेच क्षि ल अक्षरं
वज्राकितं पीत वर्णं विस्तीर्णं भूमी मंडलं (६०)

ऊर्द्धाधः पयुतं पार्श्वे वकारांकित मुज्वलं
सुधा स्यंदि भवेद्वारि मंडलं कलशाकृति (६१)

अर्थः- पृथ्वी मंडल चौकोर पार्श्व में क्षि अक्षर और कोणों में ल अक्षर वाला वज्रो से युक्त पीले वर्ण का और विस्तीण होता है

अर्थः- जल मंडल कलश के जैसे आकार वाला उपर और नीचे प अक्षर सहित पार्श्व में वकार सहित उज्ज्वल और अमृत बहाने वाला होता है ।

त्रिकोणं मध्य रेफं च सप्त सप्तार्चिषा कुलं
कोणाग्रे स्वस्तिको ॐकार मारक्तं वह्नि मंडलं (६२)

अर्थः- अग्नि मंडल तीन कोणो वाला बीच में रेफ (रकार) युक्त सात-सात ज्वालाओ से व्याप्त कोणे के अग्र भाग में स्वास्तिक तथा बीच में ॐ कार से युक्त लाल वर्ण का होता है ।

ऊर्मि बिंदु वृत्त वृत्तं कृष्ण स्वाक्षर गर्भितं
चलं वायु पुरं वृतं वृतं नीलं हां कं नमः पुरं (६३)

पार्थिव मंडलं स्तंभे धर्मार्थां दौचवारिण
वायव्यं द्वेषणोचाटे आग्नेयं वश्य कर्माणि (६४)

अर्थः- वायु मंडल (ऊर्म्मि विंदु) पं बीज से घिरा हुआ गोल और काले रंग का स्वा अक्षर से युक्त होता है ।

अर्थः- (नभ) आकाश मंडल हा अक्षर से युक्त नीला और गोल होता है । पृथ्वी मंडल को स्तंभन कर्म में जलमंडल को धर्म अर्थ आदि में वायु मंडल को विद्वेषण और उद्याटन में तथा अग्नि मंडल को वशीकरण में लगाना चाहिये ।

कार्या दिव्यादिके स्तंभे पीतं बीज विमध्यगं
द्वेषे साध्य द्वयं कृष्णं परस्पर परांमुखं (६५)

रोगादिव्यसने प्राप्ते वध चौर नृप गृहे
संहारणे जपेन्मंलं रिपोरू च्चाटने सितं (६६)

अर्थः- (अग्नि) दिव्य वस्तु आदि के स्तंभन में मंत्र के बीच में पीले रंग के बीज को रखना चाहिये। अर्थः- विद्वेषण में काले रंग के साध्यों के नाम को एक दूसरे से विपरीत (परामुख) करके रखे रोग आदि कष्ट के आने पर फांसी चोरो राजद्वार मारण या शत्रु का उद्याटन करने में मंत्र का असित ध्यान करे ।

आत्मीय पाद पतित महंदक्षर मध्यगं
उदगच्छद्भास्करा रक्त वश्ये साध्यं विचंतयेत् (६७)

वशीकरण में साध्य को अपने पैरों में पड़े हुए अर्हत अक्षर (हँ) के बीच में पड़ा हुआ और मंत्र को निकलते हुए सूर्य के समान लाल ध्यान करे।

क्षीर धारोज्वल स्वांतं कर्म मालिन्य वर्जितं
स्व मर्हद्बीज मध्यस्थं धर्मादींपौ विलोकयेत् (६८)

अर्थः- धर्म अर्थ काम आदि में अपने हृदय को क्षीर समुद्र की धारावो के समान कर्मो की मलीनता से रहित और अपने आपको अर्हत (हँ) के बीच में बैठा हुआ देखें ।

पूर्वाह्ने वश्य कर्माणि मध्याह्ने प्रीति नाशनं
उच्चाटनमपरान्हे संध्यायां मारणं स्मृतं (६९)

शांति कर्मार्द्ध रात्रौ च प्रभाते पौष्टिकं तथा
वश्यादन्यानि कार्याणि सव्य हस्ते नियोजयेत् (७०)

अर्थः - वश्य कर्मो के दुपहर के पहिले विद्वेषण कर्म को दुपहर को और उच्चाटन कर्म को दुपहर पीछे और मारण कर्म संध्या के समय करे ।

अर्थः- शांति कर्म को आधी रात में और पौष्टिक कर्म को प्रातः काल में करे ।
वशीकरण और आकर्षण के अतिरिक्त अन्य कार्यो को दाहिने हाथ से करे।

वश्य विद्वेषणोच्चाट स्तंभनाकृष्टि शांतिके
सोमाग्नेय मरूत्पूर्वे दक्षिण पश्चिमादिशः (७१)

एवं मंडल दिक्काल बीज वर्ण विशारदः
एकाग्र मानसः कार्य साधये द्वांछितं बुधः (७२)

वश्य कर्म को उपर दिशा में विद्वेषण को पूर्व दक्षिण के बीच में अग्नि कोण में उच्चाटन को पश्चिमोत्तर वायव्य कोण में स्तंभन को पूर्व दिशा में आकर्षण को दक्षिण दिशा में और शांति कर्म को पश्चिम दिशा में करे ।
पंडित पुरूष इस प्रकार मंडल दिशा काल और बीजाक्षरों को जान कर एकाग्रचित्त होकर कार्य को सिद्ध करे ।

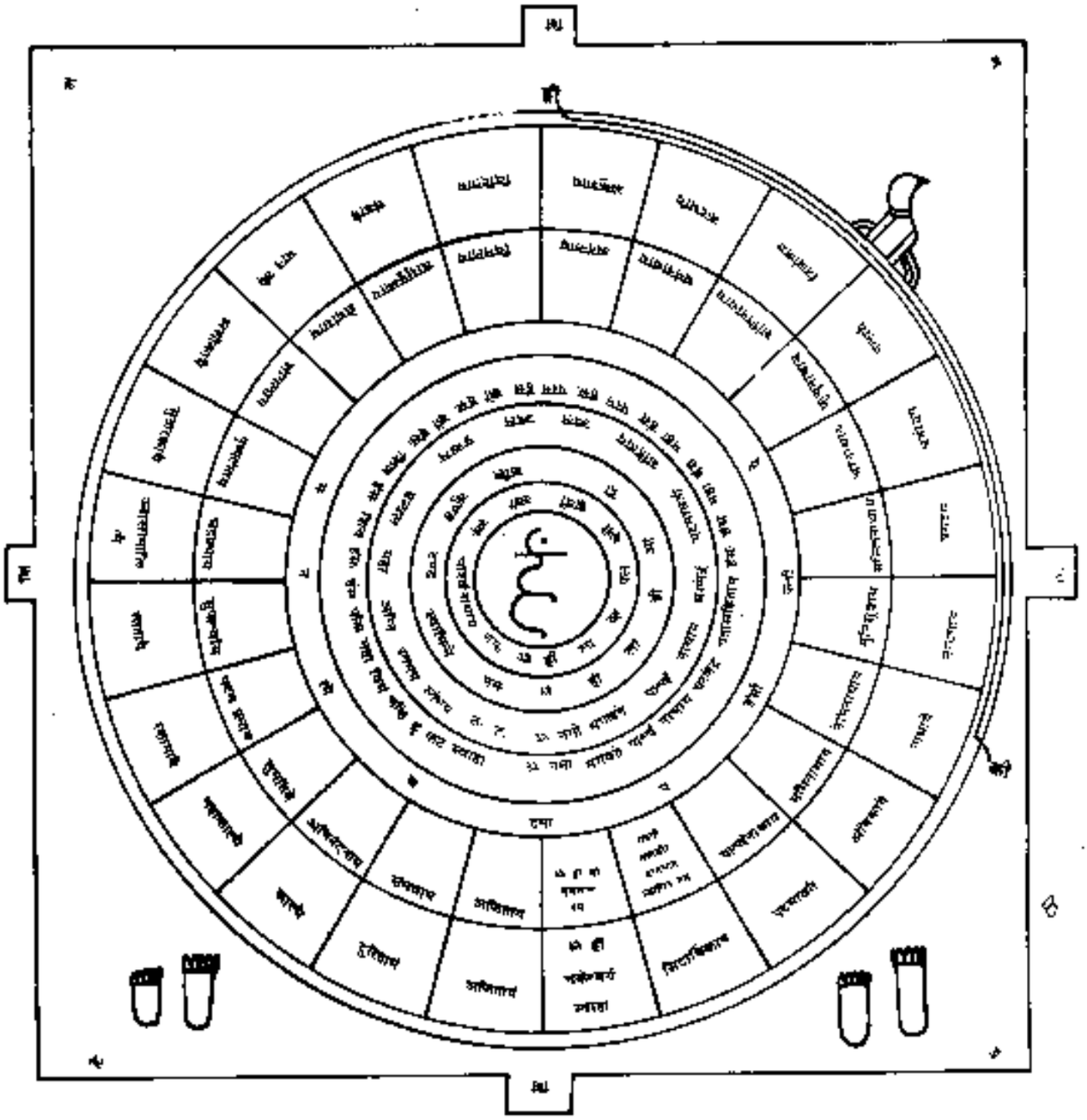

अथातः संप्रवक्ष्यामि श्री मपार्श्व जिनेशिनः
धर्मार्थ काममोक्षाणं निदानं ध्यानं ध्यान मुत्तमं (१)

अर्थः- अब धर्म अर्थ काम और मोक्ष के कारण श्री पार्श्वनाथजी के उत्तम ध्यान का वर्णन करूंगा।

चतु र्विंशति प लाढयं पक्षांतं कर्णिका गतं
स्वर्ण सिंहासनासीनं समवसृति मध्यगं (२)

पूर्णेंदु मंडलाकारं छत्र त्रय विराजितं
मुक्ता कांति दलै र्दिव्यै र्वाच्य मानं सुरा सुरै (३)

अर्थः- चौबीस पत्रों युक्त कमल की कर्णिका के उपर समवशरण के बीच में सोने के सिंहासन पर विराजमान

अर्थः- पूर्ण चंद्र मंडल के आकार वाले मोतियों की कांति के समान दिव्य कांति वाले तीन छत्रों छों से सुशोभित सुर और असुर से स्तुत किये जाते हुए ।

धरणोरंग राजेन पद्मावत्या सनित्यशः
पार्श्वच दक्षिणे वामे सद्भक्तया कृत सन्निधिः (४)

अर्थः- दाहिनी तथा बाई तरफ भक्ति से खड़े हुए नागेंद्राधिपति धरणेंद्र और पद्मावती देवी सहित

अमृत श्राविणोजंतु सर्व संमोहहारिणां
दिष्टवा सेविनां धर्म विश्व लक्ष्मी प्रदायिकं (५)

अर्थः- सब संसार के प्राणियों के मोह को नष्ट करने वाले अमृत को बरसाते हुए धर्म को सेवन करने वाले समस्त संसार की लक्ष्मी के देने वाले

भवार्णव पतज्जंतुयान पात्रमभंगुरं
व्याधि जन्म जरा मृत्यु वन वन्हि धनाधनं (६)

अर्थः- संसार रूपी समुद्र में गिरते हुए प्राणियों के लिये कभी न टूटने वाले जहाज स्वरूप जन्म जरा मृत्यु के रोगो रूपी वन के लिये महा भयंकर अग्नि स्वरूप

मोह ध्वांत समाक्रांत वस्तु वचार भास्करं
विश्व लोक चकोराक्षी संपूर्णेक निशा करं (७)

अर्थः- मोह रूपी अंधकार से पकड़े हुए वस्तु तत्व के विचार के लिये सूर्य संपूर्ण लोक रूपी चकोर के नेत्रों के लिये पूर्ण चंद्रमा को

नमन्नराधीश मौलि मालार्चित क्रमं
पुण्य पाप विनिर्मुक्त मपि पुण्यैककारणं (८)

अर्थः- नमस्कार करते हुए राजाओं इंद्रों के मुकुटों की माला से पूजित चरण वाले पुण्य और पाप से रहित पुण्य के एक ही कारण

सर्वातिशय संपूर्ण सर्व लोक पितामहं
सर्व सिद्धि मयंदेवं सर्व सत्वाभय प्रदं (९)

जगत्पूज्यं जगद्वंद्यजगद्देवं जगदरं
जगच्चूड़ामणिं जगन्नाथ जगत्कल्प मही रहूं (१०)

अर्थः- सर्व अतिशय से पूर्ण सब लोक के पितामह सर्व सिद्धि रूप देव सब प्राणियों को अभय दान देने वाले जगत में पूज्य जगत से नमस्कार किये जाने योग्य जगत के देवता जगत के गुरु जगत के स्वामी जगत में सब से उत्तम जगत के कल्प वृक्ष ॥

पुण्यानुवंधं पुण्यानां सारै रिव विनिर्मितं
तुषार हार कर्पूर गौक्षीरेन्दु सुधोज्वलं (११)

विश्व त्रयोप काराय परमात्मानमिव स्वयं
सर्वान् सुधाप्ते शिख रादवतीर्ण महितले (१२)

अर्थः- पुण्य के कारण से बंधे हुए को स्वरूप धारी सार रूप बरफ कपूर गो दुग्ध चंद्रमा और अमृत के समान उज्वल

अर्थः- तीनो लोक के उपकार के लिये स्वयं परमात्मा के समान सब को अमृत का पान कराने के लिये लेक के शिखर से पृथ्वी पर उतरे हुए

अनंतांनद निस्पदं सुधा सिंधु सुधा करं
राग द्वेषोजितं ध्यायेत् श्री मपार्श्वं जिनेश्वरं (१३)

अर्थः- अनन्त आनन्दामृत के निश्चल समुद्र मे के चंद्रमा और राग द्वेष रहित श्रीमान पार्श्वनाथजी जिनेश्वर का ध्यान करे

द्वादशामि कुलंकं यत्किंचित दुर्लभं लोके यद्दूरं
यच हुष्करं पार्श्वनाथ भवत्पादौ वरंयति स्वंय बरः (१४)

अर्थः- लोक में जो कुछ भी दुर्लभ दूर और दुष्कर है वह है भगवान आप के स्वयं वरण करने वाले चरण वही देते हैं।

तीर्थाधिनाथ कमलापि समुत्सु के वितं ।
यांछितपथित निर्मल पुण्य राशि (१५)

देवाधिदेव मरिवलारि कंराद्र सिंह
य: पार्श्वनाथ मिह सं स्मरति त्रिसंध्यं (१६)

अर्थ:- हे तीर्थेश्वर लक्ष्मी भी आप से लीन हुई के समान मानो प्रसिद्ध और निर्मल पुण्य की राशि की इच्छा करती है

अर्थ:- इस प्रकार तीनों संध्यायों के समय देवतावों के देवता समस्त शत्रु रूपी हाथियों के लिये सिंह रूप श्री पार्श्वनाथ जी भगवान का स्मरण करना चाहिये ।

प्रभु ध्यात्वा ततो ध्यायेत कै सरेषु दलेषु च
मंत्राक्षराणि तीर्थेशान तत: शासन देवता (१७)

एकैक मक्षर देवं विश्वद्योत करं स्मरेत्
संन्निध्य कारिणी देवता सर्वा: प्रभा (१८)

अर्थ:- भगवान का इस प्रकार ध्यान करके फिर केशर और दलों में मंत्र के अक्षरों तीर्थंकरो और सब शासन देवियों का ध्यान करे

अर्थ:- एक-एक अक्षर देव और सब देवियों को समस्त जगत को प्रकाशित करते हुए ध्यान करे

एतद्ध्यानात् पलायंते क्षुद्रोपद्रवव्याधया
अविद्या प्रलेयं यांति सन्निधौ सति देवता (१९)

पारयित्वा ततो ध्यानं साक्षादिति पुर: स्थित:
देवाधि देवं श्री पार्श्व स्तुवं नित्य महोत्सवै: (२०)

अर्थ:- इस ध्यान से जो भी छोटे-छोटे उपद्रव और रोग होते है यह सब भाग जाते है और देवियों के पास आने पर अविद्याएं पूर्ण रूप से नष्ट हो जाती है

अर्थ:- इस प्रकार साक्षात् सामने खड़े हुए के समान ध्यान करके फिर देवाधि देव श्री पार्श्वनाथजी का बड़े बड़े स्त्रोतो से स्तुति करे ।

॥ इति ध्यानाधिकारस्तृतीय ॥

एवं श्री पार्श्वनाथस्य मंत्र यंत्र पवित्रतः
गुरूपदेशतः प्रोक्तः सम्यगाराधन क्रमः (१)

प्रभोः प्रसाद माहात्म्यक परिज्ञातु
महंति स्वस्य बुद्धया नु सारेण लेश मात्र मुदिरितं (२)

अर्थः- इस प्रकार श्री पार्श्वनाथजी भगवान के पवित्र मंत्र यंत्र और अराधना क्रम का गुरू के उपदेश के अनुसार वर्ण किया गया है

अर्थः- इस भगवान के प्रसाद से पूर्ण महत्व को तो भला कौन जान सकता है किंतु यहां अपनी बुद्धि के अनुसार थोड़ा सा ही वर्णन किया गया है ।

दाक्षिण्येनो परोधेन लाभालाभ भयादिभिः
मिथ्या दृष्टौ दुर्विदग्धे नैव मंत्रं नियोजयेत् (३)

एतद् गुण विहीनेपि लोभाद्यैर्यः
प्रयच्छति शिष्ट मात्मानमत्यं संतंतीयं विनाशयेत् (४)

अर्थः- इस मंत्र को चतुरता अनुरोध लाभ अलाभ अथवा भय आदि से मूर्ख मिथ्या दृष्टि को कभी नहीं देवे जो पुरूष इस मंत्र को इन गुणों से शून्य पुरूष को लोभ आदि से देता है वह अपने शिष्टाचार, आत्मा और वंश तीनों को ही नष्ट कर देता है ।

॥ दीक्षा विधि ॥

संघ पूजां विधायासौ कृत्वा तीर्थप्रभावनां
गृन्हीयादेन मामायं महोत्सव पुरस्सरं (५)

अष्टम्यां च चतुर्दश्यां ग्रहणे दीप पर्वणि
चंद्रा तारा वले शिष्यं शुभ लग्ने दीक्षयेद्गुरू (६)

अर्थः- इस मंत्र को संघ की पूजा और तीर्थ की प्रभावना करके बड़ा भारी उत्सव मना कर लेवे
अर्थः- गुरू शिष्य को अष्टमी चतुर्दशी ग्रहण, दीपमालिका या उत्तम चंद्रमा और नक्षत्रों के होने पर उत्तम लग्न में ही दीक्षा देवे

नैवेद्य फल दीपाद्यै एर्हत्संख्यै मनोरमैः
पूजयित्वा प्रभुं चक्रं दधानंमस्सहैमकं (७)

एतदादाय लभिमन् राज्यादपि गरीयसा
आत्मानं बहु मन्येत् श्रद्धा संवेग तत्परं (८)

अर्थः- चौबीस उत्तम उत्तम नैवद्य फल दीप , और सोने आदि से भगवान की पूजन करके चक्र को धारण किये हुए

अर्थः- इस विद्या को लेकर श्रद्धा और वैराग्य में लगे हुए राज्य के भी लाभ से इस लाभ को बहुत अधिक समझ कर अपने को अहो भाग्य समझो

ब्रह्म चक्रे चक्राधि विधिना पूर्व वासरे
आराधयेदि मंतं यावज्जीव मखंडित॥
इति दीक्षा विधिः

अर्थः- इस मंत्र को जन्मभर अखंडित रूप से यंत्र आदि की विधि से ब्रह्म चक्र में आराधना करे

॥ श्री पार्श्वनाथ जिनपति चक्रं मोक्षार्थेनारचितं॥

अर्थः-यह श्री पार्श्वनाथ जी भगवान का चक्र मोक्ष की इच्छा करने वालों के वास्ते बनाया गया है।

श्री पार्श्वनाथाय नमः
श्री भद्र विद्यानंदी स्वामी विरचित
॥ श्री कलिकुण्ड कल्प ॥

कलिकुण्ड नमस्कृत्य पार्श्वनाथाभिवाचकं ।
कलिकुण्ड प्रभेदानं वक्ष्ये साराधन क्रमं ॥ १ ॥

अर्थः-श्री पार्श्वनाथ स्वामी के वाचक कलिकुण्ड को नमस्कार करके कलिकुण्ड के भेदों को आराधना विधि सहित कहूँगा ।

हूंकारं ब्रह्म रूद्धं स्वर परि कलितं वज्र रेखाष्टभिन्नं ।
वज्र स्थाग्रांतराले प्रणवमनुप मानानाहतं सश्रणिंच तद्विदंते

वार्णांतद्यान संपिंडान ह भ म र घ झ स खान वेष्टये
वज्राणां यंत्र मेतत्परकृत पर विद्या विनाशे प्रयुक्तं ॥

अर्थः- ब्रह्म (ॐ) से घिरे हुए हुंकार को स्वरों से घेर कर उसके चारों तरफ आठ वज्र रेखाओं से बँधा हुआ हो और प्रत्येक अतंराल में अनुपम (ॐ) बीज अनाहत् (उ हीं) तथा ह भ म र घ झ स ख पिंडो से युक्त हो इस वज्रों के यंत्र का प्रयोग दूसरों की विद्या को नष्ट करने केलिए किया जाता है।

ॐ ह्रीं श्रीं जैन बीजं तदुपरि कलिकुण्डेति दंडाधिपाद्यं स्फां स्फीं स्फूं स्फौं: स्फः ॥

इति चतुरतोपात्मविद्यां च रक्ष रक्षेत्यन्यस्य
विद्यां स्फूरतिमनुपमं छिंद भिंद द्वयांते हुं फट
स्वाहेति मंत्रं जपतु दृढ़: मना अन्य विद्या विनाशे ॥ २ ॥

अर्थः- ॐ ह्रीं श्री जैन बीज (ह्रीं) लिखकर उसके ऊपर कलिकुंड स्वामिन्नतुल बल वीर्य पराक्रम दण्डाधिपति स्फां स्फीं स्फूं स्फें स्फः आत्म विद्यां रक्ष रक्ष पर विद्यां छिंद छिंद भिंद भिंद हुं फट् स्वाहा।

अर्थः- इस मंत्र को दूसरे की विद्या के नाश के लिए दृढ़ मना होकर जपना चाहिये।

ॐ ह्रीं श्रीं हूं कलिकुंडदंड स्वामिन्नतुल बल वीर्य पराक्रम स्फां स्फीं स्फः स्फें स्फूं देवदत्तस्य सर्वकार्यं सिद्धिं कुरु कुरु आत्म विद्यां रक्ष रक्ष परविद्यां छिंद छिंद भिंद भिंद हुं फटस्वाह ॥

इति पर विद्या छेदन मंत्रोद्धार:

एते पिंडा समर्था: क्ष ह्र भ म य र झोन युक्ता:, प्रकर्तुमत्यांनां सर्वदाहज्वर भर हरणं सर्व पीडाविनाशं यंत्र श्री खंडालिप्तेलिखत सु विशदें कांश्य पात्रे त्रिमुष्टि प्रोन्नत्पादर्म यष्टा विविध गुणयुतो मंत्रवादी समर्थ:॥

अर्थ:- उस पर विद्या छेदन मंत्र में उन पिंडों के स्थान म ह भ म य र घ और झ पिंडो को लिखकर यंत्र बनाने से मनुष्यों के सबप्रकार के दाह ज्वरों का बोझ हलका होकर सब पीडायें नष्ट हो ना तो इस यंत्र को चंदन से तीन मुट्ठी नुंचे काँसी के बर्तन में डालकर लकड़ी से अनेक प्रकार के गुणों से मंत्री को लिखना चाहिये।

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं च बीजं तदुपरि कलिकुंडेति दंडाधिपं च दा हो पेतोग्रपैत्य ज्वर तर हरणं सर्व पीडा दिनांश कुर्यादात्मान्य विद्यानिवहमनुदिनं रक्ष छिंद द्वयंति।
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं बीज (हूं) कलि कुंड दंड स्वामिन:

अर्थ:- अतुल बल वीर्य पराक्रम के पश्चात् पंडित का नाम लिखकर दाह ज्वरादय उपशांति कुरू कुरू लगावे फिर आत्म विद्यां रक्ष रक्ष परविद्यां छिंद छिंद भिंद भिंद लिखकर

श्री ह्रीं ऐं द्वेष बीजं तदुपरि विलिरव्योच्चाट बीज च होमं (हुं द्वेष बीजं उच्चाट बीजं फट् बीजं स्वाहा होमं)

श्री ह्रीं ऐं उच्चाटन बीज हुं फट् और होम (स्वाहा) लगावे इस मंत्र को यंत्र में लगाकर जप करने से अत्यंत तीव्र ज्वर से पीड़ित पुरुष को भी सब पीड़ा दूर हो जाती है।

अस्य मंत्रोद्धार:

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हूं कलिकुंड दंड स्वामिन्नतुल बल वीर्य पराक्रम देवदत्तस्य दाह ज्वराद्युपशांतिं कुरु कुरु आत्म विद्यां रक्ष रक्ष पर विद्यां छिंद छिंद भिंद भिंद श्रीं ह्रीं ऐं हुं फट् स्वाहा।

इति ज्वरोपशमन यंत्रोद्धार:

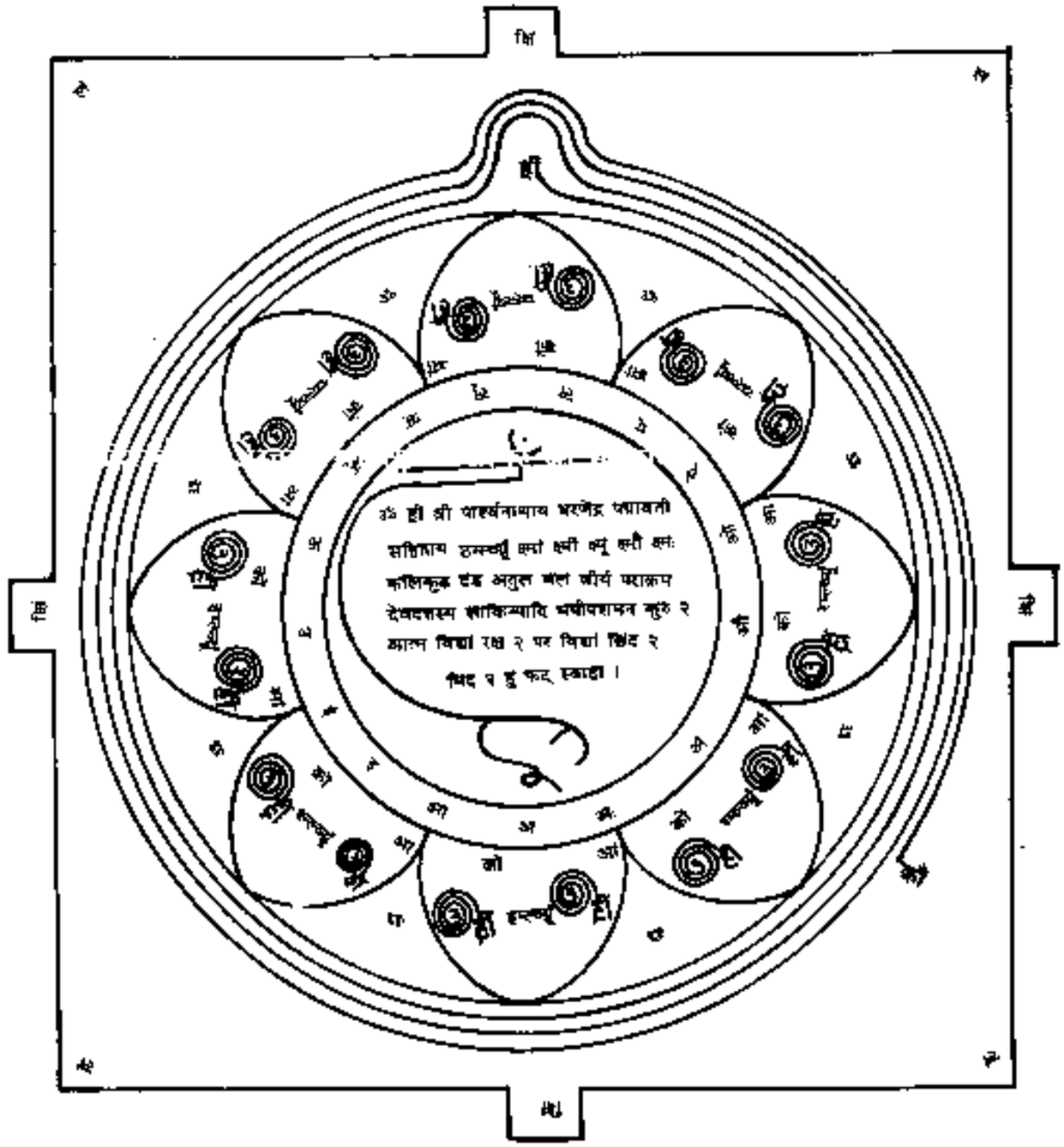

सर्व: पिडैं: प्रसिद्धै: क्ष ह्रं म य व्यां र यैं।
जांतं कांतैश्च टांतै लांतै विंदुर्द्ध रेफै: परिमल
वर यूंकार समर्थै: शाकिन्यो यांति नाशं
पर लक सहजायैग्व संवेष्टयेत्तान्॥
ब्रह्माण्यादैश्च वेष्टया प्रमित भुवनपादै स्तुतैश्चात होम:

अर्थः- उस पूर्वोक्त पर विद्या छेदन यंत्र को क्ष ह भ म य व र घ जांत (झ) कांत (ख) टांत (ठ) और लांत (व) अक्षरों को मलवरम् (म्ल्व्र्यूं) सहित पिंडो तथा व र ल क स ह ज और च बीजों से उनकी आदि में ॐ ह्रीं और मंत्र में होम (स्वाहा) सहित यंत्र वेष्टित करें।

ॐ ह्रीं क्म्ल्व्र्यूं ह भ म य र ध झ ख ठ व वं रं लं कं सं हं जं मं स्वाहा॥
ॐ ह्रीं श्रीं पार्श्वनाथाय फणिपति मंत स्तद वधु टांत पिंडं क्ष्मां क्ष्मीं क्ष्मूं क्ष्मौं: क्ष्म: एतत क्ष्मौ इति च कलि कुंडेति दंडाधिपाद्यां हुं फट् स्वाहांत मंत्रो जनयति च भयं शक्तिनीनां विद्यते भूर्या वध्वा च भव्यो जयतु दृढ़मना सर्व कर्म प्रसिद्धयै॥

अर्थः- ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथाय के पश्चात फणिपति (धरणेन्द्र) और उसकी स्त्री (पद्मावति) का नाम लगाकर टांत पिंडं (ठम्ल्व्र्यूं) क्ष्मां क्ष्मीं क्ष्मूं क्ष्मौं क्ष्मं क्ष्मः के पश्चात कलिकुंड दंड आदि लगाकर अन्त में हुं फट स्वाहा लगावे इस यंत्र सहित भोजपत्र पर लिखकर बाँधने और इसमंत्र को दृढ़ चित्त से जपने से सब कार्य सिद्ध होते हैं।

ॐ ह्रीं श्रीं पार्श्वनाथाय धरणेंद्र पद्मवति सहिताय ठम्ल्व्र्यूं क्ष्मां क्ष्मीं क्ष्मूं क्ष्मौं क्ष्मैं क्ष्मः कलिकुंड दंड स्वामिन् अतुल बल वीर्य पराक्रम देवदत्तस्य शाकिन्यादि भयो मनं कुरू कुरू आत्मविद्यां रक्ष-रक्ष परविद्यां छिंद छिंद भिंद भिंद हुं फट् स्वाहा॥

इति शाकिन्यादि भयोपशांति कृत यंत्रोद्धारः
यंत्र त्रस्य वज्राग्रे विलिखेत् पूर्ववत् क्रमात्
ह्रीं कारं शिरसा वेष्टयं क्रों कारेण निरोधयेत् ॥

अर्थः- उस पर विद्या छेदन यंत्र के वज्रों के आगे क्रम से ह्रीं कार से तीन बार वेष्टित करके क्रों से निरोध करें।

पृथ्वी मंडल मध्यस्थं कुर्याद् यंत्रेशमुत्तमं
य कलिकुंड समाख्यातं रंध्र संख्या समन्नुतं॥

अर्थः- फिर इस रंध्र (आठ) संख्या युक्त कलिकुंड नाम के मंत्र को उत्तम यंत्र राज को पृथ्वीमंडल के बीच में करे अर्थात् इसके चारों तरफ पृथ्वी मंडल बनावे।

मंत्रोपि पूर्ववत् ज्ञेयो यंत्र राजस्य तत्क्रमः
जपं च पूर्ववत् कुर्यात् मंत्रवादी समाहितः ॥

अर्थः- इस यंत्र राज का मंत्र पूर्व के समान हो जानना चाहिये मंत्र वादी इसके जप को भी एकांत चित्त से पहले ही के समान करें।

शाकिन्य पस्मारादि ग्रह पीडां विनाशयेत्।
भगंदरादि रोगाश्च नाश्येन्नात्रशंशयः॥

अर्थः- यह यंत्र शाकिनी भी अपस्मार और ग्रह पीड़ा आदि को और भंगदर आदि रोगों को निस्सन्देह नष्ट करता है।

॥ इति अनेक फल प्रद नव कलिकुंड यंत्रोद्धारः

समाप्त :

अथ तेषां यत्राणां फल व्यावर्णान्नमभिधीयते

अर्थः- अब उन यंत्रो के फल आदि का वर्णन किया जाता है। क्ष, ह, भ, म, य, र, घ, झ, ख, ठ, व, बिन्दु उर्ध्व म ल व र रेफ सहित म्ल्व्र्यूं कार संयुक्त व, र, ल, क, स, ह, ज, म, से वेष्टित कर ब्रह्माणी आदि आठों से वेष्टित करें। प्रमित भुवानाधि को स्तुति करे अंत में होम, मंत्तर स्वाहा लिखे। और पूजन में भी स्वाहा शब्द से होम करें।

अर्थः- हूंकार ब्रह्म रूद्ध अर्थात् ॐ से वेष्टित बाहर स्वरों से वेष्टित और हकार के बाहर वज्र रेखा, आठ भिन्न-भिन्न अलग-अलग रेखा लिखे अंतराल में ईंकार, अनुपम, अनाहत लिखे और आठों दिशाओं में आठ पिंडाक्षर लिखे हम मरघसख लिखे एक पाखंडी में बीच में तो एक पिडांक्षर और दोनों तरफ अनाहत लिखो और कर्णिका माहिकलि कुंड मंत्र लिखो और आठदल कमल में आं वेष्टित करो। फिर माया ह्रीं से तीनबार वेष्टित करो फिर चौकोर पृथ्वी वलय लिखे,दोनो बीज लिखो आठ दिशा में आठ बीज लिखे यं, रं, ल, वं, शं, षं, सं, हं चारों कोण में चार क्षकार लिखें और चारों कोणों में ४ लंकार लिखो फिर मायबीज ह्रीं में वेष्टित करो क्रों से निरोध करो।

उत्तराभिमुखो मंत्री निर्जने कांश्यभाजने
मुष्टित्रय प्रमितया लेखिन्या दर्भ रूपया ।

अर्थः- मंत्री एकांत स्थान में उत्तर को मुख करके कांसी के बर्तन में डाभ की बनी हुई तीन मुट्ठी लम्बी कलम से इन यंत्रों को लिखे।

श्री पार्श्वनाथ पुरुतः शुभ ध्यान परायणः
सुगंधैः कुसुमैः श्वेत शतमष्टोत्तर जपेत्

अर्थः- फिर उत्तम ध्यान में लगा हुआ श्री पार्श्वनाथ स्वामी के सामने सुगंधित श्वेत पुष्पों से एक सो आठ बार जपे।

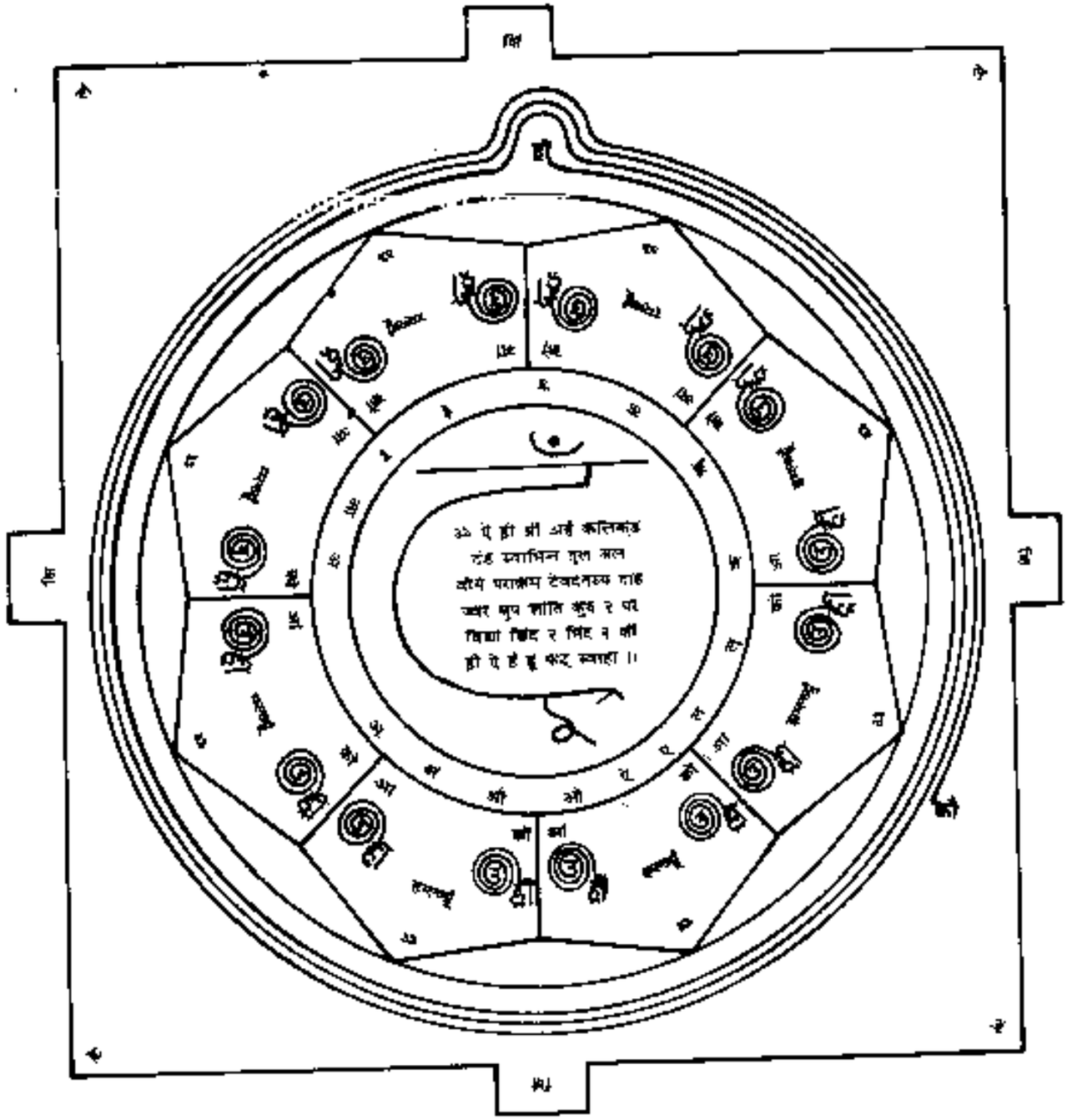

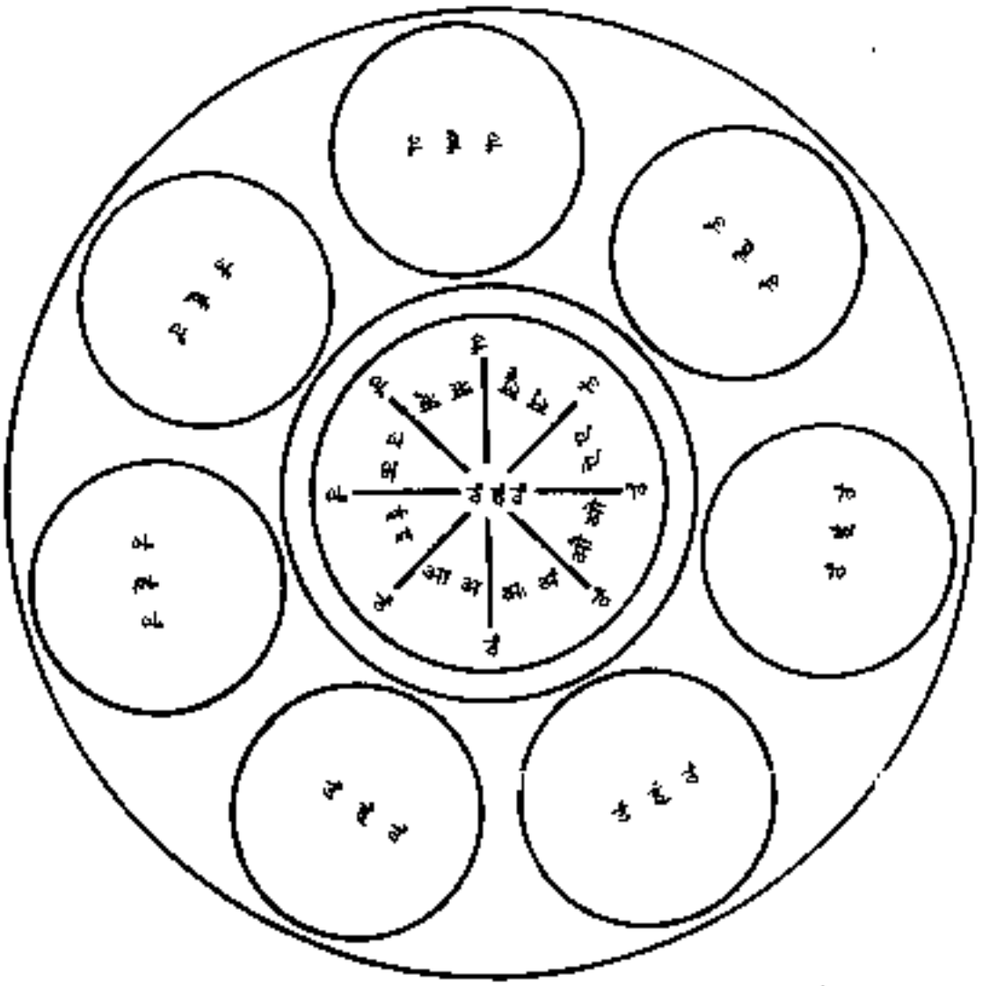

अर्चयित्वा ततो यंत्रं पाययेत् साध्य मंभसा।
इत्येवं कारयेन्मंत्री फलं यावद्दिने दिने दिने॥

अर्थः- फिर मंत्री यंत्र का पूजन करके उस यंत्र को जल से धोकर साध्य के पिला दे इसप्रकार करते हुये मंत्री को प्रतिदिन अधिक अधिक फल होता है।

परविद्या प्रणश्यंति फल निष्फादन क्षमा।
शाकिनी भूता वेताल पिशाच ब्रह्म, राक्षसाः॥

अर्थः- शाकिनी भूत वेताल पिशाच और ब्रह्म राक्षस के फल उत्पन्न करने वाली दूसरे की विद्या नष्ट हो जाती है।

अपमृत्युश्चतं साध्यं न स्पृशांति कदाचनः
शूल विसूचि का जीर्ण लूति विस्फोट कादयः

अभिचार कृता रोगा विष स्थावर जंगमाः
इत्यो वमांदयो रोगाः प्रशमयांति तत तणात्

अर्थः- इससे उस साध्य की दर्द, हैजा, पुरानी खाज, और फोड़े आदि से होने वाली की किसी प्रकार की अपमृत्यु नहीं होती है।

अर्थः- अभिचार से होने वाला रोग स्थावर और जंगम विष तथा अन्यप्रकार के रोग भी उसी क्षण शांत हो जाते हैं।

गर्भिण्यापि सुखेनैव प्रसूतै स्तैस्तनु
मव्यथा मृतवत्सापि जीवं तं वंध्यासु लभते सुतं।

दुर्भागाशुभागां चैव पुष्पिता स्याद्पुष्पिता
चंदनैनामुना योगादा लिंपसि दिनं प्रति।

अर्थः- गर्भिणी के बड़े सुख से बच्चा होता है बच्चा मरजाने वाली के पुत्र चिरायु हो जाते है। और वंध्या को भी पुत्र की प्राप्ति होती है
बद्सूरत स्त्री सुंदर हो जाती है मासिक धर्म से न होनेवाली के मासिक धर्म (ऋतुधर्म) होने लगता है उस चंदन के योग के प्रति उन्नति होती रहती है ।

सिद्धंयति कार्य सर्वाश्च स्वयंमेव मृगादशाः,
न केवलं राज वश्यं जन वश्यं भवत्यदं ॥

अर्थः- मृगनयनी स्त्रियों के सब कार्य स्वयं सिद्ध हो जाते हैं। इससे केवल राज वशीकरण ही नहीं होता बल्कि सभी लोग वश में हो जाते हैं।

ज्वर मुष्णं शीतले च शीतले वारिणापिंत
उष्णोदके स्थितं यंत्रं ज्वरं नाशय व्यद्भुतं

ठंडे जल में यंत्र को डालने से गरम बुखार और गरम जल में डालकर देने से शीत ज्वर उसी क्षण नष्ट हो जाते हैं॥

॥ इति फलस्या वर्णनं समाप्तं॥

कुलिकुंड यंत्र के फल वर्णन समाप्त हुआ।

॥ यंत्र अभिषेक विधि ॥

इदा नीम अभिषेक विधी समभिधीयते
संसाध्यारिवल कल्याण मालो द्वैलोद्यः श्रियम ॥
कुलिकुंड मखण्डात्मा भीष्ट मारोपयाम्यहम्
अनेनाह्वानन स्थापनं सन्निधीकर्णनि कुर्यात् ॥

ॐ ह्रीं श्री क्लीं ऐं हं कलिकुंड दंड स्वामिन् अतुल बल वीर्य पराक्रमअत्रावतर अवतर अत्र आगच्छ आगच्छ अत्र तिष्ट अत्रमम सन्निहितो भव-भव संवौषट् हुं फट् स्वाहा ॥

अर्थः- अब अभिषेक विधि का वर्णन किया जाता है सब प्रकार के कल्याणकारी कार्यों को करने वाले लक्ष्मीवान अखंडरूप कलिकुंड यंत्र का साधन करके अब इच्छा किये हुये कार्य को आरंभ किया जाता है (इसे पढ़कर आह्वानन आदि करे)

अर्थः- इसके पश्चात एक श्लोक से कलश की स्थापना करके दूसरे से कलश से स्नान करावे तथा तीसरे से आठों प्रकार का द्रव्य चढ़ाकर पूजन करें फिर एक-एक श्लोक बोलकर यंत्र को क्रम से जल केले द्रव्यादि के रस घी दूध दही गंधोदक अर्थात् सुगंधित जल से स्नान करावें।

सत्पुरूष दान्मापविराजितेन घटेन पूर्णेनिसपल्लवेन,
समंगलार्थं कलिकुंड देव पदाग्रभूमिं समलङ्करोमि,

कलश स्थापनं

शुद्धेन शुद्ध सरोवर ह्रद पल्वल कूप वापी गुह्य, तटाकादि समाहृतेन।
शीतेन तोयेन सुगंधिना हं भक्त्याभिषिञ्चे कलिकुण्ड यंत्रम्।
नीरै सुगंधै कलमाक्षतौघैः पुष्पेर्हविर्भिवंर दीप धूपैः॥
भास्वत फलौघैः कलिकुण्ड यंष्पै सम्पूजयामी भीष्ट फलायत्कया।

अष्ठ विद्याचर्नम

ये चोच मोचादि स दिक्षुजा ये द्राक्षा रसालादि फलोद्भवाये
ऐभि रसैः स्वैरमृतोपमानै भंक्त्यामि षिञ्चे कलिकुंड यंत्रम्॥

नीरै सुगंधै रित्यादि.....।

चोचादि रस स्वपनम्। (केलारस)

गोरोचनापिङ्गिल पावना युरारोग्य पुष्ट्यादि कृतानराणाम्
द्रा विष्टया सघृत धारयाहं भक्त्याभि षिञ्चे कलिकुंड यंत्रम ।
नीरै सुगंधै रित्यादि.....।

॥ घृत स्नपनम्॥

कुन्दाव दातोत्पल सिन्धवार चंद्राशु मालादव माहसद्भिः
गव्यैः पयोभिः किमु माहिषैश्च भक्त्याभि षिञ्चेकलिकुंड यंत्रम्॥

॥ दुग्ध स्नपनम ॥

ग्राहिष्ठगंधेन कुठार लोढय काठिन्य भाजाकर युग्मकेनभि
स्निग्धेन सच्चारुतरेणम् दाधाभक्त्याभि षिञ्चे कालिकुण्ड यंत्रम्।
नीरे सुगंधी रित्यादि.....।

दधि स्नपनम्

नीरैमीभिन्निर्विंयदाप गंधांनीतै हिंमामोदि मृतालि वर्गै
आपूरितैः कोण घटेश्चुभिर्भक्त्या भिषिञ्चे कलिकुंडयत्रम्।
नीरै सुगंधैरित्यादि.....।

कोणघट स्नपनम

भक्त्याभि षिञ्चान्ति भजंति भक्तया ये विद्ययातैः कलिकुंड यत्रम्।
सुताहितज्ञामर कर्तिनस्ते यान्त्यष्ट कर्म क्षयरूप मुक्तिम् ॥

इति कलि कुंडाभिषेकः समाप्तः॥

अथाष्ट विद्यार्चनामभिधास्ये

हूं कारं ब्रह्म रूद्धं स्वर परिवृत्तमोमं तरागाष्ट बजैः
स्फूर्जत्पाशां कुशाग्रे हंभमर धञ्ञ ठ स खै खा व सानैश्चपिंडैः।

सवेष्टया भीष्ट पुष्टयाद्य विकलि कलिकुंड समाह्वानेयहं
सेतुंभीमां स्त्रि माया परिवृत्तम कदौष्टय दुष्टोप सर्गान।
ॐ ह्रीं श्री जैन बीजं तदुपरि कलिकुंडेति दंडाधिपाय स्फां स्फीं स्फूं स्फैं स्फौं स्फः इति चतुरस्त्र ध्यात्म विद्यां च रक्ष रक्षेत्यं न्यस्य विद्या स्फुरण मनुपमं छिंद भिंद द्वयाते हूं फट स्वाहेति मंत्र जयतु द्रढ़मना मना अन्य विद्या विनाशे॥

अर्थः- हूंकार ॐ रुद्ध १६ स्वरों से वेष्टित आगे ८ वज्र अक्षर स्फूर्जित देदीप्यमान हे पाश अंकुश सहित ह भ म र ध झ स ख सहित हे वेष्टित हे मनोवांचित पुष्टि दायक हे मोहि कलि इति निश्चय करि कलिकुंड समान है माया करि ३बार वेष्टित है दुष्ट का किया उपसर्ग दूर करता है।

मंत्रोद्धार

ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं कलिकुंड दंड स्वामिन्नतुल बल वीर्य पराक्रम स्फां स्फीं स्फूं स्फौं, स्फैं स्फः आत्मविद्यां रक्ष रक्ष पर विद्यां छिंद छिंद भिंद भिंद हूं फट् स्वाहा।

सं साध्याखिल कल्याण मालो देलोदय: श्रियम
कलिकुंड मखण्डात्माभीष्ट मारोपयाम्यहं॥
इत्यादिनां अव्हानन स्थापन सन्निधि करणानि कुर्यात्।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं कलिकुंड दांड स्वामिन्नतुल बल वीर्य पराक्रम: अत्रावतरावतर अत्र तिष्ठति अत्र मम सन्निहितो भव भव संवोषट् हूं फट् स्वाहा॥

यंचत् कांचन रत्न रश्मि रूचिर भृंगारनालोच्छल त्कपूरो।
लवणगंध द्यावदलिभि : सतीर्थं वार्भिर्वरं तेज स्तत्व
रमा हंमादि भिरंहंघोरोप सर्गपहं चार्योश्री कलिकुंड
पार्श्व मसमं यामिष्टं सं सिद्धये॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं कलिकुंड पार्श्व प्रभवेजलं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री खंड द्रव कुंकुमामल मिलत्कर्पूर पूरादिभि
सद्गंधै र्मधु भृन्मुखोच्च मधुरा रावैर्मनोहारिभि:
तेजस्तत्व रामा हं मादि मिरिहं घोरोपसर्गापहं॥
चार्ये श्री कलिकुंड पार्श्व मसमं यामिष्टं सं सिद्धये

ॐ ह्रीं श्री क्लीं ऐं अर्हं कलि कुंड पार्श्व प्रभवे गंध निर्वपामिती स्वाहा।

प्रावच्छारव चारचंद्र किरण श्री स्पर्द्धि गंधाक्षतैः
शालीयै रमलै विशाल कमलैः कोडो धृतैरक्षतै तेजस्तत्व...।
ॐ ह्रीं श्रीं..... अक्षतं...।

पुष्प चंपक पारिजात कनकां भोजे स्मिलन्द्याद्यवै
मंदारामल मल्लिका प्रविकसत्पुन्नाग पुष्पैरपि । तेजस्तत्व...।
ॐ ह्रीं श्रीं .....पुष्पं ....।

स्फूर्ज त्फ ार सुधा विशुद्ध मधुरान्नाज्यैतु निर्यासजै नैंवेद्यैः
सुसुवर्णपात्र भरणाभ्यासै गुंणज्ञोपमैः॥ ॥ तेजस्तत्व.....।
ॐ ह्रीं श्रीं ...चरू....।

ध्वांत ध्वंस समुद्भतो नट शिखा व्याप्तांरालरेलं दीपैर्न्नव्यं
दिवाकर भ्रमकरैः मणिक्यमामासुरै। तेजस्त्व ...।
ॐ ह्रीं श्री ...दिपं....।

कपूरां गुरूदेवदारू दहनोद्य दिव्य धूपैर्मिल।
द्भगांराव वशी कृतामर वर स्त्रैणैर्मनो हरिभिः । तेजस्तत्व....।
ॐ ह्रीं श्रीं ...धूप।...।

खर्जूरावर (कम्राम्रमल) मातुलिंग कदली सन्नाक्ति किरोदवैः।
स्निग्ध स्वादु रसातिरेक विलसत्प्राकैः फलै निस्तुलैः। तेजस्तत्व....।
ॐ ह्रीं श्री.... फलं....।

इत्याराध्यां सुगंधाक्षत कुसुम निवेद्योल्लस द्वीप धूप प्रेषत् ।
सन्नालिकेरामल फल निकरौधैर्न धैर्नाध्यं।

पादौ दिव्यां सुगंधाक्षत कुसुमयुतं प्रोक्षिपाम्यंजलिं
श्री पार्श्व स्यास्यखंड कीर्तेर्ह्य विकल कलिकुंडा कृतेरिष्ट पुष्टैः॥
॥ इत्यष्ट विद्यार्चनं निसंकल्प॥

अथाष्टौपिंडाधिष्टा नृणां कमशः। प्रत्येकाव्हानादिनापि विधान मभि धीयत

। तद्यथा ।

निस्संकल्प विकल्पो धान दधातु जिनेशितुः
कलिकुंडैक भागस्थं हपिंडाराधकं भजेत्।

ॐ ह्रीं ह्मल्व्यूं ॐ ह्रीं ॐ आं क्रों ह्रीं हपिंडाधिष्ठित कलिकुंड दंडा धीश्वं अतुल बल वीर्य पराक्रम श्री मत्पार्श्व भगवतोऽहं तोंग पाला होत्र पूर्वमवतर अवतर तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः मम सन्निहितो भव भव वषट् चोरारी मारि शाकिनी प्रभृति धोरोप। सर्गान पनयापनय ममा भिनमनशेषं पूरय पूरय इदमं अर्घ्यं पाद्यं गंधं अक्षतं पुष्पं दिपं धूपं चरू बलीं स्वस्तिकमक्षतं यज्ञ भागं च यजामहे प्रति गृह्यतां गृह्यतां मिति स्वाहा

इत्याह्वानादिकं कर्म' क्रियते त्रय इच्छया।
तत्सर्वं पूर्णतामिति शांति कादिभिरोदरात्
शुक्ल ध्यान घनोदारखंड चिंत्पिंड मृद्भिभो
कलिकुंडैक भागस्य भापिंडा राधकं भजे।

ॐ ह्रीं भ्मल्व्यूं ॐ ह्रीं ॐ आं क्रों ह्रीं भापिडाधिष्टितेत्यादिशेषं पूर्ववत्।

अर्थः- उज्वल श्वेत वर्ण घट द्वारा ध्यान करे अखंडचित्त करके पिंड का अक्षर विभव का दायक है।

मार मार्गेण निर्भेद मीतभव्य विभितिदं
कलिकुंडैक भागस्थ मपिंडांराधकं भजेत्॥

अर्थः- जो काम मार्ग का भेदक है भव्य जीवोंको अभय करने वाला म पिंड अक्षर का ध्यान करें।

ॐ ह्रीं म्मल्वर्यूं ॐ ह्रीं ॐ आं क्रों ह्रीं मपिंडाधिष्ठतेत्यादि शेषं पूर्ववत्॥

ब्रह्माग्नि मासितानंत भव संभव मूरूह।
कलिकुंडैक भागस्थं रपिक्षराधकं भजेत्।

ॐ ह्रीं रम्ल्व्यूं ॐ ह्रीं ॐ आं क्रों ह्रीं रपिंडाधिष्टतेत्यादि शेषं पूर्ववत्।

घनाघनाद्य संघात धातित्वाद्य धन प्रभो
कलिकुंडै क भागस्थ घपिडाराधकं भजेत् ॥

ॐ ह्रीं ह्मल्व्यूं ॐ ह्रीं आं क्रों ह्रीं घपिंडाधिष्टितेत्यादि शेषं पूर्ववत्

क्षरदक्षर पीयूष पूरा पूरात्म नोजसा
कलिकुंडक भागस्थ झपिंडाराधकं भजेत्।
ॐ ह्रीं झम्ल्व्यूं ॐ ह्रीं उं आं क्रों ह्रीं झपिंडाधिष्ठते त्यादि शेषं पूर्ववत्॥

दुष्टकर्माष्टि कोदाममातंग मद भेदिनः।
कलिकुंडैक भागस्थं स पिंडाराधक भजेत्॥
ॐ ह्रीं स्म्ल्व्यूं ॐ ह्रीं उं आं क्रों ह्रीं सपिंडाधिष्ठते त्यादि शेषं पूर्ववतं॥

श्री मचंडोग्र पार्श्वस्य स्वसौख्य विमुखस्यवै।
कलिकुंडैक भागस्थं स्वपिंडाराधकं भजेत्॥
ॐ ह्रीं स्वम्ल्व्यूं ॐ ह्रीं उं आं क्रों ह्रीं स्वपिंडाधिष्ठतेत्यादि शेषं पूर्ववत्॥

जलगंधामल तदुंलपुष्पैर्नैवेद्य दीप धूप फलैः
कलिकुंड दंड मंडन पार्श्वशस्यावतार या म्यर्च्यं॥
उं ह्रीं श्री क्लीं ऐं अर्हं कालि कुंड दंड पार्श्व प्रभवे अर्घ्यमवतारयामि स्वाहा

। अर्घं इत्यष्ट पिंडानां प्रत्येक पूजाः।
ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं कलिकुंड दंड स्वामिन्नतुल बल वीर्य पराक्रम आत्म रक्ष रक्ष पर विद्यां छिंद छिंद भिंद भिंद स्फ्रां स्फ्रीं स्फ्रूं स्फ्रौं स्फ्रैं स्फ्रः हुं फट् स्वाहा।
अनेन मंत्रेण अष्टोत्तरशत जपं कुर्यात् ।

इस मंत्र का १०८ बार जाप करना चाहिये

अथाशीर्वाद :-
सर्पित्सर्पेशदर्पो स्फुट तरल तरोत्तर फूत्कार वेला॥
संवर्तोत्पत्ति वाताहत शठ कमठोद्भूत जीभूत जातान्॥
खेलत्स्वर्गापवर्गातिर्ज्जल जनित सल्लोल डिंडीर पिंडं॥
व्याजात श्री पार्श्वरो ज्वल विजय यशोराज हंसोवताद्वः।
॥ इत्याशीर्वाद : ॥

ॐ मोमादि समाराध्य माराध्य राध्यतां ययु:
चिवत्स्त्यमित्य हींमह्र कलिकुंड श्रिये श्रिये ॥

अर्थ:- कलिकुंड यंत्र कल्याण सुख मंगल का कर्ता है

कलिकुंड चिंदानंद खंड पिंड नमोस्तुते।
पाखंड खडनो दंड वृतये कृत वृतये॥

अर्थ:- कलिकुंड अखंड पिंड को नमस्कार है यह पाखण्ड का खंडन करने वाला, सत्य स्वरूप प्रगट करने वाला है

तत्वांतर्वर्तिने तत्वा तत्व बोधेद्ध सिद्धये।
तुभ्यमुद्य चिदानंद सपदे संपदे नम: ॥

अर्थ:- तत्व की पहली बात से तत्व ज्ञान की सिद्धि करती है। उद्यातकारी चिदानंद को नमस्कार हो जो संपत्ति लक्ष्मी करता है ।

संसाध्या सिद्ध संसिद्धि सं साध्य सिद्धये
श्री मते कलि कुंडाय नमोस्तैश्रुद्ध बुद्धये।

अर्थ:- सुखकर साध्य है सिद्ध सुख सिद्ध देती है शोभायमान कलिकुंड को नमस्कार हो जो शुद्ध और बुद्ध है ।

कलिकुंड सुधा कुंडे निमज्जन्मनि संत्वयि।
चित्पिंडा खंड शोभाग्य महोन्जोन्नोप सर्यति॥

अर्थ:-अमृत कुंड से उपज्या है चमत्कारी अखंड सौभाग्य का कर्ता है महान उपसर्ग को नहीं होने देता है। नरअमर के ईश्वर हो प्रसन्न चित्त हो सुलभ को दुर्लभ नहीं है।

नरामराहीश्वर मूतयस्त्वयि मपि प्रसन्ने सुलमान दुर्लभा।
यत्वत्प्रसादाद: भवत: सभोग्यापि प्रभोवियोगीश्वर भोग भोग्यापि ॥

अर्थ:- आपके प्रसाद से सब भोज्य सामग्री मिलत है भगवान को भोज्यसामग्री प्रिय है।

विघविघ्नक विभूति भूषिणं त्वामुपति विनिवृतं भूषणं।
कानि कानि कलिकुंड दंडिनं वाधितानि न भजति भक्तिका॥

अर्थ:- विघ्न निविघ्न होय कवि की सीमा होती है अशोभनीय भी शोभा पाती है। कोने कोने में कलिकुंड का भक्त मनो वांछित फल पाता है।

पद्मावती पाणी पद्मोजपूजां प व्योजप्रजांधि पद्मोज युग्मं।
त्वां तोष मीष्टे कलिकुंड दंड स्वामिन्क्यं मादृग लब्ध वोद्याः॥

अर्थः- पद्मावती के हाथ से कमल लेकर पार्श्वनाथजी के चरण कमल की पूजन से मनोवांछित पाता है ज्ञान की भी प्राप्ति करता है ।

तथापि मम चेतसि स्फुरित पद्म नंदिः
प्रभोः पदांबुज युगी ततोमल मतिः ॥

अर्थः- पद्म नंदिजी काचित्त स्फुरायमान होता है प्रभु के चरण युगल की निर्मल बुद्धि से स्तुति से आपका स्तोत्र उत्पन्न होता है।प्रभु के चरण युगल की निर्मल बुद्धि से स्तुति से आपका स्तोत्र उत्पन्न हुआ है। जिससे लक्ष्मी की वृद्धि होय इससे सत्पुरुषों को निर्मल शुद्ध संपदा होती है।

समुन्मीलति तव स्तव समुद्भवो भवतु।
वर्द्धमान श्रिये ततो यम निसं सतां विमल मूल संघेनये।

॥ अथ जयमाला प्रारम्भयते ॥

प्रोद्यत्सन्मणि नाग नायक फटा टोपोल्ल सन्मंडपं
सद्भक्त्या नमदिद्रं मौलि मणिभिर्भास्वत्पदाभोरूहं
प्रोन्मीलन्नक्तपा नील दालि पटली संकाश मुत्पादकं
ध्यायेश्री कलिकुंड दंड विलस चंडोग्र पार्श्व प्रभुः ॥ १ ॥

सुविद्ध विशुद्ध विवाहैद निधान विकाशित विश्व विवेक विद्यान ॥
पिंडवित काम जगज्जय चंडसदा सदयोदय जय कलिकुंड ॥ २ ॥

पयोधि पयोधर धीर निनाद निराकृत दुर्मत दुर्मद वाद
असत्य पथैक पतत्पविदंड सदा सदयोदय जय कलिकुंड ॥ ३ ॥

निराकुल निर्मल शलि निरीहनिगस निरंजन जिन नरसिंह
विपाटित दुष्ट मद द्विपगंडसदा सदयोदय जय कलिकुंड ॥ ४ ॥

कषाय चतुष्टय काष्ट कुठार निरामय नित्य नरामर सार
विदारण धनाधन विघ्नकरंड सदासदयोदय जय कलिकुंड ॥ ५ ॥

अनल्प विवल्प विहीन विकल्प विशल्प विसूल विसर्प विदर्प
विरोग विभोग विखंड विमुंड सदा सदयो दय जय कलिकुंड ॥ ६ ॥

फणीश नरेश महीश दिनेश सुमेश गणेश मुणीश
विदर्क विकाशित शतदल तुंड सदा सदयोदय जय कलिकुंड ॥ ७ ॥

विशोक विशकं विमुक्त कलंक विकाशित विश्व विदूरित पंक
कला कुल के बल चिन्मय पिडं सदा सदयोदय जल कलिकुंड ॥ ८ ॥
निकंदित मोह महीरूह कंद वरप्रद सत्यद सपदं मंदं
त्रिदंड विखंडित माय विखंडसदा सदयोदय जयकलिकुंड ॥ ९ ॥

याता: - कलिल मल न दक्षं योगि योग्योप लक्षं ह्यदय विकलि कलिकुंडो दंड पार्श्वं प्रचडं शिव सुख श्रुम संपद्वास कली वसंतं प्रतिदिन मह मीडे वर्द्धमान रिद्धीं सिद्धयै
निलयलि जल मलयज्र तदुल कुसुमोरू परिमला ममलां ॥
कलिकुंडाय समझ्र श्रद्धयैः ददानि कुसुमांजलिं भक्त्या ।

॥ इति कलिकुंड जयमाला समाप्तः ॥

इदानीं स्तोत्र द्वारेण कलिकुंड मभि धीयते ।
देवाधिदेवं जिन भाषयातं देवाधिपै र्चचित पाद पद्मं

नत्वा जिनेन्द्रं शिव सौख्य सिद्धयैस्तोष्ये पवत्रि कलिकुंड यंत्र ।
पूजा प्रकुर्वंति नरा सुभक्त्या यंत्रस्थये श्री कलिकुंड नाम तेषां
नराणामिद्ध सर्वविद्यानस्यत्यवश्यं भुवि तत्पप्रसाधात् ॥

चित्ताबुजे ये स्व गुरूप्रदेशोध्यायांति नित्यं कलिकुंड यंत्रं
सिहादयो दुष्ट भृगा स्तुलोके पीडां न कुर्वंतिनृणां चतेषां
युक्तां स्तुंवति कलिकुंड यंत्रं सर्वे सदोषा पह युक्तमत्तं
मोक्षानध श्री पर चारु सौख्य प्राप्ति स्तुते तेषां भवतीह सत्यं ॥

यंत्रस्य चिंता हृदयेस्ति यस्य सद्धर्मरक्ता व्रतशील युक्ता:
बध्यापि सत्पुत्रवती भवेत्सालोके क्रमात् स्वर्ग सुखं प्रयांति ॥

स्मरंति यंत्रस्य विधानमेनं नराअहिंसादि गुणा प्रयुक्ता।
ज्वर ग्रहणादी रूजोत्र तेषां प्रयांतिनाशं कुलिकुंड यस्मात्।
सुरासुरैश्चैरपि सेव्यमानं समस्त दोषोज्झित बीजमालं ॥

यत्रं नराये कलिकुंडमेतेयेतन्नित्यं भजंत्यत्र भयं न तेषां।
सर्वाग्नि तोयाहिं विषादि विद्याद्यांति क्षयंयस्य वर प्रसादात्।
तत् श्री जिनेन्द्रस्य सरोज जातं नित्यं नमः -

अर्थः- देवाधिदेव भगवान कलिकुंड पार्श्वनाथजी के चरण कमलों को पूजें नमस्कार करें। मुक्ति के सुख की सिद्धि के लिए पवित्र कलिकुंड मंत्र की स्तुति करता हूँ जो नर भली भक्ति से पूजा करें तो सर्व विघ्न नही होय यंत्र के प्रसाद से चित्तकमल में आपका गुरू के उपदेश से निरंतर ध्यान करे तो सिंह आदि दुष्ट मृग उसको पीड़ा नहीं देवें।

युक्ति से स्तवे तो सर्वदोष हरे और उत्तम पद होय मोक्ष पावे पाप रहित लक्ष्मी श्रेष्ठ मनोहर सुख पावे। अगर इसको प्रतीति सत्य मन में रखे।

यंत्र का स्मरण हृदय में रखे सत्य धर्म में लीन रहे शीलव्रत युक्त होय तो बंध्या के पुत्र होय लोक में अनुक्रम में स्वर्ग सुख पावे।

यंत्र का स्मरण करे समस्त दोष दूर करे या विधान करे जीवरक्षा गुणयुक्त हो तो ज्वर संग्रहणी दूर होय सुर असुर निश्चय सेवा करे समस्त दोष दूर करे । जो इस यंत्र को धारण करे निरंतर भजे तो भयभीत न हो।

सर्व अग्नि जल विष सर्पविष विघ्न दूर होय यंत्र के प्रसाद से मगर जिन चरण कमल को नित्य नमस्कार करे।

॥ इति कलि कुंड कल्प समाप्तः ।।

श्री पार्श्वनाथाय नमः

उवसग्ग भिवहजिण चरण निणमि सिर सास णाद भत्तीये।
कलिकुंड वउरेयं कम्म सहस्सा निवारेयि।

कम्मा समसयलकयणं वा बारं कूर दिट्ठि उवसरग्गे
तंवारयति निग्धं कलिकुंड सुणीविदं कयं।

रक्के वा पर विज्जो थंभनपर विद्वे मोहणे वसीयरणं
तुठितंमण मारण विद्या विद्वेश कम्मभिद्धं
मोदारवीय मझं णामं यं लिखं वसुदयं पदवे
अंगुल वोय सुजुता वालण वीयंदले दले णियमा
मूयं दलयसणो लिक्खं सोह जुंग वाइणिरक्ख माहयाई
कलिकुंड देवपूजा अट्ठसयं कुण हरोपम मुणीहिं
कर कंठ वाहु देशे धारई दयरक्ख सयाणेणियमा
सयल गह मूय शारणि रक्ख्काअरणं महायोरं

अयं रक्षायत्रं

अर्थः- उपसर्ग हरण पार्श्वनाथ जी के चरण मस्तक से नमस्कार कर भक्ति सहित कलिकुंड यंत्र की पूजन करे।
कर्मसहश्र निवारण करें।
कर्म सकल नष्ट होये यह कालिकुंड पार्श्वनाथजी ने कहा है राक्षस कृत उपद्रव, पर शत्रुकृत उपद्रव पर विद्या, मोहन, वशीकरण, स्तंभन, मारण, विद्वेषन कृत सब कर्म नष्ट होय भोजपत्र व वस्त्र पर लिखकर कंठ, बाहू में धारे तो तत्काल शाकिनी ग्रहभूत घोर उपसर्ग नष्ट करें।

सिद्धवसण कंस लिक्खह अंगुल वीयाणीणाम वेठेयं ।
आभिय करमंत वे ठई मुणिवर कलिकुंड तमंतं ।
सिद्धयं कुय सर पूरक कलजु बत्तीस जोभणी सव्वं।
आभियकर मतं वेट्ठर आभियंत सत्तणह वलयं पाइयं॥
इसेय वसूण गंध लेविज्ज रोगि देहपर णासई।
सव्वजराणं परविद्या णासणाइंसन्ति परं।

शांतिक यंत्र

ॐ अर्हन्मुख कमल वासिनी पापात्क्षयं कारिणी श्रुत ज्ञान ज्वाला सहस्र प्रज्वलित सरस्वती अमुकस्य पापं हन हन दह्दह क्षां क्षीं क्षूं क्षौं क्षः क्षीर वर धवले अमृत संभवे वं मं हं सं तं पं द्रां द्रीं इवीं क्ष्वीं हंसः स्वाहा।

अत्रममृतमंत्रः

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः श्री ह्रीं कलिकुंड दंड स्वामिन
सर्वरक्षाधि पतये देवदत्तस्य रक्षां कुरु कुरु स्वाहा

मूलमंत्राऽयं

॥ अद्यमेव रक्षा मंत्रोयं वेष्टन मंत्रश्च ॥

हुंकार रेह जुदं (रेफयुतं) अणल निरुद्धं सरोहं पारंपिरयं (रकार रूद्धं स्वरैः परिस्कृतं) वज्र इरेहमिणं (वज्ररेखाष्टभिन्न) वज्जते (वज्रन्ति) तहयतं लिहह (तथा चतत यत्रं लिख)

कंसेसु भायणामियति मुट्ठि माणेण सकुस दब्भेण।
विर विय विद्या छेयं पर विद्याणां ण संदेहो॥

थाय जरं (स्थावर जंगमं) चियनासमई साहणि भुयाण
रख सा जरका तत र र कमेण णासह दिट्ठ कलिकुंड दंडेण ॥
पुयकडणामियं आमिय सुमंतेणभीय आभियास्मि
कलिकुण्ड दंड जुत्तं अट्ठ सय लूण हतं पावे।

उं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः श्री ह्रीं कलिकुंड दंड स्वामिन्नतुल बल वीर्य पराक्रम पर विद्या छिंद छिंद भिंदभिंद आत्म विद्या रक्ष रक्ष हुं फट्

अयं यंत्र मंत्र।

हुंकार रेफ युक्त अनल वायु तत्व कर निरुद्धकर फिर रेखा भिन्न भिन्न लिखे यह वज्र यंत्र है इसको अष्ट गंध से डाम से लिखो तो परविद्या छेदन हो इसमें संदेह नहीं और छाया ऊपर ली नष्ट करे और शाकिनी भूत राक्षस यंत्र कृत उपद्रव नष्ट होते हैं। कार्य संपूर्ण होते हैं, अमृत मंत्र है सो कलिकुंड दंडयुक्त आठ अतिशय सहित रिद्धी संपद्धा पावें।

अणं च जतं लिखणव गेह मझां सणायतं वेढ़ं।
मयण महि जाणीत्थी वय घइ आभिणाणि॥
सखहिजोईणी रूद्रं जोईणियं जो ईणाय अत्रोण।
जोईयय तवदीववलयं मतं पावहं चवुसट्टिणास परिपारियं।

एव लरमोह जुय जोईणि पत्तेय दल चउरो।
पट्ठमि तिउण माया सिय वसणे लिख सुहगिदे॥

इय मंतेण सुजवियं रत्तय सुणेण छिंदु सुहजुतं कलिकुडं।
मंत संलिखजिण वर संसहस्साणी॥
ॐ हां हीं हूं हौं ह: श्रीं ह्रीं क्लीं ब्लूं यूं स्त्रौं मदन मोहिनी कुरू कुरू त्रिभुवन वश्यं कुरू कुरू वषट॥

अट्ठत्तर मयय सुर्ण अठुतरकमुक दीवाई।
अच्चण कालेदेयं पछास मतयाडिईज्जं॥

तस्स दुसहस्स होमं पूयम हुमहिस खिसम्मि स्संरति
हुयं वड समिपायसुण जयं वरुण दिसि मंति॥

अट्ठ दिसिं हके कं एकं मझंमि वसियकं काउ।
काय स्सणेय पुडियं णाम वहिक्खाम मयेण जुयां॥

सोलह कलाउ एकेकं वेढ़ं अच्छीगय रुद्रं।
कोण कमेण्यलि खं अंतर कोण विचार द्रवणंतं

जोणी कामणि रोहं महि वहि पासगाण बलाणंतं।
तह अट्ठ कोण लिख अंतर कोष्ठास्स आपारं॥

गयरोहं अग्ग दले एहिम ट्ठाण वेठियं सग्धं।
कालि कुंडाइयिाणं कालतय भासियंणाणं॥

ॐ नमो भगवते मदमुदित मोहे वागीश्वरी कलिकुंडं मुक्ती प्रसादेन आं क्रों ह्रीं ब्लें द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः सर्वजन वश्यं कुरु कुरू वषट्।

वसियायरण काम मोहण मणिय जंतेण कलिय कुंडंसि।
सिय वसणे सिय सहोणि खज्जई जामला काई ॥

जाई पणं रत्त चय कर बीरं मल्लियाई इय पसुण।
जव इणित्त्व पमाणं अठसयं आठ दिवस कमे॥

अहवा वेढई सिद्धे जंतं काऊणभट पुरोलिखं।
उबलिं पूप विहाणं पुव्व वहिं जाण सुणि णाहो।

भूमितले णिरवी वित्तं पूपं काउण रक्त कुसुमेण।
घुसई कलि कुंडाणं सत्त दिणे रावपसि राराणं।
तश्य चक्रं समाप्तं ॥

अर्थः- यह यंत्र लिखकर अंदर नाम जो कार्य लिखे वेष्टित यंत्र में करें यंत्र धारण करें तो मनोवांछित कार्य करे।

फिर यह यंत्र सर्वजोगिनी से वेष्टित करे ६४ योगीनी से वेष्टित करे यह यंत्र मोहन है ।जोगिनी चारों तरफ लिखे और कलिकुंड मंत्र मुख करता लिखे जिसके सहश्र वर्ष पर्यंत प्रभाव कहा है।

१०८ दीपक संध्याकाल देवे समभाव कर ध्यान करें।

जिसका २००० होम करे और २० हजार जप करें पार्श्वदिशा में मुखकर जप करें। आठों दिशामि एकाएक और एक मध्ये वशी करण पल्लव पढ़े व यंत्र में लिखे तो कार्य सिद्ध करता है।

१६ कला एक एक वेष्टित करे रोघण करे कोणायां अनुक्रम से लिखे अंतर कोण सहित सो द्रावण संज्ञा है।अंदर और बाहर आठ कोण लिखे अंदर से अंदर आचार्य लिखे गतिरुद्ध अग्रदल में है भांति सर्व स्थान से वेष्टित करें? ऐसा जो कलिकुंड आचार्य उनकी स्तुति पूजा से ज्ञान प्राप्त होता है। ॐ नमो भगवति इत्यादि यंत्र वशीकरण है कलिकुंड स्वामी का यह मंत्र मोहन मंत्र है।जाति पुष्प चमेली लाल कनेर मालती आदि १०८ फूल प्रमाणिक अतिशय कर्मकारी है।

यह यंत्र सिद्ध कर्ता इसे कपड़े के संपुट में लिखकर पूर्व लिखित पुष्प से पूर्ववत् समझकर जाप करें।

इस यंत्र को पृथ्वी में लिखकर लाल फूलों से सात दिन जप करके गाड़ने से राज्य वशीकरण जानो।

आइतियंत मियं णारी पुरूसाणमोति भाईणी।
कलिकुंड मुणिदाणं कहियामियं सव्व लोयसा॥

जोणी कामणि वेयं विलासिणी तहय जोईमाहवई।
सोलह कला णवलयं णामं संलिख णायँवा॥

वाहि गीतं तंवहियं महाहर जोण पासवणोवणीहि।
हेय वहि गयरं णाणं तेण पुरं तत्थ परि परियं॥

पावय पुरु वहि मयणं वणाई उं ममदं संजुत्त।
तेण वह मिय माया खोणीपुर तस्स परि परियंज्ज॥

एवल स पिडं जुदं णामं सं विलिख्य वहि खेलयं।
तेण पुरु म विहयं वायु गुणं पिंड परि परियं॥

अणं जो पि पुराणं मेतं वहि णामं रुद्ध बलयाज्ज॥
महिणा वद्धई अज्झो वाइत्तयं तस्स परिपरियं॥

ॐ णमो भगवति हरोहर मोहमांतगिनी कलिकुंडा वरण मदा रक्त प्रिये रांरां मदन मुदिता वागेश्वरी सर्वा कृष्टिं कुरु कुरु आं क्रों ह्रीं क्लीं ब्लूं ऐं द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः नित्ये क्लिन्नेन मदद्रवे मदनातुरे अमुकी आकर्षय आकर्षय ह्रां ह्री हूं ह्रौं ह्रः श्रीं ह्रीं कलिकुंड स्वामि आज्ञापयति ह्रीं संवौषट्॥

इयं मंतेणाय वेठई जवईज्जं तालतयेण कपं।
पुतूलि सुदापवयणं वर गुहि णाणिस्वमणसम वहि तावणंणियमा॥

इच्छीय पुरूषा इच्छीसत्त दिशोहो तिसा णियमा।
जिण वर कलिकुडाणं कहियमाणं मुणेयव्वा॥

तिल सरिसव लवण जुयं पसुणं समेत परिणयं।
काले णियमिय मणसा फाणई सिकई आईट्ठितिक्काले॥

इह विजा गुइ वरेयं जिणवर मय सामण दायव्वं।
जिणवर मुणियं एवं माणेयं कलिकुंड मुणिणाहई॥

आकर्षण चक्रमिदं

हूयारं रेह युदं अणलाणि रुद्धं कलिही परिपरियं
वज्ज हूरेह वढ़े इरकोणव जट्ठ चंदस्स॥

वेदई पिंड समतं कम च ट म अणाद समट्ठाणं
मणवरयूं अण जूयं वज्जं तेलिक ख पिंडते॥

णाव लिख्यंतं गहणं मद्धणामिण मूल मंत बहि।
कमलदलसय समद्ध पणवमूहं ठेमणम वापार।

मंतते परिलि कूवं एक्केकचण दले णियमा।
हंस दल गाणं, अमिय सुमंतं वहिठेयं।

वारि पुरं महिजत्तं वायु पवाहिरे सुचल इज्जो।
सिय वसणो सुय गंधे सुह जोगे लिक्सतं जंतं।

कणय मय लोहणी ण वरूण दिशी सुद्ध भावे।
फणि अंगे जिण संति संति णाह भावइ भती जापं पंच मंतेण।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः श्रीं ह्रीं कलिकुंड स्वामिन् प्रसादेन णमो अरहंताणं श्री शांतिनाथाय अमुकस्य तुष्टिं पुष्टिं कुरु कुरु ह्यीं क्ष्वीं हंसः स्वाहा।

इयं मंतं जवई कंतं जंतु वरिपमव तुष्टितं
हवई णियमिय मणसा पुज्जंभुण सहस्सेण सिझंति॥

मिय पसुणे जिणगे हे यंते शुद्ध देस।
जवि इज्ज सयल जण राम जंतं तुट्ठि पुट्टि सुहंमेइ॥

णियमेणवंस्स का लंजवमिई सिद्धति सिद्धाणं
सयल जल दाह चोरं इणि कुल णासणं सिग्धं॥

देसस्स राज युद्धि पीडानर पहुईणि घोर उवसग्गां।
णासह दंसण मित्तै भूप पिसाससई सव्वाणी ॥

पौष्टिक चक्र समाप्त:

अर्थ:- यह मंत्र एकांत में जपे तो जंतु और रिपु सर्व संतुष्ठ होते हैं। नियम कर पूजा करें तो हजारों जीव संतुष्ट होते हैं।

पशु जीर्ण होय सो शुद्ध होय सर्वराज जंतु जीव तुष्टि पुष्टि सुख हो। नियमपूर्वकउस वक्त जब सिद्धों को भक्ति करे तो अग्नि जलदाह का नाश होय। देश में राज में पुष्ट नरों में पीडा होय और नर पशु द्वारा घोर उपसर्ग नाश होय। राजा का तथा पिशाच के द्वारा सर्व उपसर्ग नाश होय।

अणं च लिखजंतं अट्ठदलं जुतणेव विहियंतं ।
इमणम समेतं जंगल अंबु पार सुद्धतस्स।

कुटं तरिद्ध मणाणं [illegible] वेष्टिजं।
लिकवईन रूठ दलाणं इंदु पुर संपुटे णियमां।

कुट पंच सुकोणे अट्ठ दिसं तस्स वहि रे कोणे।
पिंडे सुज्अट्ठ लिखं चदं तद्यं तस्स परिपरियं

भिण वद्य सुइट्ठं पण रसिरे पिंडं रुद्ध महिवे हुई।
सिद्य पसूणकर दीणं अरिआण काले गद्योणणि मिजुसं
इदं दिसी पुणाई पुज्जई सिद्य पसुणेण भुविसुणिरिवच्च ॥

उव रिसि लारविइज्जा णिरोहणं दस च पणेण
कोहं मुहं जीहमणं द्य चक्कूबं अणामा इदि व्वाणि
थमई तक्व मेतै कलिकुंड मुणि देत कज्जं।

अणं चं दिव्व थंमं सेनाथंमं कुणेई सिग्घेण
कुटाणि रुद्धंणाम तरिय सरकी तरा सांलक व ॥

सं वेढ इचदंणय महिय पुरं मशमे लिकवं
यंतमियं ममियं ममियं सियवच्छे कम सुलिकव पूव्व कम्मे

उव रिक्वला रवि विज्जं सिय पसुणे पुज्जयंति फालेयंगे।
भावई भाणु समाणु इच्छिय कम्मणि थेमेई ॥

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः श्रीं ह्रीं कलिकुंड दंड स्वामिन अमुकस्य क्रोध मुखाजिव्हा मति गति गर्भ दिव्य सेना स्तंभन कुरु कुरु क्षां क्षीं क्षूं क्षौं क्षः ग्लौं ठः ठः स्वाहा

अर्थः-यह यंत्र अष्टदल संयुक्त लिख कर बाहर विधि युक्त तीह का नाम समेत जंगल जो यन को अंबुमार कहिये जो जडी तीह को रसिुहं लिखे कुंट पंच कुण जो पंच पाखंडी को कमल पांच कुणा लिखे। और आठों दिशा उसके बाहर आट कोण में अष्ठ पिंडाक्षर लिखे चंदन सेवा सुंगध द्रव्य से ५० अष्ट पिंड अक्षर त्यासू भिन्न जो न्यारा सो वंदन कि इष्ट जो पण रसि जो पंदरह पिंडअक्षर सुरोध माही बैठे सिर भुजा हाथ आदि रात को हल्दी से लिख रखे।

फिर पूर्व दिशा मुखकर पूजे मस्तक भुजा चरण यह पंचाग नमस्कार शिल पर वा उर्द्ध ऊँचे स्थान पर बैठकर नमस्कार करे। तो सर्व दिव्य थंमे तत्काल कलिकुंड मुनि को नमस्कार करने से कार्य सिद्ध होय।

दिव्य सेना स्तंभन के लिए कुणा रो कणो सो अभिमंत्रित करि चंदन का लेप करना और पृथ्वी पर चौकोर माहियंत्र लिखे यह यंत्र अमृतमयी है। चांदी की कलम, डाम से लिखे ऊपर सूर्य बीजाक्षर लिखे सो सब प्रकार पूजनीक होय यह यंत्र सूर्य समान प्रताप बने हैं। मनोवांछित काम पूर्ण करे।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अणं मारण विद्या पर गय कुटिलाणि कोडि कम्भाणि मयण मयं पुरू सुखं इच्छं वा सौकूव रूवाणि हेयसिया वश्य तमियं णाम रूद्र रूपारं एवल माया जरसुस मंतं तस्स बल ईछं ॥

ॐ नमो भगवती पर विद्या छेदिनी ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः श्रीं ह्रीं कलिकुंड दंड स्वामिन् अमुकस्य झ्रैं झ्रैं छिंद छिंद भिंद भिंद तस्यां गाणि छेदय छेदय भेदय भेदय ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः ग्रां ह्रुं घे घे ॥

इय मतं वलीयज्ज जवहज्जु दोयवति सच्छेण
पुव्वं से वइमतं सव्वं सूणीणं सितमुया
खवई रंगा रसु मझेअट्ठ सहस्साणि सिद्धये मंतं।
पच्छाईत्तिय कम्मं करणादं सौख्यं माणि मंतेण
जं जे इच्छई अंगे तं तं मव्वाणि छे दाये सिग्ध
सु गांव मणिदाणं पुव्व काउण जिणसमये।

परविद्या निवारणं

अर्थः- यह मारण विद्या कुटिल कर्म कोडिकर्म मयाण भयं काम देवसमान पुरुष रूप इष्टवाइसो सौरवारूप हेय। सिर ऊर्द्ध लिखे यंत्रनाम रुद्ध रूपारं नाम लिख रौधे माया बीज से वेष्टित करे। फिर मंत्र से वेष्टित करें.
खेट का अंगारा करि यह यंत्र ९००० लिखे तब मंत्र सिद्ध होय पीछे जो कर्म कहती है। कि कारण दाता से खमाणि मंत्रण सर्व कार्यकर्ता स्वरुप होय ।
प्रवर्तै जो जो इच्छा होय सो सर्व सिद्धि देवे सुग्रीव मुनीद्र आदि जो समय समय सिद्धि के दाता हुये हैं।

अर्णं विईय विहणं भूय सुर कवेण रवतं कज्जं
ईपर विलिकंबइ जंतअट्ठसंप तस्स पुज्जाई
आयास आईय रुद्धं देवश्या विहेणं तं सव्व
नइ कुडिला सा विद्या णासई सिग्धंजिणं दिट्ठं
इय पुज्जाउद्धाइं धम्माणि मित्तय सिद्ध रायहिम
सं वट्टई धम्म जणाण पच्छाकज्जं वियाणेई।

परविद्या छेदन

अर्थः- यह विद्या परविद्या छेदन है और सुख की कर्ता है वा सुख रूप ही कही इस यंत्र को लिख अष्ट द्रव्य से पूजन करे है। जिस जिस यंत्र को उसके यंत्र से निरुद्ध करे वेष्टित करे। सर्व कुटित विद्या तत्काल नष्ट करे। यह जिनेश्वर देव ने कहा है। इसको पूजा का इस निमित्व कार्य सो सब धर्म निमित्त सिद्ध कहा है। जिससे सुख बधे और भगवान व्यधित धर्म बधं पीधा कार्य विचार तो सिद्ध होय।

विज्जा विज्जेस करं पर विज्जा माइं दाणपसेणं
अकसवं मूल जुत्तं कलिकुंड विहामं सिद्ध गंधे ॥ ६५ ॥

अण्णं पूजा काउं सेयं पुसाणाण व सिरती
अठ सयं पुण जायई सत्तूणामस्स मतं जुत्तं ॥ ६६ ॥

तिपय सिरे रवि इज्जा कलसं जल मिस्सगंधस पढणं।
उठरिष्ट विज्जोहकं सं पूजहू णसंति पर कज्जं ॥ ६७ ॥

दक्षिण दिसिठा विज्जई मुसलं संजुत्ततंदुलो उविरि
कंस सिरेण थिवियं दीव पुजंतु भायणि पीडे ॥ ६८ ॥

अट्ठत्तर सय दिवं फलाहं पुज्जं ति मुसलअंत दिसि
मंति पलाइ वलाह पदो वंजविद्यई संमान मुसल दले ॥ ६९ ॥

ॐ दीवे शिखा उवरि आवेशय आवेशय सत्यं कथय कथय स्वाहा। अस्य यंत्रस्योपरि पुष्प निक्षेपण मंत्र॥

ॐ ह्रीं सुंदरि सुंदरि परम् सुंदरि परम सुंदरि अवतर अवतर आगच्छ आगच्छ अवतर अवतर तिष्ठ तिष्ठ धनु धनु कंप कंप आवेशय वेग वेग शिघ्र शिघ्र अवतर अवतर प्रज्वल प्रज्वल दह दह स्वं गं जं गं।
ज्वालामालिनी देवी ॐ ह्रीं प्रें ब्लूं अवतर अवतर पंच पंच क्षोभय क्षोभय ये ये हूं फट् स्वाहा।

अर्थ:- विद्या यह परविद्या छेदन करने वाली है। यह दो मूल कलिकुंड मूलयुक्त कहिये मूल विद्या संयुक्त विहण अर्थात् प्रभात ही या पहिले होई से अष्ट द्रव्य से पूजन करे।
अर्चन पूजन सेवा अष्ट प्रकार की पूजा से शत्रु मित्र बनता है॥
प्रथम ही प्रभात काल कलशाभिषेक सुगंध दूध, घृत, इक्षु, रस आदि सुगंध द्रव्य से मंत्र पढ़े कलशाभिषेक करना तथा पूजा करे तो पहले का यदि दोष रूप हो तो नष्ट होता है। दाहिनी दिशा बैठ चोखा सालि से त्काल निकाले चावल से पूजन करे और दीपक से पूजन करे ।
अष्टोत्तर दीपक और इतना ही फल से पूजन करे तो अंतर दिशि गमन की व्यथा नष्ट होती है। दीप कमंत्र पढ़े यंत्र पर पुष्प क्षेपन करे।
सुंदरि मंत्र की विद्या विद्वेष कर्ता है और पर विद्या चले नहीं ,और यह यंत्र जब लिखे तो अपने आप ही विद्या नष्ट हो जाती है।

विज्जा विद्देस करं पर विज्जाया ईस ताप परमेणं
लिकेइ जंत दयाणं रूद्धं सु यद्धेणसु सिप्पाई॥
वापा रूयं लिक्खयं हत्थ तलं मारणं स विद्येण
इत्थं गेयर भुंजय पच्छतले होई आईट्ठी

संधी सुणं पत्थय सरसहू पारंहरहु संव्वगे।
सिर उवरि ससि विधिय्य मालयले होई हूयारं ।
रेहस रूद्ध बलयं कणुवरि वज्ज रूद्ध यरपिंडं
खु पिडं झययू गुल रूद्धं गथरोहं यले हुवीयं भूमक होई पटुवाथं
चंचुतले सुण विथंघोणे जरपिंड गलसु हुयारं ।
हियये निद्धे समय वीयं
अण उवरि तुरिय सरं तारि सते होई रविय सुरूद्धं
णेहि तले झरं पिंड तस्सु वरि पंच सुणतं
उरहतले हुंयारं मारण रूद्धं तहोय यय सुरूद्धं
णहितले गयरूद्धं हूयारं जेणि रेहजुंदं
उच्चाणं गयहत्तणं पंचय माहे पंचय च जाणुचरयं च
जणं जरय रियूयं सकमू हर ईय जंघाणि।
जंघास्स उभय पंखे हूयसंनरेह जुत्तफडु संतं
तप्पाय तले पणव परं तस्सु वरिं होई झरपिंडं ।

ॐ नमो भगवते सुग्रीवाय वानर राजाय कपिल दंष्ट्राय हरिहर ब्रह्माम्य उर्चित पादार विंदाय लंका पुरेशाय निर्द्दम घुमाय क्ल्व्यूं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः आं क्रों ह्रीं रीं युं ह्म्ल्व्यूं ग्रां ग्रां हुं फट् ॥

इय मतं चल इज्जं वल इज्ज वाणारराय सत्य सुवगां।
सोईव्व धुराह युज्ज संताणं होई मंते ॥
रत् पसूणं गंध अट्ठ सहस्साणि जवई ह्यते
पच्छा परसेणाणं पच्छय परसेण विद्धसं ॥

इय उवरि वारि इज्जं मूलंमंत्र सिद्धेण।
सिग्घोण पारं हाकारई विदेस परसेणा।

भयदित्ता परसेण दिट्ठे महबंधलीय लीया जाया।
जाई पलाई रत्ता यह म ारई पुंड होई पुरसेण॥
जंजं इच्छई कम्मं तंतं कम्माणि कारयं जाणा
सुग्गीवेण सुमंते दिट्ठं कलिकुंड मुणिणोहो॥

सयण उठी गाहा मज्झे यं कम्म दाहणं भणियं
आइयं मह विज्जा विज्जाण णामणा कलिकुंड ॥

॥ इतिकलि कुंड कल्पः समाप्तः ॥

गणधर वलय विधानं

नमस्कृत्य गणाधीशं गौतमं मुनि पुंगवं
वक्ष्ये हं गण भृद्यंत्रं भुक्ति मुक्ति प्रदायकं ॥ १ ॥

गणों के स्वामी मुनियों में उत्तम गौतम गणधर को नमस्कार करके भोग और मोक्ष के देने वाले गणाभृत यंत्र का वर्णन करूँगा।

सव्ये तरा प्रादि विचादि युक्त षट्कोण मध्य स्थितं हं ह्रं स्मरंतः
आवेष्टितं सौंगणं भृद्भिरतः झौं झौं परस्यांत गहावसानैः

टीका

सव्यमयं दक्षिणामि तरम सव्यम प्रदि[illegible] अप्रतिर्यं चक्रे फडित्यर्थः विच आदि र्यस्यासौ विचादिः विचक्राय स्वाहेत्यर्थः सव्ये तरा प्रादि विचादि युक्तं च तत षटकोणं तस्य मध्ये स्थित मिति सव्ये तरा प्रादि विचारदि युक्त षट्कोण मध्य स्थितं च तत हं च तत स्मरंतु चिंतयंतु कथं भूतं आवेष्टित कै सौं गण भृद्भिः सह ॐ वर्तते यै स्ते सोमः तै च ते गण भृतश्च ते सौं गणभृतः तै कथं भूतै झौं झौं पर स्वांत गहावसानैः

अप्रति चक्रे फट् इस सव्य मंत्र और विचक्राय स्वाहा। इस अपसव्य मंत्र से युक्त छ कोण के यंत्र के बीच में अर्हं (ह्रं) को लिखे इसके आदि में ॐ सहित तथा अंत में झौं झौं स्वाहा सहित मंत्र से वेष्टित करे।

इदानीं ध्यानमुच्यते

षट्कोण चक्रं विरचय चन्मध्ये हंकारं विन्यस्य षट्कोण भ्यंतरे सव्येन अप्रति चक्रे फडित्येकैकाक्षरं विन्यस्य षट्कोण बाह्ये अपसव्येत विचक्राय स्वाहेति इत्ये कैकं विन्यस्यत द्बाह्ये चंद्र मंडलं स्फुर चंद्राभं विन्यस्य तद्बाह्ये मालाचंमंत्रं विन्यस्य ततो बाह्ये चंद्र मंडलं विन्यस्य भुपुरं च कथं भूतं महायंत्रं हृद्विचिंतयेत् ॥

एक छह कोण चक्र बनाकर उसके बीच में हंकार को रखकर छहों कोणों के बीच में सव्येन अप्रति चक्रे फट के एक एक अक्षर को रखकर, उसके बाहर प्रकाशित चंद्रमा के समान चंद्रमंडल बनाकर, उसके बाहर माला मंत्र रखकर, उसके बाहर चन्द्रमंडल रखकर पृथ्वी मंडल बनावे। इसप्रकार के महायंत्र का हृदय में ध्यान करें।

श्री खंडागुरूकुंकुम कर्पूर वेणुज गोरोचन सित सर्षप
दुर्वांकुरलवगौलादिभि सुसवर्ण लेखन्या दर्भादिनावा

एत यंत्र स्फुटाक्षरं फलके ताम्र पत्रे भूर्ज्जपटेवा
विलिखव्य गंधाक्षत पुष्प दीप धूपादि
रर्च्चायतोमारि चोरादुपसर्ग्ग न भवंति॥

इस यंत्र को श्री खंड (चंदन) अगर कुंकम (केशर) बंस लोचन गोरोचन सफेद सरसों दूब के अंकुर लोंग इलायची आदि से सोने या डाभ आदि की कलम से स्पष्ट अक्षरों में लखी ताम्र पत्र या भोजपत्र पर लिखकर, गंध अक्षत पुष्प दीप धूप आदि से पूजा करने वाले को शत्रु महामारी चोर आदि के उपसर्ग नहीं होते।

इदमेव चक्रं ते रेव द्रव्यै स्तथा भूत लेखिन्या हंकारस्य
मध्येसाध्यनाम स्वनाम मध्ये यस्याव स्ताद्विलिखव्य
विधिना सप्त रात्रमभ्यर्चितं राजादि वशयं करोति

इस ही चक्र को उन ही द्रव्यों से वैसी ही कलम से हंकार के बीच में साध्य के नाम को अपने नाम के बीच में नीचे लिखकर विधिपूर्वक सात रात्रि तक पूजन किया जावे तो राज वशीकरण आदि करता है।

अथतेनैव विधिनात दिदं यंत्रं विलिखव्य हंकार मध्ये ज्वरित नाम
लिखित्वा त्रिरात्रं सप्तं रात्रं वा विधिनाऽभ्यर्चितं ज्वरमपहरति।
ऐवा सर्व्व व्याधीष्वन्येषुप सर्गेशु च यंत्र मिदं यथाविधि योजनीयं

इसी ही विधि से इस यंत्र को लिखकर हंकार के बीच में ज्वर से पीड़ित साध्य नाम को रखकर तीन रात या सात रात तक विधिपूर्वक पूजन करने से ज्वर को दूर करता है। इसीप्रकार इस यंत्र को सब रोगों और उपसर्गो में लगाना चाहिये।

अथेदं यंत्रं पीत वर्णयस्य हृदयाऽभ्यंतरे पूर्व विचिंत्यं पश्चात् तस्य
शरीर व्यापी चित्यंत्तस्मिन क्रोधादि स्तंभनं भवति
यथाऽस्मिन् धूम्र वर्णंत्तया चिंतिते उच्चाटनं भवति
नीलवर्ण तया मोहनं भवति कृष्ण वर्ण तया द्वयोरप्या शक्त
चिंतयो र्हदि शरीर व्यापि त्वेन चिंतिते परस्पर विद्वेषणं भवति
धवल वर्ण तया निर्विषकरणं स्यात्

यदि इसी यंत्र को पृथ्वीमंडल में पीले रंग का पहले किसी के हृदय में ध्यान करके फिर उसके शरीर भर में व्याप्त ध्यान किया जाये तो उसमें क्रोधादि का स्तंभन होता है। (धर्म और अर्थ पर जल मंडल कहा है।) उसी में इसको धूम्रवर्ण वायुमंडल का ध्यान करने से उच्चाटन और द्वेष होता है। नीले वर्ण का ध्यान करने से मोहन भी होता है। (वशीकरण में अग्निमंडल कहा है) काले वर्ण का दोनों असमर्थ चिंतावालों के हृदय तथा शरीर में व्याप्त चिंतवन करने से आपस में विद्वेषण होता है। और श्वेतवर्ण ध्यान से विष नष्ट होता है।

अथ गणधर वलय मंत्र प्रभाव उच्यते

अब गणधर वलय मंत्र के प्रभाव का वर्णन किया जाता है

शुक्ल चतुर्दश्यां पंचम्यामष्टम्यां वा गुर्वादि प्रामाणिको भव्यः
उपोष्य श्रुचि भूत्वा शर्वर्यां सर्वज्ञ पूजां परिसमाप्य
पश्चात परमेष्टिनं गणधर वलय चक्रं च गंधादिभिरभ्यर्च्य
पश्चात् चंदन कुष्ट क्षोदेन मंत्री स्व दक्षिणा कर्ण मालिप्य

जीवित मरण लाभालाभादिषु मध्ये
विवक्षितं किमपि कार्य संप्राधार्य तदानीमेव
ॐ णमो जिणणं प्रभृति यावदागास गामीणं तावत् प्रमाणेन झौं झौं स्वाहा ॥

तन मंत्रेण त दक्षिण हस्तेन स्पृशन अष्टोत्तर शत
मभि मंत्रयेत ततो विविक्त स्थाने वाम पार्श्वे सुप्तेन
य त्किंचि त्स्वप्ने दृश्यते तदऽवितथं भवति
जप काले वा य द्वचन मदृष्ट प्रणे श्रुकं श्रूयते तत्सर्वं सत्यमेव

शुक्ल पक्ष की चतुर्दशी पंचमी या अष्टमी को गुरू आदि की पूजन में तत्पर भव्य पुरूष उपवास करके स्नानादि से पवित्र होकर रात्रि में ही सर्वज्ञ भगवान की पूजन को समाप्त करके इसके पश्चात परमेष्टि गणधर वलय चक्र की चंदनादि से पूजन करें। इसके पश्चात चंदन कूठ के चूर्ण से मंत्री अपने दाहिने कान को लीपकर जीवन-मरण लाभ और अलाभ में से जानने योग्य किसी कार्य का निश्चय करके उसी समय "ॐ णमो जिणाणं से लगाकर ॐ णमो आगास गामीणं" तक तथा झौं झौं स्वाहा मंत्र से दाहिने कान को हाथ से छूता हुआ एक सौ आठ बार अभिमंत्रित करे, फिर एकांत स्थान में बाई करवट से सोकर स्वप्न में जो कुछ भी देखता है वह सत्य होता है अथवा जप काल में जो शब्द बिना बोलने वाले को देखे हुए सुनाई दे। वह सब सत्य होता है।

विजय मंत्र:

ॐ नमो जिणाणमित्यतः परं णमो उग्गत्त वाणं प्रभृति यावत् घोर गुण ब्रह्म चारीणं पद यावत् प्रमाणेन पूर्ववत् झ्रौं झ्रौं स्वाहेत्यनेन अष्टोत्तर शत प्रशस्त पुष्पैर्जापं कृत्वा प्रयातस्य युद्धे तस्कराणां मध्ये वा जयो भवंति ॥

ॐ णमो जिणाणं तथा ॐ णमो उग्गत्तवाणं आदि पद से ॐ णमो घोर गुण ब्रह्मचारीणं पद तक के अंत में झ्रौं झ्रौं स्वाहा वाले मंत्र को प्रशंसा योग्य पुरुषों से १०८ प्रमाण जपकर जाने पर युद्ध या चोरों के बीच में विजय होता है।

ॐ णमो जिणाण मित्यं: परं ॐ णमो आमो सहियत्ताणं प्रभृति ॐ णमो सव्वोसहि पत्ताणं पदं यावतावता मंत्रेण झ्रौं झ्रौं स्वाहंतेनाऽष्टोत्तर शत सुगंध पुष्पैः प्रजपन्मंत्री गुल्म शूल प्लीहा गंडमाला कुष्ट ज्वारातिसारान् व्याधीन्नन्यानऽपि शमयेत् गोशीर्ष चंदनेन यथोक्तयंत्र मुद्धांष्टोत्तर शतेन सित सुगंध कुसमैर्जप्त्वा पानीयेन तद्गांधं द्रवीकृत्य पाययेत् व्याधिता स्वस्था भवति ।

ॐ णमो जिणाणं तथा ॐ णमो आमो सहि पत्ताणं से लगाकर ॐ णमो सव्वोसहिपत्ताणं से झ्रौं झ्रौं स्वाहा सहित मंत्र को सुगंधित पुष्पों से एक सो आठ बार जपता हुआ मंत्री गुल्म शूल (वायुगोला) प्लीहा (तिल्ली) गंडमाला कोठ ज्वर और दस्त आदि अन्य व्याधियों को शांत करता है। गोरोचन और चंदन से उपरोक्त यंत्र के लिखकर १०८ बार सुगंधित सफेद फूलों से जपकर जल से उस गंध से लिखे हुए यंत्र को धोकर रोगी को पिलाने से रोग नष्ट होता है।

क्रूर प्राणी वशीकरण यंत्र

ॐ णमो जिणाणं ॐ णमो मण बलीणं ॐ णमो वचि बलीण
ॐ णमो काय बलीणं झ्रौं झ्रौं स्वाहा।
इत्योऽनेन मंत्रेण अष्टोत्तर शत मारक्त पुष्पै र्जप्त्वाद्यास्तिष्ठति
तस्य व्याघ्र सिंह शार्दूल सर्पाः क्रूर सत्वा वश्या भवंति।
ॐ णमो जिणाणं ॐ णमो मण बलीणं ॐ वचि बलीणं ॐ णमो काय बलीणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अप्रति चक्रे फट् विश्वकाय असि आउसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा।

इस मंत्र को लाल कनेर के फूलों पर एक सौ आठ बार जपकर जो बैठता है व्याघ्र सिंह, हाथी, शार्दूल सिंह, साप और क्रूर प्राणी उसके वश में हो जाते हैं।

आकाशगामी मंत्र

ॐ णमो जिणाणं ॐ णमो विउव्वन इड्ढि पत्ताणं ॐ णमो पत्ताणं ॐ णमो विज्जाहराणं ॐ णमो चारणाणं ॐ णमो पण्णसमणाणं ॐ णमो आगास गामीणं झौं झौं स्वाहा अनेन बहिरंग कालादि सहितस्य खेचरत्वं सिद्धति।

इस मंत्र से बाहर के काल आदि को जानकर सिद्ध करने वाले को आकाश गामिनी विद्या सिद्ध हो जाती है।

स्वप्न सिद्धि

ॐ णमो जिणाणं से ॐ णमो आगास गामीणं हां हीं हूं हौं ह: अप्रति चक्रे फट विचक्राय असि आउसा झौं झौं स्वाहा अनेनापि स्वप्न सिद्धि

इस मंत्र से स्वप्न सिद्धि होती है।

विषापहार

ॐ णमो जिणाणं ॐ णमो आसी विषाणं ॐ णमो दिट्ठी विषाणं झौं झौं स्वाहा॥

इत्योनेन विषापहार सिद्धि ।

इस मंत्र से विष को नष्ट करने की सिद्धि होती है ।

ॐ णमो जिणाणं ॐ णमो उग्गतवाणं ॐ णमो दित्तत वाणं ॐ णमो तन्तत्त्व वाणं ॐ णमो महात वाणं ॐ णमो घोर गुणाणं ॐ णमो घोर परक्कमाणं ॐ णमो घोर गुण बम्भचारिणं झौं झौं स्वाहा ।

अनेन मंत्रेण शत्रुजय

इस मंत्र से शत्रु जीते जाते हैं।

ॐ णमो जिणाणं ॐ णमो आमो सहि पत्ताणं ॐ णमो खेलो सहि पत्ताणं ॐ णमो जल्लो सहि पत्ताणं ॐ णमो विप्पोसहि पत्ताणं ॐ णमो सव्वोसहि पत्ताणं हां हीं हूं ह: अप्रति चक्रे फट् विचक्राय

असि आउसा झौं झौं स्वाहाइत्योनन सर्वरोग शांति

इस मंत्र से सब रोग शांत होते हैं।

ॐ णमो जिणाणं ॐ णमो मण बलिणं ॐ णमो णमो वत्ति बलिणं ॐ णमो काय बलिणं हां हीं हूं हौं ह: अप्रति चक्रे फट विचक्राय असि आउसा झौं झौं स्वाहा ॥

इत्यानेन महाप्राण सिद्धि

इस मंत्र से महाप्राण की सिद्धि होती है।

ॐ णमो जिणाणं ॐ णमो खीर सवीणं ॐ णमो सप्पि सवीणां ॐ णमो महूर सवीणं ॐ णमो अमिद्य सवीणं हां हीं हूं हौं ह्रः अप्रति चक्रे फट् विचक्राय असि आउसा झौं झौं स्वाहा ॥

अनेन मंत्रेणा भिमंत्र्य सेवितमौषध ममृतोपतां भजंति

इस मंत्र से मंत्रित करके बन की हुई औषधि अमृत के समान हो जाती है।

ॐ णमो जिणाणं ॐ णमो अक्षीण महाणसाणं हां हीं हूं हौं ह्रः अप्रति चक्रे फट् विचक्राय असि आउसा झौं झौं स्वाहा अनेन भंडार सिद्धि ॥

इस मंत्र से भंडार की सिद्धि होती है।

ॐ णमो जिणाणं ॐ णमो वड्ढमाण बुद्ध रिसीणं हां हीं हूं हौं ह्रः अप्रति चक्रे फट विचक्राय असि आउसा झौं झौं स्वाहा॥

अनेन सारस्वतं सिद्धयति

इस मंत्र सारस्वत सिद्ध होती है।

ॐ णमो जिणाणं ॐ णमो से ॐ णमो आगास गामीणं नमः हां हीं हूं हौं ह्रः अप्रति चक्रे फट विचक्राय असि आउसा झौं झौं स्वाहा।

अनेन च स्वप्न सिद्धि

इस मंत्र से स्वप्न सिद्धि होती है।

ॐ णमो जिणाणं ॐ णमो घोर गुणाणं ॐ णमो घोर गुण बम्भचारीणं नमः हां हीं हूं हौं ह्रः अप्रचि चक्रे फट विचक्राय असि आउसा झौं झौं स्वाहा।

अनेन च पर विजयः

इस मंत्र से भी दूसरे पर विजय मिलती है।

ॐ णमो जिणाणं ॐ णमो सव्वोसहि पत्ताणं नमः हां हीं हूं हौं ह्रः अप्रति चक्रे फट विचक्राय असि आउसा झौं झौं स्वाहा।

अनेनऽचारोग्य सिद्धिः

इस मंत्र से भी आरोग्य सिद्धि होती है।

ॐ णमो जिणाणं ॐ णमो अमिय सवीणं नमः हां हीं हूं हौं हः अप्रति चक्रे फट विचक्राय असि आउसा झौं झौं स्वाहा।
अनेन च दिव्यौषधि सिद्धि :

इस मंत्र से भी दिव्य औषधी की सिद्धि होती है।

ॐ णमो जिणाणं ॐ णमो वड्ढमाण बुद्ध रिसीणं नमः मम बुद्धि वृद्धि रस्तु हां हीं हूं हौं हः अप्रति चक्रे फट विचक्राय असि आउसा झौं झौं स्वाहा।
अनेन दिव्य वाक् सिद्धिः

इस मंत्र से वाणी की सिद्धि होती है।

इत्येवं मंत्रा अद्भुत शक्तयः तथा चोक्तं भट्ट हस्ति मल्लेनः

इसप्रकार से यह सब मंत्र बड़ी अद्भुत शक्तियाले है जैसे कि भट्टारक हस्तिमल्लिषेणने कहा है।

दूसरी विधि

हिमैला गुरु कर्पूर रोचना शित सर्षपैः
लवंग कुष्ट दुर्वा ग्रौशीराद्यैश्च सुपेषितैः ॥ १ ॥

हिम (लाल चंदन) इलायची अगर कपूर गोरोचन सफेद सरसों लोंग कूठ सहित उशा (वच) और खस आदि को अच्छी तरह पीस कर उनसे - - - -

रै सूच्या जाति कांडेन वर्हिषाद्वर्यायथवा
उपातैः फलकैः भूर्ज्जे भुप्र ताम्र पटे यथा ॥ २ ॥
लिखे त्षट्कोण चक्रस्य मध्ये बिंदु युतां नभः
कोणो दरेषु सव्योना प्रति चक्रे फंड लिखेत् ॥ ३ ॥

सोने की कलम मोर की पूँछ अथवा डाभ की कलम से तखती भोजपत्र या ताम्रपत्र पर षटकोण चक्रे के बीच में विंदु सिहत नभ (ह) लिख कर कोनों में सव्य मंत्र अप्रति चक्रेफट लिखे।

अपसव्यं विचक्राय स्वाहा कोणांतरेषु च
बहिरस्मात् स्फुर चंद्र नीकाशं चंद्रमंडलं भूपुरंततः ॥ ४ ॥

गण भृद्वलयारब्धेन् मंत्रैणै तत्प्रवेष्टयेत्
लिखेदऽस्मात् बहिश्चंद्रं मंडलं भूपरंततः ॥ ५ ॥

और दूसरे कोणों में अपसव्य मंत्र विचक्राय स्वाहा लिखे। इसके बाहर चन्द्रमा के समान उज्ज्वल चंद्र मंडल बनाया जावे। इसके पश्चात् उस यंत्र को गणधर वलय नाम के मंत्र से घेर देवे। उसके बाहर चंद्रमंडल और फिर पृथ्वीमंडल बनावे।

मंत्रेण प्रादिगर्भेण यश्चक्रं प्रार्चयेदिदं।
उपसर्गान् तस्यस्यु श्चौर मार्यादि भिः कृता ॥ ६ ॥

जो पुरूष अप्रादि गर्भ मंत्र से इस यंत्र का पूजन करता है उसको चोर या शत्रु आदि से किये हुये उपसर्ग नहीं हो सकते हैं।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अप्रति चक्रे फट् विचक्राय झौं झौं स्वाहा
अप्रादि गर्भ मंत्रः वश्य मंत्रः
यह अप्रादि गर्भ मंत्र है ।

तलोध्वांश लसत्साध्य साध्यका ह्वय गर्भितं
कुंभोदरे जिनाग्रे वा पूजितं वशयेदिदं ॥ ७ ॥

अप्रदि गर्भ मंत्र के नीचे साध्य और ऊपर साधक के नाम को लिखकर उसे घड़े के पेट में या जैन मंदिर में रखे और इसका पूजन करे तो वशीकरण होता है।

मध्यस्थातुर संज्ञं तच्चक्रं गंधाक्षतादिभिः
त्रिरात्रं सप्त रात्रं वा पूजितं सर्वरोगजित् ॥ ८ ॥

हकार के मध्य में आतुर (रोगी) का नाम लिखकर इस गंधर्वलय चक्र का गंध अक्षत आदि से तीन रात या सात रात तक पूजन करने से सब रोग जीते जाते हैं।

साध्यस्य हृदयं पूर्वं व्यश्नुवानं तत स्तुनुं
सर्वं पीतमिदं ध्यातं स्यादति क्रोधरोध कृत् ॥ ९ ॥

साध्य के हृदय को पहले सुनता हुआ फिर उसकी कल्पना इस यंत्र में करके इसको पीला ध्यान करने से साध्य के क्रोध का स्तंभन होता है।

कृष्ण वर्णं तथैवेदं ध्यायते स्निग्धयोर्द्वयोः
तयोः परस्पर द्वेषः सप्त रात्रात् प्रजायते ॥ १० ॥

यदि स्निग्ध पुरुषों के बीच में इस यंत्र का कृष्ण रूप में ध्यान किया जाये तो उनका सात दिन के अन्दर आपस में विद्वेषण हो जाता है।

ध्यातं तथैव साध्ये सित वर्णमिदं करोति निर्विषतां
धूम्र प्रभ मुच्चाटं नील द्युति मोहनं तस्य ॥ ११ ॥

उसी प्रकार साध्य में श्वेत ध्यान किया जाने से यह विष को दूर करता है। धुएँ के जैसा रंग का ध्यान किया जाने से उच्चाटन करता है। नीले वर्ण का ध्यान किया जाने से मोहन करता है।

व्या वर्णित मत्यद्भुत मिति गणधर वलय सामर्थ्यं
अथ शक्तिं कथयाम्यहमपि गणधर वलय मंत्रस्य ॥ ११ ॥

इसप्रकार गणधर वलय की अत्यंत अद्भुत सामर्थ्य का वर्णन किया गया है। अब गणधर वलय मंत्र की शक्ति का वर्णन किया जाता है॥

सिद्धोमंत्रः कुरुते सजपादामुत्रिकार्यं संसिद्धिः
षटकर्म कर्म वत्यं नष्टादि ज्ञानमपि मेधां ॥ १२ ॥

यह मंत्र सिद्ध होने से इस लोक में तो कार्य सिद्ध करता है छहो कर्मो में कर्मशीलता करता है। नष्ट वस्तु का ज्ञान करता है और अत्यंत बुद्धिदायक है।

तस्यांतर्वर्तिनो मंत्रा यंत्रस्याद्भुत शक्तयः
विविधाः संति ते गम्या गुरुणामुदेशत् ॥ १३ ॥

उसके अन्दर के और मंत्रो को भी बड़ी अद्भुत अनेक प्रकार की शक्तियाँ है जिनको गुरू के उपदेश से ही जानी जा सकती है।

कथ्यंति तन्वर्त्तिषु च त्वार स्तेषु सं चक्रेस्यादौं
णमो जिणाणं त्विति तेषामवयवः प्रथमः ॥ १४ ।

उस मंत्र के मुख्य चार अवयव है या भाग है जिनमें से ॐ णमो जिणाणं पहला अवयव है।

आगास गामिनां घोर गुणादि ब्रह्मचारीणां
सर्वोष ऋद्धीं प्राप्ता नामऽमृतश्रा विणामऽपि ॥ १५ ॥
झौं झौं स्वाहा वसानानि नमस्कार पदानिवै
तेषां चतुर्णां मंत्राःस्युः क्रमतो मध्य वर्तिनां ॥ १६ ॥

आगास गामीणं से घोर गुणादि ब्रह्मचारीणं तक दूसरा अवयव है । सब औषधि की ऋद्धि प्राप्त करने वाले मंत्र तीसरे और अमृत टपकाने वाली ऋद्धि मंत्र चौथा अवयव है । अन्त में झौं झौं स्वाहा और नमस्कार के बाद में उन चारों के बीच में रहने वाली ऋद्धि के मंत्र है।

शुद्धाष्टम्यां चतुर्दश्यां पंच दश्यामऽथापि वा
कृतोपवासः शर्वर्यां स्तूत्वाऽर्हंतं समर्च्य च ॥ १७ ॥

दक्षिण श्रवणं कुष्ट चंदनाभ्यां विलिप्य तत्
स्पृशन्नष्टोत्तर शतं तेष्वाद्ये नाभि मंत्रयेत् ॥ १८ ॥

शुद्ध अष्टमी चतुर्दशी अथवा पूर्णमासी को उपवास करके रात्रि में भगवान अर्हंत की स्तुति पूर्वक पूजन करके दाहिने कान पर कूठ और चंदन का लेप करके उसको छूता हुआ एक सौ आठ बार अभिमंत्रित करके।

मृत जीवन लाभाऽलौ कार्यं किम्पि चिंतयेत्
स्वाप्याश्चवाम पार्श्वेन सुप्तो रूपं च दीक्ष्यते ॥ १९ ॥

श्रृणोति वा वचोयं च तेन विद्यां बुधाः
शुभ अशुभं वाऽपि तन्मिथ्यां कदाचन भविष्यति ॥ २० ॥

जीवन मरण लाभ अलाभ आदि किसी कार्य को भी सोचकर बाई करवट से सोता हुआ जो कुछ वचन सुनता है। पंडित उसको शुभ अशुभ समझे वह कभी असत्य नहीं होगा।

द्वितीयोऽति बलं कुर्यात् तृतीय शमनं रूजां
चतुर्थेन औषधं जप्तं सिंचितं स्यात्सुधोपमं ॥ २१ ॥

स्वाहां तमो ॐ ह्रीं मुख सप्त वर्णं तत पूर्वका हं परतो
नमो हं विदिग्निशोराधतः क्रमेण मायावृतस्य त्रिगुणं लिषंतु ॥ २२ ॥

इति गणधर वलय मंत्रः

पहले "ॐ णमो जिणाणं से ॐ णमो आगास गामीणं" तक जप करने से स्वप्न सिद्धि होती है॥ दूसरे "ॐ णमो उग्गत्तवानम ॐ णमो घोर गुण बह्मचारीणं" तक जप करने से अत्यंत बल करता है। तीसरे "ॐ णमो आमी सहिपत्ताणं से ॐ णमो सव्वोसहि पत्ताणं" तक जप करने से रोगों को शांत करता है।

चौथे "ॐ णमो खीर सवीणं सप्पिसविणं मुहुर सवीणं अमीय सवीणं" जप करने से और मंत्रित औषधी देने से यह अमृत के समान हो जाती है।

ॐ ह्रीं आदि सात वर्णों के पश्चात हं और फिर नमो हं लगाकर अंत में स्वाहा लगावे इस मंत्र को रात्री में विशाओं की तरफ मुख करके आराधना करता हुआ माया (ह्रीं) से तीन बार वेष्टित करके लिखे। ॐ ह्रीं हं झौं झौं नमः हं नमो हं स्वाहा

इति गणधर वलय मंत्र

विशंति सहस्राभ्यऽधिक लक्ष प्रमाणं
पूर्व सेवया समाराध्य पश्चात पार्श्वनाथ सन्निधौ

श्री वर्द्धमान जिनेश्वर सन्निधौ द्वि सहस्राधिक
दश सहस्र जाती कुसुमैः साधनीयो भव्यः स सिद्ध विद्यः
षट कर्म्माणि लीलया कुर्तु शक्नोतिः

इस मंत्र को पहले सेवा से पार्श्वनाथजी स्वामी के निकट आराधना करके एक लाख बीस हजार जपे फिर श्री वर्द्धमानजी जिनेश्वर के समीप चमेली के फूलों से बारह हजार जपे भव्य पुरुष इसप्रकार साधन से मंत्र के सिद्ध करके छहों कर्मों को खेल से ही कर सकता है।

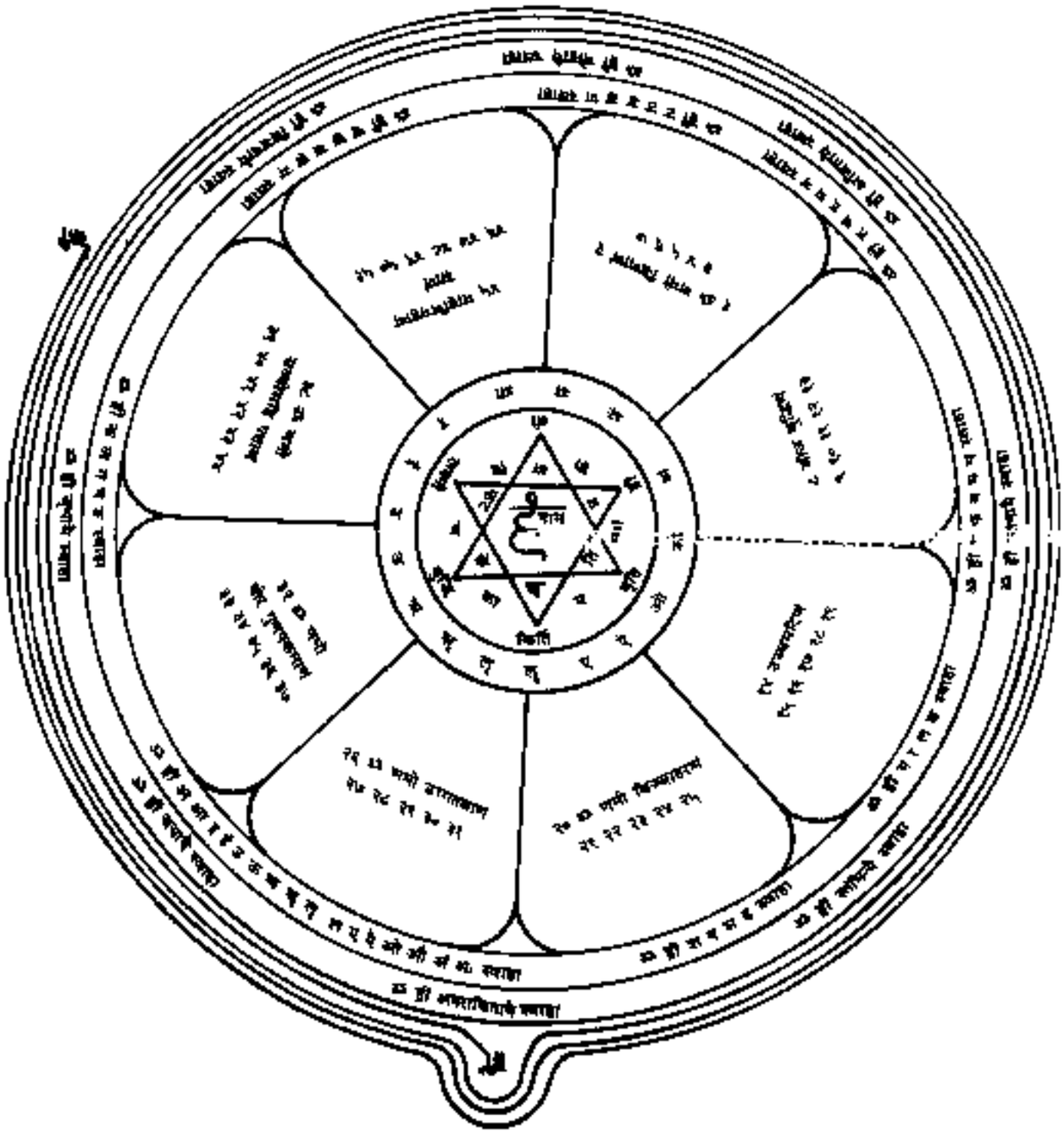

ॐ णमो अरिहंताणं ॐ णमो सिद्धाणं ॐ णमो आइरियाणं
ॐ णमो णमो उवज्झायाणं ॐ णमो लोऐ सव्व साहूणं
ॐ णमो जिणाणं ॐ णमो ॐ हि जिणाणं ॐ णमो परमेहि जिणाणं
ॐ णमो सव्वोहि जिणाणं ॐ णमो आसंतोहि जिणाणं ॐ णमो कुद बुद्धीणं
ॐ णमो बीज बुद्धीणं ॐ णमो पादानुसारीणं ॐ णमो संभिणं सोदराणं

ॐ णमो पत्तेय बुद्धिणं ॐ णमो सयं बुद्धीणं ॐ णमो बोहिय बुद्धीणं
ॐ णमो उज्जु मदीणं ॐ णमो विउल मदीणं ॐ णमो दसपुव्वीणं
ॐ णमो चउदस पुव्वीणं ॐ णमो अट्ठंग महाणिमित्त कुशलाणं ॐ णमो विउव्वण इड्ढि पत्ताणं
ॐ णमो विज्जाहराणं ॐ णमो चारणाणं ॐ णमो पणसमणाणं
ॐ णमो आगास गामीणं ॐ णमो आसी विसाणं ॐ णमो दिट्ठि विसाणं
ॐ णमो उग्गत्त वाणं ॐ णमो दित्त वाणं ॐ णमो तत्तत वाणं
ॐ णमो महात्त वाणं ॐ णमो घोरत्त वाणं ॐ णमो घोर गुणणं
ॐ णमो घोर गुण परक्कमाणं ॐ णमो घोरगुण बह्मचारीणं ॐ णमो आसो सहिपत्ताणं
ॐ णमो खे लोसहि पत्ताणं ॐ णमो जल्लो सहिपत्ताणं ॐ णमो विप्पो सहि पत्ताणं
ॐ णमो सव्वोसहि पत्ताणं ॐ णमो मण बलीणं ॐ णमो वचि बलीणं
ॐ णमो काय बलीणं ॐ णमो खीर सवीणं ॐ णमो सप्पि सवीणं
ॐ णमो महुर सवीणं ॐ णमो अमि सवीणं ॐ णमो अक्षीण महाणसणं
ॐ णमो वड्ढमाणाणं ॐ णमो लोए सव्व सिद्धायदणाणं
ॐ णमो भय वदो महदि महावीर वड्ढमाण बुद्धि रिसीणं झौं झौं स्वाहा चेदि

इति गणधर वलय मंत्र

ॐ ह्रीं ह्रूं झौं झौं नमः
ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अर्हं असि आउसा अप्रति चक्रे फट विचक्राय स्वाहा ।
ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अर्हन अप्रति चक्रे फट विचक्राय ह्रीं अर्हं झौं झौं स्वाहा इमौं गणधर वलय मंत्रैः

अथ गणधर वलय मंत्रौ निरूप्य तेः

ॐ णमो जिणाणं अनेक गहन प्रापन हेतून कर्मा रातीन् जयंतीति जिणाः साकल्पेन धाति कर्म क्षयात प्राप्त केवल ज्ञानादि चतुष्टाया अर्हंतः तेषां णमो नमस्कारोस्तु तेभ्यो नमः इत्यर्थः अत्र प्राकृते चतुर्थ्या विधानांऽभावात संबंध मात्र विवक्षायां षष्ठ्येवस्थात्

ॐ णमो जिनानाम अनेक जन्मों की गहन प्राप्ति के हेतु कर्म रूपी शत्रुओं को जीतने वाले जिन कहलाते हैं, क्योंकि वह घातिया कर्मों को पूर्ण रूप से नष्ट करते हैं । जिन ही केवलज्ञान आदि अनंत चतुष्टय को प्राप्त करने वाले अर्हंत हैं, उनको नमस्कार होवे। प्राकृत में चतुर्थी का विधान न होने से यहां संबंध मात्र विविक्षा में षष्टी ही की गई है।

ॐ ह्रीं अर्हं ॐ णमो उहि जिणाणं ॐ णमो जिणाणं अवधि ज्ञान प्राप्त जिन भगवान को नमस्कार हो।

देश अवधि जिनानां देश तो घाति कर्म क्षय विधानात् प्राप्त
देशावधि ज्ञानानां देसोहि जिणाणं मिति पाठ

देश अवधि जिनाना नाम एक देश घाति या कर्मो को क्षय करने का विधान होने से देशावधि ज्ञान के प्राप्त करने के कारण देशावधि जिन कहा है।

ॐ ह्रीं अर्हं ॐ णमो परमोहि जिणाणं
परमोहि जिणाणं तद्विज्ञानं देवप्राप्त परम अवधि ज्ञानानां

परम अवधि ज्ञान प्राप्त करने वाले जिन भगवान को नमस्कार हो।

ॐ ह्रीं अर्हं ॐ णमो सव्वोहि जिणाणं
सव्वोहि जिणाणं प्राप्त सकल अवधि ज्ञानानां ॥ ४ ॥

सकल अवधि ज्ञान धारी जिन भगवान को नमस्कार हो।

ॐ ह्रीं अर्हं ॐ णमो अणंतोहि जिणाणं
अणंतोहि जिणाणं न विद्यते अंते यस्या सायनंतो
भवांतरानुगामी सोवधि र्येषां ते च जिनाश्च देशात्
कर्म क्षय कारका महर्षयस्तेषां ॥ ५ ॥

अनंतावधि जिनानाम् जिसका अंत नहीं होवे उसको अनंत कहते हैं। दूसरे भव में साथ जाने वाले अवधि ज्ञान कहा जाता है । उस ज्ञान के धारक एक कर्मों के नष्ट करने वाले महर्षियों को नमस्कार हो। अनंत अवधि ज्ञान के धारक जिन भगवान को नमस्कार हो।

ॐ ह्रीं अर्हं ॐ णमो को ट्ठबुद्धिणं कोट्ठ बुद्धिणं बुद्धिनां
कोष्टांगार के घृत भूरि धान्या नाम विनष्टाव्यतीकीर्णानां
यथावस्थानं तथैवा च स्थान मय धारित ग्रंथानां यस्यां
बुधौ सा कोष्ट बुद्धि तयो माहात्म्याद्विधते र्येषां ते कोष्ट बुद्धय

कोष्टबुद्धिनां जिसप्रकार बड़े भारी धानों के कोठों में धान बिना नष्ट हुए और बिना बिखरे हुए जैसे के तैसे रहते हैं। उसी प्रकार उनकी बुद्धि में याद किये हुये ग्रन्थों का उसीप्रकार का माहात्म्य होता है। उनको कोष्ट बुद्धि वाले कहते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं ॐ णमो बीज बुद्धिणं विशिष्ट क्षेत्रे कालादि सहाय मेकमप्युसं बीज अनेक बीज पदं यथा भवति तथैक बीज पद ग्रहणांऽदनेक पदार्थ प्रति पतियंस्यां बुधौ सा बीज बुद्धिः सातपः प्रभावाद्विद्यते येषांते बीज बुद्धयः उभयत्र तद्योगान्नच्छष्टयं ॥ ७ ॥

जिस तरह से क्षेत्र कालादि की सहायता पाकर एक बीज से अनेक बीजों की उत्पत्ति होती है। उसी तरह एक बीज अक्षर से शेष शास्त्रों को जाने से बीज बुद्धि जिन के तप के प्रभाव से रहती है।

ॐ ह्रीं अर्हं ॐ णमो पादाणु सारीणं पादाणु सारीणं आदावंते यत्र तत्र चैकपद ग्रहणत समस्त ग्रंथस्यात् तस्यावधारणं यस्यांबुद्धौ सा पादानुसारिणी बुद्धि सा तपो माहात्म्याद्वि यते येषां ते पदानुसारि बुद्धयः आपत्वाद्बुद्धिशब्दा प्रयोगः ॥ ८ ॥

जिस तरह से किसी ग्रंथ का एक पद के ग्रहण करने से समस्त ग्रंथ उनकी बुद्धि से जाने या याद रहते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं ॐ णमो संभिन्न सोदराणं समस्त शब्द प्ररूपक मुनि भिन्न कहने वालों को नमस्कार हो सम्यक्तं कर व्याति रेकेण भिन्नं विविक्तं शब्दरूपं श्रुणो तीति संभिन्न श्रोत्री बुद्धि द्वादश योजनायाम नव योजन विस्तार चक्रवर्ति स्कंधा वारोत्पन्न नर करमाद्यक्षरानक्षरात्मक शब्द संदोहस्या न्योन्य विभिन्न स्य युगपत प्रतिभासो बुद्धौ सत्यां भवति सा संभिन्न श्रोत्रीत्यर्थं सा तपः प्रभावद्विधेते येषां ते संभिन्नश्रोतारः ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं ॐ णमो सयं बुद्धाणं :

अपने आप वैराग्य के कारण कुछ न देखकर बिना दूसरे के उपदेश के बैरागी हो वह स्वयं बुद्ध है।

यो वैराग्य कारणं किंचिद् दृष्ट्वा परोपदेशं
वानपेक्ष स्वयमेव वैराग्य गतास्ते स्वयं बुद्धा।

ॐ ह्रीं अर्हं ॐ णमो पत्तेय बुद्धाणं प्रत्येक बुद्धि ऋद्धि धारी मुनि को नमस्कार हो गुरुड नागादि मानमदयादी जिनके प्रताप से शांत होते है ।

प्रत्येकाभिसिता बुद्धा प्रत्येक बुद्धा यथा अंजना
विलयात् वृषभनाथ ॐ ह्रीं अर्हं ॐ णमो बोहिय बुद्धाणं बोधित

हे बुद्ध ज्ञान जिनमें उनको नमस्कार हो।

दो वैराग्य कारणं भोगाशक्ता शरीरादिष्वशाश्वतादिरूपं
प्रदर्श्य वैराग्यं नीता स्ते बोधित बुद्धा यथा सगर चक्रवर्ती

ॐ ह्रीं अर्हं णमो उजु मदीणं- सूक्ष्म पदार्थ अनेक जानने वाले ऋजु मति धारी शांति पुष्टि के करता ऋद्धिधारी मुनि को नमस्कार हो।

ऋजु मतिर्मनः पर्यय ज्ञानिनां

मनपर्यय ज्ञान के धारी मुनिराजों को नमस्कार हो।

ॐ ह्रीं अर्हं ॐ णमो विउलमदीणं
विपुल मति मंनः पर्य ज्ञानिनां
विपुल मति ज्यौ ॥ १४ ॥

मनः पर्ययः ज्ञान के धारी मुनि सर्वशास्त्र के धारी क्षण क्षण मात्र में हो उनको नमस्कार।

ॐ ह्रीं अर्हं ॐ णमो दश पुव्वीणं
अभिन्न दश पूर्व धारिणं

दस पूर्व के धारी मुनि राजों को नमस्कार हो।

ॐ ह्रीं अर्हं ॐ णमो चउदश पूव्वीणं
उत्पातादि चतुर्दश पूर्व्वाणां

चौदह पूर्व के धारी मुनिराजों को नमस्कार हो।

ॐ ह्रीं अर्हं ॐ णमो अट्ठंग महानिमित्त कुशलाणं
अष्टांग महानिमित्त कुशलाणं ॥ १७ ॥

अंतरिक्ष भौम अंग स्वर व्यंजन लक्षण चिन्ह स्वप्न यह आठ महानिमित्त सूर्य चन्द्रग्रह नक्षत्र उदय अस्त के लक्षण जानकर शुभ अशुभ फल कहे सो अंतरिक्षि निमित्त उद्यान वापि का पर्वत नदी सरोवर आदि लक्षण जानकर भूमिगत रत्न सुवर्णादि को जाने यह भौम निमित्तज्ञान तिर्यंग अथवा मनुष्यों के लक्षण प्रकृति रस रुधिर प्रमुख धातु को देखकर शरीर वर्ण गंध उद्य अवयव को देखकर जो निमित्त ज्ञान उत्पन्न हो वह अंग निमित्त है।

ॐ ह्रीं अर्हं ॐ णमो विउव्वणं इड्ढि पत्ताणं
विविधा क्रिया अणु महा दादि रूप तया काया दे:
कारणं यस्यामृद्धौ सा विक्रिया ऋद्धिः तां प्राप्ताणां ॥ १८ ॥

विक्रया ऋद्धि के द्वारा शरीर छोटा बड़ा बनाया जाता है जैसे विष्णुकुमार मुनि इस विक्रिया ऋद्धि जिनको प्राप्त हुये है उनको नमस्कार हो।

ॐ ह्रीं अर्हं ॐ णमो विज्जा हराणं
ओंग पूर्व तन्तु प्राभृतादि लक्षण सकल विद्याधर भूतानां ॥ १९ ॥

उपदेश से या बिना उपदेश से भावपूर्वक समस्त वृत्तांत जाने उन्हें विद्याधर मुनि कहिये, सो विद्याधरों की तरह आकाश में उड़कर चले नारद मुनि व्रत ऐसे मुनि को नमस्कार हो।

ॐ ह्रीं अर्हं ॐ णमो चारणाणां अष्ट विद्याश्चारणां भवंति
जल जंघा तंतु फल पुल्लवीय आयासथि गई कुशला अट्ठ
विह चारण गुणा वइरि क्कम हीं सुविहसंति इत्यभिधानात् ॥ २० ॥

ॐ ह्रीं अर्हं ॐ णमो पणहसमणाणं विद्या धराहि
संतोपि तपो गृन्हं ति तेषां प्रज्ञाऽतिशय स्तथैवो
त्पद्यतई तित्ते प्रज्ञा श्रवण उच्यंते ॥ २१ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं ॐ णमो आगास गामीणंचारण
शब्देनोक्तानामऽप्याकाश गामिनां इतर चारणेभ्यो
विशिष्टित्यात्पुनः पृथग् उपादानं ॥ २२ ॥

विद्याधर श्रेणी पर्यंत आकाश गमन करे सो आकाश गामी ऋद्धि धारी मुनिराजों को नमस्कार हो।

ॐ ह्रीं अर्हं ॐ णमो आसी विषाणां आसीरा
शंसनं तदेव विषंयेषां मिथ स्येत्युक्ते नियमेन म्रियते
उपलक्षण मेतत् तेनाशीर मृतानामित्यरित्यपि गम्यते
शापानुग्रह समर्थानामित्यर्थः यदि हिते परस्यापकारमाशंस
ते तदापकारो भवति यदोपकार माशं शंसंते तदो पकारो भवतीति

तपोबल से मुनि ऋद्धि प्राप्त कर मुख से अगर कहे कि तु मरजा तो उसी क्षण मर जाय ऐसी सामर्थ्य जिनमें हो उनका नाम आसी विष है फल तथा सुमरण से सर्पादि का विष नष्ट होता है।

ॐ ह्रीं अर्हं ॐ णमो दिट्ठि विसाणं
इदं मप्युलक्षणार्थतेन दृष्टयमृतानामिति गम्यते यदि हिते अप्रसन्न दृष्टया
परमव लोकं ते तदा तद्भस्म करणे तेषां सामर्थ्यं अथ प्रसन्न दृष्टया तमवलो

कंते तदा ऋद्धि वृद्धि नीरोगतादि करणे तेषां सामर्थ्यां तपः प्रभावात् इष्टि विशेष एवहि तें तादृशोनपुनः पुनरुपकार मपकारं वा ते कस्य चित्त कुर्वंति शत्रो मित्रे च तेषां परमोदासीन तो पेतत्वात्

तब बल से मुनि क्रोध को प्राप्त कर देखते ही मनुष्य मृत्यु को प्राप्त होता है। दृष्टि मात्र से दूसरे को देख करने की जिनकी सामर्थ्य होती है। अगर प्रसन्न दृष्टि से देखे तो ऋद्धि वृद्धि निरोगता आदि करने की जिनकी सामर्थ्य होती है। तप के प्रभाव से उपकार और अपकार विचारने मात्र से कर सकते है तथा स्थावर जंगम विष दृष्टि दृष्टि मात्र से दूर होवे ऐसी ऋद्धि के धारी मुनियों को नमस्कार हो।

ॐ ह्रीं अर्हं ॐ णमो उग्गतवाणां २५
दो पंचम्यांऽष्टम्यां चतुर्दश्यां च प्रति ज्ञातोपवसा लाभ
द्वये त्रये वा तथैव निर्व्याह यंति ते दो च प्रकार उग्र तपसः

पांच उपवास आठ उपवास चार उपवास पंचमी, अष्टमी, चतुर्दशी को उपवास ग्रहण किया है, जिन्होंने उनको अगर उपवास पारण का अलाभ होय तो फिर उपवास करे। तीन उपवास, चार उपवास, पांच उपवास करके काल का निर्वाह कर गमौव इसे उग्रतप कहते हैं। ऐसे उग्रतप करने वाले मुनिराजों को नमस्कार हो।

ॐ ह्रीं अर्हं ॐ णमो दित्तत वाणां २६
तपः प्रभावोदभूतया देह दीप्त्या प्रहतांध काराणां

शरीर की दीप्ति कर बारह सूर्य का तेज जिनमें होय उसे दीप्त ऋद्धि कहते हैं। शत्रु सेना क्षण में भस्म करने की शक्ति दीप्त ऋद्धि से होती है।

ॐ ह्रीं अर्हं ॐ णमो तत्तत वाणं २७
तप प्रभावा देव तप्तायः पिंडयतित जल कणवत
गृहीत अहार शोषणान्नीहार रहिताणां

गरम लोह के पिंड में जल की बिन्दु भस्म होय उसीतरह ग्रहण किये हुए आहार का शोषण कर आहार रहित से दिखे उसे तप्त ऋद्धि कहते हैं। दावानल अग्नि भी जो शांत करे ऐसे तप्त तप ऋद्धि धारी मुनिराजों को नमस्कार हो।

ॐ ह्रीं अर्हं ॐ णमो महातवाणं २८
पक्ष मासापवासाऽद्यनुष्टान पराणां

पक्षमास, षणमास, वर्षोपवास करने वाली मुनि महातपय ऋद्धि धारी कहलाते है। वर्ष

उपवास पीछे पारणा करे और केवल ज्ञान उपजे पीछे पारणा नहीं करे इनको स्मरण करने से सर्व शांति होती है।

ॐ ह्रीं अर्हं ॐ णमो घोरत्तवाणं २९
सिंह शार्दूलद्या कुलेषु गिरि गह्वरादिषु भद्यानक श्मशानेषु च प्रचुर
तर शीतवाला तपदंश मशकादि युक्तेषु गत्वा दुर्द्धरोपसर्ग सहन पराणां

सिंह, व्याघ, चीता आदि क्रूर जानवरों का उपसर्ग आवे। भयंकर पर्वत गुफा श्मसान में अत्यधिक शीतवान धूप आदि सहकर दुर्द्धर उपसर्ग सहे उसे घोर तप ऋद्धि कहते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं ॐ णमो घोर गुणाणं ३०
घोर अद्भुता महांतो गुणा येषां ते घोर गुणांण

घोर वीर गुणा के धारी मुनिराजों को नमस्कार हो।

ॐ ह्रीं अर्हं ॐ णमो घोर गुण परक्क माणं
पराक्रमो दुर्द्धर व्रत धारण सामर्थ्य घोर: अचित्यं पराक्रमो येषां तेषां ॥३१॥

भूत वेताल प्रेत राक्षस शाकिनी आदि घोर दुर्द्धर व्रत धारण करने को जिनका पराक्रम सामर्थ्य हो ऐसे मुनिराजों को देखते ही भय को प्राप्त हों तथा क्रूर जीव शांति का प्राप्त हों उन घोर गुण पराक्रम धारी मुनिराजों को नमस्कार हो।

ॐ ह्रीं अर्हं ॐ णमो घोर गुण ब्रह्म चारीणं ३२
घोर दुर्द्धरोगुणा निरति चारता लक्षणो यस्य तत घोर गुणां दिव्यां गुणां
लिंगनादि भिरप्य क्षुभित चितं अथवा घोरा अद्भुता: गुणा यस्मात्प्राणिनां
भवंति तत घोर गुणं तच्च तद्ब्रह्म चर्यं तच्चरंत्यनु तिष्ठं तीत्येवं शीलानां

अतिचार रहित घोर दुर्द्धर दिव्य गुणों से भूषित ब्रह्मचर्य शीलधर्मका पालन करने वाले ऐसे मुनिराज जिनके चरण सिंह व्याघ्र आदि से सेवित हैं, जिनके स्मरण मात्र से जन्मान्तर के बैर शांत होय उनको नमस्कार हो।

ॐ ह्रीं अर्हं ॐ णमो आमो सहिपत्ताणं ३३
आम अपक्क आहार: सर्व औषधि तां प्राप्तानां

आम ऋद्धि के संयोग से समस्त रोग व अपक्क आहार के रोग जाते रहे, आम औषधि धारक मुनि को नमस्कार हो।

ॐ ह्रीं अर्हं ॐ णमो खेलोसहि पत्ताणं ३४
क्ष्वेलौ निष्ठीवनं सएवौषधिः तां प्राप्ताणां सा वा प्राप्तौषा स्तेषां

जिन मुनि के खंकार को छूने मात्र से दूसरों के रोग नष्ट हो उन मुनियों को नमस्कार हो।

ॐ ह्रीं अर्हं ॐ णमो जल्लोसहि पत्ताणं ३५
सर्व्वांग मलो जल्लः सः एवौषधि तां प्राप्तानां

जिन मुनि के जल ऋद्धि उपजे तिनके सर्वांग मल जल के स्पर्श मात्र से दूसरे रोग नष्ट हो उसे नमस्कार हो।

ॐ ह्रीं अर्हं ॐ णमो विप्पो सहिपत्ताणं ३६
विपुषो ब्रह्म विदंयः शेषं पूर्ववत्

जिन मुनि की विष्ठा के स्पर्श से दूसरे के सब रोग नष्ट हो उनको नमस्कार हो।

ॐ ह्रीं अर्हं ॐ णमो सव्वो सहिपत्ताणं ३७
सर्वं मूत्र पुरीष नख केशादिकं शेषं पूर्ववत्

जिनमुनि के मूत्र विष्ठा केश आदि मलों के स्पर्श से दूसरे के सब रोग नष्ट हो उनको नमस्कार हो।

ॐ ह्रीं अर्हं ॐ णमो मण बलिणं ३८
नो इंद्रय श्रुतावरण वीर्यांतराय क्षयोपशम प्रकर्षं सति स्वेद
मंतरेणांत मुहूर्तं सकल श्रुतार्थं चिंतनम्वधातुम समर्थास्ते मनो बलिन्स्तेषां

अंतर्मुहुत में समस्त शास्त्रों का चिंतवन करने की सामर्थ्य यान होवे सो मण बलि ऋद्धिधारी मुनिराजों को नमस्कार हो ।

ॐ ह्रीं अर्हं ॐ णमो वचो बलिणं ३९
वचो जिव्हाश्रुतावरण वीर्यांतराय क्षयोपशम प्रकर्षे सति
अंतर्मूहूर्तं सकलश्रुतोच्चारण समर्था स्तेवाग वलिन स्तेषां

अंतर्मुहुर्त में समस्त शास्त्र के पाठ करने की जिनकी सामर्थ्य है सो वचनबलि है ।

ॐ ह्रीं अर्हं ॐ णमो काय बलिणं ४०
वीर्यांतराय क्षयोपशमादा विर्भूता साधारण काय बल त्वादंगुल्यग्रेण
त्रिभुवन क्षोभनादिनि पुंसा स्तेकाय बलिन स्तेषां

अंगुली के अग्रभाग से तीन लोक को उठाकर दूसरी जगह स्थापन करने की जिनकी सामर्थ्य है उनको नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अर्हं ॐ णमो खीर स वीणं
क्षीरस्य श्रावो श्रवणं स्वादो वासोस्ति ते क्षीर श्रवण: क्षीर स्वापि नोवा तेषांक दशन मपिहि पाणौ पतितं तपो माहात्म्यात क्षीरं श्रवति स्वदत्ते वा ए व मुत्तर प्रयोपि मधुर शब्देन तु मधुरो रसो गृह्यते

जिन मुनि के हाथ में रस सहित भोजन रखने सें यह भोजन खीर समान मधुर हो व खीर श्रवे ये खीर श्रावि ऋद्धि धारक है उनको नमस्कार हो।

ॐ ह्रीं अर्हं ॐ णमो सप्पि सवीणं ४२
सर्पिषो घृतस्य श्राव: श्रवणं स्वादो वा येषां ते सर्पिश्राविण: सर्पि स्वादिनो वाकदशन मपिहि पाणौ पतितं तपो माहात्म्यत सर्प्पि: श्रवति स्वदत्ते वा॥

जिनके हाथ से लूखा भोजन से घृत झरने लगे अथवा मुनि के वचन घृत की तरह तृप्ति करे सो घृत श्राविणीं ऋद्धि है।

ॐ ह्रीं अर्हं ॐ णमो मुहरस वीणं ४३
मधो मधुर सस्य श्रावक श्रवणं स्वादो वा येषांते मधुर श्राविण: मधुर स्वादिनोवाक दशन:मपि हि पाणौ पतितं तपो माहात्म्यात् मधुर श्रवति स्वदत्ते वा

जिन मुनि के हाथ में रखा हुआ रस रहित भोजन मिष्टान्न हो जावे अथवा जिनके वचन श्रोतागे को मिष्ट गुण को प्राप्त हो सो मधुर श्राविणी धारी मुनियों को नमस्कार हो।

ॐ ह्रीं अर्हं ॐ णमो अमिय सवीणं ४४
अमृतस्य श्राव: श्रवणं वा स्वादो वा येषां ते अमृत स्वादिनो वाक दशनमपि हि पाणौ पतितं तपोमाहात्म्यात् अमृतं श्रवति स्वदत्तेवा

जिन मुनिराज के हाथ में चाहें जैसा रस रहित आहार आय सो आहार अमृत सामान हो हो जाय या जिनके वचन सुनने से अमृत सामान मालूम हो उनको नमस्कार हो।

ॐ ह्रीं अर्हं ॐ णमो अक्षीण महा णसाणं ४५
अक्षीणं महानसं रसबती येषां ते यतो भाजना दुद्धतस्य भोजनं तेभ्यो दत्त तं चक्रं वर्ति स्कंधा वारेपि भोजिते ऋद्धि विशेष यशातन् क्षीयते आ अस्तमयात

जिसके घर मुनि भोजन किये सो भोजन उसी दिन कम नहीं होय। चक्रवर्ती की सेना भोजन करे सो भी घटे नहीं या अक्षीण महाणस ऋद्धि है। इस ऋद्धि से कल्पवृक्ष की तरह वांछित फल मिले।

ॐ ह्रीं अर्हं ॐ णमो वद्धठ माणाणं ४६
अवसमंतां द ऋद्धिं व्याप्तं मानं ज्ञानं येषां

तपकर परम ऋद्धि से जिनके मान बढे है। निर्मल चारित्र के धारी ऐसे मुनि वर्द्धमान भगवान है उनको नमस्कार है।

ॐ ह्रीं अर्हं ॐ णमो सिद्धाय दणाणं ४७
सिद्धानां मुक्तात्मा नामा यतनानि निर्वाण स्थानानि

लोक के अन्दर सर्व सिद्धायतन चैत्यालय है उनको नमस्कार हो निर्मल भावों से जप करने से राजादि वशि होय।

ॐ ह्रीं अर्हं ॐ णमो च्चारणाष्यो सहि पत्ताणं

जो मुनिराजों केउच्चारण रूपी औषधि के स्पर्श से मनुष्यों के रोग नष्ट होवे उन मुनियों को नमस्कार होवे।

ॐ ह्रीं अर्हं ॐ णमो भयवदो महदि महावीर वद्धमाण बुद्धा रेसीणं चेदि
भगवत: सहज विशिष्ट मत्यादि ज्ञान त्रय वत: पूजातिशय वतो या महति महावीर:
बुद्धि रिसीणं चेदि बुद्धो हेत्यो पादेय विवेक सम्पन्न: ऋद्धि: प्रत्यक्ष यैदी च शब्दादि
वीरादिनाम ग्रहणं इति शब्देन प्रकारा र्थेन एवं प्रकारे भ्यो महर्षिभ्यो नमो

भगवान महत् महावीर वर्द्धमान बुद्धि ऋद्धि के धारी मुनिराजों को नमस्कार होय भगवान के स्मरण मात्र से बलवान वैरी स्मरण करने वालों को नहीं जीत सके।

इति शब्देन प्रकारार्थेन एवं प्रकारेभ्यो महर्षिभ्योनम:
इतिप्रत्येय

ॐ नम: सिद्धेभ्यो: अथगण भृत्यु पूजा लिख्यते
मध्ये ष्टकोंण चक्रं निरिवल जिनपतेक्षाक्षरं पीठ बद्धं
वामे ह्रीं दक्षिणे ह्यीं श्रियम धरतले तेषु सव्यापसव्यं
कोष्टेषा प्रति चक्रे फडि विवस विचक्राय होमांत मंत्रां
श्री देवीनां च षर्णं यहि रपि विषिषन्मंत्र दुर्गस्य कोणे ॥ १ ॥

प्रादक्षिण्यं स होमं सकल शशि वृतं पूर्ण चंद्रावृतं
तच्चिाक द्विन्रिय पत्राष्टक वलयादिलें
ऐहियाहं नमो गौ मंत्रैरावेष्टय बाह्यै
गणधर वलये ह्रीं ओंधाकौं निरुद्धं
यंत्रं तत्पंच शून्यैर रिवल गुरु पदाद्यक्षरैमूल मंत्रै: ॥ २ ॥

झौं झौं स्वाहांत गर्भभुवन पति जिना झौं नमो होम युक्ते
स्ताम्र पात्रे पटे वा कनक गणिकया लिख्य सौगंध गंधै:
अभ्य व्यग्य सदाग्रे परम जिनपदे हंस जापन वाक सूक्तै
हंस्त प्राप्ता महीनामलक फ मिव स्वेष्ट सिद्धिं प्रयांति ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं ह्रवीं श्रीं अर्हं असि आउसा अप्रति चक्रे फट विचक्राय झौं झौं अत्रावतरावतर संवौषट। आह्वननं

ॐ ह्रीं ह्रवीं श्रीं अर्हं असि आउसा अप्रति चक्रे फट विचक्राय झौं झौं अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ: ठ:। स्थापनं

ॐ ह्रीं ह्रवीं श्रीं अर्हं असि आउसा अप्रति चक्रे फट विचक्राय झौं झौं अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्। सन्निधिकरणं

कर्पूरामोदमत्त भ्रमर गण कृत श्लाघ्य तीर्थ वारां
भृंगार स्फार नालादिह सुकृत लता वृद्धि मा पादयं त्यागंधाभ:

स्वच्छ धारामिव ध वधि मया धारयाता हसंत्या
षट्कोण व्याप्त मध्यं गणधर वलयं यंत्रमाराधयामि ॥ जल ॥

माद्य द्विदंति गंडस्थल जसनदी गद्यं लोलत्कालिमाला
व्याजाग्निशौरभै स्तै र्मलयज धनसारो ध्व काश्मीर मिश्रै:
गंधि: पूर्णेंदु वर्णौर्भवभय परिता पापहिं लेपनाढ्यै:
षट्कोण व्याप्त मध्यं गणधर वलयं माराधयामि ॥ गंध लयं ॥
लक्ष्मी लीलाद हासैरिव विसदतया धर्म बीजांकुरा स्तेभि:
शुक्ल ध्यानावदाते विंजित सुरस रिद्धि विडिंडैर पिंडै:

युजां भूतिश्च मुक्ताफल निकर नितेरक्ष तैर क्षतांगै:
षट् कोण व्याप्त - - - - - - - - - - - - ॥अक्षतं ॥
जाती वासंति मल्लि वकुल कुवलयां भोज मंदार कुंद

स्वाग्नि कैवल्य कांतारिविकसित नयनाद्यांग सौभाग्य भाग्भिः
सौरभ्यांशक्त भृंग व्रतति मलि निमां स्मेर वक्त्रै र्हमन्हि :
षट् कोण व्याप्त - - - - - - - - - - - - - - - - - - ॥ पुष्पं ॥
गांगेया मत्र मद्य मार्प्पित कलम महवि: पायषा मोदहृद्यै:
निवेद्यै वाष्प पूरा त्परममृत भुजां प्रीति मुत्पादयाद्भि:

कैलासादे इंद्यानि: श्रियमति विशदं सारदीसभ्रलीलां
त्रैलोक्या काश मध्ये गणधर महिमां तेजसा दर्शयद्भि:
षट्कोण व्याप्त - - - - - - - - - - - - - - - - नेवैद्य:
न्नीतं पापांधकारं दिसिदिसि निखिलं नाम तानासयद्भि:
दीपै दैंदीप्य माने: कनक मनिग्भाद्यै रत्न कर्पूर कल्पै:
षट्कोणं - - - - - - - - - - - - - - - - - ॥ दीपं ॥

धूपैरंगार संगा तद्भ वित परमले धाण पेद्यैरमीभि
दिक्यालानां वद्यातु क्षिति तल विरहां नीलया रावताभे:
मुक्ति स्त्री वश्य रूपैरगुरू वन सटी सेवनास्तिं फ्रगातै:
षट्कोण - - - - - - - - - - - - - - - - - ॥ धूपं ॥

आदो मोदामेदि वासा युवति पन मोहारिभि: सत्पुलौद्यै:
प्रत्यग्रौ पूजका नामऽभिमत फलादै: स्वर्ण वर्णै सुपक्वै:
द्राक्षा खर्जूर काम्र कमुक रूचक सं ज वुजे वीरभेदि:
षट्कोणं - - - - - - - - - - - - - - - - - - ॥ फलं ॥

इत्थं षट्कोण चक्रं निखिल गण भृतालाम मंत्रावृतं यस्तोद्याद्यै
रर्चनांगै र्यजति जपति वाध्यायति स्तौति भक्त्या
सोयं देवेन्द्र लक्ष्मी नरपति महिमां संयम: श्री प्रसन्नां
पश्चा जै निंद्र लक्ष्मीं विलय विरहितां मोक्ष लक्ष्मीं प्रयाति:

ॐ ह्रीं इ्वीं श्रीं अर्हं असि आउसा अप्रति चक्रे फट विचक्राय जलआदि अर्घ्यं निर्व्वपामीति स्वाहा अनेन विधिना मध्य पूजां विदध्यात् ॥

इस विधि से पूजा करो ।

स्वप्न सिद्धि

ॐ ह्रीं इवीं इवीं अर्हं श्रीं णमो जिणाणं मित्यादि
ॐ ह्रीं अर्हं अट्ठंग महाणिमित्य कुशलाणं-ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः
अप्रति चक्रे फट विचक्राय असि आउसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा ॥

इत्येतत्सप्तदश पदाश्रित मूलविद्यां सित
सुगंधि कुसुमैरष्टोत्तर शतंजप्त्वा शयना
सनस्य भविष्य द्विविक्षित कार्यं यथावत प्रतिभाति ॥ १ ॥

उपरोक्त मंत्र सत्रह पदों वाले मूलमंत्र के श्वेत तथा सुगंधित पुष्पों से १०८ जपकर सोये हुये पुरुष को आगे होने वाले इच्छित कार्य ठीक ठीक विदित हो जाते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो विउव्वण इद्धि पताणं
ॐ ह्रीं अर्हं णमो विज्जाहराणं
ॐ ह्रीं अर्हं णमो च्चारणाणं
ॐ ह्रीं अर्हं णमो पण समणणं
ॐ ह्रीं अर्हं णमो आगास गामीणं
अयं पंच पद मंत्रः शुद्धाद्वि शिष्टे वट वृक्ष मूले नाना शास्त्राणि निशि तौदग्र धाराणि सुगंधि पुष्पाक्षितै रभि मंत्र्य तद्विटप संबद्ध मष्टोत्तर शत रज्जु शिक्यं नमः सिद्धेभ्यः इत्यनुस्मर मारुह्य प्रति रज्जु मनं तरोक्त मंत्रं पठन् शिक्यं क्रमतः छिंद्यात् आकाश गामिनी विद्या सिद्धयति ॥ २ ॥

यह पांच पद का क्रम मंत्र है। शुद्धि आदि से युक्त बड के वृक्ष की जड़ में तेज धार वाले अनेक शस्त्रों को सुगंधित पुष्प तथा अक्षतों से अभिमंत्रित करके उस वृक्ष में १०८ रस्सी वाला एक छींका लटकाकर, फिर ॐ नमः सिद्धेभ्य मंत्रं का ध्यान करता हुआ छींके पर चढ़कर प्रत्येक रस्सी पर मूलमंत्र को पढ़ता हुआ क्रम से छींके को काट डाले। आकाश गामिनी विद्या सिद्ध हो जाती है।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो आस्सी विषाणं ॐ ह्रीं अर्हं णमो दिट्ठि विषाणं
अनेन द्वि पद मंत्रेण गोशीर्षचंदनेन यंत्रमुद्धार्य अष्टोतर
शतंजप्त्वा विष दष्टं पाययेत स्थावर जंगम विषंनाशयति

इस दो पद वाले मंत्र से गोरोचन तथा चंदन से यंत्र बनाकर मंत्र को १०८ बार जपे हुए जल को डँसे हुए को पिला दें तो स्थावर जंगम विष नष्ट होता है।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो उग्गत्तवाणं ॐ ह्रीं अर्हं ॐ णमो दित्ततवाणं
ॐ ह्रीं अर्हं णमो तत्तत वाणं ॐ ह्रीं अर्हं णमो महातवाणं
ॐ ह्रीं अर्हं णमो घोरत्तवाणं ॐ ह्रीं अर्हं णमो घोर गुणाणं
ॐ ह्रीं अर्हं नमो घोर गुण परक्कमाणं
ॐ ह्रीं अर्हं णमो घोर गुण बम्भचारीणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अप्रति चक्के फट् विचक्राय असि आउसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा।

अष्टपद मंत्र अष्टोत्तर शत पुष्पैः
जंपन्न महायुद्ध तस्करादीन नश्येत॥

यह आठ पद का मंत्र है पुष्पों से १०८ बार जपने से महायुद्ध और चौर आदि नष्ट होते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो आयो सहिपत्ताणं
ॐ ह्रीं अर्हं णमो खेलो सही पत्ताणं
ॐ ह्रीं अर्हं णमो जलो सहिपत्ताणं

ॐ ह्रीं अर्हं ॐ णमो विपो सहि पत्ताणं ॐ ह्रीं अर्हं ॐ णमो सव्वो सहि पत्ताणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अप्रति चक्के फट विचक्राय असि आउसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा ॥

अयं पंच मंत्रः गोशीर्ष चंदनेन यंत्र मुद्रार्ध्यां अनेन पंचपद मंत्रेण अष्टोत्तर शत सत पुष्पै जपत्वा तद्गंध पानीयेन आतुरं पाययेत गुल्म शूल प्लीहा तीसार तीव्र ज्वर कुष्ट गंडमालाऽदयो नश्यंति॥

गोरोचन और चंदन से यंत्र बनाकर इस पंच पद मंत्र को पुष्पों पर १०८ बार जप कर उसका गंदोदक रोगी को पिलाये तो बायगोला का दर्द, तिल्ली, दस्त, तेज, बुखार, कोढ़ और गंडमाला आदि रोग नष्ट हो जाते हैं।

ॐ ह्रीं अर्हं ॐ णमो मण बलीणं -ॐ ह्रीं अर्हं णमो वचि बलिणं - ॐ ह्रीं अर्हं णमो काय बलिणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अप्रति चक्के फट विचक्राय असि आउसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा॥

इति त्रिपद मंत्र अष्टोत्तर शत पुष्पैज्जात
शार्दूलादि पाप सत्वेभ्योभयं न जायते।

इन तीन पद वाले मंत्र को १०८ बार पुष्पों पर जप करने वाले को सिंह आदि पापी जीवों से भय नहीं लगता।

ॐ ह्रीं अर्हं ॐ णमो अमि असवीणं - ॐ ह्रीं अर्हं ॐ अर्हं णमो महुर सवीणं ॐ ह्रीं अर्हं ॐ णमो सप्पि सवीणं - ॐ ह्रीं अर्हं णमो खीर सवीणं ॐ ह्रीं अर्हं णमो अक्षीण महाणसाणं ॐ ह्रीं अर्हं ॐ णमो लोए सव्व सिद्धाय दणाणं ॐ ह्रीं अर्हं ॐ णमो भयवदो महदि महावीर वड्ढमाण बुद्ध रिसीणं चेदि ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अप्रति चक्रे विचक्राय असि आउसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा ॥

अयं मंत्रं अष्टोत्तर शतं प्रत्यहं जप्तः कोश वृद्धिर्भवति ।

इस मंत्र को प्रतिदिन १०८ बार जपने से कोश बढ़ता है।

श्री मदाशाधर पदामृष्टि गणधर वलयऽ मनु शिष्यते

अब श्री आशाधरजी के समृद्धि देने वाले गणधर वलय का वर्णन किया जाता है।

पूर्वं षट्कोण चक्र मध्ये क्ष्मा पीठाक्षरं लिखेत् तदुपरि अर्हं मिति न्यसेत तस्य दक्षिणतः झ्वीं वाम तश्च ह्रीं इति विन्यसे त पीठाधः श्री न्यसेत ततः असि आउसा स्वाहा इत्येनेन श्रीकारस्यं दक्षिणतः पृमृत्युत्तरतो यावत् प्रादक्षिणेन वेष्टयेत् ततः कोणेषु षटस्वपि मध्ये अप्रति चक्रे फडिति सव्येन स्थापयेत तथा कोणांतरेषु विचक्राय स्वाहेति षट् बीजानि झ्रौंकारों तराण्यं पसेव्येन विन्यसेत् ततः कोणग्रेषु श्रीं ह्रीं धृति कीर्तिं बुद्धि लक्ष्मी रीति षट् देवता प्रादक्षिणेन विलिखेत् तद्वहि र्वलयं दत्याऽष्टसुत्रिषु णमो जिणाणं णमो ॐ ह्रीं जिणाणं णमो परेमोहि जिणाणं णमो सव्वोहि जिणाणं णमो अणंतोहि जिणाणं णमो कुट्ठ बुद्धिणं णमो बीज बुद्धिणं णमो पादारि सारिणं इत्यष्टपदानि ॐ ह्री णमो अर्हं पूर्वादिक क्रमेण लिखेत् ततस्तद्वहिस्त द्वत्षोडस पत्रेषु ॐ ह्रीं अर्हं णमो संभिण सोदराणं इत्यादिनि ॐ ह्रीं अर्हं णमो दिट्ठि विसाणं इत्येतदंतानि षोडसपदानि विलिखेत् ॥

तत्तस्त द्वहि स्तद्वत चतुविंशांतिं पत्रेषु ॐ ह्रीं अर्हं णमो उग्गवाणं इत्यादीनि ॐ ह्रीं अर्हं णमो भयवदो महदि महावीर वड्ढमाण बुद्ध रिसीणं चेदि इत्येतऽदतानि

चतुर्विंशति पदान्या लिखेत् ह्रीं कार मात्रया त्रिगुणं वेष्टयित्वा क्रोंकारेण निरुद्धय बहिः पृथ्वी मंडलं विलिखेत् ॥

पहले छ कोण वाले चक्र के मध्य में क्ष्मां पीठाक्षर को लिखें, उसके ऊपर अर्हं रखे। उसके दाहिनी तरफ इ्वीं और बाई तरफ ह्रीं लिखें। पीठाक्षर के नीचे श्रीं लिखें। श्रीं कार के दक्षिण से शुरू करके उत्तर तक प्रदक्षिण देता हुआ असि आउसा स्वाहा वेष्टित करे। फिर छहों कोणों में सव्य मंत्र अप्रति चक्रे फट लिखे और कोणों के अंतरालों में विचक्राय स्वाहा अपसव्य मंत्र के छहों बीजों को बीच बीच में झ्रौं बीज रखकर बाई ओर से लिखें फिर कोणों के अग्रभाग में में श्री ह्रीं धृति कीर्ति बुद्धि लक्ष्मी इन छ देवियों को प्रदक्षिणा देते हुये लिखे उसके बाहर एक वलय बनाकर आठों पत्रों में णमो जिणाणं - णमो उहीं जिणाणं णमो परमोहि जिणाणं- णमो सवैहि जिणाणं- णमो अणंतो जिणाणं णमो कुट्ठ बुद्धिणं णमो बीज बुद्धिणं णमो पादारि सारिणं इन आठ पदों को हर एक के पहले ॐ ह्रीं अर्हं लगाकर पूर्व दिशा की ओर से क्रमपूर्वक लिखें उसके बाहर उसीतरह से सोलह पत्रों में ॐ ह्रीं अर्हं णमो संभिणं सोदराणं से शुरू करके ॐ ह्रीं अर्हं णमो दिट्ठि विसाणं के अंत तक सोलह पदों को लिखें उसके बाहर उसीतरह से चौबीस पत्रों में ॐ ह्रीं अर्हं णमो उग्गत्तवाणं इस पद से शुरू करके ॐ ह्री अर्हं णमो भयवदो महदि महावीर वड्ढमाण बुद्ध रिसीणं चेदि तक के चौबीस पदों को लिखे इसके बाहर तीन बार ह्रीं से वेष्टित करके क्रों से निरोध करे। उसके बाहर पृथ्वीमंडल लिखे।

ॐ ह्रीं इ्वीं श्रीं अर्हं असि आउसा अप्रति चक्रे फट
विचक्राय झ्रौं झ्रौं स्वाहाअनेन मध्ये पूजां विदध्यात ॥

इस मंत्र से बीच में पूजा करे।

ॐ णमो जिणाणं इत्यादि ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आउसा
झ्रौं झ्रौं स्वाहाएते अष्ट चत्वारिंशत्पत्र पूजा मंत्रा ॥

इस मंत्र से ४८ पत्रों की ऋद्धि की पूजा करे।

श्री गणधर वलय यंत्रं समाप्तं

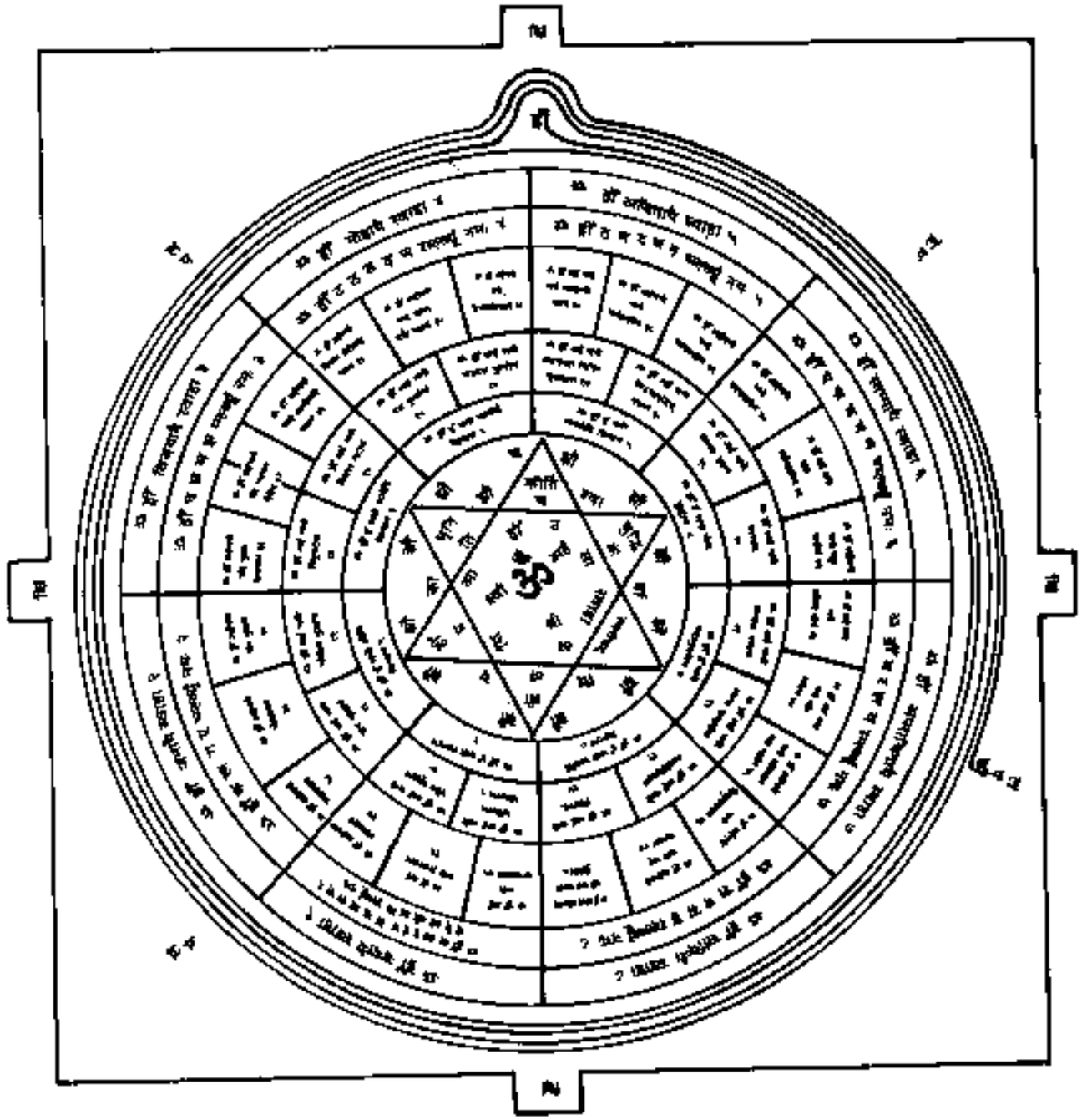

नित्यं यो गण भृन्मंत्रं विशुद्ध स्सन्पठत्य ऽमुं
आश्रव स्तस्य पुण्यानां निर्ज्जरा पाप कर्मणां
नस्यादुपद्रव: कश्चिद व्याधि भूत विषादिभि:
सदसद्वीक्षणं स्वप्ने समाधिश्च भवेन्मृतौ

जो पुरूष शुद्ध होकर इस गणधर वलय मंत्र को पढ़ता है उसके पुण्य का आस्रव होता है और पाप कर्मों की निर्जरा होती है। उसके रोग भूत विष आदि से कोई कष्ट नहीं होता । यह स्वप्न

में अच्छे और बुरे को देखता है। और मृत्यु के समय उसके परिणाम शुभ रहते हैं अर्थात् उसका समाधि मरण होता है।

ॐ ह्रं ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः स्वाहा

इत गणधर वलय मूलमंत्रः

यह गणधर वलय मूल मंत्र है।

ॐ णमो अरहंताणं णमो जिणाणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अप्रति चक्रे फट विचक्राय झ्रौं झ्रौं स्वाहा ॐ ह्रीं अर्हं असि आउसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा।

एतत्सर्वत्र योजनीयं ।

अन्य प्रकाशंतर माहः ॥

ॐ ह्रीं झ्रीं श्रीं अर्हं णमो अरिहंताणं णमो जिणाणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अप्रति चक्रे फट विचक्राय स्वाहा ॐ ह्रीं अर्हं असि आउसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा ॥ १ ॥

एतत्सर्वत्र योजनीयं विशुचिका शांति भंवति

इस मंत्र का प्रयोग करने से हैजा रोग की शांति होती है ।

ॐ ह्रीं झ्रीं श्रीं अर्हं ॐ णमो अरिहंताणं णमो जिणाणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अप्रति चक्रे फट विचक्राय असि आउसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा ॥ २ ॥

अष्टोत्तर शत पुष्पैर्जापेत ज्वर नाशनं

इस मंत्र का १०८ बार जप करने से ज्वर नष्ट हो जाता है।

ॐ ह्रीं झ्रीं श्रीं अर्हं ॐ णमो जिणाणं णमो परमोहि जिणाणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अप्रति चक्रे फट विचक्राय असि आउसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा ॥ ३ ॥

शिरो रोग नाशयति

यह मंत्र सिर के रोग को नष्ट कर देता है।

ॐ ह्रीं झ्रीं श्रीं अर्हं ॐ णमो सव्वोसहि णमो जिणाणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अप्रति चक्रे फट विचक्राय असि आउसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा ॥ ४ ॥

अक्षि रोगं नाशयति

यह मंत्र आँखों के रोगों को नष्ट करता है।

ॐ ह्रीं ह्वीं श्रीं अर्हं ॐ णमो अणंतोहि णमो जिणणं हां हीं हूं हौं ह्रः अप्रति चक्रे फट विचक्राय असि आउसा झौं झौं स्वाहा ॥५॥
कर्ण रोगं नाशयति

यह मंत्र कान के रोगों को नष्ट करता है।

ॐ ह्रीं ह्वीं श्रीं अर्हं ॐ णमो कोट्ठबुद्धिणं हां हीं हूं हौं ह्रः अप्रति चक्रे फट विचक्राय असि आउसा स्वाहा ॥६॥
शूल गुल्मोदर रोगान्नाशयति

यह मंत्र वायु गोल, पेट के रोगों को नष्ट करता है।

ॐ ह्रीं ह्वीं श्रीं अर्हं णमो सीअ बुद्धिणं हां हीं हूं हौं ह्रः अप्रति चक्रे फट असि आउसा झौं झौं विचक्राय स्वाहा ॥७॥
श्वासं हिक्कादि नाशयति

यह मंत्र श्वास और हिचकी आदि रोगों को नष्ट करता है।

ॐ ह्रीं ह्वीं श्रीं अर्हं ॐ णमो पादाणु सारीणं हां हीं हूं हौं ह्रः अप्रति चक्रे फट विचक्राय असि आउसा झौं झौ स्वाहा ॥८॥
परस्परं विरोधं नाशयति

यह मंत्र आपस के बैर नष्ट करता है।

ॐ ह्रीं ह्वी श्रीं अर्हं ॐ णमो संभिण सोदराणं हां हीं हूं हौं ह्रः अप्रति चक्रे फट विचक्राय असि आउसा झौं झौ स्वाहा ॥९॥
श्वास नाशयति

यह मंत्र श्वास के रोग को नष्ट करता है।

ॐ ह्रीं ह्वीं श्रीं अर्हं ॐ णमो पत्तेय बुद्धाणं हां हीं हूं हौं ह्रः अप्रति चक्रे फट विचक्राय असि आउसा झौं झौं स्वाहा ॥१०॥
प्रतिवादि विद्या छेदनं

यह मंत्र प्रतिवादी की विद्या को नष्ट करता है।

ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं ॐ णमो सव्व बुद्धाणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अप्रति चक्रे फट विचक्राय असि आउसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा ॥ ११ ॥
कवित्वं पांडित्यं भवति

यह मंत्र कविता करने शक्ति और विद्वता प्राप्त कराता है।

ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं ॐ णमो वोहिय बुद्धाणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अप्रति चक्रे फट विचक्राय असि आउसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा ॥ १२ ॥
अन्य गृहीत श्रुतं एक संधौ भवेदिति

इस मंत्र से दूसरे के ग्रहण किये हुवे शास्त्रों को सुनकर उसी के समान याद हो जाता है।

ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं ॐ णमो उज्जु मदीणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अप्रति चक्रे फट विचक्राय स्वाहा ॥ १३ ॥
सर्वशांतिकं भवति

इस मंत्र से सर्वप्रकार की शांति होती है।

ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं ॐ णमो विउमदीणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अप्रति चक्रे फट विचक्राय असि आउसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा ॥१४॥
बहुश्रुतवान भवति लवणमल्ल भोजने वर्जनं

इस मंत्र से बड़ा भारी पंडित हो जाता है। इस मंत्र के प्रयोग काल में नमकीन व खट्टे नहीं खाना चाहिये।

ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं ॐ णमो दश पुव्वीणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अप्रति चक्रे फट विचक्राय असि आउसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा ॥ १५ ॥
सर्वांग वेदी भवति

इस मंत्र से दस अंग धारी पंडित हो जाता है।

ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं ॐ णमो चउदश पुव्वीणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अप्रति चक्रे फट विचक्राय असि आउसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा ॥ १६ ॥
स्व समय पर समय वेदी भवति १०में दिन

इस मंत्र से अपने और दूसरे के अंत समय का ज्ञानी हो जाता है।

ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं ॐ णमो अट्ठंग महाणिमित्त कुशलाणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अप्रति चक्रे फट विचक्राय असि आउसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा ॥१७॥
जीवित मरणादिकं जानाति

इस मंत्र से जीवन मरण आदि को जाना जाता है।

ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं ॐ णमो विउव्वण इड्ढि पत्ताणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अप्रति चक्रे फट विचक्राय असि आउसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा ॥१८॥
कामित वस्तुनि प्राप्नोति दिन २८ में

इस मंत्र से मनुष्य इच्छा की हुई वस्तु को प्राप्त करता है।

ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं ॐ णमो विज्जाहराणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अप्रति चक्रे फट विचक्राय असि आउसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा ॥१९॥
उपदेश प्रदेश मात्रं गमयति

इस मंत्र से उपदेश के एक प्रदेश का ज्ञान करा देता है।

ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं ॐ णमो चारणां ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अप्रति चक्रे फट विचक्राय असि आउसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा ॥२०॥
नष्टचिंता नष्ट पदार्थं स्वयं जानाति

इस मंत्र से भूली हुई बात और खोई हुई चीज का स्वयं ज्ञान हो जाता है।

ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं ॐ णमो पण समणाणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अप्रति चक्रे फट विचक्राय असि आउसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा ॥२१॥
आयुष्यावसानं जानाति

इस मंत्र से मनुष्य आयु की सामग्री को जानता है।

ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं ॐ णमो आगास गामीणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अप्रचि चक्रे फट विचक्राय असि आउसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा ॥२२॥
अंतरिक्ष गमनं भवति

इस मंत्र से आकाश गमन होता है।

ॐ ह्रीं इ्वीं श्रीं अर्हं ॐ णमो अरिहंताणं आसीविसाणं ह्रां ह्रीं हूं ह्रौं ह्रः अप्रति चक्रे फट विचक्राय स्वाहा ॥ २३ ॥
विद्वेष प्रतिहतं भवति

इस मंत्र से शत्रुता नष्ट हो जाती है।

ॐ ह्रीं इ्वीं श्रीं अर्हं ॐ णमो दिट्ठि विसाणं ह्रां ह्रीं हूं ह्रौं ह्रः अप्रति चक्रे फट विचक्राय असि आउसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा ॥ २४ ॥
स्थावर जंगम कृत्रिम विषं नाशयति

इस मंत्र से स्थावर जंगम और कृत्रिम सभी विष नष्ट होते हैं।

ॐ ह्रीं इ्वीं श्रीं अर्हं ॐ णमो उग्गत्त वाणं ह्रां ह्रीं हूं ह्रौं ह्रः अप्रति चक्रे फट विचक्राय असि आउसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा ॥ २५ ॥
वच स्थंभणं भवति

इस मंत्र से वाणी का स्थंभन होता है।

ॐ ह्रीं इ्वीं श्रीं अर्हं ॐ णमो दित्तवाणं ह्रां ह्रीं हूं ह्रौं ह्रः अप्रति चक्रे फट विचक्राय असि आउसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा ॥ २६ ॥
सेना स्थंभण भवति आदित्य वारे मध्यान्हे समयति

इस मंत्र को रविवार को दोपहर के समय जपकर सिद्ध करने से सेना का स्तंभन होता है।

ॐ ह्रीं इ्वीं श्रीं अर्हं ॐ णमो तत्तत्तवाणं ह्रां ह्रीं हूं ह्रौं ह्रः अप्रति चक्रे फट विचक्राय असि आउसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा ॥ २७ ॥
जल अग्नि स्तभंणं भवति

इस मंत्र से जल और अग्नि का स्तंभन होता है।

ॐ ह्रीं इ्वीं श्रीं अर्हं ॐ णमो महातवाणं ह्रां ह्रीं हूं ह्रौं ह्रः अप्रति चक्रे फट विचक्राय असि आउसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा ॥ २८ ॥
जलं स्तभंणं भवति।

इस मंत्र से जल स्तंभन होता है।

ॐ ह्रीं इवीं श्रीं अर्हंॐ णमो घोरवत्तावाणं ह्रां ह्रीं हूं ह्रौं ह्रः अप्रति चक्रे फट विचक्राय असि आउसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा ॥ २९ ॥
विष मुख दोष रोगादि नाशनं

यह मंत्र विष और मुख के रोग आदि को नष्ट करता है।

ॐ ह्रीं इवीं श्रीं अर्हं ॐ णमो घोर गुणणं ह्रां ह्रीं हूं ह्रौं ह्रः अप्रति चक्रे फट विचक्राय असि आउसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा ॥ ३० ॥
दुष्ट मृगादिनां भयं नाशयति

यह मंत्र दुष्ट मृगादि के भय को नष्ट करता है।

ॐ ह्रीं इवीं श्रीं अर्हं ॐ घोर गुण परक्कमाणं ह्रां ह्रीं हूं ह्रौं ह्रः अप्रचि चक्रे फट विचक्राय असि आउसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा ॥ ३१ ॥
लूतादि गर्भात का वलिं नाशयति

यह मंत्र चींटी कान खजूरे के विष और गर्भपात को नष्ट करता है।

ॐ ह्रीं इवीं श्रीं अर्हं ॐ णमो घोर गुण ब्रह्मचारीणं ह्रां ह्रीं हूं ह्रौं ह्रः अप्रति चक्रे फट विचक्राय असि आउसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा ॥ ३२ ॥
ब्रह्म राक्षसादिग्रहान्नाशयति

यह मंत्र ब्रह्म राक्षस और ग्रहों को नष्ट करता है।

ॐ ह्रीं ऋवीं श्रीं अर्हं ॐ णमो खेलो सहि पत्ताणं ह्रां ह्रीं हूं ह्रौं ह्रः अप्रति चक्रे फट विचक्राय असि आउसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा ॥ ३३ ॥
सर्वापमृत्युर्न्नभवति

इस मंत्र से कही भी अपमृत्यु नहीं हो सकती है।

ॐ ह्रीं इवीं श्रीं अर्हंॐ णमो आमो सहि पत्ताणं ह्रां ह्रीं हूं ह्रौं ह्रः अप्रति चक्रे फट विचक्राय असि आउसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा ॥ ३४ ॥
जन्मांतर वैर पराभवं भवति

इस मंत्र से दूसरे जन्म के बैर से होने वाली पराजय नहीं होती है।

ॐ ह्रीं इ्वीं श्रीं अर्हं ॐ णमो जल्लो सहि पत्ताणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अप्रति चक्रे फट विचक्राय असि आउसा झौं झौं स्वाहा ॥ ३५ ॥

अपस्मार प्रलाप नष्ट चिंता विघ्नं नाशयति

यह मंत्र मृगी प्रलाप चिंता से फंसे रहने को नष्ट करता है।

ॐ ह्रीं इ्वीं श्रीं अर्हं ॐ णमो विप्पो सहि पत्ताणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अप्रति चक्रे फट विचक्राय असि आउसा झौं झौं स्वाहा ॥ ३६ ॥

गजमारी शाम्यति

इस मंत्र से हाथियों की बीमारी नष्ट होती है।

ॐ ह्रीं इ्वीं श्रीं अर्हं ॐ णमो सव्वो सहि पत्ताणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अप्रति चक्रे फट विचक्राय स्वाहा ॥ ३७ ॥

मनुष्योमरोपसर्गं नाशयति

इस मंत्र से मनुष्यों और देवताओं के उपसर्ग दूर होते हैं।

ॐ ह्रीं इ्वीं श्रीं अर्हं ॐ णमो मण वलिणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अप्रति चक्रे फट विचक्राय असि आउसा झौं झौं स्वाहा ॥ ३८ ॥

अपस्मारीं प्रशाम्यति

इस मंत्र से अपस्मार का रोग शांत होता है।

ॐ ह्रीं इ्वीं श्रीं अर्हं ॐ णमो वचि वलीणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अप्रति चक्रे फट विचक्राय असि आउसा झौं झौं स्वाहा ॥ ३९ ॥

अजमारी प्रशाम्यति

इस मंत्र से बकरियों की बीमारी नष्ट होती है।

ॐ ह्रीं इ्वीं श्रीं अर्हं ॐ णमो काय वलिणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अप्रति चक्रे फट विचक्राय असि आउसा झौं झौं स्वाहा ॥ ४० ॥

गोमारी शाम्यति

इस मंत्र से गायों की बीमारी नष्ट होती है।

ॐ ह्रीं झ्वीं श्रीं अर्हं णमो खीर सवीणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अप्रति चक्रे फट विचकाय असि आउसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा ॥ ४१ ॥
गोक्षीरा जपयसि पिबेत दिन ४१ अष्टादश कुष्ट गंडमाला दिकं नाशयति

इस मंत्र से १८ प्रकार ६ गंडमाला आदि को नष्ट करता है इसकी सिद्धि में दिन ४१ तक गाय का दूध जप कर पीएं।

ॐ ह्रीं झ्वीं श्रीं अर्हं ॐ णमो सप्पिस वीणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अप्रति चक्रे फट विचकाय असि आउसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा ॥ ४२ ॥
एकादिक द्राहिक त्र्याहिक चातुर्थिक पाक्षिकमासिक सावंत्सरिकादिक समस्त शीतज्वरं नाशयति

यह मंत्र रोज आनेवाले दूसरे दिन आने वाले तेइया चोथी या पाक्षिक मासिक और वार्षिक आदि सभी शीत ज्वरों को नष्ट करता है।

ॐ ह्रीं झ्वीं श्रीं अर्हं ॐ णमो महुर सवीणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अप्रति चक्रे फट विचकाय असि आउसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा ॥ ४३ ॥
सर्व व्याधिर नाशयति

यह मंत्र सब रोगों को नष्ट करता है।

ॐ ह्रीं झ्वीं श्रीं अर्हं ॐ णमो अमियस विणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अप्रति चक्रे फट विचकाय असि आउसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा ॥ ४४ ॥
समस्तोपसर्गं नाशयति

यह मंत्र समस्त प्रकार के उपसर्गों को नष्ट करता है।

ॐ ह्रीं झ्वीं श्रीं अर्हं ॐ णमो अक्षीण महाणसाणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अप्रति चक्रे फट विचकाय असि आउसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा ॥ ४५ ॥
स्त्र्याकर्षणं भवति

इस मंत्र से स्त्री का आकर्षण होता है।

ॐ ह्रीं झ्वीं श्रीं अर्हं ॐ णमो वद्धमाणाणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अप्रति चक्रे फट विचकाय असि आउसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा ॥ ४६ ॥
बंधनं विमोचनं कुरु स्वाहा

इस मंत्र से बंधन मुक्त होता है।

ॐ ह्रीं इ्वीं श्रीं अर्हं ॐ णमो लोए सव्व सिद्धाय दणणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्र: अप्रति चक्रे फट विचक्राय असि आउसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा ॥ ४७ ॥

इस मंत्र से राज पुरुषादिक का वशीकरण होता है।

ॐ ह्रीं इ्वीं श्रीं अर्हं ॐ णमो भयवदो महदि महावीर वद्धमाण बुद्ध ऋषीणं चेदि ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्र: अप्रति चक्रे फट विचक्राय असि आउसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा ॥ ४८ ॥
समाधि सुखं प्राप्नोति

इस मंत्र से पुरुष समाधि सुख को पाता है।

इति मंत्रफलं इति गण भृति कल्प मंगलास्तु

अतगण भृत्य मंत्रस्य करन्यास अंगन्यास

ॐ ह्रीं अंगुष्टाभ्यां नम:
ॐ इ्वीं तर्जनीभ्यां नम:
ॐ श्रीं मध्यमाभ्यां नम:
ॐ अर्हं अनामिकाभ्यां नम:
ॐ णमो अरिहंताणं कनिष्ठाभ्यां नम:
ॐ ह्रां करतलकरपृष्ठाभ्यां नम:
ॐ ह्रीं करपूराय नम:
ॐ ह्रं हृदयाय नम:
ॐ ह्रौं शिरशे स्वाहा
ॐ ह्र: शिखायै वौषट्
ॐ अप्रति चक्रे फट विचक्राय कवचाय हुं
ॐ असि आउसा नेत्र त्रयाय
ॐ इ्वीं झ्रौं झ्रौं अस्त्राय फट

ॐ ह्रीं इ्वीं श्री अर्हं ॐ णमो अरिहंताणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्र: अप्रति चक्रे फट विचक्राय असि आउसा झ्रौं झ्रौं स्वाहा।

अथ संकल्प

ॐ अद्य भगवती महादि ब्रह्मणो त्रिलोक्य मध्ये मध्यास्ते जंबू वृक्षोपलक्षित जंबू द्वीपे सुमेरु दक्षिण दिग्भागे भरत क्षेत्रे आर्य खंडे अस्मिन् विनय जनिता भिरामौ जयनगरे श्री मूल नायक चैत्यालय प्रदेशे एतद् अव सर्पणी काला वशानं प्रवर्तमान कलियुगाभिधान पंचम काले महति महावीर स्वामि धर्मोपदेश व्यति कर श्री गौतम स्वामी प्रतिपादित श्रेणिक महामंडलेश्वर समाचरित महाराज धिराज स्वाहा जित राज्य प्रवर्तमान सबत .....। प्रवर्तमान मासोत्तम मासे .....। शुभे पक्षे ....। तिथौ .....। वाशरे शुभ गृह नक्षत्र होरा मूहूर्त्त लग्न युक्तायां मूलसंधा बलात्कार गणे सरस्वती गच्छे कुंद कुंदाचार्यान्वे गोत्र नाम्नार्थ इष्ट कार्य सिद्धयर्थं सकलारिष्ट निराकरणार्थं इदं गणभृत्यं स्तोत्रं मंत्र.....। संख्या आराधन संकल्प करिष्ये श्री रस्तु ॥

अथ पूजा प्रकारो वक्ष्यते

श्रियः सुखाकर्षणमऽस्ति यावद्गणेश चक्रं तदुपासकानां
तावच्च संसार सुखोपभोगविघ्नान् हरंती श्रियमऽर्चयामि ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्रीं देवी आगच्छ आगच्छ अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः मम सन्निहितो भव भव वषट इदं जल मित्यादि गृहाण गृहाण स्वाहा ॥

गणेश चक्रं निज पूजकानां मुक्ति श्रियो वश्यमलं करोति
तत्कोणगां ह्रींमपि लोक वश्यं करोत्यतत स्तामपि पूजयामि ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं ह्रीं देवी आगच्छ आगच्छ अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः मम सन्निहितो भव भव वषट इदं जल मित्यादि गृहाण गृहाण स्वाहा ॥

संसार रोगस्य करोति यावदुच्चाटनं चक्रमुपास का नाम
तावद् यतिश्चाप्य घृते रमीषां करोति चोच्चाटन मा यजे ताम्र ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं घृति देवी आगच्छ आगच्छ अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः मम सन्निहितो भव भव वषट इदं जल मित्यादि गृहाण गृहाण स्वाहा ॥

अज्ञान विद्वेषण मात्मनीनं गणेश चक्रं करुते बुधानाम्
कीर्तिश्च तत्कोणगताह्य कीर्त्तेः करोति विद्वेष मतो यजेताम् ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं कीर्ति देवी आगच्छ आगच्छ अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः मम सन्निहितो भव भव वषट इदं जल मित्यादि गृहाण गृहाण स्वाहा॥

भव्यात्मनां दुर्गति दःखजालं स्तम्भं विधते गणदेव चक्रम
देवी च बुद्धिः कुरूते ह्यबुद्धेः स्तम्भं ततस्तमिह पूजयामि ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं बुद्धि देवि आगच्छ आगच्छ अत्र तिष्ठ तिष्ठ अत्र मम सन्निहिता भव भव वषट इदं जलं गंधं अक्षतं पुष्पं दीपं धूपं फल अर्घं शांतिधारं गृहाण गृहाण स्वाहा॥

गणेन्द्र चक्रं निज पूजकानां कर्मासु सु ह्रन्भारण मातनोति
लक्ष्मी स्त्वलक्ष्म्याः कुरूते विनाशं तस्मादऽहं तामिह पूजयामि॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं लक्ष्मी देवी अत्र आगच्छ आगच्छ अत्र तिष्ठ तिष्ठ अत्र मम सन्निहिता भव भव वषट इदं जलं गंधं अक्षतं पुष्पं दीपं धूपं फल अर्घं शांतिधारं गृहाण गृहाण स्वाहा॥

सुवर्ण रक्ताभ सुवर्ण मास श्चतुर्भुजा संयुत पूर्ण कुम्भाः
श्री मुख्य देव्यः सकल प्रभावाः कुर्वन्तु शांतिं जिन भक्ति का नाम ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं श्री ह्रीं धृति कीर्ति बुद्धि लक्ष्मी देव्यं इदं जल गंधं अक्षतं पुष्पं दीपं धूपं फलं पूर्णार्घं शांतिधारा गृहाण गृहाण स्वाहा

इति अष्ट चत्वारिंशद्दलकमले कर्णिकाभ्यऽर्चन विधानं

इति श्र्यादि पूजा

षट्गुणाष्टऋद्धि संपन्नं गणाधीश समुच्चयम्
आहूय स्थापयित्वाऽत्र तद्यंत्रे सन्निधापयेत् ॥

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आउसा अप्रति चक्रे फट् विचक्राय झ्रौं झ्रौं नमः गणधर समूह आगच्छ संवौषट्

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आउसा अप्रति चक्रे फट् विचक्राय झ्रौं झ्रौं नमः गणधर समूह अत्र तिष्ठ ठः ठः

ॐ ह्रां ..... गणधर समूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट स्वाहा

कर्पूर चंदन रसान्वय दिव्य गन्धै भृङ्गार नाल गलितैः सुरभि कृताशैः
स्तीर्थोदकै रयोरजो हरण प्रवीणैः पाद्य ददामि गणिनां वलय गणाद्य ॥

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आउसा अप्रति चक्रे फट विचक्राय झ्रौं झ्रौं गणधर समूहेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्पूर कुंकुम हिमाम्बू करम्बितेन
सद्गंध सार तरु कल्पित कर्दमेन
संसार संज्वर जिघारण कारणेन तं
चर्चयामि गणिनां चरणाम्बुजानि ॥ २ ॥

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आउसा अप्रति चक्रे फट विचक्राय झ्रौं झ्रौं नमः गणधर समूहेभ्यो गंधं निर्वपामीति स्वाहा

शाल्यक्षतान पतुषान ग्रथितानखण्डान् राका
शशांङ्क शकल प्रबल प्रकाशान्
स्वार्गापवर्ग फल बीज गणाङ्कुराभान्
चक्रे पदेषु गणिनाम क्षिरोपयामि ॥ ३ ॥

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आउसा अप्रति चक्रे फट विचक्राय झ्रौं झ्रौं नमः गणधर समूहेभ्यो अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

पुन्नाग पूग कुहली करवीर जाती
मंदार कुन्द वकुलाब्ज सहादि पुष्पैः
सत्केत्कैमंरुबकै रऽपि हृद्य गन्धै
संपूजयामि गण वृन्द ममन्द भक्त्या ॥ ४ ॥

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आउसा अप्रति चक्रे फट विचक्राय झ्रौं झ्रौं नमः गणधर समूहेभ्यो पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा

स्थाल स्थितं विधुकलाऽमल शालि भक्तं
पक्वान्न शाक परमान्न सिताज्य युक्तं
आराधनाय गणिनां गुणमंडिताना मग्रे
करोम्य मृत पिण्डमिवाति रम्यम् ॥ ५ ॥

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आउसा अप्रति चक्रे फट विचक्राय झ्रौं झ्रौं नमः गणधर समूहेभ्यः चरुं (नैवेद्य) निर्वपामीति स्वाहा ।

अन्त स्तमोहपह युरामय दाहिना च
स्थांतु भित्वेव पुरतोप्यति कंपामानैः
कर्पूर तैल जनितै रूरूदपिं जालै
रुद्योतयामि गणिनाभरूणां धि पद्मान् ॥ ६ ॥

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आउसा अप्रति चक्रे फट् विचक्राय ह्रौं ह्रौं ह्रौं नमः गणधर समुहेभ्यो दीपं निर्वपामिति स्वाहा।

संसार संज्वर हुताशन वृष्टि सृष्टीः
द्राक कर्तुमा हट्ट मिवाभ्रम नूत्पतद्भिः
कालागुरु प्रभृति बन्धुर धूप धूमैः
संयूपयामि गणवृन्द पदाम्बुजानि ॥ ७ ॥

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आउसा अप्रति चक्रे फट विचक्राय ह्रौं ह्रौं नमः गणधर समूहेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

जम्बीर जम्बु पनस त्रिपुटाम्र ताल
खर्जूर माधुरस मन्मथ नालिकेरैः
[illegible]
रभ्यर्चयामि गण भृच्चरणान फलौघैः ॥ ८ ॥

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आउसा अप्रति चक्रे फट विचक्राय ह्रौं ह्रौं नमः गणधर समूहेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वारि गंध सदक्ष प्रसवाद्यैः क्षेत सर्षप मुखैश्च शुभाद्यैः
भाजनार्पित मनर्घ्यं गुणाना मर्पयामि गणिनामह मर्घम् ॥ ९ ॥

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आउसा अप्रति चक्रे फट विचक्राय ह्रौं ह्रौं नमःगणधर समूहेभ्यः च अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पर्जन्याः फल वृद्धयेऽत्र समये वर्षन्तु सस्ये जलं
राजन्याः परिपालयन्तु सततं धर्मेण सर्वाः प्रजाः
नश्यन्तीति गण भवंतु सुखिनः सर्वेऽर्हतां वर्द्धताम्
धर्मोऽग्रे भवतां करोमि पयसां धारां जगत् शांतये ॥ १० ॥

ॐ ह्रीं स्वस्ति भद्रं भवतु जगतां शांतिकृद्भ्यः शांतिधारामभिः पातयामि स्वाहा

इति शांति धारा

षट्कोण कोष्टं तिधि गंतु मध्ये षडष्ट पत्रं गणभृत सुमंत्रैः
आवेष्टितं षोडश सत् स्वरै श्च तदाह्वटो श्री गण नाथ यंत्रं ॥ १ ॥

नीरेण गंधेन च तंदुलेन पुष्पेन ह्रद्येन च दीपकेन् धूपेन
रंभादि फलेन चाहं यजामि कोण स्थित वर्ण मात्रान् ॥ २ ॥

जिनानऽशेषान जितकर्मशत्रून् नअवाप्त सद्ज्ञान विशेषभूपान्।
निजात्म सिद्धाये प्रणि पत्य सम्यग् आराध्याम्यऽष्ट विद्यार्चनेनः

ॐ ह्रीं अर्हं णमो जिणाणं जलं निर्वपामीति स्वाहा
ॐ ह्रीं अर्हं णमो जिणाणं गंधं निर्वपामीति स्वाहा
ॐ ह्रीं अर्हं णमो जिणाणं अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा
ॐ ह्रीं अर्हं णमो जिणाणं पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा
ॐ ह्रीं अर्हं णमो जिणाणं चरुं निर्वपामीति स्वाहा
ॐ ह्रीं अर्हं णमो जिणाणं दीपं निर्वपामीति स्वाहा
ॐ ह्रीं अर्हं णमो जिणाणं धूपं निर्वपामीति स्वाहा
ॐ ह्रीं अर्हं णमो जिणाणं फलं निर्वपामीति स्वाहा
ॐ ह्रीं अर्हं णमो जिणाणं अर्घं निर्वपामीति स्वाहा
ॐ ह्रीं अर्हं णमो जिणाणं शांतिधारां निर्वपामीति स्वाहा

अनेन प्रकारेण तत्तन्मंत्रं भेदेन सर्वत्र पूजा कर्त्तव्योति

नमो विद्याया ऽवधिव जिने भ्यस्तां स्तद्
गुणार्थीगुण भूषितांगान्प्रभूत कर्मेन्धन
दाहदक्षान् जलादिभिस्तं परिपूजायामि ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो उहि जिणाणं जल मित्यादि

प्रसन्न मूर्त्तीन् प्रहतारिवलात्तीर्न
परापर ज्ञान परमाऽवधीशान्
जिनान निंधानऽखिलाऽभि
वंद्यानऽर्चामि चंच जलं चंदनाद्यैः ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो परमोहि जिणणां जल मित्यादि

सर्वाऽवधि ज्ञान जुषो जिनेशान्
विनाशिताऽशेष हृषीक दोषान्
मनोज्ञ वेषान् महिमा युषस्तान्
शुभुषयाम्य र्हण्याति हर्षात् ॥५॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो सव्वोहि जिणाणं जल मित्यादि

नमोऽस्त्वनन्तावधि बोध केभ्य
इति प्रणुत्य प्रणिपत्य भक्त्या
भजामि तान देश जिनानऽशेषा
ननन्त सद्ज्ञान सुखादि सिद्धयै ॥६॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो अणंतोहि जिणाणं जल मित्यादि

तिष्ठन्ति धान्यानि यथाढ्य कोष्ठे
ष्यह्य संकरा यत्र तथैव शेषां
बुधो विवित्ता विविधागमार्था स्तान्
कोष्ठ बुद्धीन महमद्यामि धीरान् ॥७॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो कोष्ठ बुद्धीणं जल मित्यादि

ॐ ह्रीं अर्हं णमो कोष्ठ बुद्धीणं जल मित्यादि
बीजाक्षर ज्ञान कृताभि योगात् प्राप्तान् समस्त
श्रुत वार्धि पारम्तान बीज बुद्धिन
सुसपर्याहं भजामि भव्याध विधात् दक्षान् ॥८॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो बीज बुद्धीणं जल मित्यादि

अधीत्य चैकं पदमात्र मेवद्ये ते द्वादशांगार्थ
विदोभवंतिपदाणु सारि प्रतिभान भंगां
स्तान् र्च्चयाम्यंम्बु मुखैर्म्महर्षीन् ॥९॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो पदाणु सारिणं जल मित्यादि

सद्गंधि गंध सदक प्रसवादि भिद्रं
सिद्धार्थ कादि वर मंगल वस्तु शस्तं
सौवर्ण पात्र निहितं सदनर्घ्यं मर्घ्यं
मुद्धारयामि गणि वृन्द पदाम्बुजाग्रे ॥ १० ॥
ॐ ह्रीं अर्हं नमो अष्टदल पूजाया पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा
इत्यष्टदलार्चनम्

अथ षोडशदल पूजा

चक्रवर्त्ति कटके द्विषण्णव योजने समुदितारिबल शब्दान्
सं करव्याति करेण विनाद्राक श्रृणवंतो मुनिवरान् प्रयजेतान् ॥ १ ॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो संभिन्ने सोदराणां जल मित्यादि

नीलाञ्जनाया विलयाद्विरक्तः पुरुर्ध्यथा तद्वदिहैक हे तुम्
प्रतीत्य बुद्धान् विनिवृत्तसङ्गान प्रत्येक बुद्धान् परमानुपासे ॥ २ ॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो पत्तेय बुद्धाणं जल मित्यादि

विशिष्ट कर्मो पशमादुपदेशा दिना विना
स्वतो विरज्य निःसङ्गान स्वयं बुद्धान् यजामहे ॥ ३ ॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो सयं बुद्धाणं जल मित्यादि

प्रति बोधनेन बुद्धान् सगराधिपवद् विसृष्टभव सङ्गान्
बोधित बुद्धान् शुद्धानुपजुम्हे तोय गंधाद्यैः ॥ ४ ॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो बोहिय बुद्धाणं जल मित्यादि

व्यक्तं मनःकाय वचः कृतार्थं सुविस्मृतं चिंतित मन्यदन्यैः
जानन्ति योतान् ऋजुमत्यऽभिरव्यान् मुनीन् मन पर्ययिणो भजामि ॥ ५ ॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो उजु मदीणं जलमित्यादि

काय मनोवचनकृतान् व्यक्ता व्यक्तांश्च विस्मृतान्ऽर्थान्
अन्य मनः स्थान मनसाभिजानंतोऽर्चामि विपुल मतीन् ॥ ६ ॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो विउल जल मित्यादि

उत्पाद पूर्व प्रभृतिन्यीत्य विधानुवादादऽधिकानि सम्यक्
पूर्वाण्य भंगा चरितान् सुधीसां स्तान् भक्ति पूर्वान् प्राथितानुपासे ॥ ७ ॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो दश पूर्वीणं जल मित्यादि

उत्पाद पूर्वादिक लोकबिन्दु सारावसानानि चतुर्दशापि
पूर्वाण्यधीत्यऽप्रतिमानुभाव्यां स्तान सर्वपूर्वान् सकलानुपास ॥ ८ ॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो चउदश पुव्वीणं जल मित्यादि

स्वप्न स्वर व्यंजन लक्षणाङ्ग छिन्नाऽभ्र भौमाष्ट निमित्तविद्यान्
महामुनीद्रान महयामि पाद्यै गन्धाक्षताद्यष्ट विधार्चनाद्यैः ॥ ९ ॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो अट्ठंग महानिमित्त कुशलाणं जल मित्यादि

अणिमादि गुण समृद्धि प्रसिद्ध वर विक्रिय ऋद्धि संपन्नान्
अष्ट विधार्चनयाऽहं यजे विषिष्ट मातृकाजुष्टान् ॥ १० ॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो विउव्वण ईड्ढि पत्ताणं जल मित्यादि

अङ्गादि भासुर चतुर्दश पूर्व विद्या यो दीधितीर बिबदात्मनि धारयन्ति
विद्याधराख्य विशेष विराजमानां स्तान्ऽर्चयाम्य ध विधात कृते महर्षीन् ॥ ११ ॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो विज्जाहराणं जल मित्यादि

अलजंघा तन्तु फल प्रसून बीजाम्बर श्रेणीः
उद्दिश्याष्ट विधानप्यखिलान्वांमि चारणान प्रगुणान् ॥ १२ ॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो चारणाणं जल मित्यादि

प्राग्यो विधाधर त्वेन परां प्रज्ञामुपागताः
पश्चाच्छ्रमणतां प्राप्तास्तान् प्रज्ञा श्रमणान् यजे ॥ १३ ॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो पण समणाणं जल मित्यादि

आलम्ब्य यो चाम्बर मृद्धि शक्त्या स्वैरं चरंतीह मनुष्य लोके
अर्चामि तेषां पद युग्मं मनीषिणा मम्बर चारणानाम् ॥ १४ ॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो आगास गामिणं जल मित्यादि

यद्गी विंषत्वऽमृतातां च यते तपोविधे स्ताइशशक्ति योगात्
तेषामुपासे चरणान् ऋषीणा माशी विषाणा मद्य पेषिकाणाम् ॥ १५ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो आसी विसाणं जल मित्यादि

दृष्टि विंषं चा मृत मत्र येषां भवेन्मुनीनां तपसो महिम्ना
आराधयाम्यष्टविधेष्टि भिस्तान् भिस्तान् इष्टाप्तये दृष्टि विषान् विशिष्टान् ॥१६॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो दिट्ठि विसाणं जल मित्यादि

सद्गारि गन्ध सदक्ष प्रसवादि सिद्धं सिद्धार्थ कादिवरमंगल वस्तु शस्तं
सौवर्ण पात्र निहितं सदनर्घ्यं मर्घ्यं मुद्धारयामि गणि वृन्द पदाम्बु जाग्रे ॥ १७ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो षोडश दलार्चनायै पूर्णार्घं निवर्पामीति स्वाहा

अथ चतुर्विंशंति दल पूजा

पर्योप वासान् न परित्यजन्ति बहून्तरायैरति कर्शिताश्च
प्राणावधीह व्रतिनो मुनीन्द्रा येतान भजाम्युग्र तपोभिधानान् ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो उग्ग तवाणं जल मित्यादि

ये देह दीप्त्या धुन्वंति तपः प्रभवया तमः
ते दीप्त तपसोऽभ्यर्च्या मद्याह्यऽष्टभि रिष्टिभिः ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो दित्त तवाणं जल मित्यादि

ये भुंक्तमग्रे लयमेति भक्तं तप्तायसा तोय मिव प्रतीतं
नीहार हीनान् मुनि पुंगवांस्ता नर्चाम्यहं तप्त तपः समारव्यान् ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो तत्त तवाणं जल मित्यादि

पक्ष मासाद्यऽनशनाऽनुष्ठानऽधिष्ठान मुनीन्
तान् महातपसोऽभ्यर्चान् प्रणैम्यऽभ्यर्चयामि च ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो महा तवाणं जल मित्यादि

भयं करेषु स्थानेषु स्थित्वा घोरोपसर्गतः
न ये चलन्ति पूज्यन्ते ते घोर तपसोमया ॥ ५ ॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो घोर गुणाणं जल मित्यादि

घोरा ह्यशक्त्याश्चरितुं परेशां गुणव्रताद्याः प्रभवंत येषां
गुणाधिकान् घोर गुणान मुनीन्द्रान् भजामि ताद्गगुण लब्धयेतान् ॥ ६ ॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो घोर गुणाणं जल मित्यादि

घोरो ह्य चिन्तनीयः पराक्रमो व्रतविधान सामर्थ्यम्
सोऽस्ति मुनीनां येषां ते घोर पराक्रमाः समभ्यर्च्याः ॥ ७ ॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो घोर परक्कमाणं जल मित्यादि

यद् ब्रह्मचर्यं मऽखिलाऽश्चर्यं करा नतिशयाऽनलं सूते
तानऽखिलानपि च यजे घोरगुण ब्रह्मचारिणः पूज्यान् ॥ ८ ॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो घोर गुण ब्रह्मचारिणं जल मित्यादि

बहिर्गतं येन च कारणेन वै भुक्तं चान्नं यदऽपक्कमेव
तदामयान् हन्त्यऽखिलान् स्व सङ्गाद्
आमौषध ऋद्धीन् नऽखिलान् यजेतान् ॥ ९ ॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो आमो सहि पत्ताणं जल मित्यादि

खेलो निष्ठीवनं येषां सर्वं रोगोघ्न मौषधम्
भवेत् खेलोषधि प्राप्तां स्तान् महर्षीन् यजामहे ॥ १० ॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो खेलोसहि पत्ताणं जल मित्यादि

जल्लो देह मलं येषां जीवरोगोघ्नमौषधम्
स्या त्ते जल्लोषधि प्राप्तां स्तेषां पादानहं यजे ॥ ११ ॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो जल्लो सहि पत्ताणं जल मित्यादि

स्यु ब्रह्म बिंदवो येषां सर्वजीवा मयौषधं
ते विण्मूत्रौषधि प्राप्तान् तत्पादाब्जानुपास्महे ॥ १२ ॥
ॐ ह्रीं अर्हं णमो विप्पो सहिपत्ताणं जल मित्यादि

यद् देहजात् शकृदादि यदङ्ग सङ्गि भूत्याहि सर्वमपि
रोगहदौषधं स्यात् तानऽर्चयामि महनीयगुणैश्च भूषान्
सर्वौषध ऋद्धि सहितान् सकलान् महर्षीन् ॥ १३ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो सव्वोषहि पत्ताणं जल मित्यादि

नो इन्द्रिय श्रुत समावृति वीर्य विघ्न
कर्मक्षयोपशमने च सति प्रकर्षे
अन्तर्मुहूर्त समये सकले श्रुतार्थ चिन्ता
क्षमानिह मनो बलिनो भजामि ॥ १४ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो मण बलिणं जल मित्यादि

जिह्वा मनः श्रुत समावृति वीर्य विघ्न
कर्मक्षयोपशमने च सति प्रकर्षे
अन्तर्मुहूर्त्त समये सकल श्रुतानुवाद
क्षमा नथव ये बलिनो भजामि ॥ १५ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो वचो बलिणं जल मित्यादि

वीर्यान्तराय पद वास्य विशेष घाति
कर्म क्षयोपशम ल ब्धबलानुभावान्
येऽगाङ्गुलि प्रचलनेन चलन्ति धीराः
तेभ्यस्त्रीमऽपि च काय बलीशिनोऽर्च्याः ॥१६ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो काय बलिणं जल मित्यादि

येषां पाणि गतान्नं क्षीर रसं भवति वाक्य मपि च तथा
मं तर्पयन्ति श्रोतृन क्षीररस स्रावियो हिते ऽभ्यर्च्याः ॥ १७ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो खीर सवीणं जल मित्यादि

ये सर्पि स्रावियो दान्ता मुनयस्तान् यजे सदा
विषम ज्वर नाशः स्यात यैः स्मृतैः शुभ राशिभिः ॥ १८ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो सप्पि सवीणं जल मित्यादि

पाणि स्थाहार वद् येषां वाक्यं मधुरसं भवेत्
तप: प्रभावान् महतस्तान् मधुर स्राविणो यजे ॥ १९ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो महुर सवीणं जल मित्यादि

अमृत रसं हि करान्नं येषां भिह जायते वचोऽपि तथा
तर्पयति श्रोत् जनांस्ता नमृत स्राविणो यजे भक्त्या ॥ २० ॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो अमिय सवीणं जल मित्यादि

येभ्यो यद् यट मिष्टमन्न ममलं दत्तावशिष्टं भवेत्
भुक्तं तत्खलु चक्रिणोऽपि करकै र्न क्षीयते तद्दिने
तान्ऽक्षीण महानस ऋद्धि सहितान् बन्धानऽनिंधान यजे
स्वानन्दाऽमृत कन्द कन्दल गुणान् वन्दाऽरुनन्दा करान् ॥ २१ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो अकवीन् महाणसाणं जल मित्यादि

यै राश्रितापवरके हि चतु: करेऽपि
श्री चंचु चक्रि कटकं युगपत् प्रविष्टं
लब्धाऽथकाश मुपतिष्ठति संयजे
तानऽक्षीण शब्द कलिताढ्यमहालय ऋद्धिन् ॥ २२ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो अक्वीणं महालय ऋद्धिणं जल मित्यादि

लोकत्रय व्यापि विशिष्ट बोध प्रवर्द्ध मानाद्य गुणान् मुनीन्द्रान्
संपूज्य यज्वाऽग्र भवामि तद्वद यायज्मि तानेव सदा महर्षीन् ॥ २३ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो वड्ढमाणाणं जल मित्यादि

सिद्धायतन पूजाया मऽस्यामवहितोऽस्मि यत्
यत्याहि यायज्कोऽहं भवामि भव हानये ॥ २४ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो लोए सव्व सिद्धाय दणाणं जल मित्यादि

महतोऽपि महावीरान्ऽखिलानऽपि वर्द्धमान बुद्ध ऋषीन्
अभ्यर्च्यता नऽशेषान् यजमान स्तत्पदं प्रभजे ॥ २५ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो भय वदो महदि महावीर वड्ढमाण बुद्धि रिषीणं झौं झौं जल मित्यादि

सद्वारि गन्ध सदक प्रसवादि सिद्धं
सिद्धार्थ कादि वर मङ्गल वस्तु शस्तं
सौवर्ण पात्र निहितं तदभऽर्घ्यं भव्यं
सुद्वारवामि गणवृन्द पदाम्बुजाग्रे
ॐ ह्रीं अर्हं णमो चतुर्विंशति दल पूजायै पूर्णार्घं निर्वपामिति स्वाहा। ॥ २६ ॥

ऋद्धाया बुद्धेः समृद्धां स्तपसि परिणतान्
विविध ऋद्धि प्रसिद्धान् जलाद्यै
रामर्षाद्यान् रस बल सहितान् विश्रुताक्षीण बुद्धीन् ॥ २७ ॥

सर्वान् एतान् महर्षीनऽधिक गुण निधीन् वर्धमानानुभावान्
प्रत्येकं पूजयित्वा प्रसव विरचितः प्राञ्जलिश्चाऽभि वन्दे ॥ २८ ॥

पुष्पांजलि क्षिपेत्

कोष्ठावधि प्रमुख बोध महासमुद्र पारं
गतान् नमयितु च सतः समर्थान्
श्रेणी द्वया श्रयण योग्य समाधि निष्ठान्
बुद्धि ऋद्धि सिद्धि सहितान्स्तु महे महर्षीन् ॥ १ ॥

दीप्तोग्र तप्त महदादि तपैः प्रभेदैः सम्यक
प्रभावित सु निर्मल मूर्तीन् कायेन
सार्द्रमऽति कर्शित क र्म शक्ति स्तान्
ताप सद् ऋद्धि पतीन स्तु महे महर्षीन् ॥ २ ॥

तोयादुपाध्युदवद् द्भुत शक्ति भेद भिन्नाष्टया
प्रथित चारण योगि वर्यान् नानाणिमादि
निपुणांश्च तपः प्रभावां स्तान् विकि
य ऋद्धि सहितान् स्तु महे महर्षीन् ॥ ३ ॥

ताप ऋचैरऽतितरामिह तप्यमाने ष्वेतेषु
जीवनिवहेषु दयार्द्र भावात्
उद्भावितैः पृथुगुणैरुपकुर्वतोऽन्यां स्तानौ
षध ऋद्धि पतीन् स्तु महे महर्षीन् ॥ ४ ॥

आज्यादि कानपि रसानऽखिलान
विसज्यं तीव्रं तपोमुनिवरास्त्व चरं स्तथापि
तानेव ते खलु रसान् न परित्यजन्ति रस
ऋद्धि तिशयान् स्तु महे महर्षीन् ॥ ५ ॥

कुर्वन्ति वेक्षपयितुं स्व बलं मुनीन्द्रा मासाद्
उपेषित विधिं हि तथाऽपि चित्रम्
तेनैव तद्बलमनी हृशवृद्धि मन्तस्तां
स्तद्बलद्धर्यंऽधि पतीन् स्तुमहे महर्षिन् ॥ ६ ॥

त्यागानुकंपनगुण प्रणिधि प्रधान
दिव्यानुभाव तपसामति शक्ति योगात्
अति अद्भुत क्षय गुण प्रकृति प्रसन्नां
स्तान् क्षयाद् ऋद्धि पतीन स्तुमहे महर्षीन् ॥ ७ ॥

युष्माकं व्रतिनां स्पृहा विरहिणां नैवोपकारोऽस्तयदः
पूजादेश्च तथापि पूजन विधिं भक्त्या सदातन्वताम् ॥ ८ ॥

अत्रामुत्र सुखं भवत्यऽभिमतावाप्ति श्च संपद्यते
तद् युष्मानऽभि पूज्य भक्ति निरतां स्तुत्वा प्रयंदामहे ॥ ९ ॥

युष्माकं महतामऽचिंत्य महिमा प्रोद्भासिनां सद्गुणाः
संख्याम्प्यऽति वर्तिन स्तदखिलान् संस्तोतुमिष्टेऽत्रेक ॥ १० ॥

तत्सर्वं स्तुति वत्फलेन सदृशीखल्वैक देश स्तुतिः
तद् युष्मद् गुण लेश मात्र मपि च स्तुत्वा कृतार्थोऽस्म्यहम् ॥ ११ ॥

कारुण्याऽमृते सिन्धवः परिल सद्भव्याब्जिनी बांधवाः
स द्विधातति बिंदवः सुमनसा मानंद कारीन्दवः ॥ १२ ॥

लोकांतेऽत्र सुकीर्तियः स्फुट गुण व्राताः शुचि स्फूर्तयः
सं शुष्यद्भव वार्द्धयो मुनि वरा नन्दन्तु सप्तर्द्धयः ॥ १३ ॥

सं स्पर्श मात्र विनिवारित सर्व दोषां सौभाग्य
भाग्यजय कार्मण दिव्य भूषाम्मुक्त्यऽङ्ग
ना परिगृह्योत्तर सुरत्न सौषांम भक्त्या भजामि
निज मूर्ध्नि प्रसिद्ध शेषाम् ॥ १४ ॥

युष्मानागम भार रूप महतो भक्त्या समाराधयन्
सम्यक्त्वं च त्रिधो पचार विधिना तत्र प्रमादोऽस्ति च ॥ १५ ॥

तत् सोढव्य (मुद्भक्त) (मुषोद्भवत्सल) मुखोत्थ वत्सल तया देवैरलं (रहिं) वो
गुणान् ध्यायन याम्यधुना गृहं स्वम चिराद् पुनर्दर्शनं ।
इत्थं गणाधिपति चक्र महाभिषेकं पूजां पुरान्नियम वा नितिय: करोति ॥

सत्सवर्ग (सर्व स्वर्ग) मनुभूषतैवैनतायै) सौख्य मनुभय
ततोऽवतीर्य प्राप्नोत्यनन्त सुखमक्षय मोक्ष लक्ष्मयाः ॥

इति श्री मदिमडि भट्टोपाध्याय प्रणिते गणधर वलय
समाराधना कल्पेयंत्राभिषेक पूजा विधान समाप्तं ॥

मध्ये गुरून्नष्ट दलेषु देयं गणेन्द्र षट्क क्रमेशो वहिश्च अर्हकला षोडश पत्र पद्मं
वर्गान् जयाद्यांश्च दिगंतरेषु लिखेत् त्रिमूर्त्तेरुदरे तु जांततन्मूल मंत्रेण
सदाऽचितं च वूते स्व कार्यं कुरुते च कर्म यथेप्सितं मोक्ष सुखं विद्यते ॥

एक अष्टदल कमल के बीच में गुरूओं को देकर, एक एक दल में क्रमशः छह छह गणधर वलय मंत्र लिखें। कर्णिका में अर्हत बीज और सोलह कलाओं को लिखकर पत्रों के बाहर वर्गों और उनसे भी बाहर की दिशाओं में जया आदि देव्यों को लिखें।
इस यंत्र को त्रिमूर्ति ह्रीं के पेट में लिखकर जो पुरुष इसका प्रतिदिन मूलमंत्र से पूजन करता है उसके लिए यह यंत्र अपने कार्य को बतलाता है। हे इच्छानुसार कार्य को करता है और यहां तक कि मोक्ष के सुख को भी देता है।

इति महद्गणधर वलय चक्र क्रम

ॐ ह्रं ह्रीं असि आउसा ह्रीं झ्रौं झ्रौं नमः

ॐ ह्रीं ह्रं झ्रौं झ्रौं णमो अरहंताणं सिद्धाणं आयरियाणं उवज्झायाणं साहूणं स्वाहा ॥

यह दोनों गणधर वलय मंत्र है।

ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः आद्यं परम गुरू पदाद्यक्षरं होम युक्तं
वेदादिं कर्णिकायां जिन भुवन पतिं पत्रं मष्टसु लिखदौ

ह्रां जैन स्तोत्र होमं तदनुकमलजं ह्रीं च सिद्ध स्तुतिं च होमांतं
ततदन्त्योष्वपि गुरु पद युक् ह्रूं तथा ह्रौं ततोह्रः

ॐ ह्रीं पूर्वं स होमं दृग वगंमुमाचार (मसमाचार) मंतर्च च वाह्ये

ॐ ह्रीं अर्हं नमः प्राग्गणधर वलयेनाऽवृतं तत्व वेष्टयं कों रुद्धं वारि पृथ्वी पुर वृत
मनिशं पूजयेन्मोक्षहेतो (गामी) माला मंत्रेण चांतर्गति पदसहितै झ्रौं नमोर्ह जिनेन्द्रैं

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आउसा झ्रौं झ्रौं अर्हं नमः स्वाहा

इति गणधर वलय मंत्र

कर्णिका में आद्य (ॐ) ह्रां ह्रां ह्रूं ह्रीं ह्रः परम गुरु पदाक्षर (असि आउसा) और होम (स्वाहा) को लिखकर, उसके चारों तरफ वेदादि (ॐ) और जिनभवन पति (ह्री) को लिखकर, इसके पश्चात आठों पत्रों में क्रम से ॐ ह्रां जैन स्तोत्र (णमो अरहंताणं) होम (स्वाहा) ॐ ह्रीं सिद्ध स्तुति (णमो सिद्धाणं) होम (स्वाहा) ॐ ह्रूं आयरियाणं स्वाहा ॐ ह्रौं णमो उवज्झायाणं ॐ ह्रः णमो लोए सव्व साहूणं स्वाहा ॐ ह्रीं दृग सम्यग्दर्शणाय स्वाहा ॐ ह्रीं: अवगम (सम्यक् ज्ञानाय स्वाहा) ॐ ह्रीं सदाचार (सम्यग्चारित्राय स्वाहा लिखे इसके पश्चात ॐ ह्रीं अर्हं नमः को लिखकर उसके बाहर गणधर वलय मंत्र लिखे। फिर तत्व ह्रीं वेष्टित करके क्रों से निरोध कर सबसे बाहर जल मंडल और पृथ्वी मंडल बनावें। जो पुरुष इस यंत्र का ॐ ह्रीं ह्रं नमः स्वाहा सहित माला मंत्र से पूजन करता है। वहाँ शीघ्र ही मोक्ष को प्राप्त करता है।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आउसा झ्रौं ह्रीं अर्हं नमः स्वाहा।

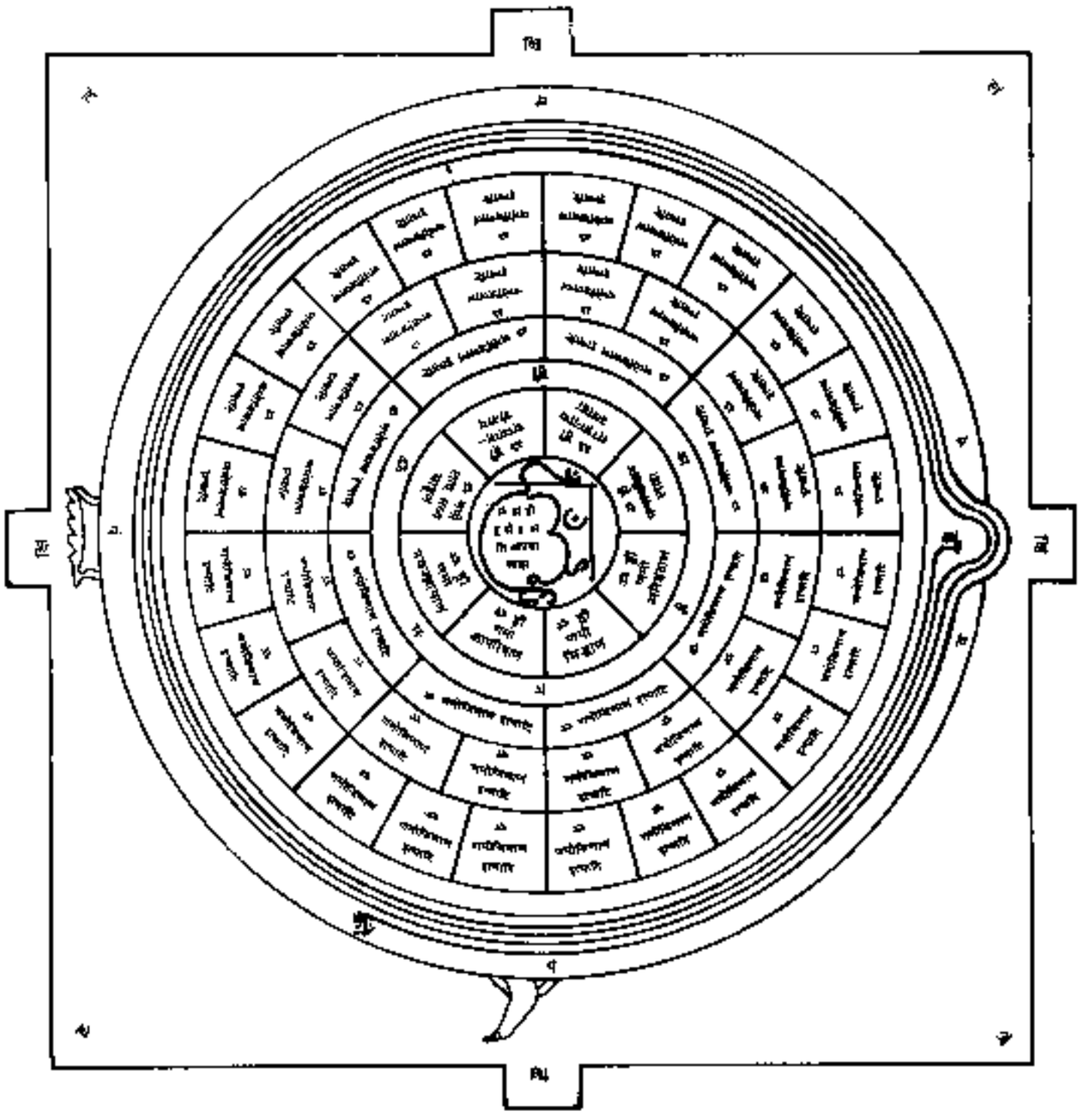

॥ ग्रंथांतरे ॥

ॐ ह्रीं अर्हत्परमेष्ठिन स्तर्पयामि ॐ ह्रीं सिद्ध परमेष्ठिन स्तर्पयामि ॐ ह्रीं आचार्य परमेष्ठिन स्तर्पयामि ॥

ॐ ह्रीं उपाध्याय परमेष्ठिन स्तर्पयामि ॐ ह्रीं सर्व साधुपरमेष्ठिन स्तर्पयामि ॐ ह्रीं जिणा स्तर्पयामि ॥

ॐ ह्रीं अव धिजिनां स्तर्पयामि ॐ ह्रीं परमावधिजिना स्तर्पयामि ॐ ह्रीं सर्वावधिजिनां स्तर्पयामि ॥
ॐ ह्रीं अनंतावधि जिनां स्तर्पयामि ॐ ह्रीं कोष्ठ बुद्धिं स्तर्पयामि ॐ ह्रीं बीजबुद्धिं स्तर्पयामि ॥
ॐ ह्रीं पादानुसारिण स्तर्पयामि ॐ ह्रीं सभिन्नश्रोतृं स्तर्पयामि ॐ ह्रीं प्रत्येक बुद्धां स्तर्पयामि ॥
ॐ ह्रीं स्वयम्बुद्धा स्तर्पयामि ॐ ह्रीं बोधित बुद्धां स्तर्पयामि ॐ ह्रीं ऋजुमती स्तर्पयामि ॥
ॐ ह्रीं विपुलमतीं स्तर्पयामि ॐ ह्रीं दश पूर्वीण स्तर्पयामि ॐ ह्रीं चतुर्दश पूर्विण स्तर्पयामि ॥
ॐ ह्रीं अष्टांग महानिमित्त कुशलां स्तर्पयामि ॐ ह्रीं विक्रिय ऋद्धिं प्राप्तां स्तर्पयामि ॐह्रीं विद्याधरां स्तर्पयामि ॥
ॐ ह्रीं चारणां स्तर्पयामि ॐ ह्रीं प्रज्ञाश्रवणांस्त स्तर्पयामि ॐ ह्रीं आकाश गामिन स्तर्पयामि ॥
ॐ ह्रीं आकाश [illegible] स्तर्पयामि ॐ ह्रीं दृष्टि विषां स्तर्पयामि ॐ ह्रीं उग्र तपस्विन स्तर्पयामि ॥
ॐ ह्रीं दीप्ततप स्विन स्तर्पयामि ॐ ह्रीं तप्त तपस्विन स्तर्पयामि ॐ ह्रीं महातपस स्तर्पयामि ॥
ॐ ह्रीं घोर तपस्त स्तर्पयामि, ॐ ह्रीं घोर गुणां स्तर्पयामि ॐ ह्रीं घोर पराक्रमां स्तर्पयामि ॥
ॐ ह्रीं घोर ब्रह्मचारिण स्तर्पयामि ॐ ह्रीं आमर्षोषद्रि प्राप्ता स्तर्पयामि ॐ ह्रीं क्ष्वेडौषधिप्राप्तां स्तर्पयामि ॥
ॐ ह्रीं जल्लोषधि प्राप्तां स्तर्पयामि ॐ ह्रीं विप्रौषधि प्राप्तां स्तर्पयामि ॐ ह्रीं सर्वौषधिप्राप्तां स्तर्पयामि ॥
ॐ ह्रीं मनोबलिन स्तर्पयामि ॐ ह्रीं वाग्बलिन स्तर्पयामि ॐ ह्रीं कायबलिन स्तर्पयामि ॥
ॐ ह्रीं अमृत श्राविण स्तर्पयामि ॐ ह्रीं मधुश्राविण स्तर्पयामि ॐ ह्रीं सर्पिस्स्राविण स्तर्पयामि ॥
ॐ ह्रीं क्षीर श्राविण स्तर्पयामि ॐ ह्रीं अक्षीण महानसां स्तर्पयामि ॐ ह्रीं अक्षीण महालयां स्तर्पयामि ॥
ॐ ह्रीं अर्हं लोके सर्वसिद्धायतनानि तर्पयामिस्वाहा ॐ ह्रीं भगवतो महति महावीरवर्द्धमान बुद्धि ऋषिं स्तर्पयामि ॥

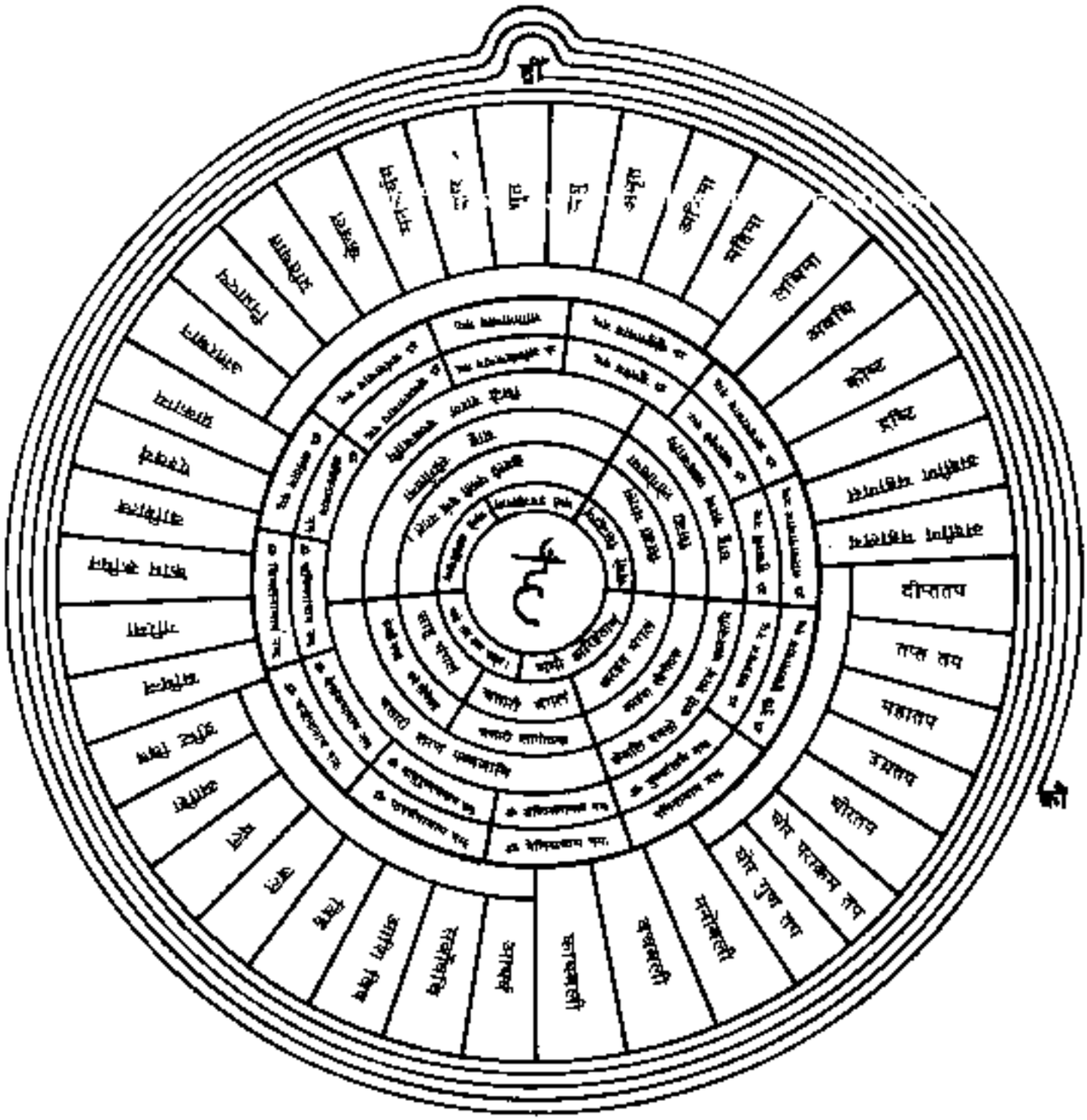

ॐ ह्रीं अक्षीण महालयाऽक्षीण महान सेती द्विप्रकारीया अक्षीण ऋद्धि सर्वऋद्धिभ्योनमः

ॐ ह्रीं दीप्त तप तप्त महातप उग्र तप घोर तप घोरपराक्रम तप घोर गुण तप इति सप्त प्रकार तपोतिशय ऋद्धि धर सर्व ऋषिभ्यो नमः

ॐ ह्रीं मनोवपु वांग बल इति त्रिप्रकार बल ऋद्धि धर सर्वऋषिभ्यो नमः

ॐ ह्रीं आमर्ष सर्वौषधि आशी विष दृष्टि विष सविप्रुड विडजल मलेत्योऽष्टौषधि ऋधिधर सर्वऋषिभ्यो नमः

ॐ ह्रीं आशी दृष्टि क्षीर घृत मधु अमृतेति षटप्रकारस ऋद्धिधर सर्वऋषिभ्यो नमः

ॐ ह्रीं अणिमा महिमा लघिमा गरिमा काम रूपित्व वशित्व ऐश्वर्य प्रकाम्य अन्तरधान निप्राप्त्यतिघात इत्ये एकादश विक्रिया ऋद्धिधर सर्व ऋषिभ्यो नमः

ॐ ह्रीं केवल मन पर्यय अवधि कोष्ठक बीज सं भिन्न सं श्रोत् पदानुसारी दूर स्पर्शन दूर श्रवण दूरा स्वेदन दूर ध्रान दूर विलोकन प्रज्ञा श्रवण प्रत्येक बुद्धि दश पूर्वत्व सर्वपुर्यित्व प्रवादित्वाऽष्टाग निमित्तेत्य अष्टादश बुद्धिधर सर्वऋषिभ्यो नमः॥

ॐ ह्रीं जंघा चारण श्रेणि चारण फल चारण जल चारण तन्तु चारण पुष्प चारण बीज चारण अंकुर चारण आकाश चारणेति नव प्रकारा क्रिया ऋद्धि धर सर्वऋषिभ्यो नमः ॥

श्री पार्श्वनाथाष्टक गत यंत्रोद्धारः क्रियते

अब श्री पार्श्वनाथ अष्टक वाले यंत्र का उद्धार किया जाता है।

अष्टदल कमलं लिखित्वा तन्मध्ये कर्णिकायां
ॐ नमो भगवते पार्श्वनाथाय धरणेन्द्र इत्य क्षराणि लिखित्वा अष्ट पत्रेषु पद्मावति सहिताय इत्यै कैकाक्षरं निधाय पत्रांतरालेषु यथा क्रमंअट्टे मट्टे क्षुद्र विघट्टे इति लिखित्वा तदनुदलाग्रेषु क्षुद्रान् स्तंभय स्तंभय स्वाहा पश्चात ह्रीं कारेण त्रिधा संवेष्ट क्रों कारेण निरोधयेत्।

एक आठ दल का कमल लिखकर उसकी कर्णिका में ॐ नमो भगवते पार्श्वनाथाय धरणेन्द्र यह अक्षर लिखकर, आठ पत्रों में पद्मावति सहिताय इसके एक एक अक्षर लिखकर बाहर अंतराल के क्रम से अट्टे मट्टे शुद्र विघट्टे लिखकर बीच के अंतराल में शुद्रान्स्तंभय शुद्रान्स्तंभय स्वाहा लिखे पीछे ह्रीं कार से तीन बार वेष्टित करके क्रों से निरोध करे।

ॐ नमो भगवते पार्श्वनाथाय धरणेन्द्र पद्मावति सहिताय अट्टे मट्टे क्षुद्रविघट्टे क्षुद्रान्स्तंभय क्षुद्रान्स्तंभय स्वाहा ॥ तैरेवा मंत्राक्षरै यंत्रोद्धारः

इन्हीं मंत्राक्षरों से यंत्र का उद्धार होता है।

पद्ममष्टदलोपेतं मायाकं जल संस्थितं
पद्म मध्यांतरालेषु पत्रोपरिस्थया क्रमं ॥ १ ॥

एक अष्टदल कमल माया बीज ह्रीं और जलमंडल के अंदर बनाया जावे कमल के मध्य में बीज में और ऊपर क्रम से

अष्टावष्टौ तथैवाष्टौ तस्योपरि सुमंडलं
तथाष्ट शत जापेन ज्वरमेकांतरादितं ॥ २ ॥

उपरोक्त मंत्र के आठ आठ और आठ अक्षर लिखने चाहिये इस मंत्र को १०८ बार जपकर एकांतरा आदि ज्वर

रिपु चोर शाकिनी भूताद्यि भूत संभव:
आरण्यादिऽहिजां भीतिं हंति बद्धंभुजादिषु ॥ ३ ॥

शत्रु राजा चोर शाकिनी भूत पिशाच और जंगल के सर्प आदि का भय इस यंत्र को भुजा आदि में बांधने से दूर हो जाता है।

पुष्पमालां जपित्वा च मंत्रेणाष्ट शतादिकं
प्रक्षिप पात्र कंठेषु भूतादीन् स्तंभयेद्भवं ॥ ४ ॥

फूलों की माला पर इस मंत्र को एक सौ आठ बार जपकर यदि उस माला को प्राणी के कंठ में बांधने से भूत आदि का स्तंभन होता है।

गुग्गुल स्य गुटिनां च शत मष्टोत्तर हुतं
दुष्टाश्चुच्चाटयेत् क्षिप्रः शांतिं च कुरुते गृहे ॥ ५ ॥

गूगल की १०८ गोलियो को इस मंत्र से पढ़कर होम करने से यह मंत्र शीघ्र ही घर से दुष्टों का उच्चाटन करके शांति स्थापित करता है।

देव दानवस्य सिंहस्य कवचवत्तो वांछितैः सदा
श्री अश्वसेन कुल पंकज भास्करस्य पद्मावती धरण राजनिसेवितस्य
श्री पार्श्वनाथ जिन संस्तवना क्षमंते भव्या श्रितं शुभ गतामपि वांछितानि

यह यंत्र देव दानव और सिंहों से बचने के लिये सदा ही कवच स्वरूप कहा गया है। इसप्रकार श्री अश्वसेन महाराज के कुल स्वरूपी कमल के लिये सूर्य धरणेन्द्र और पद्मावति से सेवित श्री

पार्श्वनाथ भगवान के स्तवन से भव्य लोग अपनी इच्छा की हुई वस्तुओं के साथ मोक्ष लक्ष्मी को भी प्राप्त करता है।

इति पार्श्वनाथ स्तवनं

इति पूर्वोक्त मंत्रणाष्टोत्तर शत जाप्येन एकांतरादि ज्वर रिपु चोर महीपाल शाकिनी भूत बाधा अरण्यस्थाऽसर्पजाभीतिं च नाशयति करौ बद्धे सति तेन मंत्रेण अष्टोत्तर शत वाराज पुष्प मालां जपित्वा यस्य कंठे धार्यते तस्य भूतादयो गच्छंति गुग्गुल होमेन अष्टोत्तर शतद्विष्टमाने उच्चाटनं शांतिश्च भवति

इसप्रकार पूर्वोक्त मंत्र के १०८ बार जप करके यंत्र हाथ में बांधने से एकांतरा आदि ज्वर, शत्रु, चोर, राजा, शाकिनी, भूत बाधा और वन के सर्पो से होने वाला भय नष्ट हो जाता है। इस मंत्र को फूलों की माला पर १०८ बार जपकर जिसके कंठ में वह माला पहनायी जाती है। उसके भूत आदि भाग जाते हैं। गुग्गुल की गोलियों के १०८ बार होम करने से दुष्टो का उच्चाटन करके घर में शांति होती है। इति

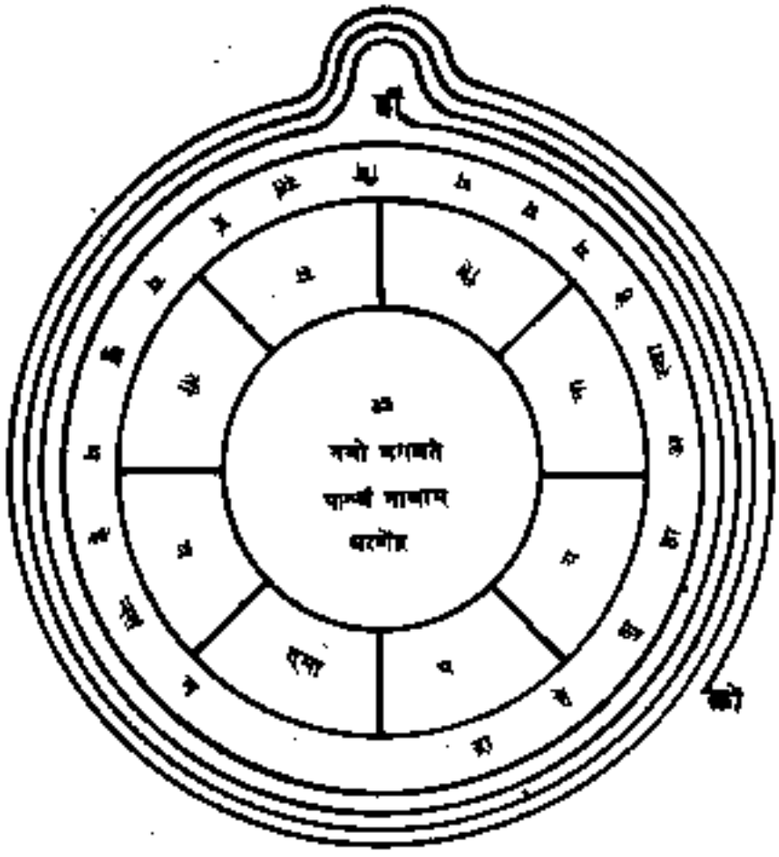

॥ ऋषि मंडल स्तोत्र ॥

ॐ नमः

आद्यंताऽक्षर सं लक्ष्यमक्षरं व्याप्य यत्स्थितं
अग्नि ज्वाला समं नादं विंदु रेखा समन्वितं ॥ १ ॥

अग्निज्वाला समाक्रांतं मनोमल विशोधनं
दीदीप्यमानं हृत्पद्मे तत्पदं नैमि निर्मलं ॥ २ ॥

स्वर व्यंजनों के आदि के अक्षर अ और अंत का अक्षर ह और अंत के अक्षर ह को अग्निज्वाला (र) और इसके मस्तक पर बिन्दु और अर्धचन्द्र रेखा सहित करना अर्थात् अर्हं ऐसा बनाना यह अर्हं बीज अग्नि की ज्वाला के समान प्रकाश वाला है। मन के मेल पाप को धोने वाला निर्मल है और अर्हत पद का कहने वाला, प्रकाश मान अर्हं पद को हृदय के कमल अष्टदल वाले में स्थापित करके उसको मन वचन काय से नमस्कार करता हूँ।

ॐ नमोः ऽर्हद्भ्यः इशेभ्यः ॐ सिद्धेभ्यो नमो नमः
ॐ नमः सर्व सूरिभ्यः उपाध्यायेभ्य ॐ नमः ॥ ३ ॥
ॐ नमः सर्व साधुभ्यः तत्व दृष्टिभ्य ॐ नमः
(ॐ नमस्तत्व दृष्टिभ्यश्चारित्रेभ्यो नमो स्तुवै)
ॐ नमः शुद्धे बोधेभ्य श्चारित्रेभ्यो नमो नमः ॥ ४ ॥

अर्हंत भगवान को जो ईश अर्थात तीन लोक के स्वामी है। अठारह दोष रहित हैं। चौंतीस अतिशय आठ प्रातिहार्य, अनन्त चतुष्टय और छयालीस गुण सहित हैं। उनको नमस्कार हो। सूरि अर्थात आचार्य छत्तीस गुण सहित , सर्वऋद्धि के धारक, तद्भव मुक्तिगामी हैं। उनको नमस्कार हो। उपाध्याय भगवान जो संपूर्ण द्वादशांग के ज्ञाता पच्चीस गुण सहित तदभव मोक्ष गामी है। उनको मेरा नमस्कार हो। सर्व साधु भगवान जो अट्ठाइस मूल गुण धारक तद्भव मोक्षगामी हैं तथा आठ अंग सहित सर्वोत्कृष्टज्ञान के धारक सर्व साधु भगवान को नमस्कार हो। सम्यकज्ञान तथा तत्वदृष्टि अर्थात सम्यक दर्शन को नमस्कार हो । तेरह प्रकार के चारित्र धारी हैं उनको नमस्कार हो ।

श्रेयसेऽस्तु श्रिये स्त्वेतऽर्हदाद्यष्टकं शुभं
स्थाने ष्वष्टसु संन्यस्तं पृथग् बीज समन्वितं ॥ ५ ॥

श्रेय से अर्थात कल्याण के कर्ता है, श्रेय लक्ष्मी के कर्ता है अर्हंत भगवान से आरंभ करके अर्थात अर्हन्त, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, सर्वसाधु , सम्यकदर्शन, सम्यकज्ञान, सम्यकचारित्र आठों पद एवं कल्याण स्वरूप ॐ बीजाक्षर सहित अलग अलग आठ दिशाओं में स्थापन किये गये सुख देवे और लक्ष्मी को देवें।

आद्यं पदं शिरो रक्षेत् परं रक्षेतु मस्तकं
तृतीयं रक्षेन्नेत्रे द्वे तूर्यं रक्षेतु नासिकां ॥ ६ ॥

पंचमं तु मुखं रक्षेत् षष्ठं रक्षेतु घंटिकां
सप्तम् रक्षेन्नभ्यंतं पादांतं चाष्टमं पुनः ॥ ७ ॥

अर्हंतादि आठ पदों में क्रम से पहला अरहंत पद शिर की रक्षा करो। दूसरा सिद्ध पद मस्तक की रक्षा करो। तीसरा आचार्य पद दोनों नक्षत्रों की रक्षा करो। चौथा उपाध्याय पद नासिका (नाक) की रक्षा करो। पाँचवा सर्व साधु पद मुख की रक्षा करो। छटा सम्यकदर्शन पद गले की रक्षा करो सातवाँ सम्यक ज्ञान पद नाभि की रक्षा करो। और आठवाँ सम्यकचारित्र पद पैरों की रक्षा करो।

पूर्वं प्रणवतः सांत सरेफो द्विभि पंचं षान्
सप्ताष्टदश सूर्याकान् श्रितो बिन्दु स्वरान् पृथक् ॥ ८ ॥

पूज्यनामाक्षराद्यस्तु पंच दर्शन बोधन
चारित्रेभ्यो नमो मध्ये ह्रीं सांत समलं कृतः ॥ ९ ॥

पहले तो प्रणव अर्थात् ॐ को लिखें, बाद में सकारांत अर्थात् ह में रकार मिलाकर उसमें दूसरी कला आ मिलावे। अर्थात् ह्रां हुवा। फिर हकार और रकार में तीसरी कला इ पांचवी कला उ छट्ठी कला ऊ सांतवीं कला (स्वर) ए आठवी ऐ दसवीं औ की मात्रा बिन्दु अनुस्वार सहित लगावे। और बारहवीं अः की मात्रा लगावे अर्थात् ॐ ह्रां ह्रिं ह्रुं ह्रूं ह्रें ह्रैं ह्रौं ह्रः इसतरह लिखे। इसके बाद पूज्य पंच परमेष्टियों के आदि के पांच अक्षर लेवे अर्थात असि आउसा लिखे, फिर सम्यग्दर्शन ज्ञानचारित्रेभ्यो लिखकर अंत के नमः पद से पहले शोभायमान ह्रीं को लिखे तब मंत्र मिलकर

ॐ ह्रां ह्रिं ह्रुं ह्रूं ह्रें ह्रैं ह्रौं ह्रः असि आउसा सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्रेभ्यों ह्रीं नमः

ऐसा २७ अक्षर का मंत्र है। बीज इति ऋषि मंडल स्तवनं यंत्रस्य मूल मंत्रः

आराधकस्य शुभनव बीजक्षरः अष्टादश शुद्धाक्षरः एव मेकतर सप्तविंशत्यक्षर रूपं

इस ऋषि मंडल स्तवन यंत्र का मूल मंत्र सत्ताईस अक्षर का है। जिसमें ९ नो बीज अक्षर है और अठारह शुद्ध अक्षर है यह मंत्र आराधना करने वाले की सब मनोकामना पूर्ण कर देने के कारण शुभ है। इस मंत्र में जो ॐ अक्षर पहले लगता वह गिनती में नहीं आता है। परन्तु उसके लगने से ही मंत्र शक्ति प्रगट होती है।

जंबु वृक्ष धरो द्वीपः क्षारोधि समावृतः
अर्हदाद्यष्टकैरष्ट काष्ठाधिपैरुपलंकृतः ॥ १० ॥

तन्मध्ये संगतोमेरू: कूट लक्षैरुपलंकृतः
उच्चैरुच्चैस्तर स्तारस्तारामंडल मंडितः ॥ ११ ॥

तस्यो परि सकारांतं बीजमध्यास्य सर्व्वगं
नमामि बिंबमार्हंत्यं ललाटस्थं निरंजनं ॥ १२ ॥

जंबु वृक्ष को धारण करने वाला द्वीप जंबू द्वीप है। उसके चारों तरफ से लवण समुद्र ने घेर रखा है। यह द्वीप आठ दिशाओं के स्वामी अर्हंत आदि आठ पदों से शोभायमान है। अर्थात् अर्हंत सिद्ध आचार्य उपाध्याय सर्व साधु सम्यग्दर्शन सम्यक् ज्ञान सम्यकचारित्र यह आठ दिशाओं के अधिष्ठाता हैं, तो आठों दिशाओं में स्थापित करें।

इन आठों दिशाओं के मध्य में सुमेरु पर्वत है जो निन्यावे हजार योजन ऊँचा है। एक हजार योजन भूमि में गड़ा हुआ है। चौड़ाई लम्बाई दस हजार योजन है। गोलमेरु है जो सौ कूट शिखरों से शोभायमान एक लाख योजन ऊँचे सुवर्ण का है। ७९० योजन की ऊँचाई पर तारामंडल है। दस योजन पर सूर्य का विमान है। ८० योजन ऊपर चन्द्रमा है इससे ४ योजन ऊपर नक्षत्र है नक्षत्रों से ऊपर ४ योजन ऊपर बुध है इससे ३ योजन ऊपर शुक्र है शुक्र से ३ योजन ऊपर बृहस्पति है जिससे ३ योजन ऊपर मंगल है इससे ३ योजन ऊपर शनिश्चर का विमान है शेष नक्षत्र चित्राभूमि से ऊपर बुध और शनिश्चर के बीच में स्थित है इसे ज्योतिश्चक्र कहते हैं।

यह सब सुमेरु पर्वत के चारों तरफ परिक्रमा देने से बहुत रमणीक मालूम होते है। ऐसे सुमेरु पर्वत के ऊपर सकारांत बीज हीं को विराजमान करके उसमें बैठे हुये धातिकर्म अंजन से रहित अर्हंत भगवान का अपने ललाट (मस्तक) में स्थापन करके नमस्कार पूर्वक ध्यान करें।

अक्षतं निर्मलं शांतं बहुलं जाड्यतोज्झितं
निरीहं निरहंकारं सारंसारतरं धनं ॥ १३ ॥

अनुद्धतं शुभं स्फीतं सात्विकं राजसं मतं
तामसं विरसं बुद्धं तैजसं शर्वरी समं ॥ १४ ॥

साकारं च निराकारं सरसं विरसं परं
परापरं परातीतं परं पर परात्परं ॥ १५ ॥

एकवर्णं द्विवर्णं च त्रिवर्णं तुर्य वर्णकं
पंच वर्णं महावर्णं सपरं च परापरं ॥ १६ ॥

सकलं निष्कलं तुष्टं निर्वृतं भ्रांति वर्जितं
निरंजनं निराकांक्षं निर्लेप वीतसंशयं ॥ १७ ॥

ब्रह्माणमीश्वरं बुद्धं शुद्धं सिद्धं भंगुरं
ज्योति रूपं महादेवं लोकालोक प्रकाशकं ॥ १८ ॥

अब अर्हंत के बिंब के ध्यान का स्वरूप बतलाते हैं। अर्हंत भगवान का बिंब अक्षय शाश्वत जन्म मरण रूप से रहित है। कर्मरूपी मल से रहित है। शांतमूर्ति शांतमुद्रा वाले है। अत्यंत श्रेष्ठ है। अज्ञानता से रहित है। मद से रहित है। अभिलाषा से रहित है। - अंहकार से रहित है। श्रेष्ठ श्रेष्ठों में भी अत्यंत श्रेष्ठ हैं।

मदरहित है (उद्धतपने से रहित है) शुभ है, स्वच्छ है, शांत गुण होने से सात्विक है। तीन लोक के मालिक होने से राजस गुणवाले है। मतं अर्थात् कहा है । अष्ट कर्मो के नाश करने के लिये तामस गुण युक्त है। शृंगार आदि रसों से रहित है। ज्ञानवान से है। ज्योतिरूप सहित है। पूनम की चांदनी रात के समान उज्वल व आनन्द कारी है।

अर्हंत की अपेक्षा शरीर सहित होने से साकर अर्थात् आकार सहित है। सिद्ध की अवस्था में शरीर रहित होने से निराकार आकार रहित है। ज्ञानरस से भरे होने के कारण सरस है परन्तु रसादि विषय से रहित हैं।

रम अर्थात उत्कृष्ट है। क्रम से उत्कृष्ट है। परातीतं अर्थात् शत्रुता से रहित है। परंपरं अनुक्रम से अतीत है। परात्परं आदि से भी परे अर्थात अनादि है।

सपरं अर्थात् स से परे आगे का वर्ण हकार अक्षर जो अरहंत का वाचक है वह एक वर्ण का सफेद है, दो वर्ण का श्याम है, तीनवर्ण का लाला है। तूर्यवर्ण अर्थात् ४ चार रंग का अर्थात् नीले वर्ण का है। पांचवर्ण का पीला वर्णवाला भी है। महावर्ण अर्थात् उत्कृष्ट वर्ण का है। उत्कृष्ट से भी उत्कृष्ट पांच वर्ण का हकार है।

सकलं अर्थात कला सहित है। अर्हंत की अपेक्षा सकल है सिद्धों की अपेक्षा शरीर रहित है। तुष्टं अर्थात उनको देखने से संतोष उपजाने वाला है निर्वृत्तं अर्थात भ्रमण रहित होने से कल्याण के हेतु है। भ्रांति भ्रमण रहित है। कर्मांजन से रहित है। इच्छा से रहित है. कर्मरूपी लेप से रहित है संशय रहित है। ब्रह्म स्वरूप है सब भव्यजीवों को हित की शिक्षा देने से ईश्वर तीन लोक के स्वामी है ज्ञानवान है। अठारह दोषों के न होने से शुद्ध है। सिद्ध स्वरूप है। संसार में आवागमन न होने से क्षण भंगुरता से रहित है। ज्योति स्वरूप है। देवो से पूजन की होने से महादेव है तीन लोक और अलोकाकाश को अपने ज्ञान से प्रकाशने वाले हैं।

अर्हदाख्य: सवर्णांत: सरेफो बिंदु मंडित:
तूर्यस्वर समायुक्तो बुहध्यानादि मालित: ॥ १९ ॥

अर्हंत का आख्य वाचक सवर्णांत (स अक्षर के आगे का अक्षर) हकार है। वह रकार और बिन्दु अनुस्वार सहित है रेफ और बिन्दु से शोभायमान है। तथा चौथा स्वर ईकार सहित है। सो सब मिलाकर हीं हुआ यह हीं बीज बहुत प्रकार से ध्यान करने योग्य है।

अस्मिन् बीजे स्थिता: सर्वेऋषभाद्या जिनोत्तमा:
वर्णै र्निजै र्निजै र्युक्ता ध्यातव्या स्तऽत्र संगता: ॥ २० ॥

इस हींकार बीजाक्षर में ऋषभनाथ जी लेकर चौबीस जिनेश्वर वर्द्धमानजी पर्यंत विराजमान है उनका अपने अपने रंगो सहित ध्यान करना योग्य है।

नादश्चद्र समाकारो बिन्दुर्नील समप्रभा:
कालरुण समासांत: स्वर्णाभ सर्वतोमुख: ॥ २१ ॥

शिर: संलीन ईस्वारो विनीलो वर्णत: स्मृत:
वर्णानुसार सं लीनं तीर्थकृन्मडंलं नम: ॥ २२ ॥

हीं बीजाक्षर की नाद कला आधे चन्द्रमा के आकार की है। वह सफेद रंगवाली है। नाद पर जो बिन्दु है यह श्याम रंग का है। और गोल है। मस्तक रूप कला लाला रंग की प्रभावाली है। सांत अर्थात् सकार के आगे अक्षर हकार चारों तरफ से सोने के समान पीले रंग का है।
सिर से मिला हुआ ईकार नीले रंग का है उस हीं में अपने रंग के अनुसार तीर्थंकर समूह का स्थापन किया जाये उनको नमस्कार है। अब आगे इन पांचो भागों में जो तीर्थंकर स्थित है वह अलग अलग रंग सहित बताते हैं।

चन्द्रप्रभ पुष्प दंतौ नाद स्थिति समाश्रितौ
बिन्दु मध्य गतौ नेमि सुव्रतौ जिन सत्तमो ॥ २३ ॥

चंद्रप्रभजी और पुष्पदंतजी यह दोनों तीर्थंकर जो श्वेत वर्ण के हैं अर्ध चन्द्रमा के आकार की जो हीं कार की नाद हैं उसमें स्थापन करने चाहिये। हींकार की बिन्दु गोल श्याम वर्ण की है। उसमें नेमिनाथजी मुनिसुव्रतनाथ जी जिनका शरीर की कांति श्याम वर्ण है वह दोनों जिनेन्द्र देव बिन्दी में विराजमान महाउत्तम है।

पद्मप्रभ वासु पूज्यो कला यत्र मधिश्रितौ
शिरः ईस्थिति संलीनौ सुपार्श्व पार्श्वजिनोत्तमौ
शिरः ईस्थिति संलीनौ पार्श्व मल्लि जिनोत्तमौ ॥ २४ ॥

(अब भेद है।)

पद्म प्रभ वासुपूज्य जी यह दोनों तीर्थंकर लाल वर्ण के हैं। ह्रींकार की कला भी लाल वर्ण की हैं उसमें तिष्ठित है मस्तक में ईकार की मात्रा जिसका रंग नीला उसमें श्री पार्श्वनाथजी और मल्लिनाथजी जिनके शरीर की कांति भी नीले वर्ण की है। उसमें तिष्ठित है।

शेषा स्तीर्थंकराः सर्वैरहः स्थाने नियोजिताः
मायाबीजाक्षरं प्राप्ताश्चतुर्विंशतिरर्हंतां ॥ २५ ॥

बाकी शेष रहे सोलह तीर्थंकर वह सब हकार और रकार में तिष्ठित है। इस हकार और रकार का रंग सुवर्ण जैसा पीला है। इसप्रकार श्री ऋषभनाथजी, अजितनाथजी, संभवनाथजी, अभिनंदनजी, सुमतिनाथजी, श्री सुपार्श्वनाथजी, शीतलनाथजी, श्रेयासनाथजी, विमलनाथजी, अनंतनाथजी, धर्मनाथजी, शांतिनाथजी, कुंथुनाथजी, अरनाथजी ,नमि नाथजी, महावीर स्वामीजी , यह सोलह तीर्थंकर माया बीज अक्षर ह्रींकार के हकार और रकार अक्षर में ही तिष्ठित है। इसप्रकार चौबीस तीर्थंकर ह्रीं बीजाक्षर में स्थित हैं।

गतराग द्वेष मोहाः सर्वपाप विवर्जिताः
सर्वदा सर्वलोकेषु ते भवंतु जिनोत्तमाः ॥ २६ ॥

वह जिनेन्द्रदेव रागद्वेष मोह से रहित है। सब पाप कर्मो से रहित हैं। सर्वकाल विषय अतीत अनागत वर्तमान तथा सर्वलोक विषय पाताल पृथ्वी आकाश में अर्थात् तीनों काल व तीनों लोक में जिन भगवान उत्तम से उत्तम महाउत्तम है इनके बराबर और कोई नहीं है।

देवदेवस्य यच्चक्रं तस्य चक्रस्य या विभा
तयाच्छादित सर्वांगं मां मा हिंसतु पन्नगाः ॥ २७ ॥

देवों के देव श्री जिनेन्द्र भगवान तीर्थंकरों के समूह रुपी चक्र की प्रभा से ढ़के हुए मेरे शरीर के सब अंगों को सर्प जाति के जीव पीड़ा नहीं दें मुझे न सतावे।

देवदेवस्य यच्चक्रं तस्य चक्रस्य या विभा
तयाच्छादित सर्वांगं मां मा हिंसतु नागिनी ॥ २८ ॥

देवों के देव श्री जिनेन्द्र भगवान तीर्थंकरों के समूह रुपी चक्र की प्रभा से ढ़के हुए मेरे शरीर के सब अंगों को सर्पनी जाति के जीव पीड़ा नहीं दें मुझे न सतावे ।

देवदेवस्य रुच्यकं तस्य चक्रस्य या विभा
तयाच्छादित सर्वांगं मां मा हिंसतु गोहरा ॥ २९ ॥

देवों के देव श्री जिनेन्द्र भगवान तीर्थंकरों के समूह रूपी चक्र की प्रभा से ढ़के हुए मेरे शरीर के सब अंगों को गोहरा जाति के जीव पीड़ा नहीं दें मुझे न सतावे ।

देवदेवस्य रुच्यकं तस्य चक्रस्य या विभा
तयाच्छादित सर्वांगं मां मा हिंसतु वृश्चिका ॥ ३० ॥

देवों के देव श्री जिनेन्द्र भगवान तीर्थंकरों के समूह रूपी चक्र की प्रभा से ढ़के हुए मेरे शरीर के सब अंगों को बिच्छू जाति के जीव पीड़ा नहीं दें मुझे न सतावे ।

देवदेवस्य रुच्यकं तस्य चक्रस्य या विभा
तयाच्छादित सर्वांगं मां मा हिंसतु काकिनी ॥ ३१ ॥

देवों के देव श्री जिनेन्द्र भगवान तीर्थंकरों के समूह रूपी चक्र की प्रभा से ढ़के हुए मेरे शरीर के सब अंगों को कांकनी जाति के जीव पीड़ा नहीं दें मुझे न सतावे ।

देवदेवस्य रुच्यकं तस्य चक्रस्य या विभा
तयाच्छादित सर्वांगं मां मा हिंसतु डाकिनी ॥ ३२ ॥

देवों के देव श्री जिनेन्द्र भगवान तीर्थंकरों के समूह रूपी चक्र की प्रभा से ढ़के हुए मेरे शरीर के सब अंगों को डाकिनी जाति के जीव पीड़ा नहीं दें मुझे न सतावे ।

देवदेवस्य रुच्यकं तस्य चक्रस्य या विभा
तयाच्छादित सर्वांगं मां मा हिंसतु याकिनी ॥ ३३ ॥

देवों के देव श्री जिनेन्द्र भगवान तीर्थंकरों के समूह रूपी चक्र की प्रभा से ढ़के हुए मेरे शरीर के सब अंगों को याकिनी जाति के जीव पीड़ा नहीं दें मुझे न सतावे ।

देवदेवस्य रुच्यकं तस्य चक्रस्य या विभा
तयाच्छादित सर्वांगं मां मा हिंसतु राकिनी ॥ ३४ ॥

देवों के देव श्री जिनेन्द्र भगवान तीर्थंकरों के समूह रूपी चक्र की प्रभा से ढ़के हुए मेरे शरीर के सब अंगों को राकिनी जाति के जीव पीड़ा नहीं दें मुझे न सतावे ।

देवदेवस्य यच्चक्रं तस्य चक्रस्य या विभा
तयाच्छादित सर्वांगं मां मा हिंसतु लाकिनी ॥ ३५ ॥

देवों के देव श्री जिनेन्द्र भगवान तीर्थंकरों के समूह रूपी चक्र की प्रभा से ढ़के हुए मेरे शरीर के सब अंगों को लाकिनी जाति के जीव पीड़ा नहीं दें मुझे न सतावे ।

देवदेवस्य यच्चक्रं तस्य चक्रस्य या विभा
तयाच्छादित सर्वांगं मां मा हिंसतु शाकिनी ॥ ३६ ॥

देवों के देव श्री जिनेन्द्र भगवान तीर्थंकरों के समूह रूपी चक्र की प्रभा से ढ़के हुए मेरे शरीर के सब अंगों को शाकिनी जाति के जीव पीड़ा नहीं दें मुझे न सतावे ।

देवदेवस्य यच्चक्रं तस्य चक्रस्य या विभा
तयाच्छादित सर्वांगं मां मा हिंसतु हाकिनी ॥ ३७ ॥

देवों के देव श्री जिनेन्द्र भगवान तीर्थंकरों के समूह रूपी चक्र की प्रभा से ढ़के हुए मेरे शरीर के सब अंगों को हाकिनी जाति के जीव पीड़ा नहीं दें मुझे न सतावे ।

देवदेवस्य यच्चक्रं तस्य चक्रस्य या विभा
तयाच्छादित सर्वांगं मां मा हिंसतु राक्षसाः ॥ ३८ ॥

देवों के देव श्री जिनेन्द्र भगवान तीर्थंकरों के समूह रूपी चक्र की प्रभा से ढ़के हुए मेरे शरीर के सब अंगों को राक्षस जाति के जीव पीड़ा नहीं दें मुझे न सतावे ।

देवदेवस्य यच्चक्रं तस्य चक्रस्य या विभा
तयाच्छादित सर्वांगं मां मा हिंसंतु भैरवा ॥ ३९ ॥

देवों के देव श्री जिनेन्द्र भगवान तीर्थंकरों के समूह रूपी चक्र की प्रभा से ढ़के हुए मेरे शरीर के सब अंगों को भैरव जाति के जीव पीड़ा नहीं दें मुझे न सतावे ।

देवदेवस्य यच्चक्रं तस्य चक्रस्य या विभा
तयाच्छादित सर्वांगं मां मा हिंसंतु भेषसा ॥ ४० ॥

देवों के देव श्री जिनेन्द्र भगवान तीर्थंकरों के समूह रूपी चक्र की प्रभा से ढ़के हुए मेरे शरीर के सब अंगों को भेषसा जाति के जीव पीड़ा नहीं दें मुझे न सतावे ।

देवदेवस्य यच्चक्रं तस्य चक्रस्य या विभा
तयाच्छादित सर्वांगं मां मा हिंसतु कीनसा ॥ ४१ ॥

देवों के देव श्री जिनेन्द्र भगवान तीर्थंकरों के समूह रूपी चक्र की प्रभा से ढ़के हुए मेरे शरीर के सब अंगों को कीनसा जाति के जीव पीड़ा नहीं दें मुझे न सतावे ।

देवदेवस्य यच्चक्रं तस्य चक्रस्य या विभा
तयाच्छादित सर्वांगं मां मा हिंसतु व्यंतरा ॥ ४० ॥

देवों के देव श्री जिनेन्द्र भगवान तीर्थंकरों के समूह रूपी चक्र की प्रभा से ढ़के हुए मेरे शरीर के सब अंगों को व्यंतरा जाति के जीव पीड़ा नहीं दें मुझे न सतावे ।

देवदेवस्य यच्चक्रं तस्य चक्रस्य या विभा
तयाच्छादित सर्वांगं मां मा हिंसतु तेग्रहाः ॥ ४१ ॥

देवों के देव श्री जिनेन्द्र भगवान तीर्थंकरों के समूह रूपी चक्र की प्रभा से ढ़के हुए मेरे शरीर के सब अंगों को तेग्रह जाति के जीव पीड़ा नहीं दें मुझे न सतावे ।

देवदेवस्य यच्चक्रं तस्य चक्रस्य या विभा
तयाच्छादित सर्वांगं मां मा हिंसतु तस्करा ॥ ४२ ॥

देवों के देव श्री जिनेन्द्र भगवान तीर्थंकरों के समूह रूपी चक्र की प्रभा से ढ़के हुए मेरे शरीर के सब अंगों को तस्करा जाति के जीव पीड़ा नहीं दें मुझे न सतावे ।

देवदेवस्य यच्चक्रं तस्य चक्रस्य या विभा
तयाच्छादित सर्वांगं मां मा हिंसतु वन्हय ॥ ४३ ॥

देवों के देव श्री जिनेन्द्र भगवान तीर्थंकरों के समूह रूपी चक्र की प्रभा से ढ़के हुए मेरे शरीर के सब अंगों को वन्हय जाति के जीव पीड़ा नहीं दें मुझे न सतावे ।

देवदेवस्य यच्चक्रं तस्य चक्रस्य या विभा
तयाच्छादित सर्वांगं मां मा हिंसतु श्रृगिणः ॥ ४४ ॥

देवों के देव श्री जिनेन्द्र भगवान तीर्थंकरों के समूह रूपी चक्र की प्रभा से ढ़के हुए मेरे शरीर के सब अंगों को दृष्टिणः जाति के जीव पीड़ा नहीं दें मुझे न सतावे ।

देवदेवस्य यच्चक्रं तस्य चक्रस्य या विभा
तयाच्छादित सर्वांगं मां मा हिंसतु दष्टिण: ॥ ४५ ॥

देवों के देव श्री जिनेन्द्र भगवान तीर्थंकरों के समूह रूपी चक्र की प्रभा से ढ़के हुए मेरे शरीर के सब अंगों को दष्ट्रिण जाति के जीव पीड़ा नहीं दें मुझे न सतावे ।

देवदेवस्य यच्चक्रं तस्य चक्रस्य या विभा
तयाच्छादित सर्वांगं मां मा हिंसतु रेलपा ॥ ४६ ॥

देवों के देव श्री जिनेन्द्र भगवान तीर्थंकरों के समूह रूपी चक्र की प्रभा से ढ़के हुए मेरे शरीर के सब अंगों को रेलपा जाति के जीव पीड़ा नहीं दे मुझे न सतावे ।

देवदेवस्य यच्चक्रं तस्य चक्रस्य या विभा
तयाच्छादित सर्वांगं मां मा हिंसतु पक्षिण ॥ ४७ ॥

देवों के देव श्री जिनेन्द्र भगवान तीर्थंकरों के समूह रूपी चक्र की प्रभा से ढ़के हुए मेरे शरीर के सब अंगों को पक्षिण जाति के जीव पीड़ा नहीं दें मुझे न सतावे ।

देवदेवस्य यच्चक्रं तस्य चक्रस्य या विभा
तयाच्छादित सर्वांगं मां मा हिंसतु भजका ॥ ४८ ॥

देवों के देव श्री जिनेन्द्र भगवान तीर्थंकरों के समूह रूपी चक्र की प्रभा से ढ़के हुए मेरे शरीर के सब अंगों को भजका जाति के जीव पीड़ा नहीं दें मुझे न सतावे ।

देवदेवस्य यच्चक्रं तस्य चक्रस्य या विभा
तयाच्छादित सर्वांगं मां मा हिंसतु जृंभिका ॥ ४९ ॥

देवों के देव श्री जिनेन्द्र भगवान तीर्थंकरों के समूह रूपी चक्र की प्रभा से ढ़के हुए मेरे शरीर के सब अंगों को जृंभिका जाति के जीव पीड़ा नहीं दें मुझे न सतावे ।

देवदेवस्य यच्चक्रं तस्य चक्रस्य या विभा
तयाच्छादित सर्वांगं मां मा हिंसतु तोयदा ॥ ५० ॥

देवों के देव श्री जिनेन्द्र भगवान तीर्थंकरों के समूह रूपी चक्र की प्रभा से ढ़के हुए मेरे शरीर के सब अंगों को तोयदा जाति के जीव पीड़ा नहीं दें मुझे न सतावे ।

देवदेवस्य यच्चक्रं तस्य चक्रस्य या विभा
तयाच्छादित सर्वांगं मां मा हिंसतु सिंहका ॥ ५१ ॥

देवों के देव श्री जिनेन्द्र भगवान तीर्थंकरों के समूह रूपी चक्र की प्रभा से ढ़के हुए मेरे शरीर के सब अंगों को सिंहका जाति के जीव पीड़ा नहीं दें मुझे न सतावे ।

देवदेवस्य यच्चक्रं तस्य चक्रस्य या विभा
तयाच्छादित सर्वांगं मां मा हिंसतु शूकरा ॥ ५२ ॥

देवों के देव श्री जिनेन्द्र भगवान तीर्थंकरों के समूह रूपी चक्र की प्रभा से ढ़के हुए मेरे शरीर के सब अंगों को शूकर जाति के जीव पीड़ा नहीं दें मुझे न सतावे ।

देवदेवस्य यच्चक्रं तस्य चक्रस्य या विभा
तयाच्छादित सर्वांगं मां मा हिंसतु चित्रका ॥ ५३ ॥

देवों के देव श्री जिनेन्द्र भगवान तीर्थंकरों के समूह रूपी चक्र की प्रभा से ढ़के हुए मेरे शरीर के सब अंगों को चित्रका जाति के जीव पीड़ा नहीं दें मुझे न सतावे ।

देवदेवस्य यच्चक्रं तस्य चक्रस्य या विभा
तयाच्छादित सर्वांगं मां मा हिंसतु हस्तिन ॥ ५४ ॥

देवों के देव श्री जिनेन्द्र भगवान तीर्थंकरों के समूह रूपी चक्र की प्रभा से ढ़के हुए मेरे शरीर के सब अंगों को हस्तिन जाति के जीव पीड़ा नहीं दें मुझे न सतावे ।

देवदेवस्य यच्चक्रं तस्य चक्रस्य या विभा
तयाच्छादित सर्वांगं मां मा हिंसतु भूमिपा ॥ ५५ ॥

देवों के देव श्री जिनेन्द्र भगवान तीर्थंकरों के समूह रूपी चक्र की प्रभा से ढ़के हुए मेरे शरीर के सब अंगों को भूमिया जाति के जीव पीड़ा नहीं दें मुझे न सतावे ।

देवदेवस्य यच्चक्रं तस्य चक्रस्य या विभा
तयाच्छादित सर्वांगं मां मा हिंसतु शाश्वः ॥ ५६ ॥

देवों के देव श्री जिनेन्द्र भगवान तीर्थंकरों के समूह रूपी चक्र की प्रभा से ढ़के हुए मेरे शरीर के सब अंगों को शाश्व जाति के जीव पीड़ा नहीं दें मुझे न सतावे ।

देवदेवस्य यच्चक्रं तस्य चक्रस्य या विभा
तयाच्छादित सर्वांगं मां मा हिंसतु ग्रामिण ॥ ५७ ॥

देवों के देव श्री जिनेन्द्र भगवान तीर्थंकरों के समूह रूपी चक्र की प्रभा से ढ़के हुए मेरे शरीर के सब अंगों को ग्रामिण जाति के जीव पीड़ा नहीं दें मुझे न सतावे ।

देवदेवस्य यच्चक्रं तस्य चक्रस्य या विभा
तयाच्छादित सर्वांगं मां मा हिंसतु दुर्जना ॥ ५८ ॥

देवों के देव श्री जिनेन्द्र भगवान तीर्थंकरों के समूह रूपी चक्र की प्रभा से ढ़के हुए मेरे शरीर के सब अंगों को दुर्जना जाति के जीव पीड़ा नहीं दें मुझे न सतावे ।

देवदेवस्य यच्चक्रं तस्य चक्रस्य या विभा
तयाच्छादित सर्वांगं मां मा हिंसतु व्याधय ॥ ५९ ॥

देवों के देव श्री जिनेन्द्र भगवान तीर्थंकरों के समूह रूपी चक्र की प्रभा से ढ़के हुए मेरे शरीर के सब अंगों को व्याधय जाति के जीव पीड़ा नहीं दें मुझे न सतावे ।

देवदेवस्य यच्चक्रं तस्य चक्रस्य या विभा
तयाच्छादित सर्वांगं मां मा हिंसतु सर्वतः ॥ ६० ॥

देवों के देव श्री जिनेन्द्र भगवान तीर्थंकरों के समूह रूपी चक्र की प्रभा से ढ़के हुए मेरे शरीर के सब अंगों को सर्वतः जाति के जीव पीड़ा नहीं दें मुझे न सतावे ।

श्री गौतमस्य या मुद्रा तस्या या भुविलब्धयः
तामिरभ्याधिकं ज्योतिरर्हः सर्वं निधीश्वरः ॥ ६० ॥

श्री गौतम स्वामी गणधर का स्वरूप जो मुनिराज से वन्दनीय है जिसकी लब्धी ज्योति पृथ्वी पर फैल रही है। उस ज्योति से भी अधिक ज्योति प्रकाश अर्हंत भगवान की है। वह भगवान सब विद्याओं का खजाना है।

पातालवासिनी देवा देवा भूपीठ वासिनः
स्व स्वर्गवासिनो देवाः सर्वे रक्षंतु मामितः ॥ ६१ ॥

पाताल में रहने वाले दस प्रकार के भवनवासी देव पृथ्वी पर रहने वाले व्यंतर ज्योतिषी देव स्वकल्पवासी देव स्वर्गवासी देव यह सब देवी मेरी रक्षा करे।

येऽवधि लब्धयो ये तु परमावधि लब्धय:
ते सर्वे मुनयो दिव्या मां संरक्षन्तु सर्वत: ॥ ६२ ॥

जितने मुनिराज अवधिज्ञान की लबिध्त सहित छट्ठे गुणस्थान के धारी और परम अवधिज्ञान के धारण करने वाले बारहवें गुण स्थान वाले जिनको अन्तर मुहूर्त में केवल ज्ञान उत्पन्न होता है। सो सब मुनिराज छट्ठे गुणस्थान से लेकर बारहवें गुणस्थान तक के मेरी रक्षा करे।

भावनेन्द्र व्यंतरेन्द्र ज्योतिषकेन्द्र कल्पेन्द्रेभ्यो नम: श्रुतावधि देशवधि परमावधि सर्वावधि बुद्धऋद्धि प्राप्ता सर्वौषधिऋद्धि प्राप्ता अनन्त बलऋद्धि प्राप्त तप ऋद्धि प्राप्त रस ऋद्धि प्राप्त विक्रिया ऋद्धि प्राप्त क्षेत्र ऋद्धि प्राप्त अक्षीण महान स ऋद्धि प्राप्तेभ्योनम:।

भवनवासियों के इन्द्र २०, व्यंतरोके इंद्र १६, ज्योतिषों के इन्द्र २, कल्पवासी १२,भवनवासी २०, चमरेन्द्र-वैरोचन- भूतानद- धरणानन्द-वेणु-वेणधारी- पूरण- अवशिष्ट-जलप्रभ-जलकीर्ति-हरिषेण-हरिकांत-अग्नि शिखि- अग्निवाहन- अमितगति- अमितवाहन- घोष-महाघोष वेलांजन-प्रभंजन व्यंतरेन्द्र १६ किन्नर-किंपुरुष- सांतपुरुष- महापुरुष-अतिकाय महाकाय- गतिरति- मतिकीर्ति-मानभद्र-पूर्णभद्र भीम-महाभीम-सरूप-प्रतिरूप-काल-महाकाल। ज्योतिषेष्केन्द्र सूर्य-चंद्रमा। कल्पवासी१२ सौधर्म-ईशान-सनतकुमार-माहेन्द्र-ब्रह्म-लांतव- शुक्र-सतार-श्रीमत-प्राणत-आरण-अच्युत यह भेद देश अवधि के हैं। ६

अनुगामी-भवांतर तक जाय जैसे सूरज के साथ ज्योति जाय
अननुगामी साथ नहीं जाय
वर्धमान= असंख्यात लोक बढ़े
हीयमान घटता जाय
अवस्थित घटे बढ़े नहीं
अनवस्थित जितना बढ़े उतना घटे
परमावधि-सर्वावधि
विशिष्ट संयमधारी मुनिश्वर के होती है। १४ राजू उत्तंग ३४३ राजू घनमाकार में सूक्ष्म स्थूल-रूप अविभागी परमाणु पर्यंत जानते हैं। सर्वावधि ऋद्धिधारी तीनों लोक के पदार्थ जुदा जुदा जानता है।

बुद्धि ऋद्धि - १९

केवल- अवधि - मनपर्याय - बीजबुद्धि - कोष्टबुद्धि पादाणु सारिणी - संभिण श्रोत्र - दूरास्वादान -दूरस्पर्श दूरगंध-दूरदर्शन- दूरश्रवण - दशपूर्व - १४ पूर्व अष्टमहानिमित्त-प्रज्ञाश्रवण प्रत्येकबुद्धि - वादित्व ऋद्धि

सर्वोषधि ऋद्धि ९

आमर्श ऋद्धि - खेलोषधि - जल्लोषधि - मल्लोषधि - विडोषधि ऋद्धि औषधि ऋद्धि - आसीविष ऋद्धि - दृष्टिविष ऋद्धि

अनन्तबल ऋद्धि ३

मनबल - वचनबल - कायबल ऋद्धि

तप ऋद्धि - ९

उग्रऋद्धि -दीप्त ऋद्धि - तप्त ऋद्धि महातप ऋद्धि- घोरतर ऋद्धि घोर पराक्रम ऋद्धि - घोर ब्रह्मचर्य तप ऋद्धि - अघोर ब्रह्मचर्यतप ऋद्धि रसऋद्धि ६

आशी विष ऋद्धि - दृष्टिविष ऋद्धि - क्षीर श्रावणी ऋद्धि - मधुश्रावणी - घृतश्रावणी - अमृतश्रावणी ऋद्धि- क्षीरश्रावणी

वैक्रियक ऋद्धि ११ अणिमा - महिमा - लघिमा - गरिमा- प्राप्त- प्राकाम्य - ईशत्व वशित्व- अमितबल अंतर्धान-कामरूपिणी

क्षेत्र ऋद्धि-

अक्षीण [illegible] -अक्षीण महालय ऋद्धि

चारण ऋद्धि ८

पादानुसारिणी - जंघाचारिणी, तन्तु चारणी, फूलचारणी, पानचारणी, बीर्यचारणी,श्रेणी चारणी, अग्निचारणी, आकाश गामिनी,

ॐ श्रीं ह्रीं इच्च धृति लक्ष्मी गौरी चंडी सरस्वती
जयांअंबा विजया विशल्ला ऽजिता नित्या मदद्रवा ॥ ६३ ॥

कामांगी काम बाणा च सानन्दा नंदमालिनी
माया मायाविनी द्रौद्री कला काली कलि प्रिया ॥ ६४ ॥

एता: सर्वा महादेव्या वर्तते या जगत् त्रये
मह्यसर्वा: प्रयच्छंतु कांति लक्ष्मीं धृतिं मतिं ॥ ६५ ॥

हिमवत पर्वत पर पद्म द्रह १००० का योजन का है। उसमें १ योजन का कमल है। एक कोस की कर्णिका है। उस वज्र मयी कर्णिका में श्री देवी का मंदिर है।

महा हिमवत् पर्वत पर महापद्म द्रह २०० योजन का है। २ योजन का कमल है। दो कोस की कर्णिकी है। उसमें ह्रीं देवी का मंदिर है।

निषध पर्वत पर ४००० योजन का तिगिच्छ का द्रह है। चार योजन का कमल है। चार कोस की

कर्णिका है। उसमें लक्ष्मी देवी का मंदिर है।
यह चारों देवियां एक पल्य की आयुवाली है तथा पारिषद जाति के १६०० देव हर एक की सेवा करते हैं।
गौरी - चंडी- सरस्वती-जय- अंबिके -विजया -क्लिन्ना- अजिता -नित्या- मदद्रवा- कामांगा- कामबाण- सानन्दा- नन्दमालिनी-माया-मायाबिनी- रौद्री-कला काली-कलिप्रिया
यह चौबीस जिनशासन की रक्षा करने वाला महादेवियाँ तीनों लोक पाताल-मध्यलोक- आकाश अथवा स्वर्ग लोक गामिनी है। यह सब महादेवी मुझ को कांति लक्ष्मी धैर्य और बुद्धि देवें।
नील पर्वत पर ४००० योजन का केशरिन नाम का हृद उस के मध्य कमल पर श्रीदेवी देवी का मंदिर है।
रूक्मिन पर्वत पर २००० योजन का महापुंडरिक नाम का हृद है दो योजन का कमल है दो कोश की कर्णिका है महापुंडरीक हृद में बुद्धि देवी का मंदिर है। यह सब मंदिरों के भवन सफेद रंग के बने हुए है।

दुर्जनाभूत वेताला: पिशाचा मुद्गला स्तथा
ते सर्वे उपशाम्यतुं दैव देव प्रभावत: ॥ ६६ ॥

दुष्टजन भूत वैताल पिशाच मुद्गल दैत्य यह सब मिथ्यात्वी रौद्र परिणामी जीव देवों के देव श्री जिनेन्द्रभगवान के प्रभाव से शांत होवें।

दिव्यो गौप्य: सुदुष्प्राप्य श्री ऋषिमंडल स्तव:
भाषित स्तीर्थनाथेन जगतत्राण कृतोऽनघ: ॥ ६७ ॥

यह ऋषि मंडल स्तोत्र बहुत दैदीप्यमान हर एक को दिखलाने योग्य नहीं है। गुप्त रखने योग्य है यह आसानी से मिलने वाला नहीं होने से दुष्प्राप्य है। श्री ऋषि मंडल स्तोत्र को तीन लोक के स्वामी महावीर भगवान ने जगत की रक्षा करने के वास्ते निर्दोष होने के कारण कहा है।

रणे राजकुले वन्हौ जले दुर्गे गजे हरौ
शमशानै विपिने घोरे स्मृतो रक्षति मानवं ॥ ६८ ॥

युद्ध संग्राम में राजदरबार, अग्नि ज्वाला में, पानी में, गढ़किले में , हाथी भय में , सिंह के भय में, श्मशान भूमि के भय में, निर्जन उजाड़ बन में, भयंकर विपत्ति में यह स्तोत्र मंत्र का स्मरण करने पर मनुष्य की रक्षा करता है।

राज्य भृष्टा निजं राज्यं पदभृष्टा निजं पदं
लक्ष्मी भृष्टा निजां लक्ष्मीं प्राप्नुवंति न संशय: ॥ ६९ ॥

राज्य से निकले हुए अपने राज्य को, मंत्री वगैरह पद से रहित हुये अपने पद को, लक्ष्मी धन से रहित हुये अपने धन को पाते हैं। इसमें कोई संदेह नहीं करना।

भार्यार्थी लभते भार्यां पुत्रार्थी लभते सुतं
धनार्थी लभते वितं नरः स्मरण मात्रतः ॥ ७० ॥

स्त्री के वास्ते स्मरण करने से स्त्री, पुत्र के इच्छुक को पुत्र, धन की इच्छावाले मनुष्य को धन की प्राप्ति होती है।

स्वर्णे रूप्येऽथवा कांस्ये लिखित्वा यस्तु पूजयेत्
तस्यै कुऽष्ट महासिद्धि र्गृहे वसति शाश्वतीं ॥ ७१ ॥

इस यंत्र को सोने चांदी व काँसे (अथवा तांबे) के ऊपर लिखकर पूजने से उसके घर में वांछित अर्थ की महासिद्धि रहती है।

भूर्जपत्रे लिखित्वेदं गलके मूर्ध्नि वा भुजे
धारितः सर्वदा दिव्यं सर्वभीति विनाशनं ॥ ७२ ॥

इस यंत्र को भोजपत्र पर लिखकर ताबीज में भरकर गले में या मस्तक में या भुजा में पहनने से हमेशा सर्व आरति चिंता भय से रहित हो जाता है।

भूतैः प्रेतै र्ग्रह यक्षैः पिशाचै मुद्गलै स्तथा
वातपित्त कफोद्रेकै र्मुच्यते नात्र संशयः ॥ ७३ ॥

भूतप्रेत नवग्रह यक्ष पिशाच मुद्गल दैत्य और वातपित्त कफ आदि रोगों के उपद्रव से निस्संदेह छूट जाता है।

भुर्भवः स्वस्त्रयी पीठ वर्तिनः शाश्वता जिनाः
तैः स्तुतै र्वंदितै र्दृष्टैर्यत्फलं तत्फलं स्मृतम् ॥ ७४ ॥

अधो लोक मध्य लोक स्वर्गलोक में जहां अकृत्रिम जिन चैत्यालय हैं जहां हमेशा जिनेन्द्र भगवान के बिम्ब विराजमान हैं। उनके स्तवन वंदना और दर्शन करने से जो फल मिलता है। उतना ही फल इस स्तोत्र वगैरह के स्मरण करने से प्राप्त होता है।

एतद्गोप्यं महास्तोत्रं न देयं यस्य कस्यचित्
मिथ्यात्व वासिनो देयं बाल हत्या पदे पदे ॥ ७५ ॥

यह महान स्तोत्र गुप्त रखने योग्य है हर किसी को नहीं देना चाहिये। योग्य पात्र ही को बतलाना चाहिये। सम्यक्त रहित पुरुष को देने पर पद पद पर बाल हत्या के समान पाप का बंध होता है।

आचाम्लादि तपः कृत्वा पूजयित्वा जिनावलिं
अष्ट साहस्रिको जाप्यः कार्यस्तत्सिद्धि हेतवे ॥ ७६ ॥

आचाम्ल तप अर्थात मांड सहित चावल के भात को और सब रसों का त्याग करके खाने से यंत्र को सामने रखकर पूर्वोक्त ह्रींकार में विराजमान चौबीस भगवान की पूजन करके, इष्ट कार्य की सिद्धि के लिए इस स्तोत्र गर्भित मंत्र का ८००० जाप करना चाहिये। (इस कलिकाल में चौगुण ३२००० जाप करें।) ॐ ह्रां ह्रीं ह्रुं ह्रूं ह्रें ह्रैं ह्रौं ह्रः असि आउसा सम्यक्त्वदर्शन ज्ञानचारित्रेभ्यो ह्रीं नमः यह मंत्र है ।

शतमष्टोत्तरं प्रातर्यो पठंति दिने दिने
तेषां न व्याधयो देहे प्रभवंति च संपदः ॥ ७७ ॥

जो भव्य जीव शुद्ध योग से प्रतिदिन प्रातःकाल उठकर एक सो आठबार की एक माला फेरते हैं और स्तोत्र का पाठ पढ़ते हैं। उनके शरीर में रोग प्रगट नहीं होते बल्कि संपदायें उनके घर में प्रगट होती है।

अष्ट मासाऽवधिं यावत प्रातः प्रा तस्तु यः पठेत्
स्तोत्रमेतेन महातेज स्त्वार्हं बिंबं स पश्यति ॥ ७८ ॥

मन वचनकाय को शुद्ध करके स्थिर होकर हररोज आठ महिने की अवधि में प्रभात काल में प्रभात ही पहिले कही हुई विधि से यह मंत्र पढ़े। यह स्तोत्र महातेज है सो यह अर्हंत भगवान के बिंब का दर्शन अपने ललाट पर कर लेगा।

दृष्टे सत्यार्हते बिंबे भवे सप्तके ध्रुवं
पदं प्राप्नोति विश्रस्तं परमानंद संपदां ॥ ७९ ॥

अर्हंत भगवान के बिंब के दर्शन होने से सातवें भव (जन्म) में निश्चय से परम अतीन्द्रिय स्वाधीन आनन्द का स्थान मोक्ष पद को पाता है।

विश्व बंधोभवे ख्याता कल्याणाऽभ्राप्ति सोक्षणते
गत्वास्थाने परं सोऽपि भुवस्त्वापि निवर्तते ॥ ८० ॥

इदं स्तोत्रं महास्तोत्रं स्तवानां मुत्तमं परं
पठनात्स्मरणा ज्जापात लभते पदमव्ययं ॥ ८१ ॥

इस ऋषि मंडल स्तोत्र का जो ध्यान करता है यह संसार का प्यारा होता है। उसका महान कल्याण होता है और संसार से मुक्त होकर अंत में मोक्ष में जाता है।

यह स्तोत्र महान स्तोत्र है सब स्तोत्रों से सर्वश्रेष्ठ है। इसको पढ़ने से याद करने से व इसके मंत्र का जाप करने से प्राणी अविनश्वर पद को पाता है।

अथा अस्य लेखन प्रकार:

कांचनीयेथवा रौप्ये कांस्ये वाभाजने वरे
मध्ये लेख्य:सकारांतो द्विगुणे यांते वित: ॥ ८२ ॥

तूर्यस्वर मनोहरी विंदु राजार्धमस्तक:
जिनेशास्तत्प्रभा लेख्या यथा स्थानं तदंतरेयुग्मं ॥ ८३ ॥

यंत्र सोने चांदी अथवा कांसे या तांबे का गोल बनवाना चाहिये उसके बीच में सकार के अंत का अक्षर अर्थात् ह वर्ण में यांत अर्थात् य के आगे क अक्षर रकार मिला हुआ दुहरा लिखना चाहिये। उसमें चौथा स्वर ईकार लगाना उसके मस्तक पर आधे चन्द्रमा का आकार चिन्ह को बिन्दु ऊपर रखकर बनाना जैसे हीं उस हीं में चौबीस तीर्थंकरों का नाम लिखना चाहिये॥

चंद्रप्रभ पुष्पदंतौ मुनिसुव्रत नेमिकौ
सुपार्श्वपार्श्वौपद्मप्रभवासुपूज्यौ तथा क्रमात् ॥
कलाया तदुपरिष्टा
दिकारे मूर्ध्नि च स्फुटं लेख्या: शेषा
जिनागर्भे नमो युक्ता: सुपीतभा: युग्मं ॥

चंद्रप्रभ पुष्पदंताभ्यां नम: ऐसा हीं की अर्ध चन्द्रमा की कला में लिखना मुनि सुव्रत नमिभ्यां नम: ऐसा उस कला के उपर बिन्दु स्थान में लिखे सु पार्श्वभ्यां नम: कहे हुवे हीं वर्ण के ईकार में लिखे। उस पूर्व कथित वर्ण (हीं) के मस्तक में पद्मप्रभवासु पूज्या भ्यां नम: ऐसा लिखें और शेष १६ तीर्थंकरों को अर्थात् "ऋषभाजित संभवाभिनंदन सुमति शीतल श्रेयांसो विमलांनंत धर्म शांति कुन्थु अर मल्लि नमि वर्धमानेभ्यो नम: " इसतरह उसके बीच भाग में लिखना चाहिये यह सब हीं के बीच भाग में सोने के समान पीले रंग के प्रभावाले हैं।

ततश्च वलय: कार्यस्तद्वाह्ये कोष्ठाऽष्टकं
तत्रेतिलेख्यं विबुधैश्चारु लक्षण लक्षितै: ॥

उसके बाद ह्रीं वर्ण के चारो तरफ आठ कोठों वाला गोला खींचे उन कोठों में सुंदर लक्षणों वाले विद्वान पुरुषों को यह लिखना चाहिये।

ॐ ह्रीं सूरिभ्यो नमः कालि आदि देवताओं के आगे देव्यै नहीं लिखना है दिग्पाल भी नहीं लिखना है ॐ ह्रीं क्ष्वीं क्षः चारो दिशाओं पृथ्वी मंडल में है ।

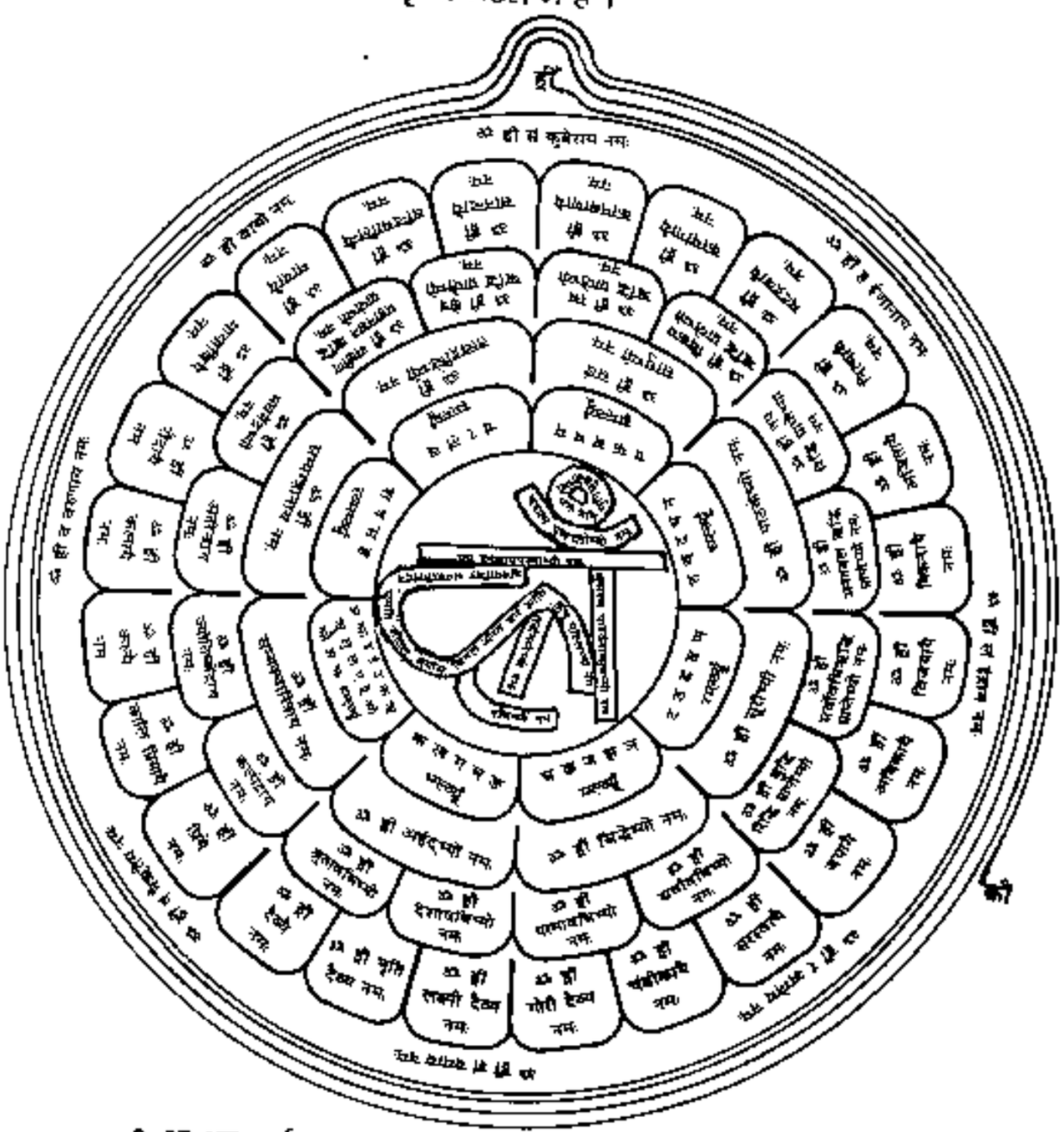

१ अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ ए ऐ ओ औ अं अः हल्व्यूं
२ क ख ग घ ङ भल्व्यूं ३ च छ ज झ ञ म्ल्व्यूं
४ ट ठ ड ढ ण र्ल्व्यूं ५ त थ द ध न व्ल्व्यूं
६ प फ ब भ म झ्ल्व्यूं ७ य र ल व स्ल्व्यूं ८ श ष स ह क्ल्व्यूं

ततश्च वलय: कार्यो लेख्या स्तत्राष्ट कोष्टका:
तत्रेति लेख्यं विबुधैश्चातुर्यान्वित विग्रहै: ॥

इसके बाद फिर उसके चारों तरफ आठ कोठों वाला गोला खेंचना उन कोठों में चतुरशरीर धारी बुद्धिमानों को ऐसा लिखना चाहिये।

(१) ॐ ह्रीं अर्हभ्यो नम: (२) ॐ ह्रीं सिद्धेभ्यो नम: (३) ॐ ह्रीं आचार्येभ्यो नम:
(४) ॐ ह्रीं पाठकेभ्यो नम: (५) ॐ ह्रीं सर्वसाधुभ्यो नम: (६) ॐ ह्रीं तत्व दृष्टिभ्यो नम:
(७) ॐ ह्रीं सम्यक ज्ञानभ्यो नम: (८) ॐ ह्रीं सम्यक् चारित्रेभ्यो नम:

ततश्च वलय: कार्यस्तत्र षोडश कोष्टका:
लेख्या स्तत्रेति लेख्यं च विद्वद्भिश्चतुरैनरै: ॥

उसके बाद सोलह कोठों वाला चतुर पुरूषों को ऐसा लिखना चाहिये।

(१) ॐ ह्रीं भावनेंद्राय नम: (२) ॐ ह्रीं व्यंतरेन्द्राय नम:
(३)ॐ ह्रीं ज्योतिषष्केन्द्राय नम: (४) ॐ ह्रीं कल्पेन्द्राय नम:
(५) ॐ ह्रीं श्रुतावधिभ्यो नम: (६) ॐ ह्रीं देशावधिभ्यो नम:
(७) ॐ परमावधिभ्यो नम: (८) ॐ ह्रीं सर्वावधिभ्यो नम:
(९) ॐ ह्रीं बुद्धि ऋद्धि प्राप्तेभ्यो नम: (१०) ॐ ह्रीं सर्वौषधि ऋद्धि प्राप्तेभ्यो नम:
(११) ॐ ह्रीं अनंत बल ऋद्धि प्राप्तेभ्यो नम: (१२) ॐ ह्रीं तपऋद्धि प्राप्तेभ्यो नम:
(१३) ॐ ह्रीं रसऋद्धि प्राप्तेभ्यो नम: (१४) ॐ ह्रीं विक्रिय ऋद्धि प्राप्तेभ्यो नम:
(१५) ॐ ह्रीं क्षेत्रऋद्धि प्राप्तेभ्यो नम: (१६) ॐ ह्रीं अक्षीण महानस ऋद्धि प्राप्तेभ्योनम:

ततश्च वलय: कार्य: चतुर्विंशति कोष्टक:
तत्र लेख्याश्च कर्तव्याश्चतुर्विंशति देवता: ॥

उसके पीछे चौबीस कोठों वाला गोलाकार बनावे उन कोठों में चौबीस जैन शासन देवताओं को लिखे वह ऐसे हैं।

(१) ॐ ह्रीं श्री देव्यै नम: (२) ॐ ह्रीं ह्री देव्यै नम: (३) ॐ ह्रीं धृति देव्यै नम:
(४) ॐ ह्रीं लक्ष्मी देव्यै नम: (५) ॐ ह्रीं गौरी देव्यै नम: (६) ॐ ह्रीं चंडिका देव्यै नम:
(७) ॐ ह्रीं सरस्वती देव्यै नम: (८) ॐ ह्रीं जया देव्यै नम: (९) ॐ ह्रीं अंबिका देव्यैनम:
(१०) ॐ ह्रीं विजया देव्यै नम: (११)ॐ ह्रीं क्लिन्नादेव्यै नम: (१२) ॐ ह्रीं अजितारि देव्यै नम: (१३) ॐ ह्रीं नित्या देव्यै नम: (१४) ॐ ह्रीं मदद्रव्या देव्यै नम: (१५) ॐ ह्रीं कामांगादेव्यै नम:

(१६) ॐ ह्रीं कामबाणायै देव्यै नमः (१७) ॐ ह्रीं सानंदायै देव्यै नमः (१८) ॐ ह्रीं नंदमालिन्यै देव्यै नमः (१९) ॐ ह्रीं माया देव्यै नमः (२०) ॐ ह्रीं मायाविन्यै देव्यै नमः (२१) ॐ ह्रीं रौद्री देव्यै नमः (२२) ॐ ह्रीं कला देव्यै नमः (२३) ॐ ह्रीं कालि देव्यै नमः (२४) कालीप्रिया दैव्यै नमः

इसके बाद दश दिक्पालों को दसों दिशाओं में लिखकर ह्रीं कार के तीन आवर्त लगाकर क्रों से निरोध करें।

फिर इस यंत्र की विधिपूर्वक पूजन पंचोपचारी अष्टद्रव्य से करके सर्वदेवाधिक का आदरपूर्वक विसर्जन करें।

श्री पार्श्वनाथाय नमः

॥ अथ: घोणा यंत्र साधन विधानं लिख्यते ॥

साध्यस्य नामावृत तत्य बाह्ये ऊष्मादि वर्ण विलिखेत्यै लसांतं
अष्टाब्ज पत्रं कुरु तस्य वाह्ये क्षमादि वृतो घोण स मेकपत्रे

शेषेषु पत्रे च शेष वर्णान लिखेद्वराद्यक्षर बाह्य भागे
माया वृत्तं घोणसय सत्प्रसिद्धं करोतिषट्कर्म विधानं सिद्धिं ॥ १ ॥

तत्व ह्रीं के अंदर साध्य के नाम को लिखकर उसके बाहर उष्मादि वर्ण लस तक लिखे उसके बाहर अष्ट दल कमल बनाकर एक पत्र में क्ष्मा आदि से युक्त घोण मंत्र को लिखे और शेष पत्रों में शेष वर्णों को लिखे उसके बाहर वर विहंगम आदि मंत्र के लिखे फिर उसके ह्रींकार से वेष्टित करे। यह घोणादेवी का सब छहो कर्मों के विधान की सिद्धि करता है।

अस्य यंत्रोद्धारः क्रियते

इति कर्णिकायां लिखेत तद्वाह्ये कौंकार
निरुद्ध ह्रीं कोरण त्रिधा वेष्टयेत तद्वहि

ॐ नमो भगवते श्री घोण से हरे हरे वरे वरे तरे तरे वः वः बल बल लां लां रां रां रीं रीं रूं रूं रौं रौं रस रस लस लस इत्यादावार्य वहिर ऽष्ट पत्रेषु पूर्वादि पत्रेषु क्ष्मां क्ष्मीं क्ष्मूं क्ष्मौं क्ष्मः ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः नमः श्री घोणसे य य य य य स स स स स ह ह ह ह ह व व व व व ठ ठ ठ ठ ठ त त त त त ग ग ग ग ग इत्या लिख्यते तद्वाह्ये वलये वर विहंगम भुजे क्ष्मां क्ष्मीं क्ष्मूं क्ष्मौं क्ष्मः ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः ह्रीं शोषय शोषय शोषय शोषय ॐ आं क्रों ह्रीं ह्रः जः जः ठः ठः ॐ ह्रीं श्रीं घोणसे नमः इत्येनेन संवेष्टय ह्रींकारेण वेष्टयेत एतेन षट्कर्म सिद्धिः

ॐ नमो भगवते श्री घोणसे हरे हरे घरे घरे तरे तरे व व वल वल लां लां रां रां रीं रीं रूं रूं रौं रौं रः रः रस रस लस लस क्षां क्षीं क्षूं क्षौं क्षः हां हीं हूं हौं हः नमः श्री घोणसे घ घ घ घ घ घ स स स स स ह ह ह ह ह व व व व व ढ ढ ढ ढ ढ त त त त त ग ग ग ग ग वर विंहगम भुजे क्षां क्षीं क्षूं क्षौं क्षः हां हीं हौं हः हीं शोषय शोषय रोषय रोषय ॐ आं क्रों हीं हः जः जः जः ठ ठ ॐ हीं श्री घोणसे नम देवदत्तस्य शांति तुष्टिं पुष्टिं ग्रहोप शांतिं सर्वजन वश्यं च कुरु कुरु स्वाहा।

यह मंत्र कर्णिका में लिखे।

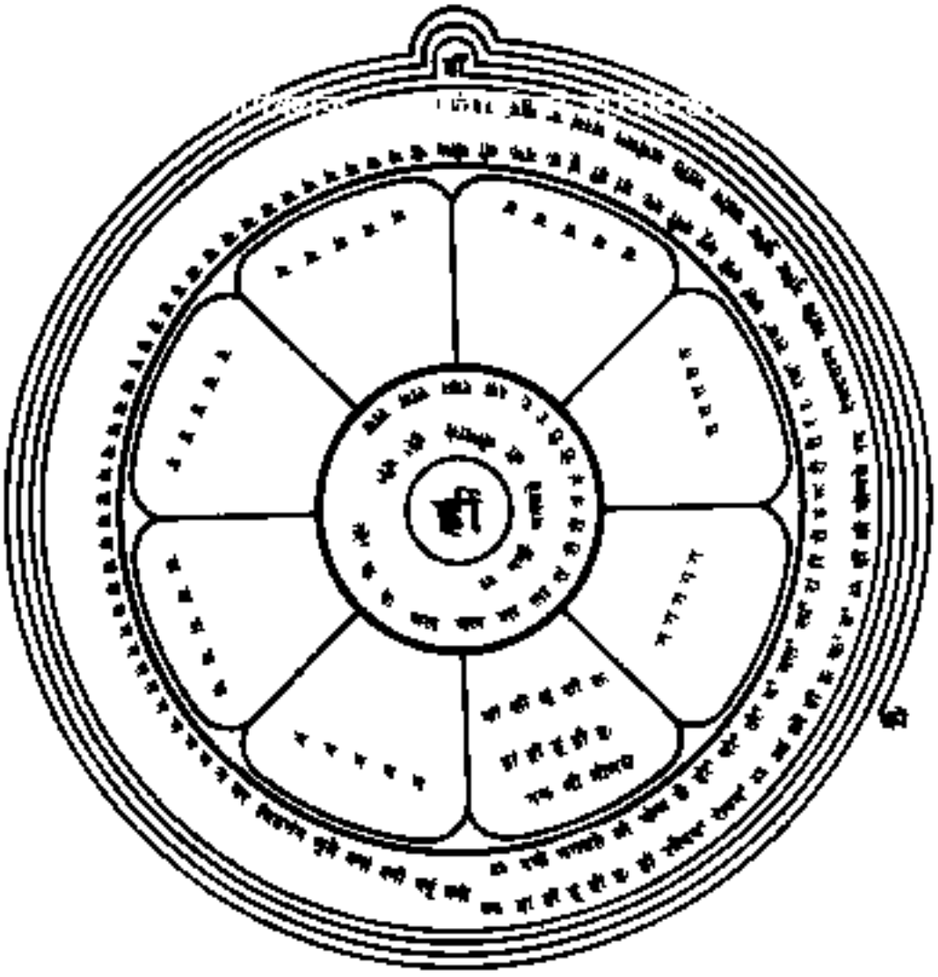

तदाहो उसके बाहर ह्रीं से तीन बार वेष्टित करके क्रों कार से निरोध करे। उसके बाहर पूर्वोक्त मंत्र लिखे।

ॐ नमो भगवते श्री घोणसे हरे हरे घरे घरे तरे तरे वः वः वल वल लां लां रां रां रीं रीं रूं रूं रौं रौं रः रः रस रस लस लस ।

इत्याद्यावार्य उसके बाहर अष्टदल कमल बनाकर एक पत्र में क्ष्मां क्ष्मीं क्ष्मूं क्ष्मौं क्ष्मः हां हीं हूं हौः ह्रः नमः श्री घोणसे शेष सातों पत्रों में क्रम से घ घ घ घ घ स स स सस ह ह ह ह ह व व व व व ढ ढ ढ ढ ढ त त त त त ग ग ग ग ग पूर्व आदि दिशाओं के पत्रों में उपरोक्त मंत्र को विभक्त करके लिखे। उसके बाहर के वलय में निम्न मंत्र लिखे।

वर विंहगम भुजे क्ष्मां क्ष्मीं क्ष्मूं क्ष्मौं क्ष्मः हां हीं हौं ह्रः ह्रीं शोषय शोषय रोषय रोषय ॐ आं क्रों ह्रीं इ्वीं क्ष्वीं ह्रः ज ज ज ठः ठः ॐ ह्रीं श्री घोणसे नमः देवदत्तस्य शांति तुष्टिं पुष्टिं ग्रहोप शांतिं सर्वजन वश्यं च कुरु कुरु स्वाहा।

इस वलय के पश्चात ह्रींकार से तीन बार वेष्टित करके क्रौं से निरुद्ध करें इससे छहों कर्मो की सिद्धि होती है।

ॐ पार्श्वनाथाय नमः

द्वादश पत्रांबु रूहं मलवरयूंकार संयुतं कूटं
तन्मध्ये नाम युतं विलिखेत क्लींकार सं रुद्धं ॥

बारह दल के कमल की कर्णिका में क्लींकार से संरुद्ध नाम सहित लिखे मलवर यूंकार सहित कूटाक्षर क्षकार वाले क्ष्म्ल्र्व्यूं में देवदत्त नाम सहित लिखे इस अक्षर की पार्श्व में अर्थात दोनों तरफ क्लीं लिखे।

विलिखेत् जयादि देवीः स्वाहांतोकार पूर्विका दिक्षु:
जभमह पिंडोपेता विदिक्षुजंभादिका स्तद्वत

जयादि चारों देवियों के नाम को ॐ आदि में और स्वाहा अंत में लगाकर चारों दिशाओं में लिखें- ॐ जये स्वाहा पूर्व दल में ॐ विजये स्वाहा, दक्षिण दल में ॐ अजिते स्वाहा, पश्चिम दल में ॐ अपराजिते स्वाहा, उत्तर दल में लिखे - ज भ म ह पिंडाक्षरों को विदिशाओं में जंभा आदि चारों देवियों के नाम को पहिले की तरह आदि में ॐ और अंत में स्वाहा लगाकर लिखें। ॐ ज्म्ल्र्व्यूं जंभे स्वाहा अग्नि कोण की दिशा में ॐ भ्म्ल्र्व्यूं मोहे स्वाहा नैऋते दल में ॐ म्म्ल्र्व्यूं स्तंभे स्वाहा वायव्य दल में ॐ ह्म्ल्र्व्यूं स्तंभिनी स्वाहा ईशान दल में लिखे।

उद्धरित दलेषु ततो मकरध्वज बीजमालिखेत् चतुर्षु
गज वशकरण निरुद्ध कुर्यात् त्रिमायया वेष्टयं

आठों दलों में लिखने के बाद चारों शेष दलों में मकर ध्वज बीज क्लीं को लिखें, इन बारह दलों के बाहर ह्रींकार के तीन आवर्त बनाकर क्रों से निरुद्ध करें।

भूर्ये सुरभि द्रव्यै र्विलिख्य परिवेष्टय रक्त सूत्रेण
निक्षिप्य सिल्ह भांडे मधु पूर्णे मोहयत्यवलां

भोजपत्र पर सुगंधित कुंकुम आदि द्रव्यों से इस यंत्र को लिखकर लालरंग के डोरे से लपेटकर मधु से भरे हुए बिना पके हुए मिट्टी के कुम्हार के कच्चे बर्तन में रखा जाने से स्त्री का मोहन करता है। इसका मूल मंत्रोद्धार यह है।

ॐ क्ष्म्ल्व्यूं क्लीं जये विजये अजिते अपराजिते ज्म्ल्व्यूं जंभे म्ल्व्यूं मोहे म्ल्व्यूं स्तंभे ह्म्ल्व्यूं स्तंभिनी क्रौं क्लीं क्रौं अमुकीं मोहय मोहय मम वशयं कुरु कुरु आं क्रों ह्रीं क्रों क्लीं क्ष्म्ल्व्यूं ॐ वषट् ।

मोहन विधिका क्लीं रंजिका यंत्र
क्लीं रंजिका यंत्रं क्लीं रंजिका यंत्रं भूर्ये सुरभि द्रव्यै लिखित्वा रक्त सूत्रेण वेष्टियित्वा कांच भांडे मधुपूर्णे मध्ये घालनीय मोहयत्यडबलां ।

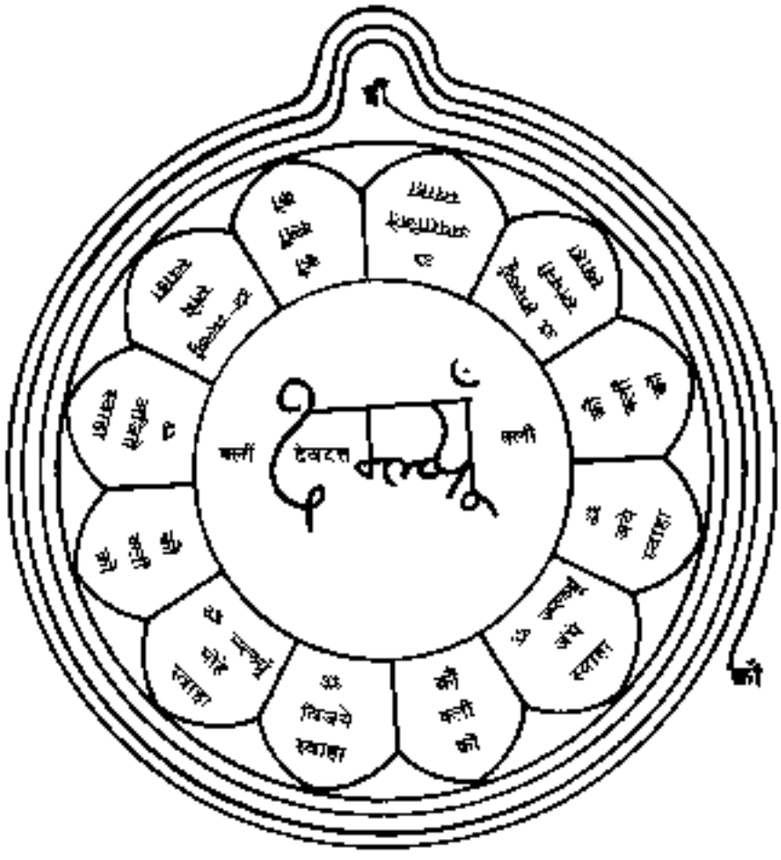

ॐ क्ष्म्ल्व्यूं क्लीं जये विजये अजिते अपराजिते ज्म्ल्व्यूं जंभे म्ल्व्यूं मोहे म्ल्व्यूं स्तंभे ह्म्ल्व्यूं स्तंभिनी अमुकीं मोहय मोहय मम वशयं कुरु कुरु स्वाहा।

स्त्री कपाले लिखेदंत्रं क्लीं स्थाने भुवनाधिपं
त्रिसंध्यं तापयेद्रामा कृष्टिः स्यात्खदिराग्निना ॥

स्त्री के कपाल पर यदि पूर्वोक्त यंत्र को क्लीं के स्थान में हीं रखकर (लिखकर) खदिर (खेर) के कोयले की अग्नि में प्रातः मध्यान्ह और सायंकाल की तीनों संध्याओं में तपाये तो स्त्री का आकर्षण होता है।

ॐ क्ष्वल्व्यूं ह्रीं जये विजये अजिते अपराजिते ज्रम्ल्व्यूं जंभे भ्रम्ल्व्यूं मोहे म्रम्ल्व्यूं स्तंभे ह्रल्व्यूं स्तंभिनी अमुकी आकर्षय आकर्षय संवौषट ॥

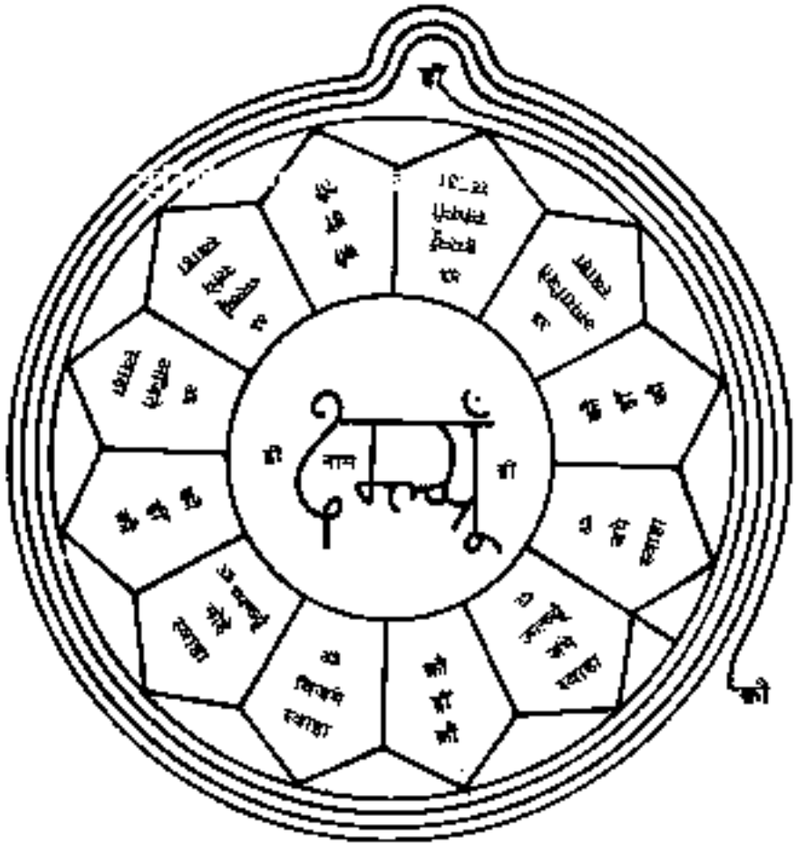

स्त्री कपाले सुरभि द्रव्यै लिखित्वा
खदिराग्नि ता तापयेत् रामाकृष्टि भवति॥

ॐ क्ष्वल्व्यूं ह्रीं जये विजये अजिते अपराजिते ज्रम्ल्व्यूं जंभे भ्रम्ल्व्यूं मोहे म्रम्ल्व्यूं स्तंभे ह्रल्व्यूं स्तंभिनी अमुकी मम आकर्षय आकर्षय आं ह्रीं क्रौं ह्रीं क्ष्वल्व्यूं ॐ वषट्॥

माया स्थाने च हूँकारं विलिखेन्नर चर्म्मणि तापयेत्क्वेड
रक्ताभ्यां विष गर्दभ रूधिराभ्यां पक्षाहा त्प्रतिषेध कृत ॥

यदि इसी यंत्र को ह्रीं के स्थान में हूं लिखकर मनुष्य चर्म पर विष और गधे के रुधिर से लिखकर एक पक्ष तक तपावे तो प्रतिषध होता है।

ॐ क्ष्ल्व्यूं हूं जये विजये अजिते अपराजिते ज्म्ल्व्यूं जंभे भ्म्ल्व्यूं म्ल्व्यूं स्तंभे ह्ल्व्यूं स्तंभिनि अमुकं मारय मारय घे घे।

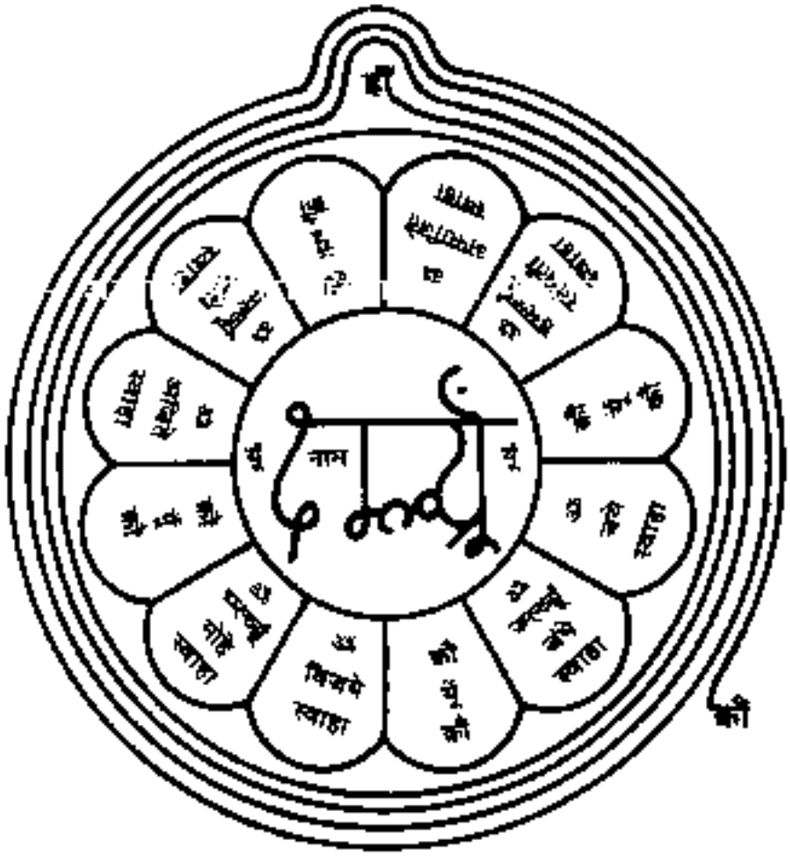

एतत्यंत्रं नर चर्मणि विष गर्दभ रूधिरेण लिखित्वा खदिराग्नि ना तापयेत पक्ष दिन मध्ये प्रतिषध्यकारी भवति ॥

ॐ क्ष्ल्व्यूं हूं जये विजये अजिते अपराजिते ज्म्ल्व्यूं जंभे भ्म्ल्व्यूं मोहे म्ल्व्यूं स्तंभे ह्ल्व्यूं स्तंभिनी अमुकं मम नाशय नाशय ध्वंसय ध्वंसय आं ह्रीं क्रौं हूं क्ष्ल्व्यूं ॐ घे घे ॥

हूं स्थाने मांत मालिख्य सरेफं नाम संयुतं
विभति फलके यंत्रं द्वयोरपि च मर्त्ययोः ॥

उपरोक्त यंत्र में हूं के स्थान पर विद्वेष कराये जाने वाले दोनों व्यक्तियों के नाम सहित र्यं बीज विभिन्न दो बेहड़ा के पत्तों पर लिखा जाना चाहिये।

वाजि माहिष केशैश्च विपरित मुख स्थयो
आवेष्टय स्थापये द्भूमौ विद्वेषं कुरूते तयो।

फिर उन दोनों को घोड़े और भैंस के बालों से लपेटकर स्मशान भूमि में परस्पर में पीठ से मिलाकर गाड़ने से दोनों व्यक्तियों में विद्वेष हो जाता है।

ॐ क्ष्म्ल्व्र्यूं जये विजये अजिते अपराजिते जम्ल्व्र्यूं जंभे म्ल्व्र्यूं मोहे ह्ल्व्र्यूं स्तंभिनि देवदत्त यज्ञ दत्तयों विद्वेषं कुरू कुरू हूं ॥

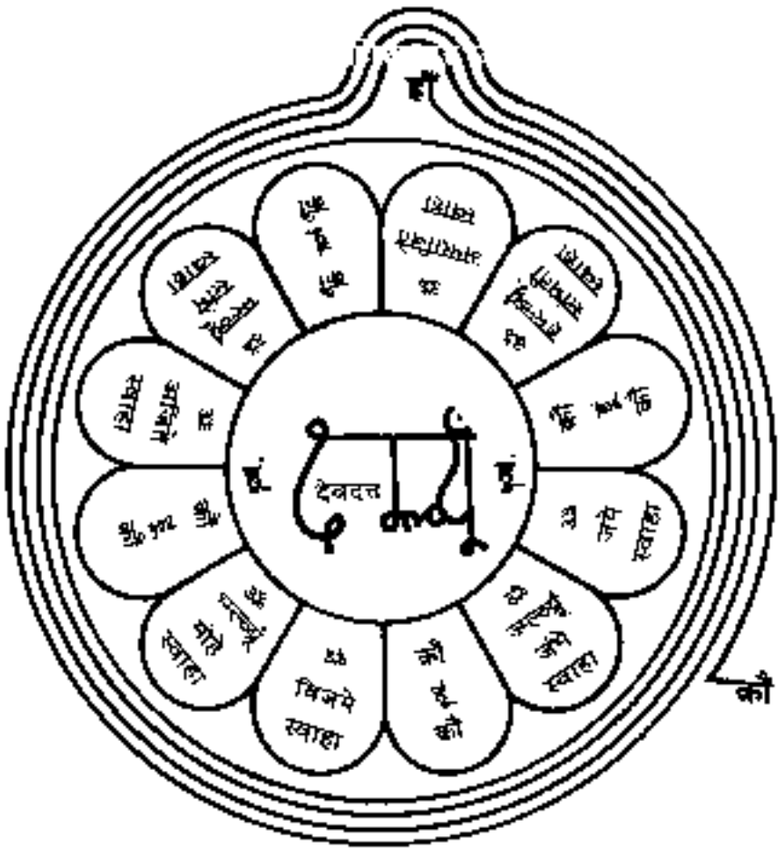

ऐतद्यंत्रं बहेडा फलके विष गर्दभ रूधिरेण लिखित्वा

विपरीत मुखकर भेंस और घोड़े के बालों से लपेट स्मशान में गाड़े । विद्वेषं भवति (होता) है ।

ॐ क्ष्ल्व्यूं जये विजये अजिते अपराजिते ज्म्ल्व्यूं जंभे म्ल्व्यूं मोहे म्ल्व्यूं स्तंभे ह्ल्व्यूं स्तंभिनी अमुका अमुकौ परस्पर विद्वेषय विद्वेषय आं ह्रीं क्रौं ह्रं क्ष्ल्व्यूं ॐ ह्रूं

पूर्वोक्तक्षर सं स्थाने लेखिन्या काक पक्षयो:
मांतं विसर्ग संयुक्तं प्रेतांगारे विषारूणै ॥

धूकारि विष्ठा संयुक्तै ध्वंजे यंत्रंसनामकं
लिखित्वो परिवृक्षाणां वद्ध मुच्चाटनं रिपो: ॥

उपरोक्त यंत्र में कौवे के पंखों की कलम से श्मशान भूमि की राख और उल्लू की विष्ठा की स्याही से वृक्षों के ऊपर नाम सहित य बीजों को दो बिन्दु की विसर्ग सहित लिखने से शत्रू का उच्चाटन होता है।

ॐ क्ष्ल्व्यूं [illegible] जये विजये अजिते अपराजिते ज्म्ल्व्यूं जंभे म्ल्व्यूं मोहे म्ल्व्यूं स्तंभे ह्ल्व्यूं स्तंभिनि अमुक मुच्चाटय फट ॥

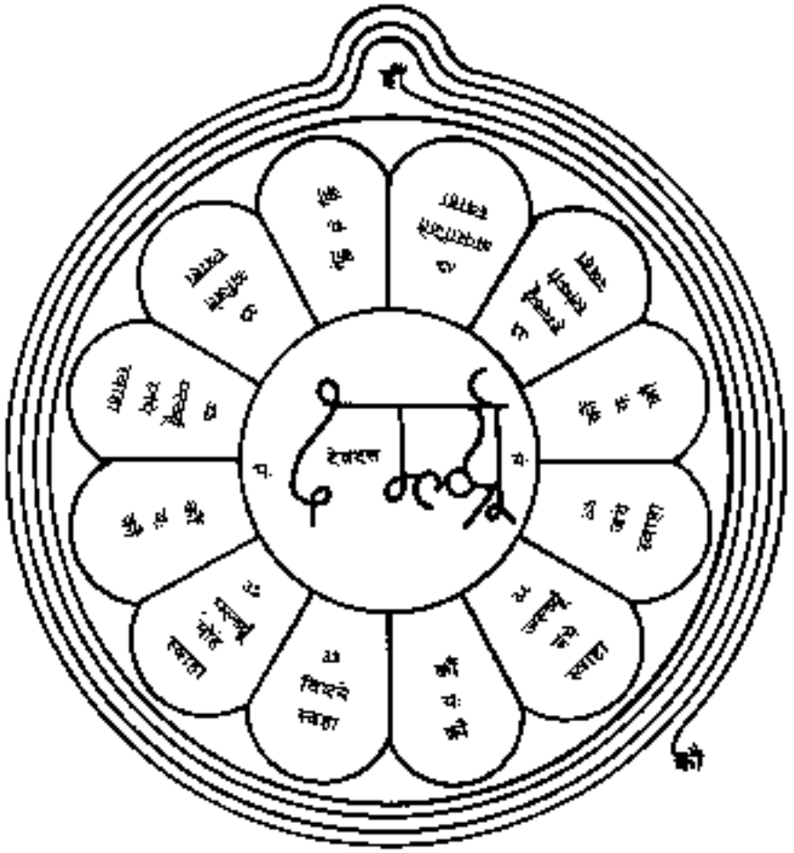

एतद्यंत्रं श्मशान कपटि विष काक पंखे से लिखकर धूकारि विष्ठा से लिखकर बहेड़ा वृक्ष पर बांधने से उच्चाटन होता है।

ॐ क्ल्च्यूं यः जये विजये अजिते अपराजिते उम्ल्च्यूं जंभे म्ल्च्यूं मोहे म्ल्च्यूं स्तंभे ह्ल्च्यूं स्तंभिनी अमुकं मम शत्रु मुच्चाटय मुच्चाटय आं ह्रीं क्रौं यः क्ल्च्यूं ॐ फट फट।

श्रृंगी गरल रक्ताभ्यां नृ कपाल पुटे लिखेत्
प्रेतास्थि जात लेखिन्याद्यः स्थाने च नत्मोक्षरं
स्मशाने निक्षिपे द्रोषात् कृत्वा तद्भस्म पूरितं
करोति तत्कुलो च्चाटं वैरिणांत्मप्तराश्रितः ॥

उपरोक्त यंत्र में यः के स्थान पर ह बीज श्रृंगी विष और गधे के रक्त से मृतक की हड्डी की कलम से मनुष्य के कपाल पर लिखकर क्रोधपूर्वक भस्म से भरकर श्मशान में रखने से यह यंत्र सात दिन में शत्रू के कुल उच्चाटन करता है।

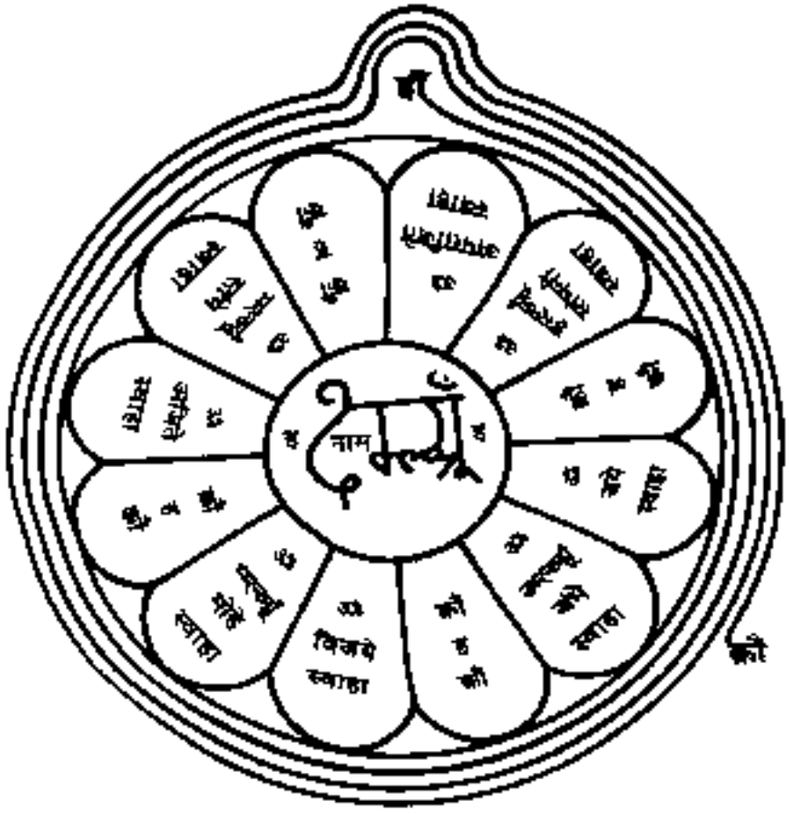

ॐ क्ष्ल्व्यूं ह जये विजये अजिते अपराजिते ज्म्ल्व्यूं जंभे भ्म्ल्व्यूं मोहे म्ल्व्यूं स्तंभिनी अमुकं उच्चाटय उच्चाटय फट ॥

ॐ क्ष्ल्व्यूं हं जये विजये अजिते अपराजिते ज्म्ल्व्यूं जंभे भ्म्ल्व्यूं मोहे म्ल्व्यूं स्तंभे ह्ल्व्यूं स्तंभिनी मम अमुककारि कुलौ उच्चाटं कुरू कुरू आं ह्रीं क्रों हं क्ष्ल्व्यूं ॐ फट फट

फऽक्षरं नमः स्थाने शमशान स्थित कर्पटे निंबार्क
जरसेन तद्विलिखेत क्रुद्ध चेतसा शमशाने निक्षिपेत यंत्रं
यावत्त द्भुवितिष्ठति परिभ्राम्यत्य सौ तावद्वैरी काक इव क्षितौ ॥

फट अक्षर को पहिसे के लिखे हुए छ हकार के स्थान में श्मशान से लिए कपड़े पर नीम और आकड़े के रस से इस फट अक्षर वाले यंत्र को यदि क्रोधित भाव से लिखा जावे और श्मशान में गाड़ कर रख दिया जाये तो इससे शत्रु पृथ्वी में आकाश में कौवे के समान तब तक घूमता रहता है। तब तक यह यंत्र श्मशान की पृथ्वी में रहेगा।

ॐ क्ष्ल्व्यूं फट जये विजये अजिते अपराजिते ज्म्ल्व्यूं जंभे भ्म्ल्व्यूं मोहे म्ल्व्यूं स्तंभे ह्ल्व्यूं स्तंभिनी अमुकं मम शत्रु मुच्चाटय मुच्चाटय आं ह्रीं क्रों फट क्ष्ल्व्यूं ॐ फट् ॥

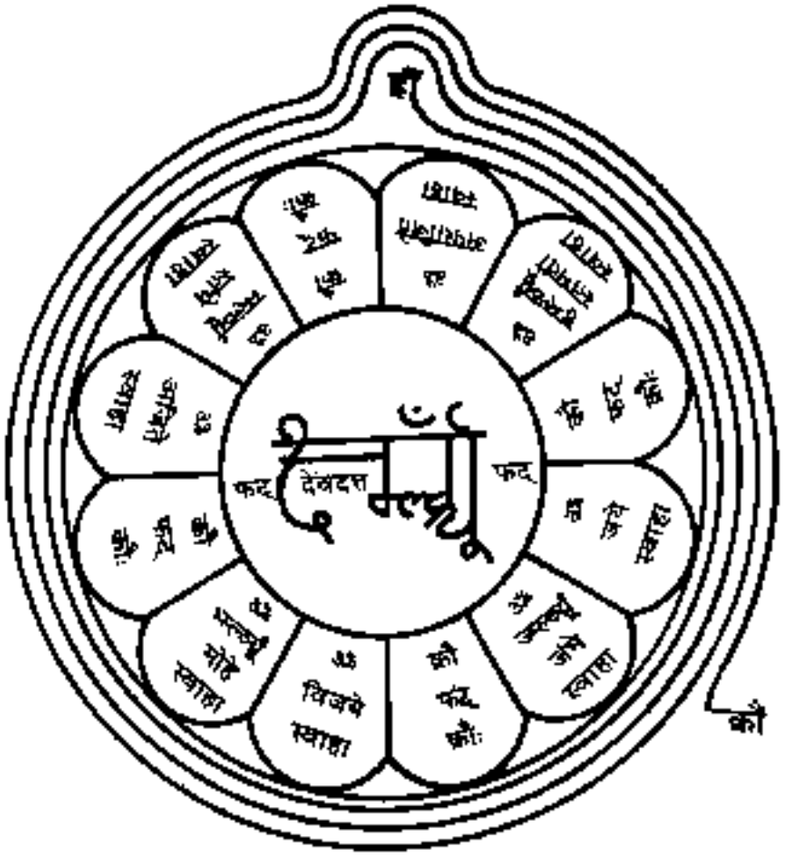

फट स्थान मं लिखेद्भांतं भूर्जे तन्नाम संयुतं
विषोपयुक्त रक्तेन नील सूत्रेन वेष्टियेत् ॥
मृत्यु त्रिकोदरे स्थाप्यं तत श्मशाने निवेशयेत्
सप्ताहा ज्जायते शत्रोः छेद भेदादि निग्रहः

पहिले के अर्थात उपरोक्त यंत्र में फट के स्थान में मं अक्षर को नाम सहित भोजपत्र पर श्रृंगी विष और गधे के रक्त से लिखकर, नीले धागे से लपेटकर, श्मशान में दग्ध राख की पुतली के पेट में रखकर, श्मशान में रखने से सातदिन में सत्रू का छेदन भेदन आदि निग्रह हो जाता है।

ॐ क्ष्म्ल्व्र्यूं मं जये विजये अजिते अपराजिते ज्म्ल्व्र्यूं जंभे भ्म्ल्व्र्यूं मोहे म्म्ल्व्र्यूं स्तंभिनी ह्म्ल्व्र्यूं स्तंभिनी मम अमुक शत्रु मुच्छेदय मुच्छेदय आं ह्रीं क्रौं मं क्ष्म्ल्व्र्यूं ॐ घे घे ॥

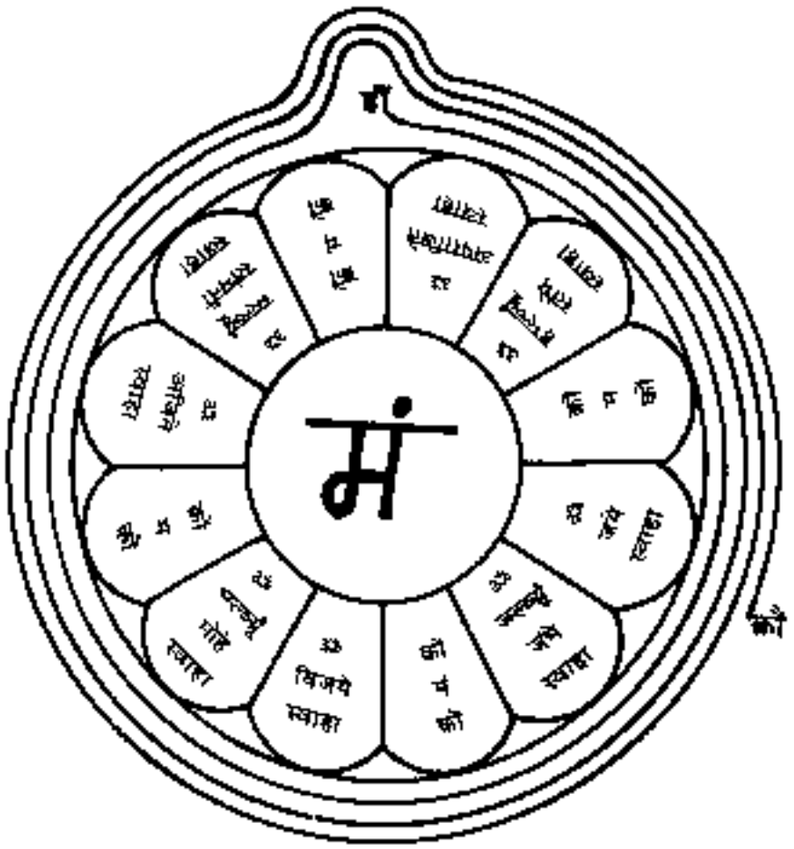

तूर्य स्वर लिखेद्विद्वानम् स्थाने नाम संयुतं
कुकंमागरु कर्पूरैः भूर्यौ रोचनयान्वितै,
स्वर्ण मठितं कृत्वा वाहौ वा धारये द्गले
करोति इदं सदा यंत्रं तरुणी जनमोहनं ॥

उपरोक्त यंत्र में म अक्षर के स्थान में चौथा स्वर अर्थात् ई अक्षर को नाम सहित उसको सोने के जंतर में मंढ़वाकर भुजा या गले में पहिने तो यह यंत्र सदा तरूणी जवान स्त्री को मोहित करता है।

ॐ क्ष्म्ल्व्यूं ई जये विजये अजिते अपराजिते जम्ल्व्यूं जंभे भम्ल्व्यूं मोहे म्ल्व्यूं स्तंभे ह्म्ल्व्यूं स्तंभिनी अमुकी मोहय मोहय मम वशयं कुरू कुरू आं ह्रीं क्रों ई क्ष्म्ल्व्यूं ॐ वषट् ।

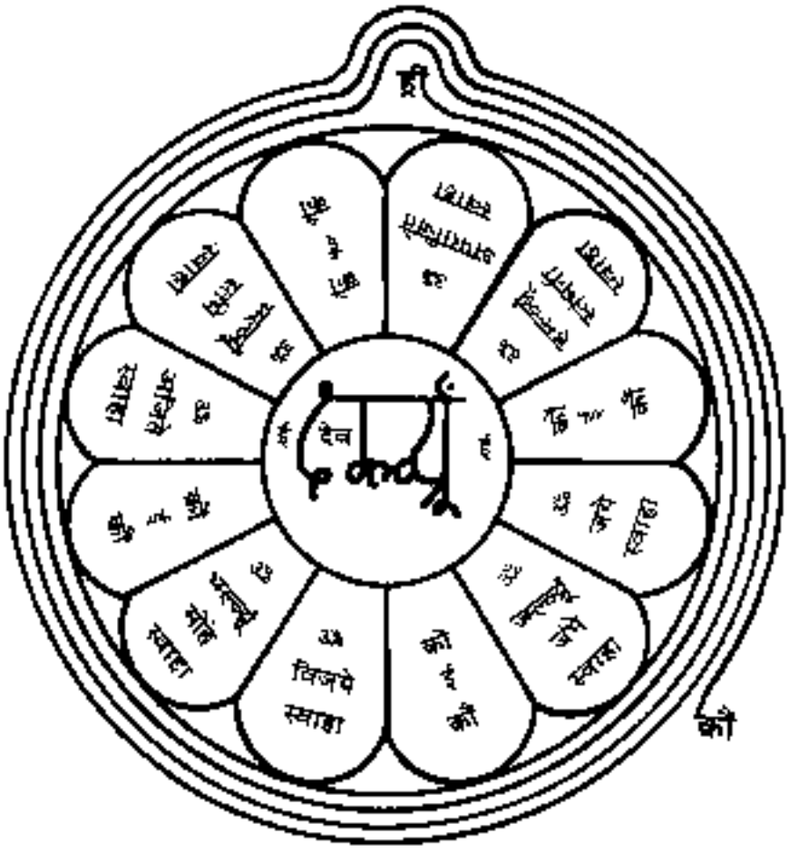

वषट वर्ण युतं कूटं लिके दीकार धामनि
भूर्जपत्रे सिते त्यंते रोचना कुंकुमादिभिः
त्रिलोह वेष्टितं कृत्वा बाहौ वा धारयेत् गले
स्त्री सौभाग्य करं यंत्रं पुंसां चेतोमि रंजनं ॥

उपरोक्त यंत्र में कूटाक्षर क्षकार सहित वषट बीज को अर्थात् क्ष वषट को ई अक्षर के स्थान में अत्यंत श्वेत भोजपत्र पर गोरोचन कुंकुम आदि से लिखे, फिर इस यंत्र को त्रिलोह के जंतर में जिसमें स्वर्ण तीन भाग ताम्र बारह भाग चांदी सोलह भाग हों मंढ़याकर, भुजा में या गले मे धारण करने से यह यंत्र स्त्री के सौभाग्य को बढ़ाता है तथा पुरूषों के वा स्त्री के मन को प्रसन्न रखताहै।

ॐ क्ष्ल्व्यूं क्ष वषट जये विजये अजिते अपराजिते ज्म्ल्व्यूं जंभे भ्म्ल्व्यूं मोहे म्म्ल्व्यूं स्तंभे ह्म्ल्व्यूं स्तंभिनी मम अमुक स्त्री नाम चेतो रंजय आं ह्रीं क्रौं क्ष वषट् क्ष्ल्व्यूं ॐ वषट वषट

भैरव पद्मावती कल्प के अनुसार त्रिलोह ताम्र द्वादश भाग तार शोडष भाग स्वर्ण त्रि भाग ज सोलह भाग में से बारह भाग तांबा एक भाग लोहा और तीन भाग सोना भी त्रिलोह कहलाता है।

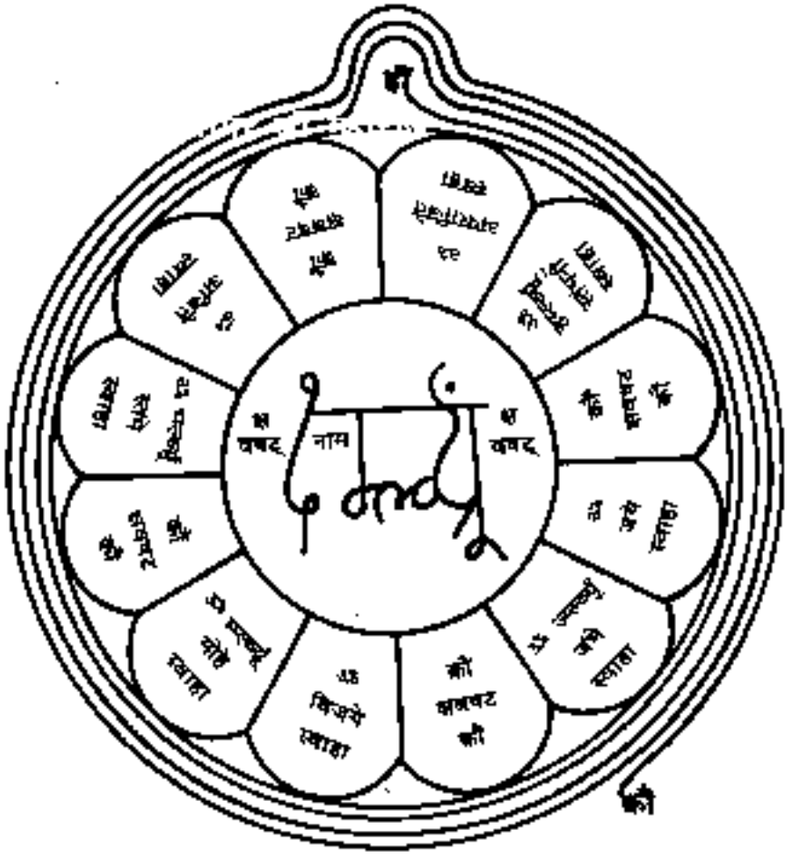

क्षाद्यक्षर पदे योज्यं शिलातल संपुटे
विलिख्यो वींपुरं बाह्ये स्तंभनं तालकादिभिः

पूर्वोक्त यंत्र में क्ष वषट बीज के स्थान में लं बीज सहित यंत्र को दो पाषाण की शिलाओं के बीच में हड़ताल आदि पीले द्रव्यों से लिखकर रखे जिसके बाहर पृथ्वी मंडल बनाकर उसके बाहर त्रिमूर्ति अर्थात ह्रीं कार का वेष्टन करने से क्रोधादि का स्तंभन होता है।

ॐ क्ष्ल्व्यूं लं जये विजये अपराजिते ज्म्ल्व्यूं जंभे भ्म्ल्व्यूं मोहय म्म्ल्व्यूं स्तंभे ह्म्ल्व्यूं स्तंभिनी (मम अमुकस्य क्रोधादि स्तंभय स्तंभय ओं ह्रीं क्रों लं क्ष्ल्व्यूं ठः ठः देवदत्तस्य क्रोध गति सैन्य जिव्हां स्तंभय स्तंभय ठः ठः॥

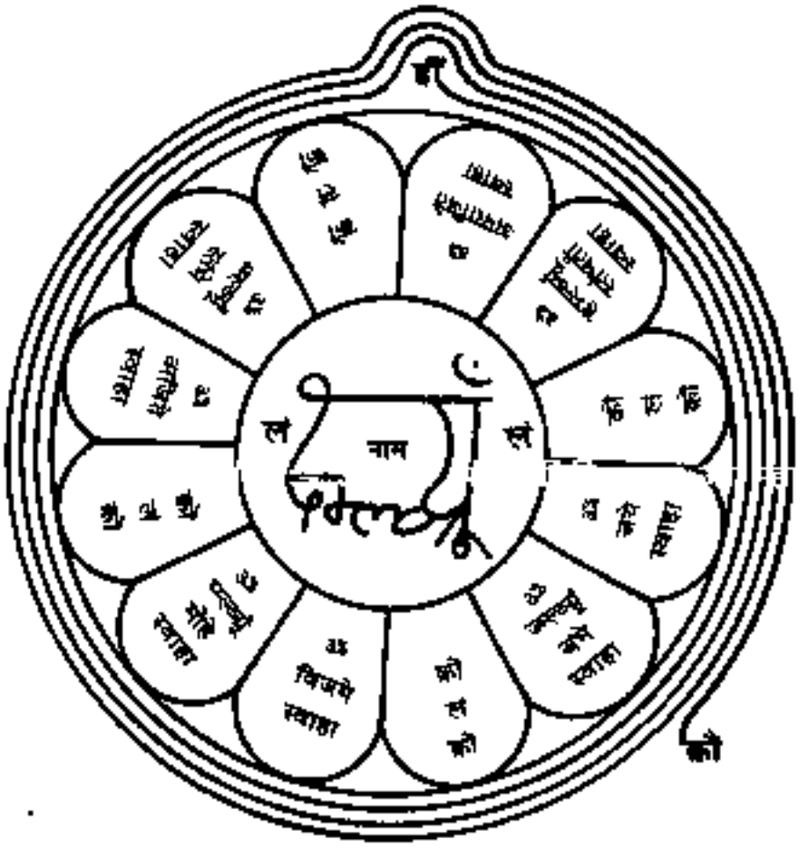

स्थानेतुमैद्रं श्री निज बीज में द्रं कुंकुमाद्यै
लिखितं सु भूजें त्रिलोह वेष्टयं विधृतं स्व
बाहौ करोति रक्षा ग्रह मारिरुग्भ्यः ॥

उपरोक्त यंत्र में लं के स्थान पर ऐन्द्र बीज श्रीं को कुंकुमादि से भोजपत्र पर लिखकर त्रिलोह के जंतर में जडवाकर अपनी भुजा में पहिने तो यह यंत्र ग्रहमारी और रोगों से रक्षा करता है।

ॐ क्ष्ल्व्यूं श्री जये विजये अजिते अपराजिते ज्म्ल्व्यूं जंभे भ्म्ल्व्यूं मोहे म्म्ल्व्यूं स्तंभे ह्म्ल्व्यूं स्तंभिनी श्रीं।

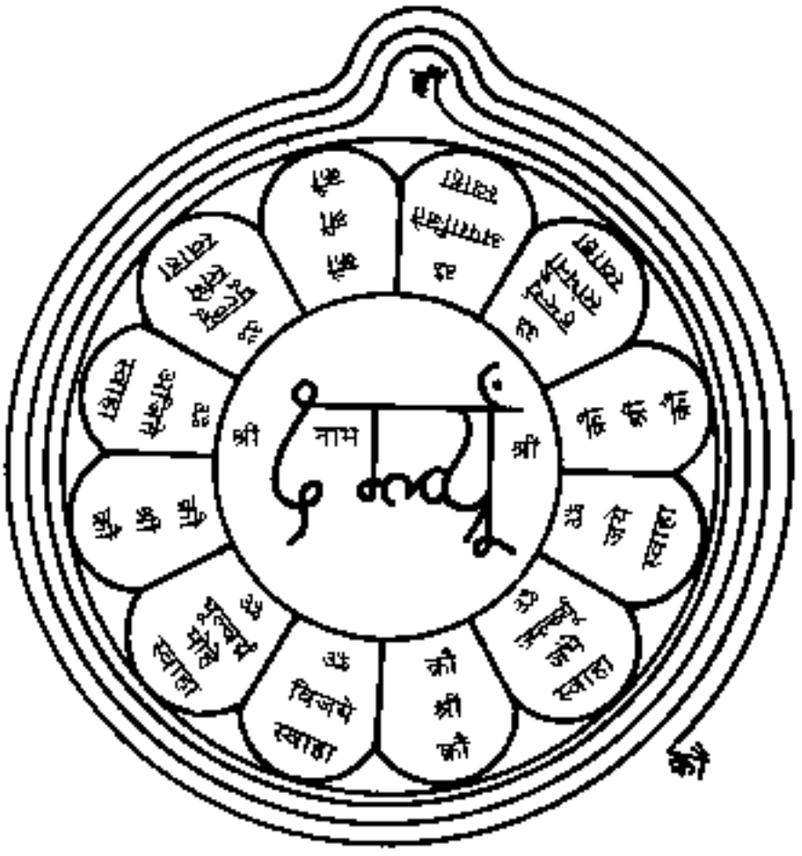
ह्रीं
श्री
नाम
श्री
ॐ ह्रीं स्वाहा
ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं स्वाहा
ॐ ह्रीं विजये स्वाहा
ॐ ह्रीं अजिते स्वाहा
ॐ ह्रीं अपराजिते स्वाहा
ॐ ह्रीं स्वाहा
ॐ ह्रीं स्वाहा
ॐ ह्रीं

आयुःकालमखंडमेव मनुजा जीवंति तद्रार्भितः
प्रारभ्येव ममु विधिं स विद धन्मातेव रक्षे त्प्रजा ॥ ५ ॥

जो मंत्र शास्त्र का पंडित इन कहे हुए मंत्र और यंत्रों में अपने ध्यान को लगाता है। उसका प्रभाव सब जगह प्रसिद्ध हो जाता है। और वह प्रसिद्ध प्रभाव वाला होने के साथ साथ उत्तम रक्षा करने वाला भी हो जाता है।

बालक को उत्पन्न होते ही भाग्य के कारण पूतना नाम की ग्रही पकड़ती है वह अपनी इच्छानुसार कार्य करती हुई बालक को बहुत प्रकार से निरंतर कष्ट देती है।

इन विघ्नों का मूल कारण बुरा भोजन होता है किन्तु जो चंचलता से इनको नहीं सुनते उनके बालक उसके वश में होकर शीघ्र ही अपमृत्यु को प्राप्त होते हैं।

किन्तु पुरुष गर्भ पात तथा अनेक बीमारियों को करने वाली पूतना ग्रहियों को छोटा न समझकर आये दिन शांति आदि कराता रहता है। तो उसके बालक गर्भ से ही अखंड आयु वाले होकर जीवित रहते हैं। इस विधि को करने वाला पुरुष संतान की माता के समान रक्षा करता है।

इत्यार्षे विद्यानुशासने पंचम समुदेशः समाप्तः
सामान्य युक्त यंत्र साधन विधान नामक पंचम अध्याय पूर्ण हुआ

अथ गर्भोत्पत्ति विधान षष्टम समुदेश

वक्ष्ये गर्भस्य संभूतिं यां समारभ्य जन्मतः
शातो यस्ताद पायेभ्यो दीर्घायु भवति ध्रुवं ॥ १ ॥

अब गर्भ धारण के ऐसे उपायों का वर्णन किया जाता है जन्म से आरंभ करने से विघ्न नष्ट होकर पुरुष निश्चय से दीर्घायु वाला होता है।

दोषान वृष्यं रजो योनि श्रुद्धि गर्भस्य रक्षणं
सुख प्रसूति कृन्माद्दः संस्कारश्चापि वक्ष्यते ॥ २ ॥

इससे अतिरिक्त दोष पौष्टिक औषधि रज शुद्धि योनि संस्कार गर्भ रक्षा तथा सरलता से पुत्रोत्पत्ति करने वाले संस्कारों को भी कहेंगे।

अष्टौ दोषास्तु नारीणां नवमं पुरुषस्यतु
रक्तं पित्तं तथा वात श्लेष्मं च सन्निपात कं ॥ ३ ॥

ग्रह दोष विकारेण देवतानां च कोपतः
अभिचार कृतै वापि पुरुषै वाप्या रेनसैः ॥ ४ ॥

स्त्रीओं के आठ दोष और पुरुषों के नौ दोष होते हैं। स्त्री के आठ दोष यह है १-रक्त,२-पित्त,३-कफ,४-वात,५-सन्निपात, ६-ग्रह के दोष के विकार,७- देवताओं का कोप, और ८-अभिचार स्त्रीओं के दोष होते हैं। पुरुष का दोष केवल वीर्य संबंधी है।

पुष्पं तु लभते यस्याः फलं नस्यान्न संशयः
तस्या दोष विकारंतु ज्ञात्वा कर्म समारभेत ॥ ५ ॥

जिन स्त्री का रज निकलता रहता है उसमें निसंदेह पुत्र रूपी फल नहीं होता है। अतएव उस स्त्री के दोषों के विकारों को जानकर ही कार्य आरंभ करें।

चंद्राश्रुमणि नाद्यद्धास्करी कर तापतः
नाग्निं जनयते सौवैचिकित्सां तद्वदाम्य हं ॥ ६ ॥

क्योंकि सूर्य के ताप को चंद्रकांत मणि में पहुंचाने पर उसमें से अग्नि नहीं निकलती अतएव में उस चिकित्सा का वर्णन करता हूँ।

अति सूक्ष्म तमं रक्तं कु सुमोदक सं निम्भं
कटि शूलं भवे तस्या योनि शूलं च संज्वरं ॥ ७ ॥

यदि रक्त फूलों के जल के समान अत्यंत सूक्ष्म होता है और स्त्री के कमर का दर्द योनि में शूल और ज्वर तक होने लगता है।

मारूत्तस्य विकारोयं ज्ञात्वा कर्म समाचरेत्
सहकारस्य मूलं च तथा व्याघ्र पदस्य च ॥ ८ ॥

त्रिवृतायां भवेन्मूल क्षीरेण लोढ्यं तं पिवेत्
सप्ताहं पंच रात्रं वा यावत् श्रवति शोणितं ॥ ९ ॥

तो वायु का विकार समझकर कार्य आरंभ करे उसी समय आम की जड़ कटेली की जड़ और निशोथ की जड़ को दूध में मिलाकर सात या पांच रात तक जब तक रक्त निकलता रहे स्त्री को पिलाये।

ततो योनौ विशुद्धयामिमां दद्यात्महौषधी,
लक्ष्मणां क्षीर संयुक्ता तस्यै पानं प्रदापयेत् ॥ १० ॥

फिर योनि के शुद्ध होने पर स्त्री को दूध के साथ लक्ष्मण औषधि पीने के लिए देवे।

तेन सा लभते पुत्रं घ्राणेन दक्षिणेनतु
वामनाड्यां भवेत कन्या रूपेणां तीव शोभना ॥ ११ ॥

इस औषधि को दाहिने स्वर में सूंघने और पीने से पुत्र तथा बायें स्वर में सूघने तथा पीने से अत्यंत सुंदर रूप वाली कन्या की प्राप्ति होती है।

यस्याश्लेष्म हतं पुष्पं प्राज्ञ स्तमभिलक्षयेत्
बहुलं पिच्छिलं चैव नाचिरक्तं भवेद्ध्रुवः ॥ १२ ॥

नाभि मंडल मूलेसु शूल भवति दारूणं
त्रिकुट त्रिफला चैवं चित्रकं च समंभवेत् ॥ १३ ॥

जिस स्त्री का रक्त कफ के विकार से बिगड़ा हुआ हो उसका लक्षण थोड़े थोड़े रक्त का बराबर निकलते रहता है। उस स्त्री के नाभि के नीचे अत्यंत भयंकर दर्द उठता है उसको त्रिकुटा (सोंठ मिरच पीपल) त्रिफला (हरड़े बहेडा आमला) और चित्रक को बराबर लेकर।

हिंगु दलाष्टमांशेन कृत्वा लोढ्या च तं पि बेत्
त्रिरात्रं पंच रात्रं वा यावत श्रवति शोणितं ॥ १४ ॥

उसका आठवां भाग हिंग मिलाकर तथा सब को जल में मथकर तीन रात या पांच रात तक स्त्री का रक्त निकले पिलावें।

ततौ योनौ विशुद्धायां पश्चात् दद्यान्महोषधि
लक्ष्मणां क्षीर संयुक्तं नासे पाने च दापयेत् ॥ १५ ॥

फिर योनि के शुद्ध होने पर दूध के साथ उसी लक्ष्मण औषधि को सुंघावे और पिलावें।

तेज [illegible] लभते गर्भं लक्षणोक्तं स पंडितां
नाना कला समायुक्तं धीरं जनन रंजका ॥ १६ ॥

उससे स्त्री उस लक्षण वाले विद्वान अनेक प्रकार की कलाओं से युक्त धीर और उत्पन्न करने वालों को प्रसन्न करने वाली गर्भ को धारण करती है।

यस्या पित्त हतं पुष्पं फलं तस्या न विद्यते
तत्र पित्तं हतं पुष्पं प्राज्ञः समुपलक्ष्येत् ॥ १७ ॥

जिस स्त्री का रज पित्त के विकार से बिगड़ा हुआ हो उसके पुत्र रूपी फल नहीं होता विद्वान उस पित्त से बिगड़े हुए रज को अच्छी तरह पहचाने ।

पक्व जंबु फलाकारं कृष्णं श्रवति श्रोणितं
कटि शूलं भवेत्तस्या उदरं च प्रदह्य च ॥ १८ ॥

ऐसी स्त्री के पकी हुई जामुन की शकल का काला रक्त निकलता ही रहता है। उसकी कमर में दर्द होता है तथा पेट में जलन होती है।

प्रश्रावं करोत्यूष्ण मेणेत त्पित्तस्य लक्षणं
तस्योषधं प्रवक्ष्यामि यैन गर्भं प्रधार्यते ॥ १९ ॥

पित्त का लक्षण यह है पित्त में भ्रांति और शरीर से गरम श्राव उत्पन्न करता है। उसकी ऐसी औषधि का वर्णन किया जायेगा जिससे गर्भ धारण किया जा सके।

उत्पलं तगरं कुष्ठं यष्टी मधु स चंदनं
एतानि सम भागानि अजाक्षीरेण पेषयेत् ॥ २० ॥

उत्पल (कमल-नीलोफर) तगर मीठाकूट मुलेठी और चंदन को बराबर लेकर बकरी के दूध से पीसे।

त्रिरात्रं पंच रात्रं वा यावत् श्रवति शोणितं
ततो योनौ विशुद्धाया मिमां दद्यान्महोषधीं ॥ २१ ॥

इस औषधि को तीन रात या पांच रात जब तक रक्त निकलता रहे तब तक स्त्री को पिलाये फिर योनि के शुद्ध होने पर निम्नलिखित महाऔषधि को दें।

लक्ष्मणां क्षीर संयुक्तां नासे पाने च दापयेत्
तेन सा लभयते पुत्रं रूप वंतं महाद्युति ॥ २२ ॥

लक्ष्मणा को दूध में मिलाकर स्त्री को सूंघाकर पिलाएं इससे उसको महान कांती वाला रूपवान पुत्र की प्राप्ति होती है।

सन्निपात हते पुष्पे ज्वर तीव्र प्रजायते
शोणितं तु भवेत्कृष्णामत्युष्णं नालं बहु ॥ २३ ॥

सन्निपात से स्त्री के रज के बिगड़ जाने से तीव्र ज्वर होता है उसके रक्त का रंग काला अत्यंत उष्ण और अधिक अधिक निकलता है।

कुक्षि देशे तथा योन्यां कटिशूलं प्रजायते
गात्रं भंग भवेत्तस्य निद्रानैवो पजायते ॥ २४ ॥

उस समय उस स्त्री की कोख योनि तथा कमर में दर्द होता है। उसका अंग टूटने लगता है। और उसको नींद भी नहीं आती है।

सन्निपात प्रदोषा श्च भवंति बहव्य स्तथा
उत्पलं तगरं कुष्ठं यष्टि मधुक चंदनं ॥ २५ ॥

अजाक्षीरेण पिष्टांत सप्ताहं पाययेत्ततः
ततो योनौ विशुद्धाया मिमां दद्यात्महोषधी ॥ २६ ॥

सन्निपात के दोष भी बहुत होते हैं उस समय कमल अर्थात नीलोफर तगर मीठा कूट मुलहटी और चंदन को सम भाग लेकर बकरी के दूध में पिसवाकर उस स्त्री को सात दिन तक पिलाये तब योनि के शुद्ध हो जाने पर उसको यह महोषधि दें।

श्वेतार्क क्षुद्रिणी श्वेतां श्वेताश्च गिरिकर्णिकां
लक्ष्मणं बंध्य ककोंटिवाऽजा क्षीरेण पेषयेत् ॥ २७ ॥

सफेद आक सफेद दूब छोटी कटेली सफेद कोयल बूटी लक्ष्मण और बांझ ककोड़े को समान भाग लेकर बकरी के दूध के साथ पिसवाकर।

शताऽभिमंत्रितं कृत्वा तस्य पानं प्रदापयेत्
तेन सा लभते गर्भं ज्ञात्वेवं च समाचरेत् ॥ २८ ॥

फिर औषधि को एक को एक बार अमृत मंत्र से अभिमंत्रित करके स्त्री को पीने के लिए दें। मन में जान करके कि इससे इसको गर्भ की प्राप्ति होगी कार्य करे।

इति स्त्री दोषाणि

शुक्र क्षयेतु पुरूषे नार्यागर्भं न धार्यते
पुरूषे शुक्र हीने तु उपायं वक्ष्यतेऽधुना ॥ १ ॥

पुरूष का वीर्य क्षीण हो जाने पर स्त्रीयाँ गर्भ नहीं धारण कर सकती अत एक पुरूष के धातु क्षीणता दूर करने के उपाय का वर्णन किया जाता है।

माक्षिकं स्वर्णमाक्षीकं लोह चूर्णं शिलाजितं
पारदं स बिडंगानि पथ्याभाग समांशकं ॥ २ ॥

घृतेन भावयित्वा च पात्रे कृत्वा आयसे
बिडाल पद मात्रं च भक्षयेत् स्थविरोपिय: ॥ ३ ॥

तस्य व्याधि जरा मृत्यु वर्षएकेन हन्यते
कामयो त्स्त्री सहश्रतुं बहुशुक्रोबहु प्रज: ॥ ४ ॥

शहद और सोना मारवी शुद्ध और लोह भस्म शिलाजीत पारद बायबिडग और हरड़े के समान भाग लेकर और इन सबको घृत में मिलाकर लोह पात्र में रखकर यदि वृद्ध पुरूष भी दो तोले की मात्रा में खावे तो उसको रोग वृद्धावस्था और अपमृत्यु एक वर्ष के अंदर अंदर नष्ट हो जाती है। उसको एक हजार स्त्रीयों की कामना होती है तथा उसको बहुत अधिक वीर्य होकर बहुत संतति होती है।

वस्तांडं तिल पिष्टं च घृतं नैव च पाययेत्
पिबेत्क्षीरं घृतं रात्रौ शर्करामन्न मिश्रितं ॥ ५ ॥

मास द्वय प्रयोगेन निरंतरं दिनेदिने
स पुमान रमते नारीमऽक्षीणश्चट को यथा ॥ ६ ॥

बकरे के कपूरे और तिलों की पिट्ठी को घी के साथ मिलाकर रात्रि में अन्न सहित मिश्री या शक्कर को दूध में मिलाकर पीवें प्रतिदिन इस प्रयोग को दो मास तक करने से वह पुरुष बिना स्खलित हुए चटक (चिड़े) पक्षी की तरह स्त्री से रमण करता है।

कपि कच्छोद्य मूल क्षीर पिष्टं च तं पिबेत
अक्षयं जायते शुक्रं कामये त्स्त्री सहस्र कं ॥ ७ ॥

जो पुरुष कोच की जड़ को दूध के साथ पीसकर पीवें तो उसका वीर्य अक्षय होकर वह हजार स्त्रीयों की इच्छा करे।

धात्री फलानां चूर्णतु वेक्षु रसेन भावितं
शर्करा मधु संयुक्तं समभागं च कारयेत् ॥ ८ ॥

आवंले के चूर्ण को गन्ने के रस में भावित करके उसमें बराबर शक्कर मिलाकर मधु पिलावे।

जीर्ण कायोऽपितं तं लिह्या क्षीरं पीत्वा ततो निशि
कामयेत् स्त्री सहस्रतुं कामाग्नि स्तस्य वर्द्धते ॥ ९ ॥

वृद्ध पुरुष भी उसको चाटकर रात्री में दूध पीकर सहस्र स्त्रियों की इच्छा करता है तथा उसकी कामाग्नि बढ़ जाती है।

अश्वगंधातिला श्चैव मूलं च कपि कच्छजं
बिदारी कंद संयुक्ता षष्टिकानां च तंदुला ॥ १० ॥

एतानि पयसा पिष्टवा घृतेन सहितं पिबेत
दिनेदिने च तं भक्षेद्याति कामस्य दीपनं ॥ ११ ॥

अश्वगंध तिल कोंच की जड़ बिदारी कंद मुलेठी और साठी चावलों को समान भाग लेकर दूध के साथ पीवें तो इसको प्रतिदिन खाने से कामोद्दीपन होता है।

बिदारी गोक्षुरं चैव पयसा सह भक्षयेत्
जीर्ण कोयपि दातव्यं मंदाग्नि ह्रीपन प्रदं ॥ १२ ॥

बिदारी कंद और गोखरू के चूर्ण को दूध के साथ खाने से जीर्ण कायवाला पुरुष भी मंदाग्नि को नष्ट कर कामोद्दीपन को प्राप्त होता है।

भावितं सु बहुम्बारान्नारि केरी फलांबुभिः
माष चूर्णं घृतेनाद्याद्योगोयं वृष्य उच्यते ॥ १३ ॥

नारियल के जल में बहुत बार भावित किये हुए उड़द के चूर्ण को घृत के साथ खायें तो पौष्टिक योग है ।

मूलमौदुंबरं सर्पिः शर्करा क्षीर मिश्रितं
यः पिबेत्सततं गच्छेत् प्रमदाश्वट को यथा ॥ १४ ॥

जो पुरुष उदंबर (गूलर) की जड़ को घी शक्कर और दूध के साथ मिलाकर पीता है वह स्त्रीयों के पास निरंतर चिंडे के समान ही मस्त होकर जाता है।

गुप्ता बीज बला नागबला गोक्षुर शर्कराः
पिष्टवा क्षीरेण पीतास्युः शुक्रवर्द्धन हेतवे ॥ १५ ॥

कोंच खरेटी गंगेरन गोखरू को पीसकर उसमें शक्कर मिलाकर दूध के साथ पीने से वीर्य बढ़ता है।

यव माष स्वयं गुप्ता यष्टि गोक्षुर का स्थिभिः
गव्येन पयसा पीतै भवेद्वृष्य मनीदृशं ॥ १६ ॥

जो उड़द कोचं मुलैठी गोखरू के बीच की लकड़ के चूर्ण को गाय के दूध के साथ पीने से अपूर्व पुष्टि होती है।

फल मूल दलान्यऽस्य गंधायाः पयसा पिबेत्
गव्यै नापि जरद गच्छेदऽक्षीणो योषितां शतं ॥ १७ ॥

असगंध की के फल जड़ और पत्तों को गाय के दूध के साथ पीने से वृद्ध पुरुष भी सौ स्त्रियों के पास जा सकता है।

स्वयं गुप्ता फल रजो गोक्षुरास्थि रजोयुतं
गव्येन पयसा पीतं स्याद्बलेंद्रिय वर्द्धनं ॥ १८ ॥

कोंच के फल का चूर्ण और गोखरू के बीच के भाग के चूर्ण को गाय के दूध के साथ पीने से बलेन्द्रिय बढ़ती है।

तिल माषाऽत्म गुप्तास्थि विदारी शालि तंदुलौ
क्षीरेण कलितैः पीतै रस मात्रा भवद्धृतिः ॥ १९ ॥

तिल उड़द कोंच की लकड़ी बिदारी कंद और साठी चावल को दूध के साथ पीने से अपरिमित स्तंभन होता है।

गुप्तोच्चटो विदारी चूर्णं क्षीरेण शर्करोपेतं यः
पिबति नरोनित्यं गच्छेत् सः स्त्री शतं सततं ॥ २० ॥

कोंच के बीज (उड़द की दाल) चिरमी के जड़ बिदारी कंद का चूर्ण को जो शक्कर मिलाकर दूध के साथ पीता है वह पुरुष नित्य लगातार १०० स्त्रीयों के पास जा सकता है।

धात्री फल रजो धात्री फल स्वरस भावितं
घृत सिक्तं लिहन क्षीरं पिवेत तनु वृषायते ॥ २१ ॥

आंवले चूर्ण को आंवले के रस की भावना देकर घी से चिकना करके चाटने और ऊपर से दूध पीने से बैल के समान पुष्ट हो जाता है।

रजो विदारी कंद स्य तद्रसैनैव भावितं
लीठं घृतेन गौदुग्धं पीत्वातु स्त्री भजेद्बहुः ॥ २२ ॥

बिदारी कंद के चूर्ण को उसी के रस में भावित करके घी के साथ चाटने और ऊपर से दूध पीने से बहुत सी स्त्रीयों के साथ भोग कर सकता है।

सर्पिषा संयुतं लीढं यष्टी मधुकजं
रजः क्षीरानुपान बद्वाकुर्यादपि नपुंसकं ॥ २३ ॥

मुलेहटी के चूर्ण को घी के साथ मिलाकर चाटने से और ऊपर से दूध पीने से नपुसंक भी घोड़े के समान पुष्ट हो जाता है।

व्योष द्राक्षा सिता चूर्णं घृतैः क्वथित शीतलं
युक्तं गव्यं पयः पतिं बल शुक्र वर्द्धनं ॥ २४ ॥

सोंठ मिरच पीपल मूत्राका और मिश्री के चूर्ण के साथ क्वाथ बनाकर और ठंडा करके घी और गाय के दूध के साथ पीने से बल और वीर्य बढ़ता है।

उदकं शाल्मली मुद्राद्धाणितां गलितं घटे
शोषितं सलिलं खादन केवलं वा वृषायते ॥ २५ ॥

सेंभल के कांटे के नीचे की लकड़ी की छाल को पानी से घिसकर कपड़े से छानकर घड़े में डालकर रखे उसका जल सूखने पर खाने से मनुष्य अत्यंत पुष्ट हो जाता है।

पिपलस्य युतं मूलं फल पल्लव वल्कलैः
क्षीरं श्रुतं सितो पीतं पीता रेतो वियर्द्धनं ॥ २६ ॥

पीपल की जड़ फल पत्ते और छील को मिश्री और दूध के साथ पीने से वीर्य बढ़ता है।

गोक्षुरं शतावरी तिल हयगंधा कपिवधुबला चूर्णः
शुभ शौरभय पयसा पीतो नर वीर्य कृद्भवति ॥ २७ ॥

गोखरू सतावरी तिल अश्वगंध कोंच के बीज और खरेटी के चूर्ण को गाय के दूध के साथ पीने से मनुष्य का वीर्य बहुत अधिक बढ़ता है।

शुद्धैर्माषैस्तिलैः शालि तंदुलै रक्षजन्मभिः
अपिशष्कुलिका सर्पिभूविष्टा मन्मथवर्द्धना ॥ २८ ॥

शुद्ध उड़द तिल साठी चावल और रक्ष जन्म (सफेद सरसों के फूलों की कचौड़ी के सुहाली के घी के साथ खाये जाने से अत्यंत काम को बढ़ाता है।

क्षीरैर्हविषि च पिंडी विपाचितां वितुषमाष विदमलां
कामीभुक्ता प्रमद शतमपि भुक्ता न तृप्तोति ॥ २९ ॥

धुली हुई उड़द की दाल की पिट्ठी को दूध और घी के साथ पकाकर खाने से कामी पुरुष को स्त्रियों से भी तृप्त नहीं होता।

हयगंधा खंडयुता सिततर तिल माष शालिनः
शदका माहिष पयो विपुक्ता लीठा द्विगुणोत्तरा वृष्या ॥ ३० ॥

असगंध, खांड, सफेद तिल, उड़द, साठी चावल को भैंस के दूध में पकाकर हलवे को चाटने से से दुगुनी पुष्टि होती है।

आरताणां पुरूषाणां नारीणां च तथैवतु
योगात्कारये च्चेत्समुचितार्थं कर्म साधनं ॥ ३१ ॥

अंगं च वरं चाऽन्यं नर नारी हितावहं
नस्या पान घृतं तैलं तानि नित्यं च सेवयेत् ॥ ३२ ॥

मंत्री दुखी पुरुष व स्त्रियों के योगों को जानकर ही योग्य रीति से उसके कार्य को सिद्ध करें। स्त्री और पुरुष की चिकित्सा के हितकारी अन्य भी उत्तम अगं हुल्लास पीने की वस्तु घी व तैल है उनका भी नित्य सेवन करें।

नष्ट रज को फिर से उत्पन्न करने की दवायें

व्योषं पलाश बीजं च तिल क्वाथेन पेषितं
पीतं पुष्प वतीं नारीं विद्यत्ते रक्त गुल्मशूल हृत ॥ ३३ ॥

यदि सोंठ, काली मिरच, पीपल और पलास के बीजों को पीसकर तिल के क्वाथ के योग से पिया जाये ते यह गुल्म (प्लीहा अथवा वायू गोला) के दर्द को दूर करके स्त्री को रजोवती करता है।

विल्व क्षीरीणिका मूलं पिवेदुष्णेन वारिणा
अनार्तवा क्रियानारी सार्त्तवा भवति ध्रुवं ॥ ३४ ॥

यदि बिना रजवाली स्त्री बील और आक की मूल को गरम जल से पीए तो निश्चय से ऋतुमती हो जाती है।

आम्लिका मूलमाहृत्य पिष्टावा क्षीरेण पाययेत्
नारीणां नष्ट पुष्पाणां सद्योरक्तं प्रवर्त्तते ॥ ३५ ॥

इमली की जड़ को पीसकर दूध के साथ पीने से स्त्रियों का रज नष्ट रजो धर्म तुरन्त ही होने लगता है।

खारी पिष्टो यष्टी द्राक्षो क्षीरेण योषिता पीतो
पुष्पाद्भवाट तस्मा श्चूत तत्वक स्वरस नस्यं च ॥ ३६ ॥

खारी नमक और पिसी हुई मुलहटी और मिश्रकादाख को दूध के साथ पीने से तथा आम की छाल के स्वरस की नस्य लेने से तुरंत ही रज प्रकट हो जाता है।

सत्तैलं नीलं निर्गुंडी मूलं समाधितं पिबेत
क्वाथं सा बनिता दृष्टेन तस्याः पुष्प संभवः ॥ ३७ ॥

आम की छाल आम का रस और नीली निर्गुंडी (संभालू की जड़) की जड़ को तेल में पकाकर क्वाथ बनाकर पीने से ऐसी कोई स्त्री नहीं है। जो रजोवती न होवे।

दंती किण्व कणा रालं लक्षाक्षि गरुडैः कृता
सुधी क्षीरयुतै र्वर्त्तिं योंनिस्था जनयेद्रजं ॥ ३८ ॥

दंती अर्थात तिरीफल ७ छोटा जमाल गोटा १ भाग किण्व (सोये के बीज) सोलह भाग राल लंबाक्षि (अर्थात कडवी तुंबी इंद्रायण) और गरुड़ (खिरेटी) को अच्छी स्त्री के दूध से बत्ती बनाकर योनि में रखने से रज उत्पन्न हो जाता है।

निंब श्लेष्मांतक कदली भुजंग निर्मोक निर्म्मितो धूपः
योनौ दत्तो कुर्यात् कन्याया पुष्प संभूतिं ॥ ३९ ॥

नीम लिसोड़ा केला और सर्प की कांचली की बनाई हुई धूप को योनि में देने से कन्या भी रजोवती हो जाती है।

निर्यासऽमासनं नारी पिबेत् क्षीरेण कल्कितं
नष्टावर्त समद्भूतिं पुनरार्तव जन्मनः ॥ ४० ॥

विजयसार अथवा पीले रंग के शालि वृक्ष के गोंद के दूध के साथ कल्क बनाकर यदि स्त्री पीवे तो नष्ट रज फिर प्रकट होने लगता है।

गुड तैल क्षुत. खारी [illegible]
निपीता दुषटं योनिनां लोहितां योनि दोषहृत ॥ ४१ ॥

गुड़ तेल और खारेक (छुवारे) के क्वाथ में नमक मिलाकार पीने से अशुद्ध योनि वाली स्त्री के योनि दोष दूर हो जाते हैं।

दल मूलानि नलिन्या कुष्टं मुसिरं लतं हिमं कृष्ण
एरंड शिफां च पिबेत् गर्भाशयशो धनाय गोपयसां ॥ ४२ ॥

कमल के पत्तों की जड़ कूठ मीठा खस तगर सफेद चंदन अगर और एरंड़ की जड़ को गर्भाशय के दोष दूर करने के वास्ते गाय के दूध के साथ पीवे।

लोध आमलक हरिद्राहरीतिक खदिर सार संभूति
क्वाथं शोचन द्रबेवरि स्योयोनि दोष हर ॥ ४३ ॥

पठानी लोध आमला हल्दी हरड़े और कत्थे के क्वाथ से योनि शोधन करकने से उसके दोष दूर होते हैं।

कटुकालांबु संसिद्ध तैलं सभ्यंजनाद्भवेत्
योनि दोष हरं नार्या गर्भ मुत्पादयेदऽपि ॥ ४४ ॥

कड़वी तूंबी में सिद्ध किये हुये तेल को मलने से स्त्रीयों के योनि दोष दूर होकर गर्भ रह जाता है।

कुमुदेन स तालेन स सूक्ष्मैलेन लेपनं
पिष्टेन वाराण त्रीन् स्त्रीणां योनि दोष निवहणं ॥ ४५ ॥

कमल ताड़ और छोटी इलायची को पीसकर स्त्री की योनि में तीन बार लेप करने से योनि दोष दूर होकर गर्भ स्थित हो जाता है।

त्रिफलांजन गुड लोद्र द्राक्षा फल पिप्पली समालेप:
गर्भग्रहणं प्रतिधान् योनिगतान् नाशयेद् दोषान् ॥ ४६ ॥

त्रिफला (हरड़े बहेड़ा आंमला) अंजन (सुर्मा) गुड़ पठानी लोध मुन्नका पीपल को समान भाग लेकर लेप करने से योनि के दोष दूर होकर गर्भ स्थित हो जाता है ।

लाक्षा लसुन हरिद्राद्वय गुग्गुल रोचना सुकौशीरै:
हिंवाऽब्धफेन युक्तैर्गुलिकास्युर्योनि दोष हृत ॥ ४७ ॥

पीपल की लाख लहसून दोनों हल्दी गुगुल गोरोचन खस हींग और समुद्र झाग की गोली बनाकर योनि में रखने से योनि के दोष दूर होते हैं।

कणा दारु कणा मूल द्राक्षा पुर गुडै:
कृतं उद्वर्तनं हरेत्सर्वान्योनिदोषान् विसुर्णितै ॥ ४८ ॥

पीपल देवदारु पीपला मूल मुनक्का गुगल गुड़ समान भाग लेकर पीसकर उबटना अर्थात लेप करने से योनि के सम्पूर्ण दोष नष्ट हो जाते हैं।

लोद्र स्वर्ग महारुहोत्पल तिल क्षीर पद्म पिप्पली
यष्टी दाडिम मज्ज सैंधवं पुर द्राक्षा प्रियंग्वर्ज्जुनै:
धातक्या कुसुमैश्च गौघृतयुतैरु द्वर्तनं चूर्णितै:
र्योनि दोषं हरं च गर्भ जननं पानश्चतेषां स्त्रियां ॥ ४९ ॥

पठानी लोध कल्पवृक्ष (बहेड़ा) कमल नीलोफर तिल, दूध, बाराहीकिंद, पीपल, मुलहटी, अनारदाना शालि वृक्ष, सैंधव नमक, गुगल मुनक्का, चारौली, अर्जुन वृक्ष की छाल, धाय के फूल का चूर्ण करके उसमें घी मिलाकरउबटना करने से योनि दोष दूर होकर स्त्रीयों के गर्भ रहता है।

इति वृष्यं पुष्टीक योग समाप्त ।

हयगंधो शीराभ्यां सर्वांगो द्वर्तन च कुर्वीत
गर्भार्थ्यै बंध्या स्नानं च समंत्रकं कुर्यात् ॥ १ ॥

गर्भ धारण करने के लिये बंध्या को असगंध उशीर (खस) से सारे शरीर में उबटना (लेप) कराके इस मंत्र से स्नान करावे।

ॐ नम: पार्श्व जिनेन्द्राय कमठ दर्प विध्वंस नाय सर्वोपसर्गं विनाशनाय धरणेन्द्र फणा मणि सहस्र ज्योति दीप्त दिगंतराल परि मंडिताय पद्मावती श्वेतातपत्रधराय सर्वग्रह मातृका दोषं हनहन अपहर अपहर पुत्रमेजनयजनय शीघ्रं शीघ्रं ऋतु मत्यै नम: स्वाहा ॥

एतदऽभि मंत्रिताभिः स्नायाद्वंध्या सुतं लभेताद्रिः
स्नान मिदं ग्रह पीडा प्रभृत्यवपि सर्वदोषं हरां ॥ २ ॥

इस मंत्र के द्वारा अभिमंत्रित जल से स्नान करने से बंध्या को भी पुत्र प्राप्त हो जाता है । यह स्नान ग्रह पीड़ा इत्यादि सबप्रकार के दोषों को दूर करता है।

बंध्या पुष्कारिणी तीरे मृतवत्सां शिवालये कूपे
जीर्णे तटाके च काक बध्या शिवालयेत् ॥ ३ ॥

नद्योश्च संगमे श्राद्धि गर्भा दोषातरा श्रितां
आरण्ये कमलिन्योश्च स्नापयेद्विधिनामुना ॥ ४ ॥

बंध्या को नदी के किनारे पुत्र मर जाने वाली स्त्री को शिवालय कूप या पुराने तालाब में तथा काक बंध्या को भी शिवालय तथा दोनों नदियों के संगम पर स्नान करावे गर्भ गिर जाने वाली अथवा अन्य दोषों वाली कमलों के बन में इस विधि से स्नान करावे।

लक्ष्मणाया उपादाने विधानमिदमुच्यते
मंत्र वन्नान्यथाऽऽहा सायेत्फलाय प्रकल्पते ॥ ५ ॥

लक्ष्मण को लाने में इस मंत्र वाला विधान कहा गया है। अन्यप्रकार लाने से इच्छित फल की प्राप्ति नहीं होती है।

प्रदोषे चरु पुष्पाद्यैरभ्यर्च्यावध्यतंतुना
रक्तेन खदिरान कीलान् दिक्ष्वष्टा सु निखन्य च ॥ ६ ॥

प्रदोष (सूर्यास्त से दो घड़ी पहिले तक) काल में नैवेद्य और पुष्पादि से पूजन करके बिना टूटे हुए लाल धागे से खैर की आठ कीलों को आठों दिशाओं में गाड़ दें।

कि वस्त्रों मुक्त केशश्च सन पुष्पै सोम दिग्मुखः
प्रातः खदिर कीलेन निखने तां समंत्रकं ॥ ७ ॥

वस्त्र रहित केश खुले हेए सोम दिशा की तरफ मुख करके उसकी अच्छे पुष्पों से पूजन करके उस बूटी को मंत्र पूर्वक खेर की कीलों से खोदें।

ॐ ये नत्वां खनते ब्रह्मातेनें द्रोयेन् केशवः ते नत्वां ख नाद्यिष्या मितिष्ट तिष्ठ महौषधि स्वाहा ।

खनन मंत्र :- यह खोदने का मंत्र है।

लक्ष्मणो लक्ष्मणा प्रोक्ता द्विविधा स्त्री पुमानिति
भवेद्बहुल पत्रा स्त्री दीर्घ पत्रा पुमान भवेत् ॥ ८ ॥

लक्ष्मणा का लक्ष्मणा ही नाम है वह दो प्रकार की होती है स्त्री भेद पुरूष भेद बहुत पत्तों वाली और बड़े पत्तों वाली पुरूष होती है।

गर्भा र्थेषु प्रयोगेषु गृन्हीया ल्लक्ष्मणां स्त्रिय
न पुंमांसं पुंमास्त्वां स्प गतः सं स्तंभय त्यऽसिं ॥ ९ ॥

गर्भार्थ प्रयोगों में स्त्री लक्ष्मणा को लावे तो पुरूष के वास्ते पुरूष लक्ष्मणा को लावे यह तलवार का स्तंभन करती है।

ॐ नमो बलवती शुक्र वर्द्धिनी पुत्र जननी ठः ठः
गौ क्षीरेणैक वर्णाया: कल्कितां लक्ष्मणां पिबेत्
एतेन जप्तांगर्भार्थं कुर्य्याद्वानावनं तथा ॥ १० ॥

उस लक्ष्मणा को एक वर्ण वाली गाय के दूध में कल्क बनाकर यह मंत्र पढ़कर गर्भ के वास्ते पीए और उसको सूंघे

लभते दक्षिणे घ्राणे पुत्र नावन कर्मणा
वामे लक्ष्मणा या पुत्री सुभय स्मिन्नपुंसकं ॥ ११ ॥

दाहिने स्वर में सूंघने से पुत्र की प्राप्ति होती है बाये स्वर में सूंघने से पुत्री होती है। तथा सुष्मण (दोनों स्वर मिले हुये) में नपुसंक पुत्र होता है।

ब्राह्मी वासीऽमृता निंब कदम्ब दलजं रजं
प्रातन्नि पीयंतैलेन बंध्यापि लभते सुतं ॥ १२ ॥

ब्राह्मी अरडूसा गिलोय नीम कदम्ब के पत्तों की दलू को तेल के साथ पीने से वंध्या को भी पुत्र प्राप्त हो जाता है।

वटदुग्ध सक्तु गुलिका खादेति सो घृतेन संमिश्रा:
क्षीरेण पिवे त्पिष्टा श्री मूलं नवांकुरानऽथवा ॥ १३ ॥

वड़ के दूध में सत्तु की तीन गोलियां धीमे मिलाकर खायें और श्री मूल बेलं की जड़ के नये अंकुरों को पीसकर दूध के साथ पीवें।

बीजानि मातुलिंगस्य क्षीरे पक्वान्याग्रा पिबेत्
नारी घृतेन सहसा सहसा गर्भं धत्ति पिबेत् ॥ १४ ॥

जो स्त्री बिजौरे के बीजों को दूध में अथवा घी के साथ धीरे धीरे पीती है वह तुरन्त ही गर्भ धारण कर लेती है।

श्रिया वटांकुराणं च देयाश्च स्वरसा नपि
अर्पितावानि पीता वा गर्भं दधतियोषितां ॥ १५ ॥

वड़ के अंकुरों को स्त्री को देने से कांति बढ़ती है तथा उसके रस को पीने से स्त्रियां गर्भ धारण करती है ।

यदि तिलार्क तिक्ता ब्राह्मी वासा मृतार्क जे स्वरसे
पक्वं तुल्यं लवणं गर्भाद्या व हृतौ सज्यं ॥ १६ ॥

यदि तिल आक कुटकी अथवा पित पापड ब्राह्मी अरडूसा गिलोय को आक के स्वरस में मिलाकर बराबर नमक डालकर सेवन करने किया जाये तो ऋतुकाल में अवश्य ही गर्भ रह जाता है।

आज्यं शिरीष पुष्पं स्वरसं क्षीरं च युग पदे
च पिबेत माहिषश्च पयोद्य वंध्या न व्याऽपामार्ग पुष्पाग्रै ॥ १७ ॥

शिरस के फूल को इसके रस घी तथा धूध के साथ पियें अथवा चिरचिता के पुष्पों को भैंस के दूध के साथ पीयें तो बंध्या के भी पुत्र होता है।

तुष शिखि पुट दग्धोऽब्जत पीत दला क्षीर संयुतं
स्वरसं गोमूत्र निशा स्वरसाऽसत कुसुमं वा पिबेद्वंध्या ॥ १८ ॥

कमल के तिनके और खंरेटी को बहेड़ा और चित्रक की पुट देकर भस्म बनाकर उसको दूध और हल्दी के स्वरस के साथ पीएं अथवा वह स्त्री विजयसार के फूल को हल्दी के स्वरस और गौमूत्र के साथ पीये।

न व्याहि केसर रसो गव्याऽज्य सहितं पिबेत्
अपत्य प्रार्थिनी नारी क्षीराऽहारात्ऋतु वासरात् ॥ १९ ॥

बिना पति की संतान की इच्छी करने वाली स्त्री को ऋतुकाल में नवीन नाग केसर के रस का गाय के घी के साथ पीवे और दूध का आहार लें।

मयूरागंक निंवं वा पिबेत दुग्धेन कल्कितं
ऋतु स्नाता वधूः सद्यः सुतोत्पत्ति समुत्सुका ॥ २० ॥

मयूर शिखा अथवा चिरचिटा कुनिंब (बकायण) को दूध में कल्क बनाकर शीघ्र पुत्र की उत्पत्ति की इच्छुक स्त्री ऋतुस्नान की हुई यह पीवें।

अंडकै रंड कौरडं वंध्यानां मूलमापिबेत्
सुतोत्पत्ति उत्सुका नारी क्षीरेण प्रथमाऽर्त्तवे: ॥ २१ ॥

अथवा पुत्र की उत्पत्ति की उत्सुक स्त्री ऋतुकाल के प्रथम दिन दूध के साथ एरंड कोरंटी (कैर) और बांझ ककोड़ा खरेटी की जड़ को पीवें।

शिखा वल शिखामूलं गव्य क्षीरेण कल्कितं
गर्भं दध्योति वंध्यायै सेवितं ऋतु वासरात् ॥ २२ ॥

गाय के दूध में कल्क बनाये हुवे मयूर शिखा तथा गाजर ऋतु के दिनों में सेवन किये जाने से वंध्यों को भी गर्भ धारण करा देती है।

श्रीमूलं लोध धात्र्यस्थि वट श्रृंगे हरेणुका
ऋतौ दिनं त्रय पीता गर्भाया: पथ्य पयोन्वितां ॥ २३ ॥

श्री मूल (बिल्व) लोध आवंले की मींजी वट वृक्ष के छोटे पौधे मटर धान्य को ऋतुकाल में संतान के लिये तीन दिन पीने से गर्भ रहता है।

द्वितियं बलयों स्तलं सिता क्षीरं घृतं च गौ:
निपीता मार्तवे पत्नी मंत्रर्वली वितन्वतै: ॥ २४ ॥

अथवा दोनों खरेंटियों के देल शक्कर दूध और गाय की घी को ऋतुकाल में पीने से आंते फैलती है।

सहां सहां घि शिरसं पाठये त्पयसा वधू:
अथवा अश्वत्थ वंदकं गर्भं संभव कांक्षिणीं ॥ २५ ॥

अथवा वधु को सहा (भुगवन -सहदेई गंवार पाठा) सहाघि (जगली उड़द) और शीरस को दूध के साथ पिलाये अथवा गर्भो तसित की इच्छावीली स्त्री पीपल और बड़ के फल दें।

क्षीरेण पुत्र जीवस्य मूलं बीजानऋतौ पिबेत्
वंध्याया गर्भ संभूत्यैबीजं केवलमेववा ॥ २६ ॥

वंध्या को गर्भधारण कराने के लिये जीवापूता की जड़ और बीजों को अथवा केवल बीजों को दूध के साथ पिलावे।

मूसली लक्ष्मणा पुत्र जीवों रक्त वटांकुरा:
वंध्या च पिष्टवा क्षीरेण पीता गर्भ प्रदा ऋतौ ॥ २७ ॥

मूसली लक्ष्मण जीवा पोता और लाल वड़ के भी अंकुर को पीसकर ऋतु काल में दूध के साथ पीने से वंध्या भी गर्भवती हो जाती है।

गृहीत मश्वगंधाया मूलं पुष्ये पिबेत् ऋतौ
क्षीरेण क्षीरे भुक् पुत्र संभुतिमभिलात्सुका ॥ २८ ॥

पुत्र उत्पत्ति की इच्छी करती हुई स्त्री ऋतुकाल में असगंध की जड़ को पुष्य नक्षत्र में लाकर दूध के साथ पीयें।

कार्पास शलाहूनां कल्कं क्षीरेण पिबतु सप्तानां
बंध्या पुत्रोत्पत्ति वांछंतीं पुष्य दिवसेषु ॥ २९ ॥

पुत्र की इच्छा करती हुई बंध्या ऋतुकाल के दिनों में सात दिन तक दूध के साथ कपास बेल के कपास के कल्क को पीवें।

कंकैली सौम्य मूलं न्यग्रोध स्यांकुरांश्च
कृष्ण पशौ क्षीरेण ऋतौ स्नाता पिबेत् स्थिता नाभिमात्र जले ॥ ३० ॥

कंकेली (अशोक) वृक्ष एरंड की जड़ तथा वड़ के अंकुरों को काली गाय के दूध के साथ नाभि तक के जल में खड़ी होकर पीयें जो ऋतु का स्नान की हुई हो।

लक्ष्मी विशु कांता मूलान्य श्वदर्भ दुर्वाणां
वंशस्य चांकुरानपि गोपया पिवतु गर्भार्थं ॥ ३१ ॥

हल्दी संखा हूली की जड़ पीपल वृक्ष डाभ दूब और बांस के अंकुरों को भी गाय के दूध के साथ गर्भ के वास्ते पीवें।

लक्ष्मीं (फल प्रंयंगु ऋद्धि वृद्धि)

लक्ष्मी पया मूलाश्वत्थोत्तर मूल कल्क मथ पयसा
मूल मज्जा क्षीर युतं षंढारथपिबेद्वंध्या ॥ ३२ ॥

बंध्या लक्ष्मी वज्रा मूल (लजवंती की जड़) पीपल वृक्ष की उत्तर तरफ की जड़ के कल्क को बकरी के दूध में मिलाकर दूध के साथ पीवें।

श्री पर्णा फल चव्य पुत्रक मही कुष्माडनिपर्णिका
ब्राह्मी दुर्दर पूर्विका सित वराहां कोल वंध्यान्वितां
पाठा लक्षणि केऽत्याऽनन्य सित गोदुग्धे पिष्टवा पिबेत
वंध्या पुत्र वती स्व भर्तुः सहिता पुत्रं लभेत ध्रुवं ॥ ३३ ॥

बड़ी इलायची फल चव्य पुत्रक (दबना) मही (खंभारी) कुष्मांडीनी (कुम्हडा काशी फल) ढाकब्राह्मी -दुर्दर (बहेडा) सित बराह (सफेद बाराही कंद) अंकोल काली मिरच मुगवन (सहदेई गंवार पाठा) पाठालता और लक्षणी को श्वेत गाय के दूध में पीसकर पीने से वंध्या स्त्री कभी पति संयोग से अवश्य ही निश्चय पूर्वक पुत्र प्राप्ति करती है।

पीत्वा ऋतौषधमिदं दिवस चतुष्टयमुभावपि स्थित्वा
निर्वातात्मकदेशे भुंजी यातां मधुरमन्नं ॥ ३४ ॥

ऋतुकाल में इस औषधि को पीकर दोनों स्त्री पुरूष चार दिन तक ठहरे फिर वायु रहित स्थान में मधुर अन्न खावे।

स्नात्वा चतुर्थ दिवसे स्वभर्तुं संपर्कं माप्य
निजवनिता पुत्रीं पुत्रं लभते वामे तर शया पार्श्वं संसुप्ता ॥ ३५ ॥

चौथे दिन स्नान करके तथा पति के बगल में सोई हुई अपनी स्त्री से शय्या पर संपर्क करके पुत्र अथवा पुत्री को प्राप्त करें।

उत्पलस्य च कंदानि बहुमूला स्तथैवच
फलानि पुत्र जीवस्य लाजानि च तथैव च ॥ ३६ ॥

मधुस्य च पुष्पानि सरसी रूह केशरं
कसेरू कस्य कंदानि किंशुक स्य फलानिवा ॥ ३७ ॥

एतानि समभागानि चूर्णयित्वा भिषग्वरः
मधु शर्करया युक्तं तत् चूर्णं गुलिका कृतं ॥ ३८ ॥

त्रीण्येतता न्यऽक्षता मात्राणी प्रातःकालेऽहं
ततः ऋतुकाल दिने दैवं पुत्रं परम दुर्लभं ॥ ३९ ॥

आहारं पयसा युक्तं भर्तारि सह भोजयेत्
तेन पुत्रं प्रसूयेत बंध्या या दृष्टमौषधं ॥ ४० ॥

नीलोफर की जड़, शतावरी जीवा पूता के फल, धान की खील, महुवे के फूल, कमल की केशर ढांक (पलास) के फल , इन सबको समान भाग लेकर उत्तम वेध इनका चूर्ण बनावे और उसमें मधु और शक्कर मिलाकर गोली बनावे। इनमें से तीन गोलियां जो तोल में एक वर्ष के बराबर हो, प्रातःकाल तीन दिन तक स्त्री को ऋतुकाल के समय दें। तो अत्यंत दुर्लभ पुत्र रत्न मिलता है। उस समय पति पत्नी दुग्ध युक्त आहार करे। उस औषधि के सेवन से बंध्या स्त्री भी पुत्रोत्पत्ति करती है ।

॥ कल्याण घृत ॥

मंजिष्ठा मधुकं कुष्ठं त्रिफला शर्करा वचा
अजमोद हरिद्रे द्वे सिंही तिक्तक रोहिणी ॥ ४१ ॥

काकोली क्षीरका कोली मूलं चैवाऽवां सगंधंजं
जीवक ऋषभौकौ मेडा रेणुका बृहतीद्वयं ॥ ४२ ॥

उत्पलं चंदनं द्राक्षा पद्मकं देवदारू च
रोभि रक्ष समै भागौ घृतं प्रस्थं च पाचयेत् ॥ ४३ ॥

चतु गुंणेन पयसा यथार्थ मृदु वन्हिना
एत त्सर्पिर्न्नरश्न पीत्वा स्त्रीषु नित्यं वृषायते ॥ ४४ ॥

पुत्रा जनयते वीरौ मेधावी प्रय दर्शनः
वंध्या च लभते गर्भं या च कन्या प्रसूयते ॥ ४५ ॥

या चैव स्थिर गर्भा च मृत वत्सा चया भवेत्
एतद्वैव कुमाराणां सर्वांगग्रह मोक्षणं ॥ ४६ ॥

धन्यंय यशस्य मायुष्यं कांतिं लावण्य पुष्टिदं
ये चूर्णकेन प्रोक्ता एतस्यापि गुण स्मृता ॥ ४७ ॥

स कल्याण घृत श्चाऽयमऽश्चिन्या परिकीर्तिता
सेवनीयं सदास्त्रीभि रक्षणीयं प्रयत्नः ॥४८॥

मंजीठ, मधुक (महुवा) मीठा कूट त्रिफला, शक्कर, वच, अजमोद, दोनों हल्दी सिंही (छोटी पसर केटली) तिक्त करोहिणी (कटुकी) काकोली, क्षीर, काकोली असगंध की जड़ जीवक ऋषभक शंखपुष्पी संभालू के बीज दोनों कटेली नीलोफर चंदन मुनक्का पचाख देवदारु इन सबको एक एक कर्ष प्रमाण लेकर चौवन कर्ष प्रमाण घी में पचावें।

उस समय उसमें चार गुना दूध डालकर ठीक ठीक हलकी अग्नि दें पुरुष इस घी को पीकर स्त्रियों से सांड के समान आचरण करता है। ऐसा पुरुष पुत्रों को उत्पन्न करता है जो वीर विद्वान और सुंदर होते हैं। उसके संयोग से वंध्या और कन्या भी गर्भ पाकर प्रसव करती है। जिसका गर्भ रुक गया हो अथवा जिनके बच्चे होकर मर जाते हैं वह सब इससे पुत्र प्राप्ति करती है इसी से बालकों के सब अंग ग्रह से छूट जाते हैं। यह धन यश आयु कांति लावण्य और पुष्टी देता है। जो भी कुछ गुण कहे जाते है (या कल्याण ने जो कहा है) वह सब इसके गुण हैं। इस कल्याण कारिधी को अश्विनी कुमारों ने कहा है। इसको सदा सेवन करना चाहियें। और स्त्रियों की रक्षा करनी चाहिये।

रक्षा मंत्रं वज्र स्फोटं किंखिण्यां ख्यां विधायापि
संजपांत वंध्याः कंठे वद्धं सूत्रं गर्भं रक्षेत्

निम्नलिखित रक्षा मंत्र वज्र स्फोटमंत्र और किंखिनी विद्या नाम की मंत्रों को भी मौलिके डोरे पर जपकर गर्भणी के गले में बांधने से गर्भ की रक्षा होती है।

ॐ खिलि खिलि हुं फट ठः ठः रक्षा मंत्रः
ॐ वज्र स्फोटं ह्रीं खः फट स्वाहा वज्र स्फोटमंत्रः
ॐ नमो किंखिनी विद्ये असिता सिते उग्र चंडे महाचंडे भैरव रूपे ग्रहं बंधय बंधय कटिं बंधय बंधय हनु बंधय बंधय आं निवेति शीघ्रं किंखिनी स्वाहा ॥

यह किंखिनी विद्या का मंत्र है।

शुक्रेन्दु इवीं स्वरैर्नाभि क्रमाद्वेष्टयं बहिर्दलेः
हंसःपद समायुक्तै रंभोजातस्य चाष्टभिः ॥
यंत्र मे तद्धृतं नार्या भूर्जादि लिखितं भवेत्
गर्भ रक्षण कृत यद्वा कुड्यादि लिखिताद्भिः ॥

एक यंत्र में नाम को क्रम से शुक्र (व) इन्दु (इवीं) और १६ स्वरों से वेष्टित करके उसके बाहर चारों तरफ आठ कमल पत्र बनाकर उसमें हंस पद लिखे ।

इस यंत्र को भोजपत्र पर लिखकर स्त्री के गले में अथवा हाथ में बांधने से गर्भ की रक्षा होती है। अथवा इस यंत्र को दीवार पर भी लिखने से रक्षा होती है।

बच्चा मर जाने वाली स्त्री के लिये रक्षा यंत्र

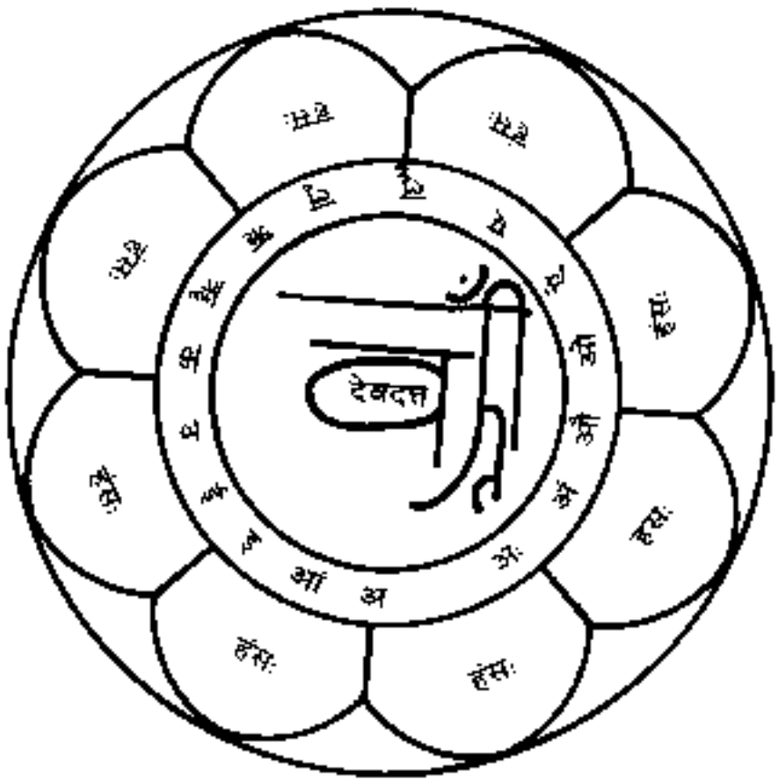

रक्षायंत्र

नाम्र पूज्यो बहि लेंखिव्या स्तस्या धस्तान्नभ
स्वयां सं सृष्टं दक्षिणे तादृगिनो वामे स विदंब: ॥ १ ॥

बहि रष्टं दलं पद्मं किरातो दिग्दलेषु च
अन्येषु वंडिनोतं स्था शक्तया त्रिर्वेष्टये द्वहि: ॥ २ ॥

एतद यंत्रं शुभे स्तंत्रे गोर्मय स्वरसा न्विबते
सम्यग् विलिखव्यतं भूर्ज्जे पत्रे स्वर्ण शलाकया ॥ ३ ॥

विभ्रत्यान्मृत वत्साया: कंठे सा पुत्र माप्नुयात्
दीर्घायुषं श्रियं क्षेमं कांति शुभगतामपि ॥ ४ ॥

यंत्र के बीच में नाम लिखकर उसके तीन तरफ तीन तीन बिन्दु सहित व्योम(हं) लिखे अर्थात् हंकारों को दक्षिण और उसीप्रकार पूर्व तथा पश्चिम (उत्तर की तरफ मुँह करने से बायें हाथ की तरफ) में लिखे।

उसके बाहर अष्टदल कमल बनाकर उसकी दिशाओं के पत्रों में किरात(हंसः) और दूसरों में दंडि अर्थात अंतस्थ (य र ल व) लिखकर इस यंत्र के बाहर शक्ति (ह्रीं) से तीन बार वेष्टित करके क्रों से निरोध करें।

इस यंत्रको अच्छे मुहुर्त में गोबर में उसी का रस मिलाकर उसी से भोजपत्र पर ,सोने की कलम से भली प्रकार लिखे।

यदि इस यंत्र को बच्चे मरजाने वाली स्त्री के कंठ में पहनाया जाये तो यह उसको दीर्घायु लक्ष्मी कल्याण कांति और सुंदरता वाले पुत्र देता है।

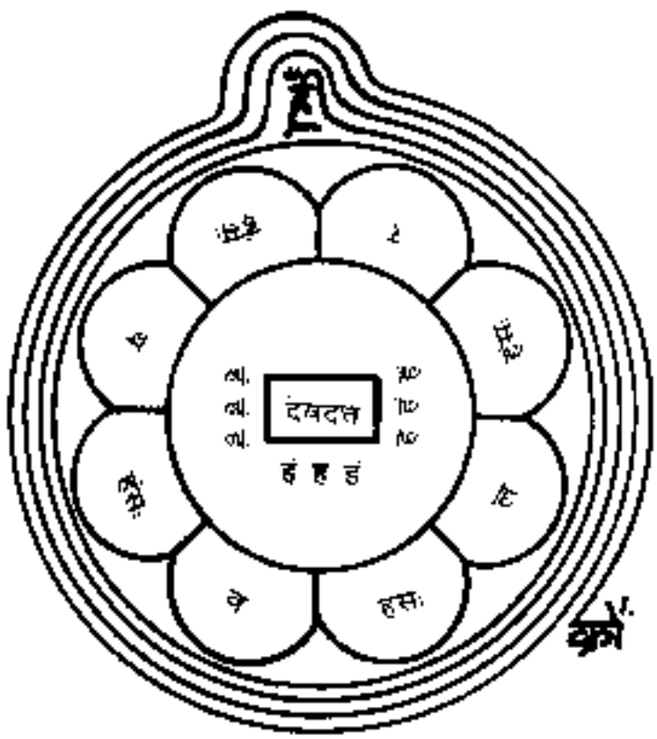

एतद् यंत्र द्वय स्योद्धार

गर्भ वृद्धि वा गर्भ रक्षा की औषधि

बीज पुरस्य बीजानि मूलं वा गर्भ वृद्धये
पिबेदाज्येन मूलं वा लक्ष्मणा ह्य गंधयोः ॥ १ ॥

गर्भ वृद्धि के लिये बिजौरे के बीजों या जड़ को दूध के साथ पीयें अथवा लक्ष्मणा और असगंध की जड़ को दूध के साथ पीयें।

आम्रातक तरोर्मूलं पिष्टं शीतेन वारिणा:
पीतं दिने दिने कुर्याद गर्भिन्यां गर्भ वर्द्धनं ॥ २ ॥

अंबाड़े की जड़ को शीतल जल से पीसकर प्रतिदिन पीने से गर्भिणी का गर्भ बढ़ता है।

गिरिकर्ण्या: शिफा श्वेत कुसुमाया: कटि तट:
धार्यमाण स्त्रिया गर्भ स्थापनाय भवेत्प्रभु: ॥ ३ ॥

नीली कोयल और श्वेत फूलों की जटा को कमर में बांधने से स्त्री के गर्भ की रक्षा होती है।

ॐ अमृते अमृतोद्भव अमृतवर्षिणि अमृत रूपे इदमौषधमऽमृतं कुरू कुरू भगवति विधे स्वाहा।

दद्यात् अमृत रूपिण्या विधया सर्वमौषधं
अनया मंत्रितं मंत्री गर्भ शूल विनाशनं ॥ ४ ॥

गर्भ विनाशन अर्थात् गर्भपात निवारण के वास्ते निम्नलिखित सभी औषधियाँ अमृतरूपी विद्या मंत्र से अभिमंत्रित करके देवें।

गर्भ शूल विनाशन अर्थात गर्भपात निवारण के वास्ते निम्नलिखित सभी औषधियां अमृतरूपी विद्या मंत्र से अभिमंत्रित करके देवें।

अश्व गंध्य शिफा क्वाथ: कल्प सं साधितं
पिबेत् हैयंग वीनं बनिता गर्भस्य स्थापनं परं ॥ ५ ॥

असगंध की जटा के क्वाथ को कल्प के द्वारा सिद्ध करके गर्भिनी को पिलावे अथवा ताजे गाय का मक्खन स्त्री को गर्भ की उत्तम रीति से स्थिर करता है गिरने से बचाता है।

उदुंबर शिफा क्वाथे निपीतं समशर्करं
शालि पिष्टं भवेज्जं गर्भ विनिपात निवृतये ॥ ६ ॥

गूलर की डाढ़ी के क्वाथ में बराबर शक्कर और साठी धान की पिट्ठी डालकर पिलाने से गिरता हुआ गर्भ रुक जाता है।

क्षीरेण सघृत: पीत: कुलाल कर कर्दम:
सहसा प्रति वघ्नीयाद् गर्भ ध्वंसनं संशय: ॥ ७ ॥

कुम्हार के हाथ की कीचड़ को दूध और घी के साथ पीने से गिरता हुआ गर्भ तुरन्त ही रुक जाता है।

हिम गोस्तन गोपि भि स लोद्राभि: श्रितं पिबेत्
क्षीरं स शर्करं गव्यं गर्भ श्राव निवर्तनं ॥ ८ ॥

कपूर दाख गोरीसर और पठानी लोध को गाय के दूध और शक्कर के साथ पीने से गर्भ श्राव रुक जाता है।

तरूणैर्नालिकेरस्य पुष्पै रौदंबरै: फल:
अष्टैश्च कल्कित: क्वाथोगर्भ ध्वंस निवृत्तये ॥ ९ ॥

एरंड नारियल के पुष्प गूलर के फल और अब्द (नागर मोथा) का कल्क बनाकर क्वाथ करके पीने से गर्भ ध्वंस नष्ट हो जाता है।

लोध्रोत्पल तंदुल यष्टी हिम शारिबा सिता कल्क:
गर्भ ध्वसं शमयति परिपीतो योषितां सहसा ॥ १० ॥

लोध नीलोफर साठी चावल मुलहटी कपूर गोरीसर (शारिब) के कल्क को पीने से स्त्रियों का गर्भ ध्वंस तुरन्त ही शांत हो जाता है।

कल्कितताभि स्तिल शिवाऽमृता नीलोत्पल यष्टिभि:
पीताभिर्ध्वंसते स्त्रीणां गर्भ प्रध्वसं भीरूतां ॥ ११ ॥

तिल काला धतूरा गिलोय नीलोफर मुलहटी के कल्क को पीने से स्त्रियों का गर्भ पात का भय जाता रहता है।

मार्कव स्वरसं गव्यं क्षीरं च सदृशं पिबेत्
अंतर्वली भवेतस्या नैव गर्भ परिच्युति ॥ १२ ॥

कौंच का स्वरस और गाय के दूध को बराबर ले कर पीने से गर्भ अन्दर से बली हो जाती है। और गिरता नहीं है ।

यष्ट्युत्पल सिता चूर्णपानं गर्भ परिच्युतौ
निर्यछेद् वेदनां द्रव्यैः परिषेकश्च शीतलै: ॥ १३ ॥

मुलहटी नीलोफर और शक्कर के चूर्ण को गर्भपात का दर्द होने में दें। और ठंडी चीजों का लेप भी करें।

मागधी यातकी पुष्प प्रियंगु मधुकै: श्रितं
क्षीरं सु शीतलं पीतं गर्भा श्रुति रुजापहं ॥ १४ ॥

पीपल धाय के फूल फूल प्रयंगु (फूल फेन) और महुवे को ठंड़े दूध के साथ पीने से गर्भ गिरने का रोग देर हो जाता है।

क्षीरेण कल्कितैः पीतै विंष शालूक चंदनैः
प्रशाम्यति क्षणादेव गर्भ प्रध्वंस वेदना ॥ १५ ॥

शुद्ध वत्सनाभ विष जायफल और चंदन के कल्क को दूध के साथ पीने से गर्भपात का कष्ट तुरन्त ही दूर हो जाता है।

क्षीरेण गर्भ दोष हृदा पीतः कनक बीज चूर्णः स्यात्
वंध्या चूर्णं गर्भ स्थित्यै दधा सहा पीतः ॥ १६ ॥

शुद्ध धतूरे के बीजों के चूर्ण को दूध के साथ पीने से गर्भ के दोष दूर हो जाते हैं और उसके साथ ही वांझ ककोड़ा (वंध्या कर्कोटका) के चूर्ण को दूध के साथ पीने से गिरता हुआ गर्भ रूक जाता है।

य ऐते विहिता योगा गर्भ व्यापन्निवर्त्तना
तेषां प्रयोगः सर्वेषु मास्सु साधारणः स्मृताः ॥ १७ ॥

जो यह गर्भ के कष्टों को दूर करने वाले प्रयोग कहे गये हैं उनका प्रयोग गर्भ के सभी महिनों में साधारण रूप से करना चाहिये।

पद्मकं चंदनो शीरं तारं सम भागिकं
शालूकं पद्मकं चैव तगरं कुष्टमेवच ॥ १८ ॥

पद्माख चंदन खस और तार (मोती या चांदी की भस्म) बराबर तथा जायफल पद्माख तगर और मीठे कूट को

पद्मकं हस्त पिपलल्या पलाश बीजकं
कंकेली मूल मेरंड कस्य च ॥ १९ ॥

(यहां एक पद घटता है।)

पद्माख गज पीपल पलाश के बीज अशोक मूल और एरंड की मूल को

उत्पलं पद्मकं चैव शर्करा घृत संयुतं
अर्द्धश्लोकसमाप्ता बुद्दिष्टा दश दश क्रमः ॥ २० ॥

नीलोफर पद्माख को शक्कर और घृत को मिलाकर देना चाहिये यह आधे आधे श्लोक की समाप्ति पर क्रम से दस दस कही गई है।

दोगामासेष्वं तं चंन्नीनां गर्भतोदतुद:
पिष्टापि च शीताभि शीरेणा लोडितानि मान्योगान
स्व: स्व: मंत्रै जप्तवानि पाययेद् गर्भिणी मंत्री ॥ २१ ॥

यह एक एक मास के योग है जिनको पीसकर दूध में घोलकर नियम से गर्भणी को देना चाहिये। मंत्री इन मंत्रों को अपने अपने मास के मंत्रों जप जप कर गर्भिणी को पिलावें।

ॐ नमो भगवती विद्युत धारिणी गर्भ स्तंभिनी स्वाहा
प्रथम मासस्य मंत्र ।
ॐ नमो भगवती गर्भाव धारिणी गर्भ विद्युते इमं गर्भ रक्ष रक्ष स्वाहा
द्वितीय मासस्य
ॐ नमो भगवती जंभिके महाजंभिनी अति जंभे इमं गर्भ रक्ष रक्ष स्वाहा
तृतीय मासस्य
ॐ नमो भगवती गर्भधारिणी देव गंधर्व पूजिते जंभे इमं गर्भ रक्ष रक्ष स्वाहा
चतुर्थ मासस्य
ॐ नमो भगवती विकट जंघि जंभिनी सर्व दुष्टनिवारणी ऐहि ऐहि इदं गर्भ रक्ष रक्ष स्वाहा
पंचम मासस्य
ॐ नमो भगवती आं ह्रीं क्रों धरधारिणी वरदे ऐहि ऐहि इदं रक्ष रक्ष स्वाहा
षष्ट मासस्य
ॐ नमो भगवती आं ह्रीं क्रों महा महा माये पेरण भण भण इमं गर्भ रक्ष रक्ष स्वाहा
सप्तम मासस्य
ॐ नमो भगवती विठिके आं ह्रीं क्रों विलि विलि जंभे महाजंभे गर्भ श्राविणी ऐहि ऐहि इदं गर्भ रक्ष रक्ष स्वाहा
अष्टम मासस्य
ॐ नमो भगवती जंभे मोहे महा मोहे स्वेत माल्याभरण भूषिते ह्रीं ह्रीं क्रों क्रों ऐहि ऐहि इमं गर्भ रक्ष रक्ष स्वाहा
नवम मासस्य

ॐ नमो भगवती जंभिनी के संमोहिनी ह्रीं ह्रीं क्रों क्रों धर धर विद्युते विदारिणी ऐहि ऐहि इमं गर्भ रक्ष रक्ष स्वाहा ॥

अतः प्रवक्ष्यामि गर्भ मासे बलिं क्रमात्
यद्य दुक्तं भवे चाहं पूर्वशास्त्रे यथाविधिः ॥ १ ॥

अब क्रम से गर्भ के एक मास की बलि को पूर्व शास्त्रों के अनुसार विधि पूर्वक कहा जाता है।

गर्भिणी प्रथमे मासे यांति विधृतधारिणी
[illegible] सैव कुल्माषं सघृतं दधि ॥ २ ॥

धूप दीपादि संयुक्तं बलिं पात्रे निधायवै
आवर्त्त गर्भिणी सायं पूर्वस्यां दिशि निक्षिपेत् ॥ ३ ॥

गर्भिणी के पास प्रथम मास में विधृतधारिणी नाम की देवी आती है। उसके लिये भात, खीर, कुल्माष (कुलथी) घी, दही, धूप, दीपादि संयुक्तं बलि संध्या समय निम्नलिखित मंत्र को पढ़कर पूर्वदिशा की तरफ रख दें। इस बलि को गर्भिणी पर पहिले उतारा करके मंत्र के साथ फिर रखे।

ॐ नमो भगवती विधृतधारिणी गर्भ स्तंभिनी ह्रीं ह्रीं क्रों क्रों ऐहि ऐहि तिष्ठ तिष्ठ इयं बलिं गृन्ह गृन्ह स्वाहा।

पश्चातां गर्भणीमेनां पूजयेत्पुष्प वृष्टिभिः
एवं पंच दिनं कुर्यात् मंत्री सन्मंत्रं पूर्वकां ॥ ४ ॥

इसके पश्चात उस गर्भिणी का पूजन फूल बरसा कर करे और इस प्रकार अच्छे मंत्रों से मंत्री पांच दिन तक करें।

स्नातः सन्नव वस्त्राभ्यां परिदानो त्तरीय युक्
स्वर्णांगुलिटं संयुक्तः सन कुर्याद् विधि मिमं सुधीः ॥ ५ ॥

फिर वह बुद्धिमान स्नान करके नवीन धोती और दुपट्टे ओढ़कर सोने की अंगूठी पहिने हुए नीचे लिखी हुई विधि को करें।

चतुर्विंशद् यतीन् सम्यग् भोजयेद्दिन सप्तकं
ततः शांति भवे तस्याः प्रजायायुष्मति भवेत् ॥ ६ ॥

चौबीस यतियों को सात दिन तक भलीप्रकार भोजन करावें तब उस मास की विघ्न की शांति होती है। और संतान दीर्घायु होती है।

गर्भाऽवधारिणी देवि द्वितीय मासि गर्भिणी गृहीते
ऽथ बलिं तस्या कुर्वीतैवं यथा विधिः ॥ ७ ॥

दूसरे मास में गर्भावधारिणीदेवी गर्भिणी के पास आती है उसके लिये नीचे लिखे प्रकार से विधि पूर्वक बलि दें।

माषाऽन्नं क्षीरेण भरितं च गुडं मिश्र तिलं तथा
गंध पुष्पं स धूपं च सार्द्धदीपेन मंत्रवित् ॥ ८ ॥

कंसपात्रे समादाये त्रीरावर्त्त्यं बलिं क्रमात्
कृत संमार्ज्जितं देशे पुर मध्ये निशि क्षिपेत् ॥ ९ ॥

उड़द के अन्न का श्वेत भोजन गुड़ तिल चंदन पुष्प और धूप को दीपक सहित कांसी के बर्तन में रखकर इस मंत्र से तीन बार गर्भिणी पर उतार करके नगर के बीच में शुद्ध किये हुए स्थान में रात्री के समय रखे और यह मंत्र बोले।

ॐ नमो गर्भावधारिणी ह्रीं ह्रीं क्रौं क्रौं ऐहि ऐहि गर्भं रक्ष रक्ष इमं बलिं गृन्ह गृन्ह स्वाहा ॥

देवपूजां पुरा कृत्वा मुनीनपि च भोजयेत्
एवं सप्त दिनं कुर्यात् प्रजा चैवं विवर्द्धते ॥ १० ॥

प्रथम देवपूजा करके फिर मुनियों को भोजन करवें इसप्रकार सात दिन तक करने से संतान की वृद्धि होती है।

तृतीये मासि गर्भिण्या गात्रं प्राप्स्यति जृंभिका
प्राप्ते तस्येव बलिं देद्यादेवं सर्वप्रयत्नतः ॥ ११ ॥

गर्भ के तीसरे मास में गर्भिणी के शरीर को जंभिका नाम की देवी ग्रहण करती है तब उसका प्रयत्न करके उस अवसर पर उसके ग्रहण करने पर उसको निम्नलिखित बलि दें।

पंच वर्ण युतं भक्तं पायसं दधिकं तथा
कुल्माषं तिल चूर्णं च सघृतं शर्करान्वितं ॥ १२ ॥

धूप दीपादि गंधाढ्या पात्रे हेमे निधीयतां
त्रिरावर्त्तं बलिं सूरिर्दक्षिणस्यां दिशि क्षिपेत् ॥ १३ ॥

पांचो रंगों का भोजन खीर दही कुलथी-तिल की पिष्टी का चूर्ण घृत और शक्कर सहित धूप दीपक सुगंधित चंदन फूलों सहित इस सब सामग्री को सोने के बर्तन में रखकर गर्भिणी पर तीनबार निम्नलिखित मंत्र पढ़ते हुवे उतारा करके पंडित पुरुष दक्षिण दिशा में इस बलि को रख दें।

ॐ नमो भगवती जंभिके महा जृंभिनी अति जंभे गर्भ रक्षिणी ह्रीं ह्रीं क्रौं क्रौं ऐहि ऐहि इमं बलिं गृन्ह गृन्ह स्वाहा

पूर्वोक्तेन क्रमेणैव कुर्वतान्यत्समंत्रकं
एवं कृते तदा तस्या शांति भवतिनिश्चयः ॥ १४ ॥

इसमें पूर्वोक्त क्रम से ही शेष क्रियाओं को भी मंत्र सहित करने से निश्चय से ही शांति हो जाती है।

चतुर्थे गर्भिणी मासे देवता गर्भ धारिणी
गृन्हीतेद्य बलिं तस्यै शुद्ध भक्तं घृतं दधिं ॥ १५ ॥

माषान्नं धूप दीपाद्यि संयुक्तं बहु शर्करं
पात्रे निधायता येतं त्रिरावर्त्य समंत्रकं ॥ १६ ॥

संध्यायामार्ज्जनं कृत्वा शांति मंत्रं जपेत्सदा
साऽयं सप्तदिनं चैव पूर्वस्यांदिशि निक्षिपेत् ॥ १७ ॥

चौथे मास में गर्भधारिणी नाम की देवी आती है। उसकी बलि शुद्ध भोजन घृत दही उड़द के अन्न की मिठाई धूप दीपक आदि सहित बहुत सी शक्कर को एक बर्तन में रखकर, मंत्र पूर्वक गर्भिणी पर तीन बार उतारा करके, सायंकाल के समय स्नान करके सदाशांति मंत्र का भी जाप करता हुआ सातदिन तक प्रत्येक संध्या को उपरोक्त बलि को पूर्व दिशा में रख दें।

ॐ नमो भगवती गर्भ धारिणी देव गंधर्व पूजिते जृंभे ह्रीं ह्रीं क्रौं क्रौं ऐहि ऐहि इमं बलिं गृन्ह गृन्ह स्वाहा ॥

पूर्वोक्तेन क्रमणैव पूजयित्वाथ गर्भिणी
मुनीनाऽमपि च पूर्वोक्तान भोजयेन्मंत्रवित्सुधीः ॥ १८ ॥

फिर पूर्वोक्त क्रम से पंडित पुरुष गर्भिणी की पूजा करता हुआ पूर्वोक्त मुनियों को भोजन करावें।

देवि विकट जंघा सा गृन्हीते मासि पंचमे
प्रजावतिं तदा तस्या क्लेशोपि बहुधा भवेत् ॥ १९ ॥

ऊदवो घाटसं चैव घड़ मार्षं राथा गुडं
कुल्माषं घृत संयुक्तं धूप दीपादिमिश्रितं ॥ २० ॥

पात्रे निधाय सौवर्णे त्रिरावर्त्यं बलिं क्रमात्
निक्षिपेत्पश्चिमाद्यांतं दिशिं सायं समंत्रकं ॥ २१ ॥

पाँचवें मास में विकट जंघा नाम की देवी गर्भिनी को ग्रासित करती है। और उससमय उसको कष्ट भी बहुत अधिक होता है। १९ भात, खीर, पके हुए उड़द, गुड़, कुलथी, घी, धूप, दीपक आदि मिलाकर एक सोने के बर्तन में रखकर गर्भणी पर मंत्र को बोलते हुवे तीनबार उतारा करके पश्चिम दिशा में संध्या समय रख दें।

ॐ नमो भगवति विकट जंघे जृंभिनी सर्वदुष्ट निवारणी ह्रीं ह्रीं क्रों क्रों ऐंहि ऐंहि इमं बलिं गृन्ह गृन्ह स्वाहा ॥

स्नात्वा नूतन वस्त्राभ्यां परिधानोत्तरीय युक्
मुद्रांलंकृतं हस्तः सन् कुर्वतैवं यथा विधिः ॥ २२ ॥

एवं भूतः स्वयं मंत्री विधीयादिन सप्तकं
बलिं शांति भवेत् तस्या मुनीनपि च भोजयेत् ॥ २३ ॥

स्नान करके नई धोती और चादर पहनकर हाथ में माला लिये हुये इस विधि को पूर्ण करें। मंत्री इस प्रकार बराबर सात दिन तक यह विधि करे तथा बलिं दें। तो विघ्न शांत होते है तथा मुनियों को भी भोजन करायें।

षणमासे गर्भिणीं याति देवता दर धारिणी
जायंते विक्रिया तस्याः प्रतिकारं करोत्यितेः ॥ २४ ॥

पंच वर्णयुतं भक्षं कृसरं माष चूर्णकं
पक्वाम्र फलं संयुक्तं धूप दीपादि शोभितं ॥ २५ ॥

मार्त्तं पात्रे समादाय कदली पत्र शोभितं
त्रिरावर्त्यं बलिं पश्चात्पश्चिमाद्यां दिशि क्षिपेत् ॥ २६ ॥

गर्भिणी के पास छटे मास में दर धारिणी नाम की देवी आती है वह भी अपने विकार उत्पन्न करती है उसका प्रतिकार इस प्रकार करे । पाँच वर्ण को भोजन कृसर (तल चांवल मिले हुये) उड़द का चूर्ण पका हुआ आम और धूप दीपक सहित शोभित बलि को। मिट्टी के बर्तन में केले का पत्ता बिछाकर रखे और गर्भिणी पर मंत्र बोलते हुए तीन बार उतार कर इस बलि को पश्चिम दिशा में रखे।

ॐ नमो भगवती दर धारिणी ह्रीं ह्रीं क्रों क्रों एहि एहि वरदे इमं बलिं गृन्ह गृन्ह स्वाहा ॥

पूर्वोक्तेन क्रमेणैव कुर्यादऽन्यत् समंत्रकं
एवं सप्तदिनं कुर्यान्मुनीनपि च भोजयेत् ॥ २७ ॥

शेष विधि को पूर्वोक्त क्रम से ही मंत्र पूर्वक सात दिन तक करें और मुनियों को भोजन करावें।

जंभिनी देवता याति सप्तमे मासिं गर्भणीं
ततस्तस्या विकारं च विदधाति न संशय: ॥ २८ ॥

सातवें मास में गर्भिणी के पास जंभिनी नाम की देवी आती है और निसंदेह अधिक विकार पैदा करती है।

ऊदनं दधिकं चैव शुद्ध भक्तं घृतान्वितं
कुल्माषं तिल चूर्ण च सु पक्वाम्रफलान्वितं ॥ २९ ॥

गंध पुष्पादि धूपाढ्या बलिं पात्रे निधायवै
त्रिरावर्त्य जपेन्मंत्री आग्नेयां दिशि निक्षिपेत् ॥ ३० ॥

भात, दही, घी, मिला हुआ शुद्ध भोजन, कुलथी तिलों का चूर्ण पके आम फल सहित गंध पुष्प आदि तथा धूप युक्त बलि को एक बर्तन में रखकर गर्भिणी पर मंत्र बोलते हुये तीन बार उतार कर अग्निकोण दिशा में रख दें।

ॐ नमो भगवती जंभेनिके महामाये रण रण भण भण ह्रीं ह्रीं क्रौं क्रौं ऐहि ऐहि गर्भं रक्ष रक्ष इमं बलिं गृह्न गृह्न स्वाहा।

पूर्वोक्तं क्रमत: सूरि: पूजयेतां प्रजावतीं
मुनिनपि यथा शक्ति भोजये द्दिन सप्तकं ॥ ३१ ॥

मंत्री पूर्वोक्तं क्रम से ही सात दिन तक गर्भिणी का पूजन करे और मुनियों को भी अपनी शक्ति अनुसार सात दिन तक भोजन करावें।

गर्भिणीमष्टमे मासे विडिका याति देवता
पक्व माष गुडान्नं च शुद्ध भक्तं घृतान्वितं ॥ ३२ ॥

कुल्माषं कृसरं चाथ गंध पुष्पावऽलंकृतं
निधाय रजत पात्रे बलिमावर्त्य पूर्ववत् ॥ ३३ ॥

दिशि दक्षिण पूर्वस्यां सांयकालेऽथ निक्षिपेत्
शेषमन्यत् क्रमेणैव कारयेत् सकलं गुरु ॥ ३४ ॥

आठवें मास में विछिका नाम की देवी गर्भिणी के पास आती है। उसके लिये पके हुये उड़द गुड़ अन्न घृत सहित शुद्ध भोजन कुलत्थी केसर चन्दन और पुष्प आदि से सजी हुई बली को चांदी के बर्तन में रखकर, पूर्व की तरह दक्षिण पूर्व दिशा में अग्निकोण में सायंकाल के समय गर्भिणी पर मंत्र बोलते हुए तीन बार उतारा करके रख दें। विद्वान मंत्री शेष विधि को क्रम पूर्वक पूर्ण करें।

ॐ नमो भगवती विलि विलि विछिके महाजंभे गर्भ शांतिणी ह्रीं ह्रीं क्रौं क्रौं ऐहि ऐहि गर्भं रक्ष रक्ष इमं बलिं गृन्ह गृन्ह स्वाहा॥

गर्भिणी नवमे मासि जंभा प्रविश्यति ध्रुवं
गुड क्षीर समायुक्तं पंच भक्षं घृतान्वितं ॥ ३५ ॥

तिल माषस्य चूर्णं च धूप दीपादि संयुतं
पात्रे ताम्रे समादाय वलिमावर्त्यं पूर्ववत् ॥ ३६ ॥

दिश्येवोच्चोत्तरे पूर्वस्यां क्षिपेद् वलि मनाकुलः
ततः पूर्व क्रमेणैव च कुर्यादऽन्यशेषकं ॥ ३७ ॥

नवमें मास में जंभा देवी गर्भिणी के पास आती है। उसके लिये गुड़, दूध, घी, सहित पाँचो प्रकार के भोजन, तिल, उड़द का चूर्ण, धूप और दीपक सहित बली को तांबे के बर्तन में रखकर पहिले के सामन गर्भिणी पर तीनबार मंत्र बोलते हुए उतारकर और निश्चित होकर उत्तर पूर्व के अर्थात ईशान कोण में बलि को रख दें। तथा शेष विधि को पूर्वोक्त क्रम से पूर्ण करें।

ॐ नमो भगवति जंभे मोहे महामोहे श्वेत माल्या भरण भूषिते ह्रीं ह्रीं क्रौं क्रौं ऐहि ऐहि इमं गर्भं रक्ष रक्ष इदं बलि गृह्ण गृह्ण स्वाहा॥

गर्भिणी दशमे मासे गृन्हीते जंभिनी गृही
शाल्यन्नं च पयोमुद्गपक्व भाज्यान्वितं तथा ॥ ३९ ॥

कदली पनसाम्राणं फलै रिद्धं सशर्करं
सुगंधदीप धूपादि मिश्रितं बलि मुत्तमं ॥ ४० ॥

हेम पात्रे निधायैतं बलि मावर्त्य पूर्ववत्
शांति मंत्रं जपन् मंत्री पूर्वस्यां दिशि निक्षिपेत् ॥ ४१ ॥

दसवें मास में गर्भिणी के पास जंभिनी नाम की देवी आती है। उसके लिये शाली चावलों का अन्न, (तुश सहित) दूध पकी हुई मूँग, घृत सहित केला, कटहल और आम के फल शक्कर सहित दीपक सुगंधित धूप आदि युक्त उत्तम बलि को सोने के बर्तन में रखकर पहिले के समान गर्भिणी पर तीन बार मंत्र पूर्वक उतारकर शांति मंत्र जपते हुये पूर्वदिशा में रख दें।

ॐ नमो भगवती जंभिनि के संमोहिनी धर धर विदारय विदारय विघ्नते विदारिणी ह्रीं ह्रीं क्रौं क्रौं ऐहि ऐहि गर्भ रक्ष रक्ष इमं बलि गृन्ह गृह्ण॥

मासेतु पंचमे धार्या गर्भिण्या स्नान शुद्धया
गर्भ रक्षा करी हैमी संकुला विधिना कृता ॥ १ ॥

सर्वशांति विधानेन स्नानं कृत्वा प्रयत्नतः
गर्भिण्या धारणीयां तां वक्ष्येऽहं संकुलां क्रमात् ॥ २ ॥

अपमृत्युंजयं यंत्रं सर्वशांति करं तथा
रक्षा यंत्रं च गुलिकां कृत्वा तत् त्रिक्रमेयच ॥ ३ ॥

पांचवे मास में गर्भिणी स्नान से परिपत्र होकर विधि पूर्वक बनाई हुई गर्भ की रक्षा करने वाली सोने की शंकुला पहिन सर्वशांति विधान के द्वारा प्रयत्नपूर्वक स्नान करके गर्भिणी उस शंकुला को धारण करे। जिसका अब क्रम पूर्वक वर्णन किया जाता है।

पहिले अपमृत्यु यंत्र का सब प्रकार शांति करने वाले शांति यंत्र एवं रक्षा यंत्र इन तीनों की चांदी में बनवाकर पास में रखकर धारण करें।

शंख चक्र धनु बींण खड्गिशूल परश्वधान
हलं चक्रं च मूशलं स्वस्ति रेखान् हिरन् मयान् ॥ ४ ॥

शंख चक्र धनुष बाण व तलवार शूल फरसा हल चक्र मूशल और सोने के बने हुये स्वस्तिक की रेखाओं को....

नवरत्नानि शार्दूल करजं च तथार्तिका
पक्षियातिन्योर्द्विवा भीत चकोरयोः ॥ ५ ॥

अहिं सिवानां नुंडाग्रं नखं शिशि शिखामपि
कृष्णाऽश्च कपि मार्जार नकुल ग्राम शूकरान् ॥ ६ ॥

तथा नवरत्न व्याघ्र नख धनुष की कोटि उल्लू और चकोर के स्वयं गिरे हुवे पंख, सर्प और गीदड़ी के मुख के अग्रभाग अर्थात दांत, खरगोस और मोर के नख काला घोड़ा बन्दर बिलाव न्योला और गांव के सूकरी का ।

अहत्वो पात्र पद्मं कंटकं काकोटिकंटकं
वधका अस्त्रं तथा गर्भ वराटकमपि प्रियं ॥ ७ ॥

वधेकास्त्रं तथा गर्भ वराट कमपि प्रियं
आरोहा कर चूडाख्य विषकंदामणिनपि ॥ ८ ॥

बिना मारे हुये अर्थात् स्वयं गिरे हुए उनकी झाढे मच्छी की हड्डी कोटिक चक्र मालती के फूल के कांटे घात करने के अस्त्रों तथा कोड़ों के अन्दर का भाग बहुत अधिक चढ़ने वाला विष और पशुओं के बांधने की रस्सी

निबंकांजी रकं कोल बीजास्थीनीत्य मुनुकमात
सौवर्ण शंकुलाया स्ते बोधयित्वा सुयोजयेत् ॥ ९ ॥

नींबू जीरा झाडी बोर की गुठली और हड्डियों के क्रम को लेकर रखे और शंकुला बनवा लें।

ततस्तान्यशुद्धाबुं कुंभे दिनत्रयं
मंत्रयेद्विधिना शांति मंत्रे मंत्री विचक्षणः ॥ १० ॥

तब उन सब वस्तुओं को शुद्ध जल से भरे हुये घड़ में रखकर चतुर मंत्री विधिपूर्वक शांति मंत्र तीन दिन तक पढ़े।

आचार्यो नव वस्त्रा भ्यां परिधानो त्तरीय भृत
मुद्रादिभूषितः प्रीतः सकलीकृत विग्रहः ॥ ११ ॥

उससमय आचार्य नवीन धोती और चादर पहिन कर अलंकार धारण करके प्रेम से सकली करण क्रिया को करें।

ततः शुद्धां समायाय पुष्पाक्षत सुशोभितो
हेमे पात्रे क्षिपेत्सम्यक सर्व मंगल संयुते ॥ १२ ॥

तब उस समय शुद्ध द्रव्य को लाकर पुष्प अक्षत से सुशोभित सब प्रकार के मंगल से युक्त सुंदर सोने के बर्तन में रखे।

ततो विमल नक्षत्रे शुभे राशीव च स्थिते
माहेन्द्र मंडलं चूर्णः कृत्वा कोणेषु निक्षिपेत् ॥ १३ ॥

तब अच्छे नक्षत्र की अच्छी राशी में आने पर चूर्णो से माहेन्द्र मंडल बनाकर उसके कोणों में निम्नलिखित वस्तुएं रखे।

पूर्ण कुंभान् सुवर्णादि लोह रत्नादि गर्भितान्
नव वस्त्र वृत गलान् सप्रदीपान् स शालिकान् ॥ १४ ॥

सोने आदि लोह धातुओं और रत्न भरे हुए गले पर नये कपड़े से लिपटे हुवे ऊपर धान और दीपक रखे हुये घड़ों को माहेन्द्रमंडल के कोणों में रखे।

मध्ये निधाय येत् पीठं शुद्ध वस्त्रयुगावृतं
तत्रासयेल्लसत क्षौमां सर्वाभरणभूषितां
सर्वमंगल संपन्नप्राग्मुखीं गर्भिणी क्रमात् ॥ १५ ॥

उस मंडल के बीच में शुद्ध वस्त्रों से लिपटे हुवे आसन रखे उसके ऊपर शोभित वस्त्र पहिने हुए सब आभूषणों से सजी हुई सब प्रकार के मंगलों से युक्त गर्भिणी को बिठावें।

ततः पंच बलिं दद्यात् लाजा पूपादि मिश्रितं
चतुर्दिक्षु क्रमैणैव पुर मध्ये तथैव च ॥ १६ ॥

तब क्रम से चारों दिशाओं में और नगर के बीच में धान की खील और पुवें आदि मिलाकर पांच बलि दें।

तत्रं तं रक्तं वर्णाढ्यं त्रिरावर्त्य बलिं क्रमात्
पूवस्यां दिशि सूर्यस्य गृहमध्ये निवेशयेत् ॥ १७ ॥

तब लाल रंग की तीन बार गर्भिणी पर उतारकर पूर्व दिशा में सूर्य के गृह में रखे।

कृष्णवर्ण बलिं तद्वत क्षेत्र पालस्य मंदिरे।
दक्षिण स्यां दिशि क्षिप्रं क्षिपेत्सम्यग्यथा विधि ॥ १८ ॥

फिर काले रंग की बलि को उसी प्रकार विधिपूर्वक दक्षिण दिशा में क्षेत्रपाल के मंदिर में रखे।

प्रतीच्यां तु तथा कुर्यात् परीतं यक्ष धामनि
पीतं बलि मुदीच्यांतु निदध्या ध्रुव कूलके ॥ १९ ॥

उसीप्रकार पश्चिम दिशा में यक्ष के मंदिर में और उत्तर दिशा में ध्रुव के मंदिर में पीली बलि को विधि पूर्वक रखे।

स्थापयेत् रक्तं चूर्णतं सुसंध्यै पुरमध्यमे
एवं बलि विधानेन तर्पयित्वा महाग्रहान् ॥ २० ॥

लाल चूर्ण की बलि की शांति के वास्ते नगर के बीच में रखे इसप्रकार बली के विधान से महाग्रहों को संतुष्ट करें।

आचार्यः स्वयंमादाय शंकुला सार्वकार्मिकां
सन्मंगल द्वयोयुक्तं मध्यमं भुजयो स्तथा ॥ २१ ॥

आचार्य सब काम करने वाली शंकुला को स्वयं लेकर अच्छे मांगलिक मंगल स्तोत्र पढ़ता हुआ दोनों भुजाओं के बीच के भाग में।

आनाभि लंबयेन्मंत्रमऽपराजितकं जपन्
जिन गंधोदकं शांति मंत्रै सिंचन यथाविधि ॥ २२ ॥

नाभितक लटकाकर अपराजित मंत्र को जपता हुआ और उसको जिनेन्द्रभगवान के गंधोदक और शांति के मंत्रों से विधि पूर्वक सींचता हुआ।

दर्भादिभिः प्रयुंजीत माहिषं सुफलपदं
तत्राचार्यं सत्कुर्यात् हेम वस्त्रादिभि ध्रुवं ॥ २३ ॥

दाभ आदि से अच्छे फल को देने वाले भैंस के दूध का प्रयोग करावें तब आचार्य का निश्चय से स्वर्ण वस्त्र आदि से सत्कार करे।

प्रीतेहि तस्मिन तत्कर्म सर्वं च सफलं भवेत् ॥ २४ ॥

क्योंकि उसके प्रसन्न होने पर सब कार्य सफल हो जाते हैं।

एवं पुण्यवतीं नित्यंबिभर्ति वसु शंकुलां
सर्व मंत्रोषधापिष्टां सर्वग्रह विनाशिनीं ॥ २५ ॥

इसप्रकार पुण्यवाली सब मंत्र और औषधियों से युक्त तथा सब ग्रहों को नष्ट करने वाली सोने की शंकुला को गर्भिणी धारण करती है।

तस्या भूतपिशाचादि देवाच्चोरादि मानुषात्
करिशार्दूल सिंहादि मृगान् सर्पानितस्तथा ॥ २६ ॥

उसके धारण करने से गर्भिणी को भूत पिशाच आदि देवों चोर आदि मनुष्यों हाथी बाघ सिंह सर्प आदि पशुओं तथा उसमें

जंगमात्स्थावराच्चापि विषादऽग्नि जलादितः
महाभूताद्भयं नास्ति गर्भ व्यापादिका स्तथा ॥ २७ ॥

जंगम या स्थावर विष से अग्नि या जल से तथा अन्य गर्भ को नष्ट करने वाले महान भूतों से भय नहीं रहता है।

दोषान् नश्यंति रोगाश्च सर्वे नित्यं न संशयः
निराबाधं प्रसूते च प्रजा चायुष्मती भवेत् ॥ २८ ॥

उसके गर्भ तथा गर्भिणी के सब दोष और रोग निस्संदेह नष्ट हो जाते हैं और यह बिना किसी बाधा के दीर्घायु वाली संतान उत्पन्न करती है।

तस्मात् सर्वं प्रयत्नेन् विधेयात् शंकुला विधिं ॥ २९ ॥

इस वास्ते सब प्रकार के प्रयत्न से शंकुला की विधि को अवश्य करें।

॥ सूतिका ग्रह रक्षा विधान ॥

कल्पिते सूतिका गेहे मध्ये संमार्ज्य गोमयैः
माहेन्द्र मंडलं कृत्वा शालि पूगान् प्रसार्य च ॥ १ ॥

जिस घर को सूतिका ग्रह बनाना हो उस कल्पित सूतिका ग्रह को जमीन पर न गिरे हुये गोबर से लीपकर तथा माहेन्द्र मंडल बनाकर धान के ढेर को बिखेर कर यहां निम्नप्रकार के घटों की स्थापना करें।

श्वेत सूत्रावृतान् शुद्धान् स्वच्छांबु परिपूरितान्
सप्तलोहाष्ट वृक्ष त्वक् नव रत्नादि गर्भितान् ॥ २ ॥

श्वेत धागे से लिपटे हुये शुद्ध स्वच्छ जल से भरे हुये सातों धातु लोहा संयुक्त तथा आठों वृक्षों की छाल और नव रत्नों से भरे हुये।

नववस्त्रावृत गलान् बीज पूरार्पितान् नान
साक्षतान् गंधपुष्पान्न धूप दीपादि पूजितान् ॥ ३ ॥

गले पर नया वस्त्र लपेटे हुए मुख पर विजोरा रखे हुए अक्षत पुष्प नैवेद्य धूप दीपक आदि से पूजे हुवे।

दश कुंभान् निधायैतां शांति मंत्रेण मंत्रयेत्
एक रात्रं त्रिरात्रं वा दश दिक्षु यथाक्रमं ॥ ४ ॥

दस घड़ों को रखकर उनपर एक रात्रि तीन रात्री या दश रात्री तक क्रम से शांति मंत्र से अभिमंत्रित किये हुए।

तद्दिगात् घटांभोभिः सिंच न्मंत्रेण मंत्रवित्
दिशां बंधं च कुर्वीत रक्षा दिक्षु विनिक्षिपेत् ॥ ५ ॥

इन दिशाओं में रखे हुए घड़ों को चतुर मंत्री मंत्रपूर्वक जल से सींचता हुआ सब दिशाओं में रक्षा करने के लिये दशों दिशाओं का बंधन करे।

एवं रक्षान्वितं गेहं त्यक्त दुष्टग्रहादिकं
गर्भिणीं प्रविशेन्मासि दशमें सुख सूतये ॥ ६ ॥

इसप्रकार रक्षा किये हुए दुष्ट ग्रह हटाये हुए उस घर में गर्भिणी को सरलता से बच्चा उत्पन्न कराने के लिये दसवें मास में लावें।

इति सूतिका ग्रह रक्षाविधानं

दिशि विदिशि तदु भयांतर्वर्त्तिन्यादिशतु पृच्छकं
मंत्री क्रमेशो बालं बाला नपुंसकं पूर्ण गर्भिण्याः ॥ १ ॥

यदि कोई पुरुष गर्भस्थ संतान का फल पूछने आवे तो यदि यह पूछने वाला दिशाओं की तरफ मुख करके खड़ा हो तो लड़का होगा। यदि यह विदिशाओं की तरफ मुख किये हुए हो तो लड़की होगी। यदि यह दिशा और विदिशा के बीच में मुख किये हुए हो तो नपुंसक संतान होगी ऐसा बतावे-

विलोमोच्चारितो नाभिमंत्रितं तिलजन्मवत्
मृत्युंजयेन त्वक् सेको मूर्द्धा कृच्छेणासावयेत ॥ २ ॥

सौ से एक तक संख्याओं को उल्टा बोलने से जन्म के समय तिल को अभिमंत्रित मृत्युंजय मंत्र से करके इसके द्वारा शरीर की खाल का सेक करने से गर्भ का कष्ट दूर हो जाता है।

ॐ फणि फणि उत्पदहथ मुंच मुंच ठः ठः

अनेन अयुत जप्तेन यक्षी मंत्रेण मंत्रितं
औषधं सफलं वा स्यात् पीतः सद्यः प्रसूयते ॥ ३ ॥

इस यक्षी मंत्र को दसहजार बार जप करके इससे अभिमंत्रित की हुई औषधि को पिलाने से तुरन्त बच्चा हो जाता है।

सिंचन गर्भं संवैश्म्ये सलिलै स्तेन मंत्रितैः
तन्मंत्रेण च निर्यांति विषमाः शल्य कंटकाः ॥ ४ ॥

इस मंत्र से अभिमंत्रित गरम जल से गर्भ को सींचने से विषम कष्ट तुरन्त दूर हो जाता है

क्षां क्षीं क्षूं क्षौं क्षः

एतेन मंत्रितं पीतं जल पूतेन वात्मना
सुख प्रसूतये तद्वा भवेन् मंत्रितौषधं ॥ ५ ॥

इस मंत्र से अभिमंत्रित जल अथवा औषधि को पवित्र मनसे पीने से आसानी से बच्चा हो जाता है।

ॐ एरंड वने काका गंगा तीरे समु स्थितादूतः
पिबतु पानीयं विशल्या भवतु गर्भणी स्वाहा ॥ ६ ॥

एतन्मंत्रित संभोरुद्धश्वासौद्रमस्य दूतस्य करे
संपुटोदरगतं कृत्वा मंत्रं जपेन्मंत्री ॥ ७ ॥

श्वास निरोध व्याकुल देहो यावत् सत्तज्जलं मुंचेत्
सा प्रसवे वेदनार्त्ता निर्गत शल्या भवे तावत् ॥ ८ ॥

प्रसव वेदना का समाचार लाने वाले दूत की अंजुली में जल देकर उसे श्वास रोकने की आज्ञा देकर मंत्री उपरोक्त मंत्र को जपना आरंभ कर देवे।

श्वास को रोकने से व्याकुल शरीर वाला वह दूत जितनी देर में जल को भूमि में गिरा दे उतनी देर में ही गर्भनी का प्रसव का कष्ट दूर हो जाता है।

भस्मना सूतिका नाम तत्व भुपूर मध्यगं
लिखितं दर्शितं सद्यः फल कादौ प्रसूतया ॥ ९ ॥

भस्म (राख) से गर्भिणी के नाम को लिखकर उसके चारों तरफ ह्रीं और फिर पृथ्वी मंडल लिखकर गर्भिणी को दिखावे तो तुरन्त ही बच्चा हो जाता है।

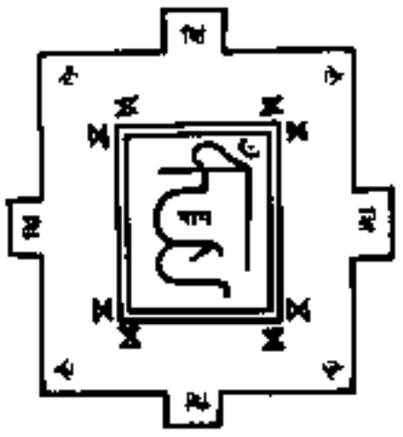

मंगल हर नयनो दधि नवद्वि सप्त ऋतुरूपं मदनशराः
कोष्टेषु नव सु लिखिता घट वदने खटिकया प्रदक्षिणतः ॥ ८ ॥

अभ्यर्च्य गंध पुष्पैः प्रसूतिकायाः पुरः
स्थाप्य दृष्ट मिदं सूतिका चक्रं तस्या प्रसूत्यैस्यात् ॥ ९ ॥

८	३	४
९	५	€
६	७	२

मंगल ८ हरनयन ३ उदधि ४ नव ९ द्वि २ सप्त ७ ऋतु ६ रूप १ मदन शरा ५मंगल ८ हरनयन शिवजी के नेत्र ३ समुद्र ४ नव ९ द्वि २ सप्तसात ऋतु ६ रूप १ मदन शरा काम के बाण ५ को खडिया से क्रम पूर्वक मिट्टी के घड़े पर चारों तरफ नौं कोठों में खड़िया से लिखे।
इस मंत्र को गंध पुष्प धूपादि से पूजकर गर्भिनी के प्रसूति गृह में स्थापित कर दें । इस यंत्र को देखते ही गर्भिणी के बच्चा हो जाता है।

सप्तांग शशि भृत् पूर्व रूद्र पंच चतुस्तिथीन्
ऋतु रंध्र कला नेत्र विश्वाऽष्ट दश पावकान् ॥ १० ॥

लिखे त्वटिकया चक्रं कलशास्य प्रदक्षिणं
दृष्टं स वज्र रेखाग्रं तद्गर्भिण्याः प्रसूतये ॥ ११ ॥

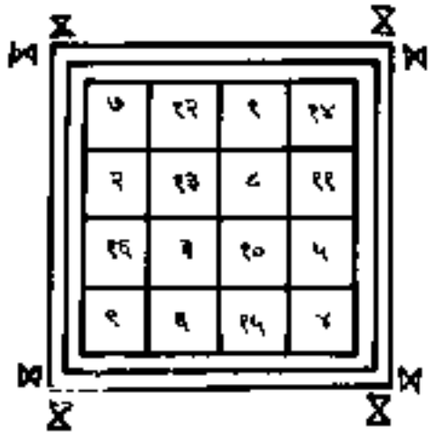

सप्त ७ अंग १२ शशि भूत १ पूर्व १४ रुद्र ११ पंच ५ चतु ४ तिथीन १५ ऋतु ६ रंध्र ९ कला १६ नेत्र २ विश्व १३ अष्ट ८ दश १० पावकान ३ अग्नि यंत्र के आकार में मिट्टी के कलश के चारों तरफ खडिया से लिखे इस यंत्र को देखते ही (जिसके वज्र रेखा भी हो यंत्र के बाहर) तुरन्त ही बद्धा हो जाता है इस यंत्र की धूप दीप अक्षतादि से पूजन करना जरूरी है।

इदमेवावृतं चक्रं सव्ये घंटादि विधया
लिखितं स्तंभयेत् सर्वान् उपसर्गा न्मसूरिका ॥ १२ ॥

या इसी यंत्र के चारों तरफ बायें से घंटाकर्ण विद्या मंत्र लिखने से सबप्रकार के उपसर्ग मसूरिका आदि कष्टों का स्तंभन होता है।

घंटादि विद्या

ॐ घंटा कर्णमहावीर सर्वभूते हिते रत
उपसर्ग भयं घोरं रक्ष रक्ष महाबल स्वाहा ॥ १३ ॥

घंटादि विद्या

योगेश्वराय गोत्रे अमृताय नमः
ऐषो अयुत जपात् सिद्धो रौद्र स्वाल दलादिषु
विलोम लिखितो मूर्द्धगतः सधः प्रसूति कृत ॥ १४ ॥

यह मंत्र दस हजार जपने से सिद्ध होता है इस मंत्र को रौद्र वाले पत्ते आदि पर उलटा लिखकर गर्भिनी के सिरपर रखने से तुरन्त ही प्रसव हो जाता है।

करं कतां प्रयत्नेन गो मूर्द्धपरिवेशिन:
स्थापितेन भवेन्मक्षु गर्भ शल्यं विनिर्गम: ॥ १५ ॥

हड्डी मात्र बाकी रहे हुए गो के मस्तक को समीप रखने से गर्भशूल तुरंत दूर हो जाता है ।

मूल गृहीतमत्वातं प्रपुन्नाट मयो मुखं दर्शितं सध:
ऐवस्यादऽअनायासा त्प्रसूतयै ॥ १६ ॥

पंवाड को जड़ से उखाड़ कर नीचे को मुखवाली करके गर्भिनी को दूर दिखाने से तुरन्त ही प्रसव हो जाता है।

महिषी सर्पिषा युक्तो यष्टी मलय नौ पिबेत्
अंगना गूढ़ गर्भाया सा विशल्या भवेत् ध्रुवं ॥ १७ ॥

भैंस के घी के साथ मिलाकर पिलाये हुए मुलेहेटी और चंदन गूढ़ गर्भ वाली का भी तुरन्त ही कष्ट दूर कर देती है।

कवोष्णे महिषी क्षीरे साष्टाशाज्ये प्रसूतये
यष्टि चंदनयो कल्कं पलार्द्ध मिति पिवेत् ॥ १८ ॥

थोड़े गरम भैंस के दूध में आठवां अंश घृत और चार तोले मुलहटी और चंदन के कल्क को मिलाकर पीयें।

पत्रं फलं च पलाशं पीतं दुग्धेन कल्कितं
प्रसूति वेदना क्रांतां पाययेत् वेदना पहं ॥ १९ ॥

पलाश (ढ़ाक) के पत्ते और फल के कल्क को दूध के साथ पीने से गर्भिणी का कष्ट तुरन्त ही दूर हो जाता है।

हिंगु सैधंव यो: पीतं क्षाया क्वथितय रजं
स्त्रिय: प्रसूतयेत्सद्य: प्रसूतव्यसना तुरां ॥ २० ॥

हींग सेंधव नमक और खारी के नमक को काथ करके पीने से स्त्री के प्रसूति का कष्ट दूर होकर शीघ्र ही प्रसव हो जाता है ।

भूतेंक्षु कांड स्व रसो नालिकेर फलांबुच
अकृथं जननं पीतं कुर्वते अविलंबतं ॥ २१ ॥

लिसोड़े (ल्हेसवे) गन्ने का रस नारियल के फल का पानी पीने से प्रसूति का कष्ट बिना विलंब किये अर्थात तुरन्त ही दूर हो जाता है।

वलेन्द्र वारुण्यो रंड वृश्चिकाली महोषधैः
सिद्धा यवागु पीतास्यान्मूढ गर्भ प्रति क्रियां ॥ २२ ॥

खरेंटी गाडर दूब एरंड और विछवा घास को सिद्ध करके इनका यवागु पीने से छिपाया हुआ गर्भ भी प्रकट होकर प्रसव हो जाता है।

क्षुद्र विदारया कल्कं जग्धं सद्यः
सूतिं नार्याः कुर्यात् स्वरसेन
इक्षु पुंरवायां कृतान्मधु करस्य वा
मस्याज्जस्या स्त्रीणां गूढ गर्भ समुद्भवं ॥ २३ ॥

क्षुद्र विदारी कन्द के कल्क को खाने से स्त्री को तुरन्त प्रसव हो जाता है।
इक्षु पंखा (सरफोंका) के रस से और मधुकर (अपामार्ग) के बनाये हुए नस्य को सूंघने से गूढ गर्भ का भय तुरन्त दूर हो जाता है।

वासा पत्रांबुना पिष्टावासा मूल त्वगस्थि ना
नाभेऽरधो भवेत स्त्रीणां प्रसूत्यै वेदनां बिना ॥ २४ ॥

अरडूसे के पत्ते के जल से अरडूसे की जड़ छाल और लकड़ी को पीसकर स्त्री की नाभि के नीचे लगाने से स्त्रियों को बिना कष्ट पाये ही प्रसव हो जाता है।

वारि पिष्टं विशाला मूलभाज्येन संयुतं
अधोमुखमधो नाभिलिप्तं सद्यः प्रसूतिकृत् ॥ २५ ॥

इंद्रायण की जड़ को पानी नें पीसकर इसमें घृत मिलाकर नीचे को मुख किये हुए नाभि के नीचे लेप करने से सरलता से प्रसव हो जाता है।

तुव्यां वा लांगलिक्या च मूलं तोयेन पेषितं
अधो नाभेरधो लिप्तं सुख प्रसव मावहे ॥ २६ ॥

कड़वी तुंबी या लांगलिकी जड़ (कलिहारी की जड़) को पानी से पीसकर नाभि के नीचे लेप करने से सरलता से प्रसव हो जाता है।

पाठा परूष हलिनी का कान काके शिफा पृथक्
पिष्टा नाभेरऽधो लिप्ता गर्भ निःक्रमणप्रदा ॥ २७ ॥

पाठा लता फालसे हलिनी (लांगली) मकोय काकोशिफा (हुलहुल) सूरजमुखी वायस जघा) की जटा को पृथक पृथक पीसकर नाभि के नीचे लेप करने से प्रसव हो जाता है।

पिष्टं गज मल छत्रं पय्याण छद एव वा।
अधो नाभेः समा लिप्तम दुःखेन प्रसावयेत् ॥ २८ ॥

हाथी की लीद छात्र (छितोना) पयस्या (क्षीर काकोली) के पत्रों को पीसकर नाभी के नीचे लेप करने से बिना कष्ट के प्रसव हो जाता है।

रुजा फलेन्दु सिद्धार्थ शालिमूले विलेपनं
कल्किते राज पत्रेण गर्भ सपदि पातयेत् ॥ २९ ॥

रुजा फल कपूर सफेद सरसों और चावलों की जड़ राज पत्र राई के साथ कल्क बनाकर लेप करने से शीघ्र ही गर्भ गिर जाता है।

तितं सवसला मूलं लिपंत्सलिलं कल्कितं
परितो योनिमेतेन सद्यः सूति रुदाहृता ॥ ३० ॥

तिल वसलामूल (पोई की जड़ उपोदिकी) के सहित जल में बनाये हुए कल्क को योनि के चारों तरफ लेप करने से शीघ्र ही प्रसव हो जाता है।

स्वर सगर्भ सं संगे विशालाया निवेशयेत्
अंतर्योनि तदेव स्याद् गर्भ शल्या विनिर्गमः ॥ ३१ ॥

इंद्रायण के स्वरस को योनि के अन्दर डालने से गर्भ का कष्ट तुरन्त ही दूर हो जाता है।

पक्व तिलोद्भवं स्व्यार्या विशल्या स्वरसेन च
हस्ति गर्भो परा संगौ गुह्य नाभि करांघ्रिगं ॥ ३२ ॥

कलिहारी के रस तथा तिल के तेल में पके हुए हस्तिकंद (हस्तकंद) और अपरासंग की नाभियोनि हाथ और पांव के लगाने से प्रसव हो जाता है।

रक्तिकायाः शिफाश्वेत गवाक्ष्या वा समर्पिता
मुखे गर्भाशय स्याशुगर्भ पाताय जायते ॥ ३३ ॥

रक्तिका (गुंजा की जटा) सफेद गवाक्षी (गरडुबे) को गर्भाशय के मुख पर रखने से शीघ्र ही गर्भ गिर जाता है।

प्रपुन्नाट शिफां किंचित क्षुणा यौनौयुताभवेत्
क्षुणा सतैला वर्षाभू शिफा वा सुख सूतये ॥ ३४ ॥

पवांड की जड़ तथा क्षुणक (अरीठा) को योनि में रखने से अथवा क्षुणास तेल (अरीठा का तेल) को और सांठी के तेल को योनि में रखने से सरलता से प्रसव हो जाता है।

यौनो न्यस्तं च पाठाया मूलं मायूर कस्य वा
प्रस्तावरोक्ता कृछेण सकृच्छप्र सवामपि ॥ ३५ ॥

पाठ अथवा अजमोद के मूल को योनि में रखने से अत्यंत कष्ट से पीड़ित स्त्री को भी सरलता से प्रसव हो जाता है।

रंभा जंघा तिलोशीरिपामार्ग पारिभद्र तरूणां
हेम्न कोरंड स्य च मूलं सूत्यै पृथक् कटि बद्धां ॥ ३६ ॥

केला काक जंघा (हुल हुल) तिल खस चिरचिटा नीम धतूरे का पौदा अलग अलग कटसरया झिंगी= कुरंड की जड़ को कमर के बांधने से प्रसव हो जाता है।

शीरी हिरण्य पुष्पा सुवर्चला च यांघ्रि पामी तले
संधार्यते प्रसूति स्तस्या स्या न्निमिष मात्रेण ॥ ३७ ॥

शीरी (मूंज) हिरण्य पुष्पा सुवर्चला (अलसी) को पैर नीचे रखने या लगाने से क्षण भर में ही प्रसव हो जाता है।

करे सिरसि वाऽथ पुंखा गर्भ निर्गमयेद्
घृता यद्वा मूर्द्धनी विन्यस्ता द्विश स्तु क्षीर विंदवः ॥ ३८ ॥

पुंखा (सरपुंखा) को हाथ या सिर पर रखने से अथवा गाय के दूध की बूंदों को सिर पर रखने से प्रसव हो जाता है।

पुरु भूर्ज फणि त्वग् भिर्यौनो धूपः प्रसूति कृत्
(राजिका भी पाठेहे)सर्जिका सर्प निर्म्मोकाभ्यां भवेत् भगे ॥ ३९ ॥

गूगल भोजपत्र सांप की कांचली की योनि में धूप देने से अथवा सज्जी सांप की कांचली की ही योनि में धूप देने ही प्रसव हो जाता है।

वचोग्राति विषा सर्प निर्मोकि धूपनं भगे
करंज तैल संयुक्तै गर्भमाश्वेव पातयेत् ॥ ४० ॥

वच नकनिछकनी अतिविष (अतीस) सर्प की कांचली में करंज के तैल को मिलाकर योनि में धूप देने से शीघ्र ही गर्भ गिर पड़ता है।

पिंडी कर तरोः पुष्पै शोषितै सर्पिराद्रितैः
धूपैकृतो भगे गर्भपात नाय प्रकल्पतै ॥ ४१ ॥

पिंडी कर (पिंडी खजूर -मेनफल) वृक्ष के फूलों को सुखाकर फिर घी से गीला करके भग में धूप देने से गर्भ गिर पड़ता है।

सिद्धार्थांजन पुष्प गुग्गुल वचा लाक्षा मयूरछदैः
केशोशीर भुजंग कृति सहितै धूपो गृह निर्म्मितःस्त्रीणां
लुंपति मूढ गर्भ जनितां वाधा महीन वृच्छिकान्नाशवन्
भूत गणानपिशाचनि करान गेहा न्निरस्य त्यपि ॥ ४२ ॥

सफेद सरसौं पुष्पांजन गूगुल वच पीपल की लाख मोर के पंख बाल खस सर्प की कांचली को मिलाकर दी हुई धूप स्त्रियों के गूढ गर्भ (गर्भ प्रसव के समय बच्चों के टेढे बांके हाथ पैर वगैरह लटके रह जाने को गूढ़ गर्भ कहते है) कष्ट सर्पो विच्छुओं चूहों भूतों और पिशाचों आदि को घर से दूर भगाते है।

पीतं पुष्प लतापत्रं पिष्टं तदुंल वारिणा
अपरां पातये छीली मूलं मूत्रेन वाथवा ॥ ४३ ॥

पुष्पलता के पत्तो चांवलों के पानी से पीसकर पीने से अथवा शीली की जड़ को गोमूत्र के साथ पीने गर्भ नीचे आ जाता है।

चर्म पूति करंजस्य वायसो दुंबर स्था वा पिष्टं तुषां
अंभसा पीतं सऽपरां पातयेत् क्षणात् ॥ ४४ ॥

पूति करंज की छाल मकोय अथवा गूलर की छाल को पीसकर पानी के साथ पीने से तुरन्त गर्भ गिर जाता है।

लंबास्थ सर्प निर्मोक तेल सिद्धार्थकै :
कृतः पातयेत् अपरां धूपो गर्भाशय मुखेऽर्पितं ॥ ४५ ॥

कडवी तुंबी को लकड़ी सर्प कांचली सरसों का तेल की धूप को गर्भाशय में देने से गर्भ तुरन्त नीचे आ जाता है।

राजी तुंब सर्पत्वक शीरी भू सर्ज निमितौ
द्यौनौ धूपौ लेपाद् अपरां पातरोत्सां राधालाभं ॥ ४६ ॥

राई तुंबी सर्प कांचली (शीरी (मूंज) रामसर सर्ज (राल) की धूप और लेप को योनि में रखने से गर्भ के गिरने का लाभ होता है।

प्रसूता के योनि कष्ट दूर करने के उपाय

याव सूकः क्वोष्णन सर्पिषा सलिलेन या पीतः
सूति काया शूलमुल्कापातव्यना कुलं ॥ ४७ ॥

जवा खार को थोड़े गरम घी या गरम पानी के साथ पीने से गर्भ का कष्ट फौरन दूर हो जाता है।

मार्गस्था वा नवाया वा स्वरसः स्मर मंदिरं निवेशितः
प्रसूतानां नाशयेत् योनिवेदनां ॥ ४८ ॥

अपामार्ग (लाल चिडचटा) पुनर्नवा (लाल साढी) के स्वरस को योनि में रखने से योनि का दर्द दूर होता है।

कापसि तूलं कार्पास बीजं तैलेन संयुतं
कार्पासाऽस्थि रजो मिश्रो योनिस्थोयोनि शूल नुत ॥ ४९ ॥

कपास की रुई बिनोला (काकड़ा) तिल का तेल और कपास की लकड़ी की चूर्ण मिलाकर योनि में रखने से योनि का कष्ट दूर हो जाता है।

सतरुण तैल स्थूल पिंडी वा मंडिनी भवास घृता
धृतलिप्त योनिनिहितः सूताया योनि शूल हरः ॥ ५० ॥

एरंड का तेल= इंडोली का तेल छुहारे सहित या मुंडिनी भवा (मुंडी) की घी में मिलाकर योनि में लेप करने से योनि का कष्ट दूर होता है।

पुष्पैः कासमर्द वृक्षस्य कंकेलि वकुलस्य च
मुहुरुद्वर्त्तनं नार्या शुष्का संजायते भगा ॥ ५१ ॥

केशर के फूल अशोक मोलश्री का बार बार लेप करने से योनि तंग होती है। शुष्क हो जाती है।

शाल्मली वृक्ष निर्यास धावत्या दंड साधितं
प्रक्षालनेन योनिनां धूपादयति गाठतां ॥ ५२ ॥

शेमल का गोंद धातकी (धाय के फूल) के काठे से धोने से और उसी की धूप से देने से योनि गाठी और तंग हो जाती है।

बेगा फल दलैः स्वेदो योनि रंधा न्नि रस्यति
वंध्या कंद प्रलेपो वा गुदभ्रंशेप्ययं विधिः ॥ ५३ ॥

बेगा फल के पत्तों के लेप से योनि का पसीना निकल कर तंग हो जाती है तथा बांझ ककोडी की जड़ का लेप भी संकोचन के योग गुदभ्रंश (गुदा फट जाने) के भी प्रयोग है।

तक्रेन माधवी मूलं पीतं मध्यस्य कर्षणं
प्रातः कसेरु कंदा वा भक्षिता सह सर्पिषा ॥ ५४ ॥

माधवी लता के मूल को छाछ के साथ पीने से अथवा प्रातःकाल घृत के साथ कसेरू कंद को खाने से भी मध्य योनि तथा गुदा जुड़ जाती है।

कुसरं सघृतं क्षीर शर्कराभ्यां समन्वितं
स्तन्याभि वृद्धये धाय्या भोजनं परिकल्पयेत् ॥ ५५ ॥

दूध बढाने के वास्ते बच्चे की माँ को घी दूध और शक्कर से मिली हुई खिचड़ी का भोजन दें।

यष्टि मधुक संयुक्तं गव्य क्षीरं स शर्करं
पीत्वा धात्री भवेद्भूरि स्तन्य पूर्ण पयोधरा ॥ ५६ ॥

मुलहटी तथा शक्कर मिले हुये गाय के दूध को पीने से धाय के स्तन में दूध बहुत अधिक बढ़ जाता है।

दुग्धेन सितया पीतं शालि तंदुलजं रजः
बिदारी कंद चूर्णंवा विदध्यात्स्तन्य वर्द्धनं ॥ ५७ ॥

शक्कर मिले हुए दूध में शालि चांवलों के आंटे को अथवा विदारी कंद के चूर्ण को पीने से दूध बढ़ जाता है।

शिखंडिका शिफा कल्कं तांबलेन निसेवितं
सार्द्धं स्त्रिया: प्रसूताया स्तन्य वृद्धि: क्षणं भवेत् ॥५८॥

शिखंडिका (गुंजा चिरमी) की जड़ के कल्क को ताबूंल (पान) के साथ सेवन करने से स्तन का दूध क्षणमात्र में बढ़ जाता है।

आराम मूलं सप्ताहं धर्षितं वदने धृत: स्तन
कीलं विनश्यंति स्तन्य वृद्धिश्च हीयते ॥५९॥

आराम मूल को सात दिन तक मुँह में रखकर चबाते रहने से पक्का थनेला भी दूर हो जाता है।

निशाकुमारी कंदाभ्यां विसाला शिफया
अथवा स्तनदोष समुत्पन्नं हन्या लेप स्तन व्यथां ॥६०॥

हल्दी और घृतकुमारी (गंवार पाठा) के कंद से अथवा इंद्रायण की जड़ के लेप से स्तन की बिमारियाँ दूर होकर कष्ट मिट जाता है।

यो जायते स्वकृत पुण्य विपाक
पोत निस्तीर्ण गर्भ विपदांऽबु निधि:
कुमार: गृह्णति जन्मदिनत: प्रभृति गृहा स्तं
तन् मोचनाय यतनं रचये त्सुमंत्री ॥६१॥

जो बालक अपने किये हुए पुण्य के फल से गर्भ के कष्ट से छूट कर जन्म लेता है। दुष्टग्रह उस पर जन्म से ही आक्रमण करते हैं विद्वान मंत्र शास्त्री उन ग्रहों को दूर करने से उपाय करें।

इति गर्भोत्पत्ति विधानं नाम षष्ट: समुदेश

बाल ग्रह चिकित्सा

सातवां समुदेश:

॥ श्री पार्श्वनाथाय नमः ॥

अथातः सं प्रवक्ष्यामि सिद्ध बाल चिकित्सितं
यत्राणो न बिना रक्षां कुमाराणां न पार्थिवे ॥ १ ॥

अब बाल ग्रह की सिद्ध चिकित्सा का वर्णन किया जाता है। जिससे रक्षा किये बिना बालकों की रक्षा नहीं हो सकती है।

जातकर्म च रक्षां दंतोत्पत्ति फलानि च
देव्याश्च दिन मासाब्द बलिं चाऽत्र क्रमाद्ब्रेवत् ॥ २ ॥

इसमें जात कर्म (बालक पैदा होने के समय का कार्य) बालक की रक्षा दांत निकलने का फल तथा देवियों के दिन मास और बरसों की बलि का वर्णन क्रम से किया जावेगा।

जातेर्भके पुनर्मंत्री तैल मेकत्र भाजने
जलं चान्यत्र निक्षिप्य सप्तादाय दस क्रमात् ॥ ३ ॥

मंत्री बालक के पैदा होने पर एक बर्तन में तैल और दूसरे में जल को रख कर सात दिन तक निम्नलिखित क्रिया करे।

ऐकैकं तेल निक्षिप्तां दापयित्वा प्रदक्षिणां
बालस्योपरि षट्कृत्वा दशामायर्त्यतजले ॥ ४ ॥

एक कपड़े की बत्ती को जो पहले से ही तैल में रखी हुई हो प्रदक्षिणा देकर और उसको बालक के छह बार उतारा करके उस जल में घुमाकर

क्षिपेत्सप्त दशा श्चैवस्ता प्रजायुष्मती भवेत्
ततो ग्रहेभ्यो रक्षार्थं मंत्रज्ञः प्रयतेत्स च ॥ ५ ॥

दीपक की बत्ती के साथ साथ ही बाहर फेंक दे। इससे संतान अधिक आयुवाली होती है फिर मंत्री बालक को ग्रहों से रक्षा करने के लिये प्रयत्न करें।

पक्षिना यस्तितो धूपः पक्षै र्दक्षिण भागजैः
जातमा सप्त दिवसात् कुमारमभि रक्षति ॥ ६ ॥

पक्षियों के दाहिने भाग के पंखो से तुरन्त के बालक को सात दिन तक धूप देने से उनकी रक्षा होती है।

हिंगू ग्राबर्ह निर्गुंडिनिंब पत्र पूरैः कृतः
शिशो शय्या तलो पांते धूपो बालग्रहापहः ॥ ७ ॥

हींग बच मोर की पूंछ के चंदवा निर्गुंडि और नीम के पत्तों की बालक की चारपाई के नीचे धूप देने से बाल ग्रह नष्ट होते हैं।

लाक्षाद्वि हिंगु वेणुत्वक मांसि निर्माल्य राजिभिः
न् केशनिंब पत्रै श्च धूपौ बालग्रहापहः ॥ ८ ॥

दोनों लाख हिंग बांस की छाल मांस निर्माल्य (देवपूजन का चढ़ा हुआ द्रव्य) राई आदमी के शिर के बाल और नीम के पत्तों की धूप से बालक के ग्रह नष्ट होते हैं।

निंबोग्रमनखाऽहि त्वक द्वि हिंग्वाज्योनुविजलैः
ससेव्य विंहितो धूपः सर्वदुष्ट बालग्रहापहः ॥ ९ ॥

नीम उग्र (वच-लहसून) हाथी के नाखून सर्प कांचली दोनों हींग और हींगडा घृत और विजलै की सेवा सहित धूप देने से सभी दुष्ट अथवा बालग्रह नष्ट होते हैं।

घृतार्क दुग्ध कुनटी विश्व भेषज लेपन
कृतस्त् भूतग्रह व्याधि विघ्नेभ्योस्त्रायते शिशुः ॥ १० ॥

घृत आक का दूध कुनटी (मेनसिल) और विश्व भेषज (सोंठ) का लेप करने से भी सभी भूत ग्रह व्याधि विघ्नो से बालक की रक्षा होती है।

(विघ्नेभोय विषेभ्यों= विघ्नों , विषों से , जहर से)

गो गजेन्द्र विषाणाग्र घृत मृत समटतया
पुंड्रो रोचनया कृप्तः शिशो ग्रहभयापहः ॥ ११ ॥

गाय के सींग हाथी की सूंड के अग्रभाग पर लगी हुई मिट्टी तिलक पुष्प और गोरोचन के लेप करने से सभी बालग्रहों का भय दूर हो जाता है।

आतं शिखि शिखा मूलं भानु स्वर्भानु संगमे
कंठे बद्धं कुमारस्य स्यात्सर्वग्रह दोष हृत् ॥ १२ ॥

मयुर शिखा की मूल (जड़) को सूर्य और राहु के संगम अर्थात् सूर्यग्रहण के अवसर पर लाकर बालक के गले में बांधने से ग्रह के सभी दोष दूर होते हैं।

सं धारणं सदा कुष्ट शंखो त्पल वचाद्यसां
कुमारस्यं भवेत्भूतग्रह संभूति भीति हृत् ॥ १३ ॥

कूठ संख नीलोफर वच और लोहे के धारण करने से बालक के सभी दोषों का भय दूर होता है।

दंता स्तदैव जाता वामा सेवा प्रथमोंशिशोः
भवंति तत् कुलस्य च निखिलस्य विनाशिनः ॥ १४ ॥

यदि बालक दांत निकले हुए पैदा हो और उसके पहले मास में दांत निकल आवे तो बालक सम्पूर्ण कुल को नष्ट कर देता है।

मासे जाता द्वितीये स्मिन् कुमारस्याथ वा
पितु नाशमा गामिनं दंता सूचयंति सुदु स्तरं ॥ १५ ॥

बालक के दूसरे मास में निकले हुए दांत पिता की अथवा बालक की अत्यंत शीघ्र नाश को प्राप्त होने की सूचित करते हैं।

तृतीय मासि जायंते यदि दंताः शिशो र्भवेत्
पितामहस्य मातु र्वापितु र्वापिस्वस्य वा मृति ॥ १६ ॥

यदि बालक के तृतीय मास में दांत निकले तो पितामह (बाबा) माता या पिता या स्वयं अपनी (बालक) की ही मृत्यु हो।

उत्पद्यंते शिशोर्मासे च चतुर्थे रदना यदि
अग्र जस्य भवेन्मृत्यु र्भगिने यस्य वा तथा ॥ १७ ॥

यदि बालक को चौथे महिने में दांत निकले तो अपने से ऊपर ऊपर के बड़े भाई या भानजे की मृत्यु हो जाती है।

पंचमे मासि संजाता नाशयंति शिशो द्विजाः
पित्रा त्युपार्जितान हस्ति तुरंगकरभादिकान् ॥ १८ ॥

बालक को पांचवे मास में निकले हुए दांत पिता आदि के कमाये हुए हाथी घोड़े तथा ऊंट आदि का नाश करते हैं।

षष्टे मासि कुमारस्य यदि दंता समुद्गताः
उच्छेदं सर्वनाशं च कलहं च वितन्वते ॥ १९ ॥

यदि बालक के छटे महिने में दांत निकले तो उच्छेद तथा सर्वनाश होकर खूब कलह होती है।

सप्तमे मासि दृश्यंते यदि दंताः शिशो स्तदा
गोदासि दास संबंधि धन धान्यादि नश्यति ॥ २० ॥

यदि बालक के दांत सांतवें महिने में दिखलाई दे तो गौदासी तथा दास संबंधी धनधान्यादि नष्ट करते हैं।

दाँतों से होने वाले अनिष्ट की शांति के उपाय

होमं कुर्यात् पथग्मार्ग समिद्भः स धृतौदनै
अछिन्न दर्भैः सु दिने पायसेन च मंत्र वित् ॥ २१ ॥

इसके वास्ते मंत्री मार्ग (अपामार्ग) की समिधाओं चावल घी बिना टूटे हुवे डाभ और खीर से शुभ दिन में मंत्र सहित होम करता हुआ।

वार्मि अष्टोत्तर शतं शांतः शांति मंत्रभि मंत्रितेः
स्नपनं वानु कुर्वीत् कुमारस्य त्रिहं पथि ॥ २२ ॥

शांति मंत्र को १०८ बार अभिमंत्रित जल से बालक को तिराह मार्ग में तीन दिन तक स्नान करावें।

दंतं कृत्वा सुवर्णेन दत्वा विप्रोत्तमाय तां
स्थापयेदऽथवा मंत्री तद्दंतं देवतालये ॥ २३ ॥

तथा सोने के दांत बनवाकर यातो उसको उत्तम उत्तम ब्राह्मण को दान करदे या उसे किसी देवमंदिर में स्थापित कर दे।

पुनश्च शिशु मष्टम्यां चतुर्दस्यामथापिवा
कृतोपवासं संस्थाप्य यावत्षोडश वत्सरं ॥ २४ ॥

फिर अष्टमी या चतुर्दशी को उपवास करके बालक को सोलहवें वर्ष तक

दैवतायै तपस्विन्यै ब्राह्मणा तपोभृतै
जात्यंतराय वा पुत्रं प्रदद्यात् जल पूर्वकं ॥ २५ ॥

देवता तपस्वी ब्राह्मण मुनि अथवा किसी दूसरी जाती वाले को जलपूर्वक दें।

कृत्वैज्यां जिननाथ स्यपंच खाद्य युतान पुनः
दंतान स्वर्ण मयान्यक्ष्यै प्रदद्यात्त पूजयेच्चतां ॥ २६ ॥

तथा जिनेन्द्र भगवान की पूजन करके पांच आदि लेकर भोजन सामग्री और सोने के बने हुए दांत यक्षिणी को देकर उसका पूजन करें।

भोजयेद्यमिनं शांतिः श्राविकां श्रावकानपिः दोषैः
शाम्येत्सएतस्मिन् विहितै शांति कर्मणीः ॥ २७ ॥

तथा मुनियों श्राविकाओं आर्यिकाओं व श्रावकों को भोजन करावे इस शांति कर्म के करने से दोष शांत हो जाते हैं।

सितस्य सिंदु वारस्य मूलं प्राग्दिग् समुद्भवं
कंठे बद्धं कुमारस्य दंतोत्पत्ति रूजापहं ॥ २८ ॥

पूर्व दिशा में उगी हुई सफेद सिंदुवार की जड़ को बालक के कंठ में बांधने से दांतो से पैदा हुये दोष शांति को प्राप्त होते हैं।

शंखपुष्पी वचा निंबाक्षिरिणी नां शिफाःपृथक
दंत जन्म रूंजा हन्युः शिशुनां कलितागले ॥ २९ ॥

शंखा हूली वच नीम अक्षीरणी (खिरणी) की जटाओं को पृथक पृथक लेकर बालकों के गले में बांधने से दांतो को रोग नष्ट हो जाते हैं।

॥ बुद्धि वर्धक दवायें ॥

लिहन क्षीरेण तैलेन सर्प्पिषा वारजी कृतं
षड्ग्रंथाग्निखिल ग्रंथान धारयेन्नु न विस्मरेत् ॥ ३० ॥

दिन के समय दूध तेल या घी के साथ चूर्ण की हुई षड्ग्रंथा(सफेद वच) को सेवन करने से सम्पूर्ण ग्रंथों का स्मरण कर सकता है और कभी नहीं भूल सकता?

घृष्ट घृतेन षड्ग्रंथां हिरण्यं च समं लिहन्
बालः सुरासुर गुरुं पूजयेद्विधया धिया ॥ ३१ ॥

बालक घिसे हुवे सोने के साथ बराबर लिये हुवे दूध को घी से चाटते हुवे उत्तम बुद्धि से बृहस्पति और शुक्र का पूजन करे।

पीत्वा क्षीरमनंतरं सित रुजाया शंख पुष्पी रजो
यो लिह्या द्विधिना शिशुप्रतिदिनं हैयंग बीनान्वितं
तस्यास्यात्कवितादि कादि महती बुद्धि गंभीर स्वरो
वीर्यं दुर्जय मायुर प्रतिहतं सौगंध्य हृद्यं वपुः ॥ ३२ ॥

जो बालक शंख पुष्पी के चूर्ण को एक रात के रखे हुये दही के मक्खन के साथ प्रतिदिन चाटकर ऊपर से दूध पीता है उसकी बुद्धि कविता आदि के करने से प्रवीण होकर गंभीर स्वर दुर्जय शक्ति खंडित नहीं होने वाली आयु और शरीर से सुंदर सुंगध हो जाती है।

धात्री सुवर्ण योश्चूर्णं यो लिह्यात घृत मिश्रितं
कुमारो धिषिणांत्तस्य धिषणस्यो च वर्धते ॥ ३३ ॥

जो बालक आवंले के फल और सुवर्ण (धतूरा) अथवा सुवर्ण भस्म के चूर्ण घी के साथ मिलाकर चाटता है । उसकी बुद्धि वृहस्पति के समान बढ़ जाती है।

दृष्टिवा शंख पुष्पी वा पीत्वाक्षीरेण कल्कितां
बालानां महतीं मेधां कुर्यात् वाचश्च शोधयेत् ॥ ३४ ॥

दूध में कल्क की हुई मुलहटी या शंख पुष्पी को पीने से बालकों की बुद्धि खूब बढ़ती है और वाणी शुद्ध होती है।

घृतेन ताम्र कांडायाश्चूर्णं ब्राह्म्याः प्रगे लिहन्
ब्राह्मी वा केवलं खादन्नऽतिशते बृहस्पतिं ॥ ३५ ॥

ताम्र कांडी (लालचंदन) तथा ब्राह्मी के चूर्ण को घी के साथ चाटकर या केवल ब्राह्मी को ही खाने से बालक की बुद्धि बृहस्पति से भी बढ़ जाती है।

ब्राह्मया रसेन दुर्गंध फल चूर्णं समं शिशोः
भावितः सर्पिषा लीठो मेधा कृत दुग्ध भोजनः ॥ ३६ ॥

दुर्गंध फल चूर्ण (कांदा) को ब्राह्मी के रस की भावना देकर घी के साथ बालक को खिलाकर दूध का भोजन कराने से बुद्धि बहुत बढती है।

ब्राह्मी तुरंग गंधा षड्ग्रंथा विश्व कुष्टकणा चूर्णा:
लीढा प्रात: स घृतो ख्यातो मेधाभि वृद्धि कर ॥ ३७ ॥

ब्राह्मी असगंध सफेद वच सोंठ मीठा कूठ पीपल के चूर्ण को प्रात: काल घी के साथ चाटने से बुद्धि का बहुत विकाश होता है।

ब्राह्मी श्वेत वचा सितराजी स्यामाक्रं विल्व पुष्पाणां
चूर्णं स पंच गव्यं प्रात: लीढ्वा भवेत श्रुतंद्रकं ॥ ३८ ॥

ब्राह्मी श्वेत वच सफेद सरसौं (राई) काला आक और बिल्व के फूलों के चूर्ण को पंच गव्य (गाय के दूध घी दही गोबर मूत्र) के साथ चाटने से बड़ा भारी पंडित हो जाती है।

शूंठी द्विनिशा दीपक जीरक रूक यष्टि मधु कणो ग्राणां
चूर्णं स घृतं लिहत: सरस्वति वसति रसनाया ॥ ३९ ॥

सोंठ दोनो हल्दी अजमोर जीरा कुठ मुलहटी शहद पीपल अजवाइन के चूर्ण को घी के साथ चाटने से जिव्हा में सरस्वति वास करती है।

त्रिवृतो कृमि हृद व्योषोग्रा वरा पटु निशा सिता
पिष्टवा ब्राह्मी रसे सर्पिषा धिकं विवर्द्धयेत् धियं ॥ ४० ॥

त्रिवृतो (निसोथ) कृमिहृद्र (वाय विडंग) व्योष (सोंठ, मिरच, पीपल) उग्रा (वच) वरा (त्रिफला हरड़ा, वहेडा, आँवला) पटु (खारी नमक) निशा (हल्दी) सिता (मिश्री) को ब्राह्मी के रस में भावना देकर घी से साथ सेवन से वृद्धि होती है।

शिगु व्योष वचा पाठा विजया लवणौ: ।
पलै अजाक्षीर घृतं प्रस्थं सिद्धं सारस्वतं घृतं ॥ ४१ ॥

त्रिकृतो (सहेजना) व्योष (सोंठ मिरच पिपल) वच पाठा लला विजया (भांग) नमक चार तोले बकरी के दूध में सिद्ध किया हुआ एक प्रस्थ घृत डाला हुआ सारस्वत घृत है।

कुष्टाश्वगंध सैंधव पिपली मिरचं द्विजीरकं
शूंठी पाठा जमोद सहिता समभाग विचूर्णति बचया ॥ ४२ ॥

प्रात: सित सर्पिभ्या विभीतक फल मात्र लेह्य
सप्ताहं पथ्यासी किन्नर मधुर स्वरो भवति ॥ ४३ ॥

द्विगुणी कृतेतु तस्मिन्मेधावी वाक्यदुश्चैव
त्रिगुणी कृतेतु तस्मिन ग्रंथं सहस्रं पठत्यांशु ॥ ४४ ॥

मीठाकूट, असंगध, सैंधव, पिपली, काली मिरच ,दोनो जीरे, सूंठ, पाठालता अजमोद के साथ बराबर श्वेत वच का चूर्ण मिलाकर प्रातःकाल मिश्री और घृत मिलाकर एक बहेड़े के फल के बराबर की मात्रा में मिलाकर चाटकर सात दिन तक पथ्य आहार का भोजन करने वाला किन्नर के समान मीठे स्वर वाला हो जाता है। उसी को चौदह दिन करने से महाबुद्धिमान बोलने में चतुर होता है। तथा इक्कीस दिन तक सेवन करने से एक हजार ग्रंथों को भी शीघ्र ही पढ़ लेता है।

कष्ट देने वाली देवियों का वर्णन

आरभ्य जन्म दिवस दिन मासाब्दपूतना:
गृन्हंत्या द्वादशाऽब्दान्नारी राषोऽशान्नरान् ॥ १ ॥

जन्म के दिन से लगाकर दिन महिने और वर्ष पर्यंत आरंभ करके पूतना स्त्री बालक को बारह वर्ष तक और पुरुष बालक को सोलह वर्ष तक कष्ट देती है।

तासां नामं च कृत्यं च बलि मंत्रं तथा परं
मंत्रं च विधि य त्प्रोक्तंक मातशृनु तत पृथक ॥ २ ॥

उनके नाम क्रियायें और बलि मंत्र तथा दूसरे मंत्रों का अब विधिपूर्वक वर्णन किया जाता है। उनको पृथक पृथक सुनो।

मंदना सा च भद्रा च घंटाली वाहिसी तथा
शामी च मर्मण चैव साहटा मधशासना ॥ ३ ॥

शास्त्री दशानना चैव महात्म्या काक नासिका
साहिकाऽप्यऽथ चामुंडा कुमारी च महेश्वरी ॥ ४ ॥

वारूणी पृथवी चैव वापणी च कपोतिनी
डाकिनी च जटाधारी महानंदी तथांबिनी ॥ ५ ॥

निधना समसेना च जन्यसारी जटाधरी
शक्तिशा निर्जटा चेति त्रिंशद्दिन पिशाचिका ॥ ६ ॥

मंदनासा १ भद्रा २ घंटाली ३ वाहिसी ४ शामी ५ मर्म्मण ६ सुभटा ७ मद्य शारना ८ शास्त्री ९ दशानना १० महात्मया ११ काकनाशिका १२ साहिका १३ चामुंडा १४ कुमारी १५ महेश्वरी १६ वारुणी १७ पृथ्वी १८ वापणी १९ कपोतिनी २० डाकिनी २१ जटाधारी २२ महानंदी २३ अंबिनी २४ निधना २५ समसेना २६ जन्यसारी २७ जटाधारी २८ शक्तिशा २९ निजटा ३० तीस दिन तक कष्ट देने वाली पिशाचिनी कहलाती है।

प्रथम वर्ष के बारह महिने में कष्ट देने वाली १२ पिशाचिनों के नाम

रेवती यामिनी चैव पराङ्मुख्यऽबुंजानना
दीनास्यार घोषा वनवासी समुद्रिका ॥ ७ ॥

सुकला वंधु मुख्या च चपला च तथा ग्रही
एता मासेषु बालानां ग्राहिकास्त पिशाचिका ॥ ८ ॥

रेवती १ यामनी २ पराङ्मुखी ३ अंबजानना ४ दीनास्या ५ घोषिणी ६ वनवासिका ७ सामुद्रिका ८ सुकुला ९ वंधमुख्या १० चपला ११ ग्रही १२ यह बालकों को बारह महिनों में दुख देने वाली १२ पिशाचिनी है।

प्रथमा रक्त कंठी च सौमीस्या च चंचला
तथा दोहेष्टी रोहिणी चैव उग्र चामुंड नासिका ॥ ९ ॥

राक्षसी सरसाला च चंडा च श्रुण कोकिला
निर्द्रना कामुका चैव भैरवी वाधिनी तथा ॥ १० ॥

रोरवी चेति निर्दिष्टा वर्षे शासन देवता
गृन्हत्यो तानिज काले बालां स्तां न्नयते बलात् ॥ ११ ॥

पहिली रक्त कंठी १ सौमी २ चंचला ३ दाहेष्टी ४ रोहिणी (स्वेनिका) ५ उग्र चामुडा (कुष्मांडी राक्षसी ७ शरसाला ८ चंडी ९ कोकिला १० निर्धना १२ कामुका १३ भैरवी १४ वाधिनी १५ रोकी १६ यह सोलह वर्ष की शासन देवियां कही गई है। यह देवियां अपने अपने वर्ष में (दूसरे से सोलहवें) तक बालकों को बलपूर्वक पकड़कर कर दुःख देती है।

प्रथम दिन की रक्षा

सद्यो जातां प्रजां काले मंदजना सा भिधा ग्रही
गृन्हाति चे द्विका रास्ते भवंत्यो तत्तदाधुयं ॥ १२ ॥

तुरन्त के उत्पन्न हुए बालक को मंदनासा नाम की देवी पकड़ती है। यदि यह देवी पकड़ तो निश्चय से नीचे लिखे हुए विकार उत्पन्न होती है।

ग्रीवाया: पृष्ठतो भंगो लालाश्रावो मुखादऽपि
भंजनं चोद्धर्व गात्राणं स्तनाभि ग्रहणेनवै ॥ १३ ॥

गर्दन के पीछे का भाग टूट जाता है मुँह से लार बहती है नाभि तक के ऊपर का अंग टूटने लगता है और बच्चा स्तन भी नहीं लेता है।

तस्या प्रभूत गंधादि पंच वर्णान्न शोभितं
क्षेत्रं पालाग्रह तो दद्या द्वलिं मंत्रेण मंत्रवित् ॥ १४ ॥

मंत्री उस देवी को क्षेत्रपाल के आगे बहुत सी गंध आदि पाँचो रंग के अन्न से शोभित बलि को नीचे लिखे मंत्र से अभिमंत्रित करके दें।

ॐ नमो मंदनासे रावण पूजित दीर्घ केशि पिंगलाक्षि लंब स्तनि शुष्क गात्रे ह्रीं ह्रीं क्रौं क्रौं ऐहि ऐहि इमं बलिं गृन्ह गृन्ह बालकं मुंच मुंच स्वाहा ॥

मंजिष्टां तगरं लोद्र हरितालं स चंदनं
जलेन पिष्टवा लिंपेतां ततो मुंचति साग्रही ॥ १५ ॥

मंजीठ तगर लोध हरताल चंदन को जल से पीसकर बालक के अंग पर लेप करने से वह ग्रही बालक को छोड़ देती है।

दूसर दिन की रक्षा

द्वयाह जातां प्रजां भद्रा गृन्हीते यदि सा ग्रही
रोदनं स्यान्मुहु: क्षीर वमनं ज्वर रोगितां ॥ १६ ॥

माषान्नं लाज धान्यं च पक्व शाकं जलाशये
निद्यादऽपरान्हे तु बलिं मंत्रेण मंत्र वित् ॥ १७ ॥

पिपली जीरकं वन्हि मपामार्गं तथैव च
गौमूत्रेणैव सं पेष्य तेन बालं प्रलेपयेत्

नरव केशैनः गौश्रृंगे धूंपटो च यथा विधिः
ततो भद्रा विमुंचेत्तं भद्रं भवति ततक्षणात् ॥ १८ ॥

यदि बालक को दूसरे दिन भद्रा पकड़ कर कष्ट देती है तो वह बालक बार बार रोता है। दूध की वमन करता है, उसको बुखार आ जाता है। उसके लिए मंत्री उड़द का अन्न औक धान्य (चावल) की खील और पके हुवे शाक की बलि को दोपहर ढलने पर तालाब में मंत्र पूर्वक देवे। पीपल जीरा वन्हि (चित्रक भिलावा) चिडचिटा को गोमूत्र में पीसकर बालक के शरीर पर लेप करे। तथा व्याघ्र नख बाल गाय के सीगों की धूप विधिपूर्वक दें। तब छोड़ देती है और बालक तुरन्त ही अच्छा हो जाता है।

तीसरे दिन की रक्षा

ॐ नमो भगवते भद्रे रावण पूजिते दीर्घ केशि पिंगलाक्षी लंब स्तनि शुष्क गात्रे ह्रीं ह्रीं क्रौं क्रौं ऐहि ऐहि आवेश आवेश इमं बलिं गृन्ह गृन्ह बालकं मुंच मुंच स्वाहा।

त्रि रात्रिका प्रजां तावत घंटाली नामिका ग्रही
गृन्हाति चंद्रवे तस्या जृंभनं हसनं तथा ॥ २० ॥

दृढ़ दृग्मीलनं रोदं स्तनाऽग्रहण मे वच
पंच वर्ण चरुं माष भक्तं मृत्पात्र वेशितं ॥ २१ ॥

बलिं न्यसत श्मशाने च मंत्री तन्मंत्र पूर्वकं
दंति दंतं च गोदंत मऽहि निर्मोक मेवच ॥ २२ ॥

श्वेत सर्षप संयुक्त मऽजा क्षीरेण लेपयेत्
नरव सर्षप संयुक्तं निबं पत्रेण धूपयेत् एवं
कृते प्रयत्नेन प्रजां मुंचति सग्रही ॥ २३ ॥

बालक को तीसरी रात घंटाली नामकी देवी (ग्रही) कष्ट देती है। उसके पकड़ने पर बच्चा जंभाई लेता है। और हंसता रहता है। मजबूती से आंखे बंद कर लेता है। और स्तन नहीं लेता है। इसके लिये पांच रंगों की मिठाई और उड़द का भोजन को मिट्टी के बर्तन में रखकर मंत्री मंत्रपूर्वक बलि को श्मशान में रखे हाथी के दाँत, गाय के दांत, साँप की काँचली, श्वेत सरसों को बकरी के दूध

में पीसकर बालक के शरीर पर लेप करे तथा नख सफेद सरसों और नीम के पत्तों को मिलाकर धूप दें। ऐसा करने से वह गृही बालक को छोड़ देती है।

ॐ नमो भगवति घंटाली सर्व विरोध स्तंभिनी सर्वराक्षस पूजिते दीर्घ केशि पिंगलाक्षी उन्नत दंष्ट्रे लंब स्तनिशुष्क गात्रे क्लीं क्लीं कौं कौं ऐहि ऐहि आवेश इमं बलिं गृन्ह गृन्ह बालकं मुंच मुंच स्वाहा।

चौथे दिन के बालक की रक्षा

चतुरात्रि भवं बालं बाहिसी नामि का ग्रही
गृहीन्ते यदि तस्यास्यात् फेन स्यो द्वमनं तथा ॥ २४ ॥

दिशा निरीक्षणं रोधो गात्र स्योद्वेजनं पुनः
पंचधा पूप भेदां च कुलमाष कृसरैः सहा ॥ २५ ॥

दुग्धान्नं गंध पुष्पादि बलि दद्यात्समंत्रकं
रात्रौऽपित् वने धीरः पृष्ठा लोकेन वर्जितः ॥ २६ ॥

गज दंताऽहि निर्मोक श्वेत स र्षपमादरात्
अजा मूत्रेण संपेष्य लेपयेत्मतिमान् प्रजां ॥ २७ ॥

कपि रोम गज नख निंब पत्रैः सुधूपयेत्
एवं प्रति विधानेन बालं मुंचति सा ग्रही ॥ २८ ॥

बालक को चौथे दिन बाहिसी नामकी गृही पकड़ती है। यदि उस दिन कष्ट होतो बालक झागवाली वमन करता है । दिशाओं की तरफ देखता है। उसका अंग रुक कर सारा शरीर काँपने लगता है। उसके लिये पाँच प्रकार के पूर्व कुलथी कृसर (खिचड़ी) दुगधान्न (खीर) चंदन पुष्पादि की बलि मंत्र सहित रात्रि के समय श्मशान में लोगों से बगैर टोके हुये दे। फिर वह बुद्धिमान बच्चे के शरीर पर हाथी दांत सर्प बंदर के बाल हाथी का नाखून नीम के पत्ते की धूनी दें। इसप्रकार कार्य करने से वह गृही बालक को छोड़ देती है।

ॐ नमो भगवती वाहिसी रावण पूजिते दीर्घ केशी पिंगलाक्षी लंब स्तनि शुष्क गात्रे ऐहि ऐहि ह्रीं ह्रीं क्रौं क्रौं आवेशय आवेशय इमं गृन्ह गृन्ह बालकं मुंच मुंच स्वाहा॥

पाँचवें दिन की रक्षा

पंचाऽहजातं गृन्हीयात् शामी नाम गृही
यदि मुष्टि बंधो ध्रुवं निश्वासौ चलप्रेक्षा च जायते ॥ २९ ॥

उदनं पयसा युक्तं दधिकं बहु शक्कं
घृत कुल्माष संपूर्णं पंच वर्णन शोभितं ॥ ३० ॥
फलं साम्रफलं चै एव माष भक्तं रक्त प्रसूनकं
बलिं दद्यात्तश्मशाने च प्रत्यूषे च समंत्रकं ॥ ३१ ॥

मेश श्रृंग वचा निंब निर्गुंडी पत्र भे वच
समं गृहीत्वा संचूर्णं प्रजामाशु प्रलेपयेत् ॥ ३२ ॥

गुग्गुलं सर्षपं चापि चूर्णं श्रित्वातुधूपयेत्
एवं कृते प्रतिकारे मुक्ता गच्छति सा ग्रही ॥ ३३ ॥

यदि बालक को पांचवे दिन शामी नाम की गृही पकड़े तो बालक की मुट्ठी बंध जाती है तथा ऊर्द्ध (ऊँचा) श्वास चलने लगता है। तथा हिलता हुआ दिखता है। उस समय भात दूध दही बहुत शक्कर घृत कुल्थी पाँचों रंगों के भोजन कटहल आम का फल उड़द का भोजन और लाल फूलों की बलि प्रातः काल श्मशान में मंत्र सहित दे। फिर भेड़ के सींग वच नीम के पत्ते और निर्गुंडी के पत्रों को बराबर लेकर उसके चूर्ण से बालक पर लेप करे। गूगल तथा सफेद सरसों के चूर्ण की धूप दे। इसप्रकार प्रतिकार करने पर वह ग्रही बालक को छोड़कर चली जाती है।

ॐ नमो भगवति शामि देवते रावण पूजिते दीर्घ केशी पिंगलाक्षी लंब स्तनि शुष्क गात्रे एहि एहि ह्रीं ह्रीं क्रौं क्रौं आवेशय आवेशय इमं गृन्ह गृन्ह बालकं मुंच मुंच स्वाहा ॥

छठे दिन की रक्षा

षडाहजातां गृन्हाति मर्म्मणाख्या प्रजां ग्रही
आकुंचनं तदा हस्त पादयोरति मूत्रता ॥ ३४ ॥

ऊर्ध्वश्वासोऽसकृद्रोध स्तमाभोजन मेवच
भवेद्विकार: शुद्धान्नं पंच भक्ष समन्वितं ॥ ३५ ॥

मृन्मय प्रतिमा रक्त चरु पुष्प गंधा दिशोभितां
बलिं दद्यात् श्मशाने च सायाह्ने मंत्रपूर्वकं ॥ ३६ ॥

श्वेत सर्षप संयुक्तं वाजि दंतं स गुग्गुलं
साऽमर्यं घृत संयुक्तं पेषयित्वा प्रलेपयेत् ॥ ३७ ॥
गौरोम सर्षपान पिष्टान घृतेन सह धूपयेत्
पत्र भंगेन च स्नायात ततो मुंचति सांग्रही ॥ ३८ ॥

वेणोरऽश्वत्थ निर्गुंडो पाठे रंड योरिप
पत्रेण पक्व सलिलं पत्रं भंगं प्रचक्षते ॥ ३९ ॥

यदि बालक को छठे दिन मर्मणा नाम की ग्रही पकड़ती है तो हाथ पैरों का खिंचना, अतिमूत्र होना, ऊपर को श्वास चलना कभी कभी रुक भी जाता है और स्तन के दूध का भोजन करना आदि विकृत हो जाता है। इसके लिए शुद्ध अन्न पाँचो प्रकार के भोजनमिट्टी की प्रतिमा लाल नैवेद्य पुष्प और चंदन आदि गंध से शोभित बलि को सायंकाल के समय श्मसान में मंत्रपूर्वक दे। फिर सफेद सरसों सहित घोड़े के दांत गुगल घृत को समान लेकर पीसकर लेप करे। गाय के बाल तथा सरसों को पीसकर घी मिलाकर धूप दे। फिर पत्र भंग जल से स्नान करे। ऐसा करने से वह ग्रही बालक को छोड़ जाती है। बांस पीपल निर्गुड़ी पाठालता और एरंड के पत्तो को जल में पकारने पर वह जल पत्र भंग कहलाता है।

ॐ नमो भगवती मर्मणे रावण पूजिते दीर्घ केशी पिंगलाक्षी लंब स्तनि शुष्क गात्रे ऐहि ऐहि ह्रीं ह्रीं क्रौं क्रौं आवेशय आवेशय इयं गृन्ह गृन्ह बालकं मुंच मुंच स्वाहा ॥

सातवें दिन की रक्षा

सप्ताह जातं गृन्हाति सासुभटा नामिका ग्रही
रोदनं काक वतश्वेन गंध शरीरकं ॥ ४० ॥

स्वनरवै गात्रि लेपश्च स्तनाभोजन मेवच
भवेतदानीं तस्या श्रुभाषणां कदली फलं ॥ ४१ ॥

शुद्धान्नं च सुगंधादि बलिं दद्यात्प्रयत्नत:
पूर्वस्यां दिशि सायान्हे वलि मंत्रेण्यमंत्र वित् ॥ ४२ ॥

वचा सिद्धार्थकं कुष्ठं गोमूत्रेणाऽनुलेपयेत्
धूपये व्याघ्र करजै स्ततो मुंचति सा ग्रही ॥ ४३ ॥

यदि सातवें दिन बालक को सुनहरा साप की ग्रही पकड़े तो बालक कौवे के शब्द के समान रोता है। उसके शरीर में श्येन (बाज पक्षी) के समान गंध आती है। बच्चा नखों से अपने शरीर को टटोलता है और दूध का भोजन नहीं लेता है। उस समय उड़द केले की फली शुद्ध भोजन और सुगंध आदि की बलि को मंत्री मंत्रपूर्वक सायंकाल के समय पूर्व दिशा में दें। उससमय वच सफेद सरसों कूठ की गोमूत्र से पीसकर लेप करे। और व्याघ्र करज नख की धूप दे। तब यह ग्रही बालक को छोड़ देती है।

ॐ नमो भगवती सुभटे रावण पूजिते दीर्घ केशी पिंगलाक्षी लंब स्तनि शुष्क गात्रे ऐहि ऐहि हीं हीं कौं कौं आवेशय आवेशय इमं गृन्ह गृन्ह बालकं मुंच मुंच स्वाहा॥

आठवें दिन की रक्षा

अष्टाह जातं बालं तु गृन्हाते मद्य शासना
तदा भवे ज्वर: श्वोशो हासउ द्विग्र रोदनं ॥ ४४ ॥

माषोद्वनं पंच भक्षै ग्रामस्योदेशत:
बलिं निदद्या त्सांयान्हे मंत्र पूर्व विचक्षण: ॥ ४५ ॥

हिंगूग्रगंधा लसुन सिद्धार्थै: श्च प्रलेपयेत्
नख केशेस्व लसुनै धूंपयेद्वालकं द्रुतं ॥ ४६ ॥

स्नापयेत्पत्र भंगेन पूजयेत्कणवीरजै:
पुष्पै गंधा दिभि हूँवीं मुचंद्वालं ततो ग्रही ॥ ४७ ॥

यदि बालक को आठवें दिन मधशासना नाम की ग्रह पकड़े तो बालक को ज्वर हो जाता है। सांस चलने लगती है। हंसी आती है और वह जोर से रोता है। इसके उड़द धान और पाँचों प्रकार के भोजन को गांव के उत्तर की तरफ सांयकाल के समय मंत्रपूर्वक बलि दें हींग अजमोद लहसून सफेद सरसों का लेप करे तथा नख केश तथा लहसून से बालक को धूप दे। यंत्र भंग जल से स्नान करावे और देवी की कनेर के लाल फूल और अजमोद से पूजन करें तब वह ग्रही उस बालक को छोड़ देती है।

ॐ नमो भगवती मधशासने रावण पूजिते दीर्घ केशी पिंगलाक्षी लंब स्तनि शुष्क गात्रे ऐहि ऐहि हीं हीं कौं कौं आवेशय आवेशय इमं गृन्ह गृन्ह बालकं मुंच मुंच स्वाहा॥

नवमें दिन की रक्षा

नवाह जातं गृन्हाति शास्त्री नाम ग्रही प्रजां
ततोर्द्ध श्वसनं मुष्टि बंध श्चोद्विग्नता कृति ॥ ४८ ॥

पायसं माष भक्ष्यं च कृसरं च बलिं तथा
पूर्वस्यां दिशि सायान्हेन्यसेत् मंत्री स मंत्रकं ॥ ४९ ॥

आमयतिऽति विषा श्वेत सर्षपं लसुनं तथा
लवंग त्वगऽजा मूत्रै पिष्टवा बालं प्रलेपयेत् ॥ ५० ॥

केशो गोरोमतगर कुष्टै श्चाऽपि प्रधूपयेत्
एवं कृतः प्रतिकारं बालं मुंचति सा ग्रही ॥ ५१ ॥

यदि बालक को नवे दिन शास्त्री नाम की ग्रही पकड़े तो वह ऊँचा श्वास लेता है उसकी मुट्ठी बंध जाती है सूरत घबराई हुयी सी हो जाती है।उसके लिये खीर उड़द का भोजन और खिचड़ी की बलि को पूर्व दिशा में सायंकाल के समय मंत्र पूर्वक दें।आमय (कूठ) अतिविष (अतीस सफेद सरसो लहसून और लौंग की छाल को बकरी के मूत्र से पीसकर बालक के शरीर पर लेप करे। बाल और गाय के रोम तगर कूठ की धूप दें इसप्रकार करने से वह ग्रही बालक को छोड़ देती है।

ॐ नमो भगवती शास्त्री रावण पूजिते दीर्घ केशी पिंगलाक्षी लंब स्तनि शुष्क गात्रे ऐहि ऐहि हीं हीं कौं कौं आवेशय आवेशय इमं गृन्ह गृन्ह बालकं मुंच मुंच स्वाहा॥

दसवें दिन की रक्षा

दशाह जातं गृन्हाति देवता सा दशानना
तदा स्यात्नील देहत्वं रोदनं च दिवानिशं ॥ ५२ ॥

मदिरा गंधितास्य स्यात् संकोश्च विशेषत:
दाहिकं कोद्रवान्नं च संयुक्तं गोरसान्वितं ॥ ५३ ॥

कृष्ण पुष्पादि धूपादि श्मशाने चापरान्हे के
मंत्र जप्तं बलिं न्यस्य पत्रं भंगेन सिंचयेत् ॥ ५४ ॥

वचां सर्ज रसं कुष्ठं सितसर्षप मेवच ।
शीत लोयेन संपेष्य तेन बालं प्रलेपयेत् ॥ ५५ ॥

सर्षपं लसुनं निबपत्रं सर्प त्वचा सहा
धूपयेत् तैल संमिश्रं ततो मुंचे द्ग्ही प्रजां ॥ ५६ ॥

बालक को दसवें दिन दशानना नाम की ग्रही पकड़े तो बालक का शरीर नीला पड़ जाता है। बालक रात दिन रोता है। उसके मुँह से शराब की गंध आती है। और उसके शरीर में ज्यादातर खिंचाव या जलन होने लगती है। काले पुष्प और धूप आदि की बलि को दोपहर ढलने पर श्मशान में मंत्र जपता हुआ रखकर पत्र भंग जल से उसको सींचे (छींटें) दें। मंत्री वचराल कूढ़ सफेद सरसों को ठंडे जल से पीसकर ग्रहीत बालक के शरीर पर लेप करें। सरसों लहसून नीम पत्र सर्प कांचली में तेल मिलाकर धूप दें। तब वह ग्रही बालक को छोड़ देती है।

ॐ नमो भगवती दशानने वज्र धारिणी वैतालक प्रिय ऐहि ऐहि ह्रीं ह्रीं क्रौं क्रौं आवेशय आवेशय इमं गृन्ह गृन्ह बालकं मुंच मुंच स्वाहा॥

ग्यारहवें दिन की रक्षा

एकादशाह जातं तां प्रजां देवी महात्मिका
गृहीन्ते यदि वैस्वर्ण्यं कासश्वास ज्वरस्तथा ॥ ५७ ॥

माषान्नं लाजं च चूर्णं तु कृसरं तथा
बलिं निर्दयात् सायान्हे श्मशाने मंत्रपूर्वके ॥ ५८ ॥
लेपस्तगर मंजिष्टा कुष्ठा सिद्धार्थ पिष्टकै:
कार्पास्थी च धूप: स्यात् ततो मुंचति साग्रही ॥ ५९ ॥

यदि ग्यारवें दिन बालक को महात्मिका नामक की देवी पकड़े तो श्वास खांसी ज्वर हो जाता है। उसके लिए उड़द का भोजन दही उड़द के चून की खिचड़ी की बलि सायंकाल में श्मशान में मंत्र पूर्वक दें। तगर मंजिठ कूठ सफेद सरसों पिच्छ मोचरस सैभंल का गोंद का लेप करें। तथा कपास के काकड़े की धूप दे तो वह ग्रही बालक को छोड़ देती है।

ॐ नमो भगवति महात्मिकायै मह्य निर्दयायै पित् वन्माल्यानुलेप नायै बहुशस्त्र धरायैरूधिर मांस प्रियायै प्रभूत वैताल परिवृतायै मुक्ताट्ट हासायै एहि एहि आवेशय आवेषय ह्रीं ह्रीं क्रोंक्रों भगवति स्वशासन प्रिये इमं बालं मुंच मुंच बलिं गृन्ह गृन्ह स्वाहा।

बारहवें दिव की रक्षा

द्वादशाह्निक बालं तंगृन्हीते काकिनासिका
ज्वर: पयस उद्गार आनाहश्च तदा भवेत् ॥ ६० ॥

पंच वर्णं चरुं लाजां माषान्नं लाज चूर्णक
मत्स्याक्षि शाकं सायन्हे न्यसेद्वाप्यां समंत्रकं ॥ ६१ ॥

चंदनोशीर कष्टैस्तु लेपयेद धूपनं तथा
निर्माल्य वृहती भ्यां तु बालं मुंचेत् ततो ग्रही ॥ ६२ ॥

यदि बारहवें दिन काक नाशिका नाम की ग्रही बालक को पकड़े तो बालक के ज्वर होता है। दूध डालने लगता है। उसका मलमूत्र गिरना बन्द हो जाता है। उसके लिये पाँचो रंगों को नैवेद्य धान की खील उड़द का अन्न चावलों का चूर्ण मछली की आँख और शाक की बलि को सायंकाल के समय पश्चिमोत्तर कोण में (वायव्य कोण में) वापिका में मंत्रपूर्वक रख दें। चंदन खस कूठ का और निर्माल्य (पुजापा) तथा बड़ी कटेली से धूप दें तो ग्रही तुरन्त बालक को छोड़ देती है।

ॐ नमो भगवति काकनामि के महाभीषणी एहि एहि आवेशय आवेशय ह्री ह्रीं क्रौं इमं बलिं गृन्ह गृन्ह बालकं मुंच मुंच स्वाहा।

तेरहवें दिन की रक्षा

त्रयो दशाह जातंतं ग्रही गृन्हाति साहिका
चक्षु निर्मलनं क्षीरा भोजनं च तथा भवेत् ॥ ६३ ॥

कुलत्थ कुमाषान्नं शाकं माषं च वात्किमं
नारिकेर फलं न्यसे ज्जलने तीर्थं बलिं क्रमात् ॥ ६४ ॥

वचोशीरामटैलेंपः यक्ष धूपैस्तु धूपयेत्
एवं कृते प्रतिकारे बालं मुंचेत ततो ग्रही ॥ ६५ ॥

यदि तेरहवें दिन बालको को साहिका नाम की ग्रही पकड़े तो बालक आंखे बंद करता है और दूध नहीं पीता है। उससमय कुलथी उड़द का अन्न शाक पके हुये उड़द और नारियल की बलि को क्रम से तीर्थ के जल में डाले। वच खस और अमय (कूठ) से लेप करे यक्ष धूप राल की धूप देने से ग्रही बालक को को छोड़ देती है।

ॐ नमो भगवति साहिके त्रिदंडाऽसि धारिणी रक्त केशि पिंगलानि ऐहि ऐहि आवेशय आवेशय ह्रीं ह्रीं क्रौं क्रौं इमं बलिं गृन्ह गृन्ह बालकं मुंच मुंच स्वाहा।

चौदहवें दिन की रक्षा

चतुर्दशाह जातां तां चामुंडा ग्रयते ग्रही
रोदनं चा सकृद्ज्ञाननं वमनं पयस स्तथा ॥ ६६ ॥

पंच वर्ण चरुं मार्तं सराव स्थं समंत्रकं
मार्यं काले श्मशाने च बलिंन्य सेद्विचक्षणः ॥ ६७ ॥

गजदंतांति विषाभ्यां लेपयेद्धूपनं भय
त अहि त्वक निंब पत्राभ्यां ततो मुंचद्ग्रही प्रजा ॥ ६८ ॥

यदि चौदहवें दिन बालक को चामुंडा नाम की ग्रही पकड़े तो वह रोता है। उसको सुंगध करने का ज्ञान होता है और दूध की उल्टी करने लगता है। उसके लिये पांच रंग की नैवेद्य को मिट्टी के सकोरे

में रखकर सायंकाल के समय श्मशान में मंत्रपूर्वक बलि दें। हाथीदांत लेप से तथा सर्प की कांचली और नीम पत्री की धूप देने से यह ग्रही बालक को छोड़ देती है।

ॐ नमो भगवति चामुंडे महादेवी काल रूपिणी ऐहि ऐहि आवेशय आवेशय ह्री ह्रीं क्रौं क्रौं इमं बलिं गृन्ह गृन्ह बालकं मुंच मुंच स्वाहा।

पन्द्रहवें दिन की बलि रक्षा

पंचदश रात्रि जाततं कुमारी नामिका ग्रही
मुष्टि बंधोर्द्रनिस्वासो चलित प्रेक्षणं भवेत् ॥ ६९ ॥

पंच वर्ण चरुं माषभक्षं चो षसि निक्षिपेत्
श्मशाने गंध पुष्पादि युक्तं मंत्री समंत्रकं ॥ ७० ॥

निर्गुंडी निंब पत्राणि मेष श्रृंग समं पुनः
पेषयित्वा थ चूर्णं च लेपयेद्बाल मातुरं ॥ ७१ ॥

धूपनं हिंगु सर्षपत्वक् जखैः मिश्रे कृते भवेत
एवं सति प्रजां मुंचेत् कुमारी देवता ततः ॥ ७२ ॥

यदि पंद्रहवें दिन बालक को कुमारी नाम की ग्रही पकड़े तो मुट्ठी बंध जाती है। श्वास ऊंचा चलने लगता है। और आंखे चली हुई सी हो जाती है। इसके लिये पांच रंग की नैवेद्य उड़द चूसने योग्य भोजन गंध पुष्प आदि की बलिं को मंत्री मंत्र सहित श्मशान में देवें। निर्गुंडी नीम के पत्ते भेड के सींग सब बराबर लेकर तथा सबको पीसकर उस चूर्ण का लेप उसी दुःखी बालक के शरीर पर करे। हींग सरसौं सर्प की कांचली नाखून मिलाकर धूप देने से वह ग्रही कुमारी देवता बालक को छोड़ देती है।

ॐ नमो भगवति कुमारिके रक्त माल्य विभूषिते ऐहि ऐहि आवेशय आवेशय ह्री ह्रीं क्रौं क्रौं इमं बलिं गृन्ह गृन्ह बालकं मुंच मुंच स्वाहा ॥

सोलहवें दिन की रक्षा

षोडशाह वयस्कं तमा ददाति महे श्वरि
क्षीरारुचि र्ज्वरः छर्द्दिन्निमील नमक्षोऽ भवेत ॥ ७३ ॥

पक्वान्नं शाक माषाऽन्नं कौलस्थं च बलिं तथा
नालिकेर पयोन्वस्थे द्वारि तीर्थेसमंत्रकाः ॥ ७४ ॥

शेपद्विज वंशं च सिद्धार्थं गुग्गुलं तथा
घृतेनं मृष्टोधूप स्तुगोश्रृंगेन भवेत् सुखी ॥ ७५ ॥

बालक को सोलहवे दिनं महेश्वरी नाम की ग्रही को पकड़ने से दूध से अरुचि ज्वर और वमन होने लगती है। और वह आँखे बंद करने लगता है। उसके लिये पका हुआ अन्न शाक उड़द का अन्न नारियल के दूध और कुलथी का बना हुआ भोजन की बली को तीर्थ के जल में मंत्र पूर्वक देवें। हाथीदांत सफेद सरसौं और गुग्गल का लेप करे धृत की मालिश करे और गाय के सींग की धूप दे। तो बालक सुखी होगा।

ॐ नमो भगवति माहेश्वरी विकट दष्ट्रां करालें सर्व भूत प्रिये ऐहि ऐहि आवेशय आवेशय ह्री हीं क्रौं क्रौं इमं बलिं गृन्ह गृन्ह बालकं मुंच मुंच स्वाहा।

सत्रहवें दिन की रक्षा

सप्त दशाहवयस्कं च ग्रहीते वारुणी ग्रही
तदास्य शोषगंधो च गात्रे स्फोटश्च जायते ॥ ७६ ॥

माषान्नं लाजकं धान्यं प्रातरुत्तर तो बलिं
न्यस्ये त्समंत्रकं हिंगु वचाभ्यां लेपयेत्प्रजां ॥ ७७ ॥

गुग्गुलं सर्षपं चैव मिश्री कृत्य प्रधूपयेत्
एव मात्त प्रतिकारां बालं मुंचति साग्रही ॥ ७८ ॥

सत्रहवें दिन बालक को वारुणी ग्रही के पकड़ने से खुसकी शरीर में दुर्गंध और हड़ फूटन होने लगती है। उसके लिये उड़द का अन्न धान्य की खील और चावल की बलि को मंत्र पूर्वक प्रातःकाल के समय उत्तर की तरफ दें। और हींग और वच का लेप करें। गुग्गुल और सरसों को मिलाकर धूप देने। इस प्रतिकार को ग्रहण करने से बालक को वह ग्रही छोड़ देती है।

ॐ नमो भगवति वारुणिके श्वेतांबर धरे श्वेताभरण भूषिते ऐहि ऐहि आवेशय आवेशय ह्री हीं क्रौं क्रौं इमं बलिं गृन्ह गृन्ह बालकं मुंच मुंच स्वाहा।

अठारहें दिन की रक्षा

अष्टादशाह जातंतं गृन्हीते प्रवरी ग्रही तदां
वाक्क वुवणं जृंभा जिव्हाया वारि सेवनं ॥ ७९ ॥

क्षीरान्नं माष भक्ष्यं च नव पात्रेषु योजितं
उत्तरस्यां दिशि प्रातं बलि दद्यात्संत्रकां ॥ ८० ॥

तगरं श्वेत सिद्धार्थं जल पिष्टांसु लेपयेत्
लसुनं सर्प निर्मोल्यं धूपयेतु सुखी भवेत् ॥ ८१ ॥

अठारहवें दिन बालक को प्रवरी नाम की ग्रही पकड़ने पर बोली में भारी फर्क हो जाता है। जंभाई आती है जीभ से पानी निकलता है। उसके लिये दूध चावल की खीर उड़द का भोजन की बलि को नये बर्तन में रखकर उत्तर दिशा में प्रातःकाल के समय मंत्रपूर्वक रखे। तगर सफेद सरसों को जल से पीसकर लेप करे तथा लहसून सर्प कांचली की धूप देने से बालक स्वस्थ हो जाता है।

ॐ नमो भगवति प्रवरिकायै जटा मुकुट धारण्यै निर्म्मांसायै ऐहि ऐहि आवेशय आवेशय ह्री ह्रीं क्रौं क्रौं इमं बलिं गृन्ह गृन्ह बालकं मुंच मुंच स्वाहा।

उन्नीसवें दिन की रक्षा

एकोन विंशति दिने बालं गृन्हाति योषिणी
तदास्या त्मोह वमने विक्षेपः पाद हस्तयोः ॥ ८२ ॥

प्रतिमा युगलं कृत्वा मृदा पिष्टेन चोदरे
तिल दुग्धान्न मादाय न्यसेत्संध्या तृतीयके ॥ ८३ ॥
चंदनाऽति विषा कुष्टै र्लेपयेत् धूपनादपि
वेणु त्वकपिच्छं नालाभ्यां पत्रं भंगा च्च सिद्धाति ॥ ८४ ॥

उन्नीसवें दिन बालक को योषिणी नाम की ग्रही के पकड़ने से मोह वमन हाथ पैरों में बैचेन ही हो जाती है। पिसी हुई मिट्टी की प्रतिमायें दो बनवाकर उसके पेट में तिल दुग्ध चावल की खीर रखकर सायंकाल के समय तीसरी संध्या में बलि दें। चंदन अतीस कूठ का लेप करने से बांस की छाल और सेंभल वृक्ष की देडी की धूप दें। और पत्र भंग से जल से स्नान करावे।

ॐ नमो भगवति घोषणिकायै मेष वाहनायै वहु माष प्रियायै ऐहि ऐहि आवेशय आवेशय ह्री ह्रीं क्रौं क्रौं इमं बलिं गृन्ह गृन्ह बालकं मुंच मुंच स्वाहा।

बीसवें दिन की रक्षा

विंशत्य हो वयस्वतं गृन्हीतेऽथ कपोतिनी
रुक पाद हस्तयोर्मूत्रं भवेद्युर्वहु विक्रिया: ॥ ८५ ॥

पायसं तिल मुद्गाभ्यां कैवलं च त्रिविधो दनं
मृत्सृष्ट प्रतिमा कुक्ष्यो: पृथक पात्रे च वेशित: ॥ ८६ ॥

प्रातरुत्तर तो न्यसेब्दलिं गंधा दिशाशोभितं
लेपयेदामयो षीर पत्रैर्बिल्वं विचक्षण: ॥ ८७ ॥

कार्प्पासा स्थाऽहि निर्म्मोक निंब पत्रैस्तु धूपयेत
पत्र भंगेन च स्नायात्त ततो मुंचति सागृही ॥ ८८ ॥

बीसवें दिन कपोतिनी नाम की ग्रही से बालक को पकड़ने से पर हाथ पैरों में रोग अधिक मूत्र तथा बहुत प्रकार के विकार हो जाते हैं। उसके के लिए खीर, तिल , मूंग तथा तीन प्रकार के भात को मिट्टी की बनाई हुई प्रतिमा को कोष में अलग बर्तन में रखे। बलि को प्रातःकाल के समय गंध आदि से सजाकर उत्तर की तरफ रखे और चतुर पुरुष कूठ तथा खस के पत्तों से बलि पर लेप करे। कपास की लकड़ी सर्प कांचली और नीम के पत्ते को धूप दें और बालक को पत्र अंग जल से स्नान करावे तो यह ग्रही उस बालक को छोड़ देती है।

ॐ नमो भगवति कपोतिनी बाल पीडा प्रिये सर्वाभरण भूषिते ऐहि ऐहि आवेशय आवेशय ह्री ह्रीं क्रौं क्रौं इमं बलिं गृन्ह गृन्ह बालकं मुंच मुंच स्वाहा।

इक्कीसवें दिन की रक्षा

एकविंशत्यहोरात्रं डाकिन्याश्रयते ग्रही
स्फोटोपांगे मुखे च स्यात् तदा तस्यां प्रतिक्रिया ॥ ८९ ॥

माषान्नं लाज धान्यं च बलि मा पूपिकं तथा
न्यसेत् उत्तरीय संधौ च सायान्हे मंत्र वित्तमः ॥ ९० ॥

निगुंडी ग्राहदंताभ्यां लेपयेन्नरव केशयुक
धूपनं पत्र भंगेन स्नाद्यान्मुंचति सग्रही ॥ ९१ ॥

इक्कीसवें दिन बालक को डाकिनी नाम की ग्रही के पकड़ने पर हड़ फूटन मुख का फटना इत्यादि होने लगता है। उसके प्रतिकार के लिये उड़द का अन्न धान (चावल) और खील तथा उसकी पुरियों की बलि को सायंकाल के समय उत्तम मंत्री उत्तर दिशा में दें। निगुंडी मकर के दांत का लेप करने से तथा नाखून और बालों की धूप देने से तथा पत्र भग जल से बालक को स्नान कराने से वह ग्रही बालक को छोड़ देती है।

ॐ नमो भगवति डाकिनी एहि एहि इमं बालं ब्रह्मा विष्णु श्च रुद्र स्कंधो वैश्रण स्तथा रक्षंतु ज्वलितं इदं बलिं गृन्ह गृन्ह बालकं मुंच मुंच स्वाहा ॥

बाइसवें दिन की रक्षा

द्वाविंशति दिने बालं गृहीते साजटाधारी
तदाभवेदऽतिसारो रोदनं बहुविक्रिया ॥ ९२ ॥

माषोधन मापूपं च कृसरं च सगंधका
बलिं दद्यात् पित् वने प्रातमंत्री स मंत्रकं ॥ ९३ ॥

पिपली चित्र मूलंतु मूत्रेणा जेन लेपयेत्
धूपः केश वत्ताभ्यां स्यात् पश्चात्मुचति सग्रही ॥ ९४ ॥

बाइसवें दिन बालक को जटाधरी के पकड़ने पर दस्त होना रोना और बहुत प्रकार के विकार होने लगते हैं। उसके लिये उड़द भात पुरी कचौरी और गंध की बलि को मंत्री मंत्र पूर्वक प्रातःकाल श्मशान में दे। पीपल चित्रक (चीते की जड़) को बकरे के मूत्र में पीसकर बालक के लेप करे और बाल तथा वच की बालक को धूनी दे। तो इसके बाद वह ग्रही बालक को छोड़ देती है।

ॐ नमो भगवति जटाधारिणी ऐहि ऐहि ब्रह्मा विष्णु महेश्वरा क्षंतु ज्वालित मिमं बालं मुंच मुंच बलिं गृन्ह गृन्ह स्वाहा ॥

तेवीसवें दिन की रक्षा

त्रयो विंशंत्यहोजातं महानद्या ग्रहीतेत ग्रही
तीव्रेऽक्षणम् मुक्ति श्च तदास्युर्बहुविकिया ॥ ९५ ॥

पंच वर्ण चरुं माष पूपं धान्यं च संक्रमं
सायान्हे धवान्यसेत श्मशाने मंत्रपूर्वकं ॥ ९६ ॥

श्वेत सर्षप संयुक्त गज दंतैः प्रलेपयेत्
धूपः कुवा फलेन स्यात् ततो बालः सुखी भवेत् ॥ ९७ ॥

तेवीसवें दिन बालक को महानंदी ग्रही के पकड़ने पर तेज निगाह दूध पीना और बहुत प्रकार के विकार हो जाते हैं। उसके लिये पांचों रंगो नैवेद्य उड़द के पूए और अनाज की बलि को क्रोधपूर्वक सायंकाल के समय मंत्रपूर्वक श्मशान में दे। सफेद सरसों हाथी दांत का लेप करे और कुआ फल (सदा गुलाब) की धूप दे तब बालक सुखी हो जाता है।

ॐ नमो भगवति महानंदिनी ऐहि ऐहि द्वादशादित्यादि सर्व देवता रक्षित बालं मुंच मुंच बलिं गृन्ह गृन्ह स्वाहा।

चौबीसें दिन की रक्षा

चतुर्विंशति दिने बालमऽविन्याश्रयते ग्रही
नेत्राभ्यामास्य तश्चाऽपि जल स्राविं तदा भवेत् ॥ ९८ ॥

घृत सिक्तऽमतो भुक्तं सरावे नूतने स्थितं
सिद्धयै न्यसेद्बलिं मंत्री सायान्हे मंत्रपूर्वक ॥ ९९ ॥

वृक हस्ति नरवं पिष्टमऽजा मूत्रेण लेपयेत्
कपि लोम्ना च निंबेन धूपयेच्च सुखी भवेत् ॥ १०० ॥

चौबीसवें दिन बालक को अंबिनी के पकड़ने पर उसकी आँखो और मुँह से पानी निकलने लगता है। घृत में सिके हुये भोजन को नवीन सकोरे में रखकर मंत्री सायंकाल के समय मंत्रपूर्वक सिद्धि के लिये बलि दें। भेडिये और हाथी के नाखूनों को पीसकर बकरी के मूत्र के साथ पीसकर उसका बालक के शरीर पर लेप करे और बंदर के बाल तथा नीम पत्र की बालक के धूनी देने से बालक सुखी होगा।

ॐ नमो भगवति अंबिनी सर्व देवता प्रिये सर्व भक्ष प्रिये क्षेत्रपाल देवता रक्षिते बालं मुंच मुंच बलिं गृन्ह गृन्ह स्वाहा

पच्चीसवें दिन की रक्षा

पंच विशऽत्यहर्जाति गृन्हीते निधना ग्रही
मुष्टि बंधः सवेपथुः तदोर्द्धस्वसनं भवेत् ॥ १०१ ॥

कृसरं दधि पक्वान्नं च श्मशाने त्वऽपरान्हके
न्यसेत बलिं सुवर्णेन युक्तं मंत्री समंत्रकं ॥ १०२ ॥

वचा च श्रृंगी निगुंड़ी पत्र चूर्णेन लेपटेत्
मात् पातुर्नखं हिंगु धूपटेत्साप्रशाम्यति ॥ १०३ ॥

पच्चीसवें दिन बालक को निधना नाम की ग्रही के पकड़ने पर मुट्ठी बंध जाती है। शरीर में कंप और ऊंचा श्वास आने लगता है। उसके लिये खिचड़ी दही पका हुआ अन्न और सोने की बलि को दोपहर ढ़लने पर मंत्री श्मशान में मंत्र सहित दे। वच श्रृंगी (अतीस काकड़ा सिंगी) निगुंडी के पत्तों का चूर्ण से लेप करे तथा बालक की माता और पिता के नाखूनों और हींग की धूप बालक को देने से तब वह ग्रही शांत हो जाती है।

ॐ नमो भगवति निधने इंद्रादि देवता रक्ष्यं बालं मुंच मुंच बलिं ग्रन्ह ग्रन्ह स्वाहा ॥

छब्बीसवें दिन की रक्षा

षड्विंशति दिनं बालं समसे नाश्रयत्यमुं
तदास्याद्वेपथु स्ताप आंकुचः पादहस्तयोः ॥ १०४ ॥

कृत्वा पिष्टमयं काकं रक्त चंदन सेवितं
भक्तं पितृवने न्यसेत्सायान्हे मंत्रपूर्वकं ॥ १०५ ॥

छब्बीसवें दिन बालक को समसेना नाम की ग्रही के पकड़ने पर बालक कांपने लगता है। उसको ज्वर आ जाता है हाथ और पैर खींचते हुए मालूम होते हैं। उसके लिये पिट्ठी का कौआ बनाकर उसपर लाल चंदन का लेप करें उसको कुछ भोजन के साथ श्मशान में सायंकाल के समय मंत्र पूर्वक रखे।

ॐ नमो भगवति समसेन के सर्व देवप्रिय ऐहि ऐहि ह्रीं ह्रीं क्रौं क्रौं इदं बलिं गृन्ह गृन्ह बालकं मुंच मुंच स्वाहा॥

सत्ताइसवें दिन की बालक की रक्षा विधान

सप्त विंशत्य हो जातं गृन्हीते जन्य शारीका
तदा भवेत् अतीसारो ज्वरश्च बहु विकिया ॥ १०६

स तिलं क्षीर भक्तं च माषाऽन्नं कृसरं तथा
बलिं पूर्व दिशं दद्यात् मंत्रैणैव बालरूणोदये: ॥ १०७॥

वचा लसून गोमूत्रै लेंपटो द्रूपटो दऽपि
निर्माल्य सर्प निर्मोकै: पत्र भंगा च्च सिंचयेत् ॥ १०८॥

सत्ताइसवें दिन बालक को जन्य सारिका ग्रही के पकड़ने पर बालक के दस्त बुखार और बहुत प्रकार के विकार हो जाते हैं। इसके लिये तिल दूध का भोजन उड़द का अन्न खिचड़ी की बलि को मंत्र पूर्वक पूर्व दिशा में सूर्य के उदय होने के समय अर्थात् प्रातःकाल दें। वच लहसून को गोमूत्र से पीसकर बालक के लेप करे तथा निर्माल्य (पुजापा) और सर्प कांचली की दूप दे। तथा पत्र भंग जल से बालक को स्नान करावें।

ॐ नमो भगवति जन्य सारिके बाल घात मेणहिनि ऐहि ऐहि ह्रीं ह्रीं क्रौं क्रौं इदं बलिं गृन्ह गृन्ह बालकं मुंच मुंच स्वाहा।

अट्ठाइसवें दिन की रक्षा

अष्ट विशंत्यऽहोजातं गृन्हीते नडाधरा
तदा तस्या सदा त्रासश्चो द्विग्नत्वं च जायते ॥ १०९॥

तिल चूर्णं माष भक्तं कोद्रवं सूप मेवच
न्यसेद्बलिं च सायान्हे श्मशाने मंत्रपूर्वकं ॥ ११०॥

सित सर्षप गो श्रृंग गोमूत्रेण प्रलेपयेत्
गुगलं पिच्छ नालं च धूपना शाम्यति ग्रही ॥ १११॥

अट्ठाइसवें दिन बालक को यदि नडाधारि नाम की देवी (ग्रही) पकड़े तो बालक सदा ही हंसता रहता है। और बहुत घबड़ाहट पैदा होती है। उसके लिये तिलों का चूर्ण उड़द का भोजन और कोदों की दाल की बलि को सायंकाल के समय श्मशान में मंत्रपूर्वक रखे। सफेद सरसों गाय को सींग और गोमूत्र का बालक के लेप करे तथा गूगल और पिच्छ नाली (बेल के पूछ के बालों) की धूप दें। तो वह यही शांत हो जाता है।

ॐ नमो भगवति नड़धरि देवी ऐहि ऐहि ह्रीं ह्रीं क्रौं क्रौं ईश्वर नृत्य प्रिये ईश्वराय ईश्वरं इमं बालं मुंच मुंच बलिं गृन्ह गृन्ह स्वाहा।

उन्तीसवें दिन की रक्षा

नव विंशत्यऽहोजातं गृन्हीते शक्ति शाकिनी
उर्द्धश्वास ज्वर श्चाऽथातदा स्याद्बहु विक्रिया ॥ ११२ ॥

माष पिष्टमय मेषं घृत लिप्तं सपुष्पकं
तऽचान्नं शाक संयुक्तं प्रात रुत्तरत: क्षिपेत ॥ ११३ ॥

कृत्व गोमय सिद्धार्थं लेपयेत गुज दंत युक्
वचा केशौ च धूप: स्यात् ततौ बाल: सुखी भवेत ॥ ११४ ॥

उन्तीसवें दिन बालक को शक्ति शाकिनी नाम की ग्रही पकड़े तो बालक उर्द्धश्वास ज्वर और बहुत प्रकार के विकार हो जाते हैं। उसके लिये उड़द के आटे का भेड़ को घृत से लेप करके पूष्प के साथ अन्न और शाक सहित प्रातःकाल के समय इस बलि को उत्तर दिशा में रखे। गाय के गोबर और सरसों का लेप करे और हाथी दात वच और बालों सहित बालक को चूर्ण दे तो बालक सुखी हो जायेगा।

ॐ नमो भगवित शक्ति शाकिनी महादेवी नील ग्रीवे जटाधरे ऐहि ऐहि ग्रहेसु शततं रक्ष्यमिमं बालं मुंच मुंच बलिं गृन्ह गृन्ह स्वाहा ॥

तीसवें दिन की रक्षा

त्रिशाद्दिन वय स्थंतं गृन्हीते शाजला ग्रही
पृष्ठाकुंच न मुद्वेगो विकारा श्चाऽपरे तथा ॥ ११५ ॥

पिष्टऽजौमेष महिषौ रक्त चंदन पुष्पितौ
माषान्नं लाजकं शाकं न्यसेत संध्यौ तृतीयके ॥ ११६ ॥
वचां सर्ज्जं रसः पिष्टा लेपयेत् धूपनं वचा
सर्प त्वक निंब पत्राणि ततो मुंचति सा ग्रही ॥ ११७ ॥

तीसवें दिन बालक को सजला नाम की ग्रही के बालक को पकड़ने पर बालक की पीठ खिंचने सी लगती है उसमें घबराहट तथा दूसरे बहुत से विकार पैदा हो जाते हैं। उसके लिये पिसे हुवे जो का भेंड़ और भैंसा लाल चंदन पुष्प उडद धान की खील और बलि को तीसरी संध्या में अर्थात् सायंकाल के समय में दे। वच और राल को पीसकर बालक के लपे करे तथा वच सर्प कांचली नीम के पत्तों की धूप दे। तब ग्रही बालक को छोड़ देती है।

ॐ नमो भगवति जलाग्रही स्कंध सहिते भगवति सूर्याऽग्नि संप्रकाश प्रभे वरदे महारते पूर्व देव देवेन संपाद्ये शिखि ध्वज सहिते रूद्रे रौद्र कर्मकारिणी शिवे शिव तमे एव तमे एहि एहि बालकं रक्षनार्थं मिमं बलिं प्रति गृन्ह गृन्ह बालकं मुंच मुंच स्वाहा।

गुडेन अन्नेन सिद्धार्थैं पूपै स्तंदुलै स्तिलैः
क्षीरेण सर्प्पिषा दधा समिद्भिः क्षीर शाखिनां
स्नान क्रियादिभिः शुद्धौ मंत्री मंत्र जपऽन्नमुं
अप मृत्युं जयं होमं विदधीत यथा विधिः ॥ ११९ ॥

गुड़ अन्न सफेद सरसों पुवे चावल तिल दूध घृत दही और दूधवलो वृक्षो की समिधा (होम की लकड़ी को लाकर) रखे। फिर मंत्री स्नान आदि की क्रियाओं से शुद्ध होकर इस मंत्र को जपता हुआ विधि पूर्वक अपमृत्युंजय होम को करें।

ॐ नमो देवाधि देवाय सर्वोपद्रव विनाशनाय सर्वाप मृत्युजय कारणाय सर्वसिद्धिं कराय ह्रीं ह्रीं क्रौं क्रौं ठः ठः देवदत्तस्याय मृत्युं घातय घातय आयुष्यं वर्द्धय वर्द्धय स्वाहा।

ॐ नमो भगवते विश्व विधाधि पतये विश्व लोकनाथाय ॐ स्वाहा भू स्वाहा भुवः स्वाहा, स्व स्वाहा ॐ ॐ रं रं हं हं क्षां क्षां क्षीं क्षीं स्वर्वाप मृत्युन घातय घातय देवदत्तस्यायुषं वृद्धिं कुरू कुरू स्वाहा।

होम मंत्र:

कृत्वाऽमुं होममाचार्यो ऽविरुद्ध ग्रह शांतिकं
पंच पल्लव सेकं च मासे कुर्यात्प्रयत्नत: ॥ १२० ॥

जंबु दाडिम विल्वाम्र कपित्थानाम् सुपल्लवै:-
पक्व तोयेन च स्नानं पंच पल्लव सेवनं ॥ १२१ ॥

जिननामऽभिषे कादि पूजां कुर्यात् यथा विधि:
मुनीनऽपि यथा शक्ति भोजयेत् सम्यगादऽरात् ॥ १२२ ॥

एवं त्रिंश दिने कुर्यात् सर्वमेव यथा विधि:
एवं कृते प्रयत्नेन सा प्रजायुष्मती भवेत् ॥ १२३ ॥

आचार्य इस होम को जो विरोधी ग्रहों की शांति करने वाली है होम को करके मास के अंत में इन पाँचो पल्लवों के सेवन को यत्नपूर्व करें। जामुन अनार बिल्व आम कैथ (काथोड़ी) के पत्तों के पके जल से स्नान करने को पंच पल्लव सेवन कहते हैं। फिर जिनेन्द्र भगवान के अभिषेक और पूजा आदि को विधिपूर्वक करे और शक्ति पूर्वक मुनिराजों को भी भलीप्रकार आदर से भोजन करावें। इसप्रकार यत्नपूर्वक के तीसों दिन सर्वकार्य को विधि पूर्वक करें इसप्रकार यत्नपूर्वक कार्य करने से संतान दीर्घ आयुवाली होती है।

इत्थं एते वलय: प्रोक्ता दिनानां त्रिंशत: क्रमात्
शिष्टै एकादश मासाना मुच्यते अथ: वलि क्रमात् ॥ १२४ ॥

इसप्रकार महिने के तीसों दिन का क्रमश: वर्णन किया गया है अब शेष ग्यारह मासों की बलि का वर्णन क्रमश: किया जावेगा।

इति दिन बलि विधानं

द्वितीय मास

द्विमास जातं गृन्हीति रेवंति नामिका ग्रही
तदा भवेत् स्वर्णमाशीत त्व हस्त पादयो: ॥ १२५ ॥

ग्रीवाया: पृष्ठतो भंगो मुख शोषश्च जायते
बालस्य पसयां पानंत्ततो मुंचति सा ग्रही ॥ १२६ ॥

ॐ नमो भगवती रेवंतिरूपे ऐहि ऐहि इमं बलिं गृन्ह बालकं मुंच मुंच स्वाहा

दूसरे मास में बालक को रेवती नामकी ग्रही के पकड़ने पर बालक का रंग सोने की जैसी आभा वाला अर्थात् पीला पड़ जाता है। हाथ और पैर ठंडे हो जाते है। गर्दन के पीछे की भाग टूट जाता है। मुख सूख जाता है और बालक दूध भी नहीं पीता है। यह चिन्ह दिखाई देते हैं तब खीर गन्ने का रस चंदनो और फूलों सहित बलि को सात रात तक दिशा की तरफ रखे, और नीम के पत्ते और नीम के फूल लस्सन की धूप दे तथा तिलों के तेल का दीपक जलावे तब मंत्रपूर्वक बलि देने पर ही वह ग्रही बालक को छोड़ती है।

तृतीय मास

मुदमासित तदैवच पायसं चैक्षु दंड़ं च गंधं पुष्पादिकं बलिं
सप्त रात्रं क्षिपेत् साथमुत्तर स्यादिशि ध्रुवं कुसुम निबं
पत्राभ्यां लशुनेन च धूपयेत् दीपयेत् तिलतिलेन त्रिमासं
जातं गृन्हीते यामिनी नामि का ग्रही तदा स्यात् निष्टरो
रोदः स्रावोमूत्रपुरिषयो ॥ १२७ ॥

लाजा चूर्णं च माषाऽन्नं कदली फल मेवच
रक्त चंदन सं सिक्तं मृत्सरा वैनिवेशितां ॥ १२८ ॥

अपरान्हे बलिं दद्यात् श्मशाने मंत्रपूर्वकं
गुग्गुलं सर्षपं पचाऽपि नीरेण लोड्या लेपयेत् ॥ १२९ ॥

सर्प निर्म्मोक शार्दूल नखाभ्यां धूपनं शिशोः
एवं सप्तदिनं कुर्यात् ततो मुंचति सा ग्रही ॥ १३० ॥

ॐ नमो भगवति यामिनी वज्रपाणी पीत भूषण प्रिय एहि एहि ह्रीं ह्रीं क्रौं क्रौं इमं बालं मुंच मुंच बलिं गृन्ह गृन्ह स्वाहा।

तीसरे महिने में बालक को यामिनी नाम की ग्रही पकड़ती है तब बालक बहुत निष्ठुरता से रोता है। दस्त आते हैं और पेशाब भी बहुत होता है। उसके लिये धान की खील की चूर्ण उड़द का अन्न केले का फल और लाल चंदन की बलि मट्टे के सरावे में रखकर दोपहर ढ़लने पर श्मशान में मंत्रपूर्वक बलि दें। और गूगल सफेद सरसों को पानी में मथकर बालक के लेप करें। सर्प की कांचली और सिंह के नाखूनों की बालक को दें इसप्रकार सात दिन करने से वह ग्रही बालक को छोड़ देती है।

चतुर्थ मास

चतुर्मास वयस्यं तं गृन्हीते सा परान्मुखी
तया गृहीत मात्रेण कं पते दक्षिणे करे: ॥ १३१ ॥

क्षीरं पिवति विश्रश्च तत्तक्षणात् वमति ध्रुवं
दारूणं रोदिति श्वेत वर्णं स्यात् शरीरकं ॥ १३२ ॥

पूति गंधं भवेत्तस्य मुखं च परिशुष्यति
न मंत्रं नौषधं तस्य बलिं चापि न कारयेत् ॥ १३३ ॥

तथाऽप्योकां बलिं कुर्यात् मंत्र वादी प्रयत्नतः
घृत पक्कऽम पूपं च माषान्नं माहिषं दधिः ॥ १३४ ॥

पंच वर्ण चरू गव्यं पयो न्यसेत श्मशान के
सप्त रात्रिं तथा कुर्यात् देवपूजां च कारयेत् ॥ १३५ ॥

भोजयेत् च मुनीन् सम्यक् चतुर्विंशति संमितान्
आगमाय च वस्त्रादि दद्यात् एवं प्रशाम्यति ॥ १३६ ॥

ॐ नमो भगवति पराङ्मुखी देवते सर्वजन विद्वेषणी कृश गात्रे दुन्निरीक्षणे सर्वभूत पिशाच पूजिते विकट दंष्ट्रोत्रि नेत्रे ईश्वर प्रिये एहि एहि ह्रीं ह्रीं क्रौं क्रौं इमं बालं रक्ष रक्ष बलिं गृन्ह गृन्ह बालकं मुंच मुंच स्वाहा।

चौथे मास में बालक को परान्मुखी देवी के पकड़ने पर बालक का दाहिना हाथ बहुत काँपने लगता है। बालक दूध भी कठिनता से पीता है उसीसमय वमन करता है बहुत जोर से रोता है। उसके शरीर का रंग सफेद हो जाता है। उसमे गंध आने लगती है उसका मुख सुख जाता है। उसके लिये कोई मंत्र नहीं है उसके लिये कोई औषधि नहीं है। उसके लिये कोई भी बलि नहीं करनी चाहिये। तो भी मंत्र वादि उसके लिये एक बलि यत्नपूर्वक करे घी में पके हुए पूवे उड़द का अन्न और भैंस का दही, पाँचों रंगों की नैवेद्य और गाय के दूध की बलि को श्मशान में रखे सात रात्री तक इसप्रकार करे और जिनेन्द्र देव का पूजन करावें। चौबीस एकत्रित मुनिराजों को भोजन करावें और शास्त्रों के लिये कपड़ा दे इसप्रकार वह ग्रही शांत हो जाती है।

पंचम मास

पंच मास वयस्यंत मा दद्यात्यंबुंजानना
तया गृहीत मात्रेण शरीरं कनक प्रभं ॥ १३७ ॥

सीदंति सर्व गात्राणि मुखं च परिशुष्यिति
क्षीरं पिबति विश्रब्धंरोदित्यऽपि मुहुर्मुहः ॥ १३८ ॥

उदनं पायसं चैव दधिकं कृसरं तथा
पूरिकां धारिकां चैव कुल्माषं सघृतं तथा ॥ १३९ ॥

दक्षिणां दिशमासृत्य सप्त रात्रं बलि न्यसेत
एवं कुर्यात्प्रयत्नेन मंत्र वादी समंत्रकं ॥ १४० ॥

ॐ नमो भगवति अबुंजानने देवि सर्व रोग कारिणी सर्व भक्त प्रिये मुंच मुंच दह दह एहि एहि ह्रीं ह्रीं क्रौं क्रौं इमं बालं रक्ष रक्ष बलिं गृन्ह गृन्ह बालकं मुंच मुंच स्वाहा।

पाँचवें मास में बालक को अंबुजानना नाम की गृही के पकड़ने पर उसका शरीर सोने जैसा रंग का पीला पड़ जाता है। बालक के सब अंग दुखने लगते है; उसका मुख सूख जाता है। वह बहुत कठिनता से दूध पीता है और बार बार रोता है। उसके लिये भात खीर दही खिचडी पूरियाँ कचोरी कुलथी और घी की बलि को दक्षिण दिशा की तरफ सात रात्री तक दे। इसप्रकार मंत्र वादी यत्नपूर्वक मंत्र जपता हुआ करें।

छट्ठे मास

षण्मास जातं गृन्हीते दीनास्या नामिका ग्रही
तया गृहीत मात्रंस्तु तु रोदति स्फुट मेवच ॥ १४१ ॥

मुखे शोषश्च विश्रचं क्षीरपानं च जायते
कुक्षि शूल स्तु तस्या श्चबलिं नैव निधापयेत् ॥ १४२ ॥

सुगंधं गंध माल्यं च पंच वर्णं चरुं तथा
तिलस्य पक्व चूर्णं च माष कुल्माषमेवच ॥ १४३ ॥

रसमिक्षैश्च मृद्वीका धूप स्तैलेन लिपनं
पिष्टेन प्रतिमा कृत्वा सर्वमुत्तर तो दिशि
सायंकाले क्षिपे दै सप्त रात्रिं बलिं बुधः ॥ १४४ ॥

ॐ नमो भगवति दीनास्ये देवि रावण पूजिते दीर्घ केशि पिंगलाक्षी लंब स्तनि शुष्क गात्रे एहि एहि आवेशय आवेशय ह्रीं ह्रीं क्रौं क्रौं इमं बलिं गृन्ह गृन्ह बालकं मुंच मुंच स्वाहा।

छट्ठे मास में बालक को दीनास्या नाक की ग्रही के पकड़ने पर वह साफ साफ रोता है। मुख सुख जाता है, दूध कठिनता से पीता है और कोंख में दर्द होने लगता है। उसके लिये यह बलि दें। सुगंध (इत्र) गंधमाला (फूलमाला) पांच रंग की नैवेद्य, तिल का पकाया हुआ चूर्ण, उड़द और कुलथी गन्ने का रस, मुनक्का धूप इन सब पदार्थों के साथ साथ एक मिट्टी की प्रतिमा बनाकर उसको तेल से लेप करे और इस बलि को उत्तर दिशा में सायंकाल के समय दें। पंडित इसीप्रकार सात रात्रि तक करें।

सातवाँ मास

सप्तं मासं यद्योबालं गृन्हीते योषिणी ग्रही
जृंभनं गात्र ताप श्च दंत पीडा स्तना ग्रहः ॥ १४६ ॥

उच्चुस श्च तथा जाति पुष्प गंधश्च जायते
उदनं पायसं चाऽथ गुडभक्षं तथैव च ॥ १४७ ॥

कुल्माषं तिल चूर्ण च गंध पुष्पाद्यऽलंकृतं
पूर्वस्यां दिशि सायान्हे सप्त रात्रं बलिं दिशेत ॥ १४८ ॥

बलि मंत्र समायुक्त सर्वमंत्र विशारदः
अनालस्येन कुर्वीत् ततो मुंचति साग्रही ॥ १४९ ॥

ॐ नमो भगवति योषिणी देवते संग्राम प्रिये त्रिशूल धरे विरूपाक्षि जटामुकुट धारिणी कृशांगि विकट दंष्टे ऐहि ऐहि ह्रीं ह्रीं क्रौं क्रौं आवेशय आवेशय इमं बलिं गृन्ह गृन्ह बालकं मुंच मुंच स्वाहा॥

आठवें मास

अष्टमास वयस्थं तं गृहीते वन वासिका
मोहश्च सर्षपा कारा: स्फोटा गात्रे भवंति च ॥ १५० ॥

कंपनं वाम हस्तस्य मुख शोषश्च जायते
प्राप्तशो जीवनं तस्य तद्याप्येऽवं बलिं हरेत् ॥ १५१ ॥
चरुक तिल चूर्ण च सा पूपं स घृतं रसं
ईक्षोश्चूर्ण मादाय शीघ्र मुत्तर तो दिशि ॥ १५२ ॥

सप्तं रात्रं बलिं दद्यान्मत्रे णैव सधूपत:
एवं कृत प्रदत्तेऽत्र ततो मुंचति साग्रहं ॥ १५३ ॥

ॐ नमो भगवति वनवासिके एहि एहि ह्रीं ह्रीं क्रौं क्रौं आवेशय आवेशय इमं बालं रक्ष रक्ष त्वद्बलिं गृन्ह गृन्ह बालकं मुंच मुंच स्वाहा।

आठवें मास में बालक को वनवासिका देवी के पकड़ने पर शरीर में सरसों के बारबर दाने से फूट आते हैं। बायाँ हाथ काँपने लगता है, मुख सूखने लगता है, उसका जीवन संकट में पड़ जाता है उसके लिये यह बलि दे। नैवेद्य तिलों का चूर्ण पूए घृत ईख का रस और चूर्ण को लेकर उत्तर दिशा में मंत्र पूर्वक धूप सहित बलि दे। इसप्रकार सात रात करने पर यह ग्रही बालक को छोड़ देती है।

नवें मास

नव मास वयस्थं तं गृन्हीते ऽथ समुद्रिका
तदा निष्टर रोदश्च पाटली गंध संभव: ॥ १५४ ॥

क्षीर पानांतरा छर्दिर्ज्वर रोगो विवर्णता
प्रश्रावश्च भवे तस्य तदा दद्याति इदं बलिं ॥ १५५ ॥

चरुकं पायसाऽन्नं च कुल्माषं धान शक्तु मत्
माष पूपं च स दधि पश्चिमायां दिशि क्रमात् ॥ १५६ ॥

गंध पुष्पादि संयुक्तं बलिं मंत्रेण मंत्रयित्
न्यसेत्सप्तदिनं सायं ततो मुंचाति साग्रही ॥ १५७ ॥

ॐ नमो भगवीत समुद्रिके वज्रधारिणी पीत वर्ण भूषण प्रिये एहि एहि आवेशय आवेशय ह्रीं ह्रीं क्रौं क्रौं इमं बालं रक्ष रक्ष त्वद्बलिं गृन्ह गृन्ह बालकं मुंच मुंच स्वाहा।

नवे मास में बालक को सामुद्रिका गृही के पकड़ने पर बालक निष्ठुरता से रोती है। उसके शरीर में पाटली (पांटूफली) की जैसी गंध आती है। वह दूध नहीं पीता उसको उलटी और ज्वर होने लगता है, रंग फीका हो जाता है, उसको बार बार पेशाब होने लगता है तब उसको यह बलि दे। नैवेद्य खीर का भोजन कुलथी धान का सत्तू, उड़द के पूवे और दही को क्रम से लेकर पश्चिम दिशा में गंध और फूल आदि सहित मंत्रपूर्वक बलि दें। इसप्रकार सायंकाल के समय सात दिन तक बलि रखने से वह ग्रही बालक को छोड़ देती है।

दसवें मास की रक्षा

बालकं दशमे मासे गृन्हीते सुकला ग्रही
ततोद्वेजनमाद्यं च स्तन द्वेषश्च जायते ॥ १५८ ॥
उदनं पायसं दधि शक्तु समन्वितं
पंच भक्षं तथा पक्व माष मिक्षुरसं तथा ॥ १५९ ॥

पिष्टस्य विकृतान् मेरी माणि चक्र ध्वजानऽपि
तैल दीपं पंच गंधादि चोत्तरस्यां दिशि क्रमात् ॥ १६० ॥

सप्तरात्रं तु देया तन्मंत्रवादी समंत्रकं
एवं कृते प्रयत्नेन ततो मुंचति साग्रही ॥ १६१ ॥

ॐ नमो भगवति सुकलेगदायुध धारिणी मुक्ता भूषण प्रिये एहि एहि आवेशय आवेशय ह्रीं ह्रीं क्रौं क्रौं इमं बालं रक्ष रक्ष त्वद्बलिं गृन्ह गृन्ह बालकं मुंच मुंच स्वाहा।

दसवें मास में बालक को सुकला नाम की ग्रही के पकड़ने पर घबराहट आदि हो जाती है और स्तन का दूध लेने से द्वेष करता है। उससमय भात, खीर, दही और सत्तू पाँचों प्रकार के भोजन और पके हुए उड़द गन्ने का रस तथा इसको पीसकर मेरी मणि चक्र ध्वजादि तेल का दीपक और पाँचों तरह की सुगंध आदि सहित उत्तर दिशा की तरफ सात रात तक बराबर मंत्रपूर्वक मंत्रवादी बलि दें इसप्रकार प्रयत्न करने से वह ग्रही बालक को छोड़ देती है।

ग्यारहवें मास की रक्षा

बालमेका दस मासे वंधु मुख्या विशेत तदा
मोहो ज्वराति साहश्च रोदनं च भवेन्मुहु : ॥ १६२ ॥

भक्तं गंध समायुक्तं दधि पायस पूरिकां
गंधं पुष्पादि प्रदीपादि सोभितं स हिरण्यकं ॥ १६३ ॥

पूर्वं द्वारे बलिं न्यसेत् मध्यान्हे दिन सप्तकं
शुद्धो ध्यान परोमंतकी ततो मुंचति साग्रही ॥ १६४ ॥

ॐ नमो भगवति वंधुमुख्ये वज्रधारिणी पीत भूषण प्रिये एहि एहि आवेशय आवेशय ह्रीं ह्रीं क्रौं क्रौं इमं बालं रक्ष रक्ष त्वद्बलिं गृन्ह गृन्ह बालकं मुंच मुंच स्वाहा।

ग्यारवें दिन मास में बालकको बंधु मुक्या ग्रही के पकड़ने से पर मोह ज्वर और दस्त होते हैं, और वह बार बार रोता है। उसके लिए गंध सहित भोजन दही खीर पुरू धूप दीपक आदि से शोभित सोने सहित बलि को दोपरहर के समय पूर्व दरवाजे पर शुद्ध ध्यान में लगा हुआ मंत्री सात दिन तक मंत्र को जपते हुए तब वह ग्रही बालक को छोड़ देती है।

बारहवें मास

बालकं द्वादशे मासे गृहीते चपला ग्रही
त्रस्यति स्पृश्यति प्रायो बालो मुंचति च ध्रुवं ॥ १६५ ॥

स्वेतान्नं दधि कुल्माषं तिल चूर्णं समंत्रकं
पूर्वस्यां दिशि मध्यान्हे बलिं सप्तं दिनं न्यसेत् ॥ १६६ ॥

पंच पल्लव पक्वांबु स्नपनं स्वेत सर्षपं
गुग्गुलं लसुनं चाऽपि धूपयो त्साऽमपि मुंचति ॥ १६७ ॥

ॐ नमो भगवति चपले इटि मिटि पुल्लिंदिनि एहि एहि आवेशय आवेशय ह्रीं ह्रीं क्रौं क्रौं इमं बालं रक्ष रक्ष त्वद्बलिं गृन्ह गृन्ह बालकं मुंच मुंच स्वाहा।

बारहवें मास में बालक को चपला नाम की ग्रही के पकड़ने पर वह अत्यंत दुख पाता है प्राय चिपटने लगता है फिर छोड़ देती है। उसके लिये श्वेत अन्न (चावल) दही कुलथी तिल के चूर्ण की बलि को मंत्र सगित पूर्व दिशा में दोपहर में सात दिन तक रखे पांचो पत्तों के पके हुए जल में स्नान करायें और सफेद सरसों गुगल और लहसून की धूप दें। तब वह ग्रही बालक को छोड़ देती है।

अर्थ शोडष वर्ष रक्षा

दिने दिने बलिं कुर्वते मंगल स्नानवा त्रिंक
दत्वा बलिं ततो होमं विदधीत यथा विधि: ॥ १६८ ॥

इसप्रकार प्रतिदिन बलि देता हुआ मंगल स्नान करके (नित्य घर में स्नान करने की गृह स्नान कहते हैं) ग्रहण श्रावणी आदि स्नान को नैमित्तिक स्नान तथा विधानादि विवाहादि संस्कारों के समय स्नान को मंगल स्नान तथा अन्य पापों से शुद्ध होने के समय स्नान को प्रायश्चेति स्नान कहते हैं) अथवा मुँह हाथ धोकर बलिं देकर विधि पूर्वत होम करें।

बलिं होम विधाननांते देवपूजा यथा विधि
कारयित्वा यथा सम्यगाचार्यं मऽमपि पूजयेत् ॥ १६९ ॥

अनुमानं च तांबूल क्षोमादिवसनेन च
चंदनाद्यऽर्चनागेन तत्तन्मासे हिकारयेत् ॥ १७० ॥

विधिना भोजये न्नित्यं पूर्वोक्तां श्च तपस्विन:
मासे मासे कृते ह्येषु सर्वशांति भविष्यति ॥ १७१ ॥
पंच पल्लव नीरेन स्नपनं च तत: शिशो
ब्रह्मणेऽप्यं बिकाद्याश्च पूजां पूर्वातिक्रमात् ॥ १७२ ॥

आचार्यं पूजयेत्पश्चात् वस्त्राद्यै: सर्ववस्तुभि:
अनेन बलिनात् तुष्टा शिशुंत्यजति चापला ॥ १७३ ॥

इत्थं निगदिता: सर्व बलयो मास गोचरा:
अथोच्यते द्वितीयादि संबत्सर बलि क्रम: ॥ १७४ ॥

बलि और होम के विधान के अंत में विधि पूर्वक देवपूजा करके भलीप्रकार आचार्य का भी पूजन करें। उसका पान और रेशमी वस्त्रों से सत्कार करके चंदन आदि से प्रत्येक मास में पूजन करे विधिपूर्वक नित्य मुनिराजों व तपस्वियों को भोजन करावें इसप्रकार प्रतिमास करने से सर्वशांति हो जायेगी। फिर बालक को पांच पत्तों के पकाये हुये जल से स्नान करावे तथा पूर्वोक्रम से देव देवियों का पूजन करें। इसके पश्चात वस्त्र आदि सब वस्तुओं से आचार्य की पूजा करे तथा बलि से संतुष्ट हुई चपला यही बालक को छोड़ देती है। इसप्रकार सब महिनों की बलि का विधान कहा है तथा आगे दूसरे वर्ष से शुरु करके वर्षो की बलि विधान को क्रम पूर्वक कहा जायेगा।

इति बारह मास बलि विधानं

द्विवर्षं जातं गृन्हीते रक्त कंठी ग्रही
ध्रुवं तदा रक्तऽतिसारं श्च ज्वरोऽप्यरूण मूर्तिका ॥ १७५ ॥

रक्तता नेत्रयो र्हासो सत्कृद गात्रस्य पूतना
पायसं शुद्धं भक्तं च कुल्माषं शक्करां दधि ॥ १७६ ॥

कृसरं पक्कं मांषं च धूप दीपे स मन्वितं
पिष्ट वकं च पूर्वस्यां दिशि सप्तं दिनं हरेत् ॥ १७७ ॥

लसुनं सर्प निर्म्मोक सिंदूरैश्च प्रधूपनं
निंबं विल्वज पत्रांबु स्नानं चंदन लेपनं
स्नपनं शांतिनाथस्य विधि पूर्वेण कारयेत् ॥ १७८ ॥

ॐ नमो भगवति रक्त कंठी कुमार वेगिनी भिंद भिंद मुख मंडिते कह कह हन हन वर्ष तुंदरसे विरल दंतिनि आकाश देवते भज भज स्वाहा।

दूसरे वर्ष में बालक को रक्तकंठी नाम की ग्रही पकड़ने पर खून के दस्त बुखार शरीर में लाली, दोनों आंखो में ललाई (लाल रंग) हंसी और कभी कभी शरीर में सफेद हो जाती है। उसके लिये खीर शुद्ध भोजन कुलती शक्कर और दही खिचड़ी पके हुए उड़द, धूप , दीपक और पिसे हुए पापड़ की बलि को पूर्व दिशा में सात दिन तक मंत्र पूर्वक दें। लहसून सर्प कांचली और सिंदूर से धूप दें। नीम और बील के पत्तों से पकाये हुये जल से स्नान करावें. और चंदन का लेप करें। भगवान शांतिजी का विधिपूर्वक अभिषेक करे।

त्रिवर्षं जातं गृन्हीते सोमीनाम ग्रही ध्रुवं
तया ग्रहीतमात्रस्तु चक्षुभ्यांतु न पश्यति ॥ १७९ ॥

सीदंति सर्वं गात्राणि ज्वराति सारवान् भवेत्
कंपेत् वाम हस्तश्च भोजनं च न रोचति ॥ १८० ॥

पूर्वस्यां दिशि सायान्हे सप्त रात्रं बलिं हरेत्
वचा लसुन सर्पत्वग जा केशैश्च धूपयेत् ॥ १८१ ॥

पंच एवं कृते प्रयत्नेन ततो मुंचति सागृही
पल्लव पक्वांबु स्नानं चापि प्रयोजयेत् स्नपनं
शांतिनाथस्य विधि पूर्वेण कारयेत् ॥ १८२ ॥

ॐ नमो भगवति शोभी नाम देशिनी भिंद भिंद मुख मंडिते कह कह हन हन घट शीशे विरल दंतिनी आकाश देविते भज भज स्वाहा।

तीसरे वर्ष में बालक को सोमी नाम की ग्रहा के पकड़ने पर बालक को आंखो से दिखलाई नहीं देता है। इसके सब अंग दुखने लगते हैं। उसको बुखार और दस्त होने लगते हैं। उसका बाँया हाथ कांपने लगता है। उसको भोजन भी अच्छा नहीं लगता है। उसके लिये भात, खीर, दही, खिचड़ी कुलथी, उड़द का चूर्ण, गंध फूल और दीपक की बलि को पूर्व दिशा में सायंकाल के समय में सात रात तक दें और वच, लहसून, सर्प-कांचली, बकरी के बालों की धूप दें। पाँचों पत्तों के पके हुये जल से स्नान करावे और भगवान शांतिनाथजी का विधिपूर्वक अभिषेक करावे।

चतुवत्सरिकं बालं गृन्हीते चंचला ग्रही
तया गृहीत मात्रस्तु ज्वरेण परिपीड्यते: ॥ १८३ ॥

आमोट्यति गात्राणि त्रसते च पुन: पुन:
पंच वर्णं चरुं तद्वत गंधमाल्य प्रदीपकान् ॥ १८४ ॥

सप्तरात्रं बलि दद्यात्त सायं पूर्व दिशि क्रमात्
धूपयेन्मेषश्रृंगेन गोदंतेन नखेन वा
स्नापयेत्पंच गव्येन ततो मुंचति सागृही ॥ १८५ ॥

ॐ नमो भगवति चंचले मोहसिनि कह कह हन हन घट शीशे विरल दंतिनि आकाश रेवति भज भज स्वाहा ॥

चौथे वर्ष में बालक को चंचला नाम की ग्रही के पकड़ने पर बालक को बुखार आ जाता है। उसका शरीर सूज जाता है। बालक बार बार कष्ट पाने लगता है। उसके लिये पाँचो रंगो का भोजन नैवेद्य और उसी तरह की फूल माला और दीपक की बलि को सायंकाल के समय पूर्व दिशा में सात रात तक दें। और भेंड के सींग गाय के दांत या नाखूनों की धूप दें। और गाय, घी, दूध, दही, गोबर तथआ मूत्र (पंच गव्य) से बालक को स्नान करायें। तब यह ग्रही उसे छोड़ देती है।

पंचवत्सरं बालं च दाहेष्याश्रयते ग्रही
तया गृहीत मात्रेण चक्षु भ्यां नैव पश्यति ॥ १८६ ॥

सीदंति सर्वं गात्राणि मुखं च परिसुष्यति
ज्वर स्तथाऽतिसार श्च तदानीं भवति ध्रुवं ॥ १८७ ॥

उदनं पायसं चैव कृसरं च गुंडोदनं
कुल्माषं च दधिऽमाज्यं पंच भक्ष समन्वितं ॥ १८८ ॥

सप्त रात्रं बलिं दद्यात् उत्तरस्यां दिशि क्रमात्
लसुनं सित सिद्धार्थं नर केशेन् धूपयेत्
एवं कृते प्रयत्नेन ततो मुंचति सा ग्रही ॥ १८९ ॥

ॐ नमो भगवति दाहेष्टि कुमारि वाशिनि छिंद छिंद मुख मंडिते कह कह हन हन घट शीसे विरल दंतिनि आकाश रेवति भज भज स्वाहा।

पाँचवें वर्ष में बालक को दाहेष्टी नाम की ग्रही पकड़ती है उसके पकड़ने मात्र से बालक को आँखो से नहीं दिखता है। उसके सब अंग दुखने लगते हैं। मुख सूख जाता है। और उसको ज्वर और दस्त निश्चयपूर्वक आने लगते हैं। उसके लिये भात खीर खिचड़ी तथा गुड़ का भोजन कुलथी दही, घृत और पाँचों प्रकार के भोजन को सात रात तक उत्तर दिशा में बलि मंत्र पूर्वक दें तथा लहसून सफेद सरसों और आदमी के बालों की धूप दें, इसप्रकार प्रयत्न करने पर वह ग्रही बालक को छोड़ देता है।

षट् सांवत्सरिकं बालं गृन्हीते स्वैनिका ग्रही
तदा गृहीत मात्रस्तु दारूणं रोदिति ध्रुवं ॥ १९० ॥

आकाशं च निरीक्षते स्वामि स्वामीकि भाषते
ज्वर रोगाति सारश्च जायते नाऽत्र संशयः ॥ १९१ ॥

उदनं पायसं चैवं दद्या कृसर मे एव च
पूरिका धारिका चैव तथा गंधादि संयुतं ॥ १९२ ॥

सप्त रात्रं बलिं दद्यात्त उत्तर स्यां दिशि क्रमात्
धूपयेत्मेष श्रृंगेन गोदंतेन नरवेनवा
स्नापयेन्त्र भंगेन ततो मुंचति सा ग्रही ॥ १९३ ॥

ॐ नमो भगवति स्वैनिकायै बलिं गृन्ह गृन्ह बालकं मुंच मुंच कुमारिकायै स्वाहा।

छट्ठे वर्ष में बालक को स्वैनिका ग्रही पकड़ती है उसके पकड़ने मात्र से बालक भयंकर रूप से रोता है। वह आकाश की तरफ बार बार देखता है और मिन मिन करके बोलता है उसको ज्वर और अतिसार निरसन्देह हो जाता है। उसके लिये भात, खीर, दही, खिचड़ी, पुरी, कचौरी और सुगंधित धूप दीपादि सहित सात रात तक उत्तर दिशा में क्रम पूर्व मंत्र पढ़ते हुवे बलि दे। तथा भेड के सींग गाय के दांत अथवा गाय के नाखूनों की बालक के धूप दें। बालक को पत्र भंग जल से स्नान कराये ऐसा प्रयत्न करने पर वह ग्रही छोड़ देती है।

सप्त वार्षिक माधत्ते उग्र चामुंडी नामिका
निस्वासोपि च दिवारात्रं भूमौ पातो ज्वरोऽरूचि ॥ १९४ ॥

पायसं पूरिका पूपं कुल्माषं कृसरं दधिः
चतुः संध्यादु दीच्यां तं दर्भेषु बलिमा हरेत् ॥ १९५ ॥

धूपये ज्जातुका पूप फल पत्र समायुतं
एवं सप्त दिनं कुर्यात् ततो मुंचति साग्रही ॥ १९६ ॥

ॐ नमो भगवति कुष्मांडी देवि उग्र चामुंडी जुहुटां मुंच मुंच दह दह पच पच उसर उसर बलिं गृन्ह गृन्ह बालकं मुंच मुंच स्वाहा।

सातवें वर्ष में बालक को कुष्मांडी ग्रही के पकड़ने पर बालक रात दिन जोर से श्वास लेता रहता है वह जमीन पर लोटता है तथा उसको बुखार और अरूचि हो जाती है। उसके लिये खीर, पुरी, पुवे कुलथी और दही की बलि को चारों संध्याओं में उत्तर दिशा में डाभ के ऊपर दें। और लाख पूवे फल और पत्तों की धूप दे इसप्रकार सात दिन करने से वह ग्रही बालक को छोड़ देती है।

अष्ट वर्ष वयो बालं गृन्हीते राक्षसी ग्रही
रोदनं गर्जनं चाऽपि त्रसनं च भवेत् तदा ॥ १९६ ॥

पायसं कृसरं पंच भेदभक्षघृतं तथा
कुल्माषं माष चूर्णं धूपं गंधादि संयुतं ॥ १९७ ॥

तद्दद्यार्थऽर्द्ध रात्रौ सप्त रात्रं बलिं हरेत्
सर्प निर्म्मोक निगंडी पिच्छला लसुन धूपयेत् ॥ १९८ ॥

पंच पल्लाव पंकांबु स्नानं चापि प्रयोजयेत्
एवं कृत प्रयत्नेन स्वस्थो भवति बालकः ॥ १९९ ॥

ॐ नमो भगवति राक्षसी कुमारी वेशिनी छिंद छिंद भिंद भिंद मुख मंडिते कह कह हन हन पुश्चलि विरल दंति आकाश रेवति भज भज स्वाहा।

आठवें वर्ष में बालक को राक्षसी नाम की ग्रही पकड़ने पर बालक रोता है, गरजता है और बहुत डरता है। उसके लिये खीर- खिचड़ी पाँचों प्रकार के भोजन, घी, कुलथी, उड़द का चूर्ण, धूप और गंध आदि सहित मंत्र जपते हुए। बलि को अर्द्धरात्री में सात दिन तक दें, सर्प कांचली निगंडी (सेंभल) पिच्छला (मोर पंखा) और लहसून की धूप दें। पाँचों पत्तों के पके हुवे जल से स्नान करावे इसप्रकार प्रयत्न करने पर बालक स्वस्थ हो जाता है।

गुड संयुक्त पयसा तिल सिद्धार्थ मिश्रितैः
क्षीर वृक्ष समिद्भिश्च मंत्रेणानेन होमयेत् ॥ २०० ॥

ॐ मुंच मुंच एहि एहि जय जय आगच्छ आगच्छ बालिके स्वाहा।

गुड में मिले हुए जल दूध तिल और सफेद सरसों को उपरोक्त मंत्र से मंत्रित करके दूध वाले वृक्षों की समिधाओं से होम करें।

नव संवत्सरे जातं शरसाला नामिका ग्रही
तदा ज्वरोऽतिसारश्च काइयं चापि भवेन्महत्
चतुर्विध चरु माषा पूपं दधि समन्वितं
गंध पुष्पादि संयुक्तं सप्तं रात्रं समंत्रकं ॥ २०१ ॥

सायमुत्तर काष्टायां बलिं दद्यात् विचक्षणः
बिल्वाऽरिष्टक पत्राभ्यां पक्वांबु स्नान मे एवच ॥ २०२ ॥

वचा सिद्धार्थ लसुनै कल्कैनापि प्रलेपयेत्
गजदंत न् केशं मेष श्रृंग च धूपयेत् ॥ २०३ ॥

ॐ नमो भगवति रुधिर वेशिनि शरशाला विशालिनि छिंद छिंद मुख मंडिते कह कह हन हन घट शीशे विरल दंतिनि आकाश रेवति भज भज स्वाहा।

नवें वर्ष में बालक को शरशाला नाम की ग्रही के पकड़ने पर ज्वर अतिसार और बड़ी श्वास खांसी का कष्ट होता है। उसके लिये चार प्रकार की नैवेद्य उड़द के पुवे दही के साथ गंध पुष्पमाला आदिग की बलि को मंत्र पूर्वक सात रात तक बुद्धिमान सायंकाल के समय उत्तर दिशा में बलि दें। तथा बिल्व और अरीठे के पत्तों के पके हुवे चल से स्नान करें। वच और सफेद सरसों लहसून के कल्क का लेप करें तथा बालकके हाथी दांत मनुष्य के बाल और भेड़ के सींग की धूप दें।

दश वर्षं जातं बालं चंडी गृन्हान्ति देवता
तदानीं वहु सो मूत्रं क्रोधः कंपो ज्वर स्तदा ॥ २०४ ॥

अक्षिरोग स्तथा भ्रांति भोंजन स्याऽल्पता महत्
पानं च धावनं नित्यं गानं निष्ठुर भाषणं ॥ २०५ ॥

यामि यामीति वतनं हसनं च भवेत् तदा
पायसं गव्यं सपिश्च दधि लज्जे समान्वितम ॥ २०६ ॥

आपूपं धान्यकं चापि कुमुंदं करवीर कं
गंधादि संयुतं सायं न्यसेत् उत्तरतो बलिं ॥ २०७ ॥

सप्त रात्रं तथा कुर्यात् जिन पूजाश्च भक्तितः
ऋषीणां भोजनं चापिदु श्चिकित्साहि सा पुतः ॥ २०८ ॥
गुग्गुलं तगरं कुष्टं नखं चाऽपि प्रधूपयेत्
स्नापयेत्पत्र भंगेन ततो मुंचति साग्रही ॥ २०९ ॥

ॐ नमो भगवित चंडी रावण पूजिते दीर्घ केशि पिंगलाक्षि लंब स्तनि शुष्क गात्रे प्रजा पीडन परे एहि एहि आवेशय आवेशय ही हीं क्रौं क्रौं इमं बलिं गृन्ह गृन्ह बालकं मुंच मुंच स्वाहा।

दसवें वर्ष बालक को चंडी ग्रही के पकड़ने पर बालक के बहुत मूत्र क्रोध कंप ज्वर आंखों का रोग भ्रम भोजन का क्रम खाना पानी बहुत पीना दौड़ना सदा गाते रहना और निष्ठुरता से बात करना आदि रोग हो जाते हैं। मिन-मिन करके बोलना कभी-कभी हंसती भी है। तब उसके लिए खीर गाय का घृत दही, और लाजा (धान की खील) पूवे धावल का अनाज, सफेद कमल और कनेर के फूल धूप फूल माला सहित सायंकाल के समय उत्तरादि शामे बलि मंत्र सहित दें। और इसीप्रकार सात रात तक करता हुआ भक्ति सहित जिनेन्द्र देवपूजा और मुनियों को भोजन कराता हुआ चिकित्सा करें। गूगल तगर कूढ़ और व्याघ्र के नाखूनों को धूप दे। और पत्र भंग जल से स्नान करावे तब यह ग्रही बालक को छोड़ देती है।

एकादश समाजातं गृन्हीत श्रुण कोकिला
तदा का साक्षि रोगश्च काक रावश्च जायते ॥ २१२ ॥

पायसं त्रिविधं भक्ति यूथिका मधुमेवच
बलिंऽभिक्षु रसं दद्यात्संध्यायां सप्तरात्रिकं ॥ २१३ ॥

वचालशुन सिद्धार्थ तगरै धूपये च्च
तत पत्र भंगेन सं स्नाप्यात् ततो मुंचति सग्रही ॥ २१४ ॥

ॐ नमो भगवति श्रुणु कोकिलायै बालक वाधन प्रियायै सर्व प्राणी प्रमोहनायै इमं बलिं गृन्ह गृन्ह बालकं मुंच मुंच स्वाहा।

ग्यारहवें वर्ष में बालक को श्रुण कोकिला नाम की ग्रही के पकड़ने पर खांसी आंख का रोग हो जाता है और बालक कौवे के समान शब्द करने लगता है। इसके लिये खीर तीन प्रकार का भोजन थिका जूही और महुये और ईख के रस की बलिं को सायंकाल के समय सात रात तक दें। फिर बालक को वच, लहसून सफेद सरसों तगर की धूप दें। और पत्र भंग जल से स्नान करावे। तब ग्रही उस बालक को छोड़ देती है।

द्वादशाब्द वयस्थं तं गृन्हीते निर्द्धना ग्रही
दंत संघट्टनं काश्यं मुख शोषं मूर्द्ध कंपनं ॥ २१५ ॥

रक्त पुष्पे सितऽक्षिं च तदा तस्य भवंतिहि
उदनं पयसा युक्तं गुडेन चंदुनं तथा ॥ २१६ ॥

कुल्माषं तिल चूर्णं च गं ध पुष्प समन्वितं
सायमुत्तरतो न्यसेत बलिं सप्त दिनं कमात् ॥ २१७ ॥

अश्वत्थेन समायुक्त पत्र भंगेन सिंचयेत्
धूपये न्निंब सिद्धार्थ तगरैः सापि मुंचति ॥ २१८ ॥

ॐ नमो भगवति निर्द्धनि वाम रूप धारिणी धम धम धामय धामय एहि एहि इमं बालकं मुंच मुंच बलिं गृन्ह गृन्ह स्वाहा।

बारहवें वर्ष में बालक को निर्द्धना नाम की ग्रही के पकड़ने पर बालक दांत पीसता है, दुबला हो जाता है। उसका मुख सूखने लगता है और सिर हिलाने लगता है। उसकी आँखे पहिले लाल होकर पुष्प (फूल) पड़ जाता है, फिर आंखे सफेद हो जाती हैं। उसके लिये दूध गुड़ चंदन कुलथी तिलो का चूर्ण गंध और पुष्प की बलिं को सायंकाल के समय उत्तर दिशा में क्रम से सात दिन तक दें। फिर बालक को पीपल सहित पत्रं भंग जल से स्नान करावे और नीम सफेद सरसों तथा तगर से धूप दें। तब यह ग्रही बालक को छोड़ देती है।

त्रियो दशाऽब्द संजातं गृन्हीते कामुका ग्रही
तदा ज्वरोति शूलश्च रोदनं दारूणं भवेत् ॥ २१९ ॥

घृतेनाभ्यंजनं सर्पि पानं चापि प्रयोजयेत्
पायसं तिल चूर्णं च दधि कुल्माष मिश्रितं ॥ २२० ॥

शालि भक्तं च गंधादि संयुतं मंत्रपूर्वकं
मध्यान्हे तु बलिं दद्यात्त श्मशाने सप्त रात्रकं ॥ २२१ ॥

गुड सिद्धार्थ लसूनै धूपनं च प्रयोजयेत्
एवं कृते प्रयत्नेन बालं मुंचिति सागृही ॥ २२२ ॥

ॐ नमो भगवति कामुकाये काम व्यसनि विसौम्य विलासिनी छिंद छिंद मुख मंडिते कह कह हन हन घट शीशे विरल विरल दंतिनि आकाश रेवति भज भज स्वाहा।

तेरहवें वर्ष में बालक को कामुका नाम की ग्रही के पकड़ने पर बुखार और बहुत दर्द होता है। तथा बालक भयंकर रूप से रोता है उस समय घी से मालिश करे तथा घी पिलावे तथा खीर तिलों का चूर्ण दही कुलथी मिलाकर चावल का भोजन और गंध आदि की बलि को मंत्रपूर्वक दोपहर के समय श्मशान में सात रात तक दें। तथा बालक को गुड़ सफेद सरसों लहसून की धूप भी दें इसप्रकार प्रयत्न करने पर वह ग्रही बालक को छोड़ देती है।

चतुर्दशाब्दजातं तं गृन्हीते भैरवी तथा
ज्वरश्च पूति वक्त्रत्वं भूमौ च परिवर्तनं ॥ २२३ ॥

उर्द्ध श्वासः प्रकंप श्चौ द्विग्न त्वं रूधिराश्रंव
सर्वमेव यदि भवेद साध्यं त्वं ऽन्यथा क्रिया ॥ २२४ ॥

कृसरं क्षीरमऽन्नं च गंध पुष्प बलिं क्रमात्
पूर्वस्यां दिशि मध्यान्हे सप्त रात्रे निधापयेत् ॥ २२५ ॥

पंचकेन्पल्लवैः स्नाप्या तगरं वेणु चर्म्म च
गज दंतं च संहत्य धूपनेन तत् प्रशाम्यति ॥ २२६ ॥

ॐ नमो नमश्चचामुंडे भैरवी देवी हूं फट हीं हीं अप सरतु दुष्ट ग्रहान हुं तत्र गच्छतु गृन्हान्तु तत्र स्व स्थानें हरेणाज्ञा पयति स्वाहा।

चौदहवें वर्ष में बालक को भैरवी के पकड़ने पर बुखार दुर्गंध शरीर में ठंडा पन भूमि में लोटना ऊँचा श्वास कंप घबराहट हो जाती है तथा खून बहने लगता है यदि यह सब लक्षण हो तों बालक अच्छा नहीं हो सकता अन्यथा उपाय करना चाहिये। खिचड़ी दूध अन्न (खीर) धूप फूल माला की बलि को क्रम से पूर्व दिशा में पूर्व दिशा में दोपहर के समय सात दिन तक देवे। पांचो पत्तों के पके हुवे जल से स्नान करावे और तगर बांस के छिलके तथा हाथीदांत को मिलाकर धूप दें। इससे ग्रही शांत होकर बालक को छोड़ देती है।

पंच दश वर्ष जातं गृन्हीते चंडिनी ग्रही
भूमौ पातो ज्वराछर्दिर्निद्रा च बहुला भवेत ॥ २२७ ॥

चंदनं पायसं चैवं कृसरं दधि भोजनं
कुल्माषं तिल चूर्णं च चूत रंभादिसत्फलं ॥ २२८ ॥

उत्तरस्यां दिशिन्यसेत् सायं सप्त दिनं क्रमात्
अश्वगंधा मधूका भ्यांषणांऽबु स्नानमाचरेत् ॥ २२९ ॥

सिद्धार्थं लसुनं मेष श्रृंगं चादाय धूपयेत्
एवं कृते प्रजारोगान् निवर्त्तेत् ध्रुवं ततः ॥ २३० ॥

ॐ नमो भगवति चंडिनिकाये श्वेत माल्य विभूषिताये कर्पूर क्षौद दंतुराये ऐहि ऐहि इमं बालं गृन्ह गृन्ह बालकं मुंच मुंच स्वाहा।

पन्द्रहवें वर्ष में बालक को चंडिनी नाम की ग्रही पकड़ती है तब वह पृथ्वी में लौटता है। ज्वर वमन तथा उसे बहुत नींद आती है। उसके लिये चंदन खीर खिचड़ी दही भोजन कुलथी तिल का चूर्ण आम और केला आदि अच्छे फलों की बलि को उत्तर दिशा में सायंकाल के समय सात दिन तक दें। असंगध और महुवे के पकाये हुवे जल से स्नान करावे सफेद सरसों लसुन भेड का सींग लाकर उसकी धूप दें इसप्रकार प्रयत्न करने पर निश्चय से संतान के रोग से छुटकारा मिल जाता है।

शोडषाब्द समाजातं गृन्हीते रौद्री ग्रही
ज्वरश्चाद्विग्नाता शोषोत्पादश्च स्यु बहु विक्रियाः ॥ २३१ ॥

पायसान्नं च कुल्माषं दद्या कृशमे वच
गुडं घृतं गंधादि कदल्यादि फलैर्युतैः ॥ २३२ ॥

पूर्वस्यां दिशि मध्यान्हे निंदद्य त्सप्त रात्रकं
धूपयेन्मेष श्रृंगेण स्नापयो त्पंच पल्लवैः ॥ २३३ ॥

गंधोदकैः समंत्रैण सर्वरोगान् विनाशयेत्
एवं कृते प्रयत्नेन सर्वशांति र्भवेत्यलं ॥ २३४ ॥

ॐ नमो भगवति रौद्री इमं बलि गृन्ह गृन्ह बालकं मुंच मुंच कुमारिकायै स्वाहा।

सोलहवें वर्ष में बालक को रौद्री नाम की ग्रही के पकड़ने पर बुखार घबराहट शोष (सुकने का रोग) और बहुत प्रकार के विकार होते हैं। खीर का अन्न, कुलथी, खिचड़ी , गुड़, घी, दही, चंदन, केले आदि फलों से युक्त बलि को पूर्व दिशा में दोपहर में सात दिन रखे भेड़ के सींग को धूप दें। और पाँचों पत्तों के पकाये हुए जल से स्नान करावें। और गंधोदक को अभिमंत्रित करके लगाने से सर्वरोग नष्ट होते है तथा ऐसे प्रयत्न करने पर सब प्रकार की शांति होती है।

एवं बाल ग्रहावेशो दिन मासाऽब्द गोचरे
यानि यान्यु दिताऽन्यत्र चिन्हा वन्यैषामऽशेषतः ॥ २३५ ॥

इसप्रकार बाल को पर ग्रह का प्रकोप आने पर दिन महिने और वर्षो में जो जो चिन्ह होते है वह सब यहाँ पर कह दिया है।

अभावेऽप्यऽन्यथा भावे यथा कालं यथो दितं
बलिं कर्म तथा कुर्यात् दुर्ज्ञानं हिग्रहैहितं ॥ २३६ ॥

यदि वह चिन्ह नहीं हो या अन्य प्रकार से होवे तो भी काल के अनुसार बलि कर्म को करे क्योंकि ग्रहों का ज्ञान अत्यंत कठिन है।

स्नातः प्रसन्न वस्त्राभ्यां परिधानोत्तरीय युक
हेमांऽगुलीय शुद्ध स्सन सकली कृत विग्रहः ॥ २३७ ॥

स्नान करके उज्ज्वल धोत्ति और दुपट्टा पहिन कर सोने की अंगूठी धारण किये हुए सकली करण क्रिया को करें।

बलिदान प्रशस्तांगो व्रत शील विभूषणः
अलुब्धो वत्सलो धीरः सम्यग्दृष्टि र्दयार्द्र धीः ॥ २३८ ॥

बलिदान के लिये प्रशंसनीय ब्रह्मचर्य और व्रतों को आभूषणों से विभूषित लोभ रहित सह धर्मियों से प्रेम करने वाला धीर दयावान सम्यग्दृष्टि पुरुष ।

प्राग मुखस्य समासीन स्योत्तराश मुखस्यव
बालस्यो परिमंत्रेण त्रिरावर्त्य बलिं ततः ॥ २३९ ॥

पूर्व या उत्तर दिशा की तरफ मुख करके बैठे हुये बालक के ऊपर मंत्र से बलि की तीन बार उतारा करे।

दास्यामि त्वद्बलिं हे देवि मुंचै नं चे ति तद्भुति
निर्दिष्टयां ग्रहामे एति संबोध्याति प्रयत्नधी ॥ २४० ॥

सन्मार्जिते च भू भागे सर्वमंगल भूषिते
नव वस्त्र परिछन्ने बलिं पात्रे निवेशेयेत् ॥ २४१ ॥

हे देवी मैं तुझको बलि दूँगा तु उस बालक को छोड़ दे बुद्धिमान मंत्री इसप्रकार देवी को संबोधन करके कहे और निश्चित की हुई पृथ्वी पर जो शुद्ध और साफ की हुई हो सब मंगलीक द्रव्यों से सजी हुयी है वहां पर उस बलि को जो नये कपड़े से ढ़की हुई हो रख दें।

तत्रादाय बलिं द्रव्यं गंधाद्यैरर्च्चयेत् क्रमात्
पूर्वाद्य नव वस्त्रेण तं बलिं गमयेद्बहिः ॥ २४२ ॥

पहिले वहां पर बलि के द्रव्य को लाकर गंध आदि से क्रमपूर्वक पूजा कर और फिर उस बलि को नये कपड़े से ढ़ककर बाहर चले जायें।

पश्चादाचम्य शुद्ध सन पृथक पात्रके निवेशितं
सौवीरं च जलं हस्ते मंत्रयित्वा पृथक पृथक ॥ २४३ ॥

तैः प्रजावटा वा स्पृष्टाया रक्षां कुर्याद् विचक्षणः
होमं मृत्युंजयं चाऽत्र पूर्वं भोक्तं यथा विधिं ॥ २४४ ॥

मंत्री फिर आचरण से शुद्ध होकर अलग अलग बर्तन में रखे हुये सौ वीर (कांजी बेर) और जल को हाथ में लेकर उनपर अलग अलग मंत्र पढ़े, फिर उनसे बालक के अंगों के छुआकर

(स्पर्शकराकर) पूर्व कथित क्रम से विधिपूर्वक मृत्युजय मंत्र से होम करके बालक को रक्षा करे।

दक्षिण क्रम

आचार्यं बलि होमांते विदध्या लब्ध दक्षिणं
दक्षिणा रहिता होमा बलय श्च न सिद्धिदा ॥ २४५ ॥

फलेन बलि होमानां जनं यस्मात्फलार्थिनां यो
कुर्यादक्षिणादऽत्ति स्तस्मात्तां दक्षिणां विदु ॥ २४६ ॥

फिर होम के पश्चात आचार्य बलि पर दक्षिणा ले लेवे क्योंकि बिना दक्षिणा के होम और बलि कोई सिद्धि नहीं देते। पुरूष बलि और होम के फल से मुख्य फल के वास्ते जो दक्षिण अर्थात् देने की क्रिया करता है अतएव उसको दक्षिण कहते हैं।

उत्तमा दक्षिणा निष्क तदऽर्द्धा मध्यमा मता
तद् अर्द्धम ऽधमा प्रोक्ता तथा तासां फलान्यऽपि
षोडश पलानां एक निष्क सुवर्ण दद्यात् ॥ २४७ ॥

एक निष्क (एक कर्ष या दो तोले) सोने की मोहर को निष्क कहते हैं एक दीनार की दक्षिणा उत्तम उसकी आधी मध्यम और उसकी आधी अधम दक्षिण कहलाती है। तथा उनके फल भी वैसे ही उत्तम मध्यम और अधम होते हैं।

स्नपनं शांतिनाथस्य बलौ होमं च कार्येत्
ततो देवि कुष्मांडी रक्त वस्त्रादिभि र्यजेत् ॥ २४८ ॥

चतुर्विंशत् ऋषीणां च दद्याता हार मादरात
क्षांतीनां श्रावकानां च श्राविकानां च शक्ति : ॥ २४९ ॥

इसके पश्चात शांतिनाथ स्वामी का अभिषेक होम करें पश्चात कुष्मांडी देवी का लाल वस्त्रादि से पूजन करें। फिर चौबीस ऋषियों आर्यिकाओं श्रावक और श्रावकाओं को आदर से आहार अपनी शक्ति के अनुसार दें।

एवं य: कुरूते धीमान् बलि होम विधिं नर:
स रक्षति शिशु यत्नाद् ग्रह रोगाद् उपद्रवान् ॥ २५० ॥

जो बुद्धिमान पुरुष इसप्रकार बलि और होम की विधि को करता है वह बालक की ग्रह के रोगों और उपद्रवों से रक्षा करता है॥

अरोगमंऽग्रहाविष्टं स्वस्थ मप्यथ बालकं
अमुनैव विधानेन रक्षेदरक्षा पराायणः ॥ २५१ ॥

रक्षा करने में पारंगत पुरुष बिना रोग और ग्रह से पीड़ित स्वस्थ बालक की भी विधान से रक्षा करें।

संवत्सर बलिं दत्वा वक्ष्यमाण क्रमेण
च मातृकाणां बलिं कुर्य्यान्मासे मासे विशेषतः ॥ २५२ ॥

आगे कहे हुए विधान से संवत्सर बलि देकर प्रत्येक मास में भी देवियों की भी बलि पृथक पृथक दें।

तत्राऽपि दक्षिणादीनि देवपूजां च कारयेत्
मुनींद्रानार्य्या का मुख्यां व्रतिकाऽपि भोजयेत् ॥ २५३ ॥

और उनमें भी दक्षिण आदि दे और देवपूजा कराये तथा मुनिराजों आर्यिकाओं और व्रतियों श्रावक और श्राविकाओं को भी भोजन कराये।

संवत्सरे वले रंऽते होमं तद् ग्रह निग्रहं
सर्वशांति विधानेन सप्त रात्रं कियाद् बुधः ॥ २५४ ॥

बुद्धिमान पुरुष संवत्सर बलि में अंतर्ग्रहों का निग्रह सर्वशांति विधान रात तक करें।

एवं कृत बलिं बालं दूरात्परि हरंत्यमः
शाकिन्यश्च ग्रहाश्चैव रोगाबहु विधि अपि ॥ २५५ ॥

जिस बालक के लिये इसप्रकार बलि दी जाती है उसको शाकिनी ग्रह और बहुत प्रकार के रोग दूर से ही छोड़ देते हैं।

इति विद्यानुवादब्धि पुरादऽस्माभिरुद्धा ता
श्लाघ्या बाल चिकित्सेऽयमऽबंध्य फलदर्शिनी ॥ २५६ ॥

इसप्रकार विद्यानुवाद रूपी समुद्र से हमने यह आवश्यक फल को देने वाली यह बाल चिकित्सा विधान उद्धृत की है। (नकल की है)

दिनेषु मासेषु च वत्सरेषु च श्रयंति
बालान् नियमन पूतना: विधाय
मंत्री कथितं बलि क्रमं विमोचये
ता: स दयोऽति निर्दया: ॥ २५७ ॥

यह पूतना ग्रही बालकों को दिन मास और वर्षो में नियम से पकड़ती है मंत्री को चाहिये कि इस क्रम से बलि देकर दयावान होकर उन निर्दयी पूतना से बालक को छुड़ावे।

चैत्यालये ब्रह्म देवमंबिकां च यथा विधिं
संपूज्य शांतिं सर्वेषां ग्रहाणं लभते नर: ॥ २५८ ॥

चैत्यालय में परम ब्रह्म सर्वज्ञदेव और अंबिका की विधि पूर्वक पूजन कर सब ग्रहों से शांति प्राप्ति करें।

मांत्रिकै: स्वर्ण वस्त्राधैरऽर्चयद्भक्ति पूर्वकं
न सिद्धयति विधानेन कुत्रापि ग्रह मोक्षणं ॥ २५९ ॥

फिर मांत्रिक (मंत्री) की सोने और वस्त्रादि से भक्ति पूर्वक पूजन करे अन्यथा किसी भी विधान से भी सिद्धि नहीं मिल सकती ग्रह से छुटकारा पाना तो नामुमकिन (असंभव) है

इति विद्यानुवादोक्त बालग्रह चिकित्सा समाप्त:

इति प्रथम खंड

अथाऽपि ग्रंथाऽतरा द्वाल ग्रह चिकित्सा कथ्यते

अब दूसरे ग्रंथों के अनुसार बाल ग्रह चिकित्सा के विधान का वर्णन किया जाता है।

नमस्कृत्य जिनस्य चरणं भोरूह द्वयं ग्रहणं
विकृतेः शांति वक्ष्ये बाल निरोधिनां ॥ १ ॥

श्री जिनेन्द्र भगवान के दोनों चरण कमलों को नमस्कार करके बालकों को हानि पहुंचाने वाले ग्रहों के विकार और उनकी शांति के उपायों का वर्णन करूंगा।

आरभ्य जन्म दिवसान् शिशो र्दश दिनाऽवधिं
ततो द्वादश मासांतमऽथ षोडशबत्सरात् ॥ २ ॥

वर्ग त्रये भवे देवं दिन मासाऽब्द संख्यया
दिन वर्गे प्रतिदिनं पृथगेव वहि देवता ॥ ३ ॥

मास वर्गोपि मासानां प्रत्येकं देवतोच्यते
वर्गे संबत्सराणां च प्रत्यब्दे देवताऽभिधा ॥ ४ ॥

बालक के जन्म दिन से शुरू करके दसवें दिन तक फिर बारहवें मास के अंत तक और फिर सोलहवें वर्ष के अंत तक के दिन मास और बरसों की संख्या से तीन वर्ग होते है। इनमें दिन वर्ग में प्रत्येक दिन की देवी अलग अलग होती है, मास वर्ग में प्रत्येक मास की अलग अलग देवी होती है। और वर्ष में प्रत्येक वर्ष की अलग अलग देवी होती है।

देवता नामऽधेयानि ग्रस्तस्य विकृतिः शिशोः
बलि कर्म विधिर्लेपो धूपो मंत्रश्च कथ्यते ॥ ५ ॥

उन देवियों के नाम पकड़े हुए बालक के विकार बलि कर्म की विधि लेप धूपो और उनके मंत्रों का वर्णन किया जावेगा।

जातस्य जन्म दिवसे कुमारं धनदेति तं
ग्रसते नेच्छति स्तन्यं विधुन्वन्याद वर्षसः ॥ ६ ॥

शिशोरऽस्य विकारस्य कथ्यते च प्रतिक्रिया
माक्षिकं त्रपुंमाजिष्टा हरिताल वहामपि ॥ ७ ॥

एतानि समभागानि पिष्टवा लिंपे द्वपु:
शिशो: बलि अर्थं ताप कृसरं सर्पि रिक्षुर च संपय: ॥ ८ ॥

मृन्मयै खपरि न व्ये निधाय विधिवत् शूचि:
सौवर्णीं राजती चापि प्रतिमां ग्रह रूपिणीं ॥ ९ ॥

रक्त वस्त्र युगं छिन्नां बलेरू परिनिक्षिपेत्
गंध वद्भि स्ततो गंधैरऽक्षतै: कुसुमैरऽपि ॥ १० ॥

दीपै धूंपै: समऽभ्य र्च्य तांबूलं तत्र विन्यस्येत्
ग्रहस्य पूर्व दिग्भागे मंत्र एत मुदीरयन् रात्रि
त्रयेत् त्रिवारं च तेन नारीं जपेति शिशु ॥ ११ ॥

ॐ नमो धनदे एहि एहि बलिं गृन्ह गृन्ह मुंच मुंच बालकं स्वाहा।

इति बलि विसर्जन मंत्र

बालक के उत्पन्न होते ही जन्म दिवस को ही धनदे देवी बालक को पकड़ती है उसके पकड़ने पर बालक स्तन का दूध नहीं पीता है। और पेट पटकता है। बालक के इसविकार के प्रतिकार कहा जाता है। शहद-त्रपु (सीसा) मंजीठ हरताल और यहां (नखीर) इन सबको बराबर लेकर पीसकर बालक के शरीर पर लेप करे। और बलि के वास्ते ताप (तेज पात) खिचड़ी , घृत , गन्ना का रस और दूध को मिट्टी के बने हुये बर्तन में विधि पूर्वक शुद्धता पूर्वक रखकर सोने अथवा चांदी की ग्रही के आकार की प्रतिमा को लाल कपड़ो से ढ़ककर बलि के ऊपर रखकर गंध, अक्षत, पुष्प, दीप, धूप आदि से पूजकर उसपर पान का बीड़ा रखकर फिर यह मंत्र बोलता हुआ घर के पूर्व बाग में मंत्र को बालक के वास्ते तीन बार तीन रात तक जपे।

आदाय च बलि: पात्रं विनिदध्यात् त्रिपथांऽतरे
एवं बलि विधानेन धनदापऽष्टति भंवेत् ॥ १३ ॥

फिर बलि के बर्तन को लेकर तिराहे पर रख दें इसप्रकार बलि देने से धनदा देवी चली जाती है।

दद्यात्त तंदुल पिष्टस्य मुष्टिकां चैत्य वासिने
ब्रह्मणे खांडितानां च तिलानां पिष्टमांप्सितां ॥ १४ ॥

यक्षिणीनां च दातव्यं गंध पुष्पाक्ष तानपि
धूपं दीपं च तांबूलमऽर्प्पयेत् पुष्टि कारकं ॥ १५ ॥

मंत्रेणाऽनेन यक्षिण्या ब्रह्म देवस्य पूजनं
पूजावेतो विशषेण ग्रहस्य बलिं कर्मणि ॥ १६ ॥

एवं सं पूजिता वेतो मुंचेत् तं बालकं तथा
बलि प्रदान स्थानेषु ब्रह्म देवं च यक्षिणी ॥ १७ ॥

न विस्मरेत् शिशु मपि न मुंचऽत्यऽन्यथा ग्रहा:
एतदा ख्यानमऽस्त्येव पुरा विद्भिरुदीरितं ॥ १८ ॥

देवेन्द्रास्तत्र मुनीन्द्राश्च मंत्रानऽभ्यस्य यत् ततः
तत्र स्थितान्समभ्यर्च्यमंत्रान्स्व वशमानयत् ॥ १९ ॥

भवेत् अनेन विधिना सर्व ग्रह निवारणं
पूजयेत् वलि कर्तारं वसनै र्दक्षिणादभिः ॥ २० ॥

इति प्रथम दिवसः

फिर चैत्यों में रहने वाले को पिसे हुए चावलों के लड्डू तथा ब्राह्मणों को खांड व पिसे हुये तिलों के लड्डू इच्छानुकूल दें। यक्षिणी को चंदन पुष्प चावल धूप दीपक पान तथा पुष्टि करने वाले द्रव्य भेट में दे। यक्षिणी के उपरोक्त मंत्र से ही ब्रह्म देव का भी पूजन करें। क्योंकि ग्रहों के बलि कर्म में विशेष रूप से पूज्यहोता है। इसप्रकार उन दोनों को पूजने के पश्चात उस बालक को ब्रह्म देव और यक्षिणी को बलि प्रदान करने के स्थानों में छोड़ दें। इन सब क्रियाओं में बालक को कदापि न भूले अन्यथा उसकी ग्रही नहीं छोड़ती है। इस व्याख्यान का वर्णन प्राचीन आचार्यों ने किया है। देवेन्द्रों और मुनीन्द्रों को मंत्रो का अभ्यास करके वहीं खड़े हुओं की पूजा करके मंत्र से अपने वश में ले आयें। बलि के कार्य में भूल कभी नहीं करे और बालक को पाँचों पत्तों के पकाये हुए जल से स्नान करायें। इस विधि से सब ग्रहों का निवारण हो जाता है अंत में बलि कराने वासे आचार्य की वस्त्र दक्षिण आदि से पूजा करे।

दूसरा दिन

कुमारी भीषणीनाम द्वितीय दिवसे शिशुं
गृन्हाति शोपि न दृशा उन्मीलयति पीडितः ॥ १ ॥

अत्यंत मुच्छल श्वासस्सन स्तनौ चाचमत्यऽपि
संकुच्य बाहुपादौ च तिष्टत्सं प्रेक्षते दिश: ॥ २ ॥

प्रतिक्रिया विधानेना विधि रेवाऽस्य कथ्यते
चित्रमूलऽपा मार्ग: पिप्पलीसम भागत: ॥ ३ ॥
पिष्टाग्रस्तस्य बालस्य कुर्याद्वपु विलेपनं
पंच वर्णाऽन्वितं मध्ये बलि मादाय खप्परे ॥ ४ ॥

धूम्र वस्त्र द्वयोपेता प्रतिमामुपरिन्यसेत्
गंध पुष्पाक्षतं धूपं दीपं तांबूलऽमप्यऽर्च्चयेत् ॥ ५ ॥

त्रिरात्रं पात्र मुधृत्य त्रिवारं मंत्र वित् शुचि:
नीरांजन विधे: पश्चात् त्रिपथेतं निधापयेत् ॥ ६ ॥
ॐ नमो भीषणी ऐहि ऐहि बलिं गृन्ह गृन्ह मुंच मुंच बालकं स्वाहा

इति बलि विसर्जन मंत्र:

दूसरे दिन बालक को भीषणी नाम की कुमारी कष्ट देती है तब वह उसे कष्ट से ऊपर देखने में असमर्थ हो जाता है। डांवां डोल हो जाता है। उर्द्ध श्वास लेने लगता है, दूध नहीं पीता है, हाथ पैरों को सिकोड़कर चारों तरफ देखता है। अब उसके प्रतिकार का उपाय कहा जाता है--- चित्रक की जड़, आंधी झाड़ा और पिप्पली के बराबर लेकर उस बालक के सामने ही पीसकर उसके शरीर पर लेप करे तथा पाँचों रंगों की मिठाई को(इस बीच में) लाकर नये खप्पर पर रखकरउसके ऊपर धुँवे के रंग के दो वस्त्रों से ढ़की हुई प्रतिमा उस मही की रखे और गंध, पुष्प, चावल, धूप, दीपक, पान, नागवेल से उसकी पूजा करें। रात्री के तीसरे भाग में उस बलि के बर्तन को उठाकर तीन बार मंत्र बोलता हुआ आस्ता करके उसको तिराहे पर रख देवें।

पूज्य चैत्यालये ब्रह्मा यक्षिणी चापि पूजयेत्

फिर पूज्य चैत्यालय में ब्रह्मा और यक्षिणी की पूजा करें।

पीडाकुमारी कारिण्या स्त्रतीय दिवसे शिशो:
ऊर्द्धा क्षेपणऽमंगेषु लाला श्रावो मुखे शिशो: ॥ १ ॥

देहस्तपित संकोचः करयोः पादयोरऽपि
स्तब्ध नेत्रः स्वसित्यूर्द्ध स्तन पानं न इच्छति ॥ २ ॥

प्रतिकारो विकारस्य कथ्यतेऽस्यौषधादिभिः
गजदंतं सिरसिजान करपादनखानऽपि ॥ ३ ॥
सर्षपान् हरितालं च यवां श्च समभागतः
अजामूत्रेण संपेष्य लिपेत् तेन वपुः शिशो ॥ ४ ॥

स पायस स गुडान्नाऽज्य पंच खाद्यैः श्च खप्परैः
नील वस्त्र युग छन्नं सौवर्ण प्रतिमाऽन्वितं ॥ ५ ॥

सुगंधि गंधैः कुसमैरऽक्षतै धूंप दीपकैः
तांबूले नाऽपि सहित प्रदोषे दिवसं त्रयं ॥ ६ ॥

प्राच्यां दिशि निशांऽतेऽस्य निद्धयात मंत्र विद्वलिं
चैत्ये ब्रह्मा च यक्षी च पूज्यौ पूर्वोदित् क्रमातः ॥ ७ ॥
ॐ नमः कुमारिकारिणी ऐहि ऐहि बलिं गृन्ह गृन्ह मुंच मुंच बालकं स्वाहा

पंच पल्लव तोयेन स्नापयेद्वालकं तथा
कुमारि कारिणी नाम ग्रस्तं मुंचतितं शिशु ॥ ८ ॥
इति तृतीय दिवसः

तीसरे दिन कुमारी कारिणी बालक को पीड़ा देती है। यह अंगों को ऊपर की तरफ फेंकता है और बालक के मुँह से राल बहती है। अंग का तपना अर्थात बुखार तेज होना, हाथ पैरों को सिकोड़ना, आँखो ठहरी रह जाना, ऊँचा श्वास लेना और स्तन से दूध पीने की इच्छा नहीं रहना, इन विकारों का प्रतिकार औषध आदि से कहा जाता है। हाथी के दांत, सिर के बाल हाथ पांवो के नाखून, सरसों, हडताल और जो को समान भाग लेकर बकरी के मूत्र में पीसकर बालक के शरीर के लेप करें। खीर गुड़ अन्न घृत और पाँचो प्रकार के भोजन को खप्पर में रखकर ऊपर दो नीले कपड़ों से ढ़की हुई यक्षिणी की सोने की प्रतिमा रखे। फिर सुंगधित चंदन इत्र-पुष्प माला अक्षत धूप दीपक और पान सहित प्रदोष (सूर्य निकलने से पहिले) काल में तीन दिन तक पूर्व दिशा में रात के खतम हो जाने पर मंत्र सहित बलि को रखे। पूर्वोक्त प्रकार से चैत्यालय में ब्रह्मा यक्षिणी की

पूजा करे। पाँचों पत्तों के पकाये हुवे जल से बालक को स्नान करावें। तब कुमारी कारिणी उस पकड़े हुए बालक को छोड़ देती है।

दिने चतुर्थे गृस्ते कुमारी कामरूपिणी ॥ १ ॥
आस्या स्रालाश्रवत्यश्रु मुहुरंगेषु वेल्लनं क्षणं
विलव्यं निससोहिक्काऽपि च पदे पदे ॥ २ ॥
विकारस्याऽस्य महतः कथ्यते च प्रतिक्रियाः

गजं दंताऽहि निर्म्मोक सर्षपाः समभागतः ॥ ३ ॥
गोमूत्रेण विनिपेष्य कृत्वा वपुषि लेपनं

सिद्धार्थैं हरितालेन वानरांग रूहैरऽपि ॥ ४ ॥
समाऽशेन कृतो धूपो निधातव्याः शिशोः पुरः

माषाणां कृसरं भृष्ट तिल पिष्टाज्य लड्डुकाणां ॥ ५ ॥
पीतवस्त्र युग छन्नां खर्प्परे च प्रतिमां न्यसेत्

धूपोऽक्षतादभि र्युक्तं तांबूलेनाऽन्वितं बलिं ॥ ६ ॥
त्रिरात्रं मेक रात्रं च प्राग्भागे सदनः क्षिपेत्

पूज्यो पूर्व क्रमैणैव चैत्यो ब्रह्मा च यक्षिणी ॥ ७ ॥
मांत्रिकं पूजयो त्पश्चात् वस्त्रालं करणादिभिः

ॐ नमः कामरूपिणी ऐहि ऐहि बलिं गृन्ह गृन्ह मुंच मुंच बालकं स्वाहा

पंचानां पल्लवानां च नीरेण स्नापितं ततः सद्यः ॥ ८ ॥
सः त्यजितं बालं तं कुमारी कामरूपिणी

इति चतुर्थ दिवसः

चौथे दिन बालक को कामरूपिणी नाम की कुमारी के पकड़ने पर मुँह से लार बहती है बराबर आँसू बहते हैं। और शरीर कांपता है। बालक जरा सी देर देर बाद सांस लेता है पद पद पर हिचकी आती है अब इस बड़े भारी विकार का प्रतिकार कहा जाता है। हाथीदांत सर्प कांचली और सरसों समान भाग लेकर गोमूत्र के साथ पीसकर बालक के शरीर पर लेप करे। सफेद सरसों पडताल बंदर

के बालों को बराबर अंश में लेकर धूप बनाकर बालक के सामने रखे। उड़द की खिचड़ी भुने हुए तिलों की पिष्टि में घृत डालकर लड्डू बनाकर दो पीले कपड़ों से ढ़की हुई यक्षिणी की मूर्ति सहित खर्प्पर में रखे। उस धूप अक्षत आदि और पान से सहित बलि को रात्रि के तीसरे पहर में घर के सामने के भाग में मंत्रपूर्वक रखे। फिर पूर्वोक्त क्रम से चैत्यालय में परम ब्रह्म सर्वज्ञ देव और यक्षिणी की पूजन करें और अंत में मंत्री की वस्त्र और अलंकार आदि से पूजन करें। पाँचो पत्तों के पकाये हुए जल से बालक को स्नान करावें तब बालक को कुमारी कामरूपिणी निश्चयपूर्वक छोड़ देती है।

दिने श्रृंगीरिणी नाम पंचमे देवता शिशुं
बाधते चालयत्येव शरीरं चरणवऽपि ॥ ९ ॥

मूर्च्छत्यऽनेक वारं समूत्रय न स्तन्यतिस्पृह
विलोचने च विंकृती रोदनं काकशब्द वत् ॥ १० ॥

पूति गंधाऽति देहोऽपि प्रतिकारोऽस्य कथ्यते
सिद्धार्थं लोद्रोद्भवं वंत्तत्रपु गुग्गुल रामठं ॥ ११ ॥

वत्तां चाऽपि समी कृत्य धूपो देय: शिशो: पुर:
माषाणां कृसरं भृष्टं तिल पिष्टाज्य प्रतिमामपि ॥ १२ ॥

बलेरूपरिविन्य स्य गंधादिभिरऽथार्चयेत्
प्राचीभागे गृहस्य मं स तांबूलं विनिक्षिपेत् ॥ १३ ॥

ब्रह्मा च यक्षिणी चैव पूज्यौ पूर्वोदित क्रमात्
एवं बलि विधानेन श्रृंगारिणा विमोचनं
अर्चयेत् बलि कर्त्तारं वसनै र्दक्षिणा दिभि: ॥ १४ ।

ॐ नम: श्रृंगारिणी ऐहि ऐहि बलि गृन्ह गृन्ह मुंच मुंच बालकं स्वाहा।

इति पंचम दिवस:

पांचवें दिन बालक को श्रृंगारिणी नाम की देवी के पकड़ने पर बालक का शरीर और उसके पाँव चले जाते हैं। वह बार बार मूर्छित होता है। पेशाब करता रहता है दूध पीने की इच्छा नहीं करता है। और आंखो में विकार हो जाता है और वह कौवे के शब्द के समान रोता है। उसके शरीर में दुर्गंध आने लगती है अब उसका प्रतिकार कहा जाता है। सफेद सरसों, पठानी लोध, रांग गुगल, रामठ

(अंकोल) वच को समान भाग लेकर बालक के सामने धूप दें। उड़द की खिचड़ी भुने हुए तिलों की पिट्ठी में घी डालकर बनाये हुवे लड्डूओं को सीसें के बर्तन में रखे दें। दो हरे कपड़ों से लिपटी हुई मूर्ति को बलिद्रव्य पर रखकर गंध आदि से पूजकर फिर उसको पान सहित घर के पूर्व भाग में मंत्रपूर्वक रख दें। तथा पूर्वोक्त प्रकार ब्रह्मा और यक्षिणी का पूजन करे। इसप्रकार के बलि विधान से बालक का श्रृंगारिणी देवी से छूटकारा मिल जाता है। तब बलि कराने वाले आचार्य का वस्त्रो और दक्षिणा आदि से पूजा करें।

कुमारी हसती नाम दिने षष्टे तु बालकां
गृन्हातिऽसोऽपि व्याधितो चाल्प यत्याऽस कृद्वपु ॥ १ ॥

नभः सं प्रेक्ष्यते वामं करं मुष्टिं करोति
चा रसनां भ्रामयो त्यूर्द्ध श्वासि त्युच्चै स्वरो रोदति ॥ २ ॥

विकारस्याऽपसणां कथ्यते स्यौषधा दिभिः हरितालं भेष
श्रंगमपि लोद्रं मनः शिलाः वचा च समभागानि कृत्वा ॥ ३ ॥

मूत्रेण लोपतः अजामूत्रेण वा पिष्टवा लेपदूर्द्धकं
तथा मेष श्रंगाऽहि निर्म्मोक पशुदंतान्स सर्षपान् ॥ ४ ॥

समानि पिष्टवा हविषा तत् द्वितीयं विलेपनं
सिद्धार्थ निंब पत्रैश्च पशुदंतैः शिरोरुहैः ॥ ५ ॥

समानि कारितो धूपो निधातव्यः पुरः शिशोः ॥ ६ ॥
आचार्ज्य रस मिक्षूणं ताम्र पात्रेऽति धिस्कृते

गंधा क्षतादिभिर्युक्तां तांबूले नोऽपि शोभितं
रक्त वस्त्र द्वयोपेत्ता रक्त माला भिराऽवृतां ॥ ७ ॥

रक्तं चंदनं लिप्तांगो सौवर्णी प्रतिमां न्यसेत्
गृहस्य पूर्व दिग्भागे ग्राम मध्योदिन त्रयं ॥ ८ ॥

मंत्रयित्वा त्रिरात्रं तं बलिं मंत्रेण निक्षिपेत्
पूजयेत् ब्रह्मा देवं च यक्षिणीमपि पूर्ववत् ॥ ९ ॥

एवं कृते विधाने स्मिन मुंचते सागृही तदा
मांत्रिके पूज्यते स्वर्ण वस्त्राद्ये भक्ति पूर्वकं
न सिद्धयति विद्यानेन कुत्रापि ग्रहमोक्षणं ॥ १० ॥

ॐ नमो हसनि ऐहि ऐहि बलिं गृन्ह गृन्ह मुंच मुंच बालकं स्वाहा ।

इति षष्टोदिवसः

छट्ठे दिन बालक हसती नाम की कुमारी के पकड़ने पर बालक दुःख पाकर बराबर अंगडाई लेता है। आकाश की तरफ देखता है। बायें हाथ की मुट्ठी बंध जाती है। जीभ घुमाता है। ऊँचा श्वास लेता है और जोर जोर से रोता है। इस विकार को शांत करने वाली औषधि आदि का वर्णन किया जावेगा। हडताल, भेंड का सींग, लोध मेनसिल और सर्प समान भाग लेकर मूत्र से पीसकर लेप करें, अथवा बकरी के दूध से पीसकर दाभ मिलाकर लेप करें। भेड का सींग, सर्प की कांचली पशु के दाँत और सरसो के बराबर लेकर घी के साथ लेप करे, यह दूसरा लेप कहा है । सफेद सरसों, नीम पत्र पशु के दाँत और सर के बालों को समान भाग लेकर बालक के सामने धूप देवे । आचार्य एक बड़े ताँबे के बर्तन में ईख का रस को गंध, अक्षत आदि पान ,हित रखकर दो लाल वस्त्रो से ढ़की हुई लाल फूल माला से घिरी हुई लाल चंदन से पुती हुई यदिणे की सीरे की प्रतीमा को रखे । उसको घर के पूर्व दिशा में गाँव के बीच में तीन दिन तक आभि मंक्षित करके तीन रात तक बलि को रखे । चैत्यालय में परम ब्रह्म सर्वज्ञ देव और यक्षिणी की पूर्व क्रमानुसार पूजन करे इस प्रकार बलि विधान करने पर यह ग्रही बालक को छोड़ देती है । फिर स्वर्ण वस्त्र आदि से मंत्री की पूजन करे ऐसा भलि पूर्वक न करने पर कार्य की सिद्धि नही होती है ग्रह से छूटना तो असंभव बात है

ग्रहणा मुक्त केशीभि सपेम देवता दिनः
गृहीतः काक वान्देन रोदि तोषः तदा शिशु ॥ १ ॥

दधि गंधोयस्य पुषिदेह स्तपति सततं
प्रति दाणं करोत्येष शरीरस्य विमोटनं ॥ २ ॥

प्रति कारोपि विकृते औषद्यादभिः साध्यते
निशा द्वयं वचा कुष्ठं सिद्धार्थान समभागवत् ॥ ३ ॥

गोमू त्रेण विनि पेष्य कुर्यादंग विलेपनं
पुननंवा नक्त माल छदान कुषा श्व गंधि च ॥ ४ ॥

चूर्ण कृत्य समांशेन द्वितीयं लेपनं शिशोः
पंच वर्णधिनं सांश्यपात्रं न्यस्तं सु पूजितं ॥ ५ ॥

गंधादताद्यै स्तांबूल दाने नापि पुरस्कृतं धूम्र
वस्त्र द्वयो पेतं सौवर्णं प्रतिमान् वितं् ॥ ६ ॥

मंत्र मेतं स मुच्चार्य्य ग्रहा न्निस्सारये द्वलिं
ब्राभाण मंबिकां चापि पूजयतेत्पूर्व वस्तुभि ॥ ७ ॥

ॐ नमो मुक्त केशी एहि २ बलिं गृह२ मुचं२ बालकं स्वाहा

पचंपल्लव नीरंण कारयेत् स्नप नं शिशोः
अनेन बलिना मुक्त केशी बालं विमुंचति ॥ ८ ॥

इति सप्तमो दिवसः

सातवें दिन मुक्त केशी नाम की ग्रही के पकड़ने पर बालक कौवे के जैसे स्वर से रोता है । उसके शरीर में दही की जैसी गंध आती है-उसका शरीर निरतंर तपता है वह प्रत्येक समय आपने शरीर को तोड़ता रहता है । इस विकार का प्रतिकार औषधि आदि से किया जा सकता है दोनों हलदी वच कूट सरसो को बराबर लेकर गोमूत्र से पीसकर बालक के शरीर पर लेप करे इसके अतिरिक्त साठी (नक्तमाल) करंज के पत्ते कठ असगंध को बराबर लेकर चूर्ण करके बालक के दूसरा लेप करे और पांचो रंग के भी जनं को कांसी के वर्तन में रखकर उसका गंध आछत आदि और पान से सत्कार करके, दो धूम्र के रंग के कपड़े से ढकी हुई यछिणी की सोने की मूर्ति को इस बलि के ऊपर रखकर, इस मंत्र को बोलकर बलि को बालक पर तीन बार उतार करके घर से बाहर निकाले तथा पूर्वोक्त क्रम से ब्रभि और यक्षिणी की चैत्यालय में सब द्रव्यों से पूजन करे। पाँचों पत्तो के जलसे बालको स्नान करावे ऐसा करने से बालक को मुक्त केशी ग्रही छोड़ देती है ।

हो शसिनी नाम शिशुं देवता वासरेष्टमे
वाद्यते सविकाराणं बाहूनां स्पंदनं भवेत् ॥ १ ॥

निद्रायमाणो हसति रो दत्युद्धरणे पिच दिशो
विलोकयन् जिह्वांचा मदात्यात्मन स्तदा ॥ २ ॥

प्रति क्रिया प्रकारोस्य विकारस्य निगद्यते
समी कृवचा हिगुंच्र्णैलिंपत् वपुः शिशोः ॥ ३ ॥

उदनं माष कृसरं सर्पि रिक्षु रसान्वितं पंच
खाद्यानि विन्यस्य पाले कांश्यमर्यादि के ॥ ४ ॥

निधाय प्रतिमां तत्र वस्त्र युग्म समन्वितां
गंधाकृतादिभिर्युक्तं तांबूलेनान्वितं बलिं ॥ ५ ॥

छिन्नाग्रे वंधने वेणु पाले पालं निधाय ततः
नीरांजन विधिं कुर्य्यात् निवारं तेन मंत्रवित् ॥ ६ ॥

निशांते पूर्व दिग्भागे स्थित मंडप सन्निधौ
वासरत्रितयेमानो रुदतं प्रतिष्ठये द् बलिं ॥ ७ ॥

ब्रह्माणमंबिकां चैव पूजयेत् पूर्व यत् शुचि
अर्चयेत् बलि कर्तारं वसनै र्दक्षिणादि भिः ॥ ८ ॥

ॐ नमो भगवति ह्री हासिनि एहि बलिं गृह२ मुंच २ बालकं स्वाहा

पंच पल्लव तो येन स्नानं कुर्यात् शिशो स्ततः
एवं हो हासिनि देवि त्यजत्याराधिता शिशुः ॥ ९ ॥

इति अष्टमादिवसे

आठवें दिन बालक को हो हासिनि नाम की देवी के पकड़ने पर बहुत से विकार हो जाते हैं उसकी भुजायें फड़कती रहती हैं । उस समय बालक रोता रोता ही हंसता है - नींद मे गाफिल भी रहता है, बंद भी हो जाता है, चारों तरफ देखता हुआ अपनी जीभ घुमाता है । अब इस विकार की प्रति क्रिया का उपाय कहते हैं - वच और हींग को बराबर लेकर चूर्ण कर के बालक के शरीर के लेप करे । भात, उडद की खिचड़ी, घृत, गन्ने का रस और पांचो प्रकार के भोजन को कासी के बने हुए बरतन मे रखकर, उसके उपर दो कपड़ो से ढ़की हुई यक्षिणी की मूर्ति को रखकर, गंध, अक्षत

आदि पान से युक्त बलि को टूटे हुये बंधन वाले बांस के वर्तन में (टोकरी) में इस बलि के बरतन को रखकर मंत्र पूर्वक तीन बार बालक का आरती करके, मंडप के पास सूर्योदय से पहिले घर के पूर्व दिशा के भाग में तीन बार, तीन दिन बलि रखे- पवित्र होकर ब्रह्मा और यक्षिणी की पूर्वोक्त विधि से पूजन करे और बलि कराने वाले आचार्यकी वस्त्र और दक्षिणा आदि से सत्कार करे । पांचो पत्तो के पकाये हुए जल से बालक को स्नान करावे इस प्रकार आराधना की हुई हासिनि देवी बालक को छोड़ देती है ।

नवमे दिवसे बालं गृन्हाति हत्य के शिनी
सुगंध्यस्यात वपुर्देहं ग्रही हतुंन ददाति च ॥ १ ॥

क्षणे क्षणे स्ववलत्येष निश्चि सव्याधिका शिशु:
बेल्लितो विदधात्येष करा वामे मुहुर्मुहु ॥ २ ॥

उद्धतो रोदति करं वामं मृष्टिं करोति च
कथ्यतेस्य प्रतिकारो विकारा स्यौषधादि भि: ॥ ४ ॥

वचा सिद्धार्थ कुष्ठार्गन पिष्टाभो भि: समांहात:
तैरस्यै वपुषो लेपंकुर्य्याद् गालस्य सर्वत: ॥ ५ ॥

वानरांग रुहा मेष श्रृंग: कर रुहानपिवर्हान्याद
नखान केशान वंशांच सम भागत:
चूर्णी कृत्य वपुर्लेपो द्वितीय परिकीर्तित:
अन्ने दध्याज्य सहिते कांश्य पत्रांतर स्थिते ॥ ६ ॥

सौवर्णी प्रतिमां तत्र निधाय धवलांशुकां
गंधांद्यैसह तांबूल समितं मंत्र मुच्चारन् ॥ ७ ॥

बलिमुधृत्य शिशवे कुर्वत् नीराजना त्रयं
श्मशान पूर्वदिग्भागे मध्यान्हे त्रिपथे क्षिपेत् ॥ ८ ॥

ब्रह्मणो प्यं विकायाश्च कार्य्या पूर्ववत्अर्चना
मांत्रि कं पूजयेत् पश्चात् वस्त्रालं करणादि भि: ॥ ९ ॥

ॐ नमो हय के शिनि एहि एहि बलिं गृन्ह गृन्ह मुंच मुंच बालकं स्वाहा ॥
इति बलि विसर्जनमंत्रः

पंच पल्लव नीरेण पश्चात् स्नान विधिः
शिशोः अनेन बलिना मुंचेत् बालकं हयके शिनि ॥ १० ॥
इति नवम् दिवसः

नवें दिन बालक को हय केशिनी नामकी देवी के पकड़ने पर बालक के शरीर में सुगंध आने लगती है वह ग्रही बहुत हानि पहुंचाती है । बालक जरा जरासी देरमें फिसल पड़ता है उसके अधिक आँसू बहते हैं तथा शरीर और बायाँ हाथ बारबार कांपता है । वह उठाने से रोता है बायें हाथ को मलता है इसका प्रतिकार औषधि आदि कही जाती है । वच और सफेर सरसो और कूठ को बराबर लेकर, पीसकर, जलके साथ सारे शरीर परलेप करे- अथवा बंदर के बाल भेड, के सींग, हाथी के बाल, मोर के पाव के नाखून बाल और बांस को समान भाग लेकर चूर्ण कर के बालक के शरीर पर लेप करे यह दूसरा लेप है । अन्न दही धृत को कांसी के बरतन में रखकर सोने की प्रतिमा यक्षिणी की बनवाकर, उसको दो सफेद कपड़ो से ढककर गंध आदि पान सहित मंत्र बोलते हुए उसको बलि पर रखकर बालक का तीन बार आरती करके राजाके भवन में पूर्वदिशा के भाग में दोपहर के समय तिराहे पर रखे । और पूर्वोक्त क्रम से ब्रह्मा और यक्षिणी का चैत्यालय में पूजन करे। तथा आचार्य को भी वस्त्र आदि अलंकार से सत्कार करे । इसके पश्चात बालक को पांचो पत्तो के पकाये हुवे जलसे स्नान करावे इस प्रकार प्रयत्न करने से हेय केशिनी ग्रही बालक को छोड़ देती है ।

दशमे दिवसे बालं रोदिनी नाम देवताग्रस्ते
विकृति स्तस्य ग्रस्तस्य बहु धा भवेत् ॥ १ ॥

दिवां निशं दुर्द्धर्विनिना रोदनं कुरुते शिशुः
स्वर्ण वर्ण भवेदंगं सुगंध्या स्यांचवक्रं च ॥ २ ॥

प्रतिकारो विकारस्य कथयेतस्यौषधादिभिः
वचां सर्ज्जं रसं कुष्टं सर्षपात् सम भागतः
गोमूत्रेण विनिष्पेष्यं कुर्याद् वपु विलेपनं
निंब पत्राणि लाक्षा च सर्षपात् समभागतः ॥ ३ ॥

पिष्टावपुषि ले पोयं द्वितीयं कथितः शिशोः
को द्रवान्नं मुद्ग पूपं सर्पिः कांस्यादि भाजनेः ॥ ४ ॥

आदाय हेम प्रतिमां पीतांशुक युगान्वितां
बलैरुपरिगंधाद्यै स्तांबूलेना र्चित्सन्न्यसेत् ॥ ५ ॥

उदीरयन्निमं मंत्रं बलिं सकलं मोदकं
कृत्वा नीरांजनं तेन त्रिवारं कार्येत् शिशोः ॥ ६ ॥

गृहस्य पूर्वदिग्भागे दत्वि तत्रामिमं बलिं
सूर्योदयवेस्य बेलायां प्रक्षिपेद र्चित तत्: ॥ ७ ॥

ब्रह्माणं यक्षिणी चैव पूजयेत्पूर्ववत् शुचिः
मांत्रि कंपूजयेत पश्चात् वस्त्रालंकाराणदि भिः ॥ ८ ॥
ॐ नमो रोदिनी एहि बलिं गृन्ह मुंच बालकं स्वाहा

पंच पल्लव तो येन विदेयं स्नपनं शिशोः
एवं बलि विधानेन बालं मुंचति रोदिनी ॥ ९ ॥

दसवे दिन बालक को रोदिनी नाम की ग्रही के पकड़ने पर बालक में बहुत प्रकार के विकार हो जाते हैं । रात दिन बालक बड़ी बुरी आवाज से रोता है । उसका शरीर सोने से समान पीले रंग का हो जाता है । और उसके मुख से सुगंध आने लगती है । इस विकार का प्रतिकार औषधि आदि से कहा जाता है वच साल का रस (साखू राल) कूढ सरसो समान भाग लेकर गाय के मूत्र के साथ सब को पीसवा कर बालक के शरीर पर लेप करे और नीम के पत्ते लाख और सरसों समान भाग पिसवाकर शरीर पर लेप करे यह दूसरा लेप है कोंदो का अन्न मूंग के पूवे घृत कासी आदि के बर्तन में रखकर यक्षिणी की सोने की मूर्ति लाकर दो पीले कपड़ो से ढ़क कर, गंध आदि पान से पूजा करके बलि पर रखे, फिर सब को प्रसन्न करने वाले इस बलि मंत्र को बोलके हुए उससे बालक पर तीन बार आरती करके, इस बलि की पूजा करके, घर के पूर्व दिशा के भाग में सूर्योदय के समय तीन दिन तक रखे, फिर पहिले के समान पवित्र होकर ब्रह्मा और यक्षिणी की चैत्यालय में पूजा करे तथा आचार्य को भी वस्त्र अलंकार आदि भेट देकर सत्कारकरे, फिर बालक को पांचो पत्तो के पकाये हुवे जल से स्नान करावे। इस प्रकार प्रयत्न करने से रोदिनी नाम की ग्रही बालक को छोड़ देती है ।

इति दशमोदिवसः
उक्ता दिन ग्रह स्त्रैवं शांति र्दश दिनावधि
अथाद्यं मास मारभ्य द्वादशांत निगद्यते ॥ १ ॥

• पीडयेत्प्रथमे मासि शकुनि नाम देवता
पीडित: काक शब्देन रोदत्येष दिवानिशं ॥ २ ॥

इस प्रकार दशदिन तक के ग्रहो की शांति का वर्णन किया है अब पहिले महिने से लगा कर बारहवें महिने तक का वर्णन किया जावेगा । पहिले मास में शकुनि नाम की देवी के पकड़ने पर बालक कौवे के शब्द का समान रात दिन रोता है ।

निम्बनत्यूर्द्धम स्तकदु पानद्रंय वद्धपु
रक्त मूलं स्तब्धनेत्र: प्रति कारोस्य कथ्यते ॥ ३ ॥

क्षीरेण गोर्म्महिष्याश्च पाचितं पायसं
त्रयं आन्नं चतुर्विध माषे येप क्षू रस मुद्गत् ॥ ४ ॥

सर्पिषा सहकांस्यादि भाजनस्थं विधाय
तत् चिल वस्त्र द्वयो पेत सुवर्ण प्रतिमां बलिं ॥ ५ ॥

अभ्यर्च्य रक्त पुष्पाद्यै: सतांबूलं समंलकं
नीरांजयित्वा सदन वाम भाग स्थ पिपले ॥ ६ ॥

चिरि विल्वे पि वा सप्त दिनं मध्ये दिने क्षिपेत
मेषश्रृंगा हि निर्मोक पशुदंत शिरो रूहान ॥ ७ ॥

वहीं गुग्गुल् वपि नखात् समांशो नाव चूर्णितान
बालं विलिप्या मिषिं चैत् पंच पल्लव वारिणा
ब्रह्माणेप्यं विकायाश्च पूजा पूर्वोदित: क्रमात् ॥ ७ ॥

ॐ नमो शकुनि ऐहि बलिं गृह गृह मुंच मुंच बालकं स्वाहा । बलि विसर्जन मंत्र:

वसनाद्यैरथाचार्यं पूजयेद् भक्ति पूर्वकं
अनेन शकुनि मुंचे देवतां बलिना शिशु ॥ ८ ॥

इति प्रथमो मास:

पहिले मास में शकुनीनाम की ग्रही के पकड़ने पर बालक कौवे के शब्द के समान रात दिन रोता है । मस्तक उपर को करके बार बार उपर की तरफ देखता है - उसके शरीर मे गंध आने लगती

है उसका पेशाब लाल होता है । आँखें ढेहरी हुई रहती हैं । इसका प्रतिकार कहा जाता है- गाय भैंस आदि के दूध से पकाई हुई तीन तरह की खीर चार, प्रकार के अन्न का भोजन, उडद की दाल का पूये, गन्ने का रस, मूंग और घृत के सहित कांसी आदि के बर्तन मे रखकर दोरंग विरंगे कपड़े सहित सोने की प्रतिमा ढ़की हुई बली को लाल फूल माला पान के साथ मंत्र से पूजी हुई बालक पर आरती करके घर के बाये भाग में पीपल के पेड़ में अथवा तोते वाले बिल्व के पेड़ में सात दिन तक दोपहर के समय बलि देवो और भेड़ के सींग, सर्प-कांचली, पशु के दांत और मस्तक के बल और मोर की पूंछ, गूगल, आधि(पाव) के नाखून सब समान भाग लेकर चूर्ण करके बालक को लेप करके, उसको पांचो पत्तो के पकाये हुए जलसे स्नान करावे और पूर्वोक्त क्रमसे ब्रह्मा और अंबिका (आम्रक्भांडी नेमनाथ जी की शासनदेवी) की पूजा करे । (ब्रह्मा शीतल नाथ स्वामी का शासन यक्ष का भी नाम है) इसके पश्चात आचार्य की वस्त्रादि से भलि पूर्वक पूजा करे इस बलि के देने के पश्चात शकुनि ग्रही बालक को छोड़ देती है ।

द्वितीये देवता मासि बालं भूमालिनि स्पृशेत
[illegible] ॥ १ ॥

नम स्यामि वती ग्रीवा पृष्ट्यो भ्रंमणं भवेत
मुख्यदास्य: श्रेमा पेतो न दी रिच्छु र्वमत्यपि ॥ २ ॥

प्रति कारोय मैतस्य भिषजांदि भिरुच्यते
स पूप माष कृसरं स सर्पि: कृष्ण पायस ॥ ३ ॥

त्रिपुरुषाहारमितं कृष्णांन्नं कांस्य भाजने
पलस्य चा सुवर्णस्य परिमाणेन कारितां ॥ ४ ॥

सौवर्ण प्रतिमां चापि पीत वासौ द्युगां न्यसेत
अभ्यर्च्य गंध पुष्पाद्यै स्ताबूलां तैश्च मंत्रवित् ॥ ५ ॥

ततो स सर्पिषान्नेन पायसेनाथवा हुति: ॥ ६ ॥

अष्टोत्तर शतिरष्टौ वा जुहुयाजात वेदसि
नीरांजयित्वा संध्यायाबलि ना तेन तं शिशुं ॥ ७ ॥

गृहीत्वा सयन: पूर्व भागे तं प्रतिपेद्बालिं
ब्रह्मणोप्यंबिकायाश्च कार्या पूर्ववदर्चना ॥ ८ ॥

ॐ नमो भूमालिनी ऐहि ऐहि बलिं गृन्ह गृन्ह मुंच मुंच बालकं स्वाहा । इति बलि विसर्जनमंत्र:

पंच पल्लव नीरेण स्नातं भूमालिनी त्यजेत्
वसनाद्यैर्विधातव्या पूजा बलिं विधायिन:
गृहं शांति दुर्धार समे मासि यत: शिशो: ॥ ९ ॥

इति द्वितीयो मास:

दूसरे महिने में बालक को भूमालिनी नाम की देवी पकड़ती है । उसके पकड़ने पर बालक रोता है निश्चेष्ट होकर मूर्च्छित हो जाता है । तथा उसकी गर्दन और पीठ नमस्कार करने के समान घूमने लगती है । उसका मुँह परिश्रम किये हुवे के जैसा लगता है । उसको दूध की भी इच्छा नहीं होती है और वमन भी करता है । इसका उपाय औषधि आदि से कहा जाता है । तीन पूर्व और उडद की खिचडी, घृत, काली खीर और तीन पुरुषो के खाने लायक अन्न का काला भोजन को कांसी के बरतन में रखकर, चार तोले परिमाण की बनवाई हुयी यक्षिणी की प्रतिमा को जो पीलेरंग के वस्त्रों से ढक कर उस पर रखे । फिर मंत्री उसको गंध पुष्प माला आदि तथा पान से पूजा करे फिर घृत सहित अन्न अथवा खीर की १०८ आहुति या केवल आठ आहुति देवे अग्नि में आहुति देकर बालक पर बलि को आरती उतार कर संध्या काल में बालक को लेकर उस बलि को मकान के पूर्व भाग में मंत्र सहित रख देवे, फिर ब्रह्म और अंबिका देवि की पहिले के समान पूजा करे । फिर पांचो पत्तो के उबाले हुवे जल से बालक को स्नान करानेपर भूमालिनी देवी छोड़ देती है । फिर बलि कराने वाले आचार्य की वस्त्र आदि देकर सत्कार करे क्योंकि सम संख्या वाले (जैसे दो-चारछ) इत्यादि महिनो की ग्रह की शांति बहुत कठिनता से होती है ।

तृतीये मासि गृह्णति गौतमी नाम देवता
गृहीतो रोदति शिशु ध्वंनिनोच्चतेरण स: ॥ १ ॥

अति ग्र्गमान्नस्यापि कृतो भवेत
अमेध्य गंधो देहस्य प्रतिकारोस्य कथ्यते ॥ २ ॥

व्रीहीअन्नं पायसं सर्पि मुद्गोक्षु रसादि वान
पिष्टं भ्रष्ट तिलानां च पात्रे कांस्य विनिर्मितं ॥ ३ ॥

स्वर्णेन रचितां हैम प्रतिमां वस्त्र वासिता
अभ्यर्च्य गंध पुष्पाद्यै स्तांबूलेनान्वितं बलिं ॥ ४ ॥

प्राग्भागे बलिं गेहस्या मध्यान्हें प्रक्षियेत् शुचिः
पंच पल्लव नीरेण स्नानंकुर्यात् तदा अर्भकं ॥ ५ ॥

पलांडु सर्षपं चैव निर्माल्यं पिपली तथा
चूर्णी कृत्य विधातव्यो विलेपन विधिः शिशो ॥ ६ ॥

ब्रह्माणी प्यं बिका या श्च पूजा पूर्वोदितः क्रमात्
त अनेन बलिनां मुंचद्र हीतं गौतमी शिशुः ॥ ७ ॥
ॐ नमो गोतमी ऐहि ऐहि बलिं गृन्ह गृन्ह मुंच मुंचे बालकं स्वाहा

आचार्यमथ वासोभि र्दक्षिणाभिश्च तोषयेत्
यत् स्तद्वशगाः सर्वाभवंति ग्रह देवता ॥ ८ ॥
इति तृतीयो मास

तीसरे महीने में गौतमी नाम की देवी बालक को पकड़ती है-उसके पकड़ने पर बालक बहुत उंची आवाज से रोता है । यह बहुत टट्टी करता है उसके शरीर में दुर्गंध आने लगती है उसका प्रतिकार उपाय कहा जाता है । धान के अन्न की खीर घृत मूंग गन्ने का रस और पिसे हुए काले (पके हुवे) तिलो को कांसी के बने हुये वर्तन में सोने की बनी हुई यक्षिणी की प्रतिमा को दो वस्त्रों से ढ़क कर गंध फूल माला आदि और तांबूल सहित बलि को घर के पूर्व के भाग में दोपहर के समय पवित्र होकर मंत्रपूर्वक रखे , तथा पाँचो पत्तों के पकाये हुवे जलसे बालक को स्नान करावे - प्याज सरसों चढ़ाया हुवा निर्माल्य अन्न और पीपल के चूर्ण का बालक के शरीर पर विधिपूर्वक लेप करे। तथा पहिले बताई हुई विधि से ब्रह्मा और अंबिका देवी की पूजा करे। इस प्रकार विधि करने पर गोतमी ग्रही पकड़े हुवे बालक को छोड़ देती है । दक्षिणा और वस्त्रादि आदि से सत्कार करके आचार्य को संतुष्ट करे जिस के वशमें सब ग्रह देवता होते हैं ।

चतुर्थे मासि गृह्णाति पिंगली नाम देवता
हस्तौ द्वावालुठति ग्रस्तो न क्षीरेच्छास्य विद्यते ॥ १ ॥

मुख्यदास्यः पूतिगंधि ग्लिश्चेष्टः कांश्य भाजनं
समाश्वासं च निर्जीवो भवतीच्छं विकारवान् ॥ २ ॥

ऐवं विद्या श्चेष्टाया गृहीतस्य तदाशिशो न मंत्र
तत्रं वलिभिः प्रतिकारो विधीयते
तं विधे वंशंग विद्याय एवं विकृत्ति शिशुः ॥ ३ ॥

चौथे महिने में पिगंली नाम की देवी के पकड़ने पर बालक दोनों हाथों को चलाता है, उसकी दूध पीने की इच्छा नहीं होती है । उसका मुँह सूखने लगता है उसके शरीर से पवित्र गंध आने लगती है। वह कांसी के बरतन की तरह चेष्टा रहित होजाता है । उसको श्वास खूब आते हैं, वह निर्जीव और बिगड़ी हुई इच्छा वाला हो जाता है । जिस बालक में इस प्रकार के लक्षण पाये जावे उसका इलाज न मंत्र न तंत्र और न बलि से ही हो सकता है । यदि बालक में इस प्रकार के विकार पैदा हो जावे तो उसे उसके भाग्य के ही वश का जानना चाहिये ।

गृह्णाती पंचमे मासि गोकर्णी नाम देवता
हेम वर्ण भवेत् सद्यो गृहीतस्य वयुः शिशो : ॥ १ ॥

ज्वरेण महता तप्तः श्वष्यदास्यो निशरुदन्
उच्यते तस्य प्रतिकारो विद्यानं बलि कर्मण ॥ २ ॥

व्रीही अन्नं माष पूपाज्य पायसे क्षुरसान्वितं
क्षीरेण पाचिताः पूपा पंच खाद्यानि शम्भवः ॥ ३ ॥

कांस्ये पात्रे विधातव्या शुद्धे गुरुणि विस्तृते
प्रतिमां चापि सौवर्णी पीत वस्त्र द्वयान्विता ॥ ४ ॥

बलिमभ्यर्च्य गंधाद्यै स्तांबूलं च समर्पयेत
बलिमादाय गेहस्य पूर्वभागे त्रिवासरं ॥ ५ ॥

ज्यन्हौ मध्य दिने भानौ निद ध्यान्मंत्र पूर्वकं
पूज्य श्चैत्यालये ब्रह्मायक्षिणी चापि पूर्ववत् ॥ ६ ॥

पंच पल्लव युक्तेन स्नापयेत् शिशु मंभसा
बले विंधायकस्यापि पूजादेयाथ पूर्ववत् ॥ ७ ॥

ॐ नमो गोकर्णी ऐहि ऐहि बलिं गृन्ह गृन्ह मुंच मुंच बालकं स्वाहा ।

इति बलि विसर्जनमंत्र

इति पंचमो मासे

पाँचवे महीने में गोकर्णी देवी के लगने पर बालक के शरीर का रंग सोने के समान पीला पड़ जाता है । वह बुखार से अधिक गरम हो जाता है। उसका मुँह सूख जाता है। रात दिन रोता रहता है। उसकी चिकित्सा का वर्णन बलि कर्म आदि से किया जाता है । धान के अन्न उडद के पूये घृत खीर और गन्ने का रस दूध में पकाये हुवे पूवे पांचो प्रकार के भोजन सत्तू लेकर दो पीले वस्त्रों से ढकी हुई यक्षिणी की सोने की बनी हुई प्रतीमा को शुद्ध भारी और बड़े कांसी के बरतन में रखकर और बलि की धूप फूलमाला आदि से पूजा करके, पान का बीड़ा देकर, घर के पूर्व भाग में तीन दिन तक सायकांल में रविवार को मंत्र पूर्वक बालक पर उतारा करके रख देवे और पूर्वक समान चैत्यालय में ब्रह्मा और अंबिका की पूजन करे। पांचो पत्तों के पकाये हुवे जल से बालक को स्नान करावे तथा पूर्व के समान बलि करने वाले आचार्य की वारत्रादि देकर सत्कार करे-

षष्टे मासिनि गृन्हाति पंकजनामाग्र ही शिशु
निगृहीतो रुदेत् तीव्रं तथा देव्या दिवानि ॥ १ ॥

ज्वरेण महता तप्तः श्वसित्यूर्द्धपुनः पुनः
उदरे शूलवांश्चापि प्रतिकारोंपि कथ्यते ॥ २ ॥

पल षष्टया कृते कांश्य भाजने ति विस्तृते
उदनं माष पूपं च पायसं सह सर्पिषा ॥ ३ ॥

मंडकान् विविधानि इक्षुरसांश्च सह शक्तुभिः
व्वजात् पलांबु रुहै मंद्रिं पिष्ट कृतं बलौं ॥ ४ ॥

निद्यादै तानि वस्तुनि रस वंति महांति च
पलेन कृत सौवर्ण प्रतिमां वस्त्रे वेष्टितां ॥ ५ ॥

बलेरुपरि संधार्य सतांबूलानिद्यायतां
आहुतिरष्ट विंशत्या हुत्वाग्नौ वलि वस्तुभिः ॥ ६ ॥

नीरांज यित्वा वलिना तेन बालक मातुरं
गृहस्य पूर्वदिग् भागे मध्यान्हे ग्राम मध्यमें ॥ ७ ॥

शुचिं विद्याय भूमेश्च मंत्र वंत्तं बलिं क्षिपेत्
पंच पल्लव युक्तेन् सिंचेद्वा लक मंभसा ॥ ८ ॥

ब्रह्म नोपि अंबिकाया श्च पूजा पूर्वोदिता
क्रमात् अर्चयेत् बलि कर्त्तारं वसनै र्दक्षिणादिभिः ॥ ९ ॥

सर्वत्रैवं समे मासि ग्रह पीडा वलीयसी
अतेस्तस्या प्रतिकारो भवेत्ता वलि कर्मणा ॥ १० ॥

ॐ नमः पंकजे एहि एहि बलिं गृन्ह गृन्ह मुंच मुंच बालकं स्वाहा । इति बलि विसर्जन मंत्र

इति षष्टमो मास

छठे महिने में बालक को पंकजा नाम की ग्रही पकड़ती है। उस देवी से पकड़े हुवा बालक रात दिन जोर से रोता है, बड़े भारी बुखार से तपने लगता है । बारबार उंचा श्वास लेता है । उसके पेट में दर्द भी होता है। उसका प्रतिकार कहा जाता है । साठ पल अर्थात तीन सेर के बनवाये हुवे कांसी के एक भारी बर्तन में भात उडद के पूर्वे खीर घृत मंडया, (ज्वार) आनेक प्रकार के गन्ने का रस, जौ का सत्तू, ध्वजा, छत्र और कमल को मलकर पीस कर बनाई हुई बली द्रव्यों को इन सब बड़े भारी रस वाली वस्तुओं को रखकर, एक चार तोले सोने की बनवाई हुई यक्षिणी की प्रतिमा को दो कपड़ो से ढ़ककर, बली की थाली पर रखकर तांबूल धूप फूल माला आदि सहित बलि की वस्तुओं से आग्नि में मंत्र सहित आठ इस आहुतियाँ देकर उसनलि की थाली से दुखी बालक पर आरती उतार कर गांव के बीच में घर के पूर्व की तरफ दोपहर के समय स्थान को शुद्ध करके मंत्र सहित उस बलि को रक्खे और पांचो पत्तो से पकाय हुवे जल से बालक को स्नान करावे । फिर पूर्वोक्त क्रम से चैत्यालय मे ब्रह्मा और अंबिका की पूजा करे तथा बलि कराने वाले आचार्य का वस्त्र और दक्षिणा आदि से सत्कार करे। सम गिन्नी वाले (२-४-६ आदि) महिनों में ग्रहो से बड़ा भारी कष्ट होता है अतएव इसका प्रतिकार बड़ी बलि से ही हो सकता है ।

सप्तमे मासि गृह्णाति त्रिमुखीनाम देवता
निश्चसत् उर्द्धमंत्यंतं तं भेदयति वपुषः ॥ १ ॥

सुगंधत्यस्य देहोति मालती पुष्प गंधवत्
वदनोद्घाटनं चापि कुरुते सौ प्रतिक्षणं ॥ २ ॥

प्रतिकार प्रकारोपि विकारस्यास्यकथ्यते
ब्रीहीअन्नं माष पूपं च रसाल रस सर्पिषा ॥ ३ ॥

रसाल फल वस्तुनि पिष्टेन रचितान्यपि
आदाय विमलेकांश्य माजने रोचने वरे ॥ ४ ॥

प्रतिमां चादि सौवणी चित्र वस्त्र ध्वजान्वितां
बलेरुपरि विनस्य गंधाद्यैस्तांसमर्चयेत् ॥ ५ ॥

मध्यान्हे तमुपदाय मंत्र में तदुदीरयन्
पूर्वस्यांदिशि विनस्य ग्राम मध्ये क्षिपेत बलिं ॥ ६ ॥

ब्रह्ममंबिका चापि कुर्यात्पूर्ववदचितौ
पंचपल्लव नीरेण कार्येत् स्नपनं शिशोः
आचार्य पूजिते पश्चात स्वस्थो भवति बालकं ॥ ७ ॥

ॐ नमः त्रीमुखी ऐहि ऐहि बलिं गृन्ह गृन्ह मुंच बालकं स्वाहा ।

इति बलि विसर्जन मंत्रः

इति सप्तमो मासः

सातवें महिने में त्रिमुखी नाम की देवी बालक को पकड़ती है उस समय बालक उंचा श्वास लेता है और अपने शरीर को भी तोड़ता है । उसके शरीर में मालती के फूलो के समान सुगंध आती है और वह जरा जरा सी देरमें अपने शरीर को खोलता है । उसका उपाय इस विकार का कहा जाता है । व्रीही अन्न का भोजन, उडद के पूवे, आम का रस , घृत, आम के फल तथा यही चीजें पिट्ठी की बनी हुई लेकर, उनको सुंदर कांसी के बरतन में रखकर, श्रेष्ट लाल कमल सहित सोने की बनवाई हुई यक्षिणी की प्रतिमा जो रंग विरंगे कपड़ों और ध्वजा से युक्त हो बलि के उपर रखकर,

और उसको धूप फूलमाला आदि से पूजा करे। उसको दोपहर के समय लेकर मंत्र बोलते हुवे पूर्व दिशा में गाव के मध्य में बलि रखे । फिर पहिले के समान ब्रह्मा और अंबिका की चैत्यालय में पूजन कर पाँचों पत्तो के पकाये हुवे जल से बालक को स्नान करावे । फिर आचार्य का वस्त्रादि से सत्कार करे तो बालक स्वस्थ हो जाता है ।

अष्टमे मासी गृह्णाति जैनी नामेति देवता:
श्रुचदास्या: करो वासश्चलत्यस्य सदाशिशो: ॥ १ ॥

निश्चेष्टो मूर्च्छित स्तन्यंन कदाचित पिवत्य
सौ अनु का सर्ष्यया कारा दृश्यं ते स्फोटका स्तनौ ॥ २ ॥

तस्य मंत्रादि भि: को पि प्रतिकारो न विद्यते
विद्ये वंशं गते जंतो नान्य: शक्यं चिकित्सितु ॥ ३ ॥

आठवें महिने मे जैनी नाम की देवी बालक को पकड़ती है। उसके मुँह में खुशकी और बायाँ हाथ में बालक के चंचलता करती है । बालक निश्चेष्ट और मूर्च्छित होता है और वह स्तन से दूध नही पीता है। उसके शरीर में सरसों के आकार के दाने फूट पड़ते हैं । उसका इलाज मंत्रआदि से भी नहीं हो सकता है । उस प्राणी को भाग्य ही बचा सकता है और कोई प्राणी चिकित्सा से उसकी रक्षा नही कर सकता है ।

इति अष्टमो मास:

गृन्हीते नवमें मासि कुभं कर्णेति देवता
प्रतिक्षणं भवेत गालस्या स्य भूयान्नपि ज्वर: ॥ १ ॥

चाल यत्येष मूर्द्धानं स्वडं यत्यात्मेन नखान्
दिवानिशं रुदन्तेषापिपेत् क्षीरं न किं चन: ॥ २ ॥

गंधं कुवलय स्येव तस्य वष्मणिसर्वत:
शरीर सर्वदाप्यस्य स्तंभी भूयायति तिष्ठति ॥ ३ ॥

महतो स्य विकारस्य महात्येव प्रतिक्रिया
उद लावणापिनाक माष पूयान्वितो दनं ॥ ४ ॥

सर्पिं क्षीरं गुड भृष्ट तिलापिष्टंच पायसं
वतिलानपि विन्यस्य पात्रे श्रद्धे गरीयसि ॥ ५ ॥

प्रतिमापि सौवर्णि रक्त वस्त्र द्वयान्वितां
निधाय गंध पुष्पाद्यै स्तांबूलेन पुरस्कृतां ॥ ६ ॥

तेन नीरांजनं कृत्वा बलिना शिशव पुरः
सदेन पूर्वदिग्भागे मध्यान्हे वासरत्रयं ॥ ७ ॥

बलिं समंत्र कं दद्यात्त कृत्वाशुद्धिंजनः शुचिः
ब्रह्मणोप्यं बिकायाश्च कुर्यात् पूर्व वदर्चन ॥ ८ ॥

ॐ नमः कुंभ कर्णि ऐहि ऐहि बलिं गृन्ह गृन्ह मुंच मुंच बालकं स्वाहा

इति बलि विसर्जनमंत्रः

पलांडु सर्षपा न्मेषश्रृंगं पाद नखानपि
वसा मद्य विमांसेन पिष्ट्वा शिशुं विलेपनं ॥ ९ ॥

आभिषिचेत्तदा बालं पंच पल्लव वारिणा
बलिं प्रदाले वस्त्रादिदत्वा तंपरि तोषयेत्
परितोषं बिना तस्या नस्याद्ग्रह विमोक्षणं ॥ १० ॥

इति नवम मास

नवमें महीने में कुभं कर्णीनाम की देवी के पकड़ने पर प्रत्येक समय बालक का शरीर टूटता ही रहता है । बहुत बुखार होजाता है । वह अपने शरीर को हिलाता है। अपने नाखूनो को तोड़ता है। रातदिन रोता हुआ बिलकुल भी दूध नहीं पीता है । उसके शरीर में कमल की सी गंध आती है। उसका सारा शरीर हर वक्त निश्चेष्ट हुआ ठहरा रहता है । इस भारी विकार का भारी है प्रतिक्रिया है - नमकीन पानी में भिगोयी हुई खल उडद के पूवे ,चावल, (भात) घृत, दूध, गुड़, सिके हुवे तिलों की पिष्टी, खीर और तिलों को शुद्ध भारी बरतन में रखकर, दो लाल कपड़ों से ढकी हुई यक्षिणी को सोने की प्रतिमा सहित रखकर उसकी धूप फूल माला आदि से और तांबूल से पूजा करके उस बली से बालक के सामने मंत्र पढ़कर, बालक के मकान के पूर्व की तरफ दोपहर के समय तीन दिन तक पवित्र होकर, मंत्र सहित रख देवे । पहिले के समान ब्रह्म और अंबिका देवी की पूजन

करे, प्याज, सरसों, भेड़ के सींग और उसके पैरों के नाखून को पीसकर उससे बालक के शरीर पर लेप करे । फिर बालक को पांचो पत्तो के पकाये हुवे जलसे स्नान करावे तथा बलि देने वाले को वस्त्र आदि की दक्षिणा देकर उसको संतुष्ट करे क्योंकि उसको संतुष्ट किये बिनाग्रह बालक को नही छोड़ते ।

दशमें मासि गृह्णाति कापिशी नाम देवता
निगृहीत स्तया सोपि कृशो भवति बालक : ॥ १ ॥

नाहारं समु पादते नोन्मीलयति चक्षुषी
स विकारं च रुदत्येष स्खलत्येव मुहुर्मुहुः ॥ २ ॥

एतस्या: विकृतेरे वं प्रति कारोपि कथ्यते
उदनं माष पूपं च धृत पिंड खलं गुडं ॥ ३ ॥

उदनं रक्त वर्णं च कांश्य पात्रे निधाय च
ध्वज घंटात पत्राणि पिष्टेन रचितानि च ॥ ४ ॥

निक्षिपेत्पात्र मध्य स्थबले रुपरिसर्वत:
पलेनैकेन रचितां सौवर्ण प्रति मा मपि ॥ ६ ॥

कौशेयक युगछन्नां कुर्यात् शिरसितांबलै:
निवासरं शुचिर्भूत्वा कृत्वा नीरांजनाविधि: ॥ ७ ॥

गृहस्य पूर्व दिग्भागे प्रक्षिपेन्मलं विद्वलिं
मेषश्रृगांहि निर्मोक सर्षपांडंधि नखान्वितां ॥ ८ ॥

पलांडवहं निर्माल्य गज दतांत्समांशिन:
चूर्णी कृत्य शिशो र्वपुर्लेपं धूपंतै नैव कारयेत् ॥ ९ ॥

पंचपल्लव नीरेण स्नानं कार्य शिशोस्तत:
ब्रह्मणोप्यं बिकायाश्च कार्यापूर्ववदर्चना ॥ १० ॥

वस्त्रादि भिरथा चार्चामर्चयेद्बलि दायिनं
इत्थं बलि विधानेन कापिशी तंविमुच्यति ॥ ११ ॥
ॐनमः कापिशी एहि बलिं गृन्ह गृन्ह मुंच मुंच बालकं स्वाहा
बलि विसर्जन मंत्रः
इति दशमो मासः

गृन्हात्ये कादशे मासि देवता काल राक्षसी
निश्चेष्टो मूर्च्छित भूत्वानिर्जीव स शिशु भवेत्
विधिर्न हित स्यास्य प्रतिकारो निरर्थकः ॥ १२ ॥
इति बलि विसर्जन मंत्र

इति एकादशो मासः

द्वादशे मासि गृन्हाति चंचला नाम देवता
मुह्यतेति विकारेण स शिशु शोषवान् भवेत् ॥ १ ॥

शुष्यदा स्यो जनेनापि धियमाणः सरोदति
स्तब्ध नेत्रो दिशः पश्य देवेष्टामुपायुषः ॥ २ ॥

प्रतिकारो विधानेन कथ्यते भेषजादि भिः
अन्नं सर्पि दधि क्षीर राज माषाश्चपाचितान् ॥ ३ ॥

पिष्टं भृष्ट तिलानां च रसाल रस मुज्वलो
कांश्य पात्रे विनि हितं पल षष्टि समन्वितं ॥ ४ ॥

रक्ताशुंक युगो पेतत्सुवर्ण प्रतिमानवितां
गंधादिभिः समभ्यर्च्य तांबूले नान्वितं बलिं ॥ ५ ॥

सयत्नः पूर्वदिग्भागे मध्यान्हे ग्राम मध्येगं
त्रि वासरं बलिं कुर्यात् विधिना मंत्रपूर्वकं ॥ ६ ॥

पंच पल्लवनीरेण स्नपनं च ततः शिशुः
ब्रह्मणोऽप्यं ऽबिकायाश्च पूजो पूर्वोदित क्रमात् ॥ ७ ॥

आचार्यं पूजयेत्पश्चात् वस्त्राद्यैश्च सर्व वस्तुभिः
अनेन बलिना तुष्टा शिशुं त्यजति चंचला ॥ ८ ॥

ॐ नम श्चंचले एहि एहि बलिं गृन्ह गृन्ह मुंच मुचं बालकं स्वाहा॥

इति बलि विसर्जन मंत्रः

दसवें महिने में कापिसी नाम की देवी से बालक को पकड़ने पर बालक दुबला हो जाता है। वह न कुछ आहार लेता है और न आँखें खोलता है । बार बार रोता है और फिसल कर गिर पड़ता है। इस विकार की चिकित्सा कही जाती है। भात, उड़द के पुवे, घृत, खल, गुड़, लाल रंग का भात, और पिट्ठी के बने हुये ध्वजा, घंटा और छत्र को कांसी के बर्तन में रखकर बर्तन के मध्य में बलि के ऊपर एक चार तोले सोने की बनवाई हुई यक्षिणी की प्रतिमा को भी रखे फिरउस बलि को दो पवित्र रेशमी वस्त्रों से ढ़ककर पवित्र होकर, तीन दिन तक बालक का मंत्रपूर्वक आरती करके मंत्री घर के पूर्व दिशा के भाग में बलि को रखे और भेड़ के सींग सर्प की कांचली सरसों और भेड़ के पाँव के नाखून, प्याज मोर के पंख , निर्माल्य द्रव्य और हाथी दांत को बराबर लेकर चूर्ण बनाकर फिर बालक को पांचो पत्तों के पकाये हुए जल से स्नान करायें तथा शासनदेवी अंबिका (कुष्मांडी) देवी का पूजन करें। इसके पश्चात बलि कराने वाले आचार्य को वस्त्र आदि देकर सत्कार करे इस प्रकार बलि देने पर कापिसी देवी इस बालक को छोड़ देती है।

इति दशमो मासः

ग्यारहे मास में बालक को राक्षसी नाम की देवी पकड़ती है तब बालक निश्चेष्ट और मूर्छित होकर निर्जीव हो जाता है। उसे अच्छा करने में केवल भाग्य ही समर्थ है अन्यथा उसका प्रतिकार करना व्यर्थ है ।

इति एकादश मासः

बारहवें महिने में चंचला नाम की देवी बालक को पकड़ती है उसके विकार से बालक मोह और खुशकी हो जाती है। उसका मुँह सूखने लगता है बार बार लोगों द्वारा गोदी में लेने से भी रोता है। नेत्र ठहर जाते हैं और चारों दिशाओं को देखता हुआ अनेकप्रकार की चेष्टायें करता है। उसके प्रतिकार का विधान औषधि आदि से कहा जाता है - अन्न, घृत, दही, दूध , लोभिया, (चोले) उड़द पकाये हुये भुने हुये तिलों की पिट्ठि और आमों के रस को उज्वल तीन सेर कांसी के बर्तन में रखकर दो लाल वस्त्रों से लपेटी हुई यक्षिणी की सोने की प्रतिमा को धूप माला आदि से पूजकर, पान से मुक्त करके उस बलि को घर के पूर्व दिशा में गांव के बीच में तीन दिन तक मंत्र सहित विधि

पूर्वक बालक का उतारा करके बलि दें। इसके पश्चात बालक को पाँचों पत्तों के पकाये हुये जल से स्नान करायें तथा क्रम पूर्वक ब्रह्मा और अंबिका का चैत्यालय में पूजन करें अंत में वस्त्र आदि सब वस्तुओं से आचार्य का पूजन करें इसप्रकार बलि देने से संतुष्ट होकर चंचला ग्रही बालक को छोड़ देती है।

इति द्वादश मास:

आदिमं मासमा रभ्य मासानां द्वादशाऽवधि
ग्रहोपशांति कथिता बालारोग्य विवर्द्धनी ॥ १ ॥

प्रथम मास से बारहवें मास के अंत तक के ग्रहों की शांति का वर्णन किया गया है जो बालकों की निरोगता को बढ़ाने लगता है।

आद्यं वत्सरमारभ्य शोडषाब्दाऽवधि क्रमात्
ग्रहाणां विकृते र्वक्ष्ये शांतिं सिद्धैर्निरूपितां ॥ २ ॥

पहिले वर्ष से लगाकर सोलह वर्ष तक के ग्रहों के विकारों की शांति के सिद्धि का वर्णन किया जाता है।

देवता नंदिनी नाम गृन्हात्यादिम् वत्सरे
पतत्यऽभिमुखी भूत्वा ग्रस्त: सोऽपि शिशुस्तथा ॥ २ ॥

स्तब्ध नेत्र करोत्येष रोदनं च दिवा निशं
वेल्लयित्वामऽमखिलांगं ततश्च मूर्छितो भवेत् ॥ ३ ॥

आदत्ते चाऽपिनाहारं वैद्यतेऽपिन किंचनं
उच्यतेऽस्या प्रतिकारो विकृते भेषजादिभि: ॥ ४ ॥

अपूप मास पूपाज्य दधि क्षीरान्न मंडकान्
राजमाषान्व्रीहि लाजान पिष्टं भृष्ट तिलोद्भवं ॥ ५ ॥

बहुन्येतानि विन्यस्यकांस्य पात्रेऽतिविस्तृते
पलार्द्धमानां कुर्वीत प्रतिमां प्रति वत्सरं ॥ ५ ॥

ता हेम प्रतिमां तत्र पीत वस्त्र युगां न्यसेत्
अर्चिते गंध पुष्पाद्यै स्तां बूलेनाऽन्विते वली ॥ ६ ॥

तद्ग्रह प्रीतये पश्चात् अवशिष्टां दशांवधिः
तत मंत्रैणैक विशंत्याज्जु हुया जातवेदसि ॥ ७ ॥

अभ्युक्षेत सलिलं तत्र ध्यात्वा त देवतां शुचिः
नीरांजयित्वा मध्यान्हे सोदकुंभं बलिं हरेत् ॥ ८ ॥

पशुदंताऽहि निर्मोक वर्हांघ्रिनख सर्षपान्
केशान् सश्चशान् संचूर्ण्य धूपं दद्यात नौशिशो ॥ ९ ॥

पंच पल्लव नीरेण स्नपनं ब्रह्मणोऽर्चनां
अंबिकायाश्च पूजादिकार्या पूर्वोदित क्रमात् ॥१० ॥

आचार्यं पूजयेत्पश्चात् वस्त्राऽलंकरणादिभिः
बलिना महताऽनेन बालं मुंचति नंदिनि ॥ ११ ॥

ॐ नमो नंदिनि एहि एहि बलिं गृन्ह गृन्ह मुंच मुंच बालकं स्वाहा।

इति प्रथमो वत्सरं

प्रथम वर्ष में नंदिनि नाम की देवी बालक को पकड़ती है उसको पकड़ते ही बालक के सामने को मुँह किये ही गिर पड़ता है। उसके नेत्र ठहर जाते हैं वह रात दिन रोता है और सब अंगों को बड़े जोर से हिला कर मूर्छित हो जाता है। वह कुछ भी भोजन नहीं करता है और वह कुछ भी वस्तु नहीं लेता है। उस विकार की चिकित्सा औषधि आदि से कही जाती है। पुड़ी, उड़द के पूवे, घृत दहीमंडया (ज्वार) राज, माष (राई उड़द या चौला) ब्रीही, धान चावल की खील, भुने हुवे तिलों का चूर्ण इन सब वस्तुओं को कांसी के बड़े भारी बर्तन में रखकर, प्रतिवर्ष आधे पल अर्थात दो तोले की सोने की यक्षिणी की प्रतिमा बनावायें। इस सोने की प्रतिमा को धूप फूल माला आदि से पूजकर पान का बीड़ा देकर दो पीले कपड़ों से लेपटकर बलि के ऊपर रख दें। इसके पश्चात उस ग्रह को प्रसन्न करने के लिये शेष बची हुई अवस्था (दिशा) में अग्नि में मंत्र पढ़कर इक्कीस बार आहुति दें। साथ ही पवित्र होकर तथा देवी का ध्यान करके वहां एक जल के बर्तन से या झारी से की बूंद बूंद डालता जावे तथा दोपहर में बालक का आरती मंत्र सहित उतारकर उस दल के घड़े सहित बलि दें। पशु के दांत, सर्प, कांचली मोर के पंख ,पाँव के नाखून, सरसों, बाल को बराबर

बराबर लेकर बालक के शरीर में उसकी धूप देखर बालको पत्तों के उबाले हुये पानी से स्नान करायें। फिर शीतलनाथ स्वामी के यक्ष ब्रह्मा तथा नेमिनाथजी शासना देवी अंबिका (कुष्माडिनी) की पहिले के समान पूजा करें। अंत में वस्त्र और आभूषण आदि देकर आचार्य का सत्कार करें इस महान बलिं से संतुष्ट होकर नंदिनी ग्रही बालक को छोड़ देती है।

गृन्हाति रोहिणी नाम द्वितीये वत्सरे शिशुं
तया देवतया ग्रस्तो विकारान कुरुते बहुन् ॥ १ ॥

सह रक्तेन वमति मूत्रे चापि अतरिक्तिमा।
वामश्चलति हस्तोऽस्य पतेत् पर वशोभुविः ॥ २ ॥

देहः कुवलयाभोस्य स विकारं च रोदिति
भवतश्चक्षुषी रक्ते कथ्यतेऽस्य प्रतिक्रिया ॥ ३ ॥

पायसं गुडम न्नाज्य राज माष दधीनि च
माष पूपं ससूपं च पिष्टं भृष्ट तिलोद्भवं ॥ ४ ॥

ऊद लावण पिण्याकमण स्थाप्याति विस्तरे
पल षष्टया परिमिति कांश्य पात्रेनिवेश्य च ॥ ५ ॥

माष पिष्टेन रचितं पद्म कुवलयद्वयं
शिशुवद्वर्तन संजात मिदं च बलि मूर्द्धनि ॥ ६ ॥

रक्त वस्त्र युग छन्नां रक्त माल्याऽनुलेपनं
सौवर्णी' प्रतिमामेक पलेन रचितामऽपि ॥ ७ ॥

अर्चिते गंध पुष्पाद्यै स्तांबूलेनाऽन्विते
वलौ ततो वल्याऽवशिष्टाऽन्नैराहुतिनां विभावसौ ॥ ८ ॥

अष्टा विशंतिमें तैन मंत्रेण जुहूयात् शुचिः
तत तांबूलमुपादाय मोदकुंभ ततो बलिं ॥ ९ ॥

भानोरुदय बेलायां प्राच्यां दिशिं विनिक्षेपत्
मेषदंताऽहिनिर्म्मोक वहाऽड्रिपनख सर्षपान् ॥ १० ॥

पलांडु कुटजं चैव अवचूर्ण्य समांशतः
तेन धूपायितं कुर्यात् तत शरीरं च सर्वतः ॥ ११ ॥

श्री वृक्षमूलैरऽश्वत्थ पलाश त्वग्भिरऽन्वितं
जलं संतापप्यते नैव कुर्य्यात्स्नानं ततः शिशोः ॥ १२ ॥

गंध सारेण बालस्य लिंपे देहं समं ततः
सप्त वासरमेतेन विधिना मंत्रपूर्वकं ॥ १३ ॥

गृहस्य पूर्व दिग्भागेशुचि भूत्वा बलिं क्षिपेत्
ब्रह्माणं यक्षिणी चैव पूजयेत्पूर्व वस्तुभिः ॥ १४ ॥

आचार्य्याय ततः पूजा विधातव्या यथापुरा
एवं: समर्चिता देवि रोहिणी तं विमुंचति ॥ १५ ॥

ॐ नमो रोहिणी एहि एहि बलि गृन्ह गृन्ह मुंच बालकं स्वाहा

इति बलिं विसर्जन मंत्रः

इति द्वितीयो वत्सरः

दूसरे वर्ष में बालक को रोहिणी नाम की देवी पकड़ती है उस देवी के पकड़े जाने पर बालक बहुत प्रकार के विकार दिखलाता है। वह रक्त मिला हुआ वमन करता है मूत्र भी लाल होता है उसका बायाँ हाथ चलता है पराये वश में होकर जमीन पर गिर पड़ता है शरीर में कमल के फूल की सी गंध आती है। विकार के कारण खूब रोता है। उसके दोनों नेत्र लाल हो जाते हैं। इसका प्रतिकार कहा जाता है- खीर, गुड़, नेत्र, घृत, राज माष लोभिया (चौले) (राई, उड़द) दही, उड़द, के पुवे दाल भुने हुए तिलों की पिट्ठी, तिलों की खल जो नमकीन जल में भीगी हुई हो, इन सबको एक बड़े भारी तीन सेर के कांसी के बर्तन में रखकर उड़द की पिट्ठी से बने हुवे दो कमल के फूल और बालक के शरीर पर से उतरे हुवे उबटना को बलि के ऊपर रखकर दो लाल वस्त्रों से लपेटी हुई एक पल (४ तोले) के बनी हुई सोने की यक्षिणी की प्रतिमा, जो लाल माला और लेप से

शोभित हो, उसको धूप और फूल माला आदि से पूजकर पान का बीड़ा देकर सबके ऊपर रखे और बलि के सब शेष बाकी बचे हुवे अन्नों से अग्नि में इस मंत्र से अट्ठाईस २८ आहूतियां पवित्र होकर दें। फिर पान देकर और जल के घड़े सहित बलि को मंत्रपूर्वक सूर्योदय के समय पूर्व दिशा में रखे, और भेड़ के दांत, सर्प, कांचली मोर के पाँवो के नाखून, सरसों , प्याज और कुड़ा (कुरज) को बराबर लेकर उससे बालक के सारे शरीर पर धूप दें। बिल्व के पेड़ की जड़, पीपल और छीला की छाल को डालकर पकाये हुये जल से बालक को स्नान करायें । फिर बालक के शरीर पर चारों तरफ चंदन का लेप करें। इस विधि से सात दिन तक मंत्रपूर्वक घर के पूर्व दिशा के भाग में पवित्र लेकर बलि दे। तथा पहिले के समान ब्रह्मा और अंबिका की चैत्यालय में पूजन करें। इसके पश्चात पहिले के समान वस्त्र और आभूषणों से आचार्य की पूजा करें। इसप्रकार पूजा करने पर रोहिणी देवी उस बालक को छोड़ देती है।

तृतीये धन दत्तेति वत्सरे क्षुद्र देवता,
गृह्णाति बालकं सोपि न पश्यो देव किंचन ॥१॥

चलतैस्य करो वामो ज्वरोश्च सभ्रमो महान,
आदत्ते चापि नाहार कृशो भवति सर्वथा ॥२॥

प्रतिक्रिया विकारस्य कथ्यते चौषधादिभिः,
दलावण्य पिणयाक मोचनं क्षीर सर्पिषी ॥३॥

राज माषं मुद्गा पूप मंडकेक्षु रसानऽपि
पूरिका ब्रीही लाजांश्च कांस्य पात्रेति विस्तृते ॥४॥

परिपूर्य ततो हेम प्रतिमां पल संमितां
कौशैयां श्रुक युग्मां शांत द्रव्योपरि विन्यसेत् ॥५॥

अर्चयेत गन्धं पुष्पाद्यै स्तांबूलं च समर्पयेत्,
अदनेन माष पूपेन सर्पिषोऽपि समाहितः ॥६॥

आहूति भिरऽष्टाभि होंमं कुर्यां द्विभाव सौ,
गृहस्य पूर्व दिग्भागे रविस्तं गते सति ॥७॥

त्रिवासरं बलिं दद्यात् संस्मरन् धनदाऽमपि,
पंच पल्लव नीरेण शिशोः कृत्वाऽभिषेचनं ॥ ८ ॥

ब्राह्मणमंऽबिकांचैव पूज्येत् पूर्व वस्तुभिः
वस्त्रासनाद्यै प्रमुदितं कुर्य्यात् बलि विधायकं ॥ ९ ॥

एवं बलि विधानेन धन दत्ता विमुंचति
ॐ नमो धन दत्ते एहि-एहि बलिं गन्ह- गन्ह मुंच-मुंच बालकं स्वाहा ॥

॥ इति तृतीयो वत्सरः ॥

तीसरे वर्ष में धन दत्ता नाम की देवी बालक को पकड़ती है तब बालक कुछ भी नहीं देखता। उसका बायाँ हाथ चलता है, बुखार हो जाता है - वह बहुत परिश्रम किया हुआ मालूम पड़ता है, भोजन नहीं करता है और बहुत दुर्बल हो जाता है। इस विकार की प्रतिक्रिया औषध आदि से करने का उपाय कहा जाता है। जमकीला दाली की भीगी हुई तिलों को जल, केला, दूध, घृत, लोबिया, मूँग के, पुवे मंडवा गन्ने का रस पूरी ब्रीहिधान और चावल की खील को अत्यंत बड़े कांसी के बरतन में रखकर, उसके ऊपर रेशमी कपड़ों से ढंकी हुई एक चार तोले सोने की प्रतिमा को रखे। उस प्रतिमा का धूप पुष्पादि से पूजा करके पान देवे फिर अन्न उडद के पूवे घृत से एकांत चित्त होकर दिन की समाप्ति पर सूर्य के छिप जाने पर, घर के पूर्व दिशा के भाग में अग्नि में आठ आहुति मंत्रपूर्वक देकर होम करें। इसप्रकार धनदत्ता देवी को स्मरण करता हुआ तीन दिन तक बलि देवे, तथा पाँचों पत्तों के पकाये हुवे जल से बालक को स्नान करावे। ब्रह्मा और अंबिका देवी के चैत्यालय में सब चीजों से पूजन करे तथा बलि कराने वाले आचार्य को वस्त्र, आसन आदि देकर प्रसन्न करे। इसप्रकार के बलि विधान करने से धनदत्ता उस बालक को छोड़ देती है।

चतुर्थे शाकिनी नाम वत्सरे देवता मर्के,
पीडियेत् सोऽपि महता ज्वरेण परितप्यते ॥ १ ॥

प्रतिक्षणं स्खलत्येष भवे द्वे हस्य पांडुरः,
सविकारं हसत्येव कथ्यतेऽस्य प्रतिक्रिया ॥ २ ॥

ऊदलावण्य पिवद्याकमोदनं सूप सर्पिषी निधायै,
तानि वस्तूनि कांस्य पात्रेऽति निर्मले ॥ ३ ॥

पल प्रमाण प्रतिमाणशात् कुंभेन कारिताः,
रक्ताश्रुक् युतां तत्र गंधाद्यै स्तांप्रपूजयेत् ॥ ४ ॥

अथाष्टाऽचाहुती हुत्वा साज्योनांऽन्नेन वाहंषिः
त्रिपुरषाहार मितं संध्या काले त्रिवासरं

गृहस्य पूर्व दिग्भागे प्रतिमंत्र वद्बलिं
मेषदंताऽहि निर्माकौ दसांस समभागतः ॥ ५ ॥

संचूर्ण्य तेन सर्वांगं कुर्य्याद धूपायितं शिशोः ॥ ६ ॥
पंच पल्लव नीरोण स्नपमं ब्रह्माणोऽर्चना

अंबिकायाश्च पूजाऽपि पूर्ववत् समुदीरिता ॥ ७ ॥
आचार्य पूजा वस्त्राद्यैः कार्या पूर्वादित क्रमात्
शाकिनी बालेदानेन तुष्टा बालं विमुंचति ॥ ८ ॥

ॐ नमो शाकिनी एहि-एहि बलिं गृह्-गृह् मुंच-मुंच बालकं स्वाहा ॥

॥ इति चतुर्थ वत्सरः ॥

चौथे वर्ष में शाकिनी नाम की देवी बालक को पकड़ती है तब वह बड़े भारी ज्वर से तपने लगता है। वह प्रतिक्षण फिसलने लगता है, उसकेशरीर का रंग पीला पड़ जाता है और वह विकार से हँसता है। उसका प्रतिकार कहा जाता है- नमकीन पानी में भीगी तिलों की खल, भात, दाल, घृत इन वस्तुओं को अत्यंत निर्मल कांसी के बर्तन में रखकर, उसके ऊपर एक पल ४ तोले प्रमाण सोने की बनाई हुई प्रतिमा को दो लाल वस्त्रों से ढंककर उसका गंध पुष्पादि से पूजन करे। इसके पश्चात् अग्नि में मंत्रपूर्वक घृत की आठ आहुति देवे, तथा मंत्री संध्या के समय घर के पूर्व दिशा में तीन दिन तक घृत, अन्न और पंख तथा तीन मनुष्यों के आहार लायक भोजन समेत बलि देवे। भेड़ के दांत, सर्प कांचली अवस्था के अनुसार समान भाग लेकर, उसके चूर्ण की धूप बालक के शरीर पर देवे। पाँचों पत्तों के पकाये हुए जल से बालक को स्नान करावे और पहले के समान चैत्यालय में ब्रह्मा और अंबिका देवी का पूजन करे। अंत में पहले समान वस्त्र आदि देकर आचार्य की पूजा करे। इसप्रकार बलि देने से संतुष्ट होकर शाकिनी ग्रही बालक को छोड़ देती है।

पंचमेऽब्दे स्पृशेद्बालं नंदिनी नाम देवता
सा च रुष्टा किमऽपिऽहिदुष्टं शक्तिर्न्न विवर्त ॥१॥

वपु कृशीता भवति दुर्गंध्यति च सर्वदा
आस्य श्वष्यत्यहोनो रात्रं प्रलपत्येष बालकः ॥२॥

स्खलन्नित्यं हसत्येव बहुधा मूत्र निःसृति
भवेत् श्वाश निरोधेन कुक्षाऽवुपून्सता शिशोः ॥३॥

करिष्यते विकारस्य भेष जाद्यैः प्रतिक्रिया,
पायसं सपिरंन्नं च दधीऽक्षुरस संयुतं ॥4॥

उदलावेण पिण्याकं पिष्टं भृष्ट तिलोद्भवं,
निधाद्यै मानि वस्तुनि कांस्य पात्रेऽति विस्तृते ॥५॥

प्रतिमाऽपि सौवर्णं पलेन परिमापितां,
वस्त्र युग्मा परिवृतां न्यसेन्मादाद्य मूर्धनि ॥६॥

अभ्यर्च्य गंध पुष्पाद्यै स्तांबूले नान्वितं बलिं,
अन्नेद्यादशिष्टेन जुहुयात् षोडशाहुति ॥७॥

हुतस्य वह्नि सलिलैः कुर्यात् त्रि परिषेचनं,
ग्रामस्य पूर्व दिग्भागे सप्त रात्रं बलिं क्षिपेत् ॥८॥

पंच पल्लव नीरेण स्नानाऽनन्तर मर्ज्जकं,
पलांडुमहि निर्मोकं वहिं केशांश्च सर्षपान् ॥९॥

अवचूर्ण्य समांशेन विदधातेन धूपितं,
एवं बलि विधानेन देवी बालं विमुंचति ॥१०॥

ब्रह्मणोत्यंऽबिकायाश्च पूजाकार्य्या तथा पुरा,
आचार्यमपि वस्त्राद्यै र्दक्षिणाभिश्च पूजयेत् ॥ ११ ॥
ॐ नमो नंदिनी एहि-एहि बलिं गृह्ण गृह्ण मुंच-मुंच बालकं स्वाहा ॥
॥ इति पंचमो वत्सरः ॥

पाँचवे वर्ष में बालक को नंदिनी नाम की देवी पकड़ती है । वह रुठ जाता है तथा रुठ करके अपना अहित करता है तथा उसमें शक्ति जरा भी नहीं रहती है। उससमय बालक का शरीर दुर्बल हो जाता है, उसके शरीर से हर समय दुर्गंध आने लगती है, वह सूखने लगता है, वह बालक रात दिन रोता रहता है। प्रायः वह फिसलता हुआ हँसता है, बहुत पेशाब करता है, और श्वास के रुक जाने से बालक की कोख फूलने लगती है। इस विकार का प्रतीकार औषधि आदि से की जाती है-खीर, घृत, अन्न, दही, गन्ने का रस मिलाकर नमकीन पानी में भिगोई हुई तिलों की खल, भुने हुए तिलों की पिष्टों को एक बड़े भारी कांसी के बरतन में रखकर, चार तोले सोने की बनी हुयी प्रतिमा को दो वस्त्रों से ढंककर सबके ऊपर रखे। फिर उस बलि की धूप, फूल-माला आदि तथा पान से पूजा करने के पश्चात् मंत्रपूर्वक अनाज, घृत आदि मुख्य होम द्रव्यों से सोलह आहुतियाँ अग्नि में देवें। अग्नि में सात रात्रि तक बलि देवें। इसके पश्चात् पाँचो पत्तों से पकाये हुवे जल से बालक को स्नान करावे। प्याज, सर्प, कांचली, मोर के बाल और सरसों को बराबर लेकर चूर्ण से धूप देवें। इसप्रकार बलि विधान करने पर वह नंदिनी देवी बालक को छोड़ देती है। फिर पहले के समान ब्रह्मा और अंबिका देवी का चैत्यालय में पूजन करे तथा वस्त्र, दक्षिणा आदि देकर आचार्य का सत्कार करे।

षष्टे अब्दे ग्रशते बालं कामिनी नाम देवता,
ग्रस्तश्च स तया बालः क्रंदनुच्चतरः स्वरः, ॥ १ ॥

दूत स्ततोऽपि पतति बहुबारं निशा सुच
ज्वरेण महता तप्तः प्रेक्ष्यते गगनं स्थलं ॥ २ ॥

नाहार मादद्दात्येष स विकारं श्वासित्यऽपि
प्रतिक्रियाऽस्य महतो विकारस्य विधीयते ॥ ३ ॥

पायसेक्षु रस क्षीर माष पूपाज्य मोदनं,
उदलावण पिण्याकं धान्याम्लं वा समऽन्वितां ॥ ४ ॥

अद्यं शीत च बलिं चैव निदध्या ताम्रभाजने,
प्रतिमामऽपि सौवर्णं पलेन् परिमापितां ॥ ५ ॥

चित्रवस्त्र द्वयो येतां बलि मूर्द्धन्यव्य स्थितां
गंधाक्षताद्यै स्तांबूल दाने नापि सहाऽर्चयेत् ॥ ६ ॥

षोडशाहुति भिर्होमिऽमन्ने नाज्येन तर्प्पयेत्,
गृहस्य पूर्व दिग्भागे प्रथी मार्गो त्रिवासरं ॥ ७ ॥
बलिं दद्यात् शुचिर्मंत्री मंत्र मे तदुदीरयन्,
पशोर्द्रंतैन श्रंगेन क्षुरेण सह चर्म्मणा ॥ ८ ॥

धूपि तस्यातत: स्नानं पंच पल्लव वारिणा
इत्थं बलि विधानेन कामिनी तं विमुंचति ॥ ९ ॥

ब्रह्माणमंबिकांश्चैव कुर्य्यात् पूर्व वदऽर्चितौ,
मंत्रिणं पूजेत्पश्चाद्वस्त्रालंकार वस्तुभि ॥ १० ॥
प्राण प्रदात्रिणं लोके का वास्यात्प्रति उपक्रिया
ॐ नमो कामिना एहि-एहि बलिं गृह-गृह मुंच-मुंच बालकं स्वाहा ॥

॥ इति षष्टम् वत्सर: ॥

छठे वर्ष में बालक को कामिनी नाम की देवी पकड़ती है। उसके पकड़ने पर बालक ऊँचे स्वर से रोता है । रात में हुआ कई बार जल्दी -जल्दी गिरता है, बुखार से वह बहुत तेज तप जाता है और आकाश को देखता है। उसे बड़ा भारी विकार का प्रतिकार कहा जाता है। खीर, गन्ने का रस, दूध, उड़द के पूवे, घृत, भात नमकीन पानी से भीगी हुयी तिलों की खल, धान्य, आंवला सब मिलाकर उत्तम तथा शीतल बलि को तांबे के बर्तन में रखकर, एक पल (४ तोले) सोने की बनवाई हुयी प्रतिमा को दो अनेक रंगों के वस्त्रों से ढँक कर धूप, गंध, अक्षत, फूल माला आदि और पान से पूजन करके फिर सोलह आहुतियाँ अन्न की और घृत की मंत्रपूर्वक देवे और इतनी बार तर्पण करे। मंत्र के अन्त में नमःके स्थान पर स्वाहा लगाकर होमद्रव्य तथा घी की हवनकुंड की अग्नि में डालने को होम कहते हैं, और एक रकाबी में अनाज और जल भरकर मंत्र में स्वाहा के स्थान पर तर्पयामि लगाकर हथेली को आसमान की तरफ करके जल या अनाज को रकाबी में ही ऊपर

ऊछालने को तर्पण कहते हैं। फिर पूर्व दिशा की तरफ तिराहे पर तीन दिन तक मंत्री पवित्र होकर मंत्र बोलते हुए बलि देवे, पशु (भेड़) के दांत, सींग अथवा खुर अथवा चमड़े से धूप देकर पाँचों पत्तों के जल से बालक को स्नान करावे। इसप्रकार बलि विधान करने से कामिनी देवी बालक को छोड़ देती है। फिर पहले के समान ब्रह्मा और अंबिका का पूजन करे और अन्त में वस्त्रों और अलंकारों आदि वस्तुओं से मंत्री का पूजन करे क्योंकि लोक में प्राण देने वाले का बदला नहीं चुकाया जा सकता।

गृहणं देविनी देव्याः सप्तमे वत्सरे शिशोः,
वेल्लयित्वात्मनो ग्रीवां निश्चः सेऽत्पीडित स्तया ॥ १ ॥
अस्य प्रति क्रयापे वं भेषजादिभि रुच्यते,
बल्यर्थं पायसं सर्पिर्भक्षान्यष्ट विधानि च ॥ २ ॥

ताम्र पत्रे स कंक्कोलं निधायै तानि विस्तृतौ,
प्रतिमामऽपि पूर्वोक्ति परिमाणेन कारितां ॥ ३ ॥

रक्ताश्चुक युगो पेतां रक्त माल्यानुलेपनं,
सौवर्णीं तत्र गंधाद्यैर्मंत्र वेत्तां समर्चयेत् ॥ ४ ॥

अनेन विधिना भक्षैरऽष्टभिः पायसेन वा,
आहुति जुंह्यादाऽग्नावष्टा विशंति संख्यया ॥ ५ ॥

मध्यान्हे त्रिपथे द्रुमैरा स्वच्छै श्रुद्वि संयुते,
सोद कुंभं बलिं शुद्धो विदधाति समंत्रकं ॥ ६ ॥

ॐ नमः कुष्मांडि कांशिके रक्तमंडिकाऽम्बिके जुहोमि इमं मुंच-मुंच बालकं स्वाहा"

मंत्रेणा नेन विधि वद्धोमं कुर्वीत मांत्रिकः,
निंब पत्राऽहि निर्मोक सिद्धार्थ हरिताल कै ॥ ७ ॥

समानैश्चूर्णितै धूंप ह्यादद्वपुषि तत् शिशोः,
पंच पल्लव नीरेण स्नपनं ब्रह्मणार्चनं ॥ ८ ॥

अंबिका यक्ष पूजाऽपि कुर्यात्पूर्वो दित क्रमात्,
मांत्रिकं पूजयेत्पश्चद्स्नान करणादिभिः ॥ ९ ॥

एवं बलि विधानेन देविनी तं विमुंचति,
तस्मात् तदेव कर्त्तव्यं निरालस्येन मंत्रिणा ॥ १० ॥

ॐ नमः देविनी एहि एहि बलिं गृह्ण-गृह्ण मुंच-मुंच बालकं स्वाहा ॥

॥ इति सप्तमो वत्सरः ॥

सातवें वर्ष में देविनी नाम की देवी बालक को पकड़ती है तब बालक स्वयं ही अपनी गर्दन को मरोड़कर बड़े कष्ट से सांस लेता है। इसका इलाज, औषधि आदि से कहा जाता है। बलि के वास्ते खीर, घृत आठ प्रकार खाने योग्य पदार्थ और शीतल चीनी को एक बड़े भारी तांबे के बरतन में रखकर और पहले के समान पूर्वोक्त परिमाण की अर्थात् चार तोले सोने की बनवायी हुई प्रतिमा को दो लाल वस्त्रों से ढँककर लाल माला और अनुलेप लगाकर बलि के ऊपर रखे और प्रतिमा का गंध, धूप, फूल माला आदि से पूजन करे। इसप्रकार आठों प्रकार ते भोजन से अथवा खीर, घृत आदि से अग्नि में अठाईस आहुतियाँ देकर दोपहर के समय स्वच्छ द्रुम पीपल वृक्ष के तिराहे पर शुद्धि पूर्वक जल के घड़े सहित मंत्रपूर्वक बलि देवें।

ॐ नमो कुष्माडि कांशिके रक्त मंडि काम्बिके जुहोमि इमं मुंच-मुंच बालकं स्वाहा ॥

मंत्री इस समय इस मंत्र से विधिपूर्वक होम करे और नीम के पत्ते, सर्प, कांचली, सफेद सरसों और हड़ताल को बराबर-बराबर लेकर कूटकर उसकी बालक के शरीर में धूप देवे। फिर पांचो पत्तों के उबाले हुए जल से बालक को स्नान करावे तथा ब्रह्मा और अंबिका का पूजन पहले के समान करे। अन्त में वस्त्र और आभूषणों से मंत्री का पूजन करे। इसप्रकार के बलि विधान करने से वे देवी उस बालक को छोड़ देती है। इस वास्ते मंत्री को आलस्य छोडकर यह क्रिया करनी चाहिये।

अष्टमेऽब्दे निगृह्णाति नलिनी नाम देवता गृहीतः,
सोऽपि निर्गत्य गृह देवाधि को भवेत् ॥१ ॥

मूर्च्छत्य तंद्रमुत्थाय भुजमास्फायत्यापि,
हास्याल्पं पुनरायाति विवृत्तै च मुहुर्मुहुः ॥ २ ॥

भेषजादिभिरस्तौवं प्रतिकारो विधीयते,
उदलावण पिण्याक पायसाज्य दधीनि च ॥ ३ ॥

राजमाषान्व्रीहि लाजान् पिष्टंभृष्टं तिलोद्भवां,
मयूपं माष सूपं च कांस्य पात्रे निवेशयेत् ॥ ४ ॥

प्रतिमां तत्र विन्यस्य सौवर्णी पल निर्मितां,
रक्त वस्त्र द्वयो पेतां गंधाद्यैरर्चनान्वितां, ॥ ५ ॥
शिष्टैः पूर्वोदित द्रव्यैः होमं कुर्यात् विभाव सौ,
आहुति भिस्तथाष्टाभिर्भ स्त्रृत महितले ॥ ६ ॥

गृहस्य पश्चिमे भागे निशीथे सप्त वासरं,
बलिं दत्वा शुचिभूत्वा निःशंको मंत्र मुच्चरन् ॥ ७ ॥

निंबं पत्राहि निर्माक सिद्धार्थं लसुनैः समैः,
कार्पास बीजेन समं चूर्णीत् तद धूपयेत्शिशौ ॥ ८ ॥

पंच पल्लव नीरेण स्नपनं ब्रह्मणेर्चनं,
अंबिकायाश्चव पूजादि कार्या पूर्वोदित क्रमात् ॥ ९ ॥

आचार्यस्यार्चना पूर्व विधानेन विधीयते,
एवं कृतेन ललिनी बलिना तं विमुंचति ॥ १० ॥

ॐ नमो ललिनी एहि-एहि बलिं गृह्ण-गृह्ण मुंच-मुंच बालकं स्वाहा ॥

॥ इति अष्टमो वत्सरः ॥

आठवें वर्ष में बालक को ललिनी नाम की देवी पकड़ती है। उसका पकड़ा हुआ बालक घर से निकलकर आवारा हो जाता है। वह बार-बार मूर्छित हो जाता है। तंद्रा में उठकर हाथों को ठोंकता है फिर थोड़ा हंसता है। फिर बारम्बार आकर खेद करता है। इसका प्रतिकार औषधि आदि से कहा जाता है। नमकीन जल में भिगोयी हुई तिलों की पिष्टी, पूवे, उडद की दाल को कांसी के बर्तन में रखकर, चार तोले सोने यक्षिनी की प्रतिमा बनवाकर, दो लाल कपडों से उसे ढंककर- धूप,

फूलमाला आदि से पूजकर उस बलि पर रखे। पहले कहे हुये द्रव्यों से एक हवन कुण्ड की रचना करके अग्नि में आहुतियाँ नूमी को आठ द्रव से शुद्ध करके देवे- अर्थात् होम मंत्रपूर्वक करे। फिर घर से पश्चिम भाग की तरफ रात में सात दिन तक पवित्र होकर मंत्र बोलता हुआ निर्भय होकर बालक पर उतारकर बलि देवे। नीम के पत्ते,सर्प, कांचली, सफेद सरसौ, लहसुन और कपास के बीज (बिनोले) को बराबर लेकर चूर्ण करके इससे बालक को धूप देवे। फिर पांचों पत्तों के पकाये हुए जलसे बालक को स्नान करावे और पूर्वोक्त क्रम से चैत्यालय में ब्रह्मा और अंबिका देवी का पूजन करे। अन्त में पूर्व विधान के अनुसार आचार्य का वस्त्र और आभूषणों से सत्कार करे। इस प्रकार बलि विधान के करने से नलिनी नाम की देवी बालक को छोड़कर चली जाती है।

नवमे वत्सरे बालं गन्हाति कल हंसनी,
गृहीतः सोपि महता ज्वरेण परिपीडयते ॥ १ ॥

दाहोपि देहे सु महान दुःसहोति च वर्तते,
बलै विधानं तस्यैव कथ्यंते मंत्र पूर्वकां ॥ २ ॥

प्रियंगु श्यामकं ब्रीहियवा नाल्चंदनं हविः,
दध्योदनं ब्रीही ल ाजा क्षीरं लोहविनिर्मिते ॥३ ॥

भाजने प्रतिमां वाऽपि सौवर्णी पल निर्मितां,
रक्तवासो युगछन्नां गंधाद्यैर चितांश्रुचिः ॥ ४ ॥

विन्यस्य होमं कुर्वीत दध्यान्मे नाहुती दंश,
परिषिंचेत् ततो वह्नि द्विवारं सलिलेन च : ॥ ५ ॥

गृहस्य पूर्व दिग्भागे संध्यायां पंच वासरं,
विदधीत बलिं मंत्री श्रुचि मंत्र पुरस्सरं ॥ ६ ॥

पंच पल्लव नीरेण कुर्याद्बलाभिषेचनं,
सिद्धार्थ रंजनी व्याधि वसा गृंजन मंभसा ॥ ७ ॥

समांशेन विनिपेष्य कुर्याद्वपुषि लेपनं,
गजदंतं पशोर्दंतं नरदान् केशान समांशिनः,

अवचूर्ण्य शिशो र्द्धूपं दद्यात् वपुषि सर्वतः,
एवं कृते तु सा देवी कल हंसी विमुंचयति ॥८॥
ॐ नमो कल हंसिनी एहि-एहि बलिं गृह्ण-गृह्ण मुंच-मुंच बालकं स्वाहा॥

॥ इति नवमो वत्सरः ॥

नवमें वर्ष में बालक को कल हंसिनी नाम की देवी पकड़ती है। उससे पकडे हुए बालक को बहुत बुखार आने लगता है। उसका शरीर बहुत अधिक बर्दास्त न होने योग्य दाह और जलन मालूम होती है उसकी शांति के वास्ते बलि विधान मंत्रपूर्वक कहा जाता है। फूल, प्रयंगु, श्यामक(सामा)व्रीहीधान जो नलिका (नलि सुगंध द्रव्य) चंदन और होम करने योग्यहवि द्रव्य-दही भात व्रीही, खील, खीर को लोहे के बरतन में रखकर , एक चार तोले सोने की बनायी हुई यक्षिणी की प्रतिमा को दो लाल कपडों से ढँककर और शुद्ध होकर धूप, फूल माला, तांबूल आदि से पूजकर बलि रखकर दही और अन्न से अग्नि में दस आहुति के साथ होम करे। इसके पश्चात् अग्निको दो बार जल से शांत करे (सींचे)। घर के पूर्व दिशा के भाग में संध्या के सम पांच दिन तक मंत्री उस बलि को पवित्र होकर मंत्र बोलता हुआ बालक पर उतारा करके बलि देवे (रखे)। पाँचो पत्तों के पकाये जल से बालक को स्नान करावे। सफेद सरसों हल्दी, व्याधि (कूट), वसा (चरबी), गृजन (गाजर) को जल से बराबर लेकर पीसकर बालक के शरीर पर लेप करे। हाथीदांत और नाखून और बाल बराबर लेकर चूर्ण करके बालक के तमाम शरीर पर धूप देवे। ऐसा बलि विधान करने से वह कल हंसिनी देवी बालक छोड़ देती है।

दशमे वत्सरे देव दूती गृह्णाति बालकं गृहीतः,
सतया देव्या कुरूते देह मोटनं ॥१॥

असृ-क्कृन्मूत्र वात्येष नीलेक्षण युगो भवेत्,
बहुऽन्नं बहु पानीयं भुक्त्वा पीत्वा न तृप्यति ॥२॥

वादयेदऽपि वाद्यानि गायत्यपि पतन भुवि,
धावत्युत्थाय विद्वज्जप्लुतां क्षार वचो वदेत् ॥३॥

वदत्येषदुक्तानि दृष्टवा जनमुपागतं,
ग्राम्यालां पैरधिक्षेप स्तस्यैवं सर्वदा शिशोः ॥४॥

उच्यतेऽस्य प्रतिकारो बलिना भेषजादिना,
अपूपं माष चूर्णं च पायसं सह सर्पिषा ॥ ५ ॥

राजमाषान् व्रीहि लाजान् पात्रे कांस्य मथान्यसेतु,
प्रतिमापि सौवर्णं पलेन परिमापितां ॥ ६ ॥

रक्त वस्त्र युग छन्नमादाय बलि मूर्धनि,
करवीरस्य कुसुमैः श्वैतैः रक्त सितेरपि ॥ ७ ॥

अर्चिते गंध पुष्पाद्यै स्तांबलेनान्विते,
बलौ आज्येन पयसा वन्हौ जुहुयात्षोडशाहुती ॥ ८ ॥

पूर्वस्यां दिशि गेहस्य दर्भान्वित मही तले,
सूर्यस्योदय बेलायां त्रिदिनं प्र क्षिपेद्बलिं ॥ ९ ॥

मेष कस्य विषाणं च गुग्गुलांऽधि नरवान समान,
संचूर्ण्यतेन धूपं च दधाद्बालस्य वपुर्षाण ॥ १० ॥

पंच पल्लव नीरेण स्नापिते बालके ततः,
पूजयश्चैत्यालये ब्रह्मा यक्षिणी चापि पूर्ववत् ॥ ११ ॥

अर्चितेऽपि तथा चार्च्य सा देवीं तं विमुंचति,
तस्मात् तदेव कर्तव्यं निरालस्येन मंत्रिणा ॥ १२ ॥
ॐ नमो देवदूती एहि-एहि बलिं गृह्ण-गृह्ण मुंच-मुंच बालकं स्वाहा ॥

॥ इति दशमो वत्सरः ॥

दसवें वर्ष में देवदूती नाम की देवी बालक को पकड़ती है। उसे पकड़ा जाने पर बालक का शरीर टूटने लगता है। उसको पेशाब बार-बार आता है। दोनों आँखें नीली हो जाती हैं। बहुत अन्न खाकर, बहुत जल पीकर भी तृप्त नहीं होता है। बाजों को बजाता है। जमीन पर पड़ा-पड़ा भी गीत गाता है। फिर आदमी को आया हुआ देखकर उससे शिकायत की बात कहता है तथा वह बालक

गाँव वालों की बोली में आक्षेप (झिड़का) करता है। उसकी यह दशा सदा बनी रहती है। इन विकारों का प्रतिकार औषधि और बलि आदि से करने का उपाय कहा जाता है-पूवे, उड़द का चूर्ण, खीर तथा घृत, लोभिये, ब्रीहीधान, चावलों की खील को कांसी के बने हुये बर्तन में रखकर एक चार तोले सोने की बनवायी हुई प्रतिमा को दो लाल कपड़ों से ढँककर, बलि द्रव्यों पर रखकर, फिर सफेद और लाल कनेर के फूलों से तथा गंध धूप, फूलमाला और पान से पूजन करके और घृत और दूध की अग्नि में सोलह आहुतियाँ मंत्र पूर्वक देकर, घर के पूर्वभाग की दिशा में दाभ (दर्भ) बिछी हुई भूमि पर सूर्योदय के समय मंत्रपूर्वक बालक पर उतार करके, नीम दिन तक बलि देवे। भेंड के सींग, गुग्गल और पैर के नाखूनों को बराबर लेकर उसके चूर्ण की धूप बालक के शरीर में देवे। पाँचो पत्तों के पकाये हुए जल से बालक को स्नान करावे तथा चैत्यालय में पूर्ववत् ब्रह्मा और अंबिका देवी का पूजन करके आचार्य का भी वस्त्र अलंकार आदि से सत्कार करे। इस प्रकार बलि विधान करने पर देवदूती देवी उस बालक को छोड देती है। इस वास्ते मंत्री को आलस्य छोड़कर यही कार्य करना चाहिये।

॥ इति दशमो वत्सरः ॥

एकादशे अब्दे गृह्णाति मालिवी नामिका गृही,
तस्य शिशो स्तस्य महत्कुक्षीर्व्यथाभवेत् ॥ १ ॥

रुदन काक स्वरेणेष शुष्यदास्यः कृशत्कभाक,
चल बुद्धया वदत्येवं प्रतिकारश्च कथ्यते ॥ २ ॥

पायसं सर्पि लसुन गुड लड्डुक शष्कुली कृसरं,
राज माषान्नं माषाण पिष्ट कानिच ॥ ३ ॥

समाषं धूप मेतानि कांस्य पात्रे विनिक्षिपेत्,
प्रतिमां शात कुंभस्य पलेन परिमापितां ॥ ४ ॥

पीतांशुक युगां तत्र गंधाद्यैरऽर्चिता न्यसेत्,
तद्व्येणैव जुहुयाऽजात वेदस्यष्टाहुतिः ॥ ५ ॥

एक विंशति संख्यानं मंत्री को भद्य वर्जितः,
पूर्वस्यां दिशि गेहस्य मध्यान्हे वासरत्रयं ॥ ६ ॥

बलि मध्ये पयो दद्यान्मांत्रिको च, पुनःशुचिः,
यवैः ससर्षपे धूपं दातव्यस्तन्य वपुषांणि ॥७॥

पंच पल्लव नीरेण स्नपनं ब्रह्माणोर्चनं,
अंबिकायाश्च पूजाऽपि कार्या पूर्वोदित क्रमात् ॥८॥

मंत्रिणः सत्कृते पश्चा देवता तां विमुंचति,
तस्मात् तदेव कर्तव्य मन्यथा तं न मुंचति ॥९॥

ॐ नमो मालिनी एहि-एहि बलिं गृह्न-गृह्न मुंच-मुंच बालकं स्वाहा॥

ग्यारहवें वर्ष में बालक को मालिनी नाम की देवी पकड़ती है। उसके पकड़ने पर बालक की कोष में बड़ी व्यथा हो जाती है। यह कौये के जैसे स्वर से रोता है। उसका मुँह सूख जाता है, कम भोजन करता है, यह चंचल बुद्धि से बात करता है। इन विकारों का प्रतिकार कहा जाता है- खीर, घृत, लहसून, गुड़, लड्डू, कचौरी, खिचड़ी, सोंठिनी, अन्न और उड़द की पिट्ठि, उड़द के पुवे इन सबको कांसी के बनाये हुए बर्तन में रखकर और एक चार तोले परिमाण सोने की बनायी हुई प्रतिमा को दो पीले कपड़ों से ढँककर, उसको चंदन, धूप, फूलमाला आदि से पूजकर बलि घर रखे, और उसी द्रव्य से अग्नि में आठ आहुतियाँ देवे। इक्कीस बार इस प्रकार आहुति देने से मंत्र बालक को भय रहित कर देता है। फिर घर के पूर्व दिशा के भाग में दोपहर को मंत्र पूर्वक तीन दिन तक बलि देवे। मंत्री बलि के मध्य में दूध भी देवे तथा पवित्र होकर जौ और सरसों की धूप बालक के शरीर में देवे। फिर पाँचो पत्तों के पकाये फल से बालक को स्नान कराये और पहले कही हुई विधि से चैत्यालय में ब्रह्मा और अंबिका देवी का पूजन करें। मंत्री सत्कार किये जाने पर देवी बालक को छोड़ देती है अतएव यह कार्य अवश्य करना चाहिये। ऐसा नहीं करने पर देवी बालक को नहीं छोड़ती है।

॥ इति एकादशो वर्षः ॥

द्वादशाब्दे स्पृशेद्वा लं वाहिनी नाम देवता,
पीडितस्य शिशो स्तस्य मुखं शुष्यति सर्वतः ॥१॥

शांतः कृशश्चमुर्द्धानं पातयेत् पुनश्चत्रयः,
वमत्यऽस्य प्रतिकारः कथ्यते भेष जादिभिः ॥२॥

पंच वर्ण दनं सूप राज माषं कृतां हवि:,
निम्न पात्रे लोह मये निधायैतानि विस्तृते ॥ ३ ॥

प्रतिमां चापि पलत: कृतां स्वर्णमयी मऽपि,
नील वस्त्र युगच्छामऽवस्थाप्याऽर्चिताऽपि ॥ ४ ॥
गंधादिभि: सुगंधेन कंकोले नापि लेपितां,
आहुतिभि स्तथा ताभिर्जात वेदसि सं यत: ॥ ५ ॥

जुहुयान्मंत्र विन्मंत्री पूर्वोक्तैर्वस्तुभि: सदा
अथोदये रवे गृहात् पूर्व दिक त्रि पथांतरे ॥ ६ ॥

त्रिवासरं बलिं दद्यात्कृत्वा भू शुद्धि मंभसा,
सिद्धार्थ निंब पत्रैश्च धूपोदेय : शिशोस्तत: ॥ ७ ॥

अभिषिंचेत् तरो पंच पल्लवोदक धारया,
बले विद्यानेना नेन वाहिनी तं विमुंचति ॥ ८ ॥

चैत्यालये ब्रह्मादेय मंबिकां च पुरोहितै :,
वशुभि: पूजयेत्सर्वान् नान्यथा नहि मोचनं ॥ ९ ॥

मंत्रिकांचापि विविधै: परिष्कुर्यात वस्तुभि:
प्राण प्रदायिनां लोके का वा स्यात्प्रत्युप क्रिया ॥ १० ॥

ॐ नमो वाहिनी एहि-एहि बलिं गृह-गृह मुंच-मुंच बालकं स्वाहा ॥

बारहवें वर्ष में बालक को वाहिनी नाम की देवी पकड़ती है। उसे पकड़े जाने पर बालक का मुख सब तरफ से सूख जाता है। वह थका हुआ और उल्टी भी करता है। उसकी औषधि आदि से सिर को दोनों तरफ गिराता है और उल्टी भी करता है। उसकी औषधि आदि से चिकित्सा कही जाती है- पाँच रंग के भात , दाल, लोभिये से बनाया होम द्रव्य को लोहे के एक बड़े तथा गहरे बर्तन में रखकर उस पर चार तोले सोने की बनवायी हुई प्रतिमा को दो नीले वस्त्रों से ढँककर चंदन, धूप, फूलमाला, पान आदि से पूजन करे, तथा शीतल चीनी से लेप की हुयी प्रतिमा को रखकर अग्नि में आहुतियाँ देकर मंत्र को जानने वाला मंत्री पहले कही हुयी वस्तुओं से होम करके, सूर्योदय के समय घर से पूर्व दिशा के भाग में तिराहे पर पृथ्वी को जल से शुद्ध करके , तीन दिन तक बलि

देवे। इसके पश्चात् सफेद सरसों और नीम के सूखे पत्तों की धूप बालक को देवे। फिर बालक को पाँचों पेड़ों के पत्तों के पकाये हुए जल की धारा से स्नान करावे। इसप्रकार बलि विधान करने से वाहिनी देवी बालक को छोड़ देती है। इसके पश्चात चैत्यालय में पहले के समान ब्रह्मा देव और अंबिका देवी का पूजन सम्पूर्ण द्रव्यों से करे अन्यथा देवी नहीं छोड़ती। अंत में मंत्री का भी अनेक प्रकार की वस्तुओं से सम्मान करके संतुष्ट करे क्योंकि प्राण दान करने वालों का लोक में बदला तो चुकाया नहीं जा सकता।

॥ इति द्वादशो वत्सरः ॥

गृह्णाति दक्षिणी नाम वत्सरे तं त्रयोदशे,
विगृह्णित स्तया सोपि ज्वरेण परितप्यते ॥ १ ॥

शूली भवति वातेन रहित्वु भय तोलुवनं,
विकार स्यास्य महतः शिशोः प्रति विधीयते ॥ २ ॥

बालकस्य तनुं सर्वं लिंपेदाज्येन भूयसा,
व्रीहि अन्नं पायसं सर्पि राजमाषाश्च लड्डुकान् ॥ ३ ॥

उर्दलावण पिण्याक सहितं ताम्र निर्मितो,
आदाय भाजने सर्वबलिं वस्तु विधानेत : ॥ ४ ॥

पलेन रचितां हेम प्रतिमां युग्म वाससा,
संपूजस्य गंध पुष्पाद्यै बलेरू परि परि भक्तितः ॥ ५ ॥

दधि भक्तेन लाजैश्च पायसेन च सर्पिषा
अग्राऽवनेन मंत्रेण जुहुयादव्याहृतिर्दशः ॥ ६ ॥

सद्मनो दिशि पूर्वस्यां मध्यान्हे पि चतुष्पथे,
बलिं दद्यात् ततो मंत्री मंत्रेणाऽनेन भक्तितः ॥ ७ ॥

मेष दंता हि निर्मोक सर्षपे व्रीही गुंजकै,
धूपि तस्य शिशो स्नानं पंच पल्लव वारिणा ॥ ८ ॥

ब्रह्माणमंबिकां चाऽपि कुर्यात पूर्व वदाऽर्चितौ,
मांत्रिकं पूजयेत् पश्चाद्वस्त्राल करणादिभिः ॥ ९ ॥
ॐ नमो यक्षिणी एहि-एहि बलिं गृह्ण-गृह्ण मुंच-मुंच बालकं स्वाहा ॥

॥ इति त्रयोदशो वत्सर: ॥

तेरहवें वर्ष में बालक को यक्षिणी के द्वारा पकड़े जाने पर बालक को बुखार आ जाता है। वायु से दर्द भी इतने जोर का होता है कि बालक दोनों तरफ तेजी से लोटने लगता है। इस बड़े भारी विकार का प्रतीकार कहा जाता है- बालक के सारे शरीर पर बहुत से घृत का लेप कर दो। ब्रीही धान का अन्न, खीर, घृत, लोभिये और लड्डू, नमकीन पानी में भिगोई हुयी तिलों की खल इन सब वस्तुओं की बलि को एक तांबे के बनाये हुए बर्तन में रखकर एक चार तोले की सोने की बनायी हुयी यक्षिणी की प्रतिमा को दो वस्त्रों से लपेटकर, जिसकी भक्ति से चंदन, धूप, फूलमाला आदि से पूजा कर दही, भोजन, धान की खील और घृत से अग्नि में इस मंत्र से भक्तिपूर्वक घर की पूरब की दिशा में दोपहर में चौराहे पर बलि देवे। भेड़ें के दांत, सर्प, कांचली, सरसों, ब्रीहि धान, घोंटली, मोर के पंख से बालक को धूप देकर उसको पाँचों पत्तों के जल से स्नान करावे। ब्रह्मा और अंबिका का पहले के समान पूजन करे, वस्त्र और अलंकारों से आचार्य का पूजन करे।

चतुर्दशेऽब्दे गृहणाति सौंदरी नाम बालकं,
गृहीतश्च तथा बाल: सहसा निपदभुवितं ॥ १ ॥

ज्वरितश्च दिवारात्रं निद्रामेयोपगच्छति,
विकारस्यास्य महत: प्रतिकारो विधियते ॥ २ ॥

लड्डूकान पायसं सर्पिपिण्याकं चौद लायणं,
अपूप माष सूपेक्षु रसान् पिष्टं च पाचितं ॥ ३ ॥

निधायैतानि वस्तूनि ताम्र पात्रेति विस्तृते,
पल प्रमाणेन निर्मितां सौवर्णी प्रतिमामपि ॥ ४ ॥

धिम्र वस्त्र द्वयो पेतां गंधाद्यैश्च समर्चितां,
बले रूपरि विन्यस्त पश्चात् शुद्धे महीतले ॥ ५ ॥

जुहुयाद् दधि भक्तेन उच्चलेन च दशाहुतीः,
पूर्वस्यां दिशि गेहस्य त्रिदिनं चौदशे रवौ ॥ ६ ॥

जपेन्मंत्रं मिमं मंत्री ग्राम मध्ये क्षिपेद्बलिं,
निंब सर्षप निर्माल्य वेणु खंडैश्च चूर्णितै : ॥ ७ ॥

धूपं वपुषि सर्वत्र निदध्यादर्भ कस्य तं,
पंच पल्लव नीरेण स्नपनं ब्रह्माणेर्चनं ॥ ८ ॥

अंबिकायाश्च पूजाऽपि विधेया पूर्व वस्तुभि :
मंत्रिणं पूजयेत् पश्चात् वस्त्राद्यै र्भक्ति पूर्वकं
सौंदरी बलिदानेन तुष्टा बालं विमुंचति ॥ ९ ॥
ॐ नमो सौंदरी एहि-एहि बलिं गृह-गृह मुंच-मुंच बालकं स्वाहा ॥

चौदहवें वर्ष में सौंदरी नाम की देवी बालक को पकड़ती है। इसके पकड़ने से वह बालक पृथ्वी पर यकायक ही गिर जाता है। उसको रात दिन बुखार रहता है और नींद भी बहुत आती है। उस भारी विकार का प्रतिकार कहा जाता है- लड्डू, खीर, घृत, नमकीन पानी में भिगायी हुई तिलों की खल, पूवे, उड़द की दाल, गन्ने के रस को पकाकर और पीसकर इन सब वस्तुओं को एक बड़े तांबे के बर्तन में रखे। इसके बाद शुद्ध की हुयी पृथ्वी पर दही, भोजन आदि से अग्नि में मंत्र पढ़ते हुए दस आहुतियाँ देवे। फिर घर के पूर्व भाग की दिशा में सूर्योदय के समय तीन दिन तक मंत्री मंत्र को जपता हुआ गाँव के बीच में बलि को बालक पर उतारकर रखे। फिर नीम, सरसों, निर्माल्य और वेणु (बांस)के टुकड़ों के चूर्ण से, अर्भक (पुत्र) के बालक के सारे शरीर में धूप देवे और पाँचों पत्तों के पकाये हुए जल से स्नान करावे, तथा ब्रह्मा और अंबिका देवी की भी पहले बतायी हुयी वस्तुओं से पूजा करे। चैत्यालय में पूजन करे फिर भक्ति पूर्वक मंत्री का भी वस्त्रालंकारों से पूजन करे तब सौंदरी देवी संतुष्ट होने पर बलि देने से बालक को छोड़ देती है।

॥ इति चर्तुदशो वत्सरः ॥

धनदेति निगृन्हाति वर्ष पंचदशे अर्भकः,
पीडितस्य तया देव्या श्वसित्यूर्द्धमहर्निशं ॥ १ ॥

गात्रस्य मोटनं कुर्यात् पृष्ठे निपततेऽक्षितौ,
प्रतिक्षणं च हिक्काश्च तस्य प्रति विधीयते ॥ २ ॥

उर्द लावण पिण्याक पायसं सर्पिषान्वितं,
पिष्टं भृष्ट तिलानां च व्रीहीलाजा सहांभसा ॥ ३ ॥

माष सूपेन सहितं ताम्र पात्रेपंथे दिनां,
प्रतिमाऽमपि सौवर्णी रक्त वासो युगावतां ॥ ४ ॥

अभ्यर्च्य गंध पुष्पाद्यै स्तांबूलेनान्विते,
थलौ होम माहुतिभिः कुर्य्यां दशभिः सर्पिषांभसा ॥ ५ ॥

गृहस्य पूर्व दिग्भागे मध्यान्हे वासर त्रयं,
मंत्रेणानेन विधि वद्बलिं दद्यात् शुचि स्ततः ॥ ६ ॥

मेष श्रृगं च दंताधिनरय केशान् समांशतः,
अवचूर्ण्यतनोर्लेपं प्रकुर्वीत् समंत्रतः ॥ ७ ॥

पंच पल्लव नीरेण बालकस्य भिषेचनं,
ब्रह्माणोप्यंबिकायाश्च पूजां पूर्ववदा चरेत् ॥ ८ ॥
बलै विंधायिकं चापि तोषयेद्व सनादिह
ॐ नमो धनदेवी एहि-एहि बलिं गृह्ण-गृह्ण मुंच-मुंच बालकं स्वाहा ॥

॥ इति पंच दशो वत्सरः ॥

पन्द्रहवें वर्ष में बालक को धनदा नाम की देवी पकड़ती है। उस देवी से दुखी किये जाने पर बालक रात-दिन ऊँची श्वास लेता है। उसका शरीर टूटता रहता है। वह पृथ्वी पर पीठ के बल गिर पड़ता है। और उसको प्रतिक्षण हिचकियाँ आती रहती हैं। उसका उपाय कहा जाता है- नमकीन पानी में भिगोई हुयी तिलों की खल, खीर, घृत, भुने हुये तिलों की पिष्टी व्रीहिधान , चावल की खील जल के साथ उड़द की दाल के साथ तांबे के बर्तन में रखकर । ऊपर से दो लाल कपड़ों से लपेटी हुयी

सोने की प्रतिमा को रखकर। चंदन, धूप, फूलमाला और पानी आदि से पूजकर उसकी मंत्र सहित घृत और अमंसा (जल), अंधसा (भात) की दस आहुतियाँ देवे। भेड़ के सींग, दांत, पांव के नाखून और बाल बराबर-बराबर लेकर उसके चूर्ण से बालक के शरीर पर मंत्रपूर्वक लेप करें। पाँचों पत्तों के पकाये हुए जल से बालक को स्नान करावे तथा पहले के समान ब्रह्मा और अंबिका का पूजन करे। बलि कराने वाले को भी वस्त्र आदि से संतुष्ट करे।

स्पृशेत् कुटिलिनी नाम षोडशेवत्सरेऽर्भकं,
सचक्षुर श्रवत्सोऽपिन पश्यति पुरस्थितं ॥ १ ॥

कृशीभूत्वा श्वसित्यूर्द्ध निश्वसित्यपि सर्वदा,
वमन्नाहार मादत्ते निश्चेष्टो मूर्च्छितो भवेत् ॥ २ ॥

विकारस्यास्य महत: प्रतिकारो न विद्यते,
अस्त्वीति यदि सं विश्य मनस्तर्हिगद्यते ॥ ३ ॥

त्रिवर्ण मोदनं माष सूपं सर्पिश्च पायसं,
पिष्टं भृष्ट तिलानां च राजमाष समन्वितं ॥ ४ ॥

एतद्बहु विधिं सर्वं त्रिकोणे पात्र भाजने,
विन्यस्य विमले शुभ्रे रक्त वस्त्र युगाऽन्वितां ॥ ५ ॥

प्रतिमामऽपि सौ वर्णी पलेन परिमापितां,
पूर्वोक्त गंधै पुष्पाद्यै स्तांबूलेनान्विते बली ॥ ६ ॥

जुहुयात्सर्पिषा यन्हाष्टोत्तर शताहुति,
निशांत पूर्व दिग्भागे त्रिपथे ग्राम मध्यगे ॥ ७ ॥

सूर्यस्योदये बेलायां बलिं दक्षात्समंत्रकं,
पत्राणि पिष्टाततं लिंपेद श्वगंधिमधु कयो ॥ ८ ॥

शिरो रूहान पाद नखान कलगिंक निशा समं,
निंब पत्राणि दंताश्च दंतिन: सर्ष पै: सह ॥ ९ ॥

अव चूर्ण्य समांशेन दद्यात् धूपं शिशो स्तदा,
विल्व निंबौ पलाशश्च कपित्थ: पिप्पल स्तथा ॥ १० ॥

एतेषां पल्लवै: सिद्धै: व्यधितै रुष्ण सज्जलै:,
पंच पल्लव नीरेण कुर्याद्बाला भिषेचनं ॥ ११ ॥

अनेन बलिना तुष्टा सा दयीतं विमुंचति,
सैत्यालये ब्रह्म देवमंबिकां च यथा विधि ॥ १२ ॥

संपूज्य शांतिं सर्वेषां ग्रहाणां लभते नर:
मांत्रिकं वस्त्र दानाद्यैरर्चयेद् भक्ति पूर्वकं ॥ १३ ॥

न सिद्धयति बिनानेन कुत्रापि गृह मोक्षणं,
प्राण प्रदायिनी लोके का वा स्यात् प्रत्युपक्रिया ॥ १४ ॥

ॐ नमो कुटिलिनी एहि-एहि बलिं गृह-गृह मुंच-मुंच बालकं स्वाहा ॥

॥ इति बलि विसर्जन मन्त्र: ॥

सोलहवें वर्ष में बालक को कुटलिनी नाम की देवी पकड़ती है। उस समय बालक नेत्र सहित होने पर भी सामने खडे हुए पुरूष को नहीं देख सकता है। उसकी आँखे बहती रहती हैं, वह दुबला होकर सर्वदा लंबे लंबे ऊँचे श्वास लेता रहता है, उसको भोजन करते-करते ही वमन हो जाती है। फिर वह निश्चेष्ट होकर मूर्छित हो जाता है। इस भारी विकार का प्रतिकार ही नहीं है तब भी यदि मन में विश्वास हो तो उपाय कहा जाता है- तीन रंग के भात, उड़द की दाल, घृत, खीर, भुने हुये तिलों की पिष्टी और लोभिये सहित एक सब तरफ से अच्छा तिकोने बर्तन में पवित्र सफेद व लाल दो कपड़ों सहित एक चार तोले सोने की यक्षिणी की प्रतिमा को जो चंदन, फूलमाला, तांबूल आदि से पूजित हो बलि पर रखकर अग्नि में घृत की एक सौ आठ आहुतियाँ देकर, घर को पूर्व दिशा के भाग में रात के अन्त होने पर, तिराहे पर गाँव के मध्य भाग में सूर्योदय के समय मंत्र पूर्वक बालक पर उतारा करके रख देवे ,और असगंध और महुवे के पत्तों को पीसकर बालक के शरीर

पर लेप करे। सर के बाल, पांवो के नाखून, कलिंगक (इन्द्रजो), निशा(हल्दी), दंतिनः (हाथी) के दांत सरसों सहित सबको बराबर लेकर चूर्ण बनाकर बालक के शरीर को धूप देवे, तथा बिल्व नीम के पत्ते , पल्शा, कैथ, पीपल अर्थात् पांचो पत्तों के पकाये हुए जल से अर्थात् इन पत्तों के क्वाथ किये हुए गरम जल से बालक को स्नान करावे । इस बलिसे संतुष्ट होकर वह कुटिलिनी देवी बालक को छोड़ देती है और चैत्यालय में ब्रह्मा देव और अंबिका देवी का विधि पूर्वक पूजन करे, इस पूजन पुरुषार्थ से इस ग्रहों से शांति को प्राप्त होता है फिर भक्ति पूर्वक मंत्री की भी वस्त्र व दानादि से पूजा करे। क्योंकि बिना मंत्री को संतुष्ट किये ग्रह बालक को नहीं छोडते हैं। वह कार्य सिद्ध नहीं होता, ग्रह से छुटकारा पाने का प्रश्न नहीं उठता भला प्राण देने वाले का क्या बदला दिया जा सकता है।

॥ इति षोडशो वत्सरः ॥

पूज्य पाद मिदं लिख्य शिशोर्बलि विधानकं,
शांतिकं पौष्टिकं चैव कुर्यात् क्रम समन्वितं ॥

यह बालक की बलि का विधान पूज्यपाद स्वामी के अनुसार लिखा गया है। इसप्रकार क्रम से शांतिक और पौष्टिक कर्म करता है।

इति प्रकारांतर बाल गृह चिकित्सिकं समाप्तं

इसप्रकार दूसरे प्रकार के अनुसार बाल गृह चिकित्सा समाप्त हुई।

अथ रावण मत बाल गृह चिकित्सा

अथास्य प्रथमे दिवसे मासे वर्षे च बालकं,
गृह्णाति नंदना नाम माता तया गृहीतस्य प्रथमं जायते ज्वरः ॥

काकरवं करोति-गलं शुष्यति-स्तन्यं न गृन्हाति,
दुर्बलो भवति हर्दयति अतिसारयति ॥

हस्त पादौ संकोचयति उर्द्धवं निरीक्ष्यते,
एवमादि चिन्हानि भवन्ति ॥

बालक को पहले दिन, मास और वर्ष में नंदा नाम की माता पकड़ती है। उसके पकड़ने पर बालक को पहले बुखार होता है। वह कौवे के समान शब्द करता है, उसका गला सूख जाता है, दूध नहीं पीता है, दुबला हो जाता है, उल्टी करता है। उसको दस्त होने लगता है, वह हाथ पैरों को सिकोड़ता है, ऊपर की तरफ देखता है इत्यादि इसप्रकार के चिन्ह होते हैं।

अथास्य बलिः

नद्युभय तट मृतिकया पुत्तलिकां करोतु,
श्वेत वस्त्र परिधानं पूर्णप्रस्थ तंदुलोदनं ॥

दधि गुड़ संमिश्रं कृत्वा गुलिका दश तिल चूर्ण,
पंच खाद्यं दीप द्वयं ध्वज त्रयं ॥

गंध पुष्पादि दत्त पत्रे पुत्तलिकां विधाय,
अनेन विधानेन पूर्व दिशं समाश्रित्य अपरान्हे पंच रात्रं बलिं हरेत् ॥

ॐ नमो रावणाय मातानंदे बलिं गृह्ण-गृह्ण मुंच-मुंच बालकं स्वाहा ॥
धूपनं विजय धूपेन स्नानं शांत्युदकेन च

नदी के किनारों की मिट्टी से एक पुतली बनाकर उसे श्वेत वस्त्र पहनावे पिर दो सेर चावल, दही, गुड़ को मिलाकर उसकी दस गोलियाँ बनावे। फिर तिल का चूर्ण पाँचों प्रकार के भोजन, दो दीपक, तीन ध्वजा, गंध और पुष्प आदि को लेकर पुतली को बड़ के पत्ते पर रखकर इस विधान से पूर्व दिशा में जाकर दोपहर ढ़लने पर पाँच रात तक बलि देवे। इसके पश्चात् विजय धूप से देवे और शान्ति उदक से स्नान करावे।

अथास्या द्वितीय दिवसे मासे वर्षे च बालकं गृन्हाति,
सुनंदा नाम माता तया गृहीतस्य प्रथमं जायते ज्वरः॥

अक्षि रोगो भवति उर्दयति हस्त पादौ संकोचयति
अतिसारयति,उर्ध्वं निरीक्ष्यते मार्जार स्वरं
करोति दुर्बलो भवति एवमादि चिन्हानि भवंति॥

बालक को दूसरे दिन, मास, और वर्ष में सुनंदा की माता पकड़ती है। उसके पकड़ने पर पहले बुखार होता है, आँख का रोग होता है, बालक वमन करता है, हाथ पैरों को समेटता है, पहले दस्त होते हैं, ऊपर देखता है।, बिल्ली के जैसे शब्द करता है। और दुर्बल हो जाता है। उस समय इसप्रकार के अन्य चिन्ह भी होते हैं।

अथास्य बलिः

नद्युभय तट मृतकया पुत्तलिकां करोतु,
कुलाल भांडे निधाय पीतवस्त्र परिधानं ।

पूर्ण प्रस्थ तंदलो दनं दधि गुड संमिश्रं,
स्वस्तिक त्रयोदश सप्त खाद्यां दीप त्रयं ॥
नाना वर्ण ध्वज चतुष्कं जल गंध पुष्पादि अनेन
विद्यानेन धूपनं विजय धूपेन स्नानं पूर्वोक्त भाजने ॥
पश्चिम दिशं समाश्रित्य अपरान्हे पंच यात्रं बलिं हरेत्
ॐ नमो रावणाय माता सुनंदे बलिं गृन्ह-गृन्ह बालकं मुंच-मुंच स्वाहा॥
धूपनं विजय धूपेन स्नानं शांत्युदकेन च ॥

नदी के किनारों की मिट्टी से एक पुतली बनाकर उसको पीले वस्त्र पहनाकर कुम्हार के बरतन में रखे। फिर दो सेर चावल, भात, दही, गड़ को मिलाकर, तेरह प्रकार का स्वस्तिक बनाकर सात प्रकार का भोजन, तीन दीपक, अनेक रंग की चार ध्वजायें, जल गंध और पुष्प आदि को लेकर इस विधान से अर्थात् मंत्र पूर्वक विजय धूप से बालक को धूप देकर पहले कहे हुये बर्तन में रखकर पश्चिम दिशा में दोपहर पीछे पाणघ रात्रि तक बलि देवे और बालक शांत्युदेक से स्नान करावे ।

अथास्य तृतीय दिवसे मासे वर्षे बालकं गृन्हाति,
पूतना नाम माता तया गृहीतस्य प्रथमं जायते ज्वरः॥

अंग भंग करोति गलः श्रुयति धृतिर्न्न भवति,
उर्द्धवं निरीक्षते अतिसारयते दुर्बलो भवति ॥
एवमादि चिन्हानि भयंति ॥

अथा तस्य बलिः

नद्यभयु तट मृतिकाया पुत्तलिकां करोतु,
लोहित वस्त्र परिधानं अग्र भक्तं दधि गुड संमिश्रं॥

पोलिका दश पंच खाद्य दीप द्वयं ध्वज चतुष्टयं,
गंध पुष्प धूप तांबूलादि सुजाजने निधाय॥

अनेन विधानेन उत्तर दिशं समाश्रित्य पंच रात्रिं बलिं हरेत्॥
ॐ नमो रावणाय पूतने बलिं गृह्ण-गृह्ण मुंच-मुंच बालकं स्वाहा ॥

बालक को तीसरे दिन, मास और वर्ष में पूतना नाम की माता पकड़ती है उसके पकड़ने पर पहले ज्वर होता है, शरीर टूटने लगता है, गला सूख जाता है,धैर्य नहीं होता है, ऊपर देखता है, दस्त होते हैं। वह दुर्बल हो जाता है। उससमय इसीप्रकार के अन्य भी चिन्ह होते हैं।

नदी के दोनों किनारों की मिट्टी से एक पुतली बनाकर उसे लाला वस्त्र पहनावे । बहुत भोजन दही गुड़ को मिलाकर, दस कचोरी, पांच प्रकार के भोजन, दो दीपक, चार ध्वजायें, गंध पुष्प, धूप और पान आदि को उत्तम बरतन में रखकर इस विधि से उत्तर दिशा में पांच रात तक बलि देवे ।

अथास्य चतुर्थे दिवसे मासे वर्षे बालकं गृह्णाति,
मुख मंडिता नाम माता तथा गृहीतस्य प्रथमं जायते ज्वरः ॥

गात्र भंगं करोति स्तनं न गृहान्ति मुष्टि बंधं करोति अतिसारयति,
अक्षिरोगो भवति हस्त पादौ संकोचयति दुर्बलो भवति ॥
एवमादि चिन्हानि भवन्ति।।

अथास्य बलिः

नद्युभय कूल मृतिकया पुत्तलिकां करोतु,
नील वस्त्र परिधानं अग्रभक्तं गुडदधि संमिश्रं ॥
स्वस्तिक त्रयोदशां सत्: खाद्यं तिल चूर्ण दीप द्वयं ध्वज
चतुष्कं, गंध पुष्प धूपादि अनेन विधानेन सुभाजने निधाय॥
वायव्यां दिशिं समाश्रित्य अपरान्हे पंच रात्रं बलिं हरेत्॥
ॐ नमो रावणाय मुख मंडिते एहि-एहि बलिं गृह्ण-गृह्ण बालकं मुंच-मुंच स्वाहा ॥

चौथे दिन, मास और वर्ष में मुख मंडिता नाम की माता बालक को पकड़ती है। उसके पकड़ने पर पहले ज्वर होता है, अंग टूटने लगता है, दूध नहीं पीता है, मुट्ठी बांधे रहता है, दस्त होते हैं, आँख का रोग होता है, हाथ पैरों को सिकोड़ता है, दुर्बल हो जाता है। उस समय इसी प्रकार के अन्य चिन्ह भी होते हैं। नदी के दोनों किनारों की मिट्टी से एक पुतली बनाकर उसे नीले कपड़े पहना दे,

बहुत भोजन दही गुड़ को मिलाकर तेरह स्वस्तिक बनाकर श्रेष्ठ भोजन तिल का चूर्ण, दो दीपक, चार ध्वजायें, गंध,पुष्प, धूपादि सहित इस विधान से उत्तम बर्तन में रखकर उत्तर और पश्चिम के कोने में दोपहर ढलने पर पांच रात तक बलि देवे।

अथास्य पंचमे दिवसे मासे वर्षे बालकं गृह्णाति,
गिरालिका नाम माता तया गृहीतस्य प्रथमं जायते ज्वरः॥
अक्षिरोगो भवति गलः शुष्यति गात्र संकोचयति स्तन्यंन गृन्हाति,
दुर्बलो भवति छर्दयति अतिसारयति एवमादि चिन्हानि भवंति॥

अथास्य बलिः

नद्युभय कूल मृतिकाया पुत्तलिकां करोतु,
कौशेय वस्त्र परिधानं अग्रभक्तं गुड संमिश्रं॥

चक्र सप्तकं पोलिकां सप्तकं खाद्य त्रयं दीप
त्रयं तेल पुरिका सप्तकंध्वज चतुष्कं गंध पुष्प ॥

धूपादि अनेन विधानेन सुभाजने निधाय
पश्चिम दिशं समाश्रित्य अपरान्हे पंच रात्रं बलिं हरेत् ॥
ॐ नमो रावणाय गिरालिके एहि-एहि बलिं गृह्ण-गृह्ण बालकं मुंच-मुंच बालकं स्वाहा॥

पांचये दिन, मास और वर्ष में बालक को गिरालिका नाम की माता पकड़ती है। उसके पकड़ने पर पहले ज्वर आता है, आँख का रोग होता है, गला सूख जाता है, बालक अंगो को सिकोड़ता है, दूध नहीं पीता है, दुबला हो जाता है, वमन करता है, दस्त होते हैं। उस समय इसी प्रकार के अन्य चिन्ह भी होते हैं।

नदी के किनारों की मिट्टी से एक पुतली बनाकर उसको रेशमी वस्त्र पहनावे, बहुत भोजन गुड़ मिलाकर, सात चक्र, सात कपोलिका, तीन तरह के भोजन, तीन दीपक, सात तेल की पूरियाँ, चार ध्वजायें, गंध पुष्प और धूप आदि को इस विधान से मंत्र पूर्वक उत्तम बर्तन में रखकर पश्चिम दिशा में दोपहर ढलने पर पाँच रात तक बलि देवे।

अथास्य षष्टे दिवसे मासे वर्षे बालकं गृन्हाति,
शकुनि नाम माता तथा गृहीतस्य प्रथमं जायते ज्वरः ॥

अक्षिरोगो भवति अतिसारयति छर्दयति हस्त पादौ संकोचयति,
श्वास खासं करोति उर्द्धवं निरीक्ष्यते एवमादि चिन्हानि भवन्ति ॥

अथास्य बलिः

नद्युभयकूल मृतिकाया पुत्तलिकां करोतु,
कृष्ण वस्त्र परिधान पूर्वाह्ने वंधुले दनं दधि गुड़ संमिश्रं ॥

पोलिकां संपक्वं खाद्यं त्रयं दीप द्वयं ध्वज चतुर्थकं गंध पुष्प धूपादि,
अनेन विधानेन नैरूत्य दिशं समाश्रित्य अपरान्हे पंचरात्रं बलिं हरेत् ॥
ॐ नमो रायणाय शुकनिके एहि-एहि बलिं गृह-गृह मुंच-मुंच बालकं स्वाहा ॥

छठे दिन, मास और वर्ष में बालक को शकुनि नाम की माता पकड़ती है। उसके पकड़ने पर पहले ज्वर होता है, आंखों का रोग होता है, दस्त होते हैं, वमन करता है, हाथ पैरों को सिकोड़ता है, श्वास और खांसी हो आती है, ऊपर की तरफ देखता है। उस समय इसीप्रकार के और भी चिन्ह होते हैं। नदी के दोनों किनारों की मिट्टी से पुतली बनाकर उसे काले वस्त्र पहनाये। फिर दो सेर चावल, भात, दही, गुड़, मिरसात कचोरी, तीन भाँति के भोजन, दो दीपक और चार ध्वजायें लेकर गंध, पुष्प, माला धूप आदि से पूजकर इस विधान से नैऋत्य अर्थात् दक्षिण और पश्चिम कोण में दोपहर ढलने पर मंत्र सहित पांच दिन बलि देवे।

अथास्य सप्तमे दिवसे मासे वर्षे बालकं गृन्हाति,
शुष्का नाम माता तया गृहीतस्य प्रथमं जायते ज्वरः ॥

उर्द्धयति गलः शुष्यति स्तनं न गृह्णन्ति खासं करोति,
दुर्बलो भवति एवमादि चिन्हानि भवन्ति ॥

अथास्य बलिः

नद्युभय तट मृतिकाया पुत्तलिंका करोतु,
मंजिष्ट वस्त्र परिधानं अग्र भक्त दधि गुड संमिश्रं ॥

पोलिकां सप्तकं पंच खाद्यं दीप द्वय ध्वज चतुष्कं गंध पुष्पादि,
अनेन विधानेन दक्षिण दिशं समाश्रित्य अपरान्हे पंच रात्रं बलि हरेत्॥
ॐ नमो रावणाय शुष्के एहि-एहि बलिं गृन्ह-गृन्ह बालकं मुंच-मुंच बालकं स्वाहा॥

सातवें दिन, मास और वर्ष में बालक को शुष्का नाम की माता पकड़ती है। उसके पकड़ने पर पहले ज्वर होता है, वमन करता है। उसका गला सूख जाता है, दूध नहीं पीता है, खांसी हो जाती है, दुबला हो जाता है। उस समय इसी प्रकार के और भी चिन्ह होते हैं। नदी के दोनों किनारे की मिट्टी से एक मूर्ति बनाकर उसे मंजठिजे से रंग के कपडे पहनावे। फिर बहुत भोजन, दही, गुड मिलाकर सात कचोरियाँ, पांच प्रकार के भोजन, दो दीपक, चार ध्वजाओं की बलि को गंध, पुष्प आदि से पूजकर इस विधान से मंत्रपूर्वक दक्षिण दिशा में दोपहर ढलने पर पांच रात तक बलि देवे।

अथास्य अष्टमे दिवसे मासे वर्षे बालकं गन्हाति,
जृंभिका नाम माता तया गृहीतस्य प्रथमं जायते ज्वरः॥

उद्वमति गलः शुष्यति धृतिर्भवति स्तनं न गृन्हाति,
अक्षिरोगो भवति एवमादि चिन्हानि भवन्ति॥

अथास्य बलिः

नद्युभय कूल मृतिकाया पुत्तलिंका करोतु,
नील वस्त्र परिधानं अग्र भक्तं दधि गुड संमिश्रं॥

तं उदंबर सप्तकं पूरिका सप्त गंध पुष्प
धूपादि दीप द्वयं ध्वज चतुष्कं अनेन विधानेन
अग्नि कोणे अपरान्हे पंच रात्रं बलिं हरेत्॥
ॐ नमो रावणाय जृंभिको एहि-एहि बलिं गृन्ह -गृन्ह बालकं मुंच-मुंच बालकं स्वाहा॥

आठवें दिन, मासऔर वर्ष में बालक को जृंभिका नाम की माता पकड़ती है। उसके पकड़ने पर पहले बुखार होता है, वमन करता है, उसका गला सूख जाता है, धीरज उसे नहीं रहता है। दूध नहीं पीता है, आंखों का रोग हो जाता है। उस समय इसप्रकार केऔर रोगों के चिन्ह होते हैं।

नदी के दोनों किनारों की मिट्टी से बनायी हुई मूर्ति को नीले रंग के कपड़े पहनावे। बहुत भोजन दही गुड़ मिलाकर और सात गूलर के फल, सात पूरियाँ आदि बलि को गंध पुष्पादि से पूजकर धूप और दो दीपक, चार ध्वजाओं वाली बलि को इस विधि से मंत्रपूर्वक पूर्व दक्षिण के कोने में दोपहर ढलने पर पांच रात तक बलि देवे।

अथास्य नवमे दिवसे मासे वर्षे बालकं गृह्णाति,
आर्यका नाम माता तया गृहीतस्य प्रथमं जायते ज्वरः ॥

अक्षिरोगो भवति धृतिर्नास्ति गात्रं संकोचयति,
कंपते शोकं करोति छर्दयति अतिसारयति

कुक्षि शूलादि कुर्वते उर्द्धवं निरीक्षयते दुर्बलोभवति,
एवमादि चिन्हानि भवन्ति ॥

अथ तस्य बलिः

नद्युभय कूल मृतिकाया पुत्तलिकां करोतु,
नूतन वस्त्रोपाधानं सूत्रेण अग्र भक्तं ॥

दधि गुड संमिश्रं तिल चूर्ण पोलिका नव करंजका,
नव वेहवे नव सिक्का खंड नवदीप द्वयं ध्वज त्रयं गंध पुष्पादि ॥

अनेन विधानेन वट पर्ण पत्तालिकां निधाय,
तदं दक्षिण दिशं समाश्रित्य अपरान्हे पंच रात्रं बलिं हरेत्।
ॐ नमो रावणाय आर्यके एहि-एहि बलिं गृह्ण-गृह्ण बालकं मुंच-मुंच स्वाहा ॥

नवें दिन, मासऔर वर्ष में बालक को आर्यका नाम की माता पकड़ती है। उसके पकड़ने पर पहले ज्वर होता है, आँखों की बिमारी होती है, धीरज नहीं बंधता है, अंगों को सिकोड़ता है-कांपता है, शोक करता है, वमन करता है, दस्त होते हैं, कोख में दरद आदि होते हैं। वह ऊपर को देखता है, दुबला हो जाता है। उससमय इसीप्रकार के और रोगों के चिन्ह होते हैं।

नदी के दोनों किनारों की मिट्टी से एक पुतली बनाकर उसे नये कपड़े पहनावे और उसके चारों तरफ कच्चा सूत लपेट देवे। फिर बहुत सा भोजन दही गुड़ मिलावे, तिल का चूर्ण, नौ कचोरी, नौ

करंज वृक्ष के फल नौ प्रकार के हवन करने योग्य द्रव्य, नौ कांच के टुकड़े, दो दीपक, तीन ध्वजाओं वाली बली को गंध, पुष्प आदि पूजकर विधिपूर्वक मंत्र से पूर्वोक्त पुतली को बड़ के पत्तों की पत्तल पर रखकर दक्षिण दिशा में दोपहर ढलने पर पांच रात तक बलि देवें।

अथास्य दशमे दिवसे मासे वर्षे बाल गृन्हाति,
रेवती नाम माता तया गृहीतस्य प्रथम जायते ज्वरः॥

आक्रंदतो छर्द्दयति अतिसारयति श्लेष्मा जायते गलः
शोषणं भवति दुर्बलो एवमादि चिन्हानि भवन्ति॥

अथ तस्य बलिः
नद्युभय कुल मृतिकाया पुत्तिलकां करोतु,
पीतवस्त्र छादनं अग्रभक्तं दधि गुड संमिश्रं ॥

तिल चूर्ण पोलिका दसा सेव लड्डूका
दशपूरिका दश ध्वज चतुष्कं दीप द्वयं ॥

गंध पुष्प धूपादि अनेन विधानेन सुभाजने निधाय
पश्चिमां दिशि समाश्रित्य अपरान्हे पंचरात्रं बलिं हरेत् ॥
ॐ नमो रावणाय रेवती एहि-एहि बलिं गृह-गृह बालकं मुंच-मुंच स्वाहा ॥

दसवें दिन, मास और वर्ष में बालक को रेवती नाम की माता पकड़ती है। उसके पकड़ने पर बालक को पहले बुखार होता है, रोते हुये उसे उल्टी होती है, दस्त होते हैं। और खांसी होती है, गला सूख जाता है, दुबला हो जाता है। उस समय उसके अनेक रोगों के चिन्ह होते हैं।

नदी के दोनों किनारों की मिट्टी की पुतली बनाकर उसे पीले कपडे पहना देवे। फिर बहुत सा भोजन, दही और गुड को मिलाकर और तिलों का चूर्ण दस कचौरी, नमकीन, सेव, दस, लड्डू, दस पूरियाँ, चार ध्वजायें, दो दीपक की बलि को गंध पुष्पादि से पूजकर इस विधान से मंत्र पूर्वक अच्छे बर्तन में रखकर पश्चिम दिशा में दोपहर के पश्चात् पांच रात तक बलि देवे।

अथास्य एकादशे दिवसे मासे वर्षे बालकं गृन्हाति,
पिछलिका नाम माता तथा गृहीतस्य प्रथम जायते ज्वरः ।।

गात्रं संकोचयति मुखं शुष्यति छर्द्दयति शोकं करोति,
अतिसारयति स्तनं न गृन्हाति उर्द्धवं निरीक्षते दुर्बलो भवति ॥
एवमादि चिन्हानि भवन्ति ।।

अथ तस्य बलिः
नद्युभय कूल मृतिकाया पुत्तलिकां करोतु,
श्वेत वस्त्र परिधानं अग्रभक्तं दधि गुड संमिश्रं॥

रावानिका मुष्टिका त्रयोदशं सप्त स्वाद्यं दीपं द्वयं ध्वज त्रयं,
अनेन विधानानेन सुभाजने निधाय उत्तर दिशं समश्रित्य
अपराह्णे पंच रात्रं बलि हरेत् ॥
ॐ नमो रावणाय पिछलिके एहि-एहि बलिं बालकं गृह्-गृह् मुंच-मुंच स्वाहा ॥

ग्यारहवें दिन, मास और वर्ष में बालक को पिछलिका नाम की माता पकड़ती हैं। उसके पकड़ने पर बालक को पहले ज्वर हो जाता है, अंग सिकोड़ता है। उसका मुख सूख जाता, वमन करता है- रंज करता है, दस्त होते हैं, दूध नहीं पीता है, ऊपर की तरफ देखता है। कमजोर हो जाता है। उससमय उसके और भी चिन्ह होते हैं। उसकी बलि इस तरह देवे

नदी के दोनों किनारों की मिट्टी से एक मूर्ति बनाकर उसे सफेद वस्त्र पहनावे। फिर बहुत सा भोजन, दही, गुड़ को मिलाकर, तेरह मुट्ठी अजवाइन (एक मुट्ठी में ४ तोला कुल ५२ तोला), सात रंग की मिठाई का भोजन, दो दीपक,तीन ध्वज की बलि को एक बर्तन में रखकर गंध आदि से मंत्रपूर्वक पूजकर उत्तर दिशा में विधिपूर्वक दोपहर ढलने पर पांच रात तक बलि देवे।

अथास्य द्वादशे दिवसे मासे बालकं गृन्हाति,
स्कन्धा नाम माता गृहीतस्य प्रथमं जायते ज्वरः ॥

निद्रा आहारं न गृन्हाति अंगभंगं करोति जृंभते,
दुर्बलो भवति एवमादि चिन्हानि भवन्ति॥

अथ तस्य बलिः
नद्युभय कूल मृतिकया पुत्तलितां करोतु,
मेघवर्णं वस्त्र परिधानं अग्रभक्तं दधि गुड संमिश्रं ॥

पायसं लड्डू काष्टादश दीप द्वयं ध्वज चतुष्कं,
गंद पुष्प धूपादि सहितं वट पत्र पत्तालिकायां निधाय ॥
अनेन विधानेन अग्नि दिशं समाश्रित्य अपराह्ने गंध राजं बलि हरेत् ॥
ॐ नमो रावणाय स्कंधे एहि-एहि बलिं गृह्ण-गृह्ण बालकं मुंच-मुंच स्वाहा ॥
इति बलि विसर्जन मंत्र:

बारहवें दिन, मास और वर्ष में बालक को स्कंधा नाम की माता पकड़ती है। उसके पकड़ने पर पहले बुखार आता है, नींद नहीं आती है, भोजन नहीं करता है, शरीर टूटने लगता है, जंभाह लेता है। कमजोर हो जाता है इत्यादि अनेक चिन्ह उस समय होते हैं।

नदी के दोनों किनारों की मिट्टी ली एक पुतली बनाकर उसे बादलों के रंग के कपड़े पहनावे। फिर बहुत सा भोजन दही, और गुड़ को मिलाकर और खीर, अठारह लड्डू, दो दीपक, चार ध्वजाओं की बलि को गंध पुष्प धूप सहित वट पत्र की पत्तल पर रखकर इस विधि से मंत्रपूर्वक अग्नि कोण अर्थात् पूर्व दक्षिण दिशा के कोने में दोपहर ढलने पर पांच रात तक बलि देवे।

धूपनं विजया धूपेन स्नानं शांत्युदकेन च सर्वत्र कार्यंद्वीमान
आम्र जंबूदंबर पिपलं दुर्वा एतै पंच पल्लवैरभिषेकं शिशोरति
शांत्युदकेन स्नानं सिद्धार्थ केश मयुर पिच्छ सर्प त्वचो
गोपुच्छ केशं ईश्वर निर्माल्यं हरिद्रा विजयं धूपनं

इति रावणोक्त बाल चिकित्सा समाप्त :

पंडित पुरुष सभी प्रयोगों में विजय धूप से धूप देवे और शांति जल से स्नान करावे। आम, जामुन, गूलर, पीपल और दूब इन पांचों वृक्षों के पत्तों को जल में पकाकर जो जल छानकर तैयार किया जाता है उसे शांत्युदक कहते हैं। सफेद सरसों, बाल, मोर की पूँछ का चंदवा, सर्प काचली, गाय की पूंछ के बाल शिवजी के चढावे का द्रव्य और हल्दी की धूप को विजय धूप कहते हैं।

इति रावण की कही हुई बाल चिकित्सा समाप्त हुई
इति सप्तम समुद्देश समाप्त

अथ अष्टम समुदेश

॥ श्री पार्श्वनाथाय नमः ॥

अथ ग्रहाणां लक्षाणि मंत्र मंडलमौषधं
शाकिन्य पस्मारोन्माद प्रतिकारं च वक्ष्याम्यहं ॥ १ ॥

अब ग्रहों के भेद, लक्षण, मंत्र,मंडल, औषधि, शाकिनी, अपस्मार और उन्माद को दूर करने का उपाय कहूंगा।

अति हृष्टमति विषाणं भवांतर स्नेह बैर संबधं,
भीतं चान्य मनस्कं ग्रहाः प्रगृन्हति भुवि मनुजं ॥ २ ॥

रति कामाबलि कामानिहतुं कामा ग्रहाः प्रगृन्हंति
वैरेण हंतु कामा गृन्हन्त्यवशेष कारणे शेषाः ॥ ३ ॥

अत्यन्त प्रसन्न मन वाले दुखी मनवाले अथवा अन्य प्रतापी या डरपोक संसारी पुरुष को पूर्वजन्म के प्रेम अथाव बैर के संबंध से ग्रह पकड़ लेते हैं।

तेपि ग्रहा द्विधास्यु र्द्विव्या दिव्य ग्रहप्रभाः देन,
दिव्याश्चापि द्वेधा पुरुष स्त्री ग्रह विभेदेन ॥ ४ ॥

वे ग्रह भी दो प्रकार के होते हैं- और दिव्य अदिव्य। उनमें से दिव्य ग्रहों के भी दो भेद होते हैं-पुरुष ग्रह और स्त्री ग्रह ।

देवो नागो यक्षो गंधर्वो ब्रह्मा राक्षसश्चैव,
भूतोव्यंतरं नामेति सप्त पुरुष ग्रहाः प्रोक्ताः ॥ ५ ॥

देवः सर्वत्र शुचिनागः शेते भनक्ति सर्वागंक्षीरं,
पियति च नित्यं यक्षो रोदिति हसति बहुधा ॥ ६ ॥

देव,नाग,यक्ष,गंधर्व,ब्रह्मा राक्षस,भूत,व्यंतर यह सात पुरुष ग्रह होते हैं। देव सदा पवित्र रहता है, नाग सोता है, सब अंगों को तोड़ डालता है और नित्य दूध पीता है, यक्ष रोता है और बहुत प्रकार से हंसता है।

गंधर्वो गायति सुस्वरेण स ब्रह्मा राक्षसः संध्यायां,
जपति चे वेदान् पठति स्त्रीष्वनुरक्तः स गर्वश्च ॥ ७ ॥

गंधर्व अच्छे स्वर से गाता है, ब्रह्मा राक्षस संध्या के समय जाप करता है और वेदों को पढता है तथा स्त्रियों में अनुरक्त रहता है और बड़ा घमण्डी होता है।

रोदिति हाहा कारै विर्दधात्यति रौद्रमैव कर्म सदा,
तनुते स्फुटाह बासं हसति पुनः कहकह ध्वनि ना ॥ ८ ॥

कोसा वास्ते मंत्रीयो मोचयति स्व मंत्र शक्त्यामां,
तक्कति सा तले यं स विकार विजृंभनं कुरुते ॥ ९ ॥

अब यह कभी तो हाहा करके रोता है, कभी रौद्र कर्म भी करता है। सदा शरीर से अट्टाहास करके हंसती है। फिर कहकह की ध्वनि करती है। कभीकभी वह कष्ट से कहता है कि ऐसा कौन मंत्र शास्त्री है जो मुझे अपने मंत्र की शक्ति से बलि देकर छुड़ावे फिर विकार से जंभाई लेता है।

नेत्रे विस्फारयति च गाति जृंभति घुनोभि हसति च भूतः,
मूर्छति रोदति धावति बहु भोजी व्यंतर स्तथा भुवि पतति ॥ १० ॥

भूत नेत्र फाड़-फाड़ कर देखता है और गाता है, जंभाई लेता है, ध्वनि के साथ हंसता है तथा व्यंतर मूर्छित होता है, रोता है, दौड़ता है, बहुत भोजन करता है और जमीन पर गिर पडता है।

दिव्य पुरूष ग्रहाणां लक्षण मेवं मया समुदिष्टं,
दिव्य स्त्री ग्रह लक्षणम घुना व्यावर्णयते श्रणुत ॥ ११ ॥

इसप्रकार दिव्य पुरुष ग्रहों के लक्षण कहे गये हैं । अब दिव्य स्त्री ग्रहों के लक्षण कहे जाते हैं वह सुनो ।

काली तथा कराली कंकाली काल राक्षसी जंघी,
प्रेताशिनी च यक्षी वैताली क्षेत्रवासिनी ति नव ॥ १२ ॥

काली, कराली, कंकाली, काल राक्षसी-जंघी, प्रेताशिनी. यक्षी, वैताली और क्षेत्रवासिनी यह नौ स्त्री ग्रह है।

कृच्छ भवेत् शरीरं करतल हृदयं क्षणानि दह्यन्ते,
काल्या प्रपीडितस्य तु करालिकार्तोन मुंक्तेऽन्नं ॥ १३ ॥

काली ग्रह से पकड़े हुए प्राणी का शरीर दुखी अर्थात् दुबला हो जाता है, हृदय और नेत्रों में जलन हो जाती है-कराली ग्रह से पीड़ित प्राणी अन्न नहीं खाता है।

मुखमा पांडुरमगं कृशं च कंकालिका गृहीतस्य भ्रमति,
निशि वदति कौलिक मयादव हासं करोति काल राक्ष स्यार्तः ॥ १४ ॥

कंकाली से पकडे हुए का मुख तथा अंग पीला पड़ जाता है। कंकाली ग्रह से पकडा हुआ रात्रि में घूमता है और काल राक्षसी दुखी प्राणी ऊंची ऊंची बातें करता है और अट्टाहास करके हंसता है।

जंघी गृहीत मनुजो मूर्च्छति रोदति कृशं शरीरं स्यात्,
प्रेताशिनी गृहीताश्चकितौ वा भीकर ध्वनि ना ॥ १५ ॥

जंघी से ग्रहण किया हुआ प्राणी मूर्छित होता है, रोता है और उसका शरीर दुबला हो जाता है- प्रेताशिनी से ग्रहण किया हुआ भयंकर ध्वनि से शब्द करता हुआ चकित हो जाता है।

उत्तिष्ठति दष्टोष्टः स एव वीर ग्रहो बुधैःप्रोक्तः मास,
द्वितयात्परतः तस्य चिकित्सा न लोकेस्ति ॥ १६ ।

ऐसा व्यक्ति होंठ चबा-चबा कर उठता है- पंडितों ने इसको वीर ग्रह कहा है। इसकी चिकित्सा दो महिने पीछे संसार में नहीं हो सकती है।

भोक्तुं न ददाति न च प्रियांगणा संगमं तथा
कर्तुं स्वयमेवं प्रच्छन्नां जीवति सहतेन वट यक्षी ॥ १७ ॥

वट यक्षी से पीड़ित पुरुष न तो खाता है और न अपनी प्रिय स्त्री से संगम ही करता है- यक्षी गुप्त रूप से उसके साथ रहती है।

शुष्यति मुखं कृशं स्यात् गात्रं वैतालिका गृहीतस्य,
संक्षेत्र वासिनी पीडितो नरी नत्तिं जागर्त्ति ॥ १८ ॥

वैतालिका से पकड़े हुए का मुख सूख जाता है और उसका शरीर कृश हो जाता है। क्षेत्रवासिनी ग्रह से पीड़ित प्राणी नाचता है और जागता रहता है।

विद्युन्निभमावेशं गृन्हाति च वदति कौलिकी
भाषां धावति वेगेनेति च स्त्री ग्रहस्य लक्षणं प्रोक्तं ॥ १९ ॥

ऐसा व्यक्ति बिजली के समान आवेश को ग्रहण करता है, ऊंची ऊंची बातें करता है और वेग से दौड़ता है। यह दिव्य स्त्री ग्रह के लक्षण कहे गये हैं।

पाप कल्मष नामानौ विद्येते जगति ग्रहौ,
मांषाभिलाषिणे नित्यं कुत्सितांबरधारिणौ ॥ २० ॥

संसार में दो ग्रह पाप और कल्मष नाम वाले हैं - यह सदा ही मांस की इच्छा किया करते हैं और बहुत ही बुरे वस्त्र पहने रहते हैं।

मिथ्या ग्रहा स्तथान्योपिविद्यंते तानपिह विद्वांसः,
सत्य ग्रहान् प्रकुर्वन्ति शेमुषी विभव बलेन ॥ २१ ॥

विद्वान लोग मिथ्या ग्रहों को (अदिव्य ग्रहों को) तथा कोई अन्य ग्रह हो उनको भी सत्य ग्रहों में (अदिव्य ग्रहों को) तथा अपने बुद्धि के बल से बदल देते हैं।

अ क ख ग घ ङ च ट त प ह श र ष ल स
क्ष ब्हर श्चान्योन्यं परिवर्तितै ञ ण नामानि
दृष्टं देव भूत कौलिक मेतत् ॥ २२ ॥

इन ग्रहों का निवारण अ क ख ग ध ङ. ट त प य श र ल स क्ष व ब ह र ल से एक दूसरे को ञ ण न से युक्त करके भूत और देवों का कीलन होता है।

आकारं सं प्रयोगेन भाषा स्याद्देव कीलिका,
रकारेण समं विद्याना भाषां भूत कीलिकां ॥ २३ ॥

आकार के प्रयोग वाली भाषा को देव कीलिका और रकार के साथ प्रयोग की जाने वाली भाषा को पूरूष भूत कीलिका जाने।

पुरुष ग्रहोऽथ पुरुषं स्त्रियं तथा स्त्री ग्रहो न गृन्हाति,
गृन्हाति स्त्री ग्रहोपि पुरुषं गृहणाति स्त्री ग्रहं पुरुषं ॥ २४ ॥

साधारणतः पुरुष ग्रह पुरुष को और स्त्री ग्रह स्त्री को ग्रहण नहीं करते किन्तु पुरुष ग्रह स्त्री को और स्त्री ग्रह पुरुष को ग्रहण करते हैं।

रतिकाम ग्रह नियमः प्रोक्तोऽन्ने तर त्र नियमोस्ति,
पुरुष ग्रहोपि पुरुषं गृन्हाति गृन्हाति स्त्री गृहोपि वनितां ॥ २४ ॥

यह नियम ग्रहों के रति कामना से पकड़ने के हैं, अन्यत्र नही है क्योंकि अन्य इच्छाओं में पुरुष ग्रह पुरुष को और स्त्री ग्रह स्त्री को ग्रहण करते हैं।

दष्ट्रां श्रृंखल नामा धणुर्ग्रहः शाखिलश्च शशो नागः
ग्रीवा भंगो चलितोषड पस्मार ग्रहाः प्रोक्ताः ॥ २५ ॥

दष्ट्रां श्रृंखल धणु शाखिल शशनाग और ग्रीवाभंग उच्चलित यह छः अपस्मार ग्रह या अदिव्य ग्रह कह जाते हैं।

ध्वस्त पाद कर ग्रीवः फेनं मुंचति मुह्यति अपस्मारी
पुनः स्वस्थ पतित्वोत्तिष्टति ध्रुवं इति ग्रह लक्षणं ॥ २६ ॥

ऐते ग्रहा अदिव्या मुंचंति न जीवितं बिना पुण्यात्,
साध्या स्तंत्रेणेषां मंत्रं ध्याने पुनर्नस्तः ॥ २७ ॥

अपस्मार से पीडित अपने पैरों, हाथ और गर्दन को नचाता है और फेन डालता है, मूर्छित हो जाता है और फिर अच्छा होकर बार-बार गिरता है और उठता है । यह ग्रह के लक्षण हैं; यह अदिव्य ग्रह बिना विशेष पुण्य के जीता नहीं छोड़ते हैं, मंत्रशास्त्र से इसका निवारण सीखकर कष्ट दूर करना चाहिये।

ॐ नम श्चंडासि धाराय चंड मंडले कुले भूतलेन से तिष्ठ तिष्ठ हुं फट ठः ठः ॥

मंत्र स्यौ तस्य जपं कुर्वाणो मंत्र वित् शिखिना वंद्यं,
कुर्यादाविष्टस्य ग्रहः स तस्मिन स्थिरो भवति ॥ २८ ॥

मंत्री इस मंत्र का जप करता हुआ ग्रह से पकडे हुए की चोटी बांध दे तो वह ग्रह उस प्राणी में स्थिर हो जाता है ।

मलवर्यूकार चतुर्दश कलान्वितं कूट बीजमा लिखेत्,
शिखि वायुमंडल स्थं स नाम स्वर ताल पत्र गतां ॥ २९ ॥

मार्तंड स्नुहि दुग्ध त्रि कटुक हय गंध सर्षपैः
धूमैः आलिख्य ललाटस्थं ग्रहिणां कुरुते ग्रहावेशं ॥ ३० ॥

भोजपत्र या ताडपत्र पर ग्रह से पीड़ित प्राणी का नाम लिखे। उसको क्ष म ल व र य को चौदहवीं कला अर्थात् औ सहित लिखे (म ल व र य इन पांचों अक्षरों को मिलाकर कूट बीजक्षकार सहित और चौदहवी कला चौदहवें स्वर और सहित लिखे, यह बीज छम्ल्वर्यूं बीज के नाम के बाहर लिखे इसके बाहर अग्नि मंडल लिखे। उसके बाहर वायुमण्डल लिखे। यह यंत्र आक, थोहर का दूध (सौंठ, मिरच, पीपल) त्रिकटुक और असगंध और सरसौं और घर का घूमसा को मिलाकर लिखे। इस यंत्र को लिखकर ग्रह से पीड़ित प्राणी केमस्तक पर या ललाट पर रखने से उसके ग्रह का आह्वान होता हैं।

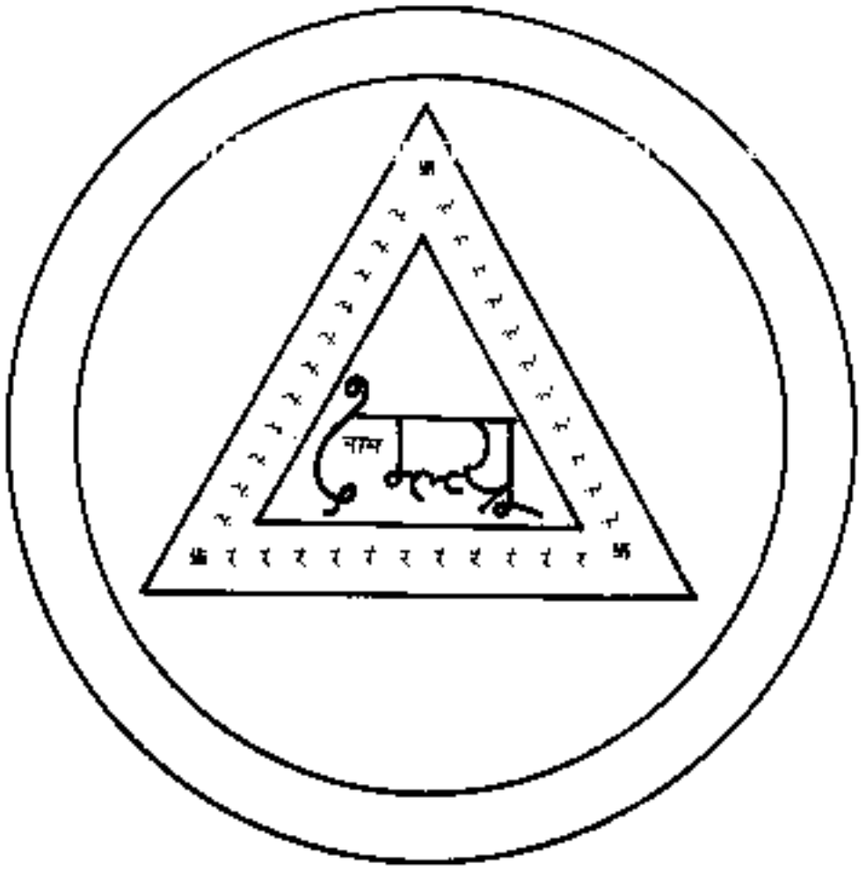

ॐ नम श्चामुंडे ह्सांगे वर्मणे दमनो हुं हन हन हुं फट ठः ठः ॥

चामुंडा मंत्रोयं सहस्र रूप प्रजाप संसिद्धः,
आवेशने प्रधानं भूतादिनां विदुर्गुरवः ॥

यह चामुंडा देवी का मंत्र एक हजार जपने से सिद्ध होता है। इस मंत्र को पंडितो ने भूत आदि के आवेश करने का प्रधान मंत्र कहा है।

ॐ नमश्चंडालि चामुंडे चंडा भाषाश चालि-चलि गच्छ-गच्छ धूप फलेन शेषु नमो महाकालाय ठः ठः ॥

अभिमंत्रितः प्रलिप्तो मंत्रेणा नेन सपदि तिलक कल्कः,
स च जनयति ग्रहाणां सर्वेषामपि हन् प्रसनां ॥ ३२ ॥

उपरोक्त मंत्र से तिलक पुष्प के कल्क को अभिमंत्रित करके लेप करने से सभी ग्रहों को महान कष्ट होता है।

आदौवरः स बिन्दु : द्वा वपि पूर्वोक्त मान्म स्वे शब्दौ,
पश्चात् द्वय मडन्तेतस्त्रि सहश्र जपेन सं सिद्ध ॥ ३३ ॥

आदि में बिन्दु सहित ॐ कार और इसके पश्चात् मान (अमल) और मस्व (विमल) शब्द तथा अन्त में दो ठःठः लिखकर तीन हजार जाप करके सिद्ध करे।

ॐ अमले विमले ठः ठः

अयं मा विष्टःश्रवणे प्रजाप माणो भवन ग्रहान,
मंत्रः निः शेषान् निर्मूलं विनि गृहान्तिक्षणे नैव ॥ ३४ ॥

इस मंत्र का जाप करने अथवा कान में पढने से सब ग्रह एक क्षण में ही नष्ट हो जाते हैं।

मंत्रयमो विदारी कुरू-कुरू हुं फट श्रुती विहित जापः,
विरचय श्रूल मुद्रामा विष्टस्य ग्रहं हरति ॥ ३५ ॥

ॐ विदारी कुरु-कुरु हुं फट आदि शास्त्रीय मंत्र का शूल मुद्रा बनाकर जपने से आवेश हुए ग्रह नष्ट हो जाता है।

ॐ खडगै रावणाय विद्मये चंडेश्वर भाशश धीमहे तन्नो देवः प्रचोदयात् ॥

सलिलस्य खडग रावण मंत्रोऽतर्लक्ष जाप सिद्धोयं,
आविष्टानां जप्तः सर्व ग्रह मोक्षणं कुरूते ॥ ३६ ॥

यह जल का खडगै रावण मंत्र है इसकी सिद्धि एक लाख जप करने से होती है। इस मंत्र को जपने से सभी आवेश हुए ग्रह छूट जाते हैं।

ॐ नमः चडासि भाषाशं नम श्चंडालंकृत जटाय ग्रहान-ग्रहान मोहय मोहय आवेशय - आवेशय संक्रामय-संक्रामय लघु रूद्रा ज्ञापयति हुं फट ठः ठः ॥

अविष्टस्यो परितन्मंत्रः सिद्धार्थ ताऽनेनाश्रु
संकामयेदग्रहमभिमंत्र मन्त्रं मंत्रीनरः तस्मात् ॥ ३७ ॥

मंत्री इस मंत्र से अभिमंत्रित सफेद सरसों के दानों को यदि उत्तेजित ग्रह से पीड़ित प्राणी को मारे तो ग्रह तुरन्तही भाग जाते हैं।

षट्कोण भवन मध्येशून्य पिंडं समंत्र,
कंलिखित्वा कोष्ट मध्ये तु रं लं बूजं तदन्तरे ॥ ३८ ॥

कोंकारं विलिखेचाग्रे वायु नाच त्रिः प्रवेष्टयेत्,
पृथ्वीमंडल मप्यार्यो दद्यात्तत् पुरतः सुधीः ॥ ३९ ॥

तस्याग्रे स्थापयेन्मंत्री गृहितं ताडयेत् पुनः,
माला मंत्रेण संयति ग्रह शक्योपि शीघ्रतः ॥ ४० ॥

मूलमंत्रं प्रसाध्यैतं सहश्रै र्भानु संख्यकैः
सिद्धिमेति संतुष्ट स्सन् सर्वावश्य प्रदोभवेत् ॥ ४१ ॥

मूल मंत्रोद्धारः

ॐ णमो माणि भद्राय रोम हर्षाणाय एहि-एहि शीघ्रं-शीघ्रं आवेशय आवेशय रां आं क्रों ह्रीं गगन गमनाय स्वाहा॥

मूल मंत्रोयं

एक छ कोणे वाले भवन के अंदर मंत्र सहित ह्म्ल्र्व्यूं बीज लिखकर कोष्ठ के कोणों में रं बीज और अंतराल में लं बीज लिखे। कोणों के किनारे पर क्रों लिखकर तीन बार यः बीज वाले वायुमण्डल से वेष्टित करे तथा अन्त में पृथ्वी मण्डल बनावे।

मंत्री इसके आगे ग्रह से पकडे हुए प्राणी को खड़ा करे और नीचे लिखे माला मंत्र का भी जाप करे और ग्रही को ताड़ना करे। इस मंत्र यन्त्र से ग्रह को भगाने में मंत्री शीघ्र ही समर्थ होता है। इस मूल मंत्र का बारह हजार जप कर सिद्ध करे। देवता के संतुष्ट होने पर यह मंत्र सब आवश्यक वस्तुओं को देता है।

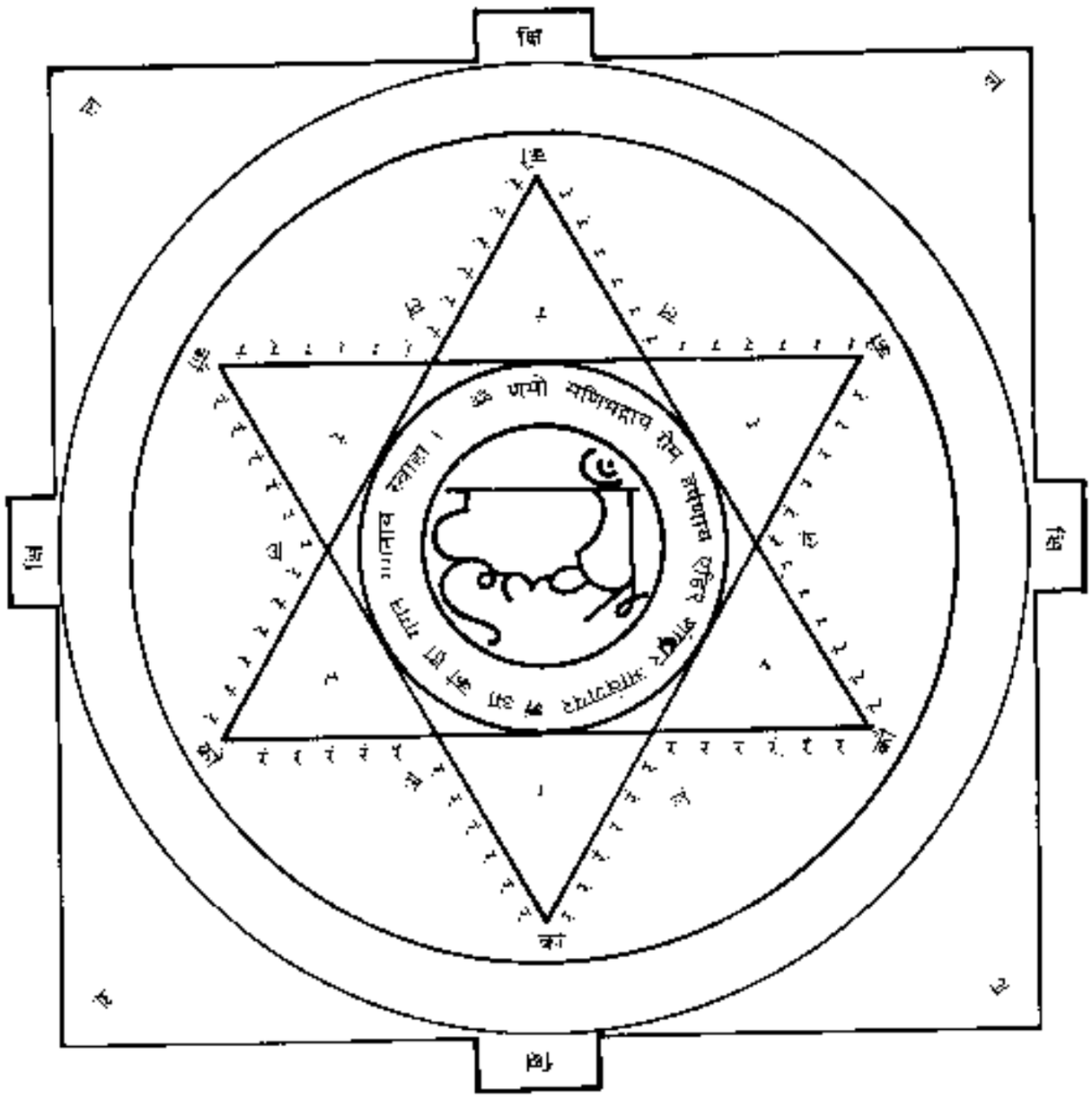

अथ: माला मंत्र

ॐ नमो माणि भद्राय जिन शासन वत्सलाय भव्य जन हितंकराय दुष्ट जन प्रमर्द्दनाय हिलि -हिं लि किलि-कि लि चालय-चालय जल गंधाक्षत पुष्पै नैवेद्य दीप धूप फलं गृन्ह-गृन्ह मुंच-मुंच भयंकर रूपेण धुन-धुन आं क्रों ह्रीं अजपाल देव पराज्ञया नाग पाशेन बंधय-बंधय ह्म्ल्व्यूं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्र: सर्व ग्रहाना कर्षय-कर्षय स्तोभय-स्तोभय मारय्-मारय् हूं फट स्वाहा ॥

अन्यत्प्रकारेणापि

ॐनमो भगवते ह्म्ल्व्यूं हां हीं हूं हौं हः माणिभद्र देवाय भैरवाय कृष्णवर्णाय रक्तोष्ठाय उग्र दंष्ट्राय त्रिनेत्राय चतुर्भुजाय पाशां कुश फल वरद हस्ताय नाग कर्ण कुंडलाय शिखां यज्ञोपवीत मंडिताय ॐ ह्रीं-ह्रीं झ्रां-झ्रां कुरू-कुरू ह्रीं आवेशय आवेशय ह्रौं स्तोभय स्तोभय हर-हर शीघ्रं-शीघ्रं आगच्छ-आगच्छ खुलु-खुलु अवतर-अवतर क्ष्म्ल्व्यूं ह्म्ल्व्यूं भ्म्ल्व्यूं चन्द्रनाथ ज्वालामालिनी चंडोग्र पार्श्व तीर्थंकर धरणेंद्र पद्मावती आज्ञा देव नाग यक्ष गंधर्व ब्रह्म राक्षस रण भूतादीन रतिकाम बलि काम हंतुकाम ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र भवांतर स्नेह बैर संबंध सर्वग्रहाना-वैशय नाग ग्रहाना वैशय-वैशय गंधर्व ग्रहानाकर्षय-आकर्षय व्यंतर ग्रहानाकर्षय-आकर्षय ब्रह्म राक्षस ग्रहानाकर्षय-आकर्षय सहस्त्र कोटि ग्रहाना कर्षय-आकर्षय पिशाच ग्रहानाकर्षय-आक र्षय सहस्त्र कोटि पिशाच राजानाकर्षय-आकर्षय किन्नर किम पुरूष गरूड़, गंधर्व, यक्ष, राक्षस, भूत, पिशाच आकर्षय-आकर्षय अवतर अवतर शीघ्रं-शीघ्रं धुण-धुण कंपय-कंपय कंपावय-कंपावय लीलय-लीलय-लालय लालय लोलय-लोलय नेत्रं चालय-चालय गांत्र चालय चालय बाहुं चालय चालय आं क्रों ह्रीं गगन गमनाय स्वाहा ॥

यह ग्रहों को आकर्षित करने का मन्त्र है।

ग्रहों को जगाने का मंत्र

१. ॐ नमो भगवते ब्रह्मोंद्राय एहि-एहि अवतर-अवतर शीघ्रं-शीघ्रं आवेशय-आवेशय आकर्षय-आकर्षय कंपय-कंपय कंपावय कंपावय आकंपय-आकंपय ह्म्ल्व्यूं ह्रां-ह्रीं हूं हौं हः अमुक आकर्षय आकंषय कुरू-कुरू संवोषट्।

२. ॐ नमो माणिभद्राय दिव्य रूपाय महर्षय-महर्षय एहि-एहि शीघ्रं-शीघ्रं आवेशय-आवेशय र र र र र र रां रों आं क्रों ह्रीं गगन मंडलाय स्वाहा ॥

३. ॐ नमो भगवते पार्श्वनाथाय धरणेन्द्र पद्मावती सहिताय उपसर्गाधीराय ह्राँ ह्रीं ह्रौं हः हूँ स्वस्थावेशाय नमः स्वाहा ॥

४. ॐ जलदेवता स्थल देवता पाताल देवता आकाश देवता वन देवता चतुषष्टि योगिनी क्षेत्रपालिनी शीघ्रं-शीघ्रं आवेशय आवेशय अवतर-अवतर गृन्ह-गृन्ह ह्म्ल्व्यूं ह्राँ ह्रीं हूं हौं हः स्वस्थावेशं कुरूकुरू आकर्षय-आकर्षय हूँ फट घे घे॥

५. ॐ अंबे अंबाले अंबिके उर्ज्जयंत गिरि निवासिनि सर्व विघ्न विनाशिनि सर्वकामार्थ साधिनी यक्षी-यक्षी महायक्षी महायक्षी ह्म्ल्व्यूं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः दिव्य ग्रहान् आकर्षय आकर्षय आवेशय आवेशय हूँ फट घे घे ।।

(ग्रहों को बांधने का ब्रह्म ग्रंथि मन्त्र)

ॐ नमो भगवते श्री चंडोग्र पार्श्वतीर्थंकराय धरणेंद्र पद्मावती सहिताय रुद्र बंधं काल बंधं योग बंधं ग्लौक्ष्मं ठं स्वाहा ॥
ॐ नमो भगवते चंडोग्र पार्शनाथाय धरणेंद्र पद्मावती सहिताय सर्व दिग्बंधनं कुरू-कुरु द्रावय-द्रावय यक्ष राक्षस भूतप्रेत पिशाचन छिंद-छिंद भिंद-भिंद हन-हन दह-दह बंध-बंध क्रों क्रां क्लीं स्वाहा ॥

यह दिशाओं को बांधकर ग्रहों से रक्षा करने का मन्त्र है।

ॐ हिलि-हिलि मिलि-मिलि कुमुलंद पार्श्व यक्षाय ह्म्ल्व्यूं क्षां क्षीं क्षूं क्षौं क्षः शिखा बंध-बंध उँ रक्ष-रक्ष स्वाहा॥

यह शिखा बंधन मन्त्र है।

ॐ ह्रीं ह्रीं ह्रीं ऊँवज्र शूलिनि वज्रशूल धारिणि ज्वालिनी दुष्ट ग्रह नयनं छेदय-छेदय भेदय भेदय स्वाहा॥

। अयं नयन नाराच मंत्रः ।

ॐ ह्म्ल्व्यूं ॐ ह्रीं वज्र मालिनी वज्रशूल धारिणि ज्वाला मालिनी दुष्ट ग्रह हृदयं नाशय-नाशय छिंद-छिंद भिंद-भिंद घे घे हूं फट स्वाहा॥
अयं हृदय नाराच मंत्रः।

यह हृदय छेदने का मन्त्र है।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा धरणेंद्र पद्मावती आज्ञा पाशेन सर्व ग्रहाणां दिग्बंधनं कुरू-कुरु स्वाहा॥

दिग्बंधन मंत्र

यह दिशाओं की रक्षा करने का मंत्र है।

ॐ नमो भगवते चन्द्रप्रभ जिनेन्द्राय शंशाक शंख गोक्षीर हार निहार धवल गात्राय धाति कर्म निर्मूलो छेदन कराय जाति जरा मरण विनाशनाय संसार क्रांतो रोन्मूलन कराय अचिंत्य बल पराक्रमाय अप्रतिहत शासनाय त्रैलोक्य वंश कराय सर्व सत्वहितंकराय भव्य लोकवंश कराय सुरासुर उरगेन्द्र मणि मुकुट कोटि घृष्टित पाद पीठाय त्रैलोक्य नाथाय देवादि देवाय अष्टादश दोष रहिताय, धर्मचक्राधीश्वराय, सर्व विद्या परमेश्वराय त्वत्पाद, पंकाजाश्रय निवेशिनी देवी शाशनदेवते, त्रिभुवन संक्षोभणि, त्रैलोक्य संहार कारिणि स्थावर जंगम कृत्रिम विषम् विष संहार कारिणी, सर्वाभिचार कर्मा पहारिणी, पर विद्या छेदिनी, पर मंत्र प्रनाशिनी, अष्टमहानाग कुलोच्चाटनि, काल दष्टमृतकोच्चाटिनि सर्वरोगापनोदिनि, ब्रह्मा विष्णु रूद्र चंद्रादित्य ग्रह नक्षत्र तारकोत्पात् मरण भय पीड़ा प्रमार्दनि, त्रिलोक्य महिते भव्य लोक हितंकरे विश्व लोक वशं करि महा भैरवि भैरव रूप धारिणि, भीमे भीम रूप धारिणि सिद्धे प्रसिद्धे विद्याधर यक्ष राक्षस गरूड़ गंधर्व किन्नर किं पुरूष देत्योरगें द्रामर पूजिते ज्वाला माला करालित दिगंतराले महा महिषवाहने, त्रिशूलचक्र कष पाष शरासन फल वर प्रदान विराजमान षोडशार्द्ध भुजे खेटक कृपाण हस्ते देवी ज्वाला मालिनी एहि-एहि संसार प्रमर्दनि, एहि-एहि महा महिष वाहने, एहि-एहि कटक कटिसूत्र कुंडला भरण भूषिते, एहि-एहि धन स्तनि, किंकिनी नुपुर नादे एहि एहि महा महिष मेखला कटि सूत्रे, एहि-एहि गरूड़ गंधर्व देवासुर समिति पूजित पाद पंकजे, एहि-एहि भव्य जन संरक्षिणी, एहि-एहि महादुष्ट प्रमार्द्रिनी, एहि-एहि मम ग्रहा कर्षिणि, एहि-एहि महानुबंधिनि एहि-एहि ग्रहानुछेदिनि, एहि-एहि ग्रह काल मुखि एहि-एहि ग्रहों चाटिनी एहि-एहि ग्रह मारिणि, एहि-एहि मोहिनी स्तंभिनी समुद्रधारिणि, एहि-एहि धुन-धुन कंप-कंप कंपावय मंडल मध्ये प्रवेशय प्रवेशय स्तंभय-स्तंभय हां हीं हूं हौं हः आह्यानन जलं गृन्ह-गृन्ह, गंधं गृन्ह-गृन्ह, अक्षतं गृन्ह-गृन्ह, पुष्पं गृन्ह-गृन्ह, चरु गृन्ह गृन्ह, दीपं गृन्ह-गृन्ह, धूपं गृन्ह-गृन्ह, फलं गृन्ह-गृन्ह, महा अर्घं गृन्ह-गृन्ह, आवेशं गृन्ह-गृन्ह महादेवी ज्वालामालिनी पर्वत वासिनी पाताल वासिनी शुभस्थान निवासिनी नगर निवासिनी आगच्छ-आगच्छ। ब्रह्मा विष्णु रूद्रेंद्रादित्य ग्रहान् आकर्षय आकर्षय देव ग्रहान् आकर्षय-आकर्षय, नाग ग्रहान् आकर्षय-आकर्षय, यक्ष ग्रहान् आकर्षय-आकर्षय गंधर्व ग्रहान् आकर्षय-आकर्षय, ब्रह्मा राक्षस ग्रहान् आकर्षय-आकर्षय, भूत ग्रहान् आकर्षय-आकर्षय, व्यंतर ग्रहान् आकर्षय-आकर्षय, शत कोटि देव ग्रहान् आकर्षय-आकर्षय, सहस्त्र कोटि पिशाच राजान आकर्षय-आकर्षय, कंपय-कंपय मृत्यो रक्षय-रक्षय ज्वरं

भक्षय-भक्षय अनलं विषं हर कुमारीं रक्ष-रक्ष योगिनीं, भक्षय-भक्षय शाकिनीं, मर्द्दय-मर्द्दय डाकिनीं, मर्द्दय-मर्द्दय पूतिनीं, कंपय-कंपय राक्षसीं छिंद-छिंद कौलिक मुद्रां दर्शय-दर्शय, सर्व कार्यकारिणी, सर्वज्वर मर्द्दिनी, सर्व सिद्धांजन प्रति पादिनि एहि एहि भगवती ज्वालामालिनी एकाहिकं, द्वयाहकिं, त्रयाहिकं, चातुर्थिकं, वात्रिक पैतिक श्लैष्मिकं सान्नि पातिकंबेलां ज्वरादिकं पात्रे प्रवेशय-प्रवेशय, ज्वल-ज्वल ज्वालावय-ज्वालावय, मुंच-मुंच मुचावय-मुचावय, शिरं मुंच-मुंच मुखं मुंच-मुंच ललाटं, मुंच-मुंच कंठ मुंच-मुंच बाहु, मुंच-मुंच हृदयं, मुंच-मुंच उदरं, मुंच-मुंच कटिं मुंच-मुंच जानुं, मुंच-मुंच पादं, मुंच-मुंच आं छेदय-छेदय, क्रौं भेदय-भेदय ह्रीं मर्द्दय-मर्द्दय क्षीं बोधय-बोधय हूं धूर्मय-धूर्मय र र र र र रां रां संघं पातय-पातय पर मंत्रान् छेदय छेदय परमंत्रान् स्फोटय-स्फोटय ॐ ह्रां ह्रीं हूं ह्रौं ह्रः घे घे फट स्वाहा ॥

॥ इति ज्वालिन्या देव्या मंत्रः ॥

यह सब ग्रहों से बचाकर [illegible] करने वाज्वालामालिनी मंत्र है।

॥ चिंतित कार्य साधक पार्श्वनाथ स्वामी का श्रेष्ठ मंत्र ॥

ॐ नमो भगवते पार्श्वनाथाय धरणेन्द्र पद्मावती सहिताय ॐ णमो अरहंताणं ह्म्ल्व्यूं ह्रां ह्रीं हूं ह्रौं ह्रः असि आउसा मम चिंतित कार्यं सिद्धिं कुरू-कुरू स्वाहा॥

जप्तेऽयुत सहस्रेण मंत्रोयं पार्श्वनाथकः,
सिद्धिमेति प्रयंजाति माला मंत्रं तदं तिकं ॥ ४१ ॥

यह पार्श्वनाथ स्वामी का मंत्र १०००० सहस्र अथवा दस लाख जपने से सिद्ध होता है। इसके पश्चात माला मंत्र का प्रयोग करे जो आगे लिखा है।

तद्यथा

ॐ नमो भगवते पार्श्वनाथाय धरणेन्द्र पद्मावती सहिताय ॐ नमो भगवती पाताल वासिनी धरणेन्द्र नागराज हृदय प्रिये सर्वांग सोदरे काम रूप धारिणि स्वर्ग मृत्यु पातालगामिनी एहि-एहि आगच्छ-आगच्छ अत्रे पात्रे अवतर-अवतर तिष्ठतिष्ठ स्वस्थो भव-भव मुद्रान् स्फोटय-स्फोटय र र र र र मम चिंतित कार्यं सिद्धिं कुरू-कुरू अतीत अनागत वर्तमान वार्तां सत्यं कथय-कथय ॥

ॐ नमो भगवते माणिभद्र देवाय भैरवाय कृष्णवर्णाय रक्तोष्ठाय त्रिनेत्राय चतुर्भुजाय पाशा कुंश फल वरद हस्ताय नाग कर्ण कुंडल शिखाय यज्ञो पवीत मंडिताय ॐ ह्री झं कुरू-कुरू ह्रीं आवेशय-आवेशाय ह्रौं स्तोभय-स्तोभय हर-हर शीघ्रं सुत्य-सुत्य (सत्य-सत्य) ठः ठः अवतर- अवतर क्ष्म्ल्व्यूं ह्म्ल्व्यूं भ्म्ल्व्यूं चन्द्रनाथ ज्वाला मालिनी चंडोग्र पार्श्वतीर्थंकर धरणेन्द्र पद्मावती आज्ञादेव नाग यक्ष गंधर्व ब्रह्मराक्षस मरण भूत ह्वन भूत रति काम बलि काम हंतु काम ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शुद्र भवांतर ग्रहाना वेशय-वेशय आकर्षय- आकर्षय सहस्त्र कोटि पिशाच राजान् आकर्षय आकर्षय धुन-धुन कंप-कंप कंपावय-कंपावय लीलय-लीलय लोलय लोलय सर्वांग चालय-चालय हुं फट स्वाहा ॥

पद्मावती माला मंत्र आवेशस्य

पद्मावती देवी को उत्तेजित करने का मंत्र है।

ॐ नमो दस्व पुष्पे रूद्राय शूल पाणये रौद्ररूपाय बंध-बंध स्तंभय - स्तंभय गतिं छेदय - छेदय हूं फटे ठः ठः ॥

रूद्राधि देवताय मंत्र सिद्धयेत पंच सहस्त्र रूप जपात्
रक्षयै तन्मंत्रित या स्तंभे वृक्षेऽथ वेष्टयेत् भूतं ॥ ४२ ॥

बद्धं निगृहीतं च स्यादुक्त करं झटिति जप्तया,
भूतं भव च भावि च सर्वं कथयेत् च परिपृष्टं ॥ ४३ ॥

यह रूद्राधि देवता का मंत्र पांच हजार जप करने से सिद्ध होता है। मंत्री इस मंत्र से रक्षा करके भूत को किसी खम्भे या वृक्ष से बांध लेवे। इस मंत्र से उसको पकड़कर बांधते हैं। वह भूत तेजस्वी मंत्री के कहे हुये सभी कार्यों को करता है तथा पूछने पर भूत वर्तमान और आगे होने वाले सभी कार्यों को बतलाता है।

कुर्वीतं च सकलं तं यं मंत्री प्रार्थयेत् भुवनेच्छं,
स्यात् चास्य मुक्त रज्जोर्मुक्ति स्त जप्त जल सेकान ॥ ४४ ॥

मंत्री लोक में जो भी इच्छा करता है। वह इन सबको पूर्ण करता है। यदि उसको छुडाने की इच्छा हो तो बांधी हुयी रस्सी पर ठसी मंत्र को पढ़कर जल छिड़कने से वह छूट जाता है।

प्रणवोहि द्वितयं हेतु [illegible] सौ लक्ष जाप सं सिद्धः
मंत्रो भवेदग्रहादेश वेशाद्यरिवल कर्मकरः ॥ ४५ ॥
ॐ नमो दस्व पुष्पे रुद्राय हर हर रक्ष मां हुं फट ठः ठः ॥

निम्नलिखित प्रणवादि मंत्र एक लाख जप से सिद्ध होता है। यह सभी ग्रहों को जगाकर सब कार्य करता है।

आविष्ट शिरोनीते तज्जपेरर्क तुरगरिपु कुसुमे,
आयाति मंत्रिणो वशमभिमतमि स ग्रहः कुरुते ॥ ४६ ॥

इस मंत्र को तुरंग रिपु (कनेर) के पुष्पों पर जप कर जगाये हुये ग्रह वाले पुरुष के सिर पर डालने से वह ग्रह मंत्री के वश में हो जाता है और उसकी इच्छानुसार सभी संग्रह करने के कार्य को करता है।

इत्थं ग्रह निग्रहणे मंत्राः कथिताः प्रसिद्ध शक्ति
कथ्यते स्तंभदौ मंत्राः पिंड प्रधानाश्च युक्ताः ॥ ४७ ॥

इसप्रकार यह ग्रहों के निग्रह करने वाले मंत्र प्रसिद्ध-प्रसिद्ध योगों सहित योगी द्वारा कहे गये हैं। अब ग्रहों के स्तंभन आदि में पिंड प्रधान मंत्र कहे जाते हैं।

सकली करणेन बिना मंत्री स्तंभादिनिग्रह विधाने,
असमर्थं स्तनादौ सकली·करणं प्रवक्ष्यामि ॥ ४७ ॥

मंत्री भूतानि स्तंभन आदि ग्रहों के निग्रह के विधान में सकली करण अर्थात् आत्मरक्षा किये बिना सफल नहीं हो सकता है अतःएव पहले मैं सकली करण क्रिया के विधान को कहूँगा-

यद्वज्र पंजर युतं सकली करणं पुरा समुद्दिष्टं,
तेनात्रापि विदध्याद्बुधः सन्नात्मना रक्षां ॥ ४८ ॥

जो पीछे तीसरे समुच्छेद में वज्रमयी परकोटे युक्त सकलीकरण की क्रिया कही गयी है। पंडित पुरुष उसी से यहाँ भी अपनी रक्षा करे।

मंत्री बली भिमत्वा पात्रं मुक्ता ग्रहः प्रायाति यदि,
तत्राप्य दिशा बंधं कुर्यात् इच्छं सनापैति ॥ ४९ ॥

यदि मंत्री को बलि जानकर कोई ग्रह उस ग्रह से पीडित प्राणी से छूटकर आवे तो दिशा बंधन करने से वह दूर हो जाता है।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः ज्वालिनी पादौ च जघन मुदरं
वदनं शीर्ष रक्ष द्वय होमांत पर गात्र पंच के स्थाप्या ॥ ५० ॥

इत्यादि ऊपर के श्लोक के अनुसार इस मंत्र का अपने पांचों अंगों में अर्थात् पांव, जांघें, पेट, मुँह, सर में ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः बीजों का ज्वालामालिनी शब्द को पांचो अंगो में लगाकर रक्ष रक्ष स्वाहा के साथ स्थापित करे।

ॐ ह्रां ज्वालामालिनी पात्रस्य पादौ रक्ष रक्ष स्वाहा
ॐ ह्रीं ज्वालामालिनी पात्रस्य जघनं रक्ष रक्ष स्वाहा
ॐ ह्रूं ज्वालामालिनी पात्रस्य उदरं रक्ष रक्ष स्वाहा
ॐ ह्रौं ज्वालामालिनी पात्रस्य वदनं रक्ष रक्ष स्वाहा
ॐ ह्रः ज्वालामालिनी पात्रस्य शीर्षं रक्ष रक्ष स्वाहा

क्ष ह भ म य र ध झ्रीं कांतै ठकार पूर्णेंदुयक्त निर्विष बीजैः,
विदुर्द्ध रेफ सहितैर्मल वरयूं (कार) संयुक्ते द्विषद्वध बीजैः॥ ५१ ॥

स्तंभं स्तोभ स्तानमांध्य प्रेषण सुदहन भेदन बंधं,
ग्रीवा भंगं गात्र छेदन हनन माप्यायनं ग्रहणां कुर्यात् ॥ ५२ ॥

क्ष ह भ म य र घ झ्रीं ठ कार पूर्ण चंद्र औरह निर्विष बीज को अनुस्वार और उर्द्ध रेफ सहित बीजों को म ल व र यू से मिलाकर हु फट और घे घे पल्लवों से युक्त करके ग्रहों के स्थंभन (स्थिर करना) डराना, अंधा करना, जलाना, भेदना, बांधना, गर्दन भंग करना, अंग छेदन करना, मारना तथा दूरी करन करे।

हाः स्थान्निरोधं शून्यं स्वरो द्वितीय श्चतुर्थ षष्ठीच,
औंकारों बिन्दु युतो विसर्जनीयश्च पंच कला ॥ ५३ ॥

ॐ कूट पिंड पंच स्वर युत कूटं पंचकं सं निरोधं,
दुष्ट ग्रहां स्तथा दिव स्तंभय च स्तंभमंत्र इति फट घे घे ॥ ५४ ॥

ह्रां के बाद के आं क्रों क्षीं हकार को दूसरी, चौथी, छट्ठी, चौदहवीं और सोलहवीं को बिन्दु सहित अर्थात् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः से विसर्जन करे। ॐ के बाद कूट पिंड (क्ष्म्ल्व्र्यूं) कूटाक्षर (क्षकार) को पांचो स्वरों सहित अर्थात् क्षां क्षीं क्षूं क्षौं क्षः और ज्वालामालिनी देवी के पांच बाण (ह्रीं क्लीं ब्लूं द्रां द्रीं) के पीछे दुष्ट ग्रह के बाद दो बार स्तंभय स्तंभय लगाकर दो स्तंभ मंत्र अर्थात् ठ : ठ : लगावे फिर फट् फट् घे घे लगावे ।

ॐ क्ष्ल्व्र्यूं ज्वालामालिनी ह्रीं क्लीं ब्लूं द्रां द्रीं क्षां क्षीं क्षूं क्षौं क्षः हाः दुष्ट ग्रहां स्तंभय स्तंभय ठः ठः हां आं क्रों क्षीं ज्वालामालिन्याज्ञापयति हुं फ ट् घे घे ॥

श्रंखला मुद्रा स्तंभन मंत्रः

यह ग्रहों का स्तंभन मन्त्र हैं। इसमें श्रृंखला मुद्रा होती है।

ॐ शुन्यपिंड पंच स्वर युक्तं ह पंचकं च स निरोधं,
स्तोभन मंत्रः सर्वग्रहान्था आकर्षय द्वयं संवौषट् ॥ ५५ ॥

ॐ क्ष्ल्व्र्यूं ज्वालामालिनी ह्रीं क्लीं ब्लूं
द्रां द्रीं क्षां क्षीं क्षूं क्षौं हः सर्वदुष्ट ग्रहान
स्तौभया आकर्षय आकर्षय हां आं
क्रों क्षीं ज्वालामालिन्या ज्ञापयति संवोषट् ॥ ५६ ॥

यह स्तोभनं मंत्र शिखि मुद्रा में जपे।

भक्ति भपिंडौ भ्रां भ्रीं भ्रूं भ्रौं भ्रः सन्निरोध
सहितानि दुष्ट ग्रहमथ ताडय हुं फट घे घे ॥ ५७ ॥

ताडन मंत्र

ॐ क्ष्ल्व्र्यूं ज्वालामालिनी ह्रीं क्लीं ब्लूं द्रां द्रीं भ्रां भ्रीं भ्रूं भ्रौं भ्रः हाः दुष्ट ग्रहान ताडय-ताडय हां आं क्रों क्षीं ज्वालामालिन्या ज्ञापयति हुं फट घे घे ॥

ताडय मंत्र गदा मुद्रा

विनयादिमपिंडो म्रां म्रीं म्रूं म्रौं म्रः स्तथैव
सं निरोधः हुं फट घे घे, सर्वेषां ग्रह नाम्रां
वज्रमय शूच्या अक्षिणी द्वि स्फोटयन् दर्शय
द्विस्तथैव हुं फट घे घे ॥ ५८ ॥
अक्षि स्फोटन मंत्रो मुद्राप्यस्याक्षि भंजनि नाम्रा

ॐ म्ल्व्र्यूं ज्वालामालिनी ह्रीं क्लीं ब्लूं द्रां द्रीं म्रां म्रीं म्रूं म्रौं म्रः हाः दुष्ट ग्रहान हुं फट सर्वेषा दुष्ट ग्रहाणां वज्रमय शूच्या अक्षीणी स्फोटयन् दर्शय-दर्शय हां आंक्रौं क्षीं ज्वालामालिन्याज्ञापयति हुं फट घे घे ॥

अक्षि स्फोटन मंत्रः शूची मुद्रां यह ग्रहों का अक्षि स्फोटन मंत्र है। इसकी शूची मुद्रा है।

भक्तयादि वायु पिंडो य य य य याः याः ग्रहानथ
समस्तान द्विप्रेषय ये ये हुं जः जः जः प्रेषण सु मंत्र ॥ ५९ ॥

ॐ रम्ल्व्यूं ज्वालमालिनी ह्रीं क्लीं ब्लूं द्रां द्रीं य य य य याः याः सर्व दुष्ट ग्रहान प्रेषय-प्रेषय ये ये ह्रां आं क्रों क्षीं ज्वालामालिन्याज्ञापयति हुं जः जः जः॥

यह प्रेषण मंत्र है। छुटिका मुद्रा है।

नामादिरग्निपिंडः शिखि मद्देवि ज्वल द्वयं
र र र र र रां रां प्रज्वल हुं ज्वल ज्वल धग
युग धूं धूं धूमांध कारिणि ज्वलन शिखे ॥ ६० ॥

देवान् नागान यक्षान् गंधर्वान् ब्रह्म राक्षसान् भूतानशत
कोटि देवतास्ताः सहस्त्र कोटि पिशाच राजानां ॥ ६१ ॥

दह दह पदं प्रति पदं ये स्फोटय मारयेति युगलं च दहनाक्षि
प्रलय धग द्धगित मुरित ज्वालिनी ह्रां ह्रीं हूं ह्रौं ह्रः ॥ ६२ ॥

सर्वग्रह हृदयं हुं पच छिंद छिंद भिंद दह दहेति मंत्र पदं
ह ह ह ह ह ह : हाः हाः फट ये ये ये होम मंत्रोयम् ॥ ६३ ॥

ॐ रम्ल्व्यूं ज्वालामालिनी ह्रीं क्लीं ब्लूं द्रां द्रीं ज्वल-ज्वल र र र र र रां रां प्रज्वल प्रज्वल हुं ज्वल-ज्वल धग-धग धूं धूं धूमांध-धूमांध कारिनि ज्वलन शिखे देवान् दह-दह नागान दह-दह यक्षान दह-दह गंधर्वान दह-दह ब्रह्म राक्षसान् दह-दह भूत ग्रहान दह-दह व्यंतर ग्रहान दह-दह सर्वदुष्ट ग्रहान दह-दह शतकोटि देवतान दह-दह सहस्त्र कोटि पिशाच राजानां ग्रहान दह-दह लक्ष कोटि अपस्मार ग्रहान दह-दह ये ये स्फोटय-स्फोटय मारय-मारय दहनाक्षि प्रलय धग गद्धगित मुरिव ज्वालामालिनी ह्रां ह्रीं हूं ह्रौं ह्रः सर्व दुष्ट ग्रह हृदयं हुं दह-दह पच-पच छिंद-छिंद भिंद-भिंद दह-दह ह ह ह ह ह ह हाः हाः आं क्रों क्षीं ज्वालामालिन्याज्ञापयति हुं फट ये ये।

दहन मंत्रो होम मंत्रोश्च

जुहुयात् त्रिकोण कुंडे मधुत्रय सर्वधान्य सर्षपलवणैः,
राजपलाशार्क शमीप खुमंद करंज खादिर काष्टोत्थाग्नौ ॥ ६४ ॥

त्रिकोण होम कुंड में घृत दुग्ध मधु सब धान्य सफेद सरसों लेकर पलाश आकड़ा खेजड़ा नीम करंज खेर की लकडियों को अग्नि में इन समिधाओं से होम करे।

ॐ वक्रतुंडाय धीमही एक दंष्टाय धीमही
अमृत वाक्यस्य संभवे तन्नो दंतः प्रचोदयात्
अग्नि प्रज्वलितं वन्हिना वायुं कुर्वन्ति साधका : ॥ ६५ ॥

भूताख्यां गायत्री मुचार्य त्रिः सकृद्धमेदग्निं,
त्रीन्वारान नित्यग्रे रादौ संधूक्षणं कुर्यात् ॥ ६६ ॥

अग्नि संधूक्षण मंत्रः भूताख्य नाम के गायत्री मंत्र का तीन बार उच्चारण करके अग्नि जलाये फिर संधूक्षण मंत्र से अग्नि का तीन बार संधूक्षण करे।

प्रणवन धपिंड पंच कला युत तले रेफ युतं प्रकार निरोधं,
धं धं खं खं खडगै रावण सद्विधयाथ घातय युगलं ॥ ६७ ॥

स चन्द्रहास खड़गेन छेदय भेदय द्विस्तथैव,
झं झं खं खं हं हां हुं फट धे धे मंत्रोयं जठर भेदिस्यात् ॥ ६८ ॥

ॐ ह्म्ल्व्यूं ज्वालामालिनी ह्रीं क्लीं ब्लूं द्रां द्रीं त्रां त्रीं त्रूं त्रौं त्रः हाः धं धं खं खं खड्गै रावण सद्विधया धातय -धातय सचंद्रहास खड्गेन छेदय-छेदय भेदय-भेदय झं-झं खं हं हां आं क्रों क्षीं ज्वाला मालिन्याज्ञापयति हुं फट धे धे ॥ ६९ ॥

खडगै रावण विद्या उदर भेदी मुद्रा

यह जठर भेदो मंत्र है। इसकी खड्गे रावण मुद्रा है।

प्रणवेन रहित झं पिंडो गुप्तो चारितः स्ववांयु निर्गमनः,
हाः पूर्णेदं समेतः स्यान मुष्टि ग्राहो मंत्रोयं ॥ ७० ॥

ॐ ह्मल्व्र्यूं ज्वालामालिनी ह्रीं क्लीं ब्लूं द्रां द्रीं ह्रां आंक्रों क्षीं ह्रीं ब्लूं क्लीं द्रां द्रीं ज्वालामालिन्याज्ञापयति हाः ठः ठः ॥

यह ॐ से रहित मुष्टि ग्रहन मंत्र मन में अपनी श्वास रेचक के समय बोले।

पिंडेन बिना हाः फट द्वे फट स मंत्रेण तत्र त्र वान्त्य
स्मिन चा कुर्यादग्रह संक्रामं मुष्टि विमोक्षण सन्मंत्री ॥ ७१ ॥

ॐ ज्वालामालिनी ह्रीं क्लीं ब्लूं द्रां द्रीं ज्वालामालिन्याज्ञापयति हाः फट द्वे द्वे ।।

मुष्टि विमोक्षण मंत्रः मुष्टि विमोक्षण मुद्राः

यह मुष्टि विमोक्षण मंत्र है इससे भी ग्रह दूर हो जाते हैं।

पिंड स एव विनद्यादि का स्व पंच तत्वान्वितो निरोध युतः,
सर्वेषां ग्रह नाम्रां कुरु सर्व निग्रहां स्तथा हाः हुं फट द्वे द्वे ॥ ७२ ॥

ॐ ह्मल्व्र्यूं ज्वालामालिनी ह्रीं क्लीं ब्लूं द्रां द्रीं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रां हाः सर्व दुष्ट ग्रहान् स्तंभय-स्तंभय ताडय-ताडय दह-दह पच-पच भेदय-भेदय हाः हां आं क्रों क्षीं ज्वालामालिन्याज्ञापयति हुं फट द्वे द्वे॥

इष्ट निग्रह कर्म मंत्रः ईप्सित कर्म मंत्रः तर्जनी मुद्राः ।

यह दुष्ट निग्रह कर्म मंत्र होने पर दुष्ट मुद्रावाला तथा ईप्सित कर्म मंत्र होने पर तर्जनी मुद्रावाला मंत्र होता है।

ॐ कांत पिंड पंच स्वर युत तल रेफ सहित कपरश्च
हाः फट द्वे द्वे सर्वग्रह गल भंगं कूरु युगं द्वे द्वे॥

ॐ ख्मल्व्र्यूं ज्वालमालिनी ह्रीं क्लीं ब्लूं द्रां द्रीं ख्रां ख्रीं ख्रूं ख्रौं ख्रः हाः फट द्वे द्वे सर्वेषां ग्रह नाम्रा गल भंगं कुरू-कूरू हां आं क्रों क्षीं ज्वालामालिन्या ज्ञापयति हुं फट द्वे द्वे॥

यह गल भंग मंत्र है। इसकी गल भंग मुद्रा खलिन मुद्रा है।

भक्त्यादि छांत पिंड: पंच कला अथो रफ युक्तं चांत
निरोध:सर्वेषा ग्रह नाम्ना मंत्राणि छिंद हुं फट घे घे ॥ ७२ ॥

ॐ ह्म्ल्व्र्यूं ज्वालामालिनी ह्रीं क्लीं ब्लूं द्रां द्रीं छ्रां छ्रीं छ्रूं छ्रौं छ्रः हा सर्वेषां ग्रह नाम्ना मंत्राणि छिंद-छिंद हां आं क्रों क्षीं ज्वालामालिन्या ज्ञापयति हुं फट घे घे ॥

यह अंत्र छेदन मंत्र है। इसकी अंत्र छेदन मुद्रा है।

भक्ति रहितेन्दु पिंडं ठ्रीं हा: सर्व दुष्ट ग्रहान् तडित्पाषाणै
ताडय-ताडय भूम्या द्विः पातय हुं युगं च फट-फट घेघे ॥ ७३ ॥

ॐ ह्म्ल्व्र्यूं ज्वालामालिनी ह्रीं क्लीं ब्लूं द्रां द्रीं तडीत्पाषाणैः स्ताडय स्ताडय हा: सर्व दुष्ट ग्रहान् तडिष्त्पाषाणै ताडय ताडय पातय-पातय हां आं क्रों क्षीं ज्वालामालिन्याज्ञापयति हुं हुं फट:फट घे घे॥

विद्युत्मंत्रः

यह ग्रहों का हनन मंत्र है। इसकी विद्युत्मुद्रा है।

विनय: स एव पिंड स्तदीय मथ तत्व पंचकं स: निरोधः,
सर्वेषा ग्रहणाम्नां कुरू सर्वान्नि ग्रहां स्तथा फट घे घे ॥ ७४ ॥

ॐ क्म्ल्व्र्यूं ज्वालामालिनी ह्रीं क्लीं ब्लूं द्रां द्रीं व्रां व्रूं व्रीं व्रौं व्रः हा: सर्व दुष्ट ग्रहान स्तंभय-स्तंभय स्तोभय स्तोभय ताडय-ताडय अक्षिणी स्फोटय-स्फोटय प्रेषय-प्रेषय दह-दह भेदय-भेदय बंधय-बंधय ग्रीवा भंगय-भंगय अंत्राणि छेदय-छेदय हन-हन हां आं क्रों क्षीं ज्वालामालिन्या ज्ञापयति हुं फट घे घे ॥

सर्वकार्मिक मंत्रः तर्जनी मुद्रां

यह सर्वकार्मिक मंत्र है। इसकी तर्जनी मुद्रा है।

विनयो निर्विष पिंडः स्व पंच तत्वं निरोध सहितं,
च सर्व ग्रहान समुद्रे निर्म्मज हुं तथैव फट् घे घे ॥ ७५ ॥

ॐ ब्म्ल्व्र्यूं ज्वालामालिनी ह्रीं क्लीं ब्लूं द्रां द्रीं ब्रां ब्रीं ब्रूं ब्रौं ब्रः हा सर्व दुष्ट ग्रहान समुद्रे मज्जय-मज्जय हां आं क्रों क्षी ज्वालामालिन्या ज्ञापयति हुं फट् घे घे ॥

यह मज्जन मंत्र है इसकी मज्जन मुद्रा है।

निर्विष पिंडं सं तं वं मं हं सं ग्रहानथ समस्तान्,
उत्थापय द्वयं नट नृत्य द्वितियं तथा स्वाहा ॥ ७६ ॥

ॐ ह्म्ल्व्यूं ज्वालामालिनी ह्रीं क्लीं द्रां द्रीं सं तं वं मं हं सं सर्व दुष्ट ग्रहान् उत्थापय-
उत्थापय नट-नट नृत्य-नृत्य हां आं क्रों क्षीं ज्वालामालिन्या ज्ञापयति स्वाहा ॥

आप्यायन मंत्रः आप्यायन मुद्रा

यह आप्यायन मंत्र है। इसकी आप्यायन मुद्रा है।

सर्व निरोधे चाप्यायन मंत्रेणानेन साक्षतं सलिलं,
अभिमंत्र्य ताडयेतक्षालयेत च विकृत निग्रहोपशमनं स्यात्॥ ७७ ॥

इस सर्व निरोध आप्यायन मंत्र के द्वारा अक्षत और जल को अभिमंत्रित करने और अक्षत को मारने और जल से धोने से सब ग्रहों का नाश होता है।

आत्मनिचान्यस्मिन् वा प्रतिबिंबे वाथ निग्रह विहिते,
ग्रह निग्रहो भवेदिति शिखिवम ज्वेवी मतं तथ्यं ॥ ७८ ॥

इस या अन्य किसी निग्रह मंत्र का प्रयोग करने से ग्रहों का निग्रह हो जाता है। ऐसा ज्वालामालिनी देवी का सिद्धान्त है।

शब्द कशां कुशं चरणैः हंय नागश्चोदिता यथा यांति बुधैः,
दिव्या दिव्या सर्वेनृत्यंति तथैव मंत्र संबोधनतः ॥ ७९ ॥

जिसप्रकार घोड़े और हाथी शब्द कोडे अंकुश और कशा कोरड़े अथवा ऐडी से आगे चलते हैं उसी प्रकार पंडितो के शब्द पर दिव्य और अदिव्य ग्रह सभी नाचते हैं।

व्यक्ताक्षर वर मंत्रे भित्वा दुष्ट ग्रहस्य हृत्कर्णन,
यद्यचिन्तयति बुधः स्तत्त चोपं करोति भुवि। ॥ ८० ॥

पंडित पुरूष के कहे हुये उत्तम मंत्रो के अक्षरों से दुष्ट ग्रहों के हृदय और कानों के छेदने से मंत्री जो जो सोचता है। संसार में वही वही होता है।

तत्कर्मनात्र कथित कथितं यद यद शास्त्र ष गारूडे
सकलं तदभेदमाप्य मंत्री यद्वक्ति पदं तेदव मंत्र स्यात ॥ ८१ ॥

जिस भेद को पाकर मंत्री जो कुछ भी कहता है वही मंत्र बन जाता है। वह कर्म यहाँ नहीं बतलाया गया है। बल्कि उसका कथन पूर्ण रूप से गारूडी शास्त्र में किया गया है ।

दहन छेदन प्रेषण ताडन भेदन सु वंद्य मन्याद्वा पार्श्वं जिनाय,
तदुक्ता यद्वक्ति पदं तदेव मंत्रः स्यात् ॥८२॥

वह पुरुष छेदना जलाना भेदना, काटना, मारना और बाँधना तथा अन्य कर्म की भी श्री पार्श्वनाथ भगवान के लिये हैं। यह कहकर जो पद कहता है वही मंत्र बन जाता है।

दिव्यमदिव्यं साध्यम साध्यं संबोध्य बीजम बीजं,
ज्ञात्वा यद्वक्ति पदं तदेव मंत्रः स्यात् ॥८३॥

वह दिव्य अदिव्य साध्य असाध्य कहने योग्य और न कहने योग्य तथा बीज और अबीज को बिना जाने हुए भी जो पद कहता है वही मंत्र बन जाता है।

भुकुटि पुट रक्त लोचना द्वयं कराद्ध प्रहास हा हा शब्दैः,
मंत्र पदं प्रपठन सन् यद्वक्ति पदं तदेव मंत्रः स्यात् ॥८४॥

वह भौं चढाकर, लाल नेत्र किये हुए, भंयकर अट्टाहास करते हुये हा-हा शब्द करता हुवा अथवा मंत्र पद को पढता हुआ भी जो कुछ कहता है वह मंत्र बन जाते हैं।

यद्वा चोयं वांछति तत् तत् कुरुते द्विषद्विधं बीजं,
ध्यात्वा यद्वक्ति पदं तदेव मंत्रो भवेत्सधोः ॥८५॥

मंत्री जिस जिस कार्य को करना चाहता है शत्रु को जानने वाला बीज वही-वही कर देता है। इस वास्ते बीज का ध्यान करके द्वेष करने का या बंध करने का जो पद कहा जाता है वही मंत्र होता है।

अति वहलाऽज्ञान महांधकार मध्ये परिभ्रमन् मंत्री,
लब्धोपदेश दीपं यद्वक्ति पदं तदेव मंत्रः स्यात् ॥८६॥

मंत्री पुरुष अत्यंत गहन अज्ञान रूपी महांधकार के बीच में घूमता हुआ जो उपदेश रूपी दीपक को पाकर जो भी कहता है वही मंत्र होता है।

नपठतु माला मंत्रं देवी साधयतु नैव विधिना च,
श्री ज्वालिनी मंत ज्ञो यद्वक्ति पदं तदेव मंत्रः स्यात् ॥८७॥

न तो माला मंत्र के ही मंत्र का पाठ करे और न यहाँ देवी की ही विधिपूर्वक साधना करे किन्तु श्री ज्वालामालिनी देवी के मत को जानने वाला जो भी कहता है वही मंत्र हो जाता है।

देव्या चन जप नियम ध्यानानुष्ठान होम रहितोपि,
श्री ज्वालिनी मतज्ञो यद्वक्ति पदं तदेव मंत्रःस्यात् ॥ ८८ ॥

देवी की पूजा जप ध्यान अनुष्ठान और होम से रहित होने पर भी श्री ज्वालामालिनी देवी के सिद्धान्त को जानने वाला जो पद कहता है वही मंत्र हो जाता है।

विनयं पिंडं देवीं स्व पंच तत्व निरोध बीजं च,
ज्ञात्वोपदेश गर्भं यद्वक्ति पदं तदेव मंत्रस्यात् ॥ ८९ ॥

विनय पिंड देवी के स्व पंच तत्व को निरोध सहित जानकर मंत्री जो पद कहता है वही मंत्र हो जाता है अर्थात् निम्नलिखित मंत्र सब काम देता है।

ॐ क्ष्ल्व्यूं ज्वालामालिनी क्षां क्षीं क्षूं क्षौं क्षः हाः दुष्ट ग्रहान स्तंभय-स्तंभय ठःठः हां आं क्रों क्षीं ज्वालामालिन्य ज्ञापयति हुं फट ये ये ॥ सर्वत्र योजनीयं

अजपिंड देवता पंच बाण निजतत्व पंचक निरोधैः,
स्वेष्ट निरो ध पदैः सह जयति समस्त ग्रहान मंत्री ॥ ९० ॥

ॐ पिंड देवता के पांच बाण स्वपंच तत्व निरोध पदों और इष्ट निरोध पदों से युक्त मंत्र से मंत्री सभी ग्रहों को जीत लेता है।

ॐ क्ष्ल्व्यूं ज्वालामालिनी ह्रीं क्लीं ब्लूं द्रां द्रीं क्षां क्षीं क्षूं क्षौं क्षः हाः सर्व दुष्ट ग्रहान स्तंभय-स्तंभय ठःठः हां आं क्रों क्षीं ज्वालामालिन्या ज्ञापयति हुं फट ये ये ॥
इत्यादि सर्वत्र ज्ञातव्यं

उपदेशान्मंत्र गतिः मंत्रैः रूपदेश वर्जितैः किं क्रियते मंत्रो,
ज्वाला मालिन्यऽधिकृत कल्पोदितः सत्यः ॥ ९१ ॥

मंत्र बिना उपदेश के नहीं रह सकते और बिना उपदेश पाये कुछ किया भी नहीं जा सकता किन्तु ज्वाला मालिनी कल्प के बताये हुये मंत्र पूर्णरूप से सत्य है।

विनयादि देवता पिंड तत्व नवकं विरोध शून्य युतं,
वश्या कृष्टो च्चाटन मारण बीजानि मणि विद्या ॥ ९२ ॥

ॐ ज्वालमालिनी क्ष्ल्व्यूं ह्ल्व्यूं म्ल्व्यूं म्ल्व्यूं र्ल्व्यूं र्म्ल्व्यूं ल्व्यूं ल्म्ल्व्यूं व्ल्व्यूं व्म्ल्व्यूं ठ्म्ल्व्यूं व्ल्व्यूं ह्रीं क्लीं ब्लूं द्रां द्रीं हां आं क्रों क्षीं हाः वषट् संवौषट् हुं फट ये ये॥

विनयादि देवता पिंड नव तत्व निरोध और शून्य सहित वषट (वशीकरण) संवोषट (आकर्षण) उद्घाटन (हुं फट्) मारण के बीजों की उत्तम मणि विद्या होती है।

भूर्जेलिखितै कै क स्वंबीज सहितैः समंत्रोद्यैः,
इषान्मंत्रा नलिकांत्रितोऽमद्यी वेष्टयै द्विधिवत् ॥ ९२ ॥

तैरेतैः सप्तोत्तर विंशति संख्यैजपेत्सुधी मणिभिः,
मंत्री तमैव मंत्र प्रतिदिवसं त्रि सुं संध्या सुः ॥ ९३ ॥

इस मंत्र को भोजपत्र के ऊपर वश्य आदि के अपने-अपने बीज मंत्र सहित लिखकर, त्रिलोह की नली में रखकर, विधिवत मंत्री एक सत्ताईस मणियों की माला बनाकर उसपर उसी मंत्र को प्रतिदिन दोपहर और सायंकाल के समय जपे तो इच्छित कार्य सिद्ध होते हैं।

विषम फणि विषम शाकिनी विषम ग्रह विषम मानुषाः,
सर्वे निर्विषंत्व गत्या भूत्वा वश्याः स्युक्षो भमेति जगतः ॥ ९४ ॥

मणि विद्याया प्रभावः

भयंकर सर्प, भयंकर शाकिनी, विषम ग्रह और सब विषम मनुष्य निर्विष होकर वश में हो जाते हैं और सम्पूर्ण जगत क्षोभ को प्राप्त होता है।

सामान्य मंडल

एक तरौप्रेत गृहे चतुष्पथे ग्राम मध्ये देशे वा,
नगर बहि भूभागें मंडल मावर्तयेत् प्राज्ञ : ॥ १ ॥

ईशान दिशि अभिमुख प्रपतित जले शल्य रहित सम भूमौ,
हस्ताष्टक प्रमाणं नवखंड मंडलं प्रवर ॥ २ ॥

वर पंच वर्ण चूर्णैं द्वार चतुष्कान्वितं लिखेत्,
विपुलं नाना केतु पताका दर्पण घंटा समन्वितं रम्यं ॥ ३ ॥

बुद्धिमान एक वृक्ष के नीचे प्रेत के घर में (श्मशान में) चौराहे पर गांव के ठीक बीच में या नगर के बाहर एक मंडल बनावे ।

उसका मुख ईशान कोण की तरफ हो और वह मंडल गड्ढे जल तथा कंटकरहित समभूमि में आठ हाथ की भूमि में नव खण्ड का बनाया जावे । उसमें पांचों रंगों के श्रेष्ठ चूर्णों से चार दिशाओं में चार दरवाजे बनावे और उनको अनेक प्रकार की ध्वजा पताका दर्पण और घंटिकाओं से सजाकर सुंदर बनावे।

अश्वत्थ पत्र विरचित तोरण सत्पुष्प मंडपोपेतं
सकल दिक्षु निवेशित मुसलाग्रन्यस्त पूर्ण घटं ॥ ४ ॥

तस्मिन् प्राच्याधष्ट सुकोष्टे सु इंद्राग्नि मृत्यु नैऋ ति वरूणान्
मारूत धनद ईशान लक्षण युक्तान लिखत् मतिमान् ॥ ५ ॥

उसके द्वार पुरुष के प्रवेश करने योग्य बनाकर, उसको पीपल पत्तों की बादरवाल बनाकर, तोरण लगावे और अच्छे फूलों से उस मंडप को सजावे। उसकी सम्पूर्ण आठों दिशाओं में मूसल के आगे जल से भरे हुये आठ घड़े रख देवे। बुद्धिमान पुरुष उसके पूर्व आदि आठ कोनों में इन्द्र, अग्नि, यम, नैऋति,वरुण वायु कुबेर और ईशान देवों सब लक्षणों सहित करके लिखे।

शुक्रं पीतं वह्नि वन्हिं लिभं मृत्यु राजमति कृष्णं हरितं,
नैऋतिम परं शशिप्रभं वायु मसितांगं ॥ ६ ॥

धनदं समस्तं वर्णं सितमीशं मनुक्रमेण सर्वान् विलिखेत,
गज मेष महिष नर मकरोधन मृग तुरंग वृष वाहानान ॥ ७ ॥

इंद्र को पीला, अग्नि को अग्नि के समान, यम को अत्यंत काला, नैऋति को हरा, वरुण को चन्द्रमा के समान , वायु को मटियाला - जो असित हो सफेद नहीं हो, कुबेर को सब रंगों का और ईशान देव को सफेद रंग का बनावे। यह सब इस अनुक्रम सबको लिखे। इनके वाहन क्रम से ऐरावत हाथी मेंढा भैंस नर मगर दौड़ता हुआ मृग घोड़ा और बैल बनावे।

वज्राग्नि दंड शतायसि पाश महातरूगदात्रि शूलकरान,
परिलिख्य लोक पालान मध्ये भूतादि कृतिं विलिखेत् ॥ ८ ॥

इनके हाथ में क्रम से वज्र, अग्नि, दंड, शक्ति, तलवार, नागपाश,बड़ा वृक्ष, गदा, त्रिशूल देकर इन लोक पालों के बीच में भूतादि की आकृति बनावे।

गंधाक्षत कुसुमाद्यैः स्वकीय मंत्रैः प्रपूजयेत्सर्वान्,
सामान्य मंडल मिद भूत समुच्चाटनं प्रोक्तं ॥ ९ ॥

फिर सबको गंध, अक्षत, पुष्प आदि से अपने-अपने मंत्रों से सबका पूजन करे। यह भूतों का उच्चाटन करने वाला सामान्य मंडल कहा है।

द्वयैक द्वयैक द्वयैक द्वयैकान पूर्वादि दिक्षु विनि युक्तान्,
क्रमसस्तान द्वादश विद्य मंत्रान हे लोक पालानात्म द्वारं ॥ १० ॥

रक्ष रक्ष दिव्य गंधं पुष्पं दीप धूपाक्षतं बलिंचरुकं,
गृन्ह द्वय होमांतान स्वकीय मंत्रान् बुध प्राहु : ॥ ११ ॥

दो एक दो एक दो एक दो एक इन पूर्व आदि दिशाओं के क्रमश लगाये हुए बारह प्रकार के मंत्रों से हे लोकपालों स्वीकार करो-

इन दिव्य गंध पुष्प दीप धूप अक्षत बलि नैवेद्य आदि के होम को दो बार गृन्ह गृन्ह कहकर दो बार रक्ष रक्ष कह कर ग्रहण करे ऐसा पंडित ने कहा।

ॐ ह्रीं क्रौं क्ष्ल्व्र्यूं ह्स्ल्व्र्यूं स्वर्ण वर्ण सर्व लक्षण संपूर्ण स्वायुध वाहन वधु चिन्ह सपिरवार हे इंद्र एहि-एहि संवौषट आह्वाननं ॥

ॐ ह्रीं क्रौं क्ष्ल्व्र्यूं ह्स्ल्व्र्यूं स्वर्ण वर्ण सर्व लक्षण संपूर्ण स्वायुध वाहन वधु चिन्ह सपरिवार हे इंद्र अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः-ठः स्थापनं ॥

ॐ ह्रीं क्रौं क्ष्ल्व्र्यूं ह्स्ल्व्र्यूं स्वर्ण वर्ण सर्व लक्षण संपूर्ण स्वायुध वाहन वधु चिन्ह सपिरवार हे इंद्रम सन्निहितो भव भव वषट् स्वाहा सन्निधिकरणं ॥

ॐ ह्रीं क्रौं क्ष्ल्व्र्यूं ह्स्ल्व्र्यूं स्वर्ण वर्ण सर्व लक्षण संपूर्ण स्वायुध वाहन वधु चिन्ह सपिरवार हे इंदआत्म द्वारं रक्ष रक्ष इदं अर्घ्यं पाद्यं गंधमक्षतं पुष्प दीपं धूपं चरुं बलिं फलं स्वस्तिकं यज्ञ भागं च गृन्ह-गृन्ह स्वाहा अर्चनं ॥

ॐ ह्रीं क्रौं क्ष्ल्व्र्यूं ह्स्ल्व्र्यूं स्वर्ण वर्ण सर्व लक्षण संपूर्ण स्वायुध वाहन वधु चिन्ह सपिरवार हे इंद्र स्वास्थानं गच्छ-गच्छ जः जः जः विसर्जनं ॥

ॐ ह्रीं क्रौं भ्स्ल्व्र्यूं रक्त वर्ण सर्व लक्षण संपूर्ण स्वायुध वाहन वधु चिन्ह सपिरवार हे अग्ने तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनं ॥

ॐ ह्रीं क्रौं म्ल्व्यूं रक्त वर्ण सर्व लक्षण संपूर्ण स्वायुध वाहन वधु चिन्ह सपिरवार हे अग्ने मम सन्निहितो भव-भव वषट सन्निधिकरणं ॥

ॐ ह्रीं क्रौं म्ल्व्यूं रक्त वर्ण सर्व लक्षण संपूर्ण स्वायुध वाहन वधु चिन्ह सपिरवार हे अग्ने आत्म द्वारं रक्ष-रक्ष इदं मर्घ्यं पाद्यं गंधं मक्षतं दीपं धूपं चरूं बलिं फलं गृन्ह-गृन्ह स्वाहा अर्चनं ॥

ॐ ह्रीं क्रौं म्ल्व्यूं रक्त वर्ण सर्व लक्षण संपूर्ण स्वायुध वाहन वधु चिन्ह सपिरवार हे अग्ने स्वस्थानं गच्छ-गच्छ जः जः जः विसर्जनं ॥

ॐ ह्रीं क्रौं म्ल्व्यूं म्ल्व्यूं कृष्ण वर्ण सर्वलक्षण स्वायुध वाहन वधु चिन्ह सपिरवार हे यम एहि-एहि संवोषट आह्वाननं ॥

ॐ ह्रीं क्रौं म्ल्व्यूं म्ल्व्यूं कृष्ण वर्ण सर्वलक्षण स्वायुध वाहन वधु चिन्ह सपिरवार हे यमअत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः ठः स्थापनं ॥

ॐ ह्रीं क्रौं म्ल्व्यूं म्ल्व्यूं कृष्ण वर्ण सर्वलक्षण स्वायुध वाहन वधु चिन्ह सपिरवार हे यम मम सन्निहितो भव-भव वषट स्वाहा संन्निधिकरणं ॥

ॐ ह्रीं क्रौं म्ल्व्यूं म्ल्व्यूं कृष्ण वर्ण सर्वलक्षण संपूर्ण स्वायुध वाहन वधु चिन्ह सपिरवार हे यम आत्म द्वारं रक्ष-रक्ष इद मर्घ्यं पाद्यं गंधं मक्षतं दीपं धूपं चरूं बलिं फलं गृन्ह-गृन्ह स्वाहा अर्चनं ॥

ॐ ह्रीं क्रौं म्ल्व्यूं म्ल्व्यूं कृष्ण वर्ण सर्वलक्षण स्वायुध वाहन वधु चिन्ह सपिरवार हे यम स्वस्थानं गच्छ-गच्छ जः जः जः विसर्जनं ॥

ॐ ह्रीं क्रौं रम्ल्व्यूं हरितवर्ण सर्वलक्षण संपूर्ण स्वायुध वाहन वधु चिन्ह सपिरवार नैऋते एहि-एहि संवोषट आह्वाननं ॥

ॐ ह्रीं क्रौं रम्ल्व्यूं हरितवर्ण सर्वलक्षण संपूर्ण स्वायुध वाहन वधु चिन्ह सपिरवार हे नैऋते एहि-एहि संवोषट आह्वाननं ॥

ॐ ह्रीं क्रौं रम्ल्व्यूं हरितवर्ण सर्वलक्षण संपूर्ण स्वायुध वाहन वधु चिन्ह सपिरवार हे नैऋते अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनं ॥

ॐ ह्रीं क्रौं रम्ल्व्यूं हरितवर्ण सर्वलक्षण संपूर्ण स्वायुध वाहन वधु चिन्ह सपिरवार हे नैऋते मम सन्निहितो भव-भव वषट स्वाहा सन्निधि करणं ॥

ॐ ह्रीं क्रौं रम्ल्व्यूं हरित वर्ण सर्वलक्षण संपूर्ण स्वायुध वाहन वधु चिन्ह सपिरवार हे नैऋते आत्म द्वारं रक्ष-रक्ष इदं मर्घ्यं पाद्यं गंधं अक्षतं दीपं धूपं चरूं बलिं फलं गृन्ह-गृन्ह स्वाहा अर्चनं ॥

ॐ ह्रीं क्रौं रम्ल्व्यूं हरित वर्ण सर्वलक्षण संपूर्ण स्वायुध वाहन वधु चिन्ह सपिरवार हे नैऋते स्वस्थानं गच्छ-गच्छ जः जः जः विसर्जनं ॥

ॐ ह्रीं क्रौं ठम्ल्व्यूं झम्ल्व्यूं श्वेत वर्ण सर्वलक्षण संपूर्ण स्वायुध वाहन वधु चिन्ह सपिरवार हे वरूण एहि-एहि संवोषट आह्वाननं ॥

ॐ ह्रीं क्रौं ठम्ल्व्यूं झम्ल्व्यूं श्वेतवर्ण सर्वलक्षण संपूर्ण स्वायुध वाहन वधु चिन्ह सपिरवार हे वरूण तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनं ॥

ॐ ह्रीं क्रौं ठम्ल्व्यूं झम्ल्व्यूं श्वेतवर्ण सर्वलक्षण संपूर्ण स्वायुध वाहन वधु चिन्ह सपिरवार हे वरूण सन्निहितो भव-भव वषट स्वाहा सन्निधि करणं ॥

ॐ ह्रीं क्रौं ठम्ल्व्यूं झम्ल्व्यूं श्वेतवर्ण सर्वलक्षण संपूर्ण स्वायुध वाहन वधु चिन्ह सपिरवार हे वरूण आत्म द्वारं रक्ष-रक्ष इदं मर्घ्यं पाद्यं गंधं मक्षतं दीपं धूपं चरूं बलिं फलं गृन्ह-गृन्ह स्वाहा अर्चनं ॥

ॐ ह्रीं क्रौं ठम्ल्व्यूं झम्ल्व्यूं श्वेत वर्ण सर्वलक्षण संपूर्ण स्वायुध वाहन वधु चिन्ह सपिरवार हे वरूण स्वस्थानं गच्छ-गच्छ जः जः जः विसर्जनं ॥

ॐ ह्रीं क्रौं रम्ल्व्यूं कृष्ण वर्ण सर्वलक्षण संपूर्ण स्वायुध वाहन वधु चिन्ह सपिरवार हे वायो एहि-एहि संवोषट आह्वाननं ॥

ॐ ह्रीं क्रों ख्म्ल्व्यूं कृष्ण वर्ण सर्वलक्षण संपूर्ण स्वायुध वाहन वधु चिन्ह सपिरवार हे वायो तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनं ॥

ॐ ह्रीं क्रौं ख्म्ल्व्यूं कृष्ण वर्ण सर्वलक्षण संपूर्ण स्वायुध वाहन वधु चिन्ह सपिरवार हे वायो सन्निहितो भव-भव वषट स्वाहा सन्निधि करणं ॥

ॐ ह्रीं क्रौं ख्म्ल्व्यूं कृष्ण वर्ण सर्वलक्षण संपूर्ण स्वायुध वाहन वधु चिन्ह सपिरवार हे वायो आत्म द्वारं रक्ष-रक्ष इद मर्घ्यं पाद्यं गंधं अक्षतं दीपं धूपं चरूं बलिं फलं गृन्ह-गृन्ह स्वाहा अर्चनं ॥

ॐ ह्रीं क्रौं ख्म्ल्व्यूं कृष्ण वर्ण सर्वलक्षण संपूर्ण स्वायुध वाहन वधु चिन्ह सपिरवार हे वायो स्वस्थानं गच्छ-गच्छ जः जः जः विसर्जनं ॥

ॐ ह्रीं क्रौं ठ्म्ल्व्यूं ठ्म्ल्व्यूं समस्त वर्ण सर्वलक्षण संपूर्ण स्वायुध वाहन वधु चिन्ह सपिरवार हे धनद एहि-एहि संवोषट आह्वाननं ॥

ॐ ह्रीं क्रौं ठ्म्ल्व्यूं ठ्म्ल्व्यूं समस्तवर्ण सर्वलक्षण संपूर्ण स्वायुध वाहन वधु चिन्ह सपिरवार हे धनद तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनं ॥

ॐ ह्रीं क्रौं ठ्म्ल्व्यूं ठ्म्ल्व्यूं समस्तवर्ण सर्वलक्षण संपूर्ण स्वायुध वाहन वधु चिन्ह सपिरवार हे धनद मम् सन्निहितो भव-भव वषट स्वाहा सन्निधिकरणं ॥

ॐ ह्रीं क्रौं ठ्म्ल्व्यूं ठ्म्ल्व्यूं समस्त वर्ण सर्वलक्षण संपूर्ण स्वायुध वाहन वधु चिन्ह सपिरवार हे धनद आत्म द्वारं रक्ष-रक्ष इद मर्घ्यं पाद्यं गंधं अक्षतं दीपं धूपं चरूं बलिं फलं गृन्ह-गृन्ह स्वाहा अर्चनं ॥

ॐ ह्रीं क्रौं ठ्म्ल्व्यूं ठ्म्लव्यूं समस्तवर्ण सर्वलक्षण संपूर्ण स्वायुध वाहन वधु चिन्ह सपिरवार हे धनद स्वस्थानं गच्छ-गच्छ जः जः जः विसर्जनं ॥

ॐ ह्रीं क्रौं व्म्ल्व्यूं श्वेत वर्ण सर्वलक्षण संपूर्ण स्वायुध वाहन वधु चिन्ह सपिरवार हे ईशान एहि-एहि संवोषट आह्वाननं ॥

ॐ ह्रीं क्रौं क्ल्च्यूं श्वेतवर्ण सर्वलक्षण संपूर्ण स्वायुध वाहन वधु चिन्ह सपिरवार हे ईशान तिष्ठ-तिष्ठ ठ:ठ: स्थापनं ॥

ॐ ह्रीं क्रौं क्ल्च्यूं श्वेतवर्ण सर्वलक्षण संपूर्ण स्वायुध वाहन वधु चिन्ह सपिरवार हे ईशान सन्निहितो भव-भव वषट स्वाहा सन्निधि करणं ॥

ॐ ह्रीं क्रौं क्ल्च्यूं श्वेतवर्ण सर्वलक्षण संपूर्ण स्वायुध वाहन वधु चिन्ह सपिरवार हे ईशान आत्म द्वारं रक्ष-रक्ष इदं मर्घ्यं पाद्यं गंध अक्षतं दीपं धूपं चरूं बलिं फलं गृन्ह-गृन्ह स्वाहा अर्चनं ॥

ॐ ह्रीं क्रौं क्ल्च्यूं श्वेतवर्ण सर्वलक्षण संपूर्ण स्वायुध वाहन वधु चिन्ह सपिरवार हे ईशान स्वस्थानं गच्छ-गच्छ ज: ज: ज: विसर्जनं ॥

इति सामान्य मंडलं

॥ अथ सर्वतोभद्र मंडल कथ्यते ॥

रेखां चिंतयेन अग्रेन परस्पराग्र विद्धेन पंच वर्णेन,
चतुरस्रमष्ट हस्तं सुविस्तरं मंडलं लिखेत् ॥ १२ ॥

एक आठ हाथ के चौकोर विस्तृत मंडल को पांच वर्ण की तीन रेखाओं से जिनका अग्र भाग आपस में बिंधा हुआ हो बनावे।

चतुसृषु दिक्षु द्वे द्वे रेखे दद्यात् त दर्द्धं परिमाणे,
एवं सतिषट्सेष्टा दिक्षु विदिक्ष्वपि च चत्वार: ॥१३॥

चारों दिशाओं में दो दो रेखा आधे परिमाण में बनावे । इस प्रकार दिशाओं में छः कोठे और विदिशाओं में चार कोठे हो जावेंगे।

आभ्यंतराष्ट दिग्गत कोष्टेष्वथ मातृका गणं विलिखेत्,
सनिजा सनया स्वायुध स रहिता: प्रतिहार्य: शेष कोष्टेषु ॥ १४ ॥

विदिशाओं के अन्दर के आठ कोठों में मातृका गण उनके आसन सहित लिखें और शेष कोठों में उनके प्रतिहार्यों को लिखे।

ब्राह्मणी माहेश्वरी कौमारी वैष्णवी चैव वाराही,
ऐंद्री चामुंडा च महालक्ष्मी मातृकाश्चेताः ॥ १५ ॥

ब्राह्मणी माहेश्वरी कौमारी, वैष्णवी, वाराही ऐंद्री, चामुंडा और महालक्ष्मी यह आठ मातृका है।

वर पद्म राग शशिधर विद्रुम नीलोत्पलेंद्रुनील,
महाकुलशैल राजवातार्क हंस वर्ण क्रमेणेताः ॥१६॥

इनके रंग क्रम से सुंदर पद्म राग (लाल),चन्द्रमा मूंगा, नीलकमल ,इन्द्र नील मणि सुमेरु पर्वत बाल सूर्य और हंस जैसा है अर्थात् प्रत्येक देवी को क्रम से इनके समान रंगवाली बनावे।

नीरज वृषभ मयूरा गरूडवराहौ गजस्तथा,
प्रेतः मूषक इत्येते सांप्तौकतानि सुबाहनानि बुधः ॥ १७ ॥

पंडितो ने इनके वाहन क्रम से कमल, बेल, मोर, गरुड, वराह, ऐरावत, हस्ती प्रेत और चूहा बतलाया है।

कमल कलशौ त्रिशूलं फल वरद करौ च क्रमथ,
शक्ति पाशौ वज्रं च कपाल वार्तिक परशु शस्त्राणि ॥ १८ ॥

इनमें से ब्राह्मणी के कमल और,कलश, माहेश्वरी के त्रिशूल, कौमरी केफल और वरद हाथ (वर को देने वाला), वैष्णवी का चक्र, वाराही का शक्ति और पाश, ऐंद्री का वज्र, चामुंडा के कपाल और बत्ती (दीपक) और महालक्ष्मी का परशु अस्त्र है।

तत् प्रातिहार्योथ जया विजयाप्यजिता पराजिता,
गौरी गंधारी राक्षस्यथ मनोहरी चैति दंडकाराः ॥ १९ ॥

इनके पीछे चलने वाली क्रम से जया,विजया,अजिता,अपराजिता, गौरी, गांधारी, राक्षसी और मनोहरी यह आठ प्रतिहारी दंड करनेवाली देवियाँ हैं।

वाह्ये अष्ट दिग्गतैष्वथ कोष्टेष्विद्रादि लोकपालास्तान्,
निजवाहनादिरुठान स्वायुधवर्णादि युतान विलिखेत् ॥ २० ॥

अब दिशाओं के बाहर के आठ कोठों में इन्द्रादि लोकपालों को अपने -अपने वाहन पर चढे हुये शस्त्र और वर्ण सहित लिखे।

तदुभय पार्श्वाधिष्टित कोष्टेष्विद्रांदि लोक पालानां,
मेघा महामेघ ज्वाल लोल कालास्तथ्या नीलः ॥ २१ ॥

रौद्रातिरौद्र सजलाजलाहिमका हिमाचल स्तथा लुलितैः
द्वौ द्वौ च महाकालौ नंदीति लिखेत् प्रतिहारौ ॥ २२ ॥

उन इन्द्र आदि लोकपालों के पास के कोटो में ही उनके दोनों तरफ दो-दो प्रतिहारों को बनावे जो क्रम से इसप्रकार है। सोलह प्रतिहार मेघ-१, महामेघ-२, ज्वाल-३, लोल-४, काल-५, स्थिति-६, आनिल-७, रौद्र-८, महारौद्र (अतिरोद्र)-९, सजल-१०, अजल-११, हिमका-१२, हिमाचल-१३,लुलित-१४ महाकाल-१५ और नन्दी-१६ । इन प्रतिहारों को लिखे।

वहिरप्यु दधि चतुष्कं पुनरूपरिसु सु पुष्प मंडपं लिखेत्,
तोरण माला दर्पण घंटा ध्वज विरचतां कुर्यात् ॥ २३ ॥

वर बीजपूर वंदनान मलयज कुसुमाक्षतार्चितान धवल वर्णन्,
कोणस्थ मूसल मूर्द्ध सुपूर्ण घटान स्थापयेद् विधिना ॥ २४ ॥

बाहर चारों समुद्र फिर ऊपर फूलों का मंडप बनावे और उसको तोरण, माला, दर्पण , घंटा और ध्वजाओं से सजावे। फिर सुंदर विजोरे चंदन, लाल चंदन और अक्षत फूलों से पूजे हुये धवल वर्ण के मुख तक भरे हुये घडों को उनके ऊपर मूशल रखकर, कोणों में रखकर उनकी विधिपूर्वक स्थापना करे।

मंडल मध्ये भूतं विलिखव्य संस्थाप्य मृन्मयं चान्यत,
मंडल वाह्येप्य आग्नेयादिषु कोणेष्वनु कमशः ॥ २५ ॥

कुर्यात् त्रिकोण कुंडं क फलिका कटह वृत्त कुंडानि,
खदिरां गारक तैल सु पानीयां गार पूर्णानि ॥ २६ ॥

मंडल के मध्य में दूसरे मिट्टी के बने हुये भूत को लिखकर, मंडल के बीच में आग्नेय आदि कोणों में क्रम से तीन कोणे वाले कुंड बनावे। इन कुंडों के चारों तरफ कफलिका और कढ़ाही रखी हो और वह खैर के अंगोरा तेल, जल और अंगारों से पूर्ण हो।

ग्रह नाम वृतं रेफैः पत्रे प्रविलिखव्य निक्षिपेत हृदये,
पिष्ट घटितस्य सि कथ्वकमयस्य वा भूत रूपस्य ॥ २७ ॥

फिर पत्ते पर ग्रह का नाम लिखकर या भूत का रूप लिखकर और उसके चारों तरफ रकार लिखकर जो पिसे हुये मोम से लिखा हुवा हो उसे बनाये हुये ग्रह के या भूत के हृदय में रखे।

अन्य च ग्रह रूपं पत्रे च पटे पृथक समालिखव्य रूप,
रूपस्य तस्य संधिषु रकार पिंडं लिखेन्मति मान ॥ २८ ॥

फिर ग्रह के दूसरे रूप को पत्ते और वस्त्र पर पृथक-पृथक लिखकर बुद्धिमान पुरुष उसकी संधियों रकार पिंड़ लिखे।

नाभौ क्लीं हृदये ह्रीं सिरसि च द्रीं पादयोः
क्षीं गुदे द्रां क्रौं मूर्द्धन्ज रूद्रं म कुशम घोटयूं ॥ २९ ॥
चो परि ब्लूं शब्द गले हेर्त जानुन्यति
निरुद्धम मलं पाशरचनं [illegible] कर्णयोः रू र्दीप्त शब्द कण्ठो
स्तनौ च परं भूता कृतौ विन्यसत् ॥२९॥

सम्पूर्ण प्राणी की आकृति को कानों, जंघओ, शब्द समूह और शरीर में निम्नलिखित क्रम से बीजों को रखे।

नाभि में क्लीं, हृदय में ह्रीं, सिर पर द्रीं, दोनों पाँवो में क्षीं, गुदा स्थान में द्रां मूर्द्धन अर्थात् मस्तक में क्रौं आं, अधो स्थान में द्रूं , ऊपर ब्लूं, गले में र्यं, घुटनों में अं और टं, दोनों कानों में ठं तथा आं, दोनों जांघों में भूत का आकृति में र सर्वत्र लगाये।

कुंडे प्रपूर्यैता कफलिकायां पचेच पुत्तलिका,
पत्रं कपठहि परि घट्टयेत्पटं तापयेत्कुंडो ॥ ३० ॥

सततमथ होम मंत्रं प्रपठन्तिति निग्रहेषु विहितेषु,
दग्धोस्मि मारितोहं हंतोऽहं मिति रोदिति कठोरं ॥ ३१ ॥

फिर कुंड में कफलिका डालकर उस पुतली को पकावे और पत्ते को कढाही में घोटे तथा वस्त्र को कुंड में गरम करे। इसके पश्चात् निरंतर होम करके मंत्र पढता हुआ इसप्रकार निग्रह किये जाने पर ग्रह पुकारता है कि जला, खूब चोट लगती है, मैं मरा कहकर खूब रोता है।

प्रागेव सप्त दिवसान त्रिन्वा लोक प्रसिद्धि लाभार्थं,
प्रविवर्त्तये ग्रहं मंडलाद्विना स्वेच्छाया मंत्री ॥ ३२ ॥
पश्चात् सप्तम दिवसे तृतीयेऽथवा महत्यस्मिन,
विधिनैव सर्वतोभद्र मंडले सौ विसुर्जः स्यात ॥ ३३ ॥

पहले सात दिन या ठीक तीन दिन लोक में प्रसिद्धि पाने के लिये मंत्री पुरुष ग्रह को खूब नचावे। फिर सातवें दिन या तीसरे दिन उसको सर्वतोभद्र मंडल में विधिपूर्वक नचाकर मंडल का विसर्जन करे।

कृष्णाष्टम्या मथ तदभूत तिथौ कुजांशाभ्युदये,
दुष्टग्रहम शुभ ग्रह लग्ने प्रविसर्जयेज्ज्ञ ॥ ३४ ॥

कृष्ण पक्ष की अष्टमी को या उस भूत की तिथि को अथवा मंगल के निकलने पर उस दुष्ट ग्रह को अशुभ ग्रह और अशुभ लग्न में छोड़े।

इति सर्वतो भद्र मंडलं

अथ समय मंडलं

विपुलाष्ट दलं पद्मं विलिखव्य बाह्यस्य पंचवर्णेन,
चूर्णेन चतुष्कोणं [illegible] मंडलं विलिखेत् ॥ ३५ ॥

आठ दल वाले बड़े कमल को लिखकर उन पांचों रंगों के चूर्ण से चौकोर बड़ा मंडल बनावे।

हरिन वराह तुरंगम गज गोवृषभ महिष करभ मार्जारि मुखं,
फल वरद हस्त युक्तं सालंकार सलक्षणं नारीणां ॥ ३६ ॥

फिर हिरण, वराह, घोड़ा, हाथी, गाय, भैंस बैल, करभ (ऊँ ट) और बिल्ली के मुख तथा फल और वर को देने वाले हाथ सहित अलंकार सहित स्त्रियों के सुलक्षण है।

पूर्वादष्ट सुपत्रेषु अनुक्रमात् सुदरं लिखे द्रूपं,
तन्मध्ये षट्कोणं शिखिं भवनं ससिरव भालि ॥३७॥

पूर्व आदि आठों दलों पर सुंदर रूप से लिखे। उसके बीच में एकरूप छः कोण वाला मोर का भवन बनाकर उसमें मोर बनावे।

उर्द्धाधो रेफ युक्तं यां यीं यूं यों तथैव यं यः सहितं,
पूर्वादि कोष्ट मध्ये विलिखव्य वामे तदग्रेषु ॥ ३८ ॥

ऊपर और नीचे रकार सहित यां यीं यूं यों यः बीजों को उनको दिशा से आरंभ करके बाईं तरफ को लिखे।

षट्कोण भवन मध्ये यूंतत्कोष्टां तरेष्वूपि लिखे च,
समयं ग्राहि तव्यो ग्रहः स्फुटं समय मडलाख्येस्मिन् ॥ ३९ ॥

षट्कोण भवन के भीतर और उस कोटे के भीतर भी यूं लिखे। ग्रह से पकडा हुआ समय मंडल में प्रकट हो जाता है, अतःएव यह समय मंडल है।

अति समय मंडलं

रेखा त्रयोपासम्यक चतुरस्तं पंचवर्ण चूणेन,
प्राग विद्विलिखव्या मंडल मध्ये शिवं विलिखव्येत्

तीन रेखाओं से पहले के समान पांच वर्ण के चोकोर मंडल बनाकर उसके बीच में शिव में लिखे।

तत्राभ्यंतर दिग्गता कोष्ठेषु जयादि देवता विलिखव्येत्,
गौर्यादि देवता स्ताश्चै शानाद्येषु कोष्टषु ॥ ४० ॥

आद्या जयाथ विजया तथा जिता पराजिता गौरी
गांधारी राक्षस्यथ मनोहरी चैति देव्यास्ता ॥ ४१ ॥

उसके अन्दर के आठों कोठों में जया आदि देवियों के नाम लिखे और ईशान आदि कोठो में गौरी आदि देवियों के नाम लिखे।

इनमें पहले जया, फिर विजया, फिर अजिता, फिर अपराजिता, दिशाओं में लिखे फिर विदिशाओं में गौरी, गांधारी, राक्षसी और अंत में मनोहरी देवी का नाम लिखे।

अथ तद्बाह्या वरण स्थितेषु कोष्ठेषु तान विलिखेत,
कादीन मांतान,क्रमाचतुर्विंश तीन वर्णान
सत्याख्ये मंडलेऽस्मिन् ग्रहावेश यितव्यो सत्यं ॥ ४२ ॥

फिर उस सत्य मंडल के बाहर के भाग के कोठो में क आदि ३४ वर्णों की मंत्रिकाओं को क्रमशः लिखे-इस सत्य नाम वाले मंडल में ग्रह अवश्य ही नष्ट हो जाते हैं।

इति सत्यं मंडलं

मान स्तंभा सरांसि इति सूत्र क्रमेण समव सृमति,
मंडलं पश्चात् ऐवं नवग्रह देवता विलिखेत् ॥ ४३ ॥

मान स्तंभ तालाब इत्यादि सहित समवशरण मंडल को शास्त्र के अनुसार लिखे। इसके पश्चात नव ग्रह देवताओं को लिखे।

इंद्रादि लोकपालान् मंडल पूर्वादिक्षु संलिखव्य,
मध्ये चाऽर्हत्प्रतिमा मन्योन्यारी न मृगान्परितः ॥ ४४ ॥

इन्द्र आदि लोकपालों को मंडल के पूर्व आदि दिशाओं में लिखे, मध्य में श्री भगवान अरहन्त देव की प्रतिमा लिखी हो जिसके चारों तरफ मृग, शेर आदि विरोधी पशु हो।

एतत क्रियावसाने प्रदर्शयेत समवशरण मंडलं
मतुलं नत्वा वीरं प्र विहाय वैरं सयाति द्रष्टवे ॥ ४५ ॥

इस क्रिया के पश्चात् अतुलनीय समवशरण मंडल को बनाकर दिखावे। वह ग्रह महावीर भगवान को व इस समवशरण मंडल को देखकर नमस्कार तथा स्तुति करके बैर को छोड़कर चला जाता है।

॥ इति समवशरण मंडलं।

भूतानुकंपनतेल

पूतिक शुकतुंडिका खलु शुक तुंडिकाक तुंडिकाश्चैव,
सित किणि हि काश्व गंधा भूकूष्मांडिद वारूणिका ॥ ४६ ॥

पूति दमनोग्र गंधा श्री पर्ण्य जगधं कुटज कुकरंजा,
गो श्रृंगी श्रृंगी नागं सर्प विषं मुष्टिंका जीरा ॥ ४७ ॥

पूतिक, शुक, तुंड़िका काक तुंडिका, सफेद किणि, हिका, असंगध ,भूमि का कोहला, इन्द्र वारूणि पूति दमन उग्र गंधा ,श्री पर्णी, असंगध, कूडा ,कडवा करंड, गो श्रृगी, काकड़ा, सींगी नाग दोन सर्प विष मुष्टिक, अंजीर, इलायची ,वचां ,भद्र ,पर्णी, वरवरी, कुटकरंजा ,काकडा ,श्रृंगी ,कुचिला इत्यर्थ

नीली सद्चकांकित खरकर्णी गोक्षुरश्च विष वकुली,
कनक वराहं कोला चा स्थि प्र सूनश्च लज्जरिका ॥ ४८ ॥

नीली रूत चक्रांकी खरकर्णी गोखरू विष वकुली (मालश्री की छाल) कनक (धतूरा) वराही कंद अंकोल की गुठली और फूल लजालू

गर्वांकं मदन तरू बिर्भति तरूरपि च काक जंघा च,
वंध्य च देव दारू च वृहती द्वितीयं च सहदेवी ॥ ४९ ॥

पाटली मदन का पेड़, वहेड़ा, काक, जंघा (सूरजमुखी) वांझ, ककोडा, देवदारू, दोनों कटेली सहदेवी

गिरी कर्णिका नदी मल्ली काक शिला कंक हस्ति
कर्णी च स्नूही निंब महा निंब शिरीष लोकेश्वरी धान्यो ॥ ५० ॥

कोयल बूटी, नदी, मल्लिका, अर्कशैल, हस्ती कर्ण थोहर नीम बकायण सिरस लोकेश्वरी धान्य

पारीतरू महावृक्षौ कटुका हारोपयोगी मूलानि,
सित रक्त जया दंडी ब्राह्मीन्यथ कोकिलाख्यश्च ॥ ५१ ॥

हारसिंगार, महावृक्ष, कटुक हार, उपयोगी जड़ सफेद और लाल जया दंडी ब्राह्मी और ताल मखाना

भृंगश्च देवदाली कटु तुंबी सिंह केशरी घोषालिका,
अर्क भक्तो यति मन्यति मुक्तक लताश्च ॥ ५२ ॥

भांगरा, देवदाली, कड़वी तुंबी, सिंह, केशर, घोषालिका, अर्कभक्ति (सूरजमुखी) यति लता मुनि लता अति मुक्तिकलता

भंग पुष्प नाग केशर शार्दू लनखीश्च पुत्र जीवीश्च,
सिगुश्च तथेरंडा स्तुलसी संध्या अपा मार्गश्च ॥ ५३ ॥

करिकर्भ रवि चूर्णत वृषणोष्ट छाग मुत्र मिश्रेण,
तच्चर्म्म कार कुंडां बुनौषध पेषयत् सर्व ॥ ५४ ॥

भंग पुष्पी, नाग केशर, शेर के नाखून, जीवितपूता, सहजना, ऐरड, तुलसी, संध्या, आधी ,गजमद, अर्कपुष्पी इन सबका चूर्णकर बैल ऊँट बकरी का मूत्र मिलाकर इन सब औषधियों को चमार की कुंडी के पानी से पीसे।

कृत्वा द्विभाग मे कांन्यस्य क्वाथं प्रगृह्यतैः मूत्रैः,
अर्धावर्तैः क्वाथं द्वितीय मालोढयेत् भागं ॥५५ ॥

उसके दो भाग करके एक भाग क्वाथ मूत्र के साथ तैयार करे और आधे भाग में दूसरे भाग को डुबो देवे।

कंगु करंज एरंडाकोल विमर्द्विनिंब तिलतैलं,
समभागेन गृहीतं क्वाथेन समंक्षिपेत क्वोथ ॥ ५६ ॥

माल कंगनी , करंज, इरंड को पीसकर अंकोला, नीम और बकायण व तिल के तेल को बराबर लेकर क्वात के साथ क्वाथ में ही डाल दे।

नोट :- (श्लोक में विमर्द्धि के साथ पर विभीत द्वि शब्द भी हो सकते हैं तब इसका अर्थ मिलावे और दोनों नीम अर्थात् नीम और बकायण होंगे।)

भूत ग्रह भूत दिने भूत महिजात मंडप स्याऽधः,
कुजवारे भौमांशाभ्युदये प्रारभ्यते पक्तुं ॥ ५७ ॥

भूत के घर में भूत के दिन भूत की पृथ्वी पर अर्थात् श्मशान में मंड़प के नीचे मंगलवार को मंगल ग्रह के उदय होने पर पकाना प्रारम्भ करे।

कर्पास कंस गोमयरविकर विनिपतित वह्निना सम्यक्,
खदिर कंरजार्क शमी निंब समिद्भिः पंचेदमिः ॥ ५८ ॥

उस क्वाथ को सूर्य की किरणों से और कपास कांस गोयर करंज आक खेजडा नीम की लकडी की अग्नि से अच्छी तरह पकावे।

क्षिप ॐ स्वाहा बीजैः सकलीकरणं विधाय,
निज देहे तैरेव बीज मंत्रैः पक्तुः सकली क्रियां कुर्यात् ॥ ५९ ॥

क्षि प उँ स्वाहा इन बीजों से अपने शरीर की सकली करण क्रिया करके उन्हीं बीज मंत्रों से पकाने की क्रिया करे।

तत्सर्व धान्य सर्षप लवण धृतैः रिंधनान्वितैश्चूल्यां,
आपां कांतान्मंत्री होमं कुर्यात्सु होम मंत्रेण ॥ ६० ॥

मंत्री पुरुष उस तेल के पकने तक होम के मंत्रो से सब धान्य सरसौं नमक धृत को होम कुंड में डालकर होम करता रहे।

निरस भावं गत्वा क्वाथोथा स्तंगतो यदा,
भवति भूताकंपन तैलंमृदुपाक गतं तदासिद्धिं ॥ ६१ ॥

जब यह क्वाथ नीरस होकर तेल मात्र रहकर जमीन पर रखने जैसा हो जावे तो यह मृदुपाक से बनाया हुआ भूता कंप तेल तैयार होकर सिद्ध हो जाता है।

हिंगुर्मनः शिलैला हरिताल फल त्रिकं कटु त्रितयं
रजनी द्वितीयं सर्षप लसुनं द्राक्षादि धान्य वचा ॥ ६२ ॥

अजमोद लवण पंचकमरिष्ट फल मुदधि फलम्
त्रिवृता एतानि प्रति पाके दद्यादुत्तारित तैले ॥ ६३ ॥

हींग, मैन, शिल, इलायची, हडताल, हरड़े, बहेड़ा, आँवला (फलत्रिंक) सोंठ ,मिरच, पीपल, (कटु त्रितयं) दोनों हल्दी (हल्दी और दारु हल्दी) सरसौं , लहसुन, मुनक्का आदि (रुद्राक्षादि शब्द होने

पर रुद्राक्ष) सर्व धान्य वच ,अजमोद , नमक, पांचो और अरीठा का फल समुद्र फल (त्रिवृता) निसोथ इन सब वस्तुओं को प्रत्येक को पाक के साथ तेल मिलावे।

पश्चात् सद रावण विद्या मंत्रेण मंत्रयेत् मंत्री,
दश शत वारानैवं विधिना तैलं सुसिद्धं स्यात् ॥ ६४ ॥

फिर मंत्री उस तेल को अडगै रावण विद्या मंत्र से एक हजार बार विधि पूर्वक अभिमंत्रित करे। अब यह तेल पूर्ण रुप से सिद्ध हो गया है।

शाकिन्यो पस्मारा: पिशाच भूत ग्रहाश्चनश्यंति.
निर्विषतां याति विष तैलस्या भ्यंग नस्येन् ॥ ६५ ॥

इस तेल की नस्य की सुगंध से ही शाकिनी अपस्मार पिशाच भूत और अन्य ग्रह नष्ट हो जाते हैं और निर्विष हो जाते हैं।

विशालाया: फलं पक्ष मेकं गोमूत्र भावितं,
नसि दत्तं हरेदब्रह्म राक्षसादि महा ग्रहान् ॥ ६६ ॥

इंद्रायण के फल को पंद्रह दिन तक गोमूत्र की भावना दे उसकी नस्य देने से ब्रह्म राक्षस आदि बड़े बड़े ग्रह नष्ट हो जाते हैं।

सितांग कर्णिका मूलं तांबूलोदक कल्पितं,
सघृतंन सिन्यस्त स्याद् भूत ग्रह विनाशनं ॥ ६७ ॥

सफेद रोहिडा मेंढासिंगी की जड़ को पान के रस में बनाये हुये कल्क में घृत सिद्ध करके सूँघने से भूत और ग्रहों नष्ट हो जाते हैं।

व्योषा जमोद भूतघ्नैर्वस्ति मूत्रेण कल्पितै:,
कृत मुच्चाटयेदाशुना वनं निस्विल ग्रहान ॥ ६८ ॥

व्योष (सोंठ मिरच पीपल) अजमोद लहसुन को वस्ति के मूत्र में पकाये हुये कल्क को सूंघने से जंगल के सभी ग्रहों का उच्चाटन होता है।

कृष्णा मरीच गोपित्त सैंधवै रंजनं दृशो:,
भवेत् भूत ग्रह ब्रह्म राक्षसादि निवर्हणं ॥ ६९ ॥

काली मिरच, गोपित (गोरोचन) सेंधा नमक का, आंखो में अंजन करने से भूत ग्रह ब्रह्म राक्षस आदि नष्ट हो जाते हैं।

पुष्पैः पुष्प फला लाबुभिर्व्या कल्पितया कृता,
कृलिका लोचनां का स्याद भूत ग्रह विनाशिनी ॥ ७० ॥

पुष्प सार (सहद) पुष्प फला (कैथ) अलाबु तुम्बी के कल्क की बनाई हुयी गोली को पानी से घिसकर आंखो में लगाने से भूत ग्रह नष्ट हो जाते हैं।

मरीच कृष्णा पुष्पाभ्यां स्तेनेत्रयोर जनादथ,
पुनर्नवा समूलन स्यात्सर्व ग्रह निग्रहं ॥ ७१ ॥

मिरच (कृष्ण पुष्प) काला धतुरा का आंखो में अंजन करने से तथआ पुनर्नवा (सांठी) (विसखपरा) की जड़ सहित आंखो में लगाने से सब ग्रह नष्ट हो जाते हैं।

धूपो द्वि हिंगुर्मगधा वीर्हः द्विप नरवै ग्रहान,
हन्याद गवलं मार्जार गोसर्प मल संयुतै ॥ ७२ ॥

धूप, दोनों हींग, मगधा (पीपल) मोर तथा बधेरे के नख ,गबल जंगली भैंस का सींग ,बिलाय गाय तथा सांप के मल को मिलाकर इस धूप को देने से ग्रह नष्ट हो जाते हैं।

अज गव्य जल स्नेहात् कुनटी विश्व भेषजैः,
धूपो कृतो हरत्याशु वलिनोपि महा ग्रहान् ॥ ७३ ॥

बकरी का मूत्र, गव्य जल (गाय का मूत्र) स्नेह (बकरी और गाय का धृत) कुनटी (मेनसिल) विश्व भेषज (सोंठ) की धूप महा बलवान ग्रहों को भी शीघ्र नष्ट कर देती है।

निर्माल्य शिला गुगलु निंबाविदुं दले हिंगु राजि धृतैः,
अज पशु रोम युतैः सद्धूपैः संध्यात्रये गृह जित् ॥ ७४ ॥

शिवजी का घढ़ावा शिला (मेनसिल) गुगल नीम आय (सुंगधवाला) इन्दु दल (चंदन) हींग राजि (राईया सफेद सरसों) घृत और बकरी और गाय के पूँछ के बालों की धूप प्रातः दोपहर तथा सांयकाल के समय देने से ग्रह जीते जाते हैं।

मंजिष्टा द्विनिशा कु चंदन वचा हिंगु प्रियंगु द्रुमाः,
व्योषाग्वध राजिका रविवरा स्मांडी कषाय करजास्थि भिः ॥ ७५ ॥

पिष्टैराज जलेन हंति रचितावर्तिः समस्तान ग्रहान,
स्नानोद्वर्त्तन पानलेपन विधौधूपे च संयोजितं ॥ ७६ ॥

मंजीठ दोनों हल्दी, कुचंदन (लाल चंदन) वच, हींग, प्रयंगु (फूळ प्रियंगु का वृक्ष) व्योष (सोंठ मिरच पीपल) आरग्वध (अमलतास) सफेद सरसौं, रवि (आक) वरा (त्रिफला) अरस (शिलाजीत) अंड (एरंड की इडोली) करंज की गुठली, अजजल (बकरी का मूत्र) के साथ पीसकर बनायी हुयी बत्ति सब ग्रहों को नष्ट कर देती है इसको स्नान उबटना पीने तथा लेप औप धूप के द्रव्यों में भी मिलाना चाहिये।

सहज कुलजोपदेशिका भेदास्त्रि विद्या भवंति शाकिन्याः,
सहजाः स्वभाव जाताः कुल संतत्या गताः कुलजाः ॥ ७७ ॥

शाकिनी तीन प्रकार की होती है- सहजा, कुलजा उपदेशिका-स्वभाव से ही होने वाली को सहजा कुल संतति आती हुयी को कुलजा कहते हैं।

सिद्धोपदेशिका इति तथैव मंत्रोपदेशिका प्रतिताः,
द्वि विधा स्तत्रेक्षणिका प्रथमाद्या वचनतः सिद्धिः ॥ ७८ ॥

उपदेशिका शाकिनी सिद्धोपदेशिका और मंत्रोपदेशिका के भेद से दो प्रकार की होती हैं। इनमें से पहली को इक्षणिका भी कहते हैं। उसकी केवल वचन ही से सिद्धि हो जाती है।

साधन विधिना सम्यक् तर मूले मातृकार्चनं कृत्वा,
कृष्ण चतुर्दस्यां निशि कथयत्युपदेशितं मंत्रं ॥ ७९ ॥

वृक्ष की जड़ में अच्छी विधि से मातृका देवी की साधन विधि से पूजन करने से कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी की रात को उपदेश दिये हुए मंत्र को कहती है।

दूर श्रवणं दूरालोवकनं दूर भूमिस्थानमपि सहज,
कुलजेक्षणिका नां सद्भावो जायते तांसां ॥ ८० ॥

दूर से सुनने दूर से देखने और दूर के स्थान पर चलने को भी सहजा, कुलजा और इक्षणिका समान रूप से जानती है। इसी से इनकी परस्पर सद्भाव रूप समानता है।

असृग्यां समेदः प्रियाक्षुद्रबोधाः सदा मातृका
पूजनारंभः चित्ताः ललाट त्रिशूलानलोदर्त्त
नेत्राः स्वरूपं भवेत् इद्धशां शाकिनीनां ॥ ८१ ॥

शाकिनी का स्वरूप यह है कि वह रक्त मांस और चरबी को पसंद करने वाली, कम ज्ञान वाली, सदा देवी के पूजन आरंभ में चित्त रखने वाली और मस्तक पर त्रिशूल वाले शिवजी के अग्नि रूप वाले नेत्र के समान नेत्र वाली होती है।

बद्धा: जलस्य मध्योक्षिप्ता या तरति शाकिनी सैव:,
न तरति तत्र निमग्ना शुद्धा सा शाकिनी न स्यात् ॥ ८२ ॥

जो बांधकर जल में डाली जाने पर तिरकर निकल आवे वह शाकिनी होती है और जो उस जल में पडकर नहीं तिरे वह शुद्ध शाकिनी नहीं होती है।

सोमाशाश्रित मूलं कपि कच्छोर्गो जलेन संपिष्टं,
निज तिलक प्रतिबिंब तत्पश्यति शाकिनी शीर्ष ॥ ८३ ॥

दक्षिण दिशा में उगी हुयी काँच की जड को गोमूत्र में पीसकर तिलक करने से शाकिनी उस तिलक में अपने सिर के तिलक के प्रतिबिम्ब को देखती है।

गृहणाति क्षणिका जंतु छिद्रं प्राप्य विनेच्छया,
विमनस्कं ज्वराक्रांतं दृष्टं भीतं हंत मृतं ॥ ८४ ॥

इक्षणिका शाकिनी बिना इच्छा के ही छिद्र पाकर अन्य और मन वाले ज्वर से पीडित दिखाई देने वाले डरे हुये मारे हुये अथवा मरे हुए को भी पकड़ लेती है।

शाकिनीभिर्गृही यस्ताभि: पाप वशान्नर:,
आत्मानं सन जानति पूत्कारोति न जल्पति ॥ ८५ ॥

जो पुरूष अपने किसी पाप के वश से शाकिनी से पकड़ा गया हो वह अपने आपको नहीं पहचानता है और न बात करता है केवल जोर जोर से चिल्लाया करता है।

भक्षितोथ हतो वा हमिति वूते सदैव,
स पुं स्त्री रूप मिव स्वांगे वेदनास्ति न रोदति ॥ ८६ ॥

बाष्पांबु वहतो नेत्रे भीति द्वारं निरीक्ष्यते,
नेक्षते मंत्रिणो वक्त्रं प्रक्षते गगनं मुंहु: ॥ ८७ ॥

यह सदा यही कहा करता है कि मुझे खा लिया, मैं मरा आदि उसके शरीर में पुरूष अथवा स्त्री रूप के समान भी कष्ट और वेदना रहती है किन्तु उससमय वह नहीं रोता है।
उसके मुंह से भाप और आँखो से आँसू बहते रहते हैं। वह डरा हुआ द्वार की तरफ देखता है यह मंत्री के मुख की तरफ नहीं देखता है और बार-बार आकाश की तरफ देखता है।

जप मणि रूद्ध खांतोरेफांतो रेफ कारेण विंदुना सांतः,
प्रणवादि फट् विरामो विज्ञयो मूल मंत्रो सौ ॥ ८८ ॥

जप की मणि पर आदि से प्रणव (ॐ) फिर सांत रेफ कारेण बिन्दुना (हां) फिर खांतो बीज (ग्रां) फिर सांत(हं) उकार और बिन्दु सहित अर्थात् हुं और अंत में फट् को विराम वाला मूल मंत्र जाना जाता है।

ॐ हां ग्रां हुं फट्

प्रेतदीनेप्रेत गृहे जप्ते नायुत मनेन निशि पूर्वं,
शाकिन्योदनिंग्रह वश्याकर्षं बुधः कुर्यात् ॥ ८९ ॥

रात में भूत के दिन (मंगलवार) को भूत के घर में (श्मशान में) दस हजार जप करे, पंडित पुरुष इस मंत्र से शाकिनी आदि ग्रहों का निग्रह वशीकरण और आकर्षण करता है।

अत्राटिते च मुशले रोदति रक्षा कृतेपि संघर्षः,
मुंचति पात्रं क्षिप्रं मालाद्या मूल मंत्रेण ॥ ९० ॥

फिर यह ग्रह रक्षा करने पर भी मशूल के मारने जैसा रोता है और माला मंत्र के जपने से शीघ्र छोड़ देता है।

ॐ हां ग्रां हुं फटिति प्रजप्त शव बीज वाजिगंधांभ्यां
अत्राटित मति दुष्ट जहती क्षणिकाः क्षणात् साध्यं ॥ ९१ ॥

इस मंत्र से जपे हुए जो और असगंध को पात्र के ऊपर फेंकने से अत्यंत दुष्ट इक्षणिका तुरन्त ही साध्य को छोड़ देती है।

ॐ णमो भय वदो अरिट्ठोणमिस्साभिस्स अरिट्ठेण बंधेण बंधामि रक्षसाणं भूताणं खेयराणं चोराणं डायाणीणां शाथिणीणं महोर गाणं बध्धाणं सिहाणं गहाणं अणे विजे दुट्ठाः संभवंति तेसिं सव्वेसिं मणं मुहं गइं दिट्ठि सुवोहं जिह्वां बंधेण बंधामि धणु धणु महाधणु महाधणु जः जः जः ठः ठः ठः हां हीं हूं हौं हः ठः ठ : ठः ठः ठः ल ल ल ल ल हुं फट् ॥

तान मुंचति चेन्मंत्री मंत्रयं त्रैर था मुना,
अरिष्टणेमि मंत्रेण तद्विधां छेदयेद्बुधः ॥ ९१ ॥

पंडित मंत्री मंत्र और यंत्र से उस ग्रहों को छुडाना चाहे तो इस अरिष्ट मंत्र से उस विद्या को नष्ट करे।

चंडिका मंत्रित श्वेत सर्षपै र्भाग ताडिता,
प्लवतेया जले क्रूरा साध्वी तत्र निमज्जाति ॥ ९२ ॥

निम्नलिखित चंडिका मंत्र से पढ़े हुए सफेद सरसों के दानों को मारने पर जल में तैरने वाली निर्दय शाकिनी जल में ही डूब जाती है।

ॐ फैं चामुंडै हिलि हिलि विच्चे स्वाहा॥

इति चंडिका मंत्रैः

अपद्यात्यरिष्टणेमि मंत्रेण प्रतिकृति कृते छेदे,
अभिजप्तया खटिकया ग्रह भूत पिशाच शाकिन्यः ॥ ९३ ॥

अरिष्टणेमि मंत्र को खडिया पर जपकर तस्वीर में या पुतले में छेद करने से ग्रह भूत पिशाच शाकिनीया दूर हो जाते हैं।

अष्टौलघु पाषाणान दिशा सुपरिजप्प निक्षेपेतेन,
चौरारि रौद्र जीवानन भयं सं जायते नान्यस्मिन ॥ ९४ ॥

इस मंत्र को आठ छोटे पत्थक के कंकरों पर पढकर आठों दिशाओं में फेंकने से चोर शत्रु और भयंकर जीव तथा दूसरों से भी भय नहीं होता है।

भय समाकुला डाकिनी सा
प्रलापयेत तं मुक्ता कृत रोदना ॥ ९५ ॥

तब भय से व्याकुल वह शाकिनी जोर से रोती हुई उसको छोड़कर बडबडा कर रोती है।

अद्यः पिठेड यंत्रस्तथो दरबलस्य समर्पितं,
मध्ये मुशल युक्तेन मूल मंत्रेण चार्पयेत् ॥ ९६ ॥

निम्नलिखित अद्यः पिछेड यंत्र को अपने पास रखकर उसके बीच में मूशल युक्त नाम को मूल मंत्र में लगा देवे।

भस्त जप्तैः कचै रज्वा कृतायतं प्रताडयेत्,
वधीयादथवा दिश्य शाकिनी भूरि रोदिती ॥ ९७ ॥

फिर यंत्र को मरी हुयी खाल पर मंत्र को जपकर उस खाल के बालों की रस्सी बनावे। उस रस्सी से पीटने या बांधने से शाकिनी बहुत रोती है।

अद्य: पिछेड यंत्र

नाम झौंकार मध्ये वहि रपि वलयं षोडश स्वरित्तकानां,
आग्नेयं गेह मुपन्न व शिखिमथ तद्वेष्टितं त्रिकालाभि: ॥ ९८ ॥

दद्याद्वाह्ये चत्वार्ष्यं अमरपुर पुराण्यं अतरालस्थ मंत्राण्ये,
एतद्यंत्रं सुतंत्रे लिंखिता प हरेतशाकिनीभ्य सुभीतिं ॥ ९९ ॥

झौं के बीच में नाम को लिखकर, उसके बाहर चारों तरफ सोलह स्वरिस्तक बीज लिखे। उसके बाहर अग्नि मंडल बनाकर तीन बार १६ कलाओं (स्वरों) से वेष्टित करे उसके बाहर पृथ्वी मंडल में चार अमरपुर में अतंराल निम्नलिखित मंत्र लिखे। इस यंत्र को विधिपूर्वक लिखा जाने से शाकिनी से भय नहीं होने देता है।

मंत्रोद्धार

ॐ वज्र धरे बंध-बंध वज्र पाशेन सर्व दुष्ट विघ्न विनाशकानां ॐ हूं क्षूं योगिनी देव दत्तं रक्ष रक्ष स्वाहा ॥ पूर्व दिशा में
ॐ अमृत धरे धर-धर विशुद्धे ॐ हूं क्षूं योगिनी देवदत्तं रक्ष-रक्ष स्वाहा ॥
दक्षिण दिशा में
ॐ अमृत धरे डाकिनी गर्भ संरक्षणी आकर्षणी ॐ हूं क्षूं फट् योगिनी देवदत्तं रक्ष रक्ष स्वाहा ॥ पश्चिमस्यां दिशि
ॐ रू रू वले ह्रां ह्रीं हूं ह्रौं ह्र: क्षां क्षीं क्षूं क्षौं क्ष: सर्व योगिनी देवदत्तं रक्ष रक्ष स्वाहा ॥ उत्तरस्यां दिशि

(इसका यंत्र शांति विधान में ४५ पृष्ठ पर है।)

नस्यान्नश्यति शाकिन्यो हिंग्वरिष्ट फल त्वचो:,
पिपल युक्तयो: क्षिप्रं रुदंत्यो भय विह्वला : ॥ १०० ॥

हिंगु वरिष्ट (हींग रीठा) के फल और छाल तथा पीपल की बनाई हुयी नस्य को सूँघने से शाकिन्या क्षण मात्र में ही भय से विहवल होकर रोती हुई भागती है।

भूमि कदम्ब मूले हिंगु युत नाशिकांतर निविष्टे,
आर्त्तखं कुंर्वत्य: शाकिन्यो यांति तं मुक्ता: ॥ १०१ ॥

भूमि कदम्ब वृक्ष की जड़ और हींग को मिलाकर नाक के अंदर रखने से शाकिन्या दुख के शब्द बोलती हुयी उसको छोड़कर चली जाती है।

कृष्ण शुनकस्य खुरं कृष्ण तिलं देय मसित गोदधा,
तत धृत तैलेन नस्यात् ग्रहाः प्रणस्यंति दिव्यादिव्याः ॥ १०२ ॥

काले कुत्ते के नाखून और काले तिल को काली गाय के दही घी और तेल में मिलाकर सूँघने से दिव्य और अदिव्य ग्रह नष्ट हो जाते हैं।

करि करभ तुरंग नर खर गव्यज मूत्रेन सप्त दिनं भाव्यं,
मधु वृक्ष मूल नश्यं करोति राक्षस पिशाच भूतावेशं ॥ १०३ ॥

करि (हाथी) करभ (ऊंट) तुरंग (घोड़ा) मनुष्य गधा गाय और अज (बकरी) के मूत्र की मधुवृत्त (महुवे) के मूल जड़ को भावित करके सुँघाने से राक्षस, पिशाच और भूत ग्रहों का आवेश होता है, जगाये जाते हैं।

शूकतुंडी खर कर्णिका मधु भराः भारं हि निंव त्वचा,
चक्रांकी गिरिकर्णिका त्रि कटुकं कर्कोटिका तुंबिका ॥ १०४ ॥
दंडी वारुणिका जया द्वितीयकं घोषेश्वरी मुष्टिकावैः,
पिष्टा सम भाग तश्च मिलिता विघ्नंति सर्व ग्रहान् ॥ १०५ ॥

शुकतुंडी (पीले हंग का हिंगलू), खर कर्णिका (गंगेरन की जड़ी खरेटी), खर (देवताड़), कर्णिका (अरणी), महुवा, सर्प कांचली, नीम की छाल, चक्रांकी (हंसपदी-कंघी) , गिरिकर्णिका (कोयलबेल), त्रिकटुक (सोंठ मिरच पीपल), कर्कोटिका (बांकरकडा), तुंबिका (तुंबी), दंडी (दबना बूटी दौना), वारुणिका (मदिरा), जया द्वितीयक (दोनों जया-जया विजया दोनों हरडे), घोषेश्वरी (काकडासिंगी) मुष्टिका, (मोख) इन सबको बराबर बराबर मिलाकर पिसवाकर नस्य पान लेप आदि सेवन करने से सब ग्रह नष्ट होते हैं।

खर तुरंगोष्ट्रा जद्विप गोनर मूत्रं तथा ढक प्रमितं,
तत्पान मौषधानां चर्णतुर्यां ठकां बु स्यात् ॥ १०६ ॥

कग्वीराष्टक तैल प्रस्थं क्षिप्त्वात्र पार्च्चयेत्,
तस्य नश्यंति नश्यतो ग्रह भूता पस्मार शाकिन्यः ॥ १०७ ॥

गधा, घोड़ा, ऊँट, अज (बकरा), द्विप (हाथी), गाय, मनुष्य के मूत्र को एक आठक (८ सेर) के बरतन में भरकर औषधियों के चूर्ण को उस आठक में मिलाकर तैयार करें। फिर उसमें एक प्रस्थ (दो सेर) के बराबर माल कांगनी आदि ८ औषधि के तेल को डालकर तेल सिद्ध करें। उसकी नस्य लेने से सूँघने से भूत अपस्मार ग्रह शाकिनी आदि नष्ट होजाते हैं।

राज्युग्र फणि निर्मोक हिंगु निंब छदैः कृतः स्यात्,
सिद्धोऽयं महाधूपः शाकिन्याः सा प्रतिक्रिया ॥१०८॥

राई, सरसौं, सर्प कांचली, हींग, नीम की छाल या पत्तों की बनायी हुयी सिद्ध महाधूप शाकिनी को भगा देती है।

मूलेन हय गंधाया हिंगु युक्तेन कल्पिते लेपने,
ग्रस्त गात्रेषु शाकिनी तं विमुंचति ॥१०९॥

असगंध की जड़ और हींग के कल्क का शरीर पर लेप करने से शाकिनी उसको छोड़ देती है।

पिचुमार निंब पत्रारिष्टेंगुफल समुत्थ निर्यासः,
तेन प्रलिप्त पुरुषं क्षिप्रं मुंचंति शाकिन्याः ॥११०॥

पिचु (कपास), मार , धतूरा, नीम के पत्ते, अरिष्ट (अरीन), इंगुफल (हिंगोट), गोंद (निर्यास) का पुरुष को लेप करने से शाकिनी उसको शीघ्र छोड़ देती है।

नागारि मार्तंड फल द्विकन्या हिंगुग्र गंधा हरिताल कुष्टैः,
बृषाज मूत्रेण विमर्दितं तांगं भूतादयस्तं परिहापयांति ॥१११॥

नाग (नाग केशर), अरि (कत्थे का पत्ता), नागारि (हरि भेद-दुर्गंध खैर), मार्तंड फल (आक केबीज), दोनों कन्या घृतकुमारी और बडी इलायची), हींग, उग्र गंधा (वच या लहसुन) हरताल कुंठ वृषाज मूत्र (बेल और बकरी का मूत्र) को मिलाकर शरीर पर लेप करने से भूत आदि उसको छोड़ देते हैं।

इति शाकिनी निग्रह

अथ अपस्मारनाशक योग

व्योष त्रि गंधक वचा मार्क वाब्द रजः प्रगैः,
उपयुक्तपस्मारं हरे च्च रसायणं ॥११२॥

व्योष (त्रकटुक, सोंठ, मिरच, पीपल), तीनों गंध (वच भांगराऔर अब्द) अर्थात् नागर मोथा के

चूर्ण का प्रयोग प्रातःकाल के समय करने से अपस्मार को दूर करता है तथा यह रसायण है।

ब्राह्म्याः स्वरसै सिद्धं कुष्ट वचाः शंख पुष्पिलका,
गर्भे आज्यं गव्यं पीतं सर्वापस्मार दोष हरं ॥११३॥

ब्राह्मी के स्वरस में सिद्ध की हुयी कूट,वच और संखा होली के गर्भ में गाय के घी के साथ पीने से अपस्मार के सब दोष दूर हो जाते हैं।

शिला यवानि शिग्वास्थि हिंगु त्रयुषणा मयैः,
स्नातपस्मृति हन्न स्यात शैलं वस्तु जले सृतं ॥ ११४ ॥

शिला (कपूर या मेनसिल) यवानि (अजवाइन), सैजना के बीज या सोभाजन के बीज,हींग, सोंठ, मिरच, पीपल, आमय(कूट) को मिलाकर सूँघने से जल में चलने वाला पहाड़ के समान अपस्मार भी नष्ट हो जाता है।

कुष्टाजाजी साग्नि व्योष शिला रामठ द्वयै सिद्धं,
वस्तु शिवां भसितैलं, नस्याद्धन्यादद्य परमारान ॥ ११५ ॥

कुष्ट(कुठ) अजाजी (जीरा), अग्नि (चित्रक), व्योष (सोंठ, मिरच, पीपल), शिला कपूर, रामठ द्वय (हींग और अंकोल), शिवा (हरडे या आँवला) या नीली दोब अडूसा के साथ जल में सिद्ध किया हुआ तेल जंगली अपस्मार तक को नष्ट करता है।

अपहरति वृश्चिकालि मागधिका कुष्ट लवण भार्गीनां,
चूर्णेन कृतं नस्यं क्षणेन सर्वान्न परमारान् ॥ ११६ ॥

वृश्चकालि (बिछवा घास), मागधीका (पीपल), कूट नमक भारंगी के चूर्ण से सब प्रकार के अपस्मार नष्ट हो जाते है।

श्री वासा गरूडैः प्रियंगु वंश त्वक्गोतुविट जुष्टं,
साम्यं पिष्टमजामय मूत्रे छायया शुष्कं ॥ ११७ ॥

कमल (श्री वासा) गरूड़, प्रियंगु फूल, वांस की छाल, ओतु विट बन बिलाव की भिष्टा, जुष्टं को बराबर लेकर बकरी के मूत्र में पीसकर छाया में सुखावे।

तै कृत धूपं सिंहो नाम्ना परमार राक्षस पिशाचान भूत,
ग्रहांश्च सर्वान ज्वरं च चातुर्थि कं हन्यात् ॥ ११८ ॥

यह सिंह नामी धूप है। इसकी धूनी देने से अपस्मार राक्षस, पिशाच, भूतग्रह आदि सब तरह के बुखार तथा चौथे दिन आने वाला चौथिया ज्वर नाश को प्राप्त होता है।

सौभाग्य विहीना या पुष्प विहिनाच्चया भवेन्नारी,
भूतार्ता विष्टा या तासां वा यं हिते हितो धूपः ॥ ११९ ॥

जो स्त्री सौभाग्य से रहित हो या जिसको मासिक धर्म नहीं होता हो अथवा जो भूतों से पीड़ित हो उन सबको ही यह धूप अत्यंत लाभकारी होती है।

एतत धूप विधानं मंत्री मंत्रं जपन्निमं कुर्यात्,
मंत्रोत्तरं वितर वितरये स्वाहेइति प्रणवर्यूं पूर्वा: ॥ १२० ॥

मंत्री इस धूप के विधान को इस मंत्र को जपता हुआ करे-

ॐ र्यूं वितरये स्वाहा॥

'' इति पस्मार विधानं ''

अथ उन्माद लक्षणं

वहि:कृतं प्रलापश्च विस्मृतं सर्ववस्तुषु,
हंति प्रधावति सर्वोन्माद वातस्य लक्षणं ॥ १२१ ॥

बाहर व्यर्थ ही बकवाद करना सब बातों को भूल जाना, मारना, दौडना यह सब उन्माद वात(वायु से होने वाले पागलपन) के लक्षण है।

मधुक युत मागधीकृत खर्जूर सतावरी,
कसेरूणां स विदारीनां कल्क: सर्वमुन्मादमपहरति ॥ १२२ ॥

मधुक (मुलहटी या महुआ) सहित मागधी (पीपल), खजूर (छुवारा), सतावरी, कसेरू और विदारी कंद के कल्क सब प्रकार के उन्माद को दूर करता है।

पुंड्रेक्षु कांड जो रेणु: स यष्ट स्तल्य शर्करः,
न्यस्तो धाण पुटे सद्य: सर्वोन्माद विनाशनः ॥ १२३ ॥

बराबर की शक्कर पौंड्रक (काला गन्ना, इक्षु = गन्ना) को कोल्हू में पेलकर निकली हुई भूसी में यष्टि (मुलहटी) और बराबर की शक्कर मिलाकर नाक में रखने से अर्थात् सूँघने से सब प्रकार के उन्माद नष्ट होते है।

रेणु: क्षीरेण संयुक्त कर्णिकार प्रसूनजः,
उन्माद वाधितैनस्य क्रियया भि हितोहित: ॥ १२४ ॥

कर्णिकार (कनेर) के फूलों की रेणु: (धूल) को दूध में मिलाकर उन्माद से पीडित प्राणी को सुंघाने से लाभ ही लाभ होता है।

नाशयति चक्र तैलं हेम शिफा कल्क चूर्ण संमिश्रं,
भूमध्यौ विनिखातं समस्त मुन्मादमालेपात: ॥ १२५ ॥

चक्र (तगर) के तेल को हेम (नाग केशर) की जटा के कल्क और चूर्ण में मिलाकर पृथ्वी में गाड़ दे पीछे उस का लेप करने से सब उन्माद नष्ट हो जाता है।

साधितं षोडश गुणे कुष्मांड स्वरसे घृतं पष्टी,
कल्पं प्रगे पीत मुन्मादापस्मृती जयेत् ॥ १२६ ॥

सोलह गुण (कुष्मांड) के पेठा के स्वरस में सिद्ध करके रखी हुयी मुलहटी के कल्क को प्रगे (प्रात:काल) पीने से उन्माद और विस्मृति(भूलजाना) दोनों दूर हो होते हैं।

रूस्यो पणत शिग्रोग्रा लोद्रभार्गा द्विहिंगुभि:,
उन्मादाय स्मृति हरे स्यातामंजने नावने ॥ १२७ ॥

रूस्य,उपणत, शिग्रो(सहजना), उग्रा (सरसो-अजवाइन),लौंग, भांरगी और दोनों हींग के अंजन करने और सूँघने से उन्माद विस्मृति(भूलजाना) दोनों दूर होते हैं।

यष्टि शिरष कुष्ठोग्रा रसोन कुटिलै हिंतं:,
आजायु पिष्टैरून्मादापस्मृत्योनावनां जने ॥ १२८ ॥

यष्टि (मुलहटी), सिरस कूट, उग्रा (अजवाइन), लहसुन और कुटिल (तगर) को बकरी के मूत्र में पीसकर अंजन करने और सूँघने से उन्माद विस्मृति दूर होती है।

आज्ञासी द्ग्रह निग्रहैक विषयां यो मंत्र वित् प्रक्रियां,
मुक्तां मंत्र वरौषध प्रगटिनी मेनां यथा मंत्रिणां ॥ १२९ ॥

तत् दृष्टे एव भयांकुलो ग्रहगण स्तिष्टेन्न चेत्कोपिकिं,
शक्य: स्तोतुमयं विधि विरचित: सर्वंकषान्मंत्रिणां ॥ १३० ॥

ग्रहों को नष्ट करने वाली जिस प्रक्रिया का वर्णन मंत्र शास्त्र के विद्वानों ने किया है उसको मैने मंत्रो को छोडकर केवल औषधि रूप में ही वर्णन किया है। इसको जाननेवाले मंत्री को देखते ही ग्रह भय से व्याकुल होकर कोई भी नहीं ठहरता है ऐसी यह विधि सब प्रकार से मंत्रियों से प्रशंसा की जाने योग्य है।

इतिग्रह विधानं अष्टं समुदेशं

नवम समुद्देश

॥ ॐ नमः श्री पार्श्वनाथाय नमः ॥

अथ तद्गारूडं वक्ष्ये प्राणत्राणाय देहिनां,
यद्विज्ञानन्नलं हंतुं सद्यः प्राण हरं गरं ॥ १ ॥

अब उस गरूडी विद्या का वर्णन किया जायेगा जिसको जानने से तुरन्त प्राणान्त करने वाला विष भी नष्ट जा सकता है।

प्रागेलक्षिणानि नागानां निगद्याथ यथाक्रमं,
संग्रहं फणि दष्टांनामु पायैर्दश भि ब्रुंवे ॥ २ ॥

पहले नागों के लक्षणों का वर्णन करके फिर क्रम से सर्प से डसे हुये संग्रह के दस उपायों का वर्णन करूँगा।

शेषो वासुकि तक्षकः कर्क्कोट सरोज महापद्माः,
अथ शंख पाल कुलिका वष्टावेते महानागाः ॥ ३ ॥

अनंत वासुकि तक्षक कर्क्कोटक सरोज (पद्म) महा पद्म शंखपाल कुलिक यह नागों के आठ भेद होते हैं।

क्षत्रिय कुल संभूतौ वासुकि शंखौधरा विषौ रक्तौ,
प्रसवा मोदि शरीरौ ज्ञेयौ मध्यान्हे संचरणौ ॥ ४ ॥

वासुकि और शंखपाल क्षत्रिय कुल में उत्पन्न होने वाले पृथ्वी विषवाले तथा लाल रंग के होते हैं। यह उत्पन्न होते ही सुगंधित शरीर वाले तथा दोपहर में चलने वाले होते हैं।

कर्क्कोटक पद्माव पि शुद्रो कृष्णो च वारूणिय गरौ,
फल गुड तनौ गंधो निशि संचरणौ प्रकुर्वंतौ ॥ ५ ॥

कर्कोटक और पद्मनाग शुद्र काले तथा जलविष वाले होते हैं। कर्क्कोटक के शरीर में फल तथा पदमनाग के शरीर में गुड की जैसी सुगंध आती है। यह रात्रि में निकल कर चलते हैं।

विप्रावनंत कुलिकौ वह्नि गरौ चंद्रकांत शंकाशौ,
चरू गंध सुगंधौ तौ वेद्यौ पूर्वान्ह संचरणौ ॥ ६ ॥

अनंत और कुलिक नाग ब्राह्मण वंश वाले अग्नि विषवाले होते हैं और चंद्रमा की कान्ति के समान श्वेत होते हैं। उनके शरीर में नैवेद्य की सुगंध आती है और यह दिन चढ़े पर दोपहर से पहले पहल तक ही गमन करते हैं।

तक्षक महासरौजौ वेश्यौ पीतौ मरूद् गरलौ,
हिंग समदेह गंधौ जानिह्य परान्हे संचरणौ ॥ ७ ॥

तक्षक और महासरोज (महापद्म) नाग वैश्यकुल वाले पीले रंग वाले और वायु विष वाले होते हैं। उनके शरीर में हींग की जैसी गंध आती है और यह दोपहर ढ़लने पर सायंकाल के पहले पहले तक ही चलते हैं।

दृग्मस्तक स्थ विंदुः स्त ध्वाक्षः शेषवंश संभूतः
वासुकि कुलजः स्वस्तिक युक्त शिरावाम पार्श्वेक्षी ॥ ८ ॥

शेषवंश में पैदा हुए नाग के नेत्र और मस्तक पर बिंदु होती है और उसके नेत्र जलते हुए से लाल होते हैं। वासुकि के कुल में उत्पन्न हुए नाग की आंख के बाईं तरफ सिर के ऊपर स्वस्तिक का चिन्ह होता है।

तक्षस्य बिंदु पंचक संयुत मूर्द्धांति शीघ्र परिव्यटनः,
वंशोद्भवो वगम्य स्वदक्षिण्य यांग विप्रेक्षी ॥ ९ ॥

तक्षक सर्प के सिर पर पांच बिन्दु होती है- वह बड़ी जल्दी-जल्दी अपना सिर हिलाया करता है। इसप्रकार सर्प के वंश की उत्पत्ति पृथ्वी पर जानो वह अपने दाहिने अंग की तरफ गमन करता है।

योभुजग एक रेखा लांछित कंठं त्रिशूलयुत मूर्द्धा,
कक्कोट वंश जो द्वेर्द्धकित वृक्षाः सदा प्यटतः ॥ १० ॥

जिस नाग के कंठ पर एक रेखा तथा मस्तक पर त्रिशूल हो और टेढ़े मेढ़े वृक्षों पर घूमने वाला हो उसे कर्कोट वंश का नाग समझना चाहिये।

आत्मीयं उत्तमांगं चिन्हतमं भो रूहेण यो भुजगः,
विभाणः सचल दत्पुच्छं सो भोज वंश भवः ॥ ११ ॥

जो नाग अपने सिर पर कमल का चिन्ह लिये हुए अपनी पूँछ उठाते हुए चलता है वह अंभोज वंश में पैदा हुआ होता है।

सततं निमिष द्वैषा मय युत: कंठो महाब्ज कुल जात:,
इंदिवर कृत हसत स्व मस्त को मंत्रीभि प्रोक्त: ॥ १२ ॥

महाअब्ज (महापद्म) कुल में उत्पन्न हुए नाग का कंठ निरंतर क्षण-क्षण में बदलने वाली रेखाओं से युक्त होता है और उसका मस्तक कमल के बनाये हुये हाथ के समान मंत्र शास्त्रियों द्वारा कहा गया है।

शंखस्य शंख लांछित मूर्द्धा पश्यन्मुहुर्मुहुर्वश्यं:,
कुलिका स्यान्वय जात: कं प्रशिरा: सर्वभुजग चेष्टावान ॥ १३ ॥

शंख नाग अपने शंख के चिन्ह वाले सिर को बार-बार देखता है। कुलिक वंश वाले नाग के सिर हिलता है और वह सब सर्पों से अधिक सावधान चेष्टावाला होता है।

सर्पा: फणि भृन्मंडलि राजिल भेदां स्त्रिधामता,
स्तेमी कम शो मारुत पितश्लेष्मात्मानो विनिर्द्दिष्टां ॥ १४ ॥

सर्प फिर भी तीन प्रकार के होते हैं।-फणि भृत मंडली और राजिल। इनमें फणिभृतवायु प्रधान मंडली पित्त प्रधान और राजिल कफ प्रधान होता है।

छत्र स्वस्तिक लांगल चक्रांकुश धारिण: फणवंत:,
शीघ्र गतयो भुजंगा एते दर्वीकरा: प्रोक्ता: ॥ १५ ॥

जो नाग छत्र स्वस्तिक लांगल (हल) चक्र और अंकुश को धारण करने वाले बडे फण वाले और शीघ्र चलने वाले हो वह दर्वीकर अर्थात् फणि भृत सर्प कहे जाते हैं।

दीर्घां अशिघ्र गमना: सर्पाये मंडलैश्चिता विविधै:तै,
गरूड शास्त्रज्ञै: मंजडिन इति प्रकीर्त्यंते ॥ १६ ॥

जो नाग बहुत बडे धीरे-धीरे चलने वाले और अनेक प्रकार के मंडलो से चिते हुए हो उनको गारुड शास्त्र के विद्वानो ने मंडली नाग कहा है।

वपुषि तिरश्चीरुद्धां अपि राजी विंभ्रन्नाति चित्रा सु,
स्निग्धां गात्रे स्यु स्ते विबुधै राजिला ज्ञेया: ॥ १७ ॥

जिन नागों के शरीर में टेढ़ी और ऊँची रेखाएँ (लाइन) पड़ी होती हों, जो बहुत अधिक चित्र विचित्र रंगवाले हो और बहुत चिकने होते हैं उनको पंडितों ने राजिल कहा है।

दोषश्चांकश्चोक्तोयो यो दर्वीकरादि भुंजगानां,
मिश्रेण तेनतेन व्यंतरमुरगं विजानीयात् ॥ १८ ॥

इसप्रकार दर्वीकर आदि नागों के दोष और चिन्ह हैं। जिनमें यह लक्षण मिले हुए हों उनको व्यंतर नाग जानना चाहिये।

सर्पा गर्भं मासेष्वाषाढ़ादेषु त्रिषु क्रमाल्लब्ध्वा,
जनयंत्यंडानि बहून्यथा त्रिमासेषुं कार्तिका दयेषुं ॥ १९ ॥

सर्पिनियों के आषाढ़ आदि के महीनों में गर्भ हुआ करता है। इसके पश्चात् वह कार्तिक आदि तीन महीनों में बहुत से अंडे देती है।

स्फुटितानि तानि सत्यं ध तेषु स्त्रीपुंनपुंसकांडानि,
शिष्टानिवर्जयित्वा त्रीण्यथं जीवंति तान्येव ॥ २० ॥

उन अंडों के फूटने पर उनमें से स्त्री-पुरुष तथा नपुंसक बच्चे होते हैं किन्तु उनमें से बाकियों को छोड़कर केवल तीन ही जिन्दा रहते हैं।

सप्ताहर्वासितो हि: स्यादुन्मीलित विलोचन:,
आत्म प्रबोधनं तस्य द्वा दशा हात प्रजायते ॥ २१ ॥

नाग के बच्चे की सात दिन पड़े रहने पर आंखें खुलती हैं और उनको अपने आपका ज्ञान बारहवें दिन होता है।

विशंतौ वासरेस्व स्थातीतेषु रदना अहे:,
प्रादुर्भवंति द्वात्रिंशत्संख्या: सूर्यावलोकनात् ॥ २२ ॥

नाग के बच्चे की बीस दिन में सूर्य को देखने से बत्तीस दांत निकलते हैं।

दंतेषु द्वात्रिंशत्स विषा दष्ट्रांश्चतुस्र आख्यातो,
द्वे भुजगंस्य करालीं मकरी च दक्षिणे पार्श्वे ॥ २३ ॥

नाग के उन बत्तीस दांतो में विष वाले चार ही दांत होते हैं- दाहिनी तरफ के दो दांत करालीं और मकरी नाम से पुकारे जाते हैं।

अन्यत्र काल रात्रि याम दूती चा ख्याता पार्श्वे,
अध उर्द्ध मध इति तासां विद्यात् क्रमश: ॥ २४ ॥

बाईं ओर के दांतो के नाम काल रात्रि और यम दूती है। यह दांत क्रम से ऊपर और नीचे होते हैं।

तामसो नुधमश्च स्यात् कार्तिके मासि जातवान्,
बलवान मार्गशीर्षे स्यात् पोषे दीर्घो विषोल्वणः ॥ २५ ॥

कार्तिक में पैदा हुआ नाग तमोगुण वाला और सुस्त होता है मार्गशीर्ष मास में पैदा हुआ नाग बलवान होता है और पोष में पैदा हुआ नाग बड़ा तथा तेज विषवाला होता है।

पुरूषस्य भुजंगस्य वासरे स्यान्महाबलः,
स्त्रियो निशायां संध्यायां बलियानस्या नपुंसकः ॥ २६ ॥

पुरूष नागों की बलि का समय दिन है स्त्री की बलि का समय रात तथा नपुंसक नाग की बलि का समय सायंकाल होता है।

बलं बालस्य पूर्वान्हे मध्यान्हे मध्य मस्यतु,
अपरान्हे तु वृद्धं स्यात्य वनाशिनां ॥ २७ ॥

बालक नाग की बलि का समय दोपहर से पहले युवा की मध्यान्ह में और वृद्धनाग की बलि दोपहर ढ़लने पर दी जाती है। वृद्ध नाग बहुत हानि करने वाला होता है।

संग्रह के दस उपाय

दूताहि स्थान तारादि नागोशोदय सूचकां,
विषाणि दंशे मर्माणि वेगो वस्य वेष्टितं ॥ २८ ॥

दूत-सर्प के स्थान-तारा आदि नागों के निकलने का समय-सूचक-शकुन-नाग के विष काटने के स्थान-मर्म-सर्प विष का वेग और अवस्था

दशैते संग्रहोपाया स्ते स्तत्र क्रमशोमताः,
परोक्ष सत्य विषयां पंचपंच प्रत्यक्ष गोचराः ॥ २९ ॥

इस संग्रह के दस उपाय हैं इनमें से पांच परोक्ष को जानने वाले और पांच प्रत्यक्ष को जानने वाले होते हैं।

अशुभ दूत

मुक्तक च रिक्त करः भिन्न कुले षंठा
दंड धनु रस्त्र धर मुंडित शिर स्काः,

व्याधि युतभीत गत कर्ण कर नासा
स्तेस्युर हिभक्षित नृणाम शुभ इताः ॥ ३० ॥

खुले हुये बाल-खाली हाथ वाले- दूसरे कुलवाले-नपुंसक-दंड धनुष या अस्त्र धारण करने वाले-मुंडे हुवे सिरवाले-रोगी-डरे हुए-बूचे (जिसके कान कट गये हो) लूले वन कटे आदमी सर्प से काटे हुए के अशुभ दूत होते हैं।

शुभ दूत

शुभ तर वस्त्र कृतकाय परिशोभा
दर्भा सित पुष्प फल पत्र धृत हस्ताः,
एक कुलरूप परिपूर्ण तर गात्रा
भोगि गरलार्द्दितस्य शुभदूताः ॥ ३१ ॥

अत्यंत उज्जवल वस्त्रों से अपने शरीर को सजाये हुए दाभ वाले-फूल फल या पत्र(पत्तों) को हाथ में धारण करने वाले-जिनका कुल और शरीर का रूप सर्प से काटे हुये प्राणी से अत्यंत मिलता हुआ हो ऐसे पुरुष सर्प विष से पीड़ित प्राणी के शुभ दूत होते है।

सम विषमाक्षर भाषिणि दूते शशि दिनकरे च वहमाने,
दष्टस्य जीवितव्यं तद्विपरीते मृतिं विंधात् ॥ ३२ ॥

यदि सर्प से काटे जाने की खबर लाने वाला दूत चन्द्र स्वर में सम अक्षर कहे तो समझना चाहिये कि सर्प काटा हुआ प्राणी जीवित आएगा। यदि दूत सूर्य स्वर में विषम अक्षर कहे तो मृत्यु समझनी चाहिये।

दूत मुखो स्थित वर्णान द्विगुणी कृत्य त्रिभिर्हरेद्भाग,
एक द्विकेन जिवति दष्टो मियतेथ शून्येन ॥ ३३ ॥

बुद्धिमान पुरुष दूत के मुख से निकले हुए अक्षरों को गिनकर और फिर दुगुना करके तीन भाग का दे। यदि एक या दो शेष बचे तो जीवित तथा शून्य बचने पर मृत्यु को प्राप्त होने वाला समझे।

चत्वारो वर्गानां मरूदग्नीं द्रां बुधो तथा वर्णाः,
अनुनाशि कानन स्था स्वरा स्तुशकां बु संभूताः ॥ ३४ ॥

चारो वर्गों में से वायु, अग्नि, इन्द्र और जल यानि वाले वर्ण होते हैं। अनुनासिक इन्द्र योनि वाले और स्वर जल योनि वाले होते हैं।

प्रष्टुर्वाक्य स्यादौ वरूण: शस्त: शतकृतुर्मध्य:,
वाटवग्नीं दुष्टावती दुष्टानि नपुंसकानि स्यु: ॥ ३५ ॥

चंद्रामार्ग गतो वायु: इतं स्तन्मुख मागत:,
तदा जानीहि दष्टस्य जीवितं मृतिरन्यथा ॥ ३६ ॥

पूछने वाले के वाक्य के आदि में जल अक्षर मध्य में इन्द्र अक्षर अच्छे होते हैं। वायु अक्षर औरअग्नि अक्षर तथा नपुंसक अक्षर अत्यंत ही दोष युक्त होते हैं। यदि वायु चन्द्र मार्ग में चलते रहते दूत आया हो तो काटे हुए को बच जाने वाला जाने यदि इसके विपरीत हो तो उसको मरा हुआ जाने।

अग्र गते यदि दूते नाडी वामात्मनो वहति त्राणं,
प्रष्टे गते दक्षिणिका दष्टो जीवि दितिज्ञेयं: ॥ ३७ ॥

यदि दूत के आगे आने पर अपना बायाँ स्वर अर्थात् चन्द्र स्वर चलता हो तो उसकी रक्षा हो जायेगी या दूत के पीछे से आने पर भी बाईं नाडी(स्वर) चलता हो तो भी उसको बच जाने वाला जाने।

पूर्णाध्वस्ते दूते फणि दष्टो निश्चटेन संग्राह:,
रिक्त पथि प्रति वर्तिनि मुच्यते नात्र संदेह: ॥ ३८ ॥

दूत के आने के समय पूर्णा के खतम होने पर साँप से डसे हुए की अवश्य चिकित्सा करनी चाहिये और यदि दूत रिक्त अर्थात् खाली नाड़ी में हो तो पुरूष अवश्य ही बच जाता है। इसमें कोई भी संदेह नहीं है।

पूरिते वक्ति च दूतो वचो ते वा सुसंवृत्ति: स्यात्,
संग्रहोन्यथान्ये तेवं सर्व कार्यें सु योजयेत् ॥ ३९ ॥

यदि दूत पूरित में अच्छी तरह ढ़के हुए शब्द कहे तो सर्प से डसा हुआ पुरूष बच जाएगा अन्यथा नहीं बचेगा ऐसा सब कामों में भी लगा लेवे।

कथयति दूते वार्तां श्वासोतं मंत्रिणश्च संविशति,
जीविति तदा अहि दष्टो मरणं स्यादन्यथा भावे ॥ ४० ॥

मंत्री के श्वास के अतं में यदि दूत बात कहे तो काटा हुआ पुरूष जी जाता है अन्यथा मर जाता है।

अग्नि यमनैशति वति पच्छति दूते भुजंग दष्टस्य,
अंत क नि वास वा स: प्रेत्यासन्नो भवेत् तस्य: ॥ ४१ ॥

यदि दूत अग्नि(पूर्व दक्षिण कोण) यम (दक्षिण) नैऋति (दक्षिण पश्चिम) वायु कोण में हो तो उस सर्प से काटे हुए पुरुष का शीघ्र ही यमपुरी में वास होवे अर्थात् मर जाएगा।

विधि महादिशि दूते स्थित वति दर्वीकरेण दष्ट इति,
विदिशि तु मंडलिना दिग् विदिशोर्मध्ये राजिमता ॥ ४२ ॥

यदि दूत विधि(उत्तर) महादिशा में खड़ा हो तो दर्विकर सर्प से काटा हुआ है। अगर विदिशा में खडा हुआ हो तो मंडली सर्प से डसा हुआ है और अगर दिशा और विदिशाओं के बीच में खडा हुआ होवे तो राजिल सर्प से काटा हुआ है, ऐसा बतलावे

पृष्टायदि वामांघ्रौ स्थितं स्त्रिया दष्टकं त म व गच्छेत,
अन्यत्र तु पुंसा त द्वितीयंतु नपुसंकेन सर्पेण ॥ ४३ ॥

यदि पूछने वाला बाएँ पैर से खडा हो तो सर्प से डसे हुए पुरुष को नागिन से काटा हुआ बतलावे, यदि दाहिने पैर से खड़ा हुआ हो तो उसे पुरुषनाग से काटा हुआ जाने ,और यदि दूत दोनों पर समान बल देकर खड़ा हुआ हो तो उसे नपुंसक सर्प से काटा हुआ जाने।

दूतस्य मंत्रिणो वा वहेदिला पिंगला द्वयं वा चेत्,
स्त्री पुं नपुंसकैस्तं क्रमेणं दष्टं विजानीयात् ॥ ४४ ॥

अथवा दूत या मंत्री की इडा नाडी (चन्द्र स्वर) चलता हो तो स्त्रीनाग और पिंगला नाडी (सूर्य स्वर) चलता हो तो पुरुष नाग अथवा यदि दोनों नाडियाँ चलती हो तो उसको नपुंसक नाग से काटा हुआ जाने।

वामो चरणात पुरतोहि दक्षिणचरणं निधाय यदि दूतः,
कथयति वार्तां दष्टं पुरुषं विद्यात्स जीवति च ॥ ४५ ॥

यदि दूत बाँये चरण के आगे दाहिना पैर रखकर बात कहे तो काटे हुए को पुरुष और जीता हुआ जाने।

अथ दक्षिणस्य पूरतो वामं चरणं निधाय यदि दूतः,
कथयति वार्तां दष्टा स्त्री स्याज्जीवे च साबनिता ॥ ४६ ॥

यदि दूत दाहिने पैर के आगे बाँया पैर को रखकर बात कहे तो काटी हुयी को स्त्री और जीती हुयी जाने।

दूता गति बेलायां तस्मिन् पार्श्वेनभ स्वतो बाहूः,
तस्मात पार्श्वेस्मिन दंशं मंत्री विजानीयात् ॥ ४७ ॥

दूत आने के समय यदि उसके हाथ ऊपर को होकर अपनी कोष को छू रहे हों तो उससे मंत्री उसकी कोंख में काटा हुआ जाने।

यं स्पर्शति स्वकीये दूतः स्वांगो दंशं करेण च पक्षाणः,
तत्रो देशो दंशो हि ज्ञातव्यः परोक्ष दष्टस्य ॥ ४८ ॥

दूत अपने हाथ से अपने जिस किसी अंग को छूता है उसी अंग में उस परोक्ष के काटे हुए को सर्प से काटा हुवा जाने।

आगत्य तूर्णं पादं विपरितं चेत स्पृशन्तथा गानि दूतः,
कथयति वार्तां वदतत्ते नाहि दष्टं तं ॥ ४९ ॥

यदि दूत शीघ्रता से आकर उलटे तौर से और अपने अंगों को छूता हुआ बात कहे तो उसे सर्प से डसा हुआ जाने।

इति दूत लक्षणं

नाग के स्थान

जीर्ण देव कुल वृक्ष कोटरे वंश मूल मृतकालये हयः,
ये वसंति विविधा हि गह्वरे ते भवंति जन मृत्यु कारणं ॥ ५० ॥

जो नाग पुराने देव मंदिर वृक्ष की खोखल ,बांस के पेड़ की जड़ और श्मशान में रहते हैं उनके काटने से पुरुष मर जाता है।

सिंधु संगतिषु चैत्य पादपे द्वीप कूप कलि शेलु शिग्रु षु
वैत्रि पथ गहने चतुष्पथेः व्यापदे भवति पन्नगो दशत् ॥ ५१ ॥

नदियों के संगम पर मंदिर के वृक्ष में द्वीप में कुवे में कलि अर्थात् बहेड़े के पेड़ में शेलु(लिसोडे. के पेड़) में शिग्रु सहजने के पेड़ में बेंत के पेड़ में गहन मार्ग में(तिराहे में) चौराहे में रहने वाले इन दश स्थानों में रहने वाले नागों से काटा हुआ पुरुष मर जाता है।

इति आहि स्थानं

नक्षत्रआदि से जीवन मरण जानना

कृतिका द्रां विशाखा सु त्रिपूर्वा भरणिषु च,
दश्यते यो हिनां जंतु मृत्युं तस्य समादिशेत् ॥ ५२ ॥

कृतिका आर्द्रा विशाखा पूर्वाषाढ़ा पूर्वाभाद्रा पद पूर्वा फाल्गुनी और भरणी इन नक्षत्रों में जिस प्राणी को सर्प ने काटा है उसकी निश्चय से मृत्यु होती है।

भूताऽहि पंचमी षष्टी पक्षांते नवमी तिथौ,
दष्टस्य मरणं प्राहुर्वैनतेय मंतै विदैः ॥ ५३ ॥

भूता (कृष्ण चर्तुदशी) अहि(अष्टमी) पंचमी षष्टी पक्षांत (अमावस्या पूर्णिमा) और नवमी तिथि में डसे हुए का मरण गारूडी विद्या का पंडित अवश्य कहे।

भानु मंगलं मंदानां नरं वारां श कादिषु,
दष्टं सर्पेण जानीयात् यमालय निवाशिनं ॥ ५४ ॥

भानु (सूर्य) मंगल मंद(शनिश्चर) और इन दिनो के अंश में सर्प से डसे हुए पुरूष को अवश्य ही यमपुरी का निवासी समझे।

नक्षत्र दिन वाराणां संयोगेऽहि नरं [illegible]
रक्षितुंतं न शक्नोति वैनतेयोपि किं परः ॥ ५५ ॥

जिस पुरूष को इन ऊपर लिखे हुये नक्षत्रों में तिथि और वारों के संयोग में यदि सर्प किसी को डस लेवे तो उसकी साक्षात् गरूडजी भी रक्षा नहीं कर सकते ओर की तो क्या बात है।

शंक्रांत्यां दश्यते दंतैः कादवयेस्य योनरः,
यद्वेंदोः पदमवंद्योवा ग्रहणेन स जीवति ॥ ५६ ॥

जो पुरूष नाग के दांतों से संक्रांति चन्द्रमा की दशा और सूर्य की दशा में डसा जाता है वह बच जाता है।

चतुसृषु संध्या स्वऽहिना दग्धाभिधान योगे च,
उदये च मंद कुजयोः परित्यजेत् सर्वथा मंत्री ॥ ५७ ॥

जिस पुरूष को नाग ने चारों संध्याओं में (प्रातः दोपहर सायंकाल और अर्द्ध रात्रि) दग्ध नाम वाले योगों, तथा शनैश्चर और मंगल के उदय के समय में डसा हो तो मंत्री उसको सब तरह से छोड़ देवे।

नागाः सूर्यादिनां वाराणां स्वामिनो विनिर्दिशाः,
तदऽहर्त्रिंश भागानापि सप्तानांतये वेशाः ॥ ५८ ॥

सूर्य आदि चलने वालों के स्वामी नागों का वर्णन किया गया अब प्रतिदिन रात्रि और दिन में के भाग वाले सातों मारक नागों का वर्णन किया जाता है।

नागों के निकलने का समय

तद्-तद् घोर शास्त्रे प्रारंयोदयति तेषु भागेषु,
कुलिक स्तुभाग संधिष्वनि भुंते नाड़ी कामेकां ॥ ५९ ॥

यह सातों नाग उस उस घोर शास्त्र से प्रारंभ करके उन उन भागों में उदय होते हैं। किन्तु आठवाँ नाग कुलिक इन योगों की संधि में (मिलने के वक्त में) एक घड़ी भर के लिये भोग करता है।

अथवा रवि सोदयेथ महतामभ्रेण सह कुलिको,
ज्ञेयोऽहिना मुदयः क्रमादटं बार भागेषु ॥ ६० ॥

इसके पश्चात् दिन के विष के उदय होने पर चलने के भागों में बिना भ्रम किये हुए कुलिक और उससे कम दरजे के नागों के उदय को क्रम से जाने।

कुलिक स्योदयकाले यो यो वारेषु मंत्रीभिः कथिताः,
तस्मिन फणि दष्टस्यप्रतिकार विधिर्न्न जातुभवेत् ॥ ६१ ॥

कुलिक के उदय के होने के दिनों मे जो जो समय मंत्रियों ने बतलाया है उस समय में डसे हुए की चिकित्सा किसी प्रकार से भी नहीं हो सकती है।

गारूड ज्ञेन विज्ञेयः प्रत्यहं कुलिको दयः तन्न,
जानाति चेत् सम्यक न क्षमो विशनाशनः ॥ ६२ ॥

गारुडी को प्रतिदिन कुलिक के उदय होने के समय जो जानना चाहिये। यदि पुरूष उसको अच्छी तरह नहीं जानेगा तो वह विष को नष्ट नहीं कर सकता है।

पंचादश दर्द्ध युक्त द्विशतं संस्थाप्य सप्त भि र्गुणयेत्,
ध्रुवांक हीन क्रमशः सर्वत्र च षष्टि भि र्भाज्या ॥ ६३ ॥

पचास में सूर्य की तत्कालीन राशि आदि को जोड़कर अलग रखें। फिर दो सौ को एक स्थान पर रखकर सात से गुणाकर उस गुणनफल में पहले ध्रुवा(पचास तथा सूर्य राशि आदि) को जोड़कर इस योगफल में साठ का भाग देवे तब सूर्योदय से घड़ी आदि में कुलिक नाग के निकलने का समय आ जाएगा।

शकुन

कुलिकोदयः प्रस्थाने दक्षिण भागोदित भुजलतयो श्रुत सिद्धैः,
सफल तरौ का कुरुतं शुभ वचनं गीत मपि वाद्यं ॥ ६४ ॥

कुलिक नाग के उदय में चलते समय यदि मंत्री दाहिने हाथ की तरफ कौवे का शब्द अच्छे वचन गायन या बाजे आवें तो समझना चाहिये कि जाने का उद्धेश्य सिद्ध होगा।

मंत्रिणी निगठिति सत्या कंदों बुंजलादि विहंगानां,
रोदनम मंगल वचः श्रवणश्चन कार्यं सं सिद्धयैः ॥ ६५ ॥

यदि मंत्री के जाते समय खंजुल आदि पक्षियों के चिल्लाने रोने अथवा अन्य अमंगल शब्द सुनाई देवे तो समझना चाहिये कि कार्य निश्चय से सिद्ध नहीं होगा।

त्रिवर्णिकाष्ट मंगला गो गज कन्याज्य दुग्ध दधि शंखाः,
शत पत्र लोह फल जल सुराः शुभा अभिमुखा द्रष्टाः ॥ ६६ ॥

तीनों वर्णों के मनुष्य आठों मंगल द्रव्य गाय, हाथी, कन्या, घृत दूध दही शंख शत पत्र (कमल-मोर) लोहा फल जल और देवता आदि जाते हुए मार्ग में मिले तो अच्छे होते हैं।

गृद्धोलूक कपि द्विप श्रृगाल माहिषाहि पिशित भसित शवैः,
कार्पास कपाल तिलौघैश्च न सिद्धयो पुरो दृष्टौ ॥ ६७ ॥

किन्तु गिद्ध उल्लू बंदर द्विप (हाथी) गीदड़ भैंस, सर्प मांस खाया हुआ शव अर्थात् अस्थिपिंजर कपास कपाल और तिलों को सामने देखे जाने से कार्य सिद्ध नहीं होगा।

धव फणिनो हन मार्जनं निषेधनं सर्वजातिति कलहश्च,
नाशा दंशश्चा गे दृष्टानिन शोभनानि स्युः ॥ ६८ ॥

धव (पूरुष) सांप का मारना कमाना निषेध करना सब जाति वालों की लड़ाई और नाशादंश (नाक में डँसा हुआ)का जाते हुए मार्ग में मिलना अच्छा नहीं होता है।

निजकर निहित कुठारो विभक्तोष्टं पावकं च पुरः,
मलिनाबर भर नारी रजको दृष्टो न सिद्धयै स्यात् ॥ ६९ ॥

हाथ में कुल्हाडी वाला कटे हुए होंठवाला अग्नि गांव मलिन वस्त्रों वाली स्त्री और धोबी को मार्ग में देखने से कार्य सिद्ध नहीं होता है।

परोक्ष संग्रहः

पृथ्वी विष के लक्षण

पार्थिव विषेण गुरूता जडता देहस्य सन्निपातत्वं,
वाधीर्यं गंभीरं वचः सुप्ताहक च दंशःस्यात् ॥ ७० ॥

पृथ्वी विष से शरीर भारी जड़ता (निश्चेष्टता) हो जाती है, सन्निपात हो जाने पर भी पुरुष से गंभीर वचन निकलते हैं काटा हुआ सोया हुआ सोया हुआ जैसा हो जाता है।

लाल कंठ निरोधो गलनं दंशस्य भवति तोय विषात्
वर्वरावरवः स्व वक्रात गात्रे रोमांच नियमश्चः ॥ ७१ ॥

जल विष से मुँह से राल बहती है, कंठ रुक जाता है, काटे हुए पुरुष का शरीर गलने लगता है, मुँह से गंवारों जैसे गंवार शब्द निकलते हैं और शरीर में नियम से रोमांच हो जाता है-बाल खड़े हो जाते हैं।

गंधोद्गामश्च दृष्टे रपाटवं भवति वह्नि विष दोषात्,
स्फोटा कुलितां गत्वं प्रस्विद्यदगात्रता च सदा ॥ ७२ ॥

अग्नि विष से शरीर में गंध आती है, निगाह नहीं जमती, शरीर के टूटने से व्याकुलता होती है और शरीर पसीने से भीगा रहता है।

विच्छायता स्य शोषण मपि मारुत गरल दोषेण,
दष्टस्य कंपमानं वपु,रपि मुद्वनाभि भंगुरं भवति ॥ ७३ ॥

वायु विष के दोष से नींद नहीं आती है, शरीर सूखने लगता है, शरीर का मल पड़ कर कांपने लगता है और काटे हुए की नाभि चटकने लगती है।

अनिश्चित विष को निश्चित करना

ॐ ह्रीं क्षीं अमृतरूपिणी स्वाहा॥

न ज्ञायतेंधकारे दष्टः केनेति जंतुना रात्रौ,
तस्याऽशितुं प्रदेयाः मृत जप्ताऽनेन मंत्रेण ॥ ७४ ॥

कभी-कभी अंधकार में यह नहीं मालूम होता है कि रात्रि में किस जंतुने काट लिया है- ऐसे अवसर पर उसको उपरोक्त मंत्र से अभिमंत्रित मिट्टी खाने को देवे।

व्यंतर घोणस फणिना दष्टश्त्यचेष्टां कितोऽथवा मत्यु,
कटु तिक्ताम्लै: सहजोमृत्स्नाद्या स्वादथ स्वाद: ॥ ७५ ॥

यदि पुरुष में व्यतर घोणास या सर्प से काटे जाने की चेष्टा या लक्षण मालूम हो अथवा उसे मिट्टी कड़वा तिक्त या खट्टी होने का स्वाद आवे।

अष्टा भिरन्ना शतमभि जप्ताविद्यतिना मृदं स्वादे,
तद्दष्टु : साचेतिक्ता तदभंवति भजंगजं गरलं ॥ ७६ ॥

उपरोक्त मंत्र को मिट्टी पर एक सौ आठ बार जप कर खाने को देवे। यदि वह मिट्टी खाने तिक्त (कड़वी) लगे तो वह विष अवश्य ही सर्प का विष है।

आम्ला चेद्वद्यं तंरजं गोनासजभिक्षु रस समानं चेत्,
गुड सदृश रसा यदि सा भवति तदा मूषिका प्रभंवति ॥ ७७ ॥

यदि उस मिट्टी का स्वाद खट्टा हो तो विष व्यंतर नाग का है, यदि मिट्टी का स्वाद गन्ने के रस जैसा मीठा हो तो विष(गोनास) सर्प विष है अथवा यदि उस मिट्टी का स्वाद गुड जैसा हो तो विष चूहे का समझना चाहिये।

बाले प्रावृषि च ऋतौ फणा भृतामुल्वणं विषं मणितं,
मंडलिनस्तद गच्छत्यंऽभिवृद्धि यौवनेन च शशिरेच ॥ ७८ ॥

बालकपन और वर्षाऋतु में फणामृत सर्प का विष तेज हो जाता है। मंडली सर्प का विष युवा अवस्था और शरदऋतु में अधिक हो जाता है।

वार्द्धिक्योति प्रबलं राजिमनामा तपेच भवति विषं,
वर्द्धेत वय स्त्रितयो विषमृति संधौ च मिश्राणां ॥ ७९ ॥

राजिमान सर्पों का विष ग्रीष्मऋतु और वृद्धावस्था में बहुत प्रबल होता है। मिले हुये लक्षण वाले सर्पो का विष तीनों अवस्थाओं में ऋतु परिवर्तन के समय बढ़ता है।

पूर्वास्मिन दक्षिणेवामे पृष्टे च वपुष: क्रमात्
भागे दशंतिभुजंगा द्विन्माद्यद्यन्वयो मेवा ॥ ८० ॥

ब्राह्मण नाग शरीर के सामने क्षत्रिय दाहिने भाग में वैश्य बायें भाग में शूद्र शरीर के पीठ के भाग में काटता है।

बालेन दंशे दंशाना मध्य में कागुंल मतं,
मध्येन द्वयं गुलं प्रोक्तं वृद्धेन त्र्यंगुल मतं ॥ ८१ ॥

बालक नाग के काटे हुए का एक उंगल गहरा जखम होता है, युवा नाग के काटे हुए का दो उंगल और वृद्ध नाग के काटे हुए का जख्म तीन उंगल का होता है।

दंशो ग्रथितः रूजो दाहोतं: पिपीलीक स्पर्शात्कंडूतो,
दंशमेतः सविषः स्यान्निर्विष तत्त्व परः ॥ ८२ ॥

सर्प डसने से जिस रोगीके दाह में चींटी के काटने जैसा दर्द का अनुभव होता हो, वह स्थान पीला पड़ जावे और खाज आने लगे, उस काटे हुए को विष सहित और शेष को बिना विष का समझना चाहिये।

दंशस्य तस्य भेदाश्च त्वारो मंत्रीभि समुदिष्टाः,
दष्टं विद्धं खंडितम वलुप्तं चेति तत्संज्ञाः ॥ ८३ ॥

मंत्रियों ने सर्प काटने के चार भेद कहे हैं-दष्ट (डसा हुआ) विद्धं(बींधा हुआ) खंडितं(टुकडे किये हुए) और अवलुप्तं (चाटाहुआ)

ऐकेन दंता दंशो दष्टं द्वाभ्यां कृतो भवेद्विद्धं बहुभिः,
खंडितमृत्यं दशनं विनौष्तालु सं स्पर्श ॥ ८४ ॥

एक दांत के डसने को दष्ट कहते हैं- ऊपर नीचे के दो दांतो से काटे हुए आर से पार करने को बिद्ध, बहुत से दांतो से काटे हुए टुकड़े कर देने को खंडित, और बिना दांत के होंठ तालू से छूने को अवलुप्त कहते हैं।

तद्दंश हेतवोष्टौ भीति वभुक्षा पुत्रार्ततोन्मादा,
आक्रमणं दर्प स्वस्थान त्राणं तथा बैरं ॥ ८५ ॥

सर्प के काटने को आठ कारण है- भय, भूख, पुत्र का दुःख, उन्माद, आक्रमण, अभिमान अपने स्थान की रक्षा करना और शत्रुता।

भीत्या क्षत मृदु वस्त्रं बिद्धं विष वर्जितं स्मृतं,
तेषुक्षुधि हतो लाला खंडितमतिकृच्छ साध्यं स्यात् ॥ ८६ ॥

नाग के भय से डसने पर केवल वस्त्र बिं जाता है और विष नहीं चढ़ता है, भूखे के डसने पर मांस खंडित हो जाता है और मुँह से लार बहने लगती है- इसकी चिकित्सा बडे कष्ट से होती है।

पुत्रार्त्ततया तादृक सविसं मांसस्य मध्यमा विषं
उन्मोदन तु बिद्धं मृदु लाला क्लिंतमल्प विषं ॥ ८७ ॥

पुत्र से दुःखी नाग का डसना भी खंडित ही होता है और दांत मांस के बीच में जा गड़ते हैं उन्माद से डसना बिद्ध होता है, यह कोमलता युक्त होने से बहुत थोड़े विष वाला तथा मुँह से लार बहाने वाला होता है।

चक्रं सुबहु व्रणमां क्रमाणेत प्रायो भवत्य विषं,
बहु दंशम सृग लाला श्रवा विषं प्रायशो दर्पात् ॥ ८८ ॥

आक्रमण के कारण से डसे हुए के बहुत से गोल गोल जखम हो जाते हैं और इसमें प्रायः विष नहीं होता है, अभिमान से काटे हुऐ के बहुत अधिक डसा जाता है, उसमें खून बहता है और लार गिरती है और विष भी अधिक होता है।

स्थान त्राणत साध्यं तादृक्षं मांसस्य मध्य गतं
ऋजु बिद्धं,दष्टं वा चक्रं वैराद् भवत्य साध्य समं मता ॥ ८९ ॥

स्थान की रक्षा करने में कभी दष्ट और कभी कभी मांस के बीच में दो दांतो से सीधा बींधा जाता है, उसकी चिकित्सा सरल होती है और बैर से काटने पर गोल गोल कटता है, इस प्रकार से काटे हुए का बचाव प्रायः असाध्य होता है।

रूक्षः सूक्ष्मः कृष्णो दंशो दर्वीकरस्य विज्ञेयः,
मंडलिनः पृथुरुषणः कृष्ण स्फीतः प्रभा शूनः ॥ ९० ॥

दर्वीकर का डसना रुखा, सूक्ष्म और काला जानना चाहिये, मंडली सर्पका डसना भारी, गरम, ,काला स्फीत (बढ़ा हुआ) और कांति रहित होता है।

श्वेतः स्निग्धः शूनः साद्राऽसृक पिच्छलाश्च राजिमतः,
व्यंतर संज्ञेयाऽहे र्दंशा व्यामिश्र चिन्हः स्यात् ॥ ९१ ॥

राजिमान का डसना सफेद चिकना खाली खून से भरा हुआ और लथपथ होता है तथा व्यंतर नाम के नाग के डसने में अनेक चिन्ह मिले हुए होते हैं।

एकोऽथवा त्रयो वा दंशा बहु वेदनाः शवा रुधिरः,
काकाऽन्हि चक्र कूर्मा काराश्च नयंति याम सदनं ॥ ९२ ॥

जो डसने के स्थान एक या तीन रुधिर बहाने वाले तथा बड़ा कष्ट देने वाले होते हैं और उनके चिन्ह कौवे के पैर चक्र तथा कछुवे के आकार के होते हैं। वह पुरुष शीघ्र ही यमपुरी को चला जाता है।

दशं पदं यदि काक पदांकं शोणित वाहिमिता तमऽनंतं,
कृष्णतरं सरसं बहुशोषं दत् यम गेह निरुपण दक्षं ॥ ९३ ॥

यदि काटा हुआ स्थान कौवे के पैर के जैसे आकार का रक्त बहाने वाला अनंत पीड़ा देने वाला अत्यंत काला रसीला बहुत खुश्क हो तो अवश्य ही वह यमालय का निवासी होगा।

हनुमध्ये दंश यक्षः स्तनौष्ट तल हृदये नाभि लिंग गले,
शंस्त्र युग चिबुक कुक्षि स्कंध शिर स्तालु भाल गुदे ॥ ९४ ॥
कक्षे संधिषु च नृणां स्याद् यदि दंशो भुजंग दशन कृतः

यदि पुरुष के ठोठी के बीच इंद्रिय ,छाती, स्तन, होंठ, तल (थप्पड़ का स्थान गाल) हृदय, नाभि, लिंग, गले के दो शंख, चिबुक (ठोठी) कांखा ,कंधे, सिर, तालू, ललाट, गुदा ,बाहु, मूल या जोड़ो में नाग ने डस लिया हो-

तम साध्यं विषं प्राहुः मंत्रध्यानौषधांदीनां,
धातोर्द्धात्वं तर सं प्राप्ति वेगं विषस्य जानाति ॥ ९५ ॥

तो उस विष की मंत्र ध्यान तथा औषधि आदिसे भी चिकित्सा नहीं हो सकती है क्योंकि इन स्थानों में काटने से विष तुरन्त ही एक धातु से दूसरी तीसरी इत्यादि सब धातुओं में पहुँच जाता है ऐसा जानना चाहिये।

सप्ता विधं च विदुस्तं संप्राप्य प्रकृति भेदेन,
द्वा पंचाशन्मात्रां स्थित्वा दृष्ट प्रदेश एव विषं ॥ ९६ ॥

वह प्रकृति के भेद से सात प्रकार का विष पुरुष के शरीर के प्रदेश से ठहरा हुआ बायन प्रकार के विकार उत्पन्न कर देता है।

प्रथम शिरस मुं प यांति पश्चा ललाटमनु
लोचनं यांति तत आस्थं यांत्या स्याद्,
धमनी स्ताभ्यां कमादव्रजेदगात्रं प्राप्ते
विष रसं स्याद् अधोवेगः परान परो ॥ ९७ ॥

विष का रस पहुँचने पर पहले सिर में, फिर मस्तक में, फिर आंखोमें, हड्डी में, धमनी में और मुख में वेग आता है, फिर वमन होने लगती है, फिर शरीर जरायु जैसा निश्चल हो जाता है।

रोमां चो मुख शोष धर्म सलिलैः वैवर्ण्यमाकंपनं,
ग्रीव भंग युता दृशो विवशता सं सिक्त हि कादयो ॥ ९८ ॥

युक्तो निश्चसि तेनचेतसि महान्मोहो मतिश्च,
क्रमात्प्रादुर्भवंति विषे रसाद्युपगते दष्टस्य चेष्टाः स्फुटं ॥ ९९ ॥

फिर क्रम रोमांच हो जाता है, मुख सूख जाता है, पसीना निकलने लगता है, मुँह का रंग फीका पड़ जाता है, शरीर कांपने लगता है, गरदन गिर जाती है(टूट जाती है), आंखे एकटक स्थिर हो जाती है, हिचकियाँ चलने लगती हैं, श्वास रहित हो जाता है, चित में बड़ा भारी मोह होकर बुद्धि काम नहीं करती है, शरीर मे विष का रस पहुँच जाने पर डसे हुए प्राणी की क्रम से यह प्रत्यक्ष चेष्टाएं हो जाती हैं।

इति वेगः

अस्पंदः पक्ष्मणां कुक्षि शोषणं शीतलोनीलः,
प्रविष्टा निर्गता चापि जिह्वायस्य म्रियेतसः ॥ १०० ॥

जिसकी पलकें नहीं हिलती, कोंख सूख जावे, जिसको ठण्डे पानी में डाल दिया जैसा हो, नीला हो गया हो और जीभ निकली हुई हो वह मर जाता है।

श्रयंति मक्षिका यत्र प्रायो दुर्गंध सत्वरः,
वंश मध्यालिशब्दा भो दुष्टः पोत समोपिवा ॥ १०१ ॥

जिस पर मक्खी बहुत बैठती हो, दुर्गंध आने लग जावे, जिसका शब्द बांस के बीच में बैठे हुये भौंरे के अथवा नाराज बालक के समान हो जावे।

श्यामे शुल्के स्फुटे रक्ते इषद्वा स्फुटिते गते,
इदृशी चा क्षिणी यस्य भंगुरैः कै र्न्निमिलिते ॥ १०२ ॥

जिसके नेत्र काले सफेद, कुछ लाल और कुछ फटे हुए हों ऐसी आंखों से भला कौन देख सकता है अर्थात् इस प्रकार के लक्षण वाला मर जाता है।

नखं दंता धरे हस्त तल यो रपिनीलिमा,
दृश्यते यस्य तं मंत्री मृत मे वाह्यवश्यतु ॥ १०३ ॥

जिसके नाखून, दांत होंठ और हथेली नीली पड़ जावे उसको मंत्री मरा हुआ ही समझे।

यस्य सुराद्रिश्चलितो हिक्का महती महुर्महुर्भवति,
मुखमपि विमुक्त पवनं सगतो समवर्तिनो हन्यं ॥ १०४ ॥

जिसका (सुर = देवता, अद्रि = सूर्य ७ सूर्य देवता) अर्थात् मस्तक हिल गया हो, भारी हिचकियाँ

बारबार आती हो, मुँह में भी वायु नहीं आती हो वह हर्म्य (महल) की बत्ती के समान समाप्त हो जाता है।

यस्यौषध जल पानं पीतं निर्याति तत्क्षणो कंठात्,
भीतस्तु सानु नाशिक शब्दोयः सोप्य संग्राह्य ॥ १०५ ॥

जिसको पिलाने से औषधि जल या कोई अन्य पिलाने की वस्तु तुरन्त ही कंठ से निकल जावे और जो डरा हुआ नाक में बोले सो वह भी बचने वाला नहीं है अर्थात् उसकी चिकित्सा नहीं करें।

गुद वदनस्य विकासैः सैत्यं देहस्य शुक्र निर्गमनं,
हृत तालुनोक्त भेदो विट भेदो मेहनं स्तब्धं ॥ १०६ ॥

जिसकी गुदा और मुँह खुले हुये हो, देह में शीत आरहा हो अर्थात् ठिठुर रहा रहो, वीर्य निकल रहा हो हृदय और तालु खुले हुये हो, भिष्टा निकल रह हो और लिंग खड़ा हुआ हो।

दाहः कंपः चूलः कृष्णे दंशश्च सर्प दशांते,
प्रलपन मंगोद्वेगः लाला श्च वता जल स्या स्यात् ॥ १०७ ॥

शरीर में जलन, कंपन और दर्द तथा सर्प के काटने के पीछे काटा हुआ स्थान काला हो गया हो, जो उद्वेग से बकता हो, जिसके मुँह से जल की तरह लार बहती हो।

हृदय स्या विघटेन कृष्णा सृक श्याम दंतत्वं,
रक्तस्य च प्रवृत्ति र्दृग्नाशा रोम रुप गुह्यादौ ॥ १०८ ॥

जिसके हृदय के खुलने से काला अस्त (रक्त) निकले, दांत काले पड़ जावे, जिसकी आंख, नाक, बाल, मुँह और गुप्त अंग आदि से रक्त निकलता हो।

एतानि लक्षणानि प्रेक्षंते यस्य सर्प दष्टस्य,
तस्या वश्य मरणं विषतंत्र विचक्षणाः प्राहुः ॥ १०९ ॥

ऐसे लक्षण जिस सर्प के काटे हुए प्राणी के देखे जावे उसकी मृत्यु निश्चय से होगी। यह विष शास्त्र के पंडितों ने कहा है-

कृष्णेन साधन स्पर्शे कृतेप्यंगं न कंपते,
यस्य जीवयितुं तन्न प्रभवेदपिपक्षिराट् ॥ ११० ॥

जिसको जोर से छूने पर भी उसका अंग जरा भी नहीं कांपे उसको साक्षात् गरुड़ जी और कृष्णजी भी नहीं बचा सकते हैं।

रूप व्यक्तिं न चानाति ध्वांतवा दस्तु पश्यति,
नाभि ग्रंथो विनष्टोग्निर्यस्य स म्रियतेनरः ॥ १११ ॥

जो किसी व्यक्तिको नहीं पहचाने, कुछ न सुने, जो अंधकार को नहीं देखे, जिसकी नाभि की गांठ अग्नि से नष्ट हो जावे वह पुरुष मर जाता है।

शस्त्र क्षतेषु गात्रेषु क्षतजैर्नैव दृश्यते,
यदा युष्मान गछेत् सोति कांति कमातुरः ॥ ११२ ॥

यदि शरीर में शस्त्र लगने पर जखमी पुरुष को क्षितिज दिखलायी नहीं देवे तो वह प्राणी मृत्युपाने के लिये बहु त आतुर हो जाता है।

भाल नासाग्र विन्यस्त प्रकोष्टे : प्रतिभासते,
निज स्कन्दीया न्यास्य स्यान्न तस्याशु परिक्षयः ॥ ११३ ॥

जो अपने भाल और नाक पर रखी हुयी अपने स्कन्द (शरीर) की और दूसरे की कलाई तथा उंगली को पहचान ले वह शीघ्र नहीं मरता।

हृदये च किलातस्य कुक्षौ कल कलस्य च,
श्रवने र्यदि नो वास्ति श्रुति स्तस्य मृतिं बिदुः ॥ ११४ ॥

यदि भील के हृदय मे और कोंख मे कलकल (शोर) का शब्द नहीं पहुँचे तो शास्त्रों ने उसकी मृत्यु कही है।

नाभि नाल श्रव पृष्टः कंक्षे यस्य प्रमार्जितः,
भूत्या दंष्टा प्रजायेत तेन द्राक लभते मृतिः ॥ ११५ ॥

जिसकी नाभि की नाल, कान पीठ और बाहु मूल में शुद्ध अवस्थामें दांत लगे हो वह द्राक (तत्काल) मृत्यु को पाता है।

रोमोद्गमो रस स्तावत सेके कृते सु शीतलैः सलिलैः,
यस्या हतेषु गात्रेषु हंति पद वीक्षणो भवः ॥ ११६ ॥

जिसके ठण्डे पानी में तर करने से बाल खड़े हो जावे, जिसके शरीर में लाठी मारने के निशान हो जावे।

प्रभृतस्य करतल स्या कुंचन माकुं चितस्य वातस्य,
विहिते प्रसारण सति यथा पुरं च व्यव स्थानं ॥ ११७ ॥

जो मुट्ठी को खोलने और बंद करने को अथवा हथेली को फैलाने को पहले के समान जान लेवे।

चिन्हान्य मूनि यस्मिन स्फुटं प्रदृष्टानि भोगिना,
दष्टेन समवर्ति सद्यनिवर्तिन मेवाशंक स्तमवगच्छेत ॥ ११८ ॥

इस प्रकार के चिन्ह वाले भोगिनी (सर्प) से डसे हुए को शीघ्र ही अपने सदमनि (घर) में रहता हुआ निशंक रुप से जाने।

प्रतिमां स्वस्या दर्शे सलिले वाना वलोकेत्,
घाणास्याग्रं भ्रुवमथ दष्टोयः सः क्षणात् म्रियते ॥ ११९ ॥

जो डंसा हुआ पुरुष दर्पण या जल में अपने सिर या भौं के भाग के प्रतिबिम्ब को नहीं देखे वह शीघ्र ही मर जाता है।

नखाग्र भागेननखांतराले निपीडनं वेत्ति नयोऽहि दष्टः,
यो हस्त रुद्धं श्रुति युग्म संधोन तं निनादं शृणु यान्महांतं ॥ १२० ॥

जो सर्प से डसा हुआ पुरुष नाखूनो से, अपने नाखूनों को दबाये जाने पर उसके स्पर्श को नहीं जानता अथवा जो अपने कानों पर हाथ रखे जाने से उसके भारी शब्द को नही सुनता है।

ज्वलन दीपक चंद्र दिवाकरान्
यदिन पश्यति भोगि विषार्दितः,
स्व कर मूर्द्धन संचय लुठनः
सच यमालय मा विशति ध्रुवं ॥ १२१ ॥

यदि कोई भोगि (सर्प) के विष से पीड़ित (डसा हुआ) आदमी, अग्नि, दीपक, चंद्र, सूर्य को नहीं देखे और अपने हाथों से सर के बालों के लौटने को नही जाने तो वह निश्चय से यमराज के घर में प्रवेश करता है।

धावति चे निहितं सलिले सृक्
धावति दृष्ट शरीर मरालः,
सत्य चले चल एव चलः स्यात्
त्याग परिग्रहः मुत्तम मेतत् ॥ १२२ ॥

जिस पुरुष का रक्त जल में रखे जाने से खूब दौड़े, जो हंस के शरीर को देखकर दौड़े, जो किसी के सत्य से चलायमान होने पर व्याकुलता से चंचल हो उठे वह उत्तम परिग्रह त्याग करनेवाला है।

जिव्हाया नाशाया नेत्र रुचोश्च भ्रवो क्रमशः,
अपेक्षायां जीवत्येक पंच सप्त नव दिवसात् ॥ १२३ ॥

यदि कोई सर्प से डसा हुआ पुरुष अपनी जीभ को नहीं देखे तो वह एक दिन जीता है, जो अपनी

नाक को नहीं देखे वह पांच दिन जीता है, जिसको नेत्रों की कांति नहीं दिखलाई नहीं दे वह सात दिन और जीता है तथा जिसको अपनी भौहें दिखलाई देवे वह नौ दिन ही और जीता है।

संग्रह तथा त्याग के मंत्र

बिंदुना परम स्तेन यदबुंक्त मंत्रणं तत्से,
कानेत्र सुन्मीतेयदि दष्टः स जीवति ॥ १२४ ॥

यदि सर्प से काटा हुआ प्राणी परम (र) में बिंदु अर्थात् रं से मंत्रित जल से सींचा जाने पर अपनी आंखें खोल दे तो वह बच जाता है।

स्वरैः षोडशभिर्जप्तः वार्प्यतो यस्यगच्छति,
वितीर्णं मास्ये तस्य स्या जीवितं मृतिरन्यथा ॥ १२५ ॥

यदि सोलह स्वरों से जपे हुए जल के मुँह में जाने से मुँह खुल जावे तो वह बच चाता है अन्यथा मर जाता है।

शून्येन सर्व स्वर संयुतेन
जलं प्रदधादभि मंत्र्य पानं,
तस्य स्थितत्वसति सःस्थितः
स्यात् निर्गमे निर्गत एव जीवः ॥ १२६ ॥

यदि हकार में मिलाये हुए सब सोलह स्वरों से अभिमंत्रित जल को पीने से खड़ा रह सके तो उसका जीवन रहेगा अन्यथा यदि वह खड़ा न रह सके तो उसका जीवन भी नहीं रह सकेगा।

ॐ वंक्षः इत्योनेनाभि मंत्रि तै वारिभिर्मुखे सं सिक्तो,
दष्टस्य स्पंदः स्याचे जीवेदितरथे तिरथा ॥ १२७ ॥

ॐ वंक्षः मंत्र से जपे हुए जल से, मुख भिगोने से, मुख में जल बहने लगे तो जीवेगा अन्यथा मर जावेगा।

महि जल समीरिणांबर मंत्रित
सलिलेन सिक्त वदनोयः,
प्रकट यति श्वासम सौ
जवति खलुने तिरो दृष्टः ॥ १२८ ॥

यदि क्षिप स्वाहा मंत्र से मंत्रित जल से सींचा जाने पर जिसके शरीर में श्वास प्रकट होतो वह बच जाएगा अन्यथा नहीं बचेगा।

ह्रां वंक्षं मंत्र संचित तोयेना त्रसति यस्या गात्रेतु
स च जीवत्यथवा क्षि स्पंदन तो नान्यथा दृष्टः ॥ १२९ ॥

यदि ह्रां वंक्षं मंत्र से मंत्रित जल से मुख सींचा जाने से जिसके शरीर में कष्ट होतो वह बच जावेगा अथवा आँख फड़कने लगे तो बचेगा अन्यथा नहीं बचेगा।

स्थंभन बीजं लांतं बिंदु युतं सृष्टि युक्त कष वर्णः
तन्मंत्र पुलिकितांगो जीवति यदि पक्ष्मन्सं चलनो ॥ १३० ॥

स्थंभन बीज और व को बिंदु सहित कष से मंत्रित जल से जिसके शरीर में रोमांच हो जावे और पलके चलने लगे तो वह बच जाएगा।

ॐह्रां वं क्षंवः स्वाहा सप्ताक्षरभि मंत्रित
दृष्टि र्दृष्टो रवि शशांकंगु यदि पश्यति
सनपश्यति कृतांत मिति गारुड़ गृतातं ॥ १३१ ॥

यदिॐ ह्रां वं क्षंवः स्वाहा इन सात अक्षर के यंत्र से मंत्र से आंखे मंत्रित करने पर सूर्य और चन्द्रमा को देखने लगे तो यह काल को नहीं देखता ऐसा गारुड शास्त्रमें कहा है।

अनल कुयलय नमो जिन मंत्रं ध्यायन्नथ
क्रमान्मंत्री वामे तिरो,उभयाक्षि स्फुरणात्
शुभम शुभ विष मादिशतु ॥ १३२ ॥

ॐ अनल कुयलय नमो जिन स्वाहा इस मंत्र का ध्यान करते हुए यदि मंत्री की बाँई आँख फड़के तो शुभ, दाहिनी से अशुभ और दोनों से विष दूर होता है।

तन्मंत्रा मनु स्मरणां स्फुरणं यत्रास्ति तत्र दंशो द्वेगः,
अंग स्फुरणा भावेज्ञातव्यः स्याद् विषा भावः ॥ १३३ ॥

यदि मंत्र को स्मरण करने पर मंत्री का अंग फड़कने लगे, जो अंग फड़के वही विष का जोर होता है- यदि अंग नही फड़के तो विष का अभाव होना चाहिये।

ॐ अनल कुयलय नमो जिन स्वाहा।

तत्वे समिते काल स्तत्वे सतिनैव विद्यते कालः,
इति तत्व विभागज्ञः स एव विनता सुतो लोको ॥ १३४ ॥

स्वर (तत्व) के न रहने पर काल तथा स्वर (तत्व) के रहने पर काल नहीं होता है, जो पुरुष इस

प्रकार स्वर (तत्व) के विभाग को जानता है वही लोक में गारुड़ होता है।

ॐकार पूर्वं प्रविलिख्य तत्वं
लाह्रः पः लक्ष्मी सित होम वर्णं,
मार्तंड संख्यं प्रजपेत्सहस्त्रं
मंत्री भवेत् त्याग परिग्रहज्ञः ॥ १३५ ॥
ॐ ह्रीं ला व्हः पः लक्ष्मीं हंसः स्वाहा ॥

प्रत्यक्ष संग्रहः

जो मंत्री ॐ ह्रीं ला व्हः पः लक्ष्मीं हंसः स्वाहा इस मंत्र का बारह हजार जप करता है वही त्याग परिग्रह का ज्ञानी होता है।

दष्टो दिनो यदि न पश्यसि बद्ध दृष्टि
मूर्च्छां प्रयाति न च जल्पति कंपते च,
मंत्राभिषेक करणेन न निर्विषांगः
श्वासाधिको भवति चेद मराकरः स्यात् ॥ १३६ ॥

यदि सर्प का काटा हुआ प्राणी निगाह बांधकर दिन नहीं देख सके, मूर्छित हो जाये उसकी बोली नहीं निकले, कांपने लगे और वह उपरोक्त मंत्र के अभिमंत्रित जल के स्नान से विषरहित नहीं होकर अधिक श्वास ही लेने लगे, तो वह नहीं बचेगा।

एक द्वित्रि चतुर्धाग्यास्यै रवि सोमकुज बुधाश्चा स्यात् ,
द्वि चतु षट दिवसै रवि गुरु शुक्र शनीश्चरायांति ॥ १३७ ॥

इससे सूर्य के ग्रह की दशा एक पहर में चंद्रमा की दोपहर में, मंगल की तीन पहर में बुध की चार पहर में, बृहस्पति की दो दिन में, शुक्र की चार दिन में और शनि की छ दिन में समाप्त हो जाती है।

त्याग ग्रहैक्ष्वेड. विनाशनार्थः ज्ञेयानि
सारणी सुगुरुड़स्य स्तोभानि,
कर्माणि य कौतुकार्थं शुश्रूषया
तानि गुरौः सकाशात् ॥ १३८ ॥

त्याग, ग्रह और विष को नष्ट करने कौतुक और विष को स्तोभन करने को लिये गुरु से गारुड़ी विद्या के सार को जाने।

इति नवम परिच्छेदः

दशम समुदेशः

अथः परं प्रवक्ष्यामि निर्विषी करणं परं,
येन प्राणास् त्रायंते प्रणिनां विषवेगतः ॥ १ ॥

अब उत्तम निर्विषीकरण का वर्णन किया जाएगा जिसके द्वारा विष के वेग से प्राणियो के जीवन की रक्षा की जाती है।

निर्विषीकरणं कार्यं संग्रहे सति मंत्रिणाः ततः,
स्तोभादिकर्माणि योजनी यानि यत्न तः ॥ २ ॥

मंत्री को संग्रह के पश्चात निर्विषीकरण करना चाहिये और उसी समय स्तोभ आदि कर्मों को भी प्रयत्न से करे।

सद्यः चिकित्सितान्यथा सकलीकरणं च तार्क्ष्यं
हस्तादत्त विष नाशहरणे तानि स्तोभ स्तंभ स्तथा वेशः ॥ ३ ॥

इसमें तुरन्त चिकित्सा सकलीकरण, तार्क्ष्य, हस्त, विषनाश, स्तोभ, स्तंभ और नागवेशन का वर्णन किया जाएगा।

संक्रामो भुजंगा ह्वानं ग्रहि करहि विंषादनं,
पर विद्या छिदायंत्रं रक्षा चात्रोपदिश्यते ॥ ४ ॥

विष संक्रमण, सर्प को बुलाना, सर्प को हाथ में लेना, सर्प विष को भक्षण करना और दुसरे की विद्या को नष्ट करना इनके यंत्र और रक्षा का वर्णन किया जाएगा।

दशं स्योपरि सहसा बंधश्च तुरंगुले प्रयुंजति,
नख कंटकादिभि द्राक् कुर्यात् दंशात सृक श्रावं ॥ ५ ॥

जिस स्थान पर सर्प ने काट लिया हो उसके चार उंगल ऊपर एक बंद लगाकर काटे हुये स्थान से तुरन्त ही नाखून या कांटे आदि से खून निकाल देवें।

दंतो घ्राणादक्षणे जिह्वायां दंश देश माद् तेन हिं,
पत मलेन ततो नाति कामेद्विषं दंशं ॥ ६ ॥

इसके दांत, नाक, आँख और जीभ के स्थानों में सर्प का विष नहीं फैल सकेगा।

आस्यां बु समुपेतेन मलेन श्रोत्र जन्मना,
सद्यो लेपाद्विषं दंशं नाति काम्यति जातु चित् ॥ ७ ॥

मुख के पानी के साथ कान के मैल को मिलाकर काटे हुए स्थान पर तुरन्त ही लेप करने से विष कभी नहीं बढ़ता।

कृतवृणे नखाग्रेण दंशे कफमलादिभिः,
मर्दनं विहितं सर्व विषघ्नमभि भाषितं ॥ ८ ॥

सर्प के काटे हुये स्थान पर नाखून के अगले भाग को कफ मलादि में मिलाकर लेप करने से तुरन्त ही विष नष्ट हो जाता है।

दृष्टव्या विष शांत्यै प्रत्यासन्ना स्मलोष्टकादि,
दष्टेन सलिलमथवा शीतल माशु प्रवेष्टेयं ॥ ९ ॥

अथवा काटे हुए के विष को शांत करने के वास्ते देखते ही पास के पत्थर, ढ़ेले, लकड़ी आदि से तुरन्त ही उसमें ठंडा जल भर देवे।

अन्य पार्श्वस्थया पूर्व्व नासा वत्या पार्श्व
संस्थाया,रेचयेद मुना दंशं नाति क्रामत्य हे विषं ॥ १० ॥

सर्प के काटने के समय यदि बाम पार्श्व में काटा हो तो दाहिने स्वर से अथवा दाहिनी तरफ काटा हो तो बाँये स्वर से विष निकाल दे इससे सर्प का विष नहीं चढता है।

निपीडनेन नाशाग्र मध्य दंशस्य निग्रहः,
विषाणां स्याद शेषाणामथवा वायु रोधतः ॥ ११ ॥

नाक के अग्र भाग के मध्य में मलने से या वायु को रोकने से सांप के काटे हुए के विष का निग्रह हो जाता है।

जिह्वाग्रेण स्पृष्टवा तालु वर्गं कुंभकं समातन्वत
रुं ध्यान्नाशास्य हृदयं दष्टक्ष्वैलाद्विमुच्यते क्षिप्रं ॥ १२ ॥

जिह्वा के अग्रभाग से तालू छूकर कुंभक के द्वारा नाक, मुख और हृदय को रोकने वाला सर्प दष्ट पुरूष तुरन्त ही विष से छूट जाता है।

सद्यो लोहादिभि स्तप्तैर्ज्वलन ज्वालयाथवा,
दंश प्रदेशे दृष्टस्यक्षाहो विष विकारजित ॥ १३ ॥

तुरन्त ही अग्नि से तपे हुए लोहे या अग्नि से डसे स्थान को जला देने से विष का विकार जीता जा सकता है।

हतस्य फणि नांगंस्य कुर्वीत छेदनं क्षणात्,
अथवा दंशं देशस्य शिरां विंध्योत्समीपगां ॥ १४ ॥

अथवा मारे हुए फणी नाग के अंग को तुरन्त छेद डाले अथवा काटे हुए स्थान के पास की नाड़ी या नस को बींध देवे।

दष्टं स मुक्त रक्तं लिंपेतो शीर मलय जाताभ्यां:,
शुंष्ठी मरिचं कृष्णामपि पिष्टवा पाययेन् मंत्री ॥ १५ ॥

अथवा सर्प से काटे हुए स्थान का र क्त निकाल कर अस जगह खस(मलयज), चंदन का लेप कर देवे और मंत्री काटे हुए पुरूष को सोंठ और काली मिरच पीस कर पिलावे।

वंद्याभूषण दाह खंडन निज श्लेष्मापि विस्मामर्द्दनै:,
रन्यै रप्प चिरं कुरू प्रति विद्यं दंश प्रदेशे स्वयं ॥ १६ ॥

किं ग्राम्यै: रथवा त्र निर्विष विधिर्द्धस्तैर हो मंत्रिणो,
यस्यापोष विषाद्य हार निरतं कार्योपि तत्वं स्थिरं ॥ १७ ॥

काटे हुए स्थान के पास बांधने, गहने से जला देना, खंडित अर्थात् काट डालने और अपने कफ या मल को पिलाना, मालिश करना और इसके अतिरिक्त अन्य वस्तुओं का भी काटे हुए स्थान पर प्रयोग करे और कोई प्रतिकार की विधि खुद करे। इस विष को दूर करने की विधि में गांव की विधि क्या करेगी ऐसा नहीं करना चाहिये। क्योंकि यह विष दूर करने की विधि जिसके शरीर में भी लग जावेगी वही वास्तविक बन जाती है।

रसनाग्रं तालुचग्रे संस्थाप्या पानमा कुंच्य,
आकर्षेत् तत्रात्मा नं मृत पूर्व काल यत्नात् ॥ १८ ॥

जिव्हा के अग्रभाग को तालू के अग्र भाग में लगाकर अपनी अपान वायु को खींचकर वहाँ अपनी अमृतमयी पहली कला को यत्न पूर्वक आकर्षित करे।

अंगुष्ठयो पृष्टे मूर्द्धनावथ जानू गुह्य नाभि हृदि स्तन,
गल नासिका नयन श्रवण भ्रू मध्य शंख मूर्द्धनिवा ॥ १९ ॥

अंगूठे में, पांव में, पीठ में, मस्तक, जांघ, गुह्य, नाभि, हृदय, स्तन, गला, नासिका, आंख, कान, भौं केबीच में शंख (सिर) और मस्तक में

पुंसः पार्श्वे दक्षिण आरोहणे वच रति सित पक्षौ,
अमृत कला प्रथमाद्या आरंभ्या रा कमनु पूर्वं ॥ २० ॥

शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा को अंगूठे से आरंभ करके क्रम से पुरुष के सब दाहिने अंगो में चन्द्रमा की एक एक कला के बराबर विष चढ़ता है।

पुरूष स्यासित पक्षे तिथि क्रमादुक्त क्रमेण मूर्द्धादि,
अगुष्टां तं वाम पार्श्वे सौ धि कला चरति ॥ २१ ॥

और कृष्ण पक्ष में पुरुष के तिथि के क्रम से सिर से लेकर अंगूठे तक वाम भाग में चन्द्रमा की कला के बराबर विष उतरता है।

स्त्री के शरीर में विष की चंद्रकला

नार्यास्तु सिते पक्षे वामे पार्श्वे शुधाकलां चरति,
आरोहणान्य स्मिन दक्षिण पार्श्वेवरोहेण ॥ २२ ॥

स्त्री के शुक्ल पक्ष में बायें शरीर के भाग में चन्द्रमा की एक कला चढती है और कृष्ण पक्ष में दाहिने भाग में एक एक कला उतरती है।

प्रोक्तं सुधा कलाद्याः स्थानं यद्वपुषि सत्तवमेतस्य,
क्ष्वेड़कला चरति तथा तिथि क्रमात् तत्र तत्रागं ॥ २३ ॥

इस प्रकार के स्त्री और पुरुषों के शरीर में अमृत और विष की कला तिथि के क्रम से उसी उसी अंग में रहती है।

यत्रामृत मप्या स्ते कला शरीरैक देशेवा,
तन्मर्द्दनात्प्रशाम्यति विषंक्षणाद्ध्यात देहमपि ॥ २४ ॥

शरीर के जिस भाग में इस प्रकार से विष की चन्द्रकला होवे उसी अंग को मलने से क्षण मात्र में ही सर्प विष शान्त हो जाता है ।

स तिष्ठंति यत्रांगे तत्र भुजंगेश्वरेण कुलिकेन,
अपि दष्टस्य विषार्त्तिः प्रादुर्भवति प्रभुन्न भवेत्तः ॥ २५ ॥

इसीप्रकार से यदि किसी भाग में नागराज कुलिक के भी काटने से विष पीड़ा हो तो वह फिर पैदा नहीं होती ।

स्मर मंदिर स्थितायां सुधा कलायां रतिः स्त्रियाः,
प्रथमा रचिता करोति यावज्जीवं स्नेहातुरां नारीं ॥ २६ ॥

यदि चन्द्रमा स्त्री योनि में हो तो और उस समय कोई पुरुष इससे से पहले से संबंध करके संभोग करे तो स्त्री जन्मभर उसके प्रेम से व्याकुल रहती है।

युत मंगं मंगनाया यदमृत कलया रतोत्सवं,
तत्र संस्पर्श चुंबनाद्यं वश्याय द्रावण यापि ॥ २७ ॥

स्त्री के जिस अंग में चंद्र कला अमृतमयी हो- उसी अंग का स्पर्श और चुंबन आदि करने से स्त्री वश में होकर तुरन्त ही द्रावित हो जाती है।

यस्मिं स्तु विषमयी सा कला शरीरे स्थित्वाऽहि,
दष्टस्य तस्यांगस्य विमर्द्दैकृते क्षणात्स्याद विष स्तौभः ॥ २८ ॥

किन्तु जिस समय वह चंद्रकला विषमयी हो तो उसी अंग का मर्दन करने से उसी क्षण में विष नष्ट हो जाता है।

क्वेऽकलया युतांगे यदि दंशः साध्य लक्षण युतोपि,
सहसै वनयति मनुजं कृतांत धन मंदिरा वासं ॥ २९ ॥

यदि विष की कला से युक्त किसी अंग में सर्प ने काटा हो तो साध्य के लक्षण होने पर भी (अर्थात् विष काबू में आ सकता है) किन्तु इससे वह पुरुष को शीघ्र ही (कृतांत) यम के मंदिर का अतिथि बना देती है।

शत्रोः प्रतिकूलर्क्षे पुत्तल्यां विष कलाश्रितेऽवयवे,
वेधादिकं विदध्याद यथा वद्धुधार कार्यार्थ ॥ ३० ॥

प्रतिकूल नक्षत्र में शत्रु की पुतली बनाकर उसके विषकला सहित अंग में वैध(बींधना या कील गाड़ना) आदि की क्रिया करे तथा छुड़ाने के वास्ते भी किया करे।

स विष कले भवति गले तत्रामृत वर्णममृत सम वर्ण,
अशितुं ध्यात्वा दद्यात्त अन्नंनो चंदऽजीर्णं स्यात् ॥ ३१ ॥

यदि गले में विष की कला हो तो वहाँ पर अमृत के वर्ण के समान ध्यान करके खाने के लिये अन्न देवे अन्यथा अजीर्ण हो जावेगा।

ध्यात्वे वै तन् नित्यं भुंजानो भोजनं भवेन्मनुजः,
आरोग्यैनवलेन च दीप्त्या पुष्टया च संपन्नः ॥ ३२ ॥

यदि कोई पुरूष यह ध्यान करके नित्य भोजन करे तो वह सदा ही आरोग्य बल कांति और पुष्टी से युक्त हो ।

मंत्र ध्यानादिना प्राप्यं सर्वै : सर्वत्र सर्वथा,
इत्युपयोग विषघ्नोऽयंश्लाघ्यते विश्व गोचरः ॥ ३३ ॥

और मंत्र के ध्यान के दिन इस उपयोग को सबको सब कही सभी प्रकार से करना चाहिये यह उपयोग संसार भर में विष को नष्ट करके प्रशंसित हो रहा है।

परमश्च विवियक्त विंदुना सहितौ पृथक्,
बीजं तुषारमह सौ द्वितीयं वद्ध शब्देया ॥ ३४ ॥

दष्ट हृत्पदम कोशेषु मंत्रं तन्नाम वेष्टितं,
चंद्रां शतं स्मरेदेष दष्टं रक्षती मृत्युतां ॥ ३५ ॥

परम (र) और वियिक्त(भ) को बिन्दु सहित पृथक-पृथक लेकर तुषार(चंद्र बीज) और महस (अग्नि बीज) बीजों को बंधे हुए दोनो शब्दों से मिलावे। सांप से काटे हुए पुरूष के हृदय कमल में उसके नाम को मंत्र से वेष्टित करके उस डंसे हुए के नाम के ऊपर एक सौ बार चंद्रमा का ध्यान करे, तो उसकी मृत्यु से रक्षा हो सकती है॥

मंत्रोद्धारः

हं वं मं सं तं

कवेर्मध्ये ककारारयांश्चत्वारश्चतुरः क्रमात्,
विन्यस्टो द्वामतो वर्णान परमाख्या क्षरावलीन ॥ ३६ ॥
इत्थं वर्ण चतुष्कै स्तैरष्टभिः कवि मध्यगैः पिंड़ाः,
स्युरष्टौ कुलिक पदेन कृत वेष्टनैः ॥ ३७ ॥

तानष्ट पिंडाना रभ्य पदमद्यामा जानुतः क्रमात्,
आनाभि नाभेरा कंठ कंठादा मस्तकं क्रमात् ॥ ३८ ॥

वाम पार्श्वदिकं न्यस्य स्वेतन मध्य स्थितं स्मरेत्,
दष्टवैनं मंत्रिणां नागा ग्रहाश्च विभियुः परं ॥ ३९ ॥

कवि (ऋ) के मध्य में ककार आदि चार बीजों को क्रम से रखे। उत्तमोत्तम नाम वाले अक्षरों की पंक्ति को वर्णों के बाँई तरफ रखे। इसप्रकार चारों वर्णों के बाहर आठ पिंड़ों को कवि के मध्य में के बीजों से जो आठ कुलिक पदों से घिरे हुए हैं। पिंड बनता है। उन आठों कुलिक पदों के पिंडों से वेष्टन करके, उन आठ पिंडो से पैर से घुटनों तक और नाभि से क्रमशः कंठ तक, और कंठ से क्रमपूर्वक मस्तक तक, बायें अंगो की तरफ रखकर अपने को उसके बीत में खड़ा हुआ ध्यान करे। इस मंत्री से डरकर नाग और सब ग्रह भाग जाते हैं।

गरूड़ हस्त विधान

क्षिपॐ स्वाहा बीजानि न्यसेत्पाद नाभि हृन्मुख शीर्षेषु,
पीतसित कांचनासित सुरचाप निभानि परिपाट्यः ॥ ४० ॥

क्षिप ॐ स्वाहा इन पांचो बीजों को क्रम से निम्न प्रकार से अपने अंगो में स्थापित करे। क्षि बीज को पीले रंग का दोनों पैरों में, प बीज को सफेद रंग का नाभि में, ॐ बीज को कांचन वर्ण का हृदय में, स्वा बीज को काले रंग का मुख में, हा बीज को इन्द्र धनुष के वर्ण का सिर में स्थापित करे।

भूजला नल मरून्नभोक्षरं पाद नाभि हृदयास्य मस्तके,
न्यस्य मंत्र्यऽभिहित द्युतिः क्रमात् पक्षिराजमनु चिंतयेन् निजं ॥ ४१ ॥

पृथ्वी जल(प), अनल (अग्निॐ), मरून (वायु स्वा), नभ (आकाश हा) अक्षरों को अपने पैर, नाभि, हृदय, मुख और सिर से स्थापित कर मंत्री अपने को पक्षीराज (गरूड) से प्राप्त किये हुए महान तेज युक्त ध्यान करे ।

आजानुतः सुवर्णं छविः मा नाभेः सुधीः प्रभा धवल,
आकंठा दरक्त द्युतिमा के शांतात्तमो वर्णा ॥ ४२ ॥

पांव से घुटनों तक सोने के समान पीले रंग का, घुटनो से नाभि तक सफेद कांति का, नाभि से कंठ तक लाल रंग का औरकंठ से केशों के अंत तक तम (अंधकार) के समान काले रंग का

आरक्ताक्षं निखिलं त्रैलोक्य व्यापिनं गरून्मंतं आनील,
नाशिकाग्र भूषितामुरगाधिपै र्द्धयायेत् ॥ ४३ ॥

फिर उस तीन लोक में व्याप्त गरुड़ के नेत्रों का लाल रंग और उसकी नासिका को नीले रंग का ध्यान करे।

उद्धर्वाधो रेफाभ्या मों कारेणापि संयुतं कूटं,
व्योमं चरणमोपेतं भेदित मितरऽत्र कर्णिका कथिता ॥ ४४ ॥

स्यु: कैशरा: स्वरा काद्या: वर्गा: सप्त चापि दश वर्गो,
अपि पत्राणराऽष्टौ विष रोग रिपो मातृका: बजश्च ॥ ४५ ॥

औंकार को उपर और नीचे रेफ सहित कूटाक्षर (क्ष) और व्योम अर्थात् अनुस्वार या आकाश (हा) चर को नमः युक्त करके अर्थात् ॐ क्ष्रौं हा चर नमः मंत्र को कर्णिका में लिखे केशर रूप से कहा है। क आदि कवर्ग, चवर्ग, टवर्ग, तवर्ग, पवर्ग,यवर्ग, शवर्ग और सोलह मातृका (स्वरों) सहित आठ पत्तों के कमल में लिखे। यह आठों तरह के विष,रिपु, रोग का शुत्र मातृका नाम का कमल होता है।

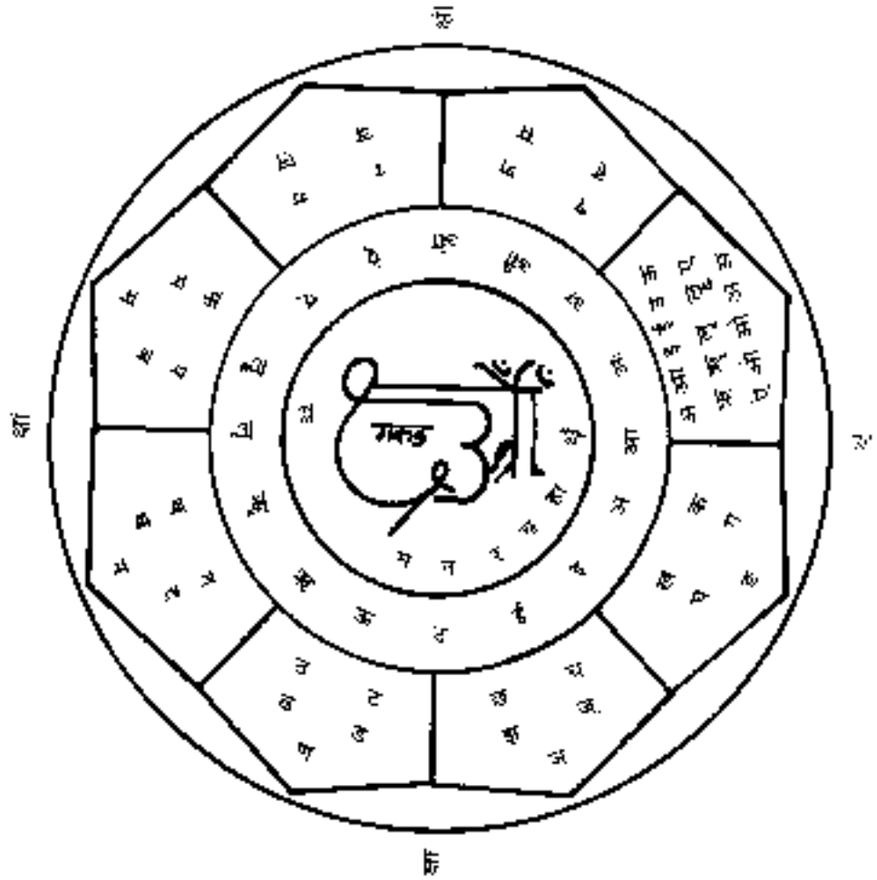

पश्चिम दलाद्य भेदित भेदित पीताक्षराणि चत्वारि न्यस्य,
क्रमात् स्वकीये हस्ते हृदये च तं ध्यायेत् ॥ ४६ ॥

पश्चिम की तरफ के दल में सम्पूर्ण और आधे चार पीले अक्षरों को रखकर उसका ध्यानक्रम से अपने हाथों और हृदय में करे।

अंगुष्ठाद्यं गुलि मध्यम पर्व सु मंडलानि विन्यसेत्,
ता र्क्ष्या क्षराज सवर्ण द्वि जिव्ह बीजै रूपेतानि ॥ ४७ ॥

अंगूठे, तर्जनी, मध्यमा, अनामिका और कनिष्ठा आदि अंगुलियों के शखों में पांचो मंडल गरूड के अक्षरों के सुवर्ण द्वि जिव्ह बीजों सहित रखें।

भूतात्मीया हिनां नामाद्यानक्षरान् गुणांश्च,
मंडलपंचक मध्ये कुर्यान्मंत्र च विन्यसेत् ॥ ४८ ॥

उन पांचों मंडलों में भूत आत्मीक अथवा सर्प के नाम के अक्षरों सहित मंत्र को रखे।

अंगुष्ठाद्य मुंलि पर्व सु विपरीते भेदितो न्यसेत्,
स्वरपूर्वकम क्षरं पंचक मपि मंत्रि क्रमेणैव ॥ ४९ ॥

मंत्री अंगूठे आदि पांचों उंगलियों के पोखों में उलटे आधे स्वर सहित पांचों अक्षरों को रखे।

इत्थं ध्यातो विनता नंदन हस्ता विधान एष कर:,
वाम: कुर्यात् स्पर्शात्स्थावर जंगम विषाक्षेपान ॥ ५० ॥

इसप्रकार (विनत नंदन) गरूड हस्त विधान से ध्यान पूर्वक उसे बायें हाथ से छूने से सब प्रकार के स्थावर जंगम विष नष्ट हो जाते हैं।

आजान्विता द्युक्त स्थान विभागस्थ निजवपूर्वर्णं,
गरूड स्वं मनु ध्यायन् दष्टं तेन स्पृशेन मंत्री ॥ ५१ ॥

घुटनों से लगाकर पूर्वोक्त स्थानों में अपने शरीर के वर्ण का ध्यान करता हुआ औरअपने को गरूड जानता हुआ मंत्री उससे काटे हुए पुरुष को छुवे।

अथवात्र तार्क्ष्य हस्ते क्षिप्तं प्रभृतीनां निवेशयत्,
स्थाने वर्णांश्चतुरो वर्णानां लवरद्यान् मंत्री ॥ ५२ ॥

अथवा इस गरूड के हाथ में शीघ्र तब ल व र य इन चार वर्णो को मंत्री स्थापित करे।

इति गरूड हस्त विधानं समाप्तं

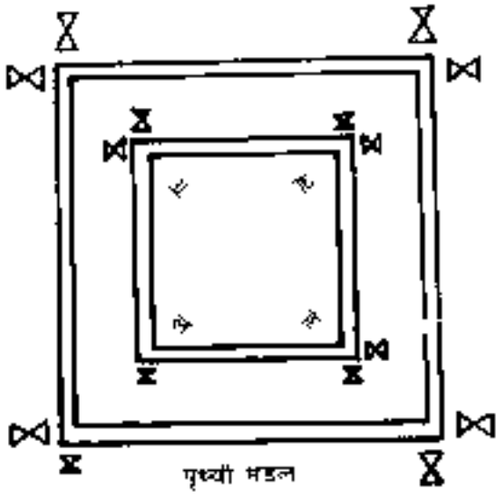
पृथ्वी मंडल

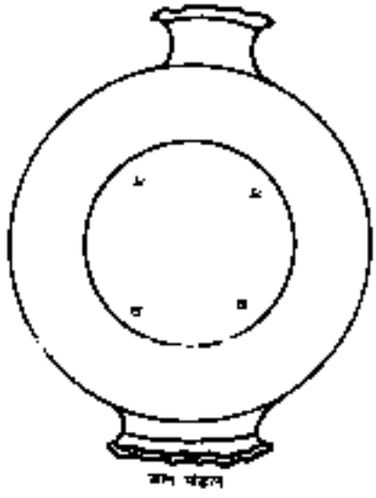
जल मंडल

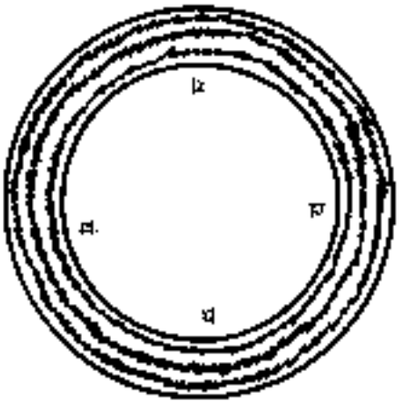
वायु मंडल

अग्नि मंडल

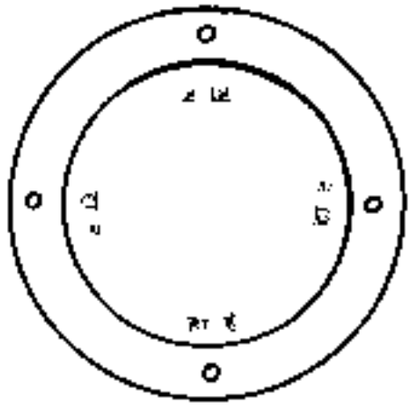
आकाश मंडल

जलभूमि वह्नि मारुत गगणैः सं प्लावयोपतैः,
भवति च विषापहार स्तर्जन्याक्षालनाद चिरात् ॥ ५३ ॥

जल (प) भूमि (क्षि) वह्नि(ॐ) मारुत (स्वा) गगणै (हा) च पक्षि ॐ स्वाहा सं प्लावय इस मंत्र को बायें हाथ की तर्जनी से चलाने से शीघ्र ही विष दूर हो जाता है।

पक्षिॐ क्षि स्वाहा संप्लावय-संप्लावय मंत्र है।

वह्नि जल भूमि पवन व्योमाग्रं दह पचं द्वयं योज्यं,
स्तोभद्य युगलं स्तोभो मध्यमिका चालनाद् भवति ॥ ५४ ॥

ॐ पक्षि स्वाहा दह-दह पच-पच स्तोभय-स्तोभय ॥

इस मंत्र का मध्यमा उंगली से अपने से दष्ट पुरुष को कुछ आवेश होता है।

आद्यंते भू बीजं मध्ये जल वह्नि मारूतं योज्यं,
स्तंभय युगलं स्तंभो वाम करों गुष्ट चालनंत: ॥ ५५ ॥
क्षिप ॐ स्वा स्तंभय स्तंभय क्षि

इस मंत्र का बायें हाथ के अंगूठे से जपने से विष का स्तंभन होता है।

व्योम जल वह्नि पवन क्षिति युत मंत्राद् भवत्य यावेश:,
स क्षि प हा पक्षि पह: पवनेन कनिष्ट का चालनात ॥ ५६ ॥
हा प ॐ स्वा क्षि सं क्षि प हा हा पक्षि प ह: ॥

हा प ॐ स्वा क्षि सं क्षि प हा प क्षि पह: इस मंत्र को बायें हाथ की कनिष्ठा उंगली से जपकर चलाने से पुरुष के शरीर में नाग आवेश करता है।

मुरदग्नि वारिधात्री व्योम पदं संक्रम व्रज द्वितयं,
चालितयोऽनाभिकथा नितरां विष संक्रमोभवति ॥ ५७ ॥
स्वा ॐ पक्षि हां संक्रम-संक्रम व्रज-व्रज ज्वल-ज्वल जट-जट विजट-विजय
अनंत ॐ ठ:ठ: ॥

इस मंत्र को अनामिका से जपकर चलाने से विष का संक्रमण होता है।

शोषा दीना मयं यंत्रो नियुत त्रय जापत: सिद्धेदे,
तेन शोषादीनाम युक्तेन मंत्र वित् ॥ ५८ ॥

शेषादि नामवाला मंत्र तीन नियुत (तीस लाख) जाप से सिद्ध होता है। उसे मंत्री का नाम सहित सिद्ध करे.

पाद जंघा मेठर नाभि हंत् कंठ मुख मस्तकं,
क्रमेणयोजितं तेषां स्पृष्टवा तत् तद् विषं हरेत् ॥ ५९ ॥

इस मंत्र को युक्त करके पैर,जांघ, इंद्रिय, नाभि, हृदय का मुँह और मस्तक को छूने से उस उस स्थान का विष नष्ट हो जाता है।

अजितेन युतं कूट: पूज्यस्तारोऽग्नि वल्लभा,
तार्क्ष्य पंचाक्षराण्येष नेत्रा तांगो मनु: स्मृत: ॥ ६० ॥
क्षिपॐ स्वाहा ज्वल-ज्वल महा मति ठ: ठ: हत गरूड़ चूड़ानन ठ:ठ: शिखा ॥

(अजित(इ) से युक्त कूट (क्ष) पूज्य (प) तार(ॐ) अग्नि (स्वा) वल्लभा (हा) अर्थात् क्षिपॐ स्वाहा यह पांच गरुड के अक्षर है । और इनके अंग नेत्र आदि है। यह मनु: द्वारा कहा गया है।

क्षिपॐ स्वाहा ज्वल-ज्वल महा मति ठः ठः हत गरूड़ जनन ठःठः हत गरूड चूडानन ठः ठः ॥

इस मंत्र को पढ़कर शिखा को छूवे।

गरूड प्रभंजन-प्रभंजन विध्राशय-विध्राशय विमूर्द्धय ठःठः कवचं ॥

यह कहकर कवच की क्रिया करे।

ॐ अप्रतिहत वला प्रतिहत शासवर हुं फट ठः ठः। अस्त्रं

यह पढ़कर अस्त्र दिखाने की क्रिया करे।

उग्र रूप धारक सर्प भयंकर भीषय-भीषय सर्पान दह-दह भस्मी कुरू भस्मी कुरू-कुरू ठःठः नेत्रं ॥

इस मंत्र को पढंकर नेत्र को छूवे।

पुरश्चरेण मेतस्य मनोलक्ष जपोमत: स्थावरं,
जंगमं चैव कृत्रिमं च विषं हरेत ॥ ६१ ॥

यह पुश्चरणमंत्र है। इसको मन लगाकर एक लाख जप करने से स्थावर, जंगम और बनावटी सबप्रकार के विष नष्ट हो जाते हैं।

नेत्रय मंत्रस्य धूपाद्यं वितार स्यास्य संजपात्,
आविष्टश्च भवेदृष्टं स्व वृतं च निवेदयेत् ॥ ६२ ॥

नेत्र मंत्र को पढ़कर धूप देने से और इस वितार मंत्र का जप करने से नाग आवेशित होकर अपना सब हाल कह देता है।

ॐ पक्षिराज राजपक्षि ॐ ठःठः ठीं ठीं वारलव ॐ पक्षि ठःठः ॥
एतेन सहस्त्र त्रय जापात् सिद्धेन गरूड मंत्रेण,
यष्टिता भुवि प्रहरणं सर्वे विषापहरणं भवति ॥ ६३ ॥

इस गरूड मंत्र को तीन हजार जप से सिद्ध करके पृथ्वी में यष्टि(लाठी) मारने से सब विष नष्ट हो जाता है।

तार स्तारेण संयुक्तः प्रज्योति बिंदु संयुतौ,
आर्य रेफा सुधात्सूते मंडलं कलयान्वितं ॥ ६४ ॥

तार (ॐ) को ॐ से युक्त करके उसमें ज्योति (ई) और बिन्दु (अनुस्वार) लगाकर फिर आर्य (ई) में लगा हुआ रेफ (रकार) और कलाओं (स्वरों) से युक्त मंडल अमृत उत्पन्न करता है।

हर हर हृदयाय ठः ठः कुर्द्धिते ठः ठः नील कंठाय ठः ठः काल कूट विष भक्षणाय हुं फट अंगानि ॥

मंत्रस्या नील कंठाख्यो लक्ष त्रय जपाद्वयं सांगः,
सं सिद्धि मयाति विष वेग निषुदनंः ॥ ६५ ॥

उपरोक्त नील कंठ मंत्र का तीन लाख जप करके सिद्ध करे तो विष के वेग को नष्ट करने वाली सिद्धि अंगो सहित प्राप्त होती है।

ॐ नमो भगवते नील कंठाय ठः ठः ॥
लक्ष्य प्रजाप्य सिद्धेन प्रयुक्ते मनुना मुना,
चराचर विषं विश्वे प्रणश्येदौषधादिभिः ॥ ६६ ॥

उपरोक्त मंत्र का एक लाख जापकरके सिद्ध करे तो वह मनुष्य प्रयोग करके यह औषध आदि सब प्रकार के चर और अचर विष को नष्ट कर सकता है।

ॐ नमो भगवती नीलकंठी जमल कंठी सर्मल कंठी क्षिप ॐ स्वाहा ठः ठः ॥
लक्ष जपात् सिद्धो जापादैरेष भवति निर्विष मखिलं,
प्रशमयति नेत्र रोगं विष सर्पकं दंत शूल मपि ॥ ६७ ॥

उपरोक्त मंत्र को एक लाख जप करके सिद्ध करके प्रयोग करने पर सब प्रकार के विष, सर्प,नेत्र,रोग और दांतो के रोग दूर होते हैं।

ॐ नमो भगवते नील कंठी निर्मलाक्षी रूपिणि शीघ्रं हर हर पर पर परि परि हुं फट ठः ठः ॥

द्विगुणीतषड्लक्ष जपादौद्रौ मंत्रोयं भागतेः सिद्धिं,
अभिमंत्रणा द्विषातिं प्रशमयितुम् लक्षणात्सकलां ॥ ६८ ॥

इस रौद्र नीलकंठ मंत्र की सिद्धि बारह लाख जप से होती है। इस मंत्र से अभिमंत्रित करने से क्षण मात्र में सब प्रकार के विष का कष्ट निश्चय पूर्वक दूर हो जाता है।

तूर्य स्तृतीय वर्गस्य ह्यूर्ध्वः शून्य शेखरः,
हंसातो मंत्रिभिः प्रोक्त समस्त विष नाशनः ॥ ६९ ॥

तीसरा वर्ग (च वर्ग) का चौथा अक्षर(झ)में उर्ध्व व और मस्तक (शिकर पर) शून्य बिन्दी अनुस्वार लगाकर अंत में हंस पद अर्थात् झ्वीं हंसः यह मंत्र सब प्रकार के विष को नष्ट करता है।

शून्यं वकार युक्तं स विसर्गं पुंडरीक सं काशं,
वाम करे विन्यस्तं तक्षक दष्टमपि निर्विषं कुरूते ॥ ७० ॥

शून्य हकार में वकार और विसर्ग लगाकर अर्थात् व्हः इस एकाक्षरी मंत्र को बायें हाथ में लगाने से तक्षक और पुंडरीक सर्प के डसे विष की शंका(भय) को भी निर्विष करके दूर करता है॥

शादेर्वर्गास्यात्यो पृष्टे दष्टस्य यष्टि संयुक्तं,
विन्य स्यांगुष्टेन तदा क्रम्य जपेत् तद विषाय ॥ ७१ ॥

यदि सादि वर्ग सवर्ग के अंतिम अक्षर(ह) को पृष्ट अर्थात् आगे यष्टि (अनुस्वार) सहित करके हं बीज को अंगूठे से जपे तो विष के आक्रमण को दूर करता है।

स्वयंभ्व स्तैर्युक्तं न्यस्य सर्वांग संधिषु,
चन्द्र स्थितं तदनु हंसः पदं मंत्रि विषं हरित् ॥ ७२ ॥

स्वयंभू(ल) में यदि मंत्री वं स्वर सहित और हंस से युक्त करके अंग के सब जोडों में में लगावे तो सब प्रकार के विष को दूर करता है। ॐ लं वं हसः ॥

ॐ वं पूर्व कटूः सविशग्गोंवदन मध्य विन्यस्तः,
त्रिविंध विषमपि हन्त्यु चारितोप्यर्थं दुष्ट दुःखानिः ॥ ७३ ॥

ॐ वं क्षः

उपरोक्त मंत्र के पश्चात विसर्ग सहित कूटाक्षर ॐ वं हंस क्षः इस मंत्र को मुख में कमल में लगाने से बोलते हीं । तीनों प्रकार के विष (स्थावर, जंगम और कृतम) और दुष्ट दुःखों को नष्ट करताहै।

ॐ वं क्षः

ॐ एहि एहि माये भेरूंडे विज्जाभरिय कंरडे तंतु मंतु ओघोषई हुंकारेण,
विषणासई स्थावर जंगम किट्टिम जंगम किट्टिम जं ॐ ह्रीं देवदत्त विषं हर हुं फट्।

सं सिद्धो यस्य भेरुंडा मंत्रोयं श्रंवणां तरे,
जल्पोर्दष्ट सन्यसतं निर्विषी कुरुतः नरं ॥ ७४ ॥

जिसको उपरोक्त भेरुंडा मंत्र से सिद्ध होता है यह इस मंत्र को डँसे हुए के कान में सुनाकर पुरुष को विष रहित कर देता है।

धात्री समरिणां वर बीजाक्षर जापित सलिलि विन्यासः,
अंगुलि चलनेन नरं निश्चल मपि चलयति स्वैडं ॥ ७५ ॥
क्षिप स्वाहा

धात्री (पृथ्वी) क्षि में समिरणा (वायु, अक्षर स्वा) और अंबर (आकाश अक्षर) हा के बीजाक्षरों अर्थात् क्षि स्वाहा इस मंत्र को जल पर पढकर उसमें अपनी उंगली चलाकर अंग न्यास करने से सर्प विष से निश्चेष्ट पुरुष भी अपनी इच्छानुसार गमन करता है।

भूजल मरुन्नभोक्षर मंत्रेण घटेंबु मंत्रितं कृत्वा,
पादादि विहित धारा निपादनाद भवति विष नाशः ॥ ७६ ॥
क्षिप स्वाहा

भू पृथ्वी अक्षर क्षि और जल अक्षर प और नभ (आकाश) अक्षर स्वाहा इस मंत्र से घड़े के जल को मंत्रित करके उसकी धारा को सिर से लगाकर पैर तक डालने से विष का नाश होता है।

महीजल समीरणां वर मंत्रित सलिलेन सिक्त वदनोयः,
प्रगटयति श्वास मसौ जीवति खलु ने तरो दष्ट ॥ ७७ ॥

मही (पृथ्वी) क्षर क्षि, जल (प) समीरणा (वायु) स्वा, अंबर (आकाश) हा ,अर्थात् 'क्षिप स्वाहा' मंत्र से मंत्रित जल से जिसका मुँह सींचा या धोया जातधा है यह सांप के विष से मरा हुआ मूर्छित पुरुष भी तुरंत श्वास लेने लगता है ,और जी जाता है।

अभिमंत्रितं यद उदकं मणितैः फणिनां पुरा फण मणिभिः,
दष्ट स्यांगे से स्तैन कृतः सकल गरल हरः ॥ ७८ ॥

इस प्रकार उत्तम सर्पो के प्राचीन मंत्रों से अभिमंत्रित जल से सर्पों के डसे हुए पुरुष का मुख आदि धोने से सींचने से सबप्रकार के विष नष्ट हो जाते है।

फणि राजांष्टक मारुत गगनाक्षर जपित तोय धाराभिः,
सिक्त हृदयः स दष्टश्चो तिष्ठति तत्क्षण देव ॥ ७९ ॥

उत्तम सर्पों के अंक (अर्थात् आठ प्रकार के सर्प कुल) ९ के बीजों कं खं गं घं चौं छौं जीं झीं में वायु अक्षर (स्वा) (मारुत अक्षर) और गगन (अक्षर (हा) बीज लगाकर उस मंत्र से अभिमंत्रित जल की धारा से हृदय को धोने से डसा हुवा पुरुष उसी क्षण उठ जाता है।

कं खं गं घं चौं छौं जीं झीं स्वाहा॥

चचतुर्थं कूट सांतानि प्रणवमुखानि बिन्दु युक्तानि,
दीर्घं ल पर स्थितानि च मारुत गगना व सानानि ॥ ८० ॥

चवर्ग का चौथा अक्षर झ और कूटाक्षर(क्ष) और सात अक्षर में दीर्घ लपर अक्षर (व) मे बिन्दु लगाकरआदि में प्रणव (ॐ) और अंत में वायु (स्वा) तथा आकाश (हा) में बीज लगावे। ॐ झ्वां क्ष्वां ह्वां स्वाहा॥

धंत्योतानि अभिमंत्रित जल सिक्तांगस्य देहिनां,
गरला न्युक्त ध्यानत्सकलं परोक्षमपि मंत्र बीजानि ॥ ८१ ॥

इन बीजों से अभिमंत्रित जल से सर्प के काटे हुए शरीर को भिगोने से सब प्रकार से परोक्ष होते हुए भी सब विष को नष्ट कर देता है।

सोद्धाधोर मकारं कूटं बिन्दुवान्वितै स्वरै युक्तः,
वामंज्योति र्जिष्णाक योग रजोभि महामंत्र ॥ ८२ ॥

ऊपर और नीचे रेफ युक्त मकार बिन्दु और स्वरों सहित कूटाक्षर (क्ष) और वाम अक्षर (ॐ) ज्योति (ई)जिष्णा (ऊ) के योग का रजो महामंत्र बनता है।

वाम करे गुष्टादं गुलि मध्य पर्व सु क्रमांदेवं,
न्यस्यंत लेपिन्यस्यात् संस्यांत कला युतं व्योमां ॥ ८३ ॥

बाँये हाथ की अंगुलियों के पोरों और जोड़ा और हथेली में उपरोक्त मंत्र को अंत की कल (अः) तथा आकाश (ह) सहित लगावे।

मंत्रेण तेन जप्तं वारि धृतं तेन वारि हस्तेन,
दष्टस्य मुखे विकरेत्सहसैव सयातिच निर्विषतां ॥ ८४ ॥

इस मंत्र को हाथ में लेकर जपे और फ़िर हाथ के पानी को डसे हुए के मुख में पानी डाले तो वह तुरन्त ही विष रहित हो जाता है।

क्षां क्षीं क्षूं क्षें क्षैं क्षों क्षौं क्षं क्षः
सं जप्तैर्वारि भि मुंखे से कात दष्टस्य,
मानुषस्य स्यान्नि र्विषताक्षणाहे व ॥ ८५ ॥

यदि क्षां क्षीं क्षूं क्षें क्षैं क्षों क्षौं क्षं क्षः मंत्र से जल को अभिमंत्रित करके डँसे हुए के मुख में पाणी डाले तो वहउसी क्षण विष रहित हो जाता है।

कूटस्थ स्वर युक्ता झ भ म य व स ह इमे पृथक सप्तवर्णा
स्तथा प्रयुक्ताः क्ष्वेडं निरिवलं निरस्यिंति ॥ ८६ ॥

कूट अक्षर(क्षकार) में स्थित स्वर सहित कमलबीज झ भ म य व स ह यह सात वर्ण पृथक-पृथक प्रयोग किये जाने से संपूर्ण विष को नष्ट कर देता है॥

ॐ नमो भगवते पार्श्वनाथाय क्षिप स्वाहा ह्वीं क्ष्वीं हंसः ॥
दष्टस्य वदने सिंचेज्जल मेतेणा मंत्रितं ततो,
विषस्य सर्वस्य विष मोक्षः क्षणादभवेत् ॥ ८७ ॥

इस मंत्र को पढ़कर ड़से हुए के मुख में जल डालने से क्षण मात्र में ही सम्पूर्ण विष नष्ट हो जाताहै।

ॐ सुवर्ण रेखे कुर्कट विग्रह रूप धारिणी स्वाहा ॥
विद्या सुवर्ण रेखेय मेतज्जप्तेन वारिणा दष्ट स्यांगे,
समा सेकः कृतः स्याद्विष वेग जित ॥ ८८ ॥

इस सुवर्ण रेखा मंत्र से अभिमंत्रित जल से ड़से हुवे पुरुष के अंगो को भिगोने से विष का वेग नष्ट हो जाता है।

वाम हस्ते स्वरैश्चंद्र मंडलेन च वेष्टितं,
ध्यायेत ह्वींकारममृतं श्रवतं ममृत प्रभां ॥ ८९ ॥

तेन हस्तेन सं स्पृष्टं भस्म वार्योषधादिकं,
वितीर्णं द्रागपा कुर्यात विषरोग ग्रहादिकान् ॥ ९० ॥

बायें हाथ में स्वर और चन्द्र मंडल से वेष्टित अमृत के समान ज्योति वाले ह्वीं बीज को अमृत बरसाते हुए ध्यान करे। उस हाथ से छूकर दी हुयी भस्मी जल या औषधि आदि विष रोग और ग्रह आदि को तुरन्त ही नष्ट कर देते हैं।

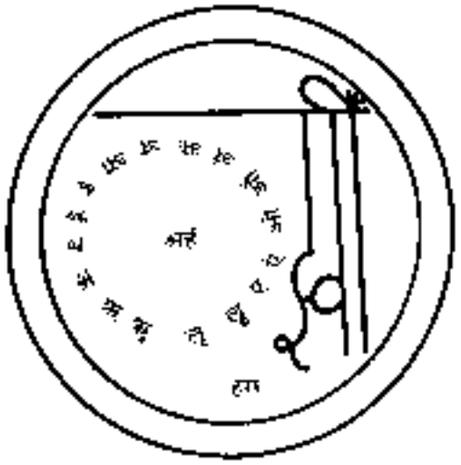

न्यस्य वकारं शीर्षे वंर्षत स्वेत ममृत धाराभिः,
स्नपयंतं सकल तनुं भवति सः संपूर्ण शशधरं हृदयो ॥९१॥

सिर में श्वेत अमृत धाराओं को बरसाते हुए वकार का ध्यान करे। फिर उस अमृत धारा से स्नान किया जाता हुआ ध्यान करने से पूर्ण चंद्रमा के हृदय वाला हो जाता है।

चितं यंतु तर्ण मेवं विषाणि सर्वाणि नाश मुपयंति,
क्षण मात्रादपिलोके भूतग्ग्रह शाकिनी दोषाः ॥९२॥

इसप्रकार ध्यान करने से लोक में सर्व विष भूतग्रह और शाकिनी के दोष क्षण मात्र में ही नष्ट हो जाते हैं।

व हि म करौ गिरि राज मस्तक स्थौक्षणमिह चिंतय सुत्सुधां प्रवाहौ,
रजनीकर समान पांडूरांगौ विषम फणीद्रं विषापहार दक्षौ ॥९३॥

य और चंद्रबीज ठं को हिमालय पहाड़ के मस्तक पर उत्तम अमृत को बरसाते हुए चंद्रमा के समान अत्यंत श्वेत ध्यान करने से विषम सर्प का विष भी नष्ट हो जाता है।

को पं वं झं हंसः सं वं हं झं हंसः झं हंसः इति च
वं झं हंसः झं हं हंसो हंसः सो विनता सुत तोषितो मंत्रः,
को पं वं झं हंसः वं हं झं हंसः झं हं हंसः ॥९४॥

यह गरुड तोषित मंत्र है (विनता सुत अर्थात् गरुड)

शून्यं शून्य शिर स्थं शून्य द्वय संयतुं शिरोहीनं,
शून्य पदे विन्यस्तं सितवर्णं सर्व गरल हरं ॥९५॥

शून्यं शून्य अर्थात् बिन्दु सहित शून्य ७ हकार फिर दो बिन्दु सहित सिर रहित हकार लगाकर श्वेतवर्ण के शून्य पद में रखने से संपूर्ण विष नष्ट हो जाता है। हं हः ह

एकादशाक्षरोपेतं मंत्रं मंत्री प्रसाधयेत्,
पूर्व विद्वान् प्रयत्नेन कुर्यात् कर्म ततोऽग्रिमं ॥ ९६ ॥

यह ग्यारह अक्षरी मंत्र है। मंत्री इसकी पहले ही साधना करके सिद्ध करे। विद्वान मंत्री प्रयत्न करके इसको आगे काम में लावे।

वं हं झं ह्वीं हंसः पक्षि जः जः जः
कुंभेषु रंगमध्यै अमृत मयं तोय मंडल समानं,
सं चित्य सकल लोकं सिंचे त्रत जपेन तोयेना ॥ ९७ ॥

घड़ों में रंग भरकर उसमें अमृतमय जल मंडल का ध्यान करके जल का जप करने से सब लोक को इस जल सींचता हुआ चिंतवन करे।

सं तुर्य स्वरं गे दष्ट कर युग्म आत्मनं स्तेन,
इति रंग विधिं कृत्वा विष हरणं तदनु कुर्वीत ॥ ९८ ॥

चौथे और सांतवे रंग के घड़ों में सर्प से डसे हुए के दोनों हाथों को रखकर रंग विधि करने से शीघ्र ही विष नष्ट हो जाता है।

आत्मानं तार्क्ष्य रूपेण तमादायाहि भक्षितं,
क्षीरां बुनीर पूर्णेदुं गेहे क्षिप्तं विचिंतयेत् ॥ ९९ ॥

अपने आप को सर्प भक्षण किया हुआ गरुड रूप धारी ध्यान करे फिर घर को दूध, अमृत तथा जल से भरे हुए चंद्रमा से पूर्ण ध्यान करे।

मज्जनोन्मज्जने ध्यायेद् यावदभवति निर्विषः,
नील नीलाग्रिमं क्ष्वेडं चिंतयेत्सततं च तत् ॥ १०० ॥

उस चन्द्रमा में तब तक ध्यान करने तथा फिर निकल आने का ध्यान करता रहे जब तक पूरा विष उतर न जावे और उस विष को निरन्तर अत्यंत नीला ध्यान करे।

दष्टां क्षतस्य तस्याभि चिंतयो द्विष निर्गमं,
यावदन्निंशेषं सर्पोग्र विष छेदो भवे दिहि ॥ १०१ ॥

सर्प की डाढ़ से जख्मी उस डसे हुए की तब तब विष निकालने के लिये स्नान करता हुआ ध्यान करे जब तक विष पूर्ण रूप से नष्ट न हो जाय।

वांछेदवयवं तस्य निर्विषीकर्तु मंजसा,
तद्वाराशि मयंध्यायेन्मग्नंवा तत्सुधा ह्रदे ॥ १०२ ॥

जिस पुरूष को शीघ्र ही विष रहित करना चाहा जाय उसको ही उस अमृत रूप तालाब में डूबा हुवा ध्यान करे।

शशधरकर निकर समाधाराः सर्वांग रोम कूपेषु,
यांति विषं प्रविशंत्यो ध्यानाद गगनाकलं विन्दोः ॥ १०३ ॥

तब चन्द्रमा की किरणों के समान वह अमृत की धारायें इसके सब रोम रोम के स्थानों में प्रवेश करती हुयी विष को नष्ट कर देती है।

वाम भागे चित्य नीरं कृत्वा वा वायु निरोधनं
मार्तडं क्षेत्र मीक्षिण कुर्यात् क्ष्वेड विनाशनं, ॥ १०४ ॥

अथवा श्वास को रोककर बायें भाग में जल का ध्यान करके सूर्य के स्थान को देखे तो विष नष्ट हो जाता है।

स्वर्णाड खंडोच्छित याक्ष पिंत्या भिन्नति भेधः परकीय कंदः,
स्वर्णान वितो न् भयादि दूरः कदां दि ह्यानिर्विष मातनोति ॥ १०५ ॥

सोने के अंडे के टुकड़े से उठा हुआ तेज दूसरे के विष की कन्द(मूल) को छेद डालता है उसी सोने से युक्त होकर मनुष्य सर्वभय से छूट जाता है और उसी से विष जड़ से नष्ट हो जाता है।

आत्म प्रमाण विधृते श्वासे दष्टस्य मुर्छना सहसा,
सं मुक्ते च विनाशो विषस्य सर्वस्य संभवति ॥ १०६ ॥

उस सोने के अंडे को अपने बराबर बडा उस सर्प से काटे हुए पुरूष के श्वास में ध्यान करे ऐसा करने से वह यकायक मूर्छा से जग जाता है और उसका संपूर्ण विष नष्ट हो जाता है।

अमृतं श्रवता वारूण बीजैना वष्टितस्य दष्टस्य,
विन्यस्योत्पट मृज्वा उच्छन्नाया स्तनोरूपरि ॥ १०७ ॥

उस सर्प से काटे हुए पुरुष को अमृत बरसाते हुए वारुणी बीज (व) से घिरा हुआ ध्यान करे फिर उसके स्तनों के ऊपर ढ़के हुए वस्त्र को हल्के से उठा देवे।

न्यस्येच पटस्योपरिंऽमृत श्रवदिंदुबिंब मध्य गतं,
जातं सभ्य मुखेषु च निर्गलदऽमृतं विद्यो बिंबं ॥१०८॥

फिर कपड़े के ऊपर अमृत चुआते हुए चंद्रमा के मंडल का ध्यान करे उस चंद्रमा का निकलता हुआ अमृत उस पुरुष के मुँह में भी टपकता रहे।

द्विर्मुष्टेत्यऽन्यतमं सभ्यानां पाठयन् पठन मंत्री,
आकर्ष्टुं दुस्तिष्टेऽदृष्टो विष वेग निमुर्क्त : ॥१०९॥

फिर मंत्री द्विमुष्टि आदि आगे लिखे हुए मंत्र को पढ़ता हुआ डसे हुए पुरुष के विष के वेग को नष्ट कर देता है।

ॐ नमोभगवते पक्षि रूद्राय विष सुरप्तमुत्था पय दष्टं कंपय-कपंय जल्पय-जल्पय काल दष्ट मुत्थापय-मुत्थापय चल-चल मोचय-मोचय पातय-पातय वर रूद्र-रूद्र गच्छ-गच्छ वंय-वंय चट-चट उड्ड-उड्ड तोलय-तोलय मुष्टिना संहर विषं ठःठः॥

शिखि मुद्रेण स्मरता मंत्रम मुं ग्राम नगर दाहाद्याः,
ब्रुवता कथा स्तदाच्छादन पटमाकृष्य दष्ट उत्थाप्यः ॥११०॥

शिखि मुद्र से ध्यान करता हुआ मंत्र पढ़ता हुआ ग्राम नगर आदि के जलाने की कथा कहता हुआ रहे फिर ओढ़ने के कपड़े को उठाने से डसा हुवा पुरुष उठ जाता है।

तारंवरूण धरि त्रीपुर मध्यगतं विचिंतये द्वदने,
दष्टस्य पुनःकथयेत्कथा वृताब्ज स्त्रगऽमरेद्रं ॥१११॥

पुरुष श्रेष्ठ मंत्री कमल की माला पहने हुए उस सर्प से काटे हुए के मुँह में ॐ कार जल मंडल और पृथ्वी मंडल का ध्यान करता हुआ फिर कथा कहने लगे।

दुर्मनस विमना भोजैः क्षीरां बुधिं तरति तद
ध्वज गतः सित वपुर्न्निरीक्षतः केन शाक इति,
अनयागत विष वेगः कथया दष्टो मया संश्रितभंगिन
दष्टः कथयन सत्व मुत्तिष्टेन्नेत्र कर्णेन ॥११२॥

परेशान मन से, बेमन की इच्छा से भोजन करने वाला, इसे हुए पुरुष की मलिन बुद्धि कमलों की सुगंध से तथा क्षीर सागर के दूध से ध्वजा के समान उज्ज्वल होने लगती है। उसका शरीर निर्मल होने लगता है। इस प्रकार कथाओं से उसके विष का वेग कम होने लगता है उसको देखकर उसकी आंखो और कान में यह कहकर उठावे कि मेरी रक्षा करने से तुम्हारा विष दूर हो गयाहै।

ॐ ह्रीं रूद्राय किरात रूपिणे विष वंद्योसि मुदितो सि कीलितोसि तिष्ठ तिष्ठ माचल माचल समी समी समीर समीर समाणा समाणा ठ ःठः॥

शबर निहितोसि करिणो मरणं कथयन्न नेन मंत्रेणा,
विष वेग मपा कुर्य्या कुलिक स्याप्या श्रु मंत्रज्ञैः ॥११३॥

तुमको भील ने उठा रखा है इस प्रकार कान में उसके मरण को कहता हुआ इस मंत्र से कुलिंग नाग के विष को नष्ट करे ऐसा इस मंत्र के जानने वालों ने कहा है।

ज्वरबाल ग्रह शांति स्तोभन सं स्तंभ संक्रमा दीनि,
आ क्रीडनादि मंत्रः किरात रूद्रोय मावहति ॥११४॥

यह रुद्र किरात् मंत्र ज्वर और बालकों के ग्रहों को शांत करता हुआ विष का स्तोभन और स्तंभन करके नाग को खिलाता है।

सिद्धौनियुत जपेन धूतादि क्रीडयैष हरति विषं,
आचमन या चनाद्वा पायस भुक्त्याथवा मंत्रः ॥११५॥

यह मंत्र एक लाख जप से सिद्ध होता है। इसकी सिद्धि के समय में खीर का भोजन करना चाहिये। यह आचमन करके पढ़ने और जुआँ खेलने के काम आता है तथा विष को नष्ट करता है।

तन्मांस रूधिर मज्जास्थि धातु प्राणागतं निवर्त्तय,
विषमनेक क्रीडनकरः सर्वकर्म कर ॥११६॥

उसके मंस, खून, चरबी, हड्डियों और धातुओं तथा प्राणों में गया हुआ विष भी नष्ट हो जाता है। तथा वह कई प्रकार की क्रीडा करता है। तथा सब काम करता है।

ॐ रूद्र तिष्ट-तिष्ठ चिटि-चिटि ठःठः ॥

अनेन मंत्रितै वारिभिः कृत्वा सत्सेचन क्रियां,
औषधैर्वा पलेपादि विसर्पक विसर्पनुत् ॥११७॥

इस मंत्र से अभि मंत्रित जल डालने या सींचने की क्रिया से या औषधि आदि का मंत्र लेप करने से सर्प का विष नष्ट हो जाता है।

कूरं दग्ध सहितं दत्वोत्तम जातयेषु नरंगे न्यस्य,
पकारं धवलं उकारं मरि वेष्टितं करे वामे ॥११८॥

उत्तम अंग अर्थात् सिर पर पकाये हुवे चावल और दही रखकर बायें हाथ में ठकार से वेष्टित श्वेतवर्ण के पकार की स्थापना करे।

ईकार युतं शून्यं सप्तम वर्गा द्वितीय के उपरि,
अमृतेन भूषित शिरो मया बीजं, तथा भणितं ॥११९॥

फिर ईकार सहित शून्य अर्थात् हकार के आगे सातवें वर्ग का दूसरा अक्षर रकार लगाकर अमृत बिन्दु से शोभित माया बीज हीं को बनावे।

हीं तत्व स्यपुनर्ज्जल्पतु दष्टो तिष्टेति देहि पानीयं,
श्रुत्वेति सलिल भांडं प्रगृह्यदद्यै स तस्यां वमनं ॥१२०॥

फिर बार-बार इस हीं का उच्चारण करके इसे हुए को बैठने को कहे तब वह डसा हुआ पुरूष जल मांगता है। यह सुनकर उसको पानी के बर्तन में लेकर जल दे देवे इससे उसको तुरन्त यमन हो जाएगी।

अष्टम वर्गात्यांक्षर दशम स्वर योजितं पवन बीजं,
षष्टम स्वरोर्द्धवर्त्तिभ्राम्यत् तूर्णं परि न्यस्य ॥१२१॥

फिर आंठवे वर्ग के अंतिम अक्षर हकार में दसवाँ स्वरऋ लगाकर ह्रू बनावे फिर पवन बीज यकार में छठा स्वर ॐ को मिलाकर यूँ बनावे। इन ह्रू और यूँ बीजों को आधी बत्ती की तरह जल्दी-जल्दी घुमाता हुआ रख देवे।

झौंविस्फुरदेतत्संधिषु विन्यस्यति यत्र यत्र दष्टस्य,
तत् तन्नृत्यति तरां करतल हत चाप शब्देन ॥१२२॥

प्रकाशित होते हुए झौं बीज का डसे हुए के जिस जिस अंगो के जोड़ में लगाता है। वही वही अंग तबले के शब्द के समान खूब नाचता है।

चिंतयतैत दपि पुनः भ्राम्यन्यति तस्य शिरसि दष्टस्य,
हस्त स्वानं च वदैत त श्रुत्वा तिष्ठाति क्षिप्रं ॥१२३॥

फिर इस झौं बीज को डसे हुए के सिर में भी ध्यान करे इससे वह सिर गिराकर भी हिलाने लगताहै। फिर उससे कहे कि हाथ का स्यान (शब्द) बतलाओ वह यह सुनकर शीघ्र ही बैठ जाता है फिर उससे कहे।

विध्याटव्यां मध्ये पतितः किं स्वपिषि पथिक निश्चिंतः,
सर्ज्जार्जुनादि पश्यन भंजन करि राज एति विन्यस्य ॥ १२४ ॥

हे मुसाफिर तू विंध्याचल के वन में निश्चिंत होकर पडा हुआ क्यों सो रहा है यहाँ एक बड़ा भारी हाथी शाल,अरजुन आदि वृक्षों को देखता हुआ तथा तोड़कर फेकता हुआ आ रहा है।

वाम हस्ते सरसुंसः मंत्रं निद्दिद मे तेन ,
परिमृशति तदृष्ट हस्ता ख्यानं समाख्य च ॥ १२५ ॥

फिर अपने बायें हाथ में सरसुंसः मंत्र को पढ़ता हुआ स्थापित करके उससे डसे हुए पुरुष को उपरोक्त वाक्य कहकर स्पर्श करे इसे दष्ट हस्ताख्यान कहते हैं॥

सरसुंसः चिंतयितव्यं वाम हस्ते करतल सितं च रूपेण,
कूटेन भूषित दलंकर कर्णिक मग्नि सप्त मध्य स्थं ॥ १२६ ॥

बायें हाथ से अग्नि मंडल के बीच में क्षकार रखकर उसके चारों तरफ अत्यंत श्वेत सरसुंसः बीजों का ध्यान करे।

छिन्नं यदि नयन युगं गुरू विष दोषेण भवति,
दष्टस्य दर्शयति ततस्तूंर्ण प्रसिद्ध मे तत्पुरा चक्रं ॥ १२७ ॥

यदि बड़े भारी विष के दोष से उस सर्प के काटे हुए पुरुष के दोनों नेत्र खराब हो गये हो तो उसे शीघ्र ही पहले से लिखा हुआ यह चक्र दिखलावे।

सप्तम वग्गांत्यस्य द्वितीय कला प्रथम वर्ण संयुक्तं,
षष्ट स्वर विनि विष्टं दशम स्वर योजितं गगन बीजं ॥ १२८ ॥

सातवें वर्ग का दूसरा अक्षर रकार प्रथम स्वर (वर्ण) अकार और छठा स्वर ऊकार और दसवाँ स्वर लृकार सहित आकाश बीज हं अर्थात् र अ अ अ ह्रं या ह्रं

ह्रौंकर हृदय चरण युगलै दत्वैत चिंतितोदहन मध्ये,
निपातर्ति चिर दष्टः खलु व सुधायां जीव रहित इव ॥ १२९ ॥

फिर ह्रौं को क्रमशः दोनों हाथ, हृदय और दोनों पैरों में लगाकर पृथ्वी में जीव रहित के समान पड़े हुवे दष्ट पुरुष को अग्नि मंडल के बीच में पड़ा हुआ ध्यान करे।

नतथापि कर्म कार्यं यथोचित क्षिप्र दष्टस्य,
सं स्तंभनं विष हरणं चापि भणित मगं मीह ॥ १३० ॥

इससे डसे हुए पुरुष के निर्विष कर्म को शीघ्र नहीं करना चाहिये क्योंकि इसके यहाँ पर स्तंभन और विष हरण के भी अंग कहे गये हैं।

नोटः- मूल ग्रन्थ में १२९ श्लोक से २१६ तक के श्लोक नहीं हैं।९३ पत्र से १०० पत्र तक और १४५ पत्र पर दूसरे ग्रन्थ से लिखा है।

नोटः- ग्रथांतरे ९३ से १०० और १४५ पत्र पर लिखा है।

संग्रह मंगन्यासं रक्षा स्तोभं च दष्टस्य स्तंभं,
विष नासनं स चोद्यं फटिका फणि दशंनद वानं च ॥ १३१ ॥

संग्रह दष्ट पुरुषस्य जीवनमस्ति नवेत्ति
वा यत्परिज्ञानं संग्रहः अंगन्यासं,
दृष्टस्य पुरुषस्य शरीराक्षर विन्यासं रक्षा दष्टस्य रक्ष करणं
स्तोभं च दष्टावेश कर च समुच्चये ॥ १३२ ॥

वक्ष्मि कथयामि स्तंभं दष्टस्य शरीरे
विष प्रसरित रोद्य स्तंभं विष नाशनं,
विष निर्विषीकरणं सचौद्यं चोद्येन
रह वर्त्तनी स्याद्य स्तंभं चोद्यं ॥ १३३ ॥

दष्टं पटादिच्छादनादि कौतुकं फटिका फणि दशन दशनं च लिखित,
सर्प दंत दशनस्याष्टांग गारुड़ महं वक्ष्येति संबंध ॥ १३४ ॥

सर्प से काटे हुए पुरुष जीवेगा या नहीं इस ज्ञान को संग्रह कहते हैं। सर्प से काटे हुआ पुरुष के शरीर में बीजाक्षरों को स्थापित करें - यह अंग न्यास है। काटे हुये की यांचना यह रक्षा करना है- काटे हुए के शरीर में विष का फैलना या चढ़ना को रोकना स्तंभ है। विष को नष्ट करना निर्विषीकरण है। सर्प से क्रीड़ा करने को चोद्य और खारिका के नाग में काटने की शक्ति भरने को दर्शन कहते है।

सम विषमाक्षर भाषिणि दूते शशि दिनकरो च वहमानौ,
दष्टस्य जीवितव्यं तदविपरीत मृति दद्यान ॥ १३५ ॥

सम विषमाक्षर भाषिणि दूतो समाक्षर भाषिणि,
दूते विषमाक्षर भाषिणि दूतो शशि ॥ १३६ ॥

दिन करौ च वहमानौ चंद्र दिवाकरौ प्रवर्त,
मानौ दष्टस्य जीवितव्यं समाक्षर भाषिणि ॥ १३७ ॥

दूतौ चंद्र वहमाने दष्ट पुरुषस्य संग्रहमस्तीति
विधात विषमाक्षर भाषिणि दूते ॥ १३८ ॥

सूर्यौ वहमान पुरुषस्य संग्रहमस्तीति
विधात तद्विपरीते मृतिं विधात् समाक्षर
॥ १३९ ॥

भाषिणि दूते सूर्यं वहमानौ विषमाक्षर
भाषिणि दूते चंद्र वहमाने इति स्वर वर्ण ॥ १४० ॥

वैपरीत्य दष्ट पुरुष संग्रह
न विधते इति विंधात जानीयात् ॥ १४१ ॥

यदि सर्प के काटने की खबर लानेवाला दूत चंद्र स्वर में सम अक्षर कहे तो समझना चाहिये कि सर्प से दष्ट पुरुष बच जाएगा, अथवा दूत सूर्य स्वर में यदि विषम अक्षर कहे तो उसकी मृत्यु समझनी चाहिये।

दूत मुखोत्थित वर्णन द्विगुणी कृत्वा त्रिभिर्हरेद्रा
गं सून्योनो द्वरितेन म ति जीवित माद्धरोत्प्राज्ञः ॥ १४२ ॥

दूत मुखोत्थित वर्णन दूतस्यो द्वात प्रसन्नाक्षरान्
द्विगुणी कृत्य तदद्वगुणित राशि त्रिभिर्भागं हरेत ॥ १४३ ॥

तत्रा भागा वशेष जीवितमादिशेत् सून्येन दष्टस्य
संग्रहाधान मादिशेत एक द्विरुद्धरितेन ॥ १४४ ॥

दष्टस्य संग्रहमस्तीस्या दिशेत सून्य समच्छेदनैक
द्विरवशिष्टेन च कः प्राज्ञः बुद्धिमान् ॥ १४५ ॥

बुद्धिमान पुरुष दूत के मुख से विकले हुये अक्षरो को गिनकर उनको दुगुना करके तीन का भाग दे। यदि शेष शून्य हो तो मृत्यु अन्यथा जीवित समझना चाहिये।

हां वं क्षं मंत्रःमंत्रित तोयेनोद्धु सति यस्य गात्रं चेत्,
स च जीवित्यथ वाक्षि स्पंदन तो नान्यथा दृष्टः ॥ १४६ ॥

हां वं क्षं मंत्रः हां वंक्ष मिति मंत्रः मंत्रित
तोयेन अनेन मंत्रिणाभिमंत्रितोदकेन ॥ १४७ ॥

त्रोटितेना उद्धुषिति यस्य गात्रं चेत यस्य द
ष्ट पुरुषस्य शरीरं कंपते चेत् स च जीवितिं ॥ १४८ ॥

गात्रोद्धुषन मात्र पुरुषो जीवति च
अथवा क्षि स्पंदन तः अनेन प्रकारेन ॥ १४९ ॥

अक्षिरुन्मलिनेन सं दष्टो जीवति नान्यथा
दष्टायस्य दष्टस्य तदुदकासिंधनेन गात्रो ॥ १५० ॥

दुषणं तदक्षि स्पंदनं च न विद्यते तस्य
दष्टस्य जीवंति न विद्यत इति ज्ञातव्यां ॥ १५१ ॥

इति संग्रह परिच्छेदः

हं वंक्षं इस मंत्र से अभिमंत्रित जल दुष्ट पुरुष के ऊपर डालने से यदि वह कांपने लगे अथवा नेत्र हिलाने लगे तो उसको जीवित अन्यथा मृतक समझना चाहिये।

अतः परं मं ग न्यास अभिधीयते

क्षिप ॐ स्वाहा बीजानि विन्यसेत्पदेनाभि हृन्मुख शीर्ष,
पीत सित कांचना सित सुरचाप निभानि परिपाट्या ॥ १५२ ॥

क्षिप ॐ स्वाहा बीजानि क्षिप ॐ स्वाहिति
पंच बीजानि विशेषेण स्थापयेत् केषु ॥ १५३ ॥

पाद द्वयो नाभौ हृदि आस्ये मस्तके
इत्येतेषु पंच सु स्थानेषु कथं भुतानि ॥ १५४ ॥

पीतं हरिद्रानि भासित श्वेत वर्णं कांचना
सुवर्ण वर्णाद्यो असिता कृष्ण वर्ण ॥ १५५ ॥

सुरचाप इंद्र धनुर्वर्णं शदृश निभानि एवं
पंच वर्ण सदृश पंच बिजानि परिपाद्या ॥ १५६ ॥

क्षि बीजं पीत वर्ण पद द्वयो प बीजं श्वेत वर्ण नाभौ ॥ १५७ ॥

ॐ मिति बीजं कांचन वर्णं हृदि स्या
बीजं कृष्ण वर्ण मास्ये हा बीजं इंद्र ॥ १५८ ॥

चाप स्वरूप वर्ण मूर्द्धि एवं क्रमेण पंच सु स्थानेषु
परिपाद्या विन्यसेत इत्यंग नास क्रमः ॥ १५९ ॥

क्षिप ॐ स्वाहा इन पांच बीजों को क्रम से निम्न प्रकार से अंगों में स्थापन करे । क्षि बीज को पीत वर्ण का दोनों पैरों में, प बीज को श्वेत वर्ण का नाभि में, ॐ बीज को कांचन वर्ण का हृदय में, स्या बीज को कृष्ण वर्ण का मुख में, हा बीजं को इन्द्र धनुष के रंग का सिर में।

रक्षा विधानं

पद्मं चतुर्दलोपेतं भूतांतं नाम संयुतं
दलेषुशेष भूतानिमायसा परिवेष्टितं ॥ १६० ॥

पद्मं कमलं कथं भूतं चतुर्दलोपितं चतुः पत्र
युक्तं भूतांतं भूतानि पृथ्वेतजू प तेजो वाय्वा ॥ १६१ ॥

काश संज्ञानि तेषामंतेः आकाश स
हकारःतं हकारं कर्णिका मध्ये कथं भूतं ॥ १६२ ॥

नाम संयुतं दष्ट नाम गर्भी कृतं दलेषु
वहि स्थित चतुर्दलेषु शेष भूतानि इतर ॥ १६३ ॥

क्षि प ॐ स्वेति चतुर्वी जानि त द्वलेषु
मायसा परि रक्षितां तत्परो परि हीं कार ॥ १६४ ॥

त्रिधा वेष्टितं लिखित्वा दष्टस्य गले वधीयात्
अथ चंदनेन दष्ट वक्ष स्थले देत यंत्रं लिखेत ॥ १६५ ॥

इति रक्षा विधानं इदानीं स्तोभ करण मारभ्यते रक्षा:

वह्नि जल भूमि पवन व्योंभाग्रे दह दह पच द्वयं योज्यं
स्तोभय युगलं स्तोभं मध्यमिका चालनाद्भवति ॥ १६६ ॥

वह्नि ॐकार जला पकार: भूमिक्षिकार:
पवन स्वाकार: व्योम हकार: अग्रे ऐतषां ॥ १६७ ॥

पंच बीजाक्षराणांमग्रे दह दह दह दहेति
पदं द्वयं पच द्वयं योज्यं तदग्रे पच पचेति ॥ १६८ ॥

पद द्वयं योजनीयं स्तोभय युगलं तदग्रे
स्तोभय स्तोभयेति पद द्वयं स्तोभं ॥ १६९ ॥

अनेन कथित मंत्रोच्चारेण चाटिनेन दष्टावेश कथं
मध्यमिका चलनात मध्यमांगुल्या चालनात भवति जार्यते ॥ १७० ॥

मंत्रोद्धार:

ॐ प क्षि स्वाहा दह दह पच पच स्तोभय स्तोभय
इति स्तोभन मंत्र:

इति दष्ट स्तोभ विधानं

इस मंत्र को मध्यमा उंगली पर जपने से दष्ट पुरुष कुछ जागने लगता है।

आद्यंते भू बीजं मध्य जल वह्नि मारुतं योज्यं
स्तंभय युगलं स्तंभे यगर चला गुष्ठ चालनतः ॥ १७१ ॥
आद्यं ते भू बीजं मंत्रा दौ मंत्रांते पृथ्वी बीजं
क्षि इति मध्ये जल वह्नि मारुतं योज्यं ॥ १७२ ॥

मंत्र मध्ये प ॐ स्वेति बीजानि योजनीयं स्तंभन
युगलं तद अग्रे स्तंभयेति पद द्वयं स्थंभय-स्तंभय ॥ १७३ ॥

अनेन कथित मंत्रोच्चारणेन विष प्रसरे
स्तंभो भवति कथं वाम करांगुष्ट चालनेन
विष प्रसर स्तंभो भवति विष स्तंभो भवति ॥ १७४ ॥

मंत्रोद्धारः

क्षिप ॐ स्वाहा स्तंभय स्तंभय क्षि

इति विष स्तंभन मंत्रः

इस मंत्र को बाँये हाथ के अंगूठे पर जपने से विष का स्तंभन होता है।

जल भूमि वह्नि मारुत गगनै संप्लावयं द्वयो पेतैः
भवति च विषापहारः स्तर्जन्यां चालनाद् विरातः ॥ १७५ ॥

जला पकारः भूमि क्षिकारःवह्नि ॐकारः
मारुतः स्वाकारः गगनौ हाकारः ॥ १७६ ॥

इति पंच बीजाक्षरै कथं भूतै संप्लावय
द्वयो पेतैः संप्लावयेति पद द्वयान्वितैः ॥ १७७ ॥

भवति रस्या देवः कः विषापहारः विष
निर्विषीकरणं कस्मात तर्जन्यश्चाल ॥ १७८ ॥

नया स्व वाम कर तर्जन्या चालन
तः कथं अचिरात् शीघ्रतः ॥ १७९ ॥

मंत्रोद्धारः

पक्षि ॐ स्वाहा संप्लावय संप्लावय इति विषापहारः

इस मंत्र को बाँयें हाथ की तर्जना द्वारा चलाने से विष शीघ्र ही दूर हो जाता है।

इति विषनाशन विधानं

मरुदग्नि वारि धात्री व्योम पदं संक्रम व्रज द्वितीयं,
चालनया नाभिकयानि तरां विष संक्रमो भवति ॥ १८० ॥

मरुत स्वाकार अग्नि ॐकारः वारिपकारः
धात्री क्षकारः व्योम पदं हकारः स्व वाम
करा नाभिकां गुल्यां चालनेन नितरां ॥ १८१ ॥

अतिशयेन विष संक्रमो भवति
पर मन्त्रं प्रति विषं संक्रमो भवति ॥ १८२ ॥

मंत्रोद्धारः

स्वा ॐ पक्षि ह संक्रम संक्रम व्रज व्रज

इति विष संक्रम मंत्रः

इस मंत्र को बाँये हाथ की अनामिका अंगुली द्वारा चलाने से विष संक्रमण हो जाता है।

व्योम जल वन्हि पवन क्षिति युतः मंत्रो दभवति अथावेश
सं क्षि प हः प क्षि प ह पठनेन कनिष्टिका चालनतः ॥ १८३ ॥

व्योम हकारः जला पकारः वन्हि ॐकारः पवनः
स्वाकारः क्षिति युतः िक्षकार युक्तः मंत्रोदभवति ॥ १८४ ॥

एतत्कथित मंत्रा जाप्यते अथ पश्चात्
आ पुरुष शरीर नागावेश सं क्षि प हे
ति पदं पक्षि प हां पक्षि पहेति पठं पठनेन ॥ १८५ ॥

एतन्मंत्र पठनेन कस्मात कनिष्टिका चालनतः
वाम कर कनिष्टिका चालनात ॥ १८६ ॥

मंत्रोद्धारः

हा प ॐ स्वा क्षि सं क्षि प हः प क्षि प ह न ॥

इति नागावेशन मंत्रः

इस मंत्र को बाँये हाथ की कनिष्टा अंगुली द्वारा जपने से पुरुष के शरीर में नाग आवेश करता है।

कर्ण जापेन भेरुड़ा निर्विषं कुरुते नरं विद्या
सुवर्ण रेषापि दष्टतो या भिषे कतः ॥ १८७ ॥

कर्ण जापेन दष्ट पुरुषस्य कर्ण जापेन
भेरुड़ा भेरूड देव्या विद्या निर्विषं कुरुते
निर्विषी करणं करोति कं नरं ॥ १८८ ॥

दष्ट पुरुषं विद्या सुवर्ण रेखापि अपि
पण सुवर्ण रेषा विद्या दष्टं दष्ट पुरुषं तो
याभिषेक्तः सुवर्ण रेषानाम विद्याभि ॥ १८९ ॥

मंत्रितोदकेन अभिषेको निर्विष करोति आवेशा
दष्ट नर निर्विषी करणे दष्टकरणे जाप्य ॥ १९० ॥

भेरुंडा देव्या मंत्रोद्धार ॐ पक्षि एहि भेमाय भेरुंड विज्जा भरिय करंडे तंतु मंतु आयो सह हुंकारे विषु नाशई स्थावर जंगमं कृत्रम अंगजु ह्रीं देवदत्तस्य विषं हर हर हु फट ॥

इदं कर्ण जाप्येन भेरुंडा विद्या

ॐ सुवर्ण रेखे कुक्कुट विग्रह रूपिणी स्वाहा ॥
इयं तोयाभिषेक करणे सुवर्ण रेखा विद्या

उपरोक्त लिखित भेरुंडा देवी के मंत्र को दष्ट पुरुष के कान में जपने और उसको उपरोक्त सुवर्ण रेखा मंत्र के अभिमंत्रित जल से स्नान कराने से दष्ट पुरुष का विष उतर जाता है।

भू जल मरुन्न मोक्षर मंत्रेण घटाम्बु मंत्रितं कृत्वा
पादादि विहित: धारा निपात नाद भवति विष नाश ॥ १९१ ॥

भू क्षि जल प मरून स्वा नभोक्षरा हा मंत्रेण क्षिप
स्वाहेति अक्षर चतुष्टयं मंत्रेण घटाम्बु मंत्रितं कृत्वा ॥ १९२ ॥

कलशोद कमनेन मंत्रेणाभि मंत्रितं कृत्वा
पदादि विहित धारा निपात नात ॥ १९३ ॥

अपाद मस्तकाधि कृत जल धारा निपात
नात भवति स्यात विषनाशन ॥ १९४ ॥

मंत्रोद्धार:

क्षिप स्वाहे निर्विषीकरण मंत्र:

इस मंत्र से घड़े के जल को मंत्रिते करके सिर से पैर तक डालने से विष नष्ट होता है।

ॐ नमो भगवत्यादि मंत्रं अष्टोतरशतं पठित्वा कोश पटहं ताटय दष्ट संनिधौ।

ॐ नमो भगवत्यादि मंत्रं दक्ष माण मंत्रं अष्टोतरशतं

अष्टाधिक शतं पठित्वा पाठनं कृत्वा कोश पटहं
कोश डमरू कं ताटयेत ताटनं कुर्यात क्व दष्ट संनिधौ दष्ट पार्श्वे ॥ १९५ ॥

ॐनमो भगवती वृद्ध गरुड़ाय सर्व विष नाशिनि सर्व विषं छिंद छिंद भिंद भिंद गृन्ह गृन्ह एहि एहि भगवती विधे हर हर हु फट् स्वाहा ॥

दष्ट श्रुतौ कोश पटह ताटन मंत्र:

विष को दूर करने के लिये उपरोक्त मंत्र को एक सौ आठ बार पढ़कर दष्ट पुरुष के सामने खूब बाजे बजावें।

धृत्वार्द्ध चंद्र मुद्रा दक्षिण भागोऽहि दंशिन स्थित्वा
वदति तव गौरि दानीं तस्कर लोकेन नीतेति ॥ १९६ ॥

धृत्वा धारयित्वा कं अर्द्ध चंद्र मुद्रां
अर्द्ध चंद्राकारा वाम करांगुष्ट तर्जनीभ्यां ॥ १९७ ॥

धृतमुद्रां क्व दक्षिण भागे दक्षिण दिग्भावो
कस्या अहि दंशिनः सर्प दष्ट पुरुषस्य
स्थित्वा वदतु भाषतु तवादियागौ ॥ १९८ ॥

इदानीं सां पुतं तस्कर लोकेन दस्य
जनेन नीतेति गृहीत्वा नतिति वदतु ॥ १९९ ॥

इसके पश्चात् मंत्री सर्प दष्ट पुरुष के दाहिनी तरफ बैठकर बांये हाथ के अंगूठे और तर्जनी अंगुली से अर्द्ध चन्द्राकार मुद्रा बनाकर कहे तब गौरी दानी तस्कर लोकेन नीता अर्थात् तेरी गौर को अभी अभी चोर ले गये हैं।

तं समाहन्य पादेन या ही त्युक्ते स धावति
उच्छापयति तं शीघ्रं मंत्र सामर्थ्य मीद्रशाम ॥ २०० ॥

तं समाहन्य पादेन तं दष्ट पुरुषं मंत्रिणा
स्व पादेना हन्यात् याहीत्युक्तेन ॥ २०१ ॥

गच्छ गच्छे त्युक्ते स धावति सदष्ट पुरुष
धावनं करोति उच्छापयति तं शीघ्रं तं
दष्ट पुरुषं यंतित्यु स्थापयति मंत्र सामर्थ्य मीद्रशां ॥ २०२ ॥

भगवत्या मंत्र माहात्म्य मेव विधं क्रोश
पट हा प्राटनेन दष्टो स्थापन विधान ॥ २०३ ॥

फिर उस दष्ट पुरुष को पेट से मार कर कहे जा भाग जा इस मंत्र की सामर्थ्य एसी है कि वह सुनते ही भागने लगता है।

नियुत जपात् स सिद्धयति दशांश होमेन फणि समा
कृष्टि: प्रणवादि स्वाहांतश्चिरि चिरि शब्दादि को मंत्र: ॥ २०४ ॥

नियुत जपात लक्ष जप्पात सं सिद्धयति सम्यक
सिद्धिं प्राप्नोति कथं भूतेन दशांश होमेन ॥ २०५ ॥

दश सहस्र हवनेन का फणि समाकृष्टि:
नागाकृष्टि प्रणवादि स्वाहात: ॥ २०६ ॥

ॐ कारमादि स्वाहा शब्दं अंतं चिरि चिर विधिर
शब्दादि को मंत्र: चिरि चिरि रि ठि शब्द माद्यो मंत्र: ॥ २०७ ॥

ॐ चिरि रीद्रं वारुणी एहि-एहि कह-कह स्वाहा ॥
यह नाग आकर्षण मंत्र एक लाख जप और दशांश हवन से सिद्ध होता है।
ॐचिरि चिरि इन्द्र वारुणी एहि-एहि कह कह स्वाहा ॥

नाग प्रेषणा मंत्रा शीति दश सहश्र दशांश होमेन
सिद्धयति जाप्पेन पुन: शोणित कणवीर पुष्पाणां ॥ २०८ ॥

नाग प्रेषण मंत्र:

नागानं क्षुद्र कर्म करण स्थापन मंत्र अशीति सहश्र
अशीति सहश्र प्रमाण जाप्पेन कथं भूतेना दशांश होमेन ॥ २०९ ॥

अष्ट सहश्र हवनेन सिद्धयति सिद्धिं प्राप्नोति
पुन: जपेन युत: केषं शोणित कणवीर पुष्पाणां
रक्त कणवीर पुष्पाणां नाग प्रेषण मंत्र: ॥ २१० ॥

ॐनमो नाग पिशाची रक्ताक्षी भृकुटि मुखी उच्चिष्ट दीप्ति तेज से एहि-एहि भगवती हुं फट स्वाहा ॥

वाल्मांक निकटे होमं कुर्यात् त्रि मधुरान्वितं
मंत्र सिद्धैत मा जप्प प्रेषयो दुरगेश्वरं ॥ २११ ॥

वाल्मीक निकटे वामलूर समीपे होमं हवनं कुर्यात्
करोतु कथं त्रि मधुरान्वितं क्षी राज्य शर्करा मिश्रित
प्राग् जप कृत प्रसूनान्वितं मंत्र सिद्धै ॥ २१२ ॥

एतद् विधानेन मंत्र सिध्यिं प्राप्तयां तमाज्ञा तं,
नागेश्वर माज्ञा कृत्वा प्रेषयेत उरगेश्वरा
नागेश्वरं क्षुद्र कर्म करणे प्रस्थापयेत् ॥ २१३ ॥

वह नाग छोटे-छोटे कार्यों में लगाने का मंत्र, अस्सी सहश्र जप और लाल कनेर के फूलों के दशांश होम से सिद्ध होता है। इस अनुष्ठान को घृत, दूध और शक्कर मिलाकर वाल्मीक सर्प की बांबी के पास करे। जब मंत्र होने पर नाग आवे तो उसे इच्छित स्थान पर भेजे।

प्रेषितो हवनेनेति मा कस्यापि गुरो वदेत
अन्य मंत्रेण मागच्छ मानवं भक्षया मुकं ॥ २१४ ॥

प्रेषित: प्रस्थापित: क: अहं नाग के अनेन मंत्र
वादिना एवं मा कस्यापि पुरोवदेत कस्यापि
पुरुष स्थापणे मात्र देशे मा भाषय ॥ २१५ ॥

अन्य मंत्रेण मागच्छ एतन्मंत्रं विहायान्य मंत्रेण त्वमा
गच्छ। मानवं भक्षया मुकं अमुक पुरुषं भक्षय ॥ २१६ ॥

और उससे कहे तू इसके अतिरिक्त दूसरे मंत्र से भज जा और अमुक व्यक्ति को भक्षण कर किन्तु इस प्रकार उसको हवन के द्वारा भेजने का वृतांत किसी से नहीं कहे।

फणि दष्टस्यशरीरान्त स्वाहा मंत्र तो विषं हत्वा
सोम श्रवललांटात मंत्रं पातयेत् फणि दष्टस्य
शरीरात् सर्प दष्टस्य पुरुषस्य देहात् ॐ स्वाहा मंत्रत: ॥ २१८ ॥

ॐ स्वाहेत्यादि वक्ष माण मंत्रात विषं दष्ट पुरुष
देह स्थ विषं हत्वा कथं सोम श्रवण अमृतं श्रवण ॥ २१९ ॥

माण कस्मात ललाटान भल स्थलात दूतं
प्रेषकं मंत्रेण पातयेत पातयितव्यं ॥ २२० ॥

ॐ नमो भगवत वज्र तुंडाय स्वाहा रक्ताक्षी कुनखी दूतं पातय पातय मर मर धर धर हु फट धे धे ॥

इति दूत पातन मंत्रः

इस मंत्र से दष्ट पुरुष के शरीर से विष को खींचकर मस्तक से अमृत चुवाता हुआ उपरोक्त दूत मंत्र से दूत को गिरावे।

इंलाभो फट मंत्रो चारणातः पतति भोगिना
दष्टाः ॐहोमादि फंडतो दष्ट पटाछादनो मंत्रः ॥ २२१ ॥

इं लामो फट मंत्रो चारणातः ईं लां ॐ फट
इत्यनेन मंत्रो चारणात पतति भूमौ पतित कः
भोगिना दष्टः सर्पेणा दष्ट पुरुषः ॥ २२२ ॥

ॐ होमादि फट

अंतः ॐ स्वाहा शब्दमादिं कृत्वा फट
शब्दं मंत्यं वक्षमाणा मंत्रः पतित दष्ट पुरुष
शररिोपरि वस्त्र प्रच्छादन मंत्रः ॥ २२३ ॥

मंत्रोद्धारः

ॐ लां उं फडिति दष्ट पालन मंत्रः
ॐ स्वाहा रु रु रु रु रु रु हा ब्ले ह सर्वं संहारय संहारय ॐ द्रूं उं उं गरुड़ा क्षीं तुं फट्

इति दष्ट पटाछादन मंत्रः

ईं लां उं फट इस मंत्र के उच्चारण से सर्प दष्ट पुरुष पृथ्वी पर गिर जाता है।

ॐ स्वाहा रू रू रू रू रू हा ब्लें ह सर्वं संहारय संहारय उं द्रुं उं गरूडा क्षीं क्षुं फट।

इस मंत्र से उस गिरे हुये सर्प से दष्ट पुरुष को वस्त्र उठाना चाहिये।

पवन नभोक्षर मंत्रेणा कृष्य च धावने त तो वस्त्रं
अनु धावति तत् पृष्टं यत्र पटः पतति तत्रासौ ॥ २२४ ॥

पवन नभोक्षर मंत्रेण स्वाहेत्यक्षर मंत्रेण आकृष्यात् तदप्यु ठादन पट माकर्षयित्वा धावति तत्पृष्टं तद्वस्त्र माकर्ष्य यः पुरुषो धावति तत्पृष्टांत्सः दष्ट अनुधावति यत्र पटः पतित तत्रासौ तस्मि न स्थले तद गृहीत पटः पतति तत्रैवसौ दष्ट पुरुषः पतति स्वाहेति दष्ट प्रष्ठादितां पट आकर्षण मंत्रः ॥ २२५ ॥

फिर यह सर्प से दष्ट पुरुष स्वाहा इस मंत्र से वस्त्र उठाकर भागनेवाले पुरुष के पीछे भागता है और जहाँ कही वस्त्र गिरता है वहीं वह सर्प दष्ट पुरुष भी गिर जाता है।

निर्विषीकरण मंत्रः मंत्रेणेनान फणि
विष मुक्तो भवति जल्पितेन शनैः अपहरति
निज स्थानात् दशितोपि विषं न संक्रमते ॥ २२६ ॥

मंत्रेणनिन अनेन वक्ष माण मंत्रण: फणि विष मुक्तो भवति सर्प विष निर्मुक्तो भवति केन जल्पितेन वक्षमाण मंत्र पठनेना कथं शनैरिति अपहरति निज स्थानात स्वकीय स्थानात् दष्टस्य विषापहो भवति असितेपि विषं न संक्रमति सर्पेन भक्षितेपि सति तस्य पुरुषस्यापि वि संक्रमो न भवति ति निर्विषीकरण ॥ २२७ ॥

मंत्रोद्धारः

ॐ नमो भगवते पार्श्वतीर्थंकराय हंसः महा हंसः पदम हंसः शिव हंसः को हंसः सहश्र हंसः ग्रे ग्र ग्र हंसः प क्षि महा विषं भक्षी हुं फट ॥

इति निर्विषीकरण मंत्रः

इस मंत्र को धीरे धीरे बोलने से सर्पका विष अपने स्थान से इस प्रकार से दूर हो जाता है कि फिर सर्पके काट लेने पर भी विष नहीं चढ़ता।

तेजो नमः सहश्रादि मंत्रः प्रपठतःफणि अनुयातिततः पृष्टं ही त्युक्ते निवतते तेजो नमः सहश्रादि मंत्रं प्रपठन उं नमः सहश्र जिह्वेत्यादि मंत्र पठतः पुरुषस्यां फणि सर्पः अनुयाति ततः पृष्टं तन्मंत्र पठित पुरुषस्य पृष्ट मनुगच्छति व्याहित्युक्ते निवर्त्तते सवै सर्प पुनरपि व्याहि व्याहि त्युक्ते व्याधुत्ये गच्छति ॥ २२८ ॥ तन्मंत्रोद्धारः

ॐनमः सहश्र जिह्वे कुमुद भोजिनि दीर्घ केशिनी उच्छिष्ट भक्षिणी स्वाहा ॥

इति नाग सहा गमन मंत्रः

इस मंत्र से सर्प पीछे पीछे चलता है और वाहि जावो कहने से चला जाता है।

ॐ ह्रीं श्रीं ग्लौं हूं क्षुं टांतं द्वितीयेन फणि मुख स्तंभः
हूं क्षुं ठठेति गमनं दृष्टि हां क्षां ठठेति वधाति ॥ २२९ ॥

ॐ ह्रीं श्रीं ग्लौं हूं क्षुं टांत द्वितीयेन ॐ ह्रीं श्रीं ग्लौं हूं क्षूं ठठति मंत्रेणा फणि मुख स्तंभः मुख कीला जाता है अनेन मंत्रेण सर्प मुख स्तंभो भवति हूं क्षूं ठठति गमनं हुं क्षुं ठ ठ इत्यनेन मंत्रेण सर्पस्य गति स्तंभो भवति दृष्टिं हां ठठति वधाति सर्प दृष्टिं हां क्षां ठ ठ इति मंत्रेण वधाति ॥ २३० ॥

इति फणि मुख गति दृष्टि स्तंभन विधिः

वामं सुवर्णं रेखाया गरुड़ाज्ञा पदत्यतः
स्वाहां त मंत्र मुच्चार्य कुंडली करणं कुरु ॥ २३१ ॥

वामं सुवर्ण रेखाया ॐ सुवर्ण रेखायां इति पदां गरुड़ाज्ञापयेत्यतः सुवर्ण रेखाय दातं रंगरुड़ाज्ञा पायतीति ति पदं स्वाहांत मंत्र मुच्चार्य स्वाहा शब्द मंत्यं कृत्वा तन्मंत्र पठित्वा कुंडली करणं कुरु कुंडली करणं कुर्वीति पदं ॥ २३२ ॥ तन्मंत्रोद्धारः ॐ सुवर्ण रेखाया गरुड़ाज्ञापयति कुंडली करणं कुरु-कुरु स्वाहा ॥

नाग कुंडली करण मंत्रः

यह सर्प का कुंडली कारक मंत्र है

सप्रणवः स्वाहांतो लल लल ललेति संयुक्ते
करोत्येषः मंत्रो घट प्रवेशं क्षणेन नागेश्वर स्यापि ॥ २३३ ॥

सप्रणवः स्वाहांतः ॐकार सहित स्वाहा शब्द मंत्यं लल लल लल एते संयुक्तइत्यक्षरे षटभि युक्ताः करोति कुरुते एष मंत्रः एतथित मंत्रः किं करोति घट प्रवेशां कलश प्रवेशं करोति कथं क्षणेन क्षणमात्रेण कस्य नागेश्वर्यापि नागाधि पत्य स्यापि लक्षणेन घट प्रवेशं करोति ॥ २३४ ॥

तन्मंत्रोद्धारः

ॐ ल ल ल ल ल ल स्वाहा ॥
इति फणि घट प्रवेशन मंत्र ॐ ह्रां ह्रीं गरुड़ाज्ञापयेति ठ ठ इत्यनेन तन्मुद्रया गरुड़मुद्रया कृतां रेषां मंत्रिणा भूमौ रेखा कृतां भुजंगो मरणावस्था प्राप्तः न लंघतो लंघनं च न शक्नोति कदाचिदपि कस्मिंश्चितत्त्कालेपि ॐ ह्रां ह्रीं गरुड़ाज्ञा ठ ठ इति रेखा मंत्रः ॥ २३५ ॥

ॐ ह्रां ह्रीं गरुडाज्ञा ठठति तन्मुद्रया कृतां रेखां
भुजंगो मरणावस्थां म लंघते तां कदा चिदेपि ॥

ॐ ल ल ल ल ल ल स्वाह यह मंत्र नागों के राजा को भी घड़े में घुसा देता है।
ॐ ह्रां ह्रीं गरुड़ाज्ञा ठ ठः इस मंत्र से बनायी रेखा को सांप मरण अवस्था होने पर भी उल्लंघन नहीं करता है।

कपि कच्छुक रस भावित खटिका प्रणवादि नील
परिजप्ता रेषा स्तोयापदेशा तवाटिका सर्प शनैर्वारो ॥ २३६ ॥

कपि कच्छुक रस भावित खटिका कंडु कंडी रसेन सप्तवारो भावित खटिका प्रणवादि नील परिजप्ता सा खटिका ऊंकरादि नील मंत्रेण समंतात जप्ता लेख्य स्तथो तया खटिकया लेखनीयः कथं उपदेशात उपदेश पूर्वेणाः कः खटिका सर्पाः कस्मिन शनैवरि शनि दिने ॥ २३७ ॥

ॐ नील विष महा विष सर्प विष संक्रामणी स्वाहेति विष संक्रामण मंत्रः ॥
खडिया मिट्टी को कांच के रस में सात बार भावना देकर उसका उपरोक्त मंत्र से मंत्रित करके उससे शनिवार को शास्त्र के उपदेश के अनुसार एक खड़िया का सर्प बनावे।

यो हन्यात् वद् वक्रं तं भोगी दशाति नात्र संदेह
दृष्वा करतल दंशं मूर्छिति विष वेदना कुलितः ॥ २३८ ॥

यो हन्यात् वद् वक्रं खटिका सर्पवदनं यः पुमाना हंति तं भोगी दशति तं हिसंक पुरूषं खटिका सर्पो दशति नात्र संदेह अत्र खटिका सर्प विधाने त देहो न कार्यः दृष्टवा करतल दंशं तत्सर्प दशन दंशं करतले दृष्वा मूर्छति स पुरूषो मूर्छा प्राप्नोति कथं भूतं विष वेदना कुलितः विष जनित वेदना निराकुलितं स्यात् ॥ २३९ ॥

गरलं पूरक योगादमृतं रेचकतो भवति विषमविषं ॥ २४० ॥

पूरक के योग से बना हुआ रेचक से अमृत होकर नष्ट हो जाता है।

ॐ क्रों झ्रौं श्री कंठ मंत्रेण विषं हुंकार मध्यगं
जप्तत्वा सूर्या दृश्योलोक्यं भक्षयेत्पूरकात् तक्षः ॥ २४१ ॥

ॐ क्रों झ्रौं इस श्री कंठ मंत्र से हुंकार के मध्य में विष को जपकर तथा सूर्य की दशा को देखकर पूरक से विष को खा जावे।

प्रति पक्षाय दातव्यं ध्यात्वा नीलनिभं विषं,
मंत्रयित्वा ततोऽनेन ह्रौं घे घे मंत्रेण मंत्रिणा ॥ २४२ ॥

ॐ क्रों ह्रीं त्रीं ठः ठः इस मंत्र से अपनी हथेली पर हुं इस बीज के अंदर रखे हुए विष को पूरक योग से खा सकता है। ग्लौं ह्रौं घे घे इस मंत्र से विष को नील वर्ण का ध्यान करके शत्रु को विष भक्षण करने के लिये देवे।

सं चित्यं तार्क्ष्यं हस्ते स्थ मिंदु संपुटित मनिल बीजेन,
शोषित व्यंभो दग्धं विषम मृतमिवा शु भुंजीत ॥ २४३ ॥

गरूड़ के रूप में हाथ अग्नि बीज रं के संपुट में चन्द्रमा को करके उससे जले हुए और जल से भुजे हुए विष को अमृत के समान तुरंत ही खा लेवे।

गुलिकाः श्वनकेन कृताः शकृता वत्सस्य जात,
मात्रस्य जग्धाः शार्व इवांतु विष प्रभुः काल कूट मपि ॥ २४४ ॥

तुरन्त के पैदा हुए कुत्ते की विष्ठा की गोली को खाकर शिव के समान कालकूट विष को भी खा सकता है।

अथ वासं भक्ष्य विषं मूलं भक्ष्यंतु वंध्य कन्यायाः,
रजनी विषेण सहिता इंति विषं नात्र संदेहः ॥ २४५ ॥

अथवा विष को खाकर वंध्या कर्कोटि (बांझ ककोड़े) की जड़ को खा लेवे अथवा वंध्य कन्या विष के साथ हल्दी को मिलाकर खाने से विष स्वयं ही मर जाता है, इसमें कुछ भी संदेह नहीं है।

भक्षयतु तुरंग गंधा पश्चात् भक्ष्यंतु दुष्ट गरलानि,
अथ विपरीतां भक्षय विष हरणं त्रिभुवने सारं ॥ २४६ ॥

असगंध को खाकर पीछे चाहे जैसे दुष्ट गरलों को खावे तो भी कुछ भी प्रभाव नहीं होवे अथवा विष खाकर पीछे असगंध को खावे यह विष को नष्ट करने वाला तीन लोक में सार रूप है।

अश्व गंधा शिफा क्लकं निपीय यदि भक्षयेत,
स्थावरं गरलं तस्य न भवेद् विष विकिया ॥ २४७ ॥

अश्वगंधा की शिफा (जड़) के कल्क को पीकर स्थावर या जंगम कैसे ही विष पीने वाले पुरूष को विष का विकार नहीं हो सकता है।

क्षीरेण कल्कितां पीत्वा निशां कुष्ट वचामपि,
स्थावरं गरलमऽश्नन्नो वाध्यते विष विकृतैः ॥ २४८ ॥

हल्दी कूठ और वच के दूध में बने हुए कल्क को पीकर स्थावर तथा जंगम कैसा भी विष हो उसका विकार नहीं हो सकेगा।

आरक्तं नयन युगं शुष्यति यस्या ननं भुजः स्फुरतिः,
स्वेदःकंपो हिक्का विष दानं तस्य मा कुरूत ॥ २४९ ॥

ॐ असि पंजराय वंध-वंध खादका स्तयो जिंन स्तभ कारा नरेद्राणां मंत्रं छिदं सुरश्च तथा तिरिटिं धातय धातय छिंद छिंद स्फोटय स्फोटय सहश्र खंडं कुरू कुरू पर मंत्रान छिंद छिंद छिन्नो सिर र र ठः ठः ॥

जिसके दोनों नेत्र लाल हो गये हों, मुख सूख रहा हो, हाथ फड़क रहा हो , शरीर में खेद और हिचकियाँ आ रहीं हो उनको विष नहीं देना चाहिये।

तिरिट रूद्र नामाऽयं मंत्रं शत्रु विनाशनः,
एतस्य जप होमादि पुरः सिद्धिकरो मतः ॥ २५० ॥

यह शत्रुओं को नष्ट करने वाला तिरिट रूद्र नाम का मंत्र है। इसको पहले जप और होम से सिद्ध करना चाहिये।

ॐ नमो पार्श्वनाथाय झं झ्वीक्ष्वीं हंसं यः पक्षि जः जः ॥
मंत्रेणानेन सिंचेत सलिलैरभि मंत्रितैः,
सभ्यानामु परिष्टात स्यात् प्रतिवयुरशाकृता ॥ २५१ ॥

इस मंत्र को पढ़कर जल छिड़कने से सज्ञनों पर शत्रु का आक्रमण नहीं हो सकता है।

नामामृतां शु मध्य स्थं विंधं वज्रै रिहाष्टाभिः,
छिन्नं गरूड मंत्रेण पर विद्या छिदां बिंदुः ॥ २५२ ॥

नाम को चंद्रमा के बीच में लिखकर आठ व्रजों में बींध देवे और गरूड़ मंत्रे से घेर दे तो यह दूसरे की विद्या को नष्ट करता है।

ॐ क्षिप स्वाहा जः जः जः ठःठःठः हुं फट ॥ गरूड़ मंत्र

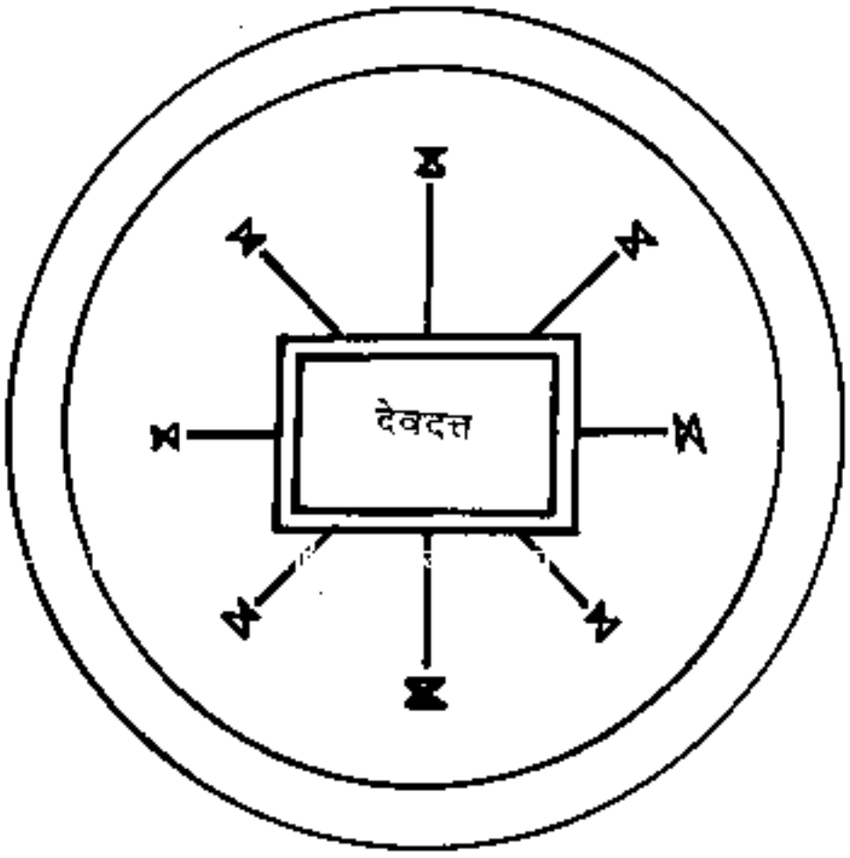
देवदत्त

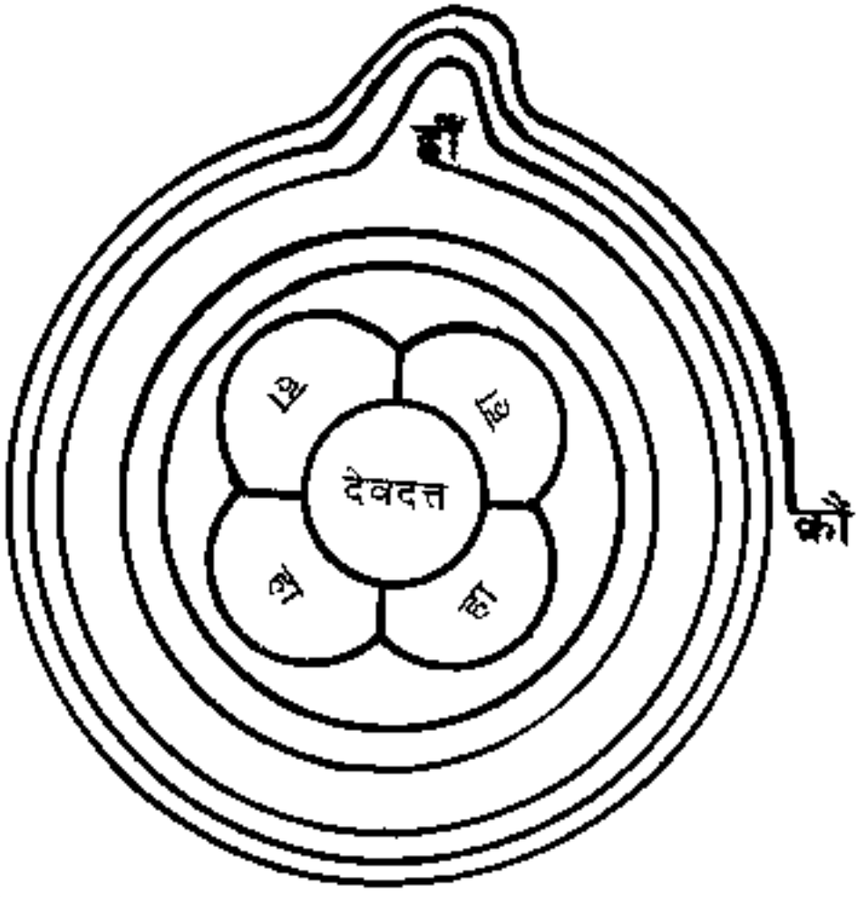
ह्रौं
देवदत्त
ह्रौं

पदमं चतुर्द्दलो पेतं भूतांत नाम संयुतं,
दलेषु शेष भू तानि त्रिर्माययावेष्टितं शुभं ॥ २५३ ॥

एक चार दल वाले कमल की कर्णिका में नाम सहित आकाश बीज हा को लिखकर शेष दलो में बाकी भूताक्षर हा बीज लिखे और तीन बार माया ह्रीं से वेष्टित करके क्रों से निरोध करे।

ह्रींकार सं वेष्टित नाम वाह्ये हंसः पदं सं विलिख्योत्समंतात्,
यंत्रेऽब्जपत्राणि भवंति चाऽष्टौ मध्ये च तेषां सकल स्वरास्तु ॥ २५४ ॥

त्रिर्म्मायया वेष्टयं ततों कुशेन सं रूध्य भूर्जे हिम कुंकुमाद्यैः,
वधातु हस्ते फणि दष्ट जंतो विलिख्य रक्षा भय रोग हारी ॥ २५५ ॥

कर्णिका में ह्रीकार से वेष्टित नाम के बाहर चारों तरफ हंस पद को लिखकर, आठ दल का कमल बनावे, जिसमें सब स्वर लिखे हुए हों। उसको तीन बार माया बीज से वेष्टित करके, क्रों से निरोध करे। यह मंत्र भोजपत्र पर चंदन और कुंकुम से लिखे और सर्प से डँसे हुये के हाथ पर बाँधने से रक्षा करता है, तथा भय और रोग दूर करता है।

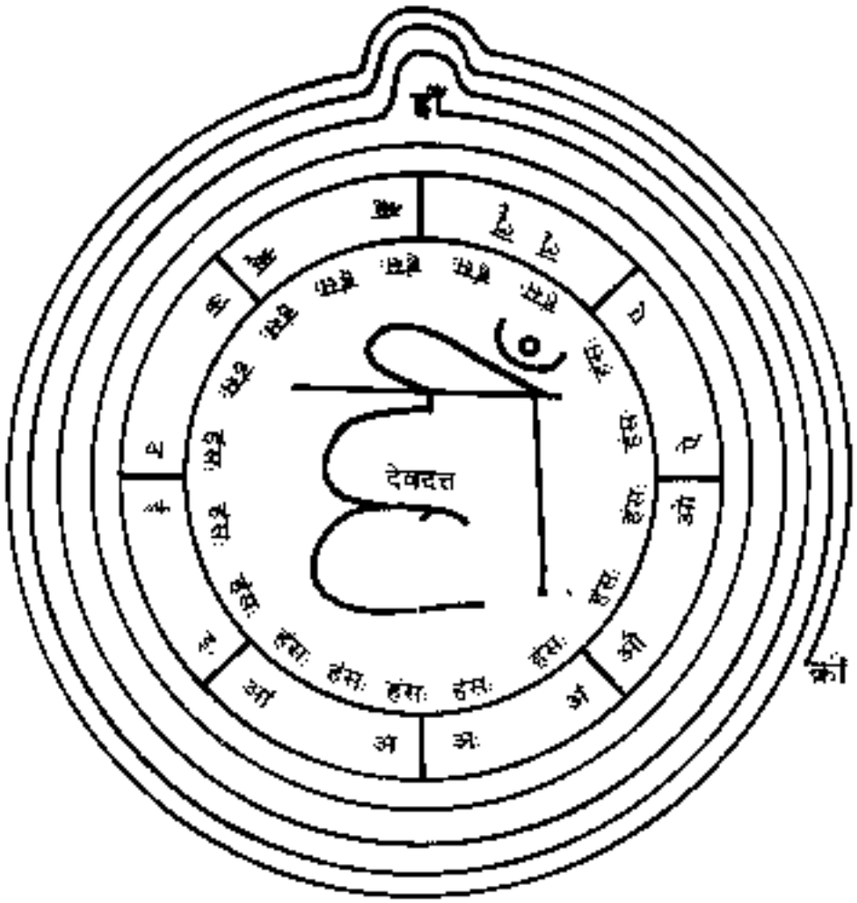

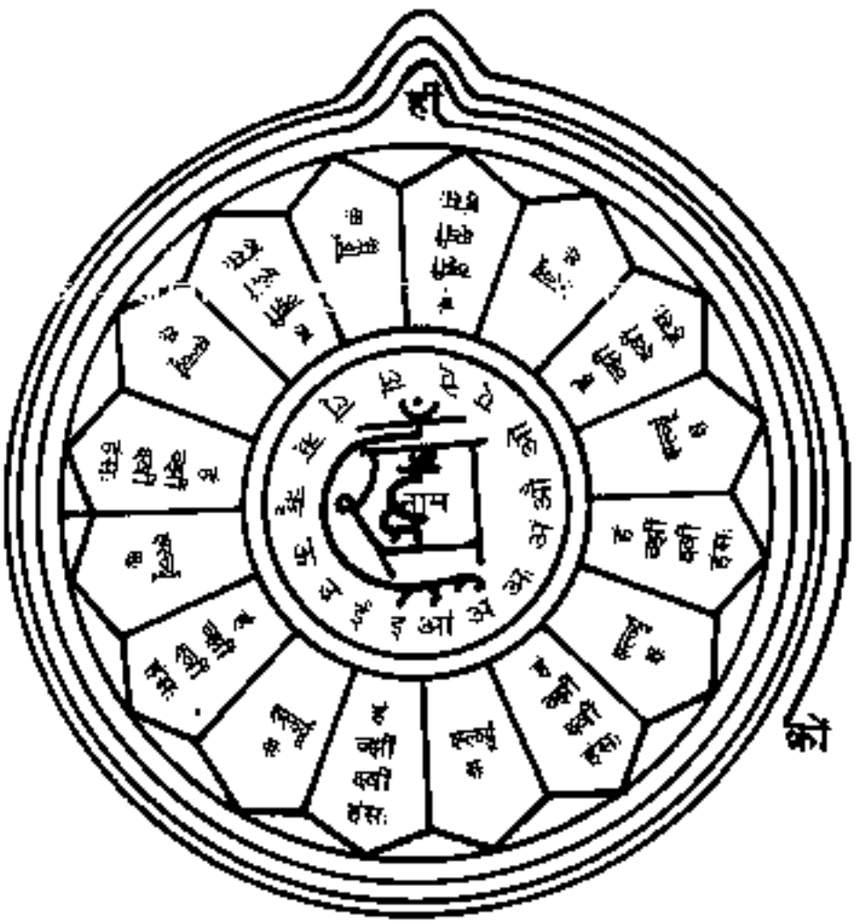

वेष्टयेन्नाम हंसेन हंकारेण स्वरैः क्रमात्
पत्राणि षोडशवहि विलिखवेद्विग्दलेष्वथ ॥ २५६ ॥

हं ह्रीं क्ष्वीं हंसः इत्येतदन्येषुक्ष्म्ल्व्र्यूं क्ष इत्यादा
वहि मंडल कुर्यात् शक्तत्याभ्रि वेष्टयेत् क्रमात् ॥ २५७ ॥

यंत्रं भूर्ज्जं दले स्वर्ण लेखिवान्यी लिखितं यृतं इदं
विषाणि सर्वाणि निर्मूलयति तत्क्षणात् ॥ २५८ ॥

यक्ष राक्षस भूतादि सं भूताभ्रायते भयात्
सौभाग्य मात्मजोत्पत्तिं वश्यं च विदध्यात्यलं ॥ २५९ ॥

नाम को हंस हं और स्वरों से क्रमशः वेष्टित करके उसके बाहर सोलह दल का कमल बनाकर, दिशाओं में हं झ्वीं क्ष्वीं हंसः लिखकर, शेष दलों में अन्यबीजों को लिखकर यंत्र बनावे। फिर बाहर तीन बार ह्रीं से वेष्टित करके क्रों से निरोध करे। इस यंत्र को भोज पत्र पर सोने के कलश से लिखकर धारण करने से सबप्रकार के विषक्षण भर में नष्ट हो जाते हैं। यह यंत्र यक्ष राक्षस भूतादि से पैदा हुए भय को दूर करके रक्षा करता है। अपने लिये सौभाग्य उत्पन्न करके वशीकरण करने में समर्थ होता है।

कर्णिकायां लिखेन्मध्ये झ्रौं हकारो च नाम च
क्षा दीनवर्णान पत्रोधींदु यमेंद्रासा सु सं लिखेत्,
रक्षो हराग्नि मारुतं लादीन दिक्षु स बिंदुकान् ॥ २६० ॥

तदष्ट दल मंऽभोजं मादया वेष्टयेत् त्रिधा,
कुंकुमाद्यैः शुभै द्रव्यैः कल्कितै गोमयां बुना ॥ २६१ ॥

भूर्जे विलिखितं यंत्र मे तत् स्यात् सार्वकार्मिकं,
सुवर्ण वेष्टितं यंत्रं धारिते तं धरादिषु ॥ २६२ ॥

त्रिःप्रकारात् विषान्मर्त्यान् परित्रायेत् सर्वदा,
मृत्युं जयाभिधानस्य यं त्रैस्यैवाखिलं फलं ॥ २६३ ॥

एक अष्ट दल कमल की कर्णिका में झ्रौं और ह के बीच में नाम को लिखकर, बाहर आठों दलों में क्षि-रया-स्व- र-ई-व-प-य- बीजों को लिखें। फिर इस आठ दल कमल को तीन बार ह्रीं से वेष्टित करके क्रौं से निरोध करे। इस यंत्र को कुंकुम आदि शुभ द्रव्यों से गौ मूत्र से बने कल्क से लिखे। इस यंत्र को भोजपत्र लिखकर सोने में मंढ़वा कर गले में पहनने से सब कार्य सिद्ध होते हैं। यह मृत्युंजय यंत्र मनुष्यों को तीनों प्रकार के विषों से सदा ही रक्षा करता है यह इसका पूरा फल है।

अनुक्तमन्यदप्या हुर्यंत्र स्यौमुनि पुंगवाः,
लिखितंमरुदुदभूते भूम्याम पतिते दले ॥ २६४ ॥

श्रेष्ठ मुनियों ने बिना कहे भी इसे तथा दूसरे यंत्रों को वायु से उड़कर पृथ्वी पर न गिरे हुये पत्ते पर श्मशान में लिखकर बनाने का विधान कहा है। यह शत्रु का उच्चाटन करता है।

द्विकच्छदैः श्मशान स्था मिद मुच्चाटनं रियोः ॥

द्विक (कौवे) छद (पंख) कौवे के पंख से लिखकर श्मशान में रखने से शत्रु का उच्चाटन होता है।

क्ष्म्ल्व्र्यूं पिंड़ गतं हंसस्थ मथ स्वरावृतं विलिखवेत्,
स विसर्गां कूट पत्राष्टकाब्ज परिवेष्टितं नाम ॥ २६५ ॥

क्ष्म्ल्व्र्यूं पिंड़ाक्षर को हंस के बीच में सोलह स्वरों से वेष्टित के बीच में नाम को लिखे उसमें चारों तरफ आठ दल के कमल में विसर्ग रहित कूटाक्षर (क्ष) लिखा हुआ हो।

इति रक्षाब्ज मेतत् शुचि प्रदेशेषु खटिकया लिखितं,
मनसि धृतं वा दष्टं रक्षति च तथा ग्रह ग्रस्तं ॥ २६६ ॥

मंत्री इस रक्षा कमल को पवित्र स्थान में खड़िया से लिखकर मन में धारण करने से डँसे हुये पुरुष की रक्षा करता है।

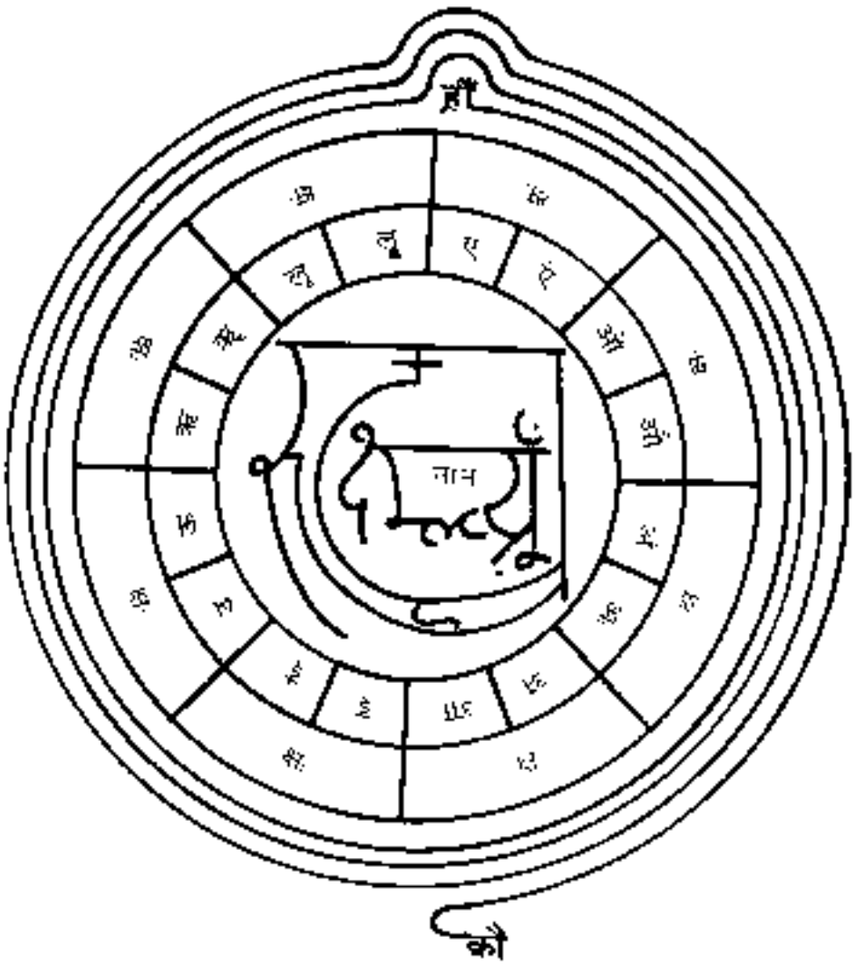

षटकोण भवन मध्ये करूकुल्यां यो लिखेत्विद्यां,
तस्य गृहेन च तिष्ठति नागो नागारि बंधेन ॥ २६७ ॥
ॐ कुरु कुल्ये स्वाहा ॥

न्यस्यते यस्य चक्रांकां दलि तातंरे,
अपहाय पलायंते तद गृहं फणिनः क्षणत् ॥ २६८ ॥

जो षटकोण भवन के बीच में ॐ कुरुकुल्ये स्वाहा मंत्र को लिखता है उसके घर में सांप नहीं ठहरता है। यह सर्पों के शत्रु गरुड़ द्वारा बांधा है। जिसके घर में इस चक्र को बनाकर रखा जाता है उसके घर में सर्प क्षण मात्र में भाग जाता है।

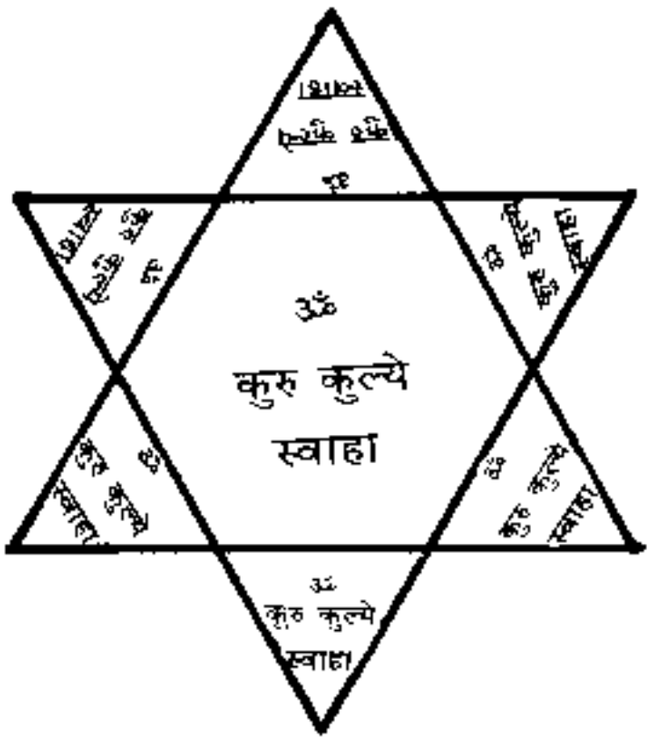

प्रतिमां विनतो सुनो रूक्ष वृक्षै विनिर्मितां,
कण्ठे दिशु दष्टस्येव भुजंगैर्नाभि भूयते ॥ २६९ ॥

रूक्ष वृक्ष (वृक्ष भेद) की बनी हुयी विनत सुत(गरूढ़) की मूर्ति को कंठ में धारण करने से सर्प आक्रमण नहीं करते हैं।

पुष्य रूक्षे सित वर्षा भूमलं मुदगांबुनापिवेत,
तस्य पार्श्वेभुजंगाद्या: संचरतिन वत्सरं ॥ २७० ॥

पुष्य नक्षत्र में लायी हुयी श्वेत वर्षा भूमूल (सफेद पुनर्नवा सखयरा साठी) की जड़ को मूंग के पानी के साथ पीने से नाग एक वर्ष तक उसके पास नहीं आ सकते हैं।

पुनर्नवस्यद्यो मूलं रक्त पुष्पस्य कल्पितं,
पिवेत् पुष्पेन षणमासा स्तं दशंत्य हि वृश्चिका: ॥ २७२ ॥

जो पुष्य नक्षत्र में लाई हुयी लाल फूल वाली पुनर्नवा (साठी) की जड़ के कल्क को पीता है उसको छह महीने तक सर्प और बिच्छु नहीं काटते हैं।

विधिमिममुंप दिष्टं यो यथा वद्विजान्न विरत जप
हो माभ्यर्चनात्सिद्ध मंत्र: भुजंग विष विकारोन्मूलने
व्यापृत: स्यात् स गरूड़ द्रव दष्टं निर्विषी कर्तुमीष्टे ॥ २७३ ॥

जो इस उपदेश की हुयी विधि को ठीक ठीक जानता हुआ निरंतर जप होम और पूजन से मंत्र सिद्ध करता है यह डँसे हुये के सर्प के विकार को गरूड़ के समान निर्विष करने में समर्थ होता है।

इति निर्विषीकरण नाम दशम: समुच्छेद:

ग्यारहवां समुदेश

ॐ नमः सिद्धेभ्यः

अथांतः सं प्रवक्ष्यामि फणिदष्ट चिकित्सितं,
औषधैरेव विद्यैः सिद्धै रदभुत शक्तिभिः ॥ १ ॥

इसके पश्चात् अनेक प्रकार की अद्भुत शक्तिवाली औषधियों से सर्प के काटे हुये की चिकित्सा का वर्णन किया जाएगा।

इह पान भक्ष्यनस्यां जन धूपा लेप सर्वकर्मकरं,
क्ष्वेडोपद्रव हरणं दष्टा चरणं च वक्ष्यामि ॥ २ ॥

इस संबंध में ऐसी पीने और खाने की औषधियों अंजन, धूप और लेपों का वर्णन किया जाएगा जो सब कार्य करने वाले और विष के उपद्रव को नष्ट करने वाले हैं। और सर्प से डँसे हुवे के आचरणों का भी वर्णन किया जाएगा।

सर्पिषं क्षुद्र व द्वद्धं सह तीक्ष्ण फल द्वयं,
पीतं भुजंग दष्टस्य हृदयावरणं मतं ॥ ३ ॥

धृत में दोनों प्रकार के वांदा और दोनों तीक्ष्ण फल (तीक्ष्ण= विष) को पानी से डँसे हुए को पिलाने से हृदय हल्का हो जाता है।

अहि दष्टानामादौ जीव त्राणाय गोमय सरसः,
घृत युक्तः पातव्यं कटु मरिचो पेत माज्यं च ॥ ४ ॥

सर्प के डँसे हुए के शुरू में उसका जीवन बचाने के वास्ते गोबर का रस घी मिला हुआ पिलावे तथा काली मिरच मिला हुआ धृत पिलाना चाहिये।

गुड लवण कांजिकानां पानाद् भुजंगेन दष्ट गात्रस्य,
उपशममुपयाति विषंक्षण मात्रादकण स्याथ ॥ ५ ॥

गुड़ नमक और कांजी को बराबर बराबर लेकर पिलाने से सर्प के काटे हुए के शरीर का विष क्षण मात्र में सुहागे के साथ देने से नष्ट हो जाता है।

पाखंडिफल तोटं तुंबी सं स्थितं क्षण निहितं,
घृत युत मेतत् पाना द्विष हरणं सपदि दष्टानां ॥ ६ ॥

तुंबी में जरा देर रखी हुयी पाखंडी फल के जल को घृत के साथ पीने से तुरन्त ही विष नष्ट हो जाता है।

अर्क मूल त्वचा चूर्ण पीतः शीतेनं वारिणा,
सर्प घोणस धतुर करवीर विषापह ॥ ७ ॥

आक की जड़ के छाल के चूर्ण को ठंडे जल के साथ पीने से सर्प गोहरा धतुरा और कनेर का विष नष्ट हो जाता है।

वंध्या निर्गुडिका द्वंद्ववेग सूर्येषु पुंखिकाः,
निहंतुत्सर्पिषा पीताः फणि कटिजं विषं ॥ ८ ॥

डँसा हुआ पुरुष घृत के साथ वंध्या (बांझ ककोड़े) निर्गुंडी (संभालू) साधारण तथी नीली दोनों वेग (महाकाल का फल) (मालकांगनी) सूर्ये (आक के पत्ते) पुंखिका(सरफोका)को पीने से सर्प और कीड़ो का विष नष्ट होता है।

आज्या निर्गुंडीका श्वेत वचया चार विषो पिबेत्,
मूलं वा सिदुंवारस्य तस्य पत्रं स्व भावितं ॥ ९ ॥

घृत और निर्गुंडी श्वेत वचचार (चिरोजी) को विष में पीवे अथवा (सिंदुवार) निंगुडी को निर्गुंडी के पत्तों के स्वरस की भावना दी हुयी जड़ को पीवे।

तदुंलीय अर्क मूलं रूक गृहधूमो निशाद्वयं,
पीतेघृतेन दद्या च पीतैर्न्नस्याद्विषादभयं ॥ १० ॥

तंदुली (शंखिनि-बाय विडगं) आक की जड़ की रूक () गृह धूम (घर का धूमसा) दोनों हल्दी ७ हल्दी और दारू हल्दी को घृत तथा दही के साथ पीने से विष का भय नष्ट होता है।

रजनी द्वयं गृह धूमं समूल पत्रं तु तंदुलीयं वा,
दधि गुड सहितं सर्वं व्यंतर विषनाशन भणितं ॥ ११ ॥

दोनों हल्दी ,घर का धूमसा और बाय विडंग को जड़ और पत्तों सहित लेकर दही और गुड़ मिलाकर लेने से सब प्रकार के व्यंतर नागों का विष नष्ट करने वाला कहा गया है।

लवणार्द्ध पलोपेतश्चिचां पल्लवजो रसः,
कुडव प्रमितः पीतो विषं हंति फणामृतां ॥ १२ ॥

आधा पल (दो तोले) नमक इमली के पत्तों का रस एक कुड़व (आधा सेर) प्रमाण पीने से नागों का विष नष्ट होता है।

पिष्टवा सितांबुना पुंसः पिवतो लघु,
दुग्धिकांनेश्वरो मारणे सोपि मातरिश्वा शनैश्चरः ॥ १३ ॥

छोटी दूधी को पुरुष के सफेद जल (मूत्र) के साथ पीने वाले को ईश्वर= महादेव, मातरिश्वन (वायु) और शनीश्चर भी नहीं मार सकते हैं।

कपित्थ कदलि कंदो वा स्फोटा तूल मेवच
अलं सर्प विषं जेतुं पानेन ग्रसनेन वा ॥ १४ ॥

कैथ (काथोड़ी) कदलिं कंद (केले की जड़) आस्फोता (शारिबा अनंतमूल) तूल (कपास काकड़े) अलं (बिच्छू का डंक-समर्थ) और सर्प विष को नष्ट करता है, पिलाने से या निगलने से विषों को जीतता है।

मूलं द्वयं कुमार्योभिन्नगिरेर्वाण दालिका युक्तं
दष्टानां पान मिदं पुनरन्य केपि भाषिते ॥ १५ ॥

दोनों तरह की धृतकुमारी (भिन्नगिरी) (मुर्वा) की दोनों जड़ें और बाण (अम्लता) और बड़ी इन्द्रायण को इसे हुए के पीने के लिये बतलाया है यह किन्ही आचार्यों ने कहा है।

कुष्टं तगरं घोषा कटुतुंबिकुटज जालिनी रजनी
मूलम अगस्ते मूलं बीजं च समस्त तंदुलीयं च ॥ १६ ॥

फणि घोणस लूतों दंर वृश्चिक मार्जार श्वनक कीटानां,
यः पिबति तस्य नस्यति विषमेषां जंतुकानांच ॥ १७ ॥

कूटतगर घोषा(देवदाली) कड़वी तूंबी कुटज (कूड़े की छाल)जालिनी (राज तोरई) हल्दी की जड़, अगस्तया की जड़ , बाय विडंग के बीजों को पीने से उसका सर्प गोनास लूता (चींटी मकड़ी) चूहा बिच्छु बिलाव कुत्ता कीड़ो और गीदड़ों जानवरों का विष नष्ट हो जाता है।

नत मुत्पलं विषाणं मूलं कुटजस्य देवदाल्याश्च,
मुनि घोषा कटु तुंबी धन नादानां च रजनी च ॥ १८ ॥

अहि वृश्चिक लूतोंदुर घोणास मार्जर शुनक हरिणीनां,
मृग धूर्त्तस्यापि विषं शमयेयु: पान लेपाभ्यां ॥ १९ ॥

नत (तगर) उत्पल (कमल) या नीलोपर विषमूल (वत्सनाभ) कूड़े की जड़, देवदाली, अगस्तय, घघर बेल, कड़वी तुबी, धननाद (नागर मोथा) या (गाज) हल्दी के पाने तथा लेप करने से सर्प, बिच्छू, चींटी, मकोड़ी, चूहा, घोणस, बिलाव, कुत्ता, हिरण और गीदड़ धतूरे के विष शान्त हो जातेहैं।

मंजिष्टा गृहधूमं त पिबेत् संपेष्य सर्पिषा
दष्टो जलेन मूलं वा गवाक्षी सिंदु वारयो: ॥ २० ॥

डँसा हुआ पुरुष मंजठि घर काधूमसा को घी के सात पीसकर पीवें। नेत्र बाला की जड़ गवाक्षी (कोरोचन) निगुंडी भी पीवे ।

सर्पिषा निंबा सिंधुत्थ निंब बीजानि पाययेत
विषदष्ट नर: स: स्यात् क्षण मात्रेण निर्विष: ॥ २१ ॥

धृत, नीम,सेंधा नमक नीम की निमोली को सर्प से काटे हुए को पिलाने से क्षण मात्र में निर्विष हो जाता है।

अध्यात्मरीचिका मूलं कुबेराशा समुद्भवं
दष्टोश्वगंधा मूलं वा नस्येत्फणि भृतां विषं ॥ २२ ॥

डँसा हुआ पुरुष मरिचिका मूलं (काली मिरच की जड़) जो उत्तर दिशा में उगी हुयी हो या असगंध की जड़ पिलावे या नस्य देवे तो फणीभृत सर्प का विष नष्ट होगा।

देवी सेहंदुवल्ली तुलसी द्रोणग्नि कच्छद स्वरसै:
भावितमसकृत् त्रिकटुक सूक्ष्मरज: फणि विषे नस्यां ॥ २३ ॥

सहदेवी (इंदुवल्ली सोमवल्ली) , तुलसी, द्रोण (गूमा) अग्नि, कच्छद (चित्रक की जड़ की छाल) के स्वरस की असकृत (बारबार) भावना दी हुई त्रिकुटक (त्रिकुट= सोंठ, मिरच, पीपल) बारीक पीसकर फणीभृत सर्प के विष को नष्ट करने के लिये नस्य सुंघावे।

पटु टंकणारपि दुग्धव्योषेष्वेकेन रचित
संलेपाद्या तर्जनीतया काल स्पृष्टं भवत्य विष: ॥ २४ ॥

परवल, सुहागा, आक का दूध, व्योष (सोंठ, मिरच, पीपल) में से एक एक से उंगली (तर्जनी उंगली) से लेप करने से विष नष्ट हो जाता है।

अरिष्ट वलककोदभूतः रस रसोनसियोजितः
अपि वासुकिना मुत्थापयति मानवं ॥ २५ ॥

नीम की छाल के रस में लहसून मिलाकर सेवन करने से वासुकि नाग से डँसा हुआ पुरुष भी उठ जाता है।

पींत वासर कृत्पत्र स्वरसेन सहिं गुना
नार्वनात्सद्य उत्तिष्टे दृष्टोप्य हि भि रष्टभिः ॥ २६ ॥

वासा (अरडूसा) के पत्तों का रस पीने और हींग के साथ सूंघने से आठ प्रकार के सर्पो से काटा हुआ पुरुष भी उठ जाता है।

नस्यं कुष्टोग्र गंधाभ्यां दष्टानां सर्पिषाकृतं
विषं हरति द्वातौ निपीतौ मूत्र पेषितौ ॥ २७ ॥

कूठ उग्रगंधा (वच या अजवाइयन या न कछिकनी या लहसुन) को घी के साथ मिलाकर सूंघने से विष नष्ट हो जाता है अथवा मूत्र में पीसकर पीने से भी विष नष्ट होता है।

लवणोपेतनाग्रिक पत्रस्य रसेन भावनं दत्तं
जयति विष भुजंगानां लसुनो पेतेन वातेन ॥ २८ ॥

चित्रक के पत्तों के रस की भावना नमक में देकर पीने से अथवा उसको लहसून के साथ मिलाकर सूंघने से भी सर्पों का विष नष्ट होता है।

मंदार दलस्य रसौ नसि कर्णे चार्पितौ पिनिहंति विषं,
द्वि रसन शतपद वृश्चिक जनितं द्विज मूर्द्धवाश्वरजः ॥ २९ ॥

मंदार (आक) के पत्तों के रस को नाक और कान में डालने से द्वि रसना (दो जीभ वाला) सर्प कनछला बिच्छू का विष नष्ट होता है।

मधुसारं शैरीषं कुष्ट युतं वर्तित धृतेनालं दंष्टानाम,
उद्दिष्टं नस्य मिदं निर्विशेष विष हरणं ॥ ३० ॥

मधुसार (महुवे का रस) शैरीषं (सिरस) कूट सहित घृत में मिलाकर बनायी हुयी बत्ती को सुंघाने से सभी विष नष्ट हो जाते है।

दष्टे नस्यं तंदुल पाटल मूलेन विष मपा कुरुते,
अथवा तुंबी घोषा मूलाभ्या माज्य भृष्टाभ्यां ॥ ३१ ॥

बाय विडंग (तंदुल) और पाटली की जड़ को सुंघाने से अथवा कड़वी तुंबी घोषा (देवदाली) की जड़ो को घृत में पीस कर सूंघने से भी विष दूर होता है।

परिभाव्य सप्त कृत्वो गर्दभ करभाश्च हस्तिवृष
मूत्रैः सारं माधुकंका शैरीष वा नसेर्दधात् ॥ ३२ ॥

महुआ का रस अथवा सिरस में गधे, ऊँट, हाथी, बैल के मूत्रों को सात सात भावना देकर सुंघावे।

पिर सुत मरिवलेत्क्ष्वेड़ परमार विकार उन्मादे,
भूते ग्रहे ज्वरे च द्वितीय कादौ विशेषेण ॥ ३३ ॥

अथवा उसी को भी नस्य लिवो अपस्मार मृगी के विकार उन्माद भूत ग्रह ज्वर और इकातर आदि में विशेष रूप से पीवे ।

मुनि हयगंधाघोषा वंध्या कटुतुंबिका कुमारी च,
त्रिकटुक कुष्टेंद्र यवा घ्नंति विषं नस्य पानेन ॥ ३४ ॥

मुनि (अगस्ता) असगंध-घोषा (देवदाली) वंध्या (बांझ ककोड़ा) कड़वी तुंबी, गंवार पाठा, त्रिकटुक (सोंठ, मिरच, पीपल) कूठ इन्द्रजो को पिलाने से , सुंघाने से सब विष नष्ट होते है।

तगरेन कृते नस्ये नश्यति गरलं महाहिजं नृणां,
अथवा कटु तुंबी फल मूलाभ्यां नाश्येत् गरलं ॥ ३५ ॥

तगर को सूंघने से बड़े बड़े नागों का विष नष्ट हो जाता है। अथवा कड़वी तुंबी के फल या जड़ की नश्य देने से भी विष नष्ट हो जाता है।

वंध्याकं मूलयुक्ता रजनी निवर्त्तिता सूक्ष्मा
अपहरति विषं नस्यात् कुलिकेनापि अहिदष्टस्य ॥ ३६ ॥

वांझ ककोड़ा, आक की जड़ और हल्दी को बारीक पीसकर बनाई हुयी बत्ती को सूंघने से कुलिक नाग के डँसने का भी विष नष्ट हो जाता है।

श्वेत गिरि कर्णिकाया मूलं तोयेन वर्त्तितं
सूक्ष्मं दातव्यं नस्ये मिदं दष्टानां क्ष्वेड हरणाय ॥ ३७ ॥

सफेदगिरि कर्णिका (सफेद कोयल) की जड़ को पानी से पीसकर बनाई हुयी बत्ती को सूंघने से इसे हुये का विष नष्ट हो जाता है।

व्योषेण टंकेणेनाथ लिप्तां वर्त्तिं निवेशयत्
नुर्दक्षिणे स्त्रिया वामे घ्राणे भवति निर्विषः ॥ ३८ ॥

टंकण (सुहागा) और व्योष (सोंठ, मिरच, पीपल) की बनाई हुयी बत्ती को पुरुष के दाहिने और स्त्रियों के नाक के बारे में स्वर में रखने से विष दूर हो जाता है।

व्योष रसोनलं बाजीमूत सुवर्णकारवेल्व रसैः,
कारंज सर्षपशिग्रु सौरीभैः केशरास्थि हिंगु वचाः ॥ ३९ ॥

द्विगुणी भूतं यावदभवयतावत् पुनः पुस्तेषां,
तचूर्णं विष हननं नालस्थं गंध मात्रेण ॥ ४० ॥

व्योष, (सोंठ. मिरच, पीपल) के रस की अनल (चित्रक) बाजीभूत (घोड़े का मूत) सुवर्ण (धतूरा) कारवेल्व (करेला) का रस कारंज (करंज) सर्षगंधा, सिरस, केसर की लकड़ी, हिंग बचको तब तक भावना देता रहे जब तक यह दुगुनी न हो जाय। उसके चूर्ण की नाक में गंध भी जाने से विष नष्ट हो जाता है।

अति तरूण कनक फल जल चिर भावित
जलवेत रसकल संकलितं तैलं करतल
मृदितं नसि दत्तं सकल गरल हरं ॥ ४१ ॥

अत्यंत पके हुये धतूरे के फल के जल की बेल वृक्ष को बहुत दिनों तक भावना देकर सबको इकट्ठा करके हाथों से मलकर तेल निकाले। इस तेल को हाथों पर मलकर सुंघाने से सब प्रकार के विष नष्ट होते हैं।

नस्यं सिरिषापामार्ग बीजा सिधुदभवैः कृतं
अथवा यव पाठाभ्यां विष सुप्त प्रबोधनं ॥ ४२ ॥

सिरस,सैंधा नमक, अपामार्ग (चिरचिटा) के बीजों को सूंघने अथवा जौ और पाठालता को सूंघने से विष से सोया हुआ जग जाता है।

माधूक शतसः सारो द्रोण पुष्पी दलांबुभिः
भावितो नसि विन्यस्तो विष सुप्तान् प्रबोधयेत् ॥ ४३ ॥

माधुक (महुवा) शतसः सार (रेवती का रस) द्रोण पुष्पी (गोमा) के पत्तों को जल की भावना देकर सुंघाने से विष के वेग से सोया हुआ भी जग जाता है।

छागांभो बहुभावित वंध्या ककोंट मूलजः कल्कः,
धेत्वंबु युतो दत्तो नसि विष सुप्त प्रबोधयति ॥ ४४ ॥

बांझ ककोड़े की जड़ के कल्क में छाग (बकरे) के मूत्र की बहुत भावना देकर उस कल्क में धेनु (गाय) गोमूत्र मिलाकर नस्य देकर सुंघाने से विष विकार से सोया हुआ भी जग जाता है।

मांसि सिंधुज मलयज चपलोत्पलं यष्टि
मधुक मरिच युजा मूत्रेणां जनम क्षणोविंष
सुप्तं प्रबोधयेत् सहसा ॥ ४५ ॥

जटामांसि सिंधुज(सेंधा नमक) चंदन चपल (पारा) उत्पल (नीलोफर) मुलहटी महुवा काली मिरच को वकरी के मूत्र से आंखो में अंजन की तरह लगाने से विष से सोया हुआ अचानक जग जाताहै।

व्योष निशा द्वय सुरसा कुसुम करंजास्थि विल्वतरू मूलैः,
अंजनम जलं पिष्टौविंष सुप्तं बोधयत्य चिरात् ॥ ४६ ॥

व्योष (सोंठ, मिरच, पीपल) दोनों हल्दी (हल्दी और दारू हल्दी) सुरसा कुसुम (निर्गुंडी का फूल) करंज की गुठली बिल्व पेड़ की जड़ इनको बिना पानी के पीसकर बनाया हुआ अंजन आंख में लगाने से विष से सोया हुआ शीघ्र ही जग जाता है।

वेगाया: कनकस्य च बीजेश्च पुनर्नवस्य शिफाया च,
तत् तुल्येन च शीर्ष्या मूलेन विषे हितो धूपः ॥ ४७ ॥

वेगा (माल कागनी या महाकाल का फल) के बीज, कनक (धतूरे)के बीज और पुनर्नवा (साठी) की जड़ और उनके बराबर शीर्ष्या (गजपीपल) की जड़ की धूप विष में लाभ करती है।

दंशे प्रलेपलेपयोत्पिष्टवा व्योषं क्षीरेण भास्वतः
कुलिकेनापि दष्टस्य निर्विषीकरणं परं ॥ ४८ ॥

व्योष (सोंठ, मिरच, पीपल) को आक (भास्वतः) के दूध में पीसकर कुलिक आदि नागों से डँसे हुए स्थान पर लेप करने से निर्विष हो जाता है।

वैश्म गोधार्क शलभ कृत तालेन पथ्य या
शिलया च कृतो दंशे लेपः सर्व विषापह ॥ ४९ ॥

शैरीषं पंचागं छागल मूत्रेण भावयेद बहुधा त्रिविधं,
विषमति विषमं लेप स्तस्य प्रनाशयति ॥ ५० ॥

सिरस के फल फूल के पत्ते छाल और जड़ को बहुत बार बकरी के मूत में भावना देकर लेप करने से तीनों प्रकार के अत्यंत कठिन विष नष्ट हो जाते हैं।

त्रिकटुक पलाश बीजै र्दिनकर दुग्धेन भावितेकृत्वा,
ताभ्यां विहितो लेपो जंगम विषामाशु नाशयति ॥ ५१ ॥

त्रिकटुक (सोंठ, मिरच, पीपल) और पलाश के बीजों को आक के दूध में भावना देकर लेप करने से जंगम विष भी शीघ्र ही नष्ट हो जाता है।

नत शिशिर नाग केशर कुष्ठ तोन्मत्त बीजानां,
तदुंल जल पिष्टानां लेपः स्याद्विष विसर्पकजित् ॥ ५२ ॥

नत(तगर) शिशिर (हिमकदम्ब) नाग केशर कुष्ठयच और उन्मत्त (धतूरा) के बीजों को चावलों के पानी में पीसकर लेप करने से सर्प के विष का विकार जीता जाता है।

पानांस्यांजन लैपेर्जयेत् पुनर्नवा शिफ
उपयुक्तां भुजंगानां गरलं सकलां क्षणात् ॥ ५३ ॥

पुनर्नवा (साठी) की जड़ को पीने, सूंघने, अंजन करने और लेप करने से सर्पों के सम्पूर्ण विषों को क्षण मात्र में नष्ट करने के लिए समर्थ है ।

तुंबी घोषा जटे पिष्टे घृतेन सलिलेनवा
घ्राते लिप्ते नसिकृते दृगाक्तेवा हतौ विषं ॥ ५४ ॥

कड़वी तुंबी की जड़ देवदाली की जड़ पीस कर घृत से या पानी से पीने लेप करने नस्य लेने और अंजन करने से विषों को नष्ट करती है।

रूक चक्र रजनी द्वंद्व वत्स का जल कल्किताः
पानादिभि र्विषं हन्युरथवा व्योष सैंधवैः ॥ ५५ ॥

रूक (कूठ) चक्र (तगर) दोनों हल्दी, वत्सका (कूड़ा) के जल में बने हुये कल्क को पीने से विष नष्ट हो जाता है, अथवा व्योष (सोंठ, मिरच, पीपल) और सेंधा नमक

कल्कितै हिंगुना बीजैश्चिंचाया वकुलस्य च
शिग्रुत्वक स्वरसौ पेतैर्विष जिन्नांवेनादिकं ॥ ५६ ॥

हिंगुणा (घमासा के बीज) चिंचा (इमली के चिया) वकुल (मोलश्री) के बीज का कल्क सहजना की छाल के स्वरस से बनाकर पीने सूँघने आदि से विष नष्ट हो जाता है।

विषं हरंति निश्शेषं नावनांजन लैपनैः
विश्वोषण रसौनाऽर्तपद्यः सुरस रामठै ॥ ५७ ॥

विश्वोषण (सोंठ) का रस रसोन (लहसुन) आक का दूध रामठ (अंकोला ढेरा) का रस सूँघने अंजन करने से लेप करने से सब विषों को निश्शेष नष्ट कर देता है।

मांस्या चां गुलिका हंति नश्यंति या ऽजंनै विषं,
अलांबु जारिणी बीजैः लांगल्या च समैक-तं
गुलिकानि खिलत् क्ष्वेल ग्रह कृष्णावना दिभिः ॥ ५८ ॥

अलाबुजालिनी (घी या तोरई - कड़वी तोरई) लांगलि (कलिहारी) मांस्या (जरामांसी) की अंगुली के बराबर बनायी हुयी बत्ती का अंजन करने से विष नष्ट हो जाता है।

कृष्णा शिरीष बीजानां त्रिरकी क्षीर भावित
चूर्णोहि लूतिका कीट मूषिकालि विषांतकः ॥ ५९ ॥

काले सिरस के बीजों के चूर्ण को तीन बार आक के दूध की भावना देवे। यह चूर्ण सर्प, चींटी मकड़ी चूहे और भौरें के विष को दूर करता है।

एक विंशत्य हो भिर्वा यावत् तावत समानत :
पान नस्यांजनालेपै विंष जिन्मरिचं सिंत ॥ ६० ॥

व्योष वंध्यास्थि पुष्पार्क पुष्प बीजानियोजयेत्
फणिदष्टेषु पिष्टं वा खार्या भव्यस्य वलकलां ॥ ६१ ॥

शिरिष वेगनक्ताह्व निंब कोशातकी फला
गोमूत्र पिष्टैन्नं स्याद विंष वेग निवारणः ॥ ६२ ॥

सफेद मिरच, व्योष (सोंठ, मिरच, पीपल) बांझ ककोड़े की गुठली और फूल, आक के फूल और आक के बीज, खारी नमक तथा भव्य (कमरख) की छाल, सिरस वेग (मालकांगनी)

नक्त(गुलेअब्बास) नीम और कड़वी तोरई के फल को गोमूत्र में पीसकर इक्कीस बार भावना देकर पीने नस्य लेने लेप करने से विष वेग दूर होता है।

चक्रं चंदन राजास्थि नाग केशर पुष्करैः
सज्योष्टंवारि भिरगद सकलक्ष्वेल सूरनः ॥ ६३ ॥

चक्र (तगर) चंदन राजास्थि (आँवले की गुठली) नाग केशर पुष्कर (कमल) पानी से तैयार की हुयी दवा सबप्रकार के विष को नष्ट करती है।

हिंगु त्र्युषण गंधालसुनैर्गुलिका कृता,
धान्यांबुकिल्किलैः सर्व विषकृन्नाव नादिभिः ॥ ६४ ॥

हींग त्र्यूषण (सोंठ, मिरच, पीपल) गंधा (उग्रगंधा अजवाइन) लहसुन की चावलों के पानी से बनाये हुये कल्क को सूंघने आदि से सब प्रकार के विष नष्ट होते हैं।

निंबास्थि तीक्ष्ण सिंधूत्थैरेकैक द्वयंशकैः क्रमात
साधितं साधयेत्साधु सर्पि सर्प विषोद्धतिं ॥ ६५ ॥

नीम की निमोली एक भाग तीक्ष्ण विष सिन्धूत्थ नमक दो भाग सेंधा नमक को क्रमशः घृत में सिद्ध करने से सर्प का विष दूर होता है।

दलितं शिरीष बीजं दुग्धि दुग्धेन भावितं भूरि
पिप्पलिका चूर्ण युतं फणि घोणस वृश्चिकादि विष हरणं ॥ ६६ ॥

सिरस के बीजों को दल कर (पीसकर) दूधी के दूध या आक के दूध की भावना देकर उसमें पीपल का चूर्ण मिलाकर सेवन करने से सर्प, बिच्छू आदि का विष दूर होता है।

अर्क रंभा सुतां गुंडी नागींशुलिं सुदर्शनां
ईश्वरी मर्ज्जकां सर्प रेखां वा हुः पृथग्विषे ॥ ६७ ॥

आक का दूध रंभा (केला) सुता (पितोजिया (गुंडी (निगुंडी) नागीं (बाजखस) शूलिं (शूली तृण) सुदर्शना (सुदर्शन) ईश्वरी (शिवलिंगी)अर्ज्जका (सफेद पलाश) का प्रयोग सर्प विष को नष्ट करने के लिये करे।

व्योष हय मार पीठा नीली मूलैस्तिलोत्थ संद्रावैः
भव्यस्य चर्मणा वा स कांजिकेनाहि विषनाशः ॥ ६८ ॥

व्योष (सोंठ, मिरच, पीपल) हयमार (कनेर) पीठा (चित्रक) नीली की जड़ और तिलों का तेल भव्य(करमख) की चर्मणा (छाल) को कांजी के साथ प्रयोग करने से सर्प का विष नष्ट हो जाता है।

शुक तरू रंगा गंधा कटुत्रिकै र्भावितै कृतो
बहुशः रंभाभो निर्विषजित पानादि प्रकमः प्रोक्तः ॥ ६९ ॥

शुकतरू (सिरस) रंगा (गुड़हल) गंधा (गंधक) कटुत्रिकः (सोठ, मिरच, पीपल) को रंभा (केले) के रस में बहुत बारभावना देकर पिलाने सुंघाने नस्य और लेपादि करने से विष नष्ट हो जाता है।

शौरीषं पंचांग त्रिनागसा कृष्ण पक्ष पंचम्या
आतमपि मूत्र पिष्टं गुलिको कृत मखिल गरल हरं ॥ ७० ॥

सिरस वृक्ष की पंचाग फल फूल पत्ते छाल और जड़ को कृष्ण पक्ष की पंचमी को लाकर अपने मूत्र में पीसकर बनाई हुयी गोली रखकर खाने आदि प्रयोग में लाने से सम्पूर्ण विष नष्ट करती है।

करवेल्ली निर्गुंडी वे कुंठा माकुलो दल स्वरसै
व्योष वचा हिंगुयुतैर्न्नस्यादिर्निखिल विष तार्क्ष्यं ॥ ७१ ॥

कारवेल्ली (करेला) निर्गुंडी (संभाल) वेकुंठा (वांसा)को उनके पत्तो के स्वररस में भावना देकर व्योष (सोंठ, मिरच, पीपल) वच, हींग मिलाकर सूंघने से विष को गरूड़ के समान नष्ट करता है।

अंगैर्हिंगुपेतैः सुरदाल्याश्चूर्णितै सकलः
दत्तो नस्यादिः स्यात्सर्प विष ध्वांत धर्माशुः ॥ ७२ ॥

अपने अंगों सहित हींग और सुरदाली देवदाली का चूर्ण बनाकर सूंघने आदि से यह प्रयोग विष रूपी अंधकार के लिये सूर्य है।

अपनयति मातृ धातक हस्तः परिभावितो वहुन्बारान
भुजवल्ली दल सहितैः सकल गरलं हरंन संदेहः ॥ ७३ ॥

भुजवल्ली (नागरवेल का पान) के पत्तो सहित मातृ (शषभक) घातकी (धाय ते फूल) के पत्तों के रस में बहुत बार भावना देने से समस्त विष को निस्संदेह नष्ट करता है।

नत मधुक दारू शुक तरू मरिच
हरि दाज्य हारनकतका ह्राः चपलाः
मनः शिला च शांति वषं फणी भृतां निखिलं ॥ ७४ ॥

नत (तगर) मधुक (महवा या मुलहटी) दारु (देवदार) शुकतरु (सिरस) काली मिरच हल्दी घृत हार() कतक (कैथ) चपला (पारा) मैनसिल सब सर्प के सम्पूर्ण विष को नष्ट करता है।

द्विनिषा रामठ राजी पटु मातुल विश्व लसुन
लाक्षभि: मूत्रेण कल्कितामि: पानादि विष हर: प्रोक्त: ॥ ७५ ॥

दोनों हल्दी रामठ (अंकोल) राजी(राई) पटु (कड़वे परवल) मातुल (धतूरा) विश्व (सौंठ) लहसुन को लाख के पानी आदि के साथ पीने से विष को नष्ट करने वाला कहा गया है। इन सारी दवाओं को मूत्र से पीसकर कल्क बनाकर पीवे या लेपादि करे।

धननाद वाजि गंधा महिषाक्षगार धूमतगराणां
पशु सलिल कल्कितानां पानादि: सकल विष हरणं ॥ ७६ ॥

नागर मोथा असगंध भेंसा गूगल अगर घूमसा तगर के गाय के मूत्र से कल्क बनाकर पीने से सब प्रकार के विषों को नष्ट करता है।

तदहर्जा वरस शकृता तगरेण च विप्रवर्तिता वर्त्ती,
पशुमूत्रे कल्किताभ्यां विष हन्नस्यादिषु वितीर्ण ॥ ७७ ॥

तुरन्त के उत्पन्न हुये बच्चे की शकृत (भिष्टा) में तगर मिलाकर बनायी हुयी वत्ती जो गाय के मूत्र से पीसकर कल्क करके सूंघने आदि से विष नष्ट हो जाता है।

अर्क त्र पुष्प पुनर्नव मूल वचा मरिच मूत्रषद्धरणै:
हेमाति मुक्तं शुक तरु गुंजा बीजैश्च जीयते गरलं ॥ ७८ ॥

आकत्र पुष्प पुनर्नवा मूल (साठी की जड़) वच मिरच छहो मूत्र में रखकर हेम (धतूरा) अति मुक्त क्षरु (सिरस) शुकतरु (सिरस) गुंजी (चिरमी) से विष नष्ट होता है।

व्योष नवनति दधि घृत सिंधुद्भव मधुक वृक्ष साराणां,
उपयोगाद्वासुकीना दष्टोपि भवत् क्षणात्ऽविष: ॥ ७९ ॥

व्योष (सोंठ मिरच, पीपल) नवनीत (मक्खन) दधि (दही) घृत सिंधुद्भव मधुक (समुद्री महवा) के वृक्ष के सार के उपयोग से वासुकी सर्प से डँसा हुआ पुरुष क्षण भर में विष रहित हो जाता है।

मूलं मालत्या च नंद्या वर्तस्याश्च गंधाद्यावां शुंठी
सहितं हन्यात्पानाद्यै: कर्म निर्विषं भुजंगानां ॥ ८० ॥

मालती (घमेली) की जड़ नंदवर्द्ध (तगर) असगंध और सोंठ सहित पीने से सर्प के विष को नष्ट करता है।

वंध्या कुमारीं इंद्रयवोग्र गंधा ब्रह्मयादि घोषेश्वरी का हरिद्रा,
वाग्देवदाली पिचु बीज कुष्ट सर्पादिकानां विषनाश दक्षं ॥ ८१ ॥

गंधा (बांझककोड़ा) कुमारी (घृतकुमारी) इंद्रयव (इन्द्रजो) उग्रगंधा(लहसुन) ब्राह्मी घोषा (तोरई) ईश्वरी (नागदमन) हल्दी सरफोका(देवदाली) पिच बीज (काकडा) (निमोली) कुष्ट(कुठ) यह सर्प आदि के विष को नष्ट करने में अत्यंत समर्थ है।

नत कुष्ट मलयज सिंधुज धतुर बीज शतक जलैः,
आलेपनं प्रयुक्तं स्यात् सद्यो विष विसर्प हरां ॥ ८२ ॥

नत (तगर) कुष्ठ (कूठ) मलयज (चंदन) सिंधुज (सेंधा नमक) शतक (सेवती) के जल से लेप करने से सर्प का विष तुरन्त नष्ट हो जाता है।

मंत्रितानां गोयृत सिता यष्टीनां गारूडादिभिः
मंत्रै पानं च भुक्तिश्च दुग्धंतस्य विषं हरेत् ॥ ८३ ॥

गरुड़ादि मंत्र के द्वारा गाय के घृत को शक्कर और मुलैठी को मंत्रो से मंत्रित करके खिलाने से और ऊपर से दूध पिलाने से उसका विष नष्ट हो जाता है।

तिल मद्य दिवा स्वापव्यायामां तपः
मेथुनं कोपं तैलं कुलत्थां विषदष्टो विवर्जयेत् ॥ ८४ ॥

विष से डँसा हुआ पुरुष तिल मद्य दिन को सोना व्यायाम गर्मी मैथुन क्रोध तेल कुलथी को छोड़ देवे।

इह विनिग दिताना गौषधानां प्रयोगो
भवति निपुण वीर्यः सुप्रसिद्धा गमानां,
यम सदन गतानामप सून दष्टकानां
पुनरपि निज देहात स्यात्स आने तुमीशः ॥ ८५ ॥

जो पुरुष यहाण पर वर्णन किये हुए अच्छे अच्छे प्रसिद्ध शास्त्रों के औषध के प्रयोगों में चतुर होता है। वह सर्प आदि के डँसने से अपने शरीर से प्राणों को लेकर यम के स्थान में गये हुए को वापस ला सकता है।

इति एकादश समुदेश

बारहवाँ समुद्देश

ॐ नमः सिद्धेभ्यः

अथातः संप्रवक्ष्यामि मंडल्यादि विषं
प्रतिचिकित्सितं समुदिष्टं मंत्र तंत्र विशारदैः ॥ १ ॥

मंडलि राजिल वृश्चिक मूषिक लूताश्च गर्द्धभादि भवं
नख दंत क्षत जातं कृत्रिम स्थावर चरोत्थितं विषं विषम ॥ २ ॥

अब मंडलिक आदि के विष की चिकित्सा मंत्र तंत्रों के पंडितो के मतानुसार कही जाएगी। मंडली (कुंडली से बैठनेवाला) राजिल (रखवाला सर्प) बिच्छु चूहा लूता घोड़ा और गधे केनाखून की चोट या काटने से उत्पन्न हुये स्वाभाविक और कृत्रम स्थावर और जंगम विषम विष को

कर्पूर कांजिकादिक विरूद्ध समभेदनोद्भवं च विषं
यत्तस्य चिकित्सित मिदमिह वक्ष्येहं मंत्र तंत्राभ्यां ॥ ३ ॥

अथवा कपूर और कांजी के परस्पर विरूद्ध मेल से उत्पन्न हुये सबप्रकार के विषों की चिकित्सा का वर्णन मंत्र और तंत्रों से किया जाएगा।

कूटः सहाजितः पूज्य नित्यौ युक्तौ स विंदुना
विभुना संयुतो भूतं तुरीयं विंदु संयुतं ॥ ४ ॥

कूटक्ष के सहित अजित इ को सदा विंदु अनुस्वार सहित(युक्त) करके विंदु सहित चौथे भूत स्वा को विभु (हा) से युक्त करके पूज्य त नित्य प विभु ए

गारुडोयं महामंत्रः सर्वमंडली ना विषं हरे
जपाद्यैरित्या हं परमः श्रुत केवली ॥ ५ ॥

क्षि स्वाहा यह गरूड़ महामंत्र है इसका जप करने से सब मंडलियों का विष नष्ट हो जाता है ऐसा परम श्रुत केवली भगवान ने कहा है।

ॐ ह्रां ह्रीं अल्प पक्षि देह अमर विमर विमन पां क ठः ठः ॥

अमु मंत्रं जपन्मंत्री कुर्वं स्तांबूल भक्षणं
मंडली क्ष्वेवमखिलमलं शमयितुं क्षणात् ॥ ६ ॥

मंत्री इस मंत्र को जपकर पान खाकर मंडलि के सम्पूर्ण विष को क्षणमात्र में नष्ट कर सकता है।

क्षुन्नाभ्यां श्वेत तुरंगाभ्यां भुक्तं संचिंतयेद्वपुः
मूर्द्धादि मंडलिक्ष्वेल पीडितस्या विषं भवेत् ॥७॥

शरीर के मस्तक से लगाकर नाभि तक भूखवाले तथा सफेज घोड़े से खाया हुआ ध्यान करे तो मंडली का विष नष्ट हो जाता है।

विषं मंडलिनां मंत्री मंत्रं तंत्रं च योजयेत्
आभूषणादिकं कर्मन कुर्वीत कदाचन ॥८॥

मंत्री मंडली के विष में केवल मंत्रो और तंत्रो का ही प्रयोग करे, आभूषण (काटे हुये स्थान पर कपड़ा बांधना) आदि कर्म कभी नहीं करे।

नील्या लज्जारिका पीता कल्कि कृता
शिफा तदुंलक्षालने नाशु मंडलि क्ष्वेल नाशिनी ॥९॥

निपतिः सैंधवो पेतः कुवराक्षी दलाद्रसः
विषं गोमूत्र सहितो रक्त मंडलिनां हरेत् ॥१०॥

नील्या(नील) लज्जारिका (छुईमुई) यावा (लाख लाही) की जड़ के कल्क को पीने और चावलों द्वारा धोने से मंडली का विष नष्ट हो जाता है। (यावा चावलों की एक किस्म का नाम है।)
कुवेराक्षी (सफेद पाटल) के पत्तों के रस में सेंधा और गोमूत्र को मिलाकर पीने से लाल मंड़ली का विष नष्ट होता है।

भक्षितं सर्पिषा कल्कः कदंब द्रुम कल्ककलात्
जयेन्मडलिनो रक्तान कृष्णान श्वेतोनऽहिनऽपि ॥११॥

कदंब वृक्ष के वल्कल के कल्क को घी के साथ खाने से मंडली सर्प रक्त सर्प काला सर्प और श्वेत सर्पों का विष नष्ट होता है।

कां कादम्यां शिफां हंति पानेना लेपने वा
विषं मंडलि संभूतं रक्तिकाया: शिफाथवा ॥१२॥

कदम्ब की जड़ या लाल चिरमी की जड़ का लेप अरने अथवा पिलाने से मंड़ली सर्प का विष नष्ट होता है।

स्नूहीक्षीरेगव्येषु च रूबु चंदन कल्क संयुतं
सिद्धं सर्पि पीतं शमयति मंडलि विष विकियामाशु ॥ १३ ॥

स्नूही (थोहर) का दूध पंच गव्य रूयु (इरंड) और लाल चन्दन के कलक में सिद्ध किया हुआ धृत को पीने से शीघ्र मंडली सर्प के विष का विकार नष्ट होता है।

अस्थि वकुलस्य पिष्टं श्रृंड्खलक दुग्धेन नाशयते दत्तं,
प्रशमयति मंखु मोहं मंडलि विष वेग संजातं ॥ १४ ॥

मोलश्री की गुठली को खूब बारीक पीसकर श्रृड्खलक (ऊंटनी) के दूध के साथ मंड्खु (शीघ्र) देने से मंडली के विष के वेग से उत्पन्न हुआ मोह शीघ्र नष्ट हो जाता है।

आदौ मंडलि विष जित् रजनी नवनीत लोद्र चूर्णानां
आलेपनमाथ पानं लवणास्य लेपनं पाछ ॥ १५ ॥

आदि में विष को जीतने वाली हल्दी(रजनी)और नवनीत (मक्खन) और लौंग के चूर्ण का लेप करके फिर नमक पिलाना चाहिये और फिर लेप करना चाहिये।

नालिकेरोद्भव तैलं सिंधुद्भवसमायुतं
मंडलि क्ष्वेल हप्रोक्तं दत्तं लेपन कर्मणि ॥ १६ ॥

लेप के कर्म में नारियल का तेल और सिंधुद्भव(सेंधा नमक) को मंडली के विष को नष्ट करने वाला कहा है।

मंडलिना दष्टस्य स्याद्य यदि विण मूत्र सं स्तंभः
नाभेरद्यः स तंदुल अज जल्या वृष विष्टया लिंपेत् ॥ १७ ॥

मंडली आदि के डँसे हुए पुरूष की जो विष्टा और मूत्र बन्द हो जाता है उसके लिये नाभि के नीचे तंदुल (चावल) आज जल (बकरी का पेशाब) वृष (वृषभक) बैल को विष्ठा का लेप करे।

पिंडार पत्रिकायाः शीतांभः कल्कितेन कंदेन
कुक्षिं लिंपेत मंडलि विषेण विण मूत्र सं स्तंभः ॥ १८ ॥

अथवा मंडली के विष से मल और मूत्र बन्द होने पर चिरचिटा और जावित्री के कंद का ठण्डे जल से बनाये हुए कल्क का कोंख में लेप करे।

सुरदारू स महिषी सकृदा लिप्तं सोफं दंश
मप हरति मंडलि विष संजातं महिषी मूत्रेण संपिष्टः ॥ १९ ॥

सुरदारू (देवदारू) व महिषी (शूलीतृण) को महिषी (भैंस) के मूत्र में पीसकर एक बार लेप करने से मंडली सर्प के विष से पैदा हुई सौंफ (सूजन) का कष्ट दूर होता है।

अजमूत्र सुसकृत्कोलेक पुरीषेर्लेपनं कृतं
समयेदर्बुद मड्खुमंडलि क्ष्वेल संभवं ॥ २० ॥

बकरी का मूत्र सुअर व कुत्ते (कौलेयक) की पुरीष (विष्टा) का एक बार लेप कर देने से मंडली के विष से उत्पन्न हुयी अर्बुद (मांस) की गांठ को मड्खु (तुरन्त) ही शान्त कर देता है।

इति मंडलि विष चिकित्सा

ॐ ह्रीं क्ष्मीं हुं फट स्वाहेत्य स्य मनोःकृत प्रजाप्यत्
अचिरेणैव विलुंपति विषमखिलं राजिलादीनां ॥ २१ ॥

इस मंत्र का मन में जाप करने से राजिल आदि का सम्पूर्ण विष शीघ्र ही लुप्त हो जाता है।

ॐ ह्रीं क्ष्मीं हुं फट स्वाहा

राजिल दष्ट: राजिल सर्प की औषधि

कृष्णा सिंधुत्थौसाज्य गोमय स्वरसैः पिबतु
सितबाणा पुंखा मूलं वा तद्दलाऽभोभिः ॥ २२ ॥

राजिल सर्प के काटे हुए को कृष्णा(काली मिरच) और सिंधुत्थ (सेंधा नमक) को गोबर के स्वरस से पिलावे या श्वेत सरपुंखा की जड़ को सरपुंखा के पत्तों के रस से पिलावे।

वकुलास्थि युतं पीतं त्रिकटुकमपहरतिराजिल क्ष्वेलं
नंद्यावर्त शिफा वा पीताक्षीरेण नसि च कृता ॥ २३ ॥

वकुल (मोलश्री)की गुठली के साथ सोंठ मिरच पीपल को पीने से राजिल का विष नष्ट होता है। या नंद्यावर्त्त (तगर) की जड़ को दूध के साथ पीवे तथा नस्य भी देवे।

भर्ज्जन भस्मी भूतौ गुलिंकृतौ विश्वभव्य वंदारौ
आघेयौ धृत सहितौ लेह्यौ वा राजिल क्ष्वेले ॥ २४ ॥

अथवा विश्व वंदार (सोंठ) भव्य वंदार (कमरख) को कूटकर उसकी भस्म बनावे और फिर उस भस्म की गोलियों को धृत में मिलाकर सूंघने या चाटने से राजिल का विष नष्ट होता है।

गुलिका रचिता दार्वी सैंधव गोरोचनाभि रूपयुक्ता
आघ्राणो पानेवा राजिल विष भीतिमप हरति ॥ २५ ॥

दार्वी या दर्वी (गोजिया जंगली गोभी) सेंधा नमक गोरोचन की बनाई हुई गोली को सूँघने या पीने से राजिल सर्प के विष का भय नष्ट होता है।

त्रिकटुक सहितै र्माषै रंजनमा लेपनं च राजिल जित
चंगनं गोपय युक्तैः अपि पानाद्यै स्तद्विषं हरति् ॥ २६ ॥

त्रिकटुक (सोंठ, मिरच, पीपल) और उड़द का अंजन या लेप करने से राजिल का विष जीता जाता है तथा चंदन और गाय के दूध सहित पीने से भी उसका विष नष्ट होता है।

राजिला सर्प विषस्य चिकित्सा समाप्तं

विष गर्भाद्यैर्मंत्रैः

प्रति कुर्यात् व्यंतरो रगस्य विषं
गोनास चिकित्सायां प्रोक्तैः साधारणौ रगदैः ॥ २७ ॥

व्यंतरनाग के विष को विष गर्भ आदि मंत्रों से दूर करना चाहिये और गोनास के विष की चिकित्सा साधारण औषधियों से होती है। गोनस एक बड़े भारी सर्प का नाम है।

गोमय रस महिषी घृतपानं पानं स्यात् व्यंतरस्य
गरल हरं वृहती दारू हरिद्रेः कांजिकया घोणस स्याहे ॥ २८ ॥

गोबर का रस और भैंस का घृत पिलाने से व्यंतर सर्प का विष नष्ट हो जाता है। कटेली दारू हल्दी को कांजी के साथ पिलाने से घोण सर्प का विष दूर होता है।

इति घोणस विष चिकित्सा

तारादिः प्रथमस्तस्य मध्यमः साजित
पुमानः स विसर्गो भवेदेषे मंत्रोऽलि विष सूदने ॥ २९ ॥

मंत्र के आदि में तार(ॐ) लगाकर उसके मध्य में अजिल (इ) पुमान (थ) विसर्ग सहित लगावे। यह मंत्र भौंरे के विष को नष्ट करता है। ॐ हथः

वामहस्तस्समुदकं हुं पक्षीत्यभि मंत्रितं
सिंचेद्विषस्य सामस्त्यं गरलं दंशतः स्मरन ॥ ३० ॥

ॐ देवदत्त

बायें हाथ में जल लेकर उसे हुं पक्षि इस मंत्र से अभिमंत्रित करके उससे डँसे हुए को पानी से सींचने से समस्त विष नष्ट हो जाता है।

इति भ्रमर विष चिकित्सा

बिच्छु के मंत्र

विद्धप्रदेशे तेनाश्रु वृश्चिकस्य महानपि
विष वेगं शामयंतीत्याम्नायाधि मुनीश्वरै ॥ ३१ ॥

ॐ नमो भगवति एहि एहि करि करि पुरिस्सुरि पुरिस्सुरि स्वाहा वा
ॐ नमो भगवति एहि एहि करि करि पुरि पुरि मुरि मुरि चुरि चुरि स्वाहा ॥

अमूमंत्रं जपेन्मंत्री स्वहस्त स्पर्शनादिना
वृश्चिका नाम शेषाणां निश्शेषं नाशयेद्विषं ॥ ३२ ॥

इस मंत्र से बड़े भारी बिच्छु के काटे हुये भी विष के वेग को शांत कर देता है ऐसा उत्तम मुनियों ने कहा है। मंत्री इस मंत्र का जप कर यदि अपने हाथ से स्पर्श आदि करे तो बिच्छु के समस्त विष को नष्ट कर देता है।

अलि गरलस्य हृदं गुष्टा नाभिकयो सर्द्धपर्वसंधीनां
अथवा गुष्ट युगस्य स्या दथवा गुष्ट मध्यम यो ॥ ३३ ॥

अनामिकाग्र स्वस्या गुष्ट भागेन सं स्पृशन
प्रादक्षिणयेन सन्मंत्री विहन्याद लिजं विषं ॥ ३४ ॥

अंगूठे और अनामिका (कनिष्ठा के पास की अंगुली) के ऊपर के पोर वे अथवा दोनों अंगूठे अथवा अंगूठे ओर बीच में उंगली के छूने से भौंरे का विष शांत हो जाता है। अनामिका के अग्रभाग और अंगूठे से दाहिनी ओर घुमाकर छुवा हुवा मंत्री भौंरे का विष नष्ट कर सकता है।

बिच्छु के विष का ध्यान नं. १

श्री वर्ण सित वर्णं स्वांगस्थं मंत्रिणो विचिंतनयः
नस्येत्प्रदक्षिण विद्योः वृश्चिक विष वेदना झटिति ॥ ३५ ॥

जो मंत्री अपने शरीर के अन्दर ठहरा हुआ ध्यान करके सफेद वर्ण के श्री वर्ण(श्री) को दाहिनी ओर से सूंघता है उसके बिन्दु के विष का कष्ट तुरन्त दूर हो जाता है।

दष्टस्य नयनभ्यक्तं सद्यः पार्श्वांतरा श्रितं
स्याद वृश्चिक विष क्षेपे भेषजं विश्व भेषजं ॥ ३६ ॥

विश्व भेषज (सोंठ) को दूसरी कर्वटकी आंख में लगाने से बिच्छु का विष दूर जाता है।

विद्ध प्रदेशे तत्पार्श्व गतायां वा श्रुतौ धमेत
पटु त्र्यषणमप्यै को दधानोऽलि विष छिदे ॥ ३७ ॥

पटु और त्र्यषण (सोंठ, मिरच पीपल) मेंसे एक को भी काटे हुए स्थान की तरफ के कान में फूंकने से भौंरे का विष दूर हो जाता है।

चिंचोपितं समरिचं कवलं वा मुखे दधत लवणं
श्रवणे दंश स्थानेवाऽलि विषे धमेत् ॥ ३८ ॥

चिंचा (इमली) और काली मिरच के ग्रास को मुख में रखता हुआ अथवा कान या डँसने को स्थान में नमक को रखने से भौंरे का विष नष्ट हो जाता है।

पुर्नवस्य मूलं वा संचर्व्वनग्नि कस्य वा
विद्ध प्रदेशे फूत्कुर्यात्ऽलि क्ष्वेल वाद्य जित् ॥ ३९ ॥

पुर्नवा (साठी) जड़ अथवा अग्निक (चित्रक) की जड़ चबाते हुए डँसे हुवे स्थान पर फूँक मारे तो भौंरे का विष नष्ट हो जाता है।

भूत रिपु जलधि संभव मर्द्दन तो वृश्चिकार्त्ति मप हरति
उष्ण जल से वनाद्य वा बंधन तो भानुपत्रस्य ॥ ४० ॥

भूतरिपु (हींग) जलोदध्पिसंभव(सेंधानमक) को मलने से बिच्छु के विष का कष्ट नष्ट होता है।अथवा यह उष्ण जल के सेवन तथाआक (भानु) के पत्ते बांधने से भी दूर होता है।

कवोष्णं सेंधवो पेतं पीत मात्रं घृतं हरेत्
वेदनां वृश्चिक क्ष्वेलं लमुदभूतां सु दुस्सहां ॥ ४१ ॥

कवोष्ण (गुनगुना कम गरम) घृत के साथ सेंधा नमक को पीने से बिच्छु के विष से उत्पन्न हुयी अत्यन्त दुस्सह वेदना भी नष्ट हो जाती है।

हरिताल शिला पथ्या शकृत गोधार्क कदिग्रो:
यौषामलिं विषौद्धूत्य मालेपन विलुप्यते ॥ ४२ ॥

हड़ताल मैनसिल पथ्या (हरड़े) छिपकली आक कीड़ो भौंरे के विष को एक बार (सकृत) सेप करने से नष्ट करता है। (उद्धूत= फेंकना)(विलुप्त= नष्ट करना)

हिंगु विश्वशिलाजाति कुसुमं गोमयां बुच
एतैरा लेपनं कृत मलिनो गरलं हरेत् ॥ ४३ ॥

हिंग विश्व शिला (मेनसिल) जाति कुसुमं (चमेली के फूल) गोबर के पानी का लेप भौंरे के विष को नष्ट करता है।

जयेदबीज तरोबींजंक्षीरेणर्कण भावितं
आलिप्तमलिनो विद्धेत्तदुत्थां विष वेगतां ॥ ४४ ॥

आक के दूध में भावना दिये हुए बीज तरू (भिलावा) का लेप भौंरे के विष की वेदना शीघ्र ही नष्ट करता है और उत्पन्न हुए विष के वेग को जीतता है।

पिष्ट: खदिर निर्यासस्तत्पत्र स्वरसेनयः
सक्षुद्र सिकत्थ स्तस्या शुनस्येन्नलि विषं व्यथा ॥ ४५ ॥

जो कोई खदिर निर्यास (कत्थे) को उसके पत्तों के रस तथा सहद की मकूवी के छत्ते के मोम के साथ पीसकर लेप करता है उसकी भौंरे के विष की वेदना शीघ्र ही नष्ट हो जाती है।
(क्षुद्र= सहद की मकूवी) (सिकत्थ= मकूवी का मोम)

नागपत्रा बुना हिंगु सहितेन विलेपनं
अलिदंष्ट्रेल जित् इक्ष्वाकु दलां जनोत्थवां बुना ॥ ४६ ॥

नागपत्र (नागरवेल का पान) के जल के साथ हींग का लेप अथवा गन्ने (इक्ष्वाकु) केरस के पानी का अंजन करने से भौंरे का विष जीता जाता है।

त्रिवर्ष जात कर्प्यास मूलं वृश्चिक जे विषेलिपेतं
कंटक पुंख्या वा मूलं सलिल कल्कितं ॥ ४७ ॥

तीन वर्ष की पैदा हुयी पुरानी कपास की जड़ अथा वकंटक पुखी (श्वेत सरफों का) के जल में बनाये हुए कल्क का बिच्छु के विष में लेप करे।

वृश्चिक विषापहारो भवति सु सौ वीर पिष्टयो
विंहिता चक्रांकि पुनर्नवयो लेपार्द अर्क नाग युतयो ॥ ४८ ॥

अर्क (आक) नाग (नाग केशर) चक्रांकी (काकड़ा सिंगी) पुनर्नवा (साठी) और सौवीर (बेर) को पीस कर लेप करे तो बिच्छु का विष तुरन्त ही नष्ट हो जाता है।

वृश्चिक मूरकस्य च वन्हे द्वींपस्यवा शुभिः
पिष्टं लेपादिना हन्यात् सद्यो वृश्चिक जं विषं ॥ ४९ ॥

बिच्छु घास वन्हि (चित्रक) द्वीप(नारियल बीजी) आदु(चिरचटा) सबे पीसकर लेप करने से बिच्छु का विष नष्ट करता है।

मालत्या नूतनं पत्रं सैधंवं रामठं शिला
छगन स्वरस स्तेषां गुलिकालि विषं हरेत ॥ ५० ॥

मालती (चमेली) के नये पत्ते सेंधा नमक रामठ (हींग) शिला(मेनसिल) छगुणा (गोबर) के रस में बनाई हुयी गोली भौंरे के विष को दूर करती है।

कौमुद शैरीषाभ्यां पुष्पाभ्यां लेपकादिरलि विषजित
षदगंथिकाथ चंगन मंजिष्टा शारिबाभिर्वा ॥ ५१ ॥

कुमुद (श्वेत कमल) और सिरस के फूलों का लेप अथवा षदगंथा(वच) चंदन मंजठि शारिबा (गोरोसर) का लेप भौंरे के विष को जीत लेता है।

धूपो विरचितो दंशे घृतात्कै वर्हिणः छदै
वृश्चिकोथ विषं हन्यात् सुदुस्सहमपि क्षणात् ॥ ५२ ॥

घृत में तर किये गये हुए मोर के पंखों की धूप से बिच्छु का अत्यंत दुस्सह विष भी क्षण मात्र में नष्ट हो जाता है।

शिरीष नक्त मालास्थि कुनटि कुष्ट कुंकुमैः
गुलिकावृश्चिक क्ष्वेलं हरेत् संक्रामत्योदपि ॥ ५३ ॥

सिरस करंज (नक्तमाल) की गुठली कुनटी (मेनसिल) कूष्ट (कूट) कुंकुम (केशर) की गोली बिच्छु के विष को नष्ट करती है और बदलती भी है।

अकोल तिलक दाडिम तिल जंबू मूल तुल्य भागाभ्यां
गुलिकां सिता मधुभ्यां कृताऽलि विष संक्रमं कुरूते ॥ ५४ ॥

अंकोल (ढेरा) तिलक दाडिम(अनार) तिल जामुन की जड़ सब बराबर लेकर शक्कर और मधु (शहद) मिलाकर बनाई हुयी गोली भौंरे के विष को बदलती है।

गोली रवि शलभ कृत कुली रसलभान दुग्ध रक्तानां
स कुंसुभाल शिला नामऽलि विष संक्रामकृद गुलिका ॥ ५५ ॥

गोली बनायी हुयी आक (रवि) शलभ(तीडी) कृतक(रसोत) कुली रवि सलभान(काकड़ा सिंगी) दुग्ध (दूध) रक्ता(चिरमठी) कुसुभा (केसूला) अल(हरताल) शिला(मेनसिल) की गोली भौंरे के विष का संक्रामन करती है।

श्लेष्मांतक फलांकडिबु छत्रं द्विप मलोद्भवं
करोति विष संक्रामं वृश्चिक स्यान शंसय ॥ ५६ ॥

श्लेष्मांतक (लिसोडे) के फल और आक का दूध छत्र (छितोना) द्विप (हाथी) की लीद का रस बिच्छू का निस्संदेह संक्रमन कर ती है।

द्विप मल भूतं रवि दुग्धं श्लेष्म तरू फलोपेतं
वृश्चिक विष संक्रमणं वदरी तरू दंड संयोगात् ॥ ५७ ॥

द्विपल (हाथी की लीद) का रस भूतं (नागरमोथा) छत्र (छितोना) रवि दुग्ध (आक का दूध) श्लेष्म तरू फल (लिसोड़े के पेड़ का फल) वदरी तरू दंड (बेर के वृक्ष के दंड) के संयोग से बिच्छू के विष का संक्रमन होता है।

दंशस्याऽधोनीता वृश्चिकजं विष मरणं
सुरस शिफा शमयत्यु परिनुनीता सा
सहसा तत् व्यर्थी कुरूते ॥ ५८ ॥

सुरस शिफा (निगुंडी की जड़) को काटे हुए स्थान से नीचे रखने से बिच्छु का विष शांत होता है किन्तु उसको ऊपर ले जाने से वह विष नाशन व्यर्थ हो जाता है अर्थात् विष ऊपर चढने लगता है।

इति वृश्चिक विषं

ॐ नमः सर्वमूषिकेभ्यो विश्वामित्र आज्ञापयति शीघ्रं गच्छंतु मूषिकाः स्वाहा ॥

सहश्रतितय सं जाप सिद्धेन मनुना मुना
कृतो जपादिर्निःशेषं मूषिकानां विषं हरेत ॥ ५९ ॥

इस मंत्र को तीन हजार जाप से सिद्ध करके पढ़ने आदि से वह चूहे आदि के विष को पूर्ण रूप से नष्ट करता है.

रेरे श्वेत मूषिकः फुः कपिले फुः कपिले
जट रूद्र पिंगल फुः हर हर विशं हर संहर फुः ॥

पुरश्चरण मे तस्य लक्ष मान जपः स्मृतः
मंत्रस्य गुरूभिः पूर्वं भवेत् रूद्रोपि देवता ॥ ६० ॥

एतेन द्वात्रिंशद्वारान् जप्तं नीलेन्द्र यवैः पुष्पंमौनीभूत्वा
यो मुखमऽभुक्तवान् नूतमाखु विषेतु ॥ ६१ ॥

पहले इस मंत्र का एक लाख जप कर पुरश्चरण करके रूद्र देवता को प्रसन्न करे। फिर इस मंत्र से नीलेंद्रयव पुष्पं(नीले इन्द्रजो के फूल) का भोजन करता हुआ नीचे को मुख करके चूहे के विष में बत्तीस बार जपे। इस वक्त मौन व्रत रखना जरूरी है।

रू..हांतं विष्णु युतं चरमं युतं संलिखव्य सष्ट वर्गस्य
नाग दले सारङगातेर्जगधं वृष गरल विकृति हरं ॥ ६२ ॥

षष्ट वर्ग के अंतिम बीज को विष्णु सहित अंत में स्वाहा लगाकर अर्थात् श्रेष्ट मं नाग दल (नागरबेल का पान) पर लिखने से मृग के तेज और बैल के विष का विकार नष्ट हो जाता है।
ॐ मं विष्णु स्वाहा ।।

अथवा खु दष्ट गात्रस्य दंशं कांडादिना दहेत्
प्रादुष्यादन्यथा तीव्र वेदना तत कर्णतः ॥ ६३ ॥

दष्वा च दंशाद्रुधिरं वृश्चिकादव सेचयेत्
पान नस्यादिकं पश्चात् विधा तव्यं चिकित्सितं ॥ ६४ ॥

अथवा चूहे के डँसे हुए व्यक्ति के काटे हुये स्थान को पेड़ की जलती लकड़ी आदि से जलाकर उसके कान में से तीव्र वेदना निकाले। जले हुए जखम से रक्त निकाल कर फिर उस पर बिछवा घास लगावे और इसके पश्चात् उसको पिलाने और सुंघाने की औषधियों से चिकित्सा करे।

अंगानि कटुकाऽलांबु समस्तान्येक मे वच
निपीतानिमूलं हंति सहसा मौषिकं विषं ॥ ६५ ॥

कुटुका अलांबु (कड़वी तुंबी) के सब अंगों को एक साथ पीने से चूहे के विष की जड़ भी नष्ट हो जाती है।

नालिकेरां बुना गुंजा तंदुलं कल्कितं पिबेत्
विषे वृषस्य तक्रेण बरसी मूल मे वचः ॥ ६६ ॥

नारियल के पानी में बने हुए गुंजा(चिरमी) और चावलों के कल्क को पीने से अथवा बरसी या तुरसी की मूल को मट्ठे के साथ बैल के विष में पीवे। सुरसी होने पर तुलसी की जड़ अर्थ हो सकताहै।

आलर्कं स्वरसंवा प्रागे सतैलं पिवेत् वृक्ष्वेले
तिलकस्य मंजरी वा सूक्ष्मा गोक्षीर परिपिष्टां ॥ ६७ ॥

आलर्क (पागल कुत्ते) और वृष (बैल) के विष में अथवा आलर्क के स्वरस को तेल सहित पीने से अथवा तिलक वृक्ष की मंजरी (कली) और सूक्ष्मा (सतावरी) को गाय के दूध के साथ पीस कर बैल के विष में पीवे।

रजनी निष्पावक त्वक तूर्णं फलिनी लतांत संयुक्त
पीतो धान्यात्तत क्षपत्या खो विंषं विषमम् ॥ ६८ ॥

रजनी निष्पावक (शिम्बीधान) की छाल का चूर्ण निष्पावक(शिम्बीधान्य) का छिलका निकला हुआ का चूर्ण फलवाली लता सहित पीने से वह चूहे के अत्यंत कठिन विष को भी नष्ट करता है।

घोषाद्वय नक्तास्व्या यम दूत कंवंध्यास्थिभिर्हरिद्राभ्यां
निर्गुंडीमूलेन च गव्याज स्त्रवण परि पिष्टैः ॥ ६९ ॥

काकडासिंगी और घोषा (देवदाली) दोनों नक्ता (करंज) यमदूतक (कौवा) वंध्या(बांझ ककोड़े) की गुठली हल्दी निगंडी की जड़ दूसरी हल्दी (दारुहल्दी) गाय के मूत्र और बकरे के स्त्रवण(मूत्र) में पीसकर

गुलिका रचिता खार्य्यां पीता मूषिक विषं हरत्य
चिरात् आखून उच्चाटयति च ग्रहे क देशे विनिक्षिप्ता ॥ ७० ॥

बनाई हुई गोली को खारे नमक के साथ पीने से चूहों का विष नष्ट हो जाता है और यदि इसको घर के एक कोने में रख दिया जावे तो चूहों का उच्चाटन घर से करता है।

कांता शरीष कुसुमं कुस्तुंबरु निशाद्वयै:
समूत्रै गरलं मूषिकानां नि वार्य्यते ॥ ७१ ॥

कांता (सफेद दोब) सिरस का फूल कुस्तुंबरु (धनिया) और दोनों हल्दी मूत्र के साथ पीसकर सेवन करने से चूहों के विष को दूर करता है।

तिल तिलकांकोलशिफा कपित्थ मध्यंच पशु जलेन
पीवेत आखु विषे विलिंपेदप्य नां जाबूना कोल मूलं वा ॥ ७२ ॥

तिलतिलक अंकोल की जड़ कापित्थ (कैथ काथोड़ी मधु (शहद) को गाय के मूत्र से पीवे अथवा चूहे के विष में अंकोल की जड़ को पीस कर लेप करे जांबूना पाठ होने पर जामुन की जड़ भी लेप में लेवें।

क्षीरेण पीत माज्येन मूल मामलकी तरो:
मूषिकानां विषं हन्यान्मत्तानां श्रुनामपि ॥ ७३ ॥

आमले के वृक्ष की जड़ को घी और दूध के साथ पीने से पागल चूहों का विष निस्संदेह नष्ट हो जाता है।

आमलकी द्रुम मूलं पीतम जाक्षीर पिष्टमथ
कृत्वा उन्मत्त मूषिकानां गरलं हरं नात्र संदेह: ॥ ७४ ॥

आमले के वृक्ष की जड़ को बकरी के दूध में पीसकर दूध के साथ पीने से पागल चूहों का विष निस्संदेह नष्ट हो जाता है।

पीतै: क्षीरेण भवेद् वन मालाया: प्रतीच्य दलौ
हंसाघ्रि पिष्ट वलकल सहितै मूंषिक विषाक्षेप: ॥ ७५ ॥

वनमाला (सेवत्ती या बड़ी लम्बी माला) के पश्चिम की तरफ के सात पत्तों के साथ हंसाघ्रि (हंस पदी) की वक्कल को पीसकर दूध के साथ पीने से चूहों का विष नष्ट हो जाता है।

खंड सिता कदलि फल मागधी का चूर्ण संयुतं
पीतं क्षीरे सुरभि: शमयति मूषक विष भवांवाद्यां ॥ ७६ ॥

खांड शक्कर केले की फली और मागधी (पीपल) के चूर्ण को दूध के साथ पीने से चूहों से होने वाला कष्ट दूर हो जाता है।

बीजानि शर पुंखाया: पिबेत् कल्की कृतानिवा:
तक्रेण भवेत् तस्य विषं मूषिक जोद्भवं ॥ ७७ ॥

जो पुरुष मट्ठे के साथ कल्क बनाये हुए सरफोंका के बीजों को पीता है उसको चूहों का विष नहीं चढता है।

बिंबीत्रपुषोभूतं महिषी तक्रेण तंदुलं पीत्वा
पुन्नाग तंदुलं वा खाद्यां तैलाक्त आताप विषै तिष्टेत् ॥ ७८ ॥

बिंबी(कन्दूरी) त्रपुष(ककडी या फूट ककड़ी) भूत(नागरमोथा) और चावलों को भैंस की तक्र के सात पीवे अथवा पुन्नाग (सफेद कमल) और चावलों को खारे नमक और तेल में भी जीला करके भौंरे के विष में।

अचिरादिवो दर गतां ऽ. ोशिशशवं पुरातने स्तेन
मूषिक दष्टस्य मुखार्द्रि निग्रामं कुर्वंते सर्वे ॥ ७९ ॥

पेट में जाने पर चूहों के सब प्रकार के विषों को नष्ट करता है। चूहों का पुराना मुख से काटा हुआ सब प्रकार का विष निकल जाता है।

आखु गरलं विनश्येत् सद्य: पीतैर्घृतशर्करा
मूलैस्तिलस्य तिलकस्यांकोल स्यांग कन्याश्च ॥ ८० ॥

तिलतिलक अंकोल और घी कुमारी के मूलों को घी और शक्कर के साथ पीने से चूहों का विष शीघ्र ही नष्ट हो जाता है।

कुष्ट ताल शिलां भूयो भावितां सुरसां बुना
दत्तां पातुं चिकित्संति नि:शेषं मौषिकं विषं ॥ ८१ ॥

कूठ हरताल मेनसिल को सुरसांबु (लाल तुलसी) के रस के साथ पीने को देने से यह चूहों के सम्पूर्णविष को अच्छा कर देता है।

कपित्थ पल्लवोद्भूतः स्वरसो मधुनायुतः
निपीतो मूषिकानां च लूतानां च विषं जयेत ॥ ८२ ॥

कपित्थ)कैथ) के पत्तों के रस में शहद मिलाकर पीने से चूहों और लूतो(मकडियों) का विष जीता जाता है।

गोमय कपित्थ पत्र स्वरसैः कटु दुग्धकरांबुना पीतं
वृष विष जित्तिफलावा सगुडा सघृतमा लीठा ॥ ८३ ॥

गोबर और कैथ के पत्तों के स्वरस को कड़वी दूधी के रस के साथ पीने से अथवा त्रिफला (हरड़े बहेड़ा आमला) और गुड को घृत के साथ चाटने से बैल का विष जीता जाता है ।

तैलापेतः पीतः कार्प्पासि दलोद्भवः प्रागे स्वरसः
विष ह्रत खाऱ्यां वाता पिच्छ शिफाथ च व्य शिफा ॥ ८४ ॥

कपास के पत्तों के स्वरस को प्रातःकाल में तेल के साथ पीने से अथवा खारे नमक के साथ ता पिच्छ (तमाल वृक्ष) और चव्य की शिफा (जड़) को सेवन करने से बैल का विष नष्ट हो जाता है।

तुंव्या बुक्षुणया रात्रिमेकामध्युषितं पिबेत्
प्रातः शितं भवेदे तत परमांखु विषापहं ॥ ८५ ॥

तुंबी के एक रातभर रखे हुए जल को प्रातःकाल पीने से चूहों का विष नष्ट हो जाता है।

पीतं हरति मंजर्य्याः कुडल्याश्च शिफाद्वयं
जलेन क्वथितं रक्षेदाखु दंश विषातुरं ॥ ८६ ॥

मंजरी (गंध तुलसी) और कुंडली (अमलतास) की दोनों जड़ो को जल में बने हुए क्वाथ को पीते ही चूहों के विष से पीड़ित की रक्षा होती है।

क्वाथां कुकुंभवल्कोत्थः प्रातः पीतो विषं हरेत्
वार्ष घ्राणेप्पित स्तैलेनाग्नि क स्वरसेऽथवा ॥ ८७ ॥

कुकुम अर्जुन वृक्ष की वक्कल को प्रातःकाल में पीने से अथवा अग्निक (चित्रक) पेड़ के स्वरस वर्ष (भाप) को तेल के साथ नाक में डालने से विष नष्ट हो जाता है।

आमलक वल्कल श्रुतस्त्वामलकी मूल कलिक्त :
क्वाथः मूष्णाति मौरिवकं विषमंशेषं मचिरेण दुर्विषम् ॥ ८८ ॥

आमले की वल्कल श्रुतस्तव (रूद्रवती) आमले की जड़ के क्लक का क्वाथ अत्यंत कठिन चूहों के विष को तुरन्त ही नष्ट करता है।

बिल्व पुनर्नव गोक्षुरजी मूतक सिंधुवार शिग्रुणं
मूलैर्न्नतेन वचयाऽव्यंबु श्रुतं वृष विषेपेयं ॥ ८९ ॥

बैल के विष में बील साठी गोखरू जीमूतक सिंधुवार (निर्गुडी) शिग्रुणां (सहजना) की मूल को (नत) तगर वच को अव्यं के जल और श्रुत के साथ पीवे।

घृत मा स्फोता शिफया नख शिफया कपित्थ पचांगैः
अथवा सिद्धं पींत मूषिक विष विकृतीम वहन्यात ॥ ९० ॥

आस्फीता (गोरीसर) की जड़ नखी की जड़ कपित्थ (कैथ कायोड़ी) का पंचाग में सिद्ध किये हुए घृत को पीने से चूहों के विष का विकार नष्ट होता है।

क्षीरे श्रुतं दश गुणं तैलं पंचाब्जकंद कल्क युतं
असम विषम ज्वराश्नपि वृष विष विकृतीं निरा कुरूते ॥ ९१ ॥

पंचाब्जकंद (पांच कमलों की जड़) के कल्क में दूध सहित सिद्ध किया हुआ दस गुणा तेल असम और विषम ज्वरों तथा बैल के विष के विकारों को दूर करता है।

दलामुत्तम कन्याया: जीवंत्या अपि भुक्तयेत्
उन्मूलयितुमा कांडक्षुन्नखुक्ष्वेल विजृंभितं ॥ ९२ ॥

उत्तम कन्या (घृतकुमारी) और जीवन्ती के दलों (पत्तों) को खाने से चूहों के विष का विकार शीघ्र ही समूल नष्ट हो जाता है।

श्रूत्यांवंध्येभ कर्णानां कन्द दैश्चूर्णी कृतः समैः
जगैः समसिते प्रातर्न्नश्यत्मूषकं जं विषं ॥ ९३ ॥

सूर्या बंध और द्रुभ कर्ण(गजपीपल) के कंद को बराबर बराबर लेकर बनाये हुये चूर्ण को बराबर की शक्कर के साथ प्रातःकाल के समय नस्य लेने से चूहों का विष नष्ट हो जाता है।

रजः कोरंट मूलस्य जग्धेज्जग्धं गुडान्वितं
चूर्णं च तिल मूलस्य सघृतं मूषिकं विषं ॥ ९४ ॥

कोरंट (कटसरया-पियाबासा) की जड़ को (जग्धं) खाने से और घी सहित तिल की जड़ का चूर्ण चूहे के विष को जीत लेता है।

गुडै नैरंड बीजैश्च तिलैश्च गुलिकाकृता
प्रातर्भुक्ता हरेदार्त्तिं सद्यो विष वृषोद्भवां ॥ ९५ ॥

गुड़ और एरंड के बीजों को (इंडोली को) और तिलमिलाकर बनाई हुयी गोली को प्रातःकाल के समय खाने से बैल के विष का कष्ट तुरन्त ही दूर कर देता है।

मूत्र पिष्टैर्वचा कुष्ट राठ जीमूत कास्थिभिः
वमनं मूषिक क्ष्वेलं निहंति दधि मिश्रितैः ॥ ९६ ॥

मूत्र में पिसे हुए वच कूठ राठ(मदन वृक्ष) और जीमूतक(नागर मोथा) की गुठली को दही मिलाकर सेवन करने से वमन द्वारा चूहों का विष नष्ट होता है।

जीमूत कौशातक मदन श्रुकास्व्यांऽस्थि चूर्णं संयुक्तं
पीतं वांत दधि वृष विष दोषं भक्षु निहंरति ॥ ९७ ॥

जी मूत (नागरमोथा) कोशातकी (कड़वी तोरई) मदन (मैनफल) और श्रुका (सिरस) की गुठली का चूर्ण दही के साथ पिलाकर या खिलाकर बैल के विष को तुरन्त ही नष्ट करता है।

कौशातकी निशा द्वय दुग्धी मातुल शिफा स्तुषां
इंभोभिः पीतां वांतां वृष विष विकारमचिरादपा कुर्य्यः ॥ ९८ ॥

कौशातकी(कड़वी तोरई) दोनों हल्दी दूधी मातुल(धतूरा) की जड़ को तुषा (भिलावा) के रस के साथ पीने से बैल के विष का विकार तुरन्त ही दूर हो जाता है।

नीली त्रिफला त्रिकटुक कल्केन विरेचनं
वृष विषघ्नं शीतं तराभिरग्निः पीतेन भवेद्दिनारभे ॥ ९९ ॥

नीली त्रिफला (हरड़े बहेड़ा आमला) त्रिकटुक (सोंठ मिरच,पीपल) या त्रिवृता (निसोथ) अग्नि (चित्रक) के कल्क को गरम गरम प्रातःकाल के समय पीने से विरेचन द्वारा बैल का विष नष्ट होता है।

टेषां शिरीष शाकक्काथे सिद्धं निपीय वृष गरले
कुर्यादेकं विमल स्वांगो रूचि कुष्ट शोफ युते ॥ १०० ॥

जो सिरस और शाक (सागवान) के क्वाथ में () स्वांगरुचि अपनी रुचि के अनुसार कूट को और शोफयुत (भिलावे सहित) को सिद्ध करके पीकर रेचक(जुलाब) लेते हैं। उनको बैल के विष का कष्ट नहीं होता है।

द्रवंति कंद सहिताद्या विलेपी विषान्विता
सा भुक्ता मूषिक क्ष्वेलाद्रक्षितुं प्रभवेन्नरः ॥ १०१ ॥

द्रवंति कंद को विलेपी(दाल चावल जल पकाकर गाढ़ा करके पीने को कहते हैं) और विष सहित खाकर पुरुष चूहे के विष से रक्षा कर सकता है।

मूषिक विष हर मंत्रं सिद्धं तुंडी शिफा भवेत्
क्वाथे अशितं कौशातक फल जल संयुक्तोथ धान्याष्टौ ॥ १०२ ॥

तुंडी की जटा के क्वाथ को कौशातक फल (कड़वी तोरई) को जल सहित आठों धान्यों को खाना चूहे के विष को नष्ट करने वाला मंत्र है।

स्नुक दुग्ध त्रिफला समवार्ताक शिफा रजः कृता
गुलिका क्षुणाभुक्ता साज्यौजाद्य ग्रासेन वृष विषजित् ॥१०३ ॥

कुत्ते का दूध त्रिफला और इनके बराबर वार्ता की (वरंहटा ७ कटेली) की जड़ के चूर्ण की बनी हुयी गोली को भोजन के समय पहले ग्रास में घी के सात खाने से बैल का विष जीता जाता है।

लवणोदकेन सिक्तौ विगत तुषैश्चूर्पितै गुडोमिश्रैः
जग्धैःस्तिरलैर रोचक सहितं मूषिक विषं न स्येत् ॥ १०४ ॥

नमकीन जल से भीगे हुए बिना छिलके के गुड़ मिले हुए तिल और अरोचक चूर्ण को खाने से चूहों का विष नष्ट हो जाता है।

मुस्ता चूर्णंघृतोपेतंलीठ माखु विषापहं
नस्यतेऽथ सहव्योषैः कपित्थ दल वारिभिः ॥ १०५ ॥

मुस्ता (नागरमोथा) के चूर्ण को घृत में मिलाकर चाटने से चूहों का विष नष्ट होता है तथा व्योष (सोंठ, मिरच, पीपल) में कपित्थ (कैथ कायौडी) के पत्तों के रस का नस्य लेने से भी विष नष्ट हो जाता है।

भावनं श्रुक वृक्षस्य सारेण च फलेन च
पिष्टाभ्यां वारिणा सर्व वृष क्ष्वेल निसूदनं ॥ १०६ ॥

श्रुक वृक्ष (सिरस) के सार (गूदे) और फल को पीसकर पानी में भावना देकर खाने से बैल का सब विष नष्ट हो जाता है।

विन्यस्तोनासि सामठ सहितो निर्गुंडिका दल स्वरसैः
अपनुदति मूषिकाणां विषमप्यहि वृश्चिकादानां ॥१०७॥

रामठ (हींग) सहित निर्गुंडी के पत्तों का स्वरस का नाक में डालकर नस्य लेने से वह चूहे, सर्प और बिच्छू आदि के विष को नष्ट करता है।

कुर्वीत व्योष चूर्णेन गोशकृत् स्वरसेन त
अंजनं नेत्रयोरास्तु विष पीडा कदर्थितः ॥१०८॥

व्योष (सोंठ, मिरच, पीपल) और गोसकृत (गोबर) के स्वरस से आंखो में अंजन करने से चूहों का विष व्यर्थ हो जाता है।

लिंपेदुदरुदंशे चक्र शरीषामृता विशाला स्तृभि
विष कर्णिका हृदथ पटुमंजिष्टा रजनी गृह धूमै ॥१०९॥

चक्र तरगर पादिका सिरस अमृता (गिलोय) विशाला (इंद्रवारुणी) विष(वत्सनाभ) कर्णिका (अग्नि मन्मथ वृक्ष) पटु (परवल शाक आसाक सोंफ या नमक) मंजीठ हल्दी घर का धूमसा से चूहे के काटे स्थान पर लेप करे।

तिल जन्य हरे लिप्तं मूषिकानां विषं क्षणात्
वर्तुलेन च गो जिह्वा मूलेन च सु साधितं ॥११०॥

तिल जन्य (तिल का तेल) को वर्तुल (गाजर) और गोजिव्हा, (गोभी) की जड़ में सिद्ध करके लेप करने से चूहे का विष क्षण मात्र में नष्ट हो जाता है।

धूपो जयति धतूर बीजै डुडंभ चर्मणा
शकृता च विडाल स्थ स ज्वरं मूषिकं विषं ॥१११॥

धूपोति वहलो दंशे दत्तः क्षमयतिक्षणात
मार्जार रोमभिः कृतोनिःशेष वृषजं विषं ॥११२॥

बिलाव के बालों को कतर कर उसकी दी हुयी धूप बैल के काटने से उत्पन्न हुए विष को नष्ट करता है।

अशरणे फु: अशरण विशरणे फु:

मंत्रेणानेन विकरेत सर्षपान्नभिमंत्रितान्
उच्चाटनं विदध्यु: स्ते मूषिकाणां क्षणादिव ॥ ११३ ॥

इस मंत्र से अभिमंत्रित सरसों को बखेरने से चूहों का उच्चाटन क्षण मात्र में हो जाता है।

सुवर्ण दंष्ट्र वज्र दंष्ट्र मत्त वराह कुंजरे चु थ सिंह
वराहंत्थस्थितवैवं सप्त कृत्व: सप्ताहं पठतुति
सृषु संध्या सुमंत्रं ममुं गृह मध्ये दद्यास्वुच्चाटनं वांछेत् ॥ ११४ ॥

इस मंत्र को घर में खड़ा होकर तीनों संध्याओं में सात दिन तक सात सात बार पढ़ने से चूहों का उच्चाटन होता है।

ध्यायेत गृहांगमखिलं सर्पमयं जपतु हरति सन्मंत्री
स्तंभश्च मूषिकाणां दूरं च गति स्तंभो भवति ॥ ११५ ॥

उस जपने के समय में उत्तम मंत्री सम्पूर्ण घर के आंगन को सर्पों से भरा हुवा ध्यान करे तो भागते हुए चूहों की गति का स्तंभन होता है।

ॐ नमो भगवते वज्र शय मूषिक मृग वराह कंटके रस चर भक्षय संतुफो वंय वंय वराह आज्ञापयति हुं फट ॥

एतेन सहश्र त्रय जप सं सिद्धेन वेष्टितं पत्रे
सर्पग्रस्तात्म मुखं मूषिकामभिलिखितु मंत्रज्ञ: ॥ ११६ ॥

इस मंत्र का तीन हजार बार जप करके पत्र पर करन से सिद्ध करने से अपने मुख में चूहे को खाये हुए सर्प का ध्यान करे।

तत्पात्रे विन्यस्येत् मध्ये गेहस्यास्य वद्धारवौ
अचिरेण मूषिकाणां गण स्ततो दूर मुपयाति ॥ ११७ ॥

उस पत्र को यगि बहुत चूहों वाले घर के बीच में डालकर बांध देवे तो तुरन्त चूहों का समूह घर से दूर भाग जाता है॥

सर्पशर्क्षस्थै चंद्रेधनुरुदये वृष बिलस्य तस्य स्वरेनेत्
सप्तांगुलकार स्करकीलमधौ वेद्यमुपरिष्टान् ॥ ११८ ॥

जिसके बिल को सर्प नक्षत्र और धनुष तथा वृष राशि के चंद्रमा में सात अंगुल की मुरष्कर (भिलावा) कील से खोदकर उसमें ऊपर नीचे कीलों को गाड़ा जाता है।

व्याधात शंकुमथवा सतारक व्युपकर स्थिते शशिनि
निखने दाखुभ्योभीर्न्नजातु जायते तत्स्थेभ्य: ॥ ११९ ॥

ऐसे नक्षत्रों और चंद्रमा में बिल के खोदने वालों को और वहाँ रहने वालों को चूहों से कभी भय नहीं रहताहै।

यत्छागमूत्रभावितजल्योतु पुरीष लिप्तमुराखु:
सगृहस्थानन्या नप्याखुन्नुच्चाटयेद चिरात् ॥ १२० ॥

यदि एक चूहे को पकड़कर बकरी के मूत्र में भावना दिये हुए उग्र बिलाव के भिष्टे में लपेटकर छोड़ दिया जावे तो वह चूहा और चूहों को भी घर से भगा देता है।

अर्क दल्सथं यत्नत्वं स्नूही क्षीरभाषकूलमाष युतं
जग्धां मदेन सुप्ता: प्रबुध्य दूरं गृहाद्वि नियाति वृषात: ॥ १२१ ॥

आक के पत्ते पर तेल स्नुही(थोहर) के दूध उड़द और कुलथी को अपने घर रखे दे। बैल उसको खाकर मद से सो जावेंगे और जागने पर फिर से भाग जावेंगे।

सर्ज्जश्री सुरभि: पुरंकमि रिपु: श्वेतांग कर्णा शिफा
भल्लांतास्थि वसुंधरा कुहगद: पुष्पं फलं चार्ज्जुनं ॥ १२२ ॥

एतैरद्भूत शक्तिभि: विरचितो धूपो गृहे मूषिकान
लूता वृश्चिक मलकुणाहि मशकांश्चोच्चाटयेद्वेश्मन: ॥ १२३ ॥

सर्ज (सर्जरक) श्री (बैल) सुरभि(राल) पुर(दाहागुरु) कृमिरिपु (बायविडग) श्वेताग कर्ण (सफेद कोयल की जड़) भिलावे की गुठली वसुंधरा(खजूर) कूहगद (नीलकमल) के फूल फल और अर्जुन इन अद्भुत शक्तिशाली औषधियों से बनाई हुयी धूप घर में से चूहे मकड़ी बिच्छु खटमल सांप और मच्छरों को भगा देती है। मूषक विषादः प्रतिकार

हां हीं हूं कारेन्द्र पठत: पंचाक्षरी रवे मंत्रै:
अयंम खिलं लूतानां हरति विषं विषम मपि सद्य: ॥ १२४ ॥

हां ही हूं हौं हः इस पंचाक्षरी सर्प मंत्र को पढ़ने से यह सब प्रकार के विषम विष को तुरन्त दूर कर देता है।

हरिद्रा द्वय वार्त्ताग: मंजिष्टा नाग कैशरे:
फणिज्जगेण चा लेपो निहन्या लूतिका विषं ॥ १२५ ॥

दोनों हल्दी वातार्क (वेगण) मंजठि नाग केशर और फणि जग(सांप काटे हुए के लेप लूती (मकड़ी) के विष को नष्ट करता है।

सर्जत्स श्रुक्लका चूर्णं गंध सिता सर्ष पा
अर्क दुग्धाश्च लूताया मूत्र विषाप हेमेषां लेपं प्रभांपते ॥ १२६ ॥

सर्जरक (राल) के रस श्रुक्लका (क्षीरिणी) के चूर्ण गंध शक्कर और आक के दूध को मूत्र के सात लेप करने से मकड़ी का विष दूर होता है।

देवी निर्दिग्धी का दलताल नवा केकि पिच्छनत
मरिचै: राजिवचा हिंगुभिरपि धूपो लूता विकार हर: ॥ १२७ ॥

देवी(मूर्वा) विदिग्धिका (कटांकारि केपत्ते) हड़ताल पुनर्नवा साठी) मोर की पूंछ नत (तगर पादिका) मिरच राई यच हींग की धूप से मकड़ी का विकार नष्ट होता है।

विश्व द्वि निशा गुंजा निर्गुडांकोल दल करंज फलै:
स क्वथितेन जलेन कृत: से को निरुणद्धि लूतातिं ॥ १२८ ॥

विश्व (सोंठ)दोनों हल्दी गुंजा निर्गुडी अंकोल के पत्ते और करंज का फल के जल में बनाये हुए काथ का सेचन करने से मकड़ी का कष्ट दूर होता है।

श्रृंगाद्यैस्सिरया वा कुर्य्यालूतावा विषेष्व सृग मोक्षं
श्लेष्मांतक सर्ज्ज द्रुम विभीतकैस्सेक लेपांश्च ॥ १२९ ॥

यइ (श्रृंग) आदि की जटा से मकड़ी के काटे हुए स्थान से विष का खून निकाल देवे और श्लेष्मांतक (लिसोड़े) सर्ज(राल) के वृक्ष तथा विभतिक (वहेडा) से सेके और लेप करे।

रजनि लसुनोग्र गंधा सदृशो हिंगुस्तर्दिका मूंठी
मूत्रेपितैरनुलें पादिलूंतिका विषजित ॥ १३० ॥

हल्दी लसुण उग्रगंधा (अजमोद) इनके बराबर हींग और आंधी सोंठ को मूत्र में मिलाकर लेप आदि करने से मकड़ी का विष जीता जाता है।

श्वेतार्क द्वय वर्षाभूद्वय सेलू कपित्थ पाटल शिरीषै:
दत्त प्रलेपनादिर्लता विषमप हरत्य खिलां ॥ १३१ ॥

सफेद आक दोनों वर्षा भूमूलं (दोनों पुनर्नवा) दोनों सेलू(लिसोटे) कैथ पाटल (पुन्नाग) वृक्ष और सिरस का लेप आदि करने से मकडी का सम्पूर्ण विष नष्ट हो जाता है।

कणा निर्गुंडी चंदन पद्माक तांबूल पाटली कुष्टा:
नताकाश शारिबा अपि लूता विष हुतागणो भाणित: ॥ १३२ ॥

कणा(पीपल) निर्गुंडी (सम्हालू) चंदन पद्माख ताम्बूल (पान) पाटली कूट नत (तगर पादिका) काश (दुर्बा) शारिबा) गोरोसर भी मकडी के विष को हरन वाला गण कहा गया है।

नत कुष्ट शिशिर पाटल निर्गुंडी शारिबा द्वयोशीरा
काश द्वितीयं पद्म कमबुज लूतो हरो वर्ग: ॥ १३३ ॥

नत (तगर पादिका) कूट शिशिर (कपूर) पाटल पुन्नाग निर्गुंडी गोरोसर दोनों खस काश (डाभ) दोनों पद्माख और अंबुज (कमल) मकडी के विष को नष्ट करने वाले वर्ग (द्रव्य) है।

कंदेन लेप: कर्कोट्यां काकिन्याश्च कल्कित:
शीताभि: कल्कितेनाद्भिर्लताशीफ हरोमत: ॥ १३४ ॥

कर्कोटि (काकड़ी) के कन्द काकिन्या के कल्क को ठण्डा करेक(ठण्डे पानी से कल्क बनाकर) लेप करने से मकडी के विष को और सूजन को नष्ट करने वाला माना गया है।

पिष्टं निपिवै चिंचा मंदा मंदाकं लूतिकां
शूनी पयसा लूताव्रणां निह्नान्यातैलं तनैव सं सिद्धां ॥ १३५ ॥

(चिंचा) इमली मंदा() मंदाकं लूतिका() को पीसकर कुत्ती के दूध के साथ पीसकर पीने से अथवा इन औषधियों के कल्क से सिद्ध किया हुआ तेल से लेप करने पर मकड़ी का जखम जो काटने से ही मिट जाता है।

अंकोलस्याथ गुंजाया:शिफा लूता विषापहृत:
पान लेपनस्योषु वितीर्ण क ल्कितार्णा सा ॥ १३६ ॥

अंकोला और गुजा की जड़ के अर्णसु (जल) में बनाये हुए कल्क को पीने से या लेप करने से तथा सूंघने से मकड़ी का विष दूर होता है।

लूता विषस्य

सिद्धायुत प्रजाप्येन क्षेत्रपालाधि देवतांश्च
शिंवादी विषं हन्यान्मातृकांबुज कर्णिका: ॥ १३७ ॥

क्षेत्रपाल की अधिष्यत्री देवी को मातृका अंबुज किर्णिका (शंखावर्त वलयस्था) अग्नि) मन्मथ पर दस हजार जप करके सिद्ध करने से मकड़ी कुत्ता और गीदड़ का विष दूर होता है। इससे अभिमंत्रित जल से जखम को सिंचन करे ।

मंत्रोद्धार

अलर्कादित्य पतेर्यक्ष सारमेय गणाधिपा अलर्कादि
दष्टोमेतन्मे निर्विषं कुरू माचराय ठ:ठ: ॥
मत्ताऽलर्कशिवा खरतुरंगादि हरेत् गरलं
सिद्धोऽयुतपजप्यान्मंत्रोऽयं यक्ष क्षेत्रपालस्य ॥ १३८ ॥

यह क्षेत्रपाल का मंत्र दसहजार जप से सिद्ध होने पर पागल कुत्ते गीदडी गधे और घोड़े आदि के विष को नष्ट करता है।

पीतैराज्य गुड़क्षीर दुर्दुर स्वरसैर्भवेत्
पृथगांधफलोन्मात्रां पक्वैः श्वा विष निग्रह : ॥ १३९ ॥

घी, गुड़, दूध, दुर्दुर(पुनर्नवा) के स्वरस और पृथगांध फल (विजयसार) सप्तपर्ण के फल को पकाकर पीने से पागल कुत्ते का विष नष्ट होता है।

काकोंदुबरि का मूलं निःपिवेत्तंदुलांबुजा
त्रिफलाशन मूलं वा मत्तश्वः गरलापहः ॥ १४० ॥

काक (काकजंघा) और उदंबर (गूलर) की जड़ों अथवा त्रिफला और अशन (त्रितक) की मूल को चावलों के पानी के साथ पीने से बावले कुत्ते का विष नष्ट होता है।

भवेत्स सित वर्षाभूमूल माज्येन कल्कितं
दुदुंरस्य फलं पीतम लर्कविष शांतये ॥ १४१ ॥

सफेद वर्षा भूमूलं (सफेद पुनर्नवा साठी) की जड़ को पुनर्नवा के फल को घी में बनाये हुये कल्क को पीने से बावले कुत्ते का विष शांत होता है।

गुडतैलार्क क्षीरै क्षीरं गव्यं विमिश्रितं पीतं
गुड मधुक व्योषैर्वा मत्तस्य श्वुनो विषं हरति ॥ १४२ ॥

गुड़तेल और आक के दूध को गाय के दूध के साथ पीने से बावले कुत्ते का विष नष्ट हो जाता है।

क्षीरेणालर्क विषेहेमंनां कोलस्य वा पिवेन्मूलं
तिल गुड काकोदुंबर सहितं वा रविदल स्वरसं ॥ १४३ ॥

बावलं कुत्ते के विष में दूध के साथ हेम (धतूरा) की जड़ या दूध के साथ अंकोल की जड़ अथवा तिल गुड़ को काकोदुंबर (अंजीर) और आक के पत्तों के स्वरस को पीवे।

सांकोल मूलं शिफं क्वाथथत्रिफलंहविष:
फलं अलर्क गरले पेयंक्षीरे वा गुड मिश्रितं ॥ १४४ ॥

अंकोल की जड़ तथा जटा त्रिफला और हविष फल को अग्निमंथ वृक्ष के फल के क्वाथ को अथवा गुड़ सहित दूध को बावले कुत्ते के विष में पीवे।

अर्क दुग्धं गुड़ तैलं पललं च समसन्नत:
न जातु जायते मंत्र सारमेय गराद्भयं ॥ १४५ ॥

समान भाग आक का दूध, गुड़,तेल औप पलल (तिलकूटे) के खाने वाले को पागल कुत्ते के विष से कभी भय नहीं होता। पलल (तिलचूर्ण) सारमेय (कुत्ता)

धान्याम्लेन स्नात: क्वथितेन करंजवृक्ष पंचागै:,
तिष्ठन्नात पतप्त स्सरमातनयस्य हरति विषं ॥ १४६ ॥

करंज वृक्ष के पंचाग और धान्य और अम्ल(अमल बेल) के क्वाथ के जल से स्नान करके धूप में बैठने से पागल कुत्ते के काटे का विष नष्ट हो जाता है।

सित पक्षार्क दिनो धृत पिप्पल कर्कोटिका लेता मूलं
उन्मत्त श्वनक विष हरमभिनव गोक्षीर पानेन ॥ १४७ ॥

शुक्लपक्ष की प्रतिपदा (इतवार) के दिन रखे हुये पापल की जड़ तथा कर्कोटिका (कुम्हड़े) की जड़ को ताजे गाय के दूध के साथ पीने से कुत्ते का विष नष्ट हो जाता है।

धूपश्च मयुर रोमोत्थ सांद्रो दंशे समर्पित:
हरेन्मत: श्वगरलं त चेष्टा कार्योपि द्रुतं ॥ १४८ ॥

मोर के बालों की धूप काटे हुए स्थान पर देने से पागल कुत्ते के विष और उसकी चेष्टायें सब दूर हो जाती हैं। श्वान(कुत्ता)

पिष्टवा नाल्युष मूलेन लिसा: शर्करयाथवा
मत्तश्च दंत दशन संजातो रोहित व्रण: ॥ १४९ ॥

नाली() की जड़ को पीसकर उसके अथवा शक्कर के साथ लेप से पागल कुत्ते के दांत से उत्पन्न जख्म भर जाता है।

मत श्वनकस्य गधे के विष का मंत्र

पुर पुर चर चर विरिविरि छिंद छिंद खडगेन छेदय छेदय श्रुलेन भिंद भिंद चक्रेण दारय दारय हुं फट ठः ठः ॥

मंत्रज्ञेन प्रयुक्तोय मभि मंत्रयस्य कर्मणा,
गर्दभ प्रभृतीनां यद्विषं तदखिलं हरेत् ॥ १५० ॥

मंत्र शास्त्री द्वारा इस मंत्र से मंत्रित किये जाने पर गधे आदि का सब विष नष्ट हो जाता है।

अब्दाब्ज मलयज वरामांसी रण पदमकैरजा पयसा,
समुपेतै हंरति कृतः पानादि गर्दभादि विषं ॥ १५१ ॥

कमल चंदन वराह मांसी (जटामांसी) रण (खस) पदमाक को बकरी के दूध के साथ पीने से गधे आदि का सब विष नष्ट हो जाता है।

गर्द्धभ विष्स्य ततैया के विष की औषधि

फणिर्जकांबुना दंशं निंपेदुधृत कंटकं,
घर्षे लोहित्रवा सद्यः प्रणश्येद्वरटी विषं ॥ १५२ ॥

ततैया के विष की शांति के वास्ते फणिजंक (गंध तुलसी) के रस से काटे हुए स्थान पर डंक निकालकर इस प्रकार घिसघिस कर लेप करे कि रक्त निकल आवे। इससे वरटि(ततैया) का विष नष्ट हो जाता है। ततैया के विष की औषधि

सकेशरै विलेपन वक्रोषण महोषधैः घृत
सिंधुद्भवाभ्यां वा विनश्येन्मक्षिका विषं ॥ १५३ ॥

नवक्रोषण() औषधियों में केशर मिलाकर लेप करने से अथवा घृत और सेंधा नमक का लेप करने से मक्खी का विष नष्ट हो जाता है।

मक्षिका विषस्य

हैयंगबीन युतयोः स्त्री भेदी तंदुली पयोः,
निपानं विहितं कीट विषजं नाशयेदभयं ॥ १५४ ॥

हैयंग बीन(मक्खन) सहित स्त्री भेदी (सहजना) तंदुल पयो (चावलों के पानी) के साथ पीने से कीड़े के विष से उत्पन्न हुआ भय नष्ट हो जाता है।

ज्योष्टेन वारिणा पीतं सुरसस्य जटा जपेत,
पान लेपन योगेन विषं कीट समुदभवं ॥ १५५ ॥

सुरस(तुलसी) की जड़ को चावलों के पानी के साथ पीने से या लेप करने से कीड़े का विष नष्ट होता है।

कल्की कृतानां लेपेन क्षीर भूरूह चर्मणां,
जयेत्प्रवृद्धा मप्याशु कीटोद्भूत विष व्यथां ॥ १५६ ॥

क्षीर भूरू (दूधवाले वृक्ष) और चर्म के कल्क का लेप कीड़ों के विष की बढ़ी हुयी व्यथा को जीत लेता है।

पिष्टा स्तुषांबुना तुंबी जलिनी लांगली शिफा:
लिप्ता: कीट विष स्फोटान्मूलोत्पाटयितुं क्षमा: ॥ १५७ ॥

तुंबी जालिनी(पटोललता) लांगली (कलिहारी) की जड़ को तुषा (भिलावे) को जल में पीसकर लेप करने से कीड़ो का विष नष्ट हो जाता है।

तुंव्या जाल्या हलिन्या वा मूल बीज प्रकल्पित:,
लिप्ता: प्रशमयेत्कीट विषाणि विलान्यपि ॥ १५८ ॥

तुंबी जालि(पटोललता) अथवा हलिनी (लांगली) की जड़ और बीज के कल्क का लेप सब कीड़ो के विष को नष्ट करता है।

कुष्ठां वष्टाति विषा व्योषोग्रा वक्र हिंगु सिंधुत्थै:,
क्षार विलंगोपेतै: कीट विषे स्यात्प्रलेपादि: ॥ १५९ ॥

कूट अम्बाष्ठा (पाट) अतिविषा(अतीस) व्योष (सौंठ, मिरच पीपल) उग्रा (लहसुन)वक्र(तगर) हींग और सेंधा नमक क्षार (खारी) बाय विडंग के लेप आदि से कीड़े का विष नष्ट हो जाता है।

स्यांदशे रक्त कीटस्य प्रस्विन्ने पुरुधूपनात्,
वंधनं विषहृत क्षुणैराज्यैराजार्क पल्लवै: ॥ १६० ॥

घृत सफेद सरसों आक के पत्ते और पुरु (गूगल) की धूप देने से लाल कीड़ो के काटने का विष दूर हो जाता है।

यामद्वयं निरवनन्दंशं भावि कांड चिंचाया:,
पश्चादश्वेलिंपेदपि धान्यामृता घृत युतया ॥ १६१ ॥

दोनों यामनि (हल्दी) और (दारू हल्दी) अविकांड (स्वर्णक्षीरी= सत्यानाशी बड़ी कटेली) चिंचा (इमली) से घाव को खोदकर उसके पश्चात् धान्य और अमृता (गिलोय) में घृत का लेप करे।

द्रोण द्वय स्वरसं किंचि चूर्ण स्तैलेन संयुतः,
पीतो लुप्तो वानसि विषं हरति सितेहा शिफैकाया ॥ १६२ ॥

दोनों द्रोण (द्रोण पुष्पी) और उस बेल के स्वरस में उसके चूर्ण और तेल को मिलाकर पीने से या लेप करने से और सूँघने से विष नष्ट हो जाता है।
द्रोण पुष्पी को गोमा या दडगल कहते हैं।

द्वर्यो दंत्यासा यव पुंख्या विषया चानास्थिका,
विषेलेपं विदधीत पीत वर्णेःपर्णेवां पनस वृक्षस्य ॥ १६३ ॥

दोनों ऐंद्री(इलायची) यव(जौ) इंद्रजो (कुड़े के बीज) पुंखी (सरफोंका) विषा (अतीस) और चानास्थिका (सोमराजी) का विष में लेप करे अथवा पनस (कटहल) वृक्ष के पीले रंग के पत्तों का लेप करे।

हंति मूलम हिस्राया: पिष्टं मूष्णेन वारिणा,
नावन क्रियया सर्वगोधा विष समुद्भतिं ॥ १६४ ॥

अहिस्रा(नागबेल) की जड़ को गरम पानी से पीसकर सुंघाने से छिपकली की सब विष दूर हो जाता है।

द्वि हरिद्रा द्विकंरज व्योष कपित्थ पिप्पल रविबीजैः,
पानाद्युप युक्तैर्न्नशयेद गृह गोधिका गरलं ॥ १६५ ॥

दोनों हल्दी दोनों करंज व्योष (सोंठ मिरच पीपल) कपित्थ (कैथ) पीपल के पेड़ के बीज और आक के बीजों को पीने से नस्य लेने या या लेप करने आदि से छिपकली का विष नष्ट हो जाता है।

गृह गोधा विषस्य

दीपवर्त्ते रधोवक्रं गृहीताया विनिद्भतैः दाहैः,
सतपदी दंशो विषहत् तैल बिंदुभिः ॥ १६६ ॥

मीठे तेल की दीपक की बत्ती का मुख नीचे को करके उससे जख्म में तेल की बूंद चुआकर जलाने से शतपदी (कानखजूरे कानछला) का विष नष्ट हो जाता है।

पान लेपनयो र्दतं शिरीषं त्र्यूषणं युतः,
पंचागं पाययेत् सद्यो जेतुं शतपदी विषं ॥ १६७ ॥

सिरस और त्र्यूषण (सोंठ मिरच पीपल) के पंचाग को पिलाने और लेप करने से कानखजूरे का विष तुरन्त ही जीता जाता है। इति शतपदी विषस्य

स्नुकक्षीर कल्कितैः वीजैः शिरीषस्य विलेपनं,
अलं शमयितुं तीव्रां दर्दुरस्वेल वेदनां ॥ १६८ ॥

स्नूही (थूहर) के दूध में कल्क किये हुए सिरस के बीजों का लेप मेंढक क विष की वेदना को शांत करता है। दुर्दर विषस्य

महावृक्षपटां पिष्टीः शिरीष स्यास्थिभिः,
कृतानिराकरिणा मंडूक विषमा लेपनादिक : ॥ १६९ ॥

सिरस की लकड़ी और महावृक्ष () को दूध की पिट्ठी का लेप आदि करने से मेंढक का विष नष्ट होता है।

लिप्ते हैयंग हरिद्रा शारिबा शिफे घोरं,
विषम पास्योति स विषाणां जलौक सां ॥ १७० ॥

हेयंग बीन (मक्खन) हल्दी शारिबा (गोरोसर) की जड़ के लेप से विषवाली जोंको का घोर विष भी नष्ट हो जाता है।

जल्का विषस्य

पिंडेन दाव सक्तूंनां सघृतेन घृतं व्रणे,
सं स्वेदनं भवैत् सद्यः श्रृंगी मत्स्य विषापहं ॥ १७१ ॥

जौ के सत्तू में घृत मिलाकर उसके पिंड को जख्म पर लगाने से पसीना आकर शीघ्र ही श्रृंगी मत्स्य का विष नष्ट होता है।

पंडितं मूल सयुक्त माज्यो पेतं कटु त्रयं,
पान लेपादिभिर्हांति विषं मत्स्य समुदभवं ॥ १७२ ॥

पंडित() की जड़ और त्रिकटु (सोंठ, मिरच, पीपल) को घृत के साथ पिलाने और लेप आदि करने से मछली से उत्पन्न हुआ विष नष्ट होता है।

जलेन गो जिह्विकया पिष्टया घृत मिश्रयालेपः,
स्यादखिलप्राणि नख दंत विषापहः ॥ १७३ ॥

गोजिह्विका(गोभी) को जल में पीसकर घृत के साथ लेप करने से सब प्राणियों के नखों और दांतों का विष नष्ट होता है।

द्विनिशा गेरिकै लेंपोनख दंत विषेहितः,
से कोऽथवा वटारिष्ट शमीत्वक क्वथितै र्जलैः ॥ १७४ ॥

दोनों हल्दी और गेरिक(गेरू) का लेप नखो और दांतो के विष में हितरूप है। वड़ और अरीठे और शमी (केजडे) के वृक्ष की छालों के साथ क्वाथ के जल का सेक भी हितरूप है।

घनानाद शिफा पीता पिष्टा तंदुल वारिणा,
प्रणाशयेत धृतो पेता निखिलं कृत्रम विषं ॥ १७५ ॥

घननाद (नागरमोथा) की जड़ को चावलों के पानी से पीसकर पीने से अत्यन्त कठिन कृत्रिम विष भी नष्ट होता है।

चूर्णः सूक्ष्म कषायो वा कष्णां कोल समुद्भवः
सेवितः स्यात् क्षणादेव कृत्रिम क्ष्वेल वेग जित ॥ १७६ ॥

कृष्ण (काली मिरच) और अंकोल से निकले हुए या उसके चूर्ण का सेवन करने से क्षण मात्र में ही कृत्रिम विष का वेग जीता जाता है।

धान्य पकौभद्रमुस्तैला मांसि गोलि सुवर्चला,
बालकं पिप्पली लोद्रं गणो द्वषि विषापहे ॥ १७७ ॥

धान्य पको() भद्रमुस्ता(नागर मोथा) एला (इलायची) मांसि(जटामांसि) गोलि (गोभी) सुवर्चला (कालानमक) बालक (काली मिरच या नेत्रबाला) पीपल पढानी लोद्र बनावटी विष को नष्ट करने वाला गण है।

कांचना रेणु मुडिन्यां कंटकार्य्या च कल्कितता
खातो हंति विषं स्त्रीभिर्वश्यार्थौषधि साधितं ॥ १७८ ॥

कांचना (नागकेशर) रेणु (रेणुका) मुंडिनी और कंटकारि के कल्क को खाते ही कृत्रिम विष नष्ट होता है। यह स्त्रियों को वश्य करने वाले औषधि के रूप में भू प्रयोग किया जाता है।

कृत्रिम विषस्य

श्री नीलकंठ मंत्रेण मंत्रवाद विशारदः,
अंते निरोध युक्तेन स्थावरं गरलं हरेत ॥ १७९ ॥

ॐ नमो भगवते गरूडाय महेन्द्र रूपाय पर्वत शिखाराकार स्वरूपाय संहर संहर मोचय मोचय चालय चालय पातय पातय निर्विष निर्विष विष ममृत महारय सदृश मिमं भक्षयामि मधुर लल लल वव व व क्षि प हः हः ठःठः ॥
स्थावर विषं निहन्यादमुनालक्ष प्रजाप्य सिद्धेन,
तत् स्वयमद्यादन्यांश्चि भोजे निर्विकारः स्यात ॥ १८० ॥

इस मंत्र को एक लाख जप से सिद्ध करके स्थावर विष को नष्ट करे। इस मंत्रसे स्वयं विष खाने और दूसरे को खिलाने से कोई भी विकार नहीं होता है।

रजन्या हय गंधाया पुनर्नव शिफा जयेत्,
अंज गमं विषं सर्वं पीत्वा वार वादिता थवा ॥ १८१ ॥

हल्दी असगंध और पुनर्नवा (साठी) या (वंध्याया बांज ककोड़े) की जड़ को पीने या खाने से सब प्रकार के स्थावर (अंजगमं) विष नष्ट होते हैं।

निशा सैंधवयोश्चूर्णं सूक्ष्मं धृतं विमिश्रितं,
निपीतो नाशयेत् सर्वं विषं स्थावर संभवं ॥ १८२ ॥

हल्दी और सेंधा नमक के चूर्ण में थोड़ा घी मिलाकर पीने से सबप्रकार के स्थावर विष नष्ट हो जाते है।

लीठः सिताज्य संयुक्तश्चूर्णं स्तम्रा सुवर्णयोः,
स्यात् स्थावर विष ध्वांत संतानैक दिवाकरः ॥ १८३ ॥

ताम्र (तांबा) और सुवर्ण (सोना) के चूर्ण (भस्म) को घी और शक्कर सहित चाटना स्थावर विष रुपी अंधकार की संतान को नष्ट करने के लिए एक ही सूर्य है।

लंवगस्य हरीतस्या अपि चूर्णो निपायितः,
कर्पूर कांजिक विषं हंत्य शीतेन वारिणा ॥ १८४ ॥

लौंग और हरडे के चूर्ण को कपूर और कांजी और ठण्डे जल के साथ पीने से विष नष्ट हो जाता है।

सामेंद्रयव हट्टारिक्काथे वाक्षीरभूत,
निशाामस्त्याम भृंगरोचन योरथ ॥ १८५ ॥

साम(सोंठ) इंद्रयव (इंद्रजो) भूत (नागरमोथा) निशा(हल्दी) श्याम(काली मिरच) भृंग (भांगरा) रोचन (जोरोचन) का पानी या दूध में बना हुआ क्वाथ विष नष्ट करता है।

सामकर्पूर विकृतो गव्येन पयसा ऋतां,
विश्रूयवागु शीतेश्च कषायं सिद्ध मौषधैः ॥ १८६ ॥

साम(सोंठ) कपूर गाय का दूध में ऋतां (पकाकर)यवागु शीत कषाय विष की सिद्ध औषधि है।

अवंती सोम संयुक्तं शाल मूल विषेहतं,
पथ्या दृष्टिकणं जम्बू फलं सैंधव मेव च ॥ १८७ ॥

अवंती सोम (कांजी) सहित तावल की जड़ तथा हरड़े मुलेठी पीपल जामुन का फल सेंधा नमक विष में हितकारी है।

पथ्या कल्कीकृता वारिणा त्रिपुष जन्मना,
गुडाज्य क्षीर पानं वा करवीर विषापहं ॥ १८८ ॥

हरड़ त्रिपुष(खीरा काकड़ी) में से निकले हुए पानी में कल्क बना हुआ अथवा कनेर घी गुड़ और दूध को पीने से भी विष नष्ट होता है।

हरीतक्या हरिद्राया: पथ्याया रजनि रपि,
प्रशाम्युंत्यु पयोगेन तुरंगम रिपोर्विषं ॥ १८९ ॥

हरीतकी (हरड़े) हल्दी और हरड़े भी उपयोग से तुरंगम रिपु(सफेद कनेर की जड़) के विष को नष्ट करता है।

सार्द्रहैयग बीनेन पाययेत् द्वितीयं निशोः,
करवीरवार्भि: कल्कितां वा हरीतकीं ॥ १९० ॥

आधे मक्खन के साथ दोनों हल्दी अथवा पानी में कल्क बनायी हुयी हरड़े तलवीर के विष में पिलावे।

युक्तं चूर्णितया पीतंनव्यं गव्यं हरिद्राया,
करवीर गरोद्रेकं द्रागेन विनि वर्तिते ॥ १९१ ॥

हल्दी के चूर्ण को गाय के नये (ताजे) घृत के साथ पीने से भी तलवार के विष की तेजी तुरंत ही नष्ट हो जाती है।

करवीरो द्रूताया विकृतेः क्षीरं च यष्टि मधुकं च,
सौ वीरेण च युक्ताम भयां विद्धि प्रतिकारं ॥ १९२ ॥

यष्टि मधुकं(मुलैठी) सौवीर(बेर) और दूध को तलवार के घाव के विकार का बिना भय के प्रतिकार करने वाला जाने .

क्षीरेण संयुतं भूरि सित कंदे निषे वितो,
लांगली विष भैषज्यं ग्रंथि को वा हितं मतं ॥ १९३ ॥

लांगली (कलिहारी) अतवा ग्रंथिका (पीपलामूल) को सितकंद (मोटे जीरे के कन्द) और दूध के साथ विष में सेवन करे।

करवीर विषे हिंगु रंभा पुष्पं प्रशस्यते ,
कपित्थस्य जंवाश्च रसः शाल्मलिरेव च ॥ १९४ ॥

तलवार के विष में हींग रंभा (केला) के फूल कैथ का रस जामुन का और रस सेमल की अत्यंन्त प्रशंसा की जाती है।

शीतंमंबु कुलत्थानं मषी वा मधु सर्पिषोः,
समद्योपीतयोः क्ष्वेल विक्रियायां प्रयोजयेत् ॥ १९५ ॥

ठण्डा जल कुलथी का अन्न भासी (जटामांसी) शहद और घी को पीकर विष के विकार में प्रयोग करे।

तांबूलजं विषं हंति शर्करा लवणं गुडं,
चिंचाम्लं यष्टि मधुक बीजानं मधुरं फलं ॥ १९६ ॥

पान का रस शक्कर नमक गुड़ इमली की खटाई मुलेठी और महुवा के फल के बीज विष को नष्ट करते है।

तांबूल दल संभूता मुरः कुंठं व रुंधनी,
वाधा कटित्य पा कुर्यानावनं शीत वारिणा ॥ १९७ ॥

पान के रस और ठंडे पानी को सूँघकर और हृदय और कंठ को रोकने वाले कष्ट को दूर करे।

अलं मलयजो जेतुं मदं पूगी फलोद्भावां,
पृष्टचूर्णेन संयुक्तो भक्षमाणः क्षणादिवः ॥ १९८ ॥

घिसे हुए चंदन और उसके चूर्ण को खाता हुआ क्षणमात्र में सुपारी में पैदा हुए मद को जीतता है।

गुडं खंडं सितां क्षीर मपि धत्तूर जे विषे,
पिवेत्समस्तं वा पदममथवा तदुंलीय कीं ॥ १९९ ॥

(चोलाई) गुड़ खांड (शक्कर) और दूध अथवा सम्पूर्ण पदम (कमल) अथवा तंदुलीयक बाय विडंग को धतूरे के विष में पीवे।

भागैरं कोलस्य त्रिभिर्युतो भाग एक आजस्य,
विजयामे रंडोद्भव तेल युता जयति धतूरं ॥ २०० ॥

तीन भाग अंकोल एक भाग मक्खन और एरंड के तेल का प्रयोग धतूरे के विष को जीतता है तथा विजया (भांग) के विकार को भी जीतता है।

यः को द्रवस्य मूले निपीतेन समुद्भवत,
विकार स्तस्य विजया विजयाय प्रकल्पते ॥ २०१ ॥

जो कोई कोद्रव कोंदो की जड़ को पीता है वह विजया (भांग) के विकार पर विजय पाता है।

दुष्ट कोद्रव संभूतां व्यापत्तिम वलुंपति,
अभया मधुकं जंबु फलं सैंधव मे वच ॥ २०२ ॥

अभया (हरडे) मधुकं (महुवा) जंबुफल (जामुन) सैंधव नमक दुष्ट कोद्रव (पुराने कोंदो) से उत्पन्न हुए विकार को दूर करते है।

मूर्च्छांवरक संभूतां विध्वंसयति विक्रियां,
चिंचाम्लं सेव्यं वा गव्यं पयो पामार्ग एव वा ॥ २०३ ॥

इमली की खटाई अथवा अपामार्ग (चिरचिटा) का गाय के दूध के साथ किया हुआ प्रयोग वरक (भौंरा) से उत्पन्न हुयी मूर्छा के विकार को नष्ट करती है।

पीतो गुडेन कूष्मांड रसः कोद्रवान्नजं,
अपा कर्तुमलं यद्वा पुष्पं शुक तरू द्भवं ॥ २०४ ॥

गुड के साथ पिया हुआ पेठा का रस अथवा शुक तरू (सिरस) का फूल कोंदो के अन्न से उत्पन्न हुए विकार को नष्ट करता है।

आरूष्कर विकारेषुनावा बिम्ब धृतिं दुंका,
शारिवा व हिता पाने से चने लेपने पि च: ॥ २०५ ॥

विम्ब धृतिं (द्विज प्रिया) सोमलता तथा इंदुका (सोमलता) को सुंघाने अथवा शारिबा (गोरीसर) व अनन्त मूल को पीने से लेप करने से भिलावे का विष शान्त होता है।

शालिपिष्टेन दातव्यं: धान्यांभ: सहितेन प्रलेपनं,
आरूष्कर विकारघंसे को मूर्वा रसेन वा ॥ २०६ ॥

शालि(चावल) की पिट्ठी धान्यांभ (धान्य का पानी) को देने या साथ लेप करने से अथवा मूर्वा के रस का सेक करने से आरूष्कर (भिलावे) का विकार नष्ट होता है।

सिंचेत नालिकेरस्य क्षीरेणा रूष्करोद्भवे,
श्वयथो निपीवेद्वारि साधितं पर्प्पटेन वा ॥ २०७ ॥

भिलावे से उत्पन्न श्वयथु (सूजन) को नारियल के दूध से सींचे अथवा पर्पट(पापड़ा) में सिद्ध किये जल को पीवे।

पुनर्नवेन यष्टवा वा नवनीतेन वा युतैः,
तिलैर्भलात शौफघ्नो लिंपेत् तिलज या थवा ॥ २०८ ॥

पुनर्नवा (साठी) यष्ठी (मुलहटी) को नवनीत (मक्खन) के साथ तिलों का लेप अथवा तिल और अजया (भांग) का लेप भिलावे की सूजन को नष्ट करता है।

मेगनादं पलाशस्य बीजं च घृत कल्कितैः,
लिप्ते शोफं क्षणेनैव विहितो रूष्करा कृतं ॥ २०९ ॥

मेघनाद (चोताई) और पलाश (छीले) के बीजों का घृत में बनाया हुवा कल्क का लेप करने से भिलावे की हुयी सूजन क्षण मात्र में अच्छा कर देती है।

तांबूलं शंख चूर्णं च क्रमुक स्य फलं तथा,
पिष्टवा लिप्तान्य पा कुर्य्युः भलातः श्वयथु व्यथा ॥ २१० ॥

तांबूल(पान) शंख का चूर्ण क्रमुक फल (सुपारी) को पीसकर लेप करने से भिलावे की स्वयथु(सूजन) नष्ट होती है।

कल्की कृतेन रचितं पर्पटेन विलेपनं,
भलातक समुद्भूवं कुंड शोफादिकं हरेत् ॥ २११ ॥

पर्पट (हवन पापडे) के कल्क के लेप से भिलावे से उत्पन्न हुयी खाज और सूजन नष्ट होती है।

प्रवालक्षीर वृक्षोत्थैः कुसुमैः कुकुंमस्य च ,
अंजनेन यष्ट्या च लेपो रूष्क विसर्पजित ॥ २१२ ॥

प्रवाल (मूंगे) क्षीर वृक्ष (दूध के वृक्ष) के फूल कुंकुम और मुलहटी के अंजन और लेप करने से भिलावे का विष दूर होता है।

रंभामधुकृत् क्षीरी प्रवालप्रार्थयार्ज्जुनैः,
स गोक्षीरैः आलेपनं शमयेत भलातक संभवं शोफं: ॥ २१३ ॥

रंभा(केले) मधुकृत)महुये के फल) का दूध मूंगा प्रार्थवा और अर्जुन का गाय के दूध के साथ लेप करने से भिलावे से पैदा हुई सूजन शांत हो जाती है।

कल्कि कृताणि सलिला सलिलै खलुंपति,
क्षणादेवेशति तरेः परिपीता सकलं सणा बीज चूर्णे विषं ॥ २१४ ॥

जल में कल्क बनाई हुई सलिला अत्यंत ठण्डे जल के साथ पी जाने से सणा के बीजों के चूर्ण के विष को क्षण मात्र में नष्ट करती है।

कटुका लावोः शुंठी पुनर्नवा याक्षपहंति विकितं,
कोशातक्यो स्तवब्दः सुमनो दाल्या स्तुशशि वल्ली ॥ २१५ ॥

सोंठ पुर्ननवा अब्द (नागरमोथा) सुमना (पूति करंज) दाल्या (देवदाली बेल) और शशी वल्ली (सोमलता) कड़वी तुंबी और कड़वी तोरु के यकार को नष्ट करती है।

जीमूत स्येक्ष्वाकोः सुरदाल्याक्षापि वदिर,
खारी नवभृत कपालमथवा सहजबुवल्कलं पथ्यं ॥ २१६ ॥

जीमूत (नागरमोथा) ईक्ष्वाकु (तुम्बी) सुरदाली (देवदाली) भी और विकारों में वदिर (वोर) खारी नमक नवभृत कपाल अथवा जामुन का वल्कल पथ्य है।

दंति द्रवंति संभूतैः वैकृते विहिताहिता,
जंबु यष्टा रिमेदाश्च रंभायाः कुसुमं तथा ॥ २१७ ॥

दंतिनि स् सूत्रयोः पानाधौ विकारः प्रजायते,
तस्या रिमेदत्वक सेव्या सद्यः शांति विधायिनी ॥ २१८ ॥

दंति(तिरिफल) को पीने से उत्पन्न हुये विकार में जामुन मुलहटी धान्य अरिमेद (दुग्धिखेर) तथा केले का फूल हितकारी है। दंति (तिरिफल) के धानों को पीने से जो विकार उत्पन्न होता है। उसकी तुरन्त शांत करने वाली अरिमेद की छाल जिसका सेवन करना चाहिये।

अंकोल मूल जनितां श्रेयसी हंति वेदनां,
तक्रमंऽच पटुना युक्तं ताल शिफा रूजं ॥ २१९ ॥

अंकोल की जड़ से उत्पन्न हुयी वेदना को श्रेयसी तक्र माड और पटु सहित ताड की जड़ नष्ट करती है।

गरलांत्रो द्भवां वाधां निरस्यति सुवर्चला,
विश्वौषधं तरू हंति कुंभ संभव संभवा ॥ २२० ॥

गरलात्रोद्भवा (शहद की मख्खी) से हुयी बाधा को सोवर्चल (काला नमक) विश्वौषध (सोंठ) का पेड़ और कुंभ संभव संभवा वृक्ष का रस दूर करता है।

ऋंगी विषे हिंगु मालती मल्लिका कणा,
यष्टी ताल शिफा लर्कशूल पुष्पं च सैंधवं ॥ २२१ ॥

ऋंगी विष समुद्भूता स्वयं शमयति सर्पिषा
पुन्नाग वर कुष्ठाश्च गंधा मूल निषेचनात् ॥ २२२ ॥

सींगीमोरा (वत्सनाभ) में हींग मालती मल्लिका मोगरे का फूल कणा(पीपल) यष्टि (मुलेठी) ताड़वृक्ष की जटा अलर्क(मदार) चूल का फूल सेंधा नमक उपयोगी है। ऋंगी (सींगीमोरा) से उत्पन्न हुआ विष धृत पुन्नाग वर (केशर) कूट और असगंध की जड़ का सेवन करने से स्वयं शांत हो जाता है।

वन सूरण कंदेन य द्विषं जायते नृणां सा
आरग्वधस्य पुष्पेण तमाले न च नश्यति ॥ २२३ ॥

वन सूरण कंद के खाने से जो विष मनुष्यों को होता है। वह आरग्वध(अमलतास) के फूल और तमाल पत्र से नष्ट होता है।

कट्वादिकं हरद्वज्रवल्ली संस्पर्शनोद्भवं,
वाण पुंखं प्रमेहारि रूपानत पाद एव वा ॥ २२४ ॥

वज्रवल्ली(हडसंहारी) के छूने आदि से उत्पन्न हुए कड़वे विष प्रमेहहारि (प्रमेह के जख्म) और उपनतपाद (जूते के काटे हुए पैर को) वाणपुंखा (सरफोका) ठीक कर देता है।

विकियां लसुनोद्भतों तंदुलं प्रशमयेत्तरां,
फलेंदुं विकृत्तिं हंति तैल युक्ता हरीत की ॥ २२५ ॥

लहसून से उत्पन्न हुए विकार को चावल ठीक कर देता है। तथा फलेन्दु (राज जामुन) के विकार को तेल सहित हरीत की (हरड़े) दूर कर देती है।

हिंगु विपतौ दुग्धं सैंधव मूष्णांबुबीज पूरं रुक,
जंबु ऋंग चूत द्रुम कुसुमं माधवी बला च हितं ॥ २२६ ॥

हींग के विकार में दूध सेंधा नमक गरम जल बिजोरा रुक (कूठ) जामुल ऋंगं (काकड़ा) सिंगी या वत्सनाभ) चूत(आम) द्रुम कुसुम(आम के वृक्ष के फूल) माधवी (मधु सहत) बला (खरेंटी) हितकारी है।

महावृक्ष विषं हंति पदमन्या मल की फलं,
क्वाथैः सायक पुंखस्य क्वाथो वा मोह विद्विषः ॥ २२७ ॥

महावृक्ष (थूहर) के विष को पद्मनी (कमलिनी) आम्ल की (आँवला) का फल सायक पुंखा(सरफोंका) का क्वाथ या मोह विष दूर करता है।

स्नुक संभवानां व्यापतौनीली पर्णां,
वटांकुरः विषं च पादुका पाद समुदपेतं परं हितं ॥ २२८ ॥

स्नुक (थूहर) से उत्पन्न विकारों में नीली के पत्ते और वड़ के अंकुर हितरूप है और यह पैर को जूते द्वारा काटने में भी हितरूप है।

अर्कक्षीरारुणिक्षीर चोचांलु फलजं जलं,
तिल मागधिकां गौलिमौषद्यानि प्रयोजयेत् ॥ २२९ ॥

आक का दूध अरुणिक्षीर (लाल आक का दूध) चोचालू के फल का जल तिल मागधि (पीपल) गौली (चिकनी सुपारी) को औषध रूप काम में लावे।

वैव स्वतेन क्षीरेण दूषिताया हितं दृशः,
तिलोद्भवेन तैलेन प्राहु : सं सेचनादिकं ॥ २३० ॥

विविस्वन(आक) का दूध से विकार होने पर उसको तिलों से उत्पन्न होने वाले तिली के तेल से सींचना हित रूप कहा गया है।

विषं तिलक संभूतंश्लूक पर्णा गुल स्तिलाः,
कोलं तक्रं घृतं क्षिप्रं शुध्यंति [illegible] ॥ २३१ ॥

तिलक वृक्ष से उत्पन्न हुए विष को चूकपर्णा (चूके के पत्ते) गुल (गुड़) तिल कोल (बेर) तक्र (छाछ) घृत से सींचना चाहिये जो शीघ्र ही विष को नष्ट करता है।

अत्यर्थं सेवनांज्य स्यजायते विकृति र्यदि,
तदादीनि पचेत् तक्रं भक्षयेद्वा महोषधं ॥ २३२ ॥

यदि बहुत घृत के खाने से विकार हुआ हो तो उसी समय से इसकी महान औषधि मट्ठे (छाछ) को खाने से वह घृत पच जाता है या सोंठ को खावे।

तिल तैलोद्भवां वाधां शमयेत् कृष्ण मृतिका,
यया गुर्वा तिलोत्थेन पिन्या केन प्रशाधिता ॥ २३३ ॥

तिली के तेल से उत्पन्न हुयी बाधा को काली मट्टी और तिलों की खल से सिद्ध की हुयी यवागु शांत करती है।

साधस्कृतं मैरंड तैलव्यापदि योजयेत,
अंकोल स्याथवा चूर्ण मथवा सुरभे र्घृतं ॥ २३४ ॥

एरंड का तेल (इंडोली का तेल) से उत्पन्न हुये विकार को अंकोल (ढेरे) का चूर्ण या गाय के घृत को क्रम पूर्वक लेने से जीत लेता है।

स्वरसं स्त्वेक राजस्य संयुक्त स्तिल जन्मना,
परिपालयितुं शक्तश्चूर्ण पान विकारत ॥ २३५ ॥

एक राज (भांगरा) का स्वरस में तिलों का चूर्ण मिलाकर लेने से पान के विकार से रक्षा करने में समर्थ है।

जलं तंदुलिका तीक्ष्णं खदिरः शंख चूर्णजं,
विकारं च निरा कुर्वन केवलं वा तिलोद्भवं ॥ २३६ ॥

जल तंदुलिका (जल चोलाई) खदिर (कत्थे) के तीक्ष्ण (तेज) विकार को शंख के चूर्ण के साथ लेने पर नष्ट करती है या तिलों का तेल केवल लेवें।

तिल नारंगी क्षणदा चिंचाम्ल भृंग पूग मषी,
प्रतिकारं पृथगेव च प्राहु पीतस्य चूर्णस्य ॥ २३७ ॥

तिल नारंगी हल्दी (क्षणदा) चिंचा(इमली) की खटाई भांगरा के चूर्ण को पीने से या अलग अलग पीने से पूग (सुपारी) के विकार का प्रतिकार कहा गया है।

लवण व्याधयं हंति केतक्या मूल जं जलं,
स यष्टि मधु गंडूषंतु देयुक्तं च चोचकं ॥ २३८ ॥

केतकी के मूल से निकले हुये जल और मुलैठी (मधु यष्टि) को मुँह में गंडूष गरारे करने से या चोचक को नाभिमें लगाने से नमक का विकार नष्ट होता है।

सित मृद्वी क्रियां सद्यः प्रतिषेधंति टंकणः,
मिरा करोति मरिचं वाद्यां विद्रुम संभवां ॥ २३९ ॥

काली मिरच विद्रम (मूंगा) से उत्पन्न हुयी बाधा को सुहागा नष्ट करता है जल्दी ही या श्वेत मृद्विका (दाख) ठीक करती है।

श्वेत मृद्वि लताया यदि तुंग द्रुमस्य वा क्षीरं,
तिल भव संयुक्तौ वा द्वौ प्रशस्यते शिंशया वृक्षः ॥ २४० ॥

तुंग द्रुम (नारियल का पेड़) तथा शिंशया वृक्ष (शीशम का वृक्ष) यह दोनों तिली के तेल सहित सफेद मृद्विका लता (दाख की बेल) के विकार को नष्ट करती है।

वर कीट विषोद्भूत विक्रिया यां शतावरी,
मरिच तुंडलीय द्वा चिकित्सित मुदीरितं ॥ २४१ ॥

वरकीट के विष से उत्पन्न हुये विकार को सतावरी काली मिरच और तंदुलीय (चोलाई) चिकित्सा कही गयी है।

निन्यंति कंकुलोदंबर मूलानि सधृत सौवीरीं,
खर भृंग विषं कंदोमेह द्विद्रूक्ष गंधा च ॥ २४२ ॥

कंकु (कंगु कांगनी) कोल (बेर) उदंबर मूल (गूलर की जड़) घृत के साथ सौवीर (बेर) की जड़ गदहा और भौंरा के विष को (कंकोल-शीतल मिरच) उदंबर (गूलर की जड़) सौवीर (बोर की जड़) मेह (अंजीर) और दोनों द्रूक्ष गंधा गधे और भौंरे के विष को नष्ट करता है। (काकोदुंबर अंजीर को कहते हैं।)

खरकीट विषोद्भूत वल्सनाभस्य कीटस्य विकृते स्त्रि
फलौषधं षड बिंदु विषं संभूत विक्रित्या यां च सा मता ॥ २४३ ॥

खर कीट के विष से उत्पन्न हुए विकार को तथा वत्सनाभ के विकार को भी त्रिफल (हरड़े बहेड़ा आमला) औषधि है तथा षडबिंदु विष से उत्पन्न विकार की भी औषधि यही कही गयी है।

विषे चराचरेवाश्च गंधा नीली त्रिशूली ना,
मेघनादश्च पातव्या प्रत्येकमभिभाषिता ॥ २४४ ॥

स्थावर औ जंगम विष में असगंध नीली त्रिशूलिनी (सोंठ गिलोय जवासा) यह त्रिकटक है और मेघनाद (चोलाई) के पत्ते प्रत्येक पृथक पृथक रक्षा करने वाली कही गई है।

मूलेत्वक पुष्प पत्राणि शुक पुष्पस्य भक्षयेत,
चराचर विषं विष्टा स गोमूत्राणि वा पिबेत ॥ २४५ ॥

शुक पुष्प (सिरस) की छाल पुष्प (फूल) पत्ते मूल (जड़) को खावे अथवा गोबर के रस को गौमूत्र के साथ स्थावर और जंगम विष में खावे।

गरले चराचरे वा शुद्धं खर्जूर साधितं,
दुग्ध नाली फल मध्ये रंड़ लोद्रं मेघ स्वनं च पिबेत् ॥ २४६ ॥

स्थावर और जंगम विष में खिजू दूध नाली फल में सिद्ध किये हुए एरंड पठानी लोध औ मेघनाद (चोलाई) को पीवे। नाली फल (मेनसिल) को कहते हैं।

तदत्रापि यदन्यत्र गारुड़ैः कथितं बुधैः,
बाहुल्येन यदत्रोक्तं तदन्यत्र न विद्यते ॥ २४७ ॥

पंडितों ने गारुड़ी शास्त्र में जिन विषयों का वर्णन किया है उन सबका यहाँ भी वर्णन है और जिस विषय का यहाँ विस्तार से वर्णन किया गया है उसका और कहीं वर्णन नहीं है।

इत्थं चराचर विष प्रभवान्विकारान्
दिश्य यः प्रतिविधिं कथितो मयेहं,
तं सं विदन गुरू वायु जन प्रभवात्
प्रशादान्मंत्री यशः स्थिर तरं भुवने लभेत् ॥ २४८ ॥

इस प्रकार जो मैनें स्थावर और जंगम विष से उत्पन्न होने वाले विकारों के प्रतिकारों का वर्णन किया है उसको गुरुजन और बड़ी आयु वालों के प्रभाव और उनकी कृपा से जानता हुआ मंत्री लोक में अधिक स्थिर यश को प्राप्त करता है।

इति मंड़ल्यादि चिकित्सितं विधानं नाम द्वादश समुदेशः

जो कोई पुरुष उस खटिका सर्प के मुख पर मारता है वह खटिका सर्प उसी को डँस लेता है तब दष्ट पुरुष हाथ में डँसने के चिन्ह को देखकर विष की वेदना से पीडित होकर मूर्छित हो जाता है। फिर बुद्धिमान पुरुषउस खटिका सर्प के द्वारा डँसे हुये पुरुष के हृदय कंठ मस्तक और सिर को क्रमशः देखे कि स्तंभन ही है या आँखो को धोखा है। स्तंभन का निश्चय हो जाने पर खटिका में उतारे हुए सर्प पर ॐ क्षां क्षीं इस मंत्र को पढने से वह दष्ट पुरुष विष को छोड़कर भोजन कर सकता है, अथात् निर्विष हो जाता है।

ॐ क्रों प्रों त्रीं ठः मंत्रेण विषं हुंकार मध्येगं जप्त्वा सूर्य दिशांदि लोक्य भक्षोत्पूर कांतत: ॥
ॐ क्रों प्रों त्रीं ठः मंत्रेण अनेन मंत्रेण विषं स्थावर विषं कथ भूतं स्थावर विषं कथं भूतो हुंकार: मध्यगं करतल हुंकार मध्ये स्थित विषं जप्त्वा कथेत मंत्रेण अभिमंत्र्य सूर्य रविं दिशां अवलोक्य निरीक्षां भक्षयेत विष भक्षणं कुर्यात् पूरक योगान ॥
तन्मंत्रोद्धार क्रों प्रों त्रीं ठ इति विषभक्षणा मंत्र:

हथेली पर हुं लिखकर उसके अन्दर स्थावर विष को रखे फिर उस विष को ॐ क्रों प्रों त्रीं ठः इस मंत्र से मंत्रित करके सूर्य की तरफ देखकर पूरक योग से विष को खावे।

प्रतिपक्षाय दातव्यं ध्यात्वा नील निभं विषं ग्लौं म्लौं मंत्रयित्वातु ततो घे घे ति मंत्रिणा
प्रतिपक्षाय शत्रु लोकाय दातव्यं देयं कि कृत्वा ध्यात्वा ध्यानं कृत्वा कथं नील निभं नील वर्णं स्वरूपं कं विषां मूल विषं ग्लौं म्लौं ह्रौं घे घे इति प्रति पक्षाय नील ध्यानेन युक्त विष दानं मंत्रै .।

मंत्री ग्लौं म्लौं ह्रौं घे घे इस मंत्र से विष को मंत्रित करके उसको नील वर्ण का ध्यान करके शत्रु को देवे।

मुनि हय गंधा घोषा वंध्या कटु तुंविका कुमारी च
त्रिकटुक कुष्टेंद्रय वा घ्रंति विषं नस्य पानेन ॥

मुनि अगस्ति हय गंधा अश्वगंधा घोषां देवजाली वंध्या वंध्या ककोंटि कटु तुंबिका कटु कालाबुका कुमारी धृतकुमारी च समुच्चये त्रिकटुका त्र्यूषण (सोंठ मिरच पीपल) कुष्ठत्वकां इन्द्रयवा कुटज बीज पीडां घ्रति नाशयति विषं स्थावर जंगम विषां नश्यं पानेन एतद औषधानां नश्यैन पानेन सर्व विषं नश्यति॥

अगस्त्या असगंध देवदाली वाझ ककोड़ा कड़वी तुंबी गवार पाठा सोठ मिरच पीपल कूठ इंद्रजौ को सुंघाने या पिलाने से सभी विष नष्ट हो जाते हैं।

ॐ नमो भगवती वृद्ध गरूडाय सर्व विष विनाशिनि भिंद भिंद छिंद छिंद गृह गृह एहि एहि भगवती विधे हर हर हुं फट स्वाहा ॥

ॐनमो भगवत्यादि मंत्रमष्टोत्र शतं पठित्वा क्रोश पटह ताडयेद् दष्ट समिपौ

उपरोक्त ॐ नमो भगवती आदि मंत्र को एक सौ आठ बार पढ़कर पटहं (ढोल) को सर्प के काटे हुए के पास बजावे।

धृत्वार्द्ध चंद्र मुद्रां दक्षिण भागेहि दंशिन: स्थित्वा,
वदतु तव गौरिं दानीत्तस्कर लोके न नीतेति ॥

फिर सर्प से काटे हुये के दाहिनी तरफ ठहरकर गौरी अर्द्ध चंद्र की मुद्रा बनाकर कहे कि तुम्हारी गाय को चोर ले गये हैं।

तं समाहत्य पादेनयाहि त्युक्ते स धावति,
उत्थापयति तं शीघ्रं मंत्र सामर्थ्यं मीदृशं ॥

ऐसा कहने पर वह पावों को सकेलकर भागता है, जल्दी जल्दी उठता है। इससे मंत्र की शक्ति दिखाई देती है।

फणि दष्टस्य शरीरादौ स्वाहा मंत्र तो विषं हत्वा,
सो मस्तक ललाटाद द्रुतं मंत्रेण पातयेत् ॥

सर्प से काटे हुए के शरीर से स्वाहा युक्त मंत्र के द्वारा विष को नष्ट कर देने से वह अपने मस्तक ललाट आदि को जल्दी जल्दी गिराता है।

ॐ नमो भगवते वज्र तुंडाय स्वाहा ॥

विष हरण मंत्र

यह विष नष्ट करने वाला मंत्र है।

रक्त नख द्रुतं पातय पातय नर नर नर नर नर हुं फट घे घे स्वाहा ॥
इति पातन मंत्र: यह गिराने का मंत्र है।

इमामो फट मंत्रेणो उच्चारणात पतति भोगिना दष्ट:,
ॐ ह्रामादि फंडतो दष्ट पटाछादनो मंत्र : ॥

ईं आं ॐ फट मंत्र के उच्चारण करने से (भोगिना) सर्प से काटा हुआ प्राणी गिरता है।
ॐ ह्रां फट अंत वाले मंत्र कपडा ढ़कने का मंत्र है।

अथ वक्ष्यामि केषां चिदामयानां चिकित्सितं,
सिद्धैर्मंत्रैश्च यंत्रैश्च प्रयोगैश्च यथा श्रुति ॥ १ ॥

अब शास्त्र के अनुसार सिद्ध मंत्र यंत्र और प्रयोगों से कुछ रोगों की चिकित्सा का वर्णन किया जायेगा।

[illegible] रोगा द्वि विधाः स्युर्दोषोत्थाः कृत्रिमाश्च दोषोत्थाः,
वातादि दोष विहिताः कृतका विद्वेषि जन जनिताः ॥ २ ॥

वह रोग दो प्रकार के होते हैं एकतो दोषज दूसरे कृत्रिम वात, पित्त, कफ के प्रकोप से होनेवाले रोगों को दोषज और द्वेष करने वाले पुरुषों से उत्पन्न हुए रोगों को कृत्रिम या बनावटी कहते हैं।

दोषोत्थान प्रति संप्रति विधीयते प्रति विधिर्म्महावेगान्,
कृत्रिम रोगाणां तु प्रवक्ष्यते प्रतिविधिः पश्चात् ॥ ३ ॥

अब प्रथम बड़े वेग वाले दोषज रोगों की चिकित्सा का वर्णन किया जाता है कृत्रिम, रोगों की चिकित्सा का वर्णन पीछे किया जाएगा।

ॐ नमो भगवते रलत्रयाय ज्वर हृदय मावर्त्तयिष्यामि भो भो ज्वरं श्रृणु श्रृणु हन हन मर्द्द मर्द्द गर्ज गर्ज छर्द छर्द मुंच मुंच सर्व ज्वर आपत आपत वज्र पाणि राज्ञापयति मम शिरो मुंच मुंच कंठं मुंच मुंच उरो मुंच मुंच हृदयं मुंच मुंच उदरं मुंच मुंच कटिं मुंच मुंच उरुं मुंच मुंच जंघे मुंच मुंच पादौ मुंच मुंच वज्रपाणिराज्ञापयति हुं फट ठः ठः ॥

कृत्वा गुग्गुलना धूपं मंत्रमेतं शुचि र्जपेत्,
त्रिसप्त कृत्वा शाम्यति ज्वराः सर्वेऽपि तत्क्षणात् ॥ ४ ॥

गूगल की धूप देकर इस मंत्र को पवित्र होकर इक्कीस बार जपे तो सर्व ज्वर उसी क्षण शांत हो जाता है।

ॐनमो भगवते पार्श्वनाथाय धरणेन्द्र पद्मावती सहिताय उग्र चंडी महा चंडी छिंद छिंद भिंद भिंद स्तोभय स्तोभय उच्चाटय उच्चाटय आकर्षय आकर्षय धग धग दिव्य योगिनि ललाटं मुंच मुंच मुखं मुंच मुंच ग्रीवां मुंच मुंच बाहुं मुंच मुंच उपबाहुं मुंच मुंच हृदयं मुंच मुंच उदरं मुंच मुंच कटिं मुंच मुंच पृष्टिं मुंच मुंच जंघ मुंच मुंच जानु मुंच मुंच पादौ नखं मुंच मुंच भूमिं गच्छ गच्छ महा ज्वरं हुं फट ॥

यव कृष्णा चणक सर्षप माषैरा ताड़ितो ज्वरः क्षिप्तं,
उत्तरति मस्त कादिह वृश्चिक पीड़ं व चित्रमिदं ॥ ५ ॥

इस मंत्र को पढ़कर जो सरसौं उड़द को अभिमंत्रित करके मारने से ज्वर उसी वक्त मस्तक से उतर जाता है और बिच्छू के काटे की पीड़ा भी उतरती है यह भी आश्चर्य है ।

ॐभस्मायुधाय विद्महे एक दंष्ट्राय धीमहे तन्नो ज्वरः प्रचोदयात् ॥
गायत्री मंत्र

सहस्त्र जाप सिद्धेन मंत्रेणानेन मंत्रिता,
भूतिर्ज्वरित विकीर्णा हरति ज्वरं ॥ ६ ॥

इस मंत्र को एक हजार जप से सिद्ध करके अभिमंत्रित राख ज्वर वाले के शरीर पर डालने से ज्वर नष्ट हो जाता है।

मंत्रोयं लिखितः पत्रे ज्वरितास्या विदर्भितं,
आमुक्तो ज्वरित स्यांगे ज्वरान् नवांन प्रणाशयेत् ॥ ७ ॥

यदि इस मंत्र में ज्वर के नाम को विदर्भित (गूंथकर) पत्र पर लिख कर बांधे तो यह ज्वर वाले के सब प्रकार के ज्वरों को नष्ट करता है।

उष्ण ज्वर भूताना मा वेशो भवति चरण हृत,
शीर्षेन्यस्तैः क्रमशो ह्रां ह्रीं ह्रूं वर्णैः रुदय रवि सदृशैः ॥ ८ ॥

चरण हृदय और सिर में क्रम से ह्रां ह्रीं ह्रूं का उदय कालीन सूर्य के समान वर्ण वाला ध्यान करके लगाने से उष्ण (गरम) ज्वर के भूतों का आवेशन होता है।

शिखि भवन स्थाकारं शीत ज्वर दारकं,
हृदि न्यस्तं केवलमूष्ण ज्वर हरमित्युदितं मंत्रिभिर्म्मुख्यैः ॥ ९ ॥

अग्नि मंड़ल के बीच में स्थित आं बीज का हृदय में न्यास करने से शीत ज्वर नष्ट हो जाता है। बिना अग्निमंड़ल के केवल आकार का मुख्य मंत्र शास्त्रियों ने उष्ण ज्वर को नष्ट करने वाला कहा है।

ॐनमो भगवते गर्ज्ज गर्ज्ज भस्म भस्म ज्वल ज्वल महा भैरव सर्व ज्वर ज्वर विनाशनं कुरु कुरु सिद्ध विसिद्ध हुं फट ठः ठः ॥

अभ्यर्च्च सितैः कुसुमैः शिव मार्केरष्टमी चतुर्दश्यां,
लक्षं प्रजप्पनं मंत्र स्नायान्मंत्री ज्वरान्नश्येत ॥ १० ॥

इस मंत्र कोएक लाख जप से सिद्ध करना चाहिये अष्टमी चर्तुदशी को शिवजी का आक के सफेद फूलों से पूजन करके स्नान करावे तो ज्वर नष्ट होगा।

ॐ नमो भगवते रुद्राय वंद्य वंद्य ज्वर हुं फट ठः ठः ॥

सहस्त्र बार जाप्येन सिद्धं रौद्र मिदं रहः स्था,
शिखा वंधनेनाश्रु ज्वर वंद्य विधायिकां ॥ ११ ॥

इस रौद्र मंत्र का एक हजार जप से सिद्ध करके चोटी बांध देने से ज्वर भी बंद हो जाता है।

हंसा वृताऽभिधानं मलवरय षष्ट स्वरान्वितं,
कूटं बिंदु युतं स्वर परिवृत मष्ट दलां भोज मध्य गतं ॥ १२ ॥

तेजोऽर्ह सोम सुधा हंसः स्वाहेति दिग् दलेषु लिखेत् ,
आग्नेयादि दलेष्वपि पिंडयत् कर्णिका लिखितं ॥ १३ ॥

भूर्ज्जे सुरभि द्रव्यैर्विलिख्य तत् सिंचयेत् परिवेष्टय,
नूतन घटांबुपूर्णे तद् यंत्रं स्थापयेत् धीमान् ॥ १४ ॥

तंदुल पूर्ण मृन मय भाजनमप्यु परितव्य विन्यसेत्,
तत्पार्श्वस्थ जिनाग्रस्थं करोति दाह ज्वरोपशम ॥ १५ ॥

श्री खंडेन तदा लिख्य पाययेत् कांश्य भाजने,
महादाह ज्वर ग्रस्त तत्क्षणादुपशाम्यति ॥ १६ ॥

देवदत्त नाम को हंस पद से वेष्टित करके, उसके बाहर म ल व र य ॐ कार सहित कूट (क्षकार) अक्षर को अनुस्वार सहित लिखे - अर्थात् नाम के बाहर हंस लिखकर उसको क्ष्म्ल्र्व्यूं लिखे उसके बाहर १६ स्वर लिखे। उसके बाहर आठ दल का कमल बनावे। तेज (ॐ) अर्ह सोम (ह्वीं) सुधा (क्ष्वीं) हंसः स्वाहा इस मंत्र को पूर्व आदि चारों दिशाओं में लिखे, तथा अग्नि आदि विदिशाओं क्ष्म्ल्र्व्यूं पिंड को जिसे बीच की कर्णिका में लिखा है लिखे। भोजपत्र पर सुगन्धित द्रव्यों से इस यंत्र को लिखकर, मोमिया कपड़े से लपेट कर, उसको मिट्टी के नये घड़े में स्थापित करके, पानी से भर देवे। यंत्र को पानी से सींच देवे उसके ऊपर मिट्टी के बर्तन में चावल भरके रख देवे उसको पार्श्वनाथजी जिनेन्द्र देव के सामने रखने से दाह ज्वर को शांत करता है। अगर इस यंत्र को कांसी की थाली मे चंदन से लिखकर पिलावे तो बहुत ही तेज चढ़ा हुआ ज्वर उसी क्षण शांत हो जाता है।

साध्या ख्या युत पुंछं झौं संयुतं मूर्द्ध पंच कोपेतं,
चत्वा रिंशत्पुट मय तनु महिमा लिखव्य कोष्टेषु ॥ १७ ॥

लिख वज्र श्रंखलाया वर्णानिवरोहेणेन पंच तथा,
आरोहणेन यंत्रं ज्वर ग्रहादीन् जयेत् सर्वं ॥ १८ ॥

ॐ नमो रत्नत्रयाय वज्र श्रंखलाय अग्नि प्रकार दर्शनाय तिष्ठ तिष्ठ बंध बंध महा बंध महा बंध ठः ठः ॥
वज्र श्रंखला मंत्रोयं

यह वज्र श्रंखला मंत्र है।

सर्प की पूंछ में साध्य के नाम को लिखकर पांच घुमाव देकर सिर में झौं बीज लिखकर फिर उसके कोठों में चालीस पुछमय महिमा को लिखे। उनके कोठों में वज्र श्रंखला मंत्र को पांच पांच वर्णों की चढ़ाव व उतार के क्रम से यह मंत्र सब ज्वरों और ग्रह आदि को जीतता है। (यंत्र१ यहाँ पर है)

टांत वकार प्रणमन जांताऽर्द्ध शशि प्रवेष्टितं,
नाम शीतोष्ण ज्वर हरणं स्यात्ष्ण हिमांबु निक्षिप्तं ॥ १९ ॥

टांत (ट) वकार (व)प्रणमन (ॐ) जांता (झ) के बाहर आधे चन्द्रमा से वेष्टित करे। यह नाम सहित शीतल जल में रखने से उष्ण ज्वर को नष्ट करता है और गरम जल में रखने से शीत ज्वर नष्ट करता है।

नाम समेत सभेदं टातेना वेष्ट्रा षोडश कलाभिः,
लांतं भक्तया तं च प्रवेष्टयेत् व्योम बीजेन ॥ २० ॥

तत्वाष्ट केन वेष्ट्रा तस्य वहिश्चंद्र मंडलं विलिखेत्,
एतन् मलयज लिप्तं यंत्रं पूर्णे घटे स्थाप्यं ॥ २१ ॥

शीतं ज्वरं निहन्यात् शीते वारिणि विधाय कृत पूज्यं,
एतद् यंत्रं शीते वारिण युष्णा ज्वरं हरं ति ॥ २२ ॥

नाम सहित रोग के भेद को टांत (ठ) से वेष्टित करके फिर सोलह कलाओं (स्वरों) से वेष्टित करे फिर उसको क्रम से लांत (व) और भक्तया (ॐ) से घेर दे तथा आकाश बीज (ह) से वेष्टित करे फिर आठों तत्वों द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः आं क्षां क्रों से नाम को वेष्टित करके उसके बाहर चंद्र मंडल लिखे। इस यंत्र को चंदन से लपेटकर जल से भरे हुए घड़े में स्थापित कर देवे । इस यंत्र को गरम जल में रख कर पूजन करने से यह शीतल ज्वर को नष्ट करता है तथा इसको शीतल जल में रखने से उष्ण ज्वर को नष्ट करता है।

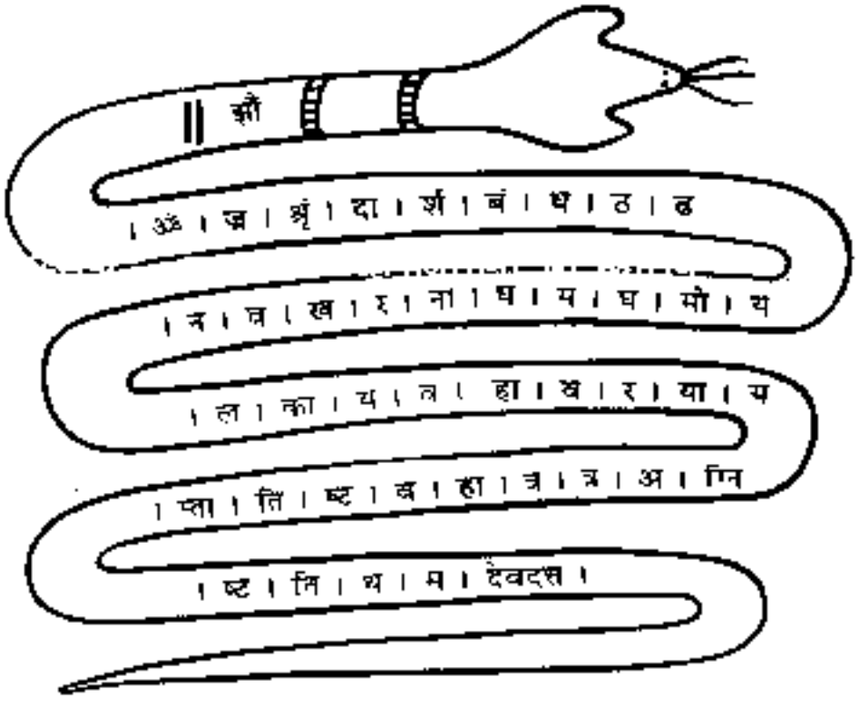

लांतं टांत वहिः स्वर प्रणमणं जांतं विद्योर्म्मंडलं,
मध्ये नाम विलिख्य तज्वर जलेसंक्षिप गंधांन्वितै ॥ २३ ॥
शीते चोष्ण जलेसचोष्णामपि तत् शीते जलेन
क्षिपेद ऽर्हद्राष्यमिदं महा ज्वर हरं यंत्रं सुरेंद्रार्चित ॥ २४ ॥

बीज में नाम लिखकर लांत (व) टांत (ठ) से फिर बाहर स्वरों फिर प्रणमण (ॐ) फिर जांतं (झ) और चंद्र मंडल से वेष्टित करे। यह यंत्र चंदन युक्त शीतल जल में रखने से यह उष्ण ज्वर को नष्ट करता है तथा उष्ण जल में रखने से शीतल ज्वर को नष्ट करता है। अरहंत भगवान के समान भावना पूर्वक कहा हुआ यह ज्वर हर यंत्र देवेन्द्र से भी पूजा जाता है।

वानरस्य मुखं घोरमा दित्य सम तेजसं,
ज्वर में कांत मुष्णं स्यात् नामांतरितमालिखेत ॥ २५ ॥

सूर्य के समान तेज वाले वानर के घोर मुख को नाम के अक्षरों से घिरा हुआ लिखने से यह इकांतरा बुखार उष्ण ज्वर पूर्ण रुप से हो जाता है।

पृथ्वी मंडल मध्ये यंत्र पविलिखव्य दर्शयेत्,
तस्या नाशयति ज्वरमथवा रक्षा मणि वंधनात् शीघ्रं ॥ २६ ॥

पृथ्वी मंडल में यंत्र को लिखकर दिखाने से तथा रक्षा मणि (कलाई) पर बांधने से ज्वर शीघ्र नष्ट हो जाता है।

ब्रह्मा वृतं नाम हिरण्य रेत: पुरं तथा संपुटितं विलिखव्य,
कोष्टां तरागेग्नि गजेंद्र वश्यं त्रिवायुवेष्ट्रां ज्वर नाशकारि ॥ २७ ॥

ब्रह्मा (ॐ) से घिरे हुए नाम को अग्नि मंडल के संपुट में लिखकर उन मंडलों के अन्दर अग्नि (ॐ) और बाहर गंजवशकरण बीज (क्रौं) लिखकर सबके बाहर तीन वायुमंडल बनावे तो यह ज्वर नष्ट करने वाला है।

वन्हि मंडल मध्यस्थं नाम प्रणव संपुट
कृत्वाभ वशकृद्वर्णान्निष्ट दिक्षु नियोजयेत् ॥ २८ ॥
बाह्ये वह्नि पुरं दत्वा लिखित्वा रोचनादिभिः,
वेष्टयित्वाऽथ सूत्रेण वधीयात ज्वर वैरिणां ॥ २९ ॥

अग्नि मंडल के बीच में ॐ के संपुट में नाम लिखकर आठों दिशाओं में गजवशकरण (क्रौं) वर्ण को लिखे। फिर बाहर अग्नि मंडल को गोरोचन आदि से लिखकर इस यंत्र को धागे से लपेट कर बांधने से यह ज्वर के शत्रु का काम करता है।

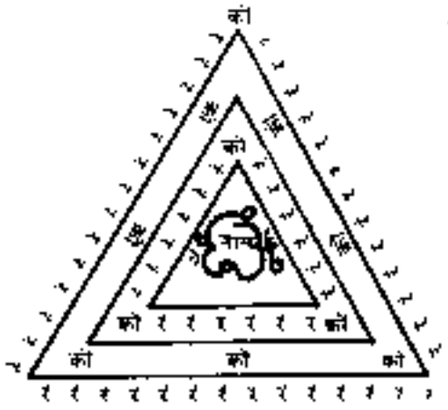

पंचम वर्गा चतुर्थं तूर्य्यं स्वर बिंदु संयुक्तं,
बीजं एकांतरमुग्र ज्वरमपहरति करे निबद्धं चेत् ॥ ३० ॥

पंचम वर्ग (त वर्ग) के चौथे अक्षर (घ) को चौथे स्वर (ई) और बिंदु सहित लिखकर हाथ में बांधने से यह एक दिन के अंतर से आने वाला उग्र ज्वर को नष्ट करता है।

शिखि भवने इवींकारं शीत ज्वर धारकस्य हृदि न्यस्तं,
केवल भूषण ज्वरित मित्युदितं ज्वालनी कल्पे ॥ ३१ ॥

शीत ज्वर वाले पुरुष के हृदय में अग्नि मंडल के अन्दर स्थित इवीं को लिखने से वह गरमी से जलने लगता है ऐसा ज्वालामालिनी कल्प में कहा गया है।

चूर्णेन पत्रे किल नागवल्या स्तेजोंकुश त्र्यंग धराक्षराणि,
विलिख्य पूंगैस्सह भक्षणेन सर्व ज्वरो नश्यति पश्य चित्रं ॥ ३२ ॥

नागर बेल के पान के पत्ते पर चूर्ण से तेज (ॐ) अंकुश (क्रौं) और त्र्यंगधर (ह्रीं) को लिखकर सुपारी के साथ खाने से सब प्रकार के ज्वरो को नष्ट करता है इसके आश्चर्य को देखो।

वंदा को विल्व भवस्त केण धृतेन वा प्रगे पीतः,
विषम ज्वर विकृतिं शमयति निश्शेषमपि विषमं ॥ ३३ ॥

बेल के पेड़ के बांदा को (या गोंद) को मट्ठे या घृत के साथ प्रातःकाल के समय पीने से वह सब प्रकार के विषम ज्वरों के विकारों को शान्त कर देता है।

मूल भुजादौ वध्नीयाद्वंगयाः सुरतस्य च,
तेनोपद्रव युक्तोपि हन्यते द्वयाहिको ज्वरः ॥ ३४ ॥

वड्ठा (कपास या बेगण) तथा तुलसी की जड़ को भुजा आदि में बांधने से दूसरे दिन आने वाला उपद्रवी बुखार को भी नष्ट कर देता है।

हय गंधा शुंठया भया गृह धूम द्भगव निर्म्मितो धूपः,
चातुर्थिकं हरे ज्वरमातुर शयनीय निकट गतः ॥ ३५ ॥

असगंध सोंठ हरड़े गृह धूम और वच की बनी हुयी धूप खरपाई के निकट देने से चौथया बुखार नष्ट होता है।

पुरु पूंगच्छदौ वर्हिणा शीतेन शशिनौ हतः,
प्रधूपे तत्क्षणा देएव नस्या चातुर्थिं ज्वरं ॥ ३६ ॥

पुरु (गूगल) पूंग (सुपारी) छद (पत्ते) वर्हि शीतेन (मोरके पंख) शशि (कपूर) की धूप देने से चोथिया ज्वर उसी क्षण नष्ट हो जाता है।

हिंगु ग्रालि कणा राजि रसोनोषणा बालकैः,
रात्रया च गुलिका सर्व ज्वर भूत हृदं जनात् ॥ ३७ ॥

हींग उग्रा (वच) अलि (भंग) कणा (पीपल) राजी (राई) सरोन (लहसुन) उष्णा (काली मिरच) बालक (नेत्रबाला) और रात्र्या (हल्दी) इनकी गोली बनाकर आँख में अंजन लगाने से सब ज्वर और भूत नष्ट हो जाते हैं।

सहदेवी शिफा बद्धा श्वेत सूत्रेण कन्यया,
निहंति दक्षिणे पाणौ ज्वर भूत ग्रहादिकं ॥ ३८ ॥

सहदेवी की जड़ को सफेद धागे से जो कन्या के द्वारा काटा गया हो दाहिने हाथ में बांधने से ज्वर भूत और ग्रह आदि नष्ट होते हैं।

मंदार मूलं पुष्पार्के गृहितं सांतये ज्वरान्,
कर्णे बद्धं हरत्या शु दुस्सहोपद्रवानपि ॥ ३९ ॥

मंदार (आक) की जड़ को पुष्य नक्षत्र और इतवार के योग में लाकर कान पर बांधने से यह बड़े भारी उपद्रवी ज्वरों को भी नष्ट कर देता है।

हस्तोपाताकरे वद्धा पामार्गस्य शिफा ज्वरान्,
रक्तक स्वस्रवृता हंति दुर्बाद्यावा शिफा स्तथा ॥ ४० ॥

अपामार्ग (चिड़चिटा-आंधीझडा) की जड़ तथा दुर्बाया (दूब) की जड़ को हाथ से उखाड़कर लाल धागे से लपेट कर हाथ में बांधने से सब ज्वर नष्ट होते हैं।

ज्वरस्य एरंड विल्वयोर्मूलं वचा रामठ सैंधवं,
शुंठी च क्वथिता पीता शीतकार्तिं विनाशिनि ॥ ४१ ॥

एरंड और बेल की जड़ वच रामठ (हींग) सेंधा नमक सोंठ के काथ बनाकर पीने से शीत (जाड़े) का कष्ट नष्ट हो जाता है।

स्था स्न्वाद्यमंतरालं द्वं द्वे पार्श्वे च मध्ये च,
विभ्राणमग्नि गेहे त्रितयं न्यस्यैक परिपाट्या ॥ ४२ ॥

स्थापण्यु (स्व) आदि बीज को अंतराल दोनों ओर मध्य में लिखकर एक परिपाटी से तीन अग्नि मंडल लिखे।

पिंड़स्य वाम पार्श्वे तस्याधोधः क्रमेण पूं यु च,
मध्य गतस्य नुत द्वत भक्ति स्तारोथ योगिनः पंच ॥ ४३ ॥

उर्द्ध वकार मं कं प्रविलिख्य ततो वहि स्तेषां,
उपरि प्रणवा वामं पुराणमपि वंधु समुपेतं ॥ ४४ ॥

तारो विमल विविक्तौबिंदु युतौ त्रीणि चापि,
तेजांसि विलिद् यंत्रं धृत मिदमपहरति मसूरिकादि रूजः ॥ ४५ ॥

पिंड की बाई ओर नीचे और बीच में पूं युं से प्रशंसित भक्ति (ॐ) तार (ॐ) और पाँचों योगिनियों को लिखे। ऊपर वकार के चिन्ह (अक्षर) को लिखकर उसके बाहर की तरफ ऊपर ॐ (प्रणव) वाम (आ) पुराण (फ) और वंधु (प्राणिधि-स) को लिखे। तार (ॐ) विमल (ब) विविक्त (भ) बिंदु

(अनुस्वार) सहित इसका तीन बेजांसि (तेजसे ॐ ॐ ॐ) को लिखे। इस यंत्र को धारण करने से मसूरिका (मसुरी-माता की बीमारी) का रोग दूर होता है। रुजः (बीमारी)

उत्तर हरिति जटार्क पिष्टी ज्येष्टां बुना,
पीता हरति मसूरी मथवापान पर्णेद के पीते ॥ ४६ ॥

जटा (जटामासी बालछड़) अर्क (आक) की पिट्ठी को ज्येष्टा (राजेष्टा केला) के अंबु जल में पीने अथवा पाठा लता के उदक (जल) को पीने से मसूरिका उतर जाती है।

क्षीरी श्रृंग रुजो शीर यष्टि गोपी हिमोत्पलैः,
स्यादूर्वा स्व रसे सिद्धं सर्पिः सर्वं विसर्प्पं नुत ॥ ४७ ॥

क्षीरी ( ) श्रृंगं (काकड़ासिंगी) रुज (बीमारी) को उशीर (खस) यष्टि (मुलहटी) गोपी (श्यामलता) हिम (चंदन) उत्पल (नीलोफर) दब के रस में सिद्ध किया हुआ घृत सब विषों को नष्ट कर देता है।

साध्या साध्यं परिज्ञायत दूपं च विशेषतः,
मंत्र तंत्र प्रयोगेन नयो ज्वाला खर क्षयं ॥ ४८ ॥

साध्य और असाध्य तथा विशेष रुप से उसके रुप को जानकर मंत्र और तंत्र के प्रयोग से ज्वाला गर्दभ रोग को नष्ट करे।

प्रथमं कपिलो नाम द्वितीयो गौर उच्यते,
तृतीयो मृत्यु कालश्च चतुर्थः पिंगलो भवेत् ॥ ४९ ॥

विजयः पंचमो ज्ञेयः षष्टस्तु कलहो प्रियः,
सप्तमः कुंभ कर्णः स्यादष्टमोपि विभीक्षणः ॥ ५० ॥

नवमश्चंद्र हासः स्याद्दशमोपि च दुर्द्धरः,
एते: दश विधा लोके ज्वाला गर्दभ संज्ञिनः ॥ ५१ ॥

पहला कपिल, दूसरा गोर, तीसरा मृत्यु काल, चौथा पिंगल होता है पांचवाँ विजय, छठा कलह प्रिया, सातवाँ कुम्भकर्ण , आठवां विभीषण होता है, नवाँ चंद्रहास, दसवाँ दुर्द्धर होता है। लोक में ज्वाला गर्दभ के दस प्रकार के नाम है।

कपिलो जायते कुक्षौ पृष्टे गौरति तीव्रकः,
मृत्यु कालो भवेत्संधौ शीर्षे पिंगल संज्ञिकः ॥ ५२ ॥

विजयो जायते नेत्रे जंधादौ कलह प्रियाः,
कुंभकर्णौ भवद्गुह्ये वृषणे च विभीषणः ॥ ५३ ॥

हृदये चंद्रहासः स्यादपुर्द्धरो बदने भवत्,
उत्पतिस्थानकं प्रोक्तं ज्वाला गर्दभ संज्ञिनां ॥ ५४ ॥

कपिल कोंख में और अत्यन्त तीव्र, गौर पीठ में मृत्यु, काल जोड़ में और सिर में पिंगल होता है। विजय आंख में, कलह प्रिया जंघा आदि में कुम्भकर्ण गुप्त अंग में और विभीषण अंडकोष में होता है। चंद्रहास हृदय में और दुर्धर मुख में होता है यह ज्वाला गर्दभ रोग के निकलने के स्थान कहे गये हैं।

पीत मंड़ल सादृश्या सशोष दाह विधायिनः,
वर्धते प्रत्यहं ते च मुख तेषानं दृश्यते ॥ ५५ ॥

खरांड चर्म्म रक्तेन कुर्यात् कर्पूर संयुजा,
ठिंद्यादगर्दभमालेख्य मंत्रेणानेन भूतले ॥ ५६ ॥

ॐनमो भगवते पार्श्व चंद्राय ठिंद ठिंद चंद्रहास खडगेन जिन वचनमनुस्मरामि ।।

पूर्वाभिमुख मालिख्य खरं खटिकया,
पुनः कृते तस्य शिरच्छेदे ज्वाला गर्दभनाशनं ॥ ५७ ॥

वह पीले मंडल के समान गोल और शोष (सूजन) और जलन करने वाले प्रतिदिन बढ़ते रहते हैं। उनका मुख भी दिखलाई नहीं देता है। गधे के अंडकोष चमड़े और रक्त में कपूर मिलाकर निम्नलिखित मंत्र के द्वारा गर्दभ को देखकर पृथ्वी में लिखकर उसके सिर को छेदे।

ॐ नमो भगवते पार्श्व चंद्राय ठिंद ठिंद चंद्रहास खड्गेन् जिन वचनमनुस्मरामि ।।

गधे की आकृति खड़िया से पूर्व की तरफ मुह किया हुआ लिखकर उसके सिर को छेदने से ज्वाला गर्दभ रोग नष्ट होता है।

पृष्टे जातस्य गौरस्य तीव्र दुख विधायिनः,
नास्ति तस्य प्रतिकारो मंत्र तंत्र समुद्भवः ॥ ५८ ॥

तीव्र दुख देने वाले गौर के पीठ में निकलने पर उसकी मंत्र और तंत्रों से कोई भी चिकित्सा नहीं हो सकती है।

सर्वांग संधि जातस्य मृत्यु कालस्य भेषजं,
न किंचिद्विद्यते योग्यं नास्ति मंत्रस्य कश्चनः ॥ ५९ ॥

अंग के सब जोड़ों में उत्पन्न होने वाले मृत्युकाल की न तो कोई औषधि ही है और न कोई मंत्र है।

पिंगल स्यौषधं देयं शीर्ष देशा व लंबिनः,
अर्क मूलं प्रियंगुश्च नाग केशर कुंकुमः ॥ ६० ॥

पिष्टवा तंदुल तोयेन पाने लेपे प्रयोजयेत्,
छिंद्याद्गर्दभमालिख्य मंत्रेणोत्तर दिग्मुखं ॥ ६१ ॥

ॐ नमः पार्श्वनाथाय घर घर विध्वंशय विध्वंशय छिंद छिंद तीक्ष्ण हस्त खड्गेन् रेन्॥

सिर में निकलने वाले पिंगल की औषधि न बिना विलम्ब के दें। आक की जड़ फूल प्रियंगु और नाग केशर और कुंकुम (केशर) देनी चाहिये। इन औषधियों को चावलों के पानी के साथ पीसकर पिलावे। इन्हीं का लेप भी करे और मंत्र को पढ़ते हुए उत्तर की तरफ मुख वाले गर्दभ को लिखकर उसके सिर को छेद डाले।

नेत्रस्थ विजय स्योदं देयं तंत्र प्रलेपनं,
करवीर सन्मूलं पिष्टवा तंदुल तोयतः ॥ ६२ ॥

कुर्य्यादनेन मंत्रेण पश्चिमाभि मुखं खरं,
लिखित्वा शिरसश्छेदं ततः खटिकया भुवि ॥ ६३ ॥

ॐ नमो भगवते पार्श्व रुद्रया ज्वल ज्वल छिंद छिंद सुदर्शन ज्वाला माला सहस्ताया॥

नेत्र में होने वाले विजय के ऊपर निम्नलिखित तंत्र का लेपन करे। कनीर की जड़ को चावलों के पानी में पीसकर लेप भी करे। इस मंत्र से पश्चिम की तरफ मुख वाले गधे की आकृति खड़िया से बनाकर उसके सिर को छेदे।

जंघादि स्थान जातस्य कलह प्रिय संज्ञिनः,
उदंबर समुद्भूत प्ररोहश्चंदनं तथा ॥ ६४ ॥

धूप लेपन पानेन कुर्य्यात् तद् दाह वारणां,
मंत्रेणानेन तं छिद्याद्दक्षिणाभिमुखं खरं ॥ ६५ ॥

ॐ नमो भगवते जिन रुद्राय जिन वसुदेवाय शंख चक्र मुद्गर हस्ताय वन माला धर देहाय सुदर्शन चक्रेण छिंद छिंद नमः स्वाहा ॥

जंघा आदि स्थानों में निकलने वाले कलह प्रिया का गूलर में उत्पन्न हुए अंकुर और चंदन की धूप देने लेप करने और पिलाने से कष्ट कूर करे और इस मंत्र से दक्षिण की तरफ मुँह वाले खर का सिर छेद डाले।

गुह्यस्थ कुंभकर्ण स्थे मंत्रं तस्य नियोजयेत्,
लवग तगरं कुष्ट पिष्ट्वा गोमूत्रतस्ततः ॥ ६६ ॥

पान लेपन दानेन सुखं भवति तत्क्षणात्,
खटिका छेदनं कुर्य्यात् याम्याभि मुख गर्दभं ॥ ६७ ॥

ॐ नमो भगवते जिनेन्द्राय छिंद छिंद चंद्रहास खड्गेन स्वाहा ॥

गुप्त स्थान में होने वाले कुंभकर्ण पर मंत्र का प्रयोग करे, तथा लौंग तगर और कूठ को गौमूत्र में पीसकर पिलाने और लेपन से करने उसी समय शांति हो जाती है मंत्र से दक्षिण की तरफ मुख वाले खड़िया से लिखे हुए गर्दभ का छेदन करे।

देयं विभीषणस्येदं मंत्र तंत्र समुद्भवं,
हयमूत्रेण संपिष्टं मृग विष्टा प्रलेपनं ॥ ६८ ॥

लिखित्वा गर्दभं पश्चात् पूर्वाभिमुख संस्थितं,
कुर्य्यान्मंत्रेण शीर्षस्य छेदनं तस्य मंत्रवित् ॥ ६९ ॥

ॐ नमो जिनरुद्राय महाकालाय कडु कडु छिंद छिंद चंद्रहास खड्गेन स्वाहा ॥

अंडकोष के विभीषण के लिये मंत्र और तंत्र से उत्पन्न हुए हिरण की विष्टा को घोड़े के मूत्र में पीसकर लेप के वास्ते देवे। फिर मंत्र को जानने वाला पूर्व की तरफ मुख वाले गर्दभ को लिखकर मंत्र से उसका सिर छेदन करे।

चंद्राहासस्य दातव्यमौषधं हृदि दारिणः,
कूष्मांड बीजमापेष्य छाग क्षीरेण लंपयेत् ॥ ७० ॥

तत्क्षणात् प्रसरस्तस्य दाह शोषश्च नश्यति,
लिखित्वा गर्दभं तस्य वायव्यां छेदयेत् शिरः ॥ ७१ ॥

इति वापाठ

ॐ नमो जिन रुद्राय हन हन छिंद छिंद चंद्रहास खड्गेन स्वाहा ॥

हृदय में निकलने वाले चंद्रहास के लिये कूष्मांड (कोल्ह) के बीजों को बकरी के दूध मे पीसकर लेप करने के वास्ते देवें। इससे उसका निकलना जलन और सूजन उसी समय नष्ट हो जाती है। वायव्य (पश्चिमोत्तर) कोण की तरफ मुख किये हुए गधे की आकृति को भूमि पर खड़िया से लिखकर उसके सिर को मंत्र पढ़ता हुआ छेद डाले।

दुर्द्धरस्यास्य जातस्य दातव्यं तंत्रमुत्तमं,
मातुलिंगस्य बीजानि प्रियंगु रजनी द्वयं ॥ ७२ ॥

मंजिष्टा कुंकुमो शीरं कौश्रुंभं केशरं तथा,
पिष्ट्वा क्षतां भसालेपेनोपशाम्यति दुर्द्धरः ॥ ७३ ॥

मंत्रेणानेन छिंद्या लिखित्वाधो मुखं खरं,
जप्तत्वा त्रिसप्त वारांश्च दद्यान्मधुर भोजनं ॥ ७४ ॥

ॐनमो भगवते रुद्राय छिंद छिंद चंद्रहास खड्गेन ये ये समन्विताय हुं फट ठः ठः ठः ठः ॥

मुख में दुर्द्धर के निकलने पर उत्तम तंत्र देये (मातुलिंग)। विजोरा के बीज फूल, प्रियंगु, दोनों हल्दी (हल्दी और दारु हल्दी) मंजीठ, कुंकुम, उशीर (खस) कुसुंभा केशर, तथा चावलों को (अभंसा) जल में पीसकर लेप करने से दुर्धर उसी क्षण शांत हो जाता है। नीचे को मुख किये हुए खर को लिखकर छेदे और इस मंत्र को २१ बार जप करके पीछे मधुर भोजन देवे।

ॐनमो भगवते रुद्राय छिंद छिंद चंद्रहास खड्गेन ये ये समन्विताय हुं फट ठः ठः ॥

जल धारा प्रदातव्या मंत्रयित्वा जलं पुरा,
मंत्रणानेन सर्वेषां ज्वाला गर्दभ संज्ञिनां ॥ ७५ ॥

इस मंत्र से जल को अभिमंत्रित करके सभी ज्वाला गर्दभो को जल धारा देनी चाहिये।

ॐ नमो भगवते पार्श्वनाथाय कमठ दर्प्प विध्वंसनाय धरणेंद्र फणा मणि ज्वाला प्रभावनाय अस्य गर्दभस्य शिरः छिंद छिंद गतिं छिंद छिंद मतिं छिंद छिंद हस्तौ छिंद छिंद दिशः छिंद छिंद विदिशः छिंद छिंद संकीर्त्तनाय स्वाहा ॥
मूल मंत्रः

विधाय गंध पुष्पाद्यै मंत्रणानेन पूजनं,
खटिकोत्कीर्ण रुपस्य पश्चात् छेदनमारभेत ॥ ७६ ॥

इस मंत्र के द्वारा गंध पुष्प आदि से पूजन करके फिर खड़िया से उसका रुप बनाकर उसका छेदन का कार्य प्रारंभ करे।

ॐ नमो भगवते जिन पार्श्व रुद्राय गंध पुष्प दीपं धूपं गृन्ह गृन्ह मुंच मुंच मानुषं स्वाहा ॥

अथवा तेन मंत्रेण गर्दभस्या शिरः पुनः
मंत्रमुच्चाटय छेदये द्विधि नासदा ॥ ७७ ॥

अथवा मंत्री उस मंत्र से इस मंत्र को बोलकर गर्दभ के सिर को फिर मंत्र बोलकर विधि के द्वारा हमेशा छेदे।

ॐ नमो भगवते जिन पार्श्वनाथाय रुद्राय जित हरि हर हर पितामह प्रभावेण हंता लंका रामेण रावणस्य शिरो यथा छिन्नं तथा गर्दभस्य शिरषु छिंद छिंद ठः ठः गर्दभ शिरः छेदन मंत्रः

सप्त वारान् जलं जप्तत्वा देयं घोणस विधया,
प्रत्यहं रोगिणां पांतु मंत्रिणा शुद्ध चेतसा ॥ ७८ ॥

घोणस मंत्र के द्वारा जल को सात बार अभिमंत्रित करके प्रतिदिन शुद्ध चित्त से रोगी को पीने के लिये देवे।

ॐनमो भगवते श्री घोणस हरे हरे चरे चरे तरे तरे वः वः बल बल लां लां रां रां रीं रीं रें रें रौं रौं रः रः रस रस लस लस क्ष्मां क्ष्मीं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः नमः श्री घोणसे य य य य य स स स से स ह ह ह ह ह व व व व व ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ द द द द द ठः ठः ठः ठः ठः ग ग ग ग ग वर विहंग भुजे क्ष्मां क्ष्मीं क्ष्मूं क्ष्मौं क्ष्मः ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः ह्रीं शोषय शोषय रोषय रोषय ॐ आं क्रौं ह्रीं इ्वीं क्ष्वीं ह्रः जः जः जः ठः ठः ठः श्री घोणसे नमः॥ इदं वा

ॐनमः श्री घोणसे हरे हरे वरे वरे वः वः वः वल वल वल लां लां रां रां रीं रीं रौं रौं रस रस क्षां क्षीं क्षूं क्षैं क्षूं क्ष्वीं क्ष्वं ह्रं ह्रां भगवती श्री घोणसे य य य य य य य य यंसः यंसः यंसः यंसः यंसः यंसः यंसः सहः सहः सहः सहः सहः सहः सहः सहः ह्रः वः स्व क ह्रः वः स्व क ह्रः वः स्व क ह्रः वः स्व क ह्रः वः स्व क ह्रः वः स्व क ह्रः वः स्व क ह्रः वः स्व क क ङ क ङ क ङ क ङ क ङ क ङ क ङ क ङ ङ ङ ङ ङ ङ ङ ङ वगः वगः वगः वगः वगः वगः वगः वर वर वर वर वर वर वर वर स्वविहंगम भुजे क्ष्मां क्ष्मीं क्ष्मूं क्ष्मौं क्ष्मः क्ष्वै ॐरे रि स्तोभय स्तोभय ॐ ठः ठः ग ग श्री घोणसे स्वाहा॥

ज्वाला गर्दभ विस्फोट लूता स्फोडट भगंदराः,
शाकिनी विष रोगाश्च नश्यंत्यस्य प्रभावतः ॥ ७९ ॥

इस मंत्र के प्रभाव से ज्वाला गर्दभ फोड़ कान खजूरे का फोड़ा भगंदर शाकिन्या और विष के रोग नष्ट होते हैं।

निग्रहं भूत शाकिन्योः कुर्य्यात् घोणस विधया,
अभिमंत्रित गृहे क्षिप्ते सिद्धार्थैरहि चालनं ॥ ८० ॥

घोणस मंत्र के द्वारा भूत और शाकिन्या नष्ट हो जाती है तथा इस मंत्र को सफे द सरसों पर पढ़कर उनको घर में डालने से सांप घर से भाग जाते है।

अग्नि दग्धे व्रणे लिंपेत् कुंभि सारं सुपेषितं,
क्षीरेण तत्क्षणादेव हानि र्दाहस्य जायते ॥ ८१ ॥

कुंभ सार (गूगल) को दूध में पीसकर अग्नि से जले हुए जख्म पर लेप करने से उसकी जलन उसी समय नष्ट होजाती है।

सु प्रकाशु मना पुत्र का विश्व लेपिका ठः ठः॥

दुर्गा मंत्रश्चायं ग्रंथ्यादि हरेत् सहस्त्र जप
सिद्धं आबद्धं तज्जप्त हस्तेऽपमार्ग्ग मूलं च ॥ ८२ ॥

यह दुर्गा मंत्र एक हजार जप से सिद्ध होता है। इस मंत्र से चिट चिटे की जड़ को अभिमंत्रित करके हाथ में बांधने से गांठ आदि दूर होती है।

हरीतकी शिग्रु करंज भास्वत पुनर्नवा
सैंधवमश्व मूत्रैःपिष्टैः,प्रशस्तैः पिटिकाः
सुलेपो ग्रंथ्या व पच्या मपि विद्रुतौ च ॥ ८३ ॥

हरीत की (हरड़े) शिग्रु (सहजना) करंज भास्वत (आक) पुनर्नवा (साठी) सैंधव नमक को घोड़े के मूत्र में पीसकर पिटिका (मसूरिका) पर लेप करने से न पकने वाली गांठ को भी शीघ्र ही गला देती है।

लाक्षा घृत नृप भूरुह रजनि रजो मिश्र वसन,
सकल कृता वर्त्ति व्रणेषु दत्ता शोधन रोपण परा भवति ॥ ८४ ॥

लाख घृत नृप ( ) भूरुह (पेड़) रजनि (हल्दी) के चूर्ण को मिलाकर बनाई हुयी कपड़े की बत्ती को घाव पर रखने से उसका कष्ट दूर होता है तथा घाव को शोधन और भर देती है।

निर्गुंड़ी पत्र रसे लांगलिका कल्क संयुते सिद्धं,
तैलं हन्यादाशु गल गंड गंड़ मालां च ॥ ८५ ॥

निर्गुंडी (संभालू) के पत्तों का रस में लांगली (कलिहारी) के कल्क को मिलाकर तेल सिद्ध करने से गलगंड और गंड़माला को शीघ्र ही नष्ट कर देता है।

दुर्व्वायाः खर मंजर्य्याः सोम राज्याश्च पल्लवैः,
वध्नाति वंध्नां क्षुणैः व्रणै शोणित निस्तिं ॥ ८६ ॥

दूब खर मंजरी (चिरचिटा) सोमराजी (बावची) के पत्तों को पीसकर बांधने से घाव से बहता हुआ रक्त तुरन्त ही बन्द हो जाता है।

तिल भल्लातक पथ्या चूर्णो गुड़ मिश्रितो जयेल्लीठः
कुष्टं शशिरेखा वा सह कृष्णा शिलाष्टमुपयुक्ता ॥ ८७ ॥

तिल भिलावे हरड़े के चूर्ण में गुड़ मिलाकर चाटने से अथवा शशिरेखा (गिलोय) कृष्ण (कालीमिरच) शिला (मेनसिल) से कुष्ट रोग कोढ़ जीता जाता है।

सूहि जाति पूतिका श्यामा क्वथितेनेश पल्लवै
जंयेत्यु द्वर्त्त नमष्टा दश कुष्ठान गोमूत्र सं पिष्टौ ॥ ८८ ॥

थूहर चमेली पूतिका (बावची) श्यामा ( ) के पत्तों को गौमूत्र में पीसकर क्वाथ बनाकर लेप करने से १९ प्रकार के कुष्ट (कोढ़) को जीतता है।

लोह रजो रजनि शिला तालार्क क्षीर सी रिभि: पक्वं,
तैलं किलासरिवलं निर्मूल लुंपते विपुलं ॥ ८९ ॥

लोह चूर्ण हल्दी मेनसिल हरताल आक का दूध और सीरी (मोटी डाभ) में पकाया हुआ तेल सम्पूर्ण किलास (छोटे कोढ़) को जड़ से नष्ट करता है।

ॐ कामले ब्रह्मणे सत्य वादिनि भविष्यसि दधि तके विरुपे अंतर कामं कामिले फु: ठ: ठ: ॥

सिद्धेन सहस्त्र जपात् कामिल मंत्रेण मंत्रितैर मुना,
शलिलै: शशिरै विंहित: पानादि: कामलां हरति ॥ ९० ॥

एक हजार जप से सिद्ध किये हुए इस कामिल मंत्र से अभिमंत्रित जल को शिशिर (गिलोय) के द्वारा पीने से कामला (पीलिया) रोग नष्ट हो जाता है।

चूर्णंने निशा धात्र्या: क्षीरेणा च विमिश्रिते प्रगे पीत:,
स्याच्च गुडु ची स्व रस सुपानिनां हित करो नृणां ॥ ९१ ॥

हल्दी और आमले के चूर्ण को दूध में मिलाकर प्रात:काल के समय पीने से तथा गिलोय के स्वरस को पीने से मनुष्यों को कामला रोग में हित होता है।

क्वाथोपि निष्क श्रुंठया द्विनिष्क ताड़ जटायाश्च,
पीतौ हरति दिनादौ सकलान्नपि कामला रोगान् ॥ ९२ ॥

सोंठ एक निष्क (४मासे) ताड़ की जटा दो निष्क (९ मासे) के क्वाथ को प्रात:काल के समय पीने से सब प्रकार के कामला रोग नष्ट हो जाते है।

अजटाया सदा घ्रात: कल्को जयति कामलां,
रसो वा भृंगराजस्य निशिक्तो मूरि मूर्धनि ॥ ९३ ॥

अजटा (भूई आंवला) को सूंघने से भी कमला रोग जीता जाता है अथवा भृगराज (भांगरा) के रस को बार बार सिर पर डालने से भी लाभ होता है।

त्रिफला शतावरी हय गंधा गोक्षुर विड़ालिका मूलैः,
शिवया चूर्णितै र्घृतै मिश्रैः लीठैः क्षयो नश्येत् ॥ ९४ ॥

त्रिफला (हरड़े बहेड़ा आँवला) शतावरी हयगंधा (असगंध) कोखरु विड़ालीका (भूमि कुम्हड़ा विदारी कन्द) शिवा (छोटी हरड़े) के चूर्ण को घृत में मिलाकर चाटने से क्षय रोग नष्ट होता है॥

अमृता विडंग रास्ना दारु वरा व्योष चूर्ण सम तुलितं,
सहसा कासान सर्वान्नाशिता रजः परि हरे लीठ ॥ ९५ ॥

अमृता (गीलोय) बाय विड़ग रास्ना दारु (देवदारु) वरा (पाठ) वरा (त्रिफला हरड़े बहेड़ा आँमला) व्योष (सोंठ मिरच पीपल) के चूर्ण को शक्कर के साथ चाटने से सब प्रकार की खांसी को बराबर मात्रा में लेने से नष्ट करता है।

कुनटी कटु त्रयाभ्यां तुल्याभ्यां मर्क दुग्धपिष्टाभ्यां,
रचितां गुलिका कासानहि नस्ति धूमोपयोगेने ॥ ९६ ॥

मेनसिल कटुत्रय (सोंठ मिरच पीपल) को बराबर लेकर आक के दूध में पीसकर गोली बनावे। इसकी धुंआ पीने से खाँसी दूर होती है।

बदरी दल हरिताल व्योष शिलास्ते करंज रस,
सपिष्टाः गुलकी कृतानि हन्युःकास रुज धूम पानेन ॥ ९७ ॥

बेर के पत्ते हड़ताल व्योष (सोंठ मिरच पीपल) शिला (मेनसिल) को करंज के रस में पीसकर बनाई हुयी गोली के धुंये से खांसी दूर होती है।

गोपी कणा शिलाभिः पिष्टाभिः वर्तयो कृतांः,
कासं हन्युर्धूम निपाना द्विश्व शिलाभ्यां तथा रचितं ॥ ९८ ॥

गोपी (श्यामलता) कणा (पीपल) शिला (मेनसिल) को पीसकर तथा मेनसिल और सोंठ की गोली की बनाई हुयी बत्ती के धुँए को पीने से खांसी दूर होती है।

ॐकिन्नर किं पुरुष गरुड़ गंधर्व यक्ष राक्षस निश्वासोपद्रवं हर पितृ पिशाचाय ठः ठः॥

रौद्रेण सहस्त्र जपात्सिद्धेनानेन वेष्टितं सहसा,
वज्रं साख्यं भूपुर मध्य स्थं स्वाशहृद्भवति ॥ ९९ ॥

एक हजार जप से सिद्ध किये हुए रौद्र मंत्र से पृथ्वी मंडल के बीच में वज्र को घेरने से श्वास दूर हो जाता है।

भक्तं स्वभक्त शिष्टं मंत्रेणानेन मंत्रितं,
मंत्री दद्याद्भुक्तान्नं तत् श्वासी श्वासात् प्रमुच्येत ॥ १०० ॥

मंत्री अपने भोजन से शेष रहे हुए भोजन को इस मंत्र से अभिमंत्रित करके खिला देवे तो रोगी श्वास रोग से छूट जाता है।

रवि दलतांतारगत गर्भपत्रे श्वांत मंत्र मंडमा कंठं,
पीत्वा धर्म्मे देशेष श्वासा विश्वोविनश्यंति ॥ १०१ ॥

आक के पत्ते पर इस मंत्र को उपरोक्त प्रकार से लिखकर धूप में कंठ तक पीवे तो श्वास के सब रोग नष्ट होते हैं।

रंभा कुंद शिरीषाणां कुसुमानि कणामपि,
पिवे ज्येष्टां बुना पिष्ट्वा स्वशनाद्या शितोजनः ॥ १०२ ॥

श्वास रोग से पीड़ित पुरुष केले की जड़ और सिरस के फूलों को और पीपल को ज्येष्टांबु (तंदुलोदक) के साथ पीसकर पीवे।

श्वास काश विनाशार्थमऽशरोत्कदली फलं,
स्तुतं मूत्रे मृता कांडमथवांगारपचितं ॥ १०३ ॥

श्वास कास रोग के परिश्रम को नष्ट करने के लिये केले के फल और अमृता (गिलोय) को मूत्र में भिगोकर अथवा अंगारों पर पकाकर खावे।

कणोष्णा निशा रास्ना मंडगोस्तनजं रजः,
लीठं तैलेन कासानां श्वासानां च निवर्हणं ॥ १०४ ॥

कणा (पीपल) उष्ण (सोंठ) निशा (हल्दी) रास्ना का मंड (सार) और गोरस्तनी (मुनक्का) के चूर्ण को तेल के साथ चाटने से श्वास और खांसी नष्ट होती है।

है हे तिष्ठ तिष्ठ वंधय वंधय वारय वारय निरुद्धं निरुद्धं पूर्ण माणि स्वाहा ॥
वमिं विनाशयेदेष साक्षाज्जाप्यादिना मनुः,
यथा च सुंदरी धाम गल मध्ये विचिंतितं ॥ १०५ ॥

इस सुंदरी धाम मंत्र का जप आदि चिंतवन से गले के बीज में ध्यान करने से यह वमन (उल्टी) रोग का नाश करता है।

एला लवंग वल्कल तमाल दलजं रजो,
घृतोन्मिश्रं लीढंवमिं निहन्याद्विश्व वरा लाज चूर्णं वा ॥ १०६ ॥

इलायची लोंग दालचीनी तमाल पत्र के चूर्ण को घृत में मिलाकर चाटने से अथवा सोंठ (विश्व) वरा (त्रिफला) और लाज चूर्ण (धान की खील) को घृत के साथ चाटने से वमन बंद होती है।

दग्धं वराटिका गेहंमंगारार्भं तदं मंसि,
निर्वापितोत्कृतं पीतं तज्जलं नाशयेद्वमि ॥ १०७ ॥

जली हुयी वराटिका (कौड़ी) को घर के अंगारे के समान लाल करके और उसको पानी में बुझाकर उस जल को पीने से वमन नष्ट होती है।

यंत्रांगे वात रुजा तत्र ध्यातोऽग्नि धाम मध्यस्थः
अचलो ज्वलन स बिंदु प्रभं जनातिंजयत्याशु ॥ १०८ ॥

शरीर के जिस अंग में वात (वायु) की बीमारी हो उस अंग में अग्नि मंडल के तेज के बीच में अचल (क) ज्वलंन (ॐ) और बिंदु (अं) का ध्यान करने से शीघ्र ही वायु का किया हुआ कष्ट दूर होता है।

नाभौ स च वा ध्यातः कास श्वासादिकान्,
जयेद्रोगान कंठे श्लेष्म विकारानुदरे माद्यं हरेदग्नेः ॥ १०९ ॥

उसी का नाभि में ध्यान करने से खांसी और श्वास आदि रोग नष्ट होते हैं। कंठ में ध्यान करने से कफ के विकार दूर होते हैं और उसका पेट में ध्यान करने से वह अग्नि की मंदता (भूख न लगना और अन्न न पचने की शिकायत) दूर होती है।

विकतालीस मधुक राजिकाभिः विलेपनात्,
शामेदुत्पिटिका यष्टिं तिल माषौत्पलैरथः ॥ ११० ॥

चक्र या चक्र (तगर) तालीसपत्र महवा राजिका (राइ) का लेप अथवा यष्टि (मुलहटी) तिल माष (उड़द) उत्पल (कमल) का लेप उत्पटिका रोग (मसूरिका) को शांत करता है।

तैलेन कुनटिकार्य्या भार्गीगो शलिलेन वा,
अति मुक्त त्वगा लिप्ता हन्यादुत्पिटिका रुजः ॥ १११ ॥

कुनटी (मेनसिल) कार्य्या (कारी) भारंगी का तेल अथवा गौमूत्र अथवा अति मुक्तक की छाल का लेप उत्पटिका रोग नष्ट करती है।

नश्येदत्पिटिका तैल पटुग्रा वाजि विद्रुमैः,
इंद्र लुप्तो यथा लुप्तो लांगलि शिफया महुः ॥ ११२ ॥

पटु (पटोल लता) उग्रा (वच) वाजि (असगंध) विद्रुम (मूंगा) से उत्पटिका रोग नष्ट होता है और लांगली(कलिहारी) की जड़ के लेप से इंद्र लुप्त रोग नष्ट होता है । (इंद्र लुप्त रोग में रोम बाल नहीं उगते हैं)

मधुकोत्पल तृण गोपी वृहती मूलाहि केशरैः पिष्टैः
पटसा जेन विलेपः केशानां स्थापनो जननः ॥ ११३ ॥

मधुक (महवा) उत्पल (नीलोफर) तृण (डाभ) गोपी (गोपी चंदन) वृहती (केटली) की जड़ अहिकेशर (नाग केशर) को बकरी के दूध में पीसकर लेप करने से गंज रोग मिटता है और बाल निकल आते हैं।

ॐ वज्र राज कामेश्वरी राज अमुकंशाधि हुं फट ठः ठः॥

मदीरीत्र मिदं सिद्धं शिरो रोग हरं रहः,
त्रिसहस्तस्त्र प्रजापात् स्यात् सिद्धिदां मंत्र वादिनां ॥ ११४ ॥

यह मंत्र मंत्रवादियों को सिद्ध होता है, तीन हजार बार जप करने से सिर के रोग नष्ट होते हैं।

चतुश्शूल समाक्रांतं विलिख्येदिंदुं मंडलं,
तेन्मध्ये तारमन्येषु कोष्टेष्वाप्तमथाष्टसु ॥ ११५ ॥

दृश्य मानमिदं चक्रं चिंत्य मानमिवा मृतं,
शिरो रोगविशेषाणामशेषाणां निवर्हणं ॥ ११६ ॥

चार शूलों से घिरे हुए चंद्र मंडल को लिखे उसके बीच में तार (ॐ) और शेष आठों कोठों में हैं लिखे। इस यंत्र को देखकर इसका अमृत के समान ध्यान करने से सब सिर के रोग नष्ट होतेहैं।

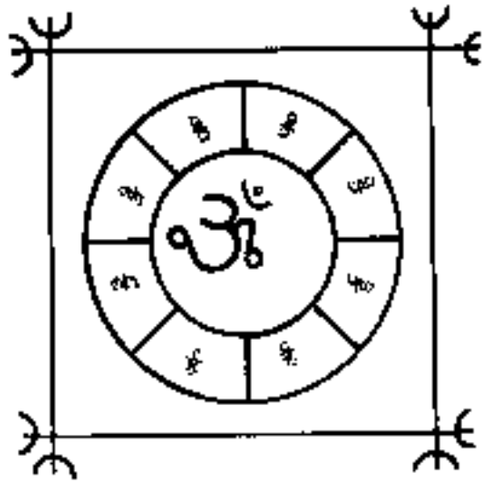

सर्पिषा नसि विन्यस्ते सर्पि भृष्टेसिता सृजिः,
सांतः शिरोर्त्ति स्वेदेंवाः पाद्य स्नानेन मूर्द्धनि ॥ ११७ ॥

भृष्टे सिता (बाबची) को भृष्टे (गिराकर पीसकर) सूंघने से सिर के रोग नष्ट होते हैं और खीर और अन्न का सिर पर स्वेदन करने से शिरोत्ति शांत होती है। (११६ श्लोक का यंत्र यहाँ है)

मस्ति स कस्य हरिद्राया: सूंठया वा रेणुभिः कृता,
गुलिका तैलाक्ता जयति तरां शिरो रुजं धूम पानेन ॥ ११८ ॥

मस्तिष्क (दिमाग) के वास्ते हल्दी सोंठ या रेणुका (संभालू के बीज) के चूर्ण को तिल के तेल में गीली करके बनायी हुयी गोली के धुँए को पीने से सिर के रोग को पूरी तरह से जीत लेता है।

नाम कूट शशांकाद्रिर्वेष्टितं भूपुरस्थितं,
हस्ते चूर्णेन सं लिख्य दर्शयेऽक्षिरोगजित् ॥ ११९ ॥

रोगी के नाम को कूट (क्ष) शशांक (चंद्रमा व) चंद्र मंड़ल और पृथ्वी मंड़ल से वेष्टित करके हाथ पर चूने से लिखकर रोगी को दिखलावे तो आंख के रोग जीत जाते है।

स्तंभयति नेत्र पीड़ां कुलिश हतो लांत यु क्त कष चूर्णः,
वर कुरुते वश्यं न्यस्तं चित्स्थापये न्नयने ॥ १२० ॥

वज्र से घिरा हुआ लांत (व) को कष अक्षरों से घेरने से नेत्र की पीड़ा का स्तंभन करता है तथा इसका नेत्र में स्थापन करने से श्रेष्ठ वशीकरण करता है।

घृत पिष्टाभ्यां कांजिक पिष्टाभ्यां वस्त्र शकल बद्धाभ्यां,
अश्वोत नमक्षि रुजं जयति तरां पहुतिरीटाभ्यां ॥ १२१ ॥

तिरित (लोंग) को एक साबुत कपड़े से बांधकर पहले घृत फिर काजी से पीसकर अपनी आंखों में अंजन करने से आंखों के रोगों को जीतता है।

वर्त्याकतूल कृतया शशांक चूर्ण प्रपूरितो दरया,
दीपा दीप्तादाशाश्रुषणाति मषिघ्नशो रोगं ता ॥ १२२ ॥

आक की रुई के बीच में शशांक (कपूर) के चूर्ण को भर बनाई हुयी बत्ती को जलाने पर काजल उपाइकर नेत्रों में लगाने से आंख के रोग दूर होते हैं।

यत्रागतासि चंद्रेतेत विद्यं गच्छ सुवृते ठः ठः ॥

त्रि सहस्त्र जपात्सिद्धो मंत्रो दुर्गादि दैवतः,
असौ ध्यानादिना कुर्य्यान्नेत्र कील विलोपनं ॥ १२३ ॥

यह दुर्गा देवता का मंत्र तीन हजार जप से सिद्ध होता है। इसका ध्यान आदि करने से यह आंखों की कील (फला) को खो देता है।

अप हरति नयन पुष्पं करंज बीजेन निर्मिता वटिका,
द्विज वृक्ष कुसुम निर्यासमिता सप्त रात्रिका ॥ १२४ ॥

करंज के बीजों को पीसकर द्विज वृक्ष के फूलों के रस (द्विज वृक्ष = ब्रह्म वृक्ष पलाश) (द्विज वृक्ष=ब्रह्मवृक्ष), की बनाई बत्ती को आंखों में रस को लगाने से आंख का फूला सात रोज में नष्ट होता है।

नक्तांध्यघ्नो दृगाक्तः स्यात् स कृष्णारगो सकृद्रसोः,
द्रोण पुष्पी दलांभो वा मिश्रितं तिल वंधुभिः ॥ १२५ ॥

कृष्णा (काली मिरच) गोसकृत (गोबर) के रस को आंख में लगावे अथवा द्रोणपुष्पी (गोमा) के पत्तों के रस को तिल बधु ( ) के साथ मिलाकर आंखो में लगाने से रतौंधी मिटती है।

हरितालं वचा कुष्टं चूर्णं पीत वटच्छदं अपि पिष्ट्वा,
मुखंलिंपेद्व्यंग लापन लोलुपः ॥ १२६ ॥

हरताल वच कूठ और वड़ के पीले पत्तों को पीसकर मुख पर लेप करने से व्यंग (मुहांसे) दूर होतेहैं।

इंद्र वल्ली दलैर्लेपः संपूर्ण व्यंग नाशनः स्यान्मनः,
शिलया द्वा मातुलिंगांबु पिष्टया ॥ १२७ ॥

इन्द्र वल्ली (इंद्रायण) के पत्तो का पूरा लेप अथवा मातुलिंग (बिजोरा) के रस में पिसी हुयी मेनसिल के लेप से व्यंग नष्ट होता है।

लेपात् कृष्ण तिल श्वेत राजिक्षीर द्विजीरकैः,
सक्षीरया विशालाया स्त्वचा वा व्यंग नाशिनी ॥ १२८ ॥

काले तिल सफेद सरसौं दूध दोनाजी रे क्षीरया (काकोली) विशाला(इंद्रायण) त्वचा (तज दालचीनी) के लेप से व्यंग नष्ट होता है।

आजेन पयसा पिष्टामारणयां तुलसी शिफां,
आलिप्योद्वर्त्तयेद्वक्त्रं व्यंगंलो सुमनाजन: ॥ १२९ ॥

आरणयां तुलसी (वन तुलसी = नगद बावची) की जड़ को बकरी के दूध में पीसकर मुख पर लेप करने से व्यंग दूर हो जाता है।

पूतीकवल्काक्ष मन: शिलाभिर्म्मन:
शिला ताल वटछदैर्वा,
शिलाज्य लुंगी पशु विट जलै: वां
व्यंगं विनश्यैत पिटिकाश्च लेपात् ॥ १३० ॥

पूतिक (करंज) वलका (असगंध) मेनसिला अथवा मेनसिल ताल (हड़ताल) वड़ के पत्ते अथवा मेनसिल धृत लंगी (मातु लिंगी बिजोरा) पशुटि (गोबर) पशुजल (गोमूत्र) के लेप से व्यंग और पिटिका (मसूरिका चेचक) नष्ट होती है।

मूलगं कदली गुंजन युगलाश्कल सुन कंद संभूतं,
अंबु निहंति कटूष्णां कर्ण रुजां कर्ण पूर्णत: ॥ १३१ ॥

मूलकं (मूली) कदली (केला) गुंजन युगला (दोनों चिरमटी) श्कलसुन्कंद (श्कपोत्या) लसन का रस कान में डालने से कान के रोग दूर होते है।

अभि नव दाड़िम कुसुम स्वरसो वा चूर्ण बीज सलिलं वा,
दुर्वाभो वा नस्याग्ना सा रक्तं निहंत्याशु ॥ १३२ ॥

दाड़िम (अनार) के नये फूलों का रस या चूर्ण या बीजों का पानी या दुर्बा (दूब) के जल को सूंघने से या नासा रक्त (नाक से बहने वाली नकसीर) को शीघ्र ही नष्ट कर देती है।

सह सूंठी पूंग फलै: खारी गोमूत्र नालिकेर जलै:,
क्वथितैरधि जिह्वादीन कवलो विहित: प्रणाशयति ॥ १३३ ॥

सोंठ के साथ सुपारी, खारी नमक, गाय का मूत्र, नारियल के जल के क्वाथ को जीभ के ऊपर मुँह में भरने से जिह्वा आदि के रोग नष्ट होते है।

पथ्या कल्को लेप: शरपुंखी मूल साधिते क्वाथो,
पक्वं तैल हन्या दृशन रुजांमा शु शूलाद्या ॥ १३४ ॥

पथ्या (हरड़े) के कल्क और सरफोका की जड़ के क्वाथ में पकाये हुए तेल के लेप से दांतों के रोग और दर्द आदि को शीघ्र ही दूर कर देता है।

दग्धार्क पत्र भूति महीषी नवनीत मिश्रिता लिप्ता,
दशन छद जातानां रोगानां नाशयेन्निकरं ॥ १३५ ॥

जले हुए आक के पत्तों की भस्मी को भैंस के मक्खन से मिलाकर लेप करने से होंठों के सभी रोग नष्ट होते हैं।

हिमानी विनिपातेन संजातमधरे व्रणं.
निशि प्रशमयेन्नाभि तैलेन परि पूरिता ॥ १३६ ॥

बर्फ के गिरने से उत्पन्न हुये नीचे के होंठ के घाव रात्रि में नाभि में तेल भर लेने से अच्छे हो जाते हैं।

रुग वक्रो शीर कांतोग्रा गोक्षीरोत्पल चंदनैः,
कुच रोगावले पानां विलेपाद्यां विलोपकः ॥ १३७ ॥

रुक(कूठ) वक्रा(काकड़ासींगी) उशीर (खस) कांता (सफेद धूप) उग्रा (अजमोद) गोक्षीर (गाय का दूध) उत्पल (नीलोफर) चंदन के लेप से कुचों (स्तन) (बोबे) के सब रोग दूर हो जाते हैं।

खरा तपे बहुन्वारान स्नूही क्षीरेण भाविता,
महोदर महारोगं कृष्णाभ्य वहरेत्तरां ॥ १३८ ॥

काली मिरच को थूहर के दूध में बहुत बार भावना देकर तेज आंच पर करने से और सेवन करने से पेट के महोदर नाम का महा रोग नष्ट हो जाता है।

बिल्व दीपकयोः प्रातः पीता स्तक्रेण रेणवः,
गुल्मं सं हरति क्षीरैः शिफा पोनर्नवा तथा ॥ १३९ ॥

बिल्व दीपक (अजमोद) के रेणु(धूलि) को प्रातःकाल मट्ठे के साथ अथवा पुनर्नवा (साठी) की जड़ को दूध के साथ लेने से गुल्म (तिल्ली) नष्ट होती है।

सं चूर्णतः पिबेत् प्रातःश्चित्रकं हिंगु दीप्पकं,
सुवर्च्चिकां च तक्रेण तस्य गुल्मः प्रणश्यति ॥ १४० ॥

जो चित्रक (चीता बूंटी) हींग दीपक (अजमोद) सुवर्चिका (काला नमक) के चुर्ण को प्रातःकाल मट्ठे के साथ पीता है उसकी गुल्म (तिल्ली) नष्ट हो जाती है।

प्लवः व्योमन मेघाद्या सूक्तं साजित स्ततः,
पूज्यो आर्यः स विभुश्चंद्रो मंत्रो लक्ष प्रजाप्येवतः ॥ १४१ ॥

सिद्धौ सौ स्यात् सर्प्पिः कपिलाद्या स्तेन मंत्रितं,
त्रिशतां पीतं निष्टह गुल्म रुचि हृद्रोग जरा गृहणिकादि हरं ॥ १४२ ॥

प्लव व्योम (ह) मेघा सहित इमजित (इ) पूज्य (त) आर्य (ण) विभु(ए) चंद्रो (ल्लौं) यह मंत्र एक लाख जप से सिद्ध होता है। इस मंत्र के सिद्ध हो जाने पर इस मंत्र से कपिल गाय के घृत को तीन सौ बार मंत्रित करके पीने से वह गुल्म (तिल्ली) अरुचि हृदय के रोग बुढ़ापा संग्रहणी आदि रोगों को नष्ट करता है ।

तज्जप्तं चुलुकांभः प्रातः पीतं समस्त रोग हरं,
तेनाभिमंत्र्य दद्यादौषधमपि सर्व रोगेषु ॥ १४३ ॥

एक चुल्लु भर पानी को इस मंत्र ने अभिमंत्रित करके प्रातःकाल के समय पीने से सब रोग नष्ट हो जाते हैं। इस मंत्र से मंत्रित करके देने से यह सभी रोगों की औषधि है।

सैंधव स्नुही मध्यस्थं दग्धमंगार वन्हिना,
सलिलेन कवोष्णेन पिबेत् शूलाभि पीड़ितं ॥ १४४ ॥

सैंधव नमक को थूहर के दूध में भावना देकर खूब तेज आंचवाले अंगारों की आग पर पकाकर थोड़े गरम पानी के साथ पीने से पेट का दर्द दूर हो जाता है।

पटु हिंगु कणा पथ्या रुपकै र्दुग्रहोन्मिता,
उन्मीलयंति शूलार्त्तिं पीता कोष्णेन वारिणा ॥ १४५ ॥

पटु (पटोल लता) हींग कणा (पीपल) पथ्या (हरड़े) रुपक ( ) दुर्ग्रह (चिड़चिटा) को समान भाग पर पकाकर थोड़े गरम पानी के साथ पीने से दर्द दूर हो जाता है।

ॐभिंद भिंदधमधम कंपय कंपय हुं फट ठः ठः ॥
ॐ वरं करे करे वरं विष करे ठः ठः॥
त्रि सहस्त्र जाप्य सिद्धौ मंत्रो वैश्वानरस्य पृथगतौ,
कथितौ प्रथमो जीर्ण हरति परो दीपते महदग्निं ॥ १४६ ॥

यह दोनों वैश्वानर मंत्र पृथक पृथक तीन हजार जाप करने से सिद्ध होते हैं। इनमें पहला बदहजमी दूर करता है तथा दूसरा बड़ी भारी मंद अग्नि दूर करता है ।

ॐ बष्टिं लि ठः ठः॥

मंत्रो हव्याशस्यायं त्रिलक्ष जप साधितः,
अपानो पान मुद्राभ्यां छर्दितीसार हृद्भवेत ॥ १४७ ॥

इस हव्यासन मंत्र को अपान और उपान मुद्रा से तीन लाख जप कर सिद्ध करने से यह वमन और अतिसार को दूर करता है।

चिंचा बीज त्वचा विश्वं दीप्पकं सैंधवं च,
यः पिबेत् तक्रेण पिष्टानि सोतीसारं जयेत् क्षणात् ॥ १४८ ॥

जो पुरुष इमली के बीज दालचीनी सोंठ दीप्पक (अजवाइन) और सेधे नमक को पीसकर मट्ठे के साथ पीता है वह अतिसार को क्षणमात्र में जीत लेता है।

आम्रातक रसे पक्वं पूराणैः शालि तंदुलैः,
उदनं सेवितं प्रातः सर्वातिसान नाशनं ॥ १४९ ॥

आम्रातक (अंबोड़) के रस में पकाये हुये पुराने शाली चावलों की भात को प्रातःकाल के समय खाने से दस्त (अतिसार) बंद हो जाते हैं।

विश्व कृष्णे कवोष्णेन कल्किते वारिणा पिबेत्,
विशुचि कांतः कुर्यात् वा नश्यं भृंगदलांबुना ॥ १५० ॥

विश्व (सोंठ) कृष्ण (काली मिरच) के कल्क को थोड़ा गरम पानी के साथ पीने से अथवा भृंग (भंगराज भांगरा) के पत्तों के रस का नस्य लेने से विशूचिका नष्ट हो जाती है।

तंदुलोदक पिष्टेन ताल मूलेन लेपनं,
नाभौ प्रकल्पितं सद्यो निरसेत विशूचिकां ॥ १५१ ॥

तंदुलोदक (चावलों के पानी) में पिसी हुयी ताड़ की जड़ का नाभि में लेप करने से विशूचिका तुरन्त नष्ट हो जाती है।

ॐ चले चल चित्ते चपले चपल चित्तेः रेतः स्तंभय स्तंभय ठः ठः॥
सिद्धेय त्रिसहस्त्र जपात् मंत्रोऽयं तेन शर्करा:,
सप्त जप्त्वा श्रीरांतस्था योनि स्थां रुंधते प्रदरं ॥ १५२ ॥

यह मंत्र तीन हजार जप करने से सिद्ध होता है। इस मंत्र से शक्कर की ७ कंकरियों को सात बार जपकर अभिमंत्रित करके योनि में रखने से प्रदर रुक जाता है।

धात्र्यास्थि तंदुल जलैः पीतं हन्याद् सृग्दरं,
पीतां सिताबुना पिष्टा धात्री वा सृग्दरं पिबेत् ॥ १५३ ॥

आंवले की बीजों को चावलों के पानी के साथ पीने से अथवा आंवलों को पीसकर ठण्ड़े जल के साथ पीने से भी अरट्गदर (प्रदर) रोग नष्ट होता है। (अरट=रक्त)

मूत्र कृच्छं हरेत् पीता क्षीरेण शबरी शिफा,
अजा क्षीरेण सं पिष्टा पीता नीली जटाथवा ॥ १५४ ॥

अथवा नीली जटा को बकरी के दूध से पीसकर पीने से अथवा शवरी जटा [(शर्वरी = हल्दी) (शावर = लोंग) (शाबरी = कोंच की फली)] को पीसकर पीने से भी मूत्र कृच्छ नष्ट होता है।

क्वाथो वर्ण मूलस्य तत्कल्केन समन्वितः,
पीतोनिपातयेत्सद्यः शर्क्करामस्मरीमपि ॥ १५५ ॥

वर्णमूल (केसर की जड़) के क्वाथ उसके कल्क के साथ पीने से वह पथरी (पथर की शकरी) को तुरन्त निकालकर गिरा देती है।

लिप्तं साज्यं वरा भस्म लिंग लूति विनाशनं,
करवीरस्य मूलं वा लिप्त प्रभाज्यैन कल्कितं ॥ १५६ ॥

वरा (पाठ) की भस्म को घृत के साथ लेप करने से लिंग की पूति (खुजली) मिटती है अथवा कनेर की जड़ के कल्क को घृत के साथ लेप करने से भी खुजली मिटती है।

काप्पासस्यास्थिनिः पिष्टे साधितं तिल संभवं,
लिंग लूति विकाराणां प्रतिकारो विलेपनात् ॥ १५७ ॥

कपास के बिनोले की मीजी को तिल के तेल में पीसकर लेप करने से लिंग की लूति (खाज) का विकार नष्ट होता है।

यक्ष द्रुं शमी इंद्र वल्लि पटुं च तक्रेण वारिभि र्वोषणैः,
पिष्टवा पिवेद्विनादौ वृद्धया मुष्कस्य वाधितो मनुजः ॥ १५८ ॥

यक्ष द्रुम (वड़) शमी (खेजड़ा) इंद्र वल्ली (इंद्रायण) पटु (परवल) को मट्ठे या गरम जल से पीसकर प्रातःकाल के समय पीने से अंडकोषकी वृद्धि और मुष्क रोग से पीड़ित मनुष्य पीवे।

ग्रंथिक शिफा कणान्वित कृमि रिपु

कल्काक्तेशीषितोदर कुंभी तकं,
द्वि पक्ष मुषितं गृहणीहत नाम पांडू रोगापहरं ॥ १५९ ॥

ग्रंथिक (पूपलामूल)शिफा (जड़ पीपल की) कणा (पीपल) ऽग्नि (चित्रक) कृमिरिपु (बायविडंग) के कल्क को एक घड़े में मट्ठे के साथ तो पक्ष तक रखकर सुखाकर सेवन करने से गृहणी और पांडु रोग नष्ट होता है।

तार्क्ष्यं द्विनिशातिक्ष्णा श्वेता ज्योतिष्मतिरिष्ट.
दलं मंजिष्टां वा लिपेंद भंगदरे मूत्र पिष्टानि ॥ १६० ॥

तार्क्ष्य(रसोत) द्विनिशा (दोनों हल्दी और दारु हल्दी) तीक्ष्णा (वच) श्वेता (सफेद दोब) ज्योतिष्मति (मालकांगनी) रिष्ट दल (अरीठे के पत्ते) मंजीठ को मूत्र में पीसकर भंगदर में लेप करे।

क्षीरं कुरु ठोरा स्फोतादर्क ध्वान स्वरं घृगं,
पूतिधायं व्रणं हंति लेपनादथवा भया ॥ १६१ ॥

क्षरि (दूध) कुरु (कटेली) ठोरा (ठोल समुद्रवृक्ष) स्फोता (अनंत मूल) अर्क (आक) ध्वान स्वरं (कौवे के शब्द) को रखने अथवा हरड़े का लेप घाव को पूर्णतया भर देता है।

स्नुही गजार्क पय: सिक्थ स्तैल सैंधव लेपनात्,
सोहे त्सहश्रधाभिन्नमपि पाद तलं क्षणात् ॥ १६२ ॥

स्नुही (थूहर) गज (गजपीपल) आक का दूध सिक्थ (मोम) तेल सेंधा नमक के लेप से हजार प्रकार से फटा हुआ पाँव उसी क्षण ठीक हो जाता है।

विषादि भूज्जरं बुष्कं केतकी दल भस्मना,
चूर्णाज्य पटु युक्तेन कंस घृष्टेन लेपनं ॥ १६३ ॥

केतकी के पत्तों की राख कस माक्षिक में घिसे हुए घृत सहित पटु (पटोल लता) के चूर्ण के लेप से विपादिका (पैरों के कोढ़) को लाभ होता है।

पटुतिक्ताम्र निर्यास स्नुगार्क्का जं पयो युतं,
विपादिकाम लांबुत्थं माहिषं हंति तक्रजं ॥ १६४ ॥

पटु (पटोल लता) तिक्ताम्र (खट्टा आम) का निर्यास (रस या गोंद) स्नुगार्क्का पय (थोहर और आक का दूध) और तुंबी में रखा हुआ भैंस की छाछ विपादिका (पैरों के कोढ़) से उत्पन्न हुए कष्ट को दूर करता है।

हंतो विपादिं कटुंत्वगत्व क्यत्र क्षारं संयुते,
सज्जं माहिष तक्रोत्थ लेपादा तप तापिते ॥ १६५ ॥

कटुक (कुड़ा) की छाल और पत्ते नमक सहित सज्जी और भैंस के मट्ठे का लेप करके आग से सेंकने से पैरों का कोढ़ ठीक होता है।

अरलु दल कल्क भसितं माहिषं नवनीतमाम्रनिर्य्यासः,
तुंबी फल निहितै स्तैलैंपो यद्वाधिकां हंति ॥ १६६ ॥

अरलु के पत्तों का कल्क में मिलाये हुए भैंस के मक्खन और आम के गोंद को तुंबी में रखकर लेप करने से पैरों का कोढ़ दूर होता है।

मूलेन स्व रसेन च पुष्प लताया विपाचितं तैलं,
आलेपं पद तलयो र्विपादिकां प्रशमयेत् चिरात् ॥ १६७ ॥

पुष्पलता की जड़ और उसके स्वरस में पकाये हुए तेल को पाँव के तलवों पर लेप करने से विपादिका शांत होती है।

नस्यं सैंधव यष्ट्याऽष्ट व्याधी फल रसैःकृतं,
प्रागेवनिद्रा मुद्रिक्तामप्य या कर्तुनीश्वरा ॥ १६८ ॥

सैंधा नमक मुलहटी से आठ गुने व्याधी (कटेली छोटी) के फल के रस से सिद्ध किया हुआ नस्य प्रातः की निद्रा को दूर करता हैं।

मरिचेन तुरंगस्य लालया मक्षिकेन च,
स्याद्वर्त्तनं नेत्रयो निद्रोक्त भंजन मंजनं ॥ १६९ ॥

काली मिरच और घोड़े की लार और शहद का आंखों में अंजन लगाने से नींद दूर हो जाती है।

शिफां वायस जंघाया: शिर साधारयेन्नरः,
प्रनष्ट निद्रोय स्तस्य भवे निद्रागमः क्षणात् ॥ १७० ॥

यदि कोई पुरुष काक जंघा की जड़ को सिर पर रख लेवे तो उचटी हुई निंद्रा तुरन्त आ जाती है।

ॐह्रां क्लीं हुं क्लीं ह्रां हुं क्लीं ह्स्क्लीं क्लां ठः ठः ॥
अष्ट चत्वारिंश दिनानि संख्या सु नित्यमषेमनुः,
सिद्धस्त्रि सहस्र जपादिना भवेत् सर्व रोग हरेः ॥ १७१ ॥

अभिमंत्रितमेतेन वितेरद्विक्षमौषधं,
मंत्री विश्वेषु रोगेषु वांछन्नातुर रक्षणं ॥ १७२ ॥

इस मंत्र का अड़तालीस दिन तक प्रतिदिन संध्या के समय तीन हजार जप करके सिद्ध करने से यह सब रोगों को नष्ट करता है। मंत्री इस मंत्र से अभिमंत्रित की हुई सब औषधियों को (सोंठ को) देवे तो यह मंत्र सभी रोगों से दुखी पुरुष की रक्षा करता है।

सहस्र रश्मिरादित्योऽग्निभूः स्वाहेति असौ मनुः,
सहस्र त्रय जाप्येन सं सिद्धिमुपगच्छति ॥ १७३ ॥

एक पत्रे विलिखितः कंठे बद्धोभि रक्षति गाः,
सर्वेभ्यो पिरोगेभ्यो मारिभ्यश्चोतर तो पि ध ॥ १७४ ॥
ॐसहश्र रश्मि आदित्याऽग्नि भूः स्वाहा ॥

यह मंत्र तीन हजार जप से सिद्ध होता है। इस मंत्र को अथवा सूर्य लिखकर या (उसके बाहर अग्नि मंडल और पृथ्वी मंडल लिखकर) एक पत्ते पर लिखकर गाय के गले में बांधने से यह सब रोगों बीमारी और अन्य कष्टों से रक्षा करता है।

वामाष्ट मातृ परिपालयति ठः ठः त्योष मातृका मंत्रः,
त्रि सहस्र रुप जाप्पान्मंत्र विदां सिद्धिमुपयाति ॥ १७५ ॥

यह मतृका मंत्र तीन हजार जप से मंत्रियों को सिद्ध होता है।

कार स्कर मय घंटोदर लिखितो मंत्र एष गो कंठ,
बद्धो उधीते रज्वा गोमारि भीति मपहरति ॥ १७६ ॥

इस मंत्र को कारस्कर ( ) वृक्ष के घंटी में लिखकर गाय के कंठ में रस्सी से बांधने से यह गायों के सब प्राकार के भयों से रक्षा करता है।

ॐनमो भगवते वज्र हुंकार दर्शनाय चुलु चुलु मिलि मिलि मेलि मेलि सेलि सेलि गोमारि वज्र हुं फट अस्मिन् ग्रामे गोकुलस्य रक्षां कुरु कुरु ठः ठः॥

सहस्र जप सिद्धोयं रोद्रो विलिखितो मनुः,
पत्रादौ गोर्गले वद्धस्तां मा पद्म्योऽभि रक्षति ॥ १७७ ॥

एक हजार जप से सिद्ध किया हुआ यह मंत्र एक पत्ते पर लिखकर गाय के गले में बांधने से यह उनकी आपदाओं से रक्षा करता है।

समूल पल्लवा तिक्ता लांबुर्वद्धवा गले गवां,
अचिरेणैव कालेन हन्यात्सकल मामयं ॥ १७८ ॥

जड़ और पत्तों सहित तिक्त (कड़वी) तूंबी को गाय के गले में बांधने से यह थोड़े ही समय में सब रोगों को नष्ट कर देती है।

गजस्य मूत्रं पीतं वा सिक्तं वा नाशयेदगवां,
उपसर्गं समरकं गोष्ट स्थापितमस्थि वा ॥ १७९ ॥

हाथी के मूत्र को पीने से अथवा उसमें भिगोये जाने से अथवा उसकी हड्डी को बांधने से वह गायों की सब उपसर्गों से रक्षा करता है।

मार्ग मांसी पुरो शीर नृपराज घृतःकृतः धूपः,
सगोमेदैर्गोष्टे सुरभीणां ज्वरं हरेत् ॥ १८० ॥

मार्ग (चिड़चिटा) मांसी (जटामांसी) पुरा (गूगल) उशीर(खस) नृपराज (ऋषभक) सफेद सरसों घी और गोबर से की हुई धूप गायों के समूह में गायों के ज्वर को दूर करती है।

इति विनिगदितानयान् दोष जातंक भेदान्,
प्रति विविधि चिकित्सां तां विजानन् नरेंद्रः ॥ १८१ ॥

स्वस्वम परमपि रक्षेदामयोपद्रवेभ्य,
त्रिभुवन महनीयं सास्वतं याति सौख्यं ॥ १८२ ॥

इस प्रकार कहे हुए दोषों से उत्पन्न होनेवाले रोगों की अनेक प्रकार की चिकित्सा को जानता हुआ उत्तम पुरुष अपनी और दूसरो की रोगों से और रोगों के उपद्रवों से रक्षा करता हुआ लोक में कीर्ति को पाकर अनन्त सुख को पाता है।

इति

अथ कृत्रिम रोगानां प्रतिकारः प्रवक्ष्यते,
बुध्वामरण देशीयान् पापानुपदिशंतियान्, ॥ १ ॥

अब पाप रूप मरण धर्मवाले बनावटी रोगों को जानकर अब उनकी चिकित्सा का वर्णन किया जाता है।

ज्वरोन्मादि रोगाणां महंती तापशा यदां,
सर्वांगणिकृतीनां च वक्ष्ये मोक्षामिह क्रमात् ॥ २ ॥

ज्वर उन्माद आदि रोगों वाली सब अंगों में विकार करने वाली आपदा के मोक्ष का वर्णन अब क्रम से किया जाएगा।

चंडेश्वर चंड कुठारेण हीं गृह्ण मारय मारय हुं फट् घे घे।

चंडेश्वराय हो मांतं सं जपेद्विनद्योदिकं,
सहस्र दशकं मंत्री पूर्व मारुण पुष्पकैः ॥ ३ ॥

पहले मंत्री उपरोक्त मंत्र चंडेश्वरी की आदि में ॐ और अंत में स्वाहा लगाकर इसका लाल फूलों से दस हजार जाप करे।

ब्राह्मण मस्तक केशैः कृत्वा रज्जुं तयानर कपालं,
आवेष्टय साध्य देहो द्वर्त्तन मल केशैः पाद रज्जा ॥ ४ ॥

मनुजास्थि चूर्ण मिश्रं कृत्वा प्रेतालये विनिक्षिप्तं,
ज्वरयति मंत्र स्मरणात्सप्ताहादस्थि मथनेन ॥ ५ ॥

ब्राह्मण के सिर के बालों से रस्सी बनाकर उससे एक मनुष्य की खोपड़ी को लपेटकर साध्य पुरुष के उबटन मल केश और पांवों के नीचे की धूल और मनुष्य की हड्डी के चूर्ण को मिलाकर इन सबके चूर्ण को मिलाकर श्मशान में रखकर (गाड़कर) और सात दिन तक मंत्र का स्मरण करते हुए हड्डी को मलने से शत्रु को ज्वर हो जाता है।

ॐनमो भगवते रुद्राय श्मशान वासिने खड्वांगहमरुक हस्ताय नृत्य प्रियाय ह ह ह अदहसाय मुरु प्रवेशाय घुनु घुनु कंपय कंपय ज्वरेणा वेशय आवेशय फट घे घे ॥

आलिप्यते सृग पस्तस्य भीमोर्वस्ना कुजं बुधः,
कृष्णाष्टमी चतुर्देश्यां न् मृतस्य धितें धनात् ॥ ६ ॥

मंगलवार बुधवार कृष्ण अष्टमी अथवा चतुर्दशी को मरे हुए पुरुष का चिता में से खून रुपी जल लेवे और असृज (खून) से लीपकर कपड़ों को भयानक बनाये।

याम्यदिक ज्वालिता दत्ताग्निर्वाप्या सृजि निक्षिपेत्,
अभ्यर्च्च्य तेन गंधाद्यैर्यतेन यथाविधि ॥७॥

दक्षिण दिशा की जलती हुई चिता को बुझाकर उससे रक्त निकाले फिर विधिपूर्वक गंध आदि से पूजन करे।

भूत द्रु फलके नाम शत्रो स्तिथ्यो स्तयो लिखेत्,
आश्रित्य दक्षिणा मूर्तिं वलिदान पुरस्सरं ॥८॥

भूत द्रु (ल्हसेव) (वहेड़ा) के तख्ती पर दक्षिणा मूर्ति का बलिदान करके शत्रु का नाम तिथियों सहित लिखे।

उपेक्ष्यामुं जपेन्मंत्रं शत्रोः स्याद्दुस्सहो ज्वरः,
माज्जनान्नाम वर्णानां स्वस्थः स्यात्स दिने दिने ॥९॥

फिर उस तख्ती की उपेक्षा करके मंत्री उपरोक्त मंत्र को जपे तो शत्रु को अत्यन्त कठिन ज्वर हो जाएगा उस तख्ती पर से नाम के अक्षरों को मिटा देने से शत्रु दिन प्रतिदिन स्वस्थ होता जाएगा।

आलिख्य वृश्चिके नोपोषित कृक वाकु पक्षि दहनेन,
अंगुष्टांगुल प्रमाणं भूत वपुर्हं निंबं काष्ट कृतं ॥१०॥

नीम की लकड़ी पर वृश्चिक (विछवा घास) से उपोषित (उपवास किये हुए) कृकवाकु (मोर) के पंखों को जला करके राख से आठ अंगुल लम्बा भूत का शरीर लिखकर उसमें साध्या का नाम लिखे।

तस्मिन् साध्यस्य लिखेदभिधानं सज्वरेण सहसैव,
पीडा स्तस्य तु शमनं नामाक्षरमार्ज्जनं जनयेत् ॥११॥

तो उसको उसी समय ज्वर की पीड़ा हो जाए और उसके नाम के अक्षरों को मिटा देने से वह पीड़ा शांत हो जाती है।

थूकारि पिच्छेन कला तृतीयश्मशान वस्त्रे लिखितो नरेण,
शवालयां गारक कानकाभ्यां ज्वरो करोत्येव शवालयस्थः ॥१२॥

यदि कोई पुरुष धूकारि (कौए) की पूँछ से श्मशान के कपड़े पर अंगोर (कोयले) और कनक (धतूरे) के रस से तीसरी कला (इ) को लिखकर श्मशान में गाड़ दे (रख देवे) तो जब तक वह यहाँ गड़ी रहे तब तक ज्वर रहता है।

कला चतुर्थकस्यांतनमिः प्रेत पटे लिखेत
श्मशानांगर धत्तूर रसेना शुभ वेतसा ॥ १३ ॥

प्रेतालये निधातव्यं लेखिन्या काक पक्षया,
प्रेत ज्वरेण गृह्णाति मोक्षः स्यादु धृते सति ॥ १४ ॥

श्मशान के कपड़े पर श्मशान के अंगारे (कोयले) और धतूरे के रस से अशुभ बेला से चौथी कला (ई) के अन्दर नाम लिखे उसको कौए की पूंछ की कलम से लिखकर श्मशान में गाढ़ देवे तो शत्रु को ज्वर होगा यदि उसको उखाड़ लिया जाए तो शत्रु अच्छा हो जाता है।

ॐ ह्रीं घ्रीं विकृताानन हुं शत्रु न्नाशय नाशय स्तंभय स्तंभय हुं फट ठः ठः ॥

त्रि सहस्र जाप्य सिद्धं कालीं मंत्रं जपेद्रिपु देशात्,
वातुर्थितो ज्वरः स्यात् शूलार्तिर्वा रिपौः सद्यः ॥ १५ ॥

इस काली मंत्र का यदि तीन हजार जप से सिद्ध करके शत्रु के उद्देश्य से जपे तो शत्रु को तुरन्त ही चोथिया बुखार या दर्द का कष्ट होगा।

नाम प्रयोजन युतं खनं तु गैरिक प्रतिमां,
अस्थी कृत्या विद्धाम सृग्धरो भवति दुस्साध्यः ॥ १६ ॥

यदि साध्या का नाम और प्रयोजन सहित गेरिक (गेरु) की प्रतिमा बनाकर उसको मिलाकर बींध दें तो उसको भयंकर रक्त बहने लगता है।

अमुकाभंगमित्या सीत वद्धामित्यपि च सार्द्धमेतेन,
मंत्रेण जपन प्रतिमां साध्याया विरचिता भूत्या ॥ १७ ॥

इस मंत्र को जपता हुआ साध्य स्त्री की मूर्ति राख से बनाए।

विदधीत मंत्र वादी वद्ध भगां रक्तवर्णसूत्रेण,
सहसैव भवेद्वद्ध छिद्र स्मर मंदिरं तस्याः ॥ १८ ॥

फिर मंत्रवादी उस मूर्ति की योनि प्रदेश को लाल रंग के धागे से बांध देवे तो तुरन्त ही उस स्त्री की योनि से भी रक्त निकलने लगे।

गेरिक मर्या: शत्रो: प्रतिकृत्यायत्र तेन मंत्रेण,
अंगे कीलं निखनेत् तत्स्यात्स व्याधि हीनां वा ॥ १९ ॥

गेरिक (गेरु) की बनी हुई शत्रु की मूर्ति के अंग में उपरोक्त मंत्र से जहाँ भी कील ठोके वही उसके रोग लग जाता है अथवा वह अंग ही कट पड़ता है।

पिचुमदं लवणा राजी गृह धूमै: प्रेत खर्प्परे लिखितं,
नामौंकारोदरगं द्वारस्थं शत्रु ताप करं ॥ २० ॥

नीम (पीचुमदं) लवणा राजी(राई) घर का घुमसा से स्मशान के खप्पर पर ॐकार के बीच में शत्रु का नाम लिखकर दरवाजे पर रखे तो शत्रु को ज्वर होगा।

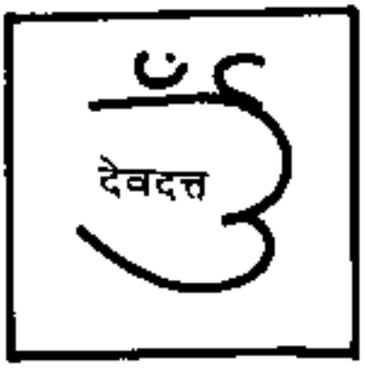

रेफस्थ वज्र मध्ये साध्यं तद्वन्हि वायु पुरस्थं,
उन्मत्त विष विलेख्यं पत्रे संताप कृत तप्तं ॥ २१ ॥

रेफ (रकार) के अन्दर वज्र के बीच में साध्य का नाम लिखे और उसके चारों तरफ अग्नि मंडल और वायु मंडल उन्मत्त (धतूरे) के विष से (रस से) पत्र के ऊपर लिख कर अग्नि पर तपावे तो शत्रु को संताप होगा।

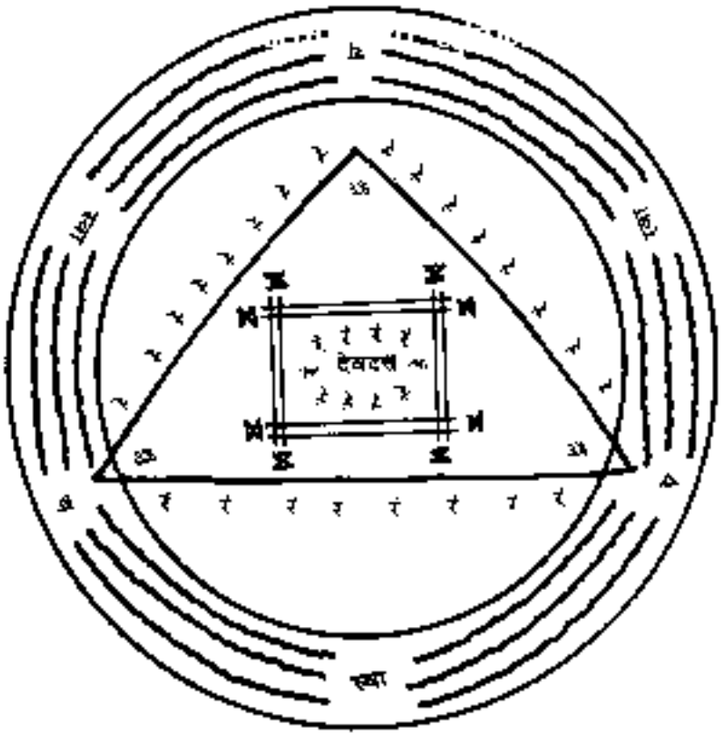

नाम षष्टम स्वर स्यांत लिखेत् प्रेतस्थ खप्परैः,
कांजिरा रूण निंबेन द्वारे संताप कृद भवेत् ॥ २२ ॥

नाम को छठे स्वर ॐ के मध्य में श्मशान के खप्पर पर लाल रंग की कांजी और नीम के रस से लिखकर दरवाजे पर रखने से संताप करनेवाला है।

ॐगृह गृह बाहि सुभगे ठः ठः॥

यय पोरापत शकृदैर्याहुजैरिंद्रयवैर्ग्रहं,
आवेशयति तज्जाप्तो धूप आघ्रात मात्रतः ॥ २३ ॥

इस मंत्र को जपते हुए जो पारापत (कबूतर) की शकृद (बींट) और बाहुज (स्वयं उत्पन्न हुए तिल) इंद्रयव (इंद्रजो) की धूप को सूंघने मात्र से ही ग्रह आवेशित हो जाते हैं जग जाते हैं।

हेमास्थि मक्षिका चूर्णं पुणा चूर्णं वदो दनं,
पानं वा ग्रह कृत्स्वस्थं गुड़ खारी निसेवनात् ॥ २४ ॥

धतूरे की लकड़ी माक्षिक (सोनामारवी) का चूर्ण और पुणचूर्ण के खाने व पीने तथा ग्रह का विकार गुड़ और खारी के सेवन करने से स्वस्थ कर देता है।

ॐउन्मत्त कारिणि पिशाची पिठे ठः ठः ॥

तालं रैबीजयोश्चूर्णा धुणा चूर्णं मूद्न्यरैः,
अनेन मंत्रितं दद्यात्स पिशाची भवेत् ध्रुवं ॥ २५ ॥

इस मंत्र से हड़ताल और रै बीज के चूर्ण को शत्रु के सिर पर रख दे तो वह पिशाच निश्चय पूर्वक हो जाता है।

प्रत्यानयन मे तस्य प्राहु विद्या विशारदा,
क्षीरं शर्कराया युक्तं भक्षे पाने च योजितं ॥ २६ ॥

मंत्र विद्या के पंडितो ने शक्कर मिले हुए दूध के खाने और पीने को इन कृत्रिम रोगों को दूर करने का उपाय बताया है।

विष मुष्टि कनक मूलं रालाक्षत वारिणा,
ततः पिष्टं तद्रस भावित पत्रं पिशाचयत्युदरं मध्यगत ॥ २७ ॥

विषमुष्टिक (कुचला) कनक मूल (धतूरे की जड़) और राल के और अक्षत (चावल) के पानी से तथा उसके पत्तो के रस की भावना देकर खिलाने से यह पेट में जाते ही मनुष्य को पिशाच जैसा बना देता है।

शिखि दक्ष कपोतानां तालोन्मत्त सकृद्रसः,
मूर्द्धन्यप्पित मुन्मांद दद्या न्मोक्षस्तु मुंडितः ॥ २८ ॥

(शिखिदक्ष) मुरगा कपोतानां (कबूतर) की बींट ताल (हड़ताल) उन्मत्त (धतूरा) को सर पर रखने से उन्माद हो जाता है तथा मुंडी (गोरख मुंडी) को देने से पैदा हुए उन्माद से मोक्ष (छूटकारा) हो जाता है।

करंजोन्मत्त बीजाणा धुण चूर्णं गुडान्वितं रजः,
कलेवरे दत्तं द्विषामुन्द्याद मावहेत् ॥ २९ ॥

करंज उन्मत्त (धतूरा) के बीज धुण का चूर्ण और गुड़ को कलेवर (मृत शरीर) की रज में देने से शत्रु को उन्माद हो जाता है।

सर्पिषः शत पुष्पायां पतंग पयसोपि च,
पानं स्यात् कारिकस्यै तस्योन्मादस्य प्रशांतये ॥ ३० ॥

सर्पि (घृत) शत पुष्पा(सोया) पतंग (जल मधुक वृक्ष) और दूध को पिलाने से उस उन्माद की शांति होती है।

अर्क मूलं स दुर्दूर दल मूलं समाक्षिकं,
सार्द्रमन्नादिभिर्दत्तं करोत्युन्मादिनं द्विषं ॥ ३१ ॥

आक की जड़ दुद्दूर (पुनर्नवा) का पत्ता और जड़ तथा माक्षिक (सहत=सोनामारवी) को अन्न आदि के साथ देने से शत्रु को उन्माद होता है।

खंड शर्करया युक्तं निपीतं सुरभः पयः वदरी,
पत्रसिद्धायाय्यवागु स्तत्प्रतिक्रिया ॥ ३२ ॥

खांड़ और शक्कर मिला हुआ गाय का दूध अथवा बेर के पत्तों में सिद्ध की हुई यवागु उसके प्रतिकार की औषधि है।

अरेः श्रंगाल लांगूलं काक दक्षिण पक्ष युक्,
शयनीय विनिक्षिप्तन्न पस्मार करं भवेत् ॥ ३३ ॥

श्रंगाल (जीदड़) की लांगूल (पूंछ) कौए के दाहिने पंख को अरि (शत्रु) के बिस्तर पर डालने से उसको अपस्मार (मृगी) आने लगती है।

धत्तूर पुष्प संभूतै र्मिश्रितं मधु कैसरैः,
आघ्रातं मोहयेत् पुष्पमाश्रोतांजननावनात् ॥ ३४ ॥

धतूरे के फूल के रस में मधु और केसर मिलाकर सूंघने से तथा यह फूल और श्रोतांजन(सूरमा) भी सूंघने से पुरुष मोहित होता है।

कर्क विद्विष धत्तूर सीरीभिर्म्महिषा सृजा,
सित्कैर्नक्तं कृतो धूपः स्पष्टं संमोहयेज्जनं ॥ ३५ ॥

कर्क (केकड़े)की भिष्टा विष धत्तूर और सीरि (कलिहारी) को भैंस के खून में भिगोकर नक्तं (रात) को उसकी धूप देने से पुरुष को मोहित करती है।

कृतं सृण जलूकाभिः सकृतोऽजगरस्य वा,
आसूर्य दर्शनाद्धू यो रंजनोंजन मोह कृत ॥ ३६ ॥

सृण (लाल थूक) और जलूका जोंक की भिष्टा या अजगर की भिष्टा का आंखो में जागते हुए अंजन करकेसूर्य को दिखाई देने तक धूप देने से या अंजन करने से दूसरों को मोहित करता है।

उन्मत्तक कांजिऽरक पत्र त्वग् मूल पुष्प फल कृतश्चूर्णः,
शतपदी चूर्ण तेलव्या मिश्रैर्म्मोह कृत् धूपः ॥ ३७ ॥

उन्मत्तक (धतूरा) और कांजि और आक के पत्ते छाल जड़ फूल और फल का तथा शतपद (कनछला) के चूर्ण को तेल में मिलाकर मोहित करने वाली धूप बनती है।

सहषोऽशांश गरदैर्महिषाक्ष अद्र कणक पंचांगैः,
रचित स्सपुरै धूपो रंजनोजन मोहनं जनयेत् ॥ ३८ ॥

सोलहवें भाग गरद (विष) महिषाक्ष गुगल (पुर=गूगल) और धतूरे के पंचाग से बनाई हुई धूप और अंजन मोहन करता है।

डुंडुभ वसार्द्रया वक रक्तांवर वर्त्ति रुज्वत्व द्वीपः,
निशि निज तैजस्यष्टांजन तां सुचिरं विमोहयति ॥ ३९ ॥

धर्म्मणी पुच्छ मा लूनं नत्य ता कृत संग्रहं,
हेम पंचांग संयुक्तं धूपितं नर्त्तयेन्नरान् ॥ ४० ॥

लूनं मंडूक पुच्छं नग्रे रास्पंदना न्नरैः कृत नृत्यैरासं,
प्रदीपवत्यां न्निहितं नर्त्तयति दीप्ति कांजने तां ॥ ४१ ॥

प्रारंभ सुरत रासभ वाल कृतो नग्र मेहनोत्थानं,
कुरुते जसना मध्ये भुजे समारोपितः कटकः ॥ ४२ ॥

मैथुन करते हुए गधे के बालों को गूंथकर उसके कड़े को पुरुषों के बीच में पहनने से सबके लिंग खड़े हो जाते हैं।

क्रियमाण सुरत गर्द्धभ वाल ग्रंथितैः श्रृगाल मल वदरैः,
रचितः स्त्री वस्त्र हरः कटकः प्रति सारणेन करे ॥ ४३ ॥

मैथुन करते हुए गधे के बाल और गीदड़ की भिष्टा को बेर के बने हुए कड़े को प्रतिसारण (अंगुली) से दांतो पर मलने से स्त्री नंगी हो जाती है।

जलौक चूर्ण गर्भेण लाक्षा रक्तेन वाससा,
कृता प्रज्वालिता कुर्य्यात् गत वस्त्रा स्त्रियो दशा ॥ ४४ ॥

जलौक (जोंक) के चूर्ण लाख और खून सहित चर्बी को जलाने से दस स्त्रियाँ भी नंगी हो जाती है।

अभ्यक्त नेत्र युग्मस्य वसयो भेक जन्मना,
नरस्य प्रतिभासंते वेणुवो भुजगा इव ॥ ४५ ॥

मेंढ़क की चर्बी को दोनों आंखो में लगाने से पुरुष को बांस सर्प के समान दिखलाई देते हैं।

सिक्ता सैरंड तैलेन सर्प स्नेहेन वर्तिका,
कुरुते ज्वालिता वेणुष्वनिला साधियं निशि ॥ ४६ ॥

बत्ती को ऐरंड के तेल में और सर्प की चर्बी से भिगोकर बांसों में रात्रि के समय जलाने से साँप ही साँप दिखलाई देते हैं।

दशा सर्प यसा सिक्ता ज्वालिता कुरुते गृहे,
कृताश्वेतार्क मूलेन वंश दंड़ानऽहिनि व ॥ ४७ ॥

सफे द आक की रुई की बत्ती को सर्प की चर्बी में भिगोकर घर में जलाने से बांस के दंड़ सर्प के समान दिखलाई देते हैं।

अहि त्वग् गर्भया वर्त्या वर्तिता दीपिका निशि,
वेणवाद्येषु गृहांगेषु सर्प्पं वा मोहमावहेत् ॥ ४८ ॥

सर्प की खाल की बत्ती को रात्रि के समय दीपक में जलाने से घर के आंगन के बांस आदि सर्प का ही धोखा देते हैं।

सुरगोप कलरव शकृत गर्भा वातादि तैल संसिक्ता,
निशि वंशादि गृहां गेष्यहि बुद्धिं दीपिका जनयेत् ॥ ४९ ॥

सुरगोप (इंद्रगोप = वीरबहूटी) कलरव (कबूतर = मुरगी) की बींट के तेल में भीगी हुई बत्ती को दीपक में रात्रि के समय जलाने से घर के आंगन के बांस आदि में सर्प का भ्रम होता है।

कार्यानिर्वातेवर्तिना धूपानां च क्रिया,
गृहे प्रयातो रक्षेद् गव्यं नसि घृतं घृतं ॥ ५० ॥

कार्य होने पर बत्तियों के बुझ जाने पर घर में धूप देने और गाय के घृत की नस्य लेने से रक्षा होती है।

सप्ताहं गृह गोधाया: फणिनो वा मुखेर्पितां,
गुंजा कुष्ठाय भुक्तास्यात्त्वारंभस्तत् प्रतिक्रिया ॥ ५१ ॥

कृकला शालि भृंगना गात्र चूर्णौ विलेपनात्,
स्यात् कुष्टो विद्विषां गात्रे कंडुतो दशमान्वितां ॥ ५२ ॥

भल्लातक रसै गौलि गुंजा मंड़ल कारिकान,
तच्चूर्णा अंगेषु कीर्णः स्यात सप्ता हा न कुष्ट दो रिपौ ॥ ५३ ॥

भिलावे के रस में बनाई हुई गोली गुंजा (चिरमी) और मंडलकारिका (कुत्ते की भिष्टा) के चूर्ण को शत्रु के शरीर पर डालने से शत्रु के सात दिन में कुष्ट हो जाता है।

निंब शर्क्करटो: पानात् मुद्ग यूषेण भोजनात्,
निशा सैंधव मूत्राणां लेपाच्च स विनश्यति ॥ ५४ ॥

यह कुष्ट नीम और शक्कर के खाने से तथा मूंग का यूष (मूंग की दाल धुली हुई १ भाग जल १८ भाग आटा कर चौथाया जल रहने पर छानकर पीना) के भोजन और हल्दी सेंधा नमक तथा मूत्र के लेप से नष्ट हो जाता है।

पंका लिप्ताऽहि वक्त्रस्था सिद्धर्था वदनानले,
पक्ता शय्या तले क्षिप्तत्वा स्फोटं दधति विद्विषां ॥ ५५ ॥

सर्प के मुँह में रखी हुई सफेद सरसों बदर (बेर) और अनल (भिलावे के बीज) पकाकर तथा कीचड़ में लपेट कर शत्रु के बिस्तर के नीचे रखने से शत्रुओं के फोड़े निकल आते हैं।

रजनी रजनी सप्त मध्य मध्या सिताश्च हो.
कंडु मुत्पादयेत्सद्यो लिप्ता वपुषि विद्विषः ॥ ५६ ॥

सर्प के मुँह में सात दिन रात रखी हुई हल्दी को शत्रु के शरीर में लेप करने से खाज पैदा हो जाती है।

गुंजा विषाग्नि भल्लातक कपि कच्छ रजोर्प्पितं,
सिष्यत स्वं गेषु लूता कृत शत्रोः काले खरा तपे ॥ ५७ ॥

गुंजा (चोटली) विष (अतसि=वत्सनाभ)अग्नि (केसर) भिलावे कपि कच्छ (कांच की फली की रज) को तेज अग्नि में भूनकर शत्रु के शरीर में लेप करने से बड़ी भारी लूता (खाज) पैदा होती है।

ॐनमो भगवते उद्दाम रेश्वराय कुंभ कुंभी स्वाहा ॥
हरे द्रुद्रुद्रम सग्वक्र कुष्टो शीर पियंगुभिः,
लूता विकार जिल्लेपो मंत्रेणानेन मंत्रितैः ॥ ५८ ॥

इस मंत्र से अभिमंत्रित करके दोनों रुद्ध असृक ( ) वक्र (तगर) कूठ उषीर (खस) और प्रयंग का लेप करने से खुजली का विकार जीता जाता है, नष्ट होता है।

नस्या रुष्कर बीज तैल सहितान् सिद्धार्थकाना वृते,
कृष्णैस्तंतुभिरानने फणि भृत: प्रेतालयाग्नौ दहेत ॥ ५९ ॥

अरुस्कर (भिलावे) के बीज के तेल सहित सफेद सरसों को काले धागे में लपेट कर तथा सर्प के मुख में रखकर चित्ता को अग्नि से जलावे।

गुंजा रोम युतैर्विचूर्ण निहितै लूंता भवेतै द्विषां,
गात्रै ग्रैष्म शरद्वसंत तपन प्रौद्धतपे स्वेदिनि: ॥ ६० ॥

फिर उसमें गुंजा (चिरमी) और बाल मिलाकर उसके चूर्ण को शत्रु के ऊपर डालने से उसके शरीर में ग्रीष्म शरद और बसंत ऋतु के भी सूर्य की गरमी से पसीने बहाने वाली लूता (खाज) होती है।

श्यामाजाक्षीर रुग्नाभी कर्णिकारक्त केसरै:,
उद्वर्तनं शिता निंब सेवा चास्या: प्रतिक्रिया ॥ ६१ ॥

काली बकरी के दूध रुक (कूठ) नाभी (कस्तूरी) कर्णिका रक्त (मध्यमा अंगुली का रक्त) केसर का लेप तथा शक्कर और नीम के खाने से इसकी चिकित्सा होती है।

कदली तुरंगं सितसर करवीर जटा च विल्व मज्जा,
च दत्तान्यन्नेन समं शत्रो:कुर्वंति सपदि वमिं ॥ ६२ ॥

कदली (केला) तरंग (असगंध) सितसर (सफे द सरकंड़ा) कनेर की जड़ और बेल के गूदे को अन्न के बराबर लेकर शत्रु को देने से शत्रु को तुरन्त ही वमन होने लगती है।

अर्क बीजै: स्नूहीक्षीर भावितै गुंड मिश्रितै:,
वितीर्णैरन्न पानादौ रक्तातिसार रुग्भवेत् ॥ ६३ ॥

स्नूही (थूहर) के दूध में भावना दिये हुए आक के बीजों को गुड़ में मिलाकर खाने पीने आदि में देने से खून के दस्त आने लगते हैं।

गोमूत्र पिष्ट वाक्यायु शक् लिप्त शराबयो:,
शक्नि्निधियते यस्य विद्रोद्य स्तस्य जायते ॥ ६४ ॥

जिसके पास गोमूत्र में पीसे हुए वाक्यायु ( ) को दो सिकोरे में लेप करकेरखा जाता है उसका विष्ठा रुक जाता है।

तरुदेव कुलावासवाग्गुदा मल लेपितः,
मक्ष द्वये रुद्ध मलः स्यादर्द्ध मारुतः ॥ ६५ ॥

देवतरु (देवदारु) कुलावास (गुल्माष) कांजी और वागुदा (जिह्वा का मल) खकार को मिलाकर लेप करने से तथा वायु को ऊपर को रोक देने से विष्ठा रुक जाता है।

कुर्यात् छछूदरी भस्त्रा स्त्रि पुरीष प्रकारिता कंपितं,
स्त्रि पिवेद्वा स्या तस्या मल निरोधनं ॥ ६६ ॥

ॐ सप्त मातृके द्वारं स्तंभय स्तंभय तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः॥
सहस्त्र जप सिद्धेन वानरा स्थयभि मंत्रितं,
मूत्र भुवम मुना स्थ मूत्रं स्तंभयति द्विषं ॥ ६७ ॥

इस मंत्र को एक हजार जप से सिद्ध करके बंदर की हड्डी को अभिमंत्रित करके शत्रु के मूत्र करने के स्थान में गाढ़ देने से उसका मूत्र रुक जाता है।

नारीणां मूत्र भूपंको वन मूषिक चर्म्मणा,
वेष्टितो निहितः कुर्य्यात् चिरं मूत्र निरोधनं ॥ ६८ ॥

स्त्रियों के मूत्र की गीली मिट्टी को जंगली चूहे के चमड़े में भरकर रखने से उनका मूत्र चिरकाल तक रुक जाता है।

शत्रो स्तेन्मूत्र भूपंके सर्प्पास्य मिसितैः सितं,
मूत्रैमूंत्र निरोधाय विमुक्तं तु विमुक्तय ॥ ६९ ॥

शत्रु के मूत्र की मिट्टी कि कीचड़ को सर्प के मुँह में रखने से मूत्र बंद हो जाता है और हटा लेने पर खुल जाता है।

अस्त्रजा कृकलासस्य यत मूत्रं कृत सेवनं,
तदऋतु स्नातया ना र्य्या लिंपितं प्रदर प्रदं ॥ ७० ॥

सूत्रं यदा सृजा सिक्त महेर्वा डुंडुभस्य वा,
तदुल्लंघित मात्रं स्यात्महा रुधिरकारणां ॥ ७१ ॥

कृत्रिमं प्रदर द्वं द्वं सद्यः प्रशम मासु यात्,
जल धौते पुनः शूते लेपिते स्मिन् तया स्त्रिया ॥ ७२ ॥

कल्कितं किंशुकस्या स्थि क्षीरेण क्षौद्र मिश्रितं,
नाशयेदार्त्तवोद्भूति मृतौ पीतं दिन त्रयं ॥ ७३ ॥

किंशुक (ढ़ाक के फूल) की अस्थि (वल्कल) के कल्क को दूध और शहद के साथ ऋतु काल में तीन दिन पीने से प्रदर दूर होता है।

गृहीतः पौष्प तारायामृतौ वद्धः करे स्त्रियाः,
रुंध्यादश्वत्थ वंदाकः संभूतिं पुष्पगर्भयोः ॥ ७४ ॥

अश्वत्थ (पीपल) के वंदाक (बादा पेड़ में उगा हुआ दूसरा वृक्ष) को पुष्य नक्षत्र में लेकर ऋतुकाल में स्त्री के हाथ में बांधने से रुद्ध (रुका हुआ) गर्भ का पुष्प (स्त्री का रज) उत्पन्न होता है।

पलाश बीज मधुना खर मूत्रेण वा पिबेत्
वारिणा वा वधु स्त स्याद् धारणं गर्भ पुष्पयोः ॥ ७५ ॥

यदि कोई वधु शहद या गधे के मूत्र के साथ पलाश (ढ़ाक) केबीज (पलाश पापड़ा) को पी ले तो उसके गर्भ उत्पन्न करने वाला रज उत्पन्न होता है।

शीतेन वारिणा कल्क मंजनामल कोद्भवं,
पुष्पे पीत मृगाक्षीणामृतौ गर्भं च नाशयेत, ॥ ७६ ॥

अंजन और आमले के पुष्प के कल्क को ठंडे पानी के साथ ऋतु काल में पीने से मृगाक्षी (स्त्रियों) का गर्भ व ऋतु दोनों ही नष्ट हो जाते हैं।

चूर्णस्सित मरिचानां पीतः सलिलेः गुडान्वितो नार्या,
आर्त्तव समये त्रिदिनं विनाशयेत् पुष्पमपि गर्भं ॥ ७७ ॥

सफेद काली मिरचों के चूर्ण को गुड़ में मिलाकर जल के साथ पीने से ऋतु काल के समय पीने से स्त्रियों के ऋतु धर्म नहीं होता और गर्भ भी नहीं रहता है।

पिबति प्रसूत समये जपा प्रसूनं विमर्द्य कांजिकया,
न भवति सा प्रसूनं ऋतेऽपि तस्या न गर्भः स्यात् ॥ ७८ ॥

ऋतुकाल के समय जपा प्रनून (कुड़हल के फूल) कांजि के साथ पीसकर पीने से गर्भ नहीं रहता है और न ऋतु धर्म ही होता है।

गैरिकं क्रिमिजित कृष्णा सम भागान् पिवेत् ऋतौ,
इंद्र वल्ली स मिरिचा यद्वा गर्भोन जायते ॥ ७९ ॥

गैरिक (गेरु) क्रिमिजित (बाय विडंग) और कृष्णा (काली मिरच) को बराबर लेकर ऋतु के समय पीने अथवा इंद्रवल्ली (इंद्रायण) काली मिरच को भी पीने से गर्भ नहीं रहता है।

चूर्णं सिद्धार्थ तैलानि पीतान्ऋतु वासरे,
निरुद्धति स्त्रिया गर्भं ध्वसंयति च तद् ऋतुं ॥ ८० ॥

सफेद सरसों का चूर्ण और तेल को ऋतु के दिनों में पीने से स्त्री का ऋतु धर्म बंद हो जाता है।

रसोहि वासा छदज: सम तिक्त स्स रामठ:,
गर्भ निपातयेत्पीत: क्वाथो वाश्री रसोनयो ॥ ८१ ॥

वासा (अरडूसा) के पत्तो (छदज) का रस के साथ तिक्त (कड़वी-पितपापडा-कुटकी) रामठ (हींग) को पीवें अथवा श्री रस (सरल का गोंद-बरेजा) और रसोन (लहसुन) के क्वाथ को पीने से गर्भ गिर जाता है।

ऋतौ दिने दिने खादेत पुंसयोग विवर्जिता,
गुडपलोन्मितं प्रन्नं नस्यात् प्रजनआमृति ॥ ८२ ॥

यदि ऋतुकाल में पुरुष से न मिलती हुई स्त्री चार तोले (पल भर) गुड़ को प्रतिदिन खावे तो उसे जन्म भर संतान नहीं होवे।

पलाश बीज चूर्णेन मध्वाज्य रहितेन या,
गुह्यं लिंपेद ऋतौ तस्या न स्याद् गर्भ समुद्भव: ॥ ८३ ॥

जो ऋतु काल में पलाश के बीजों के चूर्ण को शहद और घी से अपनी योनि में लेप करती है उसके गर्भ नहीं रहता है।

वर्त्ते लवण खंडंया त्यंते तैल संयुतं,
गर्भाशये मुखो गर्भन दद्यात् सा कदाचन: ॥ ८४ ॥

जो नमक के टुकड़े को तेल के साथ चोपड़कर रति के अन्त में गर्भाशय के मुख में रखती है उसके कभी भी गर्भ नहीं रहता है।

पुष्पोन्मूलितमुन्मत्त मूलं धार्य्यं कटि तटे,
प्रभवेत्प्रतिबद्धं तद्योषितां गर्भ संग्रहं ॥ ८५ ॥

ऋतुकाल के समय उन्मत्त (धतूरे) की जड़ को कमर में बांधने से स्त्री को गर्भ नहीं रहता है।

आखुकर्णी शिखा सौम्यापिष्टा ज्येष्टांबुना,
भगे घृता व गाहत्येद्गर्भ समर्द्धिः पिष्टातु नान्यथा ॥ ८६ ॥

आखु करणी (मूषाकर्णी) सोम्य (गूलर) को ज्येष्टा ( ) के पानी (रस) से पीसकर योनि में रखने से गर्भ नही रहता है।

सुर गोप रजो नीरं केवलं शशा लोहितीं,
क्षीरं वा शाल्मली पुष्पं पिवती स्त्रयान्न गर्भिणी ॥ ८७ ॥

मधु पिष्ट पलाशास्थि कृत लेप ध्वजः पुमान् यां,
गच्छेदार्त्तवे नारीं तस्या गर्भो न जायते ॥ ८८ ॥

पलाश (ढ़ाक) की लकड़ी को पीसकर मधु में पिलाकर लिंग पर लेप करके पुरुष यदि स्त्री के पास ऋतुकाल में जाता है उसको गर्भ नहीं रहता है।

गुड़ं च देव काष्टं तिलोत्थं च खरां भसा,
शूर्य्या पुष्पाणि वा खार्य्या पिवेद् गर्भ निवृत्तये ॥ ८९ ॥

गुड़ देव काष्ट (देवदारू) तिलों की खल को गधे के मूत्र में पीसकर अथवा सूर्य्या (आक) के फूलों को खारी नमक के साथ गर्भ को रोकने के लिए पीवे।

पिचुमंदच्छदोद्भूतो धूपो मन्मथ मंदिरे,
ऋतौ प्रदत्त कुरुते गर्भोनुपत्पादनं स्त्रियः ॥ ९० ॥

पिंचुमद (नीम) के पत्तों की धूप को ऋतुकाल के समय योनि में देने से स्त्री को गर्भ नहीं रहता है।

ऋतौ तलं च राजीवं शंख चूर्णं च योषिता,
पीता निरूद्यते गर्भ ध्वंसयति च तद् ऋतुं ॥ ९१ ॥

ऋतुकाल में तल (ताड़ वृक्ष) राजीव (कमल) शंख के चूर्ण को पीने वाली स्त्री के गर्भ नहीं रहता है और ऋतु धर्म को भी नष्ट करता है अर्थात् ऋतु धर्म नहीं होता है।

मंत्रो हु सुचि रीत्येष गर्भणयाख्य विदर्भितः,
मल्ल के लिखितः कुर्य्यात् प्रशवे गर्भ रोधनं ॥ ९२ ॥

गर्भणी के नाम को 'हुसुचिरी' इस मंत्र के साथ विदर्भित करके अर्थात् गूंथकर मल्लक (मल्लिका मीतिया- मोगरा) लालटेन या नारयली के छोड़े के बने हुए प्याले पर लिखने से गर्भ रुक जाता है।

लांगलि हस्त ताराभे गर्भिणी आम्रि रोपिता,
तावत् सं स्तंभयेद्गर्भं यावन्नो खन्यते ततः ॥ ९३ ॥

लांगली (कलिहारी) को हस्त नक्षत्र में लाकर गर्भिणी के घर में गाड़ने से उसका गर्भ तब तक रुका रहता है जब तक उसका निकाला नहीं जाता है।

सिद्धार्थ तैल संयुक्तं महिष महा शकुन पाशयोर्त्पुष्पं,
या पिबति गर्भिणी सा जात्यंधमपत्यमाप्नोति ॥ ९४ ॥

सिद्धार्थ (सफेद सरसों) तिल का तेल महिषि (भैंस का दूध) महाशकुन ( ) माष (उड़द) यूष (घुली हुई दाल १ भाग पानी १८ भाग डालकर औटाकर शेष चौथा भाग रहने पर छना हुआ पानी को यूष कहते हैं) इनको जो स्त्री पीती है उसके जन्म से अंधी संतान होती है।

ऋतौ पुष्पं च शाल्मल्याः पलाशशतपत्रयोः,
बीजानि च निपीतानि नारीं वंध्यां वितन्वते ॥ ९५ ॥

ऋतुकाल में सेमर (शाल्मली) के फूल पिलाश (ढ़ाक) के बीज और शतपत्र (सतावरी) के बीजों को जो स्त्री पीती है वह वंध्या हो जाती है।

करवीरस्य बीजानि नवनीतयुतानिया,
रजश्वलाभि हृत्प्रष्टवा सा वंध्या भवति ध्रुवं ॥ ९६ ॥

जो रजस्वला स्त्री कनेर के बीजों को पीसकर मक्खन के साथ खाती है वह निश्चय से वंध्या हो जाती है।

यम विद्या

ॐ काल दष्ट्रं भयं करि दर दर मई मई संहर संहर हुं फट ठः ठः ॥
अंगानि यम विद्यां लक्ष जपात् सिद्धामेनां जपन्नि रिपो विंध्यत्,
प्रतिमाया नूतन चिता मृन्मयाः स्वांऽघ्रि रेणु रेणुं सिक्तायाः ॥ ९७ ॥

इस यम मंत्र को एक लाख जप से सिद्ध करके चित्ता की नयी मिट्टी में अपने पैर की धूल मिलाकर उससे शत्रु की मूर्ति बनावे।

रक्त कुसुमार्चिताया पत्रा वरुणमलयजात लिजासाया:,
अंगे कंटकै: स्यात् तेषु द्विषतो महान्व्याधि: ॥ ९८ ॥

उसका लाल फूलों से पूजन करके तथा लाल चंदन आदि से लेप करके उसके जितने अंगो में कांटे से छद किया जाए तो शत्रु के उसी अंग में महान रोग हो जाए।

ॐ नमो भगवते रुद्राया भ्रम: भ्रम: भ्रामय भ्रामय अमुकं विभ्रामय विभ्रामय उदभ्रामय उदभ्रामय रुद्र रौद्र रूपेण हुं फट ठ: ठ:॥

उन्मत्त रुद्र मंत्रं जपन् त्रिलक्ष प्रजाप्य सिद्धममुं,
धत्तूर रस समिद्धि जुंहुयात् चितिकाऽनलै: भ्रमये ॥ ९९ ॥

इस उन्मत्त रुद्र मंत्र को तीन लाख जप से सिद्ध करके शत्रु के रस की समिधाओं में से चित्ता की अग्नि में शत्रु को भ्रम करने के लिए होम करे।

मंत्रं जपन्न मुं यावत् च्चेहेमगैरिक प्रतिमाया:,
अंगारे लिखिवन्या मयो हीयेत विद्विष स्तत्र ॥ १०० ॥

इस मंत्र को जप करते हुए जब तक सोने या गेरु की प्रतिमा नष्ट हो जाती है तब तक शत्रु भी नष्ट हो जाता है।

हकारं बिंदु संयुक्तं षट्कोणाभ्यंतरे लिखेत्
तत्क्षेप्तं चक्रि चक्राया: सद्य भ्रमति काकवत् ॥ १०१ ॥

बिन्दु सहित हकार को एक छ कोण वाले यंत्र में लिखकर कुम्हार के चाक पर डालने से शत्रु कौए की तरह घूमता रहै।

ॐ नमो भगवते महाकालाय दह दह पच पच भंजय भंजय उत्सारय उत्सारय स्तंभय स्तंभय मोहय मोहय उन्मादय उन्मादय एवं रुद्राज्ञापयति॥
अथ शवरि महा महिम वंती स्मरति रव रव हुं फट ठ: ठ:॥

गोमय चत्वर मृद्भू प्रति रूपं ग्राम खेट नगराद्ये,
कृत्वा मध्ये बूल्यां न्यस्य तत: कणा तुषै: कुर्यात् ॥ १०२ ॥

आहुति सहस्रमऽमुना मंत्रेण हविः कृतं दद्यन्महती,
तद्भस्म सप्त कृत्वः कृत जाप्पं नाभि मात्र जलैः ॥ १०३ ॥

स्थित्वा ग्रामाद्यऽभिमुख मेतन्मंत्रं जपन् क्षिपेत् तस्मिन,
उदके स्तु र्ग्रामादे स्तस्य विपद् व्याधि वंद्यभिद्यः ॥ १०४ ॥

ग्राम (गोल रेखा से घिरे हुए) खेट (छोटी पहाड़ियों से घिरे हुए को) नगर (चारों ओर परकोटे से घिरे हुए) को कहते हैं। ग्राम खेट या नगर की समान मिट्टी का चबूतरा बनाकर उसको गोबर से लीपकर उसके मध्य में हवन कुंड बनाकर उसमें कणा (पीपल) के तुषों से एक हजार आहुति उपरोक्त मंत्र से और घृत से इस मंत्र के द्वारा एक हजार आहुतियाँ देवे। भस्म पर सात बार इस मंत्र को पढ़कर नाभि तक जल में गाँव आदि की तरफ मुँह किये हुए खड़ा होकर इस मंत्र को जपता हुआ यदि जल में उस भस्म को फेंक दे तो उस गांव को रोग तथा वंध्य आदि भय की विपत्ति होवे।

ॐवर वज्र पाणि पातय वज्रं सुरपति राज्ञापयति हुं फट ठः ठः ॥
क्षेत्रे क्षेत्रेंद्र दिग्भाग मृक्षतं कुलिशं क्षिपेत,
मंत्रेणा प्राङमुखो यत्र तत्र स्यात् सस्य संक्षयः ॥ १०५ ॥

इस मंत्र से पूर्व की तरफ मुख करके जिस खेत या किसान के खेत के भाग में मृक्षत वज्र फेंका जाता है वहाँ के धान्य नष्ट हो जाते है।

पणया गारे क्षिपेद् यत्र वज्रं दत्तं तेन मंत्रितं,
तत्र पणय क्षयः स्यात तदऽपनीति प्रतिक्रियाः ॥ १०६ ॥

इस मंत्र से मंत्रित करके जिस पणयागार (दुकान) में वज्र फैंका जाता है वह दुकान भी नष्ट हो जाती है उसका प्रतिकार उस वज्र की बुरी नीति है।

काकांडरस सं लिप्त मस्तकस्थ सकृत् नरः,
खाद्यते वायसैश्चक्षुं च्चां कृंता द्विन्नं खरैः खरैः ॥ १०७ ॥

जिस पुरुष के सिर पर कौए के अंडे के रस का लेप एक बार कर दिया जाए तो उसको कौए नाखूनों से फाड़ फाड़कर चोंच से खा जाते हैं।

कृष्णा काका सृजा यस्य नाम भूत दलैर्प्पितै,
निवेश्यते सकृत्मध्ये सः काकैः खाद्यते मुहुः ॥ १०८ ॥

द्विः परिकवचेऽस्त्र होमं जप्त्वास्तु लक्ष्यं जाप्य सिद्धिं निखनेत्,
सदमन्यऽरिष्ट कालं त्र्यशमरैः कामयेत् यदि बहुविपदः ॥ १०९ ॥

दो बार कवच हुं हुं अस्त्र (फट) होम (स्वाहा) अर्थात् हुं हुं फट स्वाहा इस मंत्र को एक लाख जप से सिद्ध करके शत्रु के घर पर यदि उसको बहुत कष्ट देना होतो इस मंत्र से अभिमंत्रित करके काठ की तीन कील गाड़ देवे।

त्र्योशे कारस्कर मय कीलेंदु शब्द मालिख्य,
मंत्री खनेत्तदऽचिरात् दुःखानि व्यातनोति रिपो ॥ ११० ॥

जिस समय मंत्री उन कारस्कर (कुचला) की कीलो को चंद्र शब्द लिखकर गाड़ने के लिए खोदता है उसी समय शत्रु को दुःख घेर लेते हैं।

मर्मणो द्वितयं द्वं द्वम स्त्रयोश्चंद्रयो र्द्वयं,
सिद्धेन्नगेंद्र मंत्रोयं लक्ष जाप्यात् फलार्थिनां ॥ १११ ॥

दो मर्म (जं जं) दो अस्त्र (फट फट) और दो चंद्र (ठं ठं) अर्थात् जं जं फट फट ठं ठं नागेंद्र मंत्र चाहनेवोलों को एक लाख जप से सिद्ध होता है।

सर्प्पाख्यौ कांगुलं यत्र सर्प्पांक्षा निखनेद ग्रहे,
जप्तमे तेन तद्देशमस्यात् सर्प्पानां निकेतनं ॥ ११२ ॥

मंत्रो मुरु मुरु चुरु चुरु ठठेति लक्ष्य प्रजाप्यतः सिद्धं,
स्तं वेरम वदनस्य प्रयातऽसौ प्रथित निज शक्तिः ॥ ११३ ॥

मुरु मुरु चुरु चुरु ठः ठः यह मंत्र एक लाख जप से सिद्ध होता है। यह मंत्र अपनी शक्ति से विश्वास कराने में बड़ा प्रसिद्ध है।

वेशमन्य नेन जप्तं प्राच्यां दिशि खनतु वैरिणो मंत्रि,
गोदंतं गृह मेतत् मूषिक कुलं भवति ॥ ११४ ॥

मंत्री यदि इस मंत्र से गौ के दांत को अभिमंत्रित करके उसको शत्रु के घर की पूर्व की दिशा में गाड़ दे तो वह घर चूहों से भर जाता है।

सप्तां गुलं रिपो गेंहं पैप्पलं कीलमश्वने,
चिता काष्ट मयं याम्ये निखनेत् स विनश्यति ॥ ११५ ॥

यदि शत्रु के घर में चिता की लकड़ी में पीपल की सात अंगुल लम्बी कील गाड़ी जाए अश्वनी नक्षत्र में दक्षिण दिशा में तो वह घर नष्ट हो जाता है।

कृतिका सु खनेत् कैल्व क्षेत्रे धान्य क्षयो भवेत्,
रोहिण्यां रोहिणी वृक्ष कीलं कोष्ट गृहे खनेत् ॥११६॥

कृतिका नक्षत्र में बिल्व की कील धान्य के खेत में गाड़ने से धान्य नष्ट हो जाता है और रोहिणी नक्षत्र में रोहिणी (मांस रोहिणी) वृक्ष की कील को कोठे के घर में गाड़े।

सौम्य मृगास्थि शय्यायां न्यसेत् स स्यात् मृगोपमः,
व्याघातकाल मार्द्रायां रिपोर्गृह ज्वरायसः ॥११७॥

सौम्य (मृगसिर नक्षत्र) में मृग की हड्डी की कील शत्रु के बिस्तर में रखने से वह मारने के समय मृग के समान हो जाता है और आर्द्रा नक्षत्र में रिपु के घर में रखने से उसे ज्वर हो जाता है।

मयुरास्थि मयं कीलं सिकत्थक प्रतिमा हृदि,
आधितो निखनेत् शत्रो महारोग करोमतः ॥११८॥

मोर की हड्डी की कील को शत्रु की प्रतिमा के हृदय में गाड़ने से अत्यंत रोग करने वाली मानी गई है।

पुष्ये अस्थि प्रतिकृतेः पादे पंगुत्व मावहेत्,
करे सर्प्पास्थि सर्प्पाक्षि सर्प्प दृष्टो भविष्यति ॥११९॥

पुष्य नक्षत्र में शत्रु की प्रतिमा के पैर में हड्डी गाड़ने से वह लंगड़ा हो जाता है और हाथ में सर्प की आंख की हड्डी गाड़ने से शत्रु सर्प की सी आंख वाला हो जाता है।

मघा सु उष्ट्रा स्थिजं कीलं सिखनेत् प्रतिमालके,
द्विषः सशीर्ष रोगाय सद्योऽनलाय कल्पते ॥१२०॥

मघा नक्षत्र में शत्रु की मूर्ति के भाल (पेशानी-ललाट) में अथवा बालों में ऊंट की हड्डी की कील गाड़ने से शत्रु के सिर का अग्नि जैसा रोग शीघ्र ही हो जाता है।

कोष्टागारे खनेद्भंगो मूषिकास्थिमयं रिपो,
क्षेत्रेवा तदगृहे धान्यं मूषिकैरेव च भक्षिते ॥१२१॥

शत्रु के कोठे या खेत में चूहे की हड्डी की कील गाड़े तो उसके धान्य को चूहे खा जाते हैं।

खराखुत्तर फाल्गुन्या मुन्मादो द्वारि सदमन:,
गजाख्यं तदगृहं हस्ते स्याद पस्मार पीडनं ॥ १२२ ॥

उत्तर फाल्गुनी नक्षत्र में गधे और चूहे की हड्डी की कील को शत्रु के घर के द्वार में गाड़ देवे तो शत्रु को उन्माद हो जाता है तथा हस्त नक्षत्र में हाथी की हड्डी की कील गाड़े तो शत्रु को उन्माद की पीड़ा होगी।

चित्र रूक्षैऽजाख्यजा स्थाने तदऽजानभिवृद्धयो,
भवने कृकलासस्थि स्वातौ स कृकलास वत ॥ १२३ ॥

चित्रा नक्षत्र में बकरी की हड्डी की कील को बकरियों के स्थान में गाड़ने से बकरियाँ बढ़ती है और स्वाती नक्षत्र में शत्रु के भवन में कृकलास (शरट छिपकली) की हड्डी गाड़ने से वह शरठ की तरह हो जाता है।

शार्द्दलास्थि विशाखा सु शय्यायां जनयद्रजं,
मैंत्रीवैभीतिकं वंध्यां विदध्यात् शयने स्त्रियं ॥ १२४ ॥

विशाखा नक्षत्र में शार्दूल सिंह की हड्डी की रज को बिस्तर पर रखने से स्त्री भयभीत और वंध्या हो जाती है।

नक्तमाल मयं की लं ज्येष्ठयां रिपु मंदिरे,
निखनेत्तस्य सद्य: स्यादलक्ष्मी दु:खदायिनी ॥ १२५ ॥

ज्येष्ठा नक्षत्र में नक्तमाल (करंज) की कील को शत्रु के घर में गाड़ने से उसको दरिद्रता (अलक्ष्मी) दु:ख देने लगती है।

मूले चिता प्रतिकृते: कील: श्लेष्मांतकोदभवे:,
गुह्ये शिरासि चन्यस्तो दूर मुच्चाटये द्रिपुं ॥ १२६ ॥

मूल नक्षत्र में शत्रु की मूर्ति के गुह्य (गुप्त अंग) में तथा सिर में चिता में से ली हुयी श्लेष्मांतक (लिसोठे) की कील को गाड़ने से शत्रु का दूर से ही उच्चाटन हो जाता है।

न्यस्ता रुग्याश्चिता भूत्या मध्ये प्रतिकृते: खनेत,
चिता स्थाप्येत दग्नौ तां क्षिपेत् शून्यो भवेदरि: ॥ १२७ ॥

चिता की राख से शत्रु का नाम लिखकर उसको शत्रु की प्रतिमा में गाड़े फिर उसको चिता की अग्नि में रख देवे तो शत्रु आग के अन्दर छिप जाता है।

तापयेदुत्तराषाढे नृ कपालेकृतं रिपो,
प्रतिरूपं चितावह्नौ महारोगः प्रजायेत ॥ १२८ ॥

उत्तराषाढ़ नक्षत्र में मनुष्य के कपाल पर शत्रु का रूप बनाकर उसको चिता की अग्नि में डाल देने से शत्रु को महान रोग हो जाता है।

चंडास्थि पुरो गेहे खातं स्तंभयति द्विषांश्च,
पिष्टाया मुल्लुकास्थि विद्वेषोच्चाटन प्रदं ॥ १२९ ॥

शत्रु के घर में चांडाल की हड्डी को गाड़ने से शत्रु को स्तंभित करती है तथा उल्लू की हड्डी को पीसकर रखने से विद्वेषन और उच्चाटन करने वाली है।

वारूणे काक पक्षेण प्रतिमा नृ कपाल के विषा,
सृग् भाविता भूति छत्रोत्साधयतदगता ॥ १३० ॥

पश्चिम दिशा में कौवे के पंख से मनुष्य के कपाल पर विष और खून से भावना दी हुयी राख से शत्रु की प्रतिमा बनाने से शत्रु का उच्चाटन होता है।

द्विज चंडाल माजरि वृको लूक द्विजास्थिभिः,
भ्रांति गृह चिता न्यस्तैः स्यात्पूत्तरभाद्रयोः ॥ १३१ ॥

पूर्वा भाद्रपद और उत्तराभाद्रपद नक्षत्र में ब्राह्मण चांडाल बिलाव वृक (भेड़िया- कौवे गीदड़) उल्लू की हड्डी को तथा पलाश की लकड़ी की चिता पर रखने से शत्रु का घर से उच्चाटन करती है।

साध्यस्य जन्म नक्षत्रे यः कीलः परिभाषितः,
पौष्णोपि खांतंतं प्राहुः संत स्ततत्फल प्रदं ॥ १३२ ॥

साध्य के नक्षत्र के पेड़ की जो कील गाड़ी जाती है विद्वानों ने उसको विशेष फल देने वाली कही है अगर उसको जन्म नक्षत्र में ही गाड़ी जावे।

स्नूक क्षीर भावितेभ्यो यत् तिलेभ्यस्तैल माहृतं,
तस्याऽभ्यंगेन केशाः स्युः काशनी काश रो चिषः ॥ १३३ ॥

थूहर के दूध में भावना दिये हुये तिलों के तेल को मलने से बाल काशनी के समान कांतिवाले अर्थात् सफेद हो जाते हैं ।

स्नुक काको उदंबरार्काणां क्षीरैः पिष्टं सितार्कजं,
मूलमालेपनात केशान कुर्य्यात् स्वेत यवां कुरान ॥ १३४ ॥

थूहर काकोंदुबर (गूलर) आक के दूध से पिसी हुयी सफेद आक की जड़ के लेप से बाल जौ अंकुरों के सामन सफेद हो जाते हैं।

सिद्धार्था मलक रजः स्नुगर्क पयसा सुभावितं लिप्तं,
पलितानि करोति कचानऽमथित सेको भवेद् यावत् ॥ १३५ ॥

सफेद सरसों आमला के चूर्ण को स्नूक(थोहर) और आक के दूध से भावना देकर लेप करने से बाल तब तक सफेद रहते हैं जब तक अमथित सेक (बराबर भिगोना) नहीं होता ।

गुंजा मूले शिला शंख चूर्णः कृत विलेपनं,
धात्र्यामलपिष्टे रचितान केशानां नाशनं भवेत् ॥ १३६ ॥

गुंजा (चोटली) की जड़ मनशिल शंख चूर्ण को धात्री (धाय के फूल) और आमले के चूर्ण के लेप से बाल नष्ट हो जाते हैं।

नाशयेत्मागधी चूर्णः स्नूकक्षीर बहुभावितः,
स्नामा मलक संयुक्ते द्विषतं कच संचयः ॥ १३७ ॥

स्नूक (थूहर) के दूध में बहुत बार भावना दिया हुआ मागधी(पीपल) के चूर्ण बालों को नष्ट करता है उसमें आमला मिलाकर स्नान करने से बाल इकट्ठे हो जाते हैं।

ब्राह्मणी पुच्छ चूर्णेन राजी तैल विमिश्रितां,
सप्ताहं गुप्तं सं लिप्त मुक्त केश विनाशतः ॥ १३८ ॥

ब्राह्मणी (ब्रामणी सर्प) के पूँछ के चूर्ण को सफेद सरसों के तेल में मिलाकर सात दिन तक गुप्त अंग पर लेप करने से बाल सफा हो जाते हैं॥

सप्ताहं हेम तैलस्य मध्येषु विहितं हरेत्,
लिप्तं भुजंग लांगुलं कचान् रोमाणि च स्फुटं ॥ १३९ ॥

सात दिन तक हेम (धतूरे) के बीजों के तेल को मलने से और सर्प की पूँछ का लेप करने से बाल और रोम सभी साफ हो जाते हैं।

साष्टांशक कला स्नुक कलकं सहितं क्वथितं,
जलं आदौ विलेपमालिप्तं कचरोम निवर्हणां ॥ १४० ॥

आठवें भाग थूहर के कल्क का जल में क्वाथ बनाकर उसका लेप करने से बाल और रोम सभी उड़ जाते हैं।

शिरीष सुमनश्चूर्णो धतूर स्व रसान्वितः,
निहितो शन पानादौ करोति वधिरं नरं ॥ १४१ ॥

सिरस के फूलों के चूर्ण को धतूरे के स्वरस में मिलाकर खाने तथा पीने आदि से पुरुष बहरा हो जाता है।

शाल्मली तरू निर्य्यासो हेमस्वरस भावितः,
द्विषतं विदध्यात्यान्धमन्नदिषु विमिश्रितः ॥ १४२ ॥

सेमर के गोंद को अथवा रस को धतूरे के रस में भावना देकर अन्न आदि में मिलाकर खाने से शत्रु अंधा हो जाता है।

कनक फल शाल्मली तरू निर्य्यास शिरीष बीज चूर्ण युतं,
भक्तं करोति भुक्तं मोहं वा धिर्य्यं मांध्यं च ॥ १४३ ॥

धतूरे के फल सेमर का गोंद या रस और सिरस के बीजों के चूर्ण को खाने से पुरुष में मोह, बहरापन और अंधापन हो जाता है।

वाधिर्य्यं मोहमांद्यं च द्विषामौषधयो गजं,
ससिते माहिषी क्षीरे पीते सप्त दिनश्यति ॥ १४४ ॥

शत्रुओं की औषधियों के योग से हुआ बहरापन ,मोह और अंधापन आदि शक्कर सहित भैंस का दूध पीने से तुरन्त ही दूर हो जाते हैं।

गुंजा फलानां स्नुकक्षीर भावितां तामुपेयूषी,
चूर्णे ज्वालिता वर्त्ति रांध्यं कुर्य्यादिपोन्निशि ॥ १४५ ॥

थूहर के दूध में भावना दिये हुए गुंजा (चोटली) के फल के चूर्ण की बत्ती को जलाने से शत्रु रात्रि में अंधा हो जाता है।

धूपो विदध्याद् रात्र्यांध्यां गुंजा फल मूले हेमकुसुमकृतः,
तत्प्रतिकार विधिः स्यान्धु पयः क्षीर पानं वा ॥ १४६ ॥

गुंजा (चोटली) फल और धतूरे के फल की धूप से रात्रि में पुरूष अंधा हो जाता है शहद या दूध पीने से वह सब दूर हो जाता है।

चर्म्म शकुनौ गतांते निधाय करवीर काऽग्नि पुट दग्ध पटु,
गंधा कदुप भुक्तः कपि तरुतैलोष्णां जनान्मोक्षः स्यात् ॥ १४७ ॥

मरे हुए शकुनि (गिद्ध) की चर्म्म रखने और कनेर की अग्नि की पुट में भस्म किये हुए पटु (पटोल लता-परवल साग-सोआ या सौंफ-नमक) और गंधा (असगंध) को खाने तथा कपितरु () के तेल को आँखो में लगाने से पुरुष रोग से छूट जाता है।

ज्वलिता वर्त्या दीपोनिंवज वंदाक रेणुक गर्भया,
भवने रजनौ जनयति काण वदऽनिमेषनां द्विषतां ॥ १४८ ॥

नीम की वंदा (अमरवेल) के चूर्ण वाली दीपक की बत्ती को घर में रात के समय जलाने से शत्रु काने हो जाते हैं।

गुंजाफल जल भावित मधुक मधु च्विष्ट मातुलंग फलैः,
संयुक्तायां वर्त्यां दीपो विदधाति काणत्वं ॥ १४९ ॥

गंजा (चोटली) के फल के जल (रस) में भावना दिये हुए मधुक (महुवे) और शहद (मधु उच्विष्ट) मातुलुंग (बिजोरा) के फल सहित बत्ती का दीपक काणत्व काना बनाता है।

आयास प्रस्विद्यत सित तुरंग मुख्योत्थ धर्मजल कलितः,
लेपाद लक्तकरसः सित तरमधरं रिपोः कुरुते ॥ १५० ॥

अत्यंत परिश्रम के कारण सफेद घोड़े के मुख से बहते हुए पसीने के जल से युक्त अलक्तक (महावर) के रस के लेप से शत्रु के नीचे का होंठ सफेद हो जाता है।

यत तेन श्वेत भावेन कारितेन विमुच्यते,
उष्टस्ताम्र तुरंगास्य प्रस्वेदजल लेपनात् ॥ १५१ ॥

वह सफेद बना हुआ होंठ लाल घोड़े के पसीने के जल के से ठीक हो जाता है यह उपरोक्त रोग के निवारण का उपाय है।

कृकला त्वचोदगीर्णं तांबूलं यस्य बद्धते,
मुखरोगो भवेत् तस्य यावन्नाऽस्य विमोक्षणं ॥ १५२ ॥

कृकलास (सरठ) की छाल सहित पान जिसके बाँधे जाते हैं उसके तब तक मुख रोग रहता है। जब तक वह नहीं खोला जाता है।

भक्षितं दतं पतनं महर्वा गुग्गुलयस्य ला,
वक्रेऽर्प्पितं भवे द्भतं रूजो यावन्न मुच्यते ॥ १५३ ॥

अहि (सर्प-भिलावा) या गुगुल के भावित दंत पतन (दन्तोण या मंजन) को मुख में रखने से दांत में दर्द रहता है जब तक वह मुँह में रहता है।

आरूष्कर मुदगेवा सर्प्पास्य वा निधियते,
यस्य तांबूल मुच्चिष्टं मुख रोगो स जायते ॥ १५४ ॥

अरूष्कर (कुचल या भिलावा) या मूंग सर्प के मुख में हुआ का पान जिसके मुख में जाता है उसके मुख रोग हो जाता है।

हेमाग्नि दग्ध मधुकृत धूमा पूरित घटोदरे विहितं,
पीत करोति सहसा मूकत्वं वारि शत्रूणां ॥ १५५ ॥

धतूरे की आग में जले हुए मधुकृत (महुवे के फल) के धुँए को घड़े में भरकर उसमें जल भरकर पिलाने से शत्रु गूंगा हो जाता है।

सप्ताहं सलिलं पीत जाति कुसुम वा सितं,
मूकतां कारि मासेता मासु नाशयति प्रभुः ॥ १५६ ॥

जाति (चमेली) के फूलों में सात दिन तक बसाये हुए पानी को पीने से गूंगापन दूर हो जाता है।

ताल तकोत्थ भुक्तायाः सित गौल्या मलेन यः,
आलिप्त स करोभ्युमुष्टा हरेन्नारि पयोधरं ॥ १५७ ॥

यदि पुरुष ताल (हड़ताल) और मट्ठे की खाई हुई सफेद गोली (सुपारी) को मलने से अपने हाथों को पोतकर स्त्री के स्तनों को छूवे तो स्त्री के स्तन गिर जाते हैं ।

तैलेदं गोप कच्छप मस्तक चरणानि मसृण पिष्टानि,
स्तन युगलं प्रमदानां प्रनाशयंति प्रलेपेन ॥ १५८ ॥

इंद्र गोप (वीर बहूंटी) के तेल कछुवे की खोपड़ी तथा पैर मसृण (अलसी) के लेप से स्त्रियों के कुच गिर जाते हैं।

कूर्म्म शिरोऽधि कृतां जलि सहस्त्र पदमानृवाह मूर्द्धरजोभिः,
पुरितश्चकी करणातकरः करोत्यंगना स्तनांतर्द्धानं ॥ १५९ ॥

कछुवे की खोपड़ी और पैर कृतांजलि (अजिलि कारिका= लजालू) सहस्त्र पदमा (कमल) मनुष्य के सर के बाल तथा कौवे के पैरों का चूर्ण का लेप स्त्रियों के स्तन को छुपा देता है।

गलातैलेन संयुक्ता वृश्चिकालि वचान्विता,
निहिता मूत्र भूपंके जनयेत् योनि वेदनां ॥ १६० ॥

तेल सहित गला() वृश्चिकालि (बरंहटा कटेली) और वच को योनि में रखने से अत्यंत दुस्सह योनि कष्ट होता है।

शकृत वृश्चिक पुच्छाग्र कंटेकेन युतं स्त्रिया:,
करोति क्षितिरंध्रस्थ स्थ दुस्सहां भग वेदनां ॥ १६१ ॥

बिच्छु के पूँछ के अग्र भाग के कांटे से युक्त करके शकृत (उसके गिलाजत टट्टी को) योनि में रखने से अत्यंत दु:स्सह योनि कष्ट होता है।

शकृद द्रक संयुक्तं सार्द्धं भूरंध्र सं वृतं,
वृश्चिकालेन सं सिद्धं कुर्याद् योनि रुजं स्त्रिया: ॥ १६२ ॥

अद्रक और वृच्छिका (सफेद पुनर्नवा) के लेप से योनि का कष्ट दूर होता है।

लेप: शुक्रैर भिन्नाया नारीणां स्तंभये द्भगां,
यावत् तावन्न तक्रेण सुरभेरभि सेचनं ॥ १६३ ॥

शुक्र, अभिन्ना(के लेप से स्त्रियों की योनि का तब तक स्तंभन रहता है जब तक उसको गौ के मट्ठे से नहीं धोया जाता है या सींचा जाता है।

वरटी गृह चूर्णेन मिश्रितैक्षालितैर्जलै:,
योनौध्वजो न प्रविशेन्न यावत् तक्र सेचनं ॥ १६४ ॥

वरटी(टांटया) गृह के चूर्ण मिले हुए जल के धोने से योनि में तब तक लिंग प्रवेश नहीं कर सकता जब तक उसको मट्ठे से नहीं धोया जाता है।

विषाणाग्रेण सुरभेरधो वक्रेण योषित:,
लिंगभगं न गम्यं स्यात् गम्यमूर्द्ध मुखेनतु ॥ १६५ ॥

नीचे मुख किये हुए गाय के सींग के लेप करने से योनि में लिंग नहीं जा सकता केवल ऊपर के मुँह किये हुए सींग के लेप से जा सकता है।

नाभौ लिंगं स्त्रीणामधोमुखं वृष विषाणा मचिरेणा,
रेचनयोनेर्वंद्य मोक्षा य भवेत् तद उर्द्ध मुखं ॥ १६६ ॥

बैल के सींग को नीचे की तरफ मुख करके घिसकर स्त्रियों की नाभि पर लेप करने से योनि बंधन होता है तथा ऊपर को मुखवाले सींग को घिसकर लेप करने से खुल जाता है।

व्योमात्त चर्म्म शकुनि शकृत् लिप्त ध्वजो नरः यां गच्छेत्,
स्त्रिय मन्य स्य सा गम्या स्यान्न कस्य चित् ॥ १६७ ॥

यदि पुरुष व्योम (पानी) से चर्म शकुनि (गिद्ध) की विष्ठा को पीसकर अपने लिंग पर लेप करके किसी स्त्री से भोग करे तो उस स्त्री से दूसरा कोई भोग नहीं कर सकता है।

चूर्णं क्षिपति या यौनौ भूलता शक्र गोपयोः,
सुरतं तत्र तस्यैव ध्वजभंगः परस्यतु ॥ १६८ ॥

जो योनिमें भूलता (केंचवे) और इंद्र गोप (वीर बहूटी) के चूर्ण को डालता है उस योनि में वही भोग कर सकता है दूसरे पुरुष का उस योनि में लिंग खड़ा न होगा।

आम्र पत्र घटे दग्धं स्वच्छ सौवीर पेषितं,
तदेव लेपनात अन्यात् योनि स्तंभं नत भ्रुवां ॥ १६९ ॥

आम के पत्तों को सुखाकर घड़े में रखकर जलाकर उसको साफ सौवीर (कांजी) से पीसकर लेप करने से स्त्रियों का योनि स्तंभन दूर होता है।

यानारी करवीर्येण सु पिष्टे नाग केशरै,
सेविता लिप्त लिंगेनतां नालं सेवितुं परैः ॥ १७० ॥

जो नारी(स्त्री) करवीर्य (हाथी के वीर्य) को नाग केशर में पीसकर उससे लेप किये हुए लिंग से भोग करती है उस स्त्री को दूसरा पुरुष सेवन नहीं कर सकता।

श्रृंगा ग्रेण लिप्तं वृषस्य गोर्वानृमेहनं निपतेत्,
विनतोना विनतेनतुतेन विलिप्तं समु तिष्ठेत् ॥ १७१ ॥

गाय या बैल के सींग के आग्रभाग से लेप किया हुआ पुरुष का लिंग गिर जाता है। फिर उसको सींग के नीचे के भाग की ओर से घिसकर लेप करने से खड़ा हो जाता है।

आलक्तक पटे बद्धं शुक्रं सेलुतलं स्थितं,
खट्वा पादतल स्थंवा षठंत्वं कुरुते नृणां ॥ १७२ ॥

आलक्तक (महावर-लाख) के कपड़े में बंधे हुए शुक्र (चित्रक) को सेलु (लिसोठ) के पेड़ के नीचे अथवा खाट की दायणा की तरफ रखने से पुरुष नपुसंक हो जाता है।

सौवर्णे राजते चापि भाजने धौत मौक्तिकं,
निपीतं कुरुते वानि पुनर्ध्वज समुस्थितं ॥ १७३ ॥

सोने या चांदी के बर्तन में घोंटे हुए घोंसी के पानी पीने से फिर लिंग खड़ा हो जाता है।

भावितं वस्त मूत्रेणषद्विन्दु रजनी रजः,
पानेनान्नेन वा दत्तं शठंभावानु जायते ॥ १७४ ॥

बकरे के मूत्रमें भावना दी हुई षडबिन्दु () और हल्दी के चूर्ण को खाने या पीने से नपुंसकता हो जाती है।

तिल गोक्षुर यो चूर्णः छागक्षीरेण साधितः,
ससितो मधुनायुक्तः षठं तां तां विखंडयेत् ॥ १७५ ॥

बकीर के दूध के साथ तिल और गोखरू के चूर्ण को शक्कर और शहद मिलाकर खाने से नपुंसकता नष्ट हो जाती है।

मूत्र स्थाने शत्रौर्न्नि खन्यते यस्य लांगली कंदः,
षढंत्वं तस्य भवेत प्रत्यानयनं तदुत खननां ॥ १७६ ॥

शत्रु के मूत्र स्थान में यदि लांगली केद को गाड़ दिया जावे तो वह नपुंसक हो जाता है। उसको उखाड़ लेने पर वह ठीक हो जाता है यह उसकी प्रतिक्रिया है।

भर्तुः साचैन्नारी सरेत उत्पत्ति काधि कल्क युतांभः,
दद्यात् स स्यात् षंठ स्तत्परि हृतये पिवेदजाक्षीरं ॥ १७७ ॥

यदि स्त्री पति को सरेत (रेत) और उत्पत्ति कांधि () कल्क सहित पिला दे तो वह नंपुसक हो जाए उसको दूर करने के वास्ते बकरी का दूध पीयें।

नृपशूकास्थि वघ्नीया दुष्ट्रास्थि विवर स्थितं,
शय्या शिरस्थं दंपत्यो गुह्या वयवौ रितौ ॥ १७८ ॥

रतिकाल में नृप ऋषभक, शूक (सुंडुभ) की हड्डी को ऊंट की हड्डी में छेद करके बांधकर सिरहाने की तरफ शय्या पर रखने से दंपत्ति के गुप्त अंग और अवयव बंधे रहते है।

गवयस्य शकृत्कीट पिंडीतः कुरुते रतौ,
वद्धं शय्या शिरोभाग स्थितं मिथुन गुह्ययो ॥ १७९ ॥

रतिकाल में गवय (रोशपशु) के गोबर के कीड़े के पिंड को शय्या पर सिरहाने की तरफ रखने से स्त्री पुरुष के गुप्त अंग परस्पर बंध जाते हैं।

सुगंध मूषिकाक्षूर्णे रालानं कृत लेपनं,
तत् चूर्णं गर्भ हस्तंवान प्रप्नोति मदीद्वपः ॥ १८० ॥

सुगंध मूषक (छछूंदरी) के चूर्ण को हाथी के खूंटे पर लेपकर देने से उस चूर्ण के प्रभाव से हाथी मस्त नहीं होता है।

क्षिति शतनया चूर्णः कीर्णोनसि निपातयत्,
तुरंगं तत्प्रतिकारं पान तस्य वचादनं ॥ १८१ ॥

क्षिति शतनया चूर्ण (असगंध) के चूर्ण को सूंघने से घोड़ा पृथ्वी पर गिर पड़ता है वच को खाने से यह फिर खड़ा हो जाता है।

कृष्ण जीरक जैक्षूर्णं सूक्ष्मै घ्राणिस्य रंध्रगैः,
आद्यं स्याद् वाजिन स्तक्र जाताक्षः सोनू वीक्षते ॥ १८२ ॥

काले जीरे के बारीक चूर्ण को नाक में जाने से शुरु में घोड़ा आंख से नही देख सकता है किंतु मट्ठे के आंख में जाने से वह देखने लगता है।

एवं कृतंक रोगाभ्यां पृथक निगदितो,
अत्र मोक्षविधिः सामान्य विमोक्षः स्यान्मारण कर्म्म प्रतिकारः ॥ १८३ ॥

इस प्रकार पुरुष कृत रोगों को छुड़ाने की विधि का पृथक वर्णन किया गया है। मारण कर्म का प्रतिकार इन रोगों को छुड़ाने का सामान्य उपाय है।

कृत्वै एतेषामांतंकानां प्रोक्तान्मंत्री साक्षान्मक्षुरं,
क्षन्यतां नृणां प्राणान् स्वर्गो तिष्ठे दीर्घकालं ॥ १८४ ॥

इन प्राण घातक रोगों के उपाय को साक्षात जानकर मंत्री पुरुषों के प्राणों की रक्षा करता हुआ दीर्घकाल तक स्वर्ग में रहे।

इत्थं प्रोक्ताः कृतिमास्ते च रोगास्ते चा नर्था मारणे क्षुद्र कल्पाः,
दिक्कालादि प्रक्रिया कल्पतेषु ज्ञातव्या सा मारणे या प्रयोज्या ॥ १८५ ॥

इस प्रकार कृत्रिम रोग अनर्थ और मारण के छोटे छोटे उपायों का वर्णन किया गया है जिनको मारण कर्म में प्रयोग करना हो तो उनको दिशाकाल आदि की प्रक्रिया ही को जानकर काम में लाएं।

इति कृत्रिम रोग प्रक्रिया विधानं ॥ १४ ॥

॥ ॐ नमः ॥

अथातः सं प्रवक्ष्यामि क्षुद्रं तं मारणाह्वयं,
यस्मात्प्राणि मृतां प्राणा रक्षणीया विशेषतः ॥ १ ॥

अब कुछ मारण कर्म नाम के उपाय कहे जाएंगे जिनसे विशेषकर प्राणियों के प्राणों की रक्षा नहीं हो सकती है।

अमोद्यो जिष्णुना मुक्त स्त्री राप्तो वाम संयुतः,
पुराणा स्साधितः श्रेयान्मंत्रो धूमावतीत्यसौ ॥ २ ॥

अमोद्य (घ) जिष्णु (ऊ) आगे नाम कहे पुराणा (फ) वाम (आ) आप्त (ल) श्रेयान (ट) अद्य (ठ) इनको मिलाकर मंत्र धूमावती देवी का होता है।

मनारैतेस्य पाठस्सा काली स्यादधि देवता,
लक्ष मेकम मुं मंत्रं जपेत्पश्चात्स सिद्धयति ॥ ३ ॥

इस मंत्र का मन में एक लाख जप करने से सिद्ध होता है खीर और दही से काली देवी को भेंट देवे।

अमुना राज्याज्यर्प्पित साध्यारव्या रव्या युक्त निबंदल,
हो मात गुलिका दिषु सप्ताहान्मरणं तद्वेषिणो भवति ॥ ४ ॥

राई और घृत से अर्चना कर साध्य अर्थात् शत्रु का नाम सहित नीम के पत्तों की गोली का होम करने से सात दिन में शत्रु का मरण होता है।

कुंडस्यांतबभूत तरु प्रतिमां शुलोग्र सुनिहितां,
कृत्वा असुनो हेम समिद्भि र्होमात् शत्रोर्भवेन्मरणं ॥ ५ ॥

कुंड़ के आगे वहेड़ा के पेड़ की लकड़ी को शत्रु की प्रतिमा बनाकर उसमें कीले चुभोकर धतूरे की समिधा से होम करने से शत्रु का मरण होगा।

अरिनाम चिता माप्यामंत्रिकरे लिखितमनल संतप्तं,
अस्या युत प्रजाप्पा ज्वर यति मारयति वारिं ॥ ६ ॥

शत्रु के नाम को हाथ पर लिखकर चिता की अग्नि पर तपाते हुए इस मंत्र का दस हजार जप करने से शत्रु को ज्वर होता है तथा वह मरण को प्राप्त होता है।

भूत तरु प्रतिमाममुना व्योषापामार्ग बीज संलिप्तां भ्रमयेत,
क्वाथ उदकोदर निहित मद्यो मुखां स्याद रिर्ज्वरि कणर्युः ॥७॥

बहेड़ा के वृक्ष की लकड़ी को शत्रु की प्रतिमा बनाकर उस पर व्योष (सोंठ मिरच पीपल) और अपामार्ग के बीजों का लेप करने से वह भ्रम में पड़ता है और इनके क्वाथ के जल का पेट पर लेपकर औंधा लटकाएं तो उसको ज्वर होता है।

निर्मूलैरधो वदनां कीलैरायस व्याप्तां प्रतिमां,
कृत्वा मंत्रोच्चारण पूर्वकं शिरो गृहीत ॥८॥

मंत्र पढ़ते हुए शत्रु को निर्मूल करने के लिए नीचे मुख की हुई प्रतिमा में अयस (लोहे) की कीलें गाड़ कर उसके सिर को पकड़े।

॥ ॐनमो काली मार स्वाहा ॥
अनेन शत्रो परितस्य पादरजः पतनं,
तेनैव सो भमन्सतुं मरणं प्राप्नोति न संशयः ॥९॥

इस मंत्र से शत्रु के पांवों की मिट्टी मंत्रकर शत्रु पर डालने से उद्वाटन तथा उसका मरण होता है इसमें सन्देह नहीं है।

तस्यो दरे शूल चलनम नेन होति नशंसयः,
स्त्रिया: स्यात्प्रियाणाश्च मारणां न च संशयः ॥१०॥

उसके पेट में बराबर दर्द होता है स्त्री का तथा उसके प्रियजनो का निश्चय से मरण होता है इसमें सन्देह नहीं है।

होमेनाशाधर कृतकेन कृतेना हत पल्लव संयुक्तन,
शत्रोर्भवति च मरणं न संशयो त्रैव वा चार्यः ॥११॥

आसाधरजी के होम विधान को मारण पल्लव (अर्थात् घे घे पल्लव) सहित करने से शत्रु का निश्चय से मरण होता है ऐसा आचार्यों ने कहा है।

श्री पूज्य पाद मुनिभिः प्रणीत मार्गेणा होमेन,
शत्रो भवति च मरणं न संश यो त्रैव नाचार्यः ॥१२॥

श्री पूज्य पाद मुनिराज के बनाये हुए होम विधान को करने से भी शत्रु का मरण निःसंदेह होता है इसमें कोई विचार नहीं करना चाहिए।

प्रकाशितं येन जिनेन्द्र केनां शुभं च लोकेत्र विचारणीयं,
अतोयं मुक्तो न समासतो ध्रुवं कुर्य्यान्न भव्यो न च सिद्धि मेति ॥ १३ ॥

श्री जिनेन्द्र देव ने प्रकट रुप से कहा है कि संसार में अशुभ कर्म करने का विचार भी नहीं करना चाहिए इसलिये यह सारांश में निश्चित है कि भव्य प्राणियों को मारण कर्म नहीं करना चाहिए इससे कोई सिद्धि नहीं होती है।

श्री जिनेन्द्रैर्यथा दिष्टं भव्याः कुर्वंतु धर्म्मकं,
दशधा भिन्न को त्रैव कुर्वंतु सदा हितं: ॥ १४ ॥

श्री जिनेन्द्र देव का यही आदेश है कि भव्य प्राणियों को सदा धर्म कार्य करना चाहिए तथा दश धर्म से भिन्न कोई काम नहीं करना चाहिए और सदा हितकारी काम करना चाहिए। धर्म पर आपत्ति आने पर ग्रंथांतर से उद्धत किए जाते हैं।

ब्रह्माणी काल रात्रि भगवती वरदे चंडि चामुंड़ नित्ये,
मातगांधारी गौरी धृति मति विजये कीर्ति ह्री स्तुत्य पद्मे ॥ १५ ॥

संग्रामे शत्रु मध्ये जय ज्वलन जले वेष्टिते न्यैः स्वरास्त्रैः,
क्षां क्षीं क्षूं क्षः क्षणार्द्धे क्षत रिपु निवहे रक्ष मां देवि पद्मे ॥ १६ ॥

ब्राह्माणी काल रात्रि भगवती वरदे चंडी चामुंड़ि नित्ये माता गांधारी गौरीधृति मति विजये कीर्ति ह्री स्तुत्य पद्मे इन १६ मातृका स्वरुपिनी स्वर रुपी जो अस्त्र है उनसे घिरी हुई युद्ध में शत्रुओं के बीज में अग्नि में जल में जिसने सब रिपु लोगों को आधे क्षण में नष्ट कर दिया है ऐसी है पद्मावती देवी क्षां क्षीं क्षूं क्षः इस मंत्र से हमारी रक्षा करो।

ॐ ह्रीं श्रीं प्रां प्रीं क्लीं क्लूं पदमावती धरणेंद्र सहिताय क्षां क्षीं क्षूं क्षःनमः स्वाहा ॥

इस मंत्र को हस्तार्क मूलार्क पुष्यार्क दिने पंच विंशति सहस्त्रेण २५००० दक्षिण दिशायां साधनं करके कृष्ण पुष्पों से काली माला से काले आसन पर बैठकर काले कपड़े पहनकर जाप करे तथा होम करे उसको शत्रु से भय नहीं होवे संग्राम में जय होवे अष्ट द्रव्य से पद्मावती जी का पूजन करे यंत्र पास में रखे।

तस्य शत्रु भयं न करोति
मृतिं गलति वा गृधिलो भवति

सोलह दल के कमल में १६ मातृका मंत्र लिखे मध्य में ह्रम्ल्व्र्यूं लिखे चारों दिशाओं में क्षां क्षीं क्षूं क्षः लिखे।

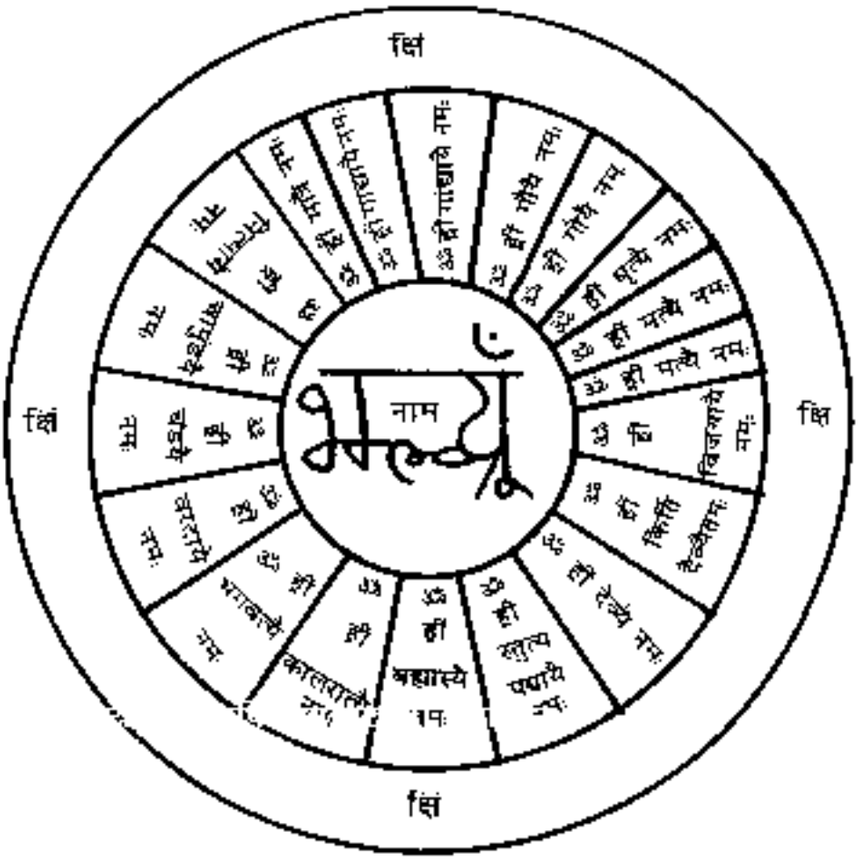

ॐ नमो भगवती महामाये अजिते अपराजिते त्रैलोक्य माते विद्ये से सर्व भूत भयावहे माणे माणे महामाणे अजिते वस्य करिणी भ्रम भ्रमणि शोषिणि ध्रुव करणी प्राण हरणी जये विजये जृंभणि स्वरे स्वगे प्राक्षे हर हर प्राण रिवं स्वणी स्वणी विद्युत वज्र हस्ते शोषय शोषय निस्त्रंशिनि दुष्टान हर हर प्राणानि मपि छेदिनि सहस्र शीर्षे सहस्र बाहवे सहस्र नेत्रे ज्वाला मुखी महामाणे इलमिते तिलमिते हे हुं हुं हे हे ष ष ग ग धुत धुत व व जी जी हौं हौं त्रिर त्रिर स्व स्व हसनि त्रैलोक्य वासिनि वासिनि त्रैलोक्योदर समुद्रेषे मेक्षे ले सि हुं रक्ष रक्ष फुट दे दे हे हे हु हु हन हन माणे माणे भूत प्रसवोपरे सिद्ध विधे हुं फट स्वाहा ॥

इत्य जिता तमहा विद्या जैन धर्म द्रोह नाशिनी दशमतो ब्रह्म चय तश्च यह अजिता नाम की महा विद्या जैन धर्म के शत्रुओं को नाश करती है।

ॐणट्ठठ मय ठाणे पणट्ठ कम्मट्ठणट्ठ संसारे परमट्ठि णिट्ठ अट्ठे अट्ठ गुणाधी सरं वंदे श्मशानांतारतः कृष्णी कृतौ लवण निवम धूम क्षारक सतैल गुग्गुलै होमलेपि चदिन प्रतिट्ठि सहस्त्रैः पुष्प जाप्यादरिक्षतः ॥

श्मशान के कोयले से काले किये हुए नमक को नाम के पत्र धूमस के साथ सरसौं का तेल और गुगुल का होम करने से शत्रु मरण को प्राप्त होगा इस गाथा का रोज दो हजार फूलों से जाप करे।

ॐ कोपोद्र कात्त वीर्यं कुटिल परि करं तारयारि प्रभूतं
ज्वाला मालाग्नि दग्द स्मरतनु सकलं त्वामहं शालुवेश ॥
हा दे त्वत्पाद पद्मन प्रणिहित मनसा द्वेहि नां यः क्रियाभि
स्तस्य प्राणा वसानं पर शिव भवतः शूल भिन्नस्य तूर्णम् ॥ १ ॥

श्रीः हे शालुवेश शरभेश्वर त्वत्पद कमल निवेशित चित्ते नत्वा महं याचे किंतदाह अरि प्रभूतं मां तारय प्रभूताः प्रचुरा अरयो यस्यो दृशं मां तारयेति एवमरि वृंदेभ्योमां रक्ष प्रभूत शब्द स्यात्रपर निपात आर्षः उक्त मेवार्थं प्रपंचयति हे पर शिवयो ममाभिचार क्रियाभि द्वेष्टि द्वेषेण ममोपरि मारणादि क्रियां करोति तस्य भवच्छूल भिन्न स्य प्राणा वसानं प्राण नाश स्तूर्णं त्वरितं भवतु त्यामित्य स्य विशेषण माहकोपोद्रेकात मिति कोपोद्रेकेन कोपोदगमेन आत्तं गृहीतं प्रकटी कृतं वीर्यं बलं स्वभावो वायेन तादृश मित्यथः वीर्यं बले स्वभावे चत्यमरः वीर्यं स्वभावे बले कौटिल्येपि च नपुंसक मिति हाराबलिः कुटिल परिकरं कुटिलाः दुरधि गम्याः परिकराः प्रवारकाः वीर भद्रादयो गणायस्य तादृशम ज्वाला मालेति ज्वालानां माला माला वत्पंक्तिर्यं स्मिन् तादृशेन तृतीय नेत्रोद्भूताग्निना दग्धा भस्मी कृता सकला स्मर तनुः कंदर्प गात्रं यैन तथा भूत मित्यर्थः सकल शब्द स्यात्र पर निपात आर्षः वस्तु तस्तु सकल तनु मिति सुपाठः ॥ १ ॥

हे शालुभेश्वर तुम्हारे पद कमल में अपना चित्त लगाकर तुमसे यह याचना करता हूँ कि तुम मेरी शत्रुओं से रक्षा करो क्योंकि मेरे बहुत शत्रु है और वे अभिचार वगैरह क्रियाओं द्वारा मुझ पर मारणादि क्रियाओं का प्रयोग करते हैं इसलिए आपके त्रिशूल के द्वारा उनके प्राणों का नाश तत्काल हो, आपके वीर भद्रादिगण बड़ी कठिनता से जानने के योग्य हैं अपनी ज्वालाओं के समूह के द्वारा तीसरे नेत्र से कामदेव को नष्ट किया है और क्रोध के समय आपकी शक्ति और भी ज्यादा बढ़ जाती है।

शंभो त्वद्धस्त कुंतं क्षत रिपु हृदयानि सूवल लोहि तौघं,
पीत्वा पीत्वाति दर्पा द्दिशि दिशि सततं त्वद गणाश्चंड मुख्याः
गर्ज्जंति क्षिप्रवेगा निखिल भय हरा भीकराः खेल लोलाः
सं प्रस्त ब्रह्म देवाः शरभ खगपते पाहिन श्शालुवेश ॥ २ ॥

शंभोत्यद्ध स्तेति हे शंभो हे शालुवेश हे शरभ हे खगपते हे पक्षिराज ईदृशाश्चंड मुख्या: चंडेश्वर प्रवभृतय स्त्वदगणा: यस्य त गणास्संति सत्वं सततं नस्त्राहि निरंतरं मां पाहीत्यर्थ: यद्वा चंड स्त्यत्यंत कोपन इति कोशा चंडेषु अत्यंत कोपनेषु मुख्या: प्रधाना: वीर भद्रादयो यस्य तव गणा इत्यर्थ: कीदृशा: त्यद्धस्त कुंतेन भवत्कर पल्लव वर्त्तिना कुंतेन भल्लेन प्रसिद्धेना युधेन क्षतं विदीर्णं यदिपु हृदयं तत स्खलंतं निर्गच्छंतं लोहि तौघं रक्त संघातं पीत्वा पीत्वा पुन: पीत्वा अत एवाति दर्प्पाद्धलादति गर्वात् क्षिप्र वेगा अति त्वरित वेगा स्संतो दिशि दिशि सर्व दिक्षु गर्ज्जंति प्रणिनदंति पुनश्च कीदृशा: निखिल भय हरा: भीकरा: साध्व साधुनामिति विवेक: भीतिर्भी साध्व संभव मित्यमर: खेला लीला: केलि चपला: खेला शब्द स्यात्र ह्रस्वत्व मार्ष संत्रस्त ब्रह्मदेवा: क्रीड़ा लौल्या वलोकनेन सं त्रस्ता: चकिता ब्रह्मादयो देव गणाद्येभ्य स्तादृशा इत्यर्थ: त्रस्तो भीतश्चकितोदारि तश्च शम प्रभ इति कोश: अनेक सं बोध्य पदो पादानेन स्वस्या त्यंत मार्तत्वम शूचयत ॥ २ ॥

हे शालुवेश ! हे संभव ! हे शरभ ! हे खगपति ! हे पक्षिराज तुम मेरी निरंतर रक्षा करो ! तुम्हारे चंडादि गण साधुओं के सम्पूर्ण भय को हरण करनेवाले हैं और दुर्जनों के लिए बड़े भारी भयंकर हैं। वे तुम्हारे हाथ में रहनेवाले भाले के द्वारा मारे हुए दुश्मन के हृदय से निकले हुए रक्त को पीकर अत्यंत अभिमान के साथ प्रत्येक दिशा में गर्जना करते रहते हैं। वे अत्यंत वेग वाले है और क्रीड़ा करने के लिए यह चपल रहते हैं तथा यह ब्रह्मादिक देवो को तंग करनेवाले हैं। इस तरह के गणों के मालिक हे शारभेश्वर तुम मेरी रक्षा करो।

सर्वाद्यं सर्व देष्टं सकल भय हरं तत्व रुपं शरण्यं,
या च हंत्वा नमोद्यं परिकर सहितं द्वेष्टियोंत: स्थितं माम्
श्री शंभो त्वत्कारब्ज स्थित मुसल हता स्तस्य वक्ष: स्थल स्थ
प्राणा प्रेतेश दूत ग्रहण परि रवा कोश पूर्वं प्रयान्तु ॥ ३ ॥

अमुकं दंड्य २ सर्वाद्यमिति हे श्री शंभो सुभगांग शंभो इति त्वामहं याचे प्रार्थये किंतदाह यो मामंत स्थितं मनसि स्थित मपि द्वेष्टि किमुत वहि: स्थितं तस्य वक्ष: स्थ प्राणा हृदगत प्राणा स्त्वत्कर कमल तल वर्त्ति मुसल हता स्संत: यमदूत सं परि गृहीता उच्चै: शब्दं प्रकुर्वाणा:प्रयांतु यम पुरं व्रजंतु इत्यन्वय: सर्वाद्यमित्यादि त्वा मित्य स्य विशेषणं सर्वाद्यं समस्त प्रपंच स्यादि भूतं सर्वदेष्ट सर्वकाम प्रपूरकं ईदृग्लक्षणं द्वष्टं वरो यस्य तादृशं यद्वा सर्वदा सर्वकालं वरो यस्य तादृशम् निरन्तर वरदानोद्यम शीलमित्यर्थ: सकल भय हरं सर्व भूतेभ्यो रक्षितारं तत्वं स्वतत्वं वेद

विग्रह मित्यर्थः यद्वा तत्वं ब्रह्म तद्रूपम सगुण निर्गुणात्मक ब्रह्म मय मित्यर्थः वेद स्तत्वं तपो ब्रह्म ब्रह्मा विप्रः प्रजापति रिति कोशः शरणयः शरणे साधुः शरणय स्तम तत्र साधु रितियत शरणार्ह मित्यर्थः अमोघं अव्यर्थ वचनं मोघं निरर्थकं स्पष्टं स्फुटं प्रव्यक्तमुज्वल मितिकोशः परिकर सहितं परिकराः प्रचारक गणास्तै स्समेतं युक्तम ॥ ३ ॥

हे शंभु ! मैं तुमसे यह प्रार्थना करता हूँ कि जो मुझसे बाहर से क्या किन्तु मन से भी द्वेष कर रहा है उसके प्राण तुम अपने हाथ में रहने वाले मुशल के द्वारा आघात कर, इस तरह यमदूतों को पकड़वाओ कि जिससे वे (प्राण) चिल्लाते हुए यमपुर को पहुँच जाए। तुम सारे देवताओं के आदि हो सबको इष्ट पदार्थ के देनेवाले, हो सम्पूर्ण भय को हरण करने वाले हो, तुम वेद स्वरुप हो, और सारे जीवों को शरण देने वाले भी तुम ही हो। इसलिए तुम मेरी इस प्रार्थना को पूरा करो अमुक व्यक्ति को दंड दो।

द्विष्मः क्षोणयां वयं यं तव पद कमल ध्यान निद्धूतपापाः
कृत्या कृत्यै विमुक्ता विहग कुल पते खेल या वद्ध मूर्त्तं
तूर्णं त्वत्पाणि प दम प्रयुत परशुना खंड खंडी कृतांगः
सद्वेषी यातु याम्यं पुरमति कलुषं काल पाशाव वद्धः ॥ ४ ॥

द्विष्म इति भो विहग कुल पते पक्षि वंशा वतंस क्षोणयाम वनि तलेयं द्वेषिणं वयं द्विष्मो द्वेष विषयी कुर्मः स द्वेषी रिपुः तूर्णम चिरात त्वत्पाणि पदम प्रयुत परशुना तव कर कम लाग्र वर्त्तिना कुठारेण खंड खंडी कृतांगः छिन्न भिन्न तनु रथो काल पाशाव वद्धः छांद सत्वा चतुर्थी तथाव काल पाशेन मृत्यु पाशेन वद्धो विवशी कृतो याम्यं पुरं यमस्य सं यमनी पुरी याम लोकं यातु गच्छतु काल पाशाय वद्ध इदि पाठे अप गत्या नाना विधया तनया वद्ध इति अति कलुषमिति याम्य पुर विशेषणाम निरयातिश मिति तस्यार्थः नन्वयं विहग पति रेवतर्हि किमस्य स्तुत्या भविष्यतीत्याशंक्याह खेलया वद्ध मूर्त्तं रिति खेलया क्रीड़या वद्ध मूर्त्तं स्वीकृता नेक विग्रह क्रीड़ा खेला च कुर्दन मित्यमरः एवं च नान्या शकुनि नामिव स्व कर्म सूत्रानु सारेणापक्षि जन्मवानयं किंतु भक्तानुग्रह कारणात्स्वीकृता नेक वेश वाने वेति भावः वद्य मितस्य विशेषणा माह तव पद कमल ध्यानेति तव पद कमल ध्यानेन नष्ट पापा इति तथा कृत्या कृत्यै विमुक्ताः ध्यान स्यात्र प्रक्रमः तव पद कमल ध्यानेन पदम पत्रमिवां भसा कार्याकार्य कर्मज पुन्य पापान व लिप्ता इत्यर्थः एतेन मारणोत्थाय नष्टस्योप्ये तद्धध्यान मत्र प्रायश्चित्त मुक्तं ध्यानं जपस्या प्युप लक्षणम तदुक्तं मंत्र महोदयो काल रात्रि प्रयोगे मारणां तु प्रकुर्वीत ब्राह्मणे तर विद्विषि तद् शुद्धार्थं जपेन्नूल मंत्र मष्टोत्तरं शतमिति ॥ ४ ॥

हे पक्षिराज ! इस पृथ्वी पर जिससे हम द्वेष करें वह बहुत जल्दी तुम्हारे हाथ में रहने वाले कुठार के द्वारा छिन्न भिन्न शरीर होकर, कालपाश द्वारा बांधा हुआ, अत्यंत कलुषित यमराज के नगर में पहुंच जाए । हे भगवान ! यह बात नहीं है कि तुम पक्षी हो और पक्षी की क्या स्तुति की जाए क्योंकि तुमने पक्षी का शरीर क्रीड़ा से धारण किया है । तुम उन अन्य पक्षियों की तरह नहीं हो जो कर्माधीन होकर पक्षियों का जन्म धारण करते हैं । तुम तो भक्तों पर कृपा करने के लिए अनेक वेशों को धारण करने वाले हो। हम तुम्हारे चरण कमल का ध्यान सदा करते रहते हैं । इसलिए बुरे काम करने से भी पापों से लिप्त नहीं होते अर्थात् मारण क्रिया से उत्पन्न होने वाले पाप के लिए तुम्हारा ध्यान एक प्रकार का प्रायश्चित है । मंत्र महोदधि के ग्रंथ में काल रात्रि के प्रयोग में लिखा है कि ब्राह्मण के सिवाय बाकी शत्रुओं पर मारण क्रिया जरुर करनी चाहिए और मारण क्रिया के प्रायश्चित के लिये मूल मन्त्र के १०८ जाप कर लेने चाहिए।

भीम श्री शालुवेश प्रणत भय हर प्राण जिदुर्मदानां
या चे पंचास्य गर्व प्रशमन विहितं स्वेच्छ या वद्ध मूर्त्ते
त्वामेवाशु त्वदंघ्र्यष्टक नष विलुठद् ग्रीव जंघोदर स्थ
प्राणोत्क्राम प्रमादात्प्रकटित हृदय स्यायु रल्पाये तेरम ॥५॥

भीमेति श्री शालुवेश लक्ष्मी सरस्वतीधात्री वर्ग संपद् विभूति शोभा सुउपकरण विशेषं च नाना विद्या सु च श्री रित्यत्र शोभा एवं च हे सौम्य विग्रह है शालुवेश इत्यर्थः तत्र साधूनां सौम्य विग्रह असाधूनां क्रूर विग्रह इति विवेकः प्रणत भय हरप्रणता नामात्मनि प्रहवी भीतानां भीति हारिन प्राण जिदुर्मदानां दुष्ट सत्वानां प्राण जित प्राण हत पंचास्य गर्व प्रशमनः पंचास्य सिंहो भृगेन्द्रः पंचास्योऽर्यक्षः केशरी हरिरित्यरः सिंहो नृसिंहः नामैदेशे नाम ग्रहणेन तस्यैवात्रौ वित्यात तद्गर्वध्वंसक स्वेच्छया वद्ध मूर्त्ते स्वेच्छा धृत कलेवर अत्र स्व कर्म सूत्रानुसार तोऽन्य पक्षि वन्नायं पक्षि जन्मवानि त्युक्तं ईद्दक शालुवेश विहितं विशेषेणात्म हितं त्वामेव आशु शीघ्रं या चे प्रार्थये इति संबंधः एव कारोवधारणे तेन निश्चित्य या चे इत्यर्थः याचनीय मात्महित मेवाह तदं घ्र्यष्टकेति तव पादाष्ट कस्य नखै र्विलुठदिवलुंठनम वाप्नु वद्यद् ग्रीवा जंघोदरं मूर्द्धदि पादां त मगं तत्र स्थिताना प्राणानाय दुत् क्रमः उत्क्रमेणां वहि निर्गमनं तस्य प्रमादात् प्रवेगात्प्रकटितं विकशितं विदीर्णं हृदयं यस्य ईद्दशास्यारिष्ट दस्यायुर रक्षि प्रमल्पायतां क्षिणोतु इत्यर्थः मूले अल्पायते इति ल आर्षः जवोथ शीघ्रं त्वरितं लघु क्षिप्र मरं द्रुत मित्यमरः ग्रीवा शब्दस्यात्र ह्रस्वत्वमार्ष यतु चंघेत्यत्र जिह्वेति पठ्यते तद सत जिह्वादीनां ग्रीवाश्रितत्वेन तथैव तत लाभ सिद्धे रिति ॥५॥

हे साधुओं ! के लिए अच्छे शरीर और असाधुओं के लिए क्रूर शरीर को धारण करने वाले है। नम्रीभूत लोगों के भय को हरनेवाले हे दुष्टों के प्राणों का नाश करने वाले ! मैं तुमसे शीघ्र यह याचना करता हूँ कि तुम अपने आर्वे पैरों के नखों से, ग्रीवा, (गरदन) जंघा और उदर अर्थात् पेट से लेकर मस्तक तक रहनेवाले मेरे शत्रु के प्राणों को तुम नाश करो अर्थात् उनकी आयु को कम कर दो।

श्री शालोते कराग्र स्थित मुसल गदा वर्त्त वाता भिघात,
छात पातारि यूथं त्रि शिख विघटनोद्भूत रक्तच्छटार्द्रम
सं दृष्ट्वा यो यनेज्या निरिवल सुरगणाश्चाशु नदंतु भूता
नाना वेताल पूगा : पिवतु तद खिलं प्रीत चित्त प्रमत्ता: ॥ ६ ॥

श्री शालो इति उदाहृत व्यादि कोशात श्री स्त्रि वर्ग संपदुच्यते अथ च श्रीयते सेव्यते मुमुक्षु भिर सौ वित्ति व्युत्पत्या श्री मुक्ति: वाहुल कात्कचित्क्विति क्वी प्रदीर्योतयो रेकत्रैक शेषेश्रियौतयो: प्रद: शालु: तत्संबु द्धो तथा एतेन धर्मार्थ काम लक्षण त्रिवर्ग संपत्प्रदत्वं मुक्ति प्रदत्वं चा स्योक्तं एवं च हे चतुर्वर्ग प्रद श्री शालो ते तवकर पल्लव वर्ति मुसल गदयो र्यदावर्त आवर्तनं भ्रामणां तज्जनि तस्य वात स्याभि घातेन तथा तज्जनित ध्यातेन शब्देन च आपातो भूमि पतनं यस्य तादृशं अथ च त्रिशिख विघटनेन कराग्र वर्ति त्रिशूल परिघट्टनेनोद्भूतानि: सृताया रक्त च्छटा शोणित प्रवाह स्तेनाद्रविभक्त तं चारि यूथं रिपु वृंद सं दृष्ट्वा सम्यग्दृष्ट्वा अति प्रसन्नं चित्तेन दृष्ट्वेति यावत आयोधने ज्या: आयोधनं युद्धं तत्रेज्या: पूज्या: युद्ध प्रशस्या: शूरा इति यावतमायोधनं जन्य प्रधनं प्रविदारणा मित्यमर: तथा निरिवल सुरगणाश्च आशु शीघ्रं नदंतु तुष्यंतु तथा भूता नाना विद्यास्तव भूत गणा स्तथा वेताल पुगा वेताल वृंदानि च प्रीत चित्त प्रमत्ता: चित प्रसाद भारेणोन्मत्ता: संत अखिलं तत त्रिशूल भेदोद्भूतं रक्त वृंदं पिवंतु इत्यर्थ: मूलेपि वत्वित्येक वचनमार्ष पूग: क्रमुक वृंदयो रित्यमर: ॥ ६ ॥

अत्र सर्वत्रामुकं दण्डयेति द्वितीयोज्यम

हे त्रिवर्ग सम्पत्ति और मुक्ति के देनेवाले तुम्हारे हाथ में रहनेवाले मुशल और गदा के भ्रमन से उत्पन्न हुई वायु के अविघात से- जो मेरे शत्रुओं का समूह जमीन पर गिर गया है, और त्रिशूल के विघट्टन से उत्पन्न हुआ रक्त की छटा से जो गीली हो गई है - ऐसा शत्रु समूह को युद्ध में देखकर सारे शूरवीर शत्रुगण और नाना प्रकार के वेतालों का समूह उन्मत्त को प्राप्त हो, तथा वे प्रसन्नचित्त होकर मेरे शत्रु के रक्त को पीएं।

त्वद्दोर्दंडाग्र मुंड प्रघटित विनदचंड कोदंड मुक्तै,
बाणै र्दिव्यैरनेकै: शिथिलित वपुष: क्षीण कोलाहलस्य,
तस्य प्राणावासानं पर शिवभवतो हन्तु माज्ञा प्रभावै
स्तूर्णं पश्यामि यो मां परि हसति सदा ह्यादि मध्यांत हेतो: ॥७॥

त्वद्दोर्दंडेति हे परशिवयो रिपुमां परिहसति ममोपहासं करोति हंतु इच्छतिइति शेषस्तस्य रिपुर्तवदाज्ञा प्रभावै: तूर्णं शीघ्रं प्राणावशानां प्राणानाशमहं सदाहि निश्चयेन पश्यामीत्यन्वय: तस्य कथं भूतस्येत्य आह त्वदोर्दंडेति त्वदोर्दंडाग्रेणभुजदंडाग्रेण कर पल्लेन मुंडस्य मध्य भागस्य सत्प्रघटितं प्रकर्षेण यटकंदृढ़मुष्टिना पीडनं तेन विनदन विशिष्टनादं घोर शब्दं कुर्वन्नास्ते चंडोऽत्यंत कोपनौद्य: कोदंड पिनाक: तन्मुक्तै स्तान्निर्गततरैनेक संख्यै र्दिव्या हत गतैरीदृशैर्वाणै: शिथिलितं शिथिलीकृतं वपुर्गात्रं यस्य तादृशस्येत्यर्थं पुन: कीदृशस्यक्षीणा कोलाहलस्य कोलाहल: शब्द संघात: स नष्टो यस्य तथा भूतस्य कोलनं कोल: एकी भाव स्तमा हलतिभिनत्तीति व्युत्पते: कुल संख्यानेभावे घज हल विलेखनेऽस्मात् वाद्य च शर जनित क्षतैना चेव नत्वा क्षितिभाव: पुनश्च। कीदृशस्य आदि मध्यांत हेतो: प्रातर्मध्यान्ह संध्या हेतव: प्राणा व सानस्य तादृशस्य त्रिष्वेतेषु कालेषु नष्ट प्राणास्येत्यर्थ: एतेना त्रेति सदा शब्दो व्याख्यात: एवं चायं मुख्य: कृत्याकालो ज्ञेय: एतावता प्रयद्दनेन शत्रो: प्राणावसानं कृतं प्रपंचनम् ॥७॥ शरभेश्वर पाहि

हे परशिव ! जो शत्रु मेरी हँसी करता है जो मुझे मारना चाहता है, उस दुश्मन के प्राणों का नाश- मैं तुम्हारी आज्ञा से जल्दी ही, देख तुम्हारे बाहुदंड से शब्द करते हुए प्रचण्ड धनुषों के द्वारा छोड़े गये अनेक दिव्य बाणों के द्वारा मेरे शत्रु का शरीर शिथिल हो गया है, और उसका कोलाहल भी क्षीण हो गया है। ऐसे शत्रु को जल्दी ही नाश कर दो ।

इति निशि प्रयतस्तु निरामिषो यममुख शिशव भाव मनु स्मरन्,
प्रतिदिनं दशधाहि दिन त्रयं जपतु निग्रहदारुण सप्तकं ॥८॥

इति गुह्यं महामंत्रं परमं रिपु नाशनं
भानुवार समारभ्य मंगलान्त जपेत्सुधी: ॥

समाप्तिभंगमिदिम्।

इदानीमस्य स्तोत्रस्य शत्रु निग्रहाद्य प्रयोगमाह : इतीति सुधी: प्राज्ञ: प्रयतो जितेंद्रियो निरामिषो मांसाशन वर्जितो निशि संध्यायां यम मुखो यमाशो वदन: शिवभाव मनुस्मरन् शिवरूप त्वमात्मनि भावयन दिन त्रयं भानुवासन

मारभ्य मंगलांतं प्रतिदिनं निग्रह दारूणा सप्तकं शत्रु निग्रह कारकं दारूणा
सप्तकानि ध्येयम शरभ देवताभिधेयं दशद्या दशबारं शत्रु निग्रहार्थं जपेदित्यर्थं ॥८॥

अथेदंस्तोत्र स्तुवन्नुपसंहति इतीति इतिदं स्तोत्रं गुह्यं गोप्यं महामंत्रं माला ।
मंत्र स्वरूपं यद्वा सर्व मंत्रेषु पूज्यो महामंत्र स्तद्रूपं महींद्र पूजाद्यामिति धातुनि:
यन्नत्वात श्री शालु वेशीद्य महास्तवोवै नृणां समस्तार्थ कर: परोद्य: टीका कृता
तत्र मुदेजनाना मालोक्य तां कार्य मुपा चरंतु आलोक्येति अर्थ ज्ञानायेति भाव:
यदा हे भरद्वाज: फलं विश्वास भक्तिभ्यां जपादीनं महत्तरं अर्थ ज्ञानं तथा
मूलं तस्मादर्थ विधिंतद्येदिति ॥९॥

इति श्री शरभेश्वर दैवत स्तुति विषयक
दारूण सप्तक विवरणा समाप्तम्

अब इस स्तोत्रं का शत्रु के निग्रह करने का प्रयोग बतलाते हैं- बुद्धिमान जितेन्द्रिय मांस को नहीं खाने वाली आदमी संध्या के समय दक्षिण दिशा में मुख करके, अपने आप में शिव रूपत्य का अर्थात् मैं शिव हूँ ऐसा विचार करता हुआ, इतवार से लेकर तीन दिन तक अर्थात् मंगलवार तक प्रतिदिन इस शालुभेश्वर के स्तोत्र को शत्रु के निग्रह के लिये दस बार जपे । अब इस स्तोत्र की तारीफ करते हैं। यह महामंत्र है और छुपाने लायक है। परन्तु , उत्कृष्ट है और रिपुओं का नाश करने वाला है इसलिये इतवार से मंगलवार तक तीन दिन तक जपना चाहिये।

ॐ नमोरि हनन रजो हनन रहस्य हनन जिनार्हद्भ्यो नम:

मंत्रमेकं धर्म रक्षार्थां मतं घोर दु:खके,
मलेच्छादिभिरूपद्रव समये जाप्प मे वच: ॥१०॥

इस मंत्र का धर्म की रक्षा के वास्ते घोर दु:ख के समय या म्लेच्छ लोगों के द्वारा उपद्रव किये जाने के वक्त जाप करे।

अथतोवच्मि भो भव्या: श्रृणुत यूयं प्रतिकारं मारणां,
त्व शुभं लोके अतो वद्य प्रतिषेद्य विधिं ॥१॥

लोक में मारणा कर्म बहुत बुरा होता है अतएव हे भव्यो तुम मारणा के प्रतिषध करने की विधि को सुनो

श्री जिन सेनेम मुनिना यत्कृत मुपायं धर्म रक्षार्थं,
संतम संतं तं प्रति सारेणा ब्रुवे श्रृणुभो भव्याः ॥ २ ॥

हे भव्यो धर्म की रक्षा करने के वास्ते श्री जिनसेन मुनिराज ने जो उपाय कहा है उस उपलब्ध (मिलते हुए) और अनुपलब्ध (न मिलते हुए) को भी मैं अब विस्तार (प्रतिसार) से कहूँगा ।

धान्यैश्च राजभिर्लोके चोपायो होम कस्यतु,
प्रोक्तोनानोपधान्यैश्च होमेन कृत उत्तमः ॥ ३ ॥

लोक में धान्य और सफेद सरसों (राजि= राई) से हवन करना उत्तम उपाय कहा गया है। अनेक प्रकार के छोटे-छोटे उपधान्यों से किए हुए हवन को उत्तम नहीं कहा गया है।

जघन्यैरपिन प्रोक्तो होमः सर्व सुखाकरः,
तस्मात् क्रियेत् यत्नेन विदुषाज्ञानिना ध्रुवं ॥ ४ ॥

जघन्य द्रव्यों से किये हुए होम को भी सब सुखों को करने वाला नहीं कहा गया है- उस वास्ते यह होम विद्वान ज्ञानी के द्वारा यत्न से ही निश्चयपूर्वक किया जाना चाहिए।

ज्वालिनी पदमावत्यं बिकाश्च चक्रेश्वरी,
समेता स्ता सां कल्पेऽथ पंचांगे ॥ ५ ॥

उनका वर्णन ज्वालामालिनी पद्मावती अंबिका और चक्रेश्वरी देवियों के कल्प तथा पंचांग में किया गया है।

दृष्टव्यो होम विधि र्मारणनाशस्तुचा न्यैश्च,
आशाधरादि कृत अपि होमः पल्लव शांति युक्तः ॥ ६ ॥

दूसरे लोगों के किये गये मारणा कर्म को नष्ट करने के वास्ते होम विधि को आशाधर आदि के किये हुए शांति के पल्लव सहित होम की विधि को देखना चाहिये।

मारणामपि करोति होमाश्च स्व स्व पल्लव संयुक्ताः,
तेषां विचार एवहि करोति होमश्च सिद्धिमेति भृशं ॥ ७ ॥

अपने अपने पल्लवों से युक्त होने से होम मारण भी करते हैं उनको विचार पूर्वक करने से ही सिद्धि हो जाती है।

ॐ वृषाभाजित संभवाभिनंदन सुमति पद्मप्रभु सुपार्श्व चंद्रप्रभ पुष्पदंत शीतल श्रेयांस वासुपूज्य विमलानंत धर्मशांति कुंथ्वर मलि मुनि सुव्रत नमि नेमि पार्श्ववीराः परमेष्टिनोपि देवाः सर्वेपि शांति कुरुत कुरुत स्वाहा ॥

मंत्रो द्वादश लक्ष प्रजाप्पतः सिद्धिवशमेपति,
पश्चोदेतेन च हि स्नानं मारणास्त्र नाशं करोति ॥ ८ ॥

यह मंत्र बारह लाख जप से सिद्ध होता है फिर मंत्र से अभिमंत्रित जल स्नान कर देने से यह मारण कर्म को नष्ट करता है।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः सर्वज्ञाय स्वयंभुवे शिवाय परमात्मने परम सुखाय त्रिभुवन महिताय अनंत संसार चक्र प्रमर्दनाय अनंत ज्ञानाय नमः अनंत दर्शनाय अनंत वीर्याय अनंत सुखाय सिद्धाय बुद्धाय त्रैलोक्य वंशकराय सत्य ज्ञानाय सत्य ब्राह्मणे धरणेन्द्र फणा मंडल मंडिताय उपसर्ग विनाश कराय धाति कर्मक्षयं कराय अजराय अमराय अमराय अमराय अस्माकं मृत्युं छिंद छिंद भिंद भिंद हंतु कामं छिंद छिंद भिंद भिंद रति कामं छिंद छिंद भिंद भिंद बलि कामं छिंद छिंद भिंद भिंद सर्व क्रोधं छिंद छिंद भिंद सर्व बैरं छिंद छिंदभिंदभिंद वायु धारणं छिंद छिंद भिंद भिंद अग्नि मंत्राणि छिंद छिंद भिंद भिंद सर्व शत्रु छिंद छिंद भिंद भिंद सर्वोपसर्गं छिंद छिंद भिंद भिंद सर्व विघ्नं छिंद छिंद भिंद भिंद सर्व भयं छिंद छिंद भिंद भिंद सर्व चोर भयं छिंद छिंद भिंद भिंद सर्व राज्य भयं छिंद छिंद भिंद भिंद सर्व दुष्ट भयंछिंद छिंद भिंद भिंद सर्व व्याघ्र भयं छिंद छिंद भिंद भिंद सर्व ग्रहभयं छिंद छिंद भिंद भिंद सर्वविषं छिंद छिंद भिंद भिंद सर्वव्याधिं छिंद छिंद भिंद भिंद डामरं छिंद छिंद भिंद भिंद सर्व परमन्त्रं छिंद छिंद भिंद भिंद सर्व परकृतं छिंद छिंद भिंद भिंद सर्वरोगं छिंद छिंद भिंद भिंद सर्वशूल रोगं छिंद छिंद भिंद भिंद सर्वअक्षि रोगं छिंद छिंद भिंद भिंद सर्व शिरोरोगं छिंद छिंद भिंद भिंद सर्व ज्वरोरोगं छिंद छिंद भिंद भिंद सर्व नरमारिं छिंद छिंद भिंद भिंद सर्व गजमारिं छिंद छिंद भिंद भिंद सर्वाश्वमारीं छिंद छिंद भिंद भिंद सर्व गो मारीं छिंद छिंद भिंद भिंद सर्व माहिष मारिं छिंद छिंद भिंद भिंद सर्व अज मारिं छिंद छिंद भिंद भिंद सर्वापस्मारिं छिंद छिंद भिंद भिंद सर्व विषम क्रूर रोग वेताल डाकिनी शाकिनी भयं छिंद छिंद भिंद भिंद सर्व वेदनीय छिंद छिंद भिंद भिंद सर्व मोहनीयं छिंद छिंद भिंद भिंद सुदर्शन महाबल चक्र विक्रम बल सत्व तेजोजय शौर्यवीर्याय शांति कुरु कुरु भगवते धाति कर्म छिंद छिंद भिंद भिंद सर्व लोक सर्व देश सर्व सत्वं वशं कुरु कुरु सर्व पापं हन हन दह दह पच पच गृन्ह गृन्ह घृष्ट घृष्ट शीघ्र शीघ्र सर्ववश मानय मानय हुं फट् स्वाहा।

धाति कर्म क्षयो नाम माला मंत्रोयं मत्तमं,
श्री पार्श्वनाथो भगवानस्य स्यादधि देवता ॥ ९ ॥

जपो द्वादश लक्षोऽस्य पुरश्चरणामच्यते,
तदर्धतः सहस्रेण गंध पुष्पैः मुंजपेत, ॥ १० ॥

यह धाति कर्मक्षय नाम का उत्तम माला मंत्र है इसके अधिष्ठाता देवता श्री पार्श्वनाथ भगवान है। बारह लाख जप का इसका पुरश्चरण कहा गया है फिर उसको सुगंधित पुष्पों के द्वारा चार हजार जपना चाहिए।

सन्निधौ पार्श्वनाथस्य ततो सौ सिद्धि मृच्छति,
इत्थं सं साधितेः सर्वं शुभाशुभं फलावहः ॥ ११ ॥
छेदनः परमंत्राणां सर्वक्षुद्र निशुदनः,
भेरूंड शरभ व्याघ्र हरि वारणा वारणः ॥ १२ ॥

इसप्रकार श्री पार्श्वनाथ भगवान के सामने बैठकर सिद्ध किया जाने पर यह सिद्ध होकर सब शुभ और अशुभ फलों को कहता है यह दूसरों के मंत्रो का छेदन करता है भेरूंड पक्षिराज शरभ (अष्टापद) व्याघ्र (बघेरे) हरि (सिंह) वारण (हाथी) को दूर करता है।

प्रति मंत्रि कृतं रूंधेत् शिलाग्न्यादि नितापनं,
अंशा अप्पस्य बहवो मंत्रा बहु फल प्रदा ॥ १३ ॥

इस मंत्र से अभिमंत्रित करने से शिला में से अग्नि आदि का ताप भी दूर होता है, इस मंत्र के बहुत से फल देने वाले बहुत से अंश भी हैं।

एतज्जप्ता दृषद पात्रेन्यस्य प्रपूरिते गव्यैः,
मेष मृगादि राजं चापं वा ध्यासिते भागे ॥ १४ ॥

दश (ष) द (पत्थर) के बरतन में गोदूध को रखकर इस मंत्र को जपने से मेंढा मृगराज (सिंह) आदि इस भागमें रहना छोड़ देते हैं।

अभिज्जित नाम्नि मुहूर्त्ते शुक्लाष्टम्यां समाहितो,
निखने ते मध्ये क्षेत्रं मंत्रिक्षेत्रं द्रोह स्ततो नश्येत् ॥ १५ ॥

यदि मंत्री इस मंत्र को अभिजित नाम के नक्षत्र में शुक्ल अष्टमी के दिन एकान्त चित्त होकर खेत के बीच में समाहित (रखकर) या गाड़ देवे तो खेत के उपद्रव और न्यूनताएँ सब नष्ट हो जाती है।

मुद्गेक्षुशालि यव गोधूमां बुज बिल्व गव्य तिल माषान्,
विनस्य ताम्र रचिते पात्रे तत् तंतु वा बद्धा ॥ १६ ॥

अर्द्धं मावस्याया: पर्व स्मिन् मंत्रितं तता निखनेत्,
गृहलस्य क्षेत्र शस्यादौ तत्तद्रोगा: प्रणश्यंति ॥ १७ ॥

मुदग (मूंग) इक्षु (ईख) शालि (चावल) यव (जौ) गोधूम (गेहूँ) अंबुज (कमल) बिल्व (बेल) गव्य (गाय का दूध) तिल माषान (उड़द) को ताँबे के बर्तन में रखकर उसको धागे से बाँधकर अमावस के पहले आधे भाग में इस मंत्र से इन सबको अभिमंत्रित करके घर में नृत्यशाला में और खेत की फसल आदि में गाड़ दे तो उसके सब रोग नष्ट हो जाते हैं।

लक्ष्मी रूक करषं गव्य तुलसी वार्क दारवी वा निशा बिल्वां,
भोज दलानि भृंग सुरसा भद्रेंद्र वल्लि कुशा: राजी रक्त ॥ १८ ॥

तिलोपामार्गा तुहिन क्षीर द्रुमत्वगदल कांत्यु,
ग्रामशुरोचना मुशलिका अन्याश्च दिव्यौषधि: ॥ १९ ॥

भस्मी कृत्य घटोदरे विनिहिता: पश्चादु पादाय तद्भस्मानेन,
सहस्त्रबार जपितं मूर्द्धादिकेष्वर्प्पयेत् तत्तत्क्षुद्रग्रह रोग कृतस्तु वितरव्यायु: ॥ २० ॥

श्रियं संपदं सौभाग्यं विजयं च रक्षति,
शिशून् गां गर्भिणीश्च स्त्रिय: ॥ २१ ॥

लक्ष्मी (ऋद्धि वृद्धि) रूक () करष () गव्य (गाय का दूध) तुलसी वार्क (रस) दारवी () निशा (हल्दी) बिल्व (बेल) अंभोजदलानि (कमल के पत्ते) भृंग (भागंरा) सुरसा (लाल तुलसी) भद्रा अनंत मूल = कायफल) इंद्रवल्ली (इंद्रायण) ऋशा () राजी (राई) रक्तिला (लाल तिल) अपामार्ग (आधी ज्रडा चिरचिटा) तुहिन (कपूर) क्षीरद्रूम (दूध वाले वृक्षों के पत्ते)क्रांति ()उग्रा (अजमोद) मश्रु (मसूर) रोचना (गोरोचन) मुशलिका (मूसली) और दूसरी भी दिव्य औषधियों को घड़े में रखकर भस्म करके उपाय पूर्वक भस्म को निकाल कर उस भस्म को एक हजार बार जप कर मस्तक आदि पर रखे तो छोटे मोटे रोग नष्ट हो जाते हैं। यह आयु लक्ष्मी संपदा सौभाग्य विजय मिलती है तथा बच्चों गाय और गर्भिणी स्त्रियों की रक्षा करती है।

ॐ णमो भयवदोवड्ढमणा रिसस्स जस्स चक्कं चलतं गच्छई आयासं पायालं लोयाणां सं भूयाणां जयो वा विवादेवा रणं गणेवाथंभणेवा मोहनेवा सव्व जीव सत्ताणं अपराजिदो होदु मम रक्ष रक्ष असि आउसा हूँ ह्रीं स्वाहा ॥

श्री वर्द्धमानमंत्रोयं सिद्धयत्त्य युत जाप्पतः,
महावीर जिनेन्द्रोधि दैवत सार्व्वकार्मिकः ॥ २२ ॥

मंत्रस्यास्य भवेज्जप्त्य श्यायु र्विद्या वशी कृतिः,
समृद्धिर्धन धान्यानां सौभाग्यं स्तंभनं कृतः ॥ २३ ॥

संग्राम व्यवहारादौ विजयः पथि रक्षणं,
शांति गृहाणामारोग्यमन्य च फल मुत्तमं : ॥ २४ ॥

तज्जलांबुकृत स्नानंभजो गर्भ प्रदं स्त्रियः,
एतन्नित्य जपः सार्व संपादयति संपदः ॥ २५ ॥

यह श्री वर्द्धमान स्वामी का मंत्र दस हजार जप से सिद्ध होता है इसके सब कार्यों में श्री महावीर भगवान ही अधिष्ठाता देवता है। इस मंत्र को जप ने से लक्ष्मी आयु विद्या वशीकरण धनधान्य की समृद्धि सौभाग्य और स्तंभन होता है। इस मंत्र से युद्ध और मुकदमे में विजय मिलती है, मार्ग में रक्षा होती है, ग्रहों की शांति होती है, आरोग्य मिलता है तथा और भी उत्तम फलों की प्राप्ति होती है। इस मंत्र से अभिमंत्रित किये हुए जल के स्नान से स्त्रियों से भोग करने से गर्भ रहता है। तथा इसका नित्य जप करने से सब संपत्तियाँ आती हैं।

मंत्रत्रय मिदम निशं सं संवित मादरेण लोकस्य,
रत्न त्रय मिव कुरूते शुभं सदा नाशयत्य शुभं ॥ २६ ॥

इन उपरोक्त तीनों मंत्रों का आदरपूर्वक प्रतिदिन जाप करने से यह सदा रत्नत्रय के समान हित करते हैं और अशुभ का नाश करते हैं।

स्वत्यनुकूले काले साध्यस्य शुभोडुकरण हौरादौ,
वाहे चामृत नाडया स्सति सति न सति प्रसीदति च ॥ २७ ॥

साध्य के अथवा अपने अनुकूल उत्तम नक्षत्र उडु (तारा) करण होरा आदि में अमृत नाड़ी (चंद्रस्वर) के चलते हुए कार्य करने पर नहीं होने वाला कार्य भी इतना उत्तम होता है कि मन प्रसन्न हो जाता है।

सर्वैः सुरभि द्रव्यैर्नव रत्न युतैर्नवैर गवाद्यैः,
कपिला गोक्षीर युतैः शुद्ध द्विज कन्यया पिष्टैः ॥ २८ ॥

नवहेमपात्र निहितैः कनक शलाग्रकभाग समुपात्तैः,
विलिखेत्साध्यास्या ख्याभूर्ज दल वि निर्म्मिते मंत्री ॥ २९ ॥

सब सुगन्धित द्रव्य नौ रत्न और नये अंगुर आदि को काली गौ के दूध से शुद्ध की हुई द्विज की कन्या से पिसवावे । नये सोने के बर्तन में सबको रखकर सोने की बनी हुई कलम के अग्रभाग से भोजपत्र पर मंत्री साध्य के नाम को लिखे।

झं वं ह्वः पः क्षः शशिभिर्वेष्टय स्वरैश्च षोडशाभिः,
तद्बाह्ये विलिखेत्पं द्वादशदल संयुतं कमलं ॥ ३० ॥

फिर उसके बाहर झं वं ह्वः पः क्षः और शशि (चन्द्रमा) से वेष्टित करके नाम को सोलह स्वरों से भी वेष्टित करे उसके बाहर बारह दल वाले कमल को बनावे (लिखे)

तेषु दलेषु विलेख्यं द्वादशभिः संयुतै स्वरैः,
शून्यांतभंभसा संपुटितं प्रवेष्टयमपमृत्युंजयममुना ॥ ३१ ॥

उन दलों में बारह स्वरों से युक्त शून्य बीज (हकार) को लिखे उसके बाहर दो जल मंडलों का सम्पुट बनाएँ इस यंत्र से अपमृत्यु जीती जाती है।

ॐ नमो भगवते देवाधिदेवाय सर्वोपद्रव विनाशनाय सर्वापमृत्युंजय कारणाय सर्व सिद्धिं कराय ह्रीं ह्रीं श्रीं श्रीं ॐ ॐ क्रौं क्रौं ॐ ॐ ठः ठः देवदत्तस्यापमृत्युं घातय घातय आयुष्यं वृद्धय वृद्धय स्वाहा ॥ अप मृत्युंजय मंत्रः

बाह्ये वलयं कृत्वा जल मंडल संपुटं ततो दद्यात,
लोह त्रितयेन ततो यंत्रं त द्वेष्टयेद्विधिना ना ॥ ३२ ॥

फिर उस यंत्र के बाहर गोल वलय बनाकर जल मंडल का संपुट बनाए फिर यंत्र को त्रिलोह (ताम्र १२ तार १६ सुवर्ण ३ भाग) के अन्दर विधिपूर्वक जड़वा लें।

गंधाद्यैरर्चितमिदम अपमृत्यु जया ह्वयं महायंत्रं,
सप्ताभि मंत्रयेदथवा रानप मृत्युंजयमुना ॥ ३३ ॥

कृत्वा जैनी मिज्यां दत्वा च चतुर्विधाय संघाय,
योग्यं दानं साध्य स्तद यंत्रं धारयेन्मूर्ध्नि ॥ ३४ ॥

इस अपमृत्युंजय महायंत्र को गंध आदि से पूजकर सात बार इस मंत्र से अभिमंत्रित करे तो इससे अपमृत्यु जीती जाती है। जिनेन्द्र भगवान की पूजा करके चारों प्रकार के संघों को उनके योग्य दान देकर साध्य इस यंत्र को सिर पर धारण करे।

हंत्यपमृत्यु दत्तमवन विशेषतः क्षुद्रकर्म,
सर्वमर्पितनुते शांति समंदवांच्छितांश्चर्थान् ॥ ३५ ॥

यह यंत्र अपमृत्यु और सभी छोटे छोटे उपद्रवों को नष्ट करता है और अवन (संरक्षता) देता है और विशेष करके शांति और पुष्टि करता है तथा सुख और इच्छा किये हुए सब पदार्थों को देता है।

गर्भध्वंसकराणां ग्रहोत्कराणां क्षणान्निराकरणं,
विदधात्यंतर्वन्नर्यां: क्रियमान मिदं शुभं यंत्रं ॥ ३६ ॥

यदि इस शुभ यंत्र को वन्नो (घर रहने के स्थान) में रखे तो यह गर्भपात करने वाले सभी ग्रहों को क्षण मात्र में नष्ट करता है।

सिकत्थकवेष्टितमेतद्यंत्रं शीतांबुधारी घट निहितं,
कुरुते दाहोपशमं वारयति ग्रहकृताः पीडाः ॥ ३७ ॥

यदि इस यंत्र को सिकथक (मधुमक्खी के मोम) में मढ़कर शीतल जल की धारा वाले घड़े में रखा जाए तो यह यंत्र शरीर की दाह (जलन) को शांत करता है और ग्रहों की पीडा का निवारण करता है।

रक्षा यंत्र

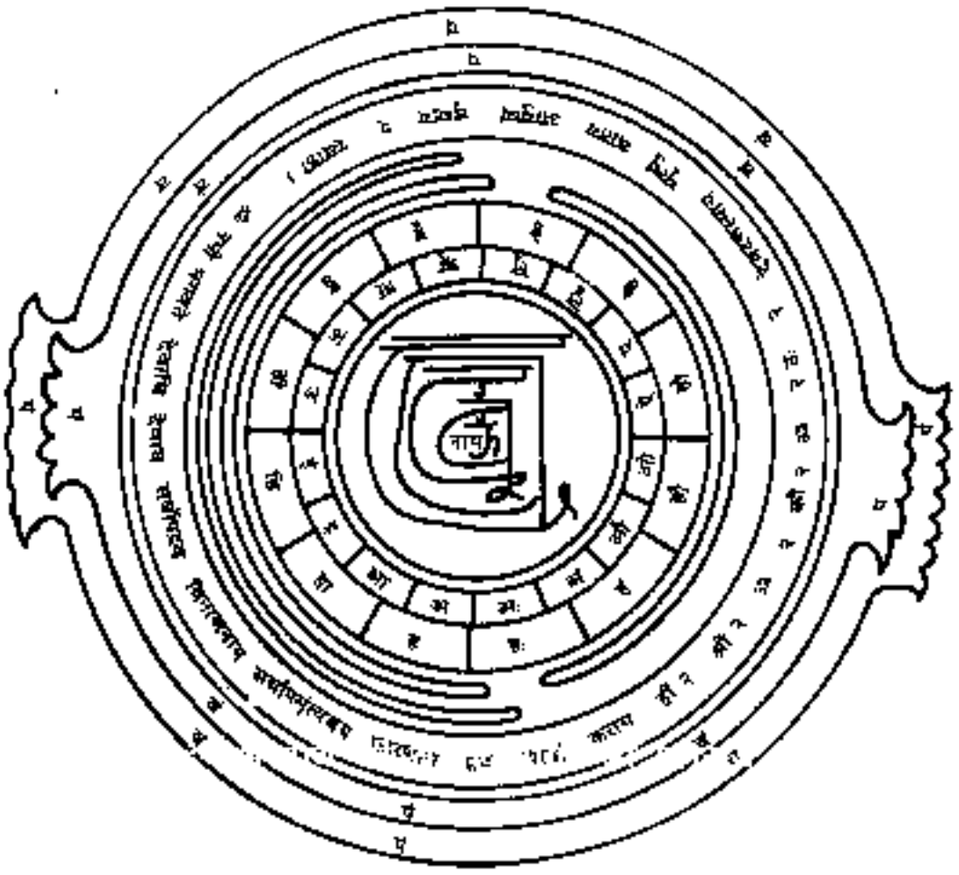

अथ शुद्धे पटे भूर्जे पत्रे वा कुंकुमादिभिः द्रव्यैः,
सुगंधिभिर्नाम साध्यस्य प्रथमं लिखेत् ॥ ३८ ॥

शुद्ध वस्त्र या भोज पत्र पर कुंकुम आदि सुगंधित द्रव्यों से पहले साध्य का नाम लिखे।

सु मुहूर्ते सु नक्षत्रे योग्यै स्वर्ण शलाकया,
तन्नाम अजित पिंडेन वेष्टयेत्सिद्ध विद्यया: ॥ ३९ ॥

अच्छे मुहूर्त अच्छे नक्षत्र में सोने की अच्छी कलम से इस नाम को अजित पिंडवाले सिद्ध विद्या के मंत्र से वेष्टित करे।

ॐ सिद्ध चारणा विद्याधर महोरगादि देवगणाः हूं हूं क्षां क्षां क्षूं क्षूं क्षं क्षं हुं हुं देवदत्तं रक्ष रक्ष स्वाहा ॥

सिद्ध विद्यया
वहि षोडश पत्रेणा कमले नाभिवेष्टयेत्,
तद्दलोष्वोंउंकला पूर्वम पराजित देवते ॥ ४० ॥

उसके बाहर सोलह दल वाला कमल बनाकर ॐ कला (ह्म्ल्व्र्यूं) पूर्वक दोनों अपराजित देवियों को लिखे।

ॐ ह्म्ल्व्र्यूं द्विरमुकं रक्ष द्वि स्वाहेति मध्ये लिखेत्,
ततस्तस्य दलाग्रेषु गांधारी बीजमा लिखेत् ॥ ४१ ॥

ॐ ह्म्ल्व्र्यूं द्विरमुकं रक्ष रक्ष स्वाहा इसको बीच में लिखे और इसके पत्तों के अग्र भाग में गांधारी बीज मंत्र को लिखे।

दलानामंतरोष्वस्य गौरी मंत्रं ततो लिखेत्,
समंतात्सह वज्रं तन्मालो मंत्रेण वेष्टयेत् ॥ ४२ ॥

इन दलों के अंदर गौरी मंत्र को लिखे और इसके चारों तरफ वज्र सहित माला मंत्र (को लिखे) से वेष्टित कर देवे।

॥ ॐ गौरी महागौरी स्वाहा ॥

गौरी मंत्रः

ॐ नमो भगवते परमेश्वराय परमलोकनाथाय परम विद्या स्वरूपाय, सर्वार्थसिद्धिं कराय, स्थित्युत्पत्ति संहार करणाय, त्रैलोक्य वंशकराय सर्व शत्रु जय करणाय, सर्व्वापमृत्यु विनाशन करणाय, सर्व विष संहार करणाय सर्व रोगा पनोदनाय तत्पाद पद्मोज सेवनि श्री मति विजयदेवी सुवर्ण वर्णे पाशचक्र वज्र खड्ग त्रिशूल शक्ति परशु छुरिकायुध मंडिताष्ट भुजे सर्वालंकार भूषिते वैनतेय वाहने षोडश देव ता परिवेष्टिते सर्व विद्याधिष्ठा भूते सकल मंत्रेश्वरी सर्व शत्रु विजयदायिनी सर्व लोकेष्ट सिद्धि कारिणी सर्वग्रह भय हारिणि सर्व दुष्ट विघ्न विनाशिनी दश नाग त्रास कारिणि स्थावर जंगम कृत्रिम विषम विष संहार कारिणि जरामरण रोग पीडापमृत्यु विद्यातिनि किन्नरं किं पुरूष गरूड़ गांधर्व महोरग भूत यक्ष राक्षस पिशाचापस्मार जन्म विनाशिनी शाकिनी योगिनी डाकिनी प्रेतकोटि व्यंतर कृतोपद्रव द्राविणि हे देवि त्वमात्म परिवार सहिते देवदत्तस्य सर्वापमृत्यु सर्वशत्रु सर्व विघ्न सर्व व्याधि नवग्रहोपद्रवान पीडां सर्वोपद्रवं नाशय नाशय श्री ह्री धृति बुद्धि कीर्ति कांति पुष्टि तुष्टि सौभाग्यारोग्य आयुष्य वृद्धि बलैश्वर्य विजय सिद्धि वृद्धि सानिधि भूपं कुरू कुरू ॐ ब्रह्माणि एहि एहि माहेश्वरी एहि एहि कौमारि एहि एहि वैष्णवि एहि एहि वाराहि एहि एहि रौद्र एहि एहि चामुंडि एहि एहि महालक्ष्मी एहि एहि क्ष्म्ल्व्र्यूं क्षां क्षीं क्ष्वं क्षैं क्षां क्षूं क्षौं क्षः क्षि अं कं चं टं तं पं शं क्षं अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ ए ऐ ओ औ अं अः द्रां द्रीं द्रूं द्रौं द्रः पं रं यं ठं जं धं यं झं तं क्षं ह्रीं ह्रीं ह्र्वीं ह्र्वीं पुषष द्रीं द्रीं क्र क्र पं पं स्वं स्वं टं टं हं हं मां मां दं दं रं रं हं हं थं थं चं चं यं यं सं सं तं तं वं वं चं चं पं पं रूम्ल्व्र्यूं यक्षेश्वरी एहि एहि जय एहि एहि, विजये एहि एहि, अजिते एहि एहि, अपराजितो एहि एहि, गौरी एहि एहि गांधारी एहि एहि राक्षसी एहि एहि मनोहरि एहि

एहि महालक्ष्मी एहि एहि सर्वोपद्रवं छिंद छिंद भिंद भिंद हर हर दह दह मम पच पच धुन धुन कंप कंप शीघ्र शीघ्र आवेषय आवेषय हुं हुं हर फट फट घे घे रं रं रं रं रां रां रां रां रूं रूं रूं रूं रं रं रं रं ठं ठं ठं ठं ह्री क्लीं श्रीं ग्लौं मिंस मिंस हंस हसं क्षिप ॐ स्वाहा हुं हुं ॐ ॐ क्षुं क्षुं हुं फट ॐ श्री मद विजय देवी आज्ञापयति स्वाहा

माला मंत्र:

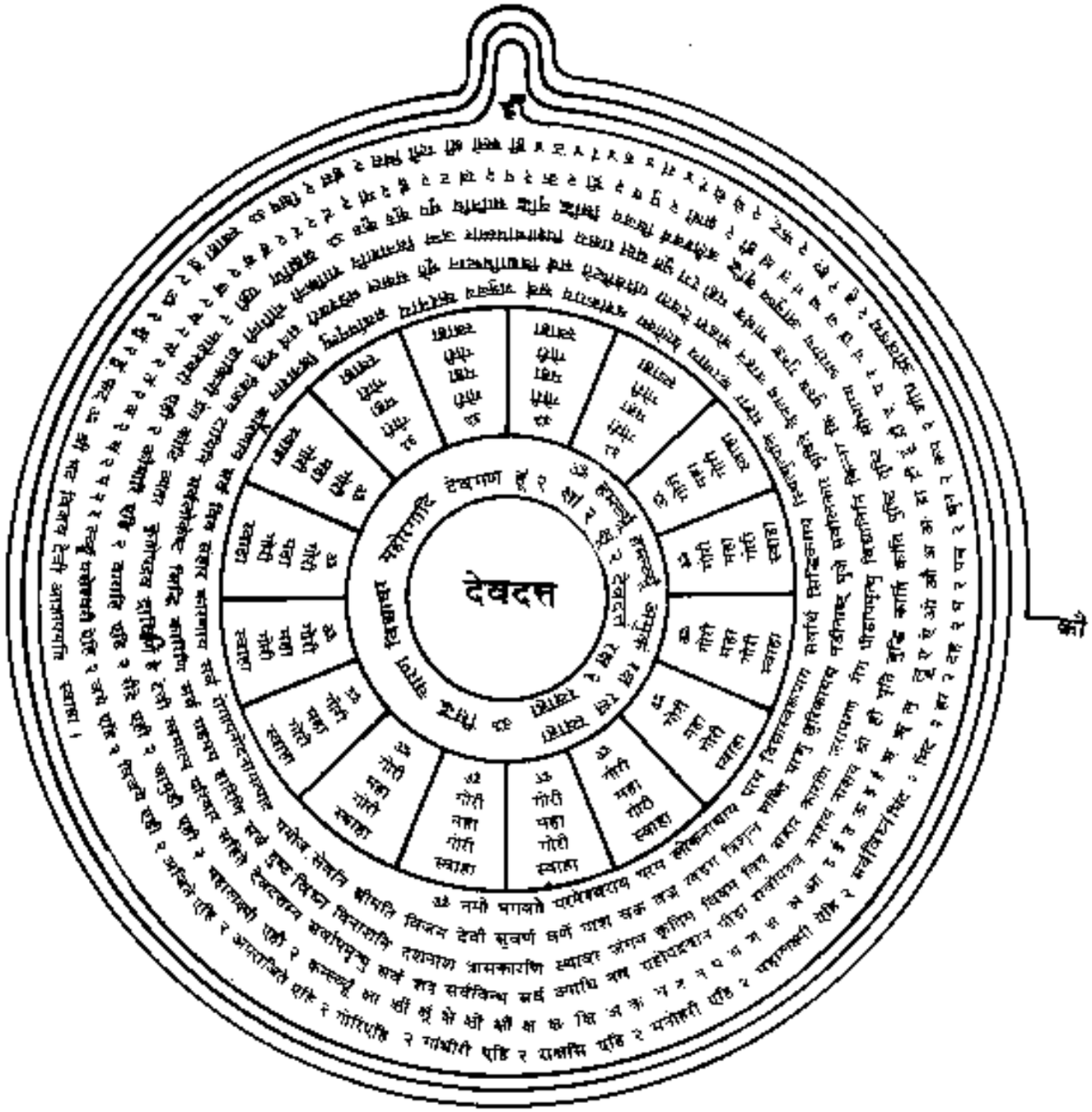

लिखेद् भू मंडलं बाह्ये रक्षा यंत्रमिदं स्मृतं.
शुद्ध गोमय संमृष्टे देशे भू गृह पंकजं ॥ ४३ ॥

चूर्णेन पंच वर्णेन विनिर्माय समच्य च ,
तन्मध्ये विलिखेत्पद्मं पत्रैः सहित मष्टभिः ॥ ४४ ॥

साध्य को बिठलाने का यंत्र

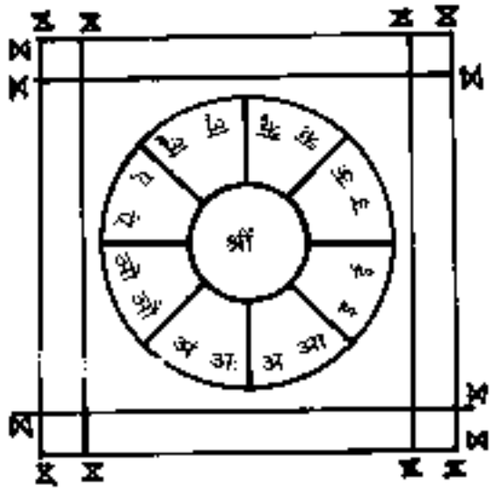

इस रक्षा यंत्र को शुद्ध गोबर से साफ किये हुए स्थान (प्रदेश) में पृथ्वी पर कमलाकर में बाहर पृथ्वी मंडल लिखकर बनायें। इस पाँच वर्ण के चूर्ण से बनाकर और पूजन करके उसके बीच में आठ दलों सहित कमल लिखे।

तत्कर्णिकायां श्री वर्णं कले द्वे द्वे दलेषु च,
पीठं तस्योपरिन्यस्य छन्नं श्वेतेन वाससा ॥ ४५ ॥

उनकी कर्णिका में श्री वर्ण और पत्तों में दो दो कला (स्वर) लिखकर उसको श्वेत वस्त्र से ढ़क देवे

तस्मिन साध्यं प्रतिष्ठाप्य पंच चूर्णैरथौषधैः,
तन्निवर्द्धेन मंत्रस्य प्रजप्त्वा त्रिर्निवर्द्धयेत् ॥ ४६ ॥

उस पर साध्य को बैठाकर पाँचों वर्ण और औषधियों से निवर्द्धन मंत्र के द्वारा मंत्र को जपकर तीन बार निवर्द्धन करे।

निवर्द्धन मंत्र

ॐ क्षां क्षां ह्रीं ह्रीं पर पर ॐ काली काली महाकालि महाकालि चंडेश्वर कालि चंडेश्वर कालि ब्रह्मकालि ब्रह्मकालि इन्द्रकाली इन्द्रकाली वज्र कालि वज्रकालि भद्रकालि ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ क्षीं क्षीं क्षीं क्षीं क्षींहुं फट स्वाहा ॥ निवर्द्धन मंत्र

प्राच्यां भानो गृहीत दद्यात रक्तानं बलिं मंत्रवित,
याम्यायां क्षेत्रपालस्य कृष्णोदन बलिं दिशि ॥ ४७ ॥

मंत्री पुरुष पूर्व दिशा में सूर्य ग्रहण को लाल अन्न की बलि देवे और दक्षिण दिशा में क्षेत्रपाल को काले भात की बलि देवे।

ॐ ब्रह्माणि ह्रीं ह्रीं वैश्वित्यमातर परिवार सहितै इमं बलिं गृह्ण गृह्ण देवदत्तं रक्ष रक्ष शीघ्रं वर दे ह्रीं ह्रीं हुं फट स्वाहा ॥ दिग्बलि मंत्रः

हरितं पश्चिममाशायां दद्यात यक्ष गृहे बलिं,
पीत दद्या चरुं कूपे रजन्युत्तर दिग्गतौ ॥ ४८ ॥

श्वेत वर्णां चरुं पुर्य्यामध्ये दद्या चतुष्पथे,
ततो मरिचं तांबुली दल सादन नौदकौ ॥ ४९ ॥

सनिबं पत्र लवणै रक्षा मंत्रस्य सं जपात् ,
साध्यं निवर्द्धयं संध्यायां निक्षिपेत् तानि पावके ॥ ५० ॥

पश्चिम दिशा में यक्ष के घर में हरी बलि देवे- रात्रि को उत्तर दिशा में पीत नैवेद्य की बलि कुएँ में दे। श्वेत वर्ण की बलि नगर के बीच में चौराहे पर दें, फिर काली मिरच पान का पत्ता सादन (फदन-भात-सादन= कटु रोहिनी) उदक (जल) नीम के पत्ते नमक की रक्षा मंत्र जपता हुआ संध्या के समय साध्य पुरुष को निवर्द्धन करके इन वस्तुओं की बलि पावक (अग्नि) में देवे।

यंत्र देने की विधि

ॐ अपराजिते देवते देवदत्तं रक्ष रक्ष स्वाहा॥ अपराजित रक्षा मंत्रः

मयुर पिच्छ गो श्रृंग वंश त्वक वृहती दलैः,
दंति दंता हि निर्मोक निर्म्माल्योतु पुरीषकैः ॥ ५१ ॥

नंद्या वर्त्तस्य पुष्पैश्च वचया च विचूर्णितैः,
खदिरा दिवरा गारैः धूप तस्मै प्रदापयेत ॥ ५२ ॥

मोर की पूँछ (पंख) गाय के सींग बांस की छाल वृहती (कटेली) के पत्ते दंति (हाथी) के दांत अहि (सर्प) निर्मोक (कांचली) निर्माल्य (पूजा हुआ द्रव्य) ओतु (बिलाव) की भिष्ठा नद्यावर्त (तगर) के फूल वच इन सबको चूर्णकर खदिर आदि की श्रेष्ठ अंगारों पर डालकर धूप दें।

सहिर एटे घटे सूत्र वेष्टिते सिद्ध मृतिका,
क्षीर द्रुम शमी बिल्व शिरीषासन बल्कलं ॥ ५३ ॥

पदमा लक्ष्मी सहा पाठाक्रांता गोबंधिनी दत्तां,
रत्नान्याय: स्वयं शुद्धा: शुद्धि मंत्रेणा निक्षिपेत् ॥ ५४ ॥

धागा लपेटे हुए सोने के घड़े में, शुद्ध मिट्टी, क्षीर द्रुम (दूधवाले वृक्ष) शमी (खेजडा) बील सिरस असन (विजयसार) वल्कल (वृक्ष की छाल मोलश्री) पद्मा (भारंगी) लक्ष्मी (तुलसी) सहा (गवार पाठा) पाठा (पाठ) क्रांता (कटेरी) गोवबंधनी (गौंवल्ली) के पत्ते दंतां (दंति तिरिफल) और रत्नों को शुद्धि मंत्र के द्वारा जल में शुद्ध करके ड़ाल दें।

ॐ नमो भगवते विश्व जन हिताय त्रिलोक शिखर शेखराय विशुद्ध चतुर्मुखाय शुद्धाय शुद्धि करणाय ॐ बं बं टं टं फल्ल्वर्यूं स्वाहा ॥ शुद्धि मंत्र

रत्न दिव्यौषधो पेतं तदभं कुभं सं भृत,
अष्टोत्तरशतं मंत्री शुद्ध मंत्रेण मंत्रयेत् ॥ ५५ ॥

फिर रत्न और दिव्य औषधियों सहित घड़े के जल को मंत्री शुद्धि मंत्र से एक सौ आठ बार अभिमंत्रित करे।

ॐ अमृतधारिणी इवीं क्वीं अमृतदायिनी स्थावर जंगम कृत्रिम विष संहरिणी देवदत्तस्य अमृताय स्वाहा

अमृत मंत्र :

वार त्रियमावर्ज्यधारा कारां प्रदक्षिणां ,
अभिषिं चेत्सुधा मंत्रं प्रजप्त्वा स्तै स्तंभं बुभि: ॥ ५६ ॥

फिर तीन बार धारा के आकार की प्रदक्षिणा देकर अमृत मंत्र को जप करके उस जल से स्नान कराएं।

कृत सं स्नपन स्यास्य साध्यस्य विधिनामुना,
अनंतरं च कुर्वीत सामान्य सकली क्रियां ॥ ५७ ॥

फिर उस साध्य को इस विधि से स्नान कर चुकने पर साधारण सकली क्रिया से रक्षा करे।

आचार्येभ्य: तपोभृद्भ्यो दीनानाथ जनाय च,
देयाद्दानं यथा शक्ति: साध्य श्रद्धा समन्वित: ॥ ५८ ॥

फिर साध्य आचार्यों तपस्वियों और दीन अनाथजनों को यथाशक्ति श्रद्धा सहित दान दे।

ततस्तं यंत्रमाचार्यः सुप्रसन्नेन चेत सा,
तस्मै दद्यात्स चा दद्यादगुरौ भक्तिं परां दधात् ॥ ५९ ॥

फिर आचार्य उस यंत्र को अत्यंत प्रसन्न मन से साध्य को दे देवे और वह भी अत्यंत गुरु भक्ति रखता हुआ उसको ग्रहण करे।

कटयां बाहौ गले वस्त्रै कूर्चिकायामथापिवा,
एव मारचितं यंत्रं धारयेत्प्रतिवासरं ॥ ६० ॥

इस प्रकार बनाये हुए यंत्र को प्रतिदिन साध्य अपनी कमर, भुजा, गले, कपड़े अथवा कूर्चिका (सर) पर धारण करे।

मारणानि प्रणाश्यंति व्याधियो रिपवो ग्रहाः,
श्री सौभाग्यांयुरारोग्य जयैश्वर्याणयं वान्पुयात् ॥ ६१ ॥

इस यंत्र की शक्ति से मारण कर्म व्याधियाँ शत्रु और ग्रह नष्ट हो जाते हैं तथा लक्ष्मी सौभाग्य आयु आरोग्य जय और ऐश्वर्य की प्राप्ति होती है।

यक्ष राक्षस गंधर्व शाकिनीभूतपन्नगैः,
अन्यैरपि दृशैर्न्नायमभिसूयेत जातुचित् ॥ ६२ ॥

फिर साध्य को यक्ष राक्षस गंधर्व शाकिनी भूत पन्नग (सर्प) तथा और भी ऐसे ग्रह कभी नहीं दबा सकते हैं।

सततं धारयेदेत द्रक्षा यंत्रम नुतमं,
यांतर्वत्तनीन तस्यास्यु गर्भ व्यापत्तयो रिवलाः ॥ ६३ ॥

इस उत्तम महारक्षा यंत्र को निरंतर धारण करने से पेट के अंदर की सब व्याधियाँ एवं रोग नष्ट होकर गर्भ की सब व्याधियाँ दूर हो जाती हैं।

अथ साध्यानुरूलेषु शुभतारो दयादिषु,
उपादधीत कार्य्याणि स मंत्रं यक्ष सं जपन् ॥ ६४ ॥

साध्य के अनुकूल नक्षत्र आदि के उदय होने पर यक्ष मंत्र को जपता हुआ कार्यों को करे।

ॐ यक्षाय अतुल बल पराक्रमाय सर्व सिद्धिं कराय, यक्षाय यं यं यं यं ह्रीं स्वाहा

॥ यक्ष मंत्र :

ततो विजय मंत्रेण कार्प्यां समभि मंत्रितं,
निदध्यात कुत्र चिदगुप्तं भू सं स्पर्श विवर्जितं ॥ ६५ ॥

फिर विजय मंत्र से अभिमंत्रित करके किसी गुप्त स्थान पर पृथ्वी को बिना छुये हुए रख दें।

ॐ विजय देवते त्रैलोक्य रक्षा क्षमे स्वं स्वं ल्व्यूं यां यीं यूं यौं यः फट ये ये यूं यूं व व ये ये रक्ष रक्ष स्वाहा। विजय मंत्रः

वारं कुजाख्य स्वात्यर्क्षं शुक्लाष्टम्यां प्रकल्पयेत्,
सिंहोदयेत्त द्वीयांशे कूट हस्ताष्ट प्रमं ॥ ६६ ॥

मंगलवार स्वाति नक्षत्र शुक्ल अष्टमी सिंह के उदय होने पर उसी के अंश में आठ हाथ प्रमाण एक कुट बनावे।

तत्राथ शोधिते कूटे चतुरश्रे मनोहरे,
याम्यात् सिद्धे चतुर्द्वारि चतुस्तो रण संयुते ॥ ६७ ॥

तब उस शुद्ध किये हुए मनोहर दक्षिण दिशा में सिद्ध किये हुए चार द्वार वाले चार तोरण युक्त

महादिग्धार विन्यस्त सहस्त्रनयना युधे,
दिगंतराल भूभाग विनिक्षिप्त रथांगके ॥ ६८ ॥

महान दिशा (पूर्व दिशा) में सहस्त्र नयन (आँख) वाले इंद्र के आयुध वज्र से युक्त विदिशाओं के भाग के स्थान में रथांगक (चकवे पक्षी) युक्त

दर्भमालापरिक्षिप्ते पुष्प दामोपशोभिते,
सुगंध द्रव्य सं स्पृष्टे गायन्मगल पाठके ॥ ६९ ॥

दर्भ की माला रखे हुए पुष्पों (फूलों) की माला से शोभित सुगंधित द्रव्यों से स्पर्श किये हुए गायन और मंगल पाठ से युक्त

फलकं स्थापयेन्मंत्री शुभ द्रुम विनिर्म्मितं,
तत्र प्रसन्न हृदयो स्तं कार्प्पासं समर्प्पयेत् ॥ ७० ॥

उस कूठ पर मंत्री शुद्ध वृक्ष की बनी हुई तख्ती की स्थापना करके प्रसन्न मन से कपास दे।

अपराजित पिंडेन कृत मध्या सिता सनं,
विभ्राण पाणि युगलं जय मंत्राभि मंत्रितं ॥ ७१ ॥

अपराजित पिंड कल्क्यर्यू से बनाये हुए कपास के आसन पर बैठी हुई जय मंत्र से मंत्रित दोनों हाथों को धारण की हुयी।

ॐ जये महाजये विश्वजये श्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं विघ्न विनाशनं कुरु कुरु स्वाहा ॥
जय मंत्र

कन्यका प्राङ्मुखी स्वर्ण धनुषा सप्त वत्सरां,
तं कार्प्पासं सु संस्कृत्य सूत्रं कुर्यात् यथा विधिः ॥ ७२ ॥

पूर्व की तरफ मुख किये हुई सोने के धनुष के समान सात वर्ष की कन्या को वह कपास दे। वह कन्या उस कपास को साफ करके उसकी विधिपूर्वक सूत बनाए।

स्नातः सुभूषित वपुः कुमारो स्पृश्य वंशजः,
असंस्पृष्ट मही पृष्ठौ दैत्याशाभि मुखः स्थितः ॥ ७३ ॥

फिर स्नान किया हुआ सजे हुए शरीर वाला स्पृश्य वंश में पैदा हुआ पृथ्वी को बिना छुये हुए दक्षिण की तरफ मुख किया हुआ।

अपराजित मंत्रेण रचितात्माभि रक्षणः,
तन्मन्त्रित शलाकादि साधनः शुभ लक्षणः ॥ ७४ ॥

अपराजित मंत्र से अपनी रक्षा किया हुआ उस मंत्र से मंत्रित शलाका (दंड) आदि साधन वाला अच्छे लक्षणों वाला कुमार

जय मंत्राभि जप्तेन तेन सूत्रेण कल्पयेत्
वस्त्रं तन्मंत्र संजप्तः पवित्रीत कर द्वयाः ॥ ७५ ॥

अपने हाथों को उस मंत्र के जपने से पवित्र करके जय मंत्र से जपे हुये धागे से वस्त्र बनाए।

प्रमाणं तस्य विस्तारे सार्द्ध हस्तं करत्रयं,
दीर्घभागे तु हस्तानां पंचकं प्रतति भवेत् ॥ ७६ ॥

वह वस्त्र चौड़ाई में प्रतीत (फैला हुआ) साढ़े तीन हाथ और लंबाई में पाँच हाथ हो।

तावद्विद्य यक्ष मंत्राभ्यां जप्तैरष्टोत्तर शतं,
प्रसिद्ध सरिदुद्भूतैः शुचिभिः क्षालयेज्जलैः ॥ ७७ ॥

फिर उस वस्त्र को दो बार यक्ष मंत्र से एक सौ आठ बार मंत्रित किये हुए प्रसिद्ध नदी के उद्धूत (फेंके हुए) पवित्र जल से धोवें।

पथ्यादुर्वा खटिका शाल्योदन नालिकेर दल पुष्पैः
चंदन कुष्ठोशीर कर्प्पूरगंधि पर्णाद्यैः ॥७८॥
मंगल सुरभिः द्रव्यैरपि पूर्ववदेव कन्यया विधिना,
अस्पृष्ट भुवने वारे स कृतिके कल्पितै र्व्यानी ॥७९॥

पथ्या (हरड़) दुर्वा (दोब) खटिका (खड़िया) साठी चावलों का भात नारियल के पत्ते तथा फूल चंदन कूठ खस कपूर गंधि (नागरमोथा) पर्णा (नागरबेल के पान)आदि मंगल तथा सुगंधित द्रव्यों से पहले के समान ही विधिपूर्वक अस्पृष्ट (अंधेरी-कृष्णपक्ष) की भुवने (चतुर्दशी) को कृतिका नक्षत्र के दिन कन्या के द्वारा बनवाएँ।

सापु कृत लेपनं तद्वस्त्रं रचितेषणाक्रियं,
पश्चात खवदतर खरकर किरण प्रकरे संशोषयदे हिनि ॥८०॥

वह कन्या उन वस्तुओं का लेप उस कपडे पर करके जो नाप से बनाया हुआ है फिर उसको अहनि (दिनमें) खरकर (गर्मी करने वाला सूर्य) प्रकर (तेज बहुत से) किरणों संशोषय (सुखावे)

एवं क्रमैश्च बुहभि र्विधि वत पटस्य,
विहितस्य मध्ये कुष्ठ त्रुगा गरू केशर कर्पूर धनसारैः ॥८१॥

त्वक् पत्रो शीरा सृग्मोर शिखा केतक द्वय परागैः,
लक्ष्मी श्वेताब्ज शमी कांता सूर्य्यांषु पुंखानां ॥८२॥

रक्तोत्पल सरसिजयो जाती पुट मल्लिका प्रियं गुनां,
रंभाया: पद्माया: पुन्नाग कमुक वकुलाना ॥८३॥

काकोलै रपि पुष्पैः पयसा गोः कपिल वर्ण देहाया:,
भूम्या पतित तदगो मद्य रसेन महिषाक्षं गुग्गुलानां ॥८४॥

निर्यासेन च शाल ब्रह्म कपित्थ कर्णिकराद्यैः,
हिम पिष्टारै पात्रै रत्नैः सह विनिहितैनर्निवभि : ॥८५॥

स्वंशलाको पात्तैः हृष्ट मनाः स्वस्तिसना सीनः,
उत्तरदिग्भि मुखैः कृत सकली कृति रक्षा भिधानः ॥ ८६ ॥

इस प्रकार बहुतप्रकार की विधि से बने हुये उस कपड़े के बीच में कुष्ट (कूट) यूगा गरू (दोनों अगर और तगर) केशर कपूर घनसार (कपूर) त्वक पत्र (तीलोसपत्र) उषीर (खस) असृक (केशर) मयुरशिखा केतकी दोनों प्रकार की और पराग फूलों की रजड (मिट्टी) लक्ष्मी (तुलसी) स्वेताब्ज (सफेद कमल)शमी (खेजडा) कांता (सफेददूब)सूर्य्या (इंद्रायण)पुंखाना (सरफोका) रक्तोत्पल(लाल कमल) सरसिज (सफेद कमल) जाति (चमेली)पुट मल्लिका मोतिया मोगरा फूल प्रियंगु रंभा (केला) पदमा (मंजीठ)पुन्नाग क्रमुक (सुपारी) बकुल (मोलश्री) काकोली के फूल काली गाय का दूध, पृथ्वी पर बिना गिरे हुए गोबर का रस, महिषाक्ष गूगल (भैंसा गूगल) के निर्यास (काठे या रस) शाल वृक्ष बह्म (छीला पलाश) कपित्थ (कैथ काथोड़ी) और कणिकार (कनेर) आदि को हिम (ठण्डा चन्दन) पीससकर नवरत्नों क साथ बर्तन में रखकर सुवर्ण (सोने) की शलाका (कलम) लेकर प्रसन्न मन होकर स्वस्तिक के आसन में बैठकर उत्तर दिशा की तरफ मुख करके रक्षा करने वाली सकली करण क्रिया करके।

संधार्य्य शंख मुद्रां वहमाने शशिनि भूषणोदमासि,
अपराजित मंत्राष्टत्तर शतज्जप स्व भीमकरः ॥ ८७ ॥

शंख मुद्रा को धारण करके चंद्र स्वर के बहने पर आभूषणों से भूषित होकर अपराजित मंत्र को अपने दाहिने हाथ से एक सौ आठ बार जपे।

पात्रानुकूलकाले पूजित मंत्रादि देवता चार्य्यः,
मंत्रा रभेत लिखितु यंत्रंकृत मंगल विधानं ॥ ८८ ॥

पात्र (साध्य) के अनुकूल समय में मंत्र आदि के देवताओं का पूजन करके आचार्य मंत्र के प्रारंभ में मंगल विधान करके यंत्र को लिखे

साध्यस्य नामधेयं वारूणा पिंडे विलिरव्य वम्लवर्यू दिक्षु लिखेत्,
चत सृषुभवनाधिपतिं वकार पिंडे विलिरव्यं विदिक्षु वहिंः॥ ८९ ॥

साध्य को नाम वारूण पिंड (वम्ल्व्र्यूं) के बीच में लिखे उसकी तारों दिशाओं में भुवनाधि पति (ह्रीं) लिखे और बाहर विदिशाओं में वकार पिण्ड (वम्ल्व्र्यूं) बीज को लिखे।

कृत्वादष्टदलं पद्मं न्यास्येत्पत्रेषु तस्य जय मंत्रं,
पत्राणामग्रेषु ह्रीं विलिखेदं तरेषु क्लीं ॥ ९० ॥

उसके बाहर आठ दल का कमल बनाकर उनमें जय मंत्र को लिखे पत्तों के अग्र भाग में ह्रीं और अंतराल में क्लीं लिखे।

द्वादश पत्रेषु वहिर्लिखित स्यांभोरुहस्य पत्रेषु,
न्यस्याहपिंड विलिखेत बं कारं तद्दलाग्रेषु ॥ ९१ ॥

फिर उसके बाहर बारह दल का कमल बनाकर उसके पत्तों में हपिंड (ह्म्ल्व्र्यूं) लिखकर उसके पत्तों के अग्रभाग में वः लिखे।

पत्रांतर भागेषु स्त्रीं रे तो द्रावकं लिखेत् बीजं,
लिखितस्य वहिः षोडश दलस्य पद्मस्य पत्रेषु ॥ ९२ ॥

पत्र के अंतर के भाग में स्त्री के वीर्य को द्रावन करने वाला (पिघलाने वाला) बीज द्रां को लिखकर उसके बाहर सोलह दल का कमल बनावे ।

षोडश विद्या विन्यस्येत सानुसारेण कांतबीजेन,
द्रींकारं पत्राग्रे तदंतर लिखित क्लीं च पदं ॥ ९३ ॥

उसके पत्तों में कान्त बीज स्त्र के साथ सोलह विद्या देवियों के नाम लिखे उसके पत्तों के अग्रभाग में द्रीं और अंतराल में क्लीं पद को लिखे।

रोहिणीं प्रथमा देवी प्रज्ञपति वज्र श्रंखला,
वज्रांकुशा प्रतिचक्रा समं पुरूष दत्तया ॥ ९४ ॥

काली तथा महाकाली गौरी गांधार्त्यंथा परा,
ज्वालामालिनी मानवी वै रोटी चा च्युतामता ॥ ९५ ॥

मानसी च महामान स्यपि विद्याधि देवताः,
षोडशैता विनिर्दिष्टा विद्यासागर पारगैः ॥ ९६ ॥

पहली देवी रोहिणी प्रज्ञप्ती वज्र श्रृंखला वज्रांकुशा अप्रतिचक्रा पुरूषदत्ता काल महाकाली गौरी गंधारी ज्वालामालिनी मानवी वैरोटि और अच्युता मानसी महामानसी इन सोलह विद्या देवियों को विद्यारूपी समुद्र के पार जाने वालों ने विद्या की अधिष्ठात्री देवता कहा है।

पदमस्य तस्य बाह्ये मंत्रज्ञो वरुण मंडलं विलिखेत्,
बाह्ये वकार पिंडं दद्यान्नामा क्षरांतरित : ॥ ९७ ॥

मंत्री उस कमल के बाहर वरुण मंडल लिखे और उसके बाहर वम्ल्व्र्यूं बीज को उसके गर्भ में नाम रखकर लिखे

वलय विलिखे द्बाह्ये तस्य विलेख्या वहि: कला: सकला:,
कोणात् कूट पिंडं तदनु विलेख्यं महिवलयं ॥ ९८ ॥

बाह्ये तस्य ककार प्रभृतीन् वर्णान् हकार पर्य्यंतान्,
सप्त शत मंत्राज प्रणवस्य च हिरण्य: रेत: प्रियाद्याश्च ॥ ९९ ॥

उसके बाहर वलय बनाकर उसके बाहर सब कलाओं सोलह स्वरों को लिखे उसके पश्चात पृथ्वी मंडल बनाकर उसके कोणों में कूटपिंड क्ष्म्ल्व्र्यूं लिखे।
उसके बाहर क से लगाकर ह तक के सब अक्षरों को लिखे जिनके आदि में ॐ और अंत में स्वाहा लगाकर लिखे।

हंसा रूढ़ान् विलिखेत् सार्द्ध मंत्रेण पूर्वमुक्तेन्,
रक्षा यंत्रे मंत्री माला मंत्राभिधानेन ॥ १०० ॥

फिर पहले कहे हुए माला मंत्र के साथ हंसारूढ़ को लिखकर मंत्री रक्षा यंत्र बनावे ।यह रक्षा यंत्रहै।

पार्श्वयुगं स्थित सुरतरु हारि चतुर्द्वार युक्तम व नि पुरं,
कृत्वा तथास्य बा ह्यो नवनिधि पिंडा: समालख्या: ॥ १०१ ॥

उसके दोनों तरफ कल्प वृक्ष बनाकर चार द्वार वाले पृथ्वी मंडल को बनावे फिर उसके बाहर नौ निधियों के पिंडाक्षरों को लिखे।

रक्त सित हरित पीतै: संपूर्णा लक्षणै: शुभै: सर्वै:,
फल वरदकरा विलिखेत् दिक्षु श्री कीर्ति धृती कांती ॥ १०२ ॥

फिर लाल सफेद हरे और पीले सब शुभ लक्षणों से पूर्व हाथ में फल और वरदान लिये हुए श्री कीर्ति धृती और कांति देवियों को दिशाओं में लिखे।

अब्जं स्वस्तिकं शनिर्नद्यां वर्त्तस्य कुसुममपि,
तासां विदुरासनान्यमूनि क्रमेण चत्वारि मंत्र विद: ॥ १०३ ॥

उन देवियों के क्रमश: कमल स्वस्तिक वज्र और नंद्यावर्त्त के फूल इन चारों को उन देवियों के आसन कहा है ।

प्रादक्षि एवेन वहि गौरी मंत्रं समालिखेदस्य तदनुच,
ठकार वलयं त्रितयं सं स्थापयेन्मंत्री ॥१०४॥

उसके पश्चात मंत्री दाहिनी तरफ से गोलाकार में गौरी मंत्र को लिखकर फिर तीन ठः के वलय को बनावे।

स्वर्णमयं रजतमयं ताम्रमयं चाष्ट पत्रम भोजं,
विरचर्य्य कर्णिकायां भुवनाधिपतिं लिखेत् तस्य ॥१०५॥

फिर सोने चांदी और तांबे के अष्ट दल कमल बनाकर उनकी कर्णिका में भुवनाधिपति (ह्रीं) लिखे

अपराजित पिंडनुतं नमः पदांतु दलेषु विदधीत,
तेषु ब्राह्मायादीनां देवीनां नामकं नाम्राः ॥१०६॥

उसके दलों में अपराजित पिंडाक्षर (क्ष्म्ल्व्यूं) सहित अंत में नमः और आदि में ॐ लगाकर ब्राह्मी आदि देवियों को लिखे।

सं शुद्ध निहित फलके शोधित धवलां बरेण सं छिन्नो,
निहितस्य तस्य पद्मस्योपरि संस्थापयेद यंत्रं ॥१०७॥

शुद्धि से रखी हुयी तख्ती के ऊपर शुद्ध सफेद वस्त्र बिछाकर उसपर कमल रखकर उसके ऊपर यंत्र रखे।

वहिरष्टोत्तर शतकः कलश जलैस्तद भिषिंच्य,
पटयंत्रं सलिलजमलयोदगंधैः सर्चयेदर्चना द्रव्यैः ॥१०८॥

फिर उस पट के यंत्र को बाहर से एक सौ आठ कलशों के जल से अभिषेक कराकर उसकी जल चंदन आदि पूजन के आठ द्रव्यों से पूजन करे।

शंख पटह प्रतिध्वनिभिर्वाद्यैर्नृत्यैश्च विविध गीतैश्च,
अन्यैश्चैवं भूतै स्तदर्चयेन्मंगल द्रव्यैः ॥१०९॥

शंख पटह (नक्कारों) के शब्दों बाजे नृत्य और अनेक प्रकार के गायन औरअनेक प्रकार के ऐसे ही मंगल द्रव्यों से उसका पूजन करे।

रचयेच्च पौष्प मंडपमु परिष्टान्मूल मंत्र परिजप्त्या,
अधि देवतां प्रतिष्ठा मंत्रेण स्थापयेच्च पटे ॥११०॥

फिर मूल मंत्र को जप कर उस यंत्र के ऊपर फूलों का मंडप बनावे और वस्त्र के ऊपर प्रतिष्ठा मंत्र से अधिष्ठाता देवता की स्थापना करे।

स्नापितस्य पूर्व विधिना लिप्तस्य सुगंधिभि शुभै द्रव्यै:,
कृत भूषणा वपु: संदधत: सर्वैरलंकारै: ॥ १११ ॥

फिर पूर्व विधि से स्नान करके सुगंधित द्रव्य अंग में लगाकर शरीर में आभूषण धारण हुआ सब अलंकारों को धारण करे।

सकली कृतस्य पूर्वेहनि रक्षामंत्रविहितरक्षस्य,
स्त्री सेवात्यक्त वत: परेन्हि कृत दंत धवनस्य ॥ ११२ ॥

पहले दिन सकलीकरण करके रक्षा मंत्र से अपनी रक्षा करके स्त्री के संसर्ग से दूर रहकर अर्थात् ब्रह्मचर्य रखता हुआ दूसरे दिन दंत धावन करके

स्नापितास्या मृत मंत्रेणांत: स्थित शुद्धि मंत्र कलश जलै:,
पुष्पांजलिं कृत वत: पठतो विजयान्ह्वं मंत्रं ॥ ११३ ॥

फिर कलश के अंदर के जल को अमृत आदि मंत्रों से शुद्ध करके तथा अमृत मंत्र से स्नान करके विजयादेवी के आह्वानन के मंत्रों को पढ़कर पुष्पांजलि देवें।

सत्पात्रेभ्यो दानं दत्त वत सादरं यथा शक्ति,
यंत्राधिं देवतां त्रि: प्रदक्षिणां कृत वतो भक्तया ॥ ११४ ॥

अपनी शक्ति अनुसार फिर आदर सहित उत्तम पात्रों को दान देता हुआ मंत्र और यंत्र की अधि देवी की भक्ति से तीन प्रदक्षिणा करे।

अर्चित गुरोर्विदध्यात्साध्यस्य गुरू: प्रसन्नचेता,
स्सन आज्ञामेतयंत्रं समाहितं प्रार्चयत्यमिति ॥ ११५ ॥

फिर साध्य गुरु का पूजन करके उनको प्रसन्न करे यदि वह प्रसन्न हो जावे तो उनकी आज्ञा लेकर यंत्र का पूजन व अर्चना समाप्त करे।

नीत्वा ततो विशुद्धे देशे साष्टाधिकं शतं वारान्,
अभिमंत्रितं प्रतिष्ठा मंत्रेणा स्थापयेद यंत्रं ॥ ११६ ॥

फिर शुद्ध स्थान में (नीत्वा) ले जाकर प्रतिष्ठा मंत्र से एक सौ आठ बार मंत्रित करके उस यंत्र की स्थापना करे।

प्रातः शुद्धोभूत्वा समर्चयेदयंत्रं देवता नित्यं,
परिजप्प मूल मंत्रं वारान सप्ताथ तत्पश्येत् ॥ ११७ ॥

प्रातःकाल के समय शुद्ध होकर प्रतिदिन यंत्र के देवता के मूल मंत्र को सात बार जप करके पूजन करके उसे देखे।

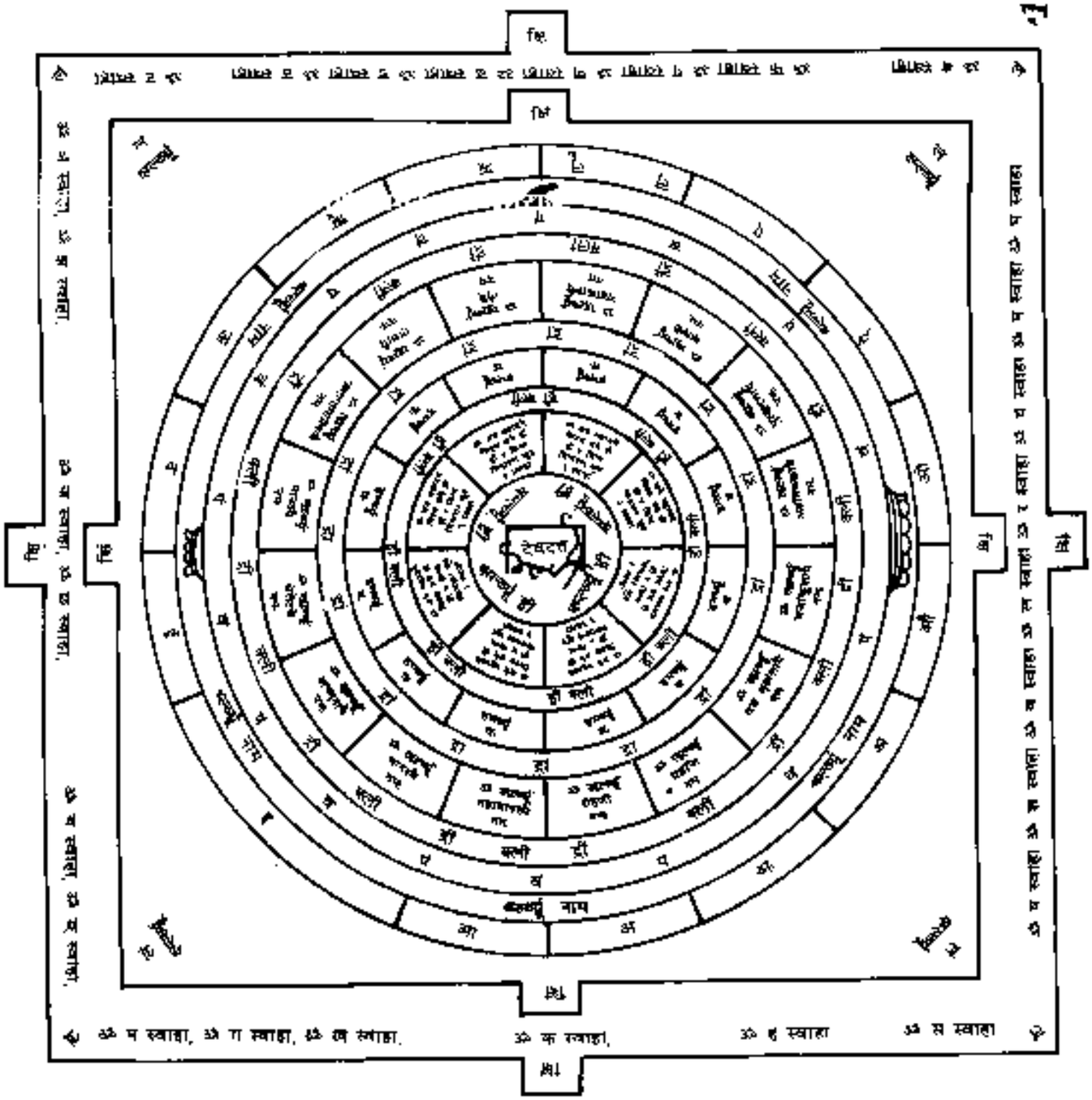

क्षुद्राख्य वचोच्चाटन विद्वेष स्तंभ बैरि रीति कृतैः,
बहु विध चरा चरोद्भव गरल नवग्रह पिशाचाद्यैः ॥ ११८ ॥

क्षुद्र नाम वाले मंत्र उच्चाटन विद्वेषण स्तंभन शत्रुता आदि बहुत प्रकार से चलने वाले तथा स्थित स्थावर और जंगम विष नवग्रह और पिशाच आदि

अन्यैरपिद्वशैर्ख्यं नृणां कृत्वा उपद्रवाजाताः,
यंत्रमिदमर्चमाने तेषां परमः प्रतिकारः ॥ ११९ ॥

तथा अन्य दूसरे भी जिनसे पुरूषो को उपद्रव होते हैं। उन सबका सबसे उत्कृष्ट प्रतिकार इस यंत्र का पूजन करने से होता है।

हंत्यपमृत्युं विजयं कुरूते लक्ष्मीं परां,
समातनुते आरोग्यं सौभाग्यं शांतिं पुष्टिं च विदधाति ॥ १२० ॥

यह यंत्र अपमृत्यु को नष्ट करता है विजय कराता है उत्तम लक्ष्मी को देता है तथा आरोग्य और सौभाग्य शांति और पुष्टि को करता है।

क्षुद्र ग्रहाधुपद्रव हरमभिमत साधनं च पटु यंत्रं,
अनुपममेतज्ज्ञानन भवति नरेंद्रो नरेंद्रार्हः ॥ १२१ ॥

यह यंत्र छोटे मोटे ग्रहों के उपद्रवों को नष्ट करता है और इच्छा किये हुए कार्य को सिद्ध करने में चतुर है। इस यंत्र को इस प्रकार अनुपम जानता हुआ पुरूष राजा और उत्तम मनुष्यों में पूज्य हो जाता है।

इति अपमृत्युंजय यंत्र विधि समाप्तम्।

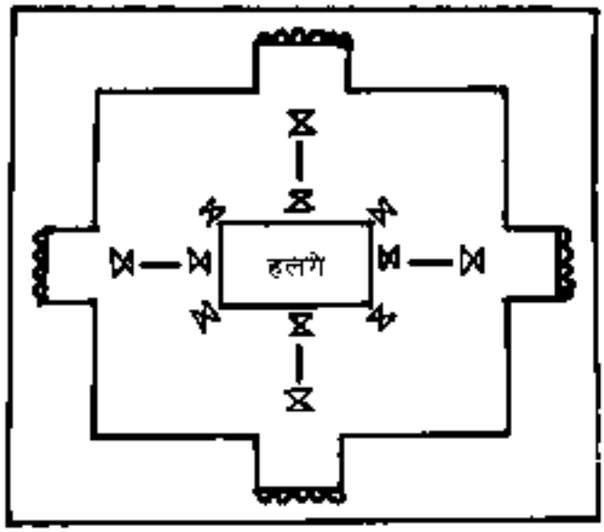

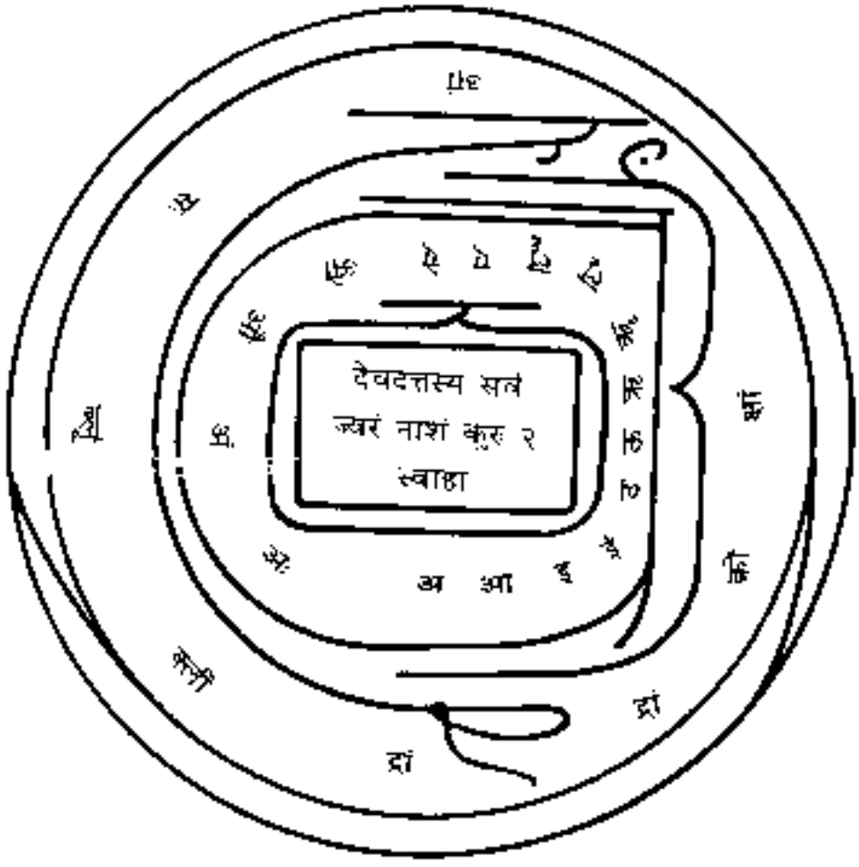

त्रैलोक्य सार चिंतामणि गणधरवलय सिद्ध चक्राणि,
चक्रं समस्तंफलदं च पूजयेत् क्षुद्र शांत्यर्थं ॥ १२२ ॥

क्षुद्र शांति के वास्ते त्रैलोक्य सार यंत्र चिंतामणि यंत्र गणधरवलय यंत्र सिद्ध चक्र यंत्र और समस्त फलद यंत्र का पूजन करे।

अथ शांति समुदेशे सर्व शांतिः प्रवक्ष्यते,
यासां सुविहिता सर्वांसर्वान वति मारणात ॥ १२३ ॥

इसके पश्चात शांति समुदेश में उन सर्वशांति कार्यों का वर्णन किया जाएगा जिनको करने से सभी को मारण कर्म से बचाया जा सकता है।

शांतौ प्रवक्ष्यमाणानि यंत्र नीरांजनानि च,
वद्य प्रति विद्यानाय प्रयोज्यान्यत्र मंत्रिणा ॥ १२४ ॥

मंत्री को चाहिये कि शांति समुदेश में कहे जाने वाले यंत्र और नीरांजनो का मारण के प्रतिकार में प्रयोग करे। मारण प्रतिकार की आवश्यक क्रियाएँ

साध्य श्री शांतिनाथस्य विदधीत महामहान्,
महा विभूतिभिः सर्वानष्टाह्निक पुरस्सरान् ॥ १२५ ॥

साध्य श्री शांतिनाथ स्वामी के विधान को बड़ी बड़ी विभूतियों के साथ अष्टाह्निक पर्व के दिनों में आठ दिन तक करे।

पूजयेत् जल गंधाद्यै प्रभूतैः श्रुत देवतां,
ह्रदये बंहु विटैर्वस्त्रै र्द्रव्यैरन्यैश्च मंगलैः ॥ १२६ ॥

वह जल और गंध आदि बहुत से सुन्दर बहुत प्रकार के वस्त्रों और दूसरे मंगलिक द्रव्यों से श्रुत देवता का पूजन करे।

चैत्य चैत्यालय स्तूपमान स्तंभान सवृत्तिकान्,
कुर्य्यात् साध्यः स्वयं तेषां जीर्णानां च न वीक्रीतः ॥ १२७ ॥

साध्य चैत्य और चैत्यालय स्तूप और मान स्तंभो का वृत्तिक (पूज्य स्थानों) सहित स्वयं जीर्णोद्धार करे तथा नये चैत्यालय बनावे ।

कुर्य्यात् कूष्माडयक्षीश्च स्नपनानि महार्चरू,
भूषणान्यपि वस्त्राणि दद्याधात्रां च कारयेत् ॥ १२८ ॥

आम्र कूष्मांडी देवी का अभिषेक पूजन महान नैवेद्य भूषण और वस्त्रादिक देकर करे तथा तीर्थ यात्रा करावे।

साध्य स्तपोधनानक्षांतीः श्रावकान् श्राविकामपि,
दत्वा हारादिकं योग्यमनुवर्त्तेत भक्तितः ॥ १२९ ॥

साध्य मुनि आर्यिकाओं श्रावकों और श्राविकाओं को आहारादि देकर उनसे भक्ति पूर्वक व्यवहार करे।

एवं पुन्यानु बंधीनि पुन्यान्यर्ज्जयतां नृणां,
आयुः खंडयितुं नालं सा पापा मारण क्रिया ॥ १३० ॥

इस प्रकार पुण्य के कारण वाले कार्यों से पुण्य को कमाने वाले मनुष्यों की आयु को कोई पापिनी मारण क्रिया खंडित नहीं कर सकती है।

उक्तं च महामह विधानं त्रिवर्णाचारे,
महासेन कृतैः जिनमभिनम्य वक्ष्मिद्यहं महामह ॥ १३१ ॥

महामंडल मध्य मंडल पंचकं संयुक्तं,
प्रतीकं जिनं स्थापयेत तत्समीपे ॥ १३२ ॥

जल संयुत महामंडल वस्त्र श्री फल संयुतं,
घटमेंक विधाय पुण्याह वाचनां संकल्पं च कुर्यात् ॥ १३३ ॥

महासेन के बनाये हुए त्रिवर्णाचार में महामह विधान का वर्णन किया गया है। जिनेन्द्र भगवान को नमस्कारकरके मैं महामह का वर्णन करता हूँ। एक बड़े भारी मंडल के मध्य में पांच मंडजलों से सहित जिनेन्द्र भगवान के पास प्रतीक की स्थापना करे। जल सहित महामंडल अत्यंत शोभित वस्त्र नारियल सहित एक घड़े को रखकर संकल्प करके पुण्याह वाचन पढ़े ।

घटोपरि जलेन सेवते पश्चात् तस्मिन्मडले कोष्टानि कुर्यात्,
अष्टाधिकैकसहस्त्राणि तेषामुपरि घटानि तावत्प्रमानि स्थापयेत् ॥ १३४ ॥

सूंठि बिल्व पिप्पल मरिचानां घटानि
पंच दश सर्वोषधि युतघटो बिल्व नालिकेर,
पंच गव्य बादाम संयुत जलानि पंच दश
घटानि दुग्ध दधि घृत संयुत घटानि ॥ १३५ ॥

पंचदश सर्वोषधियुतघटानि स्थापयेयुः,
सप्त सर्व खाद्य घटानि स्थापयेयुः ॥ १३६ ॥

सप्त पेय घटानि सप्ताचम्य घटानि,
पंचामृतघटानि पंच सर्वोषधि घटानि भेदौषधिनां ॥ १३७ ॥

सहदेवी कुमारिका दीनां पंचदश घटानि,
पूर्ण जल भृतानि गंधोदकानि पूर्णाभिषेकस्य सप्त ॥ १३८ ॥

घड़ों के ऊपर जल को डालने के पश्चात् उस मंडल में एक हजार आठ कोठे बनावे। उन कोठों में उतने ही घड़ों की स्थापना करे फिर सोंठ बेल पीपल काली मिरचों के घडे पन्द्रह सर्वोषधि सहित घड़े बिल्व नारियल पंच गव्य बादाम सहित जल के पंद्रह घडे दूध दही घृत सहित पन्द्रह घडे सर्वोषधि सात घडों की स्थापना करे, सर्व खाने के पदार्थों के सात घड़ों की स्थापना करे, पीने योग्य पदार्थों के सात घडे, आचमन करने योग्य घड़े, पंचामृत के पांच घड़े, सर्वोषधि के घडे, दूसरी औषधियों

के सहदेवी कुमारिका आदि के पन्द्रह घड़े, सब मुँह तक सुगंधित जल से भरके हुए और अभिषेक के वास्ते गंधोदक के लिये सात घडे रखे।

प्रथम दश दिक्पाल रूपर पूजनं यथा
विधि चैत्य ब्रह्म प्रतिमा पूजनं,
यक्ष दक्षिणी पूजनं प्रतिमानां तीर्थंकराणां पूजनं ॥ १३९ ॥

पश्चात् तेषां स्नपमं पूजनं पूजनं
संकल्प युक्तं यता विधि पूर्वमान्ह्वा,
पश्चात् विजर्सन कर्तव्यं योगै रेचक पूरकादिभिः ॥ १४० ॥

पहले दस दिक्पालों का पूजन करके, विधिपूर्वक चैत्यालय में ब्रह्मा की प्रतिमा का पूजन करे, फिर यक्ष और यक्षिणी का पूजन करे, फिर तीर्थंकरों का प्रतिमाओं का पूजन करे- उनका अभिषेक और पूजन करने से पहले विधिपूर्वक संकल्प करे, फिर पहले आह्वान न पूरक से करके रेचक के योगों से विसर्जन करे।

पश्चात यथा विधि अंकुरा रोपण वृहत
शांतिक पूजन पुण्याह वा चनानि
शांति ग्रह होम पूजनानि शांति धाराधंतानि
सर्वाणि कर्तव्यानि यथा विधिः ॥ १४१ ॥
एतद् विधानं महामहस्य समासं

इसके पश्चात विधिपूर्वक अंकुरारोपण विधान वृहत शांतिक पूजन विधान पुण्याह वाचन ग्रहों की शांति विधान आदि हवन और पूजन आदि को शांतिधारा के अंत तक सब विधान विधिपूर्वक करे। इस तरह से महामह का विधान समाप्त हुआ।

अत्रतु संकोटन कथितं त्रिवर्णाचारस्य दंडकोयं वृहदवर्णनं,
विस्तारेण पूजा सार नाम्नि जिन संहितायां जिन सेन कथिते ॥ १४२ ॥
महामेह वर्णनं महद दृष्टव्यं

यहाँ पर संक्षेप से इसका वर्णन किया गया है इसका विस्तृत विवरण त्रिवर्णाचार के दंडक और जिनसेन स्वामी की बनाई हुयी पूजा सार समुच्चय नाम की जिन संहिता के महामह के वर्णन में देखना चाहिये।

मारण प्रतिकार की सामान्य विधि

यदगेहे हननाय वैरि निहितं मंत्रादितं कौशलात्,
भात्वोद् धृत्य विसर्ज्य षंडभिरयो गव्यै गृहं मार्ज्जयेत् ॥ १४३ ॥

सिंचेत् स्नान जलै र्जिनस्य समिन स्तत्रानयेत्पावनान्,
कुर्य्यात् शांतिभिधान होममपि तत व्यर्थं भवेन्मारणं ॥ १४४ ॥

शत्रु ने मारने के लिये घर में जो कुछ मंत्र आदि धरा हो उनको चतुरता से उखाड़कर टुकड़े टुकड़े करके, गोबर आदि से घर को धोवे लीपे । तथा घर को जिनेन्द्र भगवान के अभिषेक के गंधोदक से सींचे घर में पवित्र मुनिराजों को लावे तथा शांति विधान और होम भी करे ऐसा करने से मारण कर्म व्यर्थ हो जाता है।

मृति प्रतिकार विधानमेतत् जनान् जनं यो वति मृत्यु वक्त्रात्,
सो वा प्नुयान्निर्जित जन्म मृत्यु निशेषसं सर्वसुखैकधाम ॥ १४५ ॥

इसप्रकार जो पुरूष इस मारण प्रतिकार विधान को जानता हुआ पुरूष को मृत्यु के मुख से बचाता है वह जन्म और मृत्यु को जीतकर सब सुखों के एक मात्र धाम मोक्ष को प्राप्त करता है।

वद्य प्रतिकार विधि प्रपंचो निरूपितो संयुते सतियोत्रमेव.
कृत्वा क्षुद्रेषु शेषेशु च मंत्रि मुख्यो रक्षेन्नरा स्तत्प्रभावादनर्थात् ॥ १४६ ॥

इस प्रकार यहाँ पर मारण के प्रतिकार की विधि का वर्णन एक स्थान में किया गया है । उत्तम मंत्री को चाहिये कि वह शेष छोटे मोटे उसी से होने वाले अनर्थों से भी पुरूषों की रक्षा करे।

इति मारण प्रतिकार विधानं षोडशमो समुदेशः

अथोच्चाटन संज्ञस्य विधानं क्षुद्र कर्म्मणः,
व्यावर्णयते यथाचार्य्यै रूपदिष्टं पुरातनैः ॥ १ ॥

अब उच्चाटन नाम वाले क्षुद्र कर्म के विधान का वर्णन प्राचीन आचार्यों के उपदेश के अनुसार किया जाता है।

काकी काकरुते काक पिंडा पहारिणी किलि- किलि अमुकस्य हृदयं वंद्य वंद्य गृह्य गच्छ ठः ठः ॥

अनेन मृत्यु मंत्रेण लक्ष रूप प्रजाप्पतः,
सिद्धेन मंत्रितैर्दद्यात् साध्य पादरजोयुतैः ॥ २ ॥

इस मृत्यु मंत्र को एक लाख जप से सिद्ध करके मंत्री साध्य के पैर के नीचे की धूल को मंत्रित किये हुए

बलिं द्रव्यैर्वलिं वाम पार्श्ववामेन पाणिना,
सप्ताहः तस्य साध्यस्य स्वयं उच्चाटनं भवेत् ॥ ३ ॥

बलि के द्रव्यों से बायें हाथ में बांई तरफ को सात दिन तक बलि देवे तो उस साध्य का स्वयं ही उच्चाटन हो जावे।

ऊर्द्ध कर्णे विरूपाक्षि लंब स्तनि महोदरि हन शत्रून त्रिशूलेन कूद्रस्यापि च शोणितं
शोणितं शोणितं शोणितं शोणितं दह-दह पच-पच मथ-मथ मारय-मारय
शोषय शोषय आसादय आसादय नाशय नाशय हुं फट ठःठः ॥

सिद्धेदसौ महाकाली मंत्रो लक्ष जपादमु,
अंतःकपाल मालिख्य तस्मिन् विरचिताशनः ॥ ४ ॥

यह महाकाली मंत्र एक लाख जप से सिद्ध होता है इसको कपाल के अन्दर लिखकर भोजन बनाकर

जपेच्चं मंत्रं तन्मूर्त्ते दक्षिणास्याः पुरो,
भवशमासादुच्चाटनादीनि कुर्य्यात् कर्माणि विद्विषां ॥ ५ ॥

मूर्ति को दक्षिण की तरफ मंत्र जपे इससे यह मंत्र एक मास के शत्रु का उच्चाटन आदि करता है।

निंब पत्रांबु पिष्टैः स्तद्वी जैरूपवर्त्य विग्रहं,
तज्जप्त्या स्निग्धयो मंध्ये गच्छेत द्वेषस्तयो भवत् ॥ ६ ॥

नीम के पत्तों को पानी में पीसकर उससे और उसके बीजों से शरीर पर लेप करके इस मंत्र को जपकर यदि दो प्रेमियों के बीच में चला जावे तो उन दोनों में द्वेष हो जाता है।

सहस्त्र किरणस्याभि मुखो भूत्वा जपेदमुं,
उद्धर्व बाहु दिनै रल्पैरूत्सादो भवति द्विषः ॥ ७ ॥

यदि इस मंत्र को सूर्य की तरफ मुख करके और ऊपर की तरफ हाथ करके जपे तो शत्रु का थोड़े दिनों में ही उत्सादन (उच्चाटन) हो जाता है।

वायव्य मंडलस्थं प्रेतमशि कणक सहित निर्व्यासैः,
धरकारांतः साध्यं विलिख्योदुच्चाटनी कुरुते ॥ ८ ॥

यदि वायुमंडल के बीच में श्मशान की राख की स्याही और धतूरे के रस कगे धकार के अदंर साध्य का नाम लिखे तो यह मंत्र उसका उच्चाटन करता है।

सांतं श्मशान वस्त्रे वह्नि अनिल पुरस्थं मालिखेन्नाम्ना,
वद्धं तत् वृक्षागं स्व स्थानावच्च यात्य सौ शीघं ॥ ९ ॥

श्मशान के कपड़े पर नाम के बाहर सान्त (ह) और उसके बाहर अग्नि मंडल और वायु मंडल बनावे और उसको वृक्ष के अग्रभाग में बांधने से वह शीघ्र ही साध्य का उच्चाटन करता है।

दिग्गत सृष्टि यमांतः स्थित फलत्र विदर्भितं,
नाम वायु गृहं वैभीतकैः खटिकया फलके संलिख्य ॥ १० ॥

दिग्गत (घ) सृष्टि (स) यमांत (व) स्थित (यः) फलय () के बीच में नाम को लिखकर उसके चारों तरफ बहेड़ा की तख्ती पर खड़िया से वायु मंडल लिखे।

उन्मृज्य तं गृहीत्वा चूर्णं मरातेर्विनिक्षेपेन्मूर्द्धनि,
स विदध्यादुच्चाटं तस्यात्पेत्रैव कालेन् ॥ ११ ॥

फिर उस यंत्र को मिटाकर उसके चूर्ण को लेकर शत्रु के सिर पर डाले तो उसका शीघ्र ही उच्चाचन होता है।

तद्भूर्ज पटे लिखित्वा तंत्रं धतुर रस समेतेन,
अंगारेण पुन स्तप्तः कृष्णेन वेष्टय सूत्रेण ॥ १२ ॥

इस यंत्र को धतूर के रस से भोजपत्र पर लिखकर अग्नि पर तपाने से पहले काले धागे से लपेटे

काकस्या स्थैन्यस्य प्रछन्नं तं विसर्ज्जयेत् शिवरे शत्रोः,
स सदाया सेनाप्रति गच्छेत सद्यः एवभयात् ॥ १३ ॥

फिर उसे बिना किसी जाने हुए गुप्त भय रूप से यदि शत्रु के शिबिर में डाल दे वह शीघ्र ही भय से डरकर सेना को लेकर चला जाता है।

यस्य नाम्ना गृहे प्रेतन रांघया कर्षणं रहः,
रज्जुं निधीयते गेहे मध्ये निखाताः मासादुच्चाटनं रिपौ ॥ १४ ॥

जिसके नाम को घर में मरे हुए मनुष्य की टांग में बांधकर एकांत में खींची हुई रस्सी उसके घर में गाड़कर रखी जाती है, उस शत्रु का एक मास में उच्चाटन हो जाता है।

हेम प्रकृत सरावे गोपितात्काय भागायैक स्मिन्,
द्विज पक्षीणा न्यत्रक्षुमपियतागेण तद्वयं निपलनयेत् ॥ १५ ॥

दो सकोरे लेकर गुप्त रूप से उनमें से एक में धतूरे का भाग रखकर और दूसरेमें पक्षी का पंख रखकर शत्रु के लिये गाड़ देवे।

नद्यास्तीरे द्वितये विद्वेषः स्निग्धयोर्महान भवति,
तसीर स्व गता वपि नतयोः स्यात संग तिंज्जंतु ॥ १६ ॥

यदि उन दोनों को नदी के दोनों किनारों पर गाड़े तो अत्यंत प्रेमी मित्रों में भी महान विद्वेष हो जाता है। उन सरावों को उन किनारों से निकाल लेने पर भी उनमें कभी मेल नहीं होता है।

भूर्मुटिके मुर्मुटिके घोरे विद्वेषणी विद्वेष कारिणी घोरा घोरयो रमुकयो: काकोल कादि वत्परस्पर द्वेषं कूरू॥

उक्तं च न्यस्याऽहित्वक चिता भूति ध्वांक्ष पक्षा,
शिते पटे पक्त तंतु वृता शत्रो रुच्चाटय गहेर्णिता ॥ १७ ॥

यह मंत्र पढ़कर सर्प की कांचली, चिता की भस्म और कृष्ण पक्ष में पहने हुए दो वस्त्रों को और कौवे के पंखों को लाल धागे से लपेट कर शत्रु के घर में रखने से उसका उच्चाटन होता है।

चिता भस्म मनुष्यास्थि ब्रह्म डंडी च कुर्वते,
गेह मध्ये निखातानि मासादुच्चाटनं रिपो ॥ १८ ॥

चिता की भस्म मनुष्य की हड्डी और ब्रह्म डंडी() को घर में गाड़ देने से शत्रु का एक मास में उच्चाटन हो जाता है।

नरास्थि शंकुना द्वारि निहितेन भवेद् गृहं,
शून्या मूर्द्धाभुजंगस्य सराशभखुरेण वा ॥ १९ ॥

मनुष्य की हड्डी की कील अथवा गधे के खुर द्वार में गाड़ देने से घर में से सर्पों का उच्चाटन हो जाता है अर्थात् घर सर्पों से खाली हो जाता है।

नरास्थि सर्षप ध्वांक्ष पत्त्राणि गृहे रिपो:,
निखातान्य चिरेणैव द्वरोच्चाटं वितन्वेत ॥ २० ॥

मनुष्य की हड्डी सरसों कौवे के पंख को शत्रु के घर में गाड़ने से अचिरेण (जल्दी ही) उच्चाटन होता है।

उष्ट्रास्थि क्रोडविट सीरी शव केशैर्ष विद्विपो:,
गृह द्वार न्निहितै स्सप्त दिनादुच्चाटनं परं ॥ २१ ॥

ऊंट की हड्डी क्रोड विट (सूअर की विष्ठा) सीरी () शव केशे (मृतक शरीर के बाल) शत्रु के घर के द्वार में रख देने से उसका सात दिन में उच्चाटन हो जाता है।

द्विषोश्च खुर रंध्रस्थौश्व जिव्हा सर्प मस्तकौ,
उच्चाटनाय सप्ताहां निखातो द्वारि वेश्मन : ॥ २२ ॥

कीलो निखात: पद पंक्ति मध्ये कारस्करा नो कुह काष्ट जन्मा,
उच्चाटनं दाग्विद धात्यरातेर्व्याधिंच घोराम चिराद्विधत्ते॥ २३ ॥

शत्रु के पैरों के निशान के बीच में कारस्कर नोकूह (खैर की) लकड़ी की कील गाड़ देवे तो उसका उद्घाटन होकर उसको महान रोग शीघ्र हो जाता है।

एकां गुलं चित्रकस्य कीलं ग्राह्यं पुनर्वस्यौ सप्तानि,
मंत्रितं मोहान्निभिन्नो च्चाटनं भवेत् ॥ २४ ॥

मंत्र ॐ लोजिते मुखे स्वाहा ॥

पुर्नवसु नक्षत्र में चित्रक की एक अंगुल की कील लेकर इस मंत्र से सात बार मंत्रित करके रखने से उद्घाटन होता है।

स्वात्य ग्रोदंबरं बीजं मंत्रितं चतुरंगुलतं,
यस्य निखनेद गेहे तस्यो च्चाटनं भवेत् ॥ २५ ॥

मंत्र- ॐ शिलि शिलि स्वाहा ॥

स्वाति नक्षत्र में चार अंगुल लम्बी उग्रा (लहसुन) और उदंबर (गूलर) के बीज और कील को इस मंत्र से मंत्रित करके जिसके घर के द्वार में गाड़े उसका उद्घाटन होता है।

भरणयां मगुलैर्हतु उलूकास्थ कीलकं,
सप्ताभिमंत्रितो यस्य निखिन्योच्चाटनं गृहात् ॥ २६ ॥

मंत्र- ॐ ह ह ह ह ह स्वाहा ॥

भरणी नक्षत्र में मारे हुए उल्लू की हड्डी की कील इस मंत्र से मंत्रित करके सात बार जिस घर में गाडी जाती है उसका उद्घाटन हो जाता है।

काकोलूकस्य पक्षां मुहुलाद्यष्टाधिकं शतं,
सनाम्ना मंत्र योगे च समस्तो उच्चाटनं भवेत् ॥ २७ ॥

मंत्र- ॐ नमो भगवते रुद्राय दंष्ट्रा करालाय कपिल रूपाय कपि अमुकं सपुत्र बांध वैस्सह हन हन पच पच शीघ्रं शीघ्रं उच्चाटय उच्चाटय हुं फट स्वाहा ॥

कौवे और उल्लू के पंख (एक भाग) को नाम सहित इस मंत्र से एक सौ आठ बार मंत्रित करने से उसका पूर्ण रूप से उद्घाटन होता है।

इति

विद्वेषण

अथ विद्वेषणाख्यस्य विधि कृत्यस्य कर्म्मणः,
प्रवक्ष्ये मंत्र यंत्राद्यैरादौ रुक्तं मुनीश्वरैः ॥ १ ॥

अब कुछ कर्म विद्वेषण को मुनिराजों द्वारा कहे हुए को मंत्र यंत्र आदि का वर्णन किया जावेगा।

काल्या सहस्र जाप्यात सिद्धि ह्रीं ह्रः इत्यामुं मंत्रं स निधनाद्यो,
विदर्भित मन्य तरेणाभि लिख्य लेखिन्या ॥ २ ॥

ह्रीं ह्रः काली देवी के इस मंत्र को एक हजार जप से सिद्ध करके इन दोनों अक्षरों के अन्दर नाम को विदर्भित करके (गूंथकर) किसी भी कलम से लिखो।

हेम कृत्या शरावे गोपितात्काद्य भागद्वैक स्मिन,
द्विक पक्षौ नान्यत्र तु माहिषी युता ग्रेण तद्वयं निखनेत् ॥ ३ ॥

सोने के बने हुए एक सकोरे में गोपितात्क (गोरोचन) को एक भाग लेकर द्विक (कौवे) पक्षी के पंख और भैंस के सींग के अग्र भाग से दोनों (नदी के किनारो) को खोदें।

नद्या स्तीरे द्वितीये विद्वेषः स्निग्धयोर्म्महान भवति,
तत्तीर संगतावपि नत्तयोः स्यात्संग तिर्जतुः ॥ ४ ॥

उसको नदी के दोनों किनारों पर गाड़ने से दो घनिष्ट प्रेमियों में भी विद्वेष हो जाता है और उन भागों को नदी के किनारे पर लाने से भी फिर उन दोनों में मेल नहीं होता ।

चतुर्मुष्टिके मर्कटिके घोरे विद्वषिणि विद्वेष कारिणी घोराघोरद्यो मुकद्योः काकोलका दिवत्परस्पर द्वेष कुरु कुरु ॥

काकोलूकच्छद युत पाणिभ्यं तर्प्पयेदमुं मंत्र,
काल्या जपं ततः स्यात् विद्वेषः स्निग्धयोस्सुमहान ॥ ५ ॥

ॐ विद्वेषिणि अति वीर्य्ये उत्सादय उत्सादय स्वाहा ॥

कौवे और उल्लू के पंख युक्त अपने दोनों हाथों से इस मंत्र का पानी से तर्पण जप करने से बाद में अत्यंत घनिष्ट मित्रों में भी विद्वेष हो जाता है।

कुर्य्यात् चिताग्नि दग्धो रिष्ठा लटे मुना जप्तः,
मूर्ध्नि क्षिप्तो द्वेषोच्चाटै गेहे तु तन्नाशं ॥ ६ ॥

इस मंत्र से जप करके अरीठों को चिता की अग्नि में श्मशान में जलावे और इस भस्म को सिर डालने से उच्चाटन विद्वेषण और नाश तक होता है।

आग्नेय मंडले साध्यमोंकार द्वय वेष्टितं,
अधो मुखं कृतं भूमौ सद्यो विद्वेष कारणां ॥७॥

अग्नि मंडल के अन्दर साध्य के नाम को दो ॐ से वेष्टित करके पृथ्वी में उल्टा करके रख देने से तुरन्त ही विद्वेषण हो जाता है।

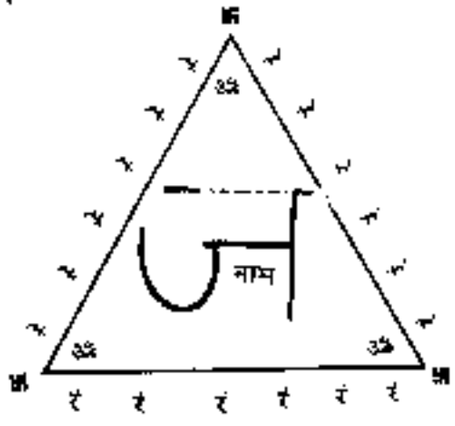

प्रेतमषी कनक रसैर्विलिख्य साध्यं जकार मध्य गते,
अग्निं पुरं प्रेत वने निहितं विद्वेष कर्म्म करं ॥८॥

चिता के कोयले की या राख की स्याही और धतूरे के रस से जकार के बीच में साध्य का नाम लिखकर चारों तरफ अग्नि मंडल बनाकर श्मशान में गाड देवे तो विद्वेषण कर्म करता है।

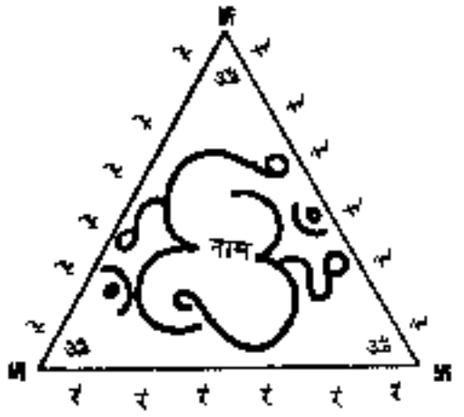

अंगारोन्मत्त रसैर्धकार मध्ये विलिख्य यन्नाम,
प्रेत वने निक्षिप्तं सप्त सुरात्रेण विपरित: ॥९॥

अंगारे (कोयले) औ उन्मत्त (धतूरे) के रस से धकार के बीच में नाम में नाम लिखकर श्मशान में गाडने से सात रात के अंदर विद्वेषण हो जाता है।

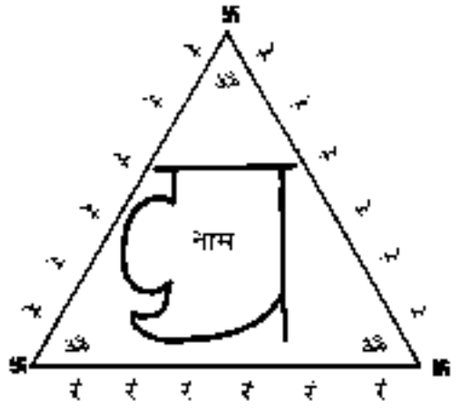

उभयो: प्रतिकृति हृदये भूर्ज्जे संलिख्य तुर्य्य वर्गांते,
क्षिप्ते स्याद् विद्वेष: पंतालये भूमि मध्यगते ॥ १० ॥

दोनों की मूर्तियों को भोजपत्र पर लिखकर उनके हृदय में चौथे वर्ग के अंतिम अक्षर (न) के अन्दर नाम को लिखकर श्मशान में गाडने से विद्वेषण होता है।

यमराज सदोमेय यमेदो रणयोदय,
यदयोनि सुरक्षेय यक्षे रक्ष निरामय ॥ ११ ॥

मृत मुख निहित पट्टेवा प्रसूत चांडालिकां बरे,
चापि भूत द्रुम पत्राभो निंब दलांभश्चितां गारै: ॥ १२ ॥

मृतक के मुख पर रखे हुए वस्त्र अथवा प्रसव की हुई चांडाली के वस्त्र पर भूत द्रुम (लिसोडे या बहेडा) के पत्ते और नीम के पत्तों के रस से और चिता के अंगारों (कोयले) से

चक्रे तुरंगम अरो महिष शिरश्चांतरा कृते मंत्रि विधिना,
ऽनुष्टप चक्रे श्लोकेयदुक्तं मनुं विलिखेत् ॥ १३ ॥

घोड़े और भैंस के सिर-मुँह के बाल से ऊपर लिखे हुए अक्षरों से मंत्री विधिपूर्वक चक्र में अक्षर लिखे।

त चक्र मध्ये कोष्ठ स्थित मांते साध्ययो लिखेत,
आख्ये यमराज चक्रमे तदयंत्र मनर्थैक हेतु: स्यात् ॥ १४ ॥

उसको चक्र के बीच के कोठे में लिखकर अंत में दोनों साध्यों के नाम लिखे यह यमराज चक्र यंत्र अनर्थ को करने वाला कारण होता है।

तत् शराव संपुट निहितः सु स्निग्धयो र्द्वयोर्ज्जनति,
मध्ये प्रेत वने तन्निखात तां मा पादयो च द्वेषं ॥ १५ ॥

उसको दो सरावों के संपुटों के सम्पुट के अन्दर रखकर श्मशान में गौड़ने से दो घनिष्ट मित्रों में भी शत्रुता हो जाती है।

विलिखितमिदं शिलायां ताल शिलाद्यैर्म्महा शिलाद्यः,
क्रांतां यंत्रं पीतैः पुष्पैः प्रपूजितं स्वेष्ट रोद्य करं ॥ १६ ॥

इस यंत्र को हड़ताल मेनसिल आदि से शिला के ऊपर लिखे हुए को रखकर दूसरी महाशिला के नीचे दबाकर पीले पुष्पों से पूजन करने से भी विद्वेषण होता है।

लिख्यतेप्यति वैराणां रूधिरेणाभिधानयोः,
स्निग्धयोर्न्निंब पत्रैतौ पठन द्वेष्टि परस्परं ॥ १७ ॥

आपस में अत्यंत बैर करने वालों के रूधिर से नीम के पत्ते पर दो घनिष्ट मित्रों का नाम लिखने से उसको पढ़ने से उनकी परस्पर में शत्रुता हो जाती है।

मंत्रो नासुरीत्येष नाम्ना ताल दले रिपोः,
लिख्यते यस्य काकानां निवहेतु स खादयते ॥ १८ ॥

इस आसुरी नाम वाले मंत्र को ताड़ के पत्ते पर जिस शत्रु का नाम लिखा जावे (अथवा कौवे के अंडे के रस से) उसे कौवों का समूह खा जाता है।

काकोलूत पत त्राणि यन्नामो देश पूर्वकं हूयंते,
स्निग्धयोः प्रीति र्विघटेत् तयोः क्षणात् ॥ १९ ॥

कौवे और उल्लू पक्षियों को जिनका नाम लेकर पुकारते हैं उन दोनों की मित्रता उसी क्षण टूट जाती है।

अश्वत केतक रजः समुद्र फल मज्ज चूर्ण समुपेतं ,
उपरिविकीर्णं स्वपतोर्दंपत्योर्ज्जनयति द्वेषं ॥ २० ॥

काली केतकी के चूर्ण और समुद्रफल की भीगी के चूर्ण को जिस दम्पत्ति के ऊपर सोते हुए पर डाला जाता है उन दोनों में द्वेष हो जाता है

दुर्भगायाः भगे सप्तदिनं सरजसि स्थितैः,
पिष्टै सिद्धार्थकै र्द्वेषो जनन्या अपि जायते ॥ २१ ॥

बदसूरत स्त्री की भग में सरजस (ऋतु दिनों) में सात दिन तक रखी हुयी सरसों पिसी हुई से द्वेष हो जाता है।

काकोलूक गरुत सर्प्पत्वक सर्प्पारि छदै: कृत:,
चूर्णो विद्वेषमाधत्ते शत्रोमूर्दिर्न समर्पित: ॥ २२ ॥

कौवे और उल्लू के पंख सर्प की कांचली और सर्पारिछद (मोर पंख) के बने हुए चूर्ण को शत्रु के सिर पर डालने से द्वेष होता है।

दीर्घकं धर दंतेन निंबेन राजिभि: भूतै: संभूतै:,
मिश्रितश्चूर्ण: स्यात् द्वेषाय शिरोर्प्पित: ॥ २३ ॥

दीर्घ कंघा दंत (बड़े हाथी दांत) नीम राई और भूत (लिसोड़या बहेड़ा) को मिलाकर बनाये हुए चूर्ण को सिर पर डालने से द्वेष हो जाता है।

वशया ज्वलिता दीपात् द्विपस्य महिषस्य च,
आक्त संजनमक्षूतं द्वि द्वेषाय प्रजायते ॥ २४ ॥

हयस्य (घोड़े) या द्विप (हाथी) और भैंस की चर्बी (वसा) से जले हुए दीपक के बने हुए अंजन को आंजने से द्वेष हो जाता है।

हय महिष मूत्रत्सिक्ता लक्तक वहुबार भाविता बत्ति:,
ज्वलिता महिषी वसया विद्वेष कृदजनं जनयेत् ॥ २५ ॥

घोड़े और भैंसके मूत्रसे अलक्तक (म्हावर लाख) की बहुत बार भावना दी हुई (भीगी हुई) बत्ती को भैंस की वसा (चर्बी) में दीपक जलाने से और अंजन (काजल) बनाकर लगाने से विद्वेषण करताहै।

भुजंगत्वक भुजंगारि पतत्राभ्यां प्रवर्तित:,
धूप: सं स्पर्शमात्रेण विद्वेषं जनयेत् भृशं ॥ २६ ॥

सर्प की कांचली और भुजंग का शत्रु (मोर) के पंखों की दी हुई धूप को छूनेसे ही विद्वेष हो जाताहै।

चूडाभ्यां समुपाताभ्यां मयूरात् कुर्कुटादपि,
प्रवर्त्तनेन धूपेन स्पृष्टो द्वेष्यालि लोलन: ॥ २७ ॥

मोर और मुर्गे की चोटी की धूप को छूने से ही विद्वेष हो जाता है।

काकोलूक छदोद्भूतो धूप: सम्यक् प्रयोजित:,
तस्यांश सं स्पृशेत सद्य स्तं द्वेष्टि निखिलो जन: ॥ २८ ॥

कौवे और उल्लू के पंखो की अच्छी तरह दी हुई धूप जिस पुरुष के शरीर को छू देती है उससे सब पुरुष द्वेष करते हैं।

खरेण रेणून सं स्पृष्टान् मध्यान्हे लुठता क्षिपेत्,
शुधाद्य वाम हस्तात्तान विद्वषि जन वेश्मनि ॥ २९ ॥

दोपहर में लोटे हुए गधे की धूल को बांये हाथ से उठाकर जिसके घर में डाल देवे उससे सब द्वेष करते हैं।

द्विक द्विकार्थो: शिरसी निखाते द्विष गृह द्वार महा प्रदेशे,
तुरंग रक्ते महिषे क्षणार्धो: खुरो वातद्वेष मंगाना कलहं विधते ॥ ३० ॥

दुगुना कार्य करने के वास्ते सिर पर डाली हुई तथा शत्रु के घर के द्वार के भाग मे डाले हुए घोडे केरक्त य खुर और भैंस के खुर इस घर में रहने वालों में लड़ाई करा देते हैं।

इति विद्वेषण विधानो नामाष्टादश
समुदेश

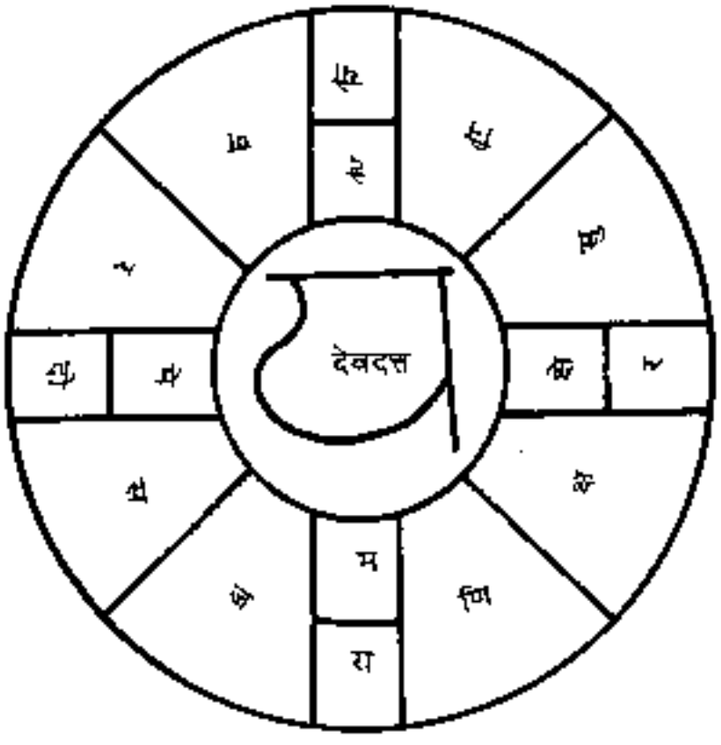

लिखे तकं वृत त्रय त्रिभूषितं
उष्ट्री मंत्रं लिखेदवाह्ये यम श्लोको च मध्यत:
ॐ ह्रीं उष्ट्री दष्ट्रानन हुं फट
उष्ट्री मंत्र मिमं जाप्य दस सहस्र सख्यया
मध्वाज्युक्तै रक्त पुष्पै सहस्रं होमयेत्तत:
तत सिद्धो भवेन्मंत्रो यथेप्सित फल प्रद
यस्य प्रभाव मात्रेण शत्रवो याति संक्षयं
इमं यम श्लोकं ३२००० सहस्राणि जपेत
घृत मधु रक्त पुष्पै सहस्र मेकं होमयेत्
तत: सिद्धो भवति मनसेप्सितानि कार्याणि करोति

अथ स्तंभं प्रवक्ष्यामि मंत्र यंत्रादि कर्म्मभि:,
चोर सेना स्त्र शत्रु क्र जिव्हादि व्याधि गोचर: ॥ १ ॥

अब चोर, सेना, शस्त्र, जिव्हा तथा व्याधियाँ तथा ग्रहों आदि को स्तंभन करने के लिए दिव्य औषधियाँ मंत्र और यंत्र आदि का वर्णन किया जावेगा।

प्रणवादि धनु द्वितयं महाधणु: स्वर्ण वर्ण गगनांत:,
मंत्र कुरूते वर्त्मनि सं जपतश्चोर दृग्बंधं ॥ २ ॥

मंत्रोद्धार-ॐ धणु धणु महा धणु धणु स्वाहा॥

आदि में प्रणव ॐ फिर दो बार धणु धणु फिर महाधणु धणु फिर स्वर्ण वर्ण गगनं (स्वाहा) सहित मंत्र को वर्त्मन अर्थात् मार्ग में जपने से चोर की आँखे बंध हो जाती हैं।

दुर्गा मनुना दश शत सिद्धेनाभि मंत्रिता,
अमुना क्षिप्ता मध्ये दिक्षु च नव रूप्यु: शर्क्कराश्चोरान् ॥ ३ ॥

मंत्रोद्धार- गोथि मोथि मोथि मेव उक्के मट्टे चट्टे घोर घरट्टे घेले मेलेटो पथि माटले जंभे स्तंभिटोंभे मोहे स्वाहा॥

इस दुर्गा मंत्र को एक हजार जप से सिद्ध करके इससे मंत्रित की हुई शक्कर को दिशाओं में फेंक करने से वह चोरों को रोकता है।

तारा तरू फलक युगे मंत्रममुं न्यस्य साधकयो:,
अग्रे निखन्यो सी मस्तदैव यस्या त् कुप्य स्तंभै: ॥ ४ ॥

इसी मंत्र को तारा वृक्ष (चीड़) की दो तख्तियों पर लिख और उसे दो साधकों के आगे गाड कर रखे तो कुम्भ (पहाड) की तरह स्तंभन होता है।

ॐ ह्रीं पार्श्वाधिक यक्ष दिव्य रूप रोम हर्षण एहि एहि आं क्रों नमः ॥

पार्श्व यक्षाराधन विधान मंत्रोयं

दश लक्ष जादप्प होमात् प्रत्यक्षो भवति पार्श्व यक्षोसौ,
न्यग्रोध मूल वाशी श्यामांगः त्रिनयनो नूनं ॥ ५ ॥

संस्कृत टीका -असौ पार्श्वनामधेय यक्षः न्यग्रोध मूलवासी वट वृक्ष मूल निवासी किं विशिष्ट स्यामांगः श्यामवर्णं पुनः कथं भूतः त्रिनयनः त्रिनेत्र नूनं निश्चितं ॥

निज सैन्यैर्माया मय समुस्थितैः वैरि लोकमग्रस्थं,
विमुखी करोति यक्षः संग्रामे निमिष मात्रेण ॥ ६ ॥

संस्कृत टीका- निज सैन्यै स्वकीय सैन्यैः कथं भूतैः मायामय समुस्थितैः ह्रीं कार मय कृत प्राकार सम्यग् स्थितैः वैरि लोकं शत्रु सेना समूहं कथं भूतं अग्रस्थं स्वकीय सैन्य पुरस्थितं विमुखी करोति परान्मुखी करोति कोसौ यक्षः पार्श्वयक्षः क्व संग्रामे रणरंग भूमौ कथं निमिष मात्रेण क्षण मात्रेण॥

यह पार्श्व यक्ष मंत्र कहा जाता है । यह बड की जड़ में रहने वाला पार्श्वयक्ष दस लाख जप से प्रत्यक्ष होता है । श्याम शरीर वाला और तीन नेत्र वाला है। यह यक्ष अपनी माया से बनाई हुई सेना से आगे खड़ी हुई शत्रुओं की सेना को युद्ध में पल मात्र में भगा देता है।

एषोत्थितो हुलु हुलु उर्द्धरोमा भयंकरः तमहं
समयिष्यामि संकुमा सलिलेन च,
यत्रो स्थितोहुलुहुलु स्तत्रेव प्रतिगच्छतां
हुलुहुल स्ताम्र नेत्राय ठः ठः ॥ ७ ॥

रुद्राधि देवता मंत्र एष लक्ष प्रजाप्पतः आस्कंदति,
नरेंद्राणां सिद्धिं बहुफल प्रदः हुलु हुलु ताम्र नेत्राय ठः ठः ॥ ८ ॥

यह रुद्राधि देवता का मंत्र है एक लाख जप से सिद्ध होकर नरेन्द्रों को अर्थात् उत्तम मनुष्यों को बहुत फल देने वाली सिद्धि होती है।

एतेन बाणा लोष्ठ प्रभृतिभिरंभि मंत्रितै रिपोः सेनां दिष्टेत,
पताकिनी सांगः सहसैव निवारिता भवति ॥ ९ ॥

इस मंत्र से मंत्रित किये हुए बाण तथा ढ़ेला आदि को शत्रु की सेना पर छोडने से वह सेना अचानक ही भाग जाती है।

ध्यात्वा ज्वाला रूपं सलिले वितरेदनेन वार स्त्रीन्,
मार्गो रिपुवाहिन्या आयातिन सा यथा तेन् ॥ १० ॥

मार्ग में अग्नि के रूप का ध्यान करके इस मंत्र से जल को तीन बार अभिमंत्रित करके बिखेर दे तो शत्रु की सेना इसप्रकार नहीं आ सकती ।

व्योषापामार्ग रजसा समुपेतं जप्तमुष्णा जलम्,
अमुना युद्धे त्रिगे प्रदव्यां विकरेन्नरेंद्रयोः सेनां ॥ ११ ॥

व्योष (सोंठ मिरच पीपल) और अपामार्ग (चिरचिटा) के चूर्ण से युक्त गरम पानी को इसमंत्र से युद्ध में मंत्रित करके तिराहे पर राजा की सेना के मार्ग में बिखेर दे।

श्वेतेन किसलया दीन्यं गान्ये कांक्षर भू रूहस्य,
जपित्वा साध्यांग धियां जुहुया देह मरे स्तत्र तत्र भवति रूजांगे ॥ १२ ॥

एक वृक्ष के कोंपल आदि एक अंगो पर साध्य के अंग का बुद्धि से श्वेत ध्यान करता हुआ यदि हवन करे तो शत्रु के उसी अंग में रोग उत्पन्न हो जाता है।

सीमानं ग्रामादे दैशषस्यो दिश्य वृष्टि रिहमा भूत,
इत्ये तत संजप्तां लेखां कुर्य्यान्न तत्र वृष्टिः स्यात् ॥ १३ ॥

ग्राम देश आदि की सीमा का उद्देश्य करके यदि यह विचार कर मंत्र जपे कि यहाँ तक वृष्टे न होवे तो वहाँ तक वृष्टि नहीं होती है।

मंत्रो वासह यक्षाय ठेठेत्येष प्रसिद्धयति,
लक्ष प्रजाप्पाद वशोस्य यक्षः स्यादधि देवता ॥ १४ ॥

वासह यक्षाय ठः ठः यह मंत्र एक लाख जप से सिद्ध होता है इसका वासह यक्ष अधिष्ठाता देवताहै।

अष्ट सुदलेषु मंत्रो भूमंडल मध्यगस्य,
प्रागद्या लिखितोयं द्विषतः सं स्तंभयेत् ध्वजिनी ॥ १५ ॥

यदि इस मंत्र को आठ दलों के अन्दर पृथ्वी मंडल में प्रातःकाल के समय लिखे तो शत्रु की सेना का स्तंभन होता है।

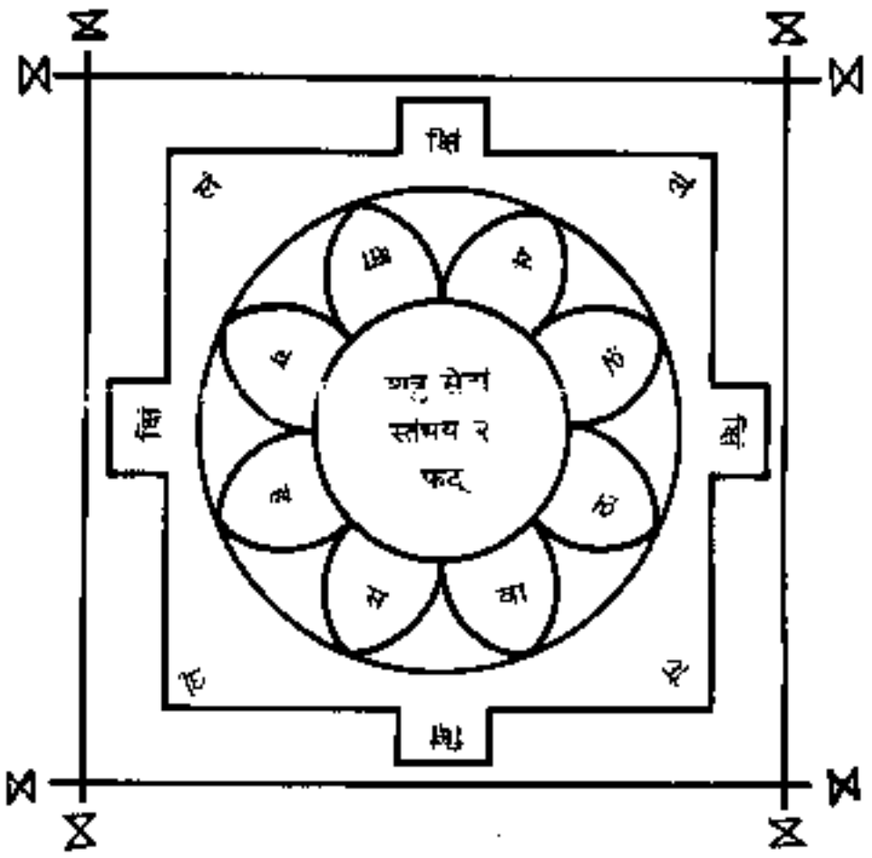

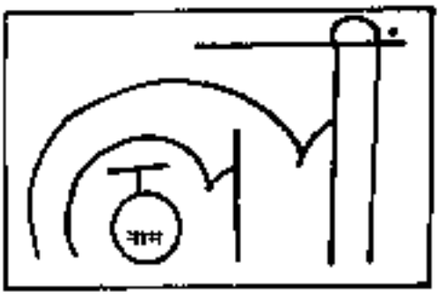

लेली युतेन्दु दर्भितमभिधानं लिखितं पचे ख्यातं,
द्विषतो वाहिन्यो पोषितस्य सं स्तंभनं कुरुते ॥ १६ ॥

इन्दु (ठ) सहित ले और ली के अंदर का नाम को एक वस्त्र पर लिखने से यह मंत्र शत्रु की सेना का स्तंभन करता है।

रिपु नामान्वितं मातं मलवर ख्यंकार संयुतं ठांतं,
तद्बाह्ये भूमि पुरं त्रिशूलं भूतोग्र मृगवेष्टयं ॥ १७ ॥

रिपु नामान्वितं शत्रोर्नामान्वितं कं मांत टकारं मलवरयूंकार संयुतं मश्च लश्च वश्च रश्च यूंकार श्च मलवरयूंकाराः तैः संयुतं सयुक्तं कं टांत ठकारो एवं उम्लवर्यूं मिति बीजं टकार वहिः तद्बाह्ये भूमि पुरं तत ठ पिडं बाह्ये पृथ्वी मंडलं त्रिशूल भूतोग्र मृग वेष्टयां तत् पृथ्वी मंडल बाह्ये त्रिशूलानेक भूतक्रूर मृग जात्यैः परीतं ॥

प्रतिरूप हस्त खडगै र्निहन्य मानारि रूप परिवेष्टयं,
शत्रोर्मामांतरितं समंततो वेष्टियेत्पिंडे : ॥ १८ ॥

प्रतिरूप हस्त खडगै: प्रति शत्रु रूप हस्त कृपाणै: निहन्य मानं नि:शेषण हन्य मानं किं अरि रूपं शत्रु रूपेतेन परिवेष्टया एवं विधिरूपै: परिवेष्टयां शत्रो नामांमांतरितं बेरिनामां तरितं समं तत: शत्रु प्रति शत्रु रूप बाह्ये परित: वेष्टयेत् वेष्टनं कुर्यात् कै : पिंडै नामांतरितै ठकार पिंडै: ठकारादि पिंडै ठम्ल्व्र्यूं ॥

प्रतिरिपु वाजि महा गजानां नामां तरितं समं ततो मंत्रं,
विलिखेद ॐ हूं ह्रीं फें ग्लौं स्वाहा तांत ग्रग्मांतं ॥ १९ ॥

ॐ ह्रीं भैरव रूपिणि चाडालिनी प्रतिपक्ष सैन्यं चूर्णय चूर्णय चूर्णय भेदय भेदय खादय खादय ग्रस ग्रस ख ख मारय हुं फट ॥

प्रति रिपु: प्रति शत्रु वाजि महागज नामांरितं पटाश्च पट गज नामांतरितं समं तत: मंत्रं नामांतरितं ठ पिंड बाह्ये परिसमं तत: मंत्रं मंत्र वलयं लिखेत् ॥

मंत्रोद्धार ॐ हूं ह्रीं फें ग्लौं स्वाहा ठ:ठ: देवदत्तस्य पटाश्च ॐ हूं ह्रीं फें ग्लौं स्वाहा ठ: ठ: देवदत्तस्य पटगज ॐ हूं ह्रीं मित्यादि मंत्रेण समताद्वेष्टयेत वेष्टन मंत्रोद्धार कथ्यते ॥
ॐ ह्रीं भैरव रूपिणी चंडशूलिनी प्रतिपक्ष सैन्यं चूर्णय चूर्णय धूर्णय धूर्णय भेदय भेदय ग्रस ग्रस ख ख षादय षादय मारय हुं फट ॥

मंत्रेण वेष्टियित्वातेन ततो राति विग्रहं लेख्यं,
अष्ट सु दिक्षु वहि रपि विलिखेन् माहेंद्र मंडलं दद्यात् ॥ २० ॥

मंत्रेणा वेष्टयित्वा नेन अनेन कथितं मंत्रेण वेष्टनं कृत्वा तत: तन्मंत्र वेष्टनाद्वहि अराति विग्रहं लेख्यं शत्रु रूपं लेख्यं क्व अष्टासु दिक्षु प्राच्या दयाष्ट दिशा सु वहि रपि विग्रह वहि प्रदेशे माहेंद्र मंडलं इन्द्रमंडलं दद्यात् देवात् ॥

प्रेतवनात्सं चलित मृतक मुखोत्थित पटेवा लिखेत्,
कृष्णाष्टम्यां युद्धात्यक्त प्राणस्स संग्रामे ॥ २१ ॥

प्रेतवनात् सं चलित श्मशान भूमौ सकासान सम्यग् चलित: मृतक मुखे स्थित पटेऽथवा लिखेत् प्रेतस्य प्रच्छादित वस्त्रे अथवा लिखेत् कृष्णा अष्टम्यां कृष्ण चतुंदश्यां रणां गणे युद्धात प्राण परित्याग पुरूषस्य वस्त्रे वालि खेत् ॥

कन्या कर्तित सूत्रं दिवसेनैकेन तत पुनर्वीतं
तस्मिन् हरितालाद्यैः कौरंटक लेखनी लिखितं ॥ २२ ॥

कन्या कर्तित सूत्रं कुमार्या कर्तित सूत्रं दिवसेनैकेन तत्पुनर्वीतं तं तन कुमार्या कर्तित सूत्रं पुनरप्ये कैन दिवसेन विणितां तस्मिन हरितालाद्यै तस्मिन वस्त्रे हरितालादि पीत द्रव्यैः कौरंटक लेखनी लिखितं कौरंटक लेखन्या लिखितं ॥

पदमावत्यात्पुरतः पीतैः पुष्पैः पुराः समभ्यर्च्य यंत्रं,
पटे वधीयात्प्रख्याते चोन्नत स्तंभो ॥ २३ ॥

पदमावत्यात्पुरतो पदमावत्या देव्या शनः पीतैः पुष्पैःपुरा समभ्यर्च्य पीतवर्ण प्रसूनैः पूर्वं सम्यग् पूजयित्वा यंत्र पटं एतत लिखित यंत्रं पटं वधीयात् नि वधीयात प्रख्याते विख्याते च समुच्चये उन्नते स्तंभे अभ्यन्तर स्तंभे ॥

तंदृष्टांत दूरतरान्नशयंति भयेन विह्वलीभूताः,
विरचित सेना व्यूहा संग्रामे शेष रिपु वर्गाः ॥ २४ ॥

तं दृष्टवा स्तंभे नियध्य मानं यंत्र पटं दृष्टवा दूरतरान्नशयंति अतीव दूरदर्शान्निशयंति भयेन विह्वली भूताभीत्या विह्वली चेतोभूत्वा पलायंति कस्मात् विरचित सेना व्यूहात विशेषेण रचितो विरचितः विरचित श्चासौ सेना व्यूहश्च विरचित सेना व्यूहस्त स्याद्विर चित सेना व्यूहात संग्रामे संग्रामां भूमौ शेषगण वर्गाः दुःत शत्रु समूहाः नश्यतीति संबंधः॥

टीकाः शत्रु के नाम के बाहर मांत (यकार) लिखकर बाहर ठांत (ठकार) सहितमलवरयूकार बीज अर्थात् ठम्ल्व्र्यूं लिखे उसके बाहर पृथ्वी मंडल लिखे उसके बाहर त्रिशूल उग्र भूत और मृगों से घिरे हुए हाथ में शस्त्र के लिए हुए शत्रु की मूर्ति को लिखे जो अपने सामने लिखे हुए शत्रु के नाम को मार रहा हो प्रति शत्रु की मूर्ति ठम्ल्व्र्यूं पिंडाक्षर से घिरी हुई हो।

ॐ हूं ह्रीं फेंग्लौं स्वाहा ठ-ठः देवदत्तस्य पटाश्च ॐ हूं ह्रीं फें ग्लौं स्वाहा ठ : ठः देवदत्तस्य पट गज ॐ हूं ह्री फें ग्लौं स्वाहा ठः ठः ॥

इस मंत्र में देवदत्त की जगह शत्रु का नाम रखना चाहिये इस मंत्र को पूवोक्त चित्रों से लिखे फिर निम्नलिखित मंत्र से उस प्रति शत्रु की मूर्ति को घेर कर लिखे उसके चारों तरफ माहेन्द्र मंडल इंद्र मंडल बनाये।

ॐ ह्रीं भैरव रूपिणी चंडशूलिनी प्रतिपक्ष सैन्यं चूर्णय चूर्णय धूर्णय धूर्णय भेदय भेदय ग्रस ग्रस खं खं खादय खादय मारय मारय हुं फट ॥

यह मंत्र आठों दिशाओं के आठों कमलों में लिखे।

इस यंत्र को श्मशान में लाये हुए मृतक के मुख पर के वस्त्र पर या कृष्ण अष्टमी या कृष्ण चर्तुदशी को युद्ध में संग्राम में मरे हुए कपड़े पर हडताल आदि पीले द्रव्यों से कौरंटक की कलम से लिखे। फिर इस यंत्र को पदमावती देवी के सामने रककर पीले सुगंधित पुष्पों से पूजा करके एक अत्यंत उग्र स्तंभ से बांध देवे। इस यंत्र से बंधे हुए स्तंभ को देखकर अत्यन्त दूर से देखकर भय से व्याकुल होकर विशेषता से बनाये युद्ध के सेना के व्यूह से शेष बचे हुए शत्रु भाग जाते हैं।

अबाधि पट संज्ञास्तो संजेता: प्राग्विधि क्रम:,
अनुसृत्य तमेवैकं पटं मंत्री प्रकल्पयेत् ॥ २५ ॥

पहले जसि अबादि (अबाध बिना बाधा किया हुआ) पट यंत्र नाम के यंत्र का वर्णन किया गया है उसी अनुसार मंत्री एक कपडा बनवावे।

व्यास स्तत्र त्रयो हस्ता स्ततो मध्यस्य वाससः,
सुवर्ण वाहनंभा स्वत्सुवर्ण सदृशद्युति ॥ २६ ॥

उस वस्त्र का व्यास तीन हाथ हो उस कपड़े के बीच में सोने के वाहनवाली चमकते हुए सोने के समान कांतिवाली हो।

पाशं चक्रं च वज्रं च खडगं च क्रमतो दधत,
त्रिशूल शक्ति प रशुच्छुरिकाश्चाष्टभिर्भुजै: ॥ २७ ॥

अपनी आठों भुजाओं में नागपास चक्र वज्र खडग त्रिशूल शक्ति परशु छुरी को धारण करने वाली हो।

लिखेद्विजय देव्या: स्सदृपमाभरणोज्वलं,
अलिखतामुभयतो भीषणौभैरवावुभौ ॥ २८ ॥

विजयदेवी को सुंदर रूप वाली आभरणों से युक्त उज्जवल अंगवाली लिखे उसके दोनों तरफ दो भयंकर भैरव लिखे।

रक्ताक्षौ मुदगर करौ दष्टोष्ठाग बूर्द्ध मूर्द्ध चौ,
वक दंष्टौ द्विषत्सैना भंगदान समुद्यतौ ॥ २९ ॥

वह भैरव लाल नेत्र वाले हाथ में मुदगर वाले होंठ डसते हुए और कच (बाल) ऊपर को उठे हुए वक्र (डोढ़ी) दष्टौ(डाढ़वाले) और द्वेष करने वाले शत्रु की सेना को भगाने में उद्धत हो ।

तस्या अधस्ताद्वेतालं मातृश्चाष्टौ समंततः,
विलिखेत्समुदिताः स्व स्व वर्णायुध वाहनैः ॥ ३० ॥

उनके नीचे वेताल और चारों तरफ आठ मातृकाओं को अपने अपने वर्ण और आयुध (अस्त्र) और वाहन सहित लिखे।

ब्राह्मएंद्यांधं तरालेषु विलिखेच्च जयादिकाः,
अष्ट दंड करा देवार्वाणा ज्ञन समन्विताः ॥ ३१ ॥

ब्राह्मणी आदि के अंतराल में जया आदि आठ दंडकारी देवियों को बाण और अशन (धनुष) सहित लिखे।

सितो रक्तोथ हरितः कृष्ण श्वेतोऽसित स्तथा,
सर्वे पीतश्च वर्णाः स्युर्ज्जयादीनां क्रमादमी ॥ ३२ ॥

जया आदि आठों देवियों के रंग क्रमशः सफेद लाल हरा काला सफेद काला और सब पीले होतेंहैं।

चक्राणि भिंडि पालांश्च वहिर्दिक्षु तथा धनु,
चतुस्तदं तरालेषु कुंतमा रोपितं शुभं ॥ ३३ ॥

उनके बाहर की दिशाओं में क्रम से चक्र भिंडपाल धनुष हो तथा उनके अंतराल में कुन्त (भाला) धारण किये हुवे हो।

अपराजित मंत्रेण तत्सर्वं वेष्टयेतत्क्रमात्,
मंडलानि लिखे द्वाह्यो क्षोणयं भोधिनभ स्तथा ॥ ३४ ॥

उन सबको क्रम से अपराजित मंत्र से वेष्टित करके उनके बाहर पृथ्वी जल तथा वायुमंडल बनावे

एतोषामंतरालेषु मंडलानां ततो लिखेत्,
जयादीनां चतसृणां मंत्रान मंत्र विधानवित् ॥ ३५ ॥

उन मंडलो के अंतराल में मंत्रों के विधान को जानने वाले चारों जया आदि के मंत्रों को लिखे।

ततः शुभ मुहूर्त्तेतं सर्वतोभद्र मंडलं,
प्रतिष्ठापन मंत्रेण प्रतिष्ठांप्प समर्चयेत् ॥ ३६ ॥

फिर अच्छे मुहूर्त में उसका प्रतिष्ठापन मंत्र से सर्वतोभद्र मंडल में प्रतिष्ठा करके पूजा करे ।

ॐ ह्म्ल्च्र्यूं ठः ठः ठः ठः अवतरत अवतरत तिष्ठ तिष्ठ सन्निहितो भव- भव निज पूजां गृह्ण गृह्ण हुं हुं स्वीं स्वाहा ॥

प्रतिष्ठापन मंत्रः

दिग्पालैः सहितास्य स्वयंत्र मंत्रैः पताकिका,
ध्वज स्याष्टु सु वधीया दिक्षु घंटा समायुता ॥ ३७ ॥

ॐ ह्म्ल्च्र्यूं इंद्र देवते बलिं गृह्ण-गृह्ण ॐ ह्रीं त्रीं लीं ह्रीं स्वाहा ॥ अष्ट दिक्पाल मंत्रः

फिर अपने अपने यंत्र और मंत्रो सहित पताका और ध्वजों को घंटो सहित आठो दिशाओं में बांध देवे।

क ल ख ह व य म भ वर्णान क्रमेण जानंति लोकपालानां,
इंद्रादिनांमपिंडानमलवर्यूंकार संयुक्तान् ॥ ३८ ॥

उन इंद्रादि आठ लोकपालों के मलवर्यूंकार सहित क ल ख ह व य म और भ वर्ण हैं।

क पिंडस्य महादिक्षु पार्थिवं बीजमालिखेत्,
खकार पिंड कोणेषु तदयंत्रं स्यात् छत्र कतोः ॥ ३९ ॥

क्म्ल्च्र्यूं बीज की चारों दिशाओं में पृथ्वी बीज लं लिखे और इसके कोणों में खकार पिंड को लिखे

महादिक्षु लिखेदयातं विदिक्षु कपराक्षरं,
द्वितय कस्य पिंडस्य वह्नि यंत्र मिदं मतं ॥ ४० ॥

दूसरे पिंड की महादिशाओं में यांत (रं) और विदिशाओं में के आगे के अक्षर अर्थात् ख अक्षर को लिखे यह अग्नि (वान्हे) यंत्र है

ख पिंडस्य लिखेत् दिक्षु पार्थिवं कांत पिंडं,
विदिक्षुयमकारं बिंदु संयुक्तं तदयंत्रं मातृकं मृतं ॥ ४१ ॥

ख पिंड (ख्म्ल्च्र्यूं) को दिशाओं में लिखकर पृथ्वीमंडल बनावे और कांत पिंड (ख्म्ल्च्र्यूं) की विदिशाओं में मकार को बिंदु (अनुस्वार) सहित लिखे इस यंत्र को मातृका यंत्र जाने ।

असिकादि समायुक्तं यमांत पिंडस्य कोणगं,
मपिंडाधि स्थितो यंत्रं निऋतेरिदमीरितं ॥ ४२ ॥

यमांतं (यम दिशा दक्षिण दिशा के अन्त में) नैऋते दिशा में असिआउसा सहित मपिंड (म्म्ल्च्र्यूं) स्थित हो ऐसे यंत्र को नैऋति दिशा का यंत्र (ईरित)कहा गया है।

इनमेदो रजो युक्तं भांतं कोणे लिखेद्दिशि,
पिंडस्य पिंडमाग्नेयं तदयंत्रं स्यात् पयोनिधेः ॥ ४३ ॥

भेद (व) पिंड (क्ल्व्र्यूं) की दिशाओं में आग्नेय पिंड (रम्ल्व्र्यूं) और कोणों में अर्थात् विदिशाओं में भान्त (म्म्ल्व्र्यूं) पिंड लिखे यह वरुण (पयोनिधि) का यंत्र है।

वायु वामज रै युक्तं कोणे पिंडस्य सं लिखेत,
दांतं भ पिडं कष्टासु यंत्रं मारूत मी रीतं ॥ ४४ ॥

य्म्ल्व्र्यूं वायु पिंड के कोनों में वाम (ॐ) सहित (दांत) न लिखे और दिशाओं में भ पिंड (भ्म्ल्व्र्यूं) लिखें यह मारुत (वायु) का यंत्र कहा गया है।

आशा सु निज बीजस्य ध्वांतं पिंडं समर्प्पयेत्,
विदिक्षु सकली कूटमिंदं यंत्रं धनेशिनः ॥ ४५ ॥

कुबेर के पिंड (म्म्ल्व्र्यूं) की दिशा में ध्वांत पिंड (ल्व्र्यूं) लिखे तथा विदिशाओं में पूर्ण कूट (क्ष) को रखे यह धनेश का (कूबेर) का यंत्र है।

रोयांत ईलि जिदयुक्तो विदिक्ष्वा शा सुलिखेत्यतां,
श पिंडो निज पिंडस्य तदयंत्रं शांभव भवेत् ॥ ४६ ॥

रो रां इलि (मंगल) के स्वामी भ्म्ल्व्र्यूं के दिशाओं में श पिंड (श्म्ल्व्र्यूं) लिखकर विदिशाओं में अपना ही पिंड लिखे यह ईशान का यंत्र है।

इंद्रादि मंडलैः स्व स्वायुध युक्तयैः क्रमेण वेष्टयानि,
आकाश मंडलेन च ततो वहि स्तानि यंत्राणि ॥ ४७ ॥

इंद्रादि आठ लोकपालों के मंडल अपने अपने शस्त्र आदि से सहित है तथा इन यंत्रों के बाहर आकाश मंडल से वेष्टित है।

वैश्रवणस्यतु यंत्रैन्यसनीयं व्योम मंडल स्थाने,
वैवस्वतस्य मंडल मंडलमलि भीषणांडं संयुक्तं ॥ ४८ ॥

कुबेर के यंत्र में आकाश मंडल के स्थान में भ्रमरों के भयंकर अंडों सहित यमका मंडल बनाना चाहिये। इति अष्ट दिक्पाल यंत्राणि मंडलानि

सर्वलक्षण संयुक्तं गज मुत्तमंमेवच,
श्वेतं सं बुद्ध योग्यं समुत्तगं मध्यमे वयसि स्थितं ॥ ४९ ॥

सर्व लक्षणों सहित उत्तम हाथी जो श्वेत समझने योग्य ऊँचा बीच की वयस (अवस्था उमर) का स्थित होवे।

राजितैः कलशैरतः शुद्धि यंत्रयुतं जलं,
जलभृद्भिश्चंदनै क्षौद संपर्क सुरभि कृतं ॥ ५० ॥

फिर वह शुद्धि यंत्र ऐसे कलशों से युक्त हो जिनमें चंदन के चूर्ण के संपर्क से सुगंधित किया हुआ जल हो।

अष्टाभि रूधि रूठेने शानेन प्रमितैः शुभैः प्रजप्तैः,
स्नान मंत्रेण स्नपयेत भूषयेदनु ॥ ५१ ॥

फिर आठों लोकपालों से अधिवेष्टित (घिरे हुए) इशानेंद्र को जाने हुए उत्तम और स्नान मंत्र को जप किये हुए जल से स्नान करावे और सजावे।

शुद्धि मंत्र

अंत लिखित साध्यारव्यं जांत पिंडं लिखेत क्रमात्,
तं स्वरैरिधना लांत संपुटेन च वेष्टयेत् ॥ ५२ ॥

अन्दर साध्य के नाम को लिखकर उसके चारों तरफ क्रमशः जांत पिंड इम्ल्व्र्यूं १६ स्वर इद्ध (प्रकाशित) लांत (व) के संपुट से उसको वेष्टित करे।

ततश्चामृत मंत्रेण मंडलेन च वारिटैः,
एतदेव विलिखितं शुद्धी यंत्र मुदा हृतं ॥ ५३ ॥

ॐ अमृते अमृतोद्भवे अमृत वर्षणि अमृत श्रावणे ॐ इवीं क्ष्वीं वं मं सर्वांग शुद्धिं कुरू कुरू स्वाहा ।

स्नान मंत्र

फिर उसके चारों तरफ अमृत मंत्र लिखे और जल मंडल बनावे इसी यंत्र का नाम शुद्धि यंत्र है।

सुरभि द्रव्य संमृष्टे प्रकीर्ण नव शालिके,
देशे पद्य वरोपेते जलं मंगल दीपिकैः ॥ ५४ ॥

सुगंधित द्रव्यों से साफ किये हुए अनेक प्रकार की नयी वस्तुओं से, तथा पैर धोने के जल से युक्त जल और मंगल दीपक वाले स्थान में

सर्वतः स्थापितैर्युक्ते रत्न गर्भे शुभैर्घटैः,
बीजपूर मुखै गंध सलिला पूरिता शयैः ॥ ५५ ॥

चंद्रोपक्र यंत्र

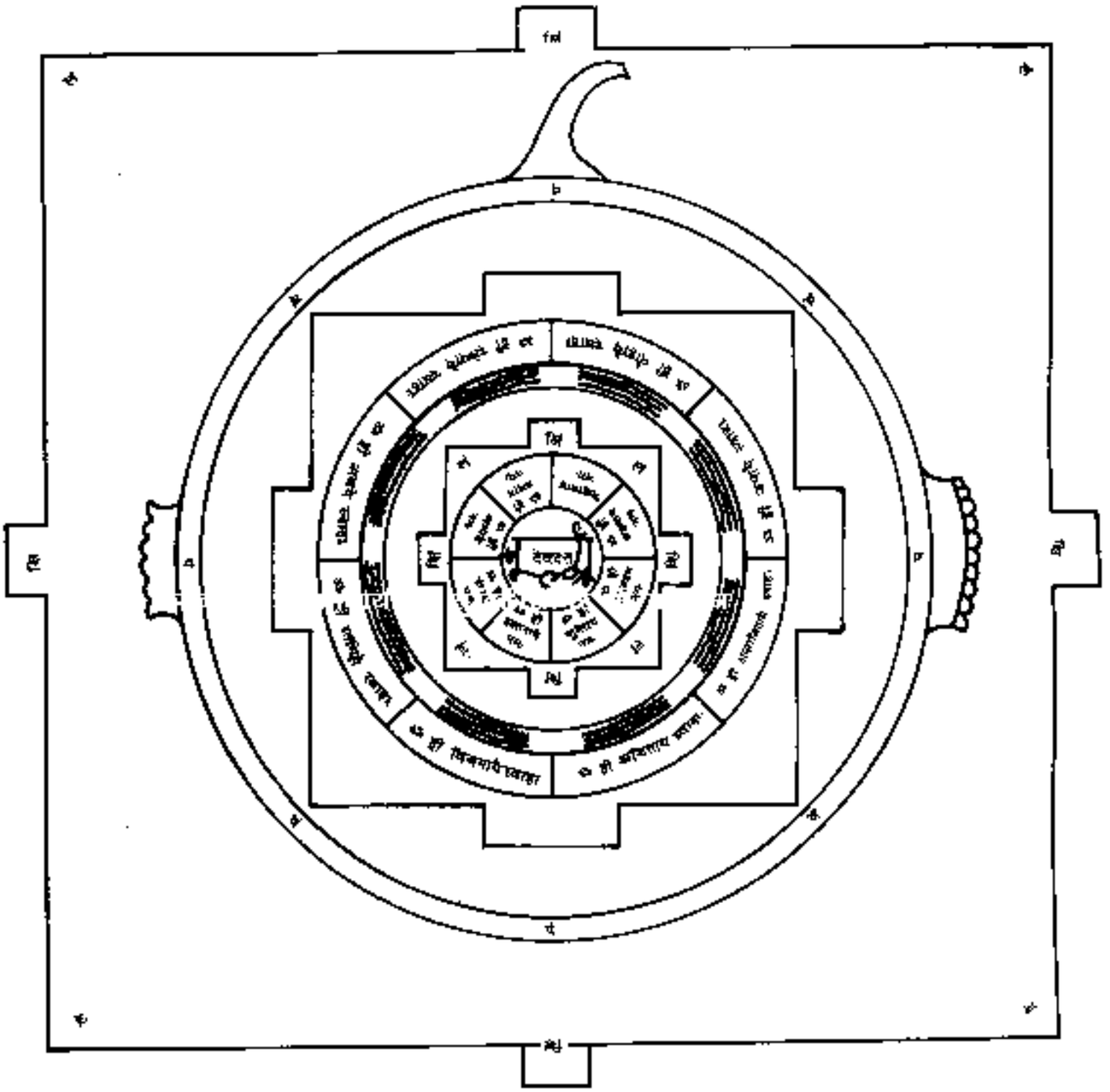

सब प्रकार से उत्तम रत्नों से जो अन्दर रखे हुए हों, मुख तक सुगंधित जल से भरे हुए हों तथा ऊपर बिजोरे रखे हुए हों ऐसे घड़ों की स्थापना करे।

चंद्रोपकेन शुभ्रेण मुक्ता दामावलि भृता,
स चंद्रोपक यंत्रेण भूषिते सन्निवेशयेत् ॥ ५६ ॥

फिर चन्द्रमा के समान उज्जवल मोतियों की माला की पंक्ति सहित चंद्रोपक यंत्र से भूषित उसे रखे।

नाम साध्येन पिंडेन पद्यो बीजेन च क्रमात,
अष्ट पत्रेण चाब्जे नां वलिखत्पारवेष्टितं ॥ ५७ ॥

साध्य के नाम को पय (जल) बीज के पिंडाक्षर से वेष्टित करके उसको कमल के आठ पत्रों में लिखकर वेष्टित करे।

तत्पत्रे चाष्टदिक्पालान् स्व बीज सहितान वहि:,
तत्पृथ्वी मंडलं कृत्वा तद्वाह्ये व्योम मंडले ॥ ५८ ॥

उसके बाहर आठों पत्तों में अपने अपने बीज सहित आठों दिक्पालों को लिखकर, पृथ्वी मंडल बनाकर उसके बाहर आकाश मंडल बनावे।

जयादैश्चाष्टभिर्म्मंत्रैर्वेष्टित्वा ततो वहि:,
माहेन्द्र मंडले देयात्ततो वारिधि मंडलं ॥ ५९ ॥

उसके बाहर आठ पत्रों में आठों जयादि देवियों के मंत्र को वेष्टित करके, उसके बाहर पहले माहेन्द्र मंडल और फिर जल मंडल बनावे।

तर तरंग संगीत चलत्तिमितिमिंगिलं,
वहु रत्न युतं फुल्ल पद्मरक्तोत्पलादिकं ॥ ६० ॥

वह जल बहुत से रत्नों तथा फूले हुए पद्म (सफेद कमल) लाल कमल और नीले कमलों वाली चंचल संगीत जैसी तरंगों से गिलं (खाया हुआ) अर्थात् शोभित हो रहा हो।

विलिखेत् जलधि स्तस्य बाह्ये विश्वंभरा पुरं,
एवं चंद्रोपकं नाम्ना यंत्रमुत्तंमुत्तमं ॥ ६१ ॥

उस जल मंडल के बाहर (विश्वभंरा) पृथ्वी मंडल बनावे इसप्रकार यह चंद्रोपक यंत्र उत्तमों में उत्तम यंत्र है।

प्रार्च्यंतुं गज मंत्रेण जप्तान्यष्टोत्तरं शतं,
पुष्पाणि निक्षिपेत्तस्य मस्तके स्यात् क्षतादिकं ॥ ६२ ॥

ॐ नमो भगवते महागजाधि पतये ग्रां ग्रीं ह्रां ह्रीं हूं ह्रौं ह्र: यं श्लौं श्लौं ह्य (प्ल:) सर्व गजान रक्ष रक्ष स्वाहा ॥

गजमंत्र:

पूर्वदिशा में गज मंत्र को एक सौ आठ बार जप कर पुष्प अक्षतादि उसके मस्तक पर डाले।

स्तंभन यंत्र सहितं ललाटे तस्य तत्पटं,
वधीयात कृत गीताद्यमप्पस्याग्रे प्रवर्त्तयेत ॥ ६३ ॥

फिर स्तंभन यंत्र सहित उसके मस्तक पर वह वस्त्र बांध दे तथा उसके सामने गायन आदि भी करावे,

टांत पिंडं लिखित्वाख्यामिंद्र बीजेन वेष्टयेत्
भवनाधिपीतं बाह्ये लिखेत पृथव्याश्च मंडलं ॥ ६४ ॥

टांतपिंड (ठम्लवर्यूं) लिखकर नाम को इन्द्र बीज (ल) से वेष्टित करे फिर उसके बाहर भुवनाधिपति हीं और पृथ्वी मंडल बनावे।

ततो वहि: स्व मंत्रेण वेष्टयित्वा निखेदनु,
मारूतं वलयं मंत्रै: पंचभिश्च दयादिभि: ॥ ६५ ॥

फिर बाहर अपने मंत्र से वेष्टित करके पाँचों मंत्रों से वायु मंडल बनावे।

समंताद्वेष्टितं कृत्वा दिक्षु वक्षा सु निवेशयेत्,
होमांताजादिकं पिंडं स्तंभनि विजयाभिधं ॥ ६६ ॥

फिर उसके आठों दिशाओं में आदि में अज (ॐ) और अंत में होम (स्वाहा) लगाकर विजया और स्तंभिनि आदि देवियों को लिखे।

पश्चाद् तस्य सहैष्वां जलं विलिखेद्वहि: स्तंभनि,
यंत्रमित्येतत् मंत्रिभि: परि कीर्तितं ॥ ६७ ॥

फिर इसके साथ बाहर माहेन्द्र और जल (वाज) मंडल बनावे इसको मंत्रवादियों ने स्तंभनि यंत्र कहा है।

स्तंभन यंत्र

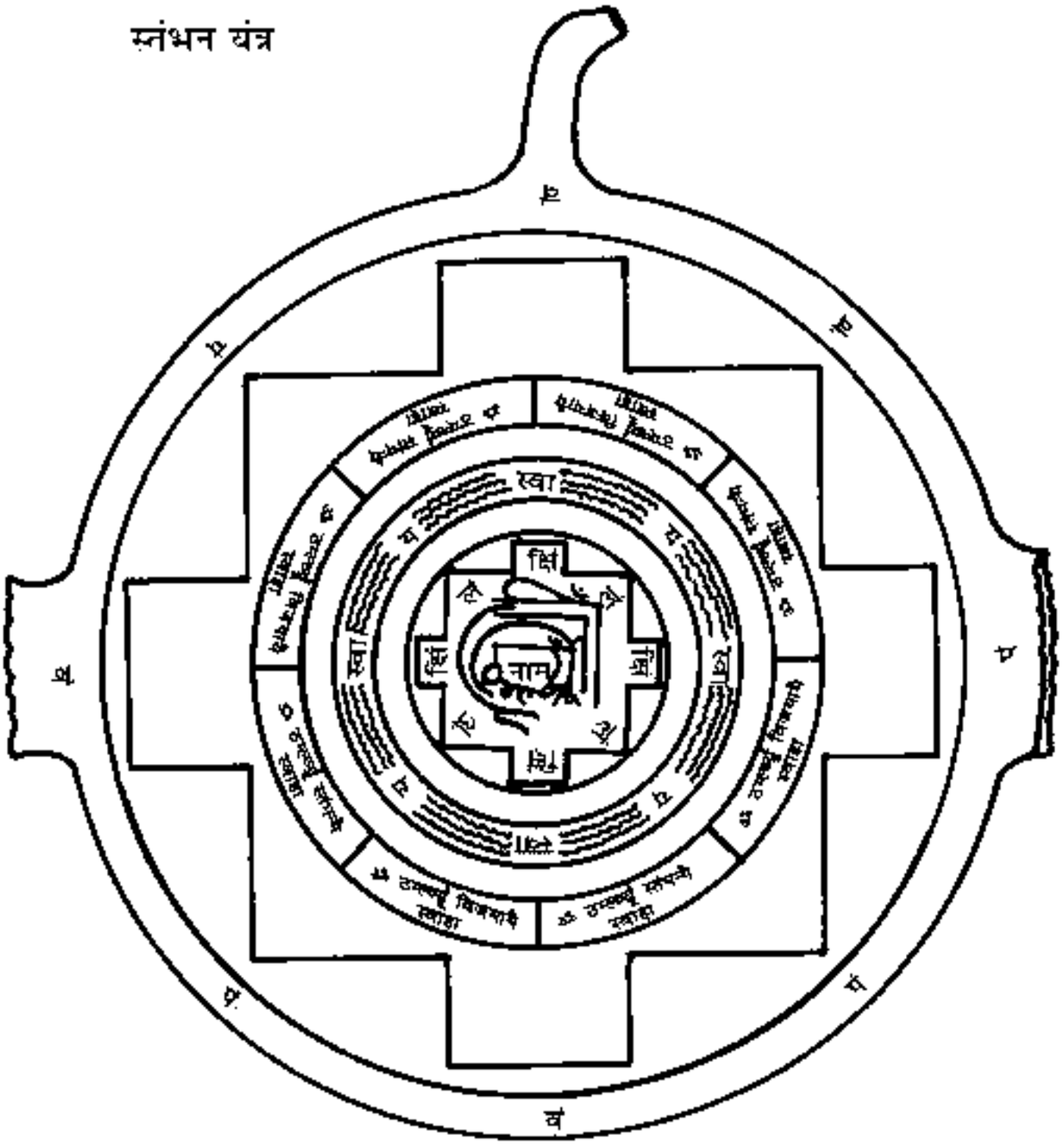

ततः प्रभृति समभ्यर्च्य दीनानाथ जनाय च,
दत्वा स्वर्णादिकं धृत्वा रक्षायंत्रमनुत्तमं ॥ ६८ ॥

उसके पीछे दीन अनाथ लोगों की यथायोग्य दान देकर सोना आदि देकर के उत्तम रक्षा यंत्र को धारण करे।

यंत्रादि दैवतां भक्तया नत्वा यत्र स्थितो रिपुः,
तदिशाभि मुखं पश्चात् तं पटं वाहयेन्नृपः ॥ ६९ ॥

भक्ति से यंत्र के अधिष्ठाता देवता को नमस्कार करके शत्रु जिस दिशा में हो उसी दिशा में राजा उस वस्त्र को उड़ावे ।

सर्वलक्षणसंपूर्णं प्रातं मध्य वयः स्थितं,
स्वामि भक्त कुले जातमुत्तमं सौर्य्य संयुतं ॥ ७० ॥

फिर प्रातःकाल के समय सब लक्षणों से युक्त मध्यम अवस्था वाले स्वामीभक्त उत्तम कुल व जात में उत्पन्न हुए उत्तम वीरता युक्त,

स्नापितं स्नान मंत्रेण सर्वाभरण भूषितं,
सकली क्रियायोपेतं रक्षाद यंत्रं च विभ्रतं ॥ ७१ ॥

स्नान मंत्र से स्नान किये हुए सब आभूषणों से सजे हुए सकली करण क्रिया किया हुआ और रक्षा यंत्र को धारण किये हुए,

अकन्यं वा पुरूषं कंचिदारोप्य परिहस्तिनः,
नियोजयेत् पुमांसं तं ध्वज दंडावलं बनो ॥ ७२ ॥

तथा बिना कन्यावाले किसी पुरूष को हाथी पर चढ़ाकर उस पुरुष को ध्वजा के दंड के थामने के लिये नियुक्त करे।

रक्षा मंत्रेण बध्नीया च्चा मराणां चतुष्टयं,
तस्यां कोणेषु वितरेद्राज चिन्हानि चाग्रतः ॥ ७३ ॥

उसके कोनो में रक्षा मंत्र से चार चमर बांध देवे उसके आगे राज के चिन्हों को रखे।

अस्या जय पताकाया दर्शनादे व जायते भंगः,
पर पताकिन्याः सु महत्या अपिणात् ॥ ७४ ॥

इस जय पताका के दर्शन से ही दूसरे प्रतिवादी की बड़ी भारी सेना भी क्षण मात्र में ही भाग जाती है।

वृश्चिकालि जटायेन धियते युधि मूर्द्धनि,
नैव गच्छति वाणानां सहस्त्रस्यापि लक्षतां ॥ ७५ ॥

जो पुरूष युद्ध में अपने मस्तक पर वृश्चिकालि (बिछवा घास) की जड़ को धारण करता है उसके हजारों बाणों का भी निशाना नहीं लगा सकता है।

पीताव शिष्टं गो दुग्धं वच्छेन वृश्चिकेनवा,
तदुत्तमांगे निक्षिप्तं भवेदस्त्र निवारणः ॥ ७६ ॥

गाय के बछे या बिच्छू के पीने से बचे हुए दूध को सिर पर रखने से अस्त्रों का निवारण होता है।

शक्रवल्ल्याः शिफा ऋंगे पीत्वा क्षीरेण कल्कितं,
ते वंदधतं मूर्द्धानां स्त्राणि प्रष्टमी हते ॥ ७७ ॥

शक्रवल्ली (इन्द्रायण) की जड तथा ऋंगी (वत्सनाभ) के दूध में बने हुए कल्क को पीने से तथा सिर पर रखने से अस्त्रों का निवारण होता है।

सितेषु पुंसिवका मूल मास्ये शिरसिवाधृतं,
स्तंभयंति च संग्रामे सहश्रमपि सायकान ॥ ७८ ॥

सफेद सरफोंके की जड़ को मुंह या सिर पर धारण करने से हजार बाणों काभी स्तंभन होता है।

पीत्वा सिताया: क्षीरेण सुरभेर्द्धवलं विषं,
अजौ संचरतो स्त्रेभ्यो भयंजातुन जायते ॥ ७९ ॥

सफेद गाय के साथ सफेद विष को पीकर युद्ध में घूमने वालों को अस्त्रों का भय नहीं होता है।

अहिस्तां मूलमाहृत्य पुष्पार्क्षे सोम दिग्गतं,
निदध्यादानेन योद्धा तत् शस्त्राणि निवारयेत ॥ ८० ॥

अहिस्ता() की जड़ को पुष्य नक्षत्र और इतवार के दिन जो उत्तर की दिशा में उगी हुई हो उसको लाकर सेवन करे तो योद्धा के अस्त्रों को दूर से ही रोकता है।

उपयुक्तमिंद योद्धा पिष्टं तंदुल वारिणा तथा,
जीर्णति तदगात्रे शस्त्रे स्तावन्नभिद्यते ॥ ८१ ॥

जो योद्धा चावलों के पानी के साथ पीस कर उपयोग करता है उसका शरीर अत्यंत जीर्ण होने पर भी शस्त्रों से नहीं भेदा जा सकता है।

माघे मासे त्रयो दश्यां तिथौ उद्यति भास्वति,
वाजि गंधा शिफा पीता वारिणा शस्त्र वारिणी ॥ ८२ ॥

माघ मास की त्रयोदशी तिथि को सूर्योदय के समय वाजि गंधा (असगंध) की जड़ को पानी के शाथ पीने से वह शस्त्रों का निवारण करती है।

माहेन्द्र मंडलं स्यांते क्षीं बीजं न्यास्य तत्रतु,
नाम संलिख्य साध्यस्य ह्रीं बीजैर्वेष्टयेत त्रिभिः ॥ ८३ ॥

जयाद्या दिक्षु कोणेषु विजयाद्या लिखेद्बहि,
चक्रं धृतमिदं शक्त मस्त्र शस्त्रादि रक्षणे ॥ ८४ ॥

माहेंद्र मंडल के अंदर क्षीं बीज को लिखे उस क्षीं बीज में साध्य का नाम लिखे उसको तीन बार ह्रीं बीज से वेष्टित करे ।उसके बाहर दिशाओं में जया आदिग देवियों को और कोण में अर्थात् विदिशा में विजया आदि को लिखे उस चक्र को लिखकर धारण करने से पुरुष युद्ध में अपनी अस्त्र और शस्त्रों से रक्षा कर सकता है।

जयंति संग्रामेरिणां सहस्त्रमपि सायकान्,
पीतं या लक्षणो सुरभेर्द्धवलं विषं ॥ ८५ ॥

गाय के दूध के साथ सफेद विष को पीने से पुरुष युद्ध में हजार शत्रुओं के बाणों को भी जीत लेता है।

अजां संधरतो स्त्रेषुभयं जातुन जायते,
अहिंसा मूलमाहृत्य पुष्पार्के सोम दिग्वनं ॥ ८६ ॥

पुष्प नक्षत्र में सोम (उत्तर) दिशा के वन में से अहिंसा () की मूल को लाकर सेवन करने से युद्ध में घूमने वालों को अस्त्रों से कभी भय नहीं होता।

निदध्यादानेन योद्धा तत् शस्त्राणि निवारयेत्,
उपयुक्तंमिदं योद्धा पिष्टंतं तंदुलं वारिणा ॥ ८७ ॥

योद्धा इसको चावलों के पानी से पीसकर यदि मुँह में रखे तो शस्त्रों का निवारण हो उस समय जो शस्त्र आते भी हों उसके शरीर को नहीं भेद सकते।

यावर्जयंति तं गात्रं शस्त्रे स्ता वन्नाभिद्यते।

उसका शरीर जीर्ण होने पर अस्त्रों से भेदा जा सकता ।

शक्राशा स्थितं मन्त्रं श्री पर्णी मूलमतलभे विधिवत्,
बद्धं करेथ मूर्द्धनि शस्त्राणि रणो निरुद्धितः ॥ ८८ ॥

शक्र (इन्द्र) की पूर्व दिशा में सिथत श्री पर्णी () की जड़ को यदि विधिपूर्वक लेकर हाथ में बांध लेवे तो युद्ध में शस्त्र भी रुक जावे।

भूततिथौ कुज वारे खद्युददये तेन निर्मितं वलयं,
शस्त्राणि वारयेद्यो युद्धिष्ठिराद्यो नरं हतवान् ॥ ८९ ॥

कृष्ण चतुर्दशी तथा कुजवार (मंगलवार) को सूर्योदय के समय उससे कड़ा बनाकर पहनने से युद्ध में बहुत से योद्धाओं को मारने वाले शस्त्र भी रुक जाते हैं।

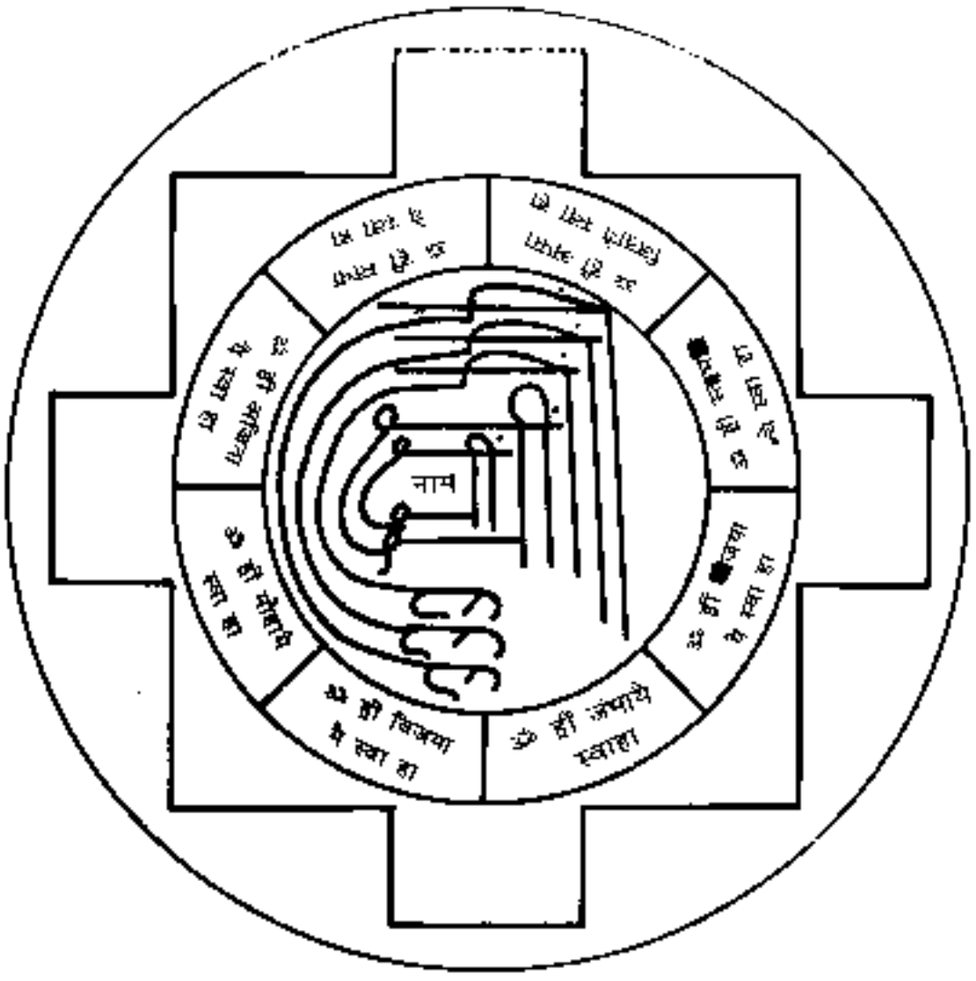

पत्तं जारी विदारी रुग्जपेंद्रा गुरु चंदना: पिष्टा,
हिम जलेनांग लिप्ता: शस्त्राणि वारणा ॥ ९० ॥

पतंजारी () विदारी रुक (कूट) जवे का फूल इंद्रायण अगर चंदन को हिम चंदन को हिम (बर्फ) के पानी से पीसकर शरीर में लेप करने से हथियार रुक जाते हैं।

भूमि गदम्बकविभीतक नंद्या वर्त्तांगकर्णिका,
पत्या शस्त्राणि युद्धरंगे लिप्ता वस्तांभिसा पिष्टा: ॥ ९१ ॥

भूमि कदम्ब (कदंभ) विभीतक (भिलावे) नंद्यावर्त्त (तगर) अंग कर्णिका पत्या को बकरे के मूत्र में पीसकर लेप करने से शत्रु रुक जाते हैं।

कटु तुंबी जटा पाभा भारायां सुर मंत्रिणा:,
कौक्षेयकं निरुंधीत मुखे वा मुन्दिर्ना वा धृता: ॥ ९२ ॥

कड़वी तुंबी की जड़ को पाभा का बोझ और सुर मंत्री (देवदारु) को मुख या शरीर पर रखने से कौशेयक (शस्त्र) रुक जाते हैं।

भौतेऽह्नि रवि पुष्पेवा ग्रहणे अर्कस्य वा हृतां,
रुणद्धि पाटली मूलमसिमास्यां तर स्थितं ॥ ९३ ॥

भूतऽह्नि (आसोज माह की कृष्ण चर्तुदशी के दिन-भूत दिन) रविवार और पुष्य नक्षत्र के योग के दिन अथवा सूर्य ग्रहण के दिन लाई हुई पाटली मूल (पांडूर फली की जड़) को मुँह में रखने से तलवार (असि) रुक जाती है।

यस्या स्याभ्यंतरे क्षिप्ता पुष्पे पाठा जटा हृता,
असिः स्थितोपि निर्हंतुं तदं गानिन पातयेत् ॥ ९४ ॥

पुष्य नक्षत्र में लाई हुई पाठा (पाठ) की जड़ जिसके मुँह में रखी जाती है वह असि (तलवार) के नीचे आ जाने पर भी तलवार गिरकर उसके अंगों को नहीं काट सकती।

गृहीत्वा विधि वद्वक्त्रे निक्षिप्ता लक्ष्मणा जटा,
असः सिता न तस्यापि कुर्वीत स्तभनं युधि ॥ ९५ ॥

लक्ष्मणा की जड़ को विधिपूर्वक लाकर मुख में रखने से युद्ध में सिर पर झुकी हुई तेज तलवार का भी स्तंभन होता है।

नीली मूलं च सुठिं च भूयः सं चर्व्य खादतः,
नरस्य युद्धिनां गानि छिन्नसि निशितोप्यसिः ॥ ९६ ॥

नील (नील निगुंड़ी) की जड़ और सोंठ को चाबकर खाने से पुरुष के अंगों को युद्ध में तेज तलवार भी नहीं काट सकती।

भूताहे मूशली मूलं गृहीतं पुष्प संयुते,
निरुणधि धृतं मूद्ध्नां शरं खड्ग ग्रहानपि ॥ ९७ ॥

भूत दिन (कृष्ण चर्तुदशी के दिन) में पुष्य सहित मूसली की जड़ को लाकर सिर पर रखने से वह बाण खड्ग और गृहों को भी रोकती है।

यथा विधि खेर्वार देवदालि जटाक्षता,
सं स्तं भयेद शीनवाणा नरातीश्च मुखे धृता ॥ ९८ ॥

विधि पूर्वक इतवार के दिन लाकर मुंह में रखी हुई देवदाली (घगरबेल) की जड़ और क्षता (आक) तलवार बाण और शत्रुओं का स्तंभन करती है। अराति (शत्रु)

धृत सुरचाप युगे सतिनभसि गृहीता शिफेंद्र वारूणयाः,
अस्त्राणि च शस्त्राणि च निरूणिद्धि धृता निजांगेन ॥ ९९ ॥

आकाश में सुरचाप (इंद्रधनुष) के निकलने पर ली हुई इंद्र वारूणि की शिफा (इंद्रायण की जड़) अपने अगं पर धारण करने से अस्त्र और शस्त्र रुक जाते हैं।

शरपुंखा हरिदयिता भुजंगाक्षी लक्ष्मणा मयूर शिखा,
अंकोल शंख पुष्पी मूशल्यपि विधिवत आदाय ॥ १०० ॥

वक्त्रे वा बाहौ वा मूर्ध्नि वा विभ्रतः सदा पुंसः,
चौरारि दहन हेति ज्वर नृपतिभ्यो भयं न भवेत् ॥ १०१ ॥

सरपुंखा, हरिदयिता (तुलसी) भुजंगाक्षी (सर्प की आंख) लक्ष्मणा, मयूर शिखा, अकोल, संखपुष्पी मूसली को विधिपूर्वक लाकर के मुँह पर भुजा पर या सिर पर विधि पूर्वक रखने वाले पुरुष को चोर शत्रु आगहेति (हथियार) ज्वर और राजाओं से भय नहीं होता।

शत मूल मूलयुक्ता सित सरपुंखी शिफास्यगा छिंदात,
शस्त्रं रिपु हस्तस्थ धृतमपि युधिनाग मध्यस्थं ॥ १०२ ॥

शतमूल (सतावरी) को जड सहित सफेद सरफोंके की जड़ (शिफा) को आस्य (मुख) में रखने से युद्ध में शत्रु के हाथ में रहनेवाले शस्त्र (छिंदात) टूट जाते हैं।

अर्द्धेंदु रेखाग्र गतं त्रिशूलं मध्ये च सम्यक प्रविलिख्य धीमान्,
रूक्षे च कृष्ण प्रतिपदिनेतु यस्मिन् मृगांको व्यय तिष्ठतेसौ ॥ १०३ ॥

कृत्वा तदादिं विगणाख्य युद्धे विद्यात् त्रिशूलाग्र गतेषु मृत्युं,
मार्तंड संख्येषु जयं च तेषु पराजयं षट सु बहिः स्थितेषु ॥ १०४ ॥

संस्कृत टीका- अर्द्धेन्दु रेखाग्र गतं अर्द्ध चंद्राकार रेखाग्र स्थितं किंतत् त्रिशूलं त्रिशूला आकारं न केवुलंमर्द्ध चंद्राकाराग्र तत त्रिशूलं मध्ये च तदर्द्ध चंद्राकार रेषा मध्येपि च त्रिशूलं सम्यक् प्रविलिख्य शोभन कृत्वा प्रकर्षेण लिखित्वा कः धीमान बुद्धिमान रूक्षे

नक्षत्रे अमवासां प्रतिपदिनेषु अमावस्या निवृत मास प्रतिपदिने यस्मिन रूक्षे नक्षत्रे सं तिष्ठति ॥

कृत्वा तदादि प्रतिपदिने यस्मिन् नक्षत्रे मृगांकस्तिष्ठति तन्नक्षत्रं तत त्रिशूल प्रथम रेखाग्रे स्थाप्या तन्नक्षत्रादि कृत्वा विगणय्यक्ष युद्धे यस्मिन् दिने युद्धे यस्य युद्धमान पुरुषस्य जन्म रूक्ष यत्र लभ्यते तत्पर्यंत गणयेत् विंशात् यानीयात् त्रिशूलाग्र गतेषु मृत्युः तज्जन्म नक्षत्र त्रिशूलाग्र गतं यदा भवति तदा मृत्यु स्यात् मार्तंड संख्येषु जयं च तेषु अर्द्ध चंद्राकार रेखाभ्यंतर गत तद् द्वादश रूक्षेषु तेषु जयं स्यात् पराजयं षट्भु वहिःस्थितेषु अर्द्ध चंद्राकार रेखा वहिः स्थितेषुः षड् अक्षरेषु पराजयं स्यात् इति क्षुद्रप्रकरणे अर्द्धेन्दु त्रिशूल चक्रं ॥

एक अर्द्ध चंद्राकार के ऊपर रेखा बनाकर त्रिशूल बनाए, और उसके ऊपर मध्य में और नीचे सताइसों नक्षत्रों को इस क्रम से लिखे, कृष्ण पक्ष की अमावस के पीछे की पड़या के दिन चंद्रमा जिस नक्षत्र में हो उस नक्षत्र से शुरू करके, उसको त्रिशूल की प्रथम रेखा के आगे स्थापित करे। क्रमवार लिखे युद्ध में जानेवाले मनुष्य का जन्म नक्षत्र इनमें से जिस स्थान पर हो तो उससे यह फल जानना चाहिए। यदि त्रिशूलों के ऊपर जन्म नक्षत्र पड़े तो मृत्यु हो, यदि वह जन्म नक्षत्र मध्य के बारह नक्षत्रों में से कोई हो तो विजय करे और यदि वह बाहर अर्थात् अर्ध चंद्राकार रेखा से बाहर पड़े तो पराजय हो।

प्रथोर्वीश नदी नवग्रह नग व्याधि प्रसूनाक्षराणयेकी कृत्य नखान्वितं त्रिगुणि तं तिथ्या पुनर्भाजितं ब्रूयादुधरितां शुभाशुभ फलं वैशाम्य शाम्ये सुधीरे तत्तथ्य मिहोदितं मुनि वरेर्भव्याब्ज धर्मांशुभिः ॥ १०५ ॥

प्राद्यः वाल युवान वद्धेति त्रिविद्य प्राद्य मध्ये नाममेकं उर्वीशः सार्वभौमानां राज्ञां मध्ये नाममेकं नदी गंगादि महानदीनां मध्ये नाममेकं नवग्रह आदित्यादि नव ग्राहाणां मध्ये नाममैकं नग मंदिरादि पर्वता नां मध्ये नाममेकं व्याधि वात पित्त श्लेष्मोद्भवानां व्याधिना मध्ये नाममेकं प्रसून मालिका जाति सतपन्नादि पुष्पाणां मध्ये नाममेकं अक्षराणि प्राद्यः आदि पूनांत्य प्रश्नाद्या कथिताक्षर संखअद्यानि एकीकृत्य तानि सर्वाणयेकं कृत्वा नखान्वितं तदकं रासि मध्ये विशत्यैं कां द्योजित्वा

त्रिगुणितं तत्समस्त रासिं त्रिभि गुणितं कृत्वा तिथ्या पुनर्भाजितं पुनः पश्चात् तत्तिगुणितं राशि पंचदश तिथि संख्यैर्भग्धां ब्रूयात् कथयत् कस्मात् उद्धरितान भागावशेषां कानकं शुभाशुभं फलं शुभफलं चा कष्मिनैषम्य शाम्ये विषमांके शुभं ब्रूयात् सामं कै विरुद्ध फलं ब्रूयात् कः सुधीः धीमान एतान्भव्यं एतत्प्रश्ने

निमित्तं निश्चितं इहेत्यादि अस्मिन्कल्पे प्रतिपादितं कैः मुनिवरैः मुनि वृषभैः कथं भूतैः भव्याब्ज धर्मांशुभिः भव्याः एताब्जानि तेषां धर्मांशुरादित्य स्तद्वत्तै मुनिभि भव्यांकु धर्म्मां शुभिः॥

प्रायः (बालक युवा वृद्ध) उर्वीश (चक्रवर्ती भरत, सगर, मधवा, सनत कुमार, शांतिनाथ, कुंथुनाथ, अरहनाथ, सुभौम, सुपद्म, रूचि, जयसेण, हरिषेण, ब्रह्मेश) महानदियाँ (गंगा, सिन्धु, रोहित, रोहितास्या, हरित, हरिकांता, सीता सीतोदा, नारी, नरकांता, सुवर्णकूला, रूप्यकूला, रक्ता, रक्तोदा) नवग्रह (सूर्य, चंद्र, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि, राहु, केतु) नग (पर्वतादि, हिमवत, महाहिमवत, निषद्य, नील, रूक्मि, शिखरिन) व्याधि (बीमारियों में से नाम) प्रसून (फूलों में से नाम) में से एक नाम के अक्षरों को गिनकर उनको जोड़कर उस जोड़ी हुई गिनती में बीस को जोड़ कर उसको तिगुना करके और गुणनफल में पन्द्रह (तिथि) का भाग दे, यदि शेष में सम अक्षर हो तो विरुद्ध फल विषम अंक हो तो शुभ फल कहना चाहिए। यह प्रयोग भव्य रूपी कमलों को सूर्य के समान खिलाने वाले श्रेष्ठ मुनिराजों ने कहा है।

ॐ नमो भगवते ज्वाला मालिनी गृद्ध गणां परिवृते ठः ठः॥
लक्ष प्रजाप्य सिद्धिं युद्धाय गतो जपन्न मुं मंत्रं,
संग्रामं विजय लक्ष्म्याः स्वयं वृतो वल्लभो भवति ॥ १०६ ॥

इस मंत्र को एक लाख जप से सिद्ध करके युद्ध के लिए उस मंत्र को जपता हुआ यात्रा करनेवाला स्वयं ही विजय लक्ष्मी का स्वामी होता है।

दुर्गा मंत्रः

प्रणवोर्च्चि दुर्ग्गा रक्षिणी ठठेति अद्यम,
अष्ट लक्ष जाप्पात् सांगः सं सिद्धमुपयाति ॥ १०७ ॥

ॐ दुर्गे नमः १ दुर्गे ठः ठः २ दुर्गायै वषट ३ भूताक्षिणी हुं ४ दुर्गा रक्षिणी ठः ठः ५ अंगानि॥

युद्ध व्यवहारादिष्वेत जप्ता जय श्रीयं लभते,
नित्यमनेन जयार्थी खडगं क्षुरकां च पूजयतु ॥ १०८ ॥

प्रणव (ॐ) अर्चि दुर्ग रक्षणि ठः ठः

यह मंत्र अंग सहित आठ लाख जप से सिद्ध होता है। युद्ध मुकदमें आदि में इन अंगों सहित मंत्र को जपकर पुरुष कल्याण को प्राप्त करता है। विजय की इच्छा रखनेवाले पुरुष को इस मंत्र से खड़ग और छूरी का पूजन करना चाहिए

ॐ नमो भगवती पिशाची देवी पिशाच वाहिनी केरिकि हुंड केशि शीघ्रं कोलु कोलु मुज मुज घग घग दुष्ट भैरवी ह्रीं स्वाहा ॥

पिशाच देवीमरूणां पिशाच सद्वाहनां साधय मंत्रतस्त्वं,
सन्मातु लुंगाऽभयदान हस्ता कुठार पाशान्त करां सुभक्तया ॥ १०९ ॥

द्विषट सहस्तैः करवीर पुष्पै दंशांस होमेन च सिद्धि मेति,
सानालिकेरानऽभिमंत्र्य मुक्तया नभों गणास्था रिपुकं भिन्नति ॥ ११० ॥

हे पिशाच देवी ! तुम मरुत (वायु) देवताओं के वाहन वाली हो । तुम अपनी चारों भुजाओं में मातुलुंग (बिजोरा) के फल अभयदान, कुल्हाड़ी, नागपाश को धारण करती हो। आप इस मंत्र को सिद्ध कर दें। यह भक्ति से कहे। यह प्रार्थना मंत्र को जपने से पहले करें। यह मंत्र कनेर के फूलों से बारह हजार जपे तब तदशांश होम करने से सिद्ध होता है इस मत्र से नारियल को अभिमंत्रित करके आकाश में फेंकने से यह शत्रु को भगा देता है।

तिस्तो भुवः समालिख्य मध्ये यूं यूं तथैव च,
चतुर्दले लिखेत्पदमं चंडे चूले नियोजयेत् ॥ १११ ॥
पत्रेषु च लिखेन्मंत्री चतुर्मंत्रं बहि स्थितं,
नामांतरितं सपिंड्रं रक्षणे मंत्र तत्वतः ॥ ११२ ॥

तीन पृथ्वी मंडल बनाकर उनमें यूं यूं लिखे। उसके अन्दर चार दल का कमल बनाकर उसमें चंडे चूले लगाए। उन पत्तो में आगे लिखे चार मंत्रो को लिखकर उसके अन्दर नाम सहित सपिंड (स्म्ल्व्यूं) पिंडाक्षर लिखे। यह मंत्र रक्षा करता है।

ॐ धरणेंद्र आज्ञापयति स्वाहा ॥
ॐ सर्व सत्व वंशकराय स्वाहा ॥
ॐपद्मावती परमार्थ साधिनि स्वाहा ॥
ॐ पार्श्व तीर्थंकराय स्वाहा ॥

वाम वृत्तिं समालेख्य क्षुरिकाषुहं सं स्थितो,
युद्धार्णव गतो योद्धा विजयं लभते सदा ॥ ११३ ॥

इस यंत्र को वाम वृत्ति (बाँई तरफ) की विधि से लिखकर छुरी त्रिशूल के ऊपर रखकर युद्ध रूपी समुद्र में गया हुआ योद्धा सदा विजय को ही प्राप्त होता है।

दिग्विन्यस्त क्षि बीजांतर लिखित लकारं ठकारा वृत्तांगं,
द्विर्द्वात्रि मंडलातंर्न्निहि त मुपहत ब्रह्म लींकार कोष्टं ॥ ११४ ॥

ग्लौंक्षं ठंकार वेष्टं क्षिति तलः महितंणार्च्चंचेन्नाम गर्भं,
ह्मल्व्र्यूं कारं भूर्ज्ज पत्रे लिखितमरि कुलं तस्य सं स्तंभमेति ॥ ११५ ॥

ॐ ह्मल्व्र्यूं ग्लौंक्षं ठं अमुकस्य जिह्वां स्तंभय स्तंभय ठः ठः ॥ पूजा मंत्रः

दिशाओं में रखे हुए क्षिं बीज के अन्दर ठकार से आवृत (घिरा हुआ) ल लिखकर दो पृथ्वी मंडल और एक वायु मंडल इस प्रकार तीनों मंडलों के कोणों में ब्रह्म (ॐ) और लीं हो। और फिर ग्लौंक्षं ठं ह्मल्व्र्यूं के बीच में नाम लिखकर पृथ्वी मंडल वाले सि यंत्र को भोजपत्र पर जो लिखता है उसका शत्रु कुल स्तंभन को प्राप्त होता है।

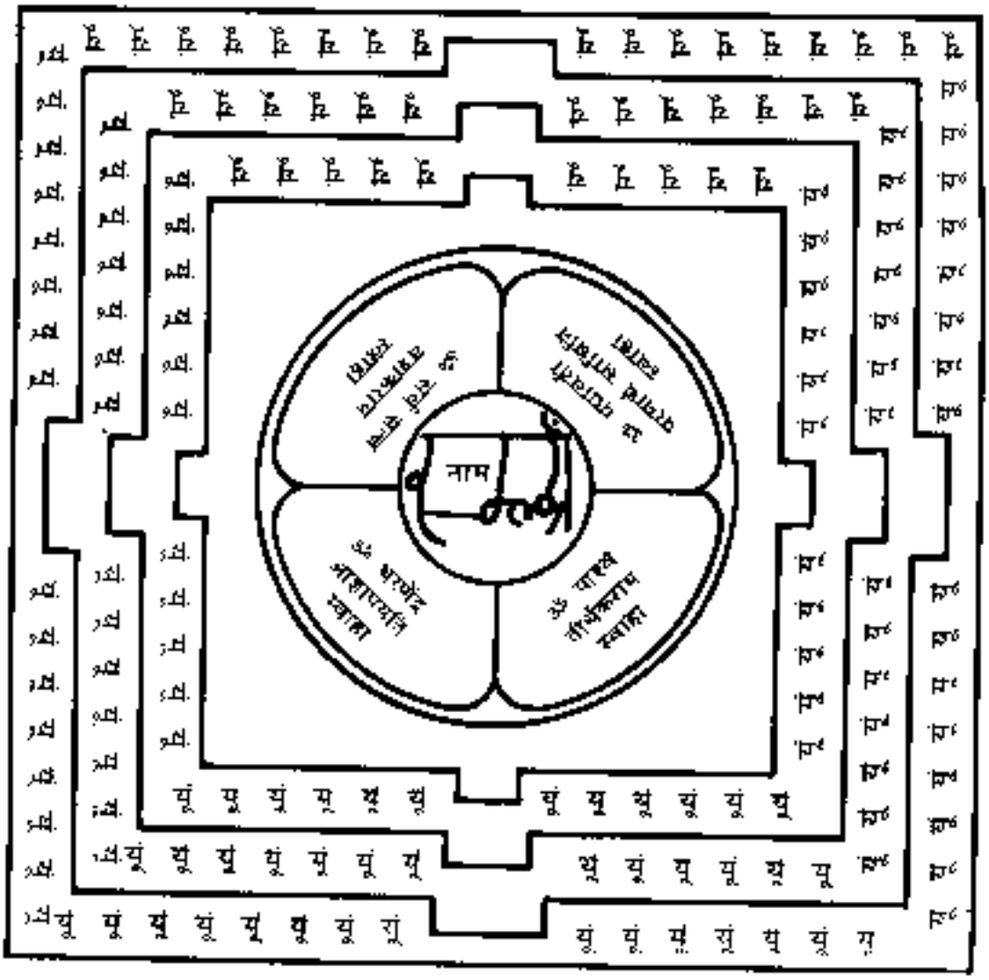

लांगाल्यां लिप्त सुवांगो हस्त तारा गृहीतया,
मलं जेतु मलं मल्लः शतमे कोपि निर्भयः ॥ ११६ ॥

हस्त नक्षत्र में ली हुई लांगली (कलिहारी) का लेप करके कुश्ती लड़ने वाला पहलवान एक सौ पहलवानों से भी निर्भय रहता है अर्थात् उनको जीत लेता है।

मूलं श्वेत अपामार्ग्गस्य कुबेर दिशि संस्थित,
उत्तरा त्रितये ग्राह्यं शीर्षस्थं द्यूत वाद जित् ॥ ११७ ॥

उत्तरा आषाढ़ा उत्तरा भाद्रपद और उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्रों में सफेद चिड़चिटे (अपामार्ग) की जड़ को जो उत्तर दिशा में उगी हुई हो, उसको विधिपूर्वक उखाड़कर सिर पर रखने से पुरुष जुए और शास्त्रार्थ में जीतता है।

आट रूषक संभूतौ वंदाकः पाणि सं स्थितः,
अलं जनयितुं द्यूते प्रतिपक्ष पराजयं ॥ ११८ ॥

आठ रूख (अड़ूसा) के बंदाक (लांटा अमरलेदर) को लाकर हाथ में रखकर निश्चय पूर्वक जुए में विजय प्राप्त होती है और प्रतिपक्ष (दूसरा पक्ष) हार जाता है।

स्वमंदा तादृशो युद्धे कलभस्य निरीक्षणात्,
बिभत्पलायते हस्तीगत धर्य्यो महानपि ॥ ११९ ॥

सोमा (सोमलता) वाले हाथी के बच्चे को देखते ही युद्ध से बड़ा भारी हाथी भी डरकर भाग जाताहै।

जगर्धेंद्र वारूणी मूल गुलिकां भक्ष मिश्रितां,
दक्षो जेतु मंडलं दक्ष मन्य मप्पति पोषितं ॥ १२० ॥

इंद्र वारूणी (इंद्रायण) की जड की गोली को भोजन के साथ मिलाकर भोजन खाने में चतुर पुरूष दूसरे अत्यंत पुष्ट को भी जीत लेता है।

ॐ पद्म प्रभे पद्म सुंदरि धर्मषे ठः ठः॥
सिद्धं त्रिलक्षं जाप्याद मुं जपन् स्वामिनः पुर स्तिष्ठेतत्,
कुपितस्य सः प्रसीदे दद्याच्चा भीप्सितं सकलं ॥ १२१ ॥

यह मंत्र तीन लाख जप करने से सिद्ध होता है इस मंत्र को जपता हुआ यदि क्रोधित स्वामी के सामने खड़ा हो तो वह प्रसन्न होकर सब इच्छित वस्तु देता है।

तेजः पुटे लिखेन्नाम ग्लौं क्ष्मं पूर्णेदु वेष्टितं,
वज्राष्टकपरिछिन्नम ग्रांत बंह्म लाक्षरं ॥ १२२ ॥

तद्वाह्यो भूपुरं लेख्यं शिलायां ताल कादिना,
कोपस्य स्तंभनं कुर्य्यात्पीतैः पुष्पैः प्रपूजितः ॥ १२३ ॥

ॐ ग्लौं क्ष्मं ठं लं स्वाहा ॥ पूजा मंत्रः

तेज (ॐ) की पुट में क्रमशः नाम ग्लौं और क्ष्मं लिखकर उसको पूर्ण चंद्र (ठं) से वेष्टित करे फिर उसको आठ वज्रों से ढककर उनके आगे और अन्दर ब्रह्म (उं) और (ल) अक्षर लिखे।उसके बाहर शिला पर हड़ताल आदि से लिखने और पृथ्वी मंडल बनाने तथा पीले पुष्पों से पूजन करने से यह यंत्र क्रोध का स्तंभन करता है।

रकारस्याष्टमं बीज मूर्द्धाधो रेफ संयुतं,
रकारं बिंदमुपकारं तन्मध्यं नाम सं लिखेत् ॥ १२४ ॥

तद्वाह्यो सांतमालेख्य टांतेनापि बहिष्कृतं,
ऊर्द्धाधो वज्र मालेख्यं क्रोध स्तंभन मा लिखेत् ॥ १२५ ॥

यकार के आगे के आठवे बीजाक्षर ह के ऊपर और नीचे रेफ (र्) सहित अर्थात् ह्रीं और य बिन्दु (अनुस्वार) और उकार अर्थात् (यूँ) यूं को लिखकर उसके बीज में नाम को लिखे उसके बाहर सांत (ह) को लिखकर उसके बाहर टांत (ट) लिखकर ऊपर और नीचे वज्र लगाए। यह क्रोध स्तंभन यंत्र लिखे।

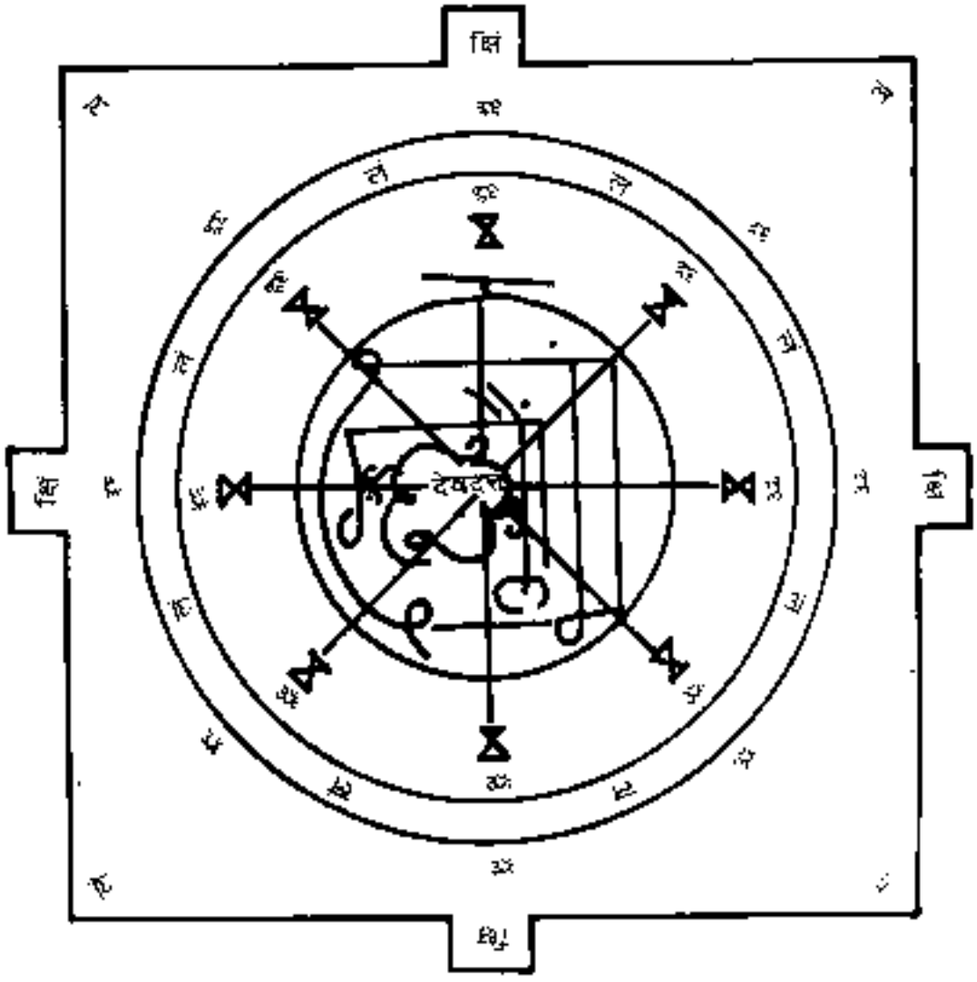

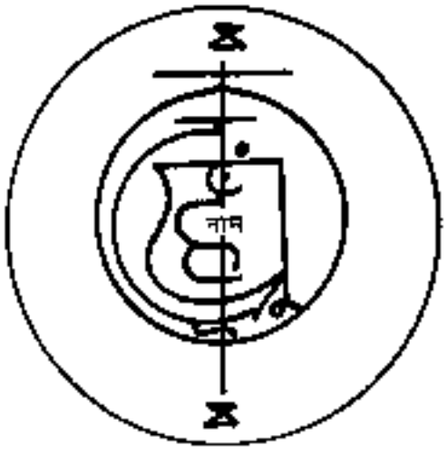

नाम्नः कोणेषु दत्वा लमथ परिवृतं वाह्निना बिन्दुनावालं,
बीजै वेंष्टितं तत कुलिश वलयितं वेष्टितं ठ त्रयेण ॥ १२६ ॥
भूर्ज्जे गोरोचना कुंकुमं लिखित्त मं तः कुंभ काराग्र हस्तान्मृत्,
स्नानमादाय कृत्वा प्रति कृतिमथ तद यंत्र मास्ये निधाय ॥ १२७ ॥
तद्वक्रं परपुष्ट कंटक चयैर्न्नित्वा शराव द्वय स्थांते स्तां,
प्राणिधाय समागथ जंभे मोहिनी संयुजा स्वाहा मंत्र पदेन ॥ १२८ ॥
पीत कुसुमैरभ्यच्चर्य यातः पूमान प्रत्यर्थि,
व्यवहारिणो विजयते तज्जिह्वि कां स्तंभयेत् ॥ १२९ ॥

नाम के कोणो में लं लिखकर, उसको बिंदु सहित ठ से वेष्टित करे। फिर उसके चारों तरफ दो कुलिश (वज्र) मंडल बनाकर पहले को लं बीज से और दूसरे को तीन ठ से वेष्टित करे। इस यंत्र को भोज पत्र पर गोरोचन और कुंकुम से लिखे। फिर कुम्हार के हाथ की मिट्टी लाकर उसे अपने प्रत्यार्थी की छोटी सी मूर्ति बनाकर उसके मुख पर यह यंत्र रख दे। उस मूर्ति का मुँह मजबूत कांटों से चीरककर उसको दो मिट्टी के शराबे में रखकर इस मंत्र से पीले फूलों से पूजन करे तो उसके विरोधी व्यापारी की जिह्वा का स्तंभन होता है।

ॐजंभे मोहे अमुकस्य जिह्वां स्तंभय स्तंभय लं ठः ठः स्वाहा ॥

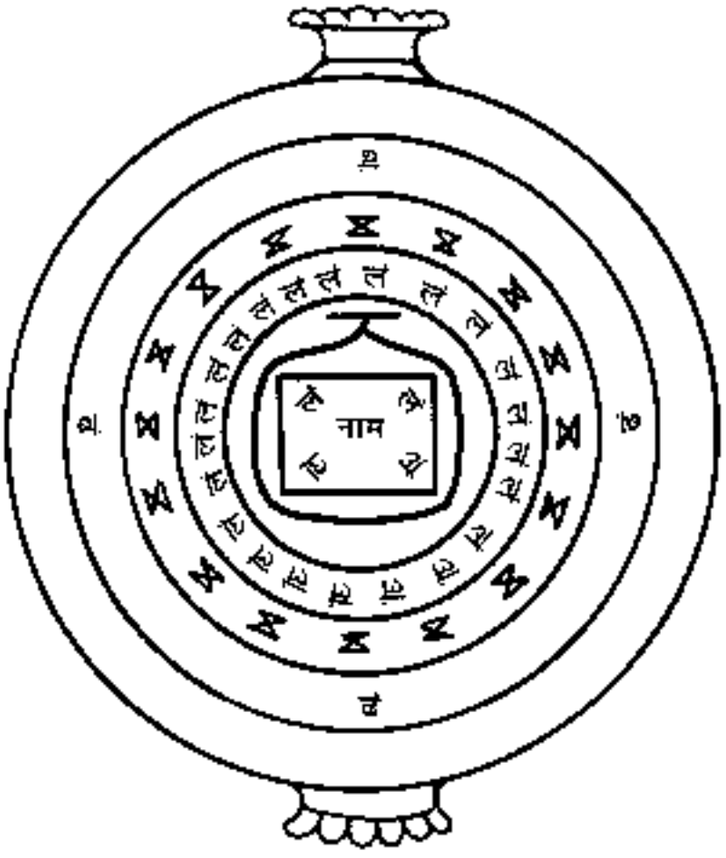

क्षिप्त्वा वदरी पत्रं मृत्स्नाायां चकीहस्तलग्नायां,
तत्प्रति कृति रथ कार्य्यात्ति द्वदनं पूरयेन्माबैः ॥ १३० ॥

तद् हृदये निक्षिप्तं मंत्रं प्रविलिख्य भूर्ज्जे पत्र गतं,
आलक्तक कृक जिव्हा विद्ध्वा मदनस्य कंटकतः ॥ १३१ ॥

अंधे अंधिनि च पदं मोहे मोहिनि तथा मुकं,
शीघ्रं अंधय मोहय युगलं मंत्रं प्रणवादि होमांतः ॥ १३२ ॥

मंत्रोद्धार :- ॐ अंधे अधिनि मोहे मोहिनि अमुकं शीघ्रं अंधय अंधयमोहय मोहय स्वाहा ॥

कुम्हार के हाथ की लगी हुई मिट्टी में बेर के पत्तों को फेंक कर (पीसकर) इसकी मूर्ति बनाए उसके मुँह में मा व से भर दे। उसके हृदय में भोजपत्र पर मंत्र लिखकर तथा इसे उस शत्रु की प्रतिकृति (प्रतिमा) के हृदय में रखकर तथा इसके कृक (गले) में अलक्तक (महावर) की जीभ के ऊपर मदन (मेनफल) के कंटक (कांटे) से लिखे। आदि में प्रणव (ॐ) और अंत में होम (स्वाहा) लगाकर अंधे अंधिनि मोहे मोहिनि अमुकं शीघ्रं अंधय अंधय मोहय-मोहय सहित मंत्र बनता है।

सर्व शास्त्र विदो वक्त्रं वध्नात्यं न्यस्य का कथा,
शराव संपुटं क्षिप्त्वा करोति यदि पूजनं ॥ १३३ ॥

यदि दो शरावों (सराइ) के संपुट में रखकर इसका पूजन किया जाए तो यह सब शास्त्रों के विद्वानों के मुँह को स्तंभन करता है (बंद करता है) औरों की तो क्या बात है।

कृत्वा कुलाल कृतमृतिकयारि रूपं मंत्रं
च तद् हृदि गतं वदनं,तमाप्यं जिव्हामलक्तक
धृतां स्मर कंटकार्त्ता कुर्य्यात् शराव पुट संस्थित मास्य रोधिः ॥ १३४ ॥

कुलाल (कुम्हार) के हाथ की मिट्टी से शत्रु का रूप (मूर्ति) बनाकर उसके हृदय में मंत्र लिखे तथा उसके मुँह और अलक्तक (महावर लाख) की बनी हुई जिव्हा को स्मरकंटक (मेनफल) के कांटे से छेदे यदि उसके दो शरावों के संपुट में रखे तो प्रतिवादी का मुंह बंद होगा।

त्रींकारं चिंतयेद्वक्त्रे विवादे प्रतिवा दिनः,
क्रों वा रेफं ज्वलंतं वा त्रां कारमथवो ज्वलं ॥ १३५ ॥

एतं ध्यात्वा स्तथा तस्य जिव्हा स्तंभं वितन्वते,
जकारो क्षणोर्यंधा ध्यातो विदधते दृष्टि बंधनं ॥ १३६ ॥

शास्त्रार्य करने में प्रतिवादी के मुख में त्रीं क्रों तथा जलता हुआ रेफ (रकार) अथवा त्रां का ध्यान करे। इसका ध्यान करने से उसकी नजर बंध जाती है तथा आंखों में ज का ध्यान करने सेउसकी नजर बंध हो जाती है।

लिखेन्नाम जिलंकार मध्ये पृथ्वी पुरान्वितं,
शिलायां तद वष्टव्यं स्याद्वचो बुद्धि रोधनं ॥ १३७ ॥

पृथ्वी मंड़ल के बीज में जि और लं के अन्दर नाम को लिखकर दो शिलाओं मे रखने से बाणी और बुद्धि का स्तंभन होता है।

तथ मध्ये गतं साध्यं तोय मंडल मध्यगंलेख्यं,
सुगंधिभिर्द्रव्यै भूर्ज्जोवाक् सिद्धि दायकं ॥ १३८ ॥

त और थ के बीज में साध्य के नाम को लिखकर उसके चारों तरफ जल मंडल बनाकर सुगन्धित द्रव्यों से भोजपत्र पर लिखे तो बाणी सिद्ध होगी।

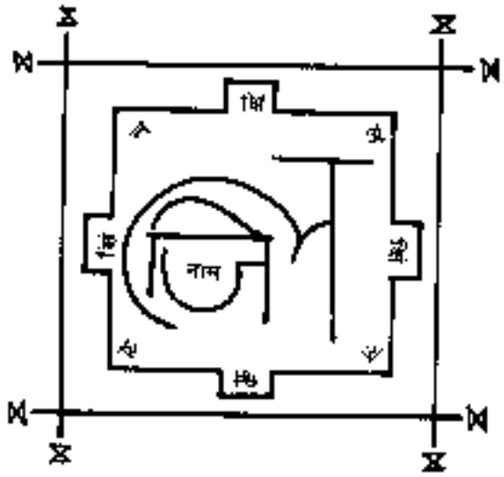

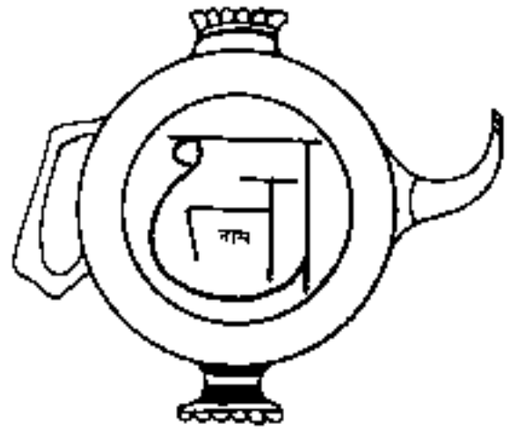

लभते विजयं वादे पुन्नागस्य जटां मुखे,
शिफां शिखि शिखाया वा पुष्य रूक्षे स्वीकृका दधत ॥ १३९ ॥

पुष्य नक्षत्र में लाकर रखी हुई पुन्नाग (कमल) की जड़ या मयूर शिखा की जड़ को (कृक) मुख में धारण करने से शास्त्रार्थ में विजय मिलती है।

ॐ नमो भगवते वरूणाय वरूणाय स्तंभय स्तंभय ठः ठः ॥
एष लक्ष जपात्सिद्धः पाश पाणेयधि देवताः,
मंत्रो दीपार्च्चिषं रूंधे सप्त वार जपादिभिः ॥ १४० ॥

यह पाश पाणि देवता का मंत्र है एक लाख जप से सिद्ध होता है। इसका सात बार जप करने से दीपक की (अचिराषु) लौ का स्तंभन होता है।

दिक्षु ग्लौं मलवरयूं संयुतं कूटं विदिक्षु,
नव कोष्टेषु लिखितं सुरभि द्रव्यैः तत्पीतं स्तंभनं वन्हेः ॥ १४१ ॥

दिशाओं में ग्लौं और विदिशा में कूट सहित मलवरयूं को (क्ष्म्ल्व्र्यूं) को नौ कोठों में सुगंधित द्रव्यों से लिखकर पीने से अग्नि का स्तंभन होता है।

नाम ग्लौं खांत पिंडं वसुदल सहितं भोज मध्ये विलिख्य,
तत् पिंडातेषु योज्यं वहिरपि वलयं दिव्य मंत्रेण कुर्य्यात् ॥ १४२ ॥

टांतं भू मंडलातं विपुल तर शिला संपुटे कुंकुमाद्यैद्धार्य्यं,
श्री वीरनाथ क्रम युग पुरतो वन्हि दिव्यो प शांतयै ॥ १४३ ॥

ॐ थंभेई अमुकस्य जलं जलणं चिंतये मेतेणा पंचणमो आरो आरो मारि चौर राउल घोरू वसग्गं विणासेइ स्वाहा ॥ दिव्य मंत्र :

संस्कृत टीका - नाम देवदत्त नामा ग्लौं देवदत्त नामोपरि ग्लौंकारं खांत पिंड़ं खकार स्यांत गकारः स चासौ पिंडः खांत पिंड़ ग्म्ल्व्र्यूं मिति पिंडं: वसुदल सहितं भोजपत्रं विलिक्ष्यं अष्टदलान्वितं पद्म पत्रे विशेषण लिखित्वा तत्पिंड़ं तत् कर्णिकाग्रां लिखेत् ग्म्ल्व्र्यूं मिति विंड़ं तेषु अष्टदल पत्रेषु योज्यं योजनीयं वहिरपि तदष्ट दल कमल वहिः प्रदेशेपि वलयं केन दिव्य मंत्रेण विशिष्ट मंत्रेण कुर्यात्- टांतं ठकारं कथं भूतं भूमंडलांतं पृथ्वी मंडलांतं स्थितं दिव्य मंत्र वलय वहिः प्रदेशे ठकारेण वेष्टय तद्वाहिः पृथ्वी मंड़लं लेखनीय मित्यभि प्रायः- क्व विपुलतर शिला संपुटं विस्तीर्ण तर पाषाण पट्ट संपुटे कैः कुंकुमाद्यैः कास्मीरादि पीतद्रव्यैः धार्यं धारणीयं क्व श्री वीरनाथ क्रम युगपुरतः श्री वीर वर्द्धमान स्वामी चरणं युगलाग्रतः किमर्थं वन्हि देव्योपशांतयैः अनल दिव्योप शांत्यर्थं ॥

ॐ थंभेई अमुकं अमुकस्य जलं जलणं चिंतय मत्तेण पंच णमो आरो अरि मारि चोर राउल घोरूवसग्गं विणासेई स्वाहा ॥ अग्नि स्तंभन यंत्रं

देवदत्त नाम को ग्लौं में लिखकर खांत पिंड (ग्म्ल्व्र्यूं) उसके बाहर कर्णिका में लिखकर बाहर आठ दल का कमल बनाए। उस कमल के आठों पत्तो में भी ग्म्ल्व्र्यूं पिंडाक्षर लिखे। इसके बाहर उपरोक्त दिव्य मंत्र का वलय दे । इसको टांत (ठकार) और पृथ्वी मंडल बनाए इसको बड़ी भारी शिला की संपुट में रखकर दिव्य अग्नि की शांति के लिए श्री वीर भगवान के सामने रखे।

दिव्येषु जल तुला फणिखगेषु प व ह क्ष पिंड मा विलिखव्येत्,
पूर्वोक्ताष्ट दलेष्वपि पूर्व वदन्यत् पुनः सर्वां ॥१४४॥

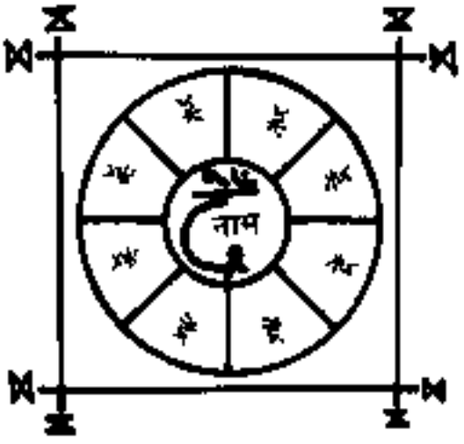

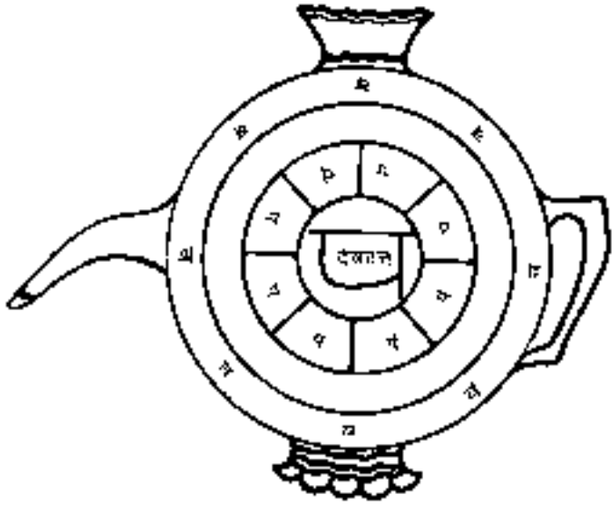

दिव्येषु चतुर्दिव्येषु कथं भूतेषु जल तुला फणि खगेषु जल दिव्य तुला दिव्य घट सर्प दिव्य पक्षि दिव्य एतेषु चर्तुष व प ह क्ष पिंड़ं जल दिव्ये व्म्ल्व्र्यूंमिति पिंडं तुला दिव्ये प्म्ल्व्र्यूं मिति पिंडं फणि दिव्ये ह्म्ल्व्र्यूं मिति पिंड़ं खग दिव्ये क्ष्म्ल्व्र्यूं मिति पिंडं आविलिखेत् समंताद्विलि खेत् केषु पूर्वोक्ताष्ट दलेषु प्राग्विलिखिताष्ट दलेषुकथित चतुर्दिव्येषु व प ह क्ष पिंडान क्रमेणा लेखनीयं अपि शब्दान मध्येपि च पूर्व वदत्यं पुनः सर्वं अन्यत्पुनः यंत्रोद्धारं प्रग्विलिखितं यथा तथैव सर्वं॥

पूर्लोक्त आठ दलों के मध्य मे जल दिव्य में व्म्ल्व्र्यूं तूला दिव्य में प्म्ल्व्र्यूं फणि दिव्य में ह्म्ल्व्र्यूं और खग दिव्य में क्ष्म्ल्व्र्यूं बीज को लिखे और शेष को उसी प्रकार रहने दे अर्थात् इस अग्नि स्तंभन यंत्र के समान चार यंत्र और बनाए किन्तु उसकी कर्णिका के मध्य में लिखित बीज को बदल दे और बाकी सब वैसा ही रहने दे कि जिसकी कर्णिका में व्म्ल्व्र्यूं बीजाक्षर हो वह जल दिव्य का स्तंभन करता है और प्म्ल्व्र्यूं बीज से तुला दिव्य का स्तंभन होगा और जिसकी कर्णिका में क्ष्म्ल्व्र्यूं बीजाक्षर हो वह दिव्य पक्षी का स्तंभन करता है।

जलरद्रिव्य स्थमक यंत्र

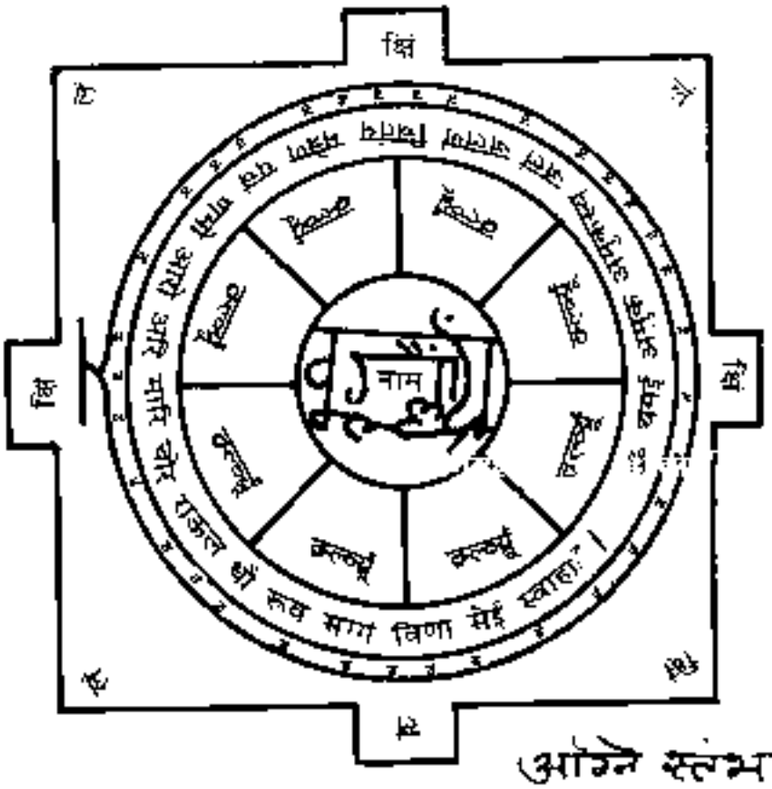

अग्नि स्तंभक

आग्नेय स्तंभक यंत्र

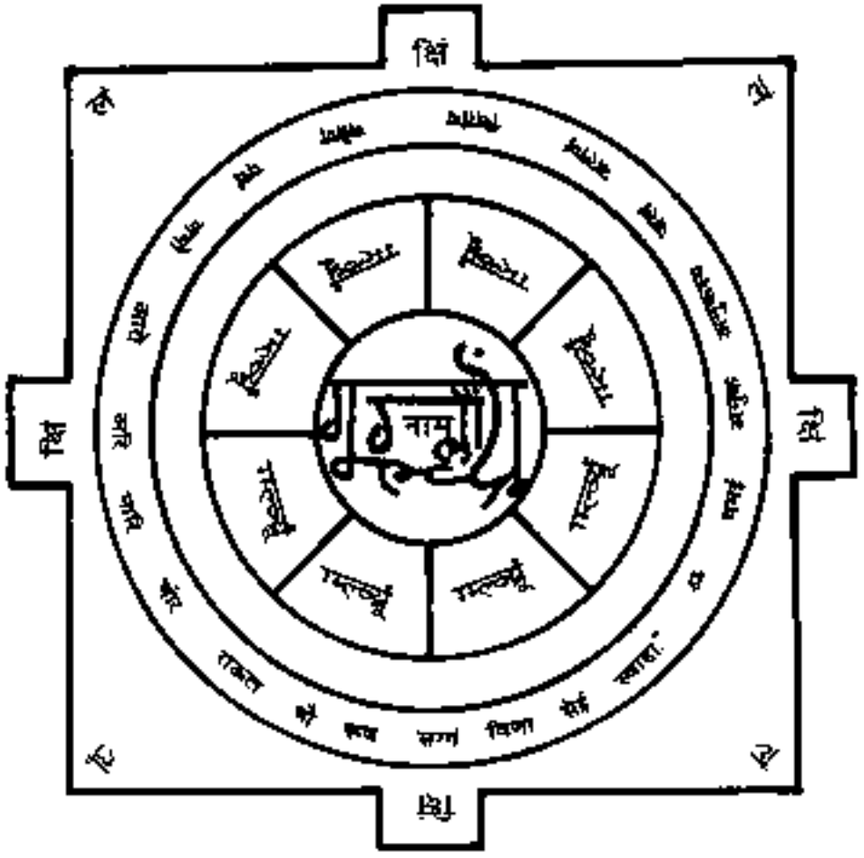

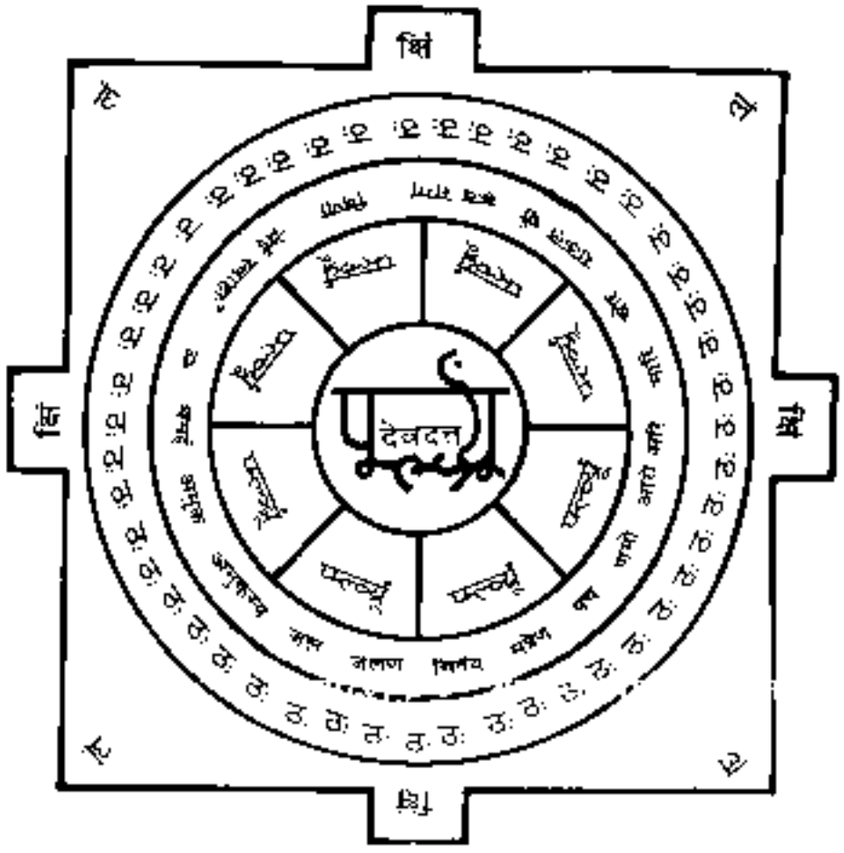

जटया काक जंघाया: पुष्ये स्वीकृतया तनुं,
कृत्वा लिप्तां सदोषोपि वन्हि दिव्यं जटे द्युपं ॥ १४५ ॥

काक जंघा की जड़ को पुष्य नक्षत्र में लेकर उससे शरीर का लेप करके दोषयुक्त पुरुष भी दिव्य अग्नि को निश्चय से जीत लेता है।

दर तैलांबुजन्मेंदु पाटली मूल लेपनं कृत्वा,
धि तलयोस्ताभ्यां संचरेदग्निसंचये ॥ १४६ ॥

दर () तेल अंबुजन्य (कमल) इन्दु (कपूर) पाटली मूल (पांडुरफली) की जड़ का पांवो के नीचे अर्थात् तलवों पर लेप करके उनसे अग्नि के समूह पर चले।

श्वेत केकक्षताद्भूते तच्चूर्णे विमिश्रिते वन्हि हिंम,
सम स्पर्श: स्यात्स्व स्यांतर्गते सति ॥ १४७ ॥

श्वेत केकक्षत (सफेद मोर के पंख) के चूर्ण को भूत (वहेड़ा) में मिलाकर लेप करने से अंदर गई हुई अग्नि का स्पर्श बर्फ के समान शीतल हो जाता है।

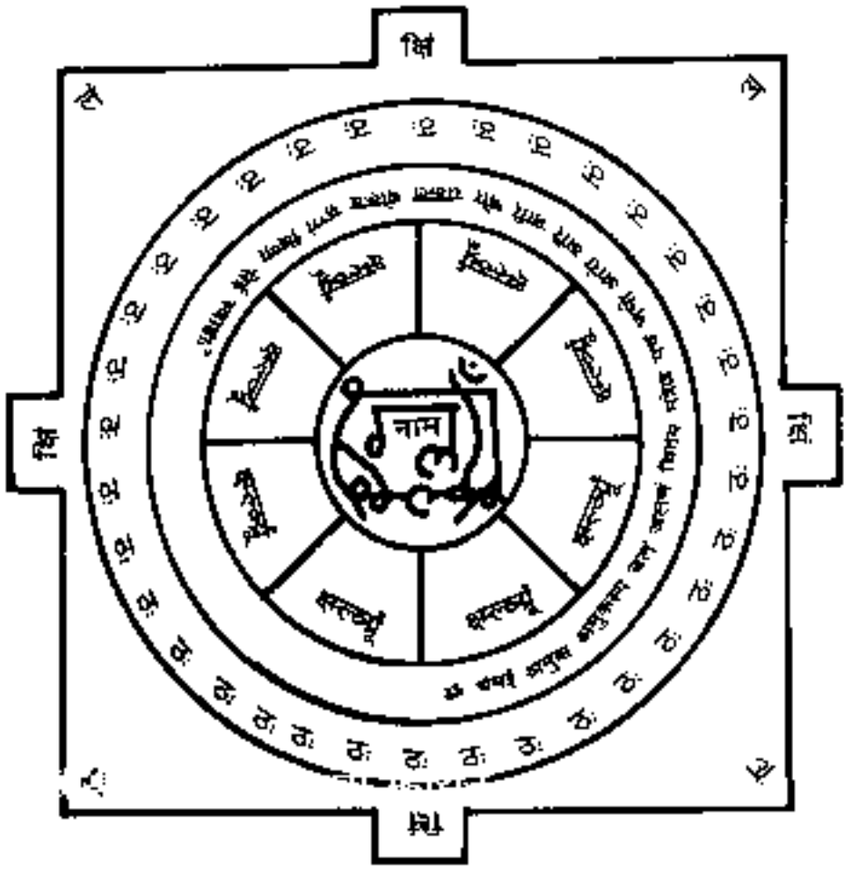

पिष्टेन दर तैलेन लिप्त हस्तौंबुजन्मना,
यं स्पृशेत्पावकं सःस्यात्हिमशीकरशीतलः ॥ १४८ ॥

जो अंबुजन्म (कमल) को दर और तेल में पीसकर आग को छूता है तो आग का स्पर्श चंद्रमा केसमान शीतल लगता है।

लवणाहि दल सरसां करतल मनलो ज्वलं नदग्धुमलं,
लक्ष्मी कुमारिकांभः सिक्तान्केशान् यथा दीपं ॥ १४९ ॥

लक्ष्मी (तुलसी) और कुमारिका (घृत कुमारी गंवार पाठा) के जल तथा लवण और अहि (वज्री वक्ष) के पतों के रस से हाथों को पोतने से अग्नि नहीं जला सकती है जैसे दीपक से बालों को सेकते हैं।

दरतैलेन क्वथदपि सर्प्पि सेतैलं स्पृशेन्निरारेकः,
सिद्धैनाभ्यक्त करः खर मूत्रैः सकदली कुसुमैः ॥ १५० ॥

केले के फूल गधे का मूत्र और दर और तेल को हाथो पर छूकर मलने से गरम तेल और घृत को छू सकता है।

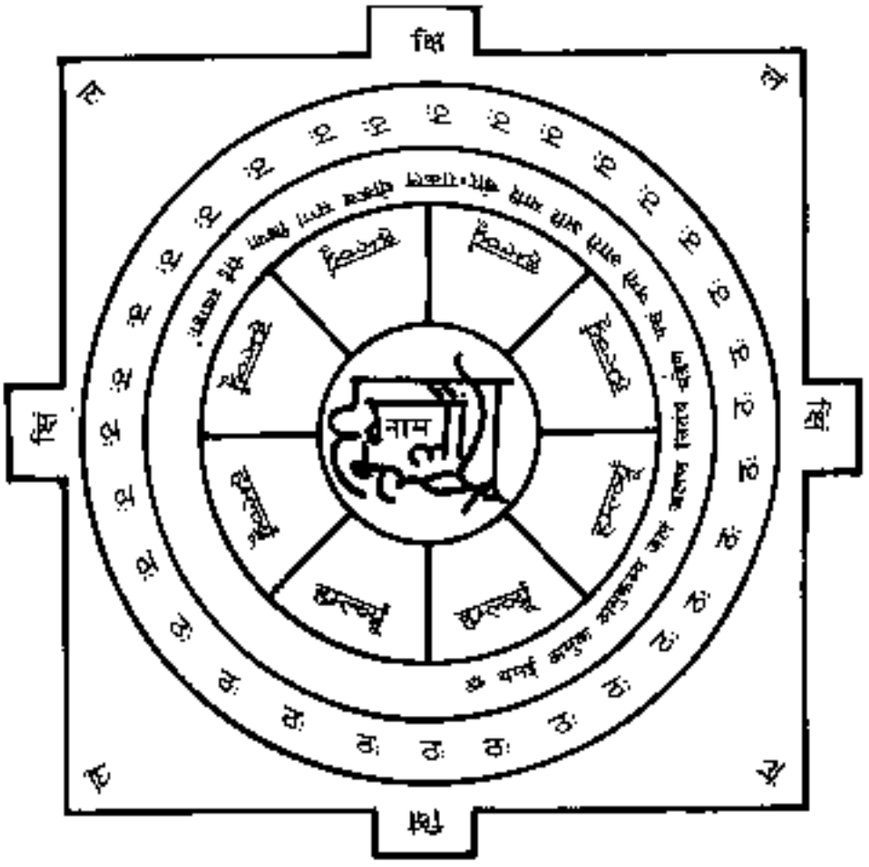

लज्जरिकाभेक पलं कर लिप्तं स्तंभनं करोत्यग्रे:,
कर्प्परदिव्य स्तभयेदि सूंठी भक्षयेद्धीमान् ॥ १५१ ॥

लज्जारिका (लजवंती) भेकपलं (मेंढक की चर्बी) को हाथों पर पोतने से अग्नि का स्तंभन होता है और यदि पुरूष सूंठ खाए तो दिव्य कर्पूर (हथियार) का स्तंभन होता है।

सुचिरं चर्विता दंतै: पावकाद भया भयं.
नरस्य रसनां रक्षेदास्याभ्यंतर संस्थिता ॥ १५२ ॥

यदि पुरूष कपूर और सोंठ को खाता हुआ दांतों से बहुत देर तक चबाकर आग को मुँह में ले तो मुँह में रखी हुई उस औषधि के प्रभाव से उसका मुँह नहीं जले।

भक्षित: पिप्पली कामो मरिचेन समायुत:,
अलं विधातुं स्तंभमादित्या क्षत दिव्ययो: ॥ १५३ ॥

पीपल काम (मेनफल) काली मिरच को समान भाग खाने से सूर्य की किरणों की दिव्य तेजी का बिना हानि पहुँचाये स्तंभन करने में अलम (समर्थ) है ।

ॐ नमो भगवते वायवे मर्दय- मर्दय प्रमर्दय प्रमर्दय स्तंभय-स्तंभय हिरि- हिरि संहर-संहर ठः ठः ॥

साधितो लक्ष जाप्येन मंत्रोयं मातरिश्वनः,
अपां सं स्तंभनः सर्वैः मंत्रिमुख्यैः प्रकीर्त्यते ॥ १५४ ॥

यह वायु मंत्र एक लाख जप से सिद्ध होकर मारिश्वन (वायु) का स्तंभन करता है ऐसा मुख्य मंत्रियों ने कहा है।

मंत्रि तुलादि सं स्तंभं विधातुं यदि वांछति,
श्वासस्यसुचिरं भू रि विदधीत निरोधनं ॥ १५५ ॥

यदि कोई मंत्री तुला आदि का स्तंभन करना चाहता है तो उसे अपना श्वास सुचिर (बहुत लम्बे समय) तक रोकना चाहिये।

जल मंडल मध्यगतो नित्याष्टकवेष्टितश्च नित्योयः,
आख्या तन्मध्य गता तुला स्थितं दुष्टमग्निलंघयेत् ॥ १५६ ॥

जो जल मंडल केमध्य में नित्य (प) आठ अक्षरों से वेष्टित (घिरा हुआ) हो उसके बीच में नाम वाला पुरुष तुला और दुष्ट अग्नि को लांघ जाता है।

अष्टदलावृतस्य कुलिश स्यांतः स्थितं द्वैंवेष्टितं नाम,
शुद्धस्यापि विद्यते गुरूत्वमभ्यासंग तुला स्थस्या ॥ १५७ ॥

आठ दलों से घिरे हुए कुलिश (वज्र) के अंदर स्थित द्वैं से वेष्टित नाम वाले गुरूत्व (भारी) पुरुष भी तुला में बैठकर उसका स्तंभन करता है।

पिष्टेनां कोल मूलेन विलिप्त स्व करो नरः,
घटादि दिव्या मादध्या द्रज्जुवज्जन विस्मितं ॥ १५८ ॥

अंकोल की जड़ को पीसकर अपने हाथों पर लेप करने वाला पुरुष दिव्य घट आदि को रस्सी के समान अपने हाथों पर पुरुषों को आश्चर्य में डालता हुआ उठा लेता है।

गुलिकास्त न तेन कृता शकृता वत्सस्य जात मात्रस्य,
जग्ध्वा सर्व द्रवाद्या द्विष दिव्योकाले कालकूटमपि ॥ १५९ ॥

तुरन्त के पैदा हुए गाय के बच्चे की शकृत (विष्ठा) और नत (तगर) से बनाई हुई गोली को जग्ध्वा (खानेसे) पुरुष कालकूट विष को भी खा सकता है।

नाम ग्लौमुर्वीपुर वं पं ग्लौं कार वेष्टितं कृत्वा,
ह्रीं वलय चतुष्वलयं स्वनाम युक्तं ततो लेख्यं ॥ १६० ॥

ॐ मुच्चिष्ट पद स्याग्रे स्वछंद पदमा लिखेत्,
ततश्चांडालिनी स्वाहा टांत युग्मक वेष्टितं ॥ १६१ ॥

पृथ्वी वलयं दत्वा पुरोक्त मंत्रेण वेष्टितं कृत्वा,
रजनि हरितालाद्यै भूर्ज्जे विधिनान्वितं विलिखेत् ॥ १६२ ॥

तत्कुलालकर मृतिकावृतै तोय पूरित घटे विनिक्षिपेत्,
पार्श्वनाथ मुपरिस्थमच्चर्य दिव्य रोधन विधान मुत्तमं ॥ १६३ ॥

संस्कृत टीका :-

नाम देवदत्त नामा तन्नामोपरि ग्लौंकारं उर्व्वापुरं तदुपरि पृथ्वी मंडलं वं पं ग्लौंकारं वेष्टितं कृत्वा उर्वीपुर वहि प्रदेशे वं वकारं पं पकारो परिग्लौंकारं एतैरक्षस्त्रयैर्वेष्टनं कारयित्वा ह्रीकार चर्तुवलयतं दक्षर त्रयाणां वहि ह्रींकार वेष्टने चर्तुवलयं कथं भूतं स्वनाम युक्तं तत ह्रींकारं स्वकीय नामान्वितं ततः स्तस्मिन ह्रींकारा न लेख्यं लेखनीयं ॥

ॐ ॐ मित्यक्षरं उच्चिष्टउच्चिष्टेति पदं अग्रे उं उच्चिष्ट पदस्याग्रे स्वछंद पदं स्वच्छंदेति पदं आलिखेत् समंतां लिखेत् ततश्चांडालिनी स्वाहा -ततः स्वच्छंद पदान चांडालिनी स्वाहेति पदं एवं मंत्रोद्धारः उं उच्चिष्टे स्वचंछंद चाडालिनी स्वाहेति मंत्र विन्यासः टांत युग्मक वेष्टितं उं उच्चिष्टेत्यादि मंत्र वलयानंतरं ठकार द्वितयेन वेष्टितं ॥
पृथ्वी वलयं दत्वा पुरोक्त मंत्रेण वेष्टयेत् बाह्ये रजनी हरितालाद्यैः भूर्ये विधिनान्विता विलिखेत् पृथ्वी वलयं दत्वा टांत युग्मक वाह्ये पृथ्वी मंडलं दत्वा पुरोक्त मंत्रेण पूर्वोक्ता उं उच्चिष्टेत्यादि मंत्रेण वेष्टयेत् वेष्टनं कुर्यात् बाह्ये पृथ्वी मंडल वहिः प्रदेशे रजनी हरितालाद्यैः हरिद्रा गोदंतादि पीत द्रव्यैः क्व भूर्ये भूर्ये पत्रे विधिना यथा विधानेन अन्वितः युक्तं विलिखेत् विशेषण लिखेत् ॥ तत् तद् यंत्रं कुलालकर मृतिका वृतां कुंभकार कराग्र मृतस्ना आवेष्टितं तोयंपूरितघटे जल परिपूर्ण नव कुंभे विनिक्षिपेत् निक्षिपेत् पार्श्वनाथं श्री पार्श्वभट्टारकं कथं भूतं उपरिस्थं तत कुंभ स्थो परिस्थितं अर्च्चयेत् पूजयेत् दिव्यरोधन विधानं अनल दिव्य स्तंभन विधानं उत्तमं श्रेष्ठं दिव्य स्तंभन यंत्रं ॥

हिन्दी टीका:-

एक मंडल बनाकर उसके बीच में देवदत्त अर्थात् अपना नाम लिखकर बाहर ग्लौं। लिखें इसके बाहर पृथ्वी मंडल बनावे इनको वं पं ग्लों से वेष्टित करे इनके बाहर अपने नाम सहित ह्रींकार चार वलय वाला बनावे। इसके बाहर ॐ उच्छिष्ट स्वछंद चांडालिनी स्वाहा मंत्र का वेष्टन करे इसके बाद दो बार ठ अक्षर का वेष्टन करे।

इसके बाहर पृथ्वी मंडल बनावे तथा उपरोक्त मंत्र से वेष्टित मंत्र से वेष्टित करें। यह यंत्र कुंकम हल्दी हरताल आदि पीले द्रव्यों से विधिपूर्वक भोजपत्र पर लिखे। उस यंत्र को कुम्हार के हाथ की मिट्टी से लपेटे और जल से भरे हुए नये घड़ में यंत्र रखकर उसके ऊपर पार्श्वनाथजी भगवान की चिरंजी स्थान करके अर्चना की पूजा करे यह दिव्य अग्नि को स्तंभन करने वाला यंत्र है।

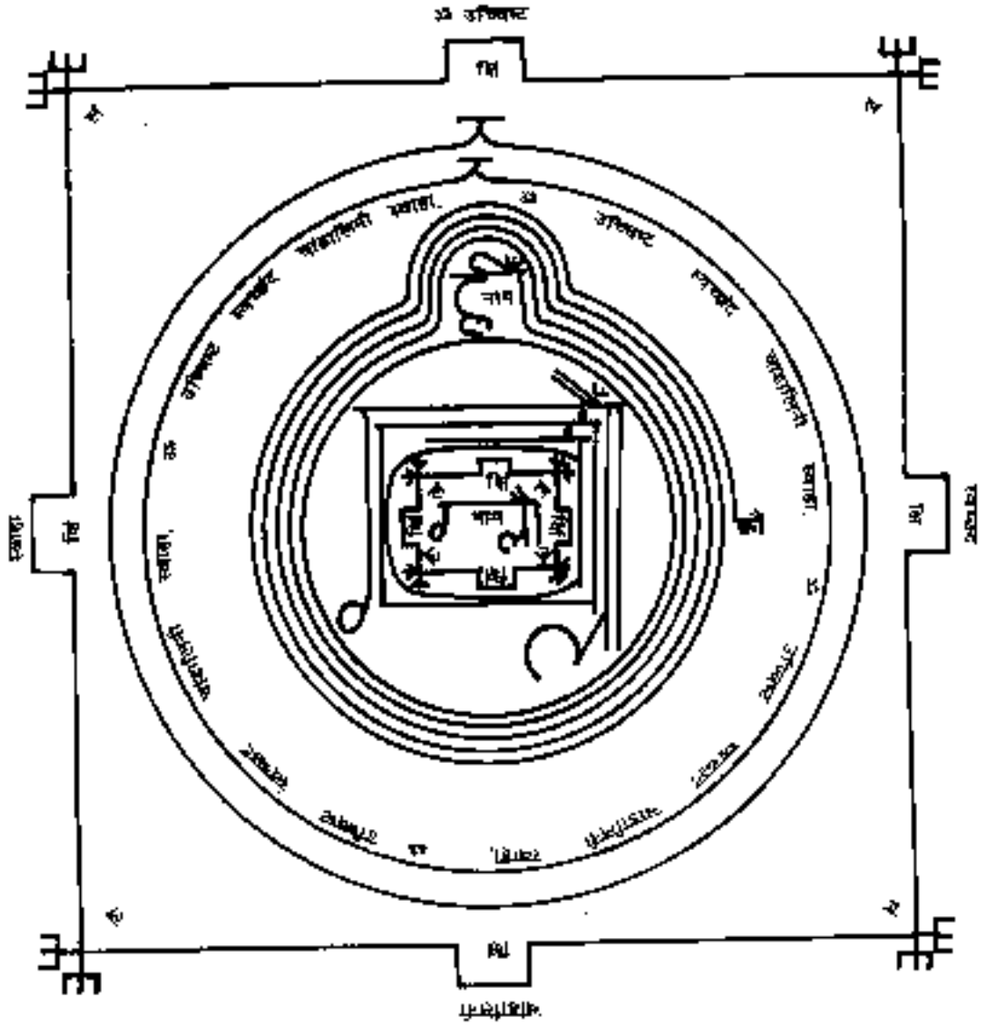

नामालिख्य प्रतीतं कपर पुट गतं टांत वेष्टयं चतुर्भि:,
बंज्रै विद्धं कुरांतं कुलिशं विबरंग वाम बीजं तदग्रे ॥ १६४ ॥

वज्रैश्चान्योन्य विद्धं ह्रु पारिलिख वहि र्जिष्णुनाभ्रि: परीतं,
सज्योतिश्चंद्र बिन्दुं हरि कमल जयो स्तंभ बिंदुर्लकारे ॥ १६५ ॥

नाम को प्रतीत(प्रकाशित)कपर (ख) की पुट में लिखकर टांत (टकार) से वेष्टित करें। इसको चारों तरफ से वजाकार रेखाओं से बींधकर वज्र (कुलिश) के विवर (छेद) केआगे वाम बीज (ॐ) उसके आगे परस्पर बिंधे हुए वज्र लिखे और जिष्णु (ॐ) के वहि (बाहर) ज्योति (ई) को चन्द्रबिन्दु (अनुस्वार) सहित तीन बार मंडल परीत (घिरी हुई) बनावे जो हरिकमल जयो (स्वां) बीज स्तंभ बीज (ग्लौं) और बिन्दु लकार सहित हो

तालेन शिला संपुट लिखितं परिवेष्टां पीत सूत्रेण,
दिव्य गति सैन्य जिव्हा क्रोधं स्तंभयति कृत पूजां ॥ १६६ ॥

इस यंत्र को हरताल से दो शिलाओं के संपुट में लिखकर दोनों यंत्रों का मुख मिलाकर पीले धागे से लपेटे और पूजा करने से दिव्य गति सेना जिव्हा और क्रोध का स्तंभन करता है।

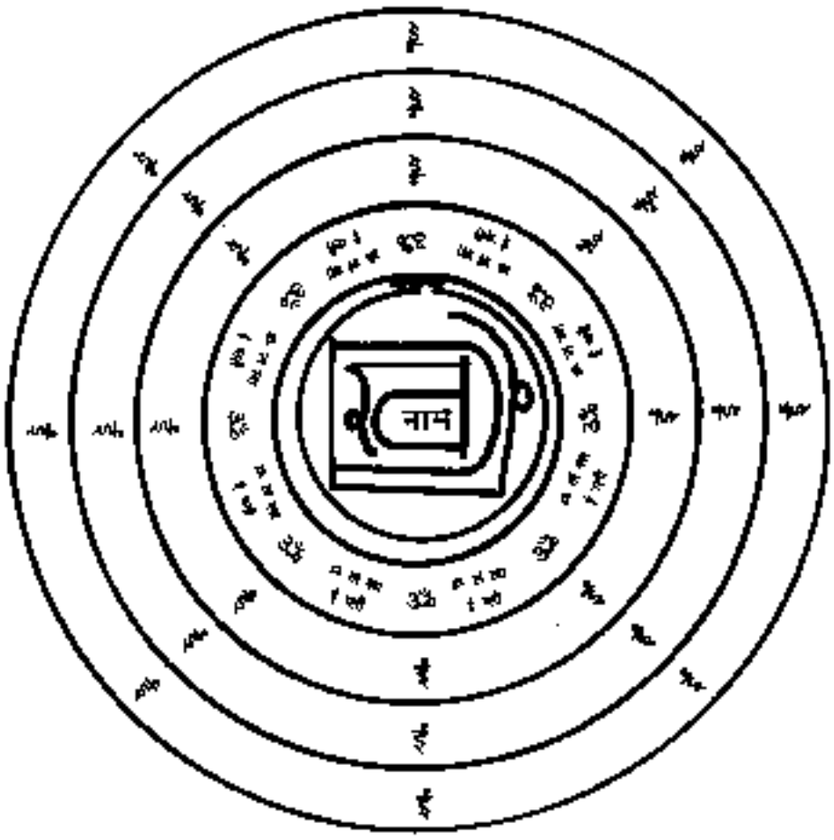

कल्किततैदर तैलने समंगोपोदका जटेभवे,
तां हस्त संलिप्ते सर्वदिव्य जयावहे ॥१६७॥

उपोद (पोई) की जड़ के कल्क को बराबर दर() तेल को हाथों पर पोत लेने से सब दिव्य वस्तु जीती जाती हैं।

ॐ सोम सुधा पुरतो दत्वा मृत वाहिनी पदं स्वाहा,
गृह दाहस्योपशमः सौवीरै एरंड पत्रे स्यात् ॥१६८॥

ॐ सोम (ऊँ) सुधा (ध्वीं) के आगे अमृतवाहिनी पद देकर स्वाहा सहित मंत्र को सौवीर (बेर) और एरंड के पत्र पर लिखने से जलता हुआ घर ठण्डा हो जाता है।

कुमारी कृष्णा धत्तूर मूल पत्रं निशां तथा,
समभाग हृतै दिव्य स्तंभं स्यादुपदेशतः ॥१६९॥

कुमारी (गंवार पाठा) काले धतूरे की जड़ और पत्तों तथा निशा (हल्दी) को बराबर लेने से दिव्य स्तंभन होता है ऐसा उपदेश है।

केनापिकृते स्तंभे तद्विच्छेदनं करोत्वमुना,
मंत्रेण मंत्र वादी ह्रस्वाक्षीमांत बीज युजा ॥१७०॥

यदि किसी दूसरे ने स्तंभन कर दिया हो तो मंत्री इस मंत्र से उसका छेदन करे। ह्रस्व क्षीमांत बीज()

ब्रह्म ग्लौंकारं पुटं टांत वृतमष्ट वज्र सं रुद्धं,
वामं वज्राग्र गतं तदंतरे रांत बीजं च ॥१७१॥

उर्वी पुरमथवाह्ये दिक्षु क्रौं ह्रीं विदिक्षु संविलिखेत्,
रजनी हरितालाद्यैः कुरुते मनुजेप्सित स्तंभं ॥१७२॥

ॐ ग्लौं क्रौं ह्रीं सर्वदुष्ट प्रदुष्टानां क्रोधादि स्तंभनं कुरुकुरु ठः ठः॥ मंत्रः

नाम के चारों तरफ ब्रह्म (ॐ) और ग्लौं का संपुट लिखकर उसे टांत (ठकार) से वेष्टित (घेर) करके उसे आठ वज्रों से घेर, वज्रों के आगे भाग पर (वाम) ऊँ और अंतराल में रांत (ल) बीज लिखें। उसकी दिशाओं में क्रौं और विदिशाओं में ह्रीं लिखकर बाहर उर्वी (पृथ्वी) पुर (मंडल) बनावे। इसको हल्दी रजनी और हरताल आदि से लिखने से यह मनुष्य का इच्छित स्तंभन करता है।

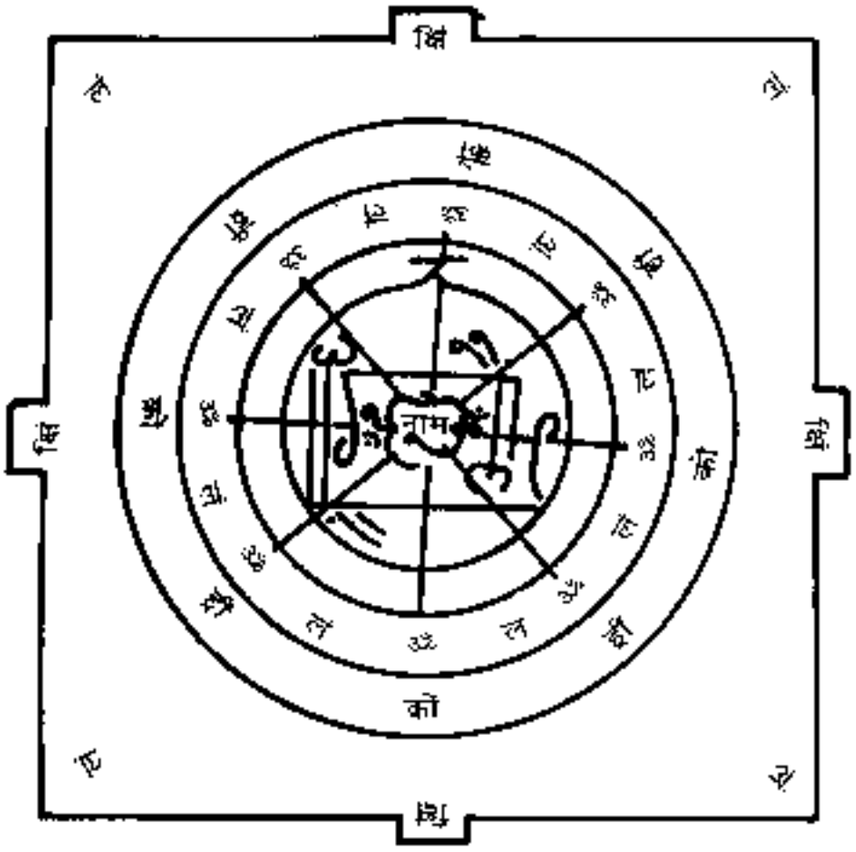

माहेन्द्र मंडले साध्यमोंकार द्वितयो दरे,
लिखेद्रोचनया भूर्ज्जे भूमिस्थं स्वेष्ट रोधनं ॥ १७३ ॥

माहेन्द्र मंडल के अंदर साध्य के नाम को दो ॐ के अंदर गोरोचन से भोजपत्र लिखकर उसे भूमि में गाड़ने से अपने इष्ट को रोके।

क्ष म ठ स ह पल्लव वर्णान मलवरयूंकार संयुतान्
विलिखेत अष्ट दलेषु क्रमशो नाम ग्लौंकर्णिका मध्ये ॥ १७४ ॥

मंत्रभ्यामा वेष्टयं वाह्यं भूमंडलेन सं वेष्टयं,
कुंकुम हरितालाद्यै विलिखेदात्मेप्सित स्तंभं ॥ १७५ ॥

ॐ नमो भैरवी अग्नि स्तंभनि पंच दिव्यो तारिणी श्रेयस्क री ज्वल- ज्वल प्रज्वल- प्रज्वल सर्व कामार्थ साधिनी स्वाहा।

ॐ अनल पिंगलोर्द्ध ॐ केशिनि दिव्याधि पतये स्वाहा ॥ आवेष्टन मंत्रो

क्ष म ठ स ह प ल व वर्णों में मलवरर्यूं मिलाकर आठ कमल के दलों में लिख कर्णिका में ग्लौं के अन्दर नाम लिखे। फिर दोनों मंत्रो से वेष्टित करे इसको बाहर पृथ्वी मंडल से वेष्टित करें, कुंकुम हरताल आदि से लिखे तो अपनी इच्छा किये हुए का संथभन होवे।

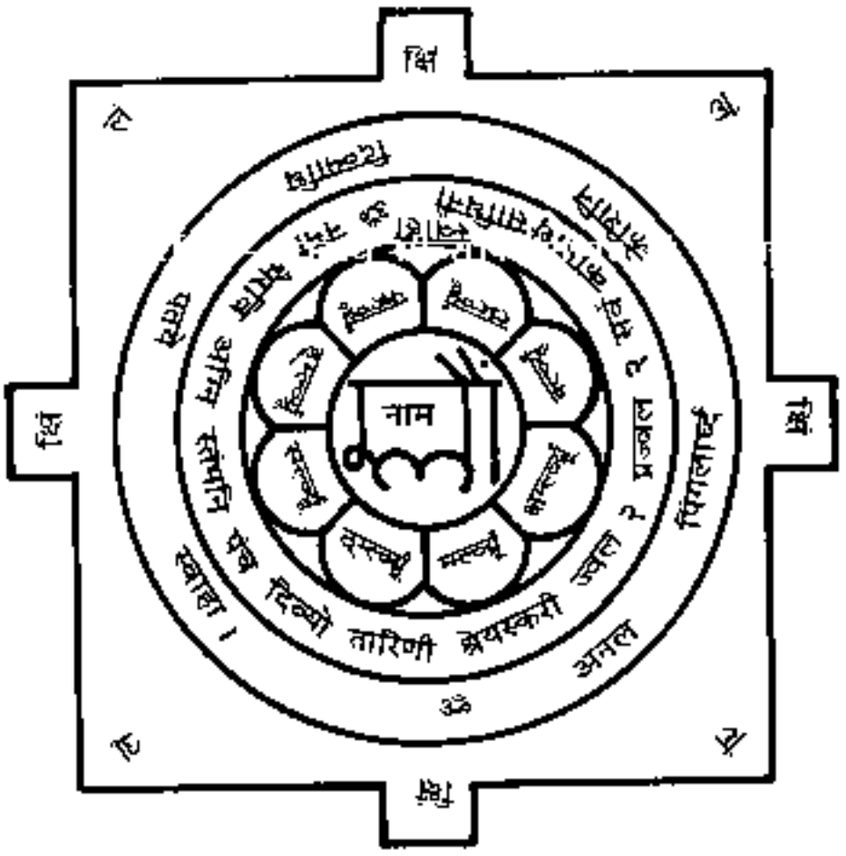

ब्रह्म ग्लौंकार पुटं टांता वृतमष्ट वज्र सं रुद्धं,
वामं वज्राग्र गतं तदंतरे रांत बीजं च ॥ १७६ ॥

वात्तालीं मंत्र वृत्तं वाह्येष्टौ विन्यसेत् क्रमशः,
मलवयरयूंकार समेता न क्ष ष मठ स हरांत लांता स्तान् ॥ १७७ ॥

ॐ वार्तालि वाराही वराह मुखी जंभे जंभिनि स्तंभे स्तंभिनि अंधे अंधिनि रुंधे रुंधिनि सर्वदुष्ट प्रदुष्टानां क्रोधं लिलिमितिं लिलि गतिं लिलि जिव्हां लिलि ठठठठ ॥

अथं वार्तालि मंत्र ब्रह्म ग्लौंकार पुटं ऊंकारं पुट ग्लौंकारं पुटमिति द्वयं कथं भूतं टांता वृतं ठकारारा वृतं पुनः कथं भूतं अष्ट वज्र सं रुद्धं वज्राष्टकै सम्यग् रुद्धं वामं वज्राग्र गतं ऊंकारं वज्राणामग्र स्थितं तदंतरे तद्वज्रांतराले रांत बीदं च रकार स्यांतः रांतः

लकार: स एव बीजं रांत बीजं लमिति च समुच्चये वार्ताली मंत्र वृतं वज्राणां वहि: प्रदेशे वार्ताली मंत्रेणा वेष्टितं वाह्ये मंत्र वेष्टन वहि: प्रदेशे अष्टो दिक्षु अष्टा सु दिशासु विन्यसेत् विशिषेण स्थापयेत् कथं क्रमश: क्रम परिपाट्या मलवरयूंकार समेतान मश्च लश्च वश्च रश्च यूंकारश्चान मलवयूंकार समेतान कान क्ष म ठ स ह परो रांत लांता तान क्षश्च मश्च ठश्च सश्च हश्च परा: पकारात्पर: फकार फश्च रांत रकारस्यात: लकार: लश्च लांत लकारस्यांत: वकार: वश्च क्ष म ठ स ह परो रांत लांतास्तान क्ष म ठ स ह परो रांत लांता तान एवं क्षम्ल्वर्यूं म्मल्वर्यूं स्म्ल्वर्यूं ह्म्ल्वर्यूं फम्ल्वर्यूं ल्म्ल्वर्यूं व्म्ल्वर्यूं एतान अष्ट पिंडान वार्ताली मंत्र वाह्ये प्राच्यादि अष्ट सु दिशासु क्रमेण न्यसेत् ॥

इस यंत्र में देवदत्त के नाम लिखकर ॐ का संपुट बनावे, फिर ग्लौं का संपुट बनावे फिर ठकार से वेष्टित करके मिले हुए अक्षर लिखे । इसके पीछे आठ दिशाओं में आठ वज्रों से वेष्टित करें। वज्र के आगे अर्थात् यंत्र के बीच में ॐ बीज वज्र के आगे अंतराल में ल बीज रखे। वज्रों के बाहर आठ दिशाओं वार्ताली मंत्र को लिखे और बाहर आठों दिशाओं में निम्न लिखित आठ पिंडाक्षरों को लिखें क्षम्ल्वर्यूं म्मल्वर्यूं ठम्ल्वर्यूं स्म्ल्वर्यूं ह्म्ल्वर्यूं फम्ल्वर्यूं ल्म्ल्वर्यूं व्म्ल्वर्यूं ।

वाह्ये मरपुर परिवृतमंकुश रूद्धं करोतु,
तद्वाह्ये उक्षेश मंत्रवेष्टयं पृथ्वीपुर संपुट वाह्ये ॥ १७८ ॥

वाह्ये तत्पिंडाष्टक वहि: प्रदेशे अमरपुर परिवृतं इन्द्रपुरेण समंतादहतं अकुंश रूद्धं करोतु तत् तदिन्द्रपुर चतुर्द्वारोभय पार्श्वेकौंकार रूद्धं उक्षेश मंत्र वेष्टयं उक्षां वृषभ: तस्य दृश: स्वामी श्री वृषभनाथ: तस्य मंत्र उक्षेश मंत्र: तेन वेष्टयं उक्षेश मंत्र वेष्टयां तद अमरपुर वहि: प्रदेशे उक्षेश मंत्रेणा वेष्टयं पृथ्वीपुर संपुटे वाह्ये तदुक्षेश मंत्र वलय वाह्ये पृथ्वी मंडल संपुटं कुर्यात् ॥

उक्षेश मंत्रोद्धार

ॐ नमो भयवदोरसि हस्स तस्स फडिणि मितेण चरण पणत्त इंदेण भणामई दमेण उपाडिया जहि कंठोठ मुह तालुय खीलियाणमई भसई मई हसई दुट्ठ दिट्ठीण वज्ज संवलाण देवदत्तस्स मण हियय कोहं जिव्हा खीलिया-मेल खीलयाये ल ल ल ल ठ: ठ: ठ: ठ: ॥

उक्षेस मंत्रोयं

कोणेष्वष्टसु विलिखेद्वार्त्ताली मंत्र भणित जंभादिन ठ द्वितीयं,
धरणपुर मीदृशा मिदमा लिखेत् प्राज्ञः ॥ १७९ ॥

कोणेष्वष्टसु उक्षेश मंत्र वलय वहिरष्ट दिशासु विलिखेत् विलिखेत् विशेषेण लिखेत् कान् वार्त्ताली मंत्र भणित जंभादनि वार्ताली मंत्राभ्यंतरे कथित जंभाद्यष्ट देवतान ।।

ॐ जंभे स्वाहा ॐ जंभिणि स्वाह ॐ स्तंभे स्वाहा ॐ स्तंभिनि स्वाहा ॐ अंधे स्वाहा ॐ अंधिनि स्वाहा ॐ रूंधे स्वाहा ॐ रूधिनी स्वाहा ॥ इत्यष्ट देवता:

प्राच्यादिष्वष्टसु दिशा सु क्रमेण स्थाप्या: ठ द्वितीयं जंभादि देवता वहि: प्रदेशे ठकार द्वितीयं धरणीपुरं ठकार वहि: प्रदेशे पृथ्वी मंडलं ईदृशं यंत्रं अनेन कथित प्रकारेण इद एतद्वार्तालीभिधानं यंत्रं प्रालिखेत् समंता लिखेत् क्रः प्राज्ञः बुद्धिमानः ॥

फलके शिलातले वा हरिताल मन: शिलादिभि लिखितं,
कोप गति सैन्य जिव्हा स्तंभं विदधाति विधियुक्तं ॥ १८० ॥

फलके काष्ट कृत फलके शिला तले वा अथवा पाषाण पट्टे वा हरिताल मन: शिलादिभि हरिताल मन: शिलादि पीत द्रव्यै लिखितं अलिखितं कोप गति सैन्य जिव्हा स्तंभं कोप स्तंभं गति स्तंभं सैन्य स्तंभं जिव्हा स्तंभं विदधाति विशेषेण करोति कथं विधियुक्तं यथा विधान युक्ते सति ॥

वार्त्ताली यंत्रोद्धार समाप्तः

बाहर उन आठों पिंडाक्षरों के अमरपुरी इंद्रपुरी से वेष्टित करे। उनके द्वार को अंकुश बीज (क्रौं) निरोध कर देना चाहिये। फिर उसके चारों तरफ उक्षेश मंत्र ऋषभनाथ जी के मंत्र से वेष्टित करके पृथ्वी मंडल का संपुट बनाये। ऋषभनाथजी के मंत्र के बाहर आठों कोणों में वार्ताली मंत्र में बतलाई हुई जंभादि आठ देवियों को लिखें। उससे अगले कोष्ठक को ठकार से भरककर पृथ्वी मंडल बनाकर यंत्र समाप्त करे। बुद्धिमान के द्वारा यह यंत्र काठ की तख्ती पर पत्थर की शिला पर हरताल मेनसिल आदि पीले द्रव्यों से विधिपूर्वक लिखा जाने पर शत्रु की क्रोध गति सैन्य और जिव्हा का स्तंभन करता है।

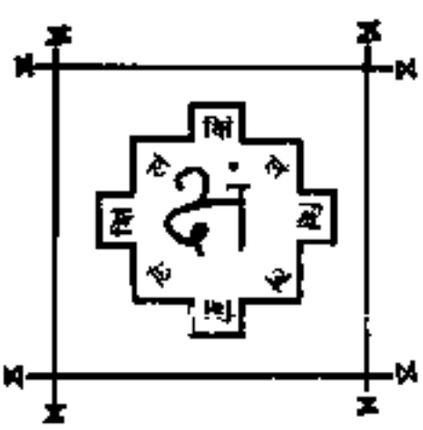

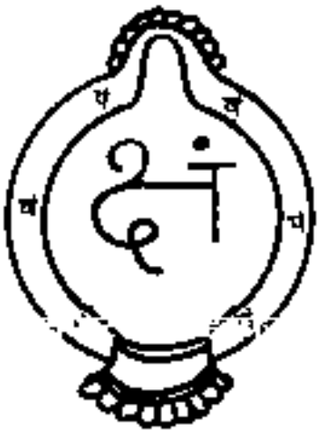

देवदत्त ॐ देवदत्त ॐ

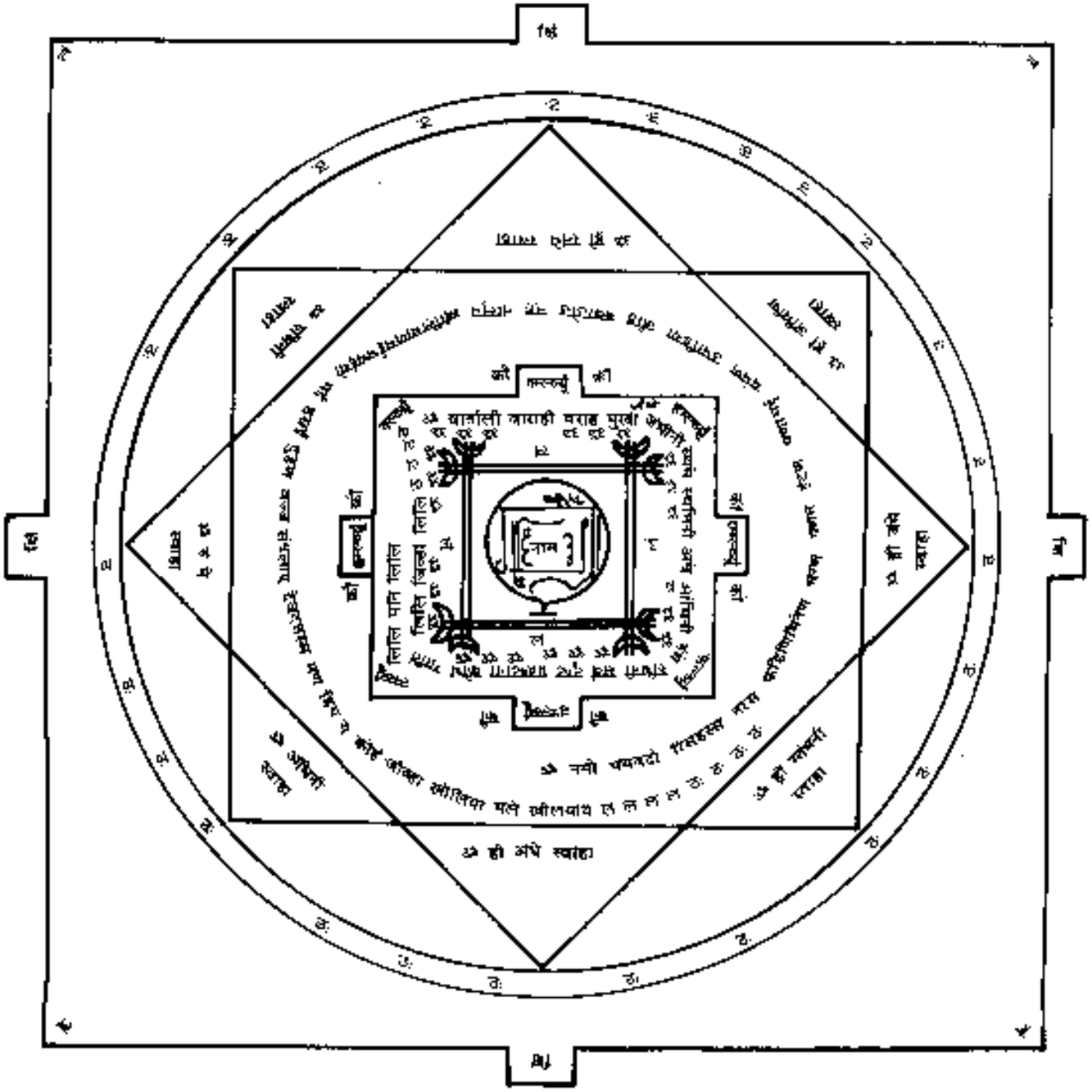

क्षकारो बिंदु संयुक्तः स्तंभकृत्पृथ्वी पुरो,
अंभपुर गतः शांति कुरूते कुंकुमादिना ॥ १८१ ॥

बिंदु सहित क्षकार को पृथ्वी मंडल में लिखने से स्तंभन करता है तथा जल मंडल में कुंकुम आदि से लिखने से शांति करता है।

माहेन्द्र मंडले साध्यमोकार द्वितीयो वरे,
लिखेद्रोचनया भूर्जे भूमिकथं स्वेष्टं रोधनं ॥ १८२ ॥

माहेंद्र मंडल में साध्य को दो ओंकारों में गोरोचन से भोजपत्र पर लिखकर पृथ्वी में गाड़ने से इच्छित का स्तंभन करता है।

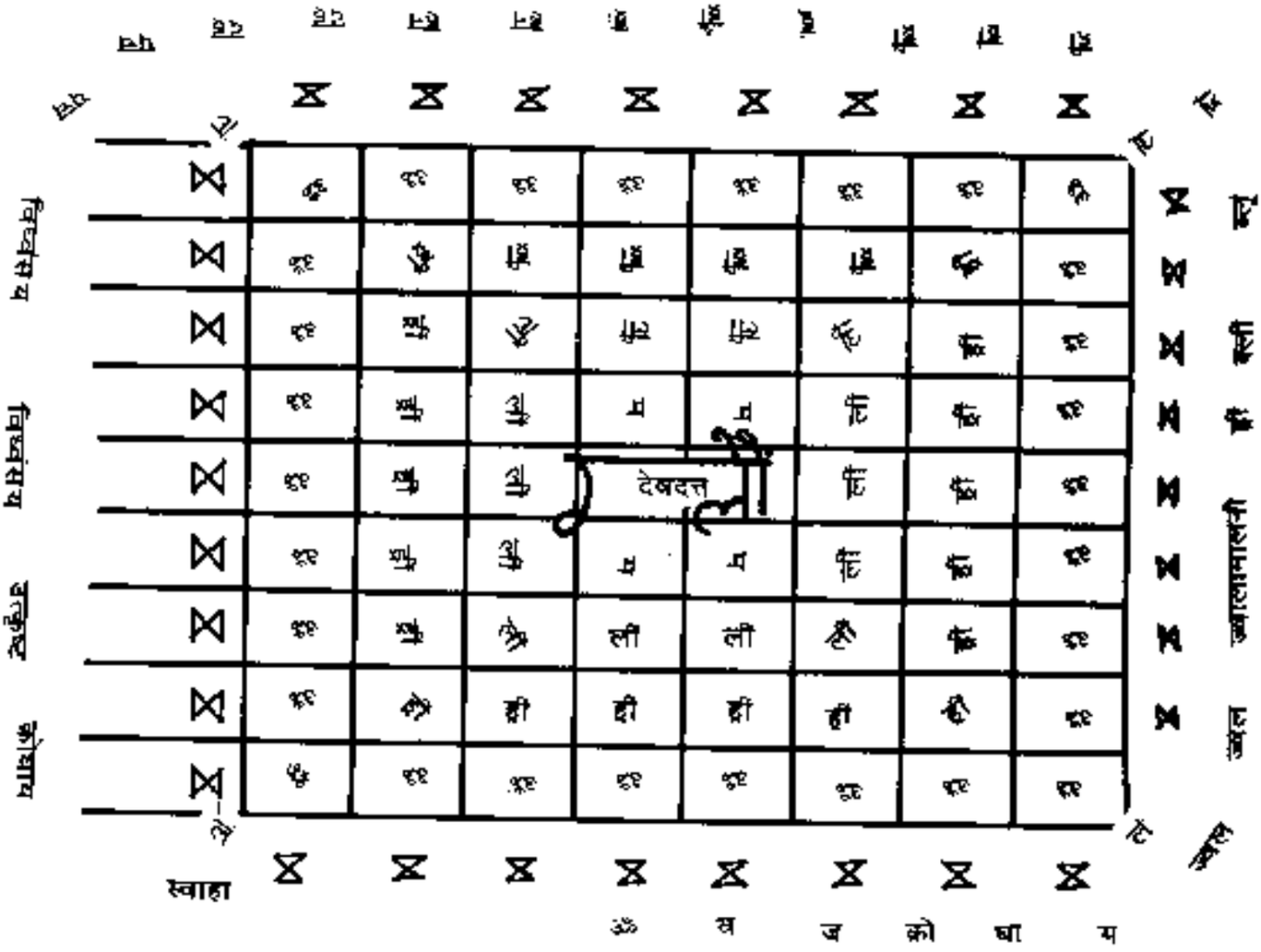

वज्रा कराग्र रेखा नवकं कृत चतुः षष्टि कोष्ठान लिखित्वा,
वाह्ये बिन्दु त्रिदेहं तदनुलिखित दंतश्च लिंतस्य ॥ १८३ ॥

भांत: ग्लौंदयान्नाम गर्भं कुलिश युगल विद्धं ततस्त द्वि दिक्षु रांतं,
वज्रांतराले वलयितमथे तत् स्वेन मंत्रेण वाह्ये ॥ १८४ ॥

ॐ वज्र क्रोधायज्वल ज्वल ज्वालामालिनी ह्रीं क्लीं ब्लूं द्रां द्रीं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः हन हन दह दह पच पच विध्वंसय विध्वंसय उत्कृष्ट क्रोधाय स्वाहा ॥ आवेष्टन मंत्र

यंत्र मिदं भुवि फलके कुंज्ये भूर्ज्जे विलिख्य तालेन,
मंत्रेण पूजितं सत् कुर्य्यात् हृदयेप्सितं स्तंभं ॥ १८५ ॥

नौ वज्राकार रेखा बनाकर प्रत्येक में आठ आठ कोठे बनाकर कुल चौसठ कोठे बनावे । उनमें से प्रथम कोठे में चारों तरफ ॐ लिखे, फिर ह्रीं , और फिर लीं, और फिर भांत (म) लिखें। बीच के स्थान में दो वज्रों से भिंधे हुये नाम को ग्लौं को बीच में लिखे, उसकी विदिशा में रांत बीज (ल) को लिख देवे। अतंराल में वज्र लिखें। इसके बाहर चारों तरफ निम्न लिखित मंत्र लिखें। "ॐ वज्र क्रोधाय ज्वल ज्वल ज्वालामालिनी ह्रीं क्लीं ब्लूं द्रां द्रीं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः हन हन दह दह पच पच विध्वंसय विध्वंसय उत्कृष्ट क्रोधाय स्वाहा ।" इस यंत्र को पृथ्वी पर कुज्य (घड़े) पर अथवा भोजपत्र पर हरताल से लिखकर और उपरोक्त मंत्र से पूजन करने से इच्छानुसार स्तंभन करताहै।

मर्त्य वक्त्रोत्थि नाम वेष्टय रेद्रांत सांतत: लांतेन,
ग्लौं क्षि बीजेन क्षीं लीं दिशि विदिश्वपि ॥ १८६ ॥

लिखेत् उर्वी पुरं वाह्ये तदग्रे कुलिशा हतं उं,
जिव्हा स्तंभिनि स्वाहा मंत्रेणार्चन मारभेत ॥ १८७ ॥

जिव्हा क्रोध गति स्तंभ मातनोत्य विकल्पत:,
खटिकान्न निशा: पिष्टा तद्वत्यालिखितं पटे ॥ १८८ ॥

मनुष्य के मुख से निकले हुए नाम को रांत (ल) सांत (ह) लांत (व) ग्लौं और क्षि बीज से वेष्टन करें, फिर उसकी दिशाओं में क्षीं और विदिशाओं में लीं लिखें। फिर बाहर वज्र सहित पृथ्वी मंडल लिखें। इस मंत्र का उं जिव्हा स्तंभिनी मंत्र से पूजन करें। यह मंत्र सामान्य रूप से जिव्हा क्रोधऔर गति का स्तंभन करता है इस मंत्र को खड़िया अत्र और हल्दी को पीसकर उसकी बत्ती बनाकर वस्त्र पर लिखे।

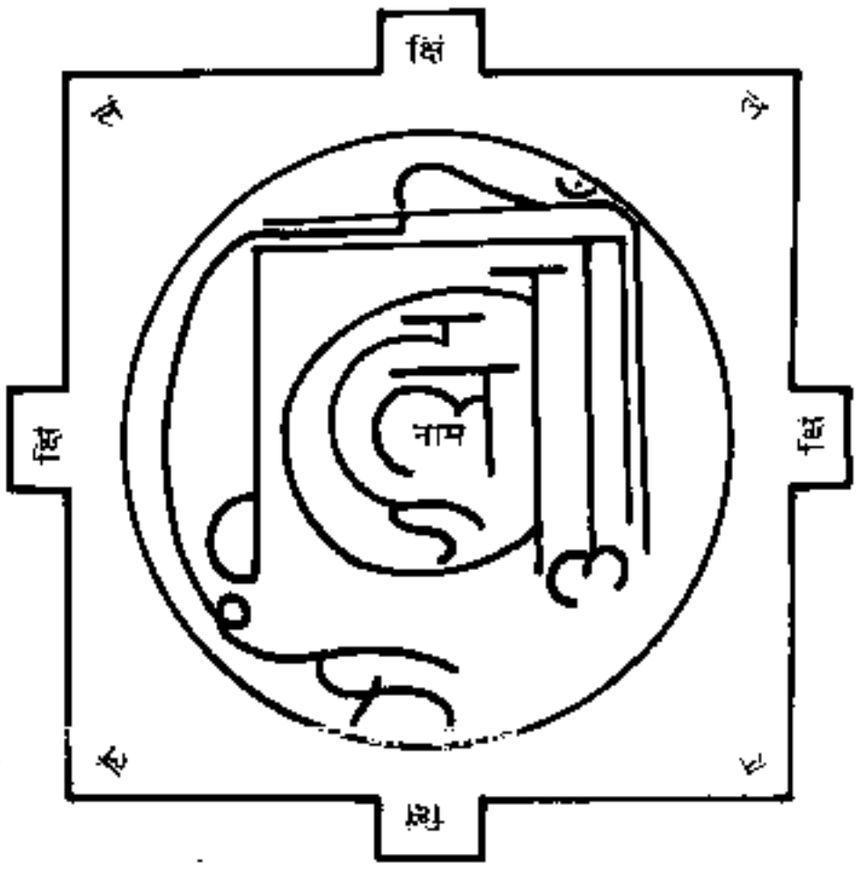
क्षिं
क्षिं
क्षिं
क्षिं
नाम

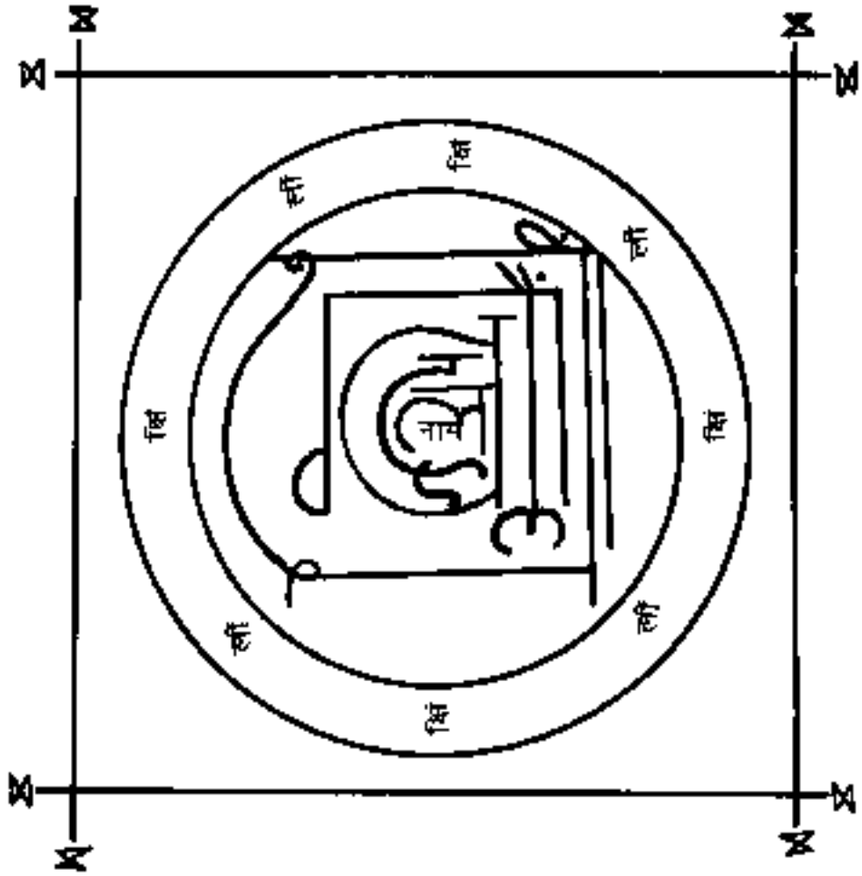
ह्रीं
ह्रीं
ह्रीं
ह्रीं
ह्रीं
ह्रीं
ह्रीं
ह्रीं
नाम

नामालिख्य मनुष्य वक्त्र विवरे तद्वांत सांतावृतं,
लांत ग्लौं त्रिशरीर वेष्टितम तः कोणस्थ लं बीजकं ॥ १८९ ॥

दिक्स्थं क्षीं धरणी तलं च विनयं जिव्हा स्तंभिनी,
होम सन्मंत्रेणार्चित मातनोति गति जिव्हा क्रोधक स्तंभनं ॥ १९० ॥

मनुष्य के कपड़े (वक्त्र) पर नाम को क्रम से रांत (ल) सांत (ह) से वृत (घेर) कर फिर लांत (व) ग्लौं और त्रिशरीर (ह्रीं) और गोल (विवर) रेखा से वेष्टित करें। फिर धरणीतल (पृथ्वी मंडल) बनाकर कोणों में लं बीज तथा दिशाओं में क्षिं लिखें। फिर विनय ॐ जिव्हा स्तंभिनि क्षिं स्वाहा इस मंत्र से पूजने से गति और क्रोध का स्तंभन होता है।

उदन रजनी खटिका सं पिष्प तदीय वर्त्तिका लिखितं,
यंत्र मिदं पाषाणे तत्पिहितं स्वेष्ट सिद्धकरं ॥ १९१ ॥

उदन (चावल) रजनी (हल्दी) खटिका (खडिया) को पीसकर उसकी बत्ती से इस यंत्र को लिखकर पाषाण (पत्थर) से पिहित (ढ़ककर) रखने से अपनी इच्छानुसार सिध्धि होती है।

दिनेन वारेण च नाम रूद्धं लूं झं पुटं ठ स्वर ठांत वेष्टना,
उर्वी पुरं वज्र चतुष्कभिन्नं कोपादि रोधं विदधाति यंत्रं ॥ १९२ ॥

ॐ लूं झं ठं लं स्वाहा ॥

उसी दिन तथा बारव तिथि से नाम को वेष्टित करके, उसके पश्चात उसे लूं और झं के संपुट से घेर कर , फिर ठकार (ठ) से वेष्टित करके, सोलह स्वरों से वेष्टित करे, फिर टांत (डं) से वेष्टित करे, फिर चार वज्रों से बिंधे हुये पृथ्वीमंडल को बनावे तो यह यंत्र क्रोध आदि का स्तंभन करता है।

आक्रांत तिलक मध्या जयति निजा वाम तर्जन्वी,
क्षवथु हिक्कां श्वा स निरोधं स्वागत वाचं हरेनाहतां ॥ १९३ ॥

इस यंत्र को तिल वृक्ष की लकड़ी पर अपनी बायें हाथ की तर्जनी अंगुली से लिखे तो क्ष व (जुखाम कम्प) हिक्का (हिचकी) तथा श्वास रोगों को रोकता है तथा बड़े लोगों से स्वागत के वचन कहलाता है तथा मारण को हरता है।

शाल्यक्षत सितपंकज बीजैरंधः सुसाधितं दुग्धं सघृतं,
भुक्तं क्षपयेत द्वादश दिवसान वुभुक्षार्तिं ॥ १९४ ॥

शालि चावल और सफेद कमल के बीजों के अन्धस (भोजन) को घी सहित दूध का साधन व सेवन करने से बारह दिन तक रतक भूख का कष्ट नहीं होता है।

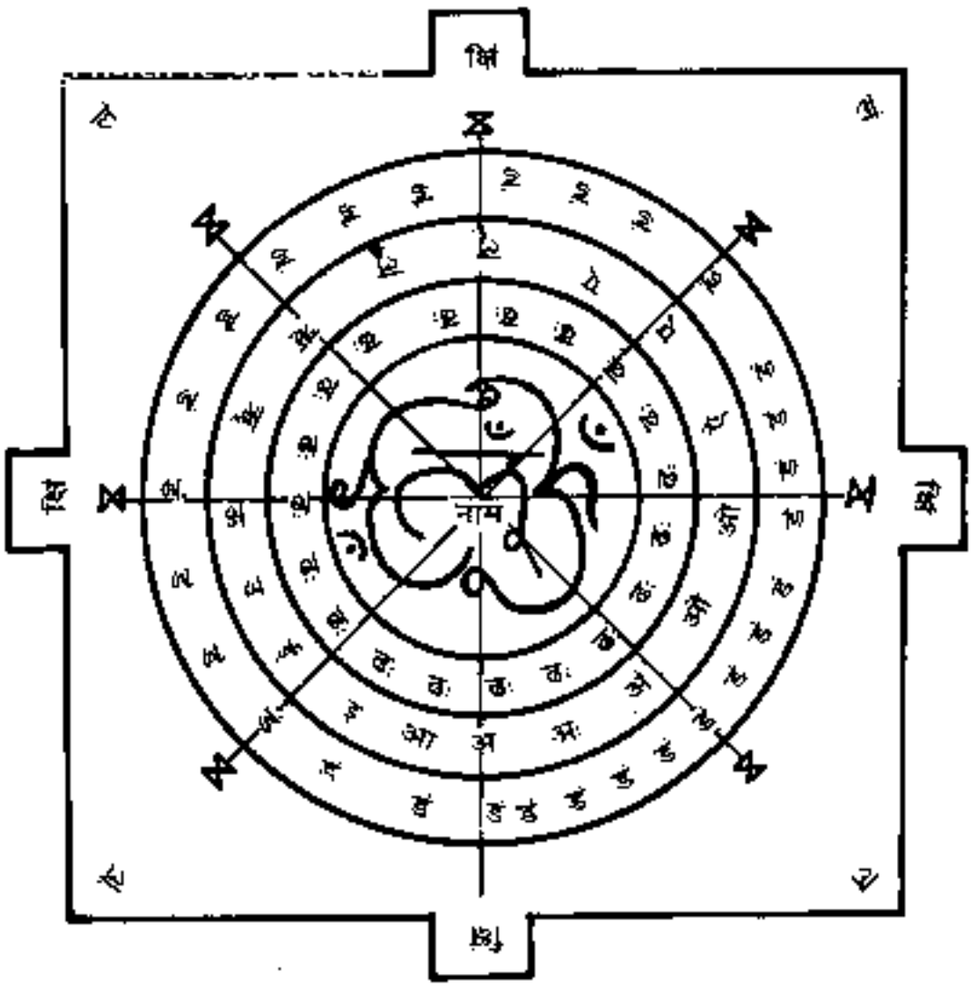

जंबु शमी शिरीषोदंबर तरू बीज पूरजः पूरः,
असितं घृतेन सहितं विनाशयेत् पक्षमशनायां ॥ १९५ ॥

जंबु (जामुन) सिरस उदम्बर गूलर) और बिजौरे के बीजों के पूर (खाने) को घृत के साथ आशित (खाने) से एक पक्ष तक अशनाया (भूख) को नाश करती है।

परिभावितानि बहुशः पशु मूत्रे बीज पूर बीजानि
पीतान्युष्णांभोभिः स्तंभ रागस्य कुर्वंति ॥ १९६ ॥

पशु के मूत्र में बहुत बार भावना दिये हुए बिजोरे के बीजों को गरम जल से पीने से यह स्तंभन का कार्य करता है।

समुद्रशोख बीजानि पलैकं संग्रहद्वयः,
द्विपलं कोकिलाख्यस्य बीजं च परिकीर्तितं ॥ १ ॥

त्रिपंल मर्कटी बीजं माष चूर्णं चतुष्पलं,
त्रिजातकं च यष्टिं च फलं जात्यास्तकीर्तितं ॥ २ ॥

प्रत्यकमष्ट निष्कं च सर्वं सं चूर्णयेततः,
वस्त्रेण गालितं कृत्वां चूर्णं सर्वं समाहरेत् ॥ ३ ॥

तच्चूर्णं नाभि पक्के च नालिकेर फले क्षिपेत्,
तन्मुखं तत्फलेनैव पिद्याय च विचक्षणं ॥ ४ ॥
तत्फलं डोलिका यंत्रे वद्ध्वाक्षीराठके पचेत्,
क्षीरशोषं यदा प्राप्तं तदा पाकः प्रजायते ॥ ५ ॥

स्वांग सीते च संजाते फलांतेः पिष्टिकां हरेत्,
तत्समां शर्क्करा क्षित्वा क्षीरे संमेल्य मर्द्दयेत् ॥ ६ ॥

कृत्वा चाक्ष प्रमाणेन वटिकान् शोषयेत ततः,
शर्क्करांतः प्रपूर्याथ छायायां गोपयेत् सुधी ॥ ७ ॥

वटिकां चैक मादाय क्षीर संलोडय पाययेत्,
कृत्वा सुपानं पश्चातमुहूर्तो परि पारभेत् ॥ ८ ॥

सततं प्रौढ़ कामिन्यां वीर्यं वृद्धिः क्रमाद्भवेत्,
खलितेपि दृढ़ा कारो जायते नात्र संशय ॥ ९ ॥

पंडित एक पल (चार तोले) समुद्र सोख के बीज दो पल कोकिख्यस्य बीज (तालमखाने) परिकीर्तत कहे गये हैं और तीन पल मर्कटी बीज (बानटी= कोंच के बीज) और माष (उड़द का चून) चार पल लेवे त्रिजातकं(दालचीनी तेजपात इलायची) यष्टि(मुलैठी) और जातीफल (जायफल) कीर्तितं (कहे गये हैं) यह एक आठ निष्क (बत्तीस मासा) लेकर इन सबको चूर्ण करके उन सबको कपड़े से छानकर आहर (लेकर) रखे। इस सारे चूर्ण को नारियल के खोपरे केगोलों में छेद करके रखे। चतुराई से खोपरे के गोलों को खोपरे के टुकड़ों से उन छेदों को बन्द करे। उन गोलों को हिंडोला यंत्र के द्वारा आठ सेर दूध में पकावे। जब दूध गाढ़ा होकर सूखने जैसा होवे तब उन गोलों में से उस चूर्ण के पिंड को निकाल ले । उसके बराबर की शक्कर डालकर थोड़ा दूध में मिलाकर अच्छी तरह मथे। उसकी बहेड़ा के फल के बराबर गोलियाँ बनाकर छाया सूक करे, फिर उन पर शक्कर

की चासनी चढ़ाकर सुखालेवे इसमें से एक गोली लेकर दूध से पिलावे। उसको पीने से एक मूहुर्त (४८ मिनट) पीछे रति कार्य प्रारंभ करे। इसे निरन्तर प्रोढ़ा कामिनी का भोग करते हुये भी उसकी क्रम से वीर्य की वृद्धि होती है। वीर्य स्खलित होने पर भी दृढ़ा आकर रहेगा इसमें कोई संदेह नहींहै।

दग्धमं कोल मूलं तु कप्पूरं कुंकुमं निशा,
रोचनं सहदेवीं च समं सर्वं प्रलेपयेत् ॥ १ ॥

विषमुष्टिक तैलेन लिप्त लिंगो ह्योनेन,
वै नरो नारी सहस्त्रैकं गच्छन वीर्यं न मुंचति ॥ २ ॥

जली हुयी अंकोल की जड़, कर्पूर, कुंकुम, हल्दी, गोरोचन, सहदेवी इन सबको बराबर लेकर विषमुष्टिक (कुचले) के तेल के साथ लिंग पर लेप करे तो पुरूष इस लेप से हजार स्त्रियों के पास जाने पर भी वीर्य नहीं छोडता है।

षड बिन्दुद्भव चूर्णः खर मंज़र्य्याः शिफा समायुतयै,
दिवेस करपूल वर्त्या दो वीर्यः शुक्र स्तंभ करोति ॥ ३ ॥

(षड् बिन्दु) की जड का चूर्ण खर मंजरी (आंधी झाड़ा) की जड़ समान भाग लेकर दिवस कर (आकड़ा) तूल (रूई) की बनाई हुई बत्ती का दीपक जलाने से वीर्य का स्तंभन करता है।

तुंडी मूसंली निर्गुंडी त्रिभुवन विजया हस्तिनी,
घृत मधु शर्करामिर्गुटिकाभिः स्तंभनं कुरूते ॥ ४ ॥

तुंडी() मूसली निर्गुंडी त्रिभुवन विजया (भांग) हस्तिनी (इंद्रायण) घृत शहद शक्कर मिलाकर बनाई हुई गोली स्तंभन करती है।

कज्जली कृत सगंध सूतकं तुल्य भाग कनकस्य च बीजं ,
मर्द्दयेत् कनक तैल युतः स्यात् कामिनी जन विधुनन सूतः॥ ५ ॥

अस्य वल्क युगलं स सितंवा सेवितं हरति मेह गदौघे,
वीर्यं पुषिटकरणं कमनीयं द्रावणे निधुबने वनितानां ॥ ६ ॥

शुद्ध गंधक और शुद्धपारद को बराबर लेकर कज्जली बनाकर इसके बराबर शुद्ध धतूरे के बीजों के चूर्ण को मिलाकर धतूरे के तेल के साथ घोटकर बनाई हुई दो गोली को शक्कर सहित सेवन करने से यह कामिनियों के मद को भंजन करता है यह लिंग के सब रोगों को नष्ट करता है वीर्य की अच्छी पुष्टि करताहै तथा स्त्रियों को (निधुवन) संभोग में द्रावण करता है।

सूत हेम भुजंगाभ्रवंगका: कांत तार विपला: समाक्षिका:,
भागवृद्धि मिलिता विमर्दिता धूर्त पत्र विजया सलिलेन ॥ १ ॥

सप्त सप्त चपलामृतवल्ली शाल्मली सुरसजालजतोयै:,
वारिवाहा मधुयष्टिका वरी वानरी भुजंग यष्ट्युदकेन ॥ २ ॥
अर्द्धभागमहिफेनक न्यासन् मासान्मर्द्दयेच्च सुर पुष्प रसेन,
चंदनार्क करहाट पिप्पली श्रावणी कटुरसै: पृथगेव ॥ ३ ॥

कुंकुमैन च ततो विभावयेन्नाभि जाद्रवयुतो विमर्द्दयेत्,
सिद्धिमेति रस राडयं शुभ: कामिनां भर्दविधूनन दक्ष: ॥ ४ ॥

शर्करा मधुयुतो द्विभाषक: स्तंभ कृन्निधुवने वनितानां,
सं सेव्य: सूतेननु रात्रि भोज्यं कुर्वीत पेयं लघुमेव केवलं ॥ ५ ॥

तृतीय यामे रस सेवनं च कृत्वा निशायां प्रहरं व्यतीत्य,
सेवेत कांता कमणीय गात्रां धन स्तनीमुज्वल चारू वस्त्रां ॥ ६ ॥

रतिस्तकां कतर लोल नेत्रा विशद विलोल हारावलिमादधाना,
किं कामेन तु कामिनी मलयजेना वश्यकेना शुकिं किं चंद्रेण परेण ॥७॥

परोपलापज हिना पुंस कोकिलेनाशुकिं किंचान्यै मंधुभि वंसत,
समटै किं दीपनै: सूत राडित्येवं यदि सेव्यते किम परै: कोमापल विद्य प्रदै:
॥ ८ ॥

सहश्र स: संति यदा तरूणयो महालसा पीन पयोधरा ठता:,
तदा रसेन्द्र: परिसेवनीयो विकारकारी भवती है नान्यथा ॥ ९ ॥

सूत(शुद्ध पारा) हेम (सोना भस्म) भुजंग (शीसा भस्म) अभ्र (अभ्रक भस्म) वंग(राग की भस्म) तार (चांदी की भस्म) विपला (चादीमाक्षिक भस्म) माक्षिक (सोना माटवी भस्म) को एक एक भाग बढ़ाकर लेवे। इनको मिलाकर धतूरे के पत्तों के रस में विजया (भांग) के सलिलेन (रसमें) सात सात भावना देकर घोटे ।चपला (पीपल)अमृत वल्लि (गिलोय) शाल्मली (सेंमर की जड़ के रस में) सुरसी (तुलसी के रस में) जलज तोय (कमल के फूल के रस में) वारि वाहा

(नागरमोथा के रस में) मधुयष्टि (मुलेठी के रस में) वरी (सतावरी के रस में) वानरी (कोंच के बीजों के रस में)भुजंगयष्टि (सर्पाक्षि) के उदक (जल) में भी सात सात भावना देवें इसके आधे भाग के बराबर अहि फेन (अमल) डालकर एक माह तक सुरपुष्प(लौंग) के रस में चंदन के कोठे में अकरकरा, पीपल, श्रावणी (मुंडी) कट्टरसै (कायफल) के रस में अलग अलग भावना देकर घोटे। फिर कुंकुम (केशर के रस में) और नाभिज (कस्तूरी) को द्रव करके (पानी से पीसकर) घोटे। इस तरह तैयार किया हुआ यह रसराज श्रेष्ठ है। यह कामिनी के मद को विद्युनन नष्ट करने में दक्ष (समर्थ) है। इस रसराज में से दो मासा भर शक्कर और शहद के साथ मिलाकर चाटने से संभोग में स्त्री रमण करने में स्तंभन करता है । इस रस का सेवन पर रात्रि में थोड़ा सा ही दूध का भोजन करे। रस सेवन करने के पीछे तीसरे पहर के खतम होने पर कांता (स्त्री) का सेवन करे, जो सुंदर वस्त्रों वाली हो मोटे स्तनों वाली हो , सुंदर (कमनीय) गात्र (शरीर) वाली हो और रति को उत्सुक हो, जिसकी आँखें व वाणी दोनों से उत्सुकता (विलोल) प्रगट हो विशद (बहुत सफेद) हार पहने हुए हो ऐसी स्त्री का सेवन करे। यदि इसप्रकार की स्त्री को सेवा मिल जावे तो फिर काम से क्या, स्त्री के चंद्रमा से क्या, अन्य आवश्यकताओं से क्या, ठंड देने वाले चंद्रमा से क्या, पुरुष कोयल से क्या, तथा मधुरूप वसंतऋतु से क्या, अथवा काम को उद्दीपन करने वाले और सेवन कराने वाले साधनों से क्या प्रयोजन है। यदि महान मद के आलस्य से भरी हुई तथा मोटे मोटे स्तनों से व्याप्त सहस्र तरुणी स्त्रियाँ हों तभी रसेंद्र का सेवन करना चाहिये अन्यथा यह विकार करने वाला रस होगा।

जाती फलार्क करहाट लवंग सुंठी
कंकोल केसर कणा हरि चंदनं च,
एतत्समान महिफेन समंहिचाभ्रमत्युग्र
काम जननं नहि बिंदु पातः ॥ १० ॥

जायफल अकरकरहा लोंग सूंठ कंकोल(शीतल मिरच) केशर कणा (पीपल) चंदन सब समान भाग इन सबके बराबर अफीम और सबके बराबर अभ्रक भस्म यह अत्यन्त काम को तेजी से उत्पन्न करता है और वीर्य क्षय नहीं होता है।

वरी विदारी वाराही गोक्षुरी क्षुरीक्षुर यष्टिका,
अश्वगंधाक्षिति सुता माष मो चरसा हृवया ॥ १ ॥

प्रियालमज्जा खर्जूर नालिकेरफलानि च,
वानरी बीज कदली द्राक्षा धात्री तिला समाः ॥ २ ॥

एभिः समांशा विजयातैः समांशा च शर्करा,
कर्ष त्रय मिदं प्रातर्लेह्यं तन्मधुना सह ॥ ३ ॥

तथैव पयसा रात्रौ सप्त रात्रं पिबेन्नरः,
क्लीबोपि वृषतो मेति किमेभिर्बहुभिर्गुणैः ॥ ४ ॥
कंदर्प्प शेखरोप नाम पूज्य पादेन भाषितः,
योग्योयं परम पुंसा वाजीकरण मुत्तमं ॥ ५ ॥

इति कंदर्फ शेखर पाकः

वरी (सतावरी) विदारी कंद वाराहीकंद गोखरू इक्षुर (तालमखाना) क्षुर (गोखरू) यष्टि(मुलैठी) असगंध क्षितिसुता (पीपल) माष (उड़द का चून) मोचरस अश्वय (नाम की औषधियाँ) प्रयाल (चारोली)मज्जा() खर्जूर (छुवारा) नालिकेर (खोपरा) के फल वानरी कौंच के बीज बीजयंद कदली (कच्चा केला सुखाया हुआ) द्राक्षा (मुनक्का) धात्री (आँवला) तिल यह सब समान भाग और इनके बराबर विजया (भांग) और इन सबके बराबर शक्कर लेवे तीन तोला इसमें से प्रातःकाल के समय शहद के साथ चाटे उसीप्रकार इसको रात के समय पय (दू)) के साथ सात रात तक पीवे तो नपुंसक भी वृषभ (बैल) के समान पुष्ट हो जाता है भला इसके बहुत से गुणों का क्या कहना है पूज्य पाद स्वामी ने इसका नाम कंदर्प शेखर पाक कहा है वह पुरुषों के योग्य अत्यंत उत्तम बाजीकरण है।

गंधका भ्रक धतूर गरलानां चतुष्टयं,
तैलेनिः शेषमापाच्यमज गोक्षुर वाजिना ॥ १ ॥
मूत्रैश्चं पूर्ववत पक्वामातुलिंग फले क्षिपेत्,
तद्वारंधनं कृत्वा पुटयेत् स्वल्प मात्रकं ॥ २ ॥

पश्चात् उद्धृत्यतद्रस्म समतैलेन योजयेत्,
सूची मुख प्रमाणेन नागवेल्या समन्वितं ॥ ३ ॥

इदं योज्यं सदा सेव्यं ततशैत्योपचारतः,
स्वरस्य दडवद्भूता स्वदंडम निवारितं ॥ ४ ॥

शुद्ध गंधक, अभ्रक भस्म, धतूरे के बीज और गरल (वत्सनाभ विष शुद्ध किया हुआ) इन चारों को समान भाग में लेकर, तेल में पकाकर, बकरी गाय के खुर व घोड़े के मूत्र में पहले की तरह

पकाकर, मातुलिंग (विजोर) के फल में पंखे विजौरे का मुख उसी से बंद करके, थोड़े से उपलों की अग्नि में पुट देकर, उस भस्म को उसमें से निकाल कर, बराबर के तेल में मिलावे । इसमें से सुई के मुख पर आने लायक थोड़ी मात्रा में नागर बेल के पान में खावे इस योग को सदा सेवन करे । तथा ऊपर शीतल चीजों का प्रयोग करे तो पुरुष का मेहन गधे के समान बड़ा व दंड के समान निवारण होने वाला बन जाता है।

विज्ञातोयं चोर सेनादिकानां संस्तंभार्थः संविधान प्रपंचः,
यो नाशेषो मंत्रिणा तस्य लोके किं किंचिन्नैवा साधनीयं समास्ति ॥ ५ ॥

इसप्रकार जो पुरुष चोर सेना आदि के स्तंभन को विधिपूर्वक जानता है उसके लिये लोक में कुछ भी असाध्य नहीं है।

एतत् क्षुद्र त्रितयम शुभं मंत्रिणोच्चाटनोद्यं,
प्रोक्तं कार्यं त्रिभुवनमिदं रक्षतः सर्वदुःखात् ॥ ६ ॥

धर्मस्योपद्र वमतितरां कोपि जैनस्य,
कुर्वन्नेनं शक्यो विधिभिरपरैः नैव निग्रहीतुं ॥ ७ ॥

यदि मंत्री के द्वारा किये हुवे इस उच्चाटन आदि तीन कर्मक्षुद्र और अशुभ को करते हुए तीन लोक के सब दुःखों से रक्षा करते हुए जैन देवता का तथा धर्म के ऊपर उपद्रव होने से क्रोध बढ़ जावे तो उसको कोई नहीं दबा सकता है।

अथ प्रशांते सतितत् क्षण कृतेस्मिन् उपद्रवे तत्क्षणमेव मेव मंत्री,
तत्पाप शांत्यै विविधानि कुर्य्यात् पुन्यानि कर्म्माणि बहूनि भूयः ॥ ८ ॥

मंत्री इस उपद्रव के शांत होने पर उसी क्षण उसकी शांति के लिए अनेक प्रकार के पुण्य कर्मों को बार बार करे।

इति एकोनविंश समुद्देशः

श्री पार्श्वनाथाय नमः

अथः शांतिं प्रवक्ष्यामि यद्विधानान्नृपस्य च
प्रजादीनां प्रशाम्यंति रोग भारिरिपु ग्रहाः ॥ १ ॥

अब उस शांति विधान का वर्णन किया जाता है जिसके प्रभाव से राजा और प्रजा के रोग भारी शत्रु और ग्रह की शांति होती है।

वक्ष्येऽत्र सर्व शांत्यर्थं सप्तनीरांजनानि च,
ग्रह शांतिं च बंधेन बद्धस्य च विमोक्षणं ॥ २ ॥

इस संबंध में यहाँ सब कार्यों की शांति के वास्ते सात नीरांजन (आरती) ग्रहों की शांति और बंधन से छुड़ाए जाने वाले उपायों का वर्णन किया जाएगा।

अधारभेत साध्यस्य शुभ तारोदयादिषु,
अनुकुलेषु सर्वेषु सर्वशांति क्रियां गुरुः ॥ ३ ॥

गुरु साध्य के उत्तम नक्षत्र आदि के उदय तथा सब ग्रहो के अनुकुल होने पर सर्व शांति की क्रिया को आरंभ करें।

शांति भट्टारक स्नानबलिदान पुरस्सरः,
होम संन्नपन्नं यंत्र धारणं चेति सा मता ॥ ४ ॥

शांतिनाथ भट्टारक (भगवान) का अभिषेक बलिदान होम स्नान कराना और यंत्र धारण करने की क्रिया शांति क्रिया है।

आदौ शांति जिनेन्द्रस्य कारटेन्मंगलोत्तमं,
महाऽभिषेकमाचार्यः महा चरुकं संयुतं ॥ ५ ॥

आचार्य आदि में महान नैवेद्य लिए हुए शांतिनाथ भगवान के उत्तम मंगल वाले महान अभिषेक को कराए।

कल्पयेद्विधि वद्भूमौ शुद्धायां शुभ दारुभिः,
अष्ट हस्त प्रमायाम विस्तारं होम मंडपं ॥ ६ ॥

फिर शुद्ध भूमि में उत्तम लकड़ियों से आठ हाथ लम्बा चौड़ा होम का मंडप विधिपूर्वक बनावाएं।

तस्या द्वारापि चत्वारि कारयन्मकरांकितैः,
तोरणैर्भ्राजमाना निबद्ध चंदन मालिकैः ॥ ७ ॥

उनके मकर के चिन्ह वाले चार द्वार बनाकर उनके ऊपर शोभा देनेवाले चंदन की मालाओं की तोरण बांधे।

सुरभे र्न्नाति वृद्धाया: सवत्साया: सुलक्षणं,
दयत्या कपिल च्छायं निरोगं निर्व्रणं वपुः ॥ ८ ॥

पावनैः पंचभि गव्यैर्मार्जयेद्विजकन्यया,
जडयां स्नात या श्वेत वस्त्रालंकारादी प्रया ॥ ९ ॥

बच्चे वाली अच्छे लक्षणों से युक्त (सुरभि) गाय, जो ज्यादा बूढ़ी नहीं हो, बिना घाव के शरीर वाली हो, निरोगी हो, जो कपिल रंग की हो उस गाय के पवित्र पंच गव्य (घी, दूध, गोबर, और गोमूत्र दही) से उस भूमि को स्नान की हुई सफेद वस्त्रों और अलंकारों से सजी हुई पवित्र द्विज की कन्या से साफ कराए।

ततः सता सरि त्तीर द्वितयो पातया मृदा,
मार्ज्जयेद्वामलूराणां सतानां मृत्स्न तत ॥ १० ॥

फिर उस मंड़प को नदी के किनारे की मिट्टी और (वामलूरी) चींटियों द्वारा बनाई हुई पहाड़ी को मिट्टी से भी साफ कराएं।

दर्भ पूलाग्र संलग्न ज्वल ज्वालावलीभृता,
परितो हय वाहन मंत्र वित्तद्वि शोधयेत ॥ ११ ॥

मंत्री फिर उसको भी दर्भ (कुश) के तिनके के अग्र भाग में लगी हुई अग्नि की लपटों के द्वारा (परितो) चारों तरफ से दुबारा (हय वाहन) घोड़ों का हाँकने की जगह को मिट्टी से शुद्ध करे।

षष्टे षष्टि सहस्त्राणां नागानां चरितां भुवि,
तद्दाह शांतये सिंचेत्तेनात्र ममृताजलिं ॥ १२ ॥

फिर पृथ्वी में चलने वाले छियासठ हजार नागों के दाह को शांत करने के वास्ते अमृतांजली से सिंचन करे।

सुप्रसिद्धसरित तीर्था सुदुपात्तैर्वारिभिः शुभैः,
कपिला गोमये नापि विदध्यात्तस्य मार्जनं ॥ १३ ॥

फिर उसको बड़ी प्रसिद्ध तीर्थ रूप नदी से लाए हुए उत्तम जल और कपिल गाय के गोबर से भी शुद्ध करें।

ततो गंधोदकैः सांद्र चंदना क्षोद में दुरैः,
विधतं मंडपं सिंचेत् शुद्धि मंत्राभि मंत्रितैः ॥ १४ ॥

फिर उस मंडप को शुद्ध मंत्रो से अभिमंत्रित चंदन कूट में दूर (काकोली) आदि सहित गंधोदक से सिंचन करके धोए।

परिभाषा समुदेशे समुदिष्टैन लक्षणात्,
तन्मध्ये कारयेत् कुंडं शांति होमं क्रियोचित ॥ १५ ॥

उसके पश्चात् उसके बीच में परिभाषा परिच्छेद में कहे हुए लक्षणों के अनुसार शांति के होम की क्रिया के योग्य होम कुंड को बनाए।

मंडपे तत्रतं कुंड़ मपरेण प्रकल्पयेत्,
उपर्युपरि पीठानि वृत्तानि त्रीणि मंत्रवित् ॥ १६ ॥

मंडप में उस कुंड से थोड़ी दूर गोल गोल तीन पीठ मंत्री बनवाए।

एक हस्तोर्द्ध हस्तश्च द्वि पादश्च तदुच्छ्रितिः
द्विहस्त सार्द्ध हस्तैक हस्तास्ति द्विस्तृतिः क्रमात् ॥ १७ ॥

उन पीठों की ऊँचाई क्रम से पहले की एक हाथ दूसरे की आधा हाथ और तीसरे की (दोपाद) चौथाई हाथ की हो, उन पीठों की चौड़ाई दो हाथ डेढ़ हाथ और एक हाथ हो।

दधानस्योत्तमांगेन धर्म चक्रं स्फुरद्युतिः,
अर्चा सर्वान्ह यक्षस्य च तत्र कारयेत् सुधीः ॥ १८ ॥

पंडित पुरुष अपने उत्तम अंग अर्थात सिर पर प्रकाशित कांति के धर्म चक्र को धारण करने वाले सर्वान्ह यक्ष का पूजन कराए।

तेषा मादस्य पीठस्य महादिक्षु यथा विधिः,
ताः शुभा स्थापयेन्मंत्री समंतादर्चयेत्ततः ॥ १९ ॥

फिर मंत्री उन पीठों में से पहले पीठ की चारों ओर की दिशाओं में उन उत्तमो की स्थापना करके उनका पूजन करे।

स्रक सिंहेभ वृषां भोज व्योम हंस गरुत्मतां,
आकारैर्लिखितैः स्थाप्याः समुपेताः पताकिकाः ॥ २० ॥

फिर वहाँ पर (स्रक) माला सिंह (इभ) हाथी (वृष) बैल (अंभोज) कमल (व्योम) आकाश हंस गुरुत्मत गरुड़ के आकार युक्त पताकों को स्थापित करें।

सूरिर्द्वितय पीठस्य महादिक्षु पृथक् पृथक्,
बध्नी यादष्ट तत्पीठ प्रार्च्चयेच्च समंतत: ॥ २१ ॥

आचार्य इस पताकों को दूसरे पीठ की आठों दिशाओं में पृथक पृथक बांध कर फिर उसका पूजन करे।

अंत्यस्थो परि पीठस्य कल्पयेत् लोचन प्रियां,
श्रीमद्गंध कुटीं चित्रां सर्व लोकैक मंगलां ॥ २२ ॥

आखिरी ऊपर के पीठ के ऊपर नेत्रों को प्रिय लगने वाले चित्रों से चित्रित सर्वलोक के मंगल स्वरूप श्री गंध कुटी को बनाए।

तस्याः प्रपंचो द्रष्टव्यः सर्वोप्य स्थायिकविधौ,
अत्रत्यति महत्त्वेन नास्माभिरभिधीयते ॥ २३ ॥

अंतस्तस्यां: शुभं मुक्ता मंडपं पुष्प मंडपं,
चंद्रोपकं वा वधीयात् नेत्रैः कांत विलोभनं ॥ २४ ॥

उसका वर्णन सर्वोप स्थायिका की विधि में देखना चाहिए , यहां विस्तार के भय से नहीं कहा गया है, उसके अंदर चंद्रमा के समान सुन्दर नेत्रो को लुभाने वाले मोतियों के मंडप और फूलों के उत्तम मंडप को बांधे।

पाराद्धर्यं तस्य पीठस्य मूर्द्धिन्नं केशरिविष्टरं,
स्थापयेच्चामरैः छत्रैर शोक नाभिशोभितं ॥ २५ ॥

उस पीठ के ऊपर (केशरि) सिंह के आकार वाले आसन तथा अत्यंत शोभित, चमर, छत्र और अशोक की बादरवार की स्थापना करे।

घंटिका सुमनो दाम मुक्तामालाफलोत्करैः,
अन्यैश्च मंगल द्रव्यैर्मंडप तदविभूषयेत ॥ २६ ॥

फिर उस मंडप को घंटियों फूलों की मालाओं और मोतियों की मालाओं फूलों के समूह और दूसरे भी मंगल द्रव्यों से सजाएं।

प्रलंब मान लंबूष भूषितं क्षौमनिर्मितं,
नवं वितानं वध्नीयात होम कुंडस्य चोपरि ॥ २७ ॥

तस्मिश्च योजयेन्मंत्री सहे पिपलपल्लवान्
समग्राग्रै: शुभैर्दर्भै र्द्वारि चंदन मालिकां ॥ २८ ॥

फिर होम कुंड और उसके ऊपर लटकते हुए लबुंष (वन्दनवार) से शोभित रेशम के बने हुए नए चंदोए बांधे। मंत्री उसके द्वार में पीपल के पत्तों और उत्तम दर्भ और चंदन की मालाओं को लगाए।

सिंहे भाब्जांक चक्र स्रक तार्क्ष्य हंसोक्ष केकितान्,
विभ्राणान प्र ति रुपाणि लिखितानि विधान वित् ॥ २९ ॥

पूर्वादिशु महादिक्षु ध्वजान दश पृथक् पृथक्,
होम कुंडस्य वधीयान्नव वीणादि कल्पितान् ॥ ३० ॥

फिर विधान को जानने वाला उसको सिंह हाथी (अब्ज) कमल चक्र स्रक (बाण) तार्क्ष्य (गरुड़) हंस बैल मयूर और भौंरों के चित्र लिखे।
होम कुंड के पूर्व आदि दसो दिशाओं में नये बांस आदि से बनी हुई पृथक पृथक दस ध्वजाओं को बनाए।

हुतस्य होम कुंड़स्य पूर्वस्यां दिशि पूर्ववत्,
संपादयतु भर्तृक्षैराचार्यै: स्नान मंडपं ॥ ३१ ॥

स्वामी की रक्षा करने वाला आचार्य हवन कुंड के पूर्व की तरफ पहले के समान स्नान करने का मंड़प बनवाए।

मंड़पस्यास्य चत्वारि द्वाराणि परिकल्पयेत्,
तासु संस्थापयेद्वार्षुश्रुमान मकर तोरणान् ॥ ३२ ॥

उत्तम मंड़प के चार दरवाजे बनाए उन चारों द्वारों में मकर की आकृति वाले उत्तम तोरण लगाए।

तन्मध्य मंदराकारं चतुर्मेखलमुज्वलं,
वृतं निर्मापयेत्पीठं विशुद्धैर्मृतिकादिभि: ॥ ३३ ॥

उसके बीच में मंदराचल पर्वत के आकार वाले चार मेखला युक्त गोल पीठ को शुद्ध मिट्टी से बनाए।

उत्सेधो मेखलानां स्यात वद्वयोकार्द्धाधि करपौक्रमात्,
व्याससार्द्ध करौ हस्तौ सार्द्ध हस्त: करौ भवेत् ॥ ३४ ॥

मेखलाओं की ऊचाई क्रम से दो एक आधी अंघ्रि और एक हाथ हो उसका व्यास भी क्रम से अढ़ाई हाथ दो हाथ और डेढ़ हाथ हो।

तस्योपरिष्टाद बद्नीयात् चंद्रोपकमनीदशं,
चित्रैरनर्घ्यैः क्षौमाद्यैः व्यानसैरुपकल्पितं ॥ ३५ ॥

उसके ऊपर चंद्रमा के समान निरुपम विचित्र प्रकार के रेशम आदि के बने हुए चंदोव हो।

बद्नीया तत्र दिक्पाल प्रतिबिबकरं वितान केतून,
ध्वजांश्च पूर्वोक्ताण् तथा सिंहादि लांछितान् ॥ ३६ ॥

वहां दिक्पालों के प्रति बिंब से युक्त केतुओं और ध्वजाओं को पूर्वोक्त सिंह आदि के चिन्हों से युक्त करके बंधाएं।

वस्त्रै र्विचित्रैर म्लानैः मृणालै श्चामरैः सितैः
विविधै र्धान्यक शिफैर्दुर्वा दाम्ना पवित्रया ॥ ३७ ॥

विचित्राभिः पुष्प मालाभिः मुक्ता दाम भिरुज्वलैः,
रम्याकारैः फलैः कम्रैराम्रात कोशादिभिः ॥ ३८ ॥

फिर उज्वल और विचित्र वस्त्रों, कमलों, सफेद चमरों और अनेक प्रकार की धान्यों की जटाओं और डाभ की मालाओं से पवित्र विचित्र पुष्प मालाओं उज्ज्वल मोती की मालाओं दाम (मालाओं) रम्याकार (दिल लुभाने वाले) फलों (कम्र) सुंदर (आम्रात) कही हुई हो (कोशादिभि) कविताओं में -

एवं प्रकारैरन्यैश्च वस्तुभिः शुभ मंगलैः मंडपं,
मंडयेन्मंत्री नेत्रानंदन पंडितैः ॥ ३९ ॥

और इस प्रकार की अन्य नेत्रो को आनंद देने वाली उत्तम मंगल की वस्तुओं से मंत्री मंड़प को सजाए।

अभिषेक विधि

प्रातर्मंत्री विधा शुद्धं विधाय सकली क्रियां,
स्नानोपकरणो पेतं प्रतिशेत्स्नान मंड़पं ॥ ४० ॥

मंत्री प्रातःकाल के समय तीन प्रकार की शुद्धि तथा सकली करण क्रिया करके स्नान की आवश्यक वस्तुओं सहित स्नान मंडप में प्रवेश करे।

स्थित्वा मंदर पीठाग्रे पश्चिमाभिमुखो भवेत्,
सिद्धभक्तिं ततः कुर्य्यादिद्ध श्रद्धा विशुद्ध धीः ॥ ४१ ॥

फिर वह मंदर की पीठ के आगे पश्चिम की तरफ मुँह किए हुए खड़ा होकर पूर्ण श्रद्धा से पवित्र बुद्धि वाला बनकर सिद्ध भगवान की भक्ति करे।

अभिषेकक्रियोक्तेन विधाने नैव देशिकः,
भूमि संस्थौ धनादीनि कुर्य्यात् त्रीणि विशेषतः ॥ ४२ ॥

फिर अभिषेक क्रिया के विधान से भूमि संशोधन आदि तीनों क्रियाओं को विशेष रुप से करे।

तस्य मंदर पीठस्य मूर्द्धिन्यं स्थापयेत् ततः,
श्री शांतिनाथंमर्हंतं सर्व शांति विधाविधायकं ॥ ४३ ॥

फिर उस मंदर की पीठ पर सब शांति को करनेवाले अर्हंत भगवान श्री शांतिनाथजी की स्थापना करे।

तस्याग्रे स्थापयेत् वाणी यक्षं दक्षिण भागतः,
यक्षी च वामतो देव्यं सरसीरुह विष्टरे ॥ ४४ ॥

उसके आगे वाणी (शास्त्र) दाहिनी तरफ यक्ष को और बाँई तरफ कमल के आसन पर यक्षी की स्थापना करे।

नदी कूप तटाकादि शुद्ध देश भुवांभसा,
नालिकेरोद केन क्षुरसेनाम्र रसेन वा ॥ ४५ ॥

नदी, कूएँ, तालाब आदि शुद्ध स्थान का जल नारियल का जल, गन्ने का रस अथवा आम का रस।

सर्पिषा पयसा दध्नाक्षीर वृक्ष त्वगंबुना,
गंधाकृष्टा लिना गंध सलिलेन च पूरितैः ॥ ४६ ॥

घृत दूध, दही, क्षीर वृक्ष के जल सुगंध से खिंचे हुए भौंरे वाले सुगंधित जल से भरे हुए।

अंतन्निहितरै रत्न गंध चूर्ण प्रसूनकैः
मुखभाग विनिक्षिप्त बीजपूरफलादिभिः ॥ ४७ ॥

सूत्रेण श्वेत वर्णेन विशुद्धेनाभि वेष्टितैः,
शाल्यक्षत परिष्कृत्त सांद्र चंदन चर्च्चितैः ॥ ४८ ॥

अंदर रत्न तथा पुष्पों के सुगंधित चूर्ण से भरे हुए मुख के भाग पर रखे हुए बीजपूर (बिजोरे) आदि से युक्त सफेद रंग के शुद्ध धागे से वेष्टित शालि चावलों से सने हुए चंदन से पुते हुए।

गंधाकृष्ट भ्रमद्भंग पुष्प मालाविभूषितैः,
गंधैन नूतन सद्वस्त्र वि हिताच्छादनकृितैः ॥ ४९ ॥

शुद्धायां प्रविकीर्णेषु वसुधायां यथा विधिः,
शालिषु स्थापितैः सम्यक न्यस्त स्वास्तिक शालिष ॥ ५० ॥

सुगंध से जिससे भौंरे खिंच रहे हैं ऐसी भौंरों वाली पुष्प मालाओं से सजे हुए सुगंधित तथा नये उत्तम वस्त्रों से ढ़के हुए शुद्ध पृथ्वी पर रखे हुए शालि में विधि पूर्वक बने हुए स्वस्तिक के ऊपर अच्छी तरह रखे हुए।

सौवैर्ण राजतै स्ताम्रैः मृन्मयैर्वा सलक्षणैः,
अष्टोत्तरेण कलशैः सहस्त्रेण शतेन वा ॥ ५१ ॥

शांति भट्टारकं यक्षं यक्षीं वाग्दे वता मृषिं,
पूर्ववद् यजनिः शेष जगत शांति विधायिनः ॥ ५२ ॥

सोना, चांदी, तांबे या मिट्टी के सब लक्षणों वाले एक हजार आठ या एक सो आठ कलशों से शांति के करने वाले भगवान शांतिनाथ जी और यक्ष यक्षी या देवी सरस्वती (जिनवाणी) और ऋषि (मुनिराज) का पूर्व के समान अभिषेक करे।

तेतागंध कुटी मध्य स्थापिते सिंह विष्टरे,
तत्र शाल्यक्षत न्यस्त श्री वर्णं स्थापयेज्जिनं ॥ ५३ ॥

फिर गंध कुटि के बीच में सिंहासन के ऊपर श्री अक्षर शालि अक्षत के पुंज (ढेर) सज्ञ कर जिनेन्द्र देव की स्थापना करें।

स्ताश्च सं स्थापयेद्भक्त्या यक्षं यक्षीं सरस्वती,
विधिना पूर्वयुक्तेन मंत्री भगवतो तिके ॥ ५४ ॥

इसके पश्चात मंत्री भगवान के समीप पूर्वोक्त विधि से भक्ति पूर्वक यक्ष यक्षी और सरस्वती की स्थापना करे।

सलिलैः कलिल ध्वंसैश्चंदनै घ्राण नंदनैः,
अखंडैस्तंदुलैः शुभ्रैः सुमनोभिः सुगंधिभिः ॥ ५५ ॥

फिर पापो को नष्ट करने वाले जल भाव को प्रसन्न करने वाली गंध (चंदन) उज्ज्वल बिना टूटे हुए चावल और सुगंधित पुष्पों।

उद्गंधिभिर्वरायोभि र्दीपिकाभिः सुदीप्तिभिः,
धूपै र्निधूपितां होभि फलैः सन्मार्ग संफलैः ॥ ५६ ॥

ऊपर की गंध निकालते हुए नैवेद्य भली प्रकार जलाए हुए दीपक पापों को जलाने वाली धूप और अच्छे मार्ग रुप सफल करने वाले फूलों

भृंगार मुकुट छत्र पालिका ध्वज वासरैः घंटा,
पंच महा शब्द कलश व्यंजनांचलैः ॥ ५७ ॥

झारी (भृंगार) दर्पण (मुकुट) छत्र पालकी (पालिका) ध्वजा वस्त्र (वासर) बड़ा शब्द करने वाले पांच घंटों व्यंजनों से भरे हुए कलशों (अंचल)

सद्गंधं चूर्णैर्मणिभिः स्वर्ण मौक्तिकदामभिः,
वेणूवेणादि वादित्रै गीतैर्नृत्यैश्च मंगलैः ॥ ५८ ॥

अच्छी गंध वाले चूर्ण, मणियों, सोने और मोतियों की मालाओं, बांसुरी बीणा तथा बाजों तथा नृत्य गीत आदि मंगलों से।

भगवंतं समभ्यर्च्य शांति भट्टारकं ततः,
तत्पादाब्जू रुहो पांते शांति धारां निपातयेत् ॥ ५९ ॥

भगवान श्री शांतिनाथजी भट्टारक का पूजन करे फिर उनके चरण कमलों में शांति धारा देवे।

ततः शांति जिनेन्द्रं तं मूर्द्धन्यस्तकरः स्तुयात्:
मंत्री शांत्यष्टकाख्येन मंत्रेणानंद निर्भरः ॥ ६० ॥

इसके पश्चात् मंत्री मस्तक पर हाथों को रखकर आनंद से भरा हुआ होकर शांत्यष्टक नाम के स्तोत्र से उन भगवान शांतिनाथजी की स्तुति करे।

शांति जिनं शशि निर्मल वक्त्रं शील गुणव्रत संयम पात्रं
अष्ट शतार्चित लक्षण गात्रं नौमि जिनोत्तम संभुज नेत्रं ॥ ६१ ॥

श्री शांतिनाथ जी जिनेश्वर का मुख कमल चन्द्रमा के समान निर्मल है , वे प्रभु शील गुण व्रत तथा संयम के पात्र हैं अर्थात् उनमें गुण पूर्णतया निवास करते हैं। प्रभु की देह में एक सो आठ शुभ लक्षण है; प्रभु के नेत्र कमल समान सुंदर है- ऐसे श्री शांतिनाथ जी की मैं स्तुति करता हूँ।

पंचमप्सित चक्र धराणां पूजितमिदं नरेन्द्र गणेश्च
शांति करंगण शांतिभीप्सु षोडश तीर्थंकरं प्रणमामि : ॥ ६२ ॥

भगवान शांतिनाथ पाँचवें चक्र व्रती में उनकी इन्द्र समूह और बत्तीस हजार मुकुट बद्ध राजा पूजन करते थे, चतुर्विध गणों की शांति चाहने वाला मैं शांति करने वाले सोलहवें शांति जिनेश्वर की वंदना करता हूँ।

दिव्य तरू: सुरपुष्प सुवृष्टि र्दुदुभिरासन योजनघोषो,
आतपवारण चामर युग्मे यस्य विभाति च मंडल तेजः ॥ ६३ ॥

तं जगदर्चित शांति जिनेंद्रं शांतिकरं शिरसा प्रणामामि ,
सर्व गणाय तु यच्छतु शांति मह्य मरं पठते परमां च ॥ ६४ ॥

अशोक वृक्ष देव कृत पुष्प वर्षा दुन्दुभि आदि बाजों की ध्वनि सिंहासन एक योजन तक दिव्य ध्वनि का फैलना तीन छत्र दो चामरेंद्रों से प्रभु पर ढुरे जाने वाले दो चामर तथा भामंडल ऐसे आठ प्रतिहार्य जिनके विशेषरूप से शोभायमान हो रहे हैं- उन त्रैलोक्य पूजित शांतिनाथ जिनेश्वर को मैं मस्तक नम्र करके नमस्कार करता हूँ। शांति नाथ जी संघ को तथा स्तुति करने वाले मुझे भी मोक्षरूपी शांति प्रदान करे-

सं पूज्यकानां प्रति पालकानां यतीन्द्र सामान्य तपोधनानां,
देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञः करोत् शांति भगवान जिनेन्द्रः॥ ६५ ॥

पूजा करने वालेऔर पूजन करन वाले सेवा भक्ति करने वाले आचार्यादि. गणधर सामान्य मुनि मनुष्य आदि सभी के तथा देश राष्ट्र नगर वासी आदि सभी जीवों के राजा के सभी उपद्रवों से शांति करो हे जिनेन्द्र देवशांति करो।

यैर्भ्यर्चिता मुकुट कुंडल हार रत्नै शक्रादिभिः सुरवरैः स्तुत पादपद्मा,
तेमे जिनाः प्रवर वंश जगत्प्रदीपास्तीर्थं करास्सत शांतिकराः भवंतु ॥ ६६ ॥

जो तीर्थंकर पूजने योग्य है और जिनकी इंद्र मुकुट कुंडल हार और अनेक रत्नजड़ित सोलह आभरण सहित हैं अर्थात् वह तीर्थंकर इंद्रादि व देव समूह से स्तुतिवंत है वे समस्त तीर्थंकर मेरे भगवान जो श्रेष्ठ वंश में उत्पन्न हुए है और जो समस्त पदार्थों को दिखाने वाले चिराग के समान है; वह चौबीसों तीर्थंकर हमारे शाश्वत कल्याण करने वाले हों।

श्री सौभाग्यं परं परादय परं पुण्यं पवित्रं परं,
धामानंतरु जाजरा पहरणं भव्य प्रजानां सदा ॥ ६७ ॥

त्रैलोकेद्रं तिरीट कोटि विल स द्रत्न प्रभा पाटलं,
शांतीशश्चरण द्वदय दिशतु नः सन्मगलं मंगलं ॥ ६८ ॥

राज्ञश्चामुष्य वृद्धिं रणभुवि विजयं शत्रु नाशं च कुर्यात्,
यद्भद्रपाल नाम्यं वहु विद्यम सकृच्चिंतित चेष्टितं वा, ॥ ६९ ॥

तत्तत्वं वः समस्तं मुनि गण जप होमार्चना धाम योग
स्वाध्यायादिं विधन्या क्षमयति च महा व्याधिभितिं च सर्वा: ॥ ७० ॥

श्री शांतिनाथ स्वामी लक्ष्मी सौभाग्य के देने वाले हैं श्रेष्ठ हैं दूसरों का श्रेष्ठ उपकार करने वाले हैं पुण्य को बढ़ाने वाले हैं बहुत ही श्रेष्ठ हैं पवित्र स्थान है भव्य प्रजाजनों की सर्वदा अनंत रोग वृद्धावस्था आदि को हरण करने वाले हैं, तीनों लोक के स्वामी हैं और करोडों सूर्य और रत्नों जैसी गुलाबी प्रभा वाले हैं शांतिनाथ स्वामी के चरम युगल सत्य मंगल है पापी को गलाने वाले और मंगल को लाने वाले हैं। राजा की आयु बढ़ाने वाले है युद्ध में विजय दिलाने वाले है और शत्रुता को नष्ट करने वाले है जो जो भूपाल स्वामी बहुत तरह की चिन्ता करते हैं व इच्छा करते हैं वह देते हैं समस्त मुनि गण, श्रावक गण, जाप पूजन व इच्छा होम आदि के योग्य तथा स्वाध्याय आदि करते रहे उनकी महा व्याधिया सर्वप्रकार के भय नष्ट होते रहेंगे तथा पाप नष्ट होते रहेंगे।

ग्रथान्तरे

क्षेमं सर्व प्रजानां प्रभवतु बलवान्धार्मिको भूमिपालः
काले काले च सम्यक वर्षतु च मघवान्व्याधयो यान्तु नाशम् ॥ ७१ ॥

दुर्भिक्षं चौर मारी क्षणमपि जगतां मास्म भूजीव लोके,
जैनेन्द्रं धर्म चक्रं प्रभवतु सततं सर्व सौख्य प्रदाभि ॥ ७२ ॥

सर्व प्रजा का कल्याण हो राजा शक्ति शाली और धार्मिक हो समय समय पर वृष्टि हो सब रोगों का विनाश विश्व में दुर्भिक्ष न पड़े चोर और भारी रोग का दर्शन भी किसी को न होवे त्रैलोक्य में अनन्त सुख को देने वाले जिनेन्द्र प्रति पादित उत्तम क्षमादि दश धर्मो का समूह अखण्ड रीति से सर्वत्र प्रसार को प्राप्त हो।

प्रध्वस्त धाति कर्माण केवल ज्ञान भास्कराः,
कुर्वन्तु जगतः शांति वृषमाद्याजिनेश्वराः ॥ ७३ ॥

जिन्होंने ज्ञाना वरणादि चार धाति कर्मों का नाश किया है अज्ञान और संशय हटाने के लिये केवल ज्ञान सूर्य के समान तेजस्वी है ऐसे वृषभादि जिनेश्वर तीन लोक को शांति प्रदान करे।

शांत्यष्टकेन सं स्तुत्य शांतिभट्टारकं जिनं,
अनंतरं च पुण्याह मंत्रं शांति करं पठेत ॥ ७४ ॥

इस प्रकार श्री शांतिनाथ जी भट्टारक की शांत्यष्टक से स्तुति करके इसके पश्चात शांति करने वाले पुण्याह मंत्र को पढ़े।

ॐ पुण्याहं पुण्याहं प्रयंताम प्रयंताम भगवंतो हंतः सर्वज्ञाः सर्व दर्शिनः त्रिलोकेशास्त्रिलोक प्रद्योतन कराः- ॐ वृषभा जित संभवाभि नंदन सुमति पद्म प्रभु सुपार्श्व चंद्रप्रभु पुष्पदंत शीलश्रेयांस वासुपूज्य विमलानंत धर्मशांति कुंथुवर मल्लि मुनि सुव्रत नमि नेमि पार्श्व श्री वर्द्धमानाः शांति करा सकल कर्म रिपु विजय कांतार दुर्गोविष मे रक्षन्तु नो जिनेन्द्राः सर्व विदश्च श्री ह्री धृति द्युति कीर्ति बुद्धि सरस्वती क्षांति श्रांति मेधा विन्य श्राद्य लेख्य मंत्र साधन चूर्णप्रयोग प्रस्थान गमनसिद्धि साधनाद्य अप्रतिहत कीर्तयो भवंतु विद्या देवता नित्यमर्ह सिद्धाचार्यो पाध्याय साधवश्चातुर्वर्णाः संघ सहिता आदित्य सोमांगारक बुध वृहस्पति शुक्र शनि राहु केतु नवग्रहाश्चनः प्रीयंतां प्रीयतां तिथिकरण मुहूर्त लग्न देवता वास्तु देवता इह चान्ये च ग्राम नगरादि देवता स्ते सर्वे गुरू भक्ता अक्षीण कोश कोष्टागारा भवेयु र्हनि तपो नित्य मेव मातृ पितृ भ्रातृ स्वसृदुहित् पुत्र पौत्र मित्र स्वजन संबंधी बंधु वर्ग सहितस्य धन धान्यैश्वर्य द्युति वलयश स्कीर्ति वर्द्धनाय सामोद प्रमोदोत्स ततः शांति भवतु पुष्टि भवतु काम मंगल्योत्सवा संतु शाम्यतुं पापानि शाम्यंतु धोराणि पुण्यं वर्द्धतां धर्मो वर्द्धतां श्द्यायुर्वर्द्धतां कुलं गात्रं चाभि वर्द्धतां स्वस्ति भद्रं चास्तुनः हतास्ते परि पंथिनः शात्रवो निधनं यांतु निः प्रति धमस्तुनः शिवमतुलमस्तु सिद्धाः सिद्धि प्रयच्छंतु न स्वाहाः ॥

पुण्याह मंत्रः

जिन स्नानांवुभि सर्व शांति मंत्राभि मंत्रितैः
सिंचेदु परिसाध्यस्य प्रसन्न हृदयो गुरूः ॥ ७४ ॥

अन्त में गुरु हृदय से प्रसन्न होकर जिनेन्द्र भगवान के स्नान के जल को अर्थात् गंधोदक को सर्व शांति मंत्रो से अभिमंत्रित करके उसे साध्य के ऊपर डाले।

सिंचेच्चोपरि तैरेव पुर ग्राम निवासिनां नृणां,
गजानामश्वानां महिषाणां गवामपि ॥ ७५ ॥

फिर उस गंधोदक को नगर और गाँव के निवासियों,राजाओं, हाथियों भैंसों और गायों के ऊपर भी छिड़के ।

अजोष्ट्र विखरादीना मन्येषां प्राणिनामपि,
उपरिष्टाज्जिन स्नान जलैस्तै सेक माचरेत् ॥ ७६ ॥

बकरे ऊँट आवि (भेड़) गधे आदि तथा अन्य प्राणियों के ऊपर भी जिनेन्द्र भगवान के स्नान के जल को डाले।

पश्चात् सितेन वस्त्रेण सितया पुष्पमालया,
सितेन चोत्त रीयेण भूषितं दयतो वपुः ॥ ७७ ॥

इसके पश्चात् सफेद वस्त्र और सफेद फलों की माला तथा सफेद चादर से शोभित शरीर को धारण करते हुए।

बलि की विधि

चर्चित स्याक्षतो पेते मलयोद्भव कर्दमैः
ब्रह्म सूत्रं दधानस्य मुक्ता फलमयं शुभं ॥ ७८ ॥

विचित्र रत्न निर्माण सर्वाभरण धारिणः,
सर्वलक्षण युक्तस्य सम्यग्दृष्टे र्भवपुसः ॥ ७९ ॥

घिसे हुए चंदन की कर्द (कीचड) से पुते हुए अक्षत लिये हुए और उत्तम मोतियों से युक्त ब्रह्म सूत्र (यज्ञोपवीत) को धारण किये हुए और विचित्र रत्नों के बने हुए सब आभूषणों को धारण किये हुए और सब लक्षमों से युक्त उत्तम रूप वाले अच्छे शरीर वाले किसी भारी सम्यगदृष्टि युक्त

कस्य चि च्चाढ़ रूपस्य पुंसः सद्गात्र धारिणः
सर्वान्ह यक्षं सोशीर्षं मूर्द्धन्या रोपयेत्ततः ॥ ८० ॥

पुरुष के सिर पर सर्वान्ह यक्ष को आरोपित कर देवे (स्थापित करे)

तत्सनाथोवि निर्गच्छे बब्दलि दानाय मंत्रवित्
छत्र चामर सत्केतु शंख भेर्यादि संपदां ॥ ८१ ॥

फिर मंत्री सनाथ हुवे के समान बलि देने के लिए निकले छत्र चमर ध्वजा शंख और भेरी (नगाड़े) आदि की संपदा के सहित

चतुष्प थेषु ग्रामस्य यतनस्य पुरस्य च,
राजद्वारे महाद्वार्षु देवता यतनेषु च ॥ ८२ ॥

गाँव वतन (मुख्य गाँव) और नगर के चौराहे राजद्वार बड़े द्वारों और देवताओं के मंदिर में

स्थंदेर माणां स्थानेषु तुरंगाणां च धामसु,
बहु सेवेषु तीर्थेषु वरतां सरसामपि ॥ ८३ ॥

चरूणां पंच वर्णेन गंध पुष्पाक्षतैरपि,
यथा विधि वलिं दद्यात् जल धारा पुरसरं ॥ ८४ ॥

घूमने वालों के स्थानों में घोड़ों के घरों में बहुत पुरूषों से सेवित तीर्थों में चलने वाली तालाबों में पांच वर्ण के नैवेद्य गंध (चंदन) पुष्प और अक्षत स विधि पूर्वक जल धारा सहित बलि देवे।

अनुष्ठितो विधिर्यो यं पूर्वान्हे भिष वादिक:
मध्यान्हे च प्रदोषे च तं तथैव समाचरेत् ॥ ८५ ॥

जो यह अभिषेक आदि की विधि प्रातःकाल में की है उसको दोपहर और प्रदोष (रात्री) के समय में भी उसी प्रकार करे।

अथार्द्ध रात्रे संप्राप्तं मंत्रि शांति क्रियोचितैः
प्रारभेत शुभो दंक्ष शांति होम क्रियांमिमां ॥ ८६ ॥

इसके पश्चात् मंत्री आधी रात के आने पर शांति की क्रियायों के होम की योज्य उस उत्तम जल वाली शांति हों की क्रियाओं को आरंभ करे।

संमृष्टं शुद्ध गंधाभः सेकेन सुरभि कृतं,
आलंवि सुमनो दाम शोर भा कृष्ट षट्पदं ॥ ८७ ॥

साफ किये हुए शुद्ध सुगंधित जल के छिड़कने से सुगंधित बनाये हुए लटकने वाली फूलों वाली फूलों की मालाओं की सुगंधि से खिंचे हुए भ्रमरों से युक्त (अलि) भ्रमर षटपद (भ्रमर) को कहतेहैं।

ज्वलत् प्रदापको देशं दूरापास्त तमस्ततिं,
गुरूणा गुरु धुपेन वासिता तरं दिग् मुखं ॥ ८८ ॥

जलते हुवे दीपक से दूर हुए अंधकार के समूह वाले भारी अगर की धूप से सुगंधित दिशाओं वाले।

भव्यैः पठद्भिः सूत्राणिध्यायद्भि रधि देवताः,
शांति कृतिं मंत्राणि प्रजपद्भिः रधिष्ठितं ॥ ८९ ॥

अर्चना द्रव्य संपूर्णं भगवत्पीठि कांतिकां,
होम कुंड समीपस्थं होम साधन संपदं ॥ ९० ॥

सूत्रों को पढ़ाने वाले, देवताओं का ध्यान करने वाले और शांति कारक मंत्रों को जपने वाले भव्य, पुरुषों से युक्त भगवान की पीठ के समीप सब पूजन के द्रव्यों से युक्त तथा होम कुंड के समीप होम के साधनों से युक्त

प्रविशेद होम गेहं तै साध्येन सह देशिकः,
स्नातेन स्वेत वस्त्र स्रक भूषा लेपन शोभितं ॥ ९० ॥

हवन शाला में स्नान किये हुए श्वेत वस्त्र माला आभूषण और लेप से शोभित साध्य के सहित (देशिक) गुरु प्रवेश करे-

तत्र गंध कुटी मध्ये यक्ष यक्षादिभिः सह,
सूरिः प्रदक्षिणी कृत्य स्तुत्वां च प्रणमेज्जिनं ॥ ९१ ॥

सूरि (आचार्य) वहाँ पर गंध कुटी के बीच में प्रदक्षिणा तथा स्तुति करके यक्ष यक्षिणियों सहित भगवान को नमस्कार करे।

अग्रे च भगवतः स्थित्वा प्रसन्ने नां तरात्मनः
विदधीत क्रियास्सर्वा सकली करणादिका ॥ ९२ ॥

उपांतं भातं विंदुभ्यां बीजाक्षर मुदत्ततः
आसनं मंत्रं विन्मत्रैः देवताया: प्रकल्पयेत् ॥ ९३ ॥

फिर भगवान के सामने प्रसन्न मन से बैठकर सब सकली करण आदि क्रियाओं को करे मंत्री समीप में ही देवता के (भान्त) म और विन्दु (हं) मकार अनुस्वार सहित ७ मं) बीजाक्षरों रूपी मंत्रो से आसन देवे (उपान्त =पास में)

न्यस्येत स्व स्था सनं ताभ्यां समुपेत गुरुर्जनः
साध्यस्य त्वा सनं कुर्यात् ताभ्यां युक्तं जलाक्षरं ॥ ९४ ॥

गुरु पुरुष उन दोनों बीजों से अपने आसन को रखे और उन्हीं बीजों से जल छिड़क कर साध्य का आसन बनावे ।

पूरकेन जिनेन्द्रस्य कुर्यादाह्वाननं गुरुः
पंचा नामु पचाराणां विधिं ज्ञानान्विशेषतः ॥ ९५ ॥

गुरु पूरक (सांस भरकर) से जिनेन्द्र भगवान का आह्वान करे और पाँचों उपचारों की विधि (आव्हान-स्थापन सन्निधिकरण पूजन और विसर्जन) को पूर्ण रूप से विशेष ध्यान के द्वारा करे।

सुप्रतिष्ठांपनं साक्षात् करणं प्रार्चनं तथा विभोः
कुभंक भोगेन विधातव्याः निमंत्रिण ॥ ९६ ॥

मंत्री भगवान का स्थापन सन्निधिकरण और पूजन को कुंभक (सांस रोककर) के योग से करे।

वारिभि हारिभि कांतैः श्वाससंतापहारिभिः
क्षौदैः प्रोत्सर्पदा मोदैश्चंद नै र्घ्राण नंदणैः ॥ ९७ ॥

शालिदैः सदकैः शालिन्पंच द्विशकैरपि,
सुमनोभिः सुमनोभिः सुमनोभिः सुगंधिभिः ॥ ९८ ॥

लाये हुए सुंदर और श्वास के कष्ट को दूर करने वाले जलों उठती हुई मालाओं वाले चंदन से घ्राण (नाक) को आनन्द देने वाले क्षोद (चूर्ण) शालि (अक्षत) सदक(फलः और पच्चीस प्रकार के सुन्दर सुगंधित पुष्पों से अच्छे मन से अच्छी विधायों से सुगंधित से

चरुभिश्चारुभिश्चित्र व्यंजनैश्चित रंजनैः
दीधिकाभि स्तमो हुत्वा व्यापिकाभिर्दिशो दिशः ॥ ९९ ॥

धूप भैदै र्द्वि रेफांत खेदच्छेदैः प्रमोददैः फलै,
समुज्वलैः सद्य प्रोद्यत्सौरभ्यहारिभिः ॥ १०० ॥

अनेक प्रकार से चित्त को प्रसन्न करने वाले नैवैद्य (चरुः और चारु (प्यारे) व्यंजनों से अंधकार को नष्ट करने वाले और दशों दिशाओं में प्रकाश दिलाने वाले दीपकों से भौंरों के अन्दर के खेद को (छेद) नष्ट करने वाले और धूप के भेदों से निकलती हुई सुगंध युक्त उज्जवल फलों से

आदर्शैः कलशैः छत्रैर्वस्त्रैश्चामरजैध्वजैः
पुंड्रैक्षु दंडैर्घंटाभिर्मणि भिर्गंधि रेणुभिः ॥ १०१ ॥

अन्यैश्चैवं विधैर्द्रव्यैः शुभैः भुवन मंगलैः
शांति भट्टारकं देवं प्रार्चयेत्परं मुदा ॥ १०२ ॥

आदर्श (दर्पणों) कलशों छत्रों, वस्त्रों चमरो ध्वजाओं ईख के पोंड्रों गन्णो घंटों मणियों सुगंधित गंध के चूणे और इसी प्रकार अन्य भी लोक में मंगल करने वाले उत्तम द्रव्यों से श्री शांतिनाथ जी भट्टारक का अत्यंत प्रसन्नता से पूजन करे।

मुख विन्यस्त नीरेजान पूरितान वारिभिः शुभैः
भृंगारा तस्य पादांते शांति धारो निपातयेत् ॥ १०३ ॥

फिर मुख में भेरी सहित कमलों से युक्त जल से भरे हुवे कलशों से भगवान शांतिनाथ जी के चरणों में शांति धारा देवे।

ततः परम मंत्राधि देवतान् विमुखो भवेत्
होमकुंडस्य पूर्वस्यामासीत दिशि देशिकः ॥ १०४ ॥

फिर परम (श्रेष्ठ) मंत्र के स्वामी देवताओं की तरफ मुख करके होम कुंड के पूर्व दिशा में रास्ता बताने वाले गुरु बैठे-

ततः साध्यश्च तत्पार्श्व स्वासने प्रश्रया ततः
आसीत परमांभक्तिं दधे देवो गुरावपि ॥ १०५ ॥

इसके पश्चात साध्य भी देवता और गुरु में परम भक्ति को धारण करता हुआ गुरु के पास अपने आसन पर बैठे ।

हुतासनस्थ मंत्रज्ञः क्रियां संधुक्षणादिकां,
विदध्यात्परि भाषायां प्रोक्तेन विधिना क्रमात् ॥ १०२ ॥

फिर मंत्री अग्नि को प्रज्वलित करने की क्रिया को परिभाषा परिच्छेद में बतलाई हुई विधि के अनुसार विधि पूर्वक करे।

पश्चिमाभि मुखो भूत्वा प्रयुक्त कमलासनः,
उपविश्य निजे पीठे संयुक्तो ज्ञान मुद्रया ॥ १०५ ॥

पश्चिम की तरफ मुख करके कमलासन का प्रयोग करके ज्ञान मुद्रा से युक्त होकर अपने आसन पर बैठे-

देवतां मंत्रमात्मानं साध्यं लोकं तथाखिलं,
शुद्धांत करणो ध्यायन् शित वर्णं सुधामयं ॥ १०६ ॥

उस समय वह देवता को मंत्र को, अपने को साध्य को तथा सम्पूर्ण लोक को शुद्ध अन्तःकरण (मन) से श्वेत वर्ण का अमृत बरसाते हुए अमृत मंत्रध्यान करे-

अष्टाभिरधि दूटेन शतेन क्षीर भूरूहां,
नवांगुल प्रमाणाभिः समिद्भिः कृत शुद्धिभिः ॥ १०७ ॥

क्षीर वृक्षों (दूध के वृक्षों) की नौ अंगुल लम्बी शुद्ध एक सौ आठ समिधाओं से -

गुड सर्पितिल क्षीर दुर्वाधैश्च यथा विधिः
जुहुयात्सर्व शांत्या ख्यमंत्रेणा द्भुत शक्तिना ॥ १०८ ॥

गुड, घृत, दूध, दूब आदि से अद्भुत शक्ति वाले सर्वशांति नाम के मंत्र के द्वारा विधि पूर्वक होम करे।

ततः श्री शांति महंतं स्तुत्वा शांत्यष्ट केन च,
ततो विसर्जनमाचार्य रेच केन समाचरेत् ॥ १०९ ॥

फिर शांत्यष्टक स्तोत्र से श्री शांतिनाथ भगवान की स्तुति करके आचार्य रेचक प्राणायाम के द्वारा विसर्जन करें।

एवं संध्या त्रये चार्द्ध रात्रे च दिवसस्य यः
जिन स्नानादि होमांतो विधिः सम्यग्नुसृतं ॥ १०८ ॥

इस प्रकार इस दिन की तीनों संध्याओं और अर्द्धरात्रि को भगवान की स्नान आदि से लेकर होम तक की विधि को भली प्रकार करे।

तं कृत्सनं मपिसोत्साहो मंत्रि सप्त दिनानि वा,
यद्वेक विंशति कुर्याद्यावदिष्ट प्रसिद्धि वा ॥ १०९ ॥

मंत्री उस पूर्ण विधि को उत्साह पूर्वक सात दिन या इक्कीस दिन तक जब तक अपना इष्ट कार्य पूर्ण हो करे।

साध्यः सप्त गुणोपेतः समस्त गुण शालिनः,
शांति होम दिनेष्वेषु: सर्वेष्वप्य तिथि नयतीन् ॥ ११० ॥

सर्व सात गुणों से युक्त साध्य इन सब शांति और होम के दिनों में सब गुण युक्त अतिथियों और यतियों को -

क्षीरेण सर्पिषा दद्यानिसूप खंड सितागुडैः
व्यंजनैर्विविधैर्भक्ष्यै लड्डुका पूरिकादिभिः ॥ १११ ॥

दूध, घृत, दही आदि दाल खांड, शक्कर, गुड़, लड्डू और पूरी आदि अनेक प्रकार खाने योग्य व्यंजनो

स्वादुभिश्चंचु मोचाम्रफनसादि फलैरपि,
उपेत्तं भोजयेन्मृष्टं शुद्ध शाल्यन्न मादरात ॥ ११२ ॥

स्वादिष्ट चंचु (इलायची) मोचो (सुपारी) आम फनस (कटहल) आदि फलों, साफ और शुद्ध चावल और अन्न का बना हुआ और मृष्ट (काली मिर्च आदि) भोजन आये हुए को आदर पूर्वक खिलावे।

क्षांतिभ्यः श्रावकेभ्यश्च श्राविकाभ्यश्च सादरा,
वितरेदोदनं योग्यं विदध्याश्चावरादिकं ॥ ११३ ॥

उस शांति के समय आर्यिकाओं श्रावकों और श्राविकाओं को भी आदर पूर्वक भात और योग्य वस्त्र आदि देवे।

कुमारांश्च कुमारीश्च चतुर्विंशति समितान्
भोजयेदनु वत्तेतदीनानाथ जनानपि ॥ ११४ ॥

तथा प्रतिदिन चोबीस कुमार और कुमारियों तथा दीन और अनाथ लोगों को तथा अनुव्रत धारियों को भोजन करावे-

होमः कृतो जिनस्नान बलिदान पुरस्सरः,
अप मृत्युन रिपुन व्याधीन प्रजानां शामयेदयं ॥ ११५ ॥

जिनेन्द्र भगवान के अभिषेक और बलिदान युक्त य होम अपमृत्यु शत्रुओं और प्रजा के रोगों को शान्त करता है।

नरमार्यांश्च मार्यांश्च अजमारि तथैवच,
गोमारी महिष मारि च खरोष्ट्राजाति पारिकाः ॥ ११६ ॥

यह होम नर नारी की बिमारी घोड़ों की बीमारी, बकरों की बीमारी, और गायों की बीमारी, भैंस, गधे, ऊँट और बकरियों को-

पिशाच शाकिनी भूतान् बालग्रह नवग्रहान्
निहन्त्यादि तरे वा युरारोग्यै श्वर्य संपदः ॥ ११७ ॥

पिशाच शाकिनी भूत बालकों के पूतना आदि ग्रह और नवग्रह नष्ट करके आयु आरोग्य और ऐश्वर्य की संपत्तियों को देता है।

उत्पातैर्भूमि कंपाद्यैस्तथा दुःस्वप्न दर्शनैः
सं सूचितं फलं तत्स्यात्प्रति बध्नात्यद्यां विधिः ॥ ११८ ॥

यह भूकम्प आदि उत्पातों को बुरे स्वप्न आदि दिखाने पर उसका फल बतलाता है उस बुरे फल को रोकता है।

उल्लू कादिभिराक्रांतं निंदितं यस्य मंदिरं
तस्यां यं विहितः शांति शांति होमो विधास्यति ॥ ११९ ॥

जिसके निंदित घर पर उल्लू आदि आकर उसको खराब करते हों तो यह शांति विधान और शांति होम उसकी शांति करता है।

यो यो भूदज्ञापको हेतुरशुभस्य भविष्यतः
शांति होमं मुंकु र्यात्तत्त तत्र यथा विधिः ॥ १२० ॥

जो जो होने वाले अशुभ का कारण होता है उन सबके लिये इस शांति होम को उस अवसर पर विधि पूर्वक करे।

राष्ट्र देश पुर ग्राम खेटं कुर्वटं पत्तनं,
मटंबं घोष संवाह वेला द्रोण मुखानि च ॥ १२१ ॥

राष्ट्र देश नगर गाँव खेटक-कर्वट-पत्तन मटंब घोष (अहीरों के गाँव) संवाह और द्रोण मुख ।

इत्यादि द्वीपां ग्रहाणां च सभानां देव वेश्मनां
वापिकूपतडाकानां नदीनां च तथैव च ॥ १२२ ॥

इत्यादि द्वीपों घरों सभाओं देव मंदिरों बावड़ी, कुएँ, तालाबों और नदियों के ग्रहों को-

शांति होमं पुरस्कृत्य स्थापयेद्दर्भमुत्तमं
आचंद्र स्थायित तत्सर्व भवत्येव कृते सति ॥ १२३ ॥

आदि में शांति होम पूर्वक दर्भ की स्थापना करके बनवाने से वह सब चंद्रमा के समय तक स्थायी रहते हैं।

ग्रामो वृत्या वृत: स्यान्नगर मुरूच तर्गो पुरोद्भासि:
शालं खेटं नद्यादि वेष्टतं परिवृत्तम भित:
कर्वटं पर्वतेन ग्रामैर्युक्त मंटब दलित दशशतै:
पत्तनं रत्न योनि द्रोणाख्यं सिंधुबेला,
जलधि वलयितं वाहम द्रिस्थ माहु: ॥ १२४ ॥

एक गोल रेखा से घिरें हुए को गाँव चारों तरफ पर कोट वाले को नगर -छोटी पहाड़ी से घिरे हुए को खेट चारों तरफ पर्वतों से घिरे हुए को कर्वट एक हजार ग्राम वाले को मटंब रत्नों के स्थान को पत्तन समुद्र के किनारों से घिरे हुए को द्रोणमुख और पर्वत के ऊपर बसे हुये को संबाह या बाह कहते हैं।

अथ साध्यस्या नु गुणो तारांशक वार तिथि,
मुहूर्त दौ लिखितुं समारभे त प्रीते मना: मंत्र विद्यंत्रं ॥ १२५ ॥

अब साध्य के गुणों के अनुसार नक्षत्र वाले अंशक वार तिथि और मूहुर्त आदि बतलाने वाले यंत्र का मंत्री के वास्ते प्रेम से आरंभ किया जाता है।

नव गोमयेन शुद्धि देशे कृत्वा कचि च्चतु ष्कुणं,
मंडलमभि नव शाली स्तन्मध्ये विकरे द्बहुलं ॥ १२६ ॥

किसी स्थान में नये गोबर से भूमि शुद्धि करके उसमें चोकोर मंडल बनाकर वहाँ बहुत से नये शालि (चावलों) के दानों को बिखेर देवे।

तेषामुपरिनिदध्यात् धौतं पटांवरं नूनं
ज्वलितान् धृतेन दीपान् परित: संस्थापयेतंच ॥ १२७ ॥

उनके ऊपर एक वस्त्र रखकर उसके चारों तरफ घृत के जले हुए दीप को रखकर देवे-

कोणेषु तस्य मलयज कर्दम संसक्त शब्बक्त कृत चर्चान्,
अंतस्थ रत्न कनकै: संशुद्धै: पूरितान् सलिलै: ॥ १२८ ॥

उसकी कोणों में चंदन की कीचड़ से बने हुए शब्बक (जल) के संग से पुते हुए अंदर शुद्ध किये हुए रत्नों और सुवर्ण से शुद्ध किये हुए पानी से भरे हुए।

नव वस्त्रा वृत कंठान प्रवेष्टितान् सित तरेण सूत्रेण ,
नव बीज पूर फल द्युत वजनान संस्थाप येत्कुंभान ॥ १२९ ॥

उनक (कंठान) महू पर नया वस्त्र लिपटे हुए काले से युक्त तथा मुख पर बिजौरे के फल से ढ़के हुए घड़ों को स्थापित करे।

मुद्रादै राभरणै र्विभूषितः श्वेत वस्त्र परिधानः,
आसीत सोत्तरीय स्तस्योपरि पाद दत्तस्य ॥ १३० ॥

कर्पूरागर कुंकुम चंदन गोरोचनादि श्रुम तंत्रैः,
स्वर्ण नव रत्न युक्तैः पिष्टै क्षीरेण कपिलाया ॥ १३१ ॥

मुद्रा आदि आभरणों से सजकर सफेद वस्त्र धारण किये हुए (उत्तरी) चादर आदि औढ़े हुए उसके ऊपर रखकर बैठ जावे। फिर कपूर अगर कुंकुम चंदन गोरोचन आदि उत्तम तंत्रों को स्वर्ण और नवरत्नों युक्त कपिला गाय के दूध में पीस कर-

सौवर्ण पात्र निहितैः शलाकया कनक रचितया पेतैः
भूर्जे साध्य स्यस वर्णैः यंत्रं मृत्युं जयं विलिखेत ॥ १३२ ॥

भूर्जे निचितः स्वेतैः सविंदुभि ब्राह्मणो मत स्तइैः
रक्तै भूपः पीतै वैश्यः कृष्णैः स्मृतः शुद्रः ॥ १३३ ॥

सोने के बर्तन में रखकर सोने की कलम (शलाका) से भोजपत्र के ऊपर साध्य के अपने अक्षरों में मृत्युंजय यंत्र को लिखे।

यदि भोजपत्र पर सफेद बिन्दुओं से व्याप्त हो जावे तो ब्राह्मण लाल से क्षत्रिय पीले से वैश्य काले बिन्दुओं से व्याप्त हो तो शुद्र जानना चाहिए।

मृत्युंजय मंत्र

अद्युत हकार कूट सकल स्वर वेष्टितं,
सत्प्रणवं भूमंडल वेष्टितं समाभिलिखय
निजेप्सितं नाम तद्वहिः॥
षोडश सत्कलान्वित वकारं वृतं शशि मंडलावृतं,
स्वर युक्तंमातं वेष्ट्रा मिन बिबं वृत्त स्वर युक्त या वृतं ॥ १३३ ॥

असहित हः कूट(क्ष) को सब स्वरों से वेष्टित करके उसके बाहर प्रणव (ॐ) से फिर उसको पृथ्वी मंडल से वेष्टित करे उसके बाहर अपने इच्छा किये हुए नाम को लिखकर फिर उसके बाहर चारों तरफ सोलह कलाओं (स्वरों) से युक्त व को लिखे फिर चंद्र मंडल बनावे फिर उसको स्वर युक्त यान्त (र) लिखकर फिर चन्द्रमंडल बनावे फिर उसको स्वरयुक्त य से वेष्टित करें।

अष्ट दलां बुजं प्रतिदलं द्विकलाद्यज मातृका नमः,
पाश गजेन्द्र वश्य वर होम परांत मंत्रमालिखेत्,
वारिधि सप्तकं वहि रपि स्वर युक्त टकार वेष्टितं
पार्थिव मंडलेन पिहितं पवन त्रितयेन वेष्टितं ॥ १३४ ॥

उसके बाहर आठ दलवाला कमल लिखकर प्रत्येक दल में आदि में दो कला अज (ॐ) लिखकर अष्ट मातृका देवियों में से एक एक को लिखकर नमः पाश (आं गजेन्द्र वश्य क्रों वर होम स्वाहा) पद वाले मंत्र को लिखे फिर सात जल मंडल बनाकर बाहर स्वर युक्त ष से वेष्टित कर दे फिर पृथ्वीमंडल बनाकर तीन वायु मंडलों से वेष्टित करे।

भूर्जे नैवं लिखितं पत्रेण वेष्टेन तेन कनक
यृतां इषन्मा त्रांनलिकां प्रवेष्टयेत्तं च सूत्रेण ॥ १३५ ॥

इस यंत्र को इस प्रकार भोज पत्र पर लिखकर धागे से लपेट कर एक छोटी सोने की नाली में जड़वा लेवें ।

यंत्र लाक्षा सहितं तत्कनकेनापि वेष्टत विन्यसेत्,
शांति जिन पाद निकट प्रपूजितं गंध कुसुमाद्यैः ॥ १३६ ॥

इस यंत्र को लाख सहित सोने में मढ़वाकर श्री शांतिनाथ जी भगवान के चरण के समीप रख करके इसका गंध (चंदन) और पुष्पों से पूजन करे।

अथ सर्व शांति होमे समापिते शांति होमंच कुर्यान्महा
न्निरंतरं दिने प्रातः करूणा युतं मतामहाभिषेकं स्यात् ॥ १३७ ॥

इस प्रकार सर्वशांति होम के समाप्त होने पर प्रतिदिन प्रातःकाल के समय दया से भरकर शांति होम करते हुए महा अभिषेक करे।

जिनस्य चैकं चतुः संघे रचयेन्मंडल कोणेषु
पूर्ण कुंभव जिनस्याग्रे दीपाश्च ॥ १३८ ॥

जिनेन्द्र भगवान का एक चौकोर मंडल बनावे उसके कोणों में जल से भरे हुए कलश रखे और जिनेन्द्र भगवान के आगे दीपक रखें।

भानु तस्य न्यस्य त्याग भागे तस्या
भि नवं प्रवि कार्य मध्य भोग्ये,
तस्याभि नवानि कलम बीजानि
तेषामुपरि विशुद्धं श्वेत पट्टांवरं दद्यात् ॥ १३९ ॥

उसके पूर्व भाग में भानु(सूर्य) के रहते समय उसके बीच भाग में नये धान के बीजों को बिखेर कर उनके ऊपर शुद्ध सफेद वस्त्र बिछा देवे।

घौतकला घौत रचितं पात्रं कलभाक्षतैः समापूर्णं
पटां वरस्य तस्य न्यस्ते न्मध्ये गुरु सम्यक् ॥ १४० ॥

गुरू धान के चावलों से भरे हुवे अत्यंत उज्वल वर्तन को जौघौत (चांदी और सोने का बना हुआ हो उस वस्त्र के बीच में अच्छी तरह से रख देवें।

तन्मृत्युंजय यंत्रं जिनपति पादा बुंजाति के न्यस्तं,
संस्थाप तत्र पात्रे गंधाद्यैः पार्चयेन्मंत्री ॥ १४१ ॥

उस समय मंत्री वहाँ जिनेन्द्र भगवान के चरण कमलों में रखे हुए उस मृत्युंजय मंत्र की स्थापना करके उसका गंध (चंदन) आदि से पूजन करे।

एवं समभ्यर्च्य यंत्रं पश्चात्साध्यस्य तस्य विधि नैव,
वसुधारास्नान विधिं शांति करं कर्तु मीहेत् ॥ १४२ ॥

इस प्रकार पहले इस मंत्र का पूजन करके फिर उस साध्य की शांति करने वाली वसुधारा स्नान की विधि करे।

वसुधारा स्नान विधि :

ईशान्यांशामि मुखांडुं जातं संयुक्त रम्यभूदेशे,
संमार्जिते च कपिला गोमय दधि दुग्ध घृत मूत्रैः ॥ १४३ ॥

ईशान कोण की दिशा की तरफ मुख करके एक पवित्र रमणीक स्थान को पहले जल से शुद्ध करके फिर कपिला गाय के अपतित गोबर दूध, दही, घृत और मूत्र से साफ करे।

नाम कला पूर्णेंदु समेतं मध्ये विलिखव्य तस्य वहिः
कोकनद कुमुद वलय रक्तोत्पल मुकुल कुसुम युतं ॥ १४४ ॥

इसके पश्चात उस स्थान के मध्य में नाम को आं इं ॐ ऐं बीजों के बीच में लिखे और उसके चारों तरफ रक्त कमल (कोकनद) और श्वेत कमल(कुमुद) और रक्तोत्पल (लाल कमल) मुकुल (नीलकमल) अपने अपने पुष्पों सहित।

चक्राह्व वक वलाका सार सकल हंस मिथुन संयुक्तं,
कर्कट कूर्म दुर्दुर झष मकर तर तरंग युतं ॥ १४५ ॥

चक्र (चकवा) आह्व (नामका) वक (बगुला) वलाका (सरसो की कतार) सारस और कल हंस (हंस) के मिथुन) युगल) समेत केकडा (कर्कट) कछुआ (कूर्म) की दर्दुर (मेढ़क) मछली मकर हंस को चंचल जल की तरंगों लहरों सहित

चूर्णेन पंच वर्णेन परिलिखे द्विपुल पद्मनी खंड,
तस्य वहि चतुरस्त्रंमंडल मालिखव्य विधि नैव ॥ १४६ ॥

और बड़े बड़े कमल (पद्मनी) समूहों से युक्त पंच वर्ण चूर्ण से बनावे और उसके बाहर चारों तरफ विधि पूर्वक एक चौकोर मंडल बनावे।

कोणेष्वस्य चतुर्ष प्र विकीर्य नवानि शालि बीजानि,
तेषु प्रसार्य धौतं सित मंवरं तत् ॥ १४७ ॥

उस मंडल के कोणों में चंदन कुंकुम और पुष्पों से पूजा किये हुए श्वेत वर्ण वाले सुवर्ण और सुंदर शालि धान्य के बीजों से मुख तक भरे हुए घड़ों को चारों कोणों में रखे।

नव वस्त्रा वृत कंठान मलयज कुसुमार्चि तान् मलान्,
स हिरण्यमयं निधाय वर वीजपुर मुखान् ॥ १४८ ॥

नवीन वस्त्रों से ढ़के हुए चंदन और पुष्प आदि से पूजा किये हुए निर्मल जल से भरे हुए सोने (हिरण्य) के बने हुए मुख पर बिजोरे (बीजपुर) फल वाले कलशों को रखकर।

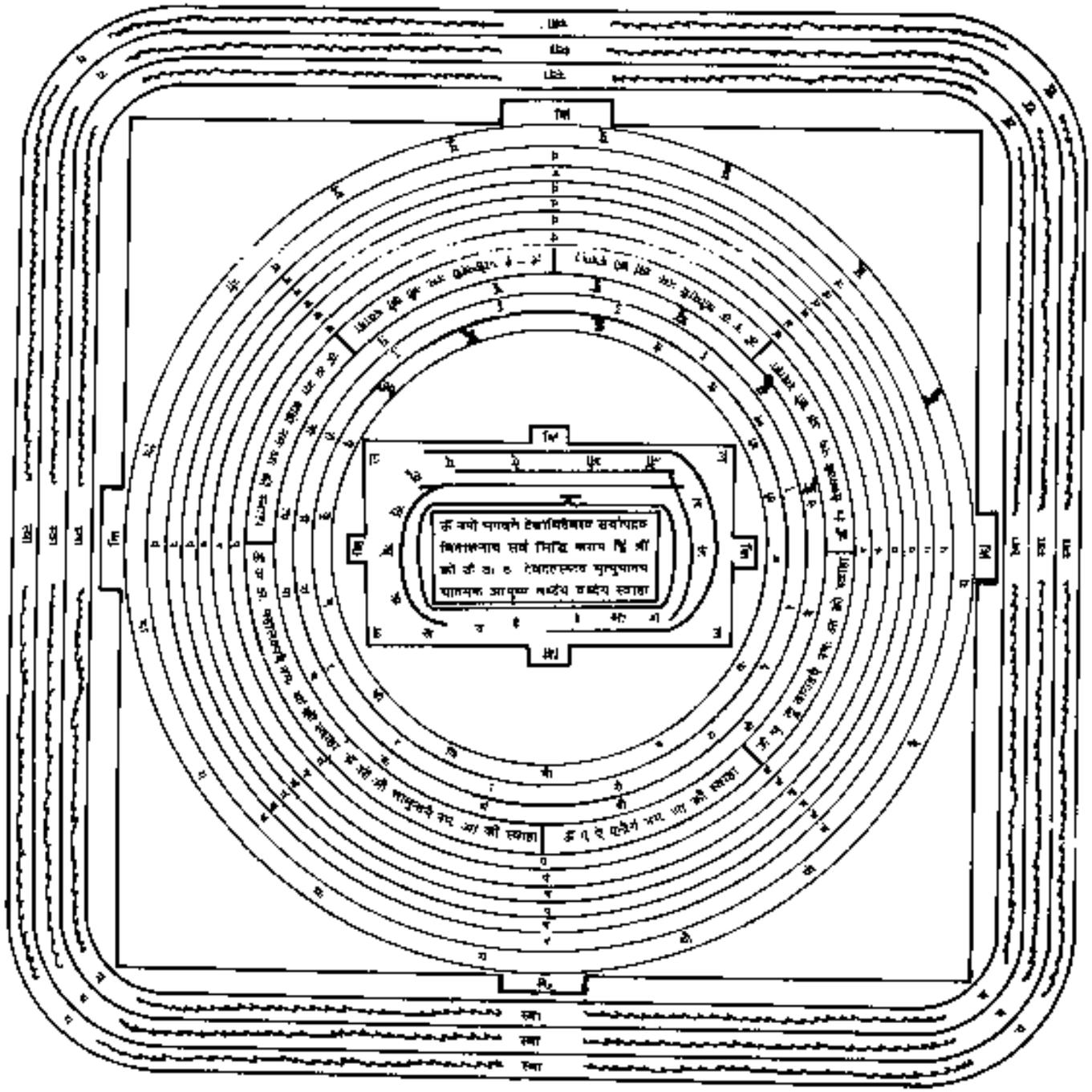

तस्योपरिपुष्पाणां विधाय सन्मंडपं च तन्मध्ये,
चक्रे कृत रंध्र नवकं प्रलंब मानं घटंवध्वा ॥ १४९ ॥

इतना कार्य करने के पश्चात उस मंडल के ऊपर सुंदर मंडप (चन्दवा) तान देवे और उसके बीच में एक सा घड़ा लटका देवे जिसमें गोलाकार बराबर बराबर नौ छिद्र (रंध्र) हो।

मृत्युजयाख्य यंत्रंनाम समेत विलिखय भूर्ज्जदले,
आवेष्य सिक्थेन च कनकेन च तत् क्षिपेत् कुंभे ॥ १५० ॥

फिर भोज पत्र पर मृत्युंजय नाम के यंत्र को नाम सहित लिखकर और मोम या कपड़े में लपेट कर सोने में मढ़वाकर उस घड़े में डाल देवे-

मृत सहदेवी सौम्या क्षीर तरू त्वक सुवर्ण हरिकांता:
पिंज्वो शीर हरिद्रा: दूर्वा: काश्मीर कुसुमे च ॥ १५१ ॥

मलय रुहा ·गरू चंदन मित्येतान्यौषधानि,
पंच दश मंत्री मंत्रं प्रपठन पृथक प्रमात्प्रेषयैत स्वं स्वं ॥ १५२ ॥

फिर मिट्टी सहदेवी दूधवाले वृक्षों की छाल सुवर्ण हरिकांता पिज्ज (पिंज= कपूर) उशीर (खस) हल्दी दूर्वा (दूब) और काश्मीर (केशर) के फूल मलय (लाल चंदन) और सफेद चंदन अगर रूह (डाभ) आदि औषधियों को जल से पीसकर पन्द्रह मंत्रों में से प्रत्येक से पृथक पृथक पढ़कर अभिमंत्रित करे।

सं स्नातया विभूषित वस्त्राभर्णै: सुवर्ण मुद्राद्यै,
द्विज कन्या सुलक्षण युत या पट्टां बंरे स्थितया ॥ १५३ ॥

इनको स्नान की हुई वस्त्र और सुवर्ण मुद्रा आदि आभूषणों से सजी हुई अच्छे लछणों वाली तथा पट्ट और वस्त्र पर बैठी हुई द्विज कन्या से पिसवावे ।

अह निग्रह पुरा मे स्तंभादौ पिंड संयुक्ता:,
पंच दशोक्ता क्रमशस्तैरे तान्मंत्र यैत्कलकान् ॥ १५४ ॥

इन पन्द्रहो को (अह) सर्पों को निग्रह करने और पहले स्तंभन आदि में लगाये हुए पिंडांक्षर सहित मंत्रों से अभिमंत्रित करे कलकान (पिसे हुए कलक अर्थात पिष्टी को) अभिमंत्रित करे।

ॐ हां आं कों क्षीं हीं क्लीं ब्लूं द्रां द्रीं ज्वालामालिनी पंच दशौ षष्ठायिनी प्रत्येक मुद्धर्तय उद्धर्तय हाँ ही हूँ हौं ह: स्वाहा:॥

उद्वर्तन मंत्रः

एकैकोनो द्वर्तन रस शेचनमुद्वर्त्य देवदत्तं,
तं भूम्य पतितै र्मलातैः पुत्तलिकां कारयेदकां ॥ १५५ ॥

और फिर एक एक करके प्रत्येक औषधि के कलक से उस साधक देवदत्त का उबटना करे और करने से जो मल नीचे पृथ्वी पर गिरे उससे एक मूर्ति बनावे।

प्रवराष्ट दिक्पाल पुत्तलिका स्व स्व वर्ण संयुक्ता,
लक्षण युक्तां दित्यांश्च कारयेत सिद्ध मृत्तिकया ॥ १५६ ॥

फिर सिद्ध मिट्टी से अपने अपने वर्ण के अनुसार सब लक्षणों से युक्त आठों दिक्पालों की दिव्य मूर्तियाँ बनावावे।

सिद्धमिट्टी की परिभाषा

राज द्वार चतुः पथ कुलाल करधाम भ्रमर सरि दुभयं,
तटद्विरद वृषभ श्रृंग क्षेत्र गता मृत्तिका सिद्धा ॥ १५७ ॥

राज द्वार चोरा-हा-कुम्हार के हाथ की उत्तम नदी के दोनों किनारों की मिट्टी भौंरे के द्वारा लाई हुयी मिट्टी द्विरद (हाथी) वृषभ के सींगों के पड़े हुये स्थान की मिट्टी सिद्ध मिट्टी कहलाती है।

असितं पीतं लोहितमसितं हरितं शशि प्रभं,
कृष्णं बहु वर्ण चरूकं गंधादिभिर्युक्तं ॥ १५८ ॥

काली पीली लाल काली हरी शशि प्रभं (सफेद) काली बहुत रंग वाली नैवेद्य चन्दनादि से मिली हुयी

नव पटलिका सुदत्वा प्रथमायां स्थापयेत् क्रमशः
शेषेष्विदा दीनां प्रतिमां संस्थापयेत क्रमशः ॥ १५९ ॥

नौ पटडियों को लेकर पहिली पर उस मल से बनी हुई प्रतिमा को और शेष आठों पर क्रमशः इंद्रादि आठ लोक पालों की प्रतिमाओं को स्थापति करे।

बहिरपेको देशे मंडल मन्य द्वि लिख्यते,
च प्राग्वत तत्रोष्ण वारिणा पुरा स्नाप ये देवदत्तं ॥ १६० ॥

बाहर भी पूर्व के समान एक और मंडल बनाकर वहाँ पहले साधक देवदत्त को गर्म जल से स्नान करावे।

विनय ज्वाला मालिन्यु पेतय भ हुं युगं ततः,सर्वान अप मृत्यु द्वि धातय सं वं मं देवदत्तमम रक्ष युगं शांतिं कुरु कुरु सद्वरुण देवते निज बलिं गृह्ण स्वाहा॥

मल चरू निवर्द्धन मंत्रः

विनय ॐ ज्वालामालिनी सं वं मं हुं हुं सर्वान अपमृत्यन धातय धातय देव दत्तं रक्ष रक्ष शांतिं कुरु कुरु हे वरुण देवते निज बलिं गृह्ण गृह्ण स्वाहा ॥

एवं निवर्द्ध मंत्री चरूकं मंत्रेण निक्षिपेन्नद्यां,
दिक्पाल कांश्च चरूकै रपि निर्वद्धवेत्स्वेन मंत्रेण ॥ १६१ ॥

साधारण पूजन फिर निम्नलिखित मंत्र को पढ़ता हुआ मल से बनी हुयी मूर्ति चरु को भेंट करे और नदी में डाल देवे विसर्जित कर दे और आठों के चरु को भी इस मंत्र से अभिमंत्रित करके सुंदर जल में विसर्जित कर देवे।

ॐ कूट पिंड शिखिनी सं वं मं हुं च देवदत्तस्य
शांतिं तुष्टिं तुष्टिं कुरु युगलं रक्ष युगलं च ॥ १६२ ॥

दिग्देवते बलि गृहण मंत्रः

स एष होमांतः एवं निवर्द्ध विधिना
बलिं क्षिपेत्स दिशि जल मध्ये ॥ १६३ ॥

ॐ क्ष्म्ल्व्यूं ज्वालामालिनी सं वं मं हुं देवदत्तस्य शांति तुष्टिं पुष्टिं कुरु कुरु रक्ष रक्ष हे निज बलिं गृहण गृहण स्वाहा। चरु निवर्द्धन मंलः

इसप्रकार उस चरु को देकर नदी में विसर्जित कर दे और आठों दिक्पालों के चरु को भी मंत्र से देकर विधिपूर्वक सुन्दर जल में विसर्जित कर दें।

ॐ क्ष्म्ल्व्यूं ज्वालामालिनी सं वं मं हुं हुं देवत्तस्य शांति तुष्टिं पुष्टिं कुरु कुरु रक्ष रक्ष हे इन्द्र अग्नि यम ने ऋति वरुण वायु कुबेर ईशान देवते निज बलिं गृहण गृहण स्वाहा॥

दिव्यांबर भूषा कुसुम मल भंजां लंकृतो व्रजेदा
उत्थाय तत्प्रदेशात् सत् मंडलं पादका रुठ : ॥ १६४ ॥

फिर दिव्य वस्त्र आभूषण पुष्प और सुगंध आदि से अपने शरीर को शोभित करके वहाँ से उठकर खडाऊँ पर छढकर चले।

कुसुमाक्षतांजलि यटो ललाटहस्त प्रदक्षिणी कृत्य,
तन्मंडलं ततो सा वभि मुख मुपविशतु तन्मध्ये ॥ १६५ ॥

फिर पुष्प और अक्षत दोनों हाथों में लेकर मस्तक पर हाथ रखे हुये उस मंडल की प्रदक्षिण देकर सामने मुख करके उसके मध्य में बैठ जावे।

ॐ वसुधारा देवते ज्वालामालिनी प्रज्वल-प्रज्वल विजल-विजल सजल-सजल हिम-हिम शीतल-शीतल देवि कोटि प्रभानले चंद्राश्रुं कुरु कुरु त्रिभुवन सं क्षोभिनी क्षां क्षीं क्षूं क्षौं क्षः देवि त्वमात्म परिवार देवता सहिते देवदत्तस्य तुष्टिं तुष्टिं शीघं शीघं वरं देहि देहि सद्धर्म श्री धनायु रा रोग्यैश्वर्यामि वृद्धिं कुरू कुरू सर्वोपद्रव महाभयं नाशय नाशय सर्वापमृत्युन घातय घातय रक्ष रक्ष नवग्रहा एकादश स्थाः सर्वे फलदा भवंतु ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः ह्राः सर्व वश्यं कुरु कुरु झ्रौं वं मं हं सं तं पं स्वाहा ।।

वसुधारा मंत्रमिमं पठन तीर्थोदकं च गोमूत्रं
गव्यानि पंच तक्रं दधि त्रिमधुरं तथा क्षीरं ॥ १७० ॥

इस वसुधारा मंत्र को पढता हुआ तीर्थों के जल गोमूत्र और गाय के पाँचो (गव्य अर्थात् दूध दही घृत मूत्र गोबर को) तक्र दही त्रिमधुर (घी दूध बूरा) से तथा खीर से

पल्लवो दंकमपि च प्रक्षिप लंब मान घटे
सं स्नाथाद्यः स्थं तसश्चा दगंधोदकं दद्यात् ॥ १७१ ॥

पाँचों उत्तम पत्ते और जल को उस लटकते हुए घड़े में डाल कर फिर उसको नीचे रखकर गंधोदक देवें।

पिष्ट सद्यानि नवग्रह रूपाणि स्वस्ववर्ण युक्तानि
तान्यात्मवर्ण चरु कस्यो परि संस्थापयेत्प्राग्वत् ॥ १७२ ॥

फिर पिसे हुए द्रव्य के अपने अपने रंग के अनुसार नवग्रहों के रूप (मूर्ति) बनावाकर उनको पहले के मुताबिक अपने अपने चरू द्रव्य (बलि) के साथ स्थापित करे।

रक्तौभास्कर भौमो पीतौ बुध सुर गुरू शशांक
शितौ श्वेतो च शनिश्चरं राहु केतव: कृष्ण वर्ण स्यु: ॥ १७३ ॥

सूर्य और मंगल को रक्त वर्ण बुध और वृहस्पति को पीत वर्ण और शुक्र और चन्द्रमा को श्वेत वर्ण तथा शनिश्चर राहु और केतु के रूप को कृष्ण वर्ण का बनावें।

सुरभितर मलयजाक्षत कुसुमोज्वल दीप धूप संयुक्तै:
चरूकै र्निबद्धंयते: क्रमेण तं स्वेन मंत्रेण ॥ १७४ ॥

फिर अत्यंत सुगंधित चंदन अक्षत्त पुष्प प्रज्वलित दीपक धूप फल सहित चरू (बलि) को लेकर उसको निम्न लिखित मंत्र से आरती करे।

ॐ ज्वालामालिनी सर्वाभरण भूषिते ग्लौं ग्लौं ह्स्क्लीं ह्स्क्लीं क्ली क्लीं ल ल ल ल सर्वापमृत्यून हन हन त्रासय त्रासय हुं हुं धुं धुं जूंस: जूंस:फट फट य य सर्व रोगान दह दह हन हन शीघ्रं देवदत्तं रक्ष रक्ष नवग्रह देवते निज बलिं गृहण गृहण स्वाहा ॥

नवग्रह चरू निवर्द्धन मंत्र:

एवं निवर्द्धन सम्यक चरूकं तं निक्षिपनंदी मध्य ,
स्नानोद्भवमलचरूकेण सह स्व दिश स्व मंत्रेण ॥ १७५ ॥

इस प्रकार स्नान के मल से बनी हुई चरू (बलि) को अपनी अपनी दिशा में अपने अपने मंत्र से नदी के मध्य में विसर्जित कर देवे।

स्नानांतरमथ तद्वस्त्रालंकार रत्न कुलशाद्यांना
न्यस्मै न देयं स्वयं गृहीतत्यमात्म योग्यमिति ॥ १७६ ॥

स्नान के पश्चात वस्त्र अलंकार और रत्न कुलिश(वज्र) आदि (कलशघड़े) को दूसरे के लिए नहीं क्योंकि वह अपने अर्थात् आचार्य के योग्य होते हैं, उनको स्वयं ग्रहण करें उनको स्वयं ग्रहण करे।

परिधानु मलंकर्तं दत्वां वर भूषणादि तस्यान्यत,
पश्चादन्यत्र शुचौ देशे सन्मार्जिते चतुष्क युते ॥ १७७ ॥

किन्तु अपने दूसरे वस्त्र आभूषण आदि दे सकता है उसके पश्चात दूसरे पवित्र किये हुए (चौक पूरे हुए) स्थान में (चतुष्क) आंगन या ऐसा कमरा जो चार खम्भों पर बना हुआ हो।

वध्नातु तत: पश्चाद ग्रीवाया अस्य देवदत्तस्य,
रोगाय मृत्यु हीनं विद्यां मृत्युंजयां सद्य ॥ १७८ ॥

फिर उस देवदत्त की गर्दन में रोग अपमृत्यु को नष्ट करने वाले मृत्युंजय नाम के यंत्र को बाँधे ।

धौत सित वस्त्र पिहिते पट्टक पीठे निवेश्य विधिनैव ,
अति सुरभि कुसुम वृष्टि स्नानेन स्नापयेत् मंत्री ॥ १७९ ॥

मंत्री इस प्रकार उसको श्वेत वस्त्र से ढ़के हुए पीले पाटे पर विधिपूर्वक बैठाकर अत्यंत सुगंधित जल से निम्नलिखित मंत्र से उस पर फूल बरसाते हुये स्नान करावे।

ॐ क्रों ज्वालामालिनी ह्रीं क्ली ब्लूं द्रां द्री हां आं क्रो क्षीं देवदत्तं सुगंध पुष्प स्नानेन सर्व शांति कुरु कुरु वषट् ॥

पुष्प वृष्टि स्नान मंत्र:

एवं विधिना स्नातस्य तस्य साध्यस्य शिरसि नति
देवी श्री सौभाग्य रोग्यं तुष्टिं पुष्टिं ददाति सदा ॥ १८९ ॥

ज्वालामालिनी देवी इसप्रकार स्नान किये हुए देवदत्त को सौभाग्य आरोग्य तुष्टि और पुष्टि निरंतर देती है।

आयुर्वर्द्धयति ग्रह पीडामपहरति हतुं शत्रु भयं,
नाशयति वित्त कोटिं प्रशमयति च बहु विधान रोगान् ॥ १९० ॥

आयु को बढ़ाती है ग्रह पीड़ा को नष्ट करती है शत्रु के भय को नाश करती है और विघ्न समूह को नाश करती है। नाशयति वित्त कोटिं-वित्त-मृत्यु के देवों के समूह को नाश करती है , और बहुत प्रकार के रोगों को नष्ट करती है।

एतत ज्वालामालिन्योक्तं सर्वापमृत्यु नाशकरं
वसुधोराख्यं स्नान करोति शांति विनियुक्तं ॥ १९१ ॥

इस ज्वालामालिनी देवी के कहे हुए सब प्रकार की अपमृत्यु को नाश करने वाले वसुधारा नाम के स्नान को शांति के वास्ते विधिपूर्वक करना चाहिए

मृत्युंजयं गुरु स्तद्गंधाद्यैर्महतिममृत मंत्रेण
अभि मंस सप्त कृत्वः प्रजपेद पराजित मंत्र ॥ १९२ ॥

इस मृत्युंजय मंत्र को गुरु गंध आदि से पूजकर उसको अमृत मंत्र से अभिमंत्रित करके अपराजित मंत्र को भी सात बार जप कर अभिमंत्रित करे।

अथ साध्यः शांति जिनं प्रदक्षिणी कृत्य गंध पुष्पाद्यैः,
प्रार्च्यानम्य जिन स्नानोदक सिक्तो गतस्तिष्टेत ॥ १९३ ॥

इसके पश्चात साध्य, शांतिनाथ भगवान की प्रदक्षिणा देकर उनका गंध और पुष्पादि से पूज कर जिनेन्द्र भगवान के स्नान के जल (गंधोदक) से गीला होकर सामने बैठे।

तद्यंत्रमुपादाय प्रातः साध्यस्य व वधीयात्,
बाहौ कंठे वस्त्रे निस्त्रिंशकां सेवा ॥ १९४ ॥

फिर गुरू प्रातः काल के समय उस मंत्र को लेकर साध्य की भुजा कमर वस्त्र या गले में बाँधे।

अथ मृत्युंजय यंत्र का फल

शांतिं तुष्टिं पुष्टिं भद्र जयंमैश्वर्यमायुरारोग्यं,
सौभाग्यमिष्ट सिद्धिं श्रियं च वितनोति यंत्रमिदं ॥ १९५ ॥

यह मंत्र शांति तुष्टि पुष्टि कल्याण विजय ऐश्वर्य आयु आरोग्य सौभाग्य इष्ट सिद्धि और लक्ष्मी को देता है।

अल्प मृत्यु यक्ष राक्षस भूत पिशाचास्तु शस्त्र शाकिन्याः,
शक्तैर्तस्य महत्या सद्यो वैकल्प माप्नोति ॥ १९६ ॥

इस मंत्र की महान शक्ति से अल्प मृत्यु यक्ष, राक्षस भूत पिशाच शस्त्र और शाकिन्या सभी व्यर्थ हो जाती हैं अर्थात् साध्य को कुछ भी हानि नहीं पहुँचा सकती हैं और साध्य की सभी कमियाँ दूर हो जाती हैं।

जयति दश नाग राजान वृषलूता शालि कीट भेदांश्च,
स्थावर जंगम कृत्रिम विषं च यंत्रं निहंत्येतत् ॥ १९७ ॥

यह यंत्र राज दस प्रकार के नागेन्द्रों बेल कान खजूरों और शालि कीड़ों के भद तथा स्थावर जंगम और कृत्रिम विष को नष्ट कर देता है।

भेरुंडाधान प्रबलान व्योम चर प्राणिनो न यांति,
नरं यंत्र मिदं बिभ्राणं शरभाः सिंहाः करींद्राश्च ॥ १९८ ॥

इस यंत्र को धारण करने वाले पुरुष के पास भैरुड़ आदि आकाश चारी प्राणि शर्भ (पक्षिराज-अष्टापद) सिंह और हाथी आदि नहीं आ सकते हैं। (बित्रस्त- डरे हुए) अर्थात् निर्भय रहते हैं।

क्रूर ग्रह निकरेभ्यो नव ग्रहे भ्योरि चोरमारिभ्यः,
व्याघ्र वृक क्रोड़ कश्या आदिभ्यश्चैतदभिरक्षेत् ॥ १९९ ॥

यह यंत्र क्रूर ग्रहों के समूह (निकट=समूह) नव ग्रह शत्रु चोर महामारी वृक (भेड़िया-कांग-गीदड़) क्रोड़ (सूअर) करभ (भैंस) कक्ष्य (हाथी) आदि से रक्षा करता है।

शक्त्यधारस्था श्रु विनश्यति शक्ति भंश माश्वशुक्षणैर्ज्वलतः
न च भवति जातु भीतिर्वज्रा शनि पतन वाधायाः ॥ २०० ॥

इस यंत्र की शक्ति से अग्नि की उष्णता नष्ट हो जाती है और न उसके धारण करने से कभी बिजली के गिरने का भय रहता है।

रक्षति नदी प्रवाहान्मकरा कर सलिल संकटाचैतत्,
तिमि मकरोदः क्रूरात् वारि चर प्राणिनिकराच्च ॥ २०१ ॥

यह नदी के प्रवाह समुद्र के जल के संकट तथा तिमि (व्हेल मछली) और मकर (मगरमच्छ) आदि क्रूर जलचरों के समूह से भी रक्षा करता है।

जनयेदुद्भिन्न कुचांस्तन हीना मृत मतीं रजो रहितां,
उत्पन्न वद्व पत्यां बंध्या मेतद् धृतं यंत्रं ॥ २०२ ॥

इस यंत्र को धारण करने से बिना स्तनो वाली ऊंचे ऊंचे स्तनों से युक्त, बिना रजोधर्म वाली अमृत से युक्त और बंध्या बहुत सी संतानों से युक्त हो जाती है।

अन्यानपि शांति कारकानि यंत्राणि
संति तान्य पि धारयेत् तेषामुद्धारः ॥

इसके अलावा और भी शांति करने वाले यंत्र है उनको भी धारण करना चाहिए वह कहे जाते हैं।

साध्यनामापि प्रेतार्थ प्रार्थना सहितं,
ॐ कारादि कुरु द्वय स्वाहांतमध्ये लिखेत् वहिः ॥

साध्य के नाम तथा इच्छा की हुई प्रार्थना के आदि में ॐ और अंत में कुरु कुरु स्वाहा मध्य में लिखे इसके बाहर- ॐ अर्हं ऐं श्रीं ह्रीं क्लीं स्वाहा।

इत्येनन मंत्रेणा चार्या तद्वहि सबिंदु टांत कूटाभ्यां
संवेष्टय तद्वहि स्वरेरा चार्य वहि ब्राह्मया क्षरेण।
वलयं विधाय तद्वही भूमंडलं दत्वा तदनु स्वर
व्यवहीतं हंस जैन संवेष्टय ठकारेण वलयी कृत्य।

तदनु सकल स्वर सहित यांत वेष्टितं कृत्वा पुनः
श्वकारेणा चार्यां: पुनः सकल कलान्वितंनान्त।
बीजेन वलयी कृत्य तदुन आधार वलयं दत्वा
अष्ट दलांबुजे पूर्वादि पत्रेषु प्रादक्षिण्येन।

ॐ अ आ ब्राह्म्यै नमः आं क्रौं स्वाहा
ॐ इ ई माहेश्वर्यै नमः आं क्रौं स्वाहा
ॐ उ ऊ कौमार्यै नमः आं क्रौं स्वाहा
ॐ ऋ ॠ वैष्णव्यै नमः आं क्रौं स्वाहा
ॐ ऌ ॡ वाराह्यै नमः आं क्रौं स्वाहा
ॐ ए ऐं ऐन्द्र्यै नमः आं क्रौं स्वाहा
ॐ ओ औ चामुंडयै नमः आं क्रौं स्वाहा
ॐ अं अः महालक्ष्म्यै नमः आ क्रौं स्वाहा

इति लिखित्वा
तदनु वारि बीज सहित सप्त समुद्रान विलिखत्वा तद्वहिः स्वरांतरित हुं फट इत्यनेन वलया कारेण वेष्टियित्वा तद्वहिर्वायु मंडलं वन्हि मंडलं त्रयं च दत्वा बाहयै ।

ॐ देवाधि देवाय सर्वोपद्रव विनाशनाय सर्वापमृत्युंजय कारणय सर्व सिद्धिं कराय ह्रीं ह्रीं श्रीं श्रीं ॐ ॐ क्रौं क्रौं ठ ठ देवदत्तस्या पमृत्युं धातय धातय आयुष्यं वर्द्धय वर्द्धय स्वाहा

इति मृत्युंजय मंत्रेणावेष्टय भूमंडले नालं कुर्यात् .
मृत्युं जिदा दृयं यंत्रं धारयेत् पूजयेत् सदा
हितश्रिया युष्यो नित्यं पीड़ा दुःखादि वर्जितं ॥ २०३ ॥
ग्रहान् जयति निःशेषान् शाकिन्यो यांति दुःखतां
दुष्ट मृगाश्च नश्यंति यंत्रस्यास्य प्रभावतः ॥ २०४ ॥

साध्य का नाम तथा इच्छा की हुई प्रार्थना के आदि मे ॐ और अन्त में कुरु कुरु स्वाहा लिखे यह मध्य मे लिखकर इसके बाहर

ॐ अर्हं ऐ श्रीं ह्रीं क्लीं स्वाहा

इस मंत्र से वेष्टित करकेआचार्य उसके बाहर बिन्दु सहित टांत (ढ) कूटाभ्यां (क्ष) से वेष्टित करे

उसके बाहर १६ स्वरों से वेष्टित करके उसके बाहर ब्राह्मी आदि आठ आदि देवियों के अक्षरों को ॐ का वलय देकर, उसके बाहर पृथ्वी मंडल बनाकर उसके पश्चात स्वरों को बीच में लिए हुए हंस बीज से घेर कर ठकार का वलय देकर उसके पश्चात सब १६ स्वरों सहित यांत बीच (र) से वेष्टित करके फिर आचार्य सब स्वरों (कला) सहित नांत बीज (प) से घेर कर उसके पश्चात वलय बनाकर अष्ट दल कमल के अन्दर पूर्वादि पत्तों में दाहिनी ओर से

ॐ अ आ ब्राह्मे नमः आं क्रौं स्वाहा
ऊ इ ई माहेश्वर्यै नमः आं क्रों स्वाहा
ॐ उ ऊ कौमार्यै नमः आं क्रो स्वाहा
ॐ ऋ ॠ वैष्णव्यै नमः आं क्रों स्वाहा
ॐ ऌ ॡ वाराह्यै नमः आं क्रों स्वाहा
ॐ ए ऐ एन्द्र्यै नमः आं क्रों स्वाहा
ॐ ओ औ चामुन्डै नमः आं क्रों स्वाहा
ॐ अं अः महालक्ष्मयै आं क्रों स्वाहा

ॐ यह लिखकर उसके पश्चात जल बीज सहित सात समुद्रों को लिखकर, उसके पश्चात स्वरों के बीज में हुं फट को गोलाकार में लिखे उसके बाहर वायु मंडल उसके बाहर तीन अग्नि मंडल देकर उसके बाहर मृत्युंजय मंत्र को लिखे जो निम्नलिखित है।

ॐ देवाधि देवाय सर्वोपद्रव विनाशनाय सर्वापमृत्युंजयकारणाय सर्व सिद्धिं कराय ह्रीं ह्रीं श्रीं श्रीं ॐ ॐ क्रों क्रों ठः ठः देवदत्तस्यापमृत्युं घातय घातय आयुष्यं वर्द्धय वर्द्धय स्वाहा

इस मृत्युंजय मंत्र से वेष्टित करके पृथ्वी मंडल से अंलकृत करे। इस मृत्युंजय नाम के यंत्र को सदा धारण करने से और पूजने से सदा हित होता है, लक्ष्मी की प्राप्ति होती है और दीर्घायु की प्राप्ति होती है तथा पीड़ा और दुःखों से रहित रहता है। यह यंत्र सब ग्रहों को जीतता है, इससे शाकिन्यों को बहुत दुख होता है और इस यंत्र के प्रभाव से दुष्ट मृगादि जन्तु भी नष्ट हो जाते हैं।

ग्रंथान्तरे अन्य मृत्युंजय यंत्र यह है

सबिन्दु जांतोदरजं वरंपदं स होममंहं लपरं ह्रः पश्चहः क्षि बीज पूर्व स्वर टांत वेष्टितं स्वरा वृतं द्वादश पद्म पत्रतः सांतं द्वादश सत्कलान्वित पदं पीयुष पंचाक्षरं क्षीं इर्वीं क्ष्वीं सपरं च बिन्दु सहितं सहोमम ग्रे लिखेत् वाह्रे जल संपुटं परिवृत्तं मृत्युंजयाख्यैः पदैस्तद्वाह्ये जलसंपुटं क्षिति मृतं मृत्युंजयेनाच्चयेत्।

इति मृत्यंजय चक्रं

ॐ नमोर्हते भगवते देवाधि देवाय सर्वापद्रव विनाशनाय सर्वापि मृत्युंजय कारणाय सर्व सिद्धिं कराय ह्रीं ह्रीं श्रीं श्रीं ॐ ॐ क्रों क्रों ठ : झं वं व्ह प: क्षि इवीं क्ष्वीं हंस असि आउसा अर्हं अमुकस्य अप मृत्यु धातय धातय आयुष्य वर्द्धय वर्द्धय स्वाहा ॥ (ईत्यनेनेनन वेष्टय पुनर्नव्ह: प: ह: एभि प्रत्येकं वेष्टयेत पुन: पूभिर्वेष्टयेत ठ ठा ठि ठी ठु ठू ठे ठै ठो ठौ ठं ठ: पुन: स्वरै वेष्टयेत इति कर्णिका। ह हा हि ही हु हू हे है हो हौं हं ह: इत्यं प्रत्येकं पत्रेषु लिखेत्। एकेकं एकेक झं वं व्ह: प: ह: मृत्युंजय इति। चतुर्भिरक्षरै वेष्टेयेत पूर्वादि दिक्षु चतुरिक्षु।

बिंदु (अनुस्वार) सहित जांत बीज (झं) के उदर (बीज) में होम (स्वाहा) सहित वरं पदं लिखे अर्थात वरं कुरु कुरु स्वाहा लिखकर इसको (झं) से घेर कर बाहर अर्हं लिखे बाहर लपर बीज (वः) फिर व्हः फिर प बीज फिर ह बीज फिर क्षि बीज से वेष्टित करे बाहर टांत बीज (ठ) को सब स्वरो सहित लिखे फिर सब स्वरों को लिखे फिर बारह दल के कमल में सांत बीज (ह) को बारह स्वरों सहित लिखे फिर पांच पीयूष (अमृत) अक्षरों को अर्थात् झं वं व्ह पः हः लिखे इनके आगे क्षीं इवीं क्ष्वीं लिखे फिर सपरं (ह) बीज को बिन्दू (अनुस्वार) सहित अर्थात् (हं) लिखे फिर सः लिखकर होम (स्वाहा) बाहर सांत (हं) को स सहित संपुट से हंस के वेष्टित करे फिर मृत्युजय पद लिखे इसके बाहर जलमंडल फिर पृथ्वी मंडल लिखे यह मृत्युंजय यंत्र है इसकी अष्ट द्रव्य से पूजन धारण करे।

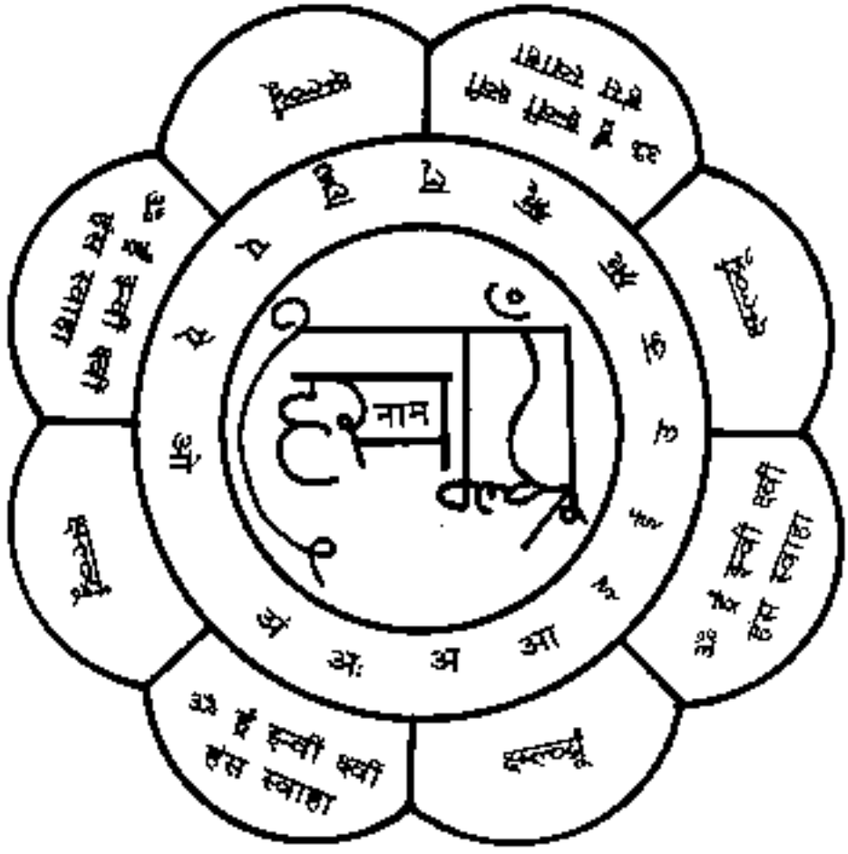

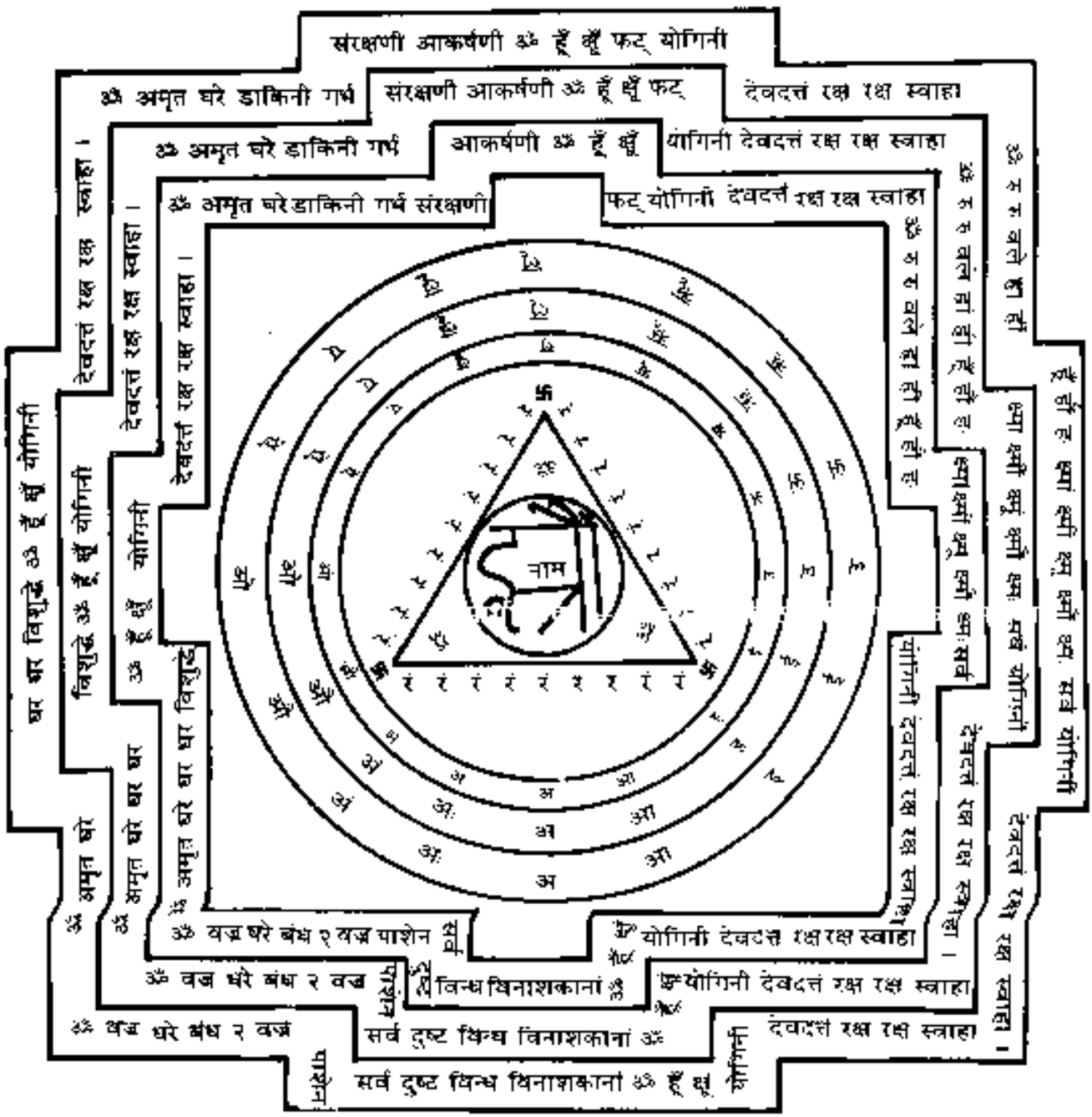
संरक्षणी आकर्षणी ॐ ह्रूँ क्षूँ फट् योगिनी
ॐ अमृत घरे डाकिनी गर्भ संरक्षणी आकर्षणी ॐ ह्रूँ क्षूँ फट् देवदत्तं रक्ष रक्ष स्वाहा
ॐ अमृत घरे डाकिनी गर्भ आकर्षणी ॐ ह्रूँ क्षूँ योगिनी देवदत्तं रक्ष रक्ष स्वाहा
ॐ अमृत घरेडाकिनी गर्भ संरक्षणी फट् योगिनी देवदत्तं रक्ष रक्ष स्वाहा
देवदत्तं रक्ष रक्ष स्वाहा ।
देवदत्तं रक्ष रक्ष स्वाहा ।
देवदत्तं रक्ष रक्ष स्वाहा ।
ॐ र र वले ह्रा ह्रीं ह्रूँ ह्रौं ह्रः
क्ष्मां क्ष्मीं क्ष्मूं क्ष्मैं क्ष्मः सर्व योगिनी
ह्रूँ ह्रीं ह्रः क्ष्मां क्ष्मीं क्ष्मूं क्ष्मैं क्ष्मः सर्व योगिनी
घर घर विशुद्धे ॐ ह्रूँ क्षूँ योगिनी
विशुद्धे ॐ ह्रूँ क्षूँ योगिनी
ॐ ह्रूँ क्षूँ योगिनी
अमृत घरे घर घर विशुद्धे
ॐ अमृत घरे घर घर
ॐ अमृत घरे
ॐ वज्र धरे बंध २ वज्र पाशेन सर्व
ॐ वज्र धरे बंध २ वज्र विघ्न विनाशकानां ॐ
ॐ वज्र धरे बंध २ वज्र सर्व दुष्ट विघ्न विनाशकानां ॐ
योगिनी देवदत्तं रक्ष रक्ष स्वाहा
योगिनी देवदत्तं रक्ष रक्ष स्वाहा
योगिनी देवदत्तं रक्ष रक्ष स्वाहा
योगिनी देवदत्तं रक्ष रक्ष स्वाहा
देवदत्तं रक्ष रक्ष स्वाहा ।
देवदत्तं रक्ष रक्ष स्वाहा ।
नाम

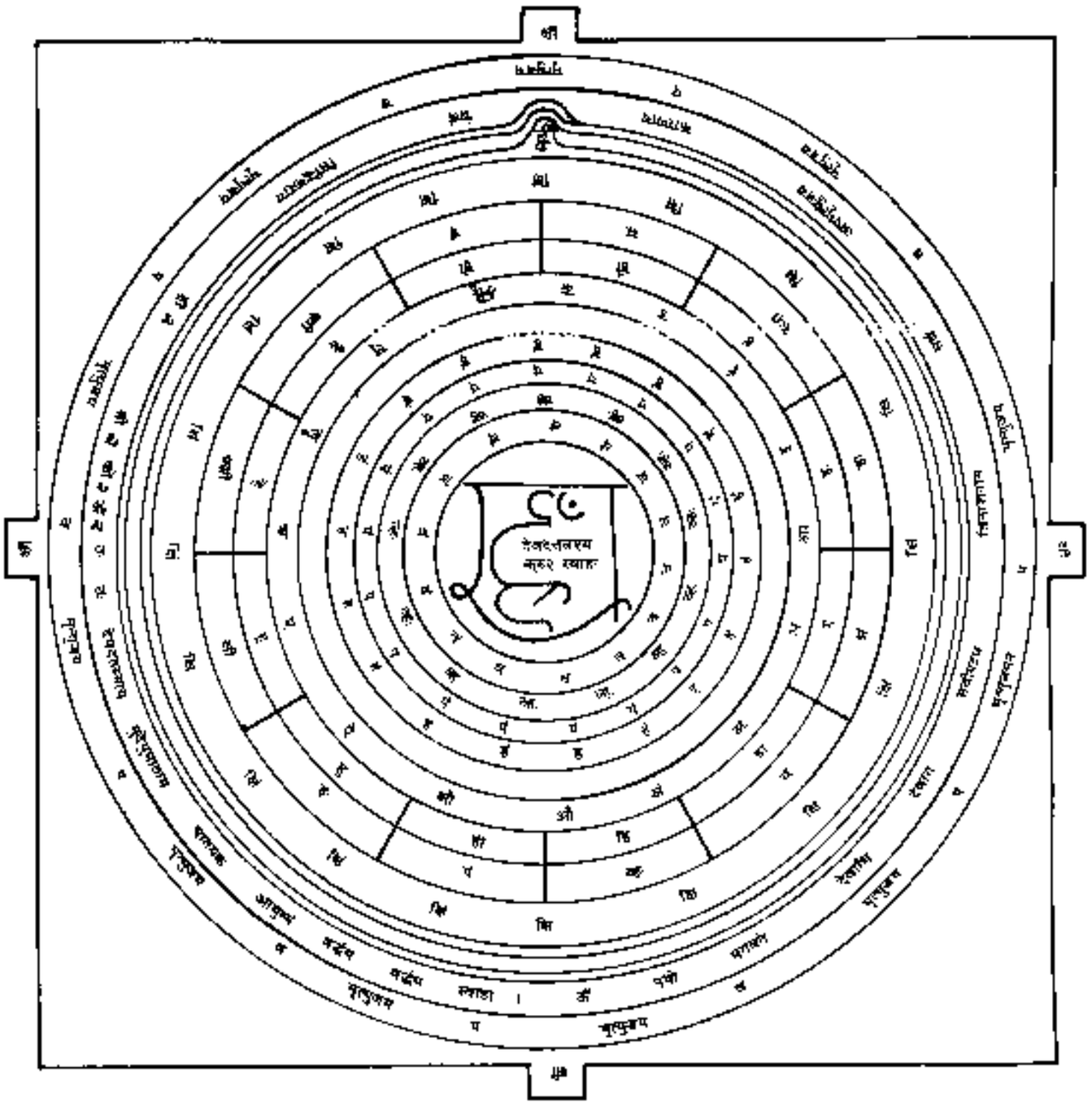

नाम झौंकार मध्ये वहिरपि वलयं षोडश
स्वस्तिकाना माग्नेयं गेह मुपन्नव शिरिव मथ तद्वेष्टितंत्रि
कलाभि वद्याद्वाह्यस्य चत्वारो मर पुर पुराण्यं अंतरालस्थ
मंत्राण्ये तद्यत्रं सुतत्रै लिखित म पहरेत् शाकिनीभ्य सुभीतिं।

झौं के बीच में नाम को लिखकर उसके चारों तरफ १६ स्वस्तीक बीज लिखे फिर अग्निमंडल बनावे उसको तीनबार १६ कलाओं से वेष्टित करे। उसके बाहर पृथ्वीमंडल में चार अमरपुर में अंतराल से निम्नलिखित मंत्र लिखे इस मंत्रको विधिपूर्वक लिखा जानेसे शाकिनी भय नहीं होताहै।

मंत्रोद्धार :

ॐ वज्रधरे बंध बंध वज्रपाशेन सर्वदुष्ट विघ्न विनाशकानां ॐ हूं क्षूं योगिनी देवदत्तं रक्ष रक्ष स्वाहा। ॥ पूर्वस्यांदिशि ॥

ॐ अमृत धरं धर धर विशुद्धे ॐ हूं क्षूं योगिनी देवदत्तं रक्ष रक्ष स्वाहा।

॥ दक्षिणस्यां दिशि ॥

ॐ अमृतद्धरे डाकनी गर्भ संरक्षणी आकर्षणी ॐ हूं क्षूं फटे योगिनी देवदत्तं रक्ष रक्ष स्वाहा। ॥ पश्चिमीस्यां दिशि ॥

ॐ रू रू वले हां हीं हूं हौं ह: क्ष्मां क्ष्मीं क्ष्मूं क्ष्म: सर्वयोगिनी देवदत्तं रक्ष रक्ष स्वाहा

॥ उत्तरदिशि ॥

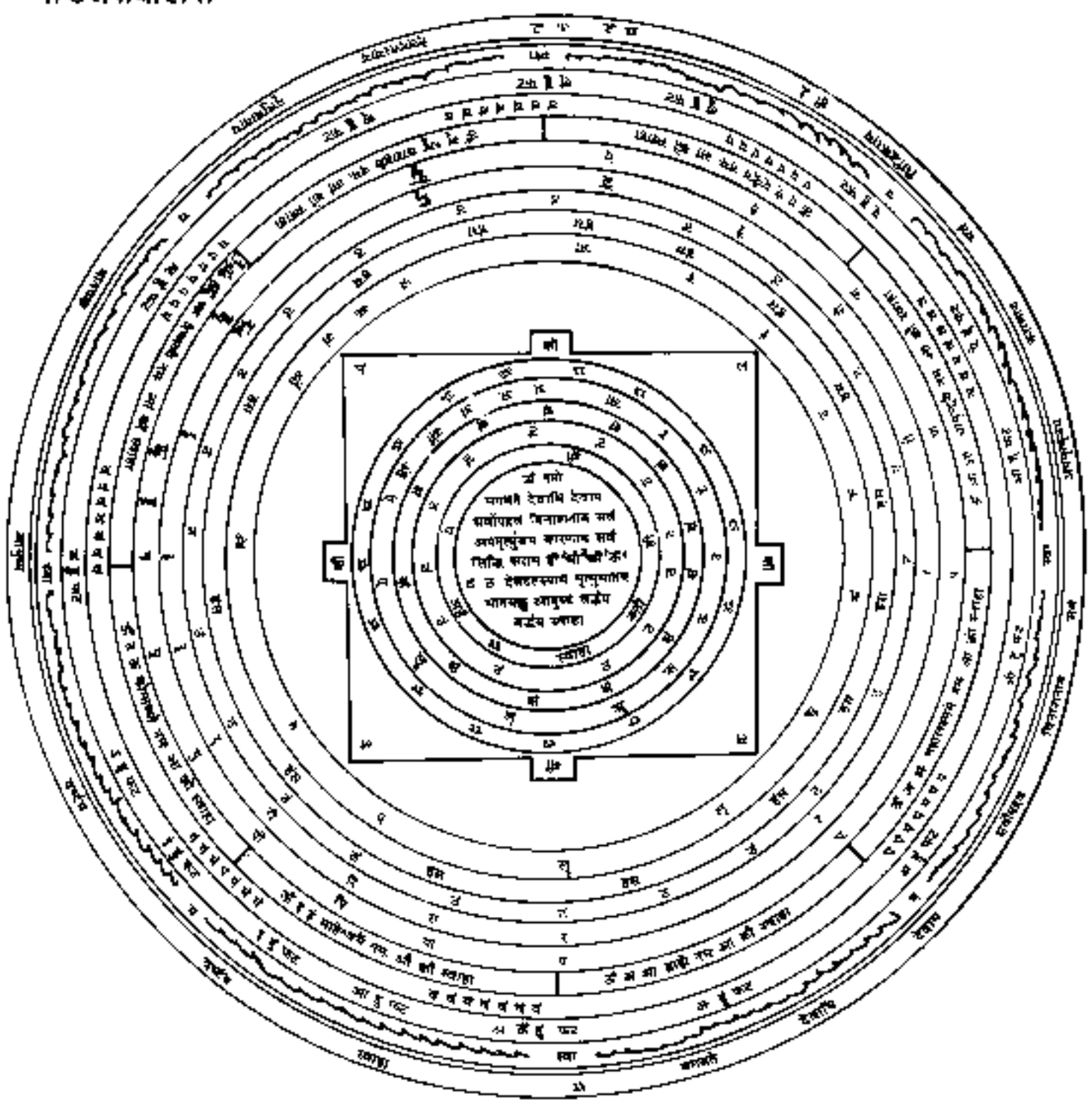

इत्थं होम विधिश्च स्नपन विधानं यंत्र धारण च,
कथितानि सर्व शांति क्रिया विधानानि कार्तस्न्येन ॥ २१६ ॥

इस प्रकार होम विधि स्नान विधि और यंत्र को धारण करने की विधि का वर्णन करके सर्व शांति विधान की क्रिया को कार्तस्न्य (सम्पूर्ण रुप) से कह दिया

एकैक मप मीषां दातुमलं सर्व शांति कर्म फलं
किमुत समवाय एषाम नुक्ता नां विधानज्ञै ॥ २१७ ॥

इनमे से एक एक को देने से भी सर्व शांति कर्म का फल मिलता है फिर भला विधान को जानने वाले यदि इन सब को दे तो कहना ही क्या है।

सर्व शांति रिति प्रोक्ता प्रपंचित वहु क्रिया इति मृत्युंजय विधानं,
अथ नीरांजना दीनि वक्ष्याम्यधि कृतान्यहं ॥ २१८ ॥

इसप्रकार बहुत क्रिया के विस्तार वाली सर्वशांति का वर्णन किया गया है। मृत्युंजय विधान सम्पूर्ण हुआ , अब अधिकार में आए हुए नीरांजन (उतारा) आदि की विधि का वर्णन किया जाएगा।

नीरांजन विधि

परि मर्दितेन पिष्टेन कारयेत्स्वस्ववर्ण युक्तानि
प्रवराष्ट मातृकानां मुखान्यलंकार सहितानि ॥ २१९ ॥

मल कर पिसी हुई सिद्ध मट्टी से अपने अपने वर्ण के अनुसार सहित मुख्य अष्ट मातृका देवियो के मुख अलंकार सहित बनाए।

बहु चरुक मलयज कुसुमाक्षत दीप धूप सहितेन
एकैकेन मुखेन तु निवर्द्धयेत्प्रति दिनं विधिना ॥ २२० ॥

और बहुत प्रकार के चरु नैवेद्य चंदन पुष्प अक्षत दीप और धूप से प्रति दिन एक एक के मुख का भोग लगाए।

कूटय ङ्ं कांत चांत ठकारा वुधि सांत पिंडसंभूतैः
मंत्रं निवर्द्धयेन्मातृके बलिं गृह्ण गृह्ण होमांतैः ॥ २२१ ॥

ॐ क्ष्म्ल्र्व्यूं ल्म्ल्र्व्यूं ङ्म्ल्र्व्यूं व्म्ल्र्व्यूं ठ्म्ल्र्व्यूं ह्म्ल्र्व्यूं

बीजों में से उस मातृका का पूर्वोक्त क्रम से नाम लगाकर मातृका के बलिं गृहण गृहण स्वाहा मंत्र से बलि दे।

ॐ ह्रीं क्रों क्ष्म्ल्र्व्यूं सर्व लक्षण सम्पूर्ण स्वायुध वाहन चिन्ह सहिते हे ब्राह्मी बलिं गृह्ण गृह्ण देवदत्तं रक्ष रक्ष स्वाहेत्यादि ॐ ह्रीं क्रौं ह्म्ल्र्व्यूं इत्यादि मंत्रैर्निवर्द्धनं कुर्यात् ॥

एकैकमपि निवर्हणमनेक दोषापहारि भवति नृणां
एवं निवद्ध्यं धीमान जल मध्ये तं बलिं दद्यात् ॥ २२३ ॥

एक एक की ही बलि देने से पुरुषों के अनेक दोष दूर हो जाते हैं इस प्रकार कार्य करने से सब बलि को जल में विसर्जित कर दे।

ब्राह्म्यादिमुख नीरांजनं

ब्राह्मी आदि आठों मातृका देवियों के मुख की आरती करे

नवग्रहों की शांति का विधान

नाग विधि

जलं गंधाद्र कृतया परिमर्दितया प्रशस्त मृतकया
पिष्टेन वा सुशालै र थवा गोधूम पिष्टेन ॥ २२४ ॥

जल और गंध (चंदन) मे गीली की हुई मिली हुई उत्तम सिद्ध मिट्टी अथवा उत्तम चावलों या गेहूँ के आटेसे

कथित निज फणसमेता: सलक्षण: स्वग्रह प्रभा:,
कार्या: नागास्ते हस्त मिता एक वृतास्त्रि प्रमाणा वा ॥ २२५ ॥

पूर्वोक्त कहे हुए अपने फण सहित अपने अपने लक्षणो सहित अपने घर की सी कांति वाले नागों की आकृति बनाए वह नाग एक हाथ ऊँचे एक या तीन कुंडल वाले हो।

इति नाग विधि:

गुडोदनं रवेरिंदो र्नागस्य घृतपायसं,
गुड पायस मारस्य चांद्रस्साज्यो हरिन्चरु: ॥ २२६ ॥

(रवि) सूर्य के नाग का गुड़ और भात इन्दु (चन्द्रमा) के नाग का घृत और खीर, मंडल का गुड़ और खीर, बुध के नाग का घृत ।

जीवस्याहेर्गुड़ स्यान्नं शुक्रस्य तु घृतौदनं,
सौरेश्चरुर्घृतो पेतस्तिल चूर्ण विमिश्रित: ॥ २२७ ॥

वृहस्पति के नाग का गुड़ का अन्न शुक्र का घृत और भात और शनिश्चर के नाग का घृत युक्त नैवेद्य तिलों के चूर्ण से मिला हुआ हो।

प्रियं माषोदनं राहो: शंखश्रुक्त्यांर्पितांबु वा,
नाग राजस्व केंतोरपे तदेव प्रियं स्मृतं ॥ २२८ ॥

राहु के नाग का उड़द और भात शंख और सीप युक्त जल प्रिय होता है। तथा केतु के नागराज को भी यही प्रिय होता है।

नवग्रहों के मंत्र

सूर्य का मंत्र

ॐ बंधूक रक्तोत्पल सदृश मूर्ति लोक नाथ महा देवादित्य: शांतिं: प्रयच्छतु स्वाहा

चंद्रमा का मंत्र

ॐ विसहार शंख काश समप्रभ रोहिणी पतिश्चन्द्र: शांतिं व: प्रयच्छतु स्वाहा ॥

मंगल का मंत्र

ॐ भूमिपुत्र रक्त चंदनाभ कुमारांगारक: शांतिं व: प्रयच्छतु स्वाहा

बुध मंत्र

ॐ शिरीष पुष्प तुल्य सोम पुत्र बुध: शांतिं व: प्रयच्छतु स्वाहा

वृहस्पति मंत्र:

ॐ स्वर्ण द्युति महा मह पूर्ण शशांकस्य वृहस्पति: शांतिं व: प्रच्छतु स्वाहा

शुक्र मंत्र:

ॐ भृगु पुत्र कुंदेन्दु वर्ण विशाल कीर्ति विग्रह कारि शुक्र: शांति व: प्रयच्छतु स्वाहा

शनैश्चर मंत्र:

ॐ अंजन नीलोत्पल निभाय तिलोचन शनैश्चराय नम: शांतिं व: प्रयच्छतु स्वाहा

राहु मंत्र:

ॐ मुंड राहु स्वर्भानु चंद्र ग्रास क शांतिं व प्रयच्छतु स्वाहा

केतु मंत्र:

ॐ केतु घर केतु सुकेतु सूर्य ग्रासक शांतिं व: प्रयच्छतु स्वाहा

सूर्यादुरगफणा सु स्थाप्या मणय: क्रमेण
माणिक्या मुक्ता प्रवाल मरकत पुष्प स्फटिकेन्द्र नीलाश्च ॥

सूर्य आदि के नागों के फणों में क्रमशः निम्नलिखित मणियों की स्थापना करें।

सूर्य = की माणिक्य
चंद्र = मुक्ता मोती
मंगल = प्रवाल मूंगा
बुध = मरकत पन्ना

बृहस्पति = पुष्प पुखराज
शुक्र = स्फटिक
शनैश्चर = इंद्रनील (नीलम)

रवि वाराद्या क्रमतो वाराः स्यु कथित जटिल केशावेः
वारा मंदस्य पुनर्विदद्यादाशी विषस्यापि ॥ २६० ॥

इन ऊपर कहे हुए सूर्य आदि ग्रहों के वार रविवार आदि हैं केतु व आशि विष सर्प और शनिश्चर दोनों का ही शनिवार होता है

इंद्रा निल यम यक्ष त्रिनयन दहनाध्वि राक्षसां,
हरितः इह कथित जटिल केश प्रभृती नास्युः क्रमेण दिशः ॥ २६१ ॥

उन सूर्य आदि ग्रहों की दिशाएं क्रम से निम्नलिखित हैं।

सूर्य = इन्द्र = पूर्व
अनिल = अग्नि
यम = दक्षिण
यक्ष = नैऋत्य
त्रिनयन = पश्चिम
दहन = वायु
अध्वि = उत्तर
राक्षस = ईशान
हरित = ऊपर आसमान

इह कथिता शादि युतैः स्वच्छो बुभि गंध पुष्प उल भक्षैः,
सप्तैकाविंशांति वंदिवां दिनानि नामान्ये यं जिज्ञाशाद्यां ॥ २६२ ॥

इति नाग पूजा विधि

इस प्रकार कही हुई दिशाओं आदि से युक्त इन नागों की स्वच्छ जल चंदन पुष्प फल और भक्ष द्रव्य नैवेद्य से इक्कीस आदि दिनों तक पूजा करें

नवग्रहों की बलिदान विधिः

अथ पूजांते प्रत्य हंमं भोमाद्यो बलिं स्वदिशो वं
दद्यान्न व ग्रहेभ्यः सन्मंत्री वक्ष्य माणमसु ॥ २६३ ॥

पूजा के समाप्त होने पर प्रतिदिन जल में नवग्रहो की अपनी अपनी दिशा में नवग्रहों के लिए निम्नलिखित प्रकार से उत्तम मंत्री बलि दे।

भक्षैर पूप शष्कुलिका शोक वर्त्ति कादैश्च,
अन्यैश्च विचित्रास्यै र्भक्षैन्नव पटलि का निहितैः ॥ २६४ ॥

पूवे लड्डु कचोरी अशोक की बत्ती आदि तथा अन्य भी विचित्र प्रकार के भोजनों को नई तस्तरी मे रखकर

स्नातं मलयज लिप्तं घृत सित कुसुमं सु भूषितं,
विधिना ग्रह पीड़ित विषणं निवर्द्ध यत्स्वं जपन मंत्री ॥ २६५ ॥

स्नान किए हुए शरीर में चंदन का लेप लगाए हुए सफेद पुष्पों से भूषित (धारण किए हुए) और विधि पूर्वक सजे हुए ग्रह से पीड़ित दुखी साध्य को मंत्री मंत्र जपता हुआ निवर्द्धन करे।

आदाय पटलिका नामभि नव गंधाक्षत प्रसून युता,
नव यौवन स्य पुंसः सो स्मीपे मूर्द्ध निनस्येत् ॥ २६६ ॥

फिर उस तस्तरी को लाकर नए चंदन अक्षत फूलों से युक्त करके नए यौवन वाले पुरुष के सिर पर रखे।

दीपात पत्र चामर वाहन मान ध्वजादि शोभितया,
गत्वा महाविभूत्या तिष्टे त्साँमसि कटि द्वयसे ॥ २६७ ॥

दीपक छत्र चमर सवारी गाड़ी ध्वजा आदि से शोभित बड़ी भारी विभूति सहित अम्भस (जल) के किनारे बैठे।

अस्यानुचरस्य शांत्यै बलिं कृत्वा स्मा भिरेष युष्माकं,
ग्रह देवताः प्रसन्ना यूयं भूयास्तंस्ते पठेत् ॥ २६८ ॥

तब मंत्री यह कहे कि हे ग्रह के देवताओं इस अनुचर की शांति के वास्ते हम तुम्हारे लिए बलि देते हैं। अव प्रसन्न हो जाएं।

अस्य अनुचरस्य शांत्यै बलिं कृत्वा अस्माभिरे
षयुष्माकं ग्रह दैवताः प्रसन्ना यूयं भूयास्तव ॥

अथा तः मुक्तान्ती राम पटलिकया सह निमग्न,
तत्त जले तां प्रोजझित्त वलोकिक स्तेन्षा तत्तो गच्छेत् ॥ २६९ ॥

इसके पश्चात बलि वाली उस तरतरी को बलि द्रव्य सहित ही उस जल में डुबा कर उसे वहीं छोड़ कर पीछे बिना देखे हुए वहां से चला आए।
(तीर = किनारा-निमग्न = डुबोकर , प्रोजझित छोड़कर)

बलिदान विधि

देवी दिव्यानां चैत्यंबा अंबालिका च कूष्मांड़ी
काली च महाकाली नागी कल्पा तथैव कंकाली
सत्काल राक्षसी वरंजंघी श्री ज्वाला मालिनी
चैव विकराली वैताली यैतासां दिव्य देवतानां तु ॥ २७० ॥

फिर दिव्य देवियों अंबा अंबाविका कूष्मांडी काली महाकाली नाग लोक वाली कल्प वासनी कंकाली कालराक्षसी वरंजघी ज्वाला मालिनी किकराली वैताली इन दिव्य देवियों के लक्षण सहित मुख सिद्ध मिट्टी से बनाए।

कृत्वा मुखानि लक्षण युतानि सिद्ध मृतकया,
तीक्ष्णो न्नत दंष्ट्राणि छत नयनानि लुठित जिह्वानि ॥ २७१ ॥

इसके तीक्ष्ण आगे निकले हुए दांत और डाढ गोल नेत्र और जीभ बाहर निकली हुई हो।

कुसुमाक्षत मलयज दीप धूप वहु भक्ष युक्तानि
एकैकेन मुखेन प्रति दिवसं कार्यैत् निवर्द्धकं
प्रारभ्ये चतुर्दश्यां नव दिवसं सप्तमी यावत ॥ २७२ ॥

पुष्प अक्षत चंदन दीप धूप बहुत प्रकार के भक्ष व्यंजनो से इन देवियों के प्रत्येक के मुख में प्रतिदिन बलि दे, यह प्रयोग चतुर्दशी से आरंभ करके नव दिन तक अर्थात् सप्तमी तक किया जाता है।

ॐणमो भय वद्दो अरिट्ठ णेमि णहाय अट्ठ महानिमित्त कुशलाय परमट्ठ साहणाय ऐं ह्रीं अंबे अंबाले आम्र कुष्मांडी ऊर्ज्जयंत गिरि सिहरणि वासिणी सर्व विघ्न विनाशिनी यक्षी महालक्षी ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः वज्र हस्ता अरिट्ठेण बंधेण बंधामि रस्काणं जस्काणं भैरवाणं भूयाणं चोराणं शाईणीणं डाईणीणं विज्जास णाणं मुसआणं महोरगाणं आणं सत्तूणं आग्गणं आदि वरस्कादि वाल मित्ताणं मारीणं जरादि रोगाणं णाण विदू वाहाणं थावर जंगम कट्टिमा कट्टिम विसाणं अणे जे के वि दुट्ठा संभवंति तेसिं मणं मुहं दिट्ठी गींद मोसादुं कोहं च वंधामि ॐ धणु ॐ धाणु महा धणु धणु ठः ठः म्मल्व्यूं ठः क्षमां क्षमीं क्षमूं क्षमौं क्षमः क्षां क्षीं क्षूं क्षौं क्षं क्षः क्षिप ॐ स्वाहा हास्वा ॐ प क्षि ॐ क्रों प्रों त्रीं ठः ठः ठः ठः ठः ठः

शत मुख रिपु मंत्र

वृद्धि कर मशुभ नाश कृत्वा नीनांजनं शुचिः मंत्री
शत मुख रिपु मंत्रेण तु जल मध्ये तं बलिं दद्यात्॥

पवित्र मंत्री वृद्धि के करने वाले अशुभ नाश करने वाले नीरांजन को करके शात मुख रिपु मंत्र से जल में बलि दे।

वीरेश्वरश्च वटुकः पंच शरो विघ्नविनायकश्च
महाकाल श्चैते स्वं मुखानि पिष्टेन कार्याणि ॥ १ ॥

वीरेश्वर वटुक पंच शर (तीर पांच) और विघ्न विनायक और महाकाल के मुखों को भी पिसी हुई सिद्ध मिट्टी से बनाए।

उग्राणि लोचन त्रय युतानि मून्द्धस्थ दीप्त दीपानि,
बहु भक्ष चरुकव लघाज्य सुगंध धूपादि सहितानि ॥ २ ॥

इनके उग्र तीन नेत्र सिर पर प्रज्वलित दीपक और बहुत प्रकार के भक्ष्य द्रव्य पुष्प चंदन घृत और सुगंधित धूप है।

तेनैकैकेन निवद्धं योन्मुखे द्रवैर मंत्रेण,
ग्रह रोग महा पीड़ामप हरति बलिं जले क्षिप्तः ॥ ३ ॥

इन हर एक के मुखों को मंत्र पूर्वक इस बलि द्रव्यों से गीला करके जल में इस बलि को फेंकने से ग्रह रोग मारी पीड़ा नष्ट होती है।

दधि घृतमिश्रेण सुमर्दितेन शाल्योदनेन,
तत्कृत्वा दुर्दशनं सित दंष्टं सुसिद्ध वाणीश्वरी रुपं ॥ ४ ॥

फिर पिसी हुई सिद्ध मिट्टी में दही घृत चावलों के जल को मिलाकर उससे तीक्ष्ण नख दांत और डाढ़ वाली सिद्ध वागेश्वरी के रुप को बनाएं।

ज्वलित द्विर्द्विवर्ति मूर्दिध्नं दीप समुज्वलं दद्यात्
जिह्वाष्टक मक्षणामपष्ट शतं कारयेच्चान्यत् ॥ ५ ॥

इनके संमुख सिद्ध दो दो बत्ती के दीपक जले हुए हों मस्तक पर उज्वल दीपक रखा हुआ हो और आठ जीभ तथा १०८ आँखें हों।

कृशरादे चोदनं गंध वलि भक्ष सहितेन,
रूपेण तेन कुर्या न्विव र्द्धनं निशि समस्त दोष हरं ॥ ६ ॥

चावलों की खिचड़ी जल चंदन और भक्ष्य योग्य व्यंजनों की बलि देने से और उनका पूर्वोक्त रूप बनाने से रात्री के समस्त दोष नष्ट होकर वृद्धि होती है।

दीक्ष्णोन्नत सित दंष्ट्रं विलुलित जिह्वा त्रिनेत्रमपनाशं
पीठेन कारयेद्विकरालं वागीश्वरी रूपं ॥ ७ ॥

फिर तीक्ष्ण उन्नत और श्वेत डाढ़ों वाली निकलती हुई जिह्वा वाली तीन नेत्र वाली वागेश्वरी देवी का विकराल रुप पिसी हुई सिद्ध मिट्टी से बनाएं।

रूपेण तेन बहु बलि भक्ष चरु कर दीप धूप सहितेन,
कुर्यान्निवर्द्धनं सकल दोष हृत वज्र मंत्रेण ॥ ८ ॥

इन वागेश्वरी देवि के रुप को बनाकर चरु दीप और धूप की बलि से आरत्या खड्ग मंत्र से देने से सम्पूर्ण दोष नष्ट हो जाते है।

योगिनी का दिव्य महा योगिनी का सिद्ध योगिनी चैव
अन्या जित्वरी प्रेता शिन्य च शाकिनी देवी ॥ ९ ॥

दिव्य योगिनी-महा योगिनी-सिद्ध योगिनी और अन्य जिनेश्वरि प्रेताशिनी और शाकिनी देवी

रूपाण्यासांपिष्टेन कार्योद्रक्ष बलि समेतानि
जिह्वाष्टक मष्ट शतेनेत्राणां क र्योत्प्रागवत ॥ १० ॥

के रुपों को पिसी हुई सिद्ध मिट्टी से तथा भक्ष द्रव्य और बलि सहित आठ जिह्वा और एक सो आठ नेत्रों वाला पहले की तरह बनाएं।

घंटा पताकिका माल्य दीप युक्तेन तेन मंत्रेण,
रूपेणैकैकेन प्रति दिवसं कुरु निवर्द्धनकंबलि विधिः ॥ ११ ॥

इनके सन्मुख घंटा पताका औरमाला दीपक धूप सहित आदि रखकर सिद्ध मंत्र से चरु की बलि प्रतिदिन पृथक पृथक दे।

इति बलि विधिः

तेषां नवग्रहाणां पश्चान्निरवितेन पृथक् पृथक्
शुद्धेन तेषां रूपेणैव प्रतिमायां भौम युक्तायां ॥ १२ ॥

इसके पश्चात पृथक पृथक लिखे हुए उन नवग्रहों के शुद्ध रुप से भौम युक्त प्रतिमाएं

पुरुषातीतायुर्वर्ष संख्य या तंदुलाजलिनादाय.
तत्पिष्टेन तु कुर्याद ग्रहरूपं लक्षण समेतं ॥ १३ ॥

नवग्रह से पीड़ित पुरुष की बीती हुई आयु के वर्षों की संख्या प्रमाण चावलों की अंजुलियों को लेकर और उसको पीसकर लक्षण सहित ग्रह का रुप बनाए।

तद्रूपं वहु वलि भक्ष गंध सन्माल्य दीप धूप युतं,
अग्रे निया य तस्य तुरस्य नव पटलिकांतस्थं ॥ १४ ॥

उन ग्रहों के रुपों को बहुत प्रकार की बलि भक्ष योग्य व्यंजनों को गंध पुष्प माला दीप और धूप सहित बलि दे औरउनके सन्मुख नए पाटे पर ग्रह से पीड़ित पुरुष को बैठाएँ।

खड्गै रावण विद्या मंत्रैरु चार यन्म हा मंत्री,
पुष्पै र्निवद्यर्च्य पूर्वं सतंदुलै र्ग्रह मुखं हन्यात् ॥ १५ ॥

फिर मंत्री खंगै रावण विद्या का जोर से उच्चारण करता हुआ पहले पुष्पों की बलि देकर फिर उनके मुख पर चावल मारे।

खड्गैरावण मंत्रः

ॐखड्गै रावणाय विद्म है चंड़ेश्वर भाश श धीमहे तन्नो देवः प्रचोदयात्
रूपेण तेन पश्चान्निद्यर्च्य विधिना जलस्य मध्ये,
तंद्याब्द लिं निशायां समस्त दोषान् हरत्याशु ॥ १६ ॥

फिर उस रूप को रात्री मे विधि पूर्वक बलि देकर जल में स्थापित कर दे तो समस्त दोष शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं।

सप्त विद्यो नीरांजन विधिरैष ज्वालिनी समुदिष्टः
ग्रह भूत रोग शाकिन्यापमृत्यु भयापहत्सद्यः ॥ १६ ॥

यह ज्वाला मालिनी देवी समुद्देश में सात प्रकार की नीरांजन विधि ग्रह भूत रोग शाकिनी अप मृत्यु के भय को शीघ्र ही नष्ट करती है।

तेषां नव ग्रहाणां तत शांति विधि क्रियां,
सदा तेपि कुर्वंति महादुःख प्रतिकला स्तनु भृतां ज्ञेया ॥ १७ ॥

उन नवग्रहों की शांति की विधि की क्रिया को अज्ञान से महा दुःख से पीड़ित प्राणी सदा प्रतिकूल रूप से करते हैं।

नवग्रहों का विशेष वर्णन

रविश्चंद्र कुजः सौम्यो गुरुः शुक्रः शनैश्चर,
राहु श्चेति ग्रहाः केतु र्नव भिन्नोतराहुतः ॥ १८ ॥

सूर्य चंद्र मंगल बुध बृहस्पति शुक्र शनि राहु और केतु ये नो ग्रह होते हैं।

स्व स्थानानि शिरो मुख हृदय करि पार्श्वं,
पृष्ट जंधान्हि अष्टौ रव्यादीनाम राव्हंता नां ग्रहाणां स्युः ॥ १९ ॥

उन राहु तक के ग्रहो के अपने अपने स्थान क्रमशः सिर मुख हृदय कमर पार्श्व (कोख) पीठ जंघा और पैर के ग्रह यह आठ कहे गये है।

विकृति र्महतिर्वायोः पित्तस्य कफस्य च,
रोगाश्चा ग्रंथि कुष्ठादीन महोपद्रवं संयुतान् ॥ २० ॥

यह ग्रह अपने अपने स्थानो में क्रमशः वात पित्त कफ के महान विकार गाठ कोढ़ आदि के महान उपद्रव सहित रोग।

पीठाश्चग्नि शिल शस्त्र विष शून्यादि संभवाः,
स्व स्थानेषु ग्रहा कुर्युश्चूर्द्धादिषु क्रमेणतु ॥ २१ ॥

अग्नि की शिला शस्त्र और विष के देने से हुए पीठ आदि में रोगो को यह ग्रह सिर आदि के क्रम से अपने अपने स्थानो में कहते हैं।

निज नागानां विधिना रचिता नां स्यातं मंत्र मणि फंणिभिः
निज वारे निज हरिति च मंत्री वरेणे ज्यया कृतया ॥ २२ ॥

मंत्री के द्वारा विधि पूर्वक बनाए हुए फणों को मणियों सहित नागों को अपने अपने बार तथा अपनी अपनी दिशा में पूजन किये जाने से।

नव ग्रहास्ते तृप्यंति ग्रहार्त्ताश्चानु गृह्णते,
समयंति च रोगां स्तान स्वस्थान स्वात्मनाकृतान ॥ २४ ॥

वह नवग्रह तृप्त हो जाते है और ग्रहो से पीड़ित पुरुष पर कृपा होती है तथा उनके अन्दर हुए रोग शांत होकर वह स्वस्थ हो जाता है।

रवे जडिल केश: स्या न्नागो गंधोरहिं विधो:,
अभ्यंहितवह विद्यां दनं तोत्पलिकं परं ॥ २५ ॥

सूर्य का नाग जटिल केश आकाश में रहता है विधु (चंद्रमा) का गंध नाम अभय (मंगल) का हित वह नाग बुद्ध का अर्णतो उत्पलिका नाग है।

केशोत्पलिक मार्यस्य गज कुंड़ कवेर्विदु:,
मंदस्य कालिका नाग राहो राशि विषं तथा ॥ २६ ॥

वृहस्पति का केशोत्पलिका शुक्र का गज कुड़ा शनिश्चर का कालिका नाग और र हु का आशि विष नाग है।

कमत श्चत्वारी द्वौ सप्त दश द्वादश- त्रयोदश च
द्वौ च त्रयश्च तेषां संति फणा नाग राजानां ॥ २७ ॥

उन नागों के क्रम से चार दो सात दश बाहह तेरह दो और तीन फण है।

राज ग्रहस्य नागेंद्र: परित्यक्त शिर: फण:,
पुछ मात्र स्वदेह श्च तथा केतोश्च नागराट् ॥ २८ ॥

केतु का नाग राज बिना सिर रूप फण वाला केवल पुछ मात्र शरीर ही धारण किए हुए है।

इति ग्रह पूजा विधि

दिवसे ष्वखिलेष्वपि कारयेन्महा भिषवं,
साध्य स्तीर्थ करस्य प्रीत्या ग्रह तुल्य वर्णस्य ॥ २९ ॥

उन ग्रहों की पूजा की विधि के दिन ग्रहों के रंग वाले तीर्थंकरों का भी महा अभिषेक व पूजन करना चाहिए।

नित्यं रोगी स्नायान्मजन पीठ प्रणाल निर्गलतै:
निपतद्भिं द्विन्निर्ज मूर्द्धनि जिनाभिषेकाबुभि: पूर्णै: ॥ ३० ॥

जो पुरुष रोगी रहता है वह भगवान के अभिषेक के सिंहासन की नाली से निकल कर गिरे हुए जल को अपने सिर पर डाल कर स्नान करे।

ग्रह वर्णै गंधाधै: छत्रैर्वस्त्रै र्ध्वजै महा चरुणा,
अपि नृत्य गीतवाद्यैर्यजे जिनेन्द्रं यथा विधिना ॥ ३१ ॥

फिर उन भगवान की ग्रह के रंग के गंध आदि छत्र वस्त्र ध्वजा और महा नैवेद्य तथा नृत्य गीत और बाजे से विधि पूर्वक पूजा करे।

इति जिन अभिषेक विधि:

अथ: दान विधि

दद्यादा हारादीन पूजा दिवसे ष्वमीषु
सर्वेषु ग्रह पीड़ित मुनि क्षांत्युपाशक श्राविका भ्यश्च ॥ ३२ ॥

पूजा के दिनो से सभी ग्रह से पीड़ित पुरुष शांति उपासक (मुनि) आर्यिका श्रावक और श्राविकाओं को आहार आदि दे।

द्रव्येण येन दत्तेनाचार्य: सुप्रसन्न हृदय:,
स्यात् ग्रह शांत्यंते दद्यात्त तस्मै श्रद्धया साध्य: ॥ ३३ ॥

ग्रह शांति के अंत में आचार्य जिस द्रव्य को पाने (देने) पर प्रसन्न चित्त हो जाए साध्य उनको वही द्रव्य श्रद्धा से दे।

इति दान विधि

रोग शांति विधि

रोगा मूर्द्धनि चेद्योक्त विधिना भानोर हीं द्रं यजेत्,
वक्रे चंद्रमस: कुजस्य हृदये कठ्ठे बुधस्य द्वयो: पार्श्वे
शुक्र गुरोस्तु दानव गुरो: पृष्टे शनें जंघयो:
पीडा चेत्य दयोरनेन विधिना राहोरहि: पूज्यतां ॥ ३४ ॥

यदि सिर में रोग हो तो कही हुई विधि के अनुसार सूर्य नाग की पूजा करे। मुँह में रोग हो तो बुध के नाग की पूजा करे। दोनों पार्श्व (कोख) में कष्ट होतो वृहस्पति के नाग की, पीठ में रोग होतो शुक्र की, जंघा में पीड़ा हो तो शनि के नाग की और यदि दोनों पैरों में रोग हो तो इस विधि से राहु के नाग की पूजा करनी चाहिए।

स्वस्थान रुजासु सनीष्वेवं पूज्यो ग्रहोनुकूलोपि
असती ष्वथा नु गुणाना तासमुना संयजे द्विधिना ॥ ३५ ॥

इस प्रकार इन स्थानों में रोग होने पर भी ग्रह के अनुकूल होने पर भी उसकी गुण के अनुसार विधि पूर्वक शांति के लिए पूजा करे।

इति नवग्रह समाप्ता:

देवयंत्र

झं वं व्हः जल भू बीजै र्नामटांत स्वरै : वृतं
बाह्ये द्वि षद दलां भोज पत्रे षुसकलं नभः ॥ २७७ ॥

सांत संपुटमालेख्य हंसः वलया कृतं
अंब पुर पुटोपेतं सद्भूर्ज्जे चंदनादिभिः ॥ २७८ ॥

नाम को झं वं व्हः जल बीज प भू (पृथ्वी) बीज (क्षि) टांत (ठ) और सब स्वरों से वेष्टित करके उसके बाहर दल का कमल बनाकर सब में नभः (ह) लिखे।

फिर सांत (ह) के संपुट को लिखकर इवीं हंसः को गोलाकार में लिखकर बाहर उसके अंबे पुर (जलमंडल) का संपुट बनाए इसको श्रेष्ठ भोजपत्र पर चंदन आदि सुगंधित द्रव्यों से लिखे।

यियते वार्च्यते देवं यंत्रं येन मुदा वहं,
तस्य स्यान्मंगलं लक्ष्मी: शांति स्यं शिवायसः ॥ २७९ ॥

इस देव यंत्र का जो पूजन करता है तथा धारण करता है और प्रसन्न होता है उसका मंगल होकर उसको लक्ष्मी की प्रप्ति होती है तथा शांति होकर उसका कल्याण होता है।

सित्थकेनै तदा जलपूर्णघटे क्षिपेत्,
दहोस्यो पशंम कुर्यात ग्रह पीडां निवारयेत् ॥ २८० ॥

इस यंत्र को रस्सी से बने हुए छींके में रखकर जल से भरे हुए घड़े में रखे तो यह यंत्र शरीर के दाह को शांत करके ग्रह की पीड़ा को दूर करता है।

सर्व शांतिक सत्सुरखास्यस्य धारणं,
यंत्रं साम्यर्चनं भक्तया भवेन्मारण वारणं ॥ २८१ ॥

सर्व शांति करने वाले तथा श्रेष्ठ सुख को देने वाले इस यंत्र का भक्ति पूर्वक पूजन करने से मारण कर्म भी रुक जाता है।

ॐ झं वं व्हः पक्षि इवीं हंसः देवदत्त स्य शांति कुरु कुरु
द्वयं स्वाहे त्य यम स्यार्च्चना मंत्रः ॥ २८२ ॥

ॐ झं वं व्हः प क्षि इवीं हंसः देवदत्तस्य शांति कुरु दोबार बोलकर अर्थात् कुरु कुरु कहकर फिर स्वाहा बोलने से इसके पूजन करने का मंत्र है।

ॐ झं वं व्हः पक्षि इवीं हंस देवदत्त स्य शांति कुरु कुरु स्वाहा

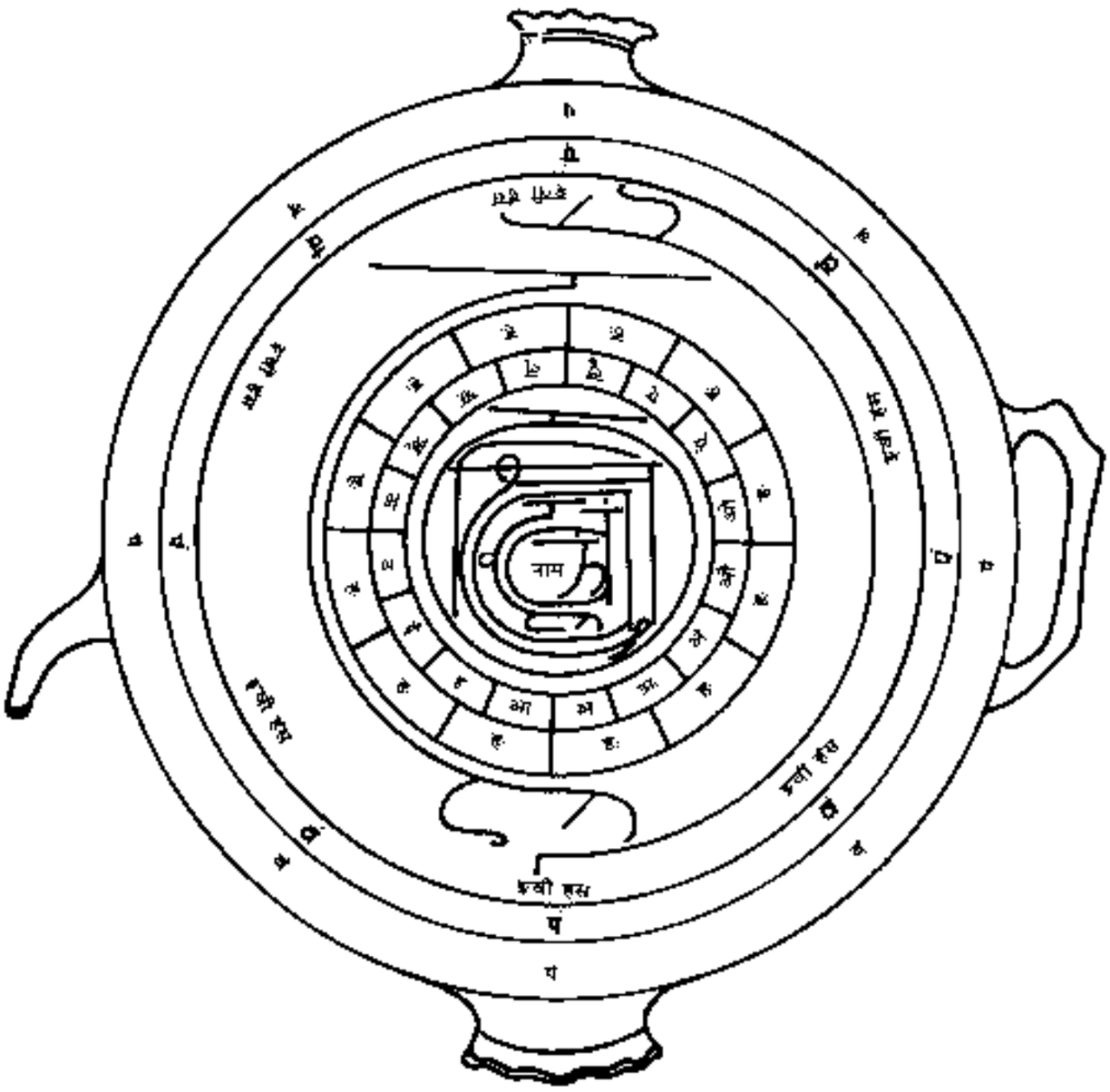

संजीवन यंत्र

परमं वेष्टयेत्पूर्वं साध्य नाम विदर्भितं,
विवक्तेन पुनः पत्रैरष्टभिः परमान्वितैः ॥ २८९ ॥

कांदि सांत द्युतैः स्त्रिशता वेष्टयेत्ततः,
वहिरेतस्य सर्वस्य लिखेद्वरुण मंडलं ॥ २९० ॥
एतत्त संजीवनं यंत्रं भूर्जादौ लिखितं यतं,

अभार्चितं वानिशेष ज्वर भूत विषादि जित ॥ २९१ ॥

पहले साध्य के नाम को लिखकर परम (र) को बाहर लिखे फिर विविक्त (भ) आठ पत्तो में लिखकर परम से परम (र) से वेष्टित करे।

फिर क से लगाकर ह तक के तेतीस अक्षरों को वेष्टित करके इसके बाहर वरुण मंडल (जल मंडल) लिखे। इस संजीवन यंत्र को भोजपत्र पर लिखकर भुजा में धारण करने से तथा पूजन करने से सपूर्ण ज्वर भूत और विष आदि जीते जाते है।

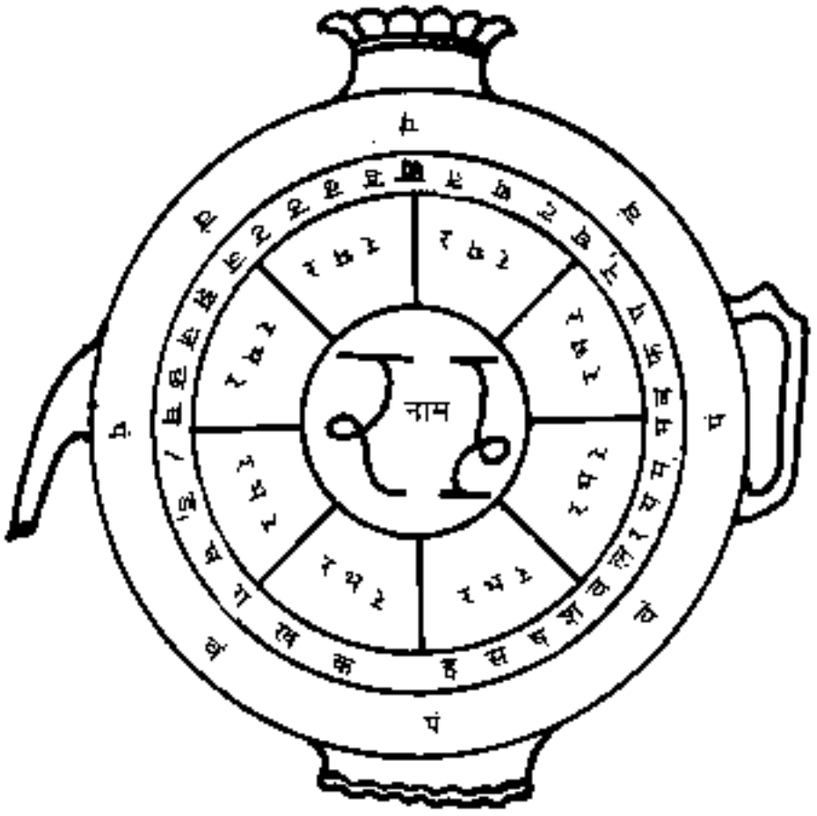

सर्वरक्षा यंत्र

नामा वेष्टय सकारं सांत लपरं ग्लौं युग्मं पूर्णेदुभिः
दिक्षुक्षाक्षर मस्तकै परिवृतं कोणस्थ रांतै वृंत
वाह्ये षोड़श पद्म पत्र म थ तत्पत्रेषु देव्याः स्वराः
कोण क्षाक्षर दिग्गेतंद्र सहितं वाह्ये च भू मंडलं
एतत्सुसर्वरक्षा यंत्रं लिखितं सुगंधिभि द्रव्यैः
अपहरति रोग पीडा मपमृत्यु ग्रह पिशाच भूत भयं

देवदत्त नाम को स ह व और ग्लौं के संपुट में लिखकर चंद्रमंडल बनाए उसके बाहर दिशाओं में क्ष्मा तथा विदिशा कोणे में रांत (ल) अक्षर से वेष्टित करे, बाहर सोलह दल का कमल बनाकर उनमें स्वरों को लिखे। उसके बाहर विदिशा में क्ष्मा और दिशाओं में ल लिखे, उसके बाहर भू मंडल (पृथ्वी मंडल) लिखे। यह सर्व रक्षा यंत्र है इसको सुगंधित द्रव्यो से लिखकर धारण करने से रोग पीड़ा अपमृत्यु ग्रह पिशाच और भूत के डर को नष्ट करता है।

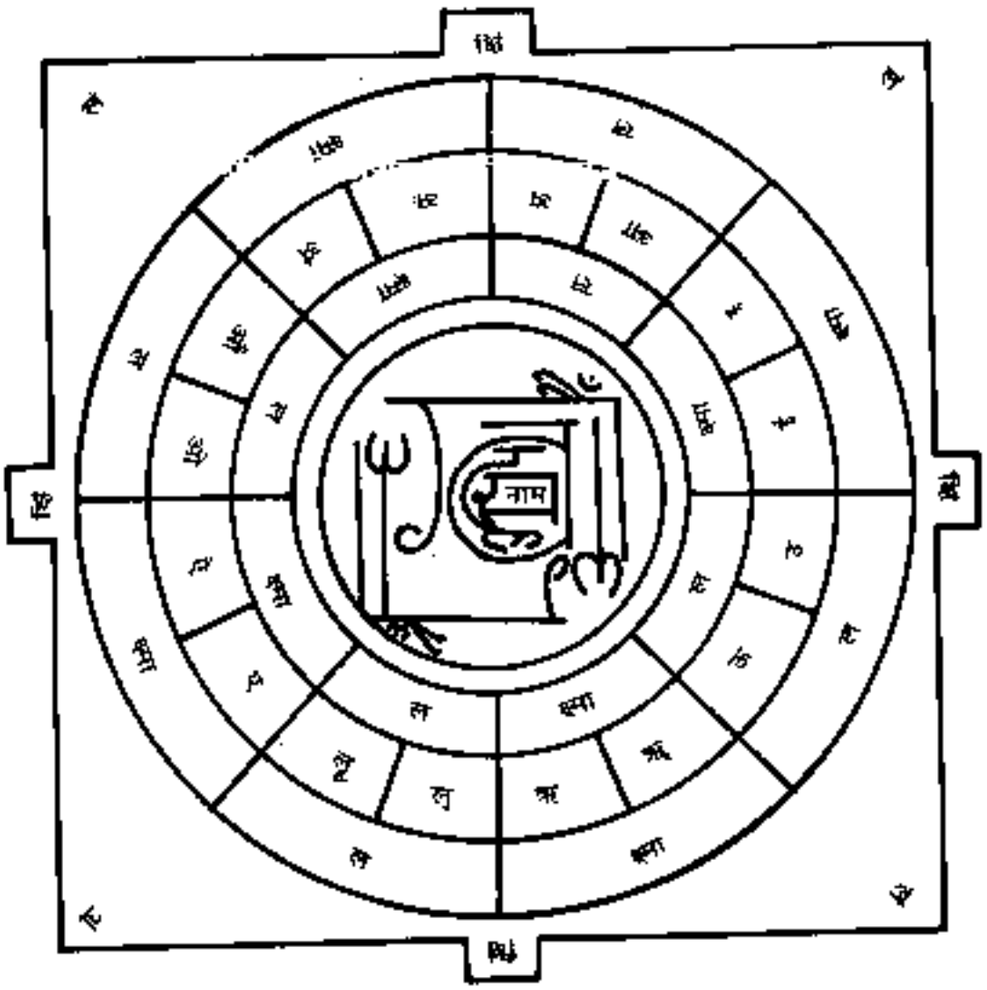

शांति पुष्टि दायक यंत्र

साध्यं म भः पुरस्थांत वं कारस्योदरेलिखेत
रोचना कुंकमै र्भूर्जे शांतिः पुष्टि श्च जायते ॥

साध्य के नाम को अंमपुर (जल मंडल) के बीच में वकार के अन्दर गोरोचन कुंकुम आदि से भोजपत्र पर लिखकर धारण करने से शांति और पुष्टि होती है।

नाम सकारांतर्गत मंबुधिटांता वृतं वहिश्च कलाः,
वलयितमनिलाद्यष्टमा वेष्ट्य क्रों प्रों त्रों वसु बीज वलयं
च भंतिन तु संपुटितं तद्वलयितम मृत मंत्रेण ॥

नाम को स के बीच में लिखकर उसके चारो तरफ अंबुधि (आथ) और टांत (ठ) से वेष्टित करके उसके बाहर कला (सोलह स्वर) लिखकर उसको आठ दिशाओं में वायुमंड़ल में य अनिल (हंस) से वेष्टित करके क्रों प्रों त्रों और वसु बीज (ठ) के वलय से घेरे फिर भांत (म) का संपुट बनाकर अमृत मंत्र से वेष्टित करे।

ॐ प क्षि स्वः पक्षि स्वः झ्वीं झ्वः वः वं क्षः हर हंसः ज जलं पक्षि स्वाहा सर सुंस हर हु हः ।

अमृत मंत्र

वहिरष्ट दलांबुज युत मुख वद्यामृत घंट विलिखेत्
तस्य वंकारं मुखे पत्रेषु थवद्यु दलेषु लकारं
कूटस्थ नाल मूलं घट यंत्र मिदं विलिख्य
भूर्ज दले काश्मीर रोचनां गुरु हिमटा व कमलद्यज नीरैः
सुत्रेण वहि र्वेष्टयं सिक्थक परिवेष्टितं वहि
कृत्वा गंधाक्षत कुसुमाद्यै स्तदंयंत्र प्राच्यं विन्यसेत्॥

उसके बाहर आठ दल वाले कमल सहित मुखवाले अमृत घट को बनाए उसके मुख में वकार और पत्तो में लकार को लिखे। उस कमल की नाल की मूल में कूटाक्षर (क्ष) लिखे इस घट यंत्र को भोजपत्र पर केशर गोरोचन अजर कपूर वक (गूमा औषधि) और मलयज (चंदन) के जल से लिखकर

सूत्रेण वहि र्वेष्टियं सिक्थक परि वेष्टितं वहिः,
कृत्वा गंधाक्षत कुसुमाद्यैः प्राच्यं विन्यसेत्॥

इस यंत्र को सिक्थक (मोम) में लपेट कर बाहर ध आगे से लपेट कर फिर इसको चंदन पुष्प आदि से पूजित नए घड़े में छींके से घड़े मे रख दें।

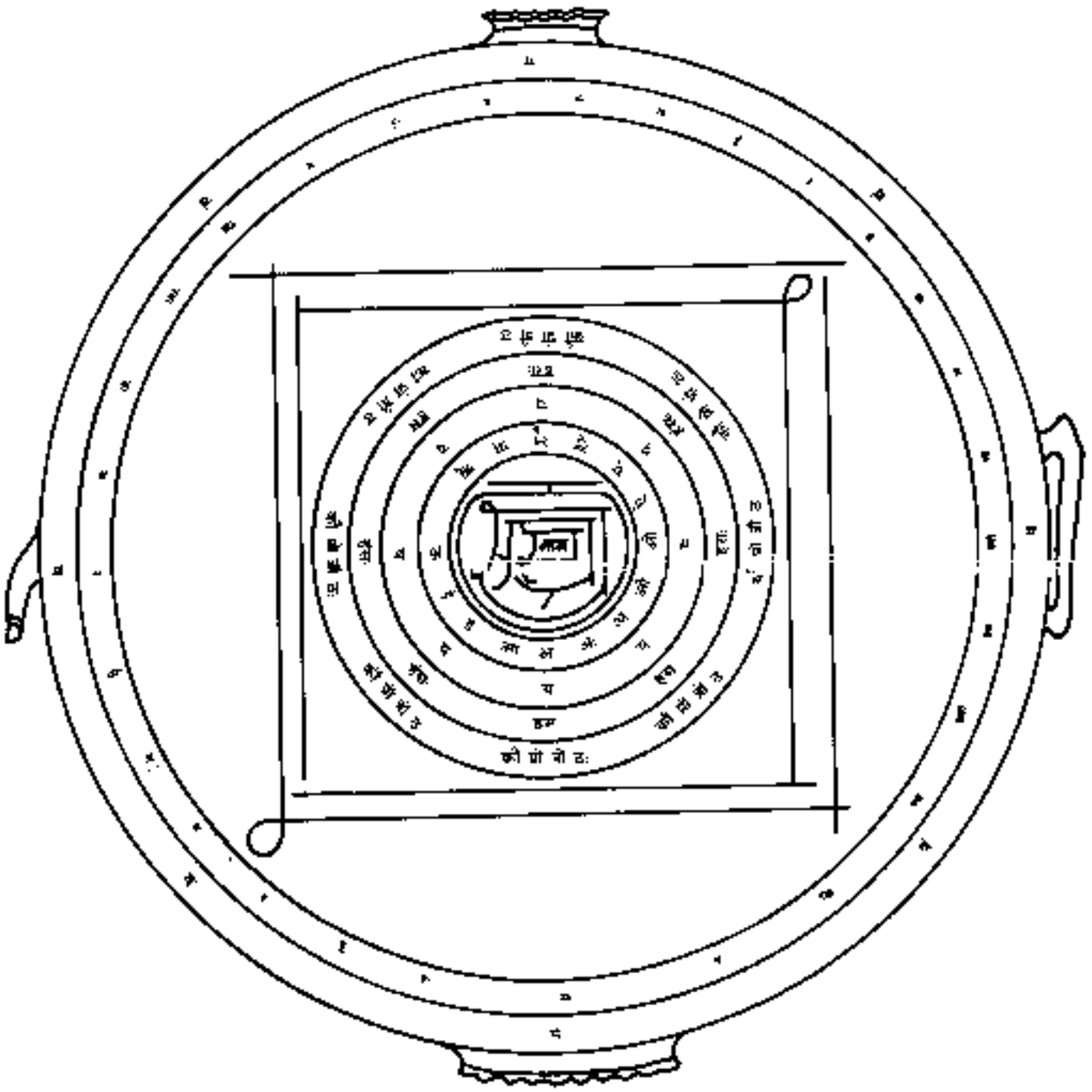

स्वर गर्भ टांत संपुट मध्य गतं नाम खंड राशि वेष्टयं,
टांतेन च भांतेन च वेष्टयं हंसः पदं वलयं ॥ ३०१ ॥

नाम को क्रम से १६ स्वरों टांत (ठ) के संपुट और अर्द्ध चंद्र से वेष्टित करके टांत (ठ) और भांत (म) से वेष्टित करके बाहर चारों तरफ हंस पद का वलय बनाए।

वहिरमृतमंत्रं वलयं दद्यात्स्वर युक्त षोड़श दलाब्जं,
यंत्रमिदं घटनु बुधे खटिका हिम मलयजै र्विलिखियेत ॥ ३०२ ॥

उसके बाहर अमृत मंत्र का वलय देकर सोलह दल के कमल में स्वरों को लिखे इस यंत्र को घड़े के अन्दर खड़िया कपूर और चंदन से लिखे।

ॐअमृते अमृतोद्भवे अमृत वर्षिणि अमृतं स्रावय स्रावयसं सं क्लीं क्लीं ब्लूं ब्लूं द्रां द्रां द्रीं द्रीं द्रावय द्रावय स्वाहा ॥ अमृत मंत्र

सन्मार्जित भूमितले कृत्वोपरि पुष्प मंडलं
तस्य मध्ये विकीर्य शालि स्तेषु निदध्या न्नूतन वस्त्रं ॥ ३०३ ॥

एक साफ की हुई (अपतित गोमय विलिप्र भूमौ = जमीन पर नहीं गिरे हुए गोबर से लिपी हुई जमीन पर) एक फूलों का मंडल बनाकर उसमें धान (चावल) बिखेर कर उस पर एक नया कपड़ा रख दे।

ग्रतसित वस्त्रे वेष्टित मर्णः पूर्णं सुवर्ण वृत कंठं,
संस्थाप्योद् घटं तं लोह मयत्ति पदिका निहितं ॥ ३०४ ॥

उस पर नए सफेद वस्त्र में लपेटे हुए अर्ण (जल) से भरे हुए कंठ (गले) पर सुवर्ण (सोने) से घिरे हुए घट को स्थापित करे उसको लोहे की बनी हुई तीन पाये वाली तिपाई पर रखे।

घट यंत्रं नव रत्न त्रिलोह पुष्पैः सह क्षिपेत्कुंभे,
तन्मंत्री कुंभ मुखं कास वृतेन चापिधेयं ॥ ३०५ ॥

फिर उस यंत्र को नवरत्न त्रिलोह (ताम्र-१२ चांदी १६ सुवर्ण = ३ भाग) और पुष्पों के साथ घड़े में रख दे तथा उस घड़े का मुख कांसी के ढकने से ढक दे। (कांस = डाभ से ढक दे)

क्षीर द्रुम मुख कां ची द्वय युतं वध्यैत हिम लिप्तं,
सुरभितकुसुम वेष्टयं तद्व तकं मस्तके स्थाप्यं ॥ ३०६ ॥

उस घट के मस्तक पर एक दो मेखलाओं से युक्त चंदन कपूर से पुते हुए सुगंधित पुष्पों से घिरे हुए गोल क्षीर वृक्ष (पीपल) के मूसल की स्थापना करे।

मूसलस्योपरि दीपं निधाय कांस्यमय भाजनं,
कलश तलेवहिरर्च्चयेत्समंतात् गंधाक्षत कुसुम चरुकाद्यै ॥ ३०७ ॥

मूसल के ऊपर दीपक और कलश के नीचे कांसी के पात्र को रखकर उसकी चंदन अक्षत पुष्प और नैवेद्य आदि से पूजन करे।

क्रूरारिमारि शाकिन्युरेग नवग्रह पिशाच भूत भयान्,
अपहरति कृतस्तेकस्तदांथबुध्यस्तुतैः सलिलैः ॥ ३०८ ॥

इस घड़े के जल को छिड़कने से क्रूर शत्रु मारि शाकिनी सर्प नवग्रह पिशाच और भूतों का भय उसी क्षण दूर हो जाता है।

फलके वा चर्म्मणी वा विनस्यतं भाषस्य वद्धारिव्वा,
तन्मोक्षणेत बंधाटननतिचिरे एत कालेन ॥ ३०९ ॥

तख्ती पर या चमड़े पर रखे हुए उड़द को बांधने वाले पुरुष का बंधन से शीघ्र ही छुटकारा मिल जाता है।

करेण कलितं मूलं निर्गुन्डया स्सोम दिग्गतां,
बद्धस्स कुरुते पुंसः क्षणेनैव विमोक्षणं ॥ ३१० ॥

सोम (उत्तर) की दिशा में की निगुंड़ी को हाथ से लेकर बांधने वाले पुरुष को बंधन से शीघ्र ही छुटकारा मिल जाता है।

शिखि कृव वा पदाभ्यां कृतलेपं नंद्यांते स्वयं निर्गलं,
पित् वन भूमे रंत र्निखन्य सप्ताहमेताभ्यां ॥ ३११ ॥

मोर के गले और पैरों को श्मसान में सातदिन तक गाड़कर उसका लेप करने से स्वयं ही बंधन खुल जाते हैं।

प्रोक्तेऽत्र चैक विधि शांति विद्या वधीति,
श्री शांति नाथ चरणा बुंज युग्म भक्तः
इत्यादु पल्लव विकल्प परं पराणां
शांति प्रशांत हृदयो विदधीत मंत्री ॥ ३१२ ॥

इस प्रकार यहाँ पर शांति के विधान का वर्णन किया गया श्री शांतिनाथ भगवान के चरण कमलों का भक्त मंत्री शांतचित होकर इन उपद्रव के भेदों में पड़े हुए पुरुषों की शांति करे।

इति शांति विधानं नाम विशंति समुद्देशः

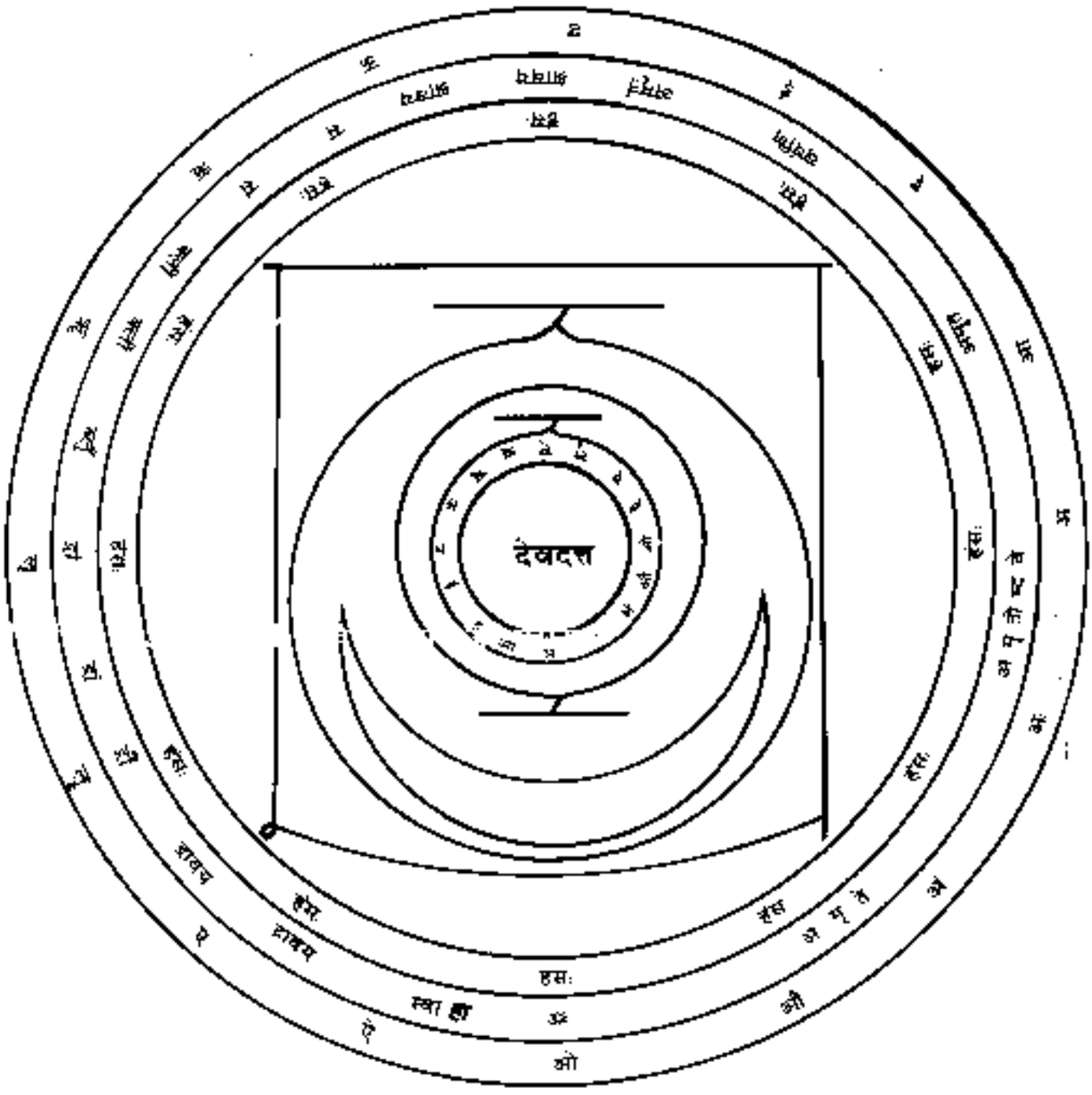

अथातः पौष्टिकं कर्म प्रवक्ष्यामि यथागमं,
शांत्यादौ पथिकं ज्ञान यत्प्रारंभ प्रयोजनं ॥ १ ॥

अब शास्त्र के अनुसार पौष्टिक कर्म का वर्णन किया जाएगा उसके प्रारंभिकप्रयोजन के लिए शांति आदि का ज्ञान बड़ा उपयोगी होता है।

इह लक्ष्मीर्धनावासो भोजन भूकन्यकादि लाभाश्च,
अवयव संस्कार रसायनोद्भु वृष्याश्च निर्दिश्याः ॥ २ ॥

पुष्टि कर्म में लक्ष्मी धन का स्थान भोजन पृथ्वी और कन्या आदि के लाभ तथा अवयव संस्कार रसायण वस्त्र और पुष्टि का उद्देश्य रखना चाहिए।

लक्ष्मी प्राप्ति मंत्र

उष्मणां प्रथमः पूर्वं पुराणं ज्योति रप्य नुक्रमादि
विंदु मंत्रोयं सांगो लक्ष्म्यै प्रकीर्तितः ॥ ३ ॥

पहले उष्मी के प्रथम (श) पुराण (फ) ज्योति (ई) यह लक्ष्मी के वास्ते अंग सहित विन्दु मात्र कहा गया है।

ॐ श्रिये ठः ठः श्रिये फट श्रीं नमः श्रियः प्रसाद नमः ठः ठः श्री फट अंगणिं

पद्माक्ष मालयो दन्मुख स्त्रि लक्षं जपेञ्चलस्थोमुं,
अमुना बिल्व स्यतले विष्णु गृहेवार्च्चयो लक्ष्मीं ॥ ४ ॥

इस मंत्र को ऊपर की तरफ मुँह करकेकमल गट्टे की माला से तीन लाख जाप करे तथा इसी मंत्र से बिल्व (बेल) के पेड़ के नीचे या विष्णु के मंदिर में लक्ष्मी का पूजन करे।

नंद्यावर्त्तलतांतै लंक्ष्मी धन धान्य कृद्भवेत होमात्
नियुतं सदकै र्होमाः दक्कांगैः पट्टवंद्यः स्यात् ॥ ५ ॥

फिर नंधावर्त (तगर) की लता सदके और आक की टहनियों से दस हजार होम करने से लक्ष्मी धनधान्य को देती है।

मधुर त्रितयाम्यलैः पिंड़ यागौ तंदुलैत्,
भवेत् होमात् लक्षं नृपाधि पत्यं खदिरा ग्नौ वाज्य संयुक्तैः ॥ ६ ॥

त्रिमधुर (घृत बूरा शहद) पिंड़ी चावल सहित खदिर (खेर) की अग्नि में एक लाख होम करने से नृपाधि पति होता है।

उत्तिष् श्रीकर ठ ठ सांगं मंत्र ममुं जपेन्नद्यां,
नाभि द्वयसे पदासि स्थित्वोर्द्ध करो रविं पश्यन ॥ ७ ॥

उतिष्ट श्री कर ठः ठः

इस मंत्र का अंग सहित नदी के नाभि तक के जल में ऊपर की तरफ हाथ किए हुए खड़ा होकर सूर्य की तरफ देखता हुआ जाप करे।

भिषय भिषय हुं त्रासय त्रासय हुं प्रमर्दय प्रमर्दय हुं रक्ष रक्ष हुं प्रध्वंसय प्रध्वंसय हुं फट अस्त्राय नम अंगानि

इति साधित मतुना यः साज्यै र ब्जै स्त्रि लक्षम
थजुह्यात् तद्रोहं च तदन्वय जातांश्व मजेत सदैव श्रीः ॥ ८ ॥

इस को इस प्रकार सिद्ध करके जो घृत सहित कमल के फूलों से एक लाख हवन करता है उसके घर और वंश में सदा ही लक्ष्मी रहती है।

बिल्वस्य दलैरमुना होमात संपद्यते पृथु संपत्,
लक्ष त्रितयं त्रिमधुर शिलै र्वा पुष्पपुग फल सदकैः ॥ ९ ॥

इसी मंत्र से बेल के पत्तों त्रिमधुर पुष्प और सुपारी और शदक से तीन लाख हवन करने से बड़ी भारी संपत्ति की प्राप्ति होती है।

अपमृत्यु विनाशः स्यात होमात् दुर्वा म राज्य शिक्काभिः,
लक्षं घृतेन होमाद्युद्धेर्विजश्च शांतिश्चः ॥ १० ॥

दूब के बोझ (बंडल) को घृत में भिगोकर एक लाख हवन करने से अपमृत्यु का विनाश होता है तथा घृत से एक लाख जप करके होम करने से युद्ध में विजय और शांति मिलती है।

जप्ते सरसिज सूत्रं भुज घृत मतेन सर्वरक्षा कृत,
पुष्पंती प्सित मुना जप्त पूजा स्नान कर्म्माणि ॥ ११ ॥

इस मंत्र से कमल के धागे को अभिभांत्रित करके हाथ में बांधने से सब प्रकार की रक्षा होती है। इस से जप करने से पूजन करने से और स्नान के कार्य से इच्छित कार्य सफल होते है।

पद्मोद्भव श्रिये नमः इति मंत्रे नित्य जाप्प
योगेन रेखा नामाद्यं सपदमभिपर्द्धयेत्सांगं ॥ १२ ॥

पद्मोद्भव श्रिये नमः इस मंत्र का अंग सहित नित्य जाप करने से यह संपत्ति को बढ़ाता है।

अंग :- पद्मोद्भवे नमः ॐ पद्मोद्भवे स्वाहा
पद्मोदवे नमः पद्मोद्भव ठः ठः श्री नमः

रोग नाश मंत्र

ॐ श्रिये श्री करि धन करि धान्य करि पुष्टि करि वृद्धि करि अविघ्न करि सर्व करि ठः ठः

लक्ष जपात्सिद्धो यं जपाभिषेकादि भि हरे
दुःखं मंत्रो वसुधारायां दरिद्रं रोगमपि सकलं ॥ १३ ॥

यह मंत्र एक लाख जप करने से सिद्ध होता है जप और वसुधारा आदि से दुख और सब दरिद्र रोग को दूर करता है।

सर्व सिद्धि मंत्र

मंत्रोयमो खद्योतत काय ठः ठः त्वोषः प्रसिद्धपति
षट लक्ष जापतः सांगः सूर्य दृग सर्वसिद्धि दः ॥ १४ ॥

ॐ खद्योत तकाय ठः ठः इस मंत्र का अंग सहित सूर्य की तरफ देखते हुए छह लाख जपने से यह सब सिद्धियों को देता है।

श्रूष्म रूपाय श्रूष्म तेज से श्रूष्मकराय श्रुष्म वलाय श्रुष्म हुं फट अंगानि

तेन चतुः पंचाशत वारान जप्तै सुगंध कुंभ जलैः
स्याद भिषे को रविवारे पुष्टि करो हस्त सप्तमी संयुक्तै ॥ १५ ॥

इस मंत्र से चव्वन बार जपे हुए सुगंधित घड़ों के जल से रविवार के दिन हस्त नक्षत्र और सप्तमी तिथि को अभिषेक करे तो पुष्टि करता है।

सर्व संपदा प्राप्ति मंत्र

उत्तिष्ट पुरि हिरि पिंगल देहि देहि द दापय ठः ठः

दशांश होम संयुक्ता लक्ष रूप प्रजापतः
स्वाहा प्रियतम स्त्रौष मंत्रः संसिद्ध मृच्छति ॥ १६ ॥

यह अग्नि मंत्र एक लाख जप और दशांश होम से सिद्ध होता है।

प्रति पदि सकृति कार्यां शालिभिरे तैन,
धन करो होम नित्यं शमी समिद्धि र्दधि संयुक्तेन धान्येन ॥ १७ ॥

कृतिका नक्षत्र वाली प्रतिपदा में शमी (खेजड़ा) वृक्ष की समिधाओं और दही और धान्य से धन को देने वाला होम करना चाहिए।

इष्ट ग्रामं लभते पद्मेन घृतेन वामुना होमात्,
पर राज्य जये राज्ञो होमात् ज्योतिष्मति तैलैन् ॥ १८ ॥

इस मंत्र के द्वारा कमल के होम से इच्छा किया हुआ गाँव मिल जाता है। यदि राजा ज्योतिष्मति (मालकागना) के तेल से हवन करे तो वह दूसरों के राज्य को जीत ले।

अश्वत्थस्य समिद्भि र्महिषी घृत संयुता,
भिरेतेन एकं मासं होमात् इष्टां कन्या मवाप्नोति ॥ १९ ॥

इस मंत्र से भैंस के घृत में डुबोकर पीपल की लकड़ियों की समिधा से होम करने से इच्छा की हुई कन्या को एक मास में प्राप्त करता है।

घृत युक्तौदन होमात धनधान्य जप श्रियो,
ऽमुना लयते पानीय मजीर्ण घंराग कृदशनं च तत् जप्तं ॥ २० ॥

घृत औप भात केहोम से धनधान्य और विजय की लक्ष्मी को पाता है इस से जप कर पिया हुआ जल अजीर्ण को दूर करता है। तथा इससे अभिमंत्रित किया जाकर खाया हुआ भोजन प्रेम को उत्पन्न करता है।

वड़वा मुखाग्नि मग्निं ध्यात्वा जुहूयात् घृतेन पायसपिंड़ं
तत्र पृथुं संतुष्टः संन्निहितोग्नि र्दरिद्र भावं हन्यात् ॥ २१ ॥

वडवाग्नि (समुद्र की अग्नि) के मुख के समान ध्यान करके घृत और खीर सहित हवन करे तो अग्नि अत्यंत संतुष्ट होकर दरिद्र भाव को नष्ट करती है।

पुराणोयोगि युक पूर्व विविक्तो नुततः,
परं/त्र्यैयान विनि युतोते स्यात्तमः शास्तुमसौ मनुः ॥ २२ ॥

पुराण (फ) योगि (ऐ) विविक्त (म) परम (र) सहित मंत्र को जपने से शांति होती है।

स्थित माध्याय शास्तार मध स्तान कल्प भूरुहः,
लक्षं जपेदमुं मंत्रं महत्स्वर्णं मवाप्नुयात् ॥ २३ ॥

यदि कल्प वृक्ष (मेहडा) के पेड़ के नीचे बैठकर एक लाख जप करे तो बहुत सा सोना पाए।

मंत्रः शास्तु सौख्यं भूताधिपतये नमः
इति प्रसिद्धि मायाति लक्षरूप प्रजाप्यतः ॥ २४ ॥

इस मंत्र को एक लाख जपने से प्रसिद्धि मिलती है।

मंत्रेणनेन विधिवत् कृतैर्भुविजपादिभि:,
अचिरात्सिद्धयति निधि कल्पा वाप्तिर्भवे ध्रुवं ॥ २५ ॥

इस मंत्र से पृथ्वी में विधिपूर्वक जप आदि करने से शीघ्र ही सम्पूर्ण अभिलाषाओं की प्राप्ति होती है।

ॐ ह्रीं श्रीं धनपतये नम:
इति वैश्रवणस्य पुष्टि कृन्मंत्र: अष्टपरिवार
यक्षास्तस्यो उत्काजंभल प्रमुखा: ॥ २६ ॥

यह कुबेर का पुष्टिकारक मंत्र है कुबेर के परिवार में जंभल आदि आठ यक्ष हैं।

ह्रां ह्रीं ह्रूँ ह्रौं ह्र: अस्त्राय फट अंगानि
आध्याय पति वर्णै: पूर्वाशा स्थितै: परिवृतं:,
नव रत्न भरित रैभय करंडकाध्या स्यमानमुं ॥ २७ ॥

पीले वर्ण के पूर्व आदि दिशाओं में स्थित उन राजहंस पक्षियों का ध्यान करके नौ रत्नों से युक्त रैभय (घास) के पिटारे में नीचे को मुँह किए हुए बैठे।

वैश्रवणं पीताम्बुक भूषणम मुनाजु होतु मंत्रैण द्रव्यै,
स्तिल प्रभृति भिर्धन धान्यादेर्विवर्द्धि: स्यात् ॥ २८ ॥

इस मंत्र के द्वारा तिल आदि द्रव्यो से पीले वस्त्र वाले कुबेर का हवन करने से धन धान्यादि बढ़ते हैं।

ॐ जंभलाय म्लूं माणी भद्राय ब्लूं पूर्ण भद्राय क्लूं विधि कुंड़िने क्लूं कपि मालिने ब्लीं चमरेंद्राय म्लीं मुखेंद्राय क्लीं नलकूबराय नम:

अमीभिरष्टभिर्मंत्रैर्जंभलाधान क्रमादमून्,
गंध पुष्पादिभिर्मंत्री तत्त द्दीक्ष्वभि पूजयेत ॥ २९ ॥

मंत्री इन आठ मंत्रों से इन जंभल आदि आठों का गंध पुष्प आदि से उस दिशा में पूजन करे।

ॐ नमो ब्रह्माणिप्रपूजिते नमोस्तुस्तेभ्य स्त्र्यशीति कपाल श्रृलिनि मयि स्वाहा

श्वेतार्क तूल वर्त्तिदीपे नरतेल योधितारात्रौ,
व्यक्ति करोतिभूमी संस्थं निधानं जपेनास्य ॥ ३० ॥

इस मंत्र से सफेद आक की रूई की बत्तीवाले दीपक में रात्री के समय मनुष्य को तेल जलाकर देखने से पृथ्वी से गड़ा हुआ धन दिखता है।

संयुक्ता हरयाजिष्णुः सूक्ष्म बिंदु युतः स्थितः,
मंत्रो रींकार युतयो मंध्ये चंद्रमसोरसौ ॥ ३१ ॥

हरय में आजिष्णु (ई) में सूक्ष्म बिंदु (अनुस्वार) और ईकार लगाकर उसे बीच में चंद्र बिंदु सहित औकार लगाए।

सिद्धं लक्ष जपात्तेन सलाजै मंधुरै स्त्रिभिः
सहस्रं जुहूयात्सद्यः सुखेन निधि मुद्धरेत ॥ ३२ ॥

ह्यां ह्यीं ह्यूं ह्यौं ह्यैं ह्यः अंगाणि

इस मंत्र को एक लाख जाप से सिद्ध करके धान की खोल और त्रिमधुर से एक हजार हवन करे तो सुख से खजाने को खोद ले।

यस्यामेकेन यदा स्थित्वा ध्यायंतियक्षिणी,
नियतं निधिर्गर्भासा भूमिर्यां वा पादा हता ध्वंनंति ॥ ३३ ॥

यहाँ एक पाँव से ठहरकर यक्षिणी का ध्यान करे और यदि वहाँ पैर मारने से शब्द निकलने लगे तो जानना चाहिये कि वहाँ पृथ्वी में धन है।

प्ररोहस्या प्ररोहोना रोहोना कदा दर्शनात्,
तस्याधस्ता द्विंजानीया न्निधि स मंतः स्थितं भूम्यां ॥ ३४ ॥

जहाँ पर बोया हुआ बीज न उगे और बिना बोया हुआ पौधा उग जाए तो उस पृथ्वी में धन जानना चाहिए।

गुजंक मंदार शिफा सितार्क सूत्रे भिदान,
गज मलक वक मृत चीर वसा कुर्कुट चूडादि
भिर्दर्शयन्निधि भूवित्तिं ॥ ३५ ॥

गुंजा (चोटली) मंदार (आक) की शिफा जड़ और सफेद आक के धागे, (इमदान) हाथी का मद गज मलक (हाथी का मैल) वक (काक पक्षी) मृतचोर (मरे हुए पुरूष) का कपड़ा)वसा) चर्बी (कुर्कुट चूड़ादि) मुरगे की चोटी आदि की पृथ्वी में खजाना दिखाने वाली बत्ती बनाकर पृथ्वी का धन देखे।

कुनटी गंधक तालक चूर्णः कृता सिताकं तूलेन संवेष्टानं,
पद्मनालक सूत्रेण चवर्त्ति रिह कार्या ॥ ३६ ॥

साकंगु तैल भाव्या तया प्रदीपं प्रबोधटेन्मत्री,
यत्राग्रो मुखगम दिपंतत्रास्ति वसु राशिः ॥ ३७ ॥

कुनटि (मेनसिल) गंधक तालक (हडताल) का चूर्ण करके सफेद आक की रुई से लपेट कर और कमल की नाल के धागे को लपेट कर बत्ती बनावे।
उसको कंगु (नाल कांगणी) के तेल में भावना देकर मंत्री उसका दीपक बनावे उस दीपक की बत्ती को लो (मुख) जहाँ नीचे की तरफ हो जावे वहाँ धन का ढ़ेर समझना चाहिये।

विनयादि प्रज्वलित द्योति दिशायामरून्नमोतपदं,
पठन्मनसामंत्रं प्रदीप हस्तौ विलोक युतः ॥ ३८ ॥

ॐ ह्रीं प्रज्वलित ज्योति दिशायां स्वाहा

मंत्री आदि में ॐ (विनय) को लगाकर प्रज्वलित ज्योति दिशायां मरुत (स्वा) और नमः (हा) पद के मंत्र को पढ़ता हुआ हाथ में दीपक लेकर देखे।

संदिग्धं भूमि भागे कार्योष्टा विंशतिश्च खंडः,
द्वागदि कृत्तिकाद्या यंत्रे दुस्तत्र निक्षेपः ॥ ३९ ॥

संदिग्ध पृथ्वी के भाग में आठाइस द्वारआदि के खंड बनवाकर और कृतिका आदि के नक्षत्रयुक्त यंत्र को वहाँ रखे।

निर्गुंडि का च सिद्धार्थं गृह
वद्धे पुष्पार्क संयोगो जायते क्रिय विक्रियः ॥ ४० ॥

निर्गुंडी (संभालू) और सिद्धार्थ (सफेद सरसों) को घर में या दुकान के द्वार पर पुष्य नक्षत्र और रविवार को संयोग होने पर बाँधने से क्रय और विक्रय करने से लाभ होता है।

ॐ नमो रत्नत्रयाद्यः अनले कुनले गृन्हपिंड पिशाचिनी ठःठः
त्रिसहश्र जपाद्यंक्ष्या मंत्रेणानेन सप्त कृत्वो जप्तां,
सिद्धेन बलिं दद्यात् सो मिष्टान्नं लभेद वस्त्रद्वद्वौ ॥ ४१ ॥

इस यक्षिणी के मंत्र को तीन हजार जप से सिद्ध करके यदि सात बार पढ़कर मृष्ट (शुद्ध अन्न) को बलि दें तो मिठाई वस्त्र आदि पाता है।

ॐ नमो यक्ष सेनाधि पतये माणिभद्र किन्नर एहि एहि ठः ठः ॥
यक्षस्य पंच विंशति सहश्र रूप प्रजाप्यतः,
सिद्धेतत् सर्वै स्तुतो नरे दैमंत्रोय माणि भद्रस्य ॥ ४२ ॥

यह उत्तम मनुष्यों से वंदनीय मणि भद्रयक्ष का मंत्र पच्चीस हजार जप से सिद्ध होता है।

संजप्तमै क विशंति वारान् यद्दतं धवन मेतेन,
तेन च दंता धौता स्यात संसिद्धिः कामितान्तस्य ॥ ४३ ॥

इस मंत्र से इक्कीस बार मंत्रित दत्तोन के द्वारा दांत धोने से इच्छित व्यक्ति की प्राप्ति होती है।

ॐ नमो भगवत्यै धरण्यै धरणी धरे ठः ठः ॥
सिद्धि भूभृद यारण्यो लक्षत्रयरूप प्रजापतो मंत्रः
यांत्रयमनेन धृत चरू होमाद्भूमि समाप्नोति ॥ ४४ ॥

इस पृथ्वी मंत्र का तीन लाख जप करके घृत और नैवेद्य से हवन करने से पृथ्वी की प्राप्ति होती है।

होमादेतेन भवते महती लक्ष्मीः शुभैः कुसुमैः,
मधुरत्रयेन होमात् स्यात् पुष्टीः सर्पिवोदनं सिद्धेत् ॥ ४५ ॥

उत्तम फूलों के हवन से बड़ी भारी लक्ष्मी की प्राप्ति होती है। त्रिमधुर के होम से पुष्टि होती है, और घृत तथा भात के होम से सिद्धि होती है।

सितवारे होमाद्धि प्रतिपन्नक्षत्र मधुषितेन,
सहस्रं क्षरेणवाय चरूणातत्स्वीयं स्याद्बली प्रदानात् क्षेत्रं ॥ ४६ ॥

सितवार (शुक्रवार) को झगड़ेवाले खेत में दूध या नैवेद्य से एक हजार बार हवन करके बलि देने वह से खेत अपना हो जाता है।

एकां शकं सं स्थितयो बुंध चंद्रमसोः कृतश्चनक्षत्रं,
लब्धं स्याद्भवत्यां युगमखिलैर हितं दोषैः ॥ ४७ ॥

चन्द्रमा और बुध के एक अंश पर आने से कोई सा नक्षत्र पाकर यह कार्य करने से बिना विघ्न के पूर्ण होता है।

उच्चस्थे सति सूर्ये तदभिमुखोद्धों दयेश्चि तरूकीलं,
मध्ये क्षेत्रं निखिनेत तदपद्रोहं भवेत्शत्रः ॥ ४८ ॥

सूर्य उग्र का होने पर उसकी तरफ मुख करके आधा उदय होने पर अश्व (पीपल) वृक्ष की कील को यदि खेत के बीच में गाड़ देवे तो तुरन्त शत्रुता होती है।

अनुराधायुक्तो पुष्योत्तर भाद्रपदांत्यांशक विधौ,
मिथुने चोदयति मध्ये क्षेत्रं कील द्वयं निखनेत् ॥ ४९ ॥

चंद्रमा के अनुराधा पुष्य उत्तरा भाद्रपद या मिथुन राशि में उदय होने पर खेत के बीच में दो कील गाड़ देवे।

क्षेत्रदौ गृन्हीया द्योगे त्र तत: फलानि च मृदां च,
तत क्षेत्रमपद्रोहं नित्यं संपन्न सस्यं स्यात् ॥ ५० ॥

इस योग से खेत फल और उसकी मिट्टी सभी की प्राप्ति होती है तथा इससे खेत बिन शत्रुता के फल फूल कर खूब धान देता हैं।

पवर्गा प्रथमो रांत स्वर: पष्ट: सविंदुक:
अथबृहस्पतै र्लक्ष जपान्मंत्र: प्रसिद्धयति ॥ ५१ ॥

पवर्ग का प्रथम अक्षर प और रांत (ल) उसमें छठा स्वर (ऊ) बिन्दु (अनुस्यार) सहित मंत्र प्लूं (प्लूं) का वृहस्पति मंत्र का एक लाख जप से सिद्ध होता है।

बीजन्यिंतेन जपानि जपेन्मत्रम् मुजंपन,
अचिरादेव शस्यानां संपत्ति: स्यादनी दृशी ॥ ५२ ॥

इन बीजों को जपने से शीघ्र ही धान्य बहुत अधिक इसप्रकार बढ़ते हैं कि जैसे नदी बढ़ती है।

ॐ नमो भगवति रक्त चामुंडै, अपिच अपिच सुपिच सुपिच भिंद भिंद हंस हंस काली कालीं उच्चाटय उच्चाटय हुं फट् ॥

अमुना द्विसहस्त्र जप्ताजप्तं सिद्धेन भस्म ,
प्रस्यांते प्रदक्षिण्येन विनिक्षिप्तं त्रायेत् मूषिकादे: क्षेत्रं ॥ ५३ ॥

इस मंत्र को दो हजार जप से सिद्ध करके इससे भस्म को अभिमंत्रित करके यदि दाहिनी तरफ से खेत में डाले तो चूहों आदि के भय से खेत की रक्षा होती होती है।

द्योगे सितवार मधा प्रथमानां सर्वधान्य संग्रहणं,
कुर्यात् मंत्रीन भवेत् धान्यानाम् संक्षय स्तेषां ॥ ५४ ॥

मंत्री सितवार (शुक्रवार) और मघा नक्षत्र के योग में पहले के सभी धान्यों का संग्रह करे तो वह धान्य नहीं बींधता है।

प्रणवस्य मुखं मेघा नित्यं से नश्च मध्यम विविक्तः,
स विभुः खौ च हुं जीवो न्य फलायुत : ॥ ५५ ॥

आदि में प्रणव (ॐ) मेघा (ह्रीं) नित्यं (ए) सेना सम्पत्ति (ल) विविक्त (म) विभु (ऐ) खौं (हुं) जीव (सौ) और अन्यत कला (हीं) युक्त

एतेन जपं पंच विशंति सहश्र जप साधितेन मंत्रेण,
जप्तान वायव्यैन व्रीहि नारवुन्नं भक्षयति ॥ ५६ ॥

इस मंत्र को पच्चीस हजार जप करने से और वायव्य कोण की तरफ जप करने से चूहे धान्य को कभी नहीं खाते हैं।

वृक्षस्य नालिकेर प्रभृते स्तजत्र रक्त सूत्रेण,
वृक्षस्य मूषिकाद्याः फल पुष्पादिन्न खादंति ॥ ५७ ॥

नारियल पर इस मंत्र को पढ़कर सिद्ध करके लाल धागे में लपेटकर पेड़ में बांध देने से चूहे आदि उसके फल और फूलों को नहीं खाते हैं।

मंत्रितमेतेन धृतं कपिलायागो सवर्ण वत्साया:,
चरणम्यक्तं गमयेदति दूरं मंक्षनायासात् ॥ ५८ ॥

इस मंत्र से मंत्रित उसी की बछड़े वाली कपिला गाय के घृत को पैरों में लगाकर बिना परिश्रम के चाहे जितनी दूर चला जावे॥

ॐ रक्ष रक्ष गज कर्णि विधे विधामारिणी चंद्रिणी चंद्र मुखि ठःठः॥
द्विसहस्र जाप्य सिद्धं ज्येष्ठा मंत्रं वरस्य कन्याया,
अपि नामांतरितम् भुं ज्येष्ठाया स्तारके पत्रे ॥ ५९ ॥

वर वा ज्येष्ठा तथा कन्या के नाम को बीच में डाल कर तारक इंद्रायण के पत्ते पर बैठकर इस ज्येष्ठा मंत्र को दो हजार जप से सिद्ध करे।

स्वासीन तस्मिन् ज्येष्ठा माराध्य जपतु मंत्रं तं ,
द्वादश सहश्र मेकेनान्हायं लभते तां कन्यां ॥ ६० ॥

ज्येष्ठा की आराधना करके इस मंत्र को एक पैर से बारह हजार जपे तो उस कन्या को प्राप्त करे।

ॐ कमले भद्रहासे रोहिणी मोचनि कन्येयं मे भार्या भवतु ठः ठः॥
यक्षी मंत्रेणयुत जाप्यादेतेन साधु सिद्धेन,
कन्यां लभते होमान्मधुसिक्त सहस्रकरवीरैः ॥ ६१ ॥

इस यक्षी मंत्र को दस हजार जप से सिद्ध करके मधु में ही किये हुये कनेर के फूलों के एक हजार हवन करने से कन्या की प्राप्ति होती है।

ॐ चामुंडे कालि कालि कुमारि भगवन्मे प्रयच्छय ठः ठः ठः॥
गौरी मंत्रेण युत जप सिद्धेनैक विशंति वाराणं,
सव्यंजनान्न पिंडं कन्या लाभाय मासमेकं वितरेत् ॥ ६२ ॥

इस गौरी मंत्र को दस हजार जाप से सिद्ध करके इक्कीस बार जाप कर भोजन तथा अन्न का पिंड कन्या के लाभ के लिए एक मास तक दे।

जपद हरिद्रा धात्री दूर्व्वा सिद्धार्थ पद्म केशरैः,
कुशरैः बिल्व तुल्य स्योदश दलैः सं पिष्टैस्तंदुलोपेतै : ॥ ६३ ॥

हल्दी आँवला, दूब सफेद सरसो कमल केशल कुश (दाभ) बिल्व के दस पत्ते और चावलों को पीसकर इस मंत्र से अभिमंत्रित करके

अहि अहि सप्त कृत्वः चत्वारिंश द्दिनानि कन्या या,
उद्वर्त्य मान मूर्तिंवरम चिरादेव सालभते ॥ ५४ ॥

उससे प्रतिदिन सात बार चालीस दिन तक इच्छित कन्या की मूर्ति बनाकर उसके उबटन करने से उसकी शीघ्र प्राप्ति होती है।

संमार्जुनं मंगानां मेतैरेवो षधैः श्रुमै विंहित
लक्ष्मीं करोति महतीं सर्वानप्या मयान जयति ॥ ६५ ॥

उन्हीं उत्तम औषधियों से अपने अंगो में उबटना करने से बड़ी भारी लक्ष्मी की प्राप्ति होती है और सब प्रकार के रोग नष्ट होते हैं।

वर्ण मात्रा श्वदंपत्यो रैकी कृत्य त्रिभाजिता,
शून्यैकेन मृतिं पुंसो नार्या द्वयंकेन निद्दिशत ॥ ६६ ॥

दंपत्ति (स्त्री-पुरुष) के नाम के वर्ण मात्राओं को एक करके तीन का भाग देवे शून्य तथा एक के अंक बचने पर पुरुष मृत्यु तथा दो के अंक के शेष रहने से स्त्री की मृत्यु कहे।

दंतो विंदु युतो देवी भेदः पूर्विमलः पुरः,
पृथु विभु युतौ हूं द्वौ वौं मंत्रोयं विवश्वतः ॥ ६७ ॥

बिन्दु सहित दंत (घं) देवी (च) भेद (व) पूर्ति (ण) मल (य) पुरु (अं) पृथु (ग) विभु (ऐ) हूं हूं और ॐ यह सूर्य का मंत्र है।
श्री वसुले लेखा ठः ठः यह इसके अंग हैं।

सूर्याभि मुखो भूत्वाजपन्नमुं को विदो मंत्रं,
पुरुषं स्त्रियं परं व ानष्टं द्रव्यं प्रति लभेत ॥ ६८ ॥

श्री वसुरेखे भूस्वाहेतित्येषा विद्या तथा भवेत् जप्ता,
इष्टा कर्षणं कृत्यन्नित्य जप पौष्टिकं कुरुते ॥ ६९ ॥

इस मंत्र को सूर्य की तरफ मुँह करके जपता हुआ मंत्री खोये हुए पुरुष स्त्री या द्रव्य को फिर पा लेता है।
श्री वसुरेखे भूस्वाहा इस मंत्र का जप इष्ट पुरुष आदि का आकर्षण तथा पुष्टि करता है।

यष्टि इंदीवर गोक्षीर दूर्वाभृंग तिलैः कृत लेषी,
सित घन स्निग्ध कुटिलान कुरुते कचान ॥ ७० ॥

यष्टि (मुलैठी) इंदीवर (कमल) गोक्षीर (गाय का दूध) दूब भांगरा और तिलों का लेप बालों को काला घने चिकने और घूंघरवाले करता है।

यष्टि तिलोत्पलो शीर शारि व नाग कैशरैः,
लेपः साजापयो भिः स्यात केशानां शीर्य तांहितः ॥ ७१ ॥

यष्टि (मुलेठी) तिल उत्पल (कमल) उशीर (खस) शारिबा नागकेशर का लेप बकरी के दूध से करने से टूटते हुए बालों के लिए हितरूप है।

चूर्णं महिषी स्तन भव भावित हिंताल बाल कुसुम कानां,
जंबु वंदराज र जनी रजोयुत स्तैलैंपितः केशभरः ॥ ७२ ॥

हिंताल (हिंतालु) बाल कुसुम (नारियल के फूल का गुच्छा) जामुन वंदारज (बंदा की चूर्ण) रजनी (हल्दी) के चूर्ण को भैस के दूध में भावना देकर तेल में मिलाकर लेप करने से केश अधिक होते हैं।

तैलं भृंग रसे गुंजा बीज फल्केन साधितं,
केश्यं पुष्कर सूक्ष्मैला रूजा मांसी रजोयुतः ॥ ७४ ॥

भांगरे के रस में सिद्ध किये हुए गुजा (चोटली) के बीज में कल्क में सिद्ध किये हुए तेल में पुष्कर (दमाल) छोटी इलायची और रूमी मांसी मिलाकर लेप करने से बाल बढ़ते हैं।

तैलं गुंजा फला तुल्य तिल चूर्णेद्रजी कृतान्,
आत्तं दत्तं नसोः कुर्यात् केशान स्निग्ध घनासितान् ॥ ७५ ॥

गुंजा (चोटली) के फल के बराबर चूर्ण किये हुए तिलों से निकाले हुए तैल को लगाने से और सूंघने से बाल चिकने घने और काले होते हैं।

सिद्धकेकी शिखा कल्के तैलं मधु कृदंबुनि,
सप्ताहं नाशयो र्दृतं नाशयेत्पलितोदयं ॥ ७६ ॥

मयूर शिखा (मोरपंखी बूटी) का कल्क मधु कृत अंबु (अनार दाना का रस) में सिद्ध किया हुआ तेल को सूंघने और लगाने से बालों की सफेदी सात दिन में नष्ट जाती है।

करंजास्थि रजो मिश्रं कृष्ण दुग्धात्तत कृजः
भानु तप्तंन्नशो र्दृतंकाल पलितं हरेत् ॥ ७६ ॥

करंज की गुठली के चूर्ण को काली गाय के दूध की छाछ (मट्ठे) को सूरज की धूप में तपकर सूँघने और लगाने से बालों की सफेदी नष्ट हो जाती है।

गुजां हरीत की पेशा निवांक्षा स्थि समुद्भवं तैलं,
पृथक् पृथक् नस्यात पलितघ्नं पयोभुजः ॥ ७७ ॥

गुंजा (चोटली) हरीतकी (हरडे) पेशा (जटामांसी) निवांक्षी (निंबोली की गुठली) के तेल को अलग अलग नस्य लेने से पयोभुज (कुचो का बढ़ना बन्द हो जाता है) अर्थात् सरक्त हो जाते हैं, तथा सफेद बाल नष्ट हो जाते हैं।

खारि कल्कित कांश्य लिप्त जठरं बुधा तपो तापितान्,
बीजान् सेल तर ोंबिनर्गत वत स्नेहेन नस्यात् नृणां ॥ ७८ ॥

अभ्यंगा च्चभवेत् समस्तम् पलित प्रध्वसनं हगुलिक,
घ्राण श्रोत शिरो मुख द्विज भवान स्योयुरन्या रुजः ॥ ७८ ॥

खारी नमक और कल्क किये हुए सेल तरु (ल्हेसप) की गुठली की भींगी का लेप कांसी के बने हुये घड़े पर करके, धूप में तपाकर, तेल निकाल कर सूँघने से और मालिश करने से सब पलित दूर होकर आँख कान नाक सिर मुख और दांतों के रोग नष्ट होते हैं।

लोद्र लोह वरा भृंगौ लिंसे त्सौवीर कल्किते:,
पालितान्य चिरेण स्यात् छवि स्तेषां जिताजनां ॥ ७९ ॥

लोध लोह (अगर) वरा (त्रिफला) भृंग (भांगरा) और सौवीर (अंजन) के कल्क को आँखों में आंजने से शरीर का सिकुड़ना दूर हो जाता है।

शंखस्या चिर दग्धस्य सीसं चूर्णेन मिश्रितं,
घृष्टं कृष्टिं करोत्याशु पलितानी विलेपनात् ॥ ८० ॥

बहुत दिनों के जले हुए शंख को सीस (सोषक) के चूर्ण में मिलाकर घिसने से और लेप करने से शरीर की खाल की सिकुड़न दूर होती है तथा बाल स्याह होते हैं।

पिष्टै भृंग वरा लोह करवीरा सनैर्महु:,
गुडेन धूपितै मूर्धि लेप: पलितरं जनं ॥ ८१ ॥

भृंग (भांगरा) वरा (त्रिफला) लोह (अगर) कनेर और आसन (जीबापोता) और गुड़ को पीसकर धूप देने से तथा सिर पर मलने से बालों का पकना दूर होता है, अर्थात बाल रंग जाते हैं।

वरा चूता स्थि नलिनी पंकनीली मधुव्रतै:
खारी पिष्टै विलैपन कृष्ण स्यु पलितान्यलं ॥ ८२ ॥

वरा (त्रिफला) चूतास्थि (आम की गुठली) नलिनी पंक (कमल की पराग) मधुव्रतै (अनार) और खारी नमक को पीस कर लेप करने से पके हुए बाल काले हो जाते हैं।

क्षारे वा क्षौंता प्रात: खार्यां सतीक्ष्ण या लिप्ता:
सायंवरा क्वाथ क्षलिता यांति नीलतां ॥ ८३ ॥

प्रातःकाल खारी नमक से धोने तथा खारी और तीक्ष्ण काली मिरच का लेप करने से तथा सांयकाल के समय वरा (त्रिफला) के क्वाथ से धोने से बाल काले हो जाते हैं।

पुष्पै सायोमलै: पिष्टै जंघ्ना वा ककुमस्य वा,
पलितानां तनिर्लिप्तो भवेद्भमर विभ्रम: ॥ ८४ ॥

अयोमल (बकरी की भींगनी) जंघा (काकजंघा) कुंकम (अर्जुन वृक्ष) के पुष्पों को पीसकर पके बालों पर लेप करने से भौंरें को भ्रम होता है।

आम्रमास्थि पद्मनि पंक लोह चूर्णै स्त्रिभिः समैः,
पलितानिं सक्लेपादाहूयं ते मधुव्रतान् ॥ ८५ ॥

आम की गुठली पद्मनि पंक (कमल की पराग) और लोहे का चूर्ण इन तीनों को बराबर लेकर एक बार बालों पर लेप करने से भौरों को आह्वाहन करते हैं।

आयासासन साराम्यां पिष्टैर्लैं पो दिनोषितैः,
धात्री भृंगं तिलाआद्योभिः पालितान्या श्रु रंजयेत् ॥ ८६ ॥

आयासासन (लोह सार) और आसन (जीरे के सार) को पीस कर लेप करने से तथा आँवला (धात्रीः और भांगरा तिल और अगर लेप के पके बाल शीघ्र ही रंग जाते हैं।

वरालोद्र नृपाआद्योभिः खारी पिष्टै विलेपनात,
तापिच्छ सच्छ वीन केशान कुर्यादपि शतायुषः ॥ ८७ ॥

वरा (पाठ) लोध नृप (ऋषभक) अचो (अगर) और खारी को पीस कर लेप करने से सौ बरस की आयु वाले के बाल भी मोर की पूँछ के समान सुंदर हो जाते हैं।

वराद्य चूर्ण यष्टिनां भृंग वारिणा,
तन्वंति भ्रमर भ्रांति पलितानि विलेपनात् ॥ ८८ ॥

वरा (त्रिफला) का चूर्ण और यष्टि (मुलेठी) और भृंग (भांगरा) के रस के साथ लेप करने से पके हुए केश भौंरे का भ्रम करते हैं।

आयस भाजन निहितं शुष्कजपा कुसुम रेणुसंभिन्नं ,
कुरुते तैलं लेपात् पलिते ष्विंदी वरा शंकां ॥ ८९ ॥

लोहे के बरतन में रखे हुए सूखे हुए जपाकुसुम (गुडहल) के फूलों का (रेणु सं भिन्न) जो मिट्टी रहित हो उससे तेल सिद्ध करके पके बालों पर लेप करने से नील कमल का भ्रम करते हैं।

मज्जाविल्वस्य पक्वस्य संजलेन गुडेनवा,
केशाः प्रक्षालिता यांति जटा बंध विमोक्षणं ॥ ९० ॥

पके हुए बिल्वफल के गुदे और जल अथवा गुड से बालों को धोने से बालों का जटाबध (जूडा) छूट जाता है।

यष्टि लोद्र रजस्तुल्य यवचूर्ण विलेपनात्,
मुखं भवति निष्टप्त सुवर्ण रुचि भासुरं ॥ ९१ ॥

मुलहठी लोध के चूर्ण के बराबर जौ का चूर्ण लेकर इसके लेप से मुख सोने के समान कांतिवाला हो जाता है।

वदरास्थि हिमस्यामा कालेयकञ्जलैः कृतः,
प्रलपे कुरुते वक्त्रं शतपत्र समप्रभं ॥ ९२ ॥

बेर की गुठली हिम (कपूर) श्यामा (प्रयंगु) कालेयक (केशर) जल में पीसकर अर्थात् पानी जैसा करके लेप करने से मुख कमल के समान कांतिवाला हो जाता है।

वट पांडु छद श्यामा लोद्रकालेय रुक हिमैः,
मुखं मुहुर्मुहु र्मृष्टं स्व कांत्यां शशिनं जयेत् ॥ ९३ ॥

वट (बड़) पांडु (पटोल) छद (पत्ते)श्यामा (प्रयंगु) और लोध (का लेप) केशर (रुक) कूट और हिम(कपूर) को मुख पर बार बार लेप करने से वह अपनी कांति से चंद्रमा को भी जीत लेता है।

उद्वर्तित हिमोशीर रुजा कुवलच्छदैः,
वक्त्रः सद्रक्षतां गच्छेत शरद शश धर छवि ॥ ९४ ॥

हिम (कपूर) उशीर (खस) रूजा (मेथी) कुवलय (कमल) के पत्तों के लेप से मुख शरदकालीन चंद्रमा के समान कांति वाला हो जाता है।

हिमोदीच्यां गनाकोल मंदं कालेयकैर्मुखं,
लिंपेत् कांत्यौ तथा ताम्र भवः शाल्मलि कंटकैः ॥ ९५ ॥

हिम (कपूर) कोलमद (बेर के वृक्ष का गोंद) कालेयक (केशर) और शाल्मली कंटकै (सेंमल के वृक्ष के कांटे का लेप) करने से उदीच्या (उत्तर दिशा की) अंगना कुमारी कन्या का मुख तांबे के समान कांतिवाला हो जाता है।

लिप्तं मसुर विदलै र्निस्तुषै राज्य मज्जितैः,
क्षीर पिष्टैर्मुखं दूरमति सैतोविधोः कृतिं ॥ ९६ ॥

मसूर की दाल का छिलका उतारकर घी में मिलाकर दूधमें पीसकर लेप करने से मुख दूर से चंद्रमा की कांति को जीत लेता है।

रक्त चंदन काश्मीर यष्टि लोहित यष्टि भिः,
अजाक्षरै श्रुतं तैलं भपेद्वरन वर्णकृत ॥ ९७ ॥

लाल चंदन केशर मुलहठी लोहित यष्टि (लाल मुलेठी) को बकरी के दूध में सिद्ध किया हुआ तेल सोने अथवा केशर के समान रंग मुख का बना देता है।

यष्टि कुचंदन लाक्षा मंजिष्टा चंदनै श्रुतंकर्षैः,
द्विगुणं क्षीरं तिल भव कुडवं मुख कांतिकृल्लेपात् ॥ ९८ ॥

यष्टि (मुलहठी) कुचंदन (लालचंदन) लाक्षा (लाख) मंजीष्ठ सफेद चंदन को एक कर्ष (सोलह मासा) लेकर इनसे दुगुना तैल दूध तथा एक कुडव (३२ तोले) तिलों के तेल को सिद्ध करके लेप करने से मुख की कांति बढती है।

पीत्वा सर्पि रधो वक्त्रा क्षणं सुद्वा वमेत् पुनः,
वनिता वंदनां भोजमत्यर्थं पीतम र्हति ॥ ९९ ॥

घृत को पिलाकर जरा देर नीचे को मुख किये हुए सोकर वमन कर दें इससे स्त्री का मुख रूपी कमल बहुत अधिक पान करने योग्य बनता है।

वक्त्र ब्ले हरतो विश्वा पथ्या चव्य फलत्वचो,
मदनास्थनि तक्रेण सहितान्यथवा तथा ॥ १०० ॥

विश्वा (सोठ) पथ्या (हरड़े) चव्य फल (गजपीपल) की त्वचा (छाल) और मदन (मैनफल)की गुठली को मट्ठे के साथ अथवा अकेले ही सेवन करने से मुँह की दुर्गंध दूर हो जाती है।

आस्य दौर्गंध्य हृत् चिंचा फल वल्कल चर्वणं,
पर्युक्तमंथवा निंब शलाका चूर्ण घर्षण ॥ १०१ ॥

इमली के फल की वल्कल को चबाने से अथवा नीम और मैनफल के चूर्ण को घिसने से मुँह की दुर्गंध दूर होती है।

शरुगेला द्वंद्वजलद यष्टि धान्यक कल्कितं
कवलं मुख विन्यस्तं मुखदौर्गंध नाशनं ॥ १०२ ॥

रु ग दोनों इलायची जलद (नागरमोथा) मुलेठी धान्यक के कल्क के ग्रास को मुँह में रखने से मुख की दुर्गंध नष्ट होती है।

एला कुष्ट कणा यष्टि मुस्तोग्रा गुलिकाः कृताः,
पूति गंधमपास्यंति वजनाभ्यंतरे धृतां ॥ १०३ ॥

इलायची कूढ़ पीपल पुंलहटी नागर मोथा उग्रा (लहसुन) की गोली बनाकर मुँह में रखने से यह दुर्गंध दूर करती है।

जाती जल कुसुमपाढा द्विरजनी जंवीर सुरस जंबु पुष्पैः,
सिद्धं तैलं कुर्यात् केसर समान गंध वदनं ॥ १०४ ॥

जाती (चमेली) का जल (रस) कुसुम (फूल) पाढा (पाढ़) दोनों रजनी (हल्दी) जंवीरी निम्बू का रस और जामुन के फूलों में सिद्ध किया हुआ तेल मुँह में केशर के समान सुगंध उत्पन्न करता है।

चूर्ण सिंदूर विजयातिंतिणी फल सत्वचां,
निहंति दंत दौर्गंध्य मुखे दिन मुखे धृतः ॥ १०५ ॥

सिंदूर विजया (भंग) तितिणी फल (इमली) और उसके वल्कल के चूर्ण को मुँह में रखने से मुख की दुर्गंध दूर होती है।

गंध हन्यांलसुन प्रभृति निसेवणं समुद्भ वं गंधं,
नागलता दल मृष्ट कुष्टं वकुलं प्रसूनं वा ॥ १०६ ॥

नागर वेलपान का पत्ता नागरमोथा कूढ और वकुल (मोलश्री) के फूल लहसुन आदि नहीं खाने योग्य वस्तु के सेवन से पैदा हुई मुँह की दुर्गंध दूर होती है।

लेपो माहिषतक्रोत्थ वाराही कंद रेणुभिः,
सप्ताहं धान्य राशि स्थैः कर्णं पालिं विवर्द्धयेत् ॥ १०७ ॥

भैंस के मट्ठे से निकाले हुए वाराही कंद के टुकडों को एक सप्ताह तक अन्न के ढेर में रखकर उसका लेप कर्णपाली बढ़ाता है।

स्यालिप्तं माहिषी क्षीशत गुंजा बीज रजो युतात,
तक्रोत्थ दधि साम्दूतात कर्णं पालि विर्द्धनं ॥ १०८ ॥

गुंजा (चोटली) के बीज के चूर्ण को भैंस के मट्ठे में डाल कर दही के समान बनने पर निकालकर उसमें भैंस का दूध मिलाकर लेप करने से कर्णपाली बढ़ती है।

विष कल्क युते लंबा तैलं स्वरशिवां भसि,
सिद्धमेष्ट गुणे कर्ण पालिं कुर्यात वींटसी ॥ १०९ ॥

(विष) वत्सनाभ के कल्क सहित लंबा (तिल तुंबी) के तेल को उसके आठ गुण स्वरस या जल में सिद्ध के लेप करने से कर्ण पाली बढती है।

इयरिपु ह्यगंधोग्र रुग्राजी यष्टि मधुलिका सीसै:,
तैलं कर्ण विवर्द्धै सिद्धं वृहती फलं स्वरस ॥ ११० ॥

हयरिपु (कनेर) हयगंधा (असगंध) उग्रा (वच) रुक (कूट) राजी (राई) यष्टि (मुलेठी) मधु (गिलोय) कासीसै (कसीस) इनको वृहती फल (छोटी पसट कटेली के फल) के रस में सिद्ध किया हुआ तेल कर्णपाली को बढाता है।

जल नाग वलातिबला महिषी तक्रोत्थितो उग्रगंधाभि:
पिष्टाभि: लिप्ताभि: श्रवण पयोधर विवृद्धि: स्यात् ॥ १११ ॥

जल (नेत्रबाला) नागबला (गंगेरेकी छाल) अति बला (कघीडावीडवला) और भैंस के मट्ठे से निकली हुई उग्रगंधा (लहसून) को पीसकर लेप करने से कान और स्तन बढ़ते हैं।

लोद्राश्वगंधा भल्लात तरु बीज विपाचितं तैलं,
प्रवर्द्धते लिप्तं मुज कर्ण स्तनादिकान् ॥ ११२ ॥

लोध असंगध भल्लात तरु बीज (भिलावे के बीज) में पकाये हुए तेल के लेप से भुजा कान और स्तन आदि बढ़ते हैं।

रास्निका बीज वाराही कंद चूर्ण विमिश्रितात्,
तक्रजं माहिषात् क्षीरात् लिप्तं दो कर्म वर्द्धनं ॥ ११३ ॥

रालिका बीज (चिरमी के बीज) बाराही कंद को, भैंस के दूध अथवा छाछ आदि में मिलाकर लेप करने से कान को बढ़ाता है।

विषाग्नि मार्ग कुटज दोर्वाराघंड लेपनं,
सतैलं दोस्तन श्रोत्र भगलिंग विवर्द्धनं ॥ ११४ ॥

वचनागवाला कुष्ठ महिषी नवनीतकै:,
लिप्तं स्तन युगं नार्या: कुंभाकंभनिभं भवेत् ॥ ११५ ॥

व्याधी मार्ग कणभांडी राजीनता मषै:
लेप: साजापया: स्त्रीणां स्तन द्वंद्व विवर्धनं ॥ ११६ ॥

लेपः क्षीर बला नाग बलारु कूतक संभवैः
स्यात्तैलाक्षाज्या सेको वा वामारोस्तनवर्द्धनं ॥ ११७ ॥

स्रोतोंजनेन ज्योष्णां भः पिष्टेन कृत भावना,
स्यादंगनाः समुत्तुंग कुच कुम्भरातुरा ॥ ११८ ॥

तैल कषाये मुडिन्या स्तत्कल्क साधितं नसि,
दत्तं कल्क तु तन्निपीतं कुचयोपतनं निवर्त्तयति ॥ ११९ ॥

सिद्धं गो महिषी सर्पिः समं तैलं कृतं नसि,
तिक्तानी सोग्रनति कृत कांता भिर्विद्धियेत्कुचौ ॥ १२० ॥

सिद्धेन तिलजेनाक्त स्वरसे जाति लंबयो,
धृता योनिमुखे वर्तिनष्टांबु त्पादयेत्कुचै ॥ १२१ ॥

विष्टं मूल मुपोदक्यां प्रलिंपेत तैलमिश्रितं,
या कन्यां तत् भगंता स्यात्पुंसो बिधुर्जोधिता ॥ १२२ ॥

वज्र वल्ली अश्वगंधोग्रा शैवाल पटुभिः,
पुटे रुधौ विलिपेन्नात्मेद्रं यादित्यं विवर्द्धये ॥ १२३ ॥

वाजि गंधा तुरंगारि वचो दिव्येत पिपली,
महिषी नवनीतोला लिं पेल्लिंगं विवर्द्धये ॥ १२४ ॥

वचाश्वगंधा सैवाल व्रजवल्ली रजोन्वितं,
व्याघी फलांबु लेपेन भवेन मेहन वृद्धये ॥ १२५ ॥

वज्रि काण्ड शैवालैः विष्टैव्याघी फलांबुना,
प्रदेहो मेहनो नस्याद्यं वृहणाय प्रजायते ॥ १२६ ॥

हृहती फलतोयेन पटुना शैवलेन च ,
स्मारब्यं क्रमाल्लिंगं मुशलेन समं भवेत् ॥ १२७ ॥

सप्तपर्ण भसितैः पुटु सधि स्तिलै कृतः लैपः,
सूर्य्यांशु संतप्तैः स्थंभयेमहं नृणं ॥ १२८ ॥

चूर्णस्तिल राजिकयोः सप्तठद भसिमत थपजलशूकः.
लिप्तै कमादमीभिर्मूसूल समानं भवेल्लिंग ॥ १२९ ॥

सिद्धार्थ चक्र बृहती फल वाजि गंधा
कृष्णा तिलोषण रुजांमधु भाषमार्गैः,
उद्वर्तनं स यवानालज सिंधुजात्तै,
लिंगस्तन श्रवण बाहु विवर्द्धनं स्यात् ॥ १३० ॥

स्वरसे भूकदम्बस्य सिद्धं दाडिम कालिकभिः,
तैलं तिलोत्थमाक्षं वा लेपाल्लिंगा भिवृद्धिकृत ॥ १३१ ॥

वर्द्धयेद्राजिका तैलं साधितं दाडिम त्वचां,
यथा विधि समाभ्यक्तं मेवं कर्णे स्तनावापि ॥ १३२ ॥

भल्लातक वृहतीफल जाडिम फल चर्म्म कल्कमति
सिद्धंसलिलैः राजि तैलं विलेपानान्मेहनो ॥ १३३ ॥

पूर्वो महिषी सकृतो द्वर्त्य मुहुलिंग मतिहिमैः,
सलिलैः प्रक्ल्प्य वाय कार्याः कथितः सर्वेप्पमीयोगाः ॥ १३४ ॥

पार्थ ब्रह्म द्दगाश्मच्यां त्वक पुष्प फल कल्कितैः,
कर्म भिर्योनिः स्वल्पः स्याद्योषितः क्रमात् ॥ १३५ ॥

लोद्रार्जुन वरा कांताजंब्बाम् वदरी दलैः,
कामधाम भवदाढं स्त्रीणमुद्धार्त्तितं महुः ॥ १३६ ॥

अंगैवर्धवस्य सिद्धेन पंचभिः क्षलितं भगं,
कषायेण चिरादेव गाढी भवति योषितां ॥ १३७ ॥

गुडतेल शालि तंदुल सेंधव यव माष वदर मज्जयुतः,
योनिं धृतो जरत्या अपि सितुरा पादये दृगा ॥ १३८ ॥

यदभः सधितं साधु शिफया वेत सोत्यया
काष्णेन क्षालयेत्तेन योनिः संशुष्कतां व्रजेत ॥ १३९ ॥

निंब कल्क कषायेन क्षालितं वहुसो भगं,
तत्त्व चा धूपितं पश्चाद् भवत्यंत्यत सुदरं ॥ १४० ॥

खारीकवोष्णंजलं मीषदुष्णं क्षीर त्वगंभः स्त्रीफला कषायः
गंधाबुना सौच विधि प्रयुक्तं सुयोनिता संजनयति नार्य्या ॥ १४१ ॥

सेवाब्दे दीवरा भोजफल विश्वोषधैः,
श्रुतं तैलं योनि हरेतां स्तान दोषानं कामुकगर्हितान ॥ १४२ ॥

जाति प्रियंगु पुष्पैः सिद्धं तैलं श्भरालथ लेपितं,
तेन विनिर्वत्त दुर्गंधो दोषे सुभगं भगं भवति ॥ १४३ ॥

यष्टि सुमनः सुमनः पल्लव पंचम रंजो युतं सर्धिः,
आतप तप्तं लिप्तं भग दौर्गंध्यं निरा कुरुते ॥ १४४ ॥

रोमाण्युत्पाट तैलेन कोशातक्यस्थि जन्मना लिप्तं
वरांगं नारीणं स्याद्रोम रहितं सदा ॥ १४५ ॥

पृथगेकेन भागेन ताल पालास भस्मनोः
संचूर्ण्य पंच भागेन लेपो रोम विनाशनः ॥ १४६ ॥

लंबा स्वरस पिष्टाभ्यां स्नुक तालाभ्यां
विलेपनं रक्तोग्रालाशिला तेललेपनं रोमानाशने ॥ १४७ ॥

सिंधूत्थ हरिताला स्नुक: पत: क्षारै: सुपेषितै:
आलिप्पोद्वर्त्तव्येद्रात्रं शेम नाशोयमुत्तमं ॥ १४८ ॥

गुंजा रुष्करयो: सप्तदिनं गोमूत्र भावितं
चूर्णोर्क शीर संयुक्तो लेपोद्रोमविनाशन: ॥ १४९ ॥

गुंजा (चोटली) अरुष्कर (भिलावे) के चूर्ण को सात दिन गोमूत्र में भावना देकर आक के दूध से मिलाकर लेप करने से बाल उड़ जाते हैं।

गुंजा मन: शिाल शंख चूर्णै कल्की कृतै: कृतं
अंगेषु लेपनं रोम्नां सर्वेषां स्याद्विलेपनं ॥ १५० ॥

गुंजा (चोटली) मेनसिल शंख के चूर्ण के कल्क का अंगो में लेप करने से सब स्थानों के बाल उड़ जाते हैं।

लसुने नापि तालेनाप्यपामार्ग फलेरपि,
नल क्षारयुतै रोम्रां प्रनाशेस्याद्विलेपनं ॥ १५१ ॥

लहसुन हरताल अपामार्ग (चिरचिटे) के फल और नल क्षार (नमक) के लेप से बाल साफ हो जाते हैं।

निष्क प्रमाण मेतेन मंजिष्टा शंख भस्म कुनटीताल:,
चूर्ण: पुनरष्ट गुणेनिर्ल्लोमी करणमुद्दिष्ट ॥ १५२ ॥

निष्क (४ मासे) के बराबर मंजिष्टा (मंजीट) शंख की भस्म कुन्टी (में नीसल) हरताल का चूर्ण बालों को साफ करने में आठ गुनी शक्ति रखता है।

आरनालेन ह्यपुष्पी चूर्ण: पीतोथवा कृत:
जंबु चर्मत्व वार्षेण स्नातं दौगंध्य हृत्तनां: ॥ १५३ ॥

आरनाल और ह्यपुष्पी के चूर्ण को पीने और जामून की छाल तथा आर्ष (कोंच) के साथ स्नान करने से शरीर की दुर्गंध दूर हो जाती है।

कांतोशीर शिरीष त्वक लौद्र चूर्णेर्भव द्वपु:,
उद्वर्तितं गत स्वेद मलं लुप्तं त्वगामय ॥ १५४ ॥

कांता (सफेद) दोब) उशीर (खस) सिरस की छाल और लोध के चूर्ण का शरीर में लेप करने से पसीना तथा रोग दूर होकर शरीर सुंगधित हो जाता है।

द्विनिशा तिल रुग्राजी कल्योद्वर्तित विग्रहः
यः स्नाति तस्य देहः स्यात् सुगंध मधुर छविः ॥ १५५ ॥

दोनों हल्दी तिल उग्र (लहसून) राजी (राई) को मिलाकर जो स्नान करता है उसका शरीर सुंगधित और कांति युक्त हो जाता है।

पथ्यामालूरमूलाभ्यां निशावोशीर युक्तया,
उद्वर्त्तनेन दिष्टाभ्याम दुर्गंधं वपुर्भवेत् ॥ १५६ ॥

पथ्या (हरडे) मालूर (बिल्व(जड़) हल्दी उशीर (खस) के उबटन से शरीर सुगंधित हो जाता है।

रोद्रारग्वध दाडिम निंब शिरीष त्वग ब्दरजनी
श्यामः उद्वर्त्तने प्रयुक्ता शरीर दौरगंध्य मद्य नयंति वधूनां ॥ १५७ ॥

रोद्र (लोध) आरग्वध (अमलतास) दाडिम नीम सिरस की छाल अब्द (नागरमोथा) रजनी (हल्दी) श्याम (काली हल्दी) के लेप से वधु (स्त्री) के शरीर की दुर्गध दूर होती है।

लोधजंबु दलोपेतं रजुनस्य प्रसनकैः
उद्वर्त्तनं कृतं धर्म्म जल गंधं निरस्यति ॥ १५८ ॥

लोध जामुन के पत्ते अरजुन के फूल के लेप से दुर्गंध नष्ट हो जाती है।

सायं घृतेन लीठो दल चूर्णं मातुलुंगस्य,
फल कृतिवं त्रिधा वक्रं रुध्याद धो वायु ॥ १५९ ॥

मातुलुंग (बिजोर के पत्ते के चूर्ण को सायंकाल के समय घृत में मिलाकर चाटने से तथा फल के समान मुँह में रखने से अधो वायु नहीं निकलती है।

निशा कल्कोग्नि संतप्ता महिषी छगण वृत्तोः,
तनुते तनु मालिप्तः स्वर्ण समद्युतिः ॥ १६० ॥

हल्दी के कल्क को आग पर तपाकर भैंस के छगण (सूखे गोबर) में मिलाकर लेप करने से शरीर सोने के समान कांतिवाला हो जाता है।

गोर्महिष्याश्चमूत्रेण करिषेण च भक्षणं
अभीक्ष्णं विहितं कुर्य्यात्त्वर्म्मण स्तुल्य वर्णतां ॥ १६१ ॥

गाय और भैंस के मूत्र और करिषा (सूखा गोबर) को निरंतर मालिश से चमड़े का रंग बराबर हो जाता है।

जननी वाहकस्य स्यात पिछलेनास्य वारिण
मुक्षणवर्ण किं न ग्रथैभ्यलस्य विनीलतां ॥ १६२ ॥

जननी (मंजोठ) वाहक और पिछल (मोचरस) के जल के लेप से घाव के चिन्ह और गांठ के चिन्ह लोप हो जाते हैं।

सिद्धार्थ कोल बीजेभ्य स्तैल मात्रं यथा विधि,
दत्तं न्नंशोन्नरं कुर्यात् पुरुषायष्क जीवितं ॥ १६३ ॥

सफेद सरसों और कोल (बोर) की गुठली के बीजों के तेल को सूँघने से पुरुष आयुभर जिन्दा रहता है।

षषमासान शाल्मली तरो रंधे संस्थाप्य जीवत:
आदाय भक्षयेत्पथ्या क्षराशी विजलोभवैत् ॥ १६४ ॥

छह महीने तक हरे सेमल के वृक्ष के खोखल में पथ्या हरडे को रखकर दूध के साथ खाने से पुष्ट होता है।

आमल की फल चूर्ण सलिलेन घृतेनवा
निशारंभे लीठोनासाश्रती द्रग्योवन बुद्धिअग्नि संजननं ॥ १६५ ॥

आमले केफल के चूर्ण को रात्री के आरंभ में जल या घृत के साथ चाटने से नाक, आँख योवन बुद्धि और अग्नि को तेज करता है।

तिल धात्री फल चूर्णे घृत लुप्ति: प्रतिदिनं प्रेग लीठ:,
जनयेन्मासेनमतिं महंती हन्यज्जरां च परां ॥ १६६ ॥

तिल और आँवले के फल के चूर्ण को प्रतिदिन प्रातःकाल के समय घृत के साथ चाटने से एक मास में बड़ी भारी बुद्धि को उत्पन्न करती है बुढापापन नष्ट हो जाता है।

भृगं भृगं रसे सिद्धं तैलं वा शीलयेन्नर:
धात्री फल रसं वानु जरा रोग जयोद्यत ॥ १६७ ॥

भृंग (भांगरा) या भांगरे के रस में सिद्ध किये हुए तेल अथवा आंवले के फल के रस का सेवन बुढापे के रोगों को जीतने में तत्पर रहता है।

पथ्या छात्री चित्रक विडग लोहासिन: क्रमात्:
वृद्धा चूर्ण: भूता लीढां स्तैलने जरां नृणं हन्यु: ॥ १६८ ॥

पथ्या (हरडे) छात्री (आँवला) चित्रक बाय विंडग लोह (अगर) असन विजय सार) के चूर्ण को क्रम से बढ़ाकर तेल के साथ चाटने से पुरुषों की वृद्धावस्था नष्ट हो जाती है।

यष्टि त्वकांडवबुखिता विडंग सर्पिर्वचा मागधीका तिरीटै:
व्यस्तै स्समस्तैरथवोपयुक्ता वराजरारोग विनासनीस्यात ॥ १६९ ॥

यष्टि (मुलहठी) की त्वक (छाल) का स्वरस सिता (मिस्री) वायविडग सर्धि (घृत) वचा मागधीका पीपल और तिरोट को पृथक या एक साथ उपयोग करने से वृद्धावस्था नष्ट हो जाती है।

प्रातर्धात्री भुक्ता पथ्यां रात्रोचाक्षं नित्यं खादन,
सर्वान् व्याधीन् जीत्वा जीवेदायुर्य्यावत् ॥ १७० ॥

प्रातःकाल में आमला खाने तथा रात में एक बहेड़े के फल के बराबर हरड़े रोज प्रतिदिन खाए तो सह रोगों को जीतकर पूरी आयु को निरोग रहता है।

स्वस्योत्कृष्टं हेमंताता शिफा मासमेकं,
क्षीरेण य: पीवेत चित्रकस्य भेवत्सैषे वली पलित दुरगः ॥ १७१ ॥

अपने हाथ से हेमन्त ऋतु के अन्त में चित्रक जड़ को उखाड़कर एक मास तक दूध के साथ जो पीता है उसकी वृद्धावस्था दूर होती है।

भावितानां तिलानां च खादत्ना तस्य कर्म च
भृंगाच सा जरां हंति क्षीरेण मित मिश्रुना ॥ १७२ ॥

भृंग (भांगरा) के स्वरस में भावना दिये हुए तिलों को दूध के साथ खाने से बुढ़ापापन नष्ट हो जाताहै।

मुस्ताहय पुंसयो श्चूर्णे तेकण सहय: पिबेत्
सहय्तं तस्य देह: स्यात् रूप भाव मनोहर ॥ १७३ ॥

मुस्ता (नागरमोथा) हयपुंसयो (असगंध) के चूर्ण को जो मट्ठे में भिगोकर घृत के साथ पीता है उसके शरीर का रूप और भाव मनोहर हो जाता है।

पलाश तरु बीज चूर्ण पलसंयुतां गोमयाश्च कुक्कटंव तो
गृहीतम बलिस्व तक्रोत्थितं त्रिसप्त दिवसानि,यस्यापद्य
एव जीर्णे पिवन जयेत् मृति जरा रूजा अपि लभेत मेधामति ॥ १७४ ॥

पलाश (छोला) वृक्ष के बीज के एक पल मात्र चूर्ण को गोमय (गोबर) के रस में अथवा गाय की तक्र में तीन दिन या सात दिन तक चाटे और दूध पीवे तो उसका शरीर जीर्ण होने पर भी वह बुढ़ापा के रोगों को जीतकर बहुत बुद्धि को प्राप्त करता है।

अश्वामलको उदंबर जंबु खदिशसितार्जुनः,
वंशः पिप्पल मदन वर द्विज वृक्षःप्लाक्षास्तथा मंजिष्ठा ॥ १७५ ॥

विल्वार्जुनयोः चैकं वकुलपि काशर्ज्जुवंजुलाः
पनसं अर्क शमी कंदवस्वतो निंबो मधुकश्च ॥ १७६ ॥

वृक्षानक्षत्राणम् स्वादि नामपि क्रमादुक्ता
आयुर्दीर्घं वांछन सदा स्वतारा तरुं रक्षत ॥ १७७ ॥

यस्य तारा तरो कर्म पुष्टा धुच्चाटनादिवा,
यथा विधि विधीयेत् स तत्फल मवाप्नुयात ॥१७८ ॥

अश्वी (असंगध) आमलक, (आँवला) उदंबर, (गूलर) जंबु, (जामुन) खदिर, (खेर) असित, (अगर) अर्जुन वंश, (बांस) पीपल, मदन वृक्ष, वट (वड) द्विज पलाश, प्लक्षा (पीलवानी) मंजिष्ठा (मजीष्ठा) विल्व, (बेलफल) अर्जुन में से एक बकुल (मोलश्री) कोकिलाक्ष, सर्ज्जवृक्ष-चंजुल-पनस (कटहल) एक शमी (खजेड़ा) कदंब चूत (आम) नीम और मुधक (महवा) यह अश्वणी आदि नक्षत्रों के वृक्षों का वर्णन क्रम से किया गया है दीर्घ आयु के चाहने वाले को सदा अपने नक्षत्र के वृक्ष की रक्षा करे जिसके नक्षत्र के वृक्ष की पुष्टि अथवा उच्चाटन आदि कर्म विधि पूर्वक किये जाते हैं। वह उसके फल को पाता है।

पुष्टि क्रिया विधिमिमं सकलं विजानत,
मंत्रायनेन यदि वांछति पुष्टि कृत्यै,
हस्तस्थ एव तिखिलोपि समी हितार्थः
स्यात्ततस्य संशंय वतोत्र कदापि माभूत्

यदि मंत्री पुष्टि कर्म की इच्छा करता है तो इस पुष्टि क्रिया को जानते हुए इसके हाथ में सब इच्छित वस्तुयें रहती हैं इसमें कुछ भी संदेह नहीं है।

इति

ग्रथांतर नक्षत्र वृक्षा

अथ वक्ष्यामि नक्षत्र वृक्षानागमलक्षितान्,
पूज्यानायुष्य दां श्चैवव वर्द्धनात् पालनादपि
विषद्वधात्री तरु हेम दुग्धाजम्बू स्तथा खदिर कृष्ण वंशा
अश्वत्थ नागौच वट: पलाशाल्पक्षस्तथा म्वष्ट तरु क्रमेण
बिल्यार्जुनौ चैव विंककतोथ संकेसरा: शम्बर सर्ज वर्जुला
सपनसार्कांश्च शमी कदम्बास्तथाम्र निम्बोमधुकद्रुम: क्रमात
अमी नक्षत्र देवत्वा वृक्षास्यु सक्ष विशंति
अश्विन्यादि क्रमादेषामेषा नक्षत्र पद्धति
यस्त्वेषा मामजन्म ऋक्षा भाजां भर्त्य: कुर्यादेपजादीन्मदां ध:
तस्यायुष्यं शअरी कलत्र च पुत्रं नश्यत्येषां वर्द्धते वर्द्धनाद्य:

अब नक्षत्रों के वृक्षों के नाम और लक्षण कहते हैं जो अपने जन्म के नक्षत्र के वृक्षों को पूजता है, सोचता है और पालता है उसकी आयु की वृद्धि होती है।

अश्वनी	= कुचला	भरणी	= आमला
कृतिका गूलर	= सत्यानाशी	रोहिणी	= जामुन
मृगसिर = खेद		आद्रा	= अगर
पुनर्वसु	= बांस	पुष्य	= पीपल
अश्लेषा	= नागकेशर	मघा	= बड़
पूर्वा	= ढाक	उत्तरा	= पाखर
हस्त	= पाढ़	चित्रा	= बेल
स्वाती	= अर्जुन	विशारवा	= रामबबूर
अनुराधा	= पुत्राग	ज्येष्ठा	= लोध
मूल	= साल	पूर्वाषाढ़ा	= जलवेत
उत्तराषाढ़ा	= पनस	श्रवण	= आक
धनिष्टा	= खेजड़ा	शतभिषा	= कदम्ब
पूर्वाभाद्र पद	= आम	उत्तराभाद्रपद	= नीम
रेवती	= महुवा		

जो मनुष्य मदांध होकर अपने जन्म नक्षत्र को औषधि आदि के काम में लाता है उसकी आयु लक्ष्मी स्त्री पुत्रादि नष्ट हो जाते हैं और जन्म नक्षत्र वृक्ष को जल आदि के द्वारा बढ़ाने से आयु आदि की वृद्धि होती है।

इति पुष्टि विधानम्

॥ ॐ नमः ॥

अथ सवननं वक्ष्ये यंत्र मंत्रौषधै क्रमात्
पुंसां वंधुनां लोकस्य कुंजराणां गवामपि ॥ १ ॥

ॐ चामुंडेश्वरि एहि एहि लिलि आस्वादिनि आकर्षणी पंच पिशाचिनि अमुकं वश्यमानय वश्यमानय ठः ठः ॥

अब पुरुष, स्त्रियों, लोक, हाथियों और गायों केभी वशीकरण यंत्र मंत्र और औषधियों का क्रम से वर्णन किया जाएगा।

चामुंड़ा मंत्रेणायुत जप सिद्धेन मंत्रितोनेन
भूस्थेः प्रथमो ग्रासः साध्यं वश्यं समातनुते ॥ २ ॥

उपरोक्त चामुंडा मंत्र को दस हजार जप से सिद्ध करके उससे पहले ग्रास को मंत्रित करके पृथ्वी पर रखने से साध्य वश में हो जाता है।

ॐ चामुंडे अमुकं हन हन पच पच वशमानय ठः ठः
संध्यात्रय त्रयो विंशति दिन मेतेनपूर्व तुल्येन
विंशति संख्यं लवणैर्होमात् साध्यो वशी भवति ॥ ३ ॥

इस मंत्र को प्रातः दोपहर और सांयकाल के समय तेईस दिन तक पहले के समान जप करके बीस संख्या प्रमाण अभिमंत्रित किये हुए नमक के होम से साध्य वश में होजाता है।

ॐ चामुंड़ि निरिति चंड़ालि अमुकं दह दह पच पच शीघ्रं वशमानय वशमानय ठः ठः ॥

दसगुण दश शत रूप्य प्रजाप्यातः प्राप्नुयादयं सिद्धिं
मंत्रो दशांश होमाद्विहि ताच्च विष्णु यक्षिण्याः ॥ ४ ॥

यह विष्णु यक्षिणी का मंत्र दस हजार जप और दशांश होम से सिद्ध होता है।

तुष साध्य दंत काष्टं प्रियां सुकार्या सवीज लवणै
स्यात् वश्यः साध्यो होमाद्विहिता देतेन मंत्रेण ॥ ५ ॥

मंत्र से तुष साध्यं के दंत काठ प्रिय वस्त्र और कपास बीजों (काकड़ो) सहित होम करने से साध्य वश में होता है।

ब्लें तत्व कूटेंदु वृतं स्वनाम दद्याह्यं भगेऽष्टदलाब्ज यंत्रं
पत्रेषु पद्मा वरमूल मंत्रं वेष्टयं तदाकर्षण पल्लवेन ॥ ६ ॥

टांतं तत श्चार्द्ध शशि प्रवेष्टां विलिख्य यंत्रं फल के वटस्य
गोरोचना संयुत कुंकुमाद्यैः साध्यस्य नामारुण चंदनस्य ॥७॥

कृत्वा ततश्चोभय संपुटं च श्री पार्श्वनाथस्य पुरो निवेश्य
संध्यासु नित्यं करवीर पुष्पैभवेदऽवश्यं जपतः सुसाध्यं ॥८॥

ब्लें तत्त्व (ह्रीं), कूट (क्ष), और इंदु (चंद्रमा) से घिरे हुए अपने नाम के बाहर केभाग में अष्ट दल का कमल बनाकर, उसके पत्रों में पद्मावती देवी के मूल मंत्र को लिखकर, उसको आकर्षण पल्लव (संवोषट) से युक्त करके टांत (ठ) और अर्द्ध चंद्रमा से घेरकर इस यंत्र को वड वृक्ष की तख्ती पर गोरोचन और कुंकुम आदि से लिखे फिर एक दूसरी तख्ती पर साध्य के नाम को लाल चंदन से लिखे । तब दोनों का मुख मिलाकर श्री पार्श्वनाथ भगवान के सामने रखे, तीनों संध्याओ में नित्य कनेर के लाल फूलों से जपने से अवश्य सफलता मिलती है।

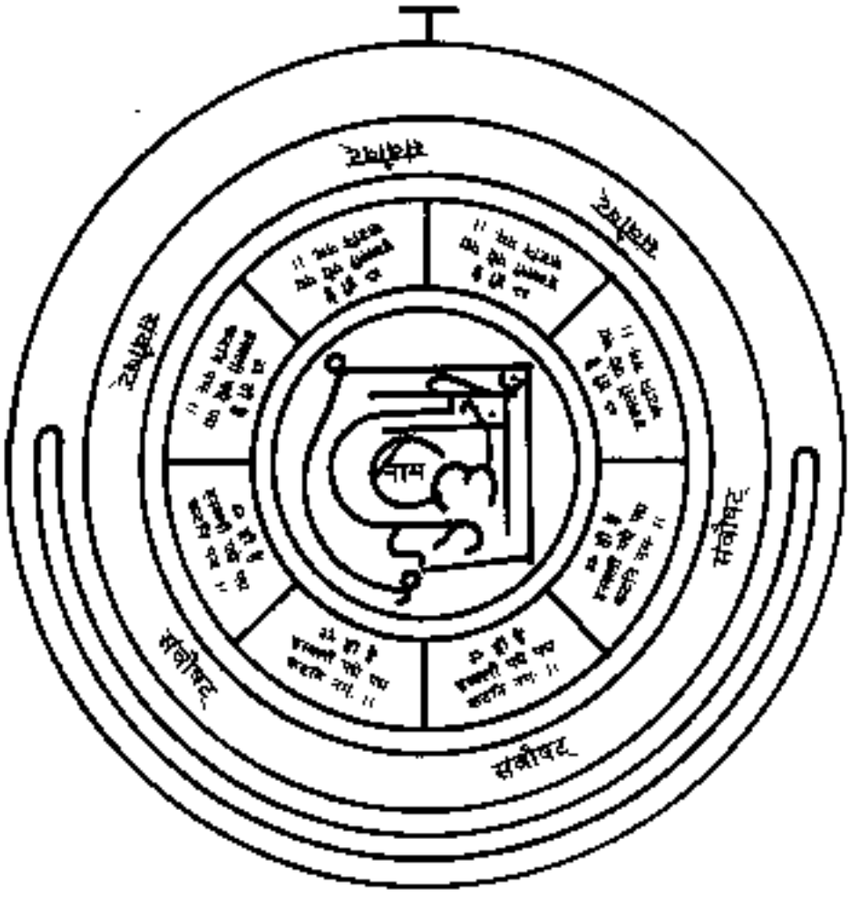

ॐ ह्रीं ह्रैं हस्त्रलीं पद्मे पद्म कटिनि अमुकं मम वश्याकृष्टीं कुरु कुरु संवौषट्
भूर्जे सुगंधिना लेख्य तन्नाम च ठकरायोः
मध्ये मधु आज्ययोः क्षिप्तं वश्यो भूत्वा स तिष्ठति ॥९॥

भोजपत्र पर च और छ के बीच में साध्य के नाम को सुगंधित वस्तुओं से लिखकर मधु और घृत से भरे बर्तन में रखे तो साध्य वश में होकर बैठे।

ॐ चांड़ालिनी हिली हिली अमुकं वशमानय ठः ठः
लक्षजपसिद्धमेनं मंत्रं भूर्जे विलिखव्य तन्निक्षिप्ता
कटु चेतसि कुक प्रतिमाया हृदये निखन्यैतत् ॥ १० ॥

गुह्ये च ताम्र सूचिं सप्त दिनं तापयेदिम मग्नौं
संध्यासु तिसृषु वशः सभवेत्साध्यो न संदेह ॥ ११ ॥

इस मंत्र को एक लाख जप से सिद्ध करके भोजपत्र पर लिखे ।उसको कटु चेतस (क्रोध के भावसे) कुक की बनी हुई प्रतिमा को हृदय में खोदकर रख दे, इसको ताँबे की बनी हुई से गूँधकर सात दिन तक तीनों संध्या काल में अग्नि में तपावे तो साध्य वश में हो जाता है । इसमें संदेह नहीं है।

कूंमध्ये लिख नाम तत्कानीक्षवैं विंद्वान्वितै वेंष्टितं (क्रू वीं क्ष वैं)
बाह्ये प्योष्ट दलां बुजे प्रति दलं स्वाहांत वामादिका
गौरी देव्य पराजितो च विजयां जंभा च मोहां जयां
वाराहिम जितां क्रमाल्लिख वहिर्वामादि जूसः पदा ॥ १२ ॥

स्त्री पुरुष सुरत समये दोन्यों विनि पतित मिंद्रयं
यत्नात्कार्यांशेन गृहीत्वा भूमिमप हृत्य संस्थाप्यं ॥ १३ ॥

काश्मीर रोचनादि भिरेत यंत्रं विलिखव्य भूर्ज पावक
विहितंतदुपरि विकीर्य सित कोकि लाक्षबीज रजः ॥ १४ ॥

जल मिश्रं रेत सातन्नि सिंच्य सूत्रावृतं कटौविधृतं
पुरुषं निजानुरक्तं करोति षंढं पर स्त्रीषु ॥ १५ ॥

एक अष्ट दल कमल की कर्णिका में क्रूं क वीं क्ष और वैं को बिन्दु (अनुस्वार) सहित लिखे इनके बीच में नाम को लिखकर उसके आठों पत्तों में पूर्वादि क्रम से।

ॐ गौर्यै स्वाहा ॐ अपराजितायै स्वाहा ॐ विजयायै स्वाहा
ॐ जृंभायै स्वाहा ॐ मोहायै स्वाहा ॐ जयायै स्वाहा
ॐ वाराह्यै स्वाहा ॐ अजितायै स्वाहा मंत्र लिखे।

और उसके बाहर मंडल में ॐ जूंसः बीजो को लिखे।
स्त्री पुरुष के रति के समय योनि में इन्द्रिय से गिरी हुई को कपास से पकड़कर पृथ्वी के अतिरिक्त स्थान में स्थापित कर दे। इस यंत्र को भोजपत्र पर केशर गोरोचन आदि से लिख कर अग्नि से ढ़क दे और उसके ऊपर श्वेत कोकिलाक्ष (मखाने) के बीजों के चूर्ण को डाले। इस यंत्र को जल में मिलाये हुए उस वीर्य से सींचकर तागे से लपेटकर यदि स्त्री अपनी कमर में बांधे तो उस स्त्री में अनुरक्त पुरुष दूसरी स्त्रियों के लिए नपुंसक हो जाए।

पुरुष वश्य यंत्र

स्तंभन और नपुंसक कारक यंत्र

वकारे लिखेन्नाम माहै द्राभ्यंतरे स्थितं
पीत द्रव्येण सद्भूर्जे स्तंभः षंढी कर स्मृतः ॥ १६ ॥

एतद्यंत्रं द्वितीयं निर्गत्य वहिः सद्याति यदि गेहात्
बध्नातु सात्म कट्टवांमाद्यातेन्यत्र निक्षिपतु ॥ १७ ॥

व और ठ के बीच में नाम को लिखकर माहेन्द्र मंडल के अन्दर पीले द्रव्य से भोजपत्र के ऊपर लिखने से यह स्तंभन और नपुंसक करता है, यदि घर के बाहर निकले तो इस दूसरे यंत्र को कमर में बाँध कर निकले और साध्य के आजाने पर उसे दूसरी जगह पर रख दे।

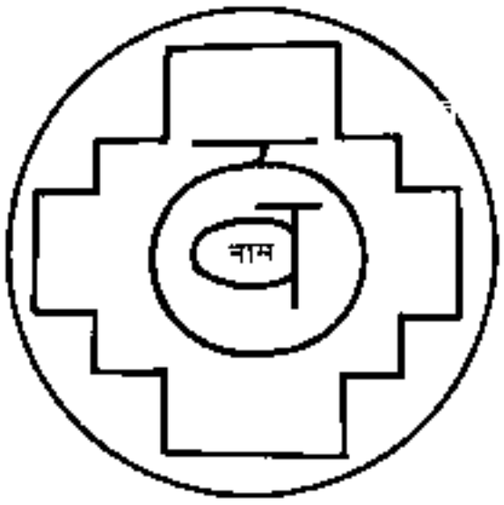

संविख्य नामाष्ट दलाब्ज मध्ये माद्यावृतं षोडश सत्कलाभिः
क्लीं ब्लूं तद्या द्रांमथ योजयेत द्रीं दिक्पात्येषु पत्रेषु तथा क्रमेण ॥ १८ ॥
हामां लिखेदं कुश बीजभुच्चैः क्षीं चान्य पत्रेषु वहि स्त्रिमूर्त्तिं
भूर्ज्जे हिमाद्यै विंयुतं स्व वाहौ सौभाग्य वृद्धिं कुरुतेगनानां ॥ १९ ॥

नाम को आठ दलवाले कमल के अंन्दर पहले माया (ह्रीं) और फिर सोलह कलाओं (स्वरों) से वेष्टित करे। दिशाओं के पत्रों में क्रमशः क्लीं ब्लूं द्रां और द्रीं क्रम से लिखे तथा अन्य पत्रो में क्रम से हां आं अंकुश बीज (क्रों) और क्षं लिखकर बाहर त्रिमूर्ति (ह्रीं) से वेष्टित करे इसको भोजपत्र पर कपूर चंदनादि से लिखकर यदि अपनी भुजा में धारण करे तो यह स्त्रियों के सौभाग्य की वृद्धि करता है।

स्त्री सौभाग्य वृद्धि कारक यंत्र

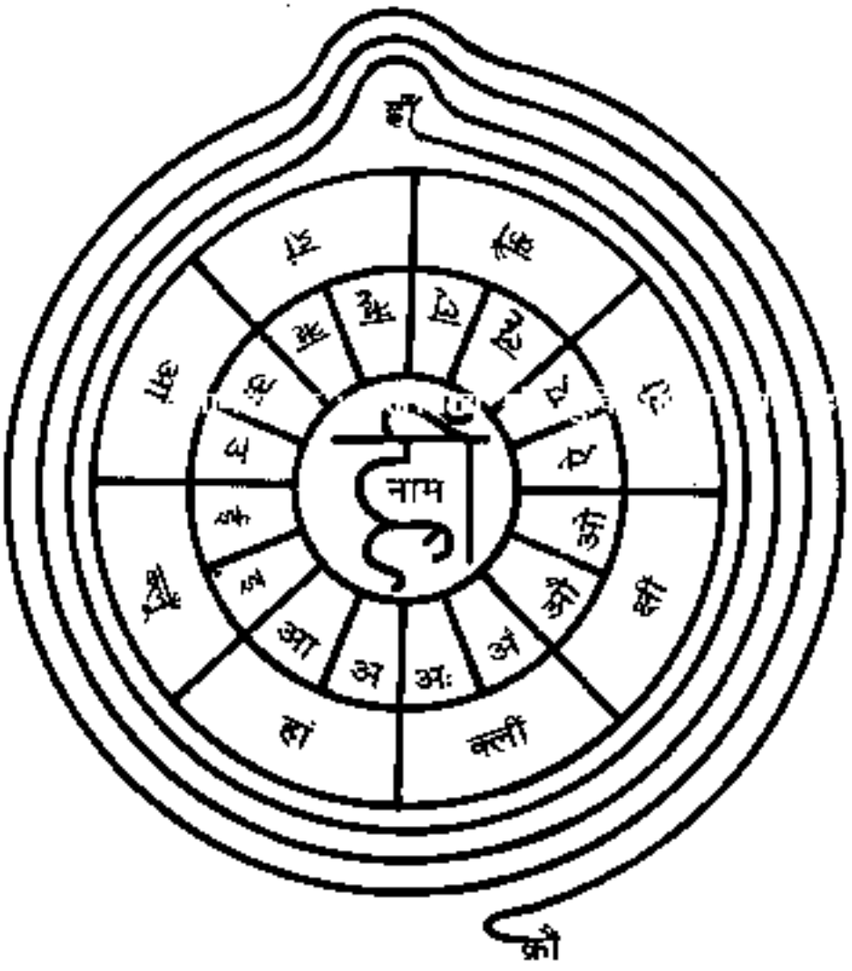

स्त्री का पुरुष को मोहित करनेवाला तिलक

गौरोचनां वशी कृत्यांच्चिरमार्त्तव भाविना
नार्या ललाटे विन्यस्तां पुंसः सर्वान् विलोकितान् ॥ २० ॥

स्त्री के ऋतु धर्म में निकले हुए आर्तव में भावना बहुत दिनो तक दिया हुआ गोरोचन का स्त्री के मस्तक में तिलक करने से सब पुरुष उस स्त्री को देखकर मोहित हो जाते हैं।

॥ पुरूष वशीकरण तैल ॥

वंच दश नप चतु षऽगान विकृतिनक्तकाल मोहिनिका
लज्जारिकानां लात्वामावस्यायां शनेर्वारे ॥ २१ ॥

सं पिष्ट्वाजा पयसा कलकार्द्धमजापयो युतं प्रपचेत
अर्द्धावर्त्ते क्वाथे द्वितीयं भागं क्षिपेत ततः ॥ २२ ॥

मधु तो द्विगुणं तैलं क्वाथं संमिश्रितं पचेद्विधिना
वनिता वदन्योभ्यं ग्रन तैलमिदं त्रिजगती वशीकृत ॥ २३ ॥

विकृतिन (आक) पाँच भाग, नक्ता (कलिहारी) दस भाग, नमक नौ भाग, मोहिनीका (गोभी) चार भाग और लजरिका (छूई मूई) छ भाग को शनिवार के दिन जब अमावस्या आए तब लेकर आए; उसको बकरी के दूध में पीसकर आधे का बकरी के दूध में क्वाथ बनाए अर्थात् पकाए। क्वाथ का आधा भाग रहने पर उसमें दूसरा आधा भाग भी डाल दे। फिर उसमें बराबर मधु और दुगुना तेल डालकर सबको विधि पूर्वक पकाकर तेल सिद्ध करे। यह तेल स्त्री अपने शरीर के अंग में लगाने पर तीन लोक को वश में कर लेती है।

ब्रह्मडंडी दलैः क्षैद्र सहितैः स्मर मंदिरं
लिप्तमात्यंतिकं पत्युः स्नेह्या वहते रतौ ॥ २४ ॥

पति वश्य प्रयोग

भूमि कंदंबक स्वरसः स क्षौद्रः शर्करा समाप्लुतः
योनौ नार्यालिप्त प्रियमचिरा द्वाशवत्कुरुते ॥ २५ ॥

तैलं तिलोद्भवं पक्वंमाक्षिके योनि लेपनात्
अति शक्तं पतिं कुर्य्याद्रति संशलमाप्नुति ॥ २६ ॥

मालती पुष्प संसिद्ध तैलाभ्यलं परागंया
किंकरी क्रियते नार्य्या संभोग समये पतिः ॥ २७ ॥

सिद्धं सिद्धार्थजं तैलं पंचागै दंडिमोद्भवैः
वरांगंमगंना लिंपेत् तेन कुर्य्यात् पतिं वश ॥ २८ ॥

पिष्टैः स्छागस्य मूत्रेण दारु निंब रसांजनैः
वरांगं धूपयेद् या स्त्रीत दासो भवेत्प्रियः ॥ २९ ॥

रोचना लक्ष्मणा मूल कल्क लिप्ततनु वंधूः
रतौ प्राप्नोति सौभाग्यं दपितं प्रियदामितिः ॥ ३० ॥

सितार्क मूल रुग यष्टि निजास्नुग्वीर्य्य मिश्रितं
मुलाग्रसादिनाद्यः स्यात् सद्यो साध्यो न संशयः ॥ ३१ ॥

मंदार मूलं मंजिष्टा रुजा घटक मस्तकैः
स्वशोणितै वंश्यः स्यात् ब्रह्माप्य नादि मिश्रितैः ॥ ३२ ॥

रुग धतो प्रेत वदने भौतै हि विनिवोशितौ
असितौ वशिजौपाम्बु वश्यतः कुर्युमीश्वरी ॥ ३३ ॥

नोटः- गुरु आज्ञा न होने कारण इन श्लोकों का हिंदी अर्थ नहीं किया गया है।

कुष्टं स यष्टि मधुकं निक्षिप रजस्वला योन्यां
मूत्रेण पेशयित्वा पुंसः खाने प्रयोक्तव्यं ॥ ३४ ॥

कनकांपामार्ग बीजैः सित कुष्टैरक्षयक्षिका दुग्धैः
कृत वटिका चूर्ण मिदं शंकर मप्यानयेद्वश्यां ॥ ३५ ॥

कनक (धतूरा)अपामार्ग (आंधी झाड़ा) के बीज सफेद कुष्ट (कूठ) आक यक्षिका के दूध की गोली बनाकर खिलाने से यह शिवजी को भी वश में करके लाता है।

अंजन सैंधव माक्षिक ताल गुडं स्वेंद्रियै युतं
भोज्यं पानं वा मिश्राणितमाशु वश्यै वर्तयेत्साध्यं ॥ ३६ ॥

अंजन सेंधानमक माक्षिक (शहद) ताल (हड़ताल) गुड़ और अपनी इंद्रिय के वीर्य्य को मिलाकर खिलानेसे या पिलाने से साध्य वश में हो जाता है।

गोरभां चूर्ण युक्तेन युल पाद तलो नरः
नवेन नवनीतेन नीयते सहसा वशं ॥ ३७ ॥

नवीन (नये) नवनीत (मक्खन) में मिलाकर गोरंभा (गोभी) के चूर्ण का यदि मनुष्य अपने पाँव के तलवों में लेप करे तो वशीकरण करता है अर्थात् (संभोग काल में स्थंभन होने से स्त्री वश में होती है।

पुष्पद्वयं तत् प्रणवादि युक्तं विलाशिनि नाम पदं
तदग्रते करोतु नारी मदनावतारं ज्ञात्वो पदेशं विधिवदगुरुणं ॥ ३८ ॥

दो फूलों केआदि में प्रणव (ॐ) लगाकर उसमें विलासिनी स्त्री का नाम लगाकर देने से पुरुष स्त्रियों में कामदेव का अवतार बन जाता है इसका उपदेश गुरु से विधि पूर्वक लेना चाहिए।

ॐ द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः ह्सांक्ली ऐनित्येविलन्ते मद द्रवे मदनातुरे मम सर्वजन वश्यं कुरु कुरु वषट् ॥

दद्यात तांबूल गंधादीन् मंत्रेणनेन मंत्रवित्
क्षालयेत आत्मनो वक्त्रं सः स्त्रीणां मन्मथो भवेत् ॥ ३९ ॥

इस मंत्र से अभिमंत्रित किये हुए पान गंध आदि खाने को दे तथा इस मंत्र से अभिमंत्रित किये हुए जल में अपना मुँह धोए तो यह स्त्रियों में कामदेव हो जाता है।

लोक कामाधिपावग्रे ब्लूं द्रां द्रीं क्रम सो लिखेत्
मंत्र राट् त्रिदो पादुरुक्तो लिखी पंच रोपणात् ॥ ४० ॥

ह्रीं क्लीं ब्लूं द्रां द्रीं

लोक (ह्रीं) कामाधिप (क्लीं) के आगे ब्लूं द्रां और द्रीं क्रम से लिखे इस मंत्र को मंत्र शास्त्र के विद्वानों ने ज्वाला मालिनी देवी के पाँच बाण कहे हैं।

नौतत्त्व
हामाद्विपेंद्र वश्यं क्षीं कारसमन्वितं
चतुर्बीज पूर्वोक्त पंच वाणैर्न्नव तत्त्वं प्राहुराचार्याः ॥ ४१ ॥

हां आं द्विप (हाथी) को वश में करने वाला क्रौं और क्षं सहित यह चारों बीजाक्षर को पूर्वोक्त पाँचों बाणों में मिलाकर के इसको मंत्र शास्त्र के विद्वानों ने नौ तत्त्व कहा है अर्थात्

॥ नव तत्त्व ॥

ह्रीं क्लीं ब्लूं द्रां द्रीं हां आं क्रौं क्षीं यह नौ तत्त्व हैं।

प्रत्याहं प्रातरुत्थाय तोये विनस्य तेन यः
क्षालयेदात्मनो वक्त्रं सः स्त्रीणामकरध्वजः ॥ ४२ ॥

जो पुरुष प्रातःकाल उठकर इस मंत्र से अभिमंत्रित किये हुए जल से अपने मुख को धोता है यह पुरुष स्त्रियों का कामदेव हो जाता है।

कामेंद्रोर्द्ध तले त्रिमूर्तिमथ तत पार्श्व द्वयेब्लेन्न्यसेत्
बाणान्पंच तदंतरे वहिरपिश्री भारती बीजकां

आं क्रों तत्परितं ततोष्टदल भृतपद्मं दलेषु क्रमात्
श्रीं ह्रीं तद्दल कोटराग्रनिहितं मों ॐ/वहीं ह्रीं त्रिधा ॥ ४३ ॥
ॐ द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं स: ऐं श्रीं ह्रीं ब्लें आं क्रों यूं सर्व जन मम वश्य कुरु कुरु वषट् ॥

अष्टोत्तर शतरुप मंत्रेणनेन योजपेन्नित्यं
वश्या कृष्टि क्षोभ द्रावण संमोहनं भवति ॥ ४४ ॥

कामेद्रं (क्लीं) के ऊपर और नीचे त्रिमूर्ति (ह्रीं) लिखकर उसके दोनो तरफ ब्लें बीज लिखे उसके बाहर पाँच बाण लगाकर और उसके अंतराल में भारती बीज (ऐ) और आं क्रों लिखे। उसके बाहर आठ दल का कमल बनाकर प्रत्येक दल में क्रम से बाहर श्रीं और ह्रीं लिखे और प्रत्येक दल के बाहर यूं और ॐ लिखकर बाहर तीन बार ह्रीं का वेष्टन करे जो पुरुष इस मंत्र का प्रतिदिन१०८ बार जप करता है वह वशीकरण आकर्षण क्षोभ द्रावण और संमोहन करता है।

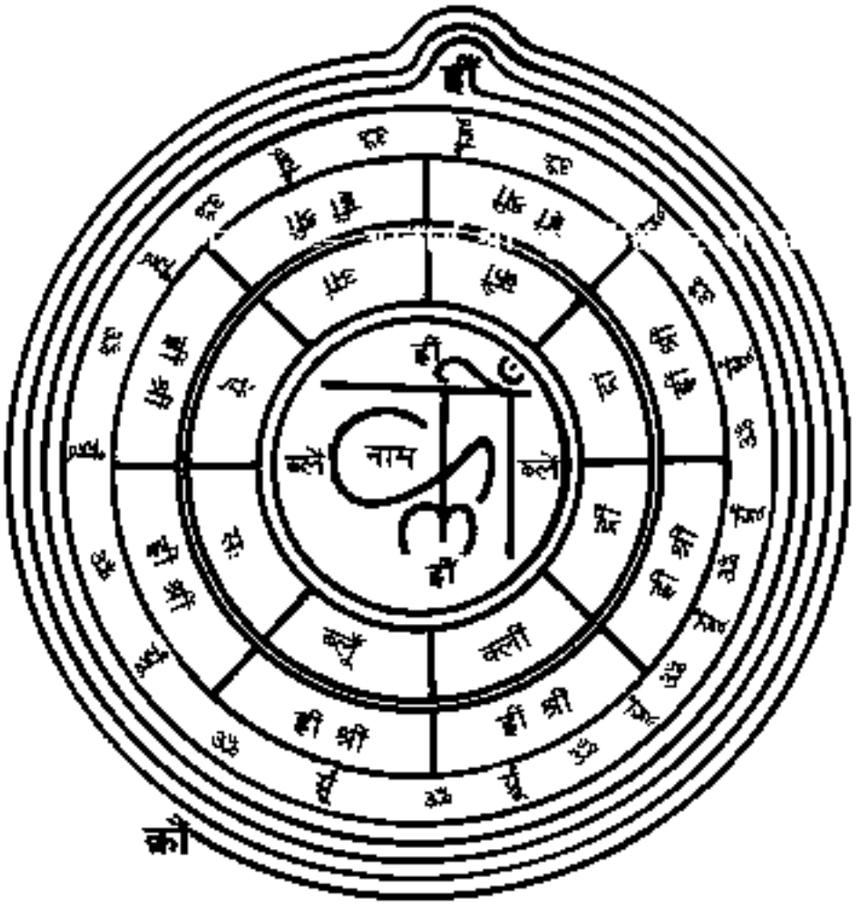

ॐ देवी श्री भूत श्री यक्षि महा यक्षि पद्मावती अमुकं वश मानय मानय ठ: ठ:

मंत्रं सिद्धं लक्ष प्रजाप्यत: स्व नाम संयुक्तममुं
युवतेर्युनो स्युदुक फलक द्वं द्वे विलिखेत् ॥ ४५ ॥

इस मंत्र को एक लाख जप करके सिद्ध करके युवति और युवक के नाम को बहेड़ुक (बेहड़ा) की दो तख्तियों पर लिखे।

भूमंडलस्य फलके पुंसो न्यस्यो परिन्यस्य
संस्थापयेद्गुहादै गुप्ते सातस्या वश्या स्यात् ॥ ४६ ॥

पृथ्वी मंडल के अंदर ऊपर की तख्ती पर पुरुष का नाम लिखकर उसे दूसरी तख्ती के ऊपर रखकर गुफा आदि गुप्त स्थान में रखे तो वह उसके वश में हो जाती है।

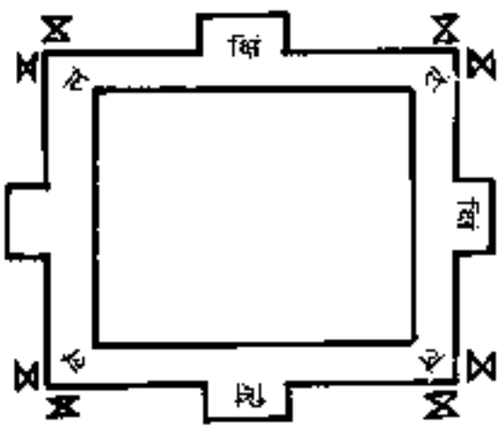

पन्नगाधिप शेखरां विपुलारुणांबुज पिष्टरां
कुर्कुटोरग वाहनामरुण प्रभां कमलाननां ॥ ४७ ॥

अंबकां वरदां कुशायत पाश दिव्य फलांकितां
चिंतयेत् कमला वतीं जपतां सतां फलदायिनीं ॥ ४८ ॥

मस्तक पर नागराज वाली, बड़े भारी लाल कमल के आसन वाली, कुर्कुट नाग के वाहनवाली, लाल कांतिवाली, कमल के समान मुख वाली, तीन नेत्र वाली वरद अंकुश बड़ा पाश और दिव्य फल वाली, तथा ध्यान करने वाले को सदा फल देने वाली पद्मावती देवी का ध्यान करे।

शिलां हिक्का सर श्यामा लोचना रजत: क्षण:
वशयेत् तरुणी: सर्वा: स्वामिनं चानु रंजयेत् ॥ ४९ ॥

इस शिला के कारण से श्याम तथा सफेद नेत्र वाली सभी स्त्रियाँ वश में होकर अपने स्वामी को प्रसन्न करती हैं।

चूर्णं नांजन मलयज सरसिज दलजेन ना
प्रियंगुनां, अंजित दृष्टि स्तरुणी या पश्येत्सा भवेद्वश्या ॥ ४८ ॥

पारा पतस्य सकृता मधुना सैंधवेन च
आलिप्तः साधनः कांतां स्व वश्यां कुरुते रते ॥ ४९ ॥

गंधात कुनटी लिप्त शोषिता या रसः
स्त्रवह सक्षौद्रं मेहने लिप्तमंगनां कुरुते वशे ॥ ५० ॥
मधु कर्प्पर मल्लक शुल्क सं लिप्त साधनः
भजे निधुवने कांतां सा तस्य वशगा भवेत् ॥ ५१ ॥

कृष्ण रस रुक क्षौद्र सोबीरांजन सैंधवै
पारापत मलोपेतै ध्वंजे लेपो वशीकरः ॥ ५२ ॥

दैः कै श्चिद्रक्त कुसुमैः पंचभिसप्रियगुंभिःलिप्तः
लिंगो वशी कुर्य्यात् नारीं सौभाग्य गर्वितां ॥ ५३ ॥

तुरंग लाला मंजिष्टा पत्र जाती प्रसूनकैः
मकरध्वज पादः स्यात् समालक्ष्यनिजध्वजः ॥ ५४ ॥

रोचना रस काश्मीर हिमहेमरसेन्दुभिः
हरेन्मोहन लोपोयं कामिनीजन मानसं ॥ ५५ ॥

रुक् पारापत विट् विश्व मधुग्रा रोचनां जनैः
भवे लिप्त ध्वजः कामी कामिनी मीन केतनः ॥ ५६ ॥

निशा यष्टि मधु क्षौद्र पिपली वृहती फलैः
वस्त मूत्रेण वा लिप्तं साधनं वशयेत् स्त्रियः ॥ ५७ ॥

यष्टि कुष्ट कण क्षौद्र वस्त मूत्रै र्विलेपनं
कल्पिते कल्पयेत् लिंगे सर्वं स्त्रीजनमोहनं ॥ ५८ ॥

मर्द्दयेत् पिपली कामं सूतकेन कुरंटिका
क्षीरेण मधुना सांद्रं लिंगे लेपो वला स्मरः ॥ ५९ ॥

मधु कर्प्पूर सौभाग्य पिप्पली काम संयुतां
द्रावयेत अंगना दंर्प्य लिंगलेपन मात्रतः ॥ ६० ॥

कर्पूर कुकुम क्षौद्र कंकोल कणैकध्वंजः
लिप्तः पिष्टे रतारंभे संमोहयति कामिनी ॥ ६१ ॥

नोटः- गुरु आज्ञा न होने से श्लोकों का अर्थ नहीं किया गया है।

कपित्थ स्वरस क्षौद्र कृष्णा मरिच तंदुला
क्षौद्र यष्टि कणमूल कपित्थ रस सैंधवा ॥ ६२ ॥

कैथ का स्वरस शहद काली मिरच चावल और शहद मुलैठी पीपलामूल कैथ का स्वास और सेंधा नमक।

मधु दोवरि निर्यास सकृष्णां दश सैंधवाः
कपोत विट पटु क्षौद्र विश्वा लोध्राजैंना मया ॥ ६३ ॥

शहद दो बार निर्यास (नीली वृक्ष का काठा) दस काली मिरच सेंधा नमक कबूतर की बीट पटु (पटोललता) सोंठ लोध अंजन और आमय (वूह)

सूठया वृश्चिक पुच्छाग्र रुजा मधुका भयाः
यवोग्रागोशीर मंजिष्ठाः लोध्रमाक्षिक राजिका ॥ ६४ ॥

सूठ विच्छू का डंक रुजा (कूठ) मधुका (महवा) अभया (हरड़े) यव (जौ) उग्रा (लहसुन) गाय का दूध मंजीठलोध माक्षिक (शहद) राजिका (राई)।

कृष्णा च ब्रह्म डंडी च मरिचानि च मस्तु च
पिकाक्ष पुष्प वैदेही व्याघ्री फल जलं तथा ॥ ६५ ॥

कृष्ण (काली मिरच) ब्रह्म डंडी सफेद मिरच और मुस्ता (नागर मोथा) पिकाक्ष (कोकिलाक्ष = तालमखाना) काकूल वेदेही (पीपल) व्याघ्री फल (पसर कटेली के डोडे) और जल।

कपि कच्छक रोमाणां सैंधवं शर्करा मधु
माक्षिकं सेंधवं क्षौद्रं पारापत विंडजंन ॥ ६६ ॥

कोंच की फली के रोम सेंधा नमक सक्कर और मधु (शहद) शहद सेंधा नमक क्षौद्र मोम कबूतर की बीट और अंजन।

मांक्षिक यष्टि मधुकं वैदेही पाटली रसः
प्रियंगुयष्टि मधुकं नतिकृन्माक्षिकं रुजा ॥ ६७ ॥

माक्षिकं (शहद) यष्टि (मुलेठी) मधुकं (महवा) वैदेही (पीपल) पाटली रस फूल पियंगु मुलेटी महवा नतिकृत (तगर) माक्षिक (शहद) रुजा (कूठ)

सूक्ष्मा क दंब निर्यास पूर्ण माक्षिक संयुतः
सुमनः सार संयुतं स सिंधुद्भव मंजनं ॥ ६८ ॥

सूक्ष्मा (छोटी ईलायची) कदंब का गोंद पूर्ण (जल) माक्षिक (शहद) सहित सुमनसार (पुष्प सार-अगथ्या का फूल का रस) सहित और सेंधा नमक और अंजन

पित्तं मत्सस्य संपिष्ट पुष्पसार समन्विते
केतकी सुमनो रेणु सुमनः सार संयुतं ॥ ६९ ॥

पित्तं मत्सस्य (मछली का पित्ता) में पुष्प सार अगथ्या के फूल का स्वरस मिला हुआ केतकी के फूलों के रस का पूर्ण और मुनि पुष्प सार अगत्था फूल का रस

हेयंग बीण सहितं सिद्धार्थं दुत्पलेन च
वार्ताक फलसंभूतौ लवणेन द्युतो रसः ॥ ७० ॥

हेयंग बीण (घृत) के साथ उत्पल (कमल) वार्ताक फल (बेगण के फल) में रखे हुए नमक का रस सहित

प्लवंग लिंग मसृण सूत कर्पूर सारया
हैयंग बीन संभिन्नः पिष्टः साक्षान्मृगै ध्वजैः ॥ ७१ ॥

प्लवंग (बंदर) के लिंग मसृण (अेंलाली) सूत पारद कपूर सारा (निसाथ)

अर्द्ध श्लोकावसानायै योगा एते प्रकीर्तिताः
एतैर्विलिप्त लिंगस्य वश्यास्युर्योषितोरियला ॥ ७२ ॥

जो यह आधे आधे श्लोकों के योग कहे गये हैं इनमे से किसी एक का लिंग पर लेप करने से सब स्त्रियां वश में होती हैं।

मधु पिष्टै ध्वंज लेपोरु अरीचक पित्थ निर्यासैः
रंभा फलांबु कलितैर्वश्ये च्चा द्रावेद्यच्च स्त्रीं ॥ ७३ ॥

रुक (कूठ) काली मिरच कपित्थ निर्या स (कैथ का गोंद) रंभा फलांबु (केले के फल का रस) को शहद में पीसकर ध्वज (लिंग) पर लेप करने से स्त्री वश में होती है तथा उनका द्रावण होता है।

मधुकृत्मलयज पारदजातिफल रेणवःअगस्त्य कुसुम जलैः
कतकास्ति युतो लेपोध्वजस्य नारीं वशी कुर्यात् ॥ ७४ ॥

मधुकृत (शहद) मलयज (चंदन) पारा जायफल का रेणु (चूर्ण) अगस्त के फूल का रस कतकास्थि (निर्मली की गुठली) सहित लेप लिंग पर करने से स्त्रियाँ वश में होती है।

सूरण टंकण शशि रस मधुरैबीज मुनिदल स्वरसैः
भवति ध्वजो विलिप्तः कांता हृदयै कसंवननं ॥ ७५ ॥

सूरण (जमीकंद) टंकण (सुहागा) शशि (कपूर) का रस मधुर बीज (महवा का बीज) मुनि (अगस्त्य) के पत्तों का स्वरस का ध्वज पर लेप करने से स्त्री का हृदय वश में होता है।

वृहती फल कण तंदुल मरिच फलैश्चंद्रव सुकृति
पत्र/काम्योन लिप्त लिंग कामन्यां कामद्रव कामी ॥ ७६ ॥

वृहती फल (कटेली के डोडे) कण (पीपल) तंदुल (चावल) मिरच फल चंद्र (कपूर) वसृकृति (वासा= अड्डूसा) के पत्र का लेप करने से स्त्री कामदेव के समान प्रेम करती है।

मागधि का मधुकै रसतुषार कपित्थ पल्लवस्व रसैः
करुतै वरांग लेप सृष्टिं मिथुनस्य रति सम ॥ ७७ ॥

मागधी का (पीपल) मधुक (महवा) का रस तुषार (ओंस का जल) कैथ के पत्तों का स्वरस का उत्तम अंग पर लेप करने से रति के समय में स्त्री पुरुष से संतुष्ट होती है।

सुरते कुरुते पारद खंड़ सिता तुहिन केतक रजोभिः
गुह्ये विहितो लेपो दंपत्योः काम रस मधिकं ॥ ७८ ॥

पारा खांड शक्कर तुहिन (कपूर) और केतकी का चूर्ण से गुप्त अंग पर लेप करने से दंपत्ति को कामदेव का अधिक रस मिलता है।

पिष्टैः कुसुम सारेण सरसी रुह केसरैः
सद्यो ध्वजोत्थित कुर्यात् नाभिमूले विलेपनं ॥ ७९ ॥

दग्ना जमूत्र संपिष्ट विशाला मूल कल्कितं
उद्वर्त्तनं रतौ लिंगं नृणं मुक्तं भवेत्सदा ॥ ८० ॥

सप्ताहमज मूत्रस्था संपिष्टा बानरी शिफा
प्रयुलोद्वर्तनं कुर्य्यान्मेहनो थंभनं नृणं ॥ ८१ ॥

क्षीराद्यंड शिफा राजि कुष्टोग्रा वृहती फलैः
लिप्त पादतलस्य स्यात् क्षणल्लिंग समुत्थिति ॥ ८२ ॥

जल पिष्टैर्हय गंधो त्रिफला करवीर मूल निर्यासैः
मागधिकां संयुलै लिप्तिं लिंग दृढ़ं भवति ॥ ८३ ॥

[illegible] लिकानीलिनी भिः कम विवृद्ध
पिष्टाभिः लिप्तं धौतं पुंसो रतौ वरांगं चिरं नपतेत ॥ ८४ ॥

सितेषु पुंखि का मूल केवलं वदने धृतं
तुषांबु पिष्ट लिप्तं च वीर्यं संस्तंभयेद् ऋहतौ ॥ ८५ ॥

सफेद सरफौका की जड़ को केवल मुँह में रखने और तुष (वहेड़ा) के जल में पीसकर लिंग पर लेप करने से रतिकाल में वीर्य का स्तंभन होता है।

सित सर पुंखी मूलं हत्वा सित कोकिलाक्ष बीजं च
वन वसला रस पिष्टं वीर्यं स्तंभ मुखे संस्थं ॥ ८६ ॥

सफेद रस फोंके की जड़ और सफेद कोकिलाक्ष (ताल मखाना) के बीजों को वनवसला (उपोद की पोई) के रस में पीसकर मुख में रखने से वीर्य का स्थंभन होता है।

पारद सितेषु पुंखा मूलाभ्यां नल मालफलगाभ्यां
वीर्यं भवति नृणां लिप्तं स्तंभनं दीर्घं ॥ ८७ ॥

पारद (पारा) सफेद सरफोंके की जड़ और नक्त माल (करंज) के फल के लेप से पुरुषों के वीर्य का बड़ा भारी स्तंभन होता है।

नील्याः सौर्यैन पत्रेण चक्रगेन निरुध्यते
रेतः स्वतेन मूत्रेण नाभि लेपेन पाचिरं ॥ ८८ ॥

नीली सौयेन पत्रेण (आक के पत्ते) चक्र (तगर) का अपने मूत्र में पीसकर नाभि पर लेप करने से वीर्य का बहुत स्तंभन होता है।

सिताऽसिताब्ज नीलाब्ज केसरैः क्षौद्रकल्कितैः
नाभौ विनिहितैः शुक्रं स्तंभ नीयात चिरं तनो ॥ ८९ ॥

सफेद कमल काला कमल और नीले कमल की केसर के कल्क का शहत के साथ नाभि पर लगाने से बहुत समय के लिए वीर्य का स्तंभन होता है।

नाभि मूले रजी भूता लिप्ता मंजुले करिका
नक्षमेत सह क्षौद्रा रेतः पात कथामपि ॥ ९० ॥

मंड़ल करिका (गंध तुलसी) के चूर्ण का शहद के साथ नाभि पर लेप करने से पुरुष स्खलित होने की बात भी नहीं सुनता है।

सित वायस जंघाया: मूलं मध्वब्ज केसरातै
पिष्ट्वानि नाभौ न्यस्तानि रेत स्तंभं वितन्वते ॥ ९१ ॥

सफेद (काक जंघा) सफेद चिरमा की जड़ शहत घृत और कमल की केसर को पीसकर नाभि पर लेप करने से वीर्य का स्तंभन होता है।

दुस्पर्शोषण कुष्ट जीरकवला दग्धा पुटे वारिण
पिष्टय कंदल कंद जेन गुलिकां कृत्वा तथा शोषयेत

दुस्पर्शो (लता करंज) उष्ण (सोंठ) कूठ जीरों बला (खरेंटी) को पुट में जलाकर पानी से पीसकर कंदल कंद (केले की जड़) के रस से गोली बनाकर सुखा ले।

सानाभौ मधु कल्किता विनिहिता दत्युत्सवा
दुर्वर प्रारंभेष्ववसान काल विकलं कर्तु रतं वारयेत् ॥ ९२ ॥

उसका शहद में कल्क बनाकर नाभि पर लेप करने से रति के उत्सव में रतिकाल की समाप्ति नही होती है।

कृष्ण वृषदंश तक्षिण जंघाया: शल्य खंड़ मादाय
वद्धं कटि प्रदेशे वीर्य स्तंभं कुरुते ॥ ९३ ॥

काले बिलाव की दाहिनी जंघा की हड्डी के टुकड़े को कमर में बाँधने से पुरुष का वीर्य स्थंभित होता है।

बीजानां बीज पुरस्य तैलं शशि समन्वितं
सितं सिताब्ज सूत्रेण रुध्याद्वीर्यंध्रयास्यगं ॥ ९४ ॥

बिजोरे के बीजों का तेल और कपूर सहित मिलाकर काले और सफेद कमल के धागे से बांधने से ध्वज के आगे तक आया हुआ वीर्य रुक जाता है।

स्नुगगतक्षीर संपिष्ट समंगा मूललेपनं,
विहितं पाद तलेद्या स्तंभयेत धातुमतिमं ॥ ९५ ॥

स्नुगगत (कूठ) और अंगा मूल (करटंक की जड़) को दूध के साथ पीसकर पैरों के तलवों पर लगाने से वीर्य का स्तंभन होता है।

कपोत सकृता लेपमजा क्षीरेण मार्गवं,
स्तंभयेत्पादतलयो रसं स्पृष्टं महीतलः ॥ ९६ ॥

कबूतर की बींट को और अपामार्ग (आंधे झाड़े) के बीजों को बकरी के दूध में पीसकर पृथ्वी को बिना छुये हुए पावों के तलवों पर लेप करने से वीर्य का स्तंभन होता है।

स्नुहाद्यागोरजाद्याश्च सप्त कृत्वः पृथक पृथक ,
क्षीरं पादलताभ्यक्तं शुक स्तंभाय जायते ॥ ९७ ॥

स्नुही (थोर) गाय और अजा (बकरी)के दूध का सात बार अलग अलग पैर के तलवों पर लेप करने से वीर्य का स्तंभन होता है।

मंदार तूल रचिता ज्वलिता क्रोड मेधस्या,
वीर्तणिर्त्तयेद रात्रोश्रुकस्य स्तंभनं नृणं ॥ ९८ ॥

आक की रुई की क्रोडमेधस (बाराही कंद) से बत्ती बनाकर रात में जलाने से वीर्य का स्तंभन होता है।

अलर्कं मेहन रजो गर्भा प्रज्वलिता गृहे,
अलक्तकदर्शा दीर्घं स्तंभयेदभृगु संभवं ॥ ९९ ॥

अलर्क (पागल कुत्ता) के लिंग के चूर्ण की अलक्तक (लाख) की बनी बत्ती को घर में जलाने से वीर्य का स्थंभन होता है।

कपिला घृतेन वोधित दीपः सुरगोपचूर्ण संभिलितः,
स्तंभयति पुरुष वीर्यं रत्यारंभे निशा समये ॥ १०० ॥

रात्री में रति के समय सुरगोप (इंद्रगोप) के चूर्ण सहित कपिल गाय के घृत में जला हुआ दीपक पुरूष के वीर्य का स्तंभन करता है।

निशेंगुदोशीर सितासृक टंकणै हिंम वारण,
पिष्टै र्लिप्त तनु: स्वागम नंगम न्वते मन: ॥ १०१ ॥

निशा (हल्दी)इंगुदी (हिंगोट) उशीर (रक्स) सिता (मिश्री) सृक (कूठ) टंकण (सुहागा) हिम (कपूर) वारिण (जल) से पीस कर शरीर पर लेप करने से मन कामदेव के समान हो जाता है।

दिवसेंदुमनु समुद्रं प्रमाण मादायमोदनीं पिंडी,
पंकज सितार्क मूलं तैर्ल्लेपो वश कृद्बलानां ॥ १०२ ॥

दिवसेंदु (दिन का चन्द्रमा सूरज) समुद्र तक जाने पर अर्थात् रात होने पर प्रसन्नता से हर्ष देने वाली पिंडी कमल सफेद आक की जड़ को लेकर लेप से अबला (स्त्रियां) वश में होती है।

जात मात्रस्य वत्सस्य मृष्टता ना स्वादितस्य य:
तुल्यस्तद्गुल रजनी लेप: स्त्री वश्यमुत्तमं ॥ १०३ ॥

तुरन्त के पैदा हुई बछड़ी की बिना चखी हुई गृष्टि (जरायु) और हल्दी का लेप उत्तम वशीकरण है।

रुजा चटका मूर्द्धाग्रा काक जिन्हौंद्रियाणि च,
वितरेद् रसनादौतं मन्वते मन्मथं स्त्रिय: ॥ १०४ ॥

उत्तम कन्या मूलं मत्त शुनो जिह्विकां गजस्य मलं,
सिच्छात्वात्ममलै: सह दद्यात्स्त्रीं वशाष्यितं वातं ॥ १०५ ॥

चूर्णं गोरंभाया वर्हिशि स्वाद्यां च प्लक्ष गुंजाया:
रविदल कीट मलस्य च निजमलं स्त्री विंमोहयति ॥ १०६ ॥

करवीर भुजंगाक्षि जारी दंडी इंद्रवारुणी,
गोवंधनी लज्जारिका विधाय वटिकाष्वटं ॥ १०७ ॥

वटि काभिः समं क्षिप्त्वा लवणं शुभ भाजने
पक्वास्वमूत्रतो दद्यात्तवाद्यं स्त्रीजन मोहनं ॥ १०८ ॥

कनेर भुजंगाक्षी (सरपाक्षि) जटा दंडी इन्द्रावारुणी (इन्द्रायण) गोवंधनी गोवल्ली) लज्जीरका (लजालू) की गोली बनावे। इन गोलियों के बारबर णषक मिलाकर अच्छे बर्तन में रखकर अपने मूत्र में पकावे फिर खिलाने से स्त्रियाँ वश में होती हैं।

फलं सुरेन्द्र वारूण्यां स्य शुक्रं कनकस्य वादत्तं।
भोज्यादिसंमिश्रं वशयेत् वनितां जनं ॥ ११० ॥

सुरेन्द्र वारूणी (इन्द्रायण) के फल को अपने वीर्य, अथवा धतूरे के फल को भोजन आदि में मिलाकर देने से स्त्रियाँ वश में होती है।

शंखपुष्पी शमीपुष्पं वचा मंजलि कारिकां,
शुक्रं च दद्यादतादौ वांछन वशयितुं स्त्रियां ॥ १११ ॥

शंख पुष्पी (सखाहोली) और शमी (विजडे) के फूल वच मंजल कारिका (गंध तुलसी), और वीर्य को भोजन आदि में देने से स्त्रियाँ वश में होती है।

सचित्रगुरू हस्त चित्रा मूले ष्वादाद्य जीर्ण कनकस्य दल,
कुशम चर्म कीकस शिफाः पृथक पेषरोत्कमशः
क्षत भव लालाश्रम जल भृगु सुत मूत्रै स्तातश्च तत्सर्व,
संयुक्तम सृकमिश्रं भोजन निहितं स्त्रियो वशयेत् ॥ ११२ ॥

हस्त चित्र और मूल नक्षत्र में तीनों दिन गुरुवार होने पर पुराने धतूरे के पत्ते फूल छाल ला करके और कीकस की छाल लेकर के अलग अलग पीसे और जखम में से बहने वाली लार पसीने की बूँदे भृगुसुत के मूत वीर्य और मूत्र को उसमें मिलाकर भोजन आदि में देने से स्त्रियाँ वश में होती है।

वर्हिशिखा सितगुंजा गोरंभा भानु कीट कष्य मलानि,
निज पंच मलोपेत चूर्णं वनितां वशि कुरु ते ॥ ११३ ॥

मयुरशिखा सफेद चिरमी गोरंभा, आक के वृक्ष पर रहने वाले कीड़े की विष्टा और अपने पांच जगहों के मलों सहित चूर्ण स्त्री को वश में करता है।

शिवांबु पिष्ट दुर्दुर तैल क्षोद्रैंदुया रतैः,
मलैश्च पंचमि र्मिश्र पूजं पशयते स्त्रियाः ॥ ११४ ॥

दुर्दुर (ऋषभक) के तैल क्षोद्र (शहद) इंदु (कपूर) को शिवांबु (बलिपत्र के रस में पीसकर अपने अंग के पांचो मलों को मिलाकर बना हुआ पूआ स्त्रियों को दे तो वश में हो जाती है।

नेत्र श्रोत्र मलं शुक्रं मूत्र जिह्वा मलास्तथा,
वश्य कर्माणि मंत्रज्ञे पंचाग मलमुच्यते ॥ ११५ ॥

आंख, कान और जीभ का मैल वीर्य और मूत्र को मंत्र शास्त्र के विद्वानों ने वश्य कर्म का पंचाग मल कहा है।

मंगं श्रुति हक्के घ्राण जिह्वा रक्ष द्वियोनि मेद्र मला:,
स्वे दाश्रु मूत्र लालष्टक श्रुक्रार्तवविशापि वश्या मलां ॥ ११६ ॥

कान, आँख, नाक, जिह्वा दोनों कक्ष (कोख) योनि भेढ (लिंग) के मल पसीना, मांस मूत्र लाल (लार) खून नीर्द्र ऋतुधर्म का रज का पानी (विष) यह सब वशीकरण के मंत्र है।

कमुकंफणि मुखनिहितं तस्मादि वश त्रेयण,
संगृहय कनक विषं मुष्टि हिलि नो चूर्णं प्रत्येकत: दिप्त्वा ॥ ११७ ॥

खर तुरंग श्रुती क्षीरै: क्रमश: परिभाव्य योजयेत्,
अबला जन वश क रण मदनक्रमुकं समुदिष्टं ॥ ११८ ॥

सर्प के मुँह में तीन दिन तक रखी हुई क्रमुक फल सुपारी धतूरा विषमुष्टि (कचला) हलिना (कलिहारी) प्रत्येक को क्रमशः गधी घोड़ी कुत्ती के दूध में भावना देकर अपने पाँव के तलवों में लगावे तो इसको स्त्रियों को वश में करने वाला मदन क्रमुक कहा है।

द्रावण मंत्र

ॐ चले चले चुले चुले चित्त रेतो विमुंच विमुंच स्वाहा
विनयं चेल चुले द्विचितो रेतो विमुंच युग।
होमं च द्रावयति लक्ष जाप्यान्मत्रो वनिता समूहमिंह ॥ ११९ ॥

विनयं चले चले चुले चुले चित्त रेतो विमुंच विमुंच स्वाहा,ॐ चले चले चुले चुले चित्त रेतो विमुंच विमुंच स्वाहा। विनय (ॐ) दो बार चले चुले चित्त रेतो विमुंच और होम (स्वाहा) सहित मंत्र को एक लाख जप करने से सब स्त्रियाँ द्रवित हो जाती है ।

गौरी मंत्र

ॐ नमः कृष्ण शवराणं विरि विरि चले चले चुले चुले चित्ते रेतो मुंच मुंच ठः ठः॥
लक्ष जप्तः प्रजाप्टेन मंत्रो गौर्यादि देवतः,
एष संसिद्ध मा याति तद्दशांश च होमतः ॥ १२० ॥

यह गौरी देवता का मंत्र एक लाख जप और उसके दशांश होम से सिद्ध होता है।

रक्त करवीर कुसुमै, संजप्त सप्त वारमेतेन,
भ्रमितं नार्या त्रिग्रे रेती द्रावयति वशयति च ॥ १२१ ॥

इस मंत्र से सात बार अभिमंत्रित लाल कनेर के फूल को स्त्री के सामने तीन बार घुमाने से स्त्री द्रवित होती है और वश में होती है।

जाप्यं सहश्र दशकं श्रुभगा योन्या मल लकं धृत्वा
विद्यान वाक्षरीयां तयापशव्येन हस्तेन ॥ १२२ ॥

स्त्री की योनि में मललक (लाख) रखकर इस नो अक्षरी मंत्र को बायें हाथ से दस हजार जप करना चाहिये।

ॐ कामिनी रंजय होम मंत्र ॐ कामिनी रंजय स्वाहा
यस्या लिखि त्वात्म करे पसव्ये संदर्शयेत्सा
स्मर बाण विद्धा ध्रुवं द्रवत्यत्र किमस्ति चित्रं ॥ १२३ ॥

इस मंत्र को अपने बायें हाथ पर लिखकर जिसको दिखलाया जाए यदि वह कामदेव के बाण से बिंध जाए तो इसमें कोई भी आश्चर्य नहीं है।

अष्टोर चक्र लिखितो विभक्ति मंत्रो धृती सौ भुवनैक वश्यः,
त्रिलोक्य भित्रिस्थमिदं जपं स्तं सोन्यागना कर्षणमातनेति ॥ १२४ ॥

यदि इस मंत्र को अष्ट दल कमल के अंदर लिखकर बाहर के पत्तों में ॐ लिखे तो यह तीन लोक की दीवार पर से भी दूसरी स्त्री को खींच लाता है।

मंत्रितं योनि संस्थंष्तं त कात्वित्तम नेनद्यत्,
कज्जलं कल्पितं तेन वशीकरण मक्षिणं ॥ १२५ ॥

इस मंत्र को योनि में रखकर मट्टे में से निकाल कर जो इसका काजल बनाया जाता है उसको नेत्र में लगाये जाने से वशीकरण करना है।

विचिंत येदेवल विंदु पिंडारक्तं भ्रमंतं वनिता वरांगे,
तद्रावणं दृष्टि निपात मात्रात् सप्ताहतस्त्री नयनं करोति ॥ १२६ ॥

स्त्री के उत्तम अंग (योनि) में एवल पिंड (ब्लें) को लाल रंग का घूमता हुआ यदि ध्यान किया जाए तो उसकी दृष्टि पड़ते ही वह स्त्री द्रवित हो जाती है, और एक सप्ताह में उस स्त्री का आकर्षण होता है।

एवल पिंडयोन्यां माया बीजं च चिंतयेत् हृदये,
स्मर बीजं लोचनयो: वनितानां द्रावणं कुरूते ॥ १२७ ॥

एवलपिंड (ब्लें) का योनि में और ह्रीं का हृदय में तथा स्मर बीज (क्लीं) का दोनों नेत्रों में ध्यान करने से स्त्री द्रावित होती है।

तत्व मन्मथ बीजस्य तलप्प परि चिंतयेत्
पार्श्व योरेवल पिंड भ्रमंचमरूण प्रभं ॥ १२८ ॥

मन्मथ बीज (क्लीं) के ऊपर और नीचे तत्व (ह्रीं) और दोनों पार्श्व में यदि घूमते हुए, और लाल कांतिवाले एवलपिंड (ब्लें) का ध्यान किया जाये तो।

योनै क्षोभं मूर्द्धिन विमोहनं पाननं ललाटस्थं,
लोचन युगले द्रावं ध्यानेन करोति वनितानां ॥ १२९ ॥

यह ध्यान स्त्री की योनि में किये जाने से क्षोभ सिर में मोहन ललाट में पानन और दोनों नेत्रों में किए जाने से स्त्री का द्रावण होता है।

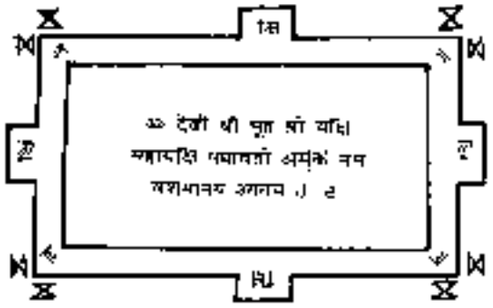

शीर्षास्य हृदये नाभौ पादे वानंगवाणमपि द्योज्यं,
सं मोहमानु लाम्यौ विपरीतौ द्रावणं कुरुते ॥ १३० ॥

सिर मुख हृदय नाभि और पैरों में काम बाणों को भी लगाना चाहिये। इसको सीधे क्रम से लगाने से संमोहन और उलटे क्रम से लगाकर ध्यान करने से द्रावण होता है।

द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः स्मरबाण

यह काम के पाँच बाण हैं।

अंतः स्थित जपा पुष्पं सुपक्वं भूरि सौरभं
जंवीर फल माघ्रांतं नार्या विद्रावणं मतं तं ॥ १३१ ॥

अंदर स्थित किया हुआ जपा पुष्प (गुडहल का फूल) तथा मच्छी तरह पके हुए और बहुत सुंगध वाले जंवीरी नींबू को सूँघने से स्त्री द्रवित हो जाती है।

लिप्तश्चुभ्रार्क कीटयां नाग वल्ली दलं स्त्रियः,
यदवा किंश्चुक पत्राबुं संलिप्तो द्रावयेत् ध्वजः ॥ १३२ ॥

टंकण पिछलिकामा सूरणं कर्पूर मातुलिंग रसैः,
कृत्वात्मांगुलि लेपं कुर्याति स्त्रीणां भग द्रावं ॥ १३३ ॥

टंकण (सुहागा) पीपल कामा (मेनफल) सूरण (जमीकंद) कपूर मातुलिंग (बिजौरा) के रस से अपनी उगुली (ध्वज) पर लेप करने से स्त्री द्रवित होती है।

हर वीर्य लांग लिका कपि मूलं काकमाची रसमिपं
कन्या रस संयुक्तं करलेपो द्रावयेत् अबलां ॥ १३४ ॥

हर वीर्य (पारा) , लांगलिको (कलिहारी), कपि मूल, कोंच, कीचड़ का कमाची (मकोय) का रस मिलाकर और गंवार पाढा का रस सहित लेप करके स्त्री को द्रवित करे।

उपातु पत्र सलिलं मगस्त्य दलजो रजः।
सपदि वाध्वजे लिप्त सुरते द्रावयते स्त्रियः ॥ १३५ ॥

लिंग के ऊपर उपानुपत्र का जल और अगस्त के पत्रों का चूर्ण का लेप करने से रति काल में स्त्री द्रवित हो जाती है।

द्विरदमद कुष्ट मृगमद कर्पूरोन्मत्त पिपली कामं ।
रुद्रजय बुज सैंधव नागर मुक्ता सुयष्टीकं ॥ १३६ ॥

सूरण टंकण शरपुंखी पिपली मातुलिंग चणकोद्यतः,
सहकारांबु समेतं भग निर्झर कारणं लिप्तं ॥ १३७ ॥

द्विरदमद (हाथी का मद), कुष्ट (कूढ़), मृग मद (कस्तूरी), कपूर उन्मत्र (धतूरा), पीपली कामं (मेनफल), (जरामासी) अंबुज (कमल), सेंधा नमक, नागरमोथा, मुलहटी, सुरण (जमीकंद) टंकण (सुहागा) सरफोका पीपल मातुलिंग (बिजोरा), चणक (चने), सहकार सहकांबु (आम का रस) से योनि को द्रावित करने के लिए लेप करे।

स्त्री जन गृह्य द्रावी वनिता सुरतो ध्व दर्प विद्रावी,
हिम मधु टंकण पारद लेपः सहकार रस मिलितः ॥ १३९ ॥

हिम (कपूर) मधु(शहद) टंकण (सुहागा) पारद (पारा) सहकार रस (आम का रस) का लेप स्त्रियों की योनि को द्रवित करके उनके उठे हुये अभिमान को नष्ट करता है।

कर्पूर एलो माक्षिक लज्जारिका युक्त पिपली कामः,
मग निर्झर प्रकुर्यात् कुरंरिका ठोर संयुल ॥ १४० ॥

कपूर एलो (इलायची) माक्षिक (शहद) लजालूसा पीपल मेनफल और कुरांरिका (करसरया) के दूध में पीसकर लेप करने से योनि द्रावित हो जाती है।

वरकन्या पय पिष्टौ लांगली हेम पारदैः
लेपो नार्या कृतो यौनौ तां द्रुतं द्रावयेद् ऋतौ ॥ १४१ ॥

वर (केसर) कन्या (धृतकुमारी) को दूध में पीस कर लांगला (कलिहारी) हेम (धतूरा) पारा का लेप नारी की योनि को रतिकाल में शीघ्र द्रावित करता है।

अग्न्या वर्त्तित नागे हर वीर्यं निक्षिपेत् ततो द्विगुणं,
मुनि कनक नाग सर्प ज्योतिष्मत्यत सोभ्यां चतन्मर्धं ॥ १४२ ॥

दीकेन मर्द्दयित्वा गणे कार्यायां मदनवलयं कं कृत्वा,
रति समय वनितानां रति गर्व विनाशनं कुर्यात् ॥ १४३ ॥

अग्नि में पिघलाये हुये नाग (सीसे) में उससे दुगुना हरवीर्य (पारद) डाले, फिर मुनि अगस्त काला धतूरा नाग सर्प (मदन कंद -नाग दमनं)ज्योतिष्मतो (मालकांगनी) शीभ्यां समुद्धये सामिल करके उससे पहले कहे हुए सीसे को इन रसों से अच्छी तरह मर्दन करे । डीकेन गणिकार्या (कनेर के रस से) मदन वलयं (स्मर वलयं लिंगे)को मर्दन करे, रति काल में स्त्री के गर्त को नष्ट करताहै।

व्याधी बृहतिफल रस सूरण कंडुति चणक पताम्लां,
कपि कच्छु वज्र वल्लि पिप्पलीका माम्लिका चूर्ण ॥ १४४ ॥

अर्कस्य वर्हिन लाग जल दानान् भावयेत् क्रमादितैः
स्मर सुबलं कृत्वैवं वनितायां द्रावेण कुर्यात् ॥ १४५ ॥

बड़ी कटेली छोटी पसर करेली के फल का रस सूरण (जमीकंद) कंडुति (अग्निक) चणे के पत्तों का जल कींच वज्रवल्ली कांडवल्ली पीपल, आम्लिका (चोगरी चूर्ण) को अग्नि से पिघ लाये हुए से में नौ बार भावना देकर लिंग पर लेप करे तो स्त्रियों को द्रावित करे।

भानु स्वर जिन संख्या प्रमाण सूतक गृहित,
दीना रात अंकोल राज वृक्ष कुमारी रस शोधनं कुर्यात् ॥

राशि रेखा खर चूर्ण कोकिल नयना पामार्ग कनकानां
चूर्णैं सहैक विशंति दिनानि परिमर्दयेत् सर्वा ॥
निशायां कांजिका धूपं दत्वा योनौ प्रवेशयेत्,
काल मध्यगत प्रायां वेषां विज्ञायतां क्रमात् ॥

नीरतां विभ्राणां द्वेषां रति संगमे,
मदोन्मतां द्रावयति तादशो मप्येष जलका प्रयोगस्तु ॥

भानु (१२) स्वर(१६) जिन संख्या प्रमाण (२४) पारा लेकर उसको मंकोल (ढेरा), राजवृक्ष (छोला) कुमारी रस, (गंवारभाटा) इन रसों को १२-१६-२४ दीनार या गद्यानक के बराबर रसो को लेकर उस पारद का शोधन करें, फिर शशिरेसा (वाकुची बीज) खरचूर्ण (गर्दभ चूर्ण-कत्तगिरी कोकिल नयना (कोकिलाक्ष) बीजं (रालमखाना) मपा भार्ज (प्रत्यक पुष्पी- चिरचिरा) कनक चूर्ण (काला धूतरा) का चूर्ण इनलन से इक्कीस दिन तक खरल में मर्दन करे, उसे शोधित पारद मर्दन करें। रात को कांजी (आरनाल) से मर्दन करके धूती देकर हल्दी के चूर्ण से जो पारद से सोलह गदयान प्रमाण से मदित धूनी देकर योनि में प्रवेश करावे, बाला स्त्री के लिये १२ गद्याण प्रमाण और मध्य आयु वाली स्त्री के लिये १६ गद्यान प्रमाण तथा वृद्ध स्त्री के लिये २४ गद्यान प्रमाण जल का क्रम पूर्वक जाने निंद्रा के अभाव वाली स्त्री को यह जलका प्रयोग रति के संगम में उत्तम करके द्रवित करता है।

करेणदाय वामेन निजरेतो रतौ नरः,
वाम स्त्रियाः यद लिपेत तेनाष्या स्याता चिरं प्रियः ॥ १४९ ॥

पुरुष रति काल में अपने वीर्य को हाथ में लेकर स्त्री के बायें पैर पर पोत दें तो उसका चिरकाल के लिये प्रेमी हो जाता है।

एरंड तैलं फणि कन्नि युक्तं स न्मातुलिंग स्य च बीज मिश्रं
धूपं प्रदद्याद्रति हर्म्य मध्ये स्त्री मोहनं ज्ञानविदोवदंति ॥ १५० ॥

यदि एरंड का तैल सर्प की कांचली और विजारो (मातुलिंग) के बीज को मिलाकर रति काल में धूप देवे तो स्त्री को याचना के शब्दों से उसके मोहित होने का ज्ञान मालूम होता है।

मंत्रि खंड सिखंड मास्य विन्यास्य भक्ष यन्दत्रेति,
स्वस्य रक्षार्थमस्मिन् धूप कर्मणि ॥ १५१ ॥

मंत्री इस धूप को देते समय अपनी रक्षा करने के वास्ते अपने आस्य (मुख) में मिश्री का टुकड़ा रख लेवे।

नमः कामदेवाय सर्वजनविजयाय सर्व जन संमोहनाय प्रज्वलिताय सर्व जन हृदयं ममात्मगते कुरू कुरू ठःठः॥

त्रिसहश्र रूप्य जाप्यात् संसिद्धः कामदेव मंत्रोयं,
जाप्यादिभिः प्रयोगैः कुर्प्या द्वश्यं जगन्निरिबलं ॥ १५२ ॥

यह स्त्री वश्य कामदेव मंत्र तीन हजार जप आदि करने से संपूर्ण जगत को वश में करता है।

स्त्री वश्य कामदेव मंत्रः

ॐ नमो भगवति मातंगेश्वरि सर्व जन मनोहरि सर्व मुख वशंकरि सर्व राज वशं करि अमुकं में वश्य मानय मानय ठः ठः॥

वीणा वादन निरतां निः शेषा भरण भूषितां श्यामां,
शंखकृत कुंडलां कां देवी मातंगिकां नाम्नीं ॥ १५३ ॥

अवरमसितं दधती ध्यात्वा मुं संध्ययो र्द्वपो मंत्र
नित्यं जपत स्त्री ण्यपि भुवनानानि वशे वे तिष्ठन्ति ॥ १५४ ॥

वीणा बजाने में लगी हुयी सब आभूषणों से सजी हुयी श्यामा शंख के कुडंल के चिन्ह वाली मातंगी नाम की देवी काले वस्त्र पहनने वाली देवी का ध्यान करके, प्रातःकाल और सांयकाल इस मंत्र को प्रतिदिन जपने वालों के वश में तीन लोक की स्त्रियाँ रहती हैं।

ॐ नमः उच्छिष्ट चांडालि मातंगी सर्व जन वशीकरणं कुरु कुरु ठः ठः ॥

मंत्रो मातंगी काया, अयुतं मयुतं जपात् सिद्धति,
व्योमांगां तांध्यात्वा स्वोच्छिष्ट मंत्रं वलिमुपहरतो ॥ १५५ ॥

नेन मंत्रेण तस्यैव प्राप्तस्यै कयं तयाष्टा प्रतिदिनं,
खिलो वश्यतां याति लोके इष्टादश्यश्च यां वा
व्रजति परमदः पूज्यत सौ तयापि ॥ १५६ ॥

यह मातंगी का मंत्र दस हजार जप से सिद्ध होता है आकाश रूपी शरीर वाले अर्थात् नग्न उस देव का ध्यान करके उसके लिये उपरोक्त उच्छिष्ट मंत्र से बलि दे।
उसको सिद्ध हो जाने पर मंत्री के वश में संपूर्ण लोक की स्त्रियाँ हो जाती हैं। इन मंत्रो की बड़ी घमंडी स्त्रियाँ भी पूजा करती हैं।

ॐ रूद्र दयिते योगेश्वरि हुं फट ठः ठः ॥

मंत्री गोर्या एषः स्यात् पंचा शत्सहस्र जापेन सिद्धः
साध्या संज्ञा मूरौ प्रयिलिरव्य वामायां ॥ १५६ ॥

नाम पिधायच वामेन पाणिना साधको जपेन्मंत्रं,
सा तत क्षणेन साध्या वनिता वश्यत्वमायाति ॥ १५७ ॥

यह गौरी देवी का मंत्र पचास हजार जप से सिद्ध होता है। साध्य स्त्री केनाम को अपनी बाईं उरू (जंघा) पर लिखकर मंत्र को जपे और उस नाम को बायें हाथ से ढ़ककर जपे तो वह स्त्री उसी क्षण उसके वश में हो जाती है।

पुंस साध्य स्यारव्या स्यदक्षिणों रौ विलिरव्य,
हस्तेन वामे तर णपि दधे जपेद पुरस्यादि सौ वश्य ॥ १५८ ॥

पुरुष साध्य के नाम को अपनी दाहिनी जांघ पर लिखकर उसे बायें हाथ से ढ़ककर जाप करे तो वह पुरुष उसके वश में हो जाता है।

असमे कुसुमे स्वाहित्येष प्रमाण पूर्वकः,
मंत्रो लक्ष प्रजाप्योत सिदै दुद्राधि दैवतः ॥ १५९ ॥

फल पुष्पदिकममुना वारान् सप्ताभि मंत्रितं जप्तं
अनु भूतं सवनमं प्राहुर साधारणं जगतः ॥ १६० ॥

असुमें कुसुमें स्वाहा यह रुद्र मंत्र एक लाख प्रमाण जपने से सिद्ध होता है. फल पुष्पादि को इस मंत्र से सात बार अभिमंत्रित करके देने से स्त्री वश में आ जाती है, यह साधारण मंत्रियों का अनुभव है।

ॐ नमो मातंगानां नमो मांतगिनीनां नमो मातंगी कुमारिकानां तद्यथा चरू चरूअस अस कुरू कुरू ठःठः॥

वल्मीकं मृत्प्रतिकृतिं साध्यास्व्यानां किंतां शिरो दधति,
अपि धार्यांधोवक्त्र दक्षिण चरणेन चाक्रम्य ॥१६१॥

सप्ताह मंत्रममुं जपेत् त्रिसंध्यं भवेदयं वश्यः नार्य्यांतु,
तत्प्रति कृतिं साध्यायां वाम चरणेन ॥१६२॥

सर्प की वामी को मिट्टी से साध्य पुरूष की प्रतिमा बनाकर उसके नीचे किये हुए मुख को अपने दाहिने पैर से दबाकर इस मंत्र को एक सप्ताह तक प्रातः, दोपहर और सायंकाल के समय जपने से वह अवश्य वश में होकर आ जाता है- स्त्री साध्य की प्रतिमा को अपने बायें पैर से दबायें।

ॐ वश्य मुखि राज मुखि राज वश्य मुखि ठःठः॥
एषः लक्ष जपात्सिद्धौ लक्ष्मी मंत्रः
प्रशस्येत मुख प्रक्षालनं कुर्वते एतेन वशये जगत् ॥१६३॥

इस लक्ष्मी मंत्र को एक लाख जप आदि से सिद्ध करके उससे अपना मुख धोने से सम्पूर्ण जगत को वश में करे।

हृदयोपहृदयमंत्रं कनिष्टि कादगुंलिषु विनष्य,
तस्यो पर्यो ज्वालिनि जन वश्य कुरू वषट् मंत्रं ॥१६४॥

संजप्य सप्तवारा निन्निजेन तेनैव वाम हस्तेन
अभिमंत्रितः स्ववदनो वश्येत दृष्टं जनं सर्वं ॥१६५॥

हृदयोप हृदय मंत्र का कनिष्ठिकादि उंगुलियों से न्यास करके उसके ऊपर
ॐ ज्वालिनी जन वश्यां कुरू कुरू वषट् मंत्र को अपने उसी बायें हाथ से सात बार जाप कर अभिमंत्रित अपने मुख को दिखाने से सब लोग वश में हो जाते हैं।

गौरी मंत्र

नयन मनोहरि हर-हर नयन मनोहरि ठःठः

सिद्धै लक्ष जपादयमनेन सहदेव्या:
भस्महुताया लिप्त गात्रे वशटे जगत् निरिवलं ॥ १६६ ॥

इस मंत्र को एक लाख जपादि से सिद्ध करके उससे हवन किये हुए सहदेवी को भस्म को अपने शरीर पर लेप करने से संपूर्ण जगत को वश में कर लेवे।

ॐ ह्री ऐं क्लीं नित्ये क्लिन्ने मद द्रवे ऐं ह्रीं स्वाहा।
ॐ ह्री नित्ये क्लिन्ने मद द्रवे ह्रीं स्वाहा।
ॐ ह्रीं क्लीं नित्ये क्लिन्ने मद द्रवे ह्रीं स्वाहा, अस्त्राय फट्

अंगानि मंत्र ममुं नित्याया: स्मृत्वा लक्ष त्रयं जप्तवेत्सांग
जुहु यादपि माधुकै: कुसुमै: सिद्धैदसौ मंत्र:, ॥ १६७ ॥

एतेनां जन भक्षणे वंदन प्रक्षालनं च तिलकं
च स्नानं च समा चरत: सर्वोपि वशो भवे लोक: ॥ १६८ ॥

शया तलगो नित्यं स्मरण करस्था गुंलीषु वामस्य,
विन्यस्य मंत्र वणानि पाद तले नामस्य ध्याया: ॥ १६९ ॥

ध्यात्वा क्षोभि भ्यां स्व्यां विधि वदव् धान्तु मंत्र विन्मुद्रां
स्मर शर परवता हृदया सहसा कृषे तसा साध्या ॥ १७० ॥

ॐ ह्रीं ऐं से लेकर अस्त्राय फट् इसके अंग हैं।
इस मंत्र का अंग सहित ध्यान करके इसका तीन लाख जप तथा माधूक (महुवे) के फूलों के होम से सिद्ध करें। इस मंत्र से आँखों में अंजन करने से मुँह धोने तिलक करने और अभिमंत्रित जल से स्नान करने से सब लोक वश में हो जाता है।
प्रतिदिन बिस्तर पर जाकर बायें हाथ की उंगुलियों में मंत्र के अक्षर और पैर के नीचे साध्य स्त्री का नाम का ध्यान करके मंत्री विधि पूर्वक क्षोभिणी मुद्रा को धारण करे तो कामदेव के बाणों से बिंधी हुई परवत जैसे कठोर हृदयवाली स्त्री अचानक आकर्षित होकर वश में हो जाती है।

भूर्ज्जे शुभे दिव्यं सुगंधि सारै विलिखय मध्ये डढयो:
स्व नाम गृहांतरे ग्राम पुरांतरे वा संस्थाप्यते तस्य वशस्तु लोक: ॥ १७१ ॥

यदि उत्तम भोज पत्र पर सुगंधित द्रव्यों से ड और ढ़ के अन्दर अपने नाम को लिखकर घर, ग्राम और नगर में रख दें, तो लोक उसके वश में हो जाता है।

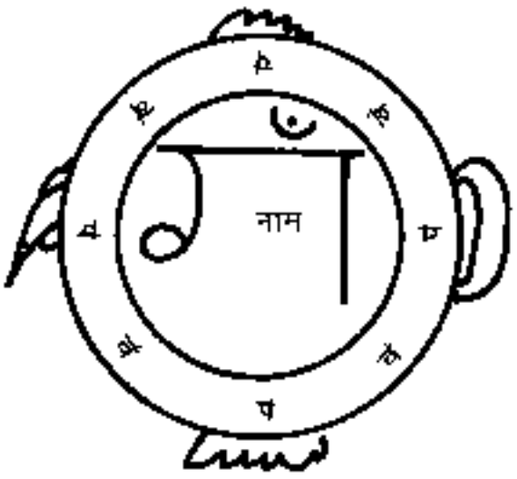

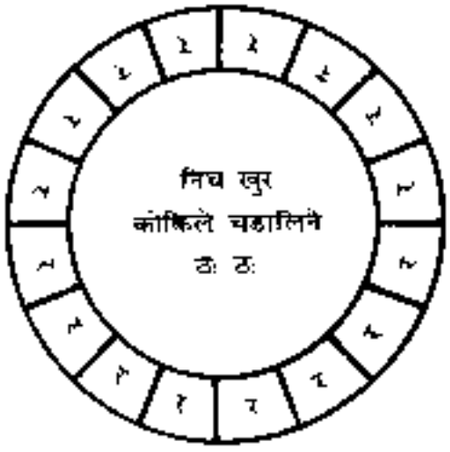

सकार मध्यगं साध्यं शशि गोरोचनादभिः।
महिन्द्र मंडले लिखव्यं भूर्ज्जे भवति मोहनं ॥ १७२ ॥

सकार के बीच में साध्य का नाम शशि (कपूर) और गोरोचन आदि से भोजपत्र पर लिख कर बाहर महिन्द्र मंडल बनाने से मोहन होता है।

लिखेत तोयपुर नाम गकारे बिन्दु संयुते,
गोरोचना कुंकुमै भुर्जे मधु मध्ये च वश्य कृत ॥ १७३ ॥

जल मंडल में गं के अंदर गोरोचन और केसर से भोजपत्र पर साध्य के नाम को लिखकर शहद में रख देने से वह वश में हो जाता है।

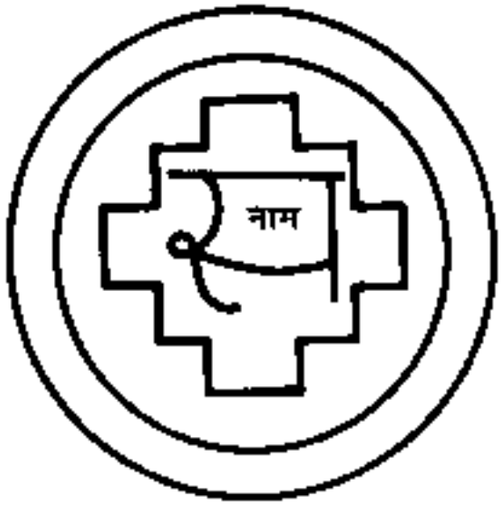

खकारो दरगं नाम तोय मंडल मध्यगं,
रोचनादि शुभ द्रव्यै लिखेद्विद्वेष, रोष हृत ॥ १७४ ॥

जल मंडल के बीच में ख के अन्दर भोजपत्र पर गोरोचन केशर आदि से नाम को लिखने से उसका विद्वेषण और क्रोध नष्ट होता है।

वारूणे मंडले नाम खकार स्योदरे लिखेत्
कंकुमादि शुभैद्रव्यैः सभूर्जैः वश्य कर्मसु ॥ १७५ ॥

वारुण मंडल (जलमंडल) में साध्य के नाम को ख के अन्दर केशर आदि से भोजपत्र पर लिखे, तो वशीकरण करता है।

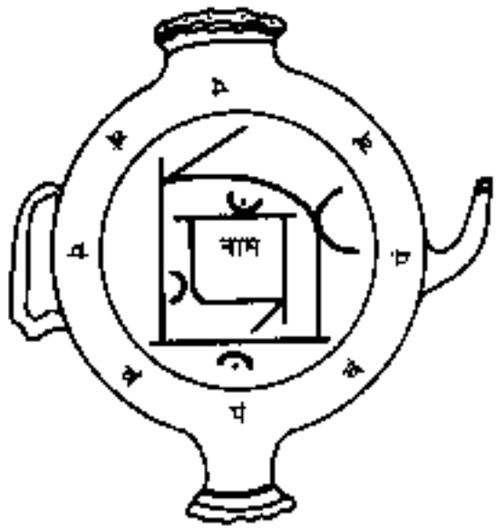

वायव्य मंडले साध्यं सकारस्योदरे लिखेत्
कुंकुमागरू कर्पूरै वंश्याकृष्टि प्रदर्शनी ॥ १७६ ॥

वायु मंडल में साध्य का नाम स के उदर (अंदर) केशर अगर कपूर आदि द्रव्यों से भोजनपत्र पर लिखे तो वशीकरण और उसका आकर्षण होता है।

अकार संपुटे नाम लिखिद्विन्दु समन्वितं,
अंभेपुरे श्रुभे द्रव्यैः वश्याकर्षण मोहनं ॥ १७७ ॥

जल मंडल के बीच में बिन्दु सहित नाम को अकार के सम्पुट में उत्तम द्रव्यों में लिखने से वशीकरण आकर्षण और मोहन होता है।

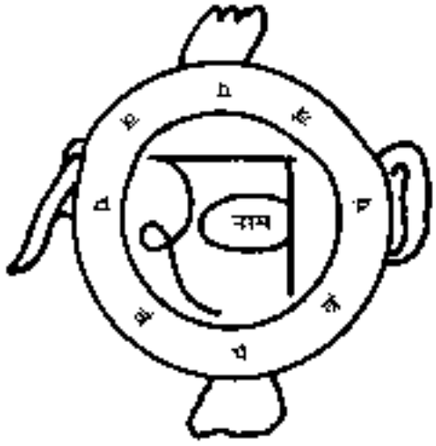

निच खुर वशोकिरो वहालिनी ठः ठः

षोडशभिरैर्युक्तं लिख भुर्जे कुंकुमादिना चक्रं ॥
लिखितं तेषां मध्ये मंत्रोयं धारितो वशकृत चक्रतो ॥ १७८ ॥

चक्र मिदमेव लिखितं कुड्या दौ पूजितं विलोक्य जपेत
मौनी भूत्वा मंत्र स्यादाकर्षण मर्भासत्यो ॥ १७९ ॥

भोज पत्र पर केशर आदि से सोलहरे संयुल एक चक्र लिखकर उसके बीच में उपरोक्त मंत्र लिखे तो वशीकरण होता है। इसी मंत्र को दीवार आदि पर लिखकर पूजन करके मौनधारण करके यदि मंत्र जपे, तो इच्छित स्त्री-पुरूष का आकर्षण करता है।

वर्णतं मदन युतं वाग्भव परि वेष्टितं वसुदलाब्जं,
दिक्षु विदिक्षु च माया वाग्भव बीजं ततो लेख्यं ॥ १८० ॥

त्रैलोक्य क्षोभनं यंत्रं सर्वदा पूज्योदिदं,
हस्ते बद्धं करोत्येव त्रैलोक्य जन मोहनं ॥ १८१ ॥

अंत के वर्ण (ह) को मदन (क्लीं) से युक्त करके लिखे । उसे वाग्भव (ऐं) से वेष्टित करें उसके बाहर एक आठ दल का कमल बनावें, उसकी दिशाओं में ह्रीं (माया) तथा विदिशाओं में वाग्भव (ऐं) बीजों को लिखे ,इस तीन लोक को क्षोभण करने वाले यंत्र को सदा पूजने से तथा हाथ में बांधने से तीन लोक के लोगो को मोहन करता है।

नाम त्रिमूर्तिं मध्यस्थं क्रों क्लीं दिक्षु विदिक्षु चबहि,
वन्हिसुतं कोष्टे जंभे होमांत मा लिखत्येत् ॥ १८२ ॥

मोहापि तथा ग्रांतं ब्रह्म क्लेकार मास्थितं
ॐ ब्लें धात्रे वषट् वेष्टयं तद्वाह्ये क्षिति मंडलं ॥ १८३ ॥

फलके भूर्ज्जे ताम्र पत्रे वा लिखित्या कुंकुमादिभिः
पूजयेद्यः सदा यंत्रं तस्य सर्व जगद्वशं ॥ १८४ ॥

नाम को त्रिमूर्ति(ह्रीं) के बीच में लिखकर उसकी दिशाओं में क्रों और विदिशाओं में क्लीं लिखे, बाहर अग्नि मंडल सहित आठ कोठों में ॐ और स्वाहा सहित जंभा आदि देवियों के नाम लिखे फिर ब्रह्म (ॐ) और ब्लूं सहित मोह आदि को लिखे बाहर (ॐ) ब्लें धात्रे वषट् लिखे और उसके बाहर पृथ्वी मंडल बनावे। इस यंत्र को केशर आदि से तख्ती या ताम्र पत्र या भोजपत्र पर लिखकर जो सदा पूजन करता है सम्पूर्ण जगत उसके वश में रहता है ।

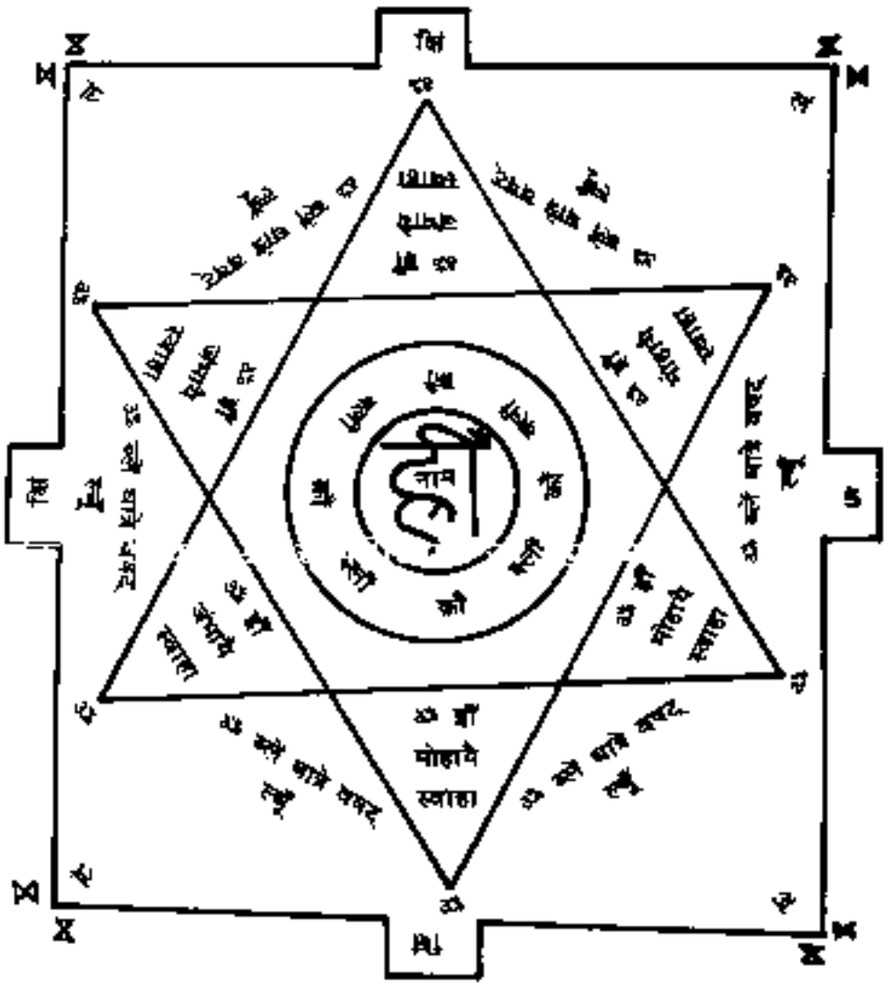

ॐ ह्रीं क्रों क्लीं जंभे मोहे अमुकस्य अमुकं वशं कुरु कुरु वषट् ।

पूजा मंत्र

कामाधिपेन सहितं लिख शून्य बीजं
बाह्ये तथा षट्ल पंकजमाविलेख्य ॥ १८५ ॥

बीजं तदेव सकलेष्वपि पत्रेकषु वाणवृतं
तदरिवलं भुवनेश वेष्टाअष्टोत्तरं प्रतिदिनं
सततं जपेत्य पुष्पै स्तथा संयुतैः ॥ १८६ ॥

तद्वश्य मेति मनुजा धरणी श्वराश्च तिष्ठंति,
तत्पद सरोज मदालिश्याम्या ॥ १८७ ॥

ॐ ज्वाला मालिनी ह्स्क्लीं ह्रीं क्लीं ब्लूं द्रां द्रीं सर्व जन वश्यं कुरु कुरु वषट्

कामाधिप (क्लीं) सहित शून्य बीजं (ह) लिखकर बाहर आठ दल के कमल के सब पत्रों में भी यही बीजाक्षर (ह्यक्लीं) लिखे। उसके बाहर काम बाण के अन्दर (ह्रीं क्लीं ब्लूं द्रां द्रीं) लिखकर उसे भुवेनश (ह्रीं) से वेष्टित करे।

जो पुरुष इस मंत्र को लाल कनेर के फूलों से प्रतिदिन १०८ बार जप करता है, मनुष्य और राजा लोग उसके वश में होकर उसके चरण कमलों में काले भौंरे के समान बैठे रहते हैं।

ॐ ज्वाला मालिनी ह्यक्लीं ह्रीं क्लीं ब्लूं द्रां द्रीं सर्वजनं वश्यं कुरु कुरु वषट्।

पूजा मंत्र

कुरा काश भपिंड मध्येनिलये नाम स्वकीयं पृथक्,
दत्वा तत्पारिवेष्टितं भपरसत पिंडेन गृहत्वे नथ ॥ १८८ ॥

बाह्ये द्वयष्ट दलाब्ज मष्टम दले ष्वन्यच्च पिंडाष्टक
पत्राणां तरितं लिखे त्स्वर युगं शेषे च पत्राष्टके ॥ १८९ ॥

स्वर युगल स्या धस्तात् शब्द पाश तथा कुश
क्षीच तेषांचाध: ह्रीं क्लीं ब्लूं द्रां द्रीं कमाद्योत ॥ १९० ॥

बाणान पद्म दलातरेषु विलिखवेत् शब्दं पाशं
चाकुशं क्षीं पत्रां ग्रगर्तं लिखवे दयनमः पर्यन्त वामादिना ॥ १९१ ॥

पत्राग्र सिक्त बीज बाण शिखिनी शीघ्रतं आकर्षय,
तिष्ट द्विद्वर्मम सत्य वादी वरदे मंत्रेण वेष्ट्रयं वहिं : ॥ १९२ ॥

वाह्ये ह्रीं शिरसावृत्तं त्रिरथं तद्वेखाग्रयोन्या कृत्योर्मध्ये
क्लीं मुपरिस्थ कोण युगले द्रां द्रीं मधोब्लं लिखवेत् ॥ १९३ ॥

बाह्ये दिक्षु विदिक्षु रांतधरणी बीजान्विते द्वपुरं,
तदवाह्य लिखदि दिग्वालिग तदक्ष कारं तालिवं तरीरिं ॥ १९४ ॥

देव्या ज्वालामालिन्योक्तमिदं परम देवगृह यंत्रं,
पुष्याष्यकें श्रुभ तंत्रै विलिखव्य भूर्जे पटे चापि ॥ १९२ ॥

शिखिम देती हृदयोपहृदय मंत्रेण पूजितं सततं,
जपितं हुतं च सकलं स्त्री नृप रिपु भवन वश्य करं ॥ १९३ ॥

मधुर त्रयेण गुग्गुलु दशांग पंचांग धूप मिश्रेण जुहुयात्
सहश्र दशकं वश करोती द्र मपि का कथान्योषु ॥ १९४ ॥

एक ऐसा कमल बनावे जिसकी कर्णिका में कूट (क्ष) आकाश (ह) और भपिंड (भ) पिंडाक्षरों के मध्य में (निलय) अर्थात् घर का ज्वालामालिनी देवी का और अपना नाम पृथक पृथक देकर उसको भवर पिंड (भ्म्ल्व्र्यूं) से वेष्टित करें। उसके बाहर (द्वयष्ट) सोलह दल का कमल बनावे। जिनके आठों दलों के पत्रों में अंतराल से आठ पिंडाक्षीर को (य र घ झ ष छ ठ व) लिखे। और दूसरे आठ पत्रों में दो दो स्वरों के साथ उनके नीचे शब्द निम्नलिखित लिखे पाश (आं) अंकुश (क्रौं) और क्षीं तथा इनके नीचे ह्रीं क्लीं ब्लूं द्रां द्रीं क्रम से लिखे। इसके पश्चात इस कमल रूपी यंत्र के बाहर हां पाशं (आं) अंकुश (क्रों) क्षीं के आगे काम बाण (ह्रीं क्लीं ब्लूं द्रां द्रीं) शिखिनी ज्वालामालिनी देवी शीघ्र (अमुकं) आकर्षय और तिष्ट (ठ) दो दो दफा बोल कर फिर मम सत्यवादी वर दे नम तक वामादि क्रम से लिखे इसमंत्र से अर्थात

ॐ हां आं क्रो क्षीं ह्रीं क्लीं ब्लूं द्रां द्रीं ज्वालामालिनी देवी शीघ्र अमुकं आकर्षय आकर्षय तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः मम सत्य वादि वर दे नमः॥

इस मंत्र से यंत्र को बाहर से वेष्टित करे। बाहर ह्रीं की तीन रेखाओं से घेरकर मध्य में क्लीं को लिखें, क्लीं के ऊपर दो कोनों में द्रां द्रीं और नीचे ब्लें बीज को लिखे। इसके बाहर दिशाओं में धरणी बीज (क्षीं) और विदिशाओं में रांत बीज (लं) लिखे। बाहर इन्द्रपुर चंद्रमंडल बनावे। उसके

बाहर दिशाओं में और विदिशाओं के पत्रों में लकार के साथ वारिधि बीज (व) अर्थात् ब्लें को लिखे। देवी ज्वालामालिनी के कहे हुये इस परम देव गृह यंत्र को पुष्य नक्षत्र में रविवार के दिन भोज पत्र पर सुंगधित और पवित्र वस्तुओं से लिखे। ज्वाला मालिनी देवी के इस हृदय और उपहृदय मंत्रो के द्वारा लगातार पूजन जप और हवन करने से स्त्री राजा शत्रु और भवनवासी देवी भूतादि वश में हो जाते हैं। त्रिमधुर (घृत दूध बूरा, गूंगाल और दशांग) और पचांग धूप को मिलाकर उसको दस हजार हवन कुंड में आहुति देने से इन्द्र भी वश में हो जाता है। औरों की तो क्या बात है।

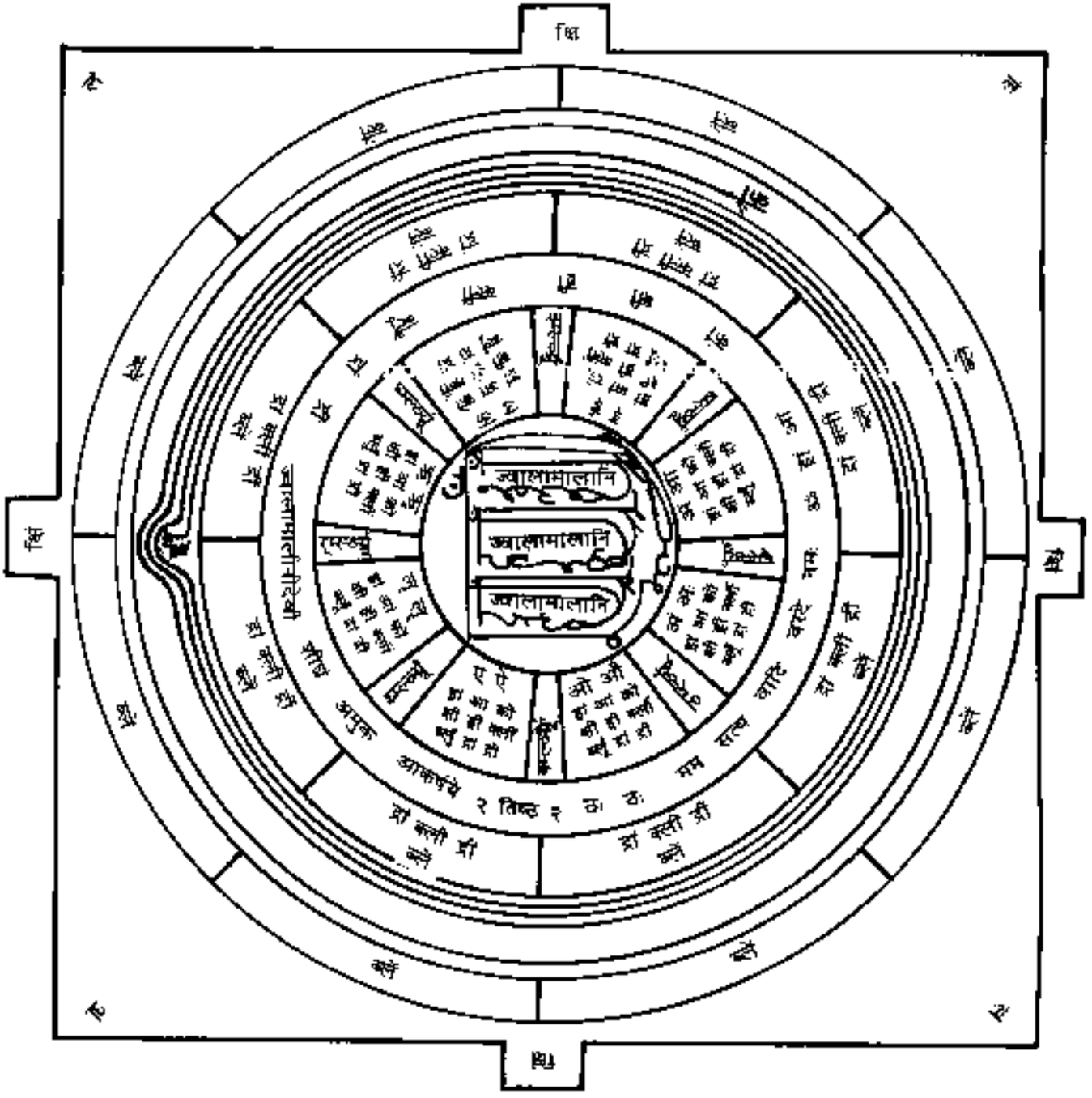

ब्रह्मां तर्गतं नाम मायया परि वेष्टितं
काम राजेन सर्वष्टयं बाह्यो षोडश पत्रकं
पंच वाणान न्यसे तेषु स्वाहांतो कारपूर्वकान्,
मायया त्रिधा वेष्टयं क्रों कारेन निरोधयेत् ॥ १९५ ॥

भूर्जपत्रे परे वाधि विलिखव्य च हिमादि भिः
द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सकारांत मंत्रं क्षोभ करं जपेत् ॥ १९६ ॥

एक षोडश दल कमल को कर्णिका के बीच में नाम लिखकर उसको क्रम से ब्रह्म (ॐ) मायया (ह्रीं) काम राज (क्लीं) से वेष्टित करे। उसके बाहर सोलह पत्रों में ॐ द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः स्वाहा मंत्र को लिखे उसके बाहर ह्रीं के तीन वलयों से वेष्टित करके क्रों से निरोधकरे तो क्षोभ करे।

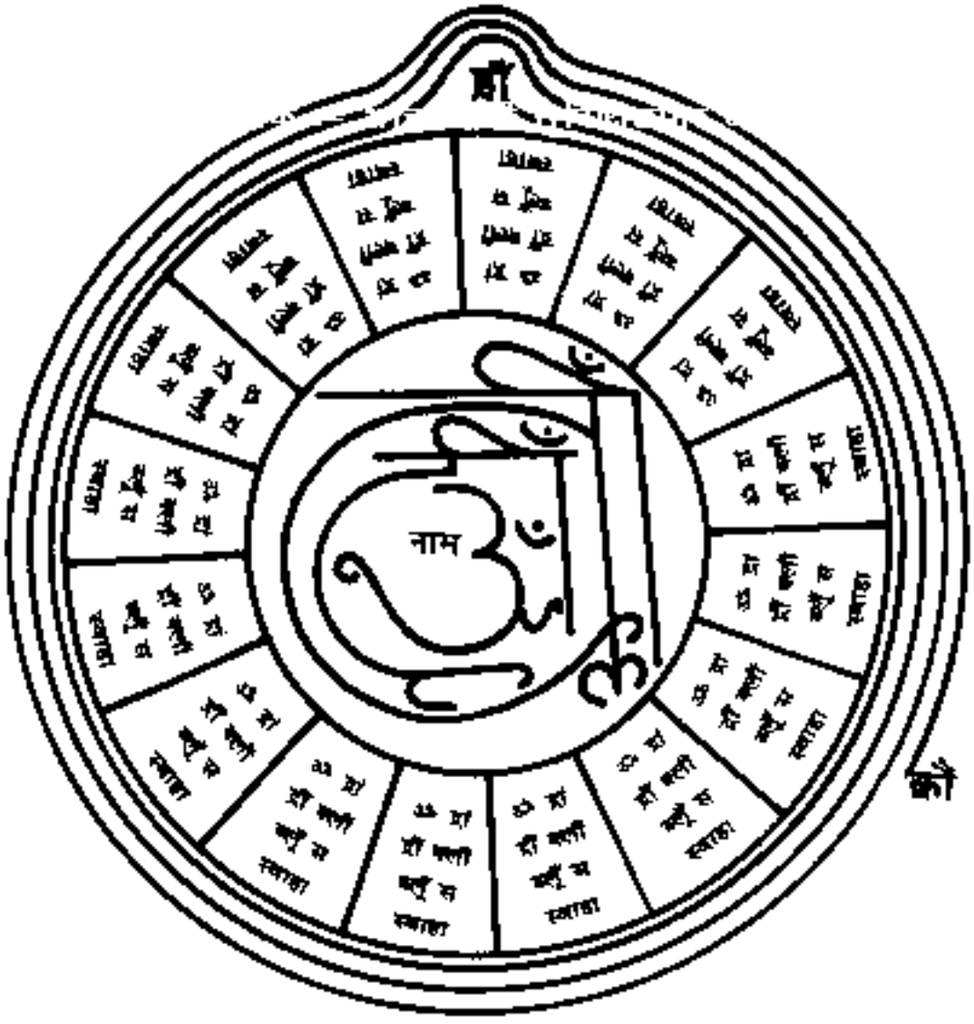

स्मर बीजयुतं शून्यं तत्वैने कार वेष्टित
तद्वाह्योष्टदलां भोजं नित्यं क्लीं मदन्ने द्रवे ॥
मदना तुरेय वषाडिति विलिखेत स्वाहा यिनय पूर्वेण
त्रिभुवन वश्य मवश्यं प्रति दिवसं भवति संजपतः॥

ॐ ह्क्लीं ह्रीं ऐं नित्थे क्लीन्ते मदन द्रवे मदनातुरे मम सर्व जन वश्यं कुरु कुरु वषट्॥

एक अष्ट दल कमल की कर्णिका में नाम सहित हकार क्लीं को मिलाकर लिखें जिसे ह्रीं और ऐं से वेष्टित करके उसके बाहर आठ दल कमल के पत्तों में निम्नलिखित मंत्र लिखे और उसको प्रतिदिन जपने से अवश्य ही तीन लोक वश में हो जाता है।

ॐ ह्क्लीं ह्रीं ऐं नित्थे क्लिन्ते मदन द्रवे मदनातुरे मम सर्व जनं वश्यं करु कुरु वषट स्वाहा।

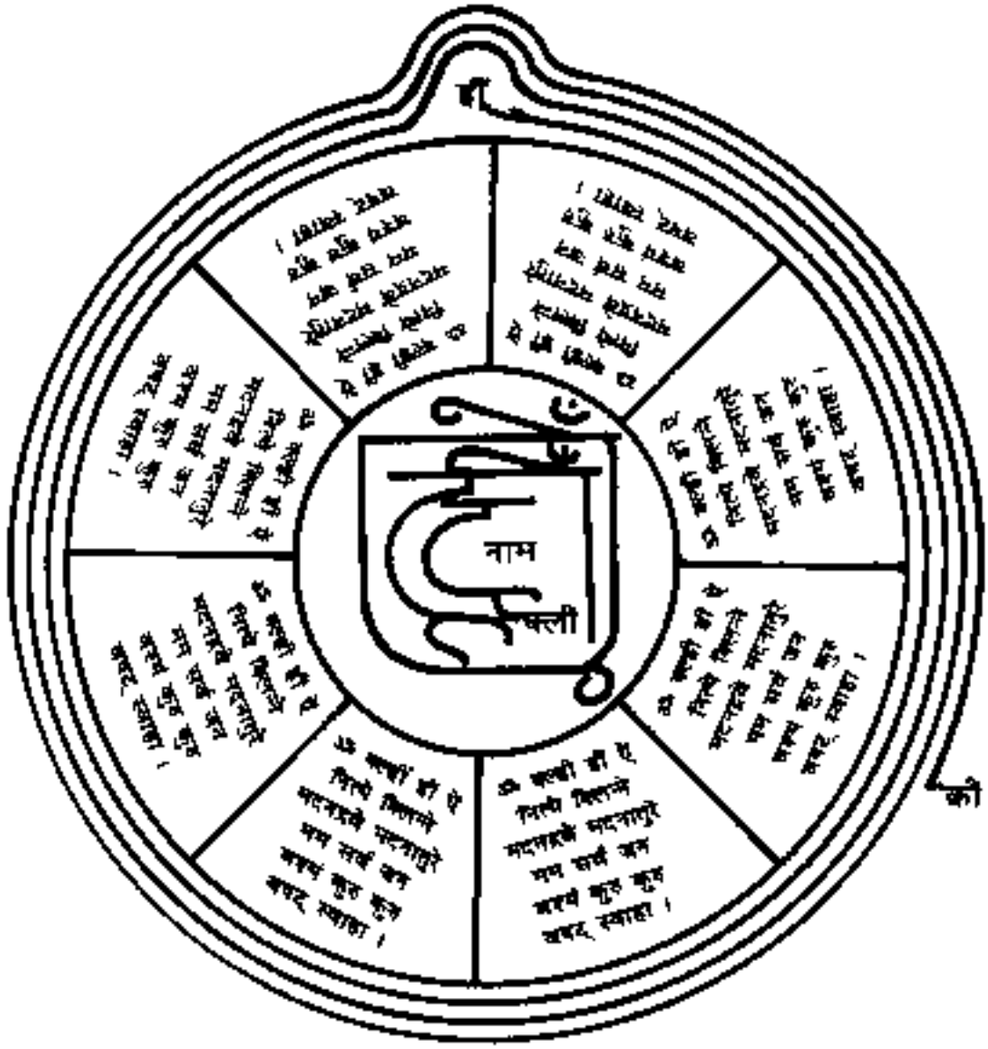

अष्ट दल कमल मध्ये स्वनाम तत्वं दलेषु चित्त भवं,
पुनरप्यअष्ट दलाबुजंमिभ वशकरण दलेषु लिखवेत्॥
षोडश दलगत पदमं क्लौंकारं तदलेषु सुरभि द्रव्यै:
क्लां क्लीं क्लूं क्लौं कारैस्तंत्रं वेष्टयै त्यारित :
तद्वाहये अर्क शशि भ्यां जपत: शून्यैश्च पंचभि
र्नित्यं नाग नरामर लोक: क्षुभ्यति वश्यत्वमायाति॥

एक अष्ट दल कमल की कणिका में तत्व (ह्रीं) के भीतर अपना नाम लिखकर आठों दलों में चित्र भवं (क्लीं) लिखे, फिर आठ दल के कमल के पत्तों में (इ भ वशकरण) क्रौं लिखें, फिर सोलह दल वाले कमल के पत्रों में क्लौं सुगंधित द्रव्यों से लिखे, फिर उस यंत्र के चारों तरफ क्लां क्लीं क्लूं क्लौं से वेष्टिच करे। उसके बाहर सूर्य और चंद्रमा से वेष्टित करके नित्य ही पांच शून्य बीज (ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्र:) का जप करने से नाग नरलोक लोक और अमर (देव) लोक वश में हो जाते हैं।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्र: नाग नरामर लोके मम वश्यो भवतु भवतु वषट् स्वाहा ॥

जपमंत्र:

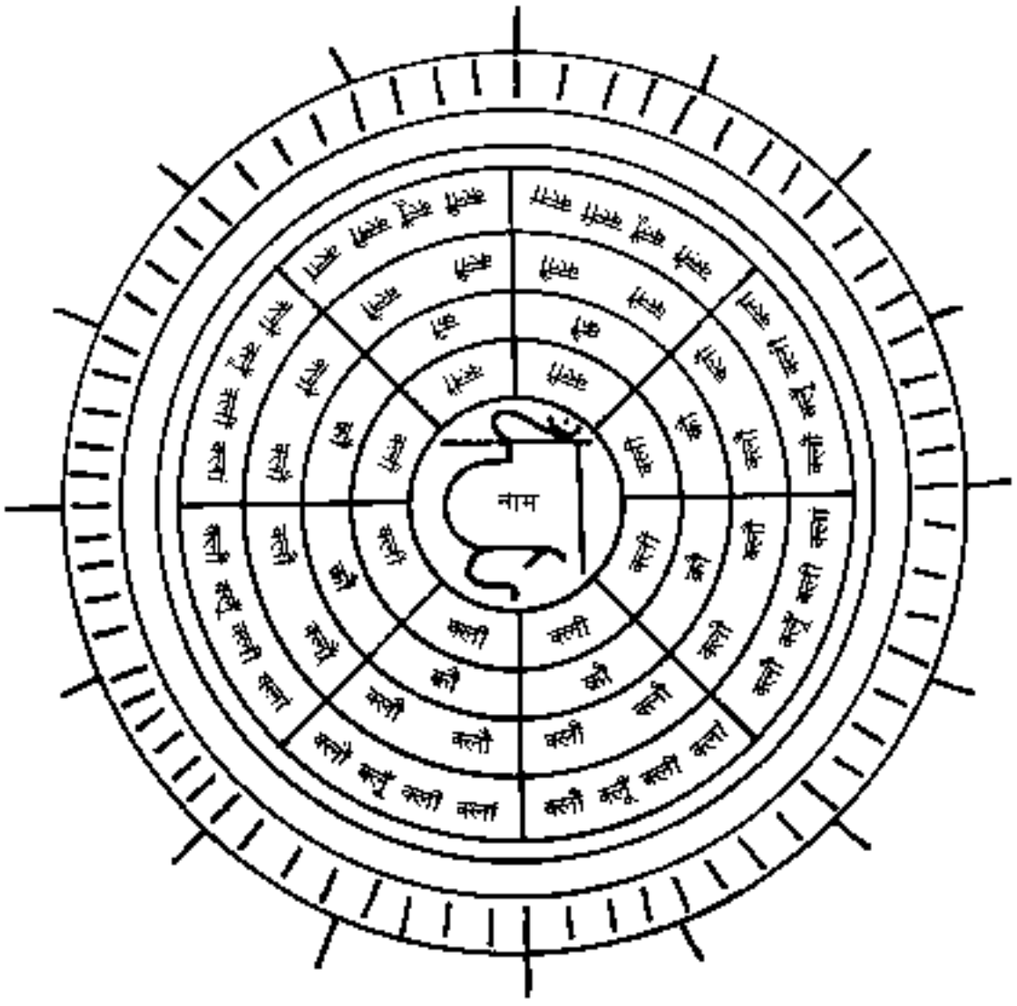

अष्ट दल कमल मध्ये स्वनाम तत्वं दलेषु चित्त भवं
वहिरप्यष्ट दलांबुजंमिभ वश करण दलेषु लिखेत् ॥ २०२ ॥

दुर्गाया इदं यंत्रं त्रैलोक्य जन मोहनं लिखित्वा ,
शोभनेद्रव्यै कंठे वन्द्यातु बुद्धिमान: ॥ २०३ ॥

एक आठ दल के कमल की कर्णिका में ह्रीं के भीतर अपना नाम लिखे और आठों दल में (चित्रभव) क्लीं लिखे फिर बाहर आठ दल के कमल के पत्तों में इ भ वशकरण क्रों लिखें।
यह दुर्गादेवी का यंत्र तीन लोक के लोगों को मोहित करने वाला है। इस सुगंधित द्रव्यों से लिखकर बुद्धि मान लोगों को अपने गले में धारण करना चाहिये।

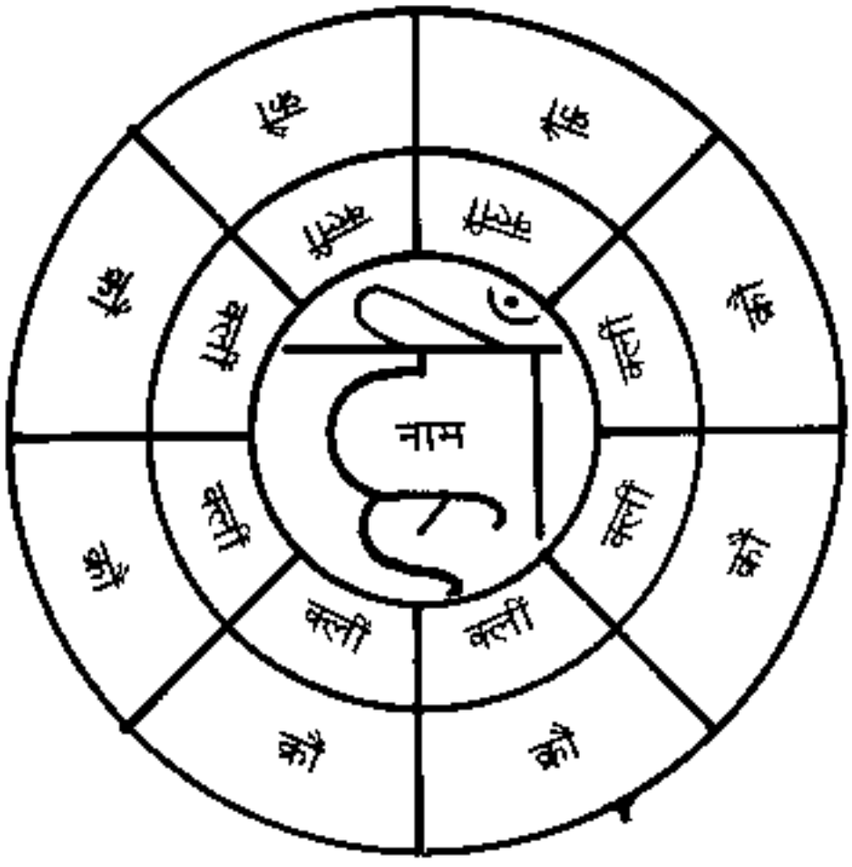

संलिख्याष्ट दलाब्ज मध्य गगनं कामाधिपे नान्वितं
तत्पत्रेषु तदक्षरं प्रविलिखे त्पत्राग्र गतोग्न्य क्षरं तो
स्वाक्षरं ब्लें पत्रांतरं पूरितंवलयितं मंत्रेण वेदादिना
द्रां द्रीं ब्लूं स्मर बीज होम सहितो रेत जगत क्षोभनं ॥ २०४ ॥

एक आठ दल कमल को कर्णिका के बीच में गगन (ह) को कामाधिप (क्लीं) से युक्त करके लिखे

उसके पत्रों में भी उसी अक्षर को लिखकर उन पत्रों के आगे अग्नि, अक्षर (रं) लिखे। पत्रों के अंतराल में ब्लें लिखकर उसको आदि में वेद (ॐ) द्रां द्रीं ब्लूं और स्मर बीज (क्लीं) और होम (स्वाहा) सहित मंत्र से वेष्टित करे तो यह जगत को शोभित करता है।

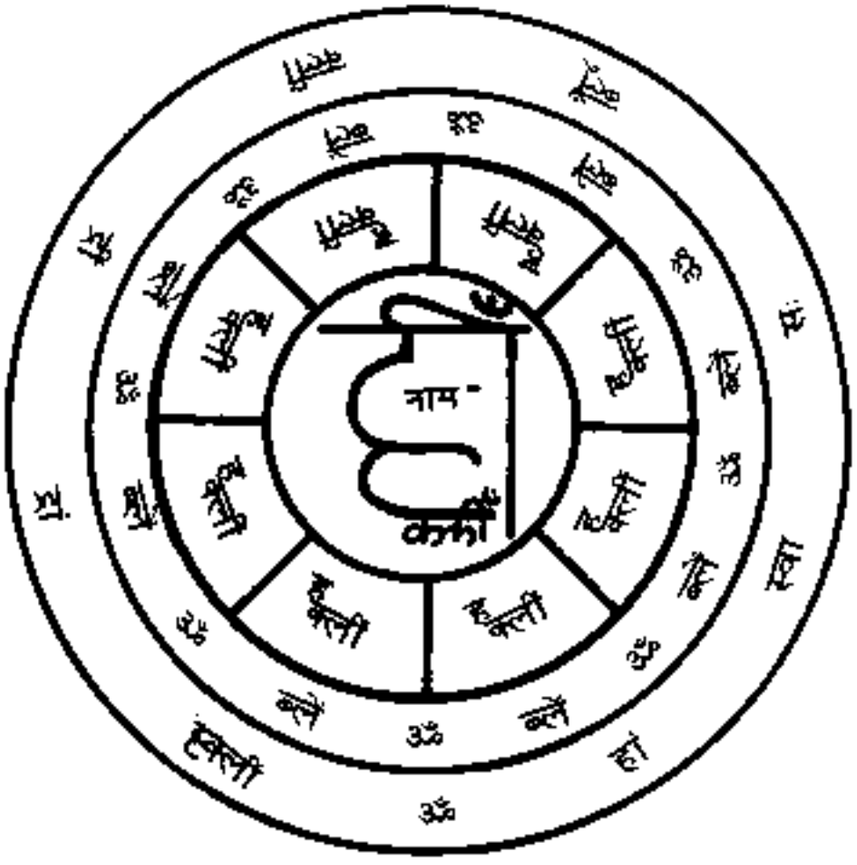

अंत्य वर्ण तृतीय तुर्य वकार तत्यवृता व्हय,
हंस वर्ण संवृत्तं तेता द्विगुणी कृताष्ट दलांम्बुजः ॥ २०५ ॥

तेषु षोडश सत्कलाः शिरसी श्रून्यो वृत्तं ,
वहिर्मायायापरि विष्टितं प्रणवादिकादिभिरावृते ॥ २०६ ॥

यंत्र मा विलिखेदिदं हिम कुकुंमागरू चंदनैः,
भूर्ज के फल केथवा धरणी तले शुचि धामिनी ॥ २०७ ॥

प्रत्यहं विधिना समं जपतो रूणं प्रसवै भृशं
तस्य पाद सरोज षटपद सन्निभं भुवन त्रयं ॥ २०८ ॥

ॐ ह्रीं ह्स्ल्रीं ब्लें अर्हं असि आउसा अनाहत् विद्याटै नमः ॥

मंत्र का वर्ग (शवर्ग) का तीसरा अक्षर (स) और तूर्य चौथा अक्षर (ह) व और तत्व (ह्रीं) से घिरा हुआ अर्थात् देवदत्त नाम को स ह व ह्रीं से वेष्टित करके हंस अक्षर से वेष्टित करे, इस आठ दल के कमल को दुगुना करके अर्थात् सोलह दल का कमल बनाकर उनमें सोलह स्वरों को लिखे। इसके बाहर सिर सहित हकार से वेष्टित करे। इसको माया (ह्रीं) से वेष्टित करके क्रों ,से निरोध करके बाहर ॐ सहित क से ह तक के अक्षरों से वेष्टित करें।

इस यंत्र को हिम (कपूर) कुंकुम (केशर(अगर) चंदन आदि से भोज पत्र पर बड वृक्ष की तख्ती पर ऐसी पृथ्वी पर जो अपतित गोमय विलिप्त भूमि पर, जो बिना गिरे हुए गोबर से लिपी हुई शुद्ध भूमि पर प्रति दिन यंत्र के विधान से लाल कनेर के फूलों से जप करने वाले पुरुष के चरण कमलों में तीनों जगत् काल भौरें की तरह वश में रहते हैं।

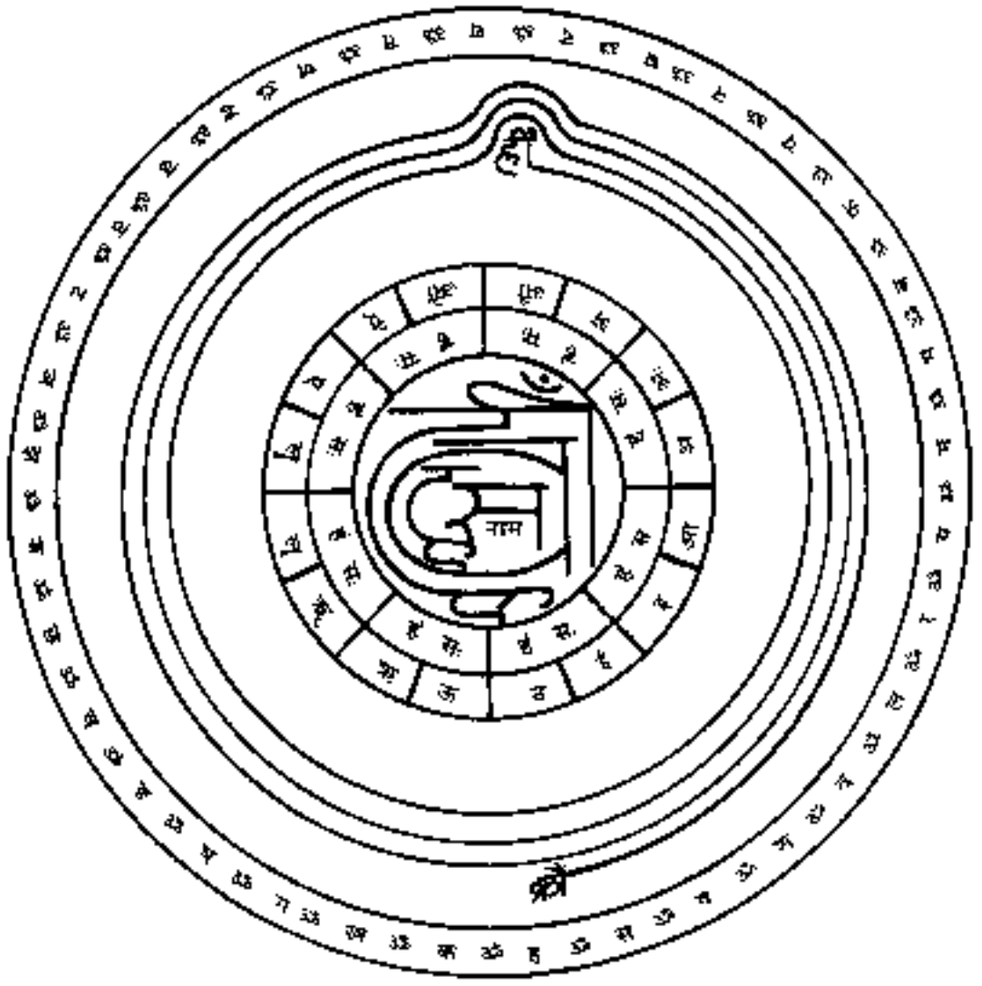

हरि गर्भ स्थित नाम तत्परिवृत्तं रूद्र त्रि मूर्त्या हंतैः
पुटितं सेन वकार संपुट गत वेष्टां च दातं स्वरैः

वहिरष्टाबुंज पत्र कोष्टयोजया जमादि संबोधनं
विलिखेन्मोहय मोहयामुक नरं वश्यं कुरु द्विर्वषट् ॥ २०६ ॥

क्रौं पत्राग्र गतं तदेतंगतं ह्रीं ह्रीं च बाह्ये लिखेच्च
स्ना स्त्रीं स्त्रूं पुन रुक्ता मंत्र वलयं स्त्रौं स्त्रः प्रकुर्या
द्वहि यंत्रं मोहन वश्य मिदं भूजे विंलिख्यार्चयेत
धतूरस्य रसेन मिश्र सुरभि द्रव्यै र्भ वेन्मोहनं ॥ २०७ ॥

एक आठ दल कमल की कर्णिका में नाम को ह्रं ह्रीं ह्रं स स वव और ठ से घेर कर उस के चारों तरफ गोलाकार मे सोलह स्वर लिखे फिर बाहर आठों पत्रों में पूर्व आदि क्रम से नीचे आठ मंत्र लिखे।

अयै जयै मोहय मोहय अमुकनरं वश्यं कुरु कुरु वषट्।
अयै जंभे मोहय मोहय अमुकनरं वश्यं कुरु कुरु वषट्।
अयै विजयै मोहय मोहय अमुकनरं वश्यं कुरु कुरु वषट्।
अयै मोहे मोहय मोहय अमुकनरं वश्यं कुरु कुरु वषट्।
अयै अजिते मोहय मोहय अमुकनरं वश्यं कुरु कुरु वषट्।
अयै स्तंभे मोहय मोहय अमुकनरं वश्यं कुरु कुरु वषट्।
अयै अपराजिते मोहय मोहय अमुकनरं वश्यं कुरु कुरु वषट्।
अयै स्तंभिनि मोहय मोहय अमुकनरं वश्यं कुरु कुरु वषट्।

पत्र के कोने में अंदर की तरफ क्रों और बाहर दोनों तरफ ह्रीं ह्रीं लिखकर गोल मंडल बनाकर उसमें श्रां श्रीं श्रूं श्रौं श्रः बीजों को लिखे और पूजन करे। इस मोहन वश्य नाम के यंत्र को भोजपत्र पर धतूरे के रस और सुगंधित द्रव्यों से लिखे तो मोहन होता है।

ह्रीं मध्ये नाम युग्मं शिरिव पुर धटितं तस्य कोष्टेषु वामं
ह्रीं जंभे होम मन्यत पुनरूपि विलयं ह्रीं च मोहे थ होमं
ह्रीं तत्कोष्टांतरालेष्वथ गज वशं कृत बीज मन्यत् तदग्रे
बाह्ये ह्रीं स्वस्य नाम्नां तरितमथ वहिः श्रूं लिखेत् साध्यनाम्ना ॥ २०८ ॥

कुंकुम मधु हिम मलयज यावक गोक्षीर रोचनागरुभिः
मृग मद सहितैः विलिखेत कनय सुयंत्रं जगद्वश कृत् ॥ २०९ ॥

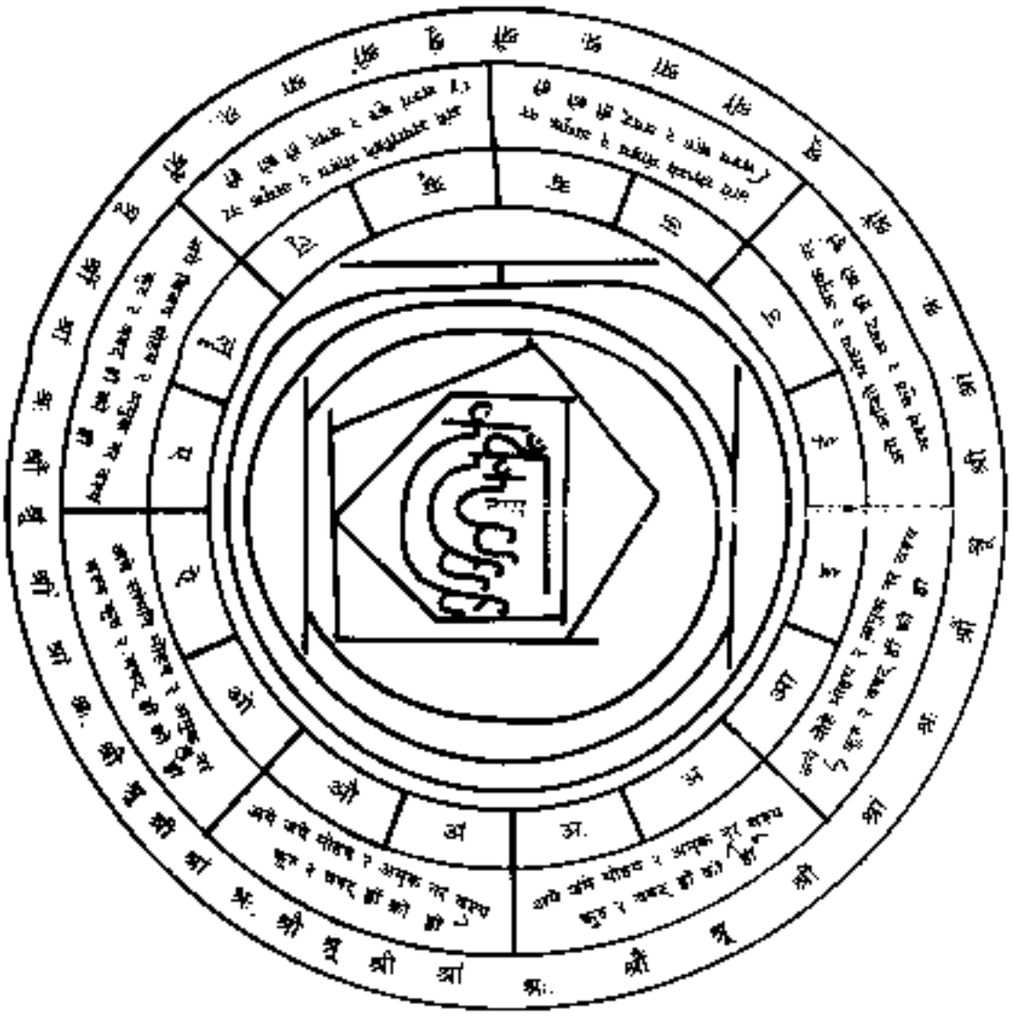

मधुर त्रयेण गुग्गुक्त दशांग पंचांग धूपमिश्रेण जुहुयात्
सहस्र दशकं वशं करोती मपि का कथाऽन्येषु ॥ २१० ॥

अग्नि मंडल की पुट के अंदर हीं उसमें अपना और साध्य दोनों का नाम लिखे । उसके बाहर अग्नि मंडल का संपुट अर्थात् छह त्रिकोण कोठे बनाकर एक एक को छोड़कर ॐ हीं जंभे स्वाहा ॐ हीं मोहे स्वाहा मंत्र लिखे । कोठो के अंतराल में हीं और काणे में क्रों लिखे। उसके बाहर मंडल में अपने नाम सहित हीं और उसके बाहर दूसरे मंडल में साध्य के नाम सहित श्रूं लिखे। इस जगत को वश में करने वाले कषय नाम के यंत्र कुंकुम हिम (कपूर) मधु मलयज (चंदन) गौ के दूध गोरोचन अगर और मृग मद (कस्तूरी) से लिखे। त्रि मधुर (घृत बूरा दूध) गुग्गुल दशांग धूप और पचांग धूप से दस हजार को हवन कुंड में आहुतियाँ देने से इंद्र भी वश में हो जाता है। औरों की तो क्या बात है।

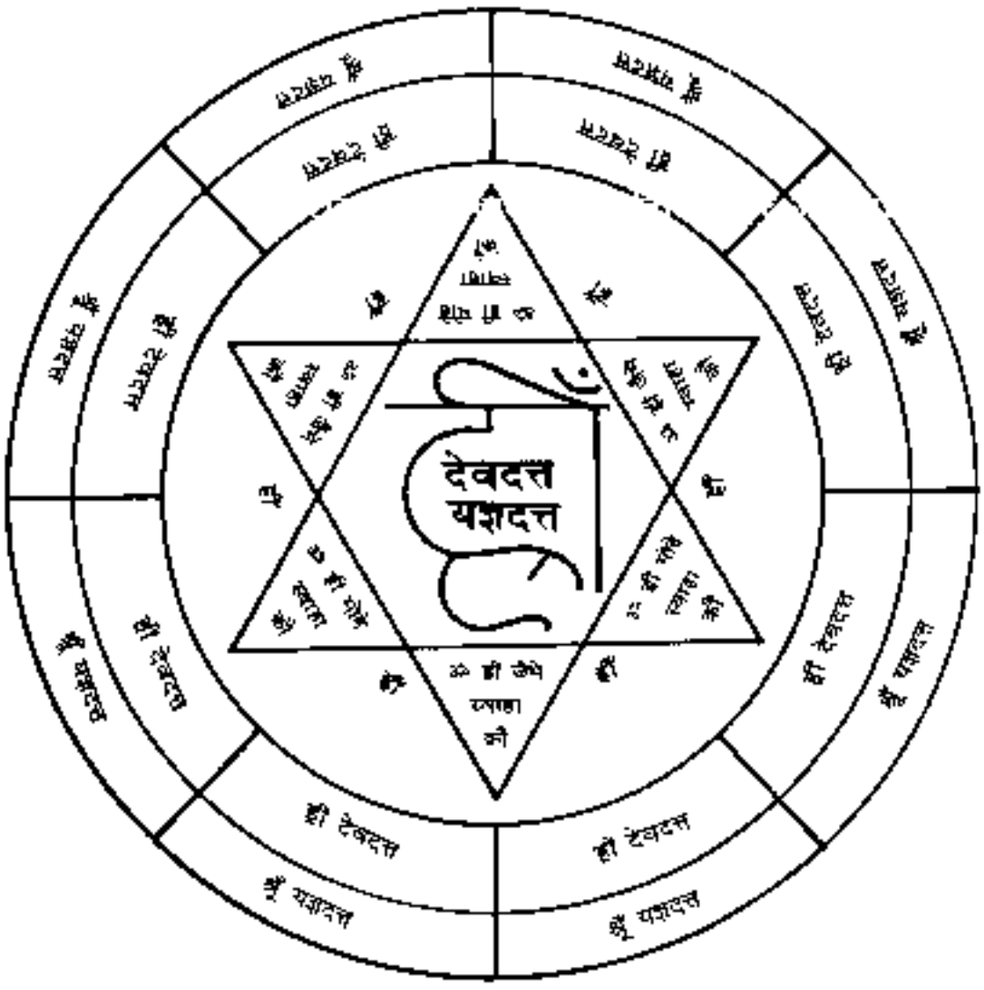

पित्तंजारी साहा लाक्षा सहदेवी कृतांजलिः
आसां चूर्णं घृतो मूर्द्धित वश्यं वितनुते जगत ॥ २११ ॥

पितंजारी (त्रायमान = अमीरन) साहा (घृत कुमारी) लाक्षा (लाख) सहदेवी कृतांजलि (लजालू) के चरण को सिर पर डालने से जगत वश में हो जाता है।

संकोच पत्र्य वाक पुष्पी शंखपुष्पीप्रकल्पितं
चूर्णं योगमिमं प्राहुः प्रधान वश्य कर्माणि ॥ २१२ ॥

संकोच पत्र (लज्जावती के पत्र) बाकपुष्पी (औंधा हूली) शंख पुष्पी (सखाहुली) के चूर्ण को वश्य कर्म के प्रयोगों में प्रधान कहा है।

अल शशि हिम मंजिष्टा लक्ष्मी गो चंदना शिफाः
कुष्टा सश्रीवृक्ष पलाग्नै वशी कृतां मंगला न्यष्टौं ॥ २१३ ॥

अंल (हरताल) शशि (चंदन) हिम (कपूर) मंजठि लक्ष्मी (तुलसी) गो चंदन की जड़ कूष्ठ (कूठ) श्री वृक्ष (बेल) के पत्तों के अग्र भाग वशीकरण के आठ मंगल कहे गये हैं।

देवीं सहां मार्कव मिद्रं वल्ली भद्रां सलज्जां कनक प्रसूतां
सर्वास्तु कांतां श्रियमप्य शेष वश्याय मूर्ध्नां विभ्रयाद्दिनादौ ॥ २१४ ॥

देवी (मूर्वा) सहा (घृत कुमारी) मार्कव (भांगरा) इंद्र वल्ली (इंद्रायण) भद्रा (जीवंती) लज्जा (लजालू) कनक प्रसूता (धतूरे के फूल) यह सब स्त्रि (कांता) को मंगलकारी वशीकरण के लिए प्रातःकाल के समय अपने सिर पर डाले।

गल हृत नरद्वयस्य हृदि लिहता लिंग पाचितं विधिवत्
निशि पुष्टयै शिवभवने तैलं मदनां कुरो नाम्ना ॥ २१५ ॥

एतद् वदनांभ्यक्तं भवति सदा विश्व लोक वश्य करं
पुष्पेतु स्वयं च मलं भक्ष विमिश्रं स्त्रियं वशयेत् ॥ २१६ ॥

श्रीतांजना जलि करि मृतमूद्धर्न माल्य निर्माल्य
कल्क सहितं नृकपाल चूल्यां तैलं महत्पित् वनेन्ट
कपाल पात्रे सिद्ध नरांश्च वनितांश्च वशीकरोति ॥ २१७ ॥

शिशो रजात दंतस्य जिह्वा गोरोचना शिखा
भृंगस्य पुष्पैः पिष्टा भिरा भिर्वश्याय पुंड्रकः ॥ २१८ ॥

शिला गोरोचना पत्र कुंकुम स्तिलकः कृतः
गले लेपोयं वशाये ल्लोकं हन्याच्च सकलं विषं ॥ २१९ ॥

शिला (मेनसिल) गोरोचन पत्र (तेजपाक्ष) कुंकुम (केशर) का तिलक करने और गले पर लेप करने से यह लोक को वश में करता है तथा सम्पूर्ण विषों को नष्ट करता है।

सिता पराजिता देवी मार्क्कवः पशु रोचना
एतैः श्वेत वचो पेतै स्तिलको वशाये ज्जनं ॥ २२० ॥

सिता (शक्कर) मयराजिता (पारिजात-हारश्रृंगार) देवी (मूर्वा) मार्क्कव (भांगरा) गोरोचन और श्वेत वच के तिलक से वशीकरण होता है।

गोरभां वर्हि शिखा रोचना मोहिनी वश
पिष्टाभिः कन्यादौ ताभि वंशी कुर्यात् विशेषतः ॥ २२१ ॥

गोरभा वर्हिशिखा (मयूर शिखा) गोरोचना मोहिनी (पोदीना) वश (पोपल) को पीसकर कन्याओं को विशेष रुप से वशीकरण करता है।

रक्ता तगर मंदार मूलै स्तुल्येन कल्कितं
पुड्राकं चंदन नाशु वशी कुर्यात जगत् त्रयी ॥ २२२ ॥

रक्ता (चोटली) तगर मंदार मूल (आक की जड़) और चंदन से तीनों लोकों को शीघ्र वशीकरण करता है।

मंदार मूल मंजिष्ठा कुष्ठचक्रै सरसमैः
समं पिष्टं घृतं ललाटादौ वशयेत् रक्त चंदनं ॥ २२३ ॥

आक की जड़ मंजीठ कूठ चक्र (तगर) को बराबर लेकर लाल चंदन के साथ पीसकर मस्तक आदि पर लगाने से वशीकरण होताहै।

भृंगनील गजांश्वत्थ वर्षा भून्मत्त चंदनैः
जलेननालिकेरस्य पिष्टैर्वश्यो विशेषतः ॥ २२४ ॥

भांगरा नील गज (विष्णु क्रांता), अश्वत्थ (पीपल) वर्षाभू (साठी) उन्मत (धतूरा) और चंदन को नारियल के जल से पीसने पर विशेष रुप से वशीकरण करता है।

पद्यो भृग्वाल लाला गोरीचना मधुपैर्गुरोः
भारायां कन्याया पिष्टैर्लालाम खल मोहनं ॥ २२५ ॥

गाय के बच्चे की लार गोरोचन मधुप (महवा) अगर (भातयां) तुलसी को कन्या के मुख की लार से पीसने से सब मोहित हो जाते हैं।

तिलको वशयेन्मील पीत्र गोरोचना कृतः
वाम हस्त कनिष्टांग भागेन विलि वेशितः ॥ २२६ ॥

मछली के पित्ते और गोरोचन को बायें हाथ को कनिष्ठा उंगली से लगा हुआ तिलक वशीकरण करता है।

एला लंवग मलयज तगरोत्पल कुष्ट कुंकुमोशीरे
गोरोचनादि केसर मनः शिला राजि का कुष्टंज ॥ २२७ ॥

हिक्का पद्मक तुलसी मिति सम भागं तुषार सलिलेन
पुष्पे चंद्रा भ्युदये च कन्यया पेषयेत्सर्वं ॥ २२८ ॥

तिलकं कुर्यात अमुना विदधात्यथवांजनं तथाऽन्योयं
तिलक स्त्रिभुवन तिलको गजमद कुनटी शमीपुष्पैः ॥ २२९ ॥

इलायची लौंग चंदन तगर कमल केसर कूठ केशर खस गोरोचन नागकेसर में नसितराई कूढ़हिक्का (जरामांसी) पद्माख तुलसी को बराबर लेकर पुष्य नक्षत्र में चंद्रमा के उदय होने पर ओस के जल से सब को कन्या से पिसवाए, इनका तिलक या अंजन बनाकर लगाए, इससे तीनों लोक जीते जाते हैं। हाथी का मद कुन्टी (मेनसिल) खोजड़े के फूल इनका तिलक तथा अंजन दोनो ही तीन लोक को जीतते हैं।

पावक वर्जित लक्ष्मी सहदेवी कृष्ण वल्लिका तुलसी
हरिकांतावर कंदे विश्व सितो शीर पिष्टाश्च ॥ २३० ॥

जाती शमी पुष्प युगं दम नक गोरीचनाया मार्गः श्च
काश्मीराक्ष मृ-मद पुर्नरक मारिच पत्राणि ॥ २३१ ॥

शरपुंखी कन्येति च सम भाग गृहीतशुभ तंत्रैः
पुष्पाकर्के संयुक्ते मुखं वासौ वा भवेत तिलकः ॥ २३२ ॥

पावक (अग्नि या धूप से बची हुई लक्ष्मी तुलसी) सहदेवी काली तुलसी, और हरिकांता (विष्णुकांता) वर कंद (नील वृक्ष) विश्व (सोंठ) सिता (शक्कर) उषीर (खस) पिष्क (कोकिल) जाती पुष्प (चमेली) शमी (खेजड़ा) दोनों के फल दमनक गोरोचन, आदि झाड़ा केशर / कस्तूरी पुर्नर्नवा (पुनर्नवा) मिरच के पत्ते सरफोंका और घृतकुमारी को उत्तम उपाय से बराबर बराबर लेकर पुष्य नक्षत्र और रविवार के संयुल योग में तिलक करने से वशीकरण होता है।

शरपुंखी सहदेवी तुलसी कस्तूरिका च कर्पूरं
गोरोचना गज मदो मनः शिला दमनक श्चैवं ॥ २३३ ॥

जाती शमी कुसुम युग हरिकांता चैति दिव्य तंत्र मिदं
सम भागेन गृहितं तिलकं कुरु भुवन वश्य मिदं ॥ २३४ ॥

सरफोंका सहदेवी तुलसी / कस्तूरी कपूर गोरोचन हाथी का मद में नशिल दमनक चमेली और खेजड़े के फूलों और हरिकांता (तुलसी) को बराबर बराबर लेकर श्रुम उपाय से तिलक किया हुआ सम्पूर्ण लोक को वश में करना है।

मार्कव विष्णुक्रांता देवीश्वेताग कर्णिका मूलै:
गोरोजनांबु पिष्टै: पुष्पै तिलको जगद् वशकृत ॥ २३५ ॥

मार्कव (भांगरा) विष्णुक्रांता (शंख पुष्पी) देवी (सहदेवी) श्वेताग कर्णिक मूल (सफेद कोयल की जड़) गोरोचन को पानी से पीसकर तिलक करने से जगत वश में होता है।

सित गिरि कर्णी मूलंशित वात विरोधी मूलमपि तैलं
मदगज मद समुपेतं तिलकं त्रिलोक्य वश्यकरं ॥ २३६ ॥

सित गिरि कर्णी मूल (सफेद कोयल की जड़) सित वात विरोधी मूल (सफेद ऐरंड़ की जड़) तिली का तेल हाथी का मद और मद(धतूरा) का तिलक तीन लोक को वश में करता है।

जरिली शिखा सहदेवी मोहिनी हरि वल्लभा च गोरंभा,
सिद्ध दिने कृत तिलक: शंकर मपिवश्यतां नयति ॥ २३७ ॥

जरिली (पिलखन) शिखा (मयूरशिखा) सहदेवी मोहिनी (पोदीना) हरियल्लभा (तुलसी) और गोरंभा का सिद्ध दिन में तिलक करने से शिवजी भी वश में हो जाते हैं।

वरकंद पत्र कन्या हिम पद्मोत्पल सुकेशरं
कुष्ठं हरिकांता मलय भवं विकृति स्तिलकां जगद्वश कृत ॥ २३८ ॥

वरकंद के पत्ते घृत कुमारी कपूर कमल और नीला कमल की केशर कूठ (सखा हूली) हरिकांता, और चंदन का तिलक जगत को वश में करता है।

कनकसहजात पुष्पी मलयज नृपरोचना गज मदैश्च
सम भागेन गृहित स्तिलक स्त्रैलोक्य जन वश कृत् ॥ २३९ ॥

कनक (धतूरा) सहा (गंवार पाठा) जाति पुष्पी (चमेली के पत्ते) मलयज (चंदन) नृप (ऋषभक) गोरोचन हाथी का मद सब बराबर लेकर तिलक करने से तीन लोक के प्राणी वश में होते हैं।

श्वेत जपासित सर्षप सहदेवी देवी भृंगराज कृततिलक:
युक्त: समरोचनया त्रिभुवन जन वश्य कृत प्रीक्त: ॥ २४० ॥

सफेद जपा (गुड़हल) सफेद सरसों सहदेवी देवी (मूर्वा) भांगरा और गोरोचन का तिलक करने से तीन लोक वश में होते हैं ऐसा कहा गया है।

नारी गोरचना ब्रह्म डंडी भुजग केशरैः
सिद्धनेत्रां जनं सद्योजनयेज्जन रंजनं ॥ २४१ ॥

नारी (अश्वबला) गोरोचन ब्रह्म डंडी (उंटकरेला) नागकेशर का सिद्ध किया हुआ अंजन वशीकरण करता है।

कुष्टैला लत्ता वक्रेंदु सिंधुनाग हिमा गुरुः
अंजनेन समं वश्यमं समं नयनाजनं ॥ २४२ ॥

कूठ इलायची अलक्तक (महावर) वक्र (तगर) इंदु (कपूर) सिंधु (सेंधा नमक) नाग केशर हिम (कपूर) अगर का अंजन आँखों में लगाने से सब वश में होते है ।

अहे गंज मदो पेतै सिद्धार्थं सहितं मुखं
घट पक्षं रजन्युत्थ मंजनं जन रंजनं ॥ २४३ ॥

दग्धं भुजंगमस्यास्ये चतुशंशाण स्वीधनाग्निना
सौवीर अंजनं लोक रंचन स्याद्दगं जनात् ॥ २४४ ॥

कोड़ रधिरादया चैक वर्त्रै वंशयेज्जगत
मपीस्था भृगांज नागर्भाया कोड वशासेक दीप्ता ॥ २४५ ॥

कज्जलं मंबुजंसूत्रा द्वयकोदर सन विनात्सवत्साया:
कपिलाया: प्रज्वलितं घृतेन दृष्याजनं वश्यं ॥ २४६ ॥

द्विक हन महीषी तक्रज युत नकपालस्थया मर्षी वातां
भ्राताम्र सूत्र वर्त्यां नकपाल धृतां जगद्वश कृत ॥ २४७ ॥

मद तगर केशरा बुज रजो रंग जन धृतेंदुं हिम युग पत्रैः
गोपित क्षीर दुक्षीरै रपि भूरिता मंलके वर्तिं ॥ २४८ ॥

साग्र शिलां कपिलाया प्रज्वाल्या ज्योंत् कज्जलं निर्गलितं
तस्या आदेय दशो रम्यंजना त्रिजगतीं वशी कर्तुं मनाः ॥ २४९ ॥

मद (धतूरा) तगर केशर अंबुज (कमल) को गराज (कीचड़) रुक (कूठ) इन्दु (कपूर) के पत्ते और हिम (चंदन) के पत्तों की क्षीर वृक्ष दूधवाले वृक्षों के दूध में डुबाकर महावर के क्वाथ में बत्ती भिगोकर घृत में बनाया हुआ अंजन वशीकरण करताहै।

तगर शिखा हरिकांता रजनी सर्षप मनाशिला चूर्णः
नीरजवर्त्युद्धारित कज्जलका लोकवश्यकरं ॥ २५० ॥

तगर मयुरशिखा हरिकांता (तूलसी) रजनी (हलदी) सरसों मेनशिल नीरज (कमल) को बत्ती से बनाया काजल लोक को वशीकरण करता है।

दुर्दुरक पंचागैः कारुक दुग्धैश्च कुंकुमाद्यैश्च
भावित सूत्र विधारितमंजन मिह वश्य कृत जगतः ॥ २५१ ॥

दुर्दुरक (पुनर्नवा) के पंचांग में कारुक का दूध और कुंकुम आदि में भावना दी हुई बत्ती से तैयार किया हुआ अंजन संसार को वश में करता है।

युक्तं जारी कुंकुम शरपुंखी मोहिनी शमीकुष्टं
गोरोचना हिकेशर नागर रुदंतीं च कर्पूरं ॥ २५२ ॥

कृत्वेतेषां चूर्ण पावकमध्योतत:
परिक्षिप्य पंकज भवतंतु वृतावर्तिः कार्या पुनस्तेषां ॥ २५३ ॥

कारुक कुच भव पयसां त्रिवर्ण योषि जनस्तन क्षीरैः
परिभाव्य ततः कपिला घृतेन परि वोधयेदीपं ॥ २५४ ॥

उभय ग्रहणे दीपोत्सवे थवा खर्परि जनं धार्यां
गोमय विलिप्त भूम्यां स्थित्वा मंत्रा भिषिलायां ॥ २५५ ॥

ॐ भूमि देवते तिष्टः तिष्टः ठः ठः भूमि सन्मार्जनं मंत्रः
ॐ इंद्र देवते कजलं गृहण स्वाहा कर्पूराभि मंत्रण मंत्रः

ॐ नमो भगवते चंद्र प्रभाय चंद्रेंद महिताय नयन मनोहराय हरि हरि हिरिणि हिरिणि सर्व जनं मम वशं कुरु कुरु स्वाहा

काजलोद्धार मंत्र:

ॐ भूतग्रहाय समहिताय कामाय रामाय ॐ चुलु चुलु गुलु गुलु नील भ्रमरि भ्रमरि नयन मनोहरि मनोहरि नम:

नयनांजन मंत्र:

कज्जल रंजित नयनां दृष्ट्वा तां वांछतीह मदनोपि
रंजित नयनं भूपाद्या यांति तस्य वश्यं ॥ २५६ ॥

पुत्तं जारी (त्रायमात = अमीरन), कुंकुम, सरफोका मोहिनी (पोदीना) शमी, कूठ, गोरोचन, नाग केशर, नागरमोथा, रुदंती और कपूर चूर्ण को पावक (अग्नि) में डालकर उसको कमल के धागे से लपेट कर उसकी बत्ती बनाए । फिर कारुकं के स्तनो के दूध और तीनो वर्णो की स्त्रियों के दूध में भावित करे । कपिला गाय के घृत से दीपक जलाएँ। इस अंजन को दोनो ग्रहण और दीवाली की रात्रि में गोबर से लिपी हुई तथा मंत्र से धुली हुई पृथ्वी पर ठहर कर खप्पर में काजल पाइकर नेत्र में यह काजल लगाई हुई स्त्री कामदेव को भी वश में कर लेती है। पुरुष भी उस काजल को लगाकर राजा आदि को वश में कर लेता है।

लोहरज: शरपुंखी सहदेवी मोहिनी मयूर
शिखा काश्मीर शिखाकाश्मीर कुष्ट
मलयज कर्पूरशमी प्रसूनं च ॥ २५७ ॥

राजावर्तकं भ्रामक दिवस करावर्त मदजरा मांसी
नृप पूति केशर चंदन वाला गिरि कर्णिका श्वेता ॥ २५८ ॥

गोरोचनाश्च चंदनं हरिकांता तुषमित्येषां
चूर्ण मलक्तक पटले विकीर्य पिरवेष्टय कुरु वर्त्तिं ॥ २६० ॥

श्रोतोजनं नीलंजन सौ वीरांजन रसांजनान्यपि च
पद्माहि सिंह केशर शार्दूल नर वश्च विकृतिश्च ॥ २५९ ॥

सूत्रेण पंचपर्णेन परिवृतां भावयेत् तरु क्षीरै:
कारुक कुच भवपयसा पुनरपि तां भावयेत्सम्यक् ॥ २६१ ॥

वर्त्या तया प्रदीपं प्रबोध्य कपिलाघृतेन सिद्ध स्थाने
दुर्दुर भृंग रस संमार्जित नव खर्प्परं जनं धियेत ॥ २६२ ॥

ॐ हिरिणि हिरिणि स्वाहा

मंत्रं पठतां जनं धार्यं प्रपठस्तमेव
मंत्रं करोतु नयनां चनं चापि ॥ २६३ ॥

सकल जगत् एक रंजने मंजनमिदमातनोतु
सु भगत्वं स्त्री पुरुष राज वश्टं करोति नयन द्वयाभ्क्तम् ॥ २६४ ॥

लोह चूर्ण, सरफोका, सहदेवी, मोहिनी (पोदीना) मयूरशिखा, काश्मरि शिखा (केशर), कुठ, चंदन कपूर शमी के फूल, राजावर्त, भ्रामक (भ्रमरछल्ली) दिवसकरा, आवर्त मद जरामासी नृप (अमलतास) पूति करंज, केशर, चंदन वाला (नेत्रवाला) और श्वेत गिरि कर्णिका (सफेद कोयल बूंटी) श्रोतांजन (काला सुरमा) नीलांजन (नीला सुरमा) सौ वीरांजन और रसांजन इस के अतिरिक्त और भी पद्मा (तुलसी) अहि (नाग केसर) सिंह केसर (शेर की अयाल) शार्दूल सिंह केनख और विकृति (बिगड़े हुए) गोरोचन चंदन हरिकांता (तुलसी) भांगरा तुष (बहेड़ा) के चूर्ण को अक्तक (लाख) के पटल पर मिलोन कर उसे लपेट कर बत्ती बनाएं। फिर उसको पांच रंग के धागे से लपेट कर वृक्षों के दूध में भावना। दे फिर उसको कारु की के स्तनों के दूध से, भी अच्छी तरह भावना दें, उस बत्ती से सिद्ध स्थान में कपिला गाय के घृत से दपिक जलाकर दुर्दुर धतूर (धतुरा) भांगरा के रस से साफ किये हुए नव खर्प्पर पर अंजन बनाए ।

ॐ हिरिणि हिरिणि स्वाहा

इस मंत्र को पढ़ते हुए अंजन बनाए और इसी मंत्र को पढ़ते हुए आंखों में अंजन लगाएं। सम्पूर्ण जगत को प्रसन्न करने वाले इस अंजन को आँखों में लगाने से सुंदरता बढ़ने के साथ साथ स्त्री पुरुष और राजा भी वश में हो जाते हैं।

भ्रामक हिम नीलांजनं वालालक्ष्मी सुमोहिनी रक्ता
व्याघ्र नरवीहरि कांता वर कंदो रोचना युक्तः ॥ २६५ ॥

कोकि शिखे त्वेषा मललक पटले विकीर्य संचूर्ण
प्रयुक्त विधि समेतं जन रजनंमजननं तदिदं ॥ २६६ ॥

भ्रामक (भ्रमर छल्ली) हिम (कपूर) नीलांजन व. ना (नेत्रवाला) लक्ष्मी (तुलसी) मोहिनी (पोदीना) रक्ता (गुंजा) व्याघ्र नखी हरि कांता (विष्णु क्रांता)वर कंदा गोरोचन सहित केकिशिखा (मयूराशिखा) के चूर्ण को अलक्त पटल पर बिखेर कर पहले कही हुई विधि से अंजन बनाएं तो वह संसार को प्रसन्न करता है।

हीर कांता केकिशिखा शरपुंखी पूति केशि सहदेव्यः
हिम मद राजावर्त विकृतिं कन्या पुरुष कंदं ॥ २६७॥

वर पद्म केशरं मोहिनीति सम भागतः कृतं चूर्ण
प्राग विधि युत अंजनमिद मखिल जगद्रंजनं तथ्यां ॥ २६८॥

हरिकांता (तुलसी), मयूर शिखा, सरफोका-पूतिकरंज केशि (कसेरु) सहदेवी हिम (कपूर) मद (धतूरा) राजावर्त विकृत कन्या (घृत कुमारी) पुरुष कंद (नीलवृक्ष) श्रेष्ठ कमल का केशर मोहिनी (पोदीना) को बराबर बराबर लेकर उसके चूर्ण को पहले कही हुई विधि के अनुसार बनाया हुआ अंजन सब जगत को वश में कर लेता है।

सार्दूल नख भ्रामक नीलांजन मोहिनी सुकर्प्पूरं
गोरोचनान्वितं विधिवदं जनं लोक रंजन कृत् ॥ २६९॥

व्याघ्र नखी भ्रामक (भ्रमर छल्ली) नीला सुरमा मोहिनी (पोदीना) कपूर और गोरोचन के चूर्ण का विधि के अनुसार बनाया हुआ अंजन लोक को वश में करताहै।

काश्मीरकुष्ट मलयज कमलोत्पल केशर च सहदेवी
भ्रामक कन्या नृप हरिकांता विकृतिश्च मयुर नखां ॥ २७०॥

कर्प्पूररोचनामोहिनी सुनीलांजनं च सम भागं
पूर्व विधियुक्तमंजन मिद मखिल जग वशीकरणं ॥ २७१॥

केशर, कूट, चंदन, कमल नीलीफर की केशर, सहदेवी, भ्रामक (भ्रमर छल्ली) कन्या, (घृत कुमारी) नृप (ऋषभक) हरिकांता (तुलसी) विकृति (सुधारे हुए) मोर के नाखून कपूर गोरोचन मोहिनी (पोदीना) और नीला सुरमा यह सबबराबर लेकर विधि के अनुसार बनाया हुआ अंजन सम्पूर्ण जगत को वश में कर लेता है।

नृवसा कपाल मृत चीर सकल कृतवर्ति कल्पिता
विश्वमपि नयन वशा वशयेच्चल पत्रं शाखि विटपि मपि निशि॥ २७२॥

चतुर्दम त्वककुमदोत्पलानां पुन्नाग कांतादिमजाति बिल्वै:
गोपित काश्मीर युतै र्दशास्यै वंश्याय सिद्ध सदयुतै र्भषी स्यात् ॥ २७३ ॥

रैकुमुद श्री देवी स्वल्प क्रांता कपोत मल युक्ता,
मलयज कलिता लिप्ता गात्रे वशयेज्जगत सकलं ॥ २७४ ॥

कुमुद (सफेद कमल) श्री (सरल कागोद गंदा विरोजा) देवि (सहदेवी) स्वल्पं क्रांता (कसेरु) कपोल मल (कबूतर की बींट) मलयज चंदन का शरीर पर लेप करने से सम्पूर्ण जगत वश मे होते हैं।

क्षीर वरा लिन्यर्जुन कनकांजलि कृशे हरिणं
मधु गुड़ खारी पुष्पक पक्वानां वश्य कृल्लेप ॥ २७५ ॥

क्षीर (दूध) वरा (त्रिफला) अलिन (शहद), अरजुन धतुरा अंजलि (लजालू) सफेद दिखने वाला शहद गुड़ खारी पुष्पक (सुपारी) को पकाकर लेप करने से वशीकरण होता है।

क्वाथे प्रमितेवारा शिशिरयो सालेश्वरै : भृंगयो:
प्रस्थार्द्धे प्रमिते पृथक् सचुलुक क्षोदे विधिश्टो: पचेत् ॥ २७६ ॥

रात्रीरष्ट पलोन्मिता स्तदनुता छाया विशुष्को तनौ लिप्ता:
सर्व जनानुराग जननं कर्तुं समर्थं परं ॥ २७७ ॥

श्रेष्ट साल और भांगरा को जाडे के मौसम के दिन में प्रस्थ (६४ तोले) के आधे प्रमाण से थोड़ सा शहद डाल कर क्वाथ विधि पूर्वक पकाए और आठ दल (३२ कर्ष) करने पर हल्दी को छाया में सुखाकर शरीर पर लेप करने से सम्पूर्ण पुरुषों से प्रेम उत्पन्न करने में समर्थ होता है।

रुक सिंदूर बचा नाग केशरै : चंद्रा कुसुमै:
ससिद्धार्थै कृतो धूप: स्यात्सर्वजनवश्य कृत ॥ २७८ ॥

रुक (कूठ) सिंदूर वच नाग केशर चंद्र कुसुम (सफेद निसोथ) सफेद सरसों के बनी हुई धूप सब को वश में कर लेती है।

धूपर्द्र मद्र स्तगवर्त्तम नाग चंदन गै: समै:
सिद्धै: कमावृतै: राज दर्शानै पुण्य विक्रय ॥ २७९ ॥

पंच पद्म स्तर पद्मषा पोत कांडक रसेन
परि भाव्या: तिल तैल दीप वर्ति: त्रिभुवन जन मोह कृद्दीप: ॥ २८० ॥

पितं मत्सस्य विष्ठा च कपोतस्य वि चूर्णिते
मूर्द्धिन स्त्रीया: पदे पुंसां यत्रे रंजयेत् परं ॥ २८१ ॥

स्व पंच मल संयुक्तं सर्प मस्तक धूपितं
वस्त्र माल्य विलेपादि वितीर्ण वश्ये ज्जनं ॥ २८२ ॥

कपि सेफ रजो रेतो भवितं कुसुमेर्धितं
आघ्रातं सुरभौ दद्वा भोज्यमित्रं वशीकरं ॥ २८३ ॥

ॐ नमो मोहनीये सुभगे लिलि ठ: ठ:

जम्बानेन कुरंटक शसिरै हिम कांत भुजग केशर वक्रात
निज पंचमलोपेतान् दद्यादन्नादि मिश्रितं वश्यार्थं ॥ २८३ ॥

इस मंत्र से अभिमंत्रित किये हुए कुरटंक (पिथावासा) हिम कांत (कपूर) भुजवा केशर (नाग केशर) वक्र (तगर) और अपने पांचों मलों सहित अन्त आदि में मिलाकर देने से वशीकरण होता है।

तगर मेह मूर्द्धानं गोप कन्यां रुजामपि
दद्यादात्में द्रियो पेतान् स्याद् वश्यं वशीकृती: ॥ २८४ ॥

तगर अहि मूर्द्धिद (सर्प का सर) कोप कन्या (गोप चंदन) रुजा (कूठ) और अपनी इंद्रिय का उपेत (आया हुआ) वीर्य, को देने से अवश्य वशीकरण होता है।

स्वाश्रु वीर्य मला स्त्रग्मि र्भावता रसना श्रुभ:
उन्मत्त स्यान्न पानादिव्या मिश्रं जन वश्य कृत ॥ २८५ ॥

उन्मत्त (धतूरा) की रस्ना (रसमें) अपने आंसू वीर्य मल और रल को भावित करके अन्न पानादि में मिलाकर देने से वशीकरण होता है।

स्वस्य मलेंद्रिय युक्तो मेहन चूर्ण: श्रुभ: कफो थवा
दत्त: साध्यं वशयेदाजीवित मंत्र संभिन्न: ॥ २८६ ॥

अपने मल वीर्य अथवा कफ का चूर्ण देने से साध्य जन्म भर तक मंत्र से वशीभूत की तरह वश में रहता है।

करिमद कुकुट रसना निज नयनजसलिल पंचमल मिश्रं
अशनादि वशी कुर्यात् प्रदत्तम चिरेण साध्य जने ॥ २८७ ॥

स्व वीर्य विजमूत्र मलोदर कृमिश्र जिव्हिका हस्ति मदे विमिश्रि
प्रदीयमानैः रसनादिषु क्षणादनिहशा विश्व वशीकृतिं भवेत् ॥ २८८ ॥

हन्न सित कुष्ट माहिषं मांसोदर जन्म कीट वर तैलैः
भक्ष वितीर्णैरभिमत जन संवननं बुधाः प्राहुः ॥ २८९ ॥

गोरमां मोहिनी जारी केकि चूड़ा कृतांजलिः
दत्ता स्वन्यत भान्न पानादि वशयेन्मल संयुता ॥ २९० ॥

गोरमां मोहिनी (पोदीना) जारी (पुतंजारी = आयमान ममीरन) के कि चूड़ा (मदूरशिखा) कृति (भोजपत्र) अंजलि (लजालू) और अपने मल को मिलाकर देने से वशीकरण करता है।

स्मशान भृंगरजिन मदं पंच मलैर्युतः
प्रदत मन्त पालादि सर्व संवननं मतं ॥ २९१ ॥

श्मशान में उगा हुआ भृंगराज मद (धतूरा) अपने पांचों मलों, अन्न पान आदि में मिलाकर देने से सबका वशीकरण होता है।

स्वकीय क्षतज श्रोत् मलाभ्यामशनादिकं
मिश्रं विश्राणितं नारी नरा नप्या नरोद्वशं ॥ २९२ ॥

नाशय जंघा सितसूर्य विल्व सहकार मूल
कृत चूर्ण जगतां वश कृन्निजां मल पंचको पेतः ॥ २९३ ॥

नाशय जंघा (काक जंघा) सित (सफेद) सूर्य (आक) बिल्व सहकार (आम) की जड़ का किया हुआ चूर्ण अपने पांचों मलों सहित जगत को वश में करता है।

रक्त कपिला रेसा क्षित करवीर रसार्द कृष्ण तिल चूर्णः
भौमोदयेंदु युतो निज मल मिश्रो वशी कुरुते ॥ २९४ ॥

मंगल के उदय होने पर, चंद्रमा के युक्त होने पर, रक्त (लाल) कपिला गाय का दूध और सित (सफेद) केनर के रस में गोले किये हुए काले तिलों के चूर्ण में अपने पांचो मल मिलाकर खिलाने से वशीकरण होता है।

एरंड कनक भक्तक रसेन दिवस त्रयं पृथक् कृष्ण तिल:
त्रेष्यो श्वनी पयोनिज मूत्रेणानंग जय बाण: ॥ २९५ ॥

एरंड धतूरा भक्तक (पकाए हुए चावलों का मांड) में अलग अलग काले तिलों में श्वनी (कुत्ती) का पय (दूध) और अपना मूत्र कामदेव को जीतने के लिए बाण होते हैं।

उन्मत पंच पत्रक त्रिकणं गर सैंधवेन संमिश्रं
मातंग वारि युक्तं तैलं जिमूत्र तो वश्यं ॥ २९६ ॥

उन्मत्त (धतूरा) पंच पत्र (पाँचों पत्ते) त्रिक (त्रिफला) णागर (नागर मोथा) सेंधा नमक को मातंग (हाथी) का वारि (जल) मूत्र सहित तेल और अपने मूत्र का सेवन वशीकरण करता है।

कर मनु दिग क्षि भागाजारी गोराज मोहिनी देव्य:
पिष्ट गुलाज्य नियक्ता निर्दिष्टा वश कृतो जगत: ॥ २९७ ॥

करमनु (करंज) दिगक्षि भाग जारी (त्रायमाण ममीरन) गो राज (गोरोचन) मोहनी (पोदीना) देव्या (सहदेवी) को पीसकर गुड़ और घी में मिलकार सेवन कराने से संसार को वश करने वाला बताया हैं।

रुद्र जटा सितगुंजा लज्जारिका सन्निधाय सर्पास्ये
दिवसै स्त्रि भिरादाय प्रचूर्णय पेया: स्व पंच मलै: ॥ २९८ ॥

गो मय विलिप्त हिलिनी कंदे: परि भाव्य पाचये
द्विधिना चूर्ण मिदं सकले जगदवश्य करं काम वाणाख्यं ॥ २९९ ॥

रुद्रजटा (जटामासी बाल छड़), सफेदचि, हमी, लजालू को तीन दिन तक सर्पास्ये (सर्प के मुख में) रखकर उसके चूर्ण में अपने पांचों मल मिलाकर रखे । फिर उसको गोबर लिपटे हुए हिलिनी कद (लांगली कंद) में विधि पूर्वक पकाए तो यह काम बाण नाम का चूर्ण संसार को वश में करता है।

रक्तकर वीर विकृति द्विज डंडी वारुणी भुजांक्षी
लजरिका गो बंध्यान्येत द्वटिका प्रकृति वहु ॥ ३०० ॥
कटिका भि: सहलवणं प्रक्षिप्य सुभाजने स्व मूत्रेण परिभाव्य:
पंचेत् पश्चातल्लवणमिदं भवन वश कारि ॥ ३०१ ॥

लाल केनर शुद्ध की हुई (ब्रह्म डंडी = उटकराला)वारुणी (मदिरा) भुजं गाक्षी (सर्पाक्षी) लजाल गो वंध्या (गोभी) को बहुत सी गोलियां बनाए , इन गोलियों को एक उत्तम बर्तन में नमक और अपने मूत्र सहित डालकर विधिपूर्वक भावना दिया हुआ यह नमक जगत को वश करने वाला है।

गोरमा सहदेवी सुगंधिका नाग केशरै युंक्तं लवणं
निजमल मिश्रं वश्य करं भोजनं देयं ॥ ३०२ ॥

गोरमां सहदेवी सुगंधिका (नगद बाबची) नाग केशर सहित नमक में अपने मल मिलाकर भोजन में देने से वशीकरण करता है।

विकृति कृतांजलि लज्जा रवि मूल विलिप्र भाजने
क्षिप्रा कपिला गोदधि वश्यं ग्रहणे ष्वां जन्म विदधाति ॥ ३०३ ॥

विकृति (शुद्ध किया हूआ) कृता (भोजपत्र) अंजलि (लजालु) लजवंती अर्क की जड़ को साफ बर्तन में कपिला गाय के दूध में मिलाकर ग्रहण में खिलाने से जन्म भर के लिए वशीकरण होता है।

पित्वोद्गीर्ण क्षीरं पुष्प फलाभ्यंतरे दधि कुर्यात
तद् घृत तत्र फलानि स्युर्वश्याद्यान्नमिश्राणि ॥ ३०४ ॥

दूध फूल और फल को और दही को पीकर उद्गीर्ण (उलटी) किये हुए को एक बर्तन में रख दे उसमें रखे हुए फल को खिलाने से वशीकरण होता है।

तक्रेत्थिन्न समूल तूल कनक क्रोथ श्रितान् क्षीरत:
संजातेन विलिप्य गोत्र मखिलं माषैस्तदुद्वर्त्य ॥ ३०४ ॥

तत क्षिप्रा हेम फले मलं क्षिति गतं मूत्रेण संभावितं
भक्षादोत् वितरेदिदं निगदितं स्त्री पुंस वश्य बुध: ॥ ३०५ ॥

मट्ठे से निकली हुई धतूरे की जड़ और फल के क्वाथ को दूध में मिलाकर अपने शरीर में मले। फिर उसको उड़द की पिष्टी से उतार कर उसमें धतूरे काफल अपना उतरा हुआ मल और मूत्र मिलाकर भोजन आदि में दे तो वह स्त्री और पुरुष दोनो को ही वश में करता है।

भावयेत्क्रमुक क्राथं श्रून्यो दुंबर दुग्धत: स्वुनी दुग्धं
स्व मूत्रेण जन्मांतं वश्य कारीतत् ॥ ३०६ ॥

क्रमुक (सुपारी) के क्राथ को निर्जन स्थान के उदम्बर (गूलर) के दूध में भावना देकर उसमें कुत्ती का दूध और अपना मूत्र मिलाकर पिलावें तो जन्म भर वश में करता है।

पूगं कपित्थ निर्यास भावितं दिवस त्रयं श्रूनो
क्षीरात्म मूत्रेण जन्मान्तं वश्य कृद भवेत् ॥ ३०७ ॥

पूग (सुपारी) को कैथ के रस में तीन दिन तक भावना देकर उसमें कुत्ती का दूध और अपना मूत्र मिलाकर दे तो जन्म भर वशीकरण करता है।

विष मुष्टिक कनक हलिनि पिशाचिका चूर्णमंबु देह भवं
उन्मत्तक भांग गतं क्रमुक फलं तद्वशी कुरुते ॥ ३०८ ॥

विष मुष्टि (कुचला) कनक (धतूरा) हलिनां (कलिहारी) पिशाचिका के चूर्ण और अंबु देह भव (कमल का रस) को उन्मत्त (धतूरे) के बर्तन में रखी हुई सुपारी वशीकरण करती है।

मश्रुमती नृप जारी देव्यः शरपक्ष सप्तषड्भगा हत्वा
तच्चूर्णं पुन रुन्मत्तक भाजने क्षिप्तः ॥ ३०९ ॥

अश्रुमती (नेत्र जल) पांच भाग नृप (ऋषभक) दो भाग जारी (पुतंजारी = त्रायमाण) सात भाग देवी (सहदेवी) छह भाग को लेकर उनके चूर्ण को उन्मत्त (धतूरे) के बर्तन में डालें।

पूग फला न्यथ तस्मिन् भाव्यानि निधाय मूत्रतः
स्वस्य [illegible] ॥ ३१० ॥

उसमें अपना मूत मिलाकर पूग फल (सुपारी) को भावना दे। इसको देने से यह संसार में काम के अस्त्र और शस्त्र होते हैं।

कृष्ण भुजंग भवके क्रमुक फलानि शुभ दिने निक्षिप्य ततः
गोमय लिप्तं संस्थाटौ एकांत शुभ दिना ॥ ३११ ॥

नान्यादाय दिनै स्त्रिभि रथ कनकज फल पूटे समा स्थाप्य ,
गिरि कर्ण केन्द्र वारुण्य नल हलिन्यागता चूर्णे ॥ ३१२ ॥

मंदार श्रुनी क्षीरैः स्व मूत्र सहितै र्विभावयेत्सदृशः,
कुलिको दय शनिश्चर वारे कनके धनो छाग्नौ ॥ ३१३ ॥

गुंजा सुंगधि का कनक बीज चूर्ण हि कृति तिल तैलैः,
उद्धृ षितानि भाजनविवरेण नंग शस्त्राणि ॥ ३१४ ॥

किसी अच्छे दिन स्वयं मृता अपने आप मरे हुए अहि मुख सर्प के मुंह में क्रमुक फल (सुपारी) डालकर, उसको किसी गोबर से लिपी हुयी एकांत और उत्तम स्थान में रखे। उसको तीन दिन बाद

निकाल कर उसको धतूरे के फल की पुट में रख कर गिरि कर्णिका (कोयल) इंद्रवारुणी (इंद्रायण) अनल (अग्निक) हलिनी (लांगली) के अंगों के चूर्ण में आक का दूध और कुत्ती का दूध और अपना मूत्र की भावना दें । फिर कुलिक के उदय होने पर शनिश्चर वार को धतूरे की और छाणे की आग में गुंजा (चिरमी) सुगंधिका) (नगदबावत्री) धतूरे के बीज का चूर्ण सर्प की कांचली को तिली के तेल में मिलाकर उत्तम बर्तन में रखें तो यह सब काम देव के शस्त्र हैं।

गो वंधिनीद्रं वारूण्यनी धर कर्णिका सुंगिधिनी,
खर कर्णन्यो तेषां चूर्णः सह पूग सकलानि ॥ ३१५ ॥

उन्मत्तक भांड गतान्यात्म स्व मूत्रेण रक्त करवीर,
द्रवरास भिक्षुनी कुच पयसा भाव्यानि तानि पृथक ॥ ३१६ ॥

उन्मत्र बीज गुंजा सुगंधिका का सर्पकृतितिलतैल ,
कनके धनाग्नि संधूपितानि कुसुमास्त्र शस्त्राणि ॥ ३१७ ॥

गो वंदिनी (फूल प्रियंगु) इंद्र वारुणी (इंद्रायण, अवनिधर पर्वत फूल छाडछडीला पर्वतफल) कर्णिका (कनेर) सुंगधिनी (नगद नागनी) खर कर्ण के चूर्ण और सुपारी के टुकड़ो को उन्मत्तक धतूरे) के बर्तन में रखकर, अलग अलग अपने मूत्र में लाल कनेर के रस गधी का दूध और कुत्ती के दूध की भावना देकर, धतूरे के बीज गुंजा सुगंधी का सर्प कांचली तिल का तेल और धतूरे की ईंधन (अग्नि) में डालकर धूप देने से काम देव के अस्त्र शस्त्र के समान काम करती है।

कनकेंद्र वारुणी नाग सर्पि पाताल गरुडि रूद्र जटा,
चूर्णय तानि क्रमुक फलान्यात्म मलौ विपुल कनक फलैः॥ ३१८ ॥

संभाव्य शुनी दुग्ध युतानि तद धूप धूपतानि,
पुनः जैत्रा स्त्राणि मनोजस्येत्युक्त मंत्र विदो बरै : ॥ ३१९ ॥

धतूरा इंद्रायण नाग केशर घृत पाताल गारूड़े (संपाक्षि) गंधाना कुली) रूद्र जटा (जरामासी) और क्रमुक फल (सुपारी) के चूर्ण में अपने पांचो मल मिलाकर उनको धतूरे की तख्ती पर रखे फिर उसको कुत्ती के दूध में भावना देकर उसकी धूप करने से यह कामदेव के विजयी बाण बनते हैं। ऐसा मंत्र शास्त्र वेत्ताओं ने कहा है।

कनकेंद्र वारुणी स्वर कर्णि गिरि कर्णिका त्रि संख्यानां,
स्फोटन लज्जारिकाणां द्विज दंडीनां बहुर्वटिका ॥ ३२० ॥

माडे निधाय तस्मिन पृथक पृथक लवण सर्षप श्रुंठी,
धान्या जमोद चूर्णे हरीतकी क्रमुक पिप्पलाः भाव्या ॥ ३२१ ॥

स्वमलै: सम्यक् तद् धूपैर्द्विपितानि पृथक्,
दशकारिकाभिधाना सकल जगद्वश्यकारिण्य: ॥ ३२२ ॥

धतूरा इंद्रायण स्वर कर्णिका का कोयल त्रिसंध्यं (त्रिसंधि पुष्प) स्फोटन (भिलावा) लजालु द्विजदंडी (ब्रह्म डंडी की बहुत सी गोलियां बनावे। इसको बर्तन में रखकर उसमें पृथक पृथक नमक सरसों , सूंठ (धान्य अजमोद का चूर्ण हरडे क्रमुक सुपारी और पीपल डालकर भावना देवे। फिर इनको पृथक पृथक अपने मलो की भावना देकर इसको जगत को वश में करने वाली दस कारिका नाम की धूप बनती है।

ॐ नमो भगवते सूर्य कर्णाय ठ:ठ:॥
त्रिगुणित सहश्र रूप प्रजाप्यतो गज मुखस्य मंत्रोयं,
होम च दशांशांत विहितात् सिद्धि मुपयाति ॥ ३२३ ॥

निज चरणां गुण्टाभ्यां विमर्द्दनं श्रवण मूलयो,
कुर्यात् करिण: प्रजपन्नेनं ततो भवेत् कुंजरो वश्य ॥ ३२४ ॥

यह गणेश का मंत्र तीन हजार जपने से और दशांश हवन से सिद्ध होता हैं। इस मंत्र को जपते हुये अपने पैर के अंगूठे से हाथी के कानों की जड़ को मलने से हाथी वश में आ जाता है।

ॐ गवा मयेन यज्ञेन येन यष्ट कृतु: पुराआनंत्यो देव देवस्य वचनानि पशो: स्मर: स्वाहा

एतेन सप्त वरान्मंत्रेण कृताभि मंत्रणत स्वाहा।
भुक्त्वा भवति तृणादीन वश्या गौ गतिनि: निषूदन: ॥ ३२५ ॥

इस मंत्र से सात बार मंत्रित तिनके आदि के खाने से अत्यंत मारने वाली गाय भी वश में होती है।

ॐ नमो भगवते विष्णव पशूनां पतये ठाठ:
त्रिसहश्र जप्यासिद्ध जपन्नमुं घ्राणपुट मुपादाय
अंगष्ट तर्जनीभ्यां गोन्नमयेत्सा भवेद्वश्या ॥ ३२६ ॥

एवं विधं विधानं विदधीत जपादमु मंत्रस्य
अश्वादिष्वापि शिक्षा विमुखेषु भवंति ते वश्या: ॥ ३२७ ॥

इस मंत्र की तीन हजार जप से सिद्ध करके इसको जपने से अंगूठे और तर्जनी से नाक की पुट को पकड़ने से गोनक्षी भूत होकर वश में हो जाती है। इस मंत्र के जप से यदि विधान अशिक्षित घोड़ों आदि को भी वश में करे, तो वे वश में हो जाते हैं।

यो मंत्रयति गोर्यस्याऽनासिका विवरांतरे
यावज्जीवं भवत्येवसा तस्य वश वर्तिनी ॥ ३२९ ॥

इस मंत्र से जो कोई भी गाय की नाक के छेद में मंत्र जपता है। वह गौ जन्मभर तक उसके वश में रहती है।

वचा सिद्धार्थ मरिच कुष्ट कृमिजिद्दर्जुकैः
छाग मूत्रेण संपिष्टै गौर्वश्यात्क द्रग्भवेत् ॥ ३३० ॥

वच सफेद सरसों काली मिर्च कठ कृमिजित (अगर) और अर्जुक (बावची) को बकरी के मूत्र में पीसकर आंखो में लगाने से गौ वश में हो जाती है।

विशेष प्रयोगश्च लिख्यते इति कथिते वश्य विधौ सर्वो,
मंत्रश्च सर्वयंत्रश्च स्थावर जीवांग कृतं तंत्रं चाहु शुभानि बुधाः॥

यद शुचिभिश्च जीवांगौ वांच्यां मिश्रमन्न भक्षाद्यां तंत्रं
कथितं गुरवास्तदा मंनंत्य शभु देशीयं,
मंत्री शुभं प्रयुज्यादि हो कृत्यां वश्याद्याः॥

शुभा शुभद्यो नैवा शुभं प्रयुज्यात् कुर्याद् श्रभंनदिग्मात्रं,
विन्मूत्रार्तव कुक्षिजंतु मधुभिः श्वादिष्ट खणादिक प्राणद्य
गैरिवी मिश्रतौ उषध गमाद।॥

दुर्वर्ण्यं तंत्रेषु सज्जनैः स्वव्रत शील शौच करूणा मेधा जुगुप्सा
च्युतेविभ्यः त्कुत्सित वश्यं तंत्र निरतं वश्याजनं न स्पृशेत् ॥

इति वश्य विधानं द्वाविंश समुद्दे

इस प्रकार वश्य विधान में सब मंत्र यंत्र में स्थावर जीवों के अंग से बने हुये तंत्रों का वर्णन किया गया है उनको पंडित ने अच्छा कहा है। किन्तु जो चर जीवों के अंगों से मिलाकर खाने आदि के तंत्रों का वर्णन किया गया है, उसको गुरुओं ने अशुभ कहा है। मंत्री को चाहिये कि वह इनमें से केवल शुभ तंत्रों ही का प्रयोग करे अशुभ का कभी भी प्रयोग नहीं करे। व्रत, शील, शौच दया और बुद्धि से युक्त जैन पुरुषों को चाहिये कि वह घृणा सहित विष्ठा मूत्र ऋतुधर्म के रज को खंजतु शहद कुत्ते सर्प वंगर (रगधातु) और प्राणियों के अंगो से मिली जुली औषध वाले निंदित वश्य तंत्रों और वश्य अंजेनों को धर्म से डरता हुआ कभी न करे ।

"इति"

आकर्षण विधान

अथातो वक्ष्यते सिद्धैर्मंत्रयंत्रैश्च योषितां,
आकर्षणं यथा चार्यो रूपदिष्टं पुरातनैः ॥ १ ॥

अब सिद्ध मंत्र और यंत्रों से (योषितां) स्त्रियों के आकर्षण का वर्णन प्राचीन आचार्यों के उपदेश के अनुसार किया जाएगा।

देवादिरादौतदनु श्री बीजं त्रिशरीरकं स्मरबीजैः,
त्रभे माया श्री भेवदष्ट में कु शे: ॥ २ ॥
ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं क्लीं ह्रीं श्रीं क्रों अयमष्टाक्षर कामदेव मंत्रः प्रसिद्धयति एष लक्ष प्रजापाधैराकर्षयति योषितः ॥

आदि में देव (ॐ) फिर श्री (बीज) फिर त्रिशारीरकं (ह्रीं) स्मर बीज (क्लीं) माया (ह्रीं) श्री और आठवां अकुंश बीज (क्रों)- यह आठ अक्षरों वाला कामदेव मंत्र एक लाख जप आदि से सिद्ध होकर स्त्रियों को विशेष रूप से आकर्षित करता है।

नरः स बिंदु प्रथमं वामस्तुदतु स्तादशः,
ततो बीजं त्रिमूर्त्याख्यं स्तं वेर मवशी कृतिः ॥ ३ ॥
सांगो लक्ष जपात्सिद्धो मंत्रो गौर्याधि देवतः
सर्व सिद्धिं ददात्येष: स्त्री नराकर्षणादिकं ॥ ४ ॥

बिन्दु सहित वर (हं) वाम (ॐ) फिर यह त्रिमूर्ति (ह्रीं) नाम का बीज यह वर्ण करण करते हैं। यह गौरी देवी का मंत्र अंग सहित एक लाख जपने से सिद्ध होता है तथा स्त्रियों के आकर्षण आदि की सब सिद्धियाँ देता है।

ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अस्त्राय फट अंगाणि,
षट्कोणेषुच विनयं मध्ये र्यूं नाम संयुतं,
लेख्यं वाह्य स्वर हंकारं तद्रान वह्याक्षरै वेष्टयं ॥ ५ ॥
कुकुंम गोरोचनया तांबूल रसेन ताम्रमय पत्रो,
परिलिख्य दीप दहनादीप्सित नारी समानयति ॥ ६ ॥

षटकोण चक्र के छहों कोणों में विनय (ॐ) लिखकर उसके बीच में नाम सहित र्यूं लिखे। उसके बाहर स्वर और हकार लिखकर उसको गजवश करण अक्षर क्रों से वेष्टित करे। इस यंत्र को तांबे के पत्र पर केसर गोरोचन और तांबूल के रस से लिखकर दीपक पर तपाने से इच्छित स्त्री का आकर्षण करता है।

यूं बीजं लिख वह्नि संपुट पुरेषट्कोण मध्ये तथा
नाम्ना सांतरितं विलिख्यं यपरं पिंड समंतादहिः
कृत्वा मृतिकया चतुष्पथ नृप द्वारादि संभूतया
स्त्री रूपं पर भूर्जके विलिखितं यंत्रं हृदि स्थापयेत् ॥७॥

त्रिकोण कुंडोपरितां विवर्तयेत तिलाज्य धान्यैः,
लवणाज्य दुग्धौः खदिराग्नि मध्येजुहुयात् त्रिरात्रं
स्व वांछिता मानयतीह नारीं। ॥८॥

अग्नि मंडल के संपुट के छहों कोण में यूं बीज लिखकर, मध्य में भी इसी बीज को नाम सहित लिखे। फिर चारों तरफ यपर पिंड र्‌म्ल्व्र्यूं से वेष्टित करे। फिर वांछित स्त्री के रूप को (मूर्ति) को चतुष्पथ (चौराहे) या नृप द्वारा (राज द्वार) की मिट्टी से बनाकर और इस यंत्र को भोजपत्र पर लिखकर उस मूर्ति के हृदय में रख दे। फिर तीन रात तक त्रिकोण होम कुंड में तिल आज्य (घृत) धान्य नमक और दूध की खादिर (खेर) वृक्ष की अग्नि में आहूतियाँ देकर होम करे , और उस कुंड पर उस मूर्ति को घुमावे तो अपनी इच्छित स्त्री का आकर्षण होता है।

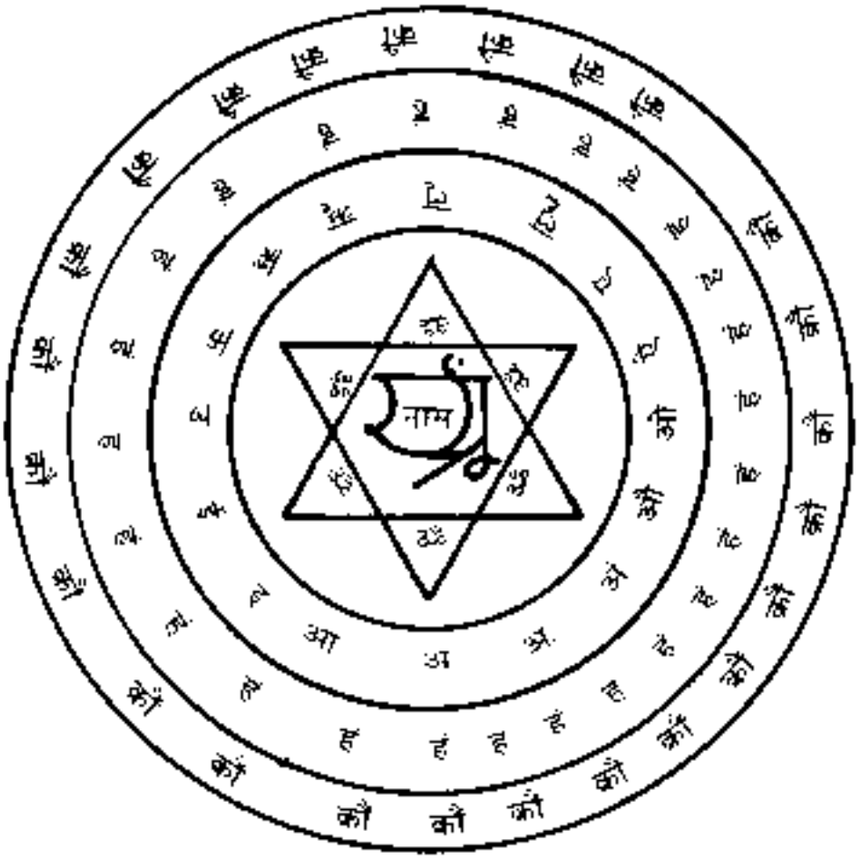

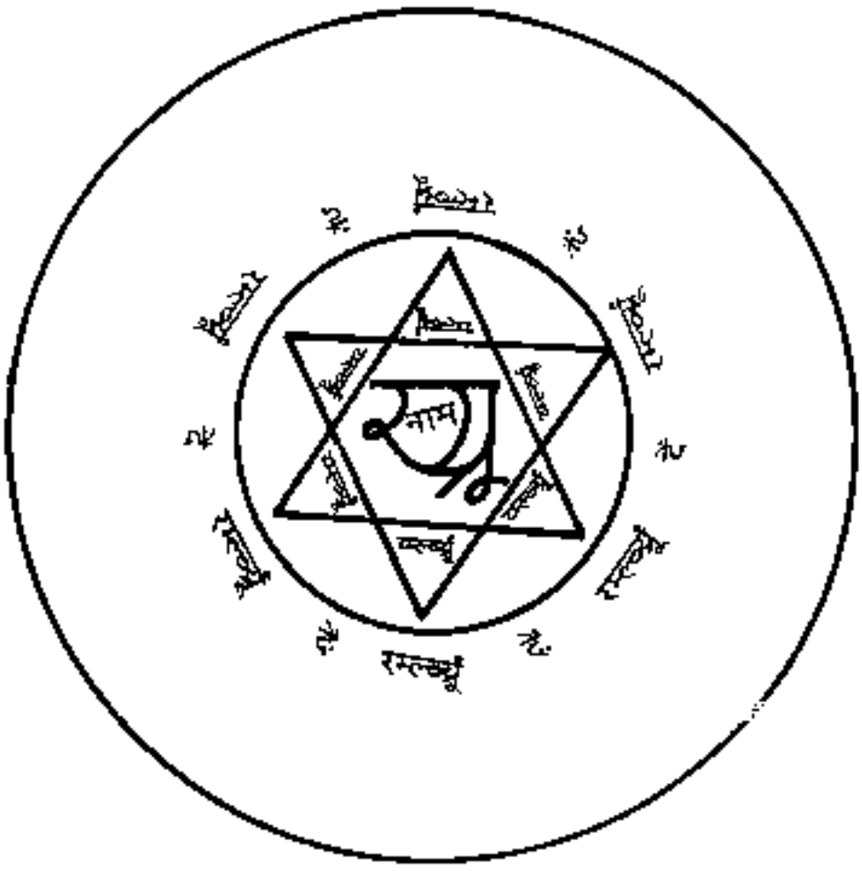

हां हीं सुवीजदिक पंच वर्णोरोकार पूर्वं स्वबीषडंते
करोतु नाम ग्रहणेन होमं संध्यासु तद्गेह मुखोपविष्टः ॥ ९ ॥

हां हीं हूं हौं हः इन पांच बीजों को आदि में ॐ और अंत में संवौषट् लगाकर स्त्री का नाम लगाकर संध्या के समय उसके घर की तरफ मुख किये हुये बैठकर होम करे।

ॐ हीं हीं हूं हौं हः अमुकं आकर्षय आकर्षय संवोषट्
मांतं नाम युतं द्विरेफ सहितं बाह्ये कला वेष्टितं,
तद्बाह्येऽग्नि मुरत्पुरं विलिखितं ताम्बूल पत्रोदरे, ॥ १० ॥

लेखिन्या पर पुष्ट कंटकतु चार्क क्षीर राजी प्लुत
तप्तदीप शिखाग्नि त्रिदिवसेरंभा मपिहानयेत् ॥ ११ ॥

नाम सहित मांत (य) को दो रेफ (र) सहित करके उसके बाहर कला (१६) स्वर वेष्टित करे उसके बाहर अग्निमंडल और मुरत्पुर (वायुमंडल) बनावे, इसे तांबूल पत्र पर आक के दूध और राई के तैल से, पुष्टि असंगध के कांटे (कलम) से लिखकर यदि तीन दिन तर क्षपक की शिखा की अग्नि पर तपावे तो रंभा (अप्सरा) को भी खींच लावे।

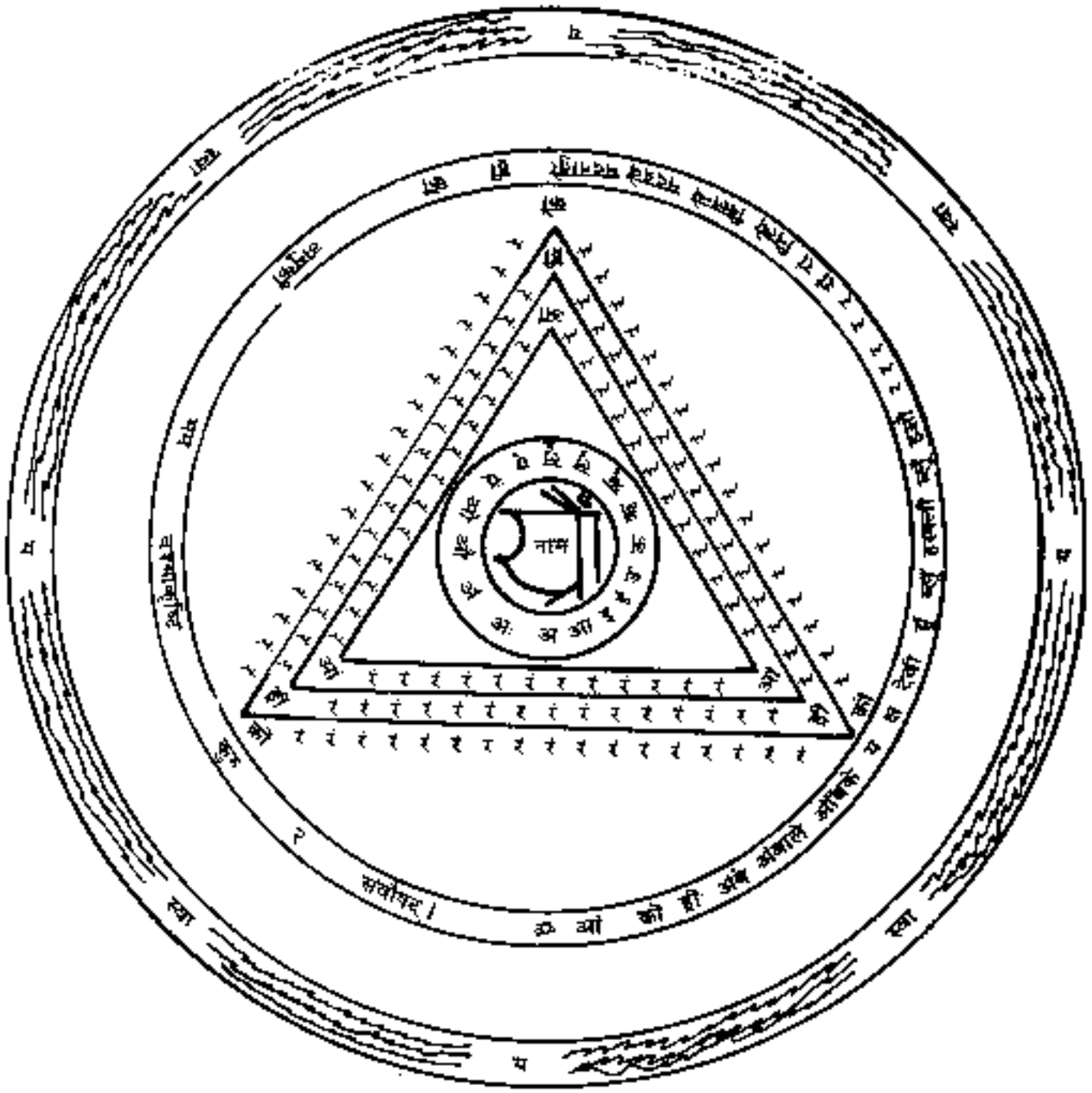

रेफ द्वयेन सहितं लिख मांत युग्मं षष्ट स्वरं स्वरं,
चतुर्दशं विंदु युक्तं बाह्ये त्रिवह्नि पुरमा विलिखेत्त दंते
पाश त्रिमूर्तिं गजवश करैश्चवेष्पं ॥ १२ ॥

पुरंहिरण्य रेतसा विलिखव्य तद्वहिः पुनः करोतु,
मंत्र वेष्टितं ततो अग्निवायुमंडलं ॥ १२ ॥

ॐ आं क्रों ह्रीं अंबे अंबाले अंबिके यक्ष देवि यूं ब्लूं ह्स्क्ली ब्लूं ह्सौ रः रः रः रः रां रां नित्योक्लिन्ने मद द्रवे मदनातुरे ह्रीं क्रों अमुकीं मम वश्या कृष्टिं कुरु कुरु संवोषट्।

तत्तांबूल रसेन कनक रस ब्रह्मादिभि,
संयुता प्रेता वासऊ खप्परप्रोधिलिखेत्ताम्र मय पत्रे
अथवा अंगारैः खदिरोद्भवे: प्रतिदिनं संध्यासु,
संतापयेत्सप्तहैं वंनितां मनोभिलषिता मंत्रा दृटाद्वानयेत् ॥ १३ ॥

दो रेफ सहित दो मांत (य) को छटे स्वर (ॐ) और चौदहवें स्वर (औ) और विन्दु (अनुस्वार) सहित लिखकर उसके बाहर तीन अग्नि मंडल लिखे, उसके अंदर पाश (आं) त्रिमूर्ति) ह्रीं) और गजवश कर अक्षर (क्रौं) से वेष्टित करे। अग्निमंडल) (हिरण्यरेतस) के पश्चात् मंत्र से वेष्टित करे फिर अग्निमंडल और वायुमंडल बनावे। इस यंत्र को तांबूल (पान) के रस से धतूरे के रस से ब्रह्म (पलाश) के रस से श्मशान के या खपर ताम्रपत्र पर लिखकर प्रतिदिन संध्या के समय खदिर (खेर) के अंगारो (कोयले) पर तपाने से इच्छित स्त्री का एक सप्ताह के अंदर आकर्षण होता है।

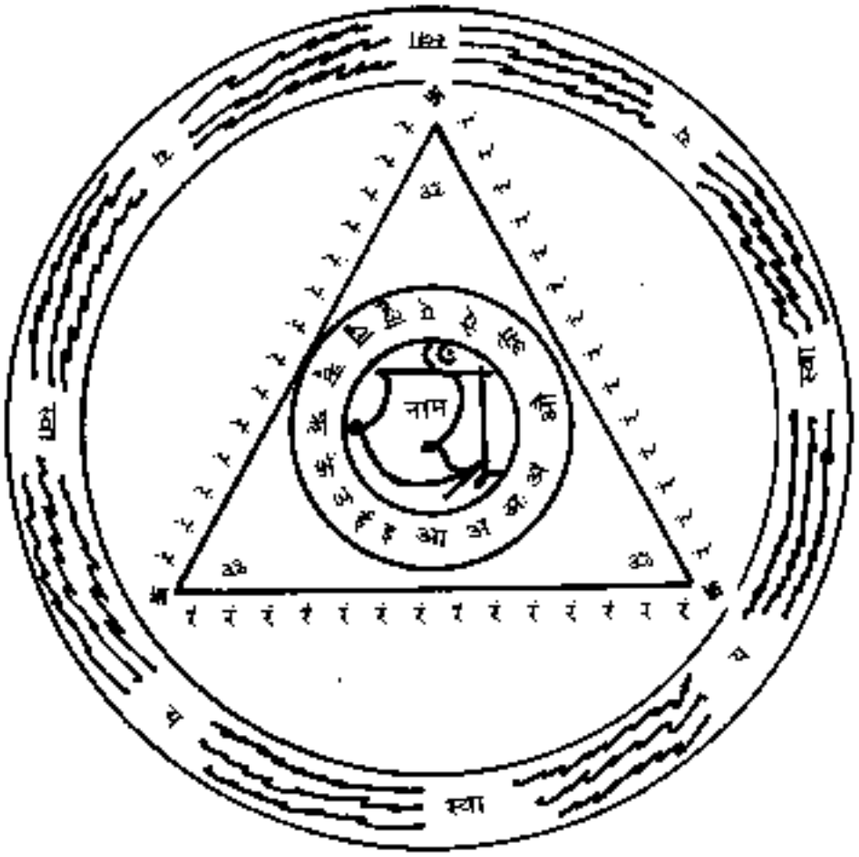

मातं रेफ द्वय षट् चतुर्दश कलान्वितं विंदु वंह्नि।
पुरस्यांतरं विलिखेत् पाशांकुश माये ॥ ३ ॥

गज वृषभदंत सरिदुभय नीर वल्मीक चक्री कर मृत्सनां ।
कृत्वा वनितांग मलैः स्त्री रूपं सिक्थे स्तेन समं ॥ ४ ॥

सुरभि द्रव्यै र्भूज्जें विलिख्यं ताग्निक्षेपे चतत हृदये।
शिखि कुंडाज्या स्त्येक तस्योपरि वंध्योदेक ॥ ५ ॥

सिद्धालयस्थ खर्पर युग्मे प्रविलिख्य नाम युत यंत्रं
कुंडस्थ रूपपार्श्व स्थितये संस्थापये त्पश्चात् ॥ ६ ॥

बहुभि र्धान्यः रसप सहित सृतैर्होमरेत स्वकाम युतैः।
पात्रै रिष्टाकृष्टिर्यक्षी मंत्रेण वाद्वन्यात् ॥ ७ ॥

ॐ आं क्रों ह्रीं अंबालिके यक्ष देवी यूं ब्लें ह्रीं ब्लें ह्रीं ब्लें र र र रसां रां नित्यं क्लिन्ने मद द्रवे मनातुरे अमुकीं माकर्षय माकर्षय ह्रीं संवौषट्।

दो रेफ (र) संहित छठी और चौदहवी कला(ॐ) औ तथा बिन्दु (अनुस्वार) सहित दो मांत (दो य) लिखकर अग्नि मंडल के पश्चात पाश (आं) अंकुश (क्रों) माया (ह्रीं) को लिखे हाथी दांत, बेल के दांत, नदी के दोनों किनारे की मिट्टी वल्मीकि (सर्प की बांबी) चक्रकर (कुम्हार) के हाथ की मृत्सना (मिट्टी) और स्त्री के अंग के मलों औकर सिकथक (मोम) से स्त्री का रूप सब बराबर लेकर बनावे। इस यंत्र को सुगंधित द्रव्यों से भोजपत्र पर लिखकर एक यंत्र उसके हृदय एक अग्नि कुंड के नीचे और एक उस मूर्ति के ऊपर बांध दें। सिद्धालय (श्मशान) में पड़े हुए खपरों नाम सहित यंत्रों को लिखकर होमकुंड के दोनों पार्श्व (बगल) तरफ में इनकी स्थापना कर देवे। बहुत से धान्य सरसों नमक और घत का अपने नाम सहित यक्षी मंत्र से होम करे तो अपनी स्त्री इच्छित का आकर्षण होता है।

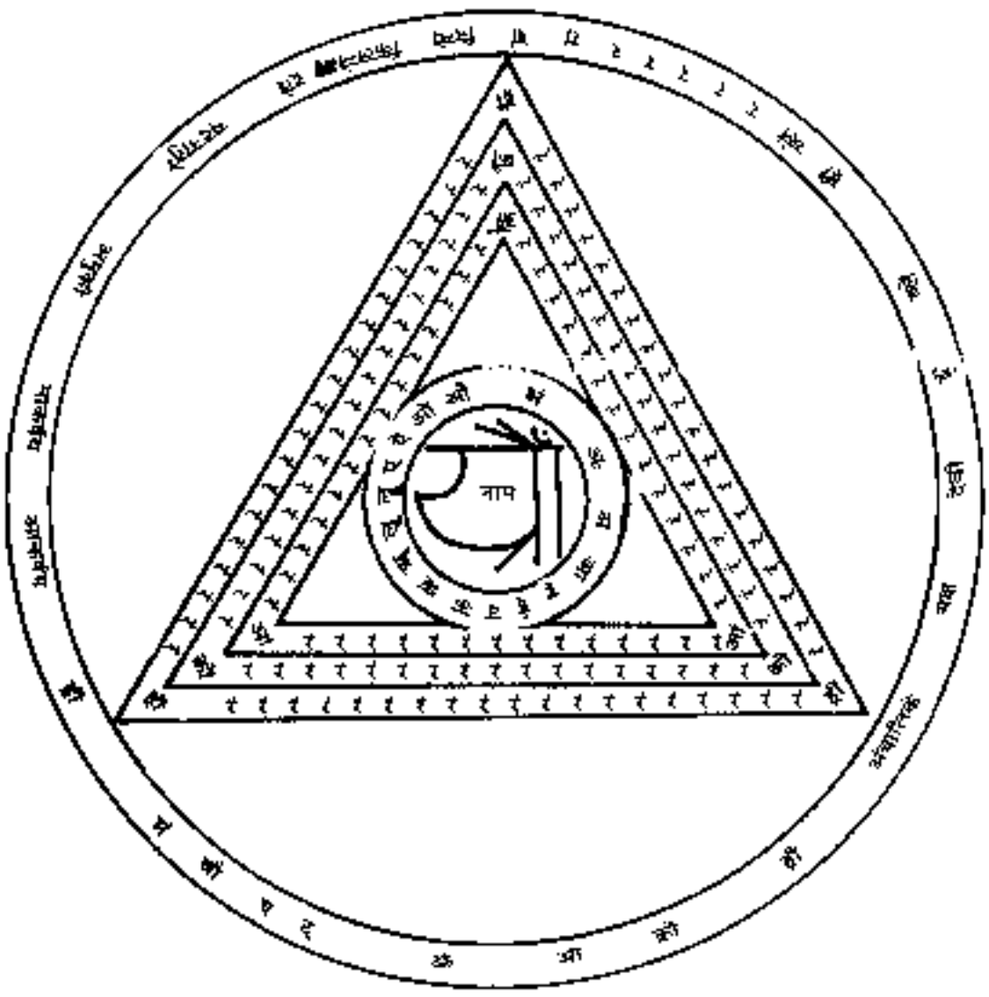

द्वरेफ युक्तं लिख मांत मुग्मं षष्टं स्वरौ कारयुतं,
स विंदु स्वरा वृतं पंच पुराणि वह्ने रेफात् क्रमाकों
मथ ह्रीं त्रिकोरो (ब्लेंकार रूद्धं चततो) ह्स्कलीं ब्लूं
कार रूद्धं च ह्सौं तथैव, क्रमेण दिक्षुतिस्रुषुचां बिकाया
मंत्रं वहिर्विहि मुखपुरं च ॥ १४ ॥

ॐ आं क्रों ह्रीं नमो अंबे अंबाले अंबिके यक्ष देवियूं ब्लें ह्स्क्लीं ब्लें ह्सौं र र र र र
सं रां नित्ये क्लिन्ने मद द्रवे मदनातुरे ह्रीं क्रों अमुकी मा कर्षय कर्षय ये ये संवोषट ॥

इष्टांग नाकर्षण माहुराध्यां धत्तूर तांबूल विषादि लेख्यं
यंत्र पेट खर्पर ताम्र पत्रेदिनत्रये दीपशिखाग्निनप्तं
आकृष्टिमिष्ट प्रमादाजनानां करोति यंत्रं खदिराग्नि तप्तं।

एक मंडल के बीच में ह्रीं बीज नाम सहित लिखकर, उसके बाहर सोलह स्वर लिखे। फिर उसके

चारों तरफ एक के ऊपर एक इस क्रम से त्रिभुज के रूप में पांच अग्निमंडल बनावे। जिनमें बीज (रं) लिखा हुआ हो। उसमें से प्रथम मंडल के तीनों कोणों में क्रों दूसरे तीनों कोणों में ह्रीं बीज लिखें। तीसरे तीनों कोणों में फिर चौथे कोणों में ह्स्क्लीं और पाँचवें तीनों कोनों में ब्लूँ बीज लिखे और ह्सौं बीज भी लिखे। इसके बाहर अंबिका मंत्र लिखे। इसके बाहर अग्नि मंडल और मरुत (वायु) मंडल लिखे। इस यंत्र को ताम्र पत्र पर कपड़े पर या खर्पर पर धतुर पात्र के रस और श्रृंगों विष आदि से लिखे तथा में अमुकी के स्थान में उस स्त्री का नाम लिखे। इसे सात दिन तक दीपक की शिखा की अग्नि पर तपाये जाने से इच्छित स्त्री का आकर्षण करता है ऐसा पूर्वाचार्यों ने कहा है।

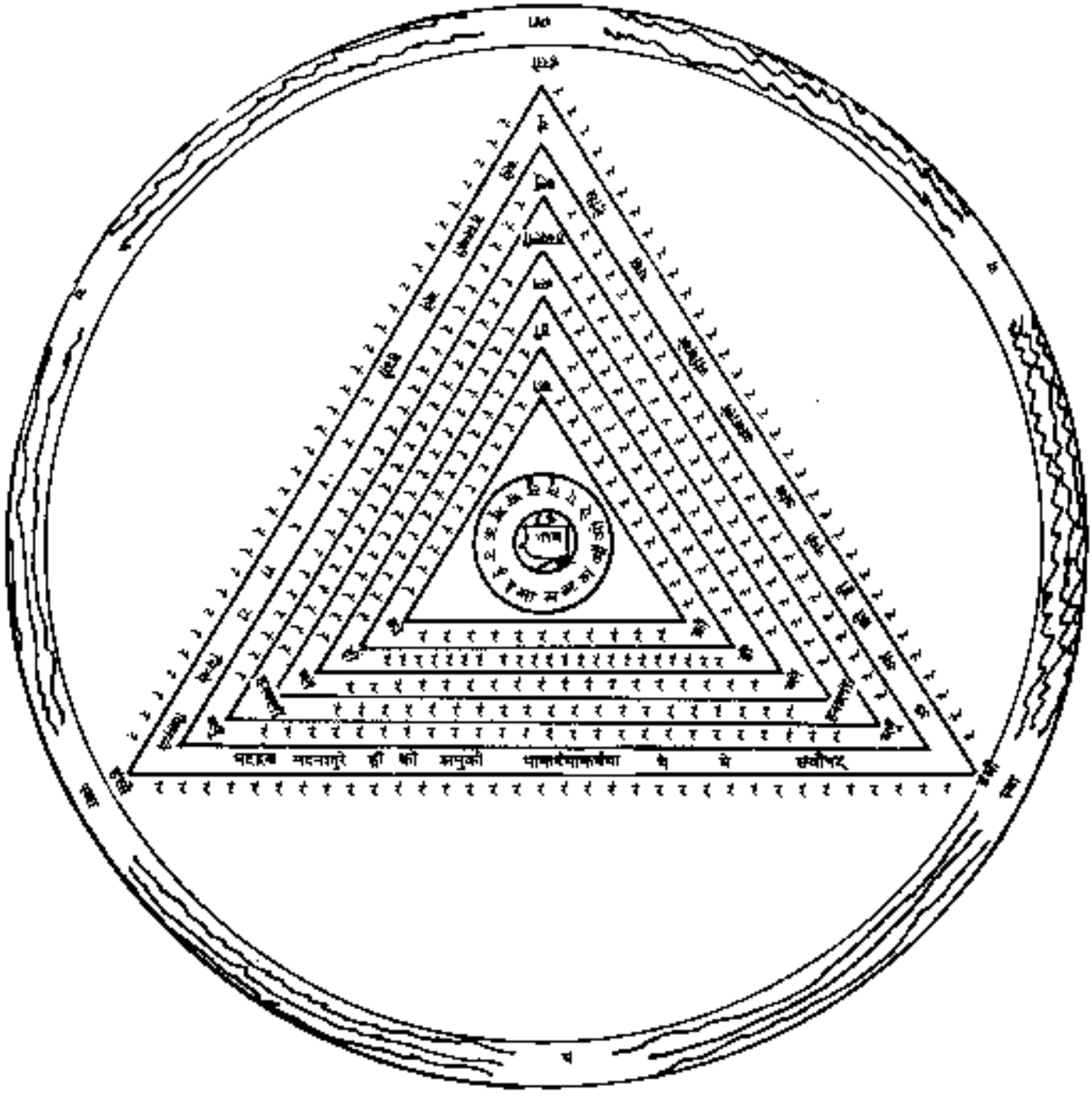

ह्रीं वदने योन्यां ब्लैं ह्रीं ह्स्कीं कंठे स्मराक्षरं
नाभौ हृदये द्विरेफ सहितं हौंकार नाम संयुक्तं
नाभि तले ब्लंकारं वेदादिं मस्तकेच सं विलिखित् ॥ २४ ॥

मस्तके च स्कंध मणिबंध कर्पर धवेषु तत्वं प्रयोक्तव्या
हस्ते तले ह्रूंकारं च संधिषुशाखाषु रोषुक्तेरिफं त्रिपुटित
वह्नि पुर त्रयं मथ तद्बाह्ये प्रदेसस्थं कोष्टेषुभुवननाथं
कोष्टा ग्रांतर निर्विष्टमंडकुशं बीजं
थलयं पदमावत्या मंत्रेण करोतुद्बाह्यै ॥ २५ ॥

ॐ ह्रीं है ह्स्कलीं पदम पदम काटिनी अमुकीं माकर्षय् माकर्षय मम वश्या कृष्टिं कुरू कुरू संयोषट्।

अंकुश रूद्ध कुर्यात् तद्बाह्ये मायया त्रिधा वेष्टनं।
यावक मलयज चंदन काशमीराद्यै रीहे विलिखित् ॥ २६ ॥

वस्त्रे रज स्वलाया: खादिरांगारेण तापयेत्,
धीमान् कुरूतेभिलिखित वनिताकृष्टिं सप्ताह मध्येन ॥ २७ ॥

एक चित्र अपनी इच्छित स्त्री बनाकर उसके मुख में ह्रीं योनि में ब्लें कंठ में ह्स्क्लीं नाभि में क्लीं हृदय में ह्रीं और स्त्री का नाम लिखे। नाभि के नीचे ब्लूं मस्तक और सिर में ॐ लिखे , कंधे कलाई कोहनी कनपटी और पैरों में ह्रीं बीज लिखे। हथेली में ह्रूं हाथ, पांवो के जोड़ अंगुलियों और शेष अंगों में रं लिखे । उसके चारों तरफ तीन वाह्नि पुर (अग्नि मंडल) उस पुतली के बाह्य प्रदेश में बनावे। अग्निमंजल के बाहर ह्रीं कार का मंडल बनाकर क्रों से निरोध करें। इसके बाहर पद्मावती मंत्र से वेष्टित करे। यात्रक (अलक्तक) चंदन लाल चंदन केसर इत्यादि सुगंधित द्रव्यों से रजस्वला स्त्री के वस्त्र पर लिखकर पैर के कोयलों पर बुद्धिमान तपावे तो इच्छित स्त्री सात दिन में आकर्षित होवे।

रविदुग्धादि विलिप्ते युवति कपालेथवा लिखेद्यंत्रं
पुरुषो कृष्टौ च पुनर्न्नकपाले यंत्र में वंद ॥ २८ ॥

अथवा इस यंत्र को आक के दूध आदि से लिपे हुए किसी स्त्री के कापल पर अथवा पुरुष आकर्षण के लिए इस यंत्र को पुरुष कपाल पर लिखे।

चिंतयेद्भुवनाधिपं मदनाऽधिपस्य तेरारूपरि
पार्श्वयो रूभयोस्तव धैवला पिंड मारूण सन्निभं
वभ्रमीति कुलाल चक्र व दर्परति सु मंदिरेक्षिप्त
मेति सुरांगनापि सुरेन्द्र पत्तन मध्यगात ॥ २९ ॥

मदनाधिप (क्लीं) के तुर (वृक्ष) पर भुवनाधिपं (ह्रीं) दोनों पार्श्व में लाल कांति वाले तथा शुत्रुओं के मंदिर में कुमार के चक्र के समान घूमते हुवे एवलपिंड (ल्लें) का ध्यान करने में इन्द्र के नगर में से देवांगना भी शीघ्र से आ जाती है।

ॐ ह्रीं हृत्कमले गजेन्द्र वशगं संवार्ग संधि ष्वपि माया मा विलिख्यते कुच द्वितय
के यूं योनि देशे तथा क्रों कारैः परिवेष्टय मंत्र वलयं ॥

दद्यात् ततो अग्नेः पुरस्ताद्वाहस्त्यो निलमूपुरं
त्रिदिवसा दीपाग्निना कर्षण ॥ २९ ॥

ॐ नमो भगवति कृष्ण मातंगिनी शिला वल्कल कुशम धारिणी किरात् शवरी
सर्वजनमनोहरी सर्वजन वंशकरी ह्रां ह्रीं ह्रू ह्रौं ह्रः अमुकीं माकर्षय
माकर्षय मम वश्यां कृष्टि कुरू कुरू संवोषट्।

एक ताम्र पत्र पर अपनी इष्ट स्त्री का चित्र ऊपर को पैर और नीचे को सिर करके बनावे। उसके हृदय कमल में ॐ ह्रीं, एंग के सब जोड़ो में क्रों, दोनों कुचों में ह्रीं, और योनि प्रदेष में यूं लिखकर उसके चारों तरफ क्रों बीज लिखकर, त्रिभुजयावर्त्त (अग्नि मंडल) बनावे। उसमें उपरोक्त मंत्र लिखकर फिर एक अनिल (वायु मंडलः और एक भूमंडल बनावे जिनमें से प्रथम रं बीज वाला वायु मंडल और तीसरा लं बीजवाला पृथ्वी मंडल होगा तीन दिन तक दीपक की शिखा को अग्नि पर तपावे तो इच्छित स्त्री का आकर्षण होता है।

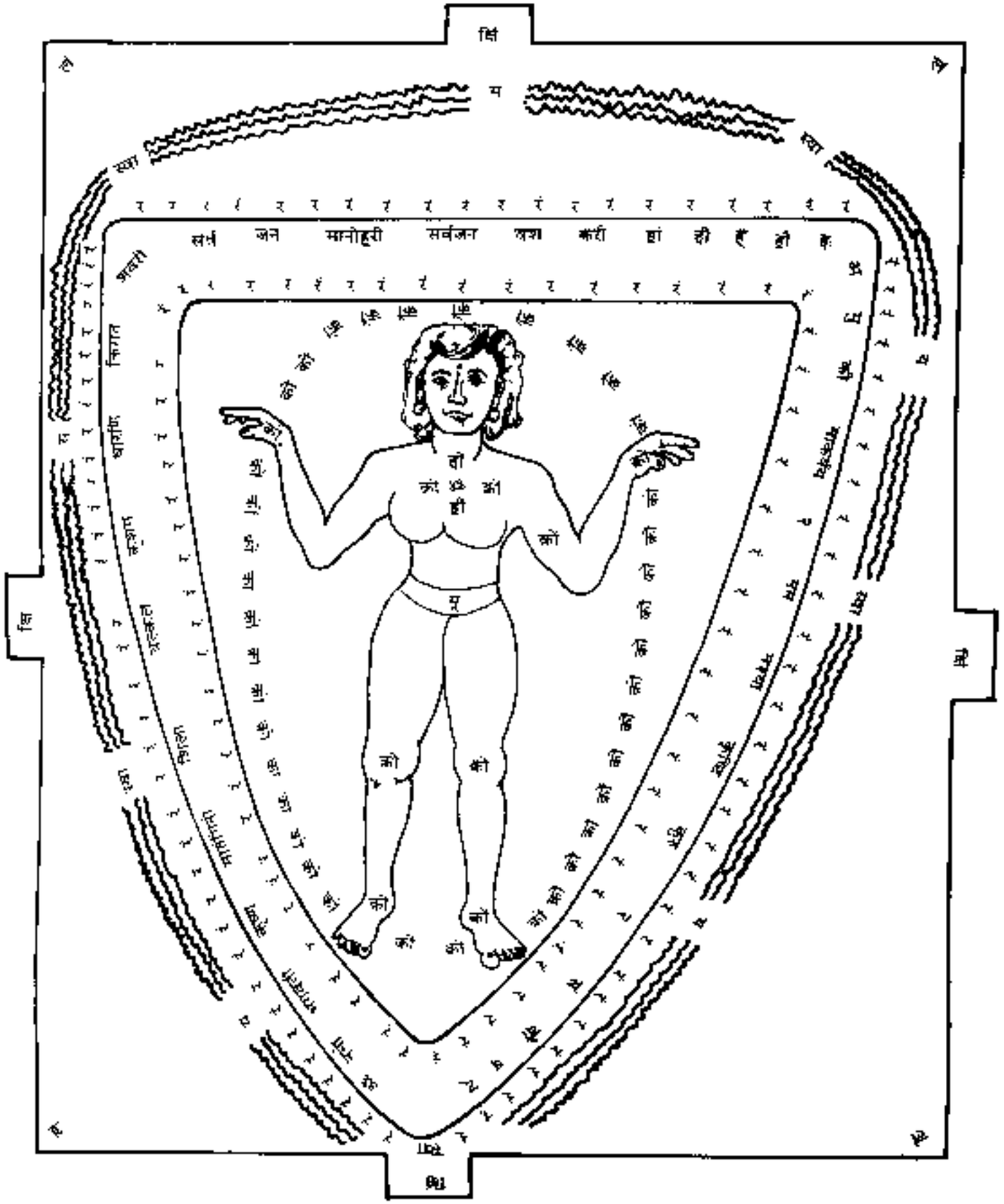
ॐ
ह्रीं
नमो
सर्व जन मनोहरी सर्वजन वश करी ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः
ह्रीं
ह्रीं
ह्रीं

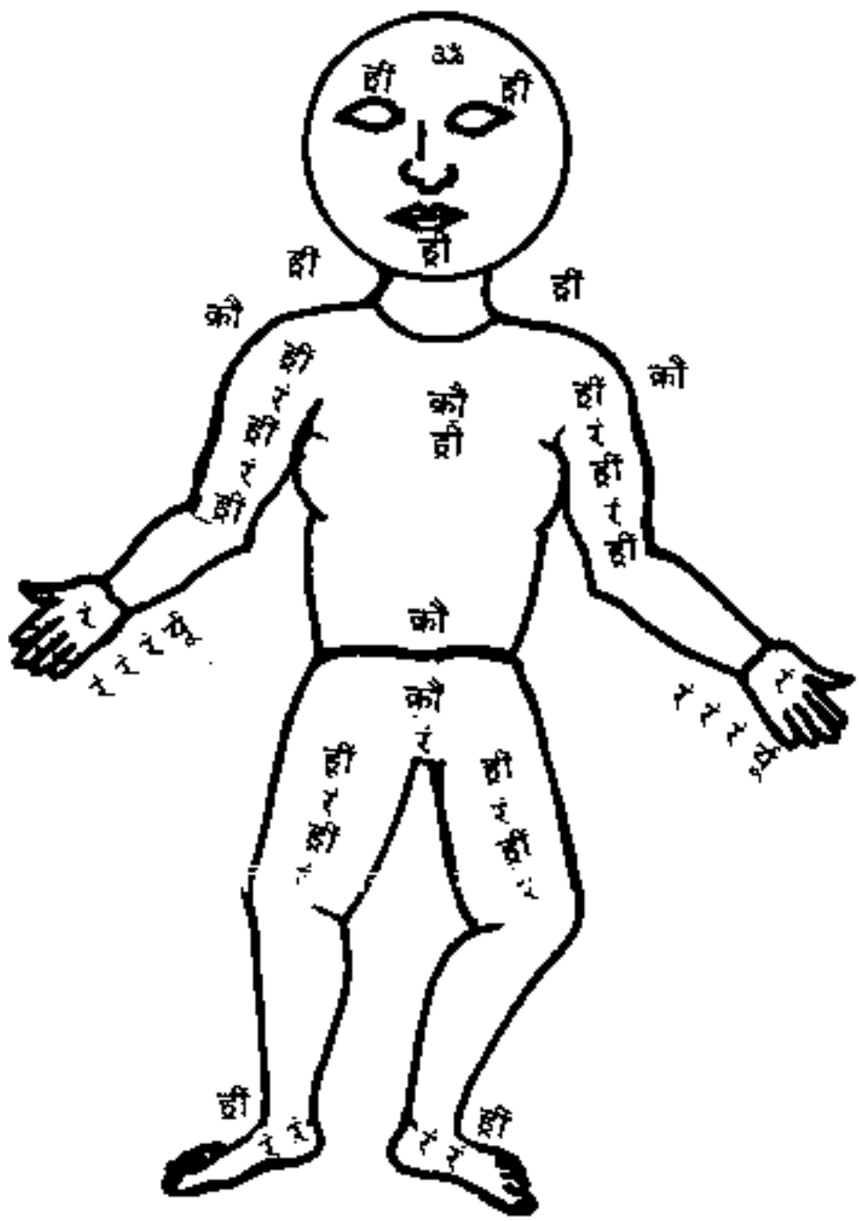
ॐ
ह्रीं
ह्रीं
ह्रीं
ह्रीं
ह्रीं
को
को
ह्रीं
को
ह्रीं
ह्रीं
ह्रीं
ह्रीं
ह्रीं

कृष्णश्वुनकस्य जंघा शल्ये प्रविलिख्य चूर्ण रक्तेन।
खदिरागारे तप्तं सप्ताहादानयत्यं बलां ॥ ३१ ॥
अथवा रजस्वलाया: वस्त्रे संलिख्यं जलज नागन्या:
पुच्छं विधाय वर्त्तिं तहापाजानयत्य बला ॥ ३२ ॥

ॐ कौं ह्रीं क्लीं रं र: अमुकी माकर्षय आकर्षय घे घे मम वश्या कृष्टिं कूरू कुरू संवोषट्॥

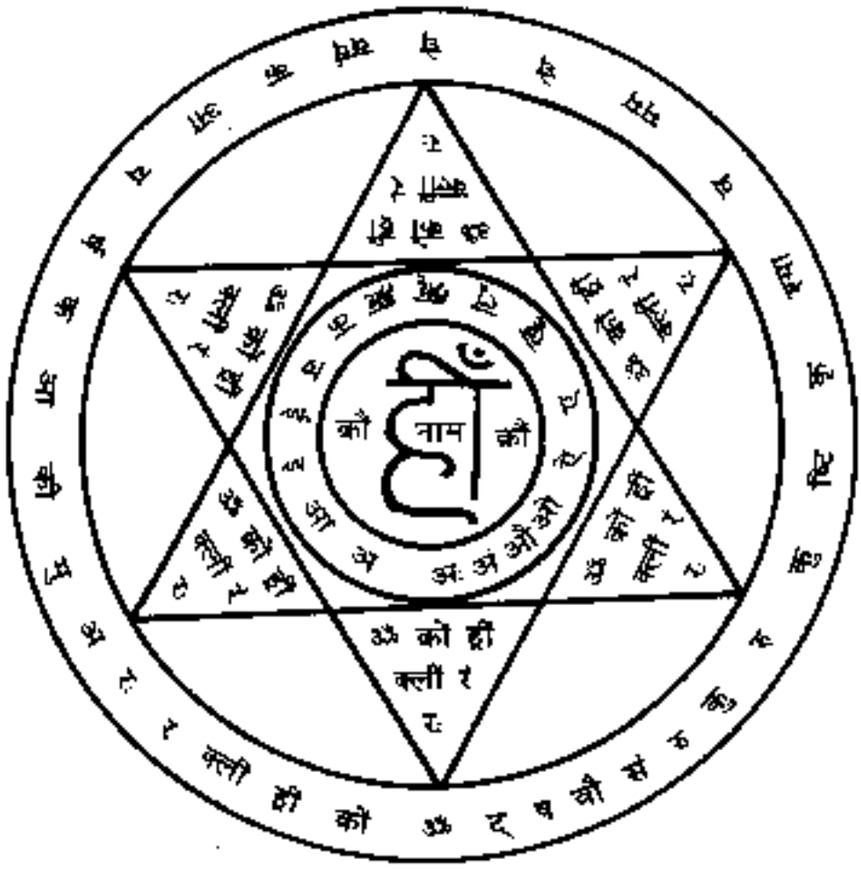

ह्रीं कार मध्ये प्रविलिख्य नाम षटकोण चक्रम,
वहिरात्ति लेख्यं कोणेषु तत्वं त्रिषु चोर्द्ध कोण द्वये पुन:
दूं मधरे लिखे च्च। पाशा कुंशो कोण शिखां तरस्तौ मंत्रोवृतौ
वायु पुरंच वाह्ये। आकृष्टिमिष्ट प्रमदाजनानां करोति यंत्र खदिराग्नि तप्तं ॥ ३३ ॥

ॐ ह्रीं ह्स्क्लीं हंसो आं कौं दूं नित्ये क्लिन्ने मद द्रवे मदनातुरे अमुकी माकर्षय मम वश्या कृष्टिं कुरु कुरु संवौषट्।

तल्लिखे ताम्रपत्रे वा श्मशानो द्रवरवंपरे,
तदंग मल धत्तूर विषांगाराद्य लेपयेत् ॥ ३४ ॥

ह्रीं के बीच में स्त्री का नाम लिखकर उसके बाहर षटकोण बनावे उसके ऊपर त्रिभुज के कोणों में ही ऊपर के दो कोण में ह्रूं और नीचे ॐ लिखे। उसके प्रत्येक कोण के ऊपर आं क्रों लिखे और इन सबको उपरोक्त मंत्र से घेर दें। उसके बाहर वायुमंडल बनावे यह यंत्र खेर की अग्नि से तपाया जाने पर स्त्रियों का आकर्षण करता है।

ॐ ह्रीं हस्त्री हस्त्रौ आं क्रों ह्रूं नित्ये क्लिन्ने मद द्रवे मदनातुरे अमुकी माकर्षय आकर्षय मम वश्या कृष्टिं कुरु कुरु संवोष्ट- ॥

यह यंत्र ताम्रपत्र पर या श्मशान के खर्प्पर पर स्त्री के अंग के मल धतूरा ऋंगी विष और अंगार से लिपा जाना चाहिए।

नाम तत्त्व विगर्भितं वहिरालिखेतत् शिखिमंडले
रेफ मंत्र वृतंश्मशान जखर्परे विलिखेदिदं तापयेत्

खदिराग्नि ना हिम कुकुमादिभि,रादरादनवत्य बलां
वलात् दिन सप्तकं मद विह्वा ॥ ३५ ॥

ॐ नमो भगवित चंड कात्यनि सुभगे युवति जनानामाकर्षय आं क्रों ह्रीं ह्यूं फट् देवदत्ताया हृदयं ये ये देवदत्त का नाम लिखे फिर उसके बाहर अग्नि मंडल बनाये फिर उसको रेकार और मंत्र से वेष्टित करे। इस मंत्र को श्मसान के खर्पर पर कपूर केशर आदि सुगंधित द्रव्यों से लिखकर यदि खादिर (रेवर) की आग पर तपावे तो वह सात दिन के भीतर बहुत आदर से मद से विह्वल होकर स्त्री खींची आती है।

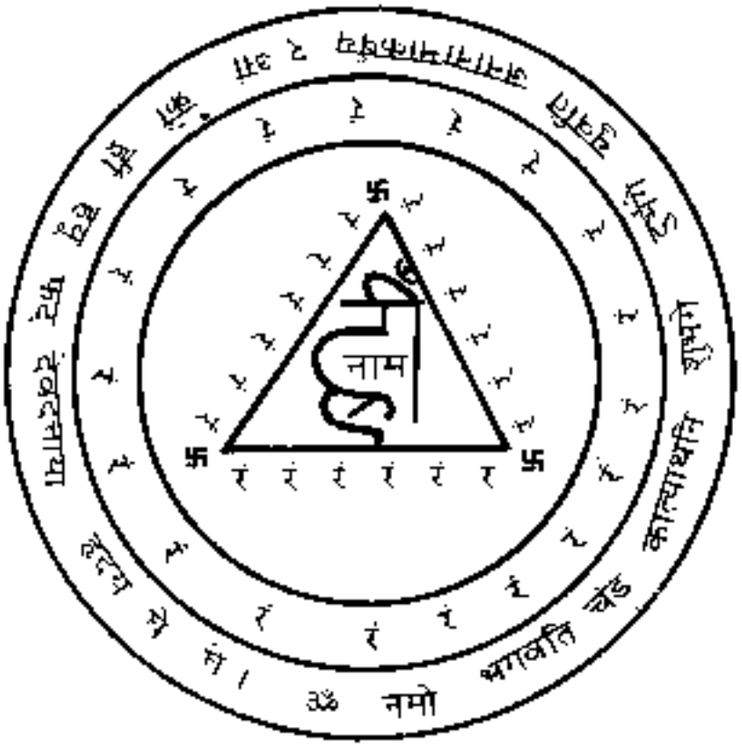

भानुपत्रे कृता साध्य रूपा कृति वंह्नि बीज द्वयेनावृतं,
संपुटं वाम दिग दक्षिणे कूटजं सुंदरं पंचभिः
कोण देश स्थिरं सुंदरं कामराजेन गात्रे हृदि ग्रंथित मंधि युग्म स्थितं
मारूतं चो चते सन्ति तं वोरू हृत कंठे देश स्थितं वारि बीजं सरे जीव रक्षा करः
खदिरांगार तप्तं कृतं भूतले वश्य माकर्षण भाषितं बुधजनैः ॥ ३६ ॥

एक भानु (आक के पत्ते) पर साध्य का सुंदर रूप बनावे उसके बाई तरफ दो अग्नि बीज (रं रं) और दाहिनी तरफ सुंदर पांच कूठाक्षर (क्षां क्षीं क्षूं क्षौं क्षः) कोनें में बनावे उसके हृदय और शरीर के जोड़ों में काम राज (क्लीं) लिखकर दोनों पैरों में वायु बीज यं लिखे उसकी जांघो हृदय और

कंठ में वारि बीज (वं) लिखे उसको रेवर के अंगारो में तपाये जाने से पृथ्वी में हृदय और आकर्षण होता है।

ह्रीं मध्ये स्थित नाम दिक्षु विलिखेत क्रों तद्वि दिक्ष्वाप्यज बाह्यगे
स्वास्तिक लांछितं शिखि पुर रैफै र्वह्निश्चावृतं
तद्वाह्ये त्रिपुरं त्रिमूर्ति वलयं वह्नै पुरं पावनै पिंडै: वेष्टित
मग्नि मंडल मंत स्तेद्वेष्टितं चाकुंशै: ॥ ३७॥

वाह्य पावक (अग्नि मंडल) वलयितं मंत्रेण देव्या
स्ततो वायुना त्रितयेन वेष्टितमिदं यंत्रं जगत्युत्तमं।
श्री खंडागुरू कुकुमाद्र महिषी कर्पूर गोरोचना
कस्तूरादिभिःरूंध भूर्ज्ज लिखितं कु र्यात् सदाकर्षणं ॥ ३८ ॥

ॐ ह्रीं रेफ चतुष्टयं शिखिमति वाणननक्तः पिडं संभूतं, तद् वसु पंचंक ज्वलयुगं तत्प्रज्वल प्रज्वल हूं युग्मंधग युग्मधूं युगलकं धूमांध कारिण्यतः शिघ्रंद्वेहय मुकं वशं कुरू वषट् ॥ देव्या सु मंत्र स्फूट

ॐ ह्री रररर ज्वालाममालिनी ह्रीं क्लीं ब्लूं द्रां द्रीं ह्लव्र्यूं ह्रां ह्रीं हूं ह्रौं ह्रः ज्वल प्रज्वलं प्रज्वल हूं हूँ धन धन घूं घूं धूमांद कारिणी शीघ्र एहि एहि अमुकं वश्यं कूर करू वषट्॥ देव्या मंत्र संपुट उदीची मंत्र

ह्रीं के बीच में स्थित नाम की दिशावों में क्रों और विदिशिाओं में अज (ॐ) लिखे। बाहर स्वास्तिक के चिन्ह वाला अग्नि कामंडल बनाकर रेफ (र) से वेष्टित करे, फिर एक दूसरे अग्निमंडल के बार (त्रिमूर्ति) ह्री का वलय देकर अग्निमंडल बनावे, फिर उसके बाहर वायु (पवनः मंड़ल के पिड़ो से वेष्टित करके अग्नि मंडल बनावे और उसको अंकुश क्रों से वेष्टित करे।

उसके बाहर गोलाकार में अग्नि मंडल बनाकर उसको देवि के मंत्र से वेष्टित करे । इस यंत्र को श्रा खंड अगर कपूर केशर महिषी (औषध) गोरोचन और कस्तूरी आदि से भोजपत्र पर लिखने से यह सदा ही आकर्षण करता है। ॐ ह्रीं चार रेफ (र)(शिखिमति (ज्वाला मालिनी) उसके पास पांच बाण ह्रीं क्लीं ब्लूं द्रां द्री और अनल पिंड़ (अग्निपिंड़ ह्लव्र्यूं) उसके पांच बीजाक्षर ह्राँ ह्रीं हूं ह्रौं ह्रः ज्वल प्रज्वल हूं हूं धग धग घूं घूं घूमांध कारिणी फिर शीघ्र दो बार एहि एहि अमुकं वशं कुरू कुरू वषट् ।

यह देविका मंत्र सम्पुट करने का मंत्र है।

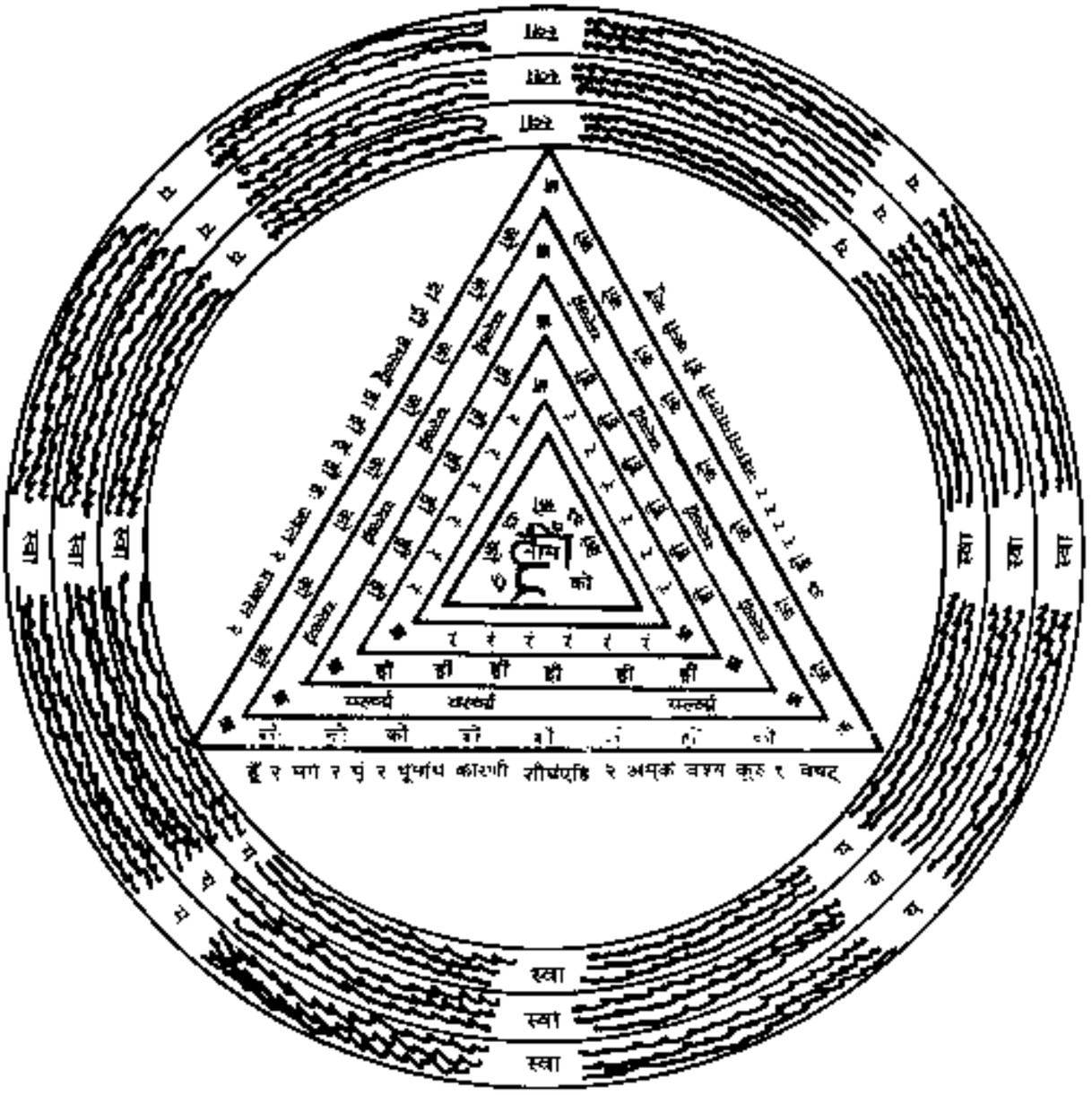

लाक्षायाश्रुं सुसिद्ध मृत्ति कं ति कृत्वा हृदि तयो
यंत्रं स्थापयनाम वर्ण सहितं लाक्षां प्रपूर्यो दरे
भीत्वा योनि ललाटहृत्सपुर पुष्टाख्य सत्कंटकैः ॥ ३९ ॥

रै कां बुश तलै घृतस्य न्यस्य च पशं वन्हाग्नि कुंड़ो परि
लाक्षा गुग्गुल राजि का तिल घृतै पत्रस्थ नामान्वितैः संयुक्तैः
लंवणेन तत्समृति युतः संख्या सुसाष्टं शतं ॥ ३८ ॥

मंत्रेणानल दैवतस्य जुहुया द्वा सप्त रात्रावध
रिंद्राणी मपि चानयेत् क्षिति गत स्त्रिया कर्षणे का कथा

लाख और सिद्ध मिट्टी से स्त्री की द्वौप्रति कृति (पुतली) बनाकर, उसके हृदय में नाम के अक्षरों सहित यंत्र की स्थापना करे। उसके उदर (पेट) में लाख भर देवे- फिर उस मूर्ति की योनि,मस्तक और हृदय को पुर पुष्ट के कांटे से बींधकर एक को अम्बु (जल) में रख देवें और दूसरी को अग्नि के होम कुंड़ में रख देवें । फिर सायंकाल के समय लाख , गूगल, राई काले तिल, घृत और नाम लिखे हुये पत्ते तथा नमक की उस स्त्री के नाम को याद करते हुए अनिल देवता (ज्वालामालिनी) देवी के मंत्र से एक सौ आठ आहूतियां देवे। यदि अनिल (ज्वालामालिनी) देवी के मंत्र में सात रात्रि की अवधि तक होम करे तो इद्राणी को भी पृथ्वी पर खींच कर ला सकता है। फिर भला भूमि पर रहने वाली स्त्री के आकर्षण की क्या बात है।

आलर्क्य सव्य भागा स्तन्य कां गारमर्पितं
नामाग्रौ पथते यस्या: साकर्षे ताम गना क्षणात्॥

जिस नाम के अलर्क्य (सफेद आक) के दूध से बायें हाथ से लिखकर (स्तन्यक) दूध सहित अंगारों पर तपाया जाता है वह स्त्री उसी क्षण खींची चली जाती है।

गुरू प्रसादादधि गम्य सर्वमाकृष्टि तंत्रं
बहुशोप्युपाया एतद विद्यातुं इहो उद्यत:
स्यात् तस्यांगना कर्षण कर्मठत्वं ॥

गुरु की कृपा से जाने हुवे बहुत से उपाय वाले आकर्षण यंत्र जान कर जो इससे बतलाये हुए उपायों को करने के लिए उद्यत होता है वह स्त्रियों के आकर्षण में (चतुर) कर्मठ होता है।

''इति''

ॐ नमः श्री पार्श्वनाथाय: नमः

अतः परं प्रवक्ष्यामि विधानं नार्म कर्मणः,
यत्प्रयोगस्य लोकस्य विस्मयो जायते महान्: ॥ १ ॥

अब नर्मन (हंसी खेल) के कर्म के उस विधान का वर्णन किया जावेगा जिसका प्रयोग करने से लोगों को बड़ा आश्चर्य होता है।

आदौ बलि शब्द युगं महाबली त्यनु ततोग्नि जायाते
त्रि सहस्र जपात् सिद्धेत मंत्रोयं क्षेत्रपालस्य ॥ २ ॥

ॐ बलि बलि महाबलि महाबलि स्वाहा

आदि में दो बार बली फिर महाबली और अंत में अग्नि जाया (स्वाहा) रूप क्षेत्रपाल का मंत्र तीन हजार बार जप से सिद्ध होता है।

मत्तस्य सारमेयस्यां ख्यानात्कृत जपं गृहादीनां,,
द्वार्देश संवेशित मा श्रुभवेत ताल विवरण कृत ॥ ३ ॥

इस मंत्र को पागल कुत्ते के नाम से जपकर के घर आदि के द्वार में संवेश (सोने) से शीघ्र ही (ताल) विविरणकिसी के आने पर शब्द होता है।

भ्रमि युगलं केशि भ्रमि माते भ्रमिवि भ्रमं
चमुह्य पदं मोहय पूर्व स्वाहा मंत्र्यो प्रणवपूर्व गतः ॥ ४ ॥

ॐ भ्रमि भ्रमि केशि भ्रमि माते भ्रमि विभ्रमं मुहय मोहय स्वाहा

दो बार भ्रमि केशि भ्रमि माते विभ्रमं मोहय मोहय स्वाहा।
दो बार भ्रमि केशि भ्रमिममाते विभ्रमं मुहय पद मोहय और स्वाहा यदि आदि में प्रणव ॐ युक्त मंत्र है।

एतेने लक्षमेकं भूमिमऽसं प्राप्तं सर्ष पै जंप्त्वा
क्षिप्ते गृह दहल्या मऽकाल निंद्रा जनः कुरुते ॥ ५ ॥

इस मंत्र को पृथ्वी पर नहीं गिरी हुई सरसों से एक लाख जप करके, उस सरकों को घर की दहली में डाल देने से घर के आदमी बेखबर सोते रहते हैं।

ॐ शुद्धे शुद्धे रूपे योगिनी महा निद्रे ठःठः

सिद्धयेत् लक्ष जाप्यात् दुर्गा मंत्रेण मंत्रिता : क्षिप्ता:
श्वेत तिला यत्र गृहे स्वीपति जन स्तद्गात: संतत ॥ ६ ॥

इस दुर्गा मंत्र को एक लाख जप से सिद्ध करके इससे अभिमंत्रित सफेद तिलों को जिसके घर में डाले जाते हैं। उसके घर वाले निरकंर सोते रहते हैं।

ॐ काल दडीं खोई ॐ काल दंडी फट ठ:ठ:
सहश्राष्ठ जाप्येन मंत्र एष: प्रसिद्धयति।
कृष्णाष्टम्या:प्रभृत्येन प्रजेपन्मंत्रं मा कूहे ॥ ७ ॥

यह मंत्र आठ हजार जप से सिद्ध होता है। इसको कृष्ण अष्टमी से अमावास तक जपे।

यंत्र ऽमानस्यायां मंत्रस्य जप: प्रयाति निष्ठानां।
तस्यां वर्त्तुलमंडलं मध्येन्यस्यार्चित चषकं ॥ ८ ॥

अमावस्या को मंत्र का जप समाप्त होने पर एक गोल मंडल के बीच में रखकर चषक (शराब के बर्तन की पूजा करे।

निर्याति मंडला तत् यावत् तावत् जपेष्यत: मंत्रं,
इच्छं सिद्धेत ततः कुर्यात् चषक क्रियां मंत्री ॥ ९ ॥

जब तक इस मंत्र को जपता रहे तब तक मंडल में से नहीं निकले इस प्रकार मंत्र को सिद्ध होने पर मंत्री चषक क्रिया करे।

चोर पकड़ने का मंत्र

ॐ नील कंठ श्री कंठ अमर भ्रमर छत्र धर पिंगलाक्षि काम रूपी आमरण्य वासी निरोवर्द्दर ठ:ठ: ॥

काली मंत्रोयं दश सहस्र रूप प्रजाप्यत: सिद्धैत,
चोर पर ज्ञानादि वषनेनं चषक क्रियां कुर्य्यतिष्व ॥ १० ॥

यह काली मंत्र दस हजार जप से सिद्ध होता है। चोर इत्यादि को पहचानने में इससे चषक क्रिया करे

संदिग्ध नाम वर्णन विलिख्य पत्रे विदर्भितानमुना
अग्नौ प्रदैहत्पत्रं तचोराख्यान दह्यते ॥ ११ ॥

संदेह वाले नाम के वर्ण अक्षरों को इस मंत्र से विदर्भि करके पत्ते पर लिखकर उसे अग्नि में तपाये तो चोर का नाम नहीं जलेगा।

पिश्रुनयति नाम चौरं क्षीर तरू क्षीर विलिखितं
पाणि तले परिमर्दनेन मलिनं साशंकित नाम दग्ध भूर्जमयः॥ १२॥

संदिग्ध (संदेहवाले) नाम को भोजपत्र पर लिखकर हाथ पर रखकर क्षीर वृक्ष (आक) के दूध से लिखे यदि वह पाणी (हस्थ) से मलने पर मैला हो जावे तो चोर निश्चय से छूटा है।

आलिख्य वैपरित्येन मला भूर्जदले तनौ,
वाचयेन्नाम चोरस्य निगूठमपिष्टतः ॥ १३॥

नये भोज पत्र पर उल्टा लिखा हुआ चोर का नाम (निगूठ) छुपा होने पर भी जल में अथवा दर्पण में पढ़ा जा सकता है।

लिखितं नाम चोरस्य भूर्जकेवैपरित्यतः,
सं क्रांति प्रीति में तोये वाचयेन्मु करेः थवा ॥ १४॥

भोजपत्र पर उल्टा लिखा हुआ चोर का नाम संक्राति समान तोय (जल) में अथवा मुकर (दर्पण)में पढ़ा जा सकता है।

दुग्ध नाशक योग

स बिन्दु वींप्सिता वृदिध जायांता पंचमी कला
सिद्धै लंक्ष जपात् एष मंत्रोरूद्धाधिदेवतः ॥ १५॥

बिन्दु सहित ऊवी (पृथ्वी अक्षर) ईप्सत (इच्छित) वन्हि जायांला (स्वाहा) पांचवी कला (३) सहित यह रुद्र देवता का मंत्र एक लाख जाप से सिद्ध होता है।

रोहिण्यां निरवान गोष्ट स्थाने गोर्रस्थि मंत्रितं।
मंत्रेण अनेन तत्रस्याद्रवां क्षीरपरिक्षयः ॥ १६॥

यदि गाय की हड्डी को इस मंत्र से मंत्रित करके रोहिणी नक्षत्र में गायों के स्थान में गाड़ दी जाये तो गायों का दूध सूख जाता है।

मंत्रश्च भावेयति स्वाहांतो वह्नि देवतः।
पुरश्चरणमेतस्य जपो लक्षं प्रकीर्तितं ॥ १७॥

भावय स्वाहा यह अग्नि देवता का मंत्र एक लाख जप के पुरश्चरण करने से सिद्ध होता है।

निरषन द्वादरं किलं स्वाती मंत्रेण मंत्रितं,
अनेन चक्रिणे गेहे भवेत् तैलपरिक्षयः ॥ १८॥

स्वाति नक्षत्र में इस मंत्र से मंत्रित वांदर (कपास के पेड़) कील (लकड़ी) को चक्रिए (तैली) के घर में गाड़े तो तैल नष्ट हो जाता है।

सर युगलं वेश्वानर वल्लभा मनु सोयं,
वैश्वानरस्य सिद्धं प्रयाति लक्ष प्रजाप्येन ॥ १९ ॥

दो बार सर फिर वैश्वानर वल्लभा (स्वाहा) यह वैश्ववानर मंत्र एक लाख जप से सिद्ध होता है।
(सर सर वैश्वानर स्वाहा)

हस्तर्क्षे पंचागुलर्मभिमंत्रयै तैन सर्जतरू कीलं,
निखनेत् कुलाल वेश्मनि भांडानां नाशनं भवति ॥ २० ॥

यदि हस्त नक्षत्र में सर्ज तरू (शाल वृक्ष) की कील को इस मंत्र (सर सर वैश्वानर स्वाहा) से मंत्रित करके कुलल (कुम्हार) के वेशमन(घर) में गाड़े तो उसके बर्तन फूट जाते हैं।

बलि निष्परिपूर्णहु ढं ढं वरूण दैवत: मंत्रोयं
सिद्धं मायाति लक्ष्य रूप्य प्रजाप्यत: ॥ २१ ॥

बलि के आगे पूर्णेदुं (ठ) और वरूण देवत: यह मंत्र एक लाख जप से सिद्ध होता है।

अष्टांगलुं भृगु दिने मंत्रेणनेन वदर संकीलं
निखनेत् ज्जालिक वेश्मनि मत्स्यास्तेन्नैभं लभ्यते ॥ २२ ॥

भृगु वार (शुक्रवार) के दिन आठ अंगुल लम्बे बंदर (बोर) की लकड़ी को कील को इस मंत्र से अभिमंत्रित करके यदि (जालिक) मछुवे के घर में गाड़ दे तो उसतो मछली नहीं मिलती है।

लिंगे ढं ढं ततो वह्नि वल्लभा लक्ष जापत:
मंत्रोयं सिद्धिमायाति महाकालाधि दैवत: ॥ २३ ॥

दो बार लिंगे और वन्हि वल्लभा (स्वाहा) यह महाकाधि देवता का मंत्र है एक लाख जाप से यह मंत्र सिद्ध होता है। लिंगे लिंगे स्वाहा।

श्मशान कील सचितं कीलमेतेन मंत्रितं।
सुरापणे खनेद्यस्य तत्सुराया: क्षयो भवेत् ॥ २४ ॥

जिस शराब की दुकान में इस मंत्र से मंत्रित श्मशान की कील (हड्डी) गाड़ी जाती है उसकी शराब नष्ट हो जाती है।

मद्ये वकुल वंदाक फलके मद्ये वेश्मनि
न जायेत हता शेष वर्ण गंध रसादिकं ॥ २५ ॥

वकुल (मोलश्री) के वंदाक (बांदा) फल को शराब की दुकान में रखने से शराब की बू नहीं रहती है अगर उसको मद्या नक्षत्र में वहाँ रखा जाए अर्थात् मालश्री के फल या बांदा से शराब की बदबू नष्ट होती है।

सप्ताहं या शिला क्षिप्ता तिक्त को शातिकी फलै,
दृष्टं तस्मिन पुंड्रेण भोज्यं तिक्त रसं भवेत् ॥ २६ ॥

तिक्त कोशात्की (कड़वी तोरई) के फूल से तीक्ष्ण कर एसे शिला (लेबलिल्ल-पत्थर) एक सप्ताह तक रखी जाती है पुंड्रण (गन्ना) और भोजन का द्रव्य का स्वाद देखते ही कड़वा हो जाता है।

अधो पुष्पी लजाल तथा श्वेत च गिरि कर्णिका
मधुकपूर संयुक्तं छिद्रं पश्यति मेदिनी ॥ २७ ॥

अधो पुष्पी लजालू और श्वेत गिरिकर्णिका (सफेद कोयल) शहद और कपूर मिलाकर अंजन करने से उसे पृथ्वी में छेद दिखते हैं अर्थात् भूमि का धन दिखता है।

वल्मीकमऽधो पुष्पीमूलं स्त्री स्तन दुग्धतः पिष्टवा,
जनस्य सामर्थ्यति निधानं पश्यति स्फुटं ॥ २८ ॥

वल्मीक (सर्प के बिल की मट्टी) और अधो पुष्पी को जड़ को स्त्री के स्तनों दे दूध से पीसकर आंखों में अंजन करने से पृथ्वी का खजाना दिखता है।
पाद जातस्यांजनं कुर्यातः पाँव पहले निकले हुए को इसका अंजन कराए।

मद द्वं द्वं तनुत्राणामऽस्त्रं ज्वलनवल्लभा।
लक्ष जाप्या द्वजास्य मंत्रौ सौ सिद्धिमृच्छति, ॥ २९ ॥
एमं दंत मिश्र स्थाने विश्वेद ब्रह्म दिने खनेत्
जप्तं मेतेन मंत्रेण स माद्यो द्वारणः क्षणात् ॥ ३० ॥

मद दो बार तनु त्राणामस्त्रं (कवच हुं) अस्त्र (फट) और ज्वलन वल्लभा (स्वाहा) यह गजस्य मंत्र एक लाख जप से सिद्ध होता है। मंत्र इस प्रकार है।

॥ मद मद हुं फट् स्वाहा ॥

ब्रह्म दिन (शनैश्चर वार) को हाथी के स्थान में इस मंत्र से मंत्रित हाथी दांत को गाड़ने से वह हाथी उसी क्षण मस्त हो जाता है।

चिक्कणि के ईषितरुपा पिशाचिकां सांद्र चितामषि
मथिते नृकपाले मात् ग्रहे कानन कार्पास कृत वृत्यां ॥ ३१ ॥

धार्यां कृष्णाष्टम्यामंजनं मेष्तन्मद्वा धृतोऽद्भूतं तेन
त्रिमूलं मंजनंऽमपि कुर्व्यादेक भीत्यऽर्थ ॥ ३२ ॥

चिक्कणिँक (चिकती सुपारी) इषित रुपा (बहूरुपा = शरट विट) किरकाय की विष्टा, पिशाचि का (कोच का रस) से गीली (आंद्र) चिता मषि (चिता की स्याही अर्थात् कोयले को आदमी के कपाल में मथकर, (मात्र ग्रहे), सात मालाओं के घर में (कानन) बन जंगल के कपास की बत्ती बनाकर कृष्ण पक्ष की अष्टमी को या चतर्दुशी को अंजन (काजल) धारण करके महावृत (आदमी) की वसा (चरबी) से काजल बनाकर आंखों में अंजन लगाए तथा मस्तक पर उससे त्रिशूल बनाए जिससे प्रतिपदा भयभीत हो जाता है।

ॐ नमो भगवति हिड़िंव वासिनी अल्लल मांस प्रियेन हत्यल मंड़ल पंईडुण नु हरणं मंतेप हरण हत्थे आयास मंड़ि पायाल मंड़ि सिद्ध मंड़ि योगिणि मंड़िसव्व मूह मंड़ि काजल पड़उ स्वाहा ॥

कज्जल पालन मंत्र: ईशान्याभिमुख कर्तव्यं।

यह काजल उपाड़ने का मंत्र ईशान दिशा को तरफ मूंह करके कार्य करे।

अंगार: शाल्मली भूत: खर मूत्रेण भावित:
न्यस्तोग्नौ यत्र स पचेदोऽदनं नचिरादऽपि ॥ ३३ ॥

जिस अग्नि में गधे के मूत्र से भावना दिये हुए शाल्मली (सैभल) के अंगारे रखे जाते हैं। उस पर ओदनं (भात) उसी समय पक जाता है।

मूल मौषधकं भेक वसा तिक्तं हुताशने,
यत्र निक्षिप्यते सोऽन्नं पक्तुं शक्तो न जातु चित् ॥ ३४ ॥

जिस अग्नि में औषधक मूल (सोंठ) भेक वसा (मेंड़क की) चर्बी और तिक्त (पितपापड़ा) डाला जाता है उस पर कभी भी अन्न नहीं पकता है।

रंभाकदंन पिष्टेन मिश्रितं गंधकेन वा।
नवनीते द्रवेनैव सुदीर्घमपि पाचितं ॥ ३५ ॥

रंभा (केला) के कंद को पीसकर उसमें गंधक मिलाकर और मक्खन से गीला करके रखने से बहुत आंच देने पर भी अन्न नहीं पकता है।

घृत सिक्त सूत्र वेष्टित स्पृष्टाया: पचति कंसमद्य पात्र्या,
अंत: स्थितान हुताश: सद्काद्या न्नतु दहेत्सूत्रं ॥ ३६ ॥

घृत में सिके हुए धागे से लपेटे हुए स्पृही (कटेरी) स्पृष्ट (छूना) (पृष्टी=पृष्टाणी) को कांसी के बर्तन में रखकर पकाए हुए शदकं (अन्नादिक) को आग नहीं जला सकती है और न धागे को ही जला सकती है।

लाक्षिक तंतु पुटेऽग्नि पृषात्क तिलोद्भेव पचेत्काद्वये
पात्रे पायसमऽन्नं सूत्रं तु वहिर्गनंनदहेत ॥ ३७ ॥

लाख के धागे से पुट दिए हुए और तिल के तेल से पुते हुए कांसी के बर्तन में पकाई हुई खीर अग्नि से नहीं पकती है और न ही धागा जलता है।

दले विशाले भूर्जस्य ज्वलज्ज्वालेनवन्हिना,
लोह मांड द्वया पूपान साधयेत तैलपूरिते ॥ ३८ ॥

(विशाला=इंद्रायण) भोजपत्र के बड़े भारी पत्तों में लोह के कठारी की तरह तेल भरकर अग्नि से गरम करके पूवे उतारे।

तैलेनऽष्णेन वासिक्तं यावत् सूत्रेण वेष्टितं,
वार्त्राक स्यफलं वन्हि र्दहेत् सूत्रनभस्मयेत् ॥ ३९ ॥

उस गरम तेल में भिगोये हुए धागे से वार्त्राक (केटली के फल को लपेट कर अग्नि पर रखने से फल तथा धागा नहीं जलता)

कंस पात्रे कठोरस्य तप्यमाने रवे: करै:,
क्षिप्तं तूलं ज्वलेपाद्वा श्रुक गोमंयजं रज: ॥ ४० ॥

सूर्य की किरणों से बहुत जोर से तपते रहने पर कांसी के बर्तन में रखी हुई तूल (रुई) को शुक्र (सिरस) और गोमय (गाय को गोबर) के चूर्ण से लेप करके

स्नुक क्षीर भावितै: सार्द्धं विशदै: शालि तंदुलै:
कंस पात्रे स्थितं दुग्धं क्वाथेत् तप्तमि नांशुक्षि: ॥ ४१ ॥

स्नुक क्षीर (थोहर का दूध) में भावना दिये हुए बहुत से विशद (सफेद) साठी चावलों को कांसी के बर्तन में रखकर सूर्य की किरणों से तपाकर क्वाथ बनाए।

सर्वांऽक्षरात्य मूर्द्धं प्रोतान भूत वाम हस्त तले,
सुर चापामि न्यसेत् प्रोगेव सुसंधितं विधिवत् ॥ ४२ ॥

इन सब को पहले से ही विधिपूर्वक अक्षर (आकाश) ऊपर से ढ़कर मलकर सुर चापामि (इन्द्रधनुष) अर्थात् प्रातःकाल के समय बांये हाथ पर रखे।

वृषु पलाशन्यांदी स्तदऽकाले पाश्रु पातयति,
विनिवारयितु स्तोत्पित्त मधो भूत वदनत्वं ॥ ४३ ॥

वृष (ऋषभक) पलाश (ठाक) आदि के पत्तों को असमय में ही गिरा देता है (विनिवारित) पूरी तरह से रोक देता है। उत्पत्तिक को और (अधोवदनत्व) उनके अग्रभाग नीचे झूका देता है।

नरहं पुष्प बीजानां चूर्णैं भूंत विमिश्रते:,
न सिंचे दिग्ध सर्वांग पटोधारां क्षर न्नपि ॥ ४४ ॥

हपुष के बीजों के चूर्ण में भूत (नागरमोथा) मिलाकर (पयोधारा) दूध को धारा से सींचते हुए भी सब अंगों से जले हुए पुरुष को ठीक कर देता है।

निर्मित सीति: पुष्पे गृहीतया वज्रतरु भूत्या,
भ्रमतो न पतेत् वृष्टिर्महतीऽह हिमाननानीता ॥ ४५ ॥

पुष्य नक्षत्र में ली हुई वज्र तरु (वज्रवल्ली-थोहर) की भूति (भस्म) की शीति (गोली) बनाकर मुख में रखने से वृष्टि नहीं होती है।

नवनीतेन लिप्तांऽघ्रि: श्रून्या कृष्ण रचेश्वरत,
उपर्य्यपि समारुह्य करभाऽजिन पादुके ॥ ४६ ॥

अंघ्रि (पावों) को नवनीत (मक्खन) से पोतकर कृष्ण रंग की (श्रून्य) नली द्रव्य का लेप करभ (उंट) और अजिन (काले रंग के तेंदुए की खाल) की पादुका (खड़ाउ) पर चढ़कर बिना थके हुए चले।

स्योनाक बीज संचूर्ण स्वगर्भापादुक द्वयं,
आरुह्य विचेरत् दूरं महातल श्वांमऽसि ॥ ४७ ॥

स्योनाक (सोनापाढ़ा=अरलू) के बीजों के चूर्ण का लेप स्वर्गभा की दो पादुका (खड़ाऊँ) पर करके उस पर चढ़कर जल में भी पृथ्वी के समान बहुत दूर तक गमन कर सकता है।

प्यायन्निज कर्म्मुर गेविट गात्र मृद: कृतं,
रुद्धं शश्वाभ्यासत: स्वासं प्लवते प्लवनं जले ॥ ४८ ॥

अपने इष्ट कार्य का ध्यान करते हुए शरीर पर गाय के गोबर का लेप करके श्वास को रोक कर अभ्यास करते हुए जल में भी गोता लगा सकता है।

निधायाऽभ्यांतरे दंष्ट्रा डुंडु भस्याऽतरा निधे,
अगाधे पिजले तिष्ठे न्निमज्य सुचिरं नरः ॥ ४९ ॥

मुँह में डाढ़ के नीचे डुडाए की मणि को दबाकर समुन्द्र के अगाध जल में भी चिरकाल तक गोता लगा कर बैठे।

लिप्तं यस्य दृगाद्यं कपिला ज्येन क्षुरास्थिर जसा,
चासौब्धौ निमज्यं संवौषट् रुपाधर्थानुया दद्यात् ॥ ५० ॥

जो कपिला गाय के और क्षुरास्थि (गोखरु) के चूर्ण का नेत्र आदि पर लेप करके संवौषट् बोलता हुआ वैसे ही समुंद्र में जा सकता है।

गोमय विमिश्रिताभि र्विधूर्विताभि प्रपूरितादद्भिः
बहुरंध्रादपि कुर्याद्ऽभोतः स्तोकमऽपि गलति ॥ ५१ ॥

गोबर मिले हुए विधूर्णित जल से भरे हुए बहुत छेदों वाले घड़े से जरा सा भी जल नहीं गिरता है।

सधूमें प्रज्वलत्यग्नौ घट स्वोदर यंत्रिते,
अधः स्थापित वक्रोपि सध्वनिः सलिलं पिवेत् ॥ ५२ ॥

धुंए सहित जलती हुई अग्नि के उपर घड़े को रखकर जल के ऊपर उल्टा रखने से घड़ा शब्द करता हुआ जल को पी जाता है।

श्मशान वासिनि प्रेत मालिनि सामां पश्यंतु मनष्याः ठः ठः
सिद्धेन लक्ष जाप्यात् कालि मंत्रेण यच्चिता भसितं,
जप्तं तत कृत तिलकः पुमान् दृश्यत्व मा याति ॥ ५३ ॥

इस काली मंत्र को एक लाख जप से सिद्ध करके इससे अभिमंत्रित की हुई चिता की भस्म का तिलक लगाने से पुरुष अदृश्य हो जाता है।

प्रथमं रजस्वालायाः कन्यायाः पित् वनाग्नौ,
रजसा पिष्ट गृहपति नरं ललाट तट मध्यगा कुनटी ॥ ५४ ॥

दीपात कट तैलाकात् सित सरसिज सूत्र निग्र निकर कृत वर्तेः,
आर्त्तेना त्ताक्षि युगोन दृश्यते कज्जालेन नरः ॥ ५५ ॥

पहले पहल हुई रजस्वला के रज से श्मशान की अग्नि में गृहपति (घर के स्वामी) मनुष्य के मस्तक के किनारे पर लगी हुई कुनटी (मंनसिल) को पीसकर, उस सफेद कमल के तन्तु से लपेट कर, उसको बत्ती को कटु तेल (कड़वे तेल) के दीप में जलाकर, उससे बनाए हुए काजल को आंख में लगाने से मनुष्य अदृश्य हो जाता है।

ध्वाक्षस्य सित तरस्य महिषि तकोत्थ मुक्ते सकृत,
तेनाभ्यक्त सिताऽर्कतूल दशया युक्तेन सुस्निग्धाया
क्लप्तं प्रेतनरं कपालयुगले प्रेतालये कज्जलं,
नो शक्तं वितनोत्यदृश्य तनुक्ता मर्तस्य देवैरपि ॥५६॥

मरे हुए असित ध्वांक्ष (काले कौए) को भैंस की मट्ठे से निकले घृत में भिगोकर उसको सितार्क (सफेद आक) की तूल (रुई) में लपेट कर, दशा (दीपक की बत्ती) बनाकर सुस्निग्धया (चिकनाई=घृत सहित) (प्रेतनर कपाल युगले) मरे हुए दो आदमियों के कपालों में (प्रेतालय) श्मशान में (क्लप्तं) बनाए हुए कज्जल को आंजने वाले पुरुष को (मर्त) (आदमी) और देवता भी नहीं देख सकते हैं।

नग्ने दो ग्रहणे तगर जटात्ता कुबेर दिशि संभूता,
लोह त्रयमध्य गता वितरति तृणामदृश्यतां मुख निहिता: ॥५७॥

(इन्दो ग्रहण) चंद्रग्रहण के समय उत्तर दिशा मे (संभूता) ()पैदा हुई) उगी हुई तगर वृक्ष की (जटा) जड़ को नग्न होकर लाए फिर यदि उसको त्रिलोह (ताम्र १२ तार चांदी = १६ सुवर्ण = ३ भाग) के जंतर में जड़वाकर मुख में रखे तो अदृश्य हो जाए।

चित्तविन्हू दग्ध भूत द्रुम यम शाखा मषां समाहृत्य
अंकोल तैल सूतक कृष्ण विड़ाला जरायुश्च ॥५८॥

धूक नयनांबू मर्दित गुटिकां कृत्वा त्रिलोह संमठितां
धृत्वा तां मात्म मुखे पुरुषोऽदृष्यत्वमायाति ॥५९॥

चिता की अग्नि में जले हुए (भूत द्रम) नागरमोथा और (यम द्रुम शाखा) संभल की पेड़ की शाखा की भस्म (समाहृत्य) इकट्ठी करके उसको (अंकोल) ढेरे के तेल (सूतक) पारा और काले बिलाव की जरायु और उल्लु की आंख का पानी से घोटकर उसकी गोली बनाकर त्रिलोह (तांबा १२, चांदी १६, सोना ३ भाग) को जंतर में मढ़वाकर मुँह में रखने से पुरुष अदृश्य हो जाता है।

शिखिनः शकृता लिप्तैः ताल शिला भोजनस्य,
सप्ताहं हस्तु तले निहितं यत द्रव्यं दृश्यते न जनैः ॥ ६० ॥

मोर को एक सप्ताह तक हड़ताल और मेनसिल खिला कर उसकी विष्ठा का हाथों पर लेप करने से हाथ में रखे हुए द्रव्य को लोग नहीं देख सकते हैं।

ॐ नमो भगवते रुद्राय मनोवायु वेग गरुड़ वेगिनी च ठः ठः
जप्तं तैलं त्रिंशत् योजन गति हेतु रंजनगं सिद्धां
वायस जंघा शिफया तुंब्याः पुष्प स्य च स्वरसेन ॥ ६१ ॥

क्रोष्ट्र नेत्ररजो तार्क्षः पश्येद्भूतगणं निशि,
सिद्धं द्रव्यं ददात्यऽस्मै गुलिका पादुकादिसं ॥ ६२ ॥

तेल को इस मंत्र से अभिमंत्रित करके (अंघ्रि) पांवों पर लगाने से पुरुष तीस योजन तक बिना थके जा सकता है।

काक जंघा (वायस जंघा) की (शिफा) जड़ और तुंबी के फूलों का स्वरस से सिद्ध किए हुए (क्रोष्ट्र) गीदड़ के नेत्र के चूर्ण को आंखों में लगाने से रात में भूतगण दिखाई देकर उसको सिद्ध द्रव्य गुटका तथा खड़ाउ आदि दिखाई देते हैं।

सप्ताहं पुष्पिता योन्यां सौवीरांजन माहितं,
वन्हि मध्ये हुतं तत्र दरुर्यित् पुरुषा कृतिं ॥ ६३ ॥

ऋतु वाली स्त्री की योनि में एक सप्ताह तक सौ वीरांजन (काला सुरमा) को रखकर अगर उसे अग्नि में जलाए तो पुरुष की आकृति दिखाई दे।

दहने सज्योत्स्नायां क्षणदायां हपुष बीज होमेन,
दृश्यतं शूलधारा स्तत्र हराः पीत तनु वर्णः ॥ ६४ ॥

(क्षणदा) रात्रि में (ज्योतिण) चांदनी रात में (दहन) अग्नि में (हपुष बीज) हाड बोर के होम करने से शरीर के पीले वर्ण वाले त्रिशुल धारी शिवजी दिखाई देते हैं।

अभ्रक पटले लिखितं यद्रूपं नील कंठ पित्तेन,
तन्नयस्तं तत्पुरतोऽग्रे स्तस्य ज्वाला सु लक्ष्येत् ॥ ६५ ॥

यदि नील कंठ के पित्त से अभ्रक के पटल पर जिस का रुप लिखकर अग्नि के सामने रख। जाए तो वह अग्नि की ज्वाला में दिखाई देता है ।

अन्यच्चाभ्रक लिखितं गृह मध्यगं तैल भरित घट मुख निहितं,
रूपं गृहं रंध्रागत तपनांशु स्पष्ट मीक्षिते नमसिचिरं मुकरे ॥ ६६ ॥

यदि अभ्रक के ऊपर रुप को लिखकर उसको घर में मुख तक तेल से भरे हुए घड़े के ऊपर रखा जाए तो उसके ऊपर घर के छेद में से सूर्य की किरण के आने पर वही रुप आकाश में दर्पण के समान दिखलाई देता है।

शिखि शिखि लिप्त सदन सलिल भरित कुंड़े पतितैः,
गृह विवरेणार्ककरैः हुरितं रुपं विलोकयते गगन तले ॥ ६७ ॥

(शिखि शिखा) मनुष्य शिखा से लिपे हुए सदन जल से भरे हुए कुंड में घर के (विवर) (सूराख) से आई हुई सूर्य की किरणों को (हुरित) सजाने से वह रुप आकाश में भी दिखलाई देता है।

यः शिखिपित्त विलिप्तो रवः पुरः स्थापित रुप मुकरस्यार्द्धः,
धर्मे स भाति भानोः स्वर्भानु गृहीत इव समीप स्थानां ॥ ६८ ॥

जो मोर के पित्त से अपने को लीप कर सूर्य के सामने रखकर आधी धूप में बैठता है वह पास वालों को सूर्य का ग्रहण किये हुए के समान दिखलाई देता है।

कपि चर्मा वृत वंदना चंद्र ग्रहणं जलांतर निमग्ना,
पात्री कुरुते तत्स्थित करंज तैलाक्त दश दीपाः ॥ ६९ ॥

यदि कोई स्त्री अपने मुख को बंदर के चमड़े से ढक कर जल के अंदर घुसकर अपने पास करंज के तेल के दस दीपक रखे तो वह चंद्र ग्रहण का सा द्रश्य दिखलाई देता है-

भेर्याः प्रदीप कर्भाया: छन्न माज कपि त्वचा,
गृह मध्योपित कुर्यात् लीलामिदोर्द्धवं निशिः ॥ ७० ॥

यदि किसी (नकाश) के भीतर दीपक रखकर (अज) बकरा (कपि) बंदर की खाल से ढ़ककर घर में रखा जावे तो वह रात में चंद्रमा की लिला करता है।

पुष्पार्के मुनि पुष्पांबु पिष्ट श्रोतोंजनेन यः,
आक्त नेत्रः सः वीक्षेत नक्षत्राणि दिवा स्फुटं ॥ ७१ ॥

जो पुरुष रविवार सहित पुष्य नक्षत्र में (मुनि पुष्पांबु) अगस्ता के फूलों के रस से पिसे हुए श्रोतांजन (सुरमे) को आंखों में लगाता है वह दिन में भी तारे देख सकता है।

बीजानां वीजपूरस्य ताम्र भाजनसंस्थिते तैलें,
दिवा विलोक्ये रण सः सूक्ष्मा अपि तारका ॥ ७२ ॥

जो पुरुष (बीजपूर) बिजोरे के बीजों के तेल को ताम्र के वर्तन में रखकर उसमें तेल डाले तो वह दिन में तारों को तथा सूक्ष्म वस्तु को भी देख सकता है।

राजी तैल शिला ताल भूलता लिप्त विग्रहः,
निशाऽधकार पूर्णयां दृश्यते प्रज्वलद्वपुः ॥ ७३ ॥

(राजी) राई तेल मेनशिला हरताल और (भूलता) का शरीर (विग्रह) पर लेप करने से रात के पूर्ण अंधकार में भी शरीर प्रज्वलित जलता हुआ सा दिखाई देता है।

आलक्तक शिला ताल कुची तरु सर्ज्ज सैंधवः,
लिखिता एवऽक्षरा एवुच्चः प्रकाशते नमस्यपि ॥ ७४ ॥

आलक्तक (महावर) मेनशिला हरताल (कुची तरु) सर्ज्ज (शाल) सेधवा नमक से लिखे हुए अक्षर आकाश (नभ) में भी बहुत प्रकाशित होते हैं।

वृत्तिः सम्यग्मंत्रितं पारद गर्भैक भाग पर्यंता,
प्रज्वलदधः कृते तर भागे व्योमनापत्तेदूरं,
प्रज्वलयति दशामधस्थां शशि विद्रांर्भा प्रशांत दीप शिखां,
उपरि स्थित प्रदीपोवरधूधूमेन बहलेन ॥ ७५ ॥

एक भाग पारा सहित अच्छी तरह मंत्रित की हुई बत्ती को जला कर नीचे करने से वह आकाश के दूसरे भाग में दूर गिरती है। दीपक की लौ को बंद होने की हालत में वह चंद्रमा की तरह नीचे की तरफ झुकी हुई भी जलती है और ऊपर ठहरी हुई धुँआ बहुत ज्यादा रोशनी हो जाती है।

दीप दशा मूर्द्धस्थां शामित ज्वाला म धस्थिता,
दशा शमल गर्भा ज्वालिता ज्वलयत्या रक्ष्यो रुधूमेन ॥ ७६ ॥

दीपक की बत्ती की आग बुझाकर उसमें (शमल) गोबर मिला कर ऊपर रखकर जलाने से वह भारी धुआं निकालती हुई जलती है।

दीपः प्रशांत ज्वालेंपि समुज्वलति तुतक्षणत,
गंधकां शम परागेन करं वित दशोऽनलः ॥ ७७ ॥

बुझा हुआ दीपक भी गंधक और अशम () के पराग (राख) से बत्ती को लपेटने से उसी क्षण जल जाती है।

वर्त्ती दीप्तान्त तैलोक्तान रासृग्मावितां,
षड्नं लोह भांजनां विदधाति परस्परं ॥ ७८ ॥

यदि मनुष्य के तेल की बत्ती को मनुष्य के खून में भावना देकर घर में जलावे तो बर्तन आपस में लड़ने लगते हैं।

समुन्द्र फेन सहितैः सर्ज्ज सिक्थक गंधकैः,
पक्कं वर्ति गतं तैलं प्रदीपं ज्वलेद्य जले ॥ ७९ ॥

समुंद्र झाग (सर्ज्ज) साल सिक्थक (मोम) और गंधक से पकाए हुए तेल में बत्ती डाल कर भी जल में दीपक जलता है।

श्लेष्मांतक तरुत्थेन निर्यासेन विनिर्म्मिता,
विनाऽपि स्नेह सिक्थेन ज्वलत्यंभ सि दीपिकाः ॥ ८० ॥

श्लेष्मांतक तरु (लिसोड़े) के पेड़ को निर्यास (काठे) से बनी हुई बत्ती बिना तेल के भी जल जाती है।

तरुणां क्षीरिणां क्षीरै र्वतयः परिभाविता,
शराबे पूरिते णोंभिर्न्निहितः प्रज्वलत्यलं ॥ ८१ ॥

दूध वाले वृक्षों के दूध से भावना दी हुई बत्ती को दो शरोबों में रख कर जलाने से जल में जलती है।

वर्त्ति मंदन गर्भेण वस्त्र खंड़ेन निर्मिता,
प्रज्वले ज्जल मध्येपि स्नेह से काद्दते चिरं ॥ ८२ ॥

मदन (मेनफल) युक्त वस्त्र के टुकड़े से बनी हुई बत्ती बिना तेल के भी जल में जलती है।

शिखा कोशाम्र तैलाक्त वर्त्ती द्दीपस्य,
भास्वरा शक्यते मरुतां क्रातैर्न्न कंपयतु मुल्वणै ॥ ८३ ॥

शिखा (मयूर शिखा) कोश (अंड़ा) आम के तेल में भीगी हुई बत्ती के दीपक को बड़ी बड़ी आँधी भी नहीं बुझा सकती है-

वर्त्ति के हेम तैलाद्र लांगलि चूर्ण गर्भिणां,
जनदो ज्वालिता लीला कंकेली स्तवकं श्रियः ॥ ८४ ॥

(हेम) धतूरा के तेल से भीगा हुआ (लांगली) कलिहारी के चूर्ण बड़े लोगों से स्तूती की जानेवाली तथा लीला करने वाली अग्नि उत्पन्न करती है।

ज्वालिता च लता भस्त्रा सिंदूर दृढ़ पूरिता,
वस्तु स्वकांति व्यालीढ़ं प्रापयेत्कनकच्छविं ॥ ८५ ॥

लता की धोंकनी मे खूब सिंदूर भरकर जलाने से वह अपनी शोभा से सोने की जैसी मालूम होती है।

वन कार्पास सुमन: कृष्ण भाग विनिर्मितान् ,
चिंचा किशलयादबु पीड़िताद्रक्त वस्त्रवत् ॥ ८६ ॥

वन कपास के काले भाग से बनी हुई और इमली के नए पत्तों के रस में भावना दी हुई वस्त्र बहते हुए खून के समान दिखाई देती है।

शस्त्रेण जपाकुसुमै भूरि कृतोद्वर्तनेन दर दलितान्,
मृदु पीड़ित भूर्जस्थ जंबीर फलाज्दलंत्यबु ॥ ८७ ॥

(जपाकुसुम) कुड़हल के फूल से लेप किए हुए शस्त्र से थोड़े काटे हुए भोजपत्र पर स्थित जंबीरी नीबू से पानी निकलने लगता है।

इक्षुर बीज परागै लाक्षारस भावितै: कृतां,
गुलिकादंध: दाननेन लोके लोहित भास्याऽबु निष्ठीवत् ॥ ८८ ॥

इक्षुर (ताल मखाने) के बीज के चूर्ण को लाख के रस में भावना देकर उसकी गोली को मुँह में रखने से मुख का पानी लाल होकर पुरुष का थुंक रक्तक की तरह का लाल हो जाता है।

चूर्णे रीक्षुर बीजानां लाक्षारस सुभावितै:,
लोहित स्यापि लोहित्यं तुलये न्निसृतं जलं ॥ ८९ ॥

इक्षुर (ताल मखाना) के बीजों के चूर्ण को लाख के रस सें भावना देकर उसमें से निकला हुआ जल लाल से लाल वस्तु के सदृश होता है।

चक्रांकी दलजेन स्वरसेने क्षुरक बीज चूर्णै:,
वांयुक्तं धानु रजो युक्त मंम पेशी समं भवेत् ॥ ९० ॥

(चक्रांगी) कुटकी के पत्तों के स्वरस अथवा इक्षपुरक के बीजों के चूर्ण से भावना दिया हुआ धान पहाड़ी मट्टी के चूर्ण सहित जल पेशी (मांस) के समान दिखता है।

चूर्णेन इक्षुर बीजानां चक्रांक्या स्वसेन वा,
संमिश्रितं क्षणादेव सलिलं पिड़ितो व्रजेत ॥ ९१ ॥

(ईक्षुर) लाल मखाने के बीजों का चूर्ण अथवा (चक्रांकीट) कुकी के रस में मिला हुआ जल उसी क्षण जम जाता है-

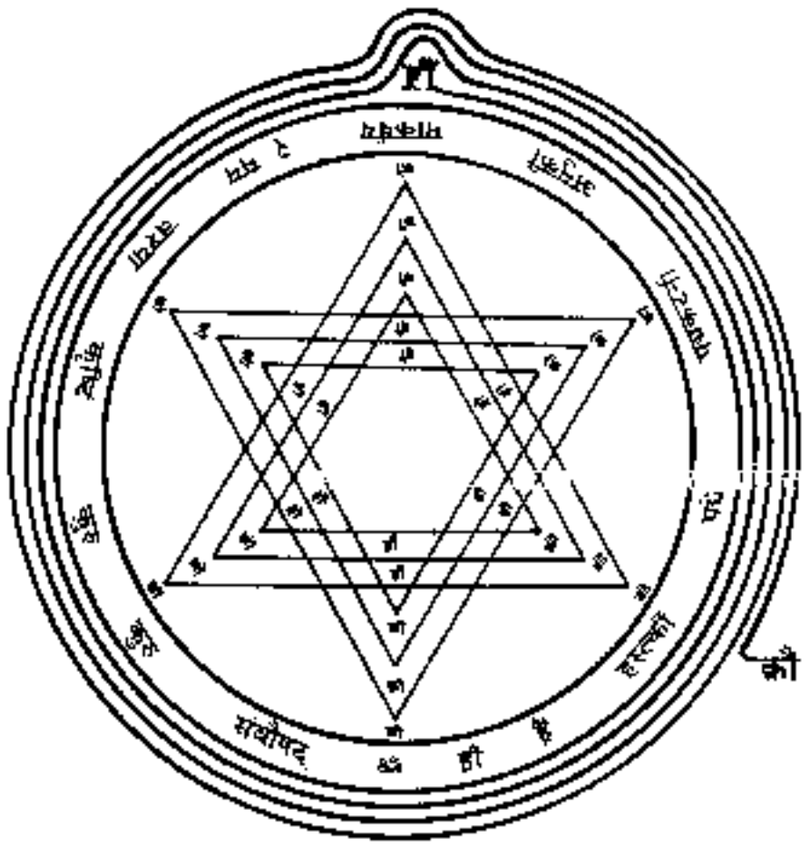

सद्यो विव सितं पुष्पं ता पिच्छस्यांजन द्युति,
स्पष्टांधूमेन जायते जपा पुष्प समप्रभं ॥ ९२ ॥

अंजन के समान कांति वाले तुरंत का निकला हुआ (तापिच्छ) तमाल का फूल धुँए के लगने से (जपापुष्प) गुड़हल के फूल के समान लाल हो जाता है।

रक्तस्य कर वीरस्य पुष्पं गंधक धूपितं,
श्वेतं स्यात् चूर्ण घृष्टंतुभजेत श्यामतामऽपि ॥ ९३ ॥

लाल कनेर का फूल गंधक के चूर्ण से घिसा जाने से काला हो जाता है। तथा धूप देने से श्वेत हो जाता है।

अति रक्ता भवेत् पिष्टा निशा चूर्ण लंवान्विता,
पुनः पीता भवेत् स्यैवं चिंचाप्रसून विमिश्रिता ॥ ९४ ॥

(लंवा) कड़वी तुम्बी सहित हल्दी का चूर्ण को पीसने से वह बहुत लाल हो जाता है वह फिर (चिंचा प्रसून) इमली के फूल मिलाने से पीला हो जाता है।

कृष्णारिमेद्य पत्राणि चूर्ण नाग दलं तथा,
हस्तौ मृदित मात्राणि कुर्वते जित विद्रुमौ ॥ ९५ ॥

(कृष्ण अर्द) () के पत्तों के चूर्ण और (नागइल) नागर बेल के पान चंपा नाग केशर (नागर मोतो) केपत्रों को हाथ से मलने से हाथ मूंगे के समान हो जाते है-

नाग लता दल मिश्रं जरत शिरीषस्य चर्वितं,
कुसुमं चार्मी चूर्ण समेतं कुरुते पदरित विद्रुमछाया ॥ ९६ ॥

पुराने सिरस के फूल को चबाकर उसमें नागलता (नागर बेल के पान) और चर्मी (भोजपत्र) के चूर्ण को मिलाने से मूंगे के समान लाल रंग हो जाता है।

नाना वर्ण युतैः साज्यैश्चूर्णरुपरि वारिणः,
स्थिरस्य निखिलं चित्रं तन्मध्ये ननि मज्जति ॥ ९७ ॥

जल के अंदर अनेक रंग सहित चूर्णे को घी सहित डालने से संपूर्ण चित्र उसके अंदर नहीं डूबते हैं।

श्लेष्मांतक फलोद्भूत सूक्ष्म चूर्ण विमिश्रतैः,
वैर्ण घर्षितं चित्रं न निमज्जाति वारिणी ॥ ९८ ॥

(श्लेष्मांतक) लिसोड़े के बनाए हुए सूक्ष्म चूर्ण को मिलाकर डालने से चित्र पानी में नहीं डूबते हैं।

ककुम फल भूति लुलिने कृपितया विद्रुतया,
यल्लाक्षाया विलिखितं चित्रं तत क्षालिनै न जलैः ॥ ९९ ॥

ककुम (अर्जुन) के फल की भस्म में घोलकर विद्रुत (पिघलाया हुआ) मिला हुआ लाख से लिखा हुआ चित्र पानी में नहीं घुलता है।

यदुपोषितेन भुक्तं जीर्णं कूर्मेण नव भुवा,
तालं लिप्तस्य तेन यष्टिः करस्य नट मंडनं दराति ॥ १०० ॥

एक दिन के भूखे कछुए से खाया हुआ नव भ्रुव ताल से लेप की हुई लाठी नाचने की शोभा को करती है।

ताले भावित मौष्ट्रे कफ मूत्र कपालधर्म सलिले युत,
तल्लिप्त/प्रहस्तं मुष्टि श्लिष्टाण्या मोक्ष मा वृषयात् ॥ १०१ ॥

ऊंट के कफ मूत्र और सिर के पसीने के जलों से भावना दिये हुए हरताल से लिए हुए हाथ की मुट्ठी खोलने तक चित्रों को तोड़ डालती है।

शुनी जरायुणा पिच्छ धूपितं वेष्टितं च यत्,
सव्येन तत भ्रमं स्वित्रं हरेन्मोक्षोपसव्यतः ॥ १०२ ॥

कुत्ती की जरायु (गर्भ की झिल्ली) और पिच्छ (मोचरस) से धूप दी हुई मुट्ठी दाहिने हाथ से घुमाती है और बांये से उसको नष्ट करती है.

मार्जारजानुधूपेन स्पृष्टं चित्रं न दृश्यते,
तदैवदेव धूपेन धूपितं याति चित्रता ॥ १०३ ॥

चित्र सोलावरा धूप स्पृष्टं क्षौद्र निरीक्षेत,
सं स्पृष्टे क्षौद्र धूपेन न दृश्यते यथा पुरा ॥ १०४ ॥

अपरा धूप से किया हुआ चित्र दिखलाई नहीं देता है और क्षोद्र की धूप से धूपित होने पर दिखाई देने लगता है (पहले की तरह)

चित्रं नार्घ्याऽपरा धूप स्पृष्टंरोदिति भित्तिगं,
पूरा धूपेन तु स्पृष्टं तज्जहाति परोदनं ॥ १०५ ॥

दीवाल में लगा हुआ चित्र नार्घ्यपरा की धूप से रोने लगता है वहां पूरा धूप (दाहगरु) की धूप से रोना छोड़ देता है।

मुंचति प्रतिमा श्रृणि मदनेनां जनेन च,
पूरिता क्षि युगा स्पृष्टा पुरुधूपेन भूयसा ॥ १०६ ॥

मदन (नेनफल) और अंजन को आंखों में लगाने से मूर्ति की आंखों से आंसू निकलने लगते हैं और पुरु (दाहागुरु) की धूप से वही फिर साफ हो जाते हैं।

लघु काष्टमयी यष्टि भ्रमरा पूरितोदरा,
निरांलवाचरे तिष्ठेत कुर्वति विस्मयं जगत् ॥ १०७ ॥

काठ की छोटी लकड़ी में भ्रमार (भ्रमछल्ली लता) को भर देने से वह आकाश में संसार को आश्चर्य में डालती हुई बिना आलम्बन (सहारे) के लटकती है।

वज्राहत तरोः शंकु स्तिष्ठेत व्याम्नि निरापहं,
कृताऽनुलेपनः शून्या सव्योषैण जरायुना ॥ १०८ ॥

वज्र से नष्ट हुए वृक्ष की कील पर शून्या (नली द्रव्य) व्योष (सोंठ मिर्च पीपल) और जरायु (गर्भ की झिल्ली) का लेप करने से वह आकाश में बिना सहारे के ही ठहरती है-

मठ्येंबर निराधारं धारयेत सरसिरुहं
अंगुलौ मुद्रिकां धृत्वा सारमेयजरायुनां ॥ १०९ ॥

सारमेंय (कुत्ते) की जरायु (गर्भ की झिल्ली) की उंगुली में अंगूठी धारण करके अंबर (आकाश) में निराधार बिना सहारे ही सरसी रुह को लटका सकता है-

महयां सुस्थापिते वारां शराबे परि पूरिते
शमनकैः स्थापितो नैव निपतेन् मुशलश्चिरं ॥ ११० ॥

महि (पृथ्वी) में शमनक () से भरे हुए शराबों को रखने से ही मूसल बहुत देर तक नहीं गिरते है-

निजोदर समा शक्त प्रज्वल ज्वलनो घटः
सं शक्त वदनः कुक्षौ नसस्थ नपते द्रुवि ॥ १११ ॥

अग्नि में प्रज्वलित घड़े के पेट में अग्नि से युक्त होने के कारण घड़ा पृथ्वी में नहीं गिरती है।

पूर्णं घटेऽद्रिः प्रस्थे वा गुर्वाव्यु क्षिपेत्,
शिला उद्धत्ते गोमया लिप्त संधी उपरि संस्थिते ॥ ११२ ॥

भरे हुए घड़े या पृथ्वी में जल के द्वारा बहुत सी मेनसिल (शिला) फेंककर उसको उठाकर गोमय (गोबर) से लिपि हुई संधि के ऊपर रखकर।

शराबः पूरितो वारिभि न्नदलेन सुस्थितः क्षितौ
उपरिर्या रोषिता विभ्र दुर्वीम विषमां शिलां: ॥ ११३ ॥

फिर उसके ऊपर भारी मेनसिल को धारण करते हुए शराबे को रखकर।

कल्केन गुंजा बीजानां लिप्ते शुष्के लघुद्रुजे,
आक्रम्य गच्छेदादांघिस्थन्ने अपि सुपादुके ॥ ११४ ॥

गुंजा (चिरमी) के बीजों के कल्क से लेप की हुई पादुका को पांवों में पहनकर थोड़ी सूखाकर आनन्द से पानी पर चल सकता है।

निर्यासेन कपित्थोद्भवेन लिप्तं विशुष्के मारुह्य नरः,
आर्द्र पदं पादुक युग्म उर्ध्वमपि ब्रजेल्लघुद्रुम रचितं ॥ ११५ ॥

लघु द्रुम से बनी हुई दोनों पादुका पर कपित्थ (कैथ) के काढ़े का लेप कर उसको दोनों पावों में पहनकर सूखने पर उसके ऊपर आनन्द से चलें।

पूर्वोक्त लेप कल्पितं शुष्ठ रजः सिक्तमानं फलाकाद्यां,
लघु द्वादशजनाकातं नं विमुंचेतापहास्यजन जंघ्य नांतं ॥ ११६ ॥

पहले कहे हुए लेप से युक्त सूखे हुए चूर्ण से आसन तखती आदि को भिगोने से या उससे लगा हुआ अंग अलग नहीं होता है।

विनयादि नमो भगवत्यै हि द्वयमां गजेन्द्र वश कृद्वाणाः,
शून्यानि पंच कुरु फल पुष्पाद्या कर्षणं होमं ॥ ११७ ॥

ॐ नमो भगवति ऐहि ऐहि आं क्रों द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः हां हीं हूं हौं हः फल पुष्पा कृष्टिं कुरु कुरु स्वाहा।

आदि में ॐ नमो भगवति एहि दो बार आं और गजेन्द्र वश करण (क्रो) काम के पांच बाण (द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः) पंच शून्य बीज हां हीं हूं हौं हः फिर फल पुष्पा कृष्टि कुरु कुरु स्वाहा मंत्र है ।

ब्राह्मण कुमारिकाया दहनागारं प्रगृह्य सूर्य दिने,
तेनैव पटे विलिखेदष्टभुजां भगवतीं सम्यक् ॥ ११८ ॥

इतवार (सूर्य दिने) के दिन ब्राह्मण की कुमारी के दहनांगार को लेकर उसी वस्त्र पर अच्छी तरह आठ भुजा वाली भगवती का रुप लिखे।

तत्पुरतः करवीर प्रसव सहस्रै र्जिन प्रमाण युतैः,
जप्त्वा करोतु मंत्री पुष्प फलानां समाकृष्टिं ॥ ११९ ॥

उत्तम मंत्री उसके सामने जिनेन्द्र देव संख्या प्रमाण अर्थात् चौबीस हजार जप कनेर के लाल फूलों पर करने वाला पेड़ों के फल और फूलों का आकर्षण कर सकता है।

न्यस्तेन चर्मणों मध्ये रामठेन विमुंचति,
शाल्मली सकलान्या श्रु फलानि कुसुमानि च ॥ १२० ॥

(रामठ) हींग को संभल वृक्ष की (चर्म्म) (छाल) में रखने से सेंभल के सब फल और फूल झड़ जाते हैं।

पुष्प युते भूत दिने श्रून्यां योन्यांरतेऽर्पिता भुवि पतिता,
आंर्ता गुंलिका मुद्रा तटो: फलाद्यान्निपातयेत् ॥ १२१ ॥

पुष्य नक्षत्र वाले भूतदिन (इतवार कृष्ण चतुर्दशी) को श्रून्य (नली) द्रव्य को लाकर रति वाली योनि में रखें। फिर पृथ्वी पर गिरने पर उंगली में अंगूठी पहनकर वृक्षों के फल फूलों को पृथ्वी में गिरा देता है।

व्योषवर्यं परां कल्क लिप्तवां मांघि ताड़ित:,
तरु मुंचति पुष्पाणि सकलानि फलानि च ॥ १२२ ॥

व्योष (सोंठ मिरच पीपल) वर्य (श्रेष्ट) अपरा धूप के कल्क से लिए हुए हाथों द्वारा वृक्षों को छूने से वृक्षों के सम्पूर्ण फल पुष्पादि को गिरा देता है-

भुष्टता क्षणं निरुद्धानि शिखि पित विलिप्तया,
क्षिप्तानि निंब पत्राणि भवंति भुवि वृश्चिका: ॥ १२३ ॥

मोर के पिते से लेप की हुई मुट्ठी में जरा देर रोककर पृथ्वी में फेंके हुए नीम के पत्ते बिच्छू हो जाते है।

अंकोल तेल लिप्ते करतल मुष्टौक्षणं निरुद्धाणि,
पत्राणि भूत केश्या: स्यु: क्षोण्यां वृश्चिका क्षिप्ता: ॥ १२४ ॥

अंकोल के तेल से लेप की हुई मुट्ठी में जरा देर तक रोककर पृथ्वी पर डाले हुए भूत केशी () के पत्ते बिच्छू बना जाते हैं-

यज्जग्धा प्रवलाकिंका त्रिदिवसंत्यक्ताशना
कौमुकं रक्ता कुसुमं हर्हेति विधिवते तेनप्रलिप्टेक्षु ॥
मुष्टौ तस्य दृढ़ं निरुद्धयन चिर: क्षिप्रानि तारा पथे
जायंते च पत्रच्छदा वरतिका श्चिचंचा फलानि स्फुटं ॥ १२५ ॥

वलाका (सारस) के द्वारा जो दिन दिन से भूखा हो उससे खाकर छोड़े हुए कौमुक () को जलाकर उसमें विधिवत् लाल रंग वाले फुल और इक्षुर (लाल मखाने) से लेप की हुई मुट्ठी में मजबूती से बांधकर आकाश में फैले हुए इमली के फल और पत्ते बरटिका बन जाते हैं।

करे मर्दिता भूकंद दले बद्धा पिपलिका म्रियते,
जीवति शारद्या वा चिंचा पावादलै र्बद्धा ॥ १२६ ॥

हाथ से मले हुए भूकंदब के पत्तों में बंधी हुई चींटी मर जाती है और वही इमली के पत्तों में बांधी जाने से जीवित हो जाती है।

त्यक्त प्राणो मीनः स्नेहना रुष्करास्थि जातेन लिप्तः,
सलिले क्षिप्तः प्रत्यागत जीवन स्मरति ॥ १२७ ॥

मरी हुई मछली पर अरुष्कर की अस्थि (भिलाए को गुठली) के तेल का लेप करके उसे पानी में डालने से वह जीवित हो जाती है-

आंजल बीजैरभोवा मिश्रितं धूर्वितं करेण ततः,
आलक्ष्येत चलद्भि कृमिभिः परितः परालमिव ॥ १२८ ॥

आंजक बीज को (अंज) जल के साथ हाथों पर लेप करेके उसे देखने से चलते हुए बहुत से कीड़े दिखाई देने लगते हैं।

क्षीरेण भावितैः शुष्कैः कपित्थफलरेणुभिः,
करं वित्तेपितं तक्रं कुंभ गर्भे भवेद्बहिः ॥ १२९ ॥

दूध की भावना दिये हुए कैथ (कपित्थ) के फल के चूर्ण से पुते हुए घड़े में जाला हुआ मट्ठा फौरन बाहर निकल आता है-

कर्णिकार प्रसूनानां चूर्णेन कृत मिश्रणं,
क्वथितं दुग्धमाज्यस्य तुलां वर्णेन गछति ॥ १३० ॥

कर्णिकार (कनेर) के फूलों के चूर्ण को बकरी के साथ बना हुआ क्वाथ तुला (उसी) के वर्ण का हो जाता है।

भद्रा वंधूक्यो मूलमास्ये संस्थाप्य चर्वितं पांशुभिः,
पूरयै न्नेत्र भक्षयेच्च शिलां सितां ॥ १३१ ॥

भद्रा (रायसण-पीपल-अनंत मूल कायफल- पसरन-कंभारी-गूलर) और वंधूक (दुपहरया पुष्प - पीले साल का वृक्ष) की जड़ों को मुँह में चबाकर उसकी धूल को आंखों में आंजकर मेनसिल और शक्कर को खा सकता है।

बालाया: शक वल्या वा रसेन रसनां चिरं
कृत्वाक्तां स्तारणा द्याम मद्यात कंडुर्न्नजायते ॥ १३२ ॥

(बाला) नारियल नेत्र बाला या शक्करवल्ली के रस के साथ जीभ को भिगोकर तरण आदि को खाने से खुजली नहीं होती है।

चिरं कोरंड़ पत्राणि जग्ध्वास्तत्या शितागया,
विरदेत्कपोल मोष्टं चनास्त्रश्रावोन चव्यथा ॥ १३३ ॥

कोरंड़ (कटसरया) के पत्तों को खाकर यदि तेज छूरी से अपने गाल होंठ या नाक आदि को काटे तो न तो रुधिर ही निकलता है और न कष्ट मालूम होता है।

स्थित्वानि कनकास्थिनि द्याम मामलकांऽबुभि:,
नवनीत मया नीवं जायते मृदुतागुणात् ॥ १३४ ॥

खड़े हुए धतुरे की गुठलियों (बीजों) को एक पहर आंवले के पानी में भिगोने से वह मधुवन के समान मुलायम हो जाती है।

पुष्याक्षै ष्तुर क्षुरत् छद पत्रित युक्तं श्शरोऽपि,
वालेन मुक्तो रोहित कंटक गर्भ लक्ष्यं ध्रुवं विद्येत् ॥ १३५ ॥

पुष्य नक्षत्र में क्षुर (गोखर) से लेप किया हुआ कांटे युक्त बाण छोड़ा जाने पर निश्चय से अपने निशाने का भेदन करता है।

उदीरितं नर्म विधान मेतद्यथोदेशं निखिलं विजानन् ,
ततं प्रोयगं विर चय गूढ़ं लोकस्य कौतूहल मात नातु ॥ १३६ ॥

यह नर्म्म विधान का वर्णन किया गया है उसके उपदेश को ठीक ठाक जानकर उस प्रयोग को करके मंत्र लोक को आश्चर्यान्वित करे।

शास्त्रं येन धृतं हृदी दम खिलं ज्ञात्वो पदेशा द्गुरो:,
षट्कर्मण्यि वचोदयवसुबहुभि: सम्मंत्र यंत्रो षधे: ॥
अर्थात् सोर्थि जिनाद्य नित्य मखिलं विश्रायन्
भूमौ कल्पतरु पते बुध जन स्तुतय: स्व शक्तयाद्भूत: ॥ १३७ ॥

जो पुरुष गुरु के उपदेश से इस शास्त्र को पूर्ण रुप से हृदय में धारण करके बहुत प्रकार के श्रेष्ठ मंत्र यंत्र और औषधियों से छहो कर्मों को जानता है वह पंडित श्रेष्ठ मांगने वालों के सब प्रयोजनों को पृथ्वी में कल्पवृक्ष के समान पूर्ण करता है।

यावत् जैन पद द्वयं भवभृताः मुच्चाटयत्यापदां,
यावल्दव्य जनस्तनोति निपुणः सिद्धीवंगना कर्षणं
तावत सुद्रुचि शास्त्र रत्न ममलं [illegible]
गंभीरे मति सागरे पृथुत्तरे विद्या सरित्संगते ॥१३८॥

जब तक जिनेन्द्र भगवान के चरण कमल संसारी जीवों की आपत्तियों का उच्चाटन करते हैं तब तक भव्य पुरुष मुक्ति रुपी स्त्री का आकर्षण करते हैं तब तक यह अच्छे रुचियों का शास्त्र रुपी रत्न जो मति सागर जी आचार्य द्वारा रचा गया है वह मंत्रियों के गंभीर (मति) बुद्धि रुपी सागर (समुंद्र) अथवा उसकी महान विद्या रुपी नदी में स्थित रहे।

''इति''

इस ग्रन्थ को युवाचार्य श्री १०८ मुनि गुणधरनंदीजी ने अहमदाबाद के १९९६ के वर्षायोग के समय पूर्ण करके प्रकाशित कराया।

इस ग्रन्थ का विमोचन १५ फरवरी १९९७ को श्री पंच कल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव के अवसर पर पूज्य १०८ गणधराचार्य कुन्थुसागरजी एवं आचार्य कनककनन्दीजी के संघ एवं सकल समाज की उपस्थिति में किया गया।